

Barcode : 99999990841339

Title - aupapaatika sutra

Author - ghasilal and kanahiyalal

Language - sanskrit

Pages - 818

Publication Year - 1951

Barcode EAN.UCC-13



GOVERNMENT OF INDIA

ARCHAEOLOGICAL SURVEY OF INDIA

CENTRAL
ARCHAEOLOGICAL
LIBRARY

ACCESSION NO. 43754

CALL No. JPr 2 / Aup / Gr. K.

D.G.A. 79

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया-पीयूषवर्षिण्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

हिन्दीगुर्जरभाषानुवादसहितम्

औपपातिक-सूत्रम् ।

43754

AUPAPAATIKA SUTRA

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-

पण्डितमुनि श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः ।



प्रकाशकः

अ. भा. श्वे. स्था. जैनशास्त्रोद्धार-समिति-प्रमुखः

श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई - महोदयः

5712
AUPAATIKA

मु. राजकोट (सौराष्ट्र)

प्रथम आवृत्ति : प्रति १०००

वीर संवत् २४८५

*

विक्रम संवत् २०१५

ईस्वीसन् १९५९



मूल्यम्-रु. १२-००

: પ્રાપ્તિ સ્થાન :

શ્રી અ. ભા. શ્રે. સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ
શ્રીનલોજ પાસે, રાજકોટ

LIBRARY OF THE JAIN PRAJNANETRA
RAJCOOT, GUJARAT

Acc. No. 437.54

Date 22.11.1965

Call No. JP 22 / A. 11 / 1000

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત : ૨૪૮૫

વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૫

ઈસ્વી સન : ૧૯૫૮



મુદ્રક :

ગુણવંત કે. કાઠારી
મુદ્રણસ્થાન સુભાષ પ્રિન્ટરી,
ડૉ. ટંકારિયા રોડ, અમદાવાદ.

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
१ मङ्गलाचरण ।	१-३
२ शास्त्रोपोद्घात ।	३-४
३ चम्पानगरी-वर्णन ।	४-१९
४ पूर्णभद्रचैत्य-वर्णन ।	२०-२६
५ वनषण्ड-वर्णन ।	२६-२८
६ वृक्ष-वर्णन । ...	२९-४१
७ अशोकवृक्ष-वर्णन । ...	३९-४१
८ तिलकादिवृक्ष-वर्णन ।	४२-४४
९ पद्मलता-आदिका वर्णन....	४४-४५
१० पृथ्वीशिलापट्टक वर्णन ...	४५-४९
११ कूणिक राजाका वर्णन ।	४९-५८
१२ धारिणी देवीका वर्णन ।	५८-६२
१३ भगवान के विहार आदि समाचार लाने के लिये नियुक्त- प्रवृत्तिव्यापृत-पुरुष और उसके अधीन पुरुषोंका वर्णन । ...	६३-६५
१४ उपस्थान शाला में स्थित राजा कूणिक का वर्णन ।	६५-६७
१५ भगवान महावीर स्वामी का वर्णन ।....	६८-१०४
१६ भगवान के आगमन के समाचार को जान कर प्रवृत्तिव्यापृत का राजा कूणिक के समीप जाना और उपनगर ग्राम में भगवान के आगमन-वृत्तान्त का निवेदन करना । ...	१०५-११०
१७ भगवान का आगमन वृत्तान्त सुन कर कूणिक राजा को हर्ष होना, और अपने राजचिह्नों को छोड़ कर, भगवान की तरफ मुँह कर, दोनों हाथ जोड़ कर सिद्धोंको और भगवान महा- वीर स्वामी को 'नमोस्तु णं' देना, और कूणिक राजा द्वारा प्रवृत्तिव्यापृत का सत्कार । ...	१११-१३७
१८ पूर्णभद्र-उद्यान में भगवान के पधारने का वृत्तान्त निवेदन करने के लिये प्रवृत्तिव्यापृत को कूणिक की आज्ञा ।	१३८
१९ पूर्णभद्र-उद्यान में भगवान का आगमन ।	१३९-१४१
२० भगवान के अन्तेवासियों (शिष्यों)का वर्णन ।	१४२-२०३

विषय	पृष्ठ
२१ भगवान के शिष्यों का बाह्याभ्यन्तर तप-उपधान का वर्णन ।...	२०३-३०६
२२ भगवान महावीर स्वामी के अनेकविध शिष्यों का वर्णन । ...	३०६-३२१
२३ असुरकुमार देवों का भगवान के समीप आगमन, और उनका वर्णन	३२२-३३०
२४ नागकुमारादि भवनवासी देवों का भगवान के समीप आगमन, और उनका वर्णन ।	३३१-३३३
१५ व्यन्तर देवों का भगवान के समीप आगमन, और उनका वर्णन ।	३३४-३३८
२६ ज्योतिष्क देवों का भगवान के समीप आगमन, और उनका वर्णन ।	३३९-३४१
२७ भगवान के समीप वैमानिक देवों का आगमन, और उनका वर्णन ।...	३४२-३४६
२८ चम्पा नगरी के वासी लोगों का भगवान के दर्शन की उत्सुकता, और उनका भगवान के समीप जाना ।	३४७-३६३
२९ प्रवृत्तिव्यापृत द्वारा कूणिक का भगवान के आगमन का परि-ज्ञान, और राजा कूणिक द्वारा प्रवृत्ति व्यापृत का सत्कार ।	३६३-३६५
३० राजा कूणिक-द्वारा बलव्यापृत (सेनापति) का आह्वान, और उसे हाथी, घोड़ा, रथ आदि तथा नगर के सजवाने का आदेश ।	३६६-३६९
३१ बलव्यापृत-द्वारा हस्तिव्यापृत को हार्थी सजाने का आदेश और हस्तिव्यापृत-द्वारा हाथियों का सजाना ।	३७०-३७७
३२ बलव्यापृत-द्वारा यानशालिक को यान-सजाने का आदेश, और यानशालिक-द्वारा यानों को सजाना ।	३७७-३८२
३३ बलव्यापृत-द्वारा नगरगुप्तिक को नगर सजाने का आदेश, और नगरगुप्तिक-द्वारा नगर को सजाना ।	३८३-३८५
३४ आभिषेक्य हस्तिरत्न-आदि का निरीक्षण कर के बलव्यापृत का कूणिक राजा के पास जा कर उन्हें भगवान के दर्शन के लिये जाने की प्रार्थना करना । ...	३८५-३८८
३५ कूणिक राजा का व्यायामादि करके स्नान करना, दण्डनायक आदि से परिवेष्टित हो गजराज पर आरोढ होना, और सभी प्रकार के ठाट-वाट के साथ भगवान के दर्शन के लिये प्रस्थान करना, उचित प्रतिपत्ति के साथ भगवान के समीप पहुँचना, और पर्युपासना करना ।	३८८-४३५

विषय	पृष्ठ
३६ सुभद्रा आदि रानियों का अपनी २ दासी आदि परिवार के साथ सज-धज कर पूर्णभद्र उद्यान में भगवान के दर्शन के लिये उचित प्रतिपत्ति के साथ जाना और खड़ी २ भगवान की पर्युपासना करना ।	४३५-४४२
३७ भगवान की धर्मदेशना ।	४४२-४७३
३८ अनगार-धर्म की निरूपणा ।	४७४-४८३
३९ भगवान के पास बहुतों की प्रव्रज्या लेना और बहुतों का गृहस्थ-धर्म स्वीकार करना ।	४८४-४८६
४० परिषद का अपने २ स्थान पर जाना ।	४८६-४८८
४१ कृष्णिक राजा का अपने स्थान पर जाना ।	४८९-४९०
४२ सुभद्रा-आदि रानियों का अपने २ स्थान पर जाना ...	४९१-४९३

॥ इति समवसरण नामक पूर्वार्ध की विषयानुक्रमणिका ॥

॥ अथ उत्तरार्ध की विषयानुक्रमणिका ॥

१ गौतमस्वामी का वर्णन ।	४९४-४९८
२ गौतमस्वामी का भगवान के समीप जाना ।	४९९-५०२
३ पापकर्म के विषय में गौतमस्वामी का प्रश्न, और भगवान का उत्तर ।	५०२-५०३
४ मोहनीय कर्म के बन्ध के विषय में गौतमस्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५०४
५ मोहनीय कर्म के वेदन करते हुए के कर्मबन्ध के विषय में गौतमस्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५०५-५०६
६ त्रस-प्राणघातियों के नरक में उपपात के विषय में गौतम और भगवानका प्रश्नोत्तर ।	५०७
७ असंयतों के उपपात-विषय में गौतम स्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर, तथा असंयतों के देवरूप में उपपात होने में भगवान द्वारा हेतु का कथन ।	५०८-५१२
८ अण्डुबद्धक-आदि के विषय में गौतम और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५१३-५२०
९ प्रकृतिभद्रक-आदि के उपपात-विषय में गौतम और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५२१-५२३

विषय	पृष्ठ
१० अन्तःपुरिका-आदि स्त्रियों के विषय में गौतम और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५२४-५२८
११ दकद्वितीय आदि मनुष्यों के उपपात के विषय में गौतम और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५२८-५३१
१२ वानप्रस्थ-आदि तापसों के विषय में गौतम स्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५३२-५३६
१३ प्रव्रजित श्रमण के उपपात के विषय में गौतम स्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	५३६-५३८
१४ सांख्य-आदि परिव्राजकों का और उनके भेद कर्ण-आदि ब्राह्मण परिव्राजकों का और शीलधी-आदि क्षत्रिय परिव्राजकों का वर्णन ।	५३९-५४१
१५ कर्ण-आदि और शीलधी-आदि का सकल-वेदादि-शास्त्र-भिन्नता का वर्णन ।	५४१-५४३
१६ कर्ण-आदि और शीलधी-आदि परिव्राजकों के आचार का वर्णन ।	५४३-५५६
१७ कर्ण-आदि और शीलधी-आदि परिव्राजकों की देवलोकस्थिति का वर्णन । ...	५५७-५५८
१८ अम्बड परिव्राजक के शिष्यों का विहार ।	५५८-५६३
१९ अम्बड परिव्राजक के शिष्यों का संस्तारक-ग्रहण ।	५६३-५७३
२० अम्बड परिव्राजक के शिष्यों की देवलोकस्थिति का वर्णन ।	५७३-५७४
२१ अम्बड परिव्राजक के विषय में भगवान और गौतम का संवाद ।	६७४-६२५
२२ आचार्य, कुल और गण-आदि-विरोधी प्रव्रजित श्रमणों के विषय में भगवान का कथन ।	६२५-६२८
२३ जलचर आदि संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-पर्याप्तक के विषय में भगवान का कथन । ...	६२८-६३१
२४ द्विगृहान्तरिक-त्रिगृहान्तरिक-आदि आजीवक के विषय में भगवान का कथन ।	६३१-६३३
२५ आत्मोत्कर्षिक-परपरिवादिक आदि प्रव्रजित श्रमणों के विषय में भगवान का कथन ।	६३४-६३५
२६ बहुरत-आदि निह्नवों के विषय में भगवान का कथन ।	६३६-६४०
२७ अल्पारम्भ-आदि मनुष्यों के विषय में भगवान का कथन । ...	६४०-६५४
२८ अनारम्भ-आदि मनुष्यों के विषय में भगवान का कथन ।	६५५-६५८
२९ ईर्यासमिति-आदि-युक्त साधुओं के विषय में भगवान का कथन ।	६५८-६६३

विषय	पृष्ठ
३० सर्वकामविरत-आदि साधुओं के विषय में भगवान का कथन ।	६६४-६६५
३१ केवलिसमुद्धात के विषय में गौतम स्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	६६५-६९१
३२ केवली के सिद्धिगति-प्राप्ति का क्रमनिरूपण ।	६९१-६९७
३३ सिद्धस्वरूपवर्णन ।	६९८-७००
३४ सिद्धों के साद्यपर्यवसितत्व-आदि का वर्णन ।	७०१-७०२
३५ सिद्धिगति पाने वालों के संहनन और संस्थान का वर्णन ।	७०२-७०३
३६ सिद्धिगति पाने वालों के उच्चत्व और आयु का वर्णन ।	७०४-७०५
३७ सिद्धों के निवासस्थान के विषय में गौतमस्वामी और भगवान का प्रश्नोत्तर ।	७०६-७११
३८ ईषत्प्राग्भारा पृथिवी के स्वरूप का वर्णन ।	७११-७१२
३९ ईषत्प्राग्भारा पृथिवी के बारह नाम ।	७१३
४० ईषत्प्राग्भारा पृथिवी के स्वरूप का वर्णन । ...	७१४-७१५
४१ सिद्धस्वरूप-वर्णन ।	७१६-७१७
४२ शास्त्रोपसंहार । ...	७१८-७३७



प्राक्कथन

यह मानव सामाजिक प्राणी है। समाज की सुव्यवस्था ही मानवजाति की उन्नति का मूल मन्त्र है। समाजकी सुव्यवस्था मानवजीवन की नैतिकता के ऊपर सुव्यवस्थित है। नैतिकता को अनुप्राणित करने वाला धर्म है। धर्मानुरूप नैतिकता ही मानव के ऐहिक और आमुष्मिक शुभ-दायिनी होती है। धर्म से ही मानव ऐहिक और पारलौकिक शुभ फलका अधिकारी होता है। इसी धर्मानुप्राणित नैतिकता के ऊपर मानवसमाजरूपी भित्ति सुव्यवस्थित है।

परन्तु कालक्रम से उस में दुर्बलता आने लगती है। मानवसमाजरूपी भित्ति लर-खराने लगती है, 'अव गिरी-तव गिरी' जैसी दशा उपस्थित हो जाती है। ऐसी स्थिति में कोई एक महाप्राण महामानव का प्रादुर्भाव होता है, जो समाजमें धर्मानुरूप नैतिकता को सजग कर मानवको दुर्गति के गर्तमें पड़ने से बचाता है।

हम जब आज से अठारह हजार वर्ष पूर्वकाल की ओर दृष्टि देते हैं तो उस समय की सामाजिक परिस्थिति बिल्कुल अस्तव्यस्त दिखायी देती है। उस समय धर्मानुप्राणित नैतिकता विलुप्त सी होती जा रही थी। जिस के फलस्वरूप छोटी २ गुटबन्दी, नरसंहार, पशुहत्याये—आदि की जड़ बलवती होती जा रही थी। ऐसे समय में महाप्राण महामानव भगवान् महावीर स्वामी का प्रादुर्भाव हुआ। भगवान् महावीर स्वामी ने मानवसमाज को सुव्यवस्थित करने के लिये आजीवन दुष्कर तपश्चरण किया, समाज को सुव्यवस्थित करने के लिये उन्होंने नियम बनाये, लोगोंमें धर्मानुरूप नैतिकता की वृद्धि के लिये आर्यावर्त्त में विहरण कर धर्मोपदेश दिया, 'जीवमात्र को सुख-शान्ति मिले' ऐसा सर्वोत्तम धर्मका प्रचार किया। उनका धर्मोपदेश केवल मानव के लिये ही हितकारक नहीं; अपि तु जीवमात्र के लिये हितकारक था। उनका धर्मोपदेश त्रस-स्थावर जीवों में भ्रातृत्व-भावना का संचार करता था। उसी धर्मोपदेश की प्रतिध्वनि आज भी हमें सुनायी देती है—

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे ।

मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई ॥—

मैं सभी जीवों से क्षमा चाहता हूँ, सभी जीव मुझे क्षमा करें। मेरा सभी जीवों के साथ मैत्रीभाव है, किसी के भी साथ वैरभाव नहीं।

भगवान् महावीर स्वामी ने जो उपदेश दिया वह भगवान् महावीर स्वामी और गौतम गणधर के संवादरूप में संगृहीत हुआ। इस संग्रहको 'आगम' नाम से कहा जाता है। स्थानकवासी-मान्यता-अनुसार इस समय बत्तीस आगम उपलब्ध हैं, ११ अङ्ग, १२ उपाङ्ग, ४ मूल, ४ छेद और १ आवश्यक। यह प्रस्तुत आगम उपाङ्ग है और यह आचाराङ्ग का उपाङ्ग है। क्यों कि-आचाराङ्ग के प्रथम अध्ययन के प्रथम उद्देशक में कहा गया है—'एवमेगेसि णो णायं भवइ-अत्थि मे आया ओववाइए, नत्थि मे आया ओववाइए, के अहं आसी ?, के वा इओ चुए इह पेच्चा भविस्सामि !' अर्थात्-कितनेक जीवों को यह ज्ञात नहीं होता है कि मेरी आत्मा औपपातिक है, या मेरी आत्मा औपपातिक नहीं है, मैं पूर्व में कौन था ?, और फिर यहाँ से च्युत होकर क्या होऊँगा ?। वहाँ पर जो आत्माको औपपातिक कहा है, उसीका यहाँ पर विशद-रूपमें प्रतिपादन किया गया है। इसीलिये इस आगमका नाम 'औपपातिक' रखा गया है। 'उपपात' शब्दका का अर्थ-देवजन्म, नारकजन्म और सिद्धिगमन है। 'उपपात' को लेकर बनाया गया सूत्र 'औपपातिक' कहलाता है। इस सूत्र में 'जीवोंका किन कर्मों' के करने से नरक में जन्म होता है, किन कर्मों से देवलोकमें जन्म होता है, और किस प्रकार कर्मक्षय करने से सिद्धिगति प्राप्त होती है।'—इसका विस्तारपूर्वक प्रतिपादन होने से 'औपपातिक' यह नाम सार्थक है।

इस औपपातिक सूत्रका प्रारम्भ-भाग वर्णनात्मक है। इस में नगर, चैत्य, वनषण्ड, राजा, रानी, साधु, देव, देवी, समवसरण, धर्मकथा-आदिका वर्णन बहुत सुन्दर ढंग से किया गया है। इसके अध्ययन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि तात्कालिक भारत का सब से अधिक शक्तिशाली राजा कूणिक का भगवान् महावीर स्वामीके प्रति कैसा अनन्य भक्तिभाव था। तभी तो उन्होंने अपने राज्यसंचाल विभाग में एक सा विभाग खोला था, जिसका अधिकारी और उसके हाथ के नीचे काम करने वाले अन्य हजारों कार्यकर भगवान् के विहार का समाचार राजा के पास सर्वदा पहुँचाते रहते थे। राजा की ओर से उन्हें पूरी जीविका का प्रबन्ध था, और समय समय पर राजा पूर्ण रूप से पारितोषिक प्रदान कर उनका सत्कार भी करता था। जनसमुदायका भी भगवान् के प्रति अनन्य भाव था, तभी तो भगवान् के आगमनका समाचार पाते ही जनसमुदाय उनके दर्शन के लिये उमड़ पड़ता था। आबालवृद्ध स्त्रीपुरुष भगवान् के दर्शन-निमित्त उद्यान में पहुँचते थे। भगवान् उन्हें धर्मोपदेश देते थे, उसका प्रभाव यह पड़ता कि कितनेक सर्वधिरति और कितनेक देशविरति होते थे, और कितनेक सुलभबोधि हो जाते थे। भगवान् के बताये हुए उपदेशानुसार अपने जीवन को परिवर्तित

कर वे देश, समाज सभीका कल्याण करते थे, और अपने इहलोक और परलोक की सिद्धि को भी प्राप्त करते थे ।

द्वितीय भाग में भगवान् गौतमस्वामी और भगवान् महावीरका प्रश्नोत्तर-रूप संवाद है । इस संवाद के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि किन कर्मों से जीव नरकगामी होते हैं, किन कर्मों से देवलोकगामी होते हैं, और कैसे सिद्धिगामी होते हैं ।

इस प्रकार यह सूत्र परमोपादेय है । वर्णन की दृष्टि से यह तो समस्त जैनागमों का वर्णनकोश ही है । क्यों कि अन्य आगमों में जहाँ कहीं भी नगर, चैत्य, राजा, रानी आदिका वर्णन आता है, वहाँ संक्षेप में ही आता है, और वहाँ 'औपपातिक सूत्र' से ही वर्णनात्मक सन्दर्भ लेनेके लिये निर्देश किया जाता है । इस दृष्टि से भी इसकी अत्यन्त उपादेयता है । सभी जीव सर्वदा यही चाहते हैं कि 'सर्वदा मे सुखं भूयाद् दुःखं माऽस्तु कदा च न' अर्थात्-मुझे सर्वदा सुख मिले, दुःख कभी भी नहीं मिले । सुख अहिंसादि सत्कर्म से या आत्यन्तिक कर्मविमोक्ष से ही मिलता है, और दुःख हिंसादि असत्कर्मों से मिलता है । नरकादिक दुःख जिन कर्मों से मिलते हैं तथा देवलोकादिक सुख जिन कर्मों से मिलते हैं उन कर्मोंका परिज्ञान इस शास्त्र के अध्ययन से होता है । ज्ञपरिज्ञा से सुखदायी और दुःखदायी कर्मोंको जानकर जीव प्रत्याख्यान-परिज्ञा से दुःखदायी कर्मोंको छोड़कर, आसेवनपरिज्ञा से सुखदायी कर्मोंका आसेवन करता है, और क्रमिक आत्मविशुद्धि से सिद्धिगामी होता है । इस दृष्टि से तो इसकी उपयोगिता अद्वितीय ही है ।

ऐसे अनुपम इस सूत्र की सर्वजनगम्य व्याख्या की नितान्त आवश्यकता थी । इस अभावको दूर करने के लिये पूज्य श्री १००८ घासीलालजी म. सा. ने इस सूत्र की 'पीयूषवर्षिणी' नामक सरल संस्कृत व्याख्या रची है । जो साधारण संस्कृतज्ञों के लिये भी सुबोध है । हिन्दी और गुर्जर-भाषी जनताको इस सूत्रका अभिप्राय सरलतया ज्ञात हो, इसलिये इसका हिन्दी-गुर्जर अनुवाद भी किया गया है । इस प्रकार मूल, संस्कृत व्याख्या, हिन्दी और गुजराती अनुवाद-सहित यह 'औपपातिकसूत्र' मुद्रित हो कर आप शास्त्रप्रेमी महानुभावों के समक्ष प्रस्तुत है । आप इस के स्वाध्याय से अपने जीवन का चरम उत्कर्ष साधन कर इस दुर्लभ मानव जीवन को सफल करें, यही हमारी आन्तरिक भावना है । इति शम् ।

अहमदाबाद

ता. २४-१०-५८.

-मुनि कन्हैयालाल

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ-રચિત

સૂત્રોની ટીકા

શ્રી-વધ્માન-શ્રમણ-સંઘના આચાર્ય

પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આ પે લ

સ મ મ તિ પ ત્ર



તે મ જ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા કેલેજના પ્રોફેસરો

તે મ જ

શાસ્ત્રજ્ઞ શ્રાવકોના અભિપ્રાયો.

કે. શ્રીન લોજ પાસે
ગરેડીયા કુવારોડ
રાજકોટ : સૌરાષ્ટ્ર

શ્રી અખિલ ભારત ઋવે. સ્થા. જૈન-
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

(श्री दशवैकालिकसूत्रका सम्मतिपत्र.)

॥ श्रीवीरगौतमाय नमः ॥



सम्मति-पत्रम्.

मए पंडियमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-मूलचन्दवास-चारा पत्ता पंडियरयण-
मुणि-घासीलालेण विरइया सकय-हिंदी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नाम-
सुत्तस्स आयारमणिमंजूसा वित्ती अवलोइया, इमा मणोहरा अत्थि । एत्थ सदाणं
अइसयजुत्तो अत्थो वणिओ, विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती
दीसइ । आयारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुव्वं उल्लेहो कडो, तहा अहिंसाए
सरुव्वं जे जहा-तहा न जाणंति तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा
पत्तेयविसयाणं फुडरुवेण वण्णणं कडं, तहा मुणिणो अरहत्ता इमाए वित्तीए अव-
लोयणाओ अइसयजुत्ता सिज्झइ । सकयल्लाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो
अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दट्ठुव्वा । अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिर-
यणाणं सब्भावो समाजस्स अहोभग्गं अत्थि । किं ?, उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ,
जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ, अम्हकेरं साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि, तेसिं
पुणोवि उदओ भविस्सइ, जस्स कारणाओ भवियप्पा मोक्खस्स जोग्गो भवित्ता
पुणो निव्वाणं पाविहिइ । अओहं आयारमणि-मंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो
धन्नावायं देमि- ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन-
शुक्लत्रयोदशी-मङ्गले
(अलवर स्टेट)

इइ-

उवज्झाय-जइण-मुणी आयारामो
(पचनइओ)

जैनागमवेत्ता जैनधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामजी
महाराज तथा न्याय व्याकरण के ज्ञाता परम-पण्डित मुनिश्री १००७
श्री हेमचंद्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ
श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाणपत्र निम्न प्रकार है—

सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई
(पुण्णमासी) १५ सुक्कारो लुहियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरि-उवासगसुत्तस्स
अगारधम्मसंजीवणी-नामिया वित्ती पंडियमूलचन्द-वासो अज्जोवंतं सुयासमीईणं, इयं वित्ती
जहा णामं तहा गुणेवि धारेइ, सच्चं, अगाराणं तु इमा जीवण (संजमजीवण) दाई एव अत्थि ।
वित्तिकत्तुणा मूलसुत्तस्स भावो उज्जुसेलीओ फुडीकओ, अहय उवासयस्स सामणविसेसधम्मो,
णयसियवायवाओ, कम्मपुरिसइवाओ, समणोवासयस्स धम्मदढत्ता य, इच्चाइविसया अस्सि
फुडरीइओ वण्णिया, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठुप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिडिओवि
सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्ठमाण—भरहवासस्स य कत्तुणा विसयप्पयारेण
चित्तं चित्तिंतं, पुणो सकयपाढीणं, वट्ठमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए भासीण य परमोव-
यारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तुणो एयं कज्जं परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेय-
जणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुत्तस्स अवलोयणमईव लाहप्पयं, अवि उ सावयस्य उ
इमं सत्थं सव्वस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो अणेगकोडीसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अच्चंतप-
रिस्समेण जइणजणतोवरि असीमोवयारो कडो, अह य सावयस्य बारस नियमा उ पत्तेयजणस्स
पढगिज्जा अत्थि, जेसिं पहावओ वा गहणाओ आया निव्वाणाहिगारी भवइ, तहा भवियव्व-
यावाओ पुरिसक्कारपरक्कमवाओ य अवस्समेव दंसणिज्जो, किं बहुणा ! इमीसे वित्तीए पत्तेयविस-
यस्स फुडसदेहिं वण्णणं कयं, जइ अन्नोवि एवं अम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं भवेज्जा
तया नाणस्स चरित्तस्स तहा संघस्स य खिप्पं उदओ भविस्सइ, एवं हं मन्ने ॥

भवईओ—

उवज्झाय—जइणमुणि—आयाराम—पंचनईओ,

सम्मतिपत्र

(भाषान्तर)

श्रीवीरनिर्माण सं० २४५८ आसोज

शुक्ला (पूर्णिमा) १५ शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्द्रजीने पंडितरत्नमुनिश्री घासीलालजीकी रची हुई उपासकदशांग मूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनो नामक टीका पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम तथागुणवाली—अच्छी बनी है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री—संयमरूप जीवनको देनेवाली ही है। टीकाकार ने मूलमूत्र के भावका सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा श्रावक का सामान्य धर्म क्या है ? और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप कर्म—पुरुषार्थ—वाद और श्रावकको धर्मके अन्दर दृढ़ता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण इसमें भलीभाँति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीरके समय भारतवर्ष में जैनधर्म किस जाहोजलाली पर था ? इस विषयका तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया है। फिर संस्कृत जाननेवालोंको तथा हिंदीभाषाके जाननेवालोंको भी पूरा लाभ होगा, क्योंकि टीका संस्कृत है उसकी माल हिन्दी कर दी गई है। इसके पढ़नेसे कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है ! टीकाकारका यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस मूत्रको मध्यरथ—भावसे पढ़ने वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें श्रावकों (गृहस्थों) का तो यह मूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकारको कौटिलः धन्यवाद दिया जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैन—जनताके ऊपर असीम उपकार किया है। इसमें श्रावकके बारह नियम प्रत्येक स्त्री—पुरुषके पढ़ने योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा मोक्षका अधिकारी होता है। तथा भवितव्यतावाद और

पुरुषकारपराक्रमवाद हर-एकको अवश्य देखना चाहिये । कहां तक कहें, इसटी कामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे बताये गये हैं । हमारी सुप्तप्राय (सोई हुईसी) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान, चारित्र तथा श्रीसंघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूँ—

आपका
उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी.



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८
श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं. मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग मूत्रके
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज—कृत श्री उपासकदशाङ्ग मूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका अतिमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व धुरवार्थसे तैयार किया है सो आप धन्यवादके पात्र हैं । आप जैसे व्यक्तियोंकी समाजमें पूर्ण आवश्यकता है । आपकी इस लेखनीसे समाजके विद्वान् माधुवर्ग पढ़कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको अत्यानन्द हुआ, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाजमें भी ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे— यह एक हमारे लिये बड़े गौरवकी बात है ।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर.

श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्र की 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर

जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय

जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका

सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१.

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगारधर्माऽमृत-वर्षिणी' टीका वाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनि श्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म. ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रामाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलोंको सरल बनानेमें काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा, ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूँगा कि वे वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बनाकर शास्त्रमें दीर्घ अनमोल शिक्षाओं से अपने जीवनको शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।

श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्ट-द्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इसपर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं, पहुँचने पर समाचार दें।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म. ठाने ६ सुख शान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म. सा. ठाने ४ को हमारी ओरसे वन्दना अर्जकर सुखशाता पूछें।

पूज्य श्री घासीलालजी म.जी का लिखा हुआ विपाकमूत्र महाराजश्रीजी देखना चाहते हैं, इसलिये १ कापी आप भेजने की कृपा करें; फिर आपको वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहां से मिले वहांसे १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देनेकी कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक

प्यारेलाल जैन

जैनागमवारिधि - जैनधर्मदिवाकर - उपाध्याय - पण्डित - मुनि
 श्रीआत्मारामजी महाराज (पंजाब)का आचाराङ्गसूत्र की
 आचारचिन्तामणि टीका पर
 सम्मति-पत्र ।

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्रीघासीलालजी (महाराज)की बनाई हुई श्रीमद्
 आचाराङ्गसूत्र के प्रथम अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका सम्पूर्ण उपयोग-
 पूर्वक सुनी ।

यह टीका-न्याय सिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध है।
 तथा इसमें प्रसंग २ पर क्रम से अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित रूप से
 मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा
 प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक प्रतिपादन अधिक
 मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि-जिज्ञासु महोदय इसका भलीभाँति पठन द्वारा
 जैनागम-सिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को हर्षित करेंगे, और इसके मनन
 से दक्ष जन चार अनुयोगों का स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा आचार्यवर्य इसी प्रकार
 दूसरे भी जैनागमों के विशद विवेचन द्वारा श्वेताम्बर स्थानकवासी समाज पर
 महान उपकार कर यशस्वी बनेंगे ।

वि. सं. २००२ }
 मृगशर सुदि १ }

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम
 लुधियाना (पंजाब)

—: * :—

शुभमस्तु ।

बीकानेरवाला समाजभूषण शास्त्रज्ञ भेरुदानजी शेठिआका अभिप्राय

*

आप जो शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है । इससे
 जैनजनता को काफी लाभ पहुँचेगा.

(ता. २८-३-५६ का पत्र में से)

॥ श्री ॥

जैनागमवारिधि—जैनधर्मदिवाकर—जैनाचार्य—पूज्य—श्री आत्मारामजी—

महाराजानां पञ्चनद—(पंजाब)स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा—

मर्थबोधिनीनामकटीकायामिदम्—

सम्मतिपत्रम्.

आचार्यवर्यैः श्री वासोलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थबोधिनी-
नाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं हि वृत्तिर्मुनिवरस्य
वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्विर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमने-
कशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः सरला सुबोधिनी च तथा सारवन्ध्यापि । अस्याः
स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सुभिर्निर्वाणपदमनुसरद्विज्ञान—दर्शन—चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः
श्रावकैश्च ज्ञानदर्शनचारित्र्याणि सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुकविर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय जैनागमसूत्राणां
सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च वृत्तीर्विधाय तांस्तान् सूत्र-
ग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां मूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन
सनाथयिष्यन्त्यवश्यं मुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ।” इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा
लुधियाना.

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः ।

ऐसेही :—

मध्यभारत सैलाना—निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी श्रमणोपासक
जैन लिखते हैं कि :—

श्रीमान की की हुई टीकावाला उपासकदशांग सेवक के दृष्टिगत हुवा,
सेवक अभी उसका मनन कर रहा है । यह ग्रन्थ सर्वांग—सुन्दर एवम् उच्चकोटि का
उपकारक है ।

निरयावलिकासूत्रका

आगमवारिधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य-पूज्यश्री

आत्मारामजी महाराजकी तरफ का आया हुआ

सम्मतिपत्र

लुधियाना. ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्दजी पानाचंदजी ! सादर जय जिनेन्द्र ।

पत्र आपका मिला । निरयावलिका-विषय पूज्यश्रीजीका स्वास्थ्य ठीक न होने से उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है, आपको भेज रहे हैं । कृपया एक कौपी निरयावलिका की और भेज दीजिये और कोई योग्य सेवा-कार्य लिखते रहें !

भवदीय.

गुजरमल-बलवंतराय जैन

॥ सम्मतिः ॥

(लेखक जैनमुनि पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराज)

सुन्दरबोधिनीटीकया समलङ्कृतं हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितं च श्रीनिरया-
वलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम्, सं-
स्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविश-
दत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपदव्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संस्कृतसाधारण-
ज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रैमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि
एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराजानां परिश्रमोऽयं
प्रशंसनीयो, धन्यवादार्हाश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्रीसमीरमल्लजी-श्रीकन्हैया-
लालजी-मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादा-
र्हा स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलङ्कृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दको-
षोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनु-
भवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्यास्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं
सफलमिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।

श्री उपासकदशाङ्ग सूत्र पर जैनसमाज के अग्रगण्य जैनधर्मभूषण

महान विद्वान् संतों एवं विद्वान् श्रावकोंने सम्मति मेजी है,

उन के नाम निम्न लिखित हैं।

- (१) लुधियाना—सम्बत् १९८९, आश्विन पूर्णिमा का पत्र, श्रुतज्ञान के भंडार आगम-रत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००८ श्री उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य श्री मुनि हेमचन्द्रजी महाराज.
- (२) लाहौर—वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डित रत्न श्री १००८ श्री भागचन्द्रजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७ श्री त्रिलोकचंद्रजी महाराज.
- (३) खीचन से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८ श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) बालाचोर—ता. १४-११-३६ का पत्र, परम प्रसिद्ध भारतरत्न श्री १००८ श्री शतावधानीजी श्री रतनचन्द्रजी महाराज.
- (५) बम्बई—ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री कवि नान-चन्द्रजी महाराज.
- (६) आगरा—ता. १८-११-३६, जगद्-वल्लभ श्री १००८ श्री जैनदिवाकर श्री चौथमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी प्यारचन्द्रजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद (दक्षिण) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थविरपदभूषित भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचन्द्रजी महाराज तथा प्रसिद्ध वक्ता श्री १००७ श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर—ता. २६-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांतस्वभावी श्री १००८ श्री पूज्य श्री खूबचन्द्रजी महाराज.
- (९) अम्बाला—ता. २९-११-३६ का पत्र, परम प्रतापी पंजाब केसरी श्री १००८ श्री पूज्य श्री काशीरामजी महाराज.

- (१०) सेलाना—ता. २९-११-३६ का पत्र, शाखों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.
 (११) खीचन—ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ सुश्रावक श्रीयुत्
 माधवलालजी.

ता. २५-११-३६

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुआ उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला। यहां विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुखशांति में विराजमान हैं। आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी वन्दना अर्ज कर सुखशांति पूछें। आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मति मंगवाई उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराज ने फरमाया है कि वर्तमान में स्थानकवासी समाज में अनेकानेक विद्वान् मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचने का साहस जैसा घासीलालजी महाराज ने किया है वैसा अन्य ने किया हो ऐसा नजर नहीं आता। दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों है कि संस्कृत प्राकृत हिन्दी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं। जैन-समाज में ऐसे विद्वानों का गौरव बढे यही शुभ कामना है। आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा।
 योग्य लिखें, शेष शुभ।

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती

*

आगरा से:—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्धवक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानी गणीजी श्री प्यारचन्द जी महाराज ने इस पुस्तक को अतीव पसन्द की है।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खीचन से लिखते हैं कि:-

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाधतत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूँ ।

परन्तु :—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की है । वास्तव में ऐसे उत्तम व सबके समझाने योग्य ग्रन्थों की बहुत आवश्यकता है और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा सकते हैं—ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्रकाश से यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकार में दीपावली का अनुभव करती हुई महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति में अग्रसर होती रहेगी ।

—: * :—

ता. २९-११-३६

अम्बाला (पंजाब)

पत्र आपका मिला । श्री श्री १००८ पंजाब केसरी पूज्य श्री काशीरामजी महाराज की सेवा में पढ़ कर सुना दिया । आपकी भेजी हुई उपासकदशाङ्ग सूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरु की एकएक प्रति भी प्राप्त हुई । दोनों पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं, ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवाने की बड़ी आवश्यकता है । इन पुस्तकों से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है । आपका यह पुरुषार्थ सराहनीय है ।

आपका

शाशिभूषण शास्त्री

अध्यापक, जैन हाई स्कूल

अम्बाला शहर.

शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्ववारिधि धैर्यवान् श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री स्वचन्द्रजी महाराज साहेबने सूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि घासीलालजी महाराज ने उपासकदशाङ्ग सूत्रकी टीका लिखने में बड़ा ही परिश्रम किया है । इस समय इस प्रकार प्रत्येक सूत्रोंकी संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्ध हिन्दी अनुवाद होने से भगवान् निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रस का लाभ मिल सकता है.



बालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पंडित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्द्रजी महाराज फरमाते हैं कि :—

उत्तरोत्तर जोतां मूल सूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकोरे स्तुत्य प्रयास कर्यो छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरी लेवा जेवुं छे, वली करांचीना श्री संवे सारा कागलमां अने सारा टाइपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे, जे एक प्रकारनी साहित्यसेवा बजावी छे.



बम्बई शहर में विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्द्रजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है, प्रयास अच्छा है ।



स्वीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्द्रजी महाराज और पंडितरत्न मुनि समरथमलजी महाराज फरमाते हैं कि—विद्वान् महात्मा पुरुषोंका प्रयत्न सराहनीय है । जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्ग सूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुन्दरता से लिखी है ।



श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्मदिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जैनाचार्य श्री पूज्य
घासीलालजी महाराज चरणवन्दन स्वीकार हो ।

अपरञ्च—समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी जैनाचार्य ने नहीं किया ।

आपने स्थानकवासी जैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्ति प्रदान करें ता कि आप जैनसमाज के ऊपर और भी उपकार करते रहें, और आप चिरञ्जीव हों ।

हम हैं आप के मुनि तीन
डदेपुर. मुनि सत्येन्द्रदेव—मुनि लखपतराय—मुनि पद्मसेन

✽

इतवारी बाजार

नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराज—द्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराजश्री का यह स्तुत्य कार्य है । हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रों का सेट देखा और कई मार्मिक स्थलोंको पढा, पढकर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी ।

वास्तव में मुनिराजश्री जैनसमाज पर ही नहीं, इतर समाज पर भी महा उपकार कर रहे हैं । ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता है, वह सभी समाज की अनमोल निधि है, जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है, जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घरघर में होना आवश्यक है ।

साहित्यरत्न

मोहनमुनि सोहनमुनि जैन.

શ્રી દશવૈકાલિક સૂત્રનું સમ્મતિપત્ર.

શ્રમણસંઘના મહાન આચાર્ય આગમવારિધિ સર્વતન્ત્ર સ્વતંત્ર જૈનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.



મેં તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મૂલચંદ્રજી વ્યાસ—નાગૌર મારવાડ વાળા દ્વારા મળેલી પંડિતરત્ન શ્રી. ઘાસીલાલજીમુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકાલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું. આ ટીકા સુંદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ સારી રીતે વિશેષ ભાવ લઈને સમજાવવામાં આવેલ છે.

તેથી વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે આ ટીકા પરમ ઉપકાર કરવાવાળી છે. ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો સારો ઉલ્લેખ કરેલ છે. જે અહિંસાના સ્વરૂપને યથાર્થરૂપથી નથી જાણતા, તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે?’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે. આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.

આ :વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃતછાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદચ્છેદ સુબોધદાયક બનેલ છે.

પ્રત્યેક જ્ઞાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું?. અમારા સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિરત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. અદ્યતન સુમપ્રાય—સુતેલો સમાજ અને લુપ્તપ્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે ફરીથી ઉદય થશે. જેનાથી ભાવિતાત્મા મોક્ષને યોગ્ય બનશે અને નિર્વાણ પદને પામશે. આ માટે અમે વૃત્તિકારને વારંવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૯૦ શાલ્ગુન શુકલ
તેરસ મંગળવાર
(અલ્લવર સ્ટેટ)

ધતિ

ઉપાધ્યાય જૈનમુનિ
આત્મારામ
પંચનદીય.

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંજબ કેસરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદજી મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધાર્યા હતા. ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.



શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજદ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારનું જે કાર્ય થઈ રહ્યું છે તે કાર્ય જૈનસમાજ અને તેમાંયે ખાસ કરીને સ્થાનકવાસી જૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતિની જડને મજબૂત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે. માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ લોગ દેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ લગીરથ કાર્ય જલ્દીથી જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

*

દરિયાપુરીસંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઈશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના
સૂત્રો સખંધે વિચારો
 નમામિ વીરં ગીરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છની સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ—સમાધમાં હશે, નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મારાધનમાં લીન હશે.

સૂત્રપ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી લાવના છે. દશવૈકાલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે. ટીકા ખૂબ સુંદર, સરળ અને પંડિતજનોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સાથે સાથે ટીકા—વિનાના મૂળ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે. અત્રે પૂજ્ય આચાર્ય ગુરુદેવને આંગે મોતિયો ઉતરાવ્યો છે અને સાફ છે એજ.

આસો શુદ્ધ ૧૦, મંગળવાર તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઈચ્છતો,
 દયા મુનિના પ્રણિપાત.



દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન ભાઈચિંદણ મહારાજનો અભિપ્રાય
શ્રી

રાણપુર તા. ૧૯-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર પંડિતરત્ન પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિમુનિવરોની સેવામાં. આપ સર્વ સુખસમાધિમાં હશે.

સૂત્ર પ્રકાશનનું કામ સુંદર થઈ રહ્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ. આપના પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાંક સૂત્રો જોયાં. સુંદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સૂત્રપ્રકાશનનું કામ ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને ભવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળપ્રહ્લચારી
પૂ. શ્રી ભાઈચિંદણ મહારાજની
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનિના
પાયવંદન સ્વીકારશે.



તા. ૧૧-૫-૫૬
વીરમગામ

ગચ્છાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના આત્માથી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા. ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્ધૃત.

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર અને સરળ ભાષામાં થાય છે તે સાહિત્ય, પંડિત મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ, સમય ઓછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શક્યા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય જોયું છે, તે બહુ જ સારું અને મનન સાથે લખાયેલું છે. તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને અનુરૂપ લાગે છે. આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં સ્થાનકવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકુળ છે. આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માહુ

મુ. ખીચન.



લીંબડી સંપ્રદાયના સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રીવીતરાગદેવે, જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થ'કરનામગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામાં સહાય કરનાર અને તેને અનુમોદન આપનાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી, કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમપદના અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમશાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉદ્ધાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમાં પણ કરી રહ્યા છે. તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે, વંદનીય છે. તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ઘણા પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે. જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાનપ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ—શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમાં સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સૂચના છે કે :—

શાસ્ત્રોદ્ધારક પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ કરી રહેલ છે, તેમાં સહાય કરવા માટે—પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે તેને પહોંચી વળવા માટે સારું—સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સૂચના છે કે :—શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો, જે બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા જે ત્રણ જણાએ; ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેમ્બરો બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે. વ્યાપારીઓ, ધંધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો સંભાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકૂળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ સરલતાથી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમાં એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો. કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઇચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાએ અમદાવાદ પધરાવવા માટે વિનંતી કરવી, અને ત્યાં અનુકૂળતા મુજબ બે—ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમાં જામજોધપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટી મળવાની છે. તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક.

ફરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્ય ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક દેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને દીર્ઘાયુ રાખે જેથી તેઓ સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે. ઓં અસ્તુ.

ચાતુર્માસ સ્થળ. લીંબડી } લિ.
સં. ૨૦૧૦ શ્રાવણ વદ ૧૩ ગુરુ. } સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

*

શ્રીવર્ધમાનસંપ્રદાયના પૂજ્યશ્રી પૂનમચંદ્રજી

મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશારદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન-આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે. તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે. તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈનસમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે. આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા, ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ઘણીજ સુંદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી યુક્ત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈનસમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરેએ શાસ્ત્રા ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ, અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આવા મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલાકિક છે. તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું લગીરથ કાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ

તા. ૨૨-૪-૫૬ રવિવાર,

મહાવીરજયંતી

મુનિ પૂર્ણચંદ્રજી



ખંભાત સંપ્રદાયનાં મહાસતીજી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલભાઈ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ સાહેબ, અખિલ ભારત શ્રવે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

મુ. અમદાવાદ

અમો અત્રે દેવગુરુની કૃપાએ સુખરૂપ છીએ. વિ.માં આપની સમિતિ-દ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પૈકીનાં સૂત્રોમાંથી ઉપાસકદશાંગ સૂત્ર, આચારાંગ સૂત્ર અનુત્તરોપપાતિક સૂત્ર,

દશવૈકાલિક સૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં. તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણુંજ લાભદાયક છે. તે વાંચન ઘણુંજ સુંદર અને મનોરંજક છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અગાધ પુરુષાર્થથી કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રો સમાજને ઘણું લાભનું કારણ છે.

હંસ-સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના ભેદથી નિખાલસ ભાવનાએ અવલોકન કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. માટે દરેક ભવ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતપોતાના ઘરમાં બસાવવાની સુંદર તકને ચૂકશો નહિ. આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરા ને પુષ્ટીરૂપ સૂત્રો મળવાંબહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યમાં આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરાનું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એજ

લી. શારદાબાઈ સ્વામી

ખંભાત સંપ્રદાય.



ખરવાળા સંપ્રદાયનાં વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ
સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાનશેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ

મુ. રાજકોટ.

અત્રે બિરાજતા ગુ. ગુ.ના ભંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ આદિ ઠાણા બન્ને સુખશાતામાં બિરાજે છે. આપને સૂચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ ભાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશોજી એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટલાલ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં. તે સૂત્રો તમામ આદ્યોપાંત વાંચ્યાં, મનન કર્યાં અને વિચાર્યાં છે. તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખૂબજ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઝરણાઓથી આત્મરૂપ વાડીને વિકસિત કરશે. ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દ્વાન ભવ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશે તેવી આશા છે.

એજ લિ. બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી
મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામી
ના ફરમાનથી લી. ખોડીદાસ ગણેશભાઈ-ધંધુકા
સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ.

*

અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન
પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય.

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં ભાષાંતર કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે પ્રસિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું. મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી ભાષાઓના નિષ્ણાત છે, એ એમનો ટુંકો પરિચય કરતાં સહજ જણાઈ આવે છે. શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના શિષ્ય-વર્ગનો અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે, તે જોઈ મને આનંદ થયો. સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેસરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી-સમાજમાં વિદ્વત્તા ઘણી ઓછી છે તે દિગંબર, મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા સમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના ભય વગર કહી શકું. પૂ. મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો સારાં આપવામાં આવ્યાં છે. ભાષા શુદ્ધ છે એમ હું ચોક્કસ કહી શકું છું. ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં છે. મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજ-શ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના ભાષાંતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગંજ, વડોદરા
તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬

કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ,
એમ. એ.



મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકલિક આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં આ સૂત્રો ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે અને સાથે સાથે હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે, સંસ્કૃત ટીકા અને ગુજરાતી તથા હિન્દી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એકસરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર-ગ્રંથોમાં પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિન્દીમાં થયેલા ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વદ્જન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખિનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજુ ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજા સાત સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાં જ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈનસૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રીના આ મહાન કાર્યને જૈન સમાજનો-વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ.

સોફીયા કોલેજ, મુંબઈ.

રાજકોટની ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો

અભિપ્રાય

જયમહાલ

જગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલ છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકલિક, શ્રીવિષ્ણુશ્રુત વિ. મેં જોયાં.

આ સૂત્રો જોતાં પહેલીજ નજરે મહારાજશ્રીનો સંસ્કૃત, અર્ધમાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબૂ જણાઈ આવે છે. એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અજાણી નથી. આપણે જાણીએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કેટિના છે. તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે. આટલા ગહન અને સર્વગ્રાહ્ય સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કેટિના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણા અહોભાગ્ય છે. ચંત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવના ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન-આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલાં સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જ્ઞાસુ, મુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધારણ માણસ, સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ, સરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યા છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સંકળાયેલા જોઈએ છીએ. એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કલ્પના કરી શકાય તેમ છે. તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વર્ણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રીના આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. મને આશા છે કે જો દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલો શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો. રસિકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી
એમ. એ. એલ એલ. બી.
ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજ
રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર)

મુંબઈ અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ ભીનાસર કોન્ફરન્સ તથા સાધુસંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ.

હાલ જે વખતે શ્વેતાંબરસ્થાનકવાગ્રી જૈન સંઘ માટે આગમ-સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોની અતિઆવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત દીર્ઘદ્રષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદ્દી અધિવેશનમાં સર્વાનુમતે સાહિત્યમંત્રી નીમ્યા છે તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ થઈ રહ્યું છે જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચાર મંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે અને છેલ્લામાં છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર (એમ. એ.) એ પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે તે શાસ્ત્રોદ્ધારકમિટીના કામને આ સંમેલન તથા કેન્ફરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે. અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પંડિતની અને નાણાંની પાસેના ફંડમાંથી અને જાહેર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઇચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કેન્ફરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કાંઈ ત્રુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાનિધ્યમાં જઈ બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલ્લે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓની વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે જેવા પ્રમુખ સાહેબને ભલામણ કરે છે.

(સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬)

*

સ્વતંત્રવિચારક અને નિહર લેખક ‘જૈનસિદ્ધાંત’ના તંત્રીશ્રી

શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને સોરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરાવવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલતો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમનાં એક પત્રમાં મને લખેલું કે—

“આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ જેવામાં આવતા નથી. લાંબી તપાસને અંતે મેં મુનિ શ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા, શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા. આવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાંચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા. એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી યથાર્થ જ હોય એમાં

નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ છે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસીસમાજે જેવી આશા શ્રી ઘાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રીવર્ધમાન — શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રીઆત્મારામજી મહારાજે શ્રી ઘાસીલાલજી મ. નાં સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. નાં સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે ત્યારે સામાન્ય હિન્દી વાંચકને હિન્દી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આખું સૂત્ર સરળતાથી સમજાઈ જાય છે.

કેટલાકેને એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું આપણું કામ નહિ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. બીજા કોઈપણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ લ. મહાવીરે તે વખતની લોકભાષામાં (અર્ધમાગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવામાં તેમજ સમજવામાં ઘણું સરળ છે.

માટે કોઈ પણ વાંચકને એવો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાખવો. અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને ચૂકવું નહિ, એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રોજ વાંચવાં.

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું છે અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે બીજાં છ સૂત્રો લખાયેલ પડ્યાં છે, બે સૂત્રો—અનુયોગદ્ધાર અને ઠાણાંગ સૂત્રો—લખાય છે તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીનાં સૂત્રો, હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઈચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમનાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવે એમ ઈચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાન્ત’ —મે ૧૯૫૫.

શ્રુત ભકિત

(પૂ. આચાર્ય શ્રી ઈશ્વરલાલજી મ. સા. ની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર)

દ. સં. ના જૈન મુનિ શ્રી. દયાનંદજી મહારાજ

તા. ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ.

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય, જ્ઞાનદિવાકર પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર અનુપમ ન્યાય-યુક્ત, પૂર્વાપર-આવરુદ્ધ, સ્વપરકલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે. તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિન્દીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે. એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે.

ભ. મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી. પરંતુ તેમની વાણીરૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજેએ શ્રુતપરંપરાએ સાચવી રાખ્યો. શ્રુતપરંપરાથી સત્યવાતું જ્ઞાન જ્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવર્દિગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લભીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો-રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધમાગધી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મ ભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા મુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે; પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આંખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈનમાત્રની ફરજ છે. તેને સત્યસ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણાં સદ્ભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે સત્સંકલ્પ કર્યો છે. અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટ કરાવી શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ દ્વારા જ્ઞાન-પરબ વહેતી કરી છે. આવાં અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભ. મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે, હે ભગવાન ! સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે ? ભગવાન તેનો પ્રતિ-ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે, અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે, અને સંસારકલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષ-ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાનના કાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્યધર્મીઓ હજારો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિન્દુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેંકડો નહિ પણ હજારો ટીકાગ્રંથો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઇબલના પ્રચારાર્થે જગતની સર્વ ભાષાઓમાં તેનું ભાષાંતર કરી, તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ઓછી કિંમતે વેચી ધર્મ-

સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લીમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રન્થ કુરાનનું પણ અનેક ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે. આપણે પૈસા ઉપરનો મોહ ઉતારી ભગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ, અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાંપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. સમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૧૭ ભરી સમિતિના સભ્ય બનવું જોઈએ. ધાર્મિક અનેક ખાતાઓના મુકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું-જ્ઞાનપ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-ભગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ જેથી પરમ શાન્તિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. . (સ્થા. જૈન તા. ૫-૭-૫૬)

શ્રી. અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના પ્રમુખશ્રી વગેરે.

રાણપુર

પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્યભૂમિ ઉપર જ્યારથી શાન્ત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદી પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનીત પગલાં થયાં છે ત્યારથી ઘણા લાંબા કાળથી લાગૂ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે. અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમે સર્વને ધન્ય છે, અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાભ લે છે. મને તો સમજાય છે કે સાધુજી છઠે ગુણસ્થાનકે હોય છે. પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે. એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાંચ-સાત સાધુઓ જે સ્થાનકવાસી જૈન સમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતાં જરાએ વાર ન લાગે. સમાજકાશમાં સ્થા. જૈન સંપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળહળી નીકળે પ....ણ વો દિન....

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને મહારી એક નમ્ર સૂચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે, અને કાર્યપ્રણાલિકા યુવાનોને શરમાવે તેવી છે. તેમને ગામોગામ વિહાર કરવા અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણી શારીરિક, માનસિક અને વ્યાવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે. તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે જ્યાં શ્રાવકો ભક્તિવાળા હોય, વાડાના રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય એવા કોઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. બીજા કોઈ એવા સ્થળની અનુકૂળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડતા કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સૂચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપું છું. ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમના સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશો.

લિ. સદાનંદી જૈનમુનિ છોડાલાલજી.

“ જૈન સિદ્ધાંતના ” તંત્રીશ્રીનો અભિપ્રાય.

સ્થાનકવાસીઓમાં પ્રમાણભૂત સૂત્રો બહાર પાડનારી આ એકની એક સંસ્થા છે. અને એના આ છેલ્લા રિપોર્ટ ઉપરથી જણાય છે કે તેણે ઘણી સારી પ્રગતિ કરી છે તે જોઈ આનંદ થાય છે.

મૂળ પાઠ, ટીકા, હિન્દી તથા ગુજરાતી અનુવાદ સહિત સૂત્રો બહાર પાડવાં એ કાંઈ સહેલું કામ નથી. એ એક મહાભારત કામ છે. અને તે કામ આ શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ ઘણી સફળતાથી પાર પાડી રહી છે. તે સ્થાનકવાસી સમાજ માટે ઘણા ગૌરવનો વિષય છે અને સમિતિ ધન્યવાદને પાત્ર છે.

સમિતિ તરફથી નવ સૂત્રો બહાર પડી ચૂક્યાં છે, હાલમાં ત્રણ સૂત્રો છપાય છે. નવ સૂત્રો લખાઈ ગયાં છે અને જંબૂદ્વીપપ્રસન્નિ તથા નંદીસૂત્ર તૈયાર થઈ રહ્યાં છે.

હાલમાં મંત્રી શ્રી સાકરચંદ્ર ભાઈચંદ્ર સમિતિના કામમાં જ તેમનો આખો વખત ગાળે છે અને સમિતિના કામકાજને ઘણો વેગ આપી રહ્યા છે. તેમની ખંત માટે ધન્યવાદ.

અને આ મહાભારત કામના મુખ્ય કાર્યકર્તા તો છે વયોવૃદ્ધ પંડિત મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ. મૂળ પાઠનું સંશોધન તથા સંસ્કૃત ટીકા તેઓશ્રીજ તૈયાર કરે છે. મુનિશ્રીનો આ ઉપકાર આખાય સ્થા. જૈન સમાજ ઉપર ઘણો મહાન છે. એ ઉપકારનો બદલો તો વાળી શકાય તેમજ નથી.

પરંતુ આ સમિતિના મેમ્બર બની, તેના બહાર પડેલાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવી તેનું અધ્યયન કરવામાં આવે તો જ મહારાજશ્રીનું થોડું ઋણ અદા કર્યું ગણાય.

ભગવાને કહ્યું છે કે પઢમં જ્ઞાનં તત્ત્વો દયા-પહેલું જ્ઞાન પછી દયા, દયા ધર્મને યથાર્થ સમજવો હોય તો ભગવાનની વાણીરૂપ આપણા સૂત્રો વાંચવાં જોઈએ. તેનું અધ્યયન કરવું જોઈએ અને તેનો ભાવાર્થ યથાર્થ સમજવો જોઈએ.

એટલા માટે આ શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના સર્વ સૂત્રો દરેક સ્થા. જૈને પોતાના ઘરમાં વસાવવા જોઈએ. સર્વધર્મજ્ઞાન આપણા સૂત્રોમાં જ સમાયેલું છે, અને સૂત્રો સહેલાઈથી વાંચીને સમજી શકાય છે, માટે દરેક સ્થા. જૈન આ સૂત્રો વાંચે એ ખાસ જરૂરનું છે.

“ જૈન સિદ્ધાંત ” ડીસેમ્બર—૫૬

શ્રી ઉપાસકદશાંગ સૂત્રને માટે અભિપ્રાય.

મૂળ સૂત્ર તથા પૂ. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીએ બનાવેલ સંસ્કૃત છાયા તથા ટીકા અને હિંદી તથા ગુજરાતી-અનુવાદ સહિત.

પ્રકાશક-અ. ભા. શ્રવે. સ્થાનકવાસી જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ, ગરેડીઆ કુવા રોડ, ગ્રીન લોન્ પાસે, રાજકોટ. (સૌરાષ્ટ્ર). પૃષ્ઠ ૬૧૬ બીજી આવૃત્તિ બેવડું (મોટું) કઢ. પાકું પુઠું. જેકેટ સાથે સને ૧૯૫૬. કિંમત ૮-૮-૦.

આપણા મૂળ બાર અંગ સૂત્રોમાંનું ઉપાસકદશાંગ એ સાતમું અંગસૂત્ર છે, એમાં લગવાન મહાવીરના દશ ઉપાસકો-શ્રાવકોનાં જીવનચરિત્રો આપેલાં છે, તેમાં પહેલું ચરિત્ર આનંદ શ્રાવકનું આવે છે.

આનંદ શ્રાવકે જૈનધર્મ અંગીકાર કર્યો અને બાર વ્રત લગવાન મહાવીર પાસે અંગીકાર કરી પ્રતિજ્ઞા-પ્રત્યાજ્ઞાન લીધાં તેનું સવિસ્તર વર્ણન આવે છે. તેના અંતર્ગત અનેક વિષયો જેવા કે, અભિગમ, લોકાલોકસ્વરૂપ, નવતત્ત્વ, નરક, દેવલોક વગેરેનું વર્ણન પણ આવે છે.

આનંદ શ્રાવકે બાર વ્રત લીધાં તે બારે વ્રતની વિગત, અતિચારની વિગત વગેરે બધું આપેલું છે. તે જ પ્રમાણે બીજા નવ શ્રાવકોની પણ વિગત આપેલ છે.

આનંદ શ્રાવકની પ્રતિજ્ઞામાં અરિહંતચેડ્યાઈ શબ્દ આવે છે. મૂર્તિપૂજકો મૂર્તિપૂજા સિદ્ધ કરવા માટે તેનો અર્થ અરિહંતનું ચૈત્ય (પ્રતિમા) એવો કરે છે. પણ તે અર્થ તદ્દન ખોટો છે. અને તે જગ્યાએ આગળ પાછળના સંબંધ પ્રમાણે તેનો એ ખોટો અર્થ બંધ બેસતો જ નથી તે મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીએ તેમની ટીકામાં અનેક રીતે પ્રમાણો આપી સાબિત કરેલ છે અને અરિહંત ચેડ્યાઈ નો અર્થ સાધુ થાય છે તે બતાવી આપેલ છે.

આ પ્રમાણે આ સૂત્રમાંથી શ્રાવકના શુદ્ધ ધર્મની માહિતી મળે છે તે ઉપરાંત તે શ્રાવકોની ઋદ્ધિ, રહેઠાણ, નગરી વગેરેનાં વર્ણનો ઉપરથી તે વખતની સામાજિક સ્થિતિ, રીતરિવાજ, રાજ્યવ્યવસ્થા વગેરે બાબતોની માહિતી મળે છે.

એટલે આ સૂત્ર દરેક શ્રાવકે અવશ્ય વાંચવું જોઈએ, એટલું જ નહિ, પણ વારંવાર અધ્યયન કરવા માટે ઘરમાં વસાવવું જોઈએ.

પુસ્તકની શરૂઆતમાં વર્દ્ધમાન શ્રમણ સંઘના આચાર્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજનું સંમતિપત્ર તથા બીજા સાધુઓ તેમજ શ્રાવકોના સંમતિપત્રો આપેલા છે, તે સૂત્રની પ્રમાણભૂતતાની ખાત્રી આપે છે.

“જૈન સિદ્ધાંત” નન્યુઆરી, ૫૭

સેંકડો સટીફીકેટો ઉપરાંત હાલમાં મળેલા

કેટલાક તાજા અભિપ્રાયો

શાસ્ત્રોદ્ધારના કાર્યને વેગ આપો

તંત્રીસ્થાનેથી (જૈનજ્યોતિ) તા. ૧૫-૬-૫૭

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ ઠાણા ૪ હાલમાં અમદાવાદ મુકામે સરસપુરના સ્થા જૈન ઉપાશ્રયમાં બિરાજમાન છે. તેઓશ્રી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય ખૂબ જ ખંત અને ઉત્સાહથી વૃદ્ધવયે પણ કરી રહ્યા છે. તેઓશ્રી વૃદ્ધ છે છતાં પણ આખો દિવસ શાસ્ત્રની ટીકાઓ લખી રહ્યા છે. આજ સુધીમાં તેમણે લગભગ ૨૦ જેટલાં શાસ્ત્રોની ટીકાઓ લખી નાખી છે અને બાકીનાં સૂત્રાની ટીકા જેમ અને તેમ જલદી પૂર્ણ કરવી એવા મનોરથ સેવી રહેલ છે, સ્થા. જૈન સમાજમાં શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા લખવાનો આ પ્રથમ જ પ્રયાસ છે અને તે પ્રયાસ સંપૂર્ણ અને એવી અમે શાસનદેવ પ્રત્યે પ્રાર્થના કરીએ છીએ. આજ સુધી ઘણા મુનિવરોએ શાસ્ત્રોનું કામ શરૂ કરેલ છે પણ કોઈએ પૂર્ણ કરેલ નથી. પૂજ્યશ્રી અમુલબક્ષવીજી મહારાજે બત્રીસે શાસ્ત્રો ઉપર હિન્દી અનુવાદ કરેલ અને સંપૂર્ણ બનેલ. ત્યારબાદ આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ હિન્દી ટીકા કેટલાક શાસ્ત્રો ઉપર લખેલ પણ ઘણા શાસ્ત્રો બાકી રહી ગયાં. પૂજ્ય હસ્તિમલજી મહારાજે એક બે શાસ્ત્રો ઉપરની ટીકાઓના અનુવાદો કરેલ. પૂજ્ય શ્રી જવાહિરલાલ મહારાજશ્રીએ સૂયગડાંગસૂત્ર ટીકા સહિત હિન્દી અનુવાદ સાથે પ્રકાશિત કરેલ. શ્રી સાલાગ્યમલજી મહારાજે આચારાંગની હિન્દી ટીકા લખેલ પણ સંપૂર્ણ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા હજી સુધી સ્થા. જૈન સાધુઓ તરફથી થયેલ નથી. બ્યારે પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ ૨૦ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા તેનો હિન્દી ગુજરાતી અનુવાદ કરાવેલ છે. આથી હવે આશા બંધાય છે કે તેઓશ્રી બત્રીસે બત્રીસ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા લખવામાં સફળ થશે અને શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ આજ સુધી ૧૦ થી ૧૨ શાસ્ત્રો છપાવી પણ દીધાં છે અને હજી પણ તે શાસ્ત્રો વિશેષ જલદી છપાય તે માટે શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સંપૂર્ણ પ્રયત્ન કરી રહેલ છે તે ધન્યવાદને પાત્ર છે.

જૈનશાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના રૂ. ૨૫૧ ભરીને લાઈફ મેમ્બર થનારને તમામ શાસ્ત્રો શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તરફથી ભેટ મળે છે. આ રીતે એક પંથ અને દો કાજ. બન્ને રીતે લાભ થાય તેમ છે. રૂ. ૨૫૧ થી ૫૦૦ રૂપિયાની કિંમતનાં શાસ્ત્રો મળે એ પણ મોટો લાભ છે અને પ્રવચનની પ્રભાવના કરવાનો ધર્મલાભ પણ મળે છે.

આ સાથે પૂજ્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના સુશિષ્ય પં. મુનિશ્રી કન્હૈયા-
લાલજી મહારાજ મલાડ મુકામે ચાતુર્માસ બિરાજે છે અને તેઓશ્રી શાસ્ત્રોના
મેમ્બરો કરવા માટે અથાગ પ્રયત્ન કરીને પ્રવચનની સેવા બજાવી રહ્યા છે. અને
અત્યાર સુધીમાં મુંબઈ તેમજ પરાઓના લગભગ ૪૦ જેટલા ગૃહસ્થો લાઈફ
મેમ્બર બની ગયા છે અને મુંબઈમાં લગભગ ૩૦૦ જેટલા મેમ્બરો થાય તે
ઈચ્છવા યોગ્ય છે. શ્રીમંત ગૃહસ્થો હજારો રૂપિયા પોતાના ઘર ખર્ચમાં તેમજ
મોજશોખના કામોમાં તેમજ વ્યાવહારિક કામોમાં વાપરી રહ્યા છે તો આવા
શાસ્ત્રોદ્ધાર જેવા પવિત્ર કાર્યમાં રૂપિયા વાપરશે તો ધર્મની સેવા કરી ગણાશે.
અને બદલામાં ઉત્તમ આગમસાહિત્યની એક લાયબ્રેરી મળી જશે. જેનું વાંચન
કરવાથી આત્માને શાંતિ મળશે અને શાસ્ત્રઆજ્ઞા-પ્રમાણે વર્તવાથી જીવન સફળ થશે.



શતાવધાની મુનિશ્રી જયંતીલાલજી મહારાજશ્રીનો અમદાવાદનો પત્ર “સ્થાનકવાસી જૈન” તા. ૫-૯-૫૭ના અંકમાં છપાએલ છે જે નીચે મુજબ છે.

સૂત્રોના મૂળ પાઠોમાં ફેરફાર હોઈ શકે ખરો ?

તા. ૭-૮-૫૭ના રોજ અત્રે બિરાજતા શાસ્ત્રોદ્ધારક આચાર્ય મહારાજશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પાસે, મારા ઉપર આવેલ એક પત્ર લઈને હું ગયો હતો, તે સમયે મારે પૂ. મ. સા. સાથે જે વાતચીત થઈ તે સમાજને જાણ કરવા સારૂ લખું છું.

‘શાસ્ત્રોનું’ કામ એક ગહન વસ્તુ છે. અપ્રમાદી થઈ તેમાં અવિરત પ્રયત્નો કરવા જોઈએ, સંપૂર્ણ શાસ્ત્રોનું જ્ઞાન તેમજ દરેક પ્રકારની ખાસ ભાષાઓનું જ્ઞાન હોય તોજ આગમોદ્ધારનું કાર્ય સફળતાથી થાય. આ પ્રકારનો પ્રયત્ન હાલ અમદાવાદ ખાતે સરસપુર જૈન સ્થાનકમાં બિરાજતા પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કરી રહ્યા છે. શાસ્ત્ર-લેખનનું આ કાર્ય થઈ રહ્યું છે, તેમાં અનેક વ્યક્તિઓને અનેક પ્રકારની શંકાઓ થાય છે. તે પૈકી શાસ્ત્રોના મૂળ પાઠમાં ફેરફાર થાય છે ? કરવામાં આવે છે ? એવો પ્રશ્ન પણ કેટલાકને થાય છે અને તેવો પ્રશ્ન થાય તે સ્વાભાવિક છે, કેમકે અમુક મુનિરાજો તરફથી પ્રગટ થયેલ સૂત્રોના મૂળ પાઠમાં ફેરફાર થયેલા છે. જેથી આ કાર્યમાં પણ સમાજને શંકા થાય.

પણ ખરી રીતે જોતાં, અત્યારે જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ ચાલી રહ્યું છે તે વિષે સમાજને ખાત્રી આપવામાં આવે છે કે, શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી અત્યાર મુધીમાં પ્રગટ થયેલાં આગમોના મૂળ પાઠમાં જરાપણ ફેરફાર કરવામાં આવેલ નથી અને ભવિષ્યમાં જે સૂત્રો પ્રગટ થશે તેમાં ફેરફાર થશે નહિ તેની સમાજ નોંધ લે.

લી.

શતાવધાની શ્રી જયંત મુનિ-અમદાવાદ

“ શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનો ટુંક પરિચય ”

સ્થાનકવાસી સમાજની આ એકની એક સંસ્થા છે કે જેણે અત્યાર સુધીમાં તેર સૂત્રો છપાવી બહાર પાડી દીધાં છે. સાત સૂત્રો છપાય છે અને બીજાં કેટલાક છાપવા માટે તૈયાર થઈ ચૂક્યા છે.

આ પ્રમાણે આ સંસ્થાએ મહાન્ પ્રગતિ સાધી છે તેનો ટુંક પરિચય આ પત્રિકામાં આપેલ છે તે વાંચી જઈ સર્વ સ્થા. જૈન ભાઈબહેનોએ આ સંસ્થા ને યથાશક્તિ મદદ કરી તેના કાર્ય ને હજી વિશેષ વેગવાન બનાવવાની જરૂર છે.

‘ખાલી ઘડો વાગે ઘણો’ એમ સ્થા. કેન્ઝરન્સ જેમ ખોટાં બણુગાં ફૂંકનારી સંસ્થાની કોઈ કિંમત નથી, ત્યારે નક્કર કામ કરનારી આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને દરેક પ્રકારે ઉત્તેજન આપવાની દરેક સ્થાનકવાસી જૈનની અનિવાર્ય ફરજ છે.

અને આ સર્વ સૂત્રો તૈયાર કરનાર પૂજ્ય મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનો સ્થાનકવાસી સમાજ ઉપર ઘણો મહાન ઉપકાર છે. વયોવૃદ્ધ હોવા છતાં તેઓશ્રી જે મહેનત લઈ સૂત્રો તૈયાર કરાવે છે તેવું કામ હજી સુધી બીજા કોઈએ કર્યું નથી અને બીજા કોઈ કરી શકશે કે નહિ તે પણ શંકાભર્યું છે. પૂજ્ય મુનિશ્રીના આ મહાન્ ઉપકારનો કિંચિત બદલો સમાજે આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને બની શકતી સહાય કરીને વાળવાનો છે. સ્થાનકવાસી સમાજ જ્ઞાનની કદર કરવામાં પાછો હોઈ તેમ નથી એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

“જૈનસિદ્ધાંત” પત્ર ઓક્ટોબર ૧૯૫૭

શ્રી દશવૈકાલિક તથા ઉપાસકદશાંગ સૂત્રો

ગુજરાતી ભાષામાં અનુવાદ થયેલાં પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ વિરચિત ઉપરોક્ત બે સૂત્રો જ્ઞેનધર્મ પાળતા દરેક ઘરમાં હોવા જ જોઈએ. તે વાંચવાથી શ્રાવક ધર્મ અને શ્રમણ ધર્મના આચારનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકે છે અને શ્રાવકો પોતાની નિરવધ અને એષણીય સેવા શ્રમણ પ્રત્યે બજાવી શકે છે. વર્તમાનકાળે શ્રાવકોમાં તે જ્ઞાન નહિ હોવાને લીધે અંધશ્રદ્ધાએ શ્રમણવર્ગની વૈયાવચ્ચ તો કરી રહેલ છે. પરંતુ ‘કલ્પ શું’ અને અકલ્પ શું’ એનું જ્ઞાન નહિ હોવાને લીધે પોતે સાવધ સેવા અર્પી પોતાના સ્વાર્થને ખાતર શ્રમણવર્ગને પોતાને સહાયક થવામાં ઘસડી રહ્યા છે અને શ્રમણવર્ગની પ્રાયઃ કુસેવા કરી રહ્યા છે. તેમાંથી બચી લાલનું કારણ થાય અને શ્રમણને યથાતથ્ય સેવા અર્પી તેમને પણ જ્ઞાન-દર્શન-ચારિત્રની આરાધના કરવામાં સહાયક થઈ પોતાના જ્ઞાન-દર્શન-ચારિત્રની આરાધના કરી સુગતિ મેળવી શકે. શ્રમણની યથાતથ્ય સેવા કરવી તે અવશ્ય ગૃહસ્થની ફરજ છે.

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મ. શાસ્ત્રોદ્ધારનો અનુવાદ ત્રણ ભાષામાં રૂડી રીતે કરી રહ્યા છે અને રૂપિયા ૨૫૧૭ ભરી મેમ્બર થનારને રૂ. ૪૦૦-૫૦૦ લગ-લગ ની કીંમતના બત્રીસે આગમો ક્રી મળી શકે છે તો તે રૂ. ૨૫૧૭ ભરી મેમ્બર થઈ બત્રીસે આગમો દરેક શ્રાવકઘરે મેળવવા જોઈએ. બત્રીસે શાસ્ત્રોના લગભગ ૪૮ પુસ્તકો મળશે. તો તે લાલ પોતાની નિર્જરા માટે, પુન્યાનુબંધી પુન્ય માટે જરૂર મેળવે. ઉપરોક્ત બંને સૂત્રોની કીંમત સમિતિ કંઈક ઓછી રાખે તો હરકોઈ ગામમાં શ્રીમંત હોય તે સૂત્રો લાવી અરધી કીંમતે, મફત અથવા પૂરી કીંમતે લેનારની સ્થિતિ જોઈ દરેક ઘરમાં વસાવી શકે.

—એક ગૃહસ્થ

નોંધ :—ઉપરની સૂચનાને અમે આવકારીએ છીએ. આવાં સૂત્રો દરેક ઘરમાં વસાવવા યોગ્ય તેમજ દરેક શ્રાવકે વાંચવા યોગ્ય છે. તંત્રી—

“રત્નજ્યોત” પત્ર

તા. ૧-૧૦-૫૧

શ્રી સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની કાર્યવાહક કમીટીનો અહેવાલ.

*

મે મહિનાની શરૂઆતમાં શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિની મીટીંગ અમદાવાદમાં મળી હતી તેનો હેવાલ અમને મળેલો છે તેમાં સમિતિએ સરસ કામ કર્યું છે.

આ ઉપરથી સમજી શકાય છે કે સ્થાનકવાસી સમાજમાં આજ સુધી કોઈએ પણ નથી કરી શક્યું એવું મહાભારત કામ પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ ઘણી સફળતાથી કરી રહી છે. અને તેઓ થોડા વખતમાં માથે લીધેલું સર્વ કામ સંપૂર્ણ રીતે પાર ઉતારશે એવી અમને ખાત્રી છે.

આવા ઉત્તમ કાર્ય માટે સમસ્ત સ્થાનકવાસી જૈનોએ શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિને પોતાનાથી બની શકે તે રીતે સંપૂર્ણ ટેકો આપવો જોઈએ, તે તેમની ફરજ બની રહે છે. જૈનો માટે સૂત્રો એ પહેલી ફરજિયાતની વસ્તુ છે. સૂત્રના આધારે જ ધર્મજ્ઞાન મળે છે. આજ સુધી જે આપણને અપ્રાપ્ય હતા તે આપણા જૈન-સૂત્રો પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિએ સુલભ કરી આપ્યા છે.

તો હવે સ્થાનકવાસી જૈનોએ શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના સલાસદ બની સમિતિનું કામ બનતી ઉતાવળે પૂર્ણ થાય તેમ કરવાની ખાસ જરૂર છે. વાચકોમાંથી જેઓથી બની શકે તેમણે પહેલા વર્ગના શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના સભ્ય બની જવું જોઈએ. તેથી સમિતિના કામને ઉત્તેજન મળવા ઉપરાંત સભ્યને સૂત્રોનો આખો સેટ મફત મેળવવાનો લાભ મળશે અને સૂત્રો વાંચીને ધર્મોપદેશ કરવાનો જે લાભ મળશે તે તો અમૂલ્ય જ છે. માટે સમિતિના સભ્ય થઈ જવાની અમારી દરેક સ્થા. જૈનને ખાસ ભલામણ છે.

“જૈન સિદ્ધાંત” જુલાઈ-૧૯૫૮



શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના આગમો અંગે અભિપ્રાય.

*

દક્ષિણ, ઉત્તર પ્રદેશ, દિલ્હી અને પંજાબમાં ઉચ્ચ વિદ્યાર કરીને હાલમાં ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રમાં વિચરી રહેલા ઉચ્ચ વિદ્યારી પૂ. મહાસતીજી શ્રી રંભાકુંવરજી તથા પ્રસિદ્ધ વ્યાખ્યાની વિવિધભાષાવિશારદ પૂ. મહાસતીજી શ્રી. સુમતિકુંવરજીનો, પૂજ્ય શ્રી ૧૦૦૮ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. સા. નિર્મિત જૈનાગમોની સંસ્કૃત ટીકા તથા હિન્દી-ગુજરાતીભાષાંતર પર અભિપ્રાય:-

ૐ નમો સિદ્ધાણુ

શાસ્ત્રવિશારદ શ્રદ્ધેય પંડિત રત્ન પૂજ્ય આચાર્ય મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જૈનાગમોના એક વિદ્વાન, વૃદ્ધવિચારક અને ઉત્તમ લેખક છે.

સાહિત્યસર્જન એ તેમનાં જીવનનો એક ઉત્તમ સંકલ્પ છે. સામાજિક-પ્રયોજી દૂર રહી, અથાગ પરિશ્રમ દ્વારા વિરચિત, સંપાદિત અને અનુવાદિત તેમના અનેક ગ્રંથો પ્રકાશિત થયા છે, જે તમામ જૈનોને માટે ચિંતન, મનન અને અધ્યયન-અધ્યાપન માટે એક અપૂર્વ સાધનરૂપ છે. આવું ઉત્તમ સાહિત્ય તૈયાર કરીને તેઓશ્રીએ સાહિત્યસેવીના મહાન પદને દીપાવ્યું છે.

આગમના રહસ્યોથી અનલિપ્ત (અજ્ઞાણ) આજની પ્રજામાં શ્રદ્ધેય શ્રી મહારાજ સાહેબનું સાહિત્ય અત્યંત ઉપયોગી છે, તેમ હું માનું છું.

અમદાવાદ તા. ૧-૫-૫૮

આર્યા-સુમતિકુંવર.



અલ્પવરથી

શ્રી શ્રમણ સંઘના ઉપાધ્યાય કવિ મુનિશ્રી અમરચંદ્ર મહારાજને

કલ્પસૂત્ર માટે આવેલ પત્ર

શ્રીયુત ભોગીલાલજી-અમદાવાદ.

જયવીર

આપને ત્યાં ખીરાજમાન પરમ શ્રદ્ધેય શ્રી શ્રી ૧૦૦૮ શ્રી પૂજ્ય-પાદશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ બધા સંતોની સેવામાં વંદન સુખ-શાન્તિ નિવેદન છે.

આપે મોકલેલ “કલ્પસૂત્ર” મેળવીને શ્રદ્ધેય કવિજીએ પ્રમુખતા પ્રગટ કરી છે અને સાદર યથાયોગ્ય અભિનંદનપૂર્વક લખાવ્યું છે કે “કલ્પસૂત્રનું” પ્રકાશન બહુ જ ઉત્કૃષ્ટ કોટિનું છે. તેની ટીકા સુંદર વિસ્તારપૂર્વક સારી રીતે લખેલ છે. ટાઇમ મળતાં અધ્યયન કરવા માટે પ્રયત્ન કરવામાં આવશે. છાપવામાં આવેલ આવૃત્તિ માટે કોટિ કોટિ ધન્યવાદ આપવામાં આવે છે.

કવિશ્રીજીનું સ્વાસ્થ્ય સારી રીતે ચાલે છે. પહેલાની અપેક્ષાએ કંઈક સારું છે. આ પત્ર વિલમ્બથી લખવામાં આવેલ છે તો ક્ષમા કરજો.

અલ્પવર (રાજસ્થાન)
તા. ૬-૮-૧૯૫૮.

}

લવદીય : રતનલાલ સંચેતી
(હિન્દીનો ગુજરાતીમાં અનુવાદ)

श्री-मेवाडदेश-पावनकर्तृणां श्रीश्रमणसंघीयपण्डित-मुनिश्री-
माँगीलालजी महाराजानां तच्छिष्यस्य हस्तिमुनेश्च
सम्मतिपत्रम्

२०१५ वर्षीय-वर्षावास-दीपावली
राजकरेड़ा (राजस्थान)

पुरतो जिनवाणीरसिकसज्जनानां पूज्यश्री १००८ श्रीघासीलालजी-महाराजविरचित-
जैनागमव्याख्याऽध्ययनजन्मनो ऽस्मत्स्वान्ते परिमितिमप्राप्तो निर्भरानन्दस्यानुभवं प्रसन्न-
मनसा कतिपयैः शब्दैर्निर्दिष्टावः ।

अस्माकमहोभाग्येन विराजमानैर्विद्यया वयसा च वृद्धैः सज्जनशिरोमणिभिः पूज्यपाद-
वीमलङ्कुर्वद्भिः श्रीमज्जैनाचार्य-घासीलालजी-महाराजैः प्रणीतया व्याख्यया समलङ्कृतो-
जैनागमो दृष्टिगोचरीकृतः । मनोहारिणी संस्कृतटीका हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादद्वयं च बलान्मानसं
समाकर्षति । पूज्यश्रीविरचितजैनागमव्याख्यानसहस्रभानुनाऽऽवयोजैनागमरहस्याज्ञान-
तमस्संहतिरपहता, हृत्पद्मं च प्रफुल्लितम् ।

आसीदभावो बहोः कालजैनागमेषु स्थानकवासी संप्रदायाभिमत संस्कृत व्याख्यानस्य,
परतन्त्रश्चासीदद्यावधि स्थानकवासिजैनसमुदायः । परं परमकृपालुना श्रीमताऽऽचार्यप्रवेरणाऽ-
नवरतं परिश्रम्य जैनागमेषु स्वसंप्रदायपरिपोषिकां टीकां विधाय सकलोऽपि स्थानकवासिजैनसंघः
स्वावलम्बीकृतः । श्रीमज्जैनाचार्यकृतेयमुपकृतिः सकलस्थानकवासिजैनहृदयेषु वज्रलेपायिता
भविष्यतीति मन्यावहे ।

अनादिघोराज्ञानतमसि पततां जनानां त्राणोपायः केवलं जिनभाषितमेवेति सर्वविदित-
मेव । तत्र सर्वजनकल्याणकामनया पूज्यश्रीचरणैर्या टीका विरचिता सा सर्वेषामपि सिद्धिप्रदा
विजयप्रदा कल्याणप्रदा सन्मार्गप्रदर्शिका चास्तीति सुदृढोऽस्मद्विश्वासः । अतोऽहं सर्वानपि
जैनबन्धून् प्रोत्साहयामि, यत्ते स्वहितमभिसंधाय श्रीमत्पूज्यजैनाचार्यविरचितव्याख्यासाहाय्येन
जैनागमहृदयं सम्यगवगम्य तन्निर्दिष्टमार्गेण स्व-स्वजीवनं सफल्यन्तो लोकद्वयं साधयन्त्वित्य-
लभतिविस्तरेण ।

अन्ते च शासनाधीशमन्यर्थयावहे यदस्मदीयाचार्यप्रवराः शतायुषो निरामयाश्च भवन्त्विति
इत्थं पूज्यश्री १००८ श्रीघासीलालजी-महाराज-विरचित-जैनागमव्याख्यायां स्व-
सम्मतिं प्रदर्शयतः—

श्रीश्रमणसंघीय पण्डितमुनि माँगीलालः,

तच्छिष्यो हस्ती मुनिश्च

शुद्धिपत्रम्

अशुद्धि	शुद्धि	पृष्ठ	पङ्क्ति
संपिडिय	संपिडिय	३५	१
संपरिक्खत्ते	संपरिक्खत्ते	४१	४
अविद्यमाना रुजा यस्य	अविद्यमाना रुजा यत्र		
तत्—अविद्यमान शरीरमनस्क	तत्—अधिव्याधिरहितम्		
त्वात्—आधिव्याधिरहितम् इत्यर्थः ।	इत्यर्थः ।	८०—८१	८—३
तत्तत्तवे द्योस्तवे	तत्तत्तवे महातवे द्योस्तवे	४९६	१
अम्बड परिव्राजका—	कर्णादि—शीलध्यादि परिव्राज-		
चारवर्णनम् ।	कानाम् आचारवर्णनम् ।	५४९	शीर्षक
”	”	५५१	शीर्षक
”	”	५५३	शीर्षक
”	”	५५५	शीर्षक
अम्बडपरिव्राजकानां देवलोक	कर्णादि-शीलध्यादि-परिव्राज-		
स्थितिर्वर्णनम् ।	कानां देवलोकस्थितिर्वर्णनम् ।	५५७	शीर्षक
त्रिषष्टितमे	एकोनचत्वारिंशत्तमे	६५२	८

इति ।

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥
'जैनाचार्य'—'जैनधर्मदिवाकर'—पूज्य—श्री—घासीलालजीमहाराज—
विरचित—पीयूषवर्षिण्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

औपपातिकसूत्रम्.

(मङ्गलाचरणम्)

मालिनीछन्दः ।

भविजनहितकारं ज्ञानवित्तैकसारं, कृतभवनिधिपारं नष्टकर्मारिभारम् ।
अघहरणसमीरं दुःखदावाग्निनीरं, विमलगुणगभीरं नौमि वीरं सुधीरम् ॥ १ ॥

औपपातिकसूत्रकी पीयूषवर्षिणी टीका का हिन्दी—भाषानुवाद ।

मङ्गलाचरण—

ज्ञानावरण आदि चार घातिया कर्मों के सर्वथा विनाश से उद्भूत केवल ज्ञान-
रूपी अनंत अचिन्त्य अन्तरंगविभूतिविशिष्ट, भव्यजीवों के अबाध आत्मकल्याण का
उज्ज्वल मार्गप्रदर्शन करनेसे सदा हितकारक, स्वयं संसाररूपी अपार पारावार से पार
होकर अन्य जीवोंको भी वहांसे पार करनेवाले, तृणादिक को उड़ानेवाली वायुकी तरह
पापपुंज को उड़ानेके लिये अबाधगतिवाले, आधि, व्याधि एवं उपाधिजन्य अनेक
दुःखोंकी राशिरूपी प्रचण्ड अग्निकी ज्वालाको ध्वस्त करने के लिये निर्मल सलिल जैसे;
ऐसे धीर वीर अन्तिम तीर्थकर श्रीवीरप्रभुको—जो क्षायिकगुणों से सदा ओतप्रोत
बने हुए हैं—मैं भक्तिपूर्वक नमन करता हूं ॥ १ ॥

औपपातिकसूत्रनी पीयूषवर्षिणी टीकानो गुजराती—अनुवाद

मङ्गलाचरण—

ज्ञानावरण आदि चार घातिया कर्मोंना सर्वथा विनाशथी उत्पन्न थयेस
केवलज्ञानरूपी अनंत अचिन्त्य अन्तरंगविभूतिरूप, भव्यजीवोंना अबाध
आत्मकल्याणना उज्ज्वल मार्गप्रदर्शन करवाथी सदा हितकारक, पोते संसार-
रूपी अपार समुद्र पार करीने भीज जीवोंने पण तेमांथी पार करवावाजा,
जेम वायु तृणने उड़ाडी नाजे तेम पापपुंजने उड़ाडवामां अबाध गतिवाजा,
आधि व्याधि तेमज उपाधिजन्य अनेक दुःखोंनी राशिरूपी प्रचण्ड अग्निनी
ज्वालाने शांत करवा निर्मल जण जेवा, जेवा धीर वीर अन्तिम तीर्थकर
श्री वीरप्रभु के जे निर्मल क्षायिक गुणोंथी सदा ओतप्रोत बनेला छे तेमने
हुं भक्तिपूर्वक नमन करूं छूं. (१)

વસન્તતિલકા ।

આનન્તરાઽઽગમસુધારસનિર્જરેણ,

સંસિચ્ય ધર્મતરુસદ્ગુચિરાઽલવાલમ્ ।

સ્વર્ગાઽપર્ગસુખરાશિફલં વિતીર્ય,

મોક્ષં ગતં તમિહ ગૌતમમાનમામિ ॥ ૨ ॥

દ્રુતવિલમ્બિતમ્ ।

કમલકોમલમઞ્જુપદામ્બુજં,

વિમલબોધિદબોધવિબોધકમ્ ।

મુખસુશોભિસદોરકવસ્ત્રિકં,

ગુરુવરં સદયં પ્રણમામ્યહમ્ ॥ ૩ ॥

અનન્તરાગમરૂપી નિર્મલ સુધારસ કે પ્રવાહ સે ધર્મરૂપી વૃક્ષકે સમ્યગ્દર્શનરૂપ આલવાલ (ક્યારી)કો સીંચકર જિન્હોને મન્યજનોકે લિયે ઉસકે ફલસ્વરૂપ સ્વર્ગ એવં મોક્ષ કે સુખરૂપ ફલોં કો વિતરિત કર (દેકર) ઉન્હેં કલ્યાણસ્થાનમેં લગાયા; એસે મોક્ષપ્રાપ્ત ઉન ગૌતમસ્વામી કો મેં ભક્તિપૂર્વક નમન કરતા હું ॥ ૨ ॥

જિનકે ઉમય સુન્દર ચરણકમલ કમલ જૈસે કોમલ હૈં । જો નિર્મલ બોધિ અર્થાત્ સમ્યક્ત્વકો તથા શ્રુતચારિત્રરૂપ બોધકો દેને વાલે હૈં । જિનકે મુખકે ઉપર દોરાસહિત મુખપત્તિ છઠ્ઠકાય કે જીવોંકી રક્ષા કે નિમિત્ત સદા બંધી હુઈ રહતી હૈ; એસે દયાળુ ગુરુવર કો મેં ભક્તિપૂર્વક નમન કરતા હું ॥ ૩ ॥

અનંતરાગમરૂપી નિર્મળ અમૃતના પ્રવાહથી ધર્મરૂપી વૃક્ષના સમ્યગ્દર્શનરૂપ આલવાલ (ક્યારી) ને સિંચન કરીને જેમણે લબ્યજનો માટે તેના ફલસ્વરૂપ સ્વર્ગ તેમજ મોક્ષનાં સુખરૂપ ફલોંનું વિતરણ કરી તેમને કલ્યાણ-સ્થાનમાં લગાડ્યા એવા મોક્ષપ્રાપ્ત તે ગૌતમસ્વામીને હું ભક્તિપૂર્વક નમન કરું છું. (૨)

જેમનાં બંને સુંદર ચરણકમલ કમલ જેવાં કોમળ છે, જે નિર્મલબોધિ એટલે સમ્યક્ત્વને તથા શ્રુતચારિત્રરૂપ બોધને આપવાવાળા છે, જેના મુખ ઉપર દોરાસહિત મુખપત્તિ છઠ્ઠકાયના જીવોની રક્ષાના નિમિત્ત સદા બાંધેલી રહે છે એવા દયાળુ ગુરુવરને હું ભક્તિપૂર્વક નમન કરું છું. (૩)

आर्या-गाथा ।

जयणदं मुहपत्तिं, सदोरगं बंधणं मुहे निबं ।

जो मुकरागदोसो, वंदे तं गुरुवरं सुद्धं ॥ ४ ॥

अनुष्टुप् ।

जैनीं सरस्वतीं नत्वा, घासीलालेन तन्यते ।

औपपातिकसूत्रस्य, वृत्तिः पीयूषवर्षिणी ॥ ५ ॥

अथौपपातिकसूत्रम्—औपपातिकमिति कः पदार्थः ? इति चेदुच्यते—देवजन्म नैर-
यिकजन्म सिद्धिगमनञ्चेति त्रयम् उपपातः, तमुपपातमधिकृत्य कृतमव्ययनम् औपपातिकम्,
एतत् औपपातिकमुपाङ्गं, कस्मात् ? अङ्गस्य—आचाराङ्गस्य समीपवर्तित्वात्, तत्र हि प्रथ-

मैं सदा उन गुरुदेव को नमस्कार करता हूँ कि जिन्होंने छहकाय के जीवों की
यत्नानिमित्त अपने मुख पर दोरासहित मुखपत्तिको सदा बांध रखा है । तथा
जिनकी दृष्टि में शत्रु और मित्र एवं निन्दक और वन्दक दोनों समान हैं । ऐसे
रागद्वेष से सदा परे रहनेवाले शुद्ध गुरुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ ४ ॥

श्री जिनेन्द्र के मुखकमल से निर्गत द्वादशाङ्गीरूप वाणी को नमन कर मैं
घासीलाल मुनि औपपातिकसूत्रकी पीयूषवर्षिणीनामक टीका रचता हूँ ॥ ५ ॥

प्र०— 'औपपातिक' इस पदका क्या अर्थ है ?

उ०— देवोंका जन्म, नारकियोंका जन्म एवं सिद्धिगति में गमन, ये तीनों
उपपात हैं । इनको लेकर रचे गये सूत्रका नाम औपपातिक है । यह अंग नहीं है उपाङ्ग है ।

હું સદા તે ગુરુદેવને નમસ્કાર કરું છું કે જેમણે છકાયના જીવોની
યતનાનિમિત્ત પોતાના મુખપર દોરાસહિત મુખપત્તિને સદા બાંધી રાખે છે,
તથા જેમની દૃષ્ટિમાં શત્રુ અને મિત્ર તેમજ નિંદક તથા પ્રશંસક બંને સમાન
છે. એવા રાગદ્વેષથી સદા પર રહેવાવાળા શુદ્ધ ગુરુદેવને હું નમસ્કાર કરું છું. (૪)

શ્રી જિનેન્દ્રના મુખકમલથી નીકળેલી દ્વાદશાંગીરૂપ વાણીને નમન કરીને
હું ઘાસીલાલ મુનિ ઔપપાતિકસૂત્રની પીયૂષવર્ષિણી નામે ટીકા રચું છું. (૫)

પ્ર०— ઔપપાતિક એ પદનો શું અર્થ છે ?

ઉ०— દેવોના જન્મ, નારકિઓના જન્મ તેમજ સિદ્ધિગતિમાં ગમન એ
ત્રણ ઉપપાત છે. તેમને લઈને બનાવેલા સૂત્રનું નામ ઔપપાતિક છે. આ
અંગ નથી, ઉપાંગ છે. તેને ઉપાંગ એ માટે કહે છે કે તે આચારાંગસૂત્રનું

માધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશકે—‘એવમેગેસિં ણો ણાયં ભવઈ—અત્થિ મે આયા ઓવવાઈએ, નત્થિ મે આયા ઓવવાઈએ, કે અહં આસી ? કે વા ઇઓ ચુએ ઇહ પેચ્ચા ભવિસ્સામિ ?’
 ઇત્યાદિ, અત્રાઽઽચારાઙ્ગસૂત્રે યદાત્મન ઔપપાતિકત્વમુપાત્તમ્ તદેવાઽત્ર પ્રતન્યતે, તેન તદુપદિષ્ઠાર્થસ્ય સવિસ્તરં પુષ્ટિકરણરૂપં સામીપ્યમિહ વર્તતે, અત એવાચારાઙ્ગોપાઙ્ગતા સિધ્ધ્યતિ ।
 અસ્યોપાઙ્ગસ્ય અયમુપોદ્ઘાતઃ—

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં ચંપા નામ નયરી

ટીકા—‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ । ‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’

इसे उपांग इसलिये कहा है कि यह आचारांगसूत्रका समीपवर्ती है, अर्थात् आचारांग सूत्र के प्रथम अध्ययन के प्रथम उद्देश में “एवमेगेसिं णो णायं भवइ—अत्थि मे आया ओववाइए, नत्थि मे आया ओववाइए, के अहं आसी ? के वा इओ चुए इह पेच्चा भविस्सामि ?” अर्थात्—किन्हीं किन्हीं जीवों को यह ज्ञान नहीं होता कि मेरा आत्मा उत्पत्तिशील है या मेरा आत्मा उत्पत्तिशील नहीं है ? मैं पहले कौन था और यहांसे मरकर परलोक में कौन होऊँगा ?, इत्यादि सूत्र जो कहा है, और इसमें आत्मा के जिस औपपातिकपने का कथन करने में आया है इसीकी इस उपांग में विस्तारके साथ पुष्टि करने में आई है, अतः यह पुष्टिकरणरूप समीपता इसमें है, इसीलिये इसमें आचारांगसूत्र की उपांगता सिद्ध होती है । इस उपांगका उपोद्घात इस प्रकार है—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि ।

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં ચંપા નામ નયરી હોત્યા) ઉસ અવસ-

સમીપવર્તી છે એટલે આચારાંગસૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશમાં “એવમેગેસિં ણો ણાયં ભવઈ—અત્થિ મે આયા ઓવવાઈએ, નત્થિ મે આયા ઓવવાઈએ, કે અહં આસિ ? કે વા ઇઓ ચુએ ઇહ પેચ્ચા ભવિસ્સામિ ?” એટલે—કોઈ કોઈ જીવોને એ જ્ઞાન નથી હોતું કે મારો આત્મા ઉત્પત્તિશીલ છે કે નથી, હું પ્રથમે કોણ હતો અને અહિંથી મૃત્યુબાદ પરલવમાં હું કોણ થઈશ. ઇત્યાદિ સૂત્ર જે કહેલું છે, તથા એમાં આત્માનું જે ઔપપાતિકપણાનું કથન કરવામાં આવ્યું છે તેની આ ઉપાંગમાં વિસ્તારસહિત પુષ્ટિ કરવામાં આવી છે. આમ આ પુષ્ટિકરણરૂપ સમીપતા આમાં છે તે માટે આમાં આચારાંગસૂત્રની ઉપાંગતા સિદ્ધ થાય છે. ઉપાંગનો ઉપોદ્ઘાત આ પ્રકારે છે:—‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં ચંપા નામ નયરી હોત્યા) તે અવસર્પિણી કાલના

होत्था, रिद्धिस्थिमियसमिद्धा प्रमुइयजणजाणवया आइण्ण-

तस्मिन् काले तस्मिन् समये, अत्र सप्तम्यर्थे तृतीया प्राकृतशैल्या, कालसमययोर्लोकोक्तौ पर्यायत्वे कथं युगपन्निर्देशः ? कथं न वा पुनरुक्तिदोषः ? अत्र समाधानमाह—‘कालः’ इति वर्तमानावसर्पिण्याश्चतुर्थारकलक्षणः, समयस्तु हीयमानलक्षणः । यत्र काले सा चम्पाऽभूत् स कोणिको राजा बभूव, श्रीवर्द्धमानस्वामी च भगवान् आसीत् । अथवा ‘तेणं’ इति तृतीयैकवचनान्तं—तेन कालेन तेन समयेन हेतुभूतेन अवसर्पिणीचतुर्थाऽऽरकलक्षणेन उपलक्षिता चम्पानामिका नगरी आसीत् । ननु सा नगरी सम्प्रत्यपि वर्तते, तर्हि औप-पातिकसूत्रप्ररूपणाकालेऽपि ‘आसीत्’ इति ‘अस्ति’ इति वक्तव्यम्, तत्कथमुक्तम् ‘आसीत्’ ? इति चेत्, उच्यते—अवसर्पिणीत्वात्कालस्य प्रस्तुतोपाङ्गसंप्रन्थनकाले वर्णनीयचम्पानगरी तादृशी वक्ष्यमाणविशेषणविशिष्टा नाऽभूदिति ‘अस्ति’ इत्यनुक्त्वाऽऽसीदित्युक्तम् । चम्पापुरी वर्ण्यते—‘ऋद्ध-स्थिमिय-समिद्धा’ ऋद्धस्तिमितसमृद्धा, ऋद्धा—विभवभवनादिभिर्वृद्धिमुपगता, स्तिमिता—स्वपरचक्रभयरहिता, स्थिरेति यावत्, समृद्धा—धनधान्यसमेधिता, एभिस्त्रिभिः पदैः कर्मधारयसमासः, ऋद्धा चासौ स्तिमिता चासौ समृद्धा चेति तथा, विभवविस्तीर्णा प्रशान्तिसम्पन्ना चेत्यर्थः, ‘प्रमुइय-जण-जाणवया’ प्रमुदितजनजानपदा, प्रमुदिता=प्रमोदं प्राप्ताः जनाः=नागरिकाः, जानपदाः=अशेषदेशवासिनो यस्यां सा तथा, इष्टप्रभूत-

पिणी काल के चतुर्थ आरे में और हीयमान उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी, उसमें कोणिक राजा राज्य करते थे, और भगवान विचर रहे थे । वह नगरी कैसी थी ? इसका वर्णन करते हैं—वह नगरी (रिद्ध-स्थिमिय-समिद्धा) ऋद्ध-विभव एवं भवनादिकों की विशिष्ट वृद्धि से संपन्न थी । स्तिमित—इसमें निवास करने वाले लोगों को स्वचक्र और परचक्र का भय बिलकुल ही नहीं था । जनता यहां की सुख की नींद सोती और सुख की नींदसे उठती थी । समृद्धा—यह नगरी अखंड धन एवं धान्य से सदा परिपूर्ण थी । (प्रमुइय-जण-जाणवया) इसीलिये यहां के समस्त नागरिक जन एवं अशेष देशनिवासी मानव सर्वदा आनंद में मग्न

थोथा आराभां अने हीयमान ते समयभां थंपा नाभे नगरी हुती, तेभां डोष्टिष्ठ राजा राज्य करता हुता अने लगवान महावीर विचरी रह्या हुता. ते नगरी डेवी हुती ? तेनुं वर्धुन करवाभां आवे छे—ते नगरी (रिद्ध-स्थिमिय-समिद्धा) ऋद्ध-विलव तेभज लवनादिनी विशिष्ट वृद्धिथी ते नगरी संपन्न हुती. स्तिमित—तेभां निवास करवावाणा डोडोने स्वयं तथा परयंको बिलकुल भय नहोतो. त्यांनी प्रज सुषे निद्रा करती अने सुषे निद्राथी उठती हुती. समृद्धा आ नगरी अअंड धन धान्यथी सदा परिपूर्ण हुती. (प्रमुइय-जण-जाणवया)

जण-मणुस्सा हलसयसहस्स-संकिट्ट-विकिट्ट-लट्ट-पण्णत्त-सेउसीमा

वस्तुसौलभ्यात्प्रमोदमाननिखिलजनेति यावत् । 'आइण्णजण-मणुस्सा' आकीर्णजन-मनुष्या, संख्यातिरेकात् संकुलतया परस्परोपसंघटितमनुष्यप्राणिपरिपूर्णेत्यर्थः । अत्र जनेति जातसामान्यवाचित्वात्प्राणीति निर्वक्ति, ततो मनुष्यश्चासौ जनश्चेति कर्मधारये राजदन्तादीनामाकृतिगणत्वात् मनुष्यशब्दस्य परप्रयोगः, तेन आकीर्णा=व्याप्ता-आकीर्णजनमनुष्या, आर्षत्वात्-आकीर्णशब्दस्य पूर्वप्रयोगः, 'हलसयसहस्स-संकिट्ट-विकिट्ट-लट्ट-पण्णत्त-सेउसीमा' हलशतसहस्रसंकृष्टविकृष्टलट्टप्रज्ञप्तसेतुसीमा, शतानि च सहस्राणि च शतसहस्राणि, हलानां शतसहस्राणि, अथवा शतमितानि सहस्राणि लक्षमिति यावत्, तैर्हलशतसहस्रैः संकृष्टा विकृष्टा द्विवारं कृष्टा त्रिवारं कृष्टा अत एव लट्टा=मृष्टा प्रतनूकृतलोष्टा मनोज्ञा प्रज्ञप्ता='इयमस्य कर्षकस्ये'-ति निर्दिष्टा सेतुसीमा=क्षेत्रपालीरूपा सीमा यस्यां सा तथा, सेतुभङ्गे कृषीवलानां सीमाविवादो मा भूदिति सेतुसीमा प्रज्ञप्ता, इति भावः,

बने हुए थे । (आइण्ण-जण-मणुस्सा) यहां की मेदिनी (भूमि) सदा अधिक से अधिक मानवजनसंख्या से आकीर्ण बनी रहती थी-मार्गों पर बड़ी भीड़ लगी रहती थी । (हलसयसहस्स-संकिट्ट-विकिट्ट-लट्ट-पण्णत्त-सेउसीमा) यहां की भूमि सैकड़ों अथवा हजारों अथवा लाखों हलों द्वारा जोती जाती थी, दो तीन बार जुतने से खेतों की मिट्टी बिलकुल पिस सी जाती थी, प्रायः वह कंकर पत्थर रहित थी, इससे वह बहुत ही मनोज्ञ प्रतीत होती थी । 'यह इस कर्षक की भूमि है, यह इस कर्षक की भूमि है' इस प्रकार से वहां प्रत्येक किसान के खेतकी सीमा निर्धारित मेडद्वारा करने में आई थी । खेत में मेडद्वारा सीमा निर्धारित यदि न की जाय तो इससे किसानों में अपने खेत की सीमा के बारे में अनेक प्रकारसे विवाद उपस्थित हो जाता

आधी आडींना सभस्त नागरिकजन तेभज आडींना अधा देशनिवासी मनुष्ये। सर्वदा आनंदमां भक्ष थयेदा हुता. (आइण्णजण-माणुस्सा) आडींनी भूमि सदा वधारेने वधारे मानवजनसंख्याली लरी रहेती हुती. (हलसय-सहस्स-संकिट्ट-विकिट्ट-लट्ट-पण्णत्त-सेउसीमा) आडींनी भूमि सैकड़ों के हुन्नेरे अथवा लाखों हुणेथी जेडाती हुती. जे त्रण वार जेउवाथी जेतरेनी भाटी जिककुल पीसाई जती हुती. मुख्यतः कंकरा पत्थर रहित हुती तेथी ते क्षणी ज मनोज्ञ प्रतीत थती हुती. 'आ आ जेडूतनी भूमि छे, आ आ जेडूतनी भूम छे' जे प्रकारे त्यां प्रत्येक जेडूतना जेतरेनी सीमा मेड-सीमाचिह्न द्वारा नक्की करवामां आवी हुती. जेतरेमां मेड-सीमाचिह्न द्वारा जे नक्का न करवामां आवे तो तेथी जेडूतोमां पोतपोताना जेतरेनी सीमाना अनेक

**કુકુડ-સંડેય-ગામ-પરુરા ઉચ્છુ-જવ-સાલિ-કલિયા ગો-મહિસ-ગવેલ-
ગ-પ્પમૂયા આયારવંતચેઇય-જુવઇ-વિવિહ-સણિવિટ્ટ-બહુલા ઉક્કોડિ-**

‘કુકુડ-સંડેય-ગામપરુરા’ કુકુટષાણ્ડેયગ્રામપ્રચુરા-કુકુટાશ્ચ શાણ્ડેયાઃ=લઘુગોપતમશ્ચ કુકુટષાણ્ડેયાઃ, તેષાં ગ્રામાઃ=સમૂહાઃ તે પ્રચુરાઃ=પ્રમૂતા યસ્યાં સા તથા । ‘ઉચ્છુ-જવ-સાલિ-કલિયા’ ઇક્ષુયવશાલિકલિતા-ઇક્ષુભિર્યવૈઃ શાલિમિશ્ર કલિતા=યુક્તા, અનેન પ્રજાયાઃ પોષણહેતુરભિહિતઃ । રિક્તોદરાણાં હિ કાર્યક્ષમતા ન ભવતિ । ‘ગો-મહિસ-ગવેલગ-પ્પમૂયા’ ગોમહિષગવેલકપ્રમૂતા-ગાવો, મહિષ્યઃ, ગવેલકાઃ=મેષાઃ, તે પ્રમૂતાઃ યસ્યાં સા તથા । ‘આયારવંતચેઇય-જુવઇ-વિવિહ-સણિવિટ્ટ-બહુલા’ આકારવચ્ચૈત્યયુવતિવિવિધસન્નિવિષ્ટ-બહુલા-આકારવન્તિ=સુન્દરાકૃતિકાનિ ચૈત્યાનિ=ઉદ્યાનાનિ, તથા યુવતીનાં વિવિધાનિ સન્નિવિષ્ટાનિ=નર્તક્યાદીનાં સન્નિવેશનાનિ ભવનાનિ બહુલાનિ યસ્યાં સા તથા,

હૈ, અતઃ સેતુસીમા કી હુઈ થી । (કુકુડ-સંડેય-ગામપરુરા) ઇસ નગરી મેં કુકુટ
એવં છોટે-છોટે સાંઢ બહુત થે । (ઉચ્છુ-જવ-સાલિ-કલિયા) ઇક્ષુ, જવ એવં શાલી
કા ઢેર કા ઢેર યહાં કે સ્વેતોં મેં લગા રહતા થા, ઇસસે પ્રજાજન કે પોષણ મેં
કિસી મી પ્રકાર કી બાધા કિસી મી સમય ઉપસ્થિત નહીં હોતી થી । વાત મી ઠીક હૈ-મૂંચે પેટ
કુછ મી નહીં હો સકતા । (ગો-મહિસ-ગવેલગ-પ્પમૂયા) ગાય ઓર મૈંસોં કી પંક્તિ કી
પંક્તિ ઇસ નગરી મેં દષ્ટિપથ હોતી થી, ઇસસે દૂધ ઓર ઘી કા અભાવ જનતા મેં
કમી મી દિશ્વલાઈ નહીં પડતા થા । મેષ મી યહાં અધિક માત્રા મેં થે (આયાર-
વંતચેઇય-જુવઇ-વિવિહ-સણિવિટ્ટ-બહુલા) યહાં બડે ૨ સુન્દર ઉદ્યાન થે, એવં યુવતિ
નર્તકિયોં કે અનેક ભવન મી થે । (ઉક્કોડિય-ગાયગંઠિમેયગ-મહ-તકર-ચંડરક્ષ-

પ્રકારના વિવાહ પેદા થાય છે એટલે સેતુગ્રીમા કરવામાં આવી હતી.
(કુકુડ-સંડેય-ગામપરુરા) આ નગરીમાં મુર્ગાં તેમજ નાના નાના સાંઢ ધણા હતા.
(ઉચ્છુ-જવ-સાલિ-કલિયા) શેરડી, જવ તેમજ શાલીઓના ઢગલે ઢગલા અહીંના
ખેતરોમાં લાગેલા રહેતા હતા, તેથી પ્રજાજનના પોષણમાં કોઈ પણ પ્રકારની
બાધા કોઈપણ સમયે ઉપસ્થિત થતી નહોતી. વાત પણ બરાબર છે-ભૂખ્યા
પેટે કોઈથી કાંઈ થાય નહિ. (ગો-મહિસ-ગવેલગ-પ્પમૂયા) ગાય અને ભેંસોની
હારની હાર આ નગરીમાં નજરે જોવામાં આવતી હતી તેથી દૂધ અને ઘીનો
અભાવ જનતામાં કદી પણ જોવામાં આવતો ન હોતો. ઘેટાં પણ અહીં વધારે
પ્રમાણમાં હતાં. (આયારવંતચેઇય-જુવઇ-વિવિહ-સણિવિટ્ટ-બહુલા) ત્યાં મોટા મોટા
સુંદર ઉદ્યાન (બાગ) હતા તેમજ યુવતી નર્તકિયો (નાચ કરનારિઓ)નાં અનેક
ભવનો પણ હતાં. (ઉક્કોડિય-ગાયગંઠિમેયગ-મહ-તકર-ચંડરક્ષ-રહિયા) એમાં

ય-ગાયગંઠિભેયગ-મટ-તસ્કર-સ્વંડરક્ષ-રહિયા સ્વેમા ગિરુવદ્વા સુભિ-
ક્ષ્વા વીસત્થસુહાવાસા અળેગકોડિકુડુંવિયાઇણ-ગિવ્વુય-સુહા

‘ઉકોડિય-ગાયગંઠિભેયગ-મટ-તસ્કર-સ્વંડરક્ષ-રહિયા’ ઔત્કોટિકગાત્રગ્રન્થિભેદક-
મટ-તસ્કર-સ્વંડરક્ષ-રહિતા, ઉત્કોટૈરુત્કોચૈર્વ્યવહરન્તિ તે ઔત્કોટિકા=લશ્ચગ્રાહિણઃ, ગાત્રાત્
કંઠિપ્રદેશાદેઃ સકાશાદ્ ગ્રન્થિ મિન્દન્તીતિ ગાત્રગ્રન્થિભેદકાઃ=ગુપ્તરીત્યા ગ્રન્થિહારિણઃ,
મટાઃ=હઠાલ્લુપ્ટાકાઃ, તસ્કરાઃ=ચૌરાઃ સ્વંડરક્ષાઃ=શુલ્કપાલાઃ, દેશસીમાયાં સ્થિત્વા યે
રાજકરં ગૃહ્ણન્તિ તે, એતૈ રહિતા=એતેષામુપદ્રવૈર્વર્જિતા સર્વોપદ્રવવિરહિતેત્યર્થઃ, અતએવ
‘સ્વેમા’ ક્ષેમા-કુશલસ્વરૂપા અશુભાભાવાત્, ‘ગિરુવદ્વા’ નિરુપદ્રવા, સ્વચક્રપરચક્રો-
ભયચક્રકૃતોપદ્રવવિરહિતા । ‘સુભિક્ષ્વા’ સુભિક્ષા-સુ=મુલમા મિક્ષા મિક્ષૂણાં યત્ર
સા તથા, ‘વીસત્થસુહાવાસા’ વિશ્વસ્તસુખાવાસા-વિશ્વસ્તં=વિશ્વાસમુપગતં નિશ્ચિતં
સુખં આવાસે નિવાસસ્થાને યસ્યાં સા તથા, ‘અળેગકોડિકુડુંવિયાઇણ-ગિવ્વુય-સુહા’

રહિયા) इसमें किसी भी प्रकारका भय नहीं था, न तो लांच लेने वाले जन यहां थे और न गुप्तरीति से गांठ कतरनेवाले ग्रन्थिच्छेदक लुटेरे यहां थे । न यहां मट-जबरदस्ती छूटने वाले डाकू थे और न तस्कर-चोर ही थे । ऐसा भी कोई यहां नहीं था जो देशकी सीमा में खड़ा होकर राजा के टेक्स को लोगों से जोर-जुल्म द्वारा अपहरण करनेवाला हो । तात्पर्य यह है कि यह नगरी समस्त प्रकार के उपद्रवों से रहित थी । इसीलिये यहां पर (स्वेमा गिरुवद्व सभिक्षा वीसत्थसुहावासा) क्षेमा कुशलता बनी रहती थी, निरुपद्रवा-स्वचक्र और परचक्र का भय यहां नहीं था । सुभिक्षा-भिक्षुओंको भिक्षा भी सदा मुलभ थी । विश्वस्तसुखावासा-यहां का निवास जनता को सुखकारक था । मकानका दरवाजा खोलकर भी रात्रि को जनता

કોઈ પણ પ્રકારનો ભય નહોતો. નતો લાંચ લેવા વાળા જનો અહીં હતાં કે ન તો ખીસાકાતર હુટારા અહીં હતા. નહોતા અહીં ભટ-જબરદસ્તો છૂટવાવાળા ડાકૂઓ કે નહોતા તસ્કર-ચોર લોકો. એવા પણ કોઈ અહીં નહોતા કે જે દેશની હદમાં ઉભા રહીને રાખના કરને લોકો પાસેથી જોરજુલમથી પડાવા લેવાવાળા હોય. તાત્પર્ય એ છે કે આ નગરી સમસ્ત પ્રકારના ઉપદ્રવોથી રહિત હતી. એટલા માટે અહીં (સ્વેમા ગિરુવદ્વા સુભિક્ષા વીસત્થસુહાવાસા) ક્ષેમા-કુશલતા કાયમ રહેતી હતી, નિરુપદ્રવા-સ્વચક્ર અને પરચક્રનો ભય અહીં નહોતો. સુભિક્ષા-ભિક્ષુઓને ભિક્ષા પણ સદા મુલભ હતી. વિશ્વસ્તસુખાવાસા-અહીંનો નિવાસ જનતાને સુખકારક હતો. મકાનનાં દરવાજાં ઉઘાડાં એવાને પણ લોકો રાત્રિમાં

णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंबग-कहग-पवग-लासग-आइक्खग-
लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंबवीणिय-अणेगतालायराणुचरिया आरा-

अनेककोटिकौटुम्बिकाकीर्णनिर्वृतसुखा, अनेककोटिमंख्यालंख्येयैः कौटुम्बिकैः=अनेक-पुत्रादि-
परिवारवद्विराकीर्णा=व्याप्ता चासौ निर्वृतसुखा=सम्पन्नसौख्या चेति तथा, जनताया बाहुल्येऽपि
सुखसामग्री न तत्र दुर्लभेति भावः । 'णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंबग-कहग-
पवग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंबवीणिय-अणेगतालायराणुचरिया'
नट-नर्तक-जल्ल-मल्ल-मौष्टिक-विडम्बक-कथक-प्लवक-लासका-चक्षक-लङ्घ-मङ्घ-
तूणावत्तुम्बवीणिकानेकतालाचरानुचरिता, तत्र नटाः=नाटककारकाः, नर्तकाः=नैकविध-
नृत्यनिष्णाताः, जल्लाः=रज्जूपरिक्रीडनशीलाः, मल्लाः=मल्लक्रीडाकारकाः, मौष्टिकाः=मुष्टि-

निश्चिन्तरीति से सुखकी निद्रा लिया करती थी । (अणेगकोडिकुडुंबियाइण्णणि-
व्वुयसुहा) करोड़ों कुटुम्बों से इस नगरी के व्याप्त होने पर भी उन्हें यहां
किसी भी प्रकार के कष्टका अनुभव नहीं होता था । उन्हें यहाँ प्रत्येक जीवनो-
पयोगी सामग्री सुलभ थी । (णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंबग-कहग-पवग-
लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंबवीणिय-अणेगतालायराणुचरिया)
नट-नाटक करनेवालों से, नर्तक-अनेक प्रकारकी नृत्यक्रिया में निष्णात व्यक्तियों से, जल्ल-रस्सी
पर चढ़कर विविध प्रकार के खेल तमासे दिखलाकर जनता का मनोरंजन करनेवाले
नटों से, मल्ल-मल्लक्रीडा में निपुण पहलवानों से, मौष्टिक-मुष्टि से प्रहार करनेवाले मौष्टिकों से,
विडम्बक-वेष एवं भाषा आदि द्वारा दूसरों की नकल करके स्वयं हसनेवाले तथा दूसरों
को भी उनके चित्तको अनुरंजित करके हंसानेवाले बहुरूपियों से, कथक-अनेक प्रकार की

निश्चित रीते सुखनी निद्रा देता होता । (अणेगकोडिकुडुंबियाइण्णणि-
व्वुयसुहा) करोड़ों कुटुम्बों से इस नगरी व्याप्त होता था तथा तेमने अही
कैयपण प्रकारनां कष्टनो अनुभव थतो नहि. तेमने अही प्रत्येक जीवन-
उपयोगी चीज वस्तु सहेजे भणती होती. (णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलं-
बग-कहग-पवग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंबवीणिय-अणेगताला-
यराणुचरिया) नट-नाटक करवावाणाओथी नर्तक-अनेक प्रकारनी नृत्यक्रियाओमां
निष्णात ओवा पात्रोथी, जल्ल-दोरडां पर अहीने विविध प्रकारना खेल-तमासा
देओडीने जनताने मनोरंजन करवावाणा नटोथी, मल्ल-मल्लक्रीडामां निपुण पडेव-
वानोथी, मौष्टिक-मुष्टिथी प्रहार करवावाणा मौष्टिकोथी, विडम्बक-वेष तेमण भाषा
(ओली) द्वारा भीजओनी नकल करीने पोते हुसे तथा भीजओने पण पुथी

मुज्जाण-अगड-तलाग-दीहिय-वप्पिणगणोववेया नंदणवण-सन्नि-

प्रहरणशीलाः, विडम्बकाः=वेषभाषादिभिः परानुकरणेन हसनहासनशीलाः, कथकाः=विविधकथाकारकाः गायका वा, प्लवकाः=उत्प्लवनशीलाः-नद्यादितरणशीला वा, लासकाः=रासक्रीडाकारिणः, आचक्षकाः=शुभाशुभशकुनाभिधायकाः, लङ्काः=दीर्घवंशशिरसि क्रीडन-शीलाः, मङ्काः=चित्रफलकं दर्शयित्वा भिक्षाग्राहिणः. तूणावन्तः=तूणाभिधानवाद्यवादकाः, तुम्बवीणिकाः=वीणावादकाः, अनेके च ते तालाचराः-काष्ठकरतालदिभिस्तालान् ददतो लोकानाऽऽचरन्ति=अनुरज्जयन्ति ये ते तथा; एतैर्नटादितालचरान्तैरनुचरिता=युक्ता या सा तथा ।
'आरामु-ज्जाण-अगड-तलाग-दीहिय-वप्पिणगणोववेया' आरामोद्यानावटतडागदीर्घिका-

कथाकहानियों के कहने में कुशलमतिवाले कथाकारकों से, अथवा विविध प्रकार की गानकला में निपुण संगीतविद्याके जाननेवालों से, प्लवक-कूदनेवालोंसे अथवा तैरने की कलामें पारंगत अनेक तैराकोंसे, लासक-रास रचनेमें निपुण व्यक्तियों से, आचक्षक-शुभ और अशुभ शकुन को प्रकट करने में विशेषदक्ष नैमित्तिकों से, लङ्क-बड़े बड़े बांसों के अग्रभाग पर चढ़कर वहां अनेक प्रकारकी क्रीडा करके दिखानेवाले नटों से, मङ्क-सुन्दर चित्रों को दिखलाकर जनतासे भिक्षा ग्रहण करनेवाले भिक्षुकोंसे, तूणइल्ल-तूणा नामके वाद्यविशेष को बजाने वाले बाजीगरों से, तुम्बवीणिक-वीणा के बजाने में विशेष पटु वीणावादकों से, एवं तालाचर-काष्ठ-करताल आदिद्वारा ताल देकर लोगोंको अनुरजित करनेवाले तालाचरों में अनुचरिता-वह नगरी कभी भी शून्य नहीं रहती थी । (आरामु-ज्जाण-अगड-तलाग-दीहिय-वप्पिणगणो-

करीने हसावे એવા બહુરૂપીઓથી, કથક-અનેક પ્રકારની કથા-વાર્તા કહેવામાં કુશલમતિવાળા કથાકારોથી, અથવા વિવિધ પ્રકારની ગાનકલામાં નિપુણ એવા સંગીતજ્ઞોથી, પ્લવક-કુદવાની વિદ્યામાં પૂર્ણ નિપુણતા પ્રાપ્ત કરેલી હોય તેવા કુદ-નારાઓથી, અથવા તરવાની કળામાં પારંગત અનેક તારુઓથી, લાસક-રાસ રચવામાં નિપુણ વ્યક્તિઓથી, આચક્ષક-શુભ અને અશુભ શકુન કહેવામાં બહુજ દક્ષ એવા નૈમિત્તિકોથી, લઙ્ક-મોટા મોટા વાંસની ટોચ ઉપર ચઢીને ત્યાં અનેક પ્રકારની ક્રીડા કરીને દેખાડવાવાળા નટોથી, મઙ્ક-સુંદર સુંદર ચિત્રોને દેખાડીને લોકો પાસેથી ભિક્ષા ગ્રહણ કરવાવાળા ભિક્ષુઓથી, તૂણઇલ્લ-તૂણા નામનાં વાદ્યવિશેષ બજાવવાવાળા બાજીગરોથી, તુમ્બવીણિક-વીણા બજાવવામાં વિશેષ પ્રવીણ એવા વીણાવાદકોથી, તેમજ તાલાચર-કાષ્ઠકરતાલ આદિદ્વારા તાલ દઈને લોકોને ખુશી કરવાવાળા તાલાચરોથી અનુચરિતા-તે નગરી કદી પણ શૂન્ય રહેતી નહોતી. (આરમુ-જ્જાણ-અગઢ-તલાગ-દીહિય-વપ્પિણ-ગણોવવેયા નંદણવણસન્નિભવ્વગાસા) આરામો-માલતી

ભપ્પગાસા ઉવ્વિદ્ધ-વિહલ-ગંભીર-સ્વાયફલિહા ચક્ક-ગય-મુ-

વપ્પિણગણોપપેતાઃ, તત્ર આરમન્તિ=ક્રીડન્તિ યત્ર તે આરામાઃ=માલતીપ્રભૃતિલતા-
ત્રાતતરુસમૂહસમેતાઃ પ્રદેશાઃ, ઉદ્યાનાનિ=કુસુમસ્તબકાઽવનતલ્લુતરુપગ્મિણ્ડિતાનિ સ્થાનાનિ,
અવટાઃ=કૂપાઃ, તડાગાઃ=જલાશયવિશેષાઃ. દીર્ઘિકાઃ=વાપ્યઃ, વપ્પિણાઃ=જલક્રીડા-
સ્થાનાનિ ક્ષેત્રાણિ વા, 'વપ્પિણ' इति देशीयः शब्दः, एतेषां गणाः=समूहाः, गुणा वा=
रमणीयतादयः, तैः उपपेता=युक्ता सा, 'नंदणवणसन्निभप्पगासा' नन्दनवनसन्निभप्रकाशा-
नन्दनवनं-मेरोर्द्वितीयवनं, तत्सन्निभप्रकाशः तत्प्रकाशसदृशः प्रकाशो यस्यां सा तथा, नन्दनवनसदृश-
सुखसम्पन्ना चम्पानगरी-इत्यर्थः । 'उव्विद्ध-विहल-गंभीर-स्वायफलिहा' उद्विद्ध-
विपुलगम्भीरस्वातपरिखा-उद्विद्धम्-उत्=उत्कर्षेण विद्धम्=अत्यधः स्वानितम्
'अतिउण्ड' इति भाषाप्रसिद्धं. 'विपुलं=विस्तृतम्, गम्भीरम्=अदृश्याधस्तलम्, स्वातम्=
उपरिविशालम् सङ्कुचिताधस्तलम्, परिखा च=चतुर्दिक्षु गोलाकारस्वातरूपा 'खाई' इति
भाषाप्रसिद्धा यस्यां सा तथा, स्वातपरिखापरिवेष्टितेत्यर्थः । 'चक्क-गय-मुसुंढि-ओरोह-सयग्घि-
जमलकवाडघणदुप्पवेसा' चक्रगदामुसुण्डचवरोधशतघ्रीयमलकपाटघनदुष्प्रवेशा,

વવેયા નંદણવણસન્નિભપ્પગાસા) આરામોં-માલતીલતા આદિ કે સમૂહોં સે એવં
વૃક્ષરાજિ સે મંડિત પ્રદેશોં-સે, ઉદ્યાનોં-પુષ્પોંકે ગુચ્છોં કે મારસે અવનત છોટે ૨ વૃક્ષોં
સે પરિમણ્ડિત સ્થાનોં-સે, અવટ-કૂપોં-સે, તડાગ-સરોવરોં-સે, દીર્ઘિકા-વાપિયોં સે, વપ્પિણ-
જલક્રીડા કરનેકે વિશેષ સ્થાનોં સે વહ નગરી સુશોભિત થી; ફસલિયે મેરુ કે નંદનવન
જેસી વહ શોભાકા ધામ બની હુઈ થી । (ઉવ્વિદ્ધ-વિહલ-ગંભીર-સ્વાયફલિહા, ચક્ક-
ગય-મુસુંઢિ-ઓરોહ-સયગ્ધિ-જમલકવાડઘણદુપ્પવેસા) ઉવ્વિદ્ધ-ફસ નગરી કે ચારોં ઓર જો
ગોલાકાર ખાઈ થી વહ બહુત હી ગહરી થી, વિપુલ-વિસ્તૃત થી, ગંભીર-જિસકા અધસ્તલ અદૃશ્ય
થા એસી થી, એવં સ્વાતપરિખા-ઊપર વિસ્તૃત ઓર નીચે સંકુચિત થી । ફસકા જો ચારોં ઓર કા

લતા આદિના સમૂહોથી તેમજ વૃક્ષરાજિથી શોભતા પ્રદેશોથી, ઉદ્યાનો-પુષ્પોના
ગુચ્છોના ભારથી લચી પડેલાં નાનાં નાનાં વૃક્ષોથી વીંટાએલાં સ્થાનોથી, અવટ-
કૂપાઓથી, તડાગ-સરોવરોથી, દીર્ઘિકા-વાવોથી વપ્પિણ-જલક્રીડા કરવાનાં સ્થાન
વિશેષથી તે નગરી સુશોભિત હતી. તેથી મેરુના નંદનવન જેવી તે શોભાનું
ધામ બની ગઈ હતી. (ઉવ્વિદ્ધ-વિહલ-ગંભીર-સ્વાયફલિહા, ચક્ક-ગય-મુસુંઢિ-ઓ-
રોહ-સયગ્ધિ-જમલકવાડઘણદુપ્પવેસા) આ નગરીની ચારે કોર જે ગોળાકાર
ખાઈ હતી તે ઘણીજ ઊંડી હતી, વિસ્તારવાળી હતી, ગંભીર-જેનું તળિયું
અદૃશ્ય હતું એવી હતી, તેમજ ઉપર પહોળી અને નીચે સંકુચિત

સુંઢિ-ઓરોહ-સયગ્ધિ-જમલકવાડઘણદુષ્પવેસા ધણુકુડિલ-વંક-
પાગાર-પરિક્ષિત્તા કવિસીસગવદ્દરઙ્યસંઠિયવિરાયમાણા અટ્ટાલય-

તત્ર-ચક્રાણિ=રથાજ્ઞાનિ, ગદાઃ=શસ્ત્રવિશેષાઃ મુસુન્દ્યઃ=શસ્ત્રવિશેષા એવ, અવરોધઃ-
રથ્યાદ્વારે પ્રતિભિત્તિઃ, શતઘ્ન્યઃ-યા ઉપરિતનદેશાન્નિપાતિતાઃ સત્યઃ પુરુષશતાનિ ઘ્નન્તિ
તાઃ, યમલકપાટાનિ=સમભાગદ્વયોપેતાનિ કપાટાનિ, તાન્યેવ ઘનાનિ=સાન્દ્રાણિ-દૃઢાનિ વા-
“ ઘનઃ સાન્દ્રે દૃઢે દાઢ્યે વિસ્તારે મુદ્ગેરઽમ્બુદે । ” इति हेमकोशात् । एतैः परचक्रादीनां
दुष्प्रवेशा=દુઃસ્વેન પ્રવેષ્ટું યોગ્યા પરચક્રાદિપરાભવરહિતેત્યર્થઃ, ‘ધણુકુડિલવંકપાગારપરિક્ષિત્તા’
ધનુઃકુટિલવક્રપ્રાકારપરિક્ષિત્તા-કુટિલં ચ તદ્ધનુઃ-ધનુઃકુટિલમ્, આર્ષત્વાદ્વિશેષણસ્ય પરનિપાતઃ,
કુટિલધનુષોઽપેક્ષ્યાઽપિ વક્રેણ પ્રાકારેણ પરિક્ષિત્તા યુક્તેત્યર્થઃ, ‘કવિસીસગવદ્દરઙ્યસંઠિય-
વિરાયમાણા’ કપિશીર્ષકવૃત્તરચિત્તમંસ્થિતવિરાજમાના, તત્ર-કપિશીર્ષકાઃ=પ્રાકારાગ્રભાગાઃ
‘કંગુરા, इति भाषाप्रसिद्धाः वृत्तरचिताः=गोलाकारेण निर्मिताः संस्थिताः=सुन्दरसंस्थान-
युक्तास्तैर्विराजमाना-सुन्दरकपिशीर्षकतया शोभाशालिनीत्यर्थः, ‘અટ્ટાલય-ચરિય-દાર-ગોપુર-તો-
રણ-સમુણ્ણય-સુવિભત્ત-રાયમમ્મા’ અટ્ટાલકચરિકાદ્વારગોપુરતોરણસમુજ્જતસુવિભત્તરાજમાર્ગા,

કોટ થા વહ ચક્ર, ગદા, મુસુંઢી, ઔર અવરોધ-રથ્યાદ્વાર કે પાસકી દોહરી ખીત સે, શતઘ્ની-જિનકે
ઉપર સે ગિરાને પર સૈકડોં વ્યક્તિ ચૂર્ણિત હો જાતે હૈં એસે અલ્પવિશેષોં સે યા તોપોં સે, ઔર
યમલકપાટઘન-મજબૂત, સમ યુગલ કપાટોં સે યુક્ત થા, અત એવ દુષ્પ્રવેશા-ઉસ નગરી મેં શત્રુ પ્રવેશ
ઝહોં કર સકતે થે । (ધણુકુડિલ-વંક-પાગાર-પરિક્ષિત્તા) ઇસ નગરી કા પ્રાકાર (કિલા)
કિ જિસસે યહ પરિવેષ્ટિત થી વહ વક્ર હુએ ધનુષ સે ખી અધિક વક્ર થા । (કવિ-
સીસગવદ્દરઙ્યસંઠિયવિરાયમાણા અટ્ટાલય-ચરિય-દાર-ગોપુર-તોરણ-સમુણ્ણય-સુવિભત્ત-
રાયમમ્મા) કપિશીર્ષક-કોટ કે કંગૂરે ગોલ આકાર કે થે એવં રંગ-વિરંગે થે । ઇસ કોટ કે

હતી. તેની ચારે કોર જે કોટ હતો તે ચક્ર, ગદા, મુસુંઢી, અને અવરોધ-દ્વારના
પાસેની બેવડી ભીંત-થી, શતઘ્ની-જેને ઉપરથી પાડી નાખવાથી સેંકડો વ્યક્તિ
ચુરેચુરા થઈ જાય છે એવાં અલ્પવિશેષથી, અથવા તોપોથી, અને મજબૂત સમ
યુગલ કપાટોથી યુક્ત હતી. આ કારણથી તે નગરીમાં શત્રુ પ્રવેશ કરી શકતા
નહોતા. (ધણુકુડિલ-વંક-પાગાર-પરિક્ષિત્તા) આ નગરીનો પ્રાકાર (કિલ્લો) કે જેનાથી
તે ઘેરાયેલી હતી તે વાંકા થયેલા ધનુષથી પણ વધારે વાંકો હતો. (કવિસી-
સગવદ્દરઙ્યસંઠિયવિરાયમાણા અટ્ટાલય-ચરિય-દાર-ગોપુર-તોરણ-સમુણ્ણય-સુવિભત્ત-રાય-
મમ્મા) કોટના કાંગરા ગોળ આકારના હતા તેમજ રંગબેરંગી હતા. આ કોટની
ઉપર અટ્ટાલિકાઓ (અગાસીઓ) બનાવેલી હતી. કોટના મધ્યભાગમાં બ્યાં ફરવાળ

ચરિય-દાર-ગોપુર-તોરણસમુણ્ણયસુવિભત્તરાયમગ્ગા છેયાયરિય- રઝયદઢફલિહંદકીલા વિવણિવણિછેત્તસિપ્પિયાઇણ્ણણિવ્વુયસુહા

તત્ર-અટ્ટલકા:-પ્રાકારોપરિવર્તિસ્થલવિશેષા:, ચરિકા:=અષ્ટહસ્તપ્રમાણ વસતિ-
દુર્ગાન્તરાલવર્તિમાર્ગા: 'દાર' દ્વારાણિ-પ્રસિદ્ધાણિ, ગોપુરાણિ-ગોપુરાણિ હિ નગરસ્ય સૌન્દર્યાર્થ
પ્રતિદ્વારાપ્રે નિર્મિતાણિ વિચિત્રશોભાસમ્પન્નાણિ પ્રવેશદ્વારાણિ. તોરણાણિ=પ્રસિદ્ધાણિ,
એતૈરટ્ટલકાદિભિઃ-ઉન્નતા:-દર્શનીયત્વાદિગુણસમ્પન્ના: સુવિભક્તા:-તત્તત્સ્થાને ગમનાય
વિભાગરૂપેણ રચિતા: રાજમાર્ગા યસ્યાં સા । 'છેયાયરિયરઝયદઢફલિહંદકીલા'
છેકાચાર્યરચિતદઢપરિધેન્દ્રકીલા-છેકાચાર્યેણ નિપુણશિલ્પિના, રચિતઃ કૃતઃ, પરિધઃ=
અર્ગલા, ઇન્દ્રકીલઃ=સંયોજિતકપાટદ્વયદઢીકરણાય લૌહમયકીલવિશેષઃ યદ્વા-કપાટદઢી-
કરણાય લૌહમયકણ્ટકવિશેષઃ, યસ્યાં સા તથા, 'વિવણિવણિછેત્તસિપ્પિયા-
ઇણ્ણણિવ્વુયસુહા' વિવણિવણિક્ષેત્રશિલ્પ્યાકીર્ણનિર્વૃતસુહા, તત્ર-વિવણીનાં=હટ્ટાનાં વણિજાં
ચ 'છેત્ત' ક્ષેત્ર-સ્થાનરૂપા યા સા, પ્રચુરહટ્ટપ્રચુરવ્યાપારિગણસમ્પન્નેત્યર્થઃ, તથા-શિલ્પિભિઃ=
કુમ્ભકારતન્તુવાયાદિભિઃ-આકીર્ણા=પરિપૂર્ણા, અતએવ જનાનાં પ્રયોજનસિદ્ધ્યા નિર્વૃત-

ઊપર અટ્ટલિકાએ બની હુઈ થી, કોટ કે મધ્યભાગ મેં જહાં પર દરવાજે થે વહાં
આઠ હાથ-પ્રમાણ ચૌડા માર્ગ થા । કોટમેં પ્રધાન દરવાજે થે, જહાં સે નગરી મેં
પ્રવેશ કિયા જાતા થા । દ્વારોં પર તોરણ બહુત ઉન્નત થે । મિત્ર ૨ સ્થાનોં પર
પહુંચને કે લિયે અલગ ૨ માર્ગ બને હુએ થે । (છેયાયરિયરઝયદઢફલિહંદકીલા)
નિપુણ શિલ્પીકે દ્વારા રચિત-કૃત અર્ગલા સે એવં ઇન્દ્રકીલા-દોનોં કિવાડોંકો પરસ્પર
મેં દઢ કરનેકે લિયે લગાયે ગયે લોહનિર્મિત કીલોં સે ઇસ નગરીકે દ્વાર યુક્ત થે ।
(વિવણિવણિછેત્તસિપ્પિયાઇણ્ણણિવ્વુયસુહા) ઇસકે બાજાર અનેક દુકાનોં એવં વ્યા-
પારિયોસે આકીર્ણ રહેતે થે । નગરીમેં કુંભાર ઓર તન્તુવાય-જુલાહે બહુત થે, ઇસસે

હતા ત્યાં આઠ હાથના માપના પહોળા રસ્તા હતા. કોટમાં મુખ્ય દરવાજા
હતા જેમાંથી નગરીમાં પ્રવેશ કરાતો હતો. દ્વારો ઉપર તોરણ ધણું સરસ
હતાં, બુદ્ધાં બુદ્ધાં સ્થાનો પર પહોંચવા માટે બુદ્ધા બુદ્ધા માર્ગ બનેલા હતા.
(છેયાયરિયરઝયદઢફલિહંદકીલા) નિપુણ શિલ્પીથી બનાવેલ અર્ગલા (આગ-
ળીયા)થી તેમજ ઇન્દ્રકીલા-બન્ને કમાડોને પરસ્પરમાં દઢ કરવા માટે લગાડવામાં
આવેલ લોહના બનાવેલ કીલા (લોગળ) થી આ નગરીનાં દ્વારો યુક્ત
હતાં. (વિવણિવણિછેત્તસિપ્પિયાઇણ્ણણિવ્વુયસુહા) એની બજાર અનેક દુકાનો
તેમજ વ્યાપારીઓથી ભરચક રહેતી હતી. નગરીમાં કુંભાર અને વણકર

**સિંઘાડગ-તિગ-ચઝક-ચચ્ચર-પણિયાવળ-વિવિહવત્થુપરિમંડિયા સુ-
રમ્મા નરવડપવિઙ્ણમહિવડપહા અળેગવરતુરગ-મત્તકુંજર-રહપહ-**

નિષ્પન્નં સુખં યમ્યાં સા તથા, તતઃ પદત્રયસ્ય—વિપિગિવગિક્ષેત્રં ચાસૌ શિલ્પ્યાકીર્ણા
ચાસૌ નિર્વૃત્તમુખા ચેતિ વિગૃહ્ય કર્મધારયઃ । ‘ સિંગાડગ-તિગ-ચઝક-ચચ્ચર-પણિયાવળ-
વિવિહવત્થુપરિમંડિયા ’ શૃંગાટકત્રિકચતુષ્કચત્વરપણિતાSSપણવિવિધવસ્તુપરિમણ્ડિતા,
તત્ર—શૃંગાટક—ત્રિકોણં સ્થાનમ્, ત્રિકં—યત્ર ત્રયો માર્ગા મિલિતાઃ, ચતુષ્કં—યત્ર ચત્વારો માર્ગા
મિલિન્તિ, ચત્વરં—યત્ર વિવિધમાર્ગાનંગમઃ, યષુ સ્થાનેષુ પણિતં—પણનં=ક્રયવિક્રયવ્યવહારસ્તદર્થ
યે—આપણાઃ=હૃદયનેષાં વિવિધવસ્તૂનિ—વિક્રેયદ્રવ્યાણિ, તૈઃ પરિમણ્ડિતા—સુશોભિતા ।
‘સુરમ્મા’ સુરમ્યા ‘નરવડપવિઙ્ણમહિવડપહા’ નરપતિપ્રવિકીર્ણમહીપતિપથા—
નરપતિના ભૂપેન પ્રવિકીર્ણઃ—ગમનાગમનામ્યાં વ્યાપ્તઃ, મહીપતિપથઃ—રાજમાર્ગો યસ્યાંસા ।

લોગોંકી પ્રત્યેક આવશ્યક પ્રયોજનકી સિદ્ધિ હોતે રહનેસે ચિત્તવૃત્તિ સુખિત બની રહતી થી,
(સિંઘાડગ-તિગ-ચઝક-ચચ્ચર-પણિયાવળ-વિવિહવત્થુપરિમંડિયા) શૃંગાટક—ત્રિકોણ-
સ્થાનમેં, ત્રિક—ત્રીનમાર્ગ જહાં પર આકર મિલે હોતે હૈં એસે સ્થાનમેં, ચતુષ્ક—જહાં ચાર
રાસ્તે આકર મિલતે હૈં એસે સ્થાનમેં, ચત્વર—જહાં અનેક પ્રકારકે માર્ગોંકા તંગમ હોતા
હૈં એસે સ્થાનમેં, ક્રય ઓર વિક્રય કરનેકે નિમિત્ત અનેક દુકાને બના હુઈથીં, જો સદા
અનેક પ્રકારકી વિક્રેય વસ્તુઓંસે પરિમણ્ડિત રહા કરતી થીં; એસી દુકાનોંસે યહ નગરી
સુરમ્ય થી । શોભા મી નગરીકી નિગલી હોનેસે યહ નગરી સ્વયં (સુરમ્મા) દેઢને-
વાલોંકે મનકો આહ્લાદકારક હો રહી થી । (નરવડપવિઙ્ણમહિવડપહા) ઇસકે રાજ-
માર્ગ નરપતિકે ગમન ઓર આગમનસે સદા વ્યાપ્ત બને રહતે થે । (અળેગવરતુરગ-

ધણા હતા તેથી ઢોડોની પ્રત્યેક આવશ્યક પ્રયોજનની સિદ્ધિ થતી રહેતી હોવાથી
ચિત્તવૃત્તિ સુખમય બની રહેતી હતી. (સિંઘાડગ-તિગ-ચઝક-ચચ્ચર-પણિયાવળ-
વિવિહવત્થુપરિમંડિયા) શૃંગાટક—ત્રિકોણ સ્થાનમાં, ત્રિક—ત્રણ રસ્તા જ્યાં આવીને
લેગા થાય છે એવાં સ્થાનમાં, ચતુષ્ક—જ્યાં ચાર રસ્તા આવીને મળે છે એવાં
સ્થાનમાં, ચત્વર—જ્યાં અનેક પ્રકારના માર્ગોંનો સંગમ થાય છે એવાં સ્થાનમાં,
ક્રય અને વિક્રય કરવા નિમિત્તે અનેક દુકાનો બનાવેલી હતી—જે સદા અનેક
પ્રકારની વેચવાની વસ્તુઓથી શોભિત રહ્યા કરતી હતી. એવી દુકાનોથી
આ નગરી સુરમ્ય (સુંદર) હતી. શોભા પણ આ નગરીની નિરાલી
હોવાથી તે (સુરમ્યા) જોનારના મનને આહ્લાદકારક થતી (લાગતી)
હતી. (નરવડપવિઙ્ણમહિવડપહા) એના રાજમાર્ગ નરપતિનાં ગમન આગ-
મનથી સદા વ્યાપ્ત બનેલા રહેતા હતા. (અળેગવરતુરગ-મત્તકુંજર-રહપહકર-

कर-सीय-संदमाणीआइण्णजाणजुग्गा विमउलणवणलिसोभि-
यजला पंडुरवरभवणसण्णिमहिया उत्ताणणयणपेच्छणिज्जा
पासाईया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥ सू. १ ॥

‘अणेगवरतुरग-मत्तकुंजर-रहपहकर-सीय-संदमाणीआइण्णजाणजुग्गा’ अनेकवरतुर-
गमत्तकुञ्जररथप्रकरशिविकास्यन्दमान्याक्रीगयानयुग्गा, तत्र-अनेकैः-बहुविधैः. वरतुरगैः
श्रेष्ठैश्चैः, मत्तकुञ्जरैः-मदोन्मत्तगजैः, रथप्रकरैः-रथसमूहैः शिविकाभिः-चतुरष्ट-
षोडशपुरुषवाह्याभिः, स्यन्दमानीभिः-लवुरिशिविकाभिः. आक्रीगाकेव्याप्ता परिपूर्णा इत्यर्थः,
यानानि-रथभेदा युग्गा-युगवहनशीलाः-हया वृषभा वा सन्ति यस्या सा तथा,
ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः । ‘विमउलणवणलिसोभियजला’ विमुकुलनव-
नलिनीशोभितजला-विमुकुलाभिर्विकसिताभिः, नवाभिः-अचिरसमुत्पन्नाभिः, नलिनीभिः-
कमलिनीभिः शोभितानि जलानि यस्या सा तथा । ‘पंडुरवरभवणसण्णिमहिया’ पाण्डुरवरभवन-
सम्यक्महिता-पाण्डुरैः-मुधाधवलैः, वरभवनैः-प्रासादैः सम्यक् समन्तात्, महिता-प्रशंसिता
रम्या-इत्यर्थः । ‘उत्ताणणयणपेच्छणिज्जा’ उत्ताननयनप्रेक्षणीया-उत्तानैः-निर्निमेषैः नयनैः

मत्तकुंजर-रहपहकर-सीय-संदमाणीआइण्णजाणजुग्गा) यहां के मार्ग अनेक प्रकारके
सुन्दर घोडोंसे, मत्तकुंजरोसे, रथोंके समूहसे, चार या आठ अथवा सोलह मनुष्यों द्वारा
उठाई जानेवाली बडीर पालकियोंसे, तामजामोंसे युक्त रहा
करते थे । हय-घोडे वृषभ-बैल यहां रथोंको खेंचा करते थे । (विमउलणवणलिसो-
भियजला) यहांके जलाशयोंका जल भी प्रफुल्लित नवीनर कमलिनियोंसे सुशो-
भित था । (पंडुरवरभवणसण्णिमहिया) इसका प्रत्येक सदन सदा मुधा-चुने से पुते
रहनेके कारण बडाही भला मादूम पडता था (उत्ताणणयणपेच्छणिज्जा) नगरीकी

सीय-संदमाणीआइण्णजाणजुग्गा) अडीं'ना मार्ग अनेक प्रकारना सुंदर
घोडाओथी, मत्त कुंजरोथी (डाथीओथी), रथोना समूहोथी, चार के आठ
अथवा सोण मनुष्यो द्वारा उपाडाती मोटी मोटी पादजाओथी, तामजनोथी
युक्त रह्या करना हुता. हुय-घोडा, वृषभ-अण्ड अडीं
रथोने भेंचता हुता. (विमउलणवणलिसोभियजला) अडु'नां जलाशयोनां
जल पणु प्रकुलित नवीन नवीन कमजोथी सुशोभित रहेतां हुतां (पंडुरवर-
भवणसण्णिमहिया) आनां प्रत्येक सदन (मकान) सदा युनाथा पोताओलां
रहेवाना कारणे भूय ज सरस लागतां हुतां. (उत्ताणणयणपेच्छणिज्जा)

प्रेक्षणीया, शोभासम्भारशालितया नगरीं पश्यद्विनिर्मेषा प्रायो न पात्यन्ते । 'पासाईया' प्रासादीया—प्रसादो मनःप्रसन्नता प्रयोजनं यस्याः सा प्रासादीया—हार्दिकोल्लासकारिणी—ति यावत् 'दरिसणिज्जा' दर्शनीया—रमणीयतया क्षणेक्षणे द्रष्टुं योग्या, 'अभिरूपा' अभिरूपा—अभिमतमनुकूलं रूपं यस्याः सा तथा, 'पडिरूपा' प्रतिरूपा—रूप्यते एषोऽयमिति निश्चीयतेऽनेनेतिरूपमाकारः—अभिमतम् असाधारणं रूपं यस्याः सा अभिरूपा—सर्वथा दर्शकजननयनमनोहारिणीति निष्कर्षः ॥ सू. १ ॥

शोभा—अपलक—निर्निमेष दृष्टि से ही देखने योग्य थी—यह नगरी इतनी अधिक सुन्दर थी की जिसे निर्निमेष होकर लोग निहारा करते थे—फिर भी नहीं अघाते थे । (पासाईया) देखकर मनमें बड़ीही प्रसन्नता होती थी । (दरिसणिज्जा) प्रदर्शनीकी वस्तु जैसी यह बनी हुई थी । अति रमणीय होनेकी वजहसे यह क्षण २ में देखनेके काबिल थी । (अभिरूपा पडिरूपा) इसका रूप अनुकूल था—मनको रुचे ऐसा था । इसीलिये यह अभिरूप एवं प्रतिरूप थी—दर्शकजनके मनको सब प्रकारसे आनंद प्रदान करनेवाली थी ।

भावार्थ—अवसर्पिणी कालके चतुर्थ आरेमें चंपा नामकी नगरी थी । इसमें ऊंचे २ मकान थे । ऋद्धिसे यह मंडित थी । किसीभी प्रकारका यहां भय नहीं था । जनता हरएक प्रकारसे निर्भय होकर इसमें निर्विघ्न से रहा करती थी । नगरीमें ऐसा कोई भी स्थल नहीं था जो भाग्यशाली जनसमूह से आकीर्ण न हो । इसके

नगरीनी शोभा निर्निमेष दृष्टिये જ બેવા લાયક હતી (દેખાઈ આવતી હતી). આ નગરી એટલી તો વધારે સુંદર હતી કે લોકો આંખનું મટકું માર્યા વગર બેવા જ કરતા હતા છતાં થાકતા નહોતા. (પાસાઈયા) બેઘને મનમાં ખૂબજ પ્રસન્નતા થતી હતી. (દરિસણિજ્જા) પ્રદર્શનીની વસ્તુ બેવા એ બની ગઈ હતી. અતિરમણીય હોવાને કારણે એ ક્ષણે ક્ષણે બેવા યોગ્ય હતી (અભિરૂપા પડિરૂપા) તેનું રૂપ અનુકૂળ હતું—મનને રૂચે એવું હતું, તેથી તો તે અભિરૂપ તેમજ પ્રતિરૂપ હતી. બેનાર લોકોનાં મનને સર્વ પ્રકારથી આનંદ પ્રદાન કરાવે તેવી હતી.

ભાવાર્થ—અવસર્પિણી કાલના ચોથા આરામાં ચંપા નામે નગરી હતી. તેમાં ઉંચાં ઉંચાં મકાન હતાં. ઋદ્ધિથી તે શોભતી હતી. કોઈ પણ પ્રકારનો અહીં ભય નહોતો. લોકો હરેક પ્રકારથી નિર્ભય બનીને તેમાં નિર્વિઘ્ને રહેતા હતા. નગરીમાં એવું કોઈ પણ સ્થળ નહોતું કે જે ભાગ્યશાળી જનસમૂહથી

बाहिरकी जमीन हजारों हलोंसे जुता करती थी । प्रत्येक मौसमका धान्य इसमें होता था । गाय-भैंसोंकी इसमें कमी नहीं थी । नगरीकी सीमामें गांव बहुत नजदीक बसे हुए थे । इक्षु आदिकी उपज इसमें अधिक मात्रामें होती थी । बड़े सुन्दर एवं विशाल बगीचे थे । इसमें जनताको कष्ट देनेवालोंका नामोनिशा तक भी नहीं था । न यहां लँच लेने वाले थे, न ग्रन्थिच्छेदक थे, न उचक्के लुटेर ही थे । इसमें नर्तकियोंके स्थान भी अनेक थे । भिक्षुओंको प्रत्येक समय यहां भिक्षा सुलभ थी । कुलपरम्परासे श्रीमंत लोगोंका यहां अभाव नहीं था । मनोविनोद के साधन भी इस नगरीमें जगह-पर थे । नट थे, नाटककार थे, मल्लयुद्ध करनेवाले थे, मुष्टियुद्ध करनेवाले थे । कथा-कहानी सुनाकर लोगोंमें सुप्त शुद्धपुरुषार्थको जगानेवाले जनभी यहां थे । रास रचाकर मानवोंको आनंदित करने वाले खिलाडी व्यक्तिभी यहां रहा करते थे । तात्पर्य यह कि प्रत्येक मनोविनोद की सामग्री यहां सतत प्रस्तुत रहा करती थी । नगरी के बाहिर-भीतर का प्रदेश आरामों, उद्यानों, कुवा, वावड़ी एवं जलाशय-तालाब आदि से सुशोभित था ।

ભરેલું ન હોય. તેની બહારની ભૂમિ હજારો હળોથી ખેડાયા કરતી હતી. પ્રત્યેક મોસમનાં ધાન્ય તેમાં ઉત્પન્ન થતાં હતાં. ગાય-ભેંસોની તેમાં ખોટ નહોતી. નગરીની સીમામાં ગામડાં બહુ નજીકમાં વસેલાં હતાં. શેરડી આદિની ઉપજ તેમાં વધારે પ્રમાણમાં થતી હતી. મોટા સુંદર તેમજ વિશાલ બગીચા હતા. તેમાં લોકોને કષ્ટ દેવાવાળાનું નામનિશાન પણ નહોતું. ન તો અહીં લાંચ લેવા વાળા હતા કે ન ખિસ્સાકાતર હતા. વળી લુંટારા પણ નહોતા. તેમાં નાચનારીઓનાં સ્થાન પણ ઘણાં હતાં. ભિક્ષુઓને પ્રત્યેક સમય અહીં રહેજે ભિક્ષા મળી રહેતી હતી. કુળપરંપરાથી શ્રીમંત લોકોનો અહીં અભાવ નહોતો. મનોવિનોદનાં સાધન પણ આ નગરીમાં ઠેકઠેકાણે હતાં. નટ હતા, નાટ્યકાર હતા, મલ્લયુદ્ધ કરવાવાળા હતા, મુષ્ટિયુદ્ધ કરવા વાળા હતા, કથા-વારતા સંભળાવી લોકોમાં ઢંકાઈ રહેલો શુદ્ધ-પુરૂષાર્થ જાગૃત કરાવવાવાળા લોકો પણ અહીં હતા. રાસ રચાવીને માનવોને આનંદિત કરવાવાળા ખેલાડી વ્યક્તિઓ પણ અહીં રહેતા હતા. તાત્પર્ય એ કે પ્રત્યેક મનોવિનોદની સામગ્રી અહીં સતત પ્રસ્તુત રહ્યા કરતી હતી. નગરીની બહાર તેમજ અંદરના પ્રદેશ આરામો ઉદ્યાનો કુવા વાવડી તેમજ જલાશયો-તાલાવ આદિથી સુશોભિત હતા.

इस नगरी के बाहिर एक विशाल और बहुत गहरी खाई थी। नगरी का कोट वक्र धनुषकी अपेक्षा भी अधिक वक्र था, जिसमें प्रत्येक आत्मरक्षण के साधन थे। किले में बड़े २ दरवाजे थे, दरवाजों में वज्र जैसे मजबूत किवाड थे, किवाडों में नुकीले कीले लगे हुए थे। कोट के ऊपर जो अड्डालिकाएँ थीं उनमें अनेक प्रकार के अस्त्र और शस्त्रों का संग्रह किया गया था। वह वहाँ सदा सुरक्षित रहता था। नगरीमें विस्तृत बाजार थे, बाजारोंमें बड़ी २ दुकानें थीं, दुकानों में क्रय विक्रय की बहुमूल्य प्रत्येक आवश्यकीय वस्तुएँ संगृहीत थीं। नगरी के राजमार्ग हर समय अपार जनकी भीड़ से, हाथियों से, पालकियों से, रथों से, और तामजाम आदि से संकुलित बने रहा करते थे। यहाँ के मकान धवल चूनासे पुते हुए रहने के कारण बड़े ही सुहावने मादम होते थे, तात्पर्य यह है कि यह नगरी बहुत ही सुन्दर और चित्त को लुभानेवाली थी। सब प्रकार से यहाँ जनताको आराम था। किसी भी त्रिलोकगत वस्तु का यहाँ अभाव नहीं था। अमरावती जैसी यह भली मादम होती थी।

— आ नगरीनी भडार ओक विशाल अने घण्टी उँडी भाई हुती। नगरीने इरतो। वांङु धनुष करतां पणु वधारे वांङो कोट हुतो। जेमां हरेक आत्मरक्षणनां साधन हुतां। डिदलामां मोटा मोटा दरवाज हुता। दरवाजमां वज्र जेवां मजबूत कमाड हुतां। कमाडमां आगणीआ तथा लोगणो लगावेलां हुतां। कोटना उपर जे अटारियो हुती तेमां अनेक प्रकारनां अस्त्रो तथा शस्त्रो नो संग्रह करेवो हुतो। ते त्यां सदा सुरक्षित रहेतो हुतो। नगरीमां विस्तृत भजार हुती। भजारोमां मोटी मोटी दुकानो हुती। दुकानोमां क्रय-विक्रयनी बहु-मूल्य (किमती) प्रत्येक आवश्यकीय वस्तुओ संग्रहेली हुती। नगरीना राजमार्ग हरेक समय अपार भाणुसोनी लीडथी, डायीओथी, पालभीओथी, रथोथी अने तामजाम आदिथी लरयक रह्या करता हुता। अहीनां मकान सफेद चुनाथी पोतायेलां रहेवाना कारणे भूष ज रोनाकदार लागतां हुतां। तात्पर्य ओ के आ नगरी बहु सुंदर अने चित्तने जेयवाणी हुती। हरेक प्रकारथी अहीं दोडोने आराम हुतो। कोछ पणु त्रिलोकगत (त्रणु दोडमां थती) वस्तुनो अहीं अभाव नहोतो। अमरावती जेवी आ सरस लागती हुती।

शंका—काल और समय तो एक ही अर्थ के वाचक हैं फिर सूत्र में “ तेणं कालेणं तेणं समणं ” ऐसा प्रयोग सूत्रकार ने क्यों किया ? उत्तर यह है—‘काल’ शब्द से अवसर्पिणी कालके चतुर्थ आरे का ग्रहण होता है, और ‘समय’ शब्द से यहाँ हीयमान लिया जाता है, तथा घड़ी घंटा पक्ष मास संवत्सर आदिरूप से परिवर्तित होने वाला परिणमन लिया जाता है, अथवा—जिस प्रकार संवत् और मिति खातों आदिमें लीखी जाती हैं, ठीक इसीप्रकार यहां पर भी समझना चाहिये । यह चंपा नगरी तो अब भी है फिर “ अस्ति ” ऐसा न कहकर सूत्रकार ‘ आसीत् ’ इस भूतकालिक क्रिया का प्रयोग क्यों करते हैं ? अर्थात्—जिस समय औपपातिकसूत्रकी रचना हुई उस समय में भी वह नगरी थी, फिर ‘अस्ति’ ऐसा न कहकर ‘आसीत्’ ऐसा क्यों कहा ? इसका उत्तर यह है कि जिस समय इस उपांग रूप आगम की वाचना हुई थी, उस समय यह नगरी सूत्र में कहे हुए विशेषणों से सर्वथा युक्त नहीं थी, न इस समय वैसी है, इसलिये ‘अस्ति’ क्रियापदका प्रयोग न करके सूत्रकार ने आसीत् इस भूतकालिक क्रियापदका प्रयोग किया है ॥ सू. १ ॥

शंका:—કાલ અને સમય તો એકજ અર્થના વાચક છે છતાં સૂત્રમાં “ તેણં કાલેણં તેણં સમણં ” એવો પ્રયોગ સૂત્રકારે કેમ કર્યો છે ? ઉત્તર એ છે કે ‘કાલ’ શબ્દથી અવસર્પિણી કાલના એથા આરાનો અર્થ ગ્રહણ થાય છે, અને ‘સમય’ શબ્દથી અહીં હીયમાન લેવાય છે, તથા ઘડી કલાક પક્ષ માસ સંવત્સર આદિ રૂપથી પરિવર્તિત થનાર પરિણમન લેવાય છે અથવા જે પ્રકારે સંવત્ તથા મિતી ચોપડા આદિમાં લખવામાં આવે છે તેવી જ રીતે અહીંયાં પણ સમજવું જોઈએ. આ ચંપા નગરી તો હજી પણ છે છતાં ‘અસ્તિ’ એમ ન કહેતાં ‘આસીત્’ એમ ભૂતકાલિક ક્રિયાનો પ્રયોગ કેમ કરે છે ? એટલે કે જે સમયે ઔપપાતિક-સૂત્રની રચના થઈ તે સમયમાં પણ તે નગરી હતી તો પણ અસ્તિ એમ ન કહેતાં આસીત્ કેમ કહ્યું ? તેનો જવાબ એ છે કે, જે સમયે આ ઉપાંગરૂપ આગમની વાચના થઈ હતી તે સમયે આ નગરી સૂત્રમાં કહેલા વિશેષણોથી સર્વથા યુક્ત ન હતી અને આ સમયે પણ તેવી નથી રહી. એ માટે અસ્તિ ક્રિયાપદનો પ્રયોગ ન કરતાં સૂત્રકારે આસીત્ એવા ભૂતકાલિક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કર્યો છે. (૧)

મૂલમ્—તીસે ણં ચંપાણ ણયરીણ બહિયા ઉત્તર—
પુરત્થિમે દિસીમાણ એત્થ ણં પુણ્ણમહે ણામં ચેદ્દણ હોત્થા, ચિરાઈણ
પુવ્વપુરિસપણ્ણત્તે પોરાણે સદ્દિણ વિક્કિણ કિત્તિણ ણાણ

ટીકા—‘તીસે ણં’ इत्यादि । ‘तीसे णं चंपाण णयरीण’ तस्याः खलु चम्पाया नगर्याः-न
करोऽष्टादशविधस्तन्निवासिनां राज्ञे देयो यस्यां सा नगरी, अत्र ककारस्य गकाररूपो वर्णविपर्यासः पृ-
षोदरादित्वात्, अष्टादशविधः करोऽस्माभिरन्तकृदशाङ्गसूत्र प्रथमसूत्रस्य मुनिकुमुदचन्द्रिकाटीका-
यामुक्तस्ततो विज्ञेयः । ‘बहिया’ बाह्ये, ‘उत्तरपुरत्थिमे’ उत्तरपौरस्त्ये-उत्तरस्याः पूर्वस्या अन्तराले-
ऐशान्येकोण इति यावत् । ‘दिसीमाण’ दिग्भागे । ‘पुण्णमहे णामं चेद्वण ह्योत्था’
पूर्णभद्रं नाम चैत्यं=व्यन्तरायतनमासीत् । तत् कीदृशम् ? इत्याह—‘चिराईण’ चिरादिकम्
चिरकालिकम् अतएव—‘पुव्वपुरिस्सपण्णत्ते’ पूर्वपुरुषप्रज्ञप्तम्, पूर्वपुरुषैः प्राचीन-
पुरुषैः प्रज्ञप्तम्-कथितं बहुकालतः प्रसिद्धम् इत्यर्थः । यतः पोराने-पुरातनमति-
प्राचीनम् ‘सद्दिण’ शब्दितं-शब्दः-प्रसिद्धिः सञ्जातो यस्य तत्-शब्दितम्-
प्रसिद्धिप्राप्तम् । ‘विक्किण’ वित्तिकम्-वित्तं-प्रसिद्धिरस्यास्तीति वित्तिकम् प्रसिद्ध-
मित्यर्थः । ‘कित्तिण’ कीर्तितम्-प्रवर्णितम् ‘णाण’ प्रख्याततया ज्ञातं-सकलजन-

‘તીસે ણં ચંપાણ ણયરીણં ’ इत्यादि ।

(તીસે ણં ચંપાણ ણયરીણ) उस चंपा नगरी के (बहिया)
बाहिर (उत्तरपुरत्थिमे दिसीमाण) उत्तर और पूर्व दिशा के बीच ईशानकोणमें
(पुण्णमहे णामं चेद्वण ह्योत्था) पूर्णभद्र नाम का एक चैत्य-यक्षालय
था । (चिराईण पुव्वपुरिस्सपण्णत्ते) वह बहुत प्राचीन था । बड़े-बूढ़े पुराने पुरुष
भी इसको तारीफ करते आ रहे थे । इसलिये वह (पोराने) बहुत पुराना
था । (सद्दिण) इसी प्रकार से इसकी प्रसिद्धि भी चली आरही थी । और इसी
कारण से वह (विक्किण) बहुत पुराना है-इस रूपसे प्रसिद्धि-कोटि में आ गया

તીસે ણં ચંપાણ ણયરીણં ઇત્યાદિ.

(તીસે ણં ચંપાણ ણયરીણ) તે ચંપા નગરીના (બહિયા) બહાર (‘ઉત્તરપુરત્થિમે
દિસીમાણ) ઉત્તર અને પૂર્વ દિશાની વચ્ચે-ઈશાન કોણમાં (પુણ્ણમહે ણામં ચેદ્દણ હોત્થા)
પૂર્ણભદ્ર નામનો એક ચૈત્ય-યક્ષાલય હતો. (ચિરાઈણ પુવ્વપુરિસપણ્ણત્તે) એ
ઘણો પ્રાચીન હતો. ઘણા બુદ્ધા પુરાણા પુરુષ પણ્ણ તેની પ્રશંસા કરતા આવતા
હતા, તે માટે તે (પોરાણે) ઘણો પુરાણો હતો. (સદ્દિણ) એવી
રીતે તેની પ્રસિદ્ધિ પણ ચાલી આવતી હતી અને એ કારણથી તે (વિક્કિણ)

सच्छत्ते सज्झए सघंटे सपडागे पडागाइपडागमंडिए सलोमहत्थे
कयवेयदिए लाउल्लोइयमहिए गोसीससरसरत्तचंदणदहर—

विदितम् । ' सच्छत्ते ' सच्छत्रम्—छत्रमण्डितम् । ' सज्झए ' सध्वजं—ध्वजोच्छ्रायैः
सश्रीकम् । ' सघंटे ' सघण्टम् । ' सपडागे ' सपताकम् । ' पडागाइपडागमंडिए '
पताकाऽतिपताकामण्डितम्—पताकाः=लघुपताका अतिपताकाः=विशालपताकाः, ताभिर्मण्डितम् ।
' सलोमहत्थे ' सरोमहस्तं—मृदुप्रमार्जनिकया सहितम् । ' कयवेयदिए ' कृतवि-
तर्दिकम् रचितवेदिकम् । ' लाउल्लोइयमहिए '—लापितोल्लोचितमहितम्, तत्र लापितं—गोम-
यादिभिरङ्गणमित्यादेर्लेपनम्, उल्लोचितम्—खडिकादिद्रव्यैर्भित्त्यादीनां चाकचिक्ययुक्तकरणम् ।

था, (कित्तिए) लोगों द्वारा भी तरह तरह की किंवदंतियों (दन्तकथाओं) से यह कीर्तित हो रहा
था । (णाए) ऐसा कोई भी जन नहीं था जो उसके नामसे अपरिचित हो ।
सर्वत्र जनों में यह ख्यातिप्राप्त स्थान था । (सच्छत्ते) वह छत्रसहित था ।
(सज्झए) ध्वजाओं से युक्त था, (सघंटे) घंटाओं से विशिष्ट था (सपडागे)
पताकाओं से उसकी शोभा अपूर्व बन रही थी । उसमें (पडागाइपडागमंडिए)
कोई २ छोटी पताकाएं थीं और कोई २ विशाल पताकाएँ थीं, जिनसे वह मंडित
था । (सलोमहत्थे) मृदुप्रमार्जनिका—मयूरपिच्छकी पीछी से ही उसकी सफाई होती
थी, अतः इतस्ततः वे ही वहां रखी हुई रहती थीं, कठिन बुहारियां नहीं । (कयवेयदिये)
इसमें वेदिका बनी हुई थी (लाउल्लोइयमहियं) इसके आंगन की जमीन लापित—
गोमय से लिपी हुई रहती थी, उसकी भीतें उल्लोचित—सफेद खडिया से पुती

धणु। पुराणु। छे अे ३पथी प्रसिद्धि—कोटिमां आवी गये। डतो। (कित्तिए)
दोकोद्वारा पणु जतजतनी किंवदंतियोथी—दंतकथाओथी ते कीर्तित
(प्रख्यात) थर्ध रह्यो डतो। (णाए) अेवो कोध पणु भाणुस नडोतो के
जे अेना नामथी अपरिचित डोय। सर्वत्र दोकोमां आ ज्जाति पामेधुं स्थान
डतुं। (सच्छत्ते) ते छत्रसहित डतुं। (सज्झए) धज्जओथी युक्त डतुं।
(सघंटे) घंटाओथी विशिष्ट डतुं। (सपडागे) पताकाओथी तेनी शोभा
अपूर्व थर्ध रही डती। तेमां (पडागाइपडागमंडिए) कोध कोध नानी पताकाओ
डती अने कोध कोध विशाल पताकाओ डती जेथी ते शोभतुं डतुं (सलोम-
हत्थे) मृदुप्रमार्जनिका—भोरना पीछांनी पीछीथी ज तेनी सक्षर्ध थती डती,
आथी अही तही ते त्यां राज्जवामां आवती डती, कण्ण सावरणी नडि।
(कयवेयदिए) तेमां वेदिका बनावेदी डती। (लाउल्लोइयमहिए) तेना आंगणुंनी
भूमि लापित—छाणुथी दीपाओदी रडेती डती। तेनी भीतो उल्लोचित—सङ्केद

દિણ્ણપંચંગુલિતલે ઉવચિયચંદણકલસે ચંદણઘડસુકય-
તોરણપડિદુવારદેસમાણ આસત્તોસત્તવિઉલવટ્ટવગ્ધારિયમહ્લ-

તામ્યાં મહિતં=યુક્તમ્ । ‘ગોસીસસરસરત્તચંદણદહરદિણ્ણપંચંગુલિતલે’ ગોશીર્ષસરસરત્ત-
ચન્દનપ્રચુરદત્તપશ્ચાદ્ગુલિતલમ્, ગોશીર્ષ-ગોરોચનં સરસં રક્તચન્દનમ્, એતેન ચન્દનસ્ય
પીતવર્ણતા રક્તતા ચ વ્યજ્યતે; તેન પીતરક્તસરસચન્દનેન દર્દરં-પ્રચુરં યથા સ્યાત્તથા દત્તં
પશ્ચાનામહ્લગ્નીનાં તલં=વ્યાયતપશ્ચાદ્ગુલપાગિતલં ચપેટારૂપમ્ અઙ્કનં ચિહ્નં યત્ર તત્
તથા । ‘ઉવચિયચંદણકલસે’ ઉપચિતચન્દનકલશમ્-મહ્લાર્થં ન્યસ્તચન્દન-
લિપ્તઘટમ્ । ‘ચંદણઘડસુકયતોરણપડિદુવારદેસમાણ’ ચન્દનઘટસુકૃત-
તોરણપ્રતિદ્વારદેશભાગમ્-ચન્દનઘટાશ્ચ સુષ્ટુ કૃતતોરણાનિ ચ પ્રતિદ્વારદેશભાગે યસ્ય
તત્તથા, યત્ર પ્રતિદ્વારે ચન્દનલિપ્તકલશાઃ સુન્દરતોરણાનિ ચ સન્તીત્યર્થઃ, ‘આસત્તોસત્ત-
વિઉલવટ્ટવગ્ધારિયમહ્લદામકલાવે’ આસત્તોસત્તવિપુલવૃત્તાઽવતારિતમાલ્યદામ-
કલાપમ્-આસત્તો-ભૂમિન્સત્તઃ ઉત્સત્તઃ- ઉપરિન્સત્તઃ, વિપુલો વિસ્તીર્ણઃ, ‘વટ્ટો’
વૃત્તો-વર્તુલો ગોલાકારઃ, ઉપરિદેશાત્-અવતારિતઃ પ્રલમ્બમાનીકૃતઃ,-
‘મહ્લદામકલાવે’ માલ્યાનિ-કુસુમાનિ, તેષાં દામાનિ-માલાઃ પુષ્પમાલાઃ, તેઝાં માલ્યદામ્નાં

રહતી થી । ઇસ કારણ સ્ત્રૂવ મહિત-ચમકતી રહતી થી । (ગોસીસસરસરત્તચંદણદહરદિણ્ણ-
પંચંગુલિતલે) મિત્તિયોં મેં જગહ ૨ પર ગોરોચન ઓર સરસ રક્તચંદન કે પ્રચુરમાત્રા
મેં હાથે લગાયે હુણ થે । (ઉવચિયચંદણકલસે) ઉસ યક્ષાલયમેં મંગલ કે
નિમિત્ત ચંદન સે લિપ્ત કલશ સ્થાપિત થે । (ચંદણઘડસુકયતોરણપડિદુવારદેસમાણ)
પ્રત્યેક દ્વારોં પર ચંદન કે ઘટ રલે હુણ થે, ઇવં અચ્છી તરહ સે બનાણ ગયે સુન્દર
તોરણ દરવાજોં કે ઉપર સુશોભિત હો રહે થે, અથવા ચંદન કે છોટે ૨ કલશોં સે
દરવાજોં પર તોરણોં કી રચના કરને મેં આઈ થી । (આસત્તોસત્તવિઉલવટ્ટવગ્ધારિય-

ખડીથો પોતાએલી રહેતી હતી. તે કારણે તેખૂબ મહિત-ચમકતી રહેતી હતી. (ગોસીસ-
સરસરત્તચંદણદહરદિણ્ણપંચંગુલિતલે) ભીંતમાં ઠેકઠેકાણે ગોરોચન અને સરસ રક્ત-
ચંદનના થાપા ખૂબ પ્રમાણમાં લગાવેલા હતા. (ઉવચિયચંદણકલસે) તે
યક્ષાલયમાં મંગલના નિમિત્ત ચંદન લગાડેલા કળશ સ્થાપિત હતા. (ચંદણઘડ-
સુકયતોરણપડિદુવારદેસમાણ) પ્રત્યેક દ્વારો ઉપર ચંદનવાળા ઘટ રાખેલા
હતા. તેમજ સરસ રીતે બનાવેલાં સુંદર તોરણ દરવાજાની ઉપર સુશોભિત
લટકી રહેલાં હતાં. અથવા ચંદન લગાવેલાં નાનાં નાનાં કળશોથી દરવાજા
પર તોરણોની રચના કરવામાં આવી હતી. (આસત્તોસત્તવિઉલવટ્ટવગ્ધારિય

दामकलावे पंचवर्णसरससुरभिमुक्कपुष्पपुंजोवयारकलिए काला-
गुरुप्रवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवडज्झंतमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधवर-

कलापः=समूहो यत्र तत्, अर्थात्-उपर्यधोविस्तृतवर्तुलप्रलम्बमानकुसुममाला-
कलापोपेतम् । 'पंचवर्णसरससुरभिमुक्कपुष्पपुंजोवयारकलिए' पञ्चवर्णसरस-
सुरभिमुक्कपुष्पपुञ्जोपचारकलितम्-पञ्चवर्णानि कृष्णनीलपीतरक्तश्वेतकान्तियुक्तानि सरसानि
सुरभीणि-सुगन्धीनि च तानि मुक्तानि-विकीर्णानि यानि पुष्पाणि तेषां पुञ्जैरुपचाराः-
रचनाविशेषाः, तैः कलितं युक्तं विविधवर्णकुसुमरचनासम्पन्नमित्यर्थः, 'कालागुरुप्रवर-
कुंदुरुक्कतुरुक्कधूवडज्झंतमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे' कालागुरुप्रवरकुन्दुरुक्कतुरुक्कधूपदह्य-
मानातिशयगन्धोद्धूताऽभिरामम्-कालागुरुः=कृष्णागुरुः, प्रवरकुन्दुरुक्कः=श्रेष्ठगन्धद्रव्यविशेषः,
तुरुक्कः=सिल्हकः 'लोवान' इति भाषायाम्, धूपः=गन्धद्रव्यसंयोगजन्यः
पदार्थः, एते दह्यमानाः अग्नौ प्रक्षिप्यमाणास्तेषां 'मघमघंत' अतिशयितो
यो गन्धः 'उद्धुय' उद्धूतः=सर्वतः प्रसृतः, ते न अभिरामम्=मनोहरम् 'सुगंधवरगंध-

मल्लदामकलावे) यक्षायतन में भीतों के ऊपर और नीचे सर्वत्र विस्तीर्ण एवं
गोलाकार लटकते हुए कुसुमकी मालाओं के कलाप की सजावट हो रही थी ।
(पंचवर्णसरससुरभिमुक्कपुष्पपुंजोवयारकलिए) प्रतिस्थान पर यहां पंचवर्ण के
सरस एवं सुगंधित पुष्पों के पुंजों से अनेक प्रकारकी रचना रचने में आई थी ।
(कालागुरुप्रवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवडज्झंतमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे) उस यक्षा-
यतनमें कृष्णागुरु, प्रवरकुन्दुरुक्क-श्रेष्ठगन्धद्रव्यविशेष, तुरुक्क-सेल्हारस-लोवान और
धूप ये सब सुगंधित पदार्थ अग्नि में समय २ पर प्रक्षिप्त हुआ करते थे, इसलिये
वहां अद्भुत विशेष गंध भरी रहती थी, इसलिये वह सदा अतिशय

मल्लदामकलावे) यक्षायतनमां भीतोनी उपर तथा नीचे सर्वत्र विस्तीर्ण
तेमज्ज गोलाकार लटकावेली पुष्पोनी भाणाओना कलापनी सजावट (शोभा)
थई रही હતી (पंचवर्णसरससुरभिमुक्कपुष्पपुंजोवयारकलिए) દરેક સ્થાન
પર અહીં પંચ વર્ણનાં સરસ તેમજ સુગંધિત પુષ્પોના ઢગલાથી અનેક પ્રકાર-
ની રચના બનાવવામાં આવી હતી. (કાલાગુરુપ્રવરકુંદુરુક્કતુરુક્કધૂવડજ્ઞંતમઘમઘંત-
ગંધુદ્ધુયાભિરામે) તે યક્ષાયતનમાં કૃષ્ણાગુરુ, પ્રવરકુંદુરુક્ક-શ્રેષ્ઠ ગંધદ્રવ્ય વિશેષ,
તુરુક્ક-સેલ્હારસ-લોવાન અને ધૂપ, એ બધા સુગંધિત પદાર્થ અગ્નિમાં વારંવાર
નાખવામાં આવતા હતા, તેથી ત્યાં બહુજ સુગંધભરી રહેતી હતી. આથી તે
સદા મઘમઘતું-બધી તરફથી સુગંધીથી સુશોભિત બની રહેતું

गंधगंधिए गंधवट्टिभूए णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्टिय-वेलंबग-पवग-
कहग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंबवीणिय-भुयग-
मागह-परिगए बहुजणजाणवयस्स विस्सुयकित्तिए बहुजणस्स

गंधिए ' सुगन्धवरगन्धगन्धितम्—नानाविधपुष्पसम्पादितगन्धद्रव्यैः सुवासितम् ।
' गंधवट्टिभूए ' गन्धवर्तिभूतं=गन्धद्रव्यगुटिकासदृशम्—सौरभ्यातिशयात् गन्धद्रव्यनिर्मितवद्
भासमानम् । ' णट्टगट्टगे '—त्यादि, अत्रैव प्रथमसूत्रे व्याख्यातम्, नवरम्—' भुयगमागह-
परिगए ' भोजकमागधपरिगतम्, भोजकाः—सेवकाः मागधाःस्तुतिपाठकाः,
तैः परिगतं व्याप्तम् । ' बहुजणजाणवयस्स विस्सुयकित्तिए ' बहुजनजानपदस्य

सुगंधि से सुशोभित बना रहता था । (सुगंधवरगंधिए) अनेक प्रकार के
सुगंधित पुष्पों की गंध से भी वह सदा सुवासित होता रहता था (गंधवट्टिभूए)
इसलिये यह गंधकी बत्ती जैसा हो रहा था । ऐसा ज्ञात
होता था कि यह सुगंधित द्रव्यों के चूर्ण से ही मानो विरचित किया गया है ।
(णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्टिय-वेलंबय-इत्यादि) नृत्य करने वालों से,
नाटक करने वालों से, डोरी पर नाचने वालों से, मुष्टियुद्ध करने वालों
से, बंदर की तरह कूदने वालों से, भांड के जैसी नकल करने वालों से, तथा
कहानी कहने वालों से, रास रचने वालों से, शुभा-शुभ प्रकट करने वालों
से, वांसके अग्रभाग पर खेलने वालों से, चित्रपट दिखला कर आजीविका करने
वालों से, वीणा बजाने वालों से, तुंबी बजाने वालों से, भोजकों-सेवकों-से,
और मागधों-स्तुतिपाठकोंसे वह मंदिर सदा युक्त बना रहता था । (बहुजणजाण-

इतुं. (सुगंधवरगंधिए) अनेक प्रकारનાં सुगंधित पुष्पોની ગંધથી
પણ તે હમેશા સુવાસિત થઈ રહેતું હતું. (ગંધવટ્ટિભૂએ) એથી તે ગંધના વાતી જેવું
થઈ રહ્યું હતું. એમજ લાગતું હતું કે એ સુગંધિત દ્રવ્યોના ચૂર્ણથી જ બાણે
બનાવ્યું છે. (ણડ-ણટ્ટગ-જલ્લ-મલ્લ-મુટ્ટિય-વેલંબય-ઇત્યાદિ) નૃત્ય કરનારાઓથી,
નાટ્યકારોથી, દોરા ઉપર નાચવાવાળાઓથી, મુષ્ટિયુદ્ધ કરનારાઓથી,
વાંદરાની પેઠે કૂદવાવાળાઓથી, ભાંડ (લવાયા) જેવી નકલ કરવાવાળાઓથી,
તથા વાતી કહેવાવાળાઓથી, રાસ કરનારાઓથી, શુભાશુભ પ્રકટ કરનારાઓથી,
વાંસની ટોચ પર રમનારાઓથી, ચિત્રપટ દેખાડીને આજીવિકા કરવાવાળાઓથી,
વીણા વગાડનારાઓથી, તુંબુર વગાડનારાઓથી, ભોજકો-સેવકોથી અને
માગધો-સ્તુતિપાઠકોથી તે મંદિર સદા ભરચક રહેતું હતું. (बहुजणजाण-

आहुस्स आहुणिज्जे पाहुणिज्जे अच्चणिज्जे वंदणिज्जे नमंसणिज्जे
पूयणिज्जे सक्कारणिज्जे सम्माणणिज्जे कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं
विणएणं पज्जुवासणिज्जे दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सण्णिहियपाडिहेरे

विश्रुतकीर्तिकम्—बहुजनस्य=पौरस्य, जानपदस्य=जनपदजातस्य अर्थात्—नागरिकाणां
देशवासिनां च विश्रुतकीर्तिकम्—प्रसिद्धियुक्तम्, 'बहुजणस्स' बहुजनस्स, 'आहुस्स'
आहोतुः—दातुः—दानशीलस्य बहुजनस्य, 'आहुणिज्जे' आहवनीयम् आहूयते—दीयते
ऽस्मै इति आहवनीयं—सम्प्रदानरूपम्, 'पाहुणिज्जे' प्राहवणीयम् — प्रकृष्टतया
सम्प्रदानरूपम्, 'अच्चणिज्जे' अर्चनीयम्—आदरपात्रम्, 'वंदणिज्जे' वन्दनीयं—स्तुतियोग्यम्,
'नमंसणिज्जे' नमस्यनीयम्, 'पूयणिज्जे' पूजनीयं—प्रशंसनीयम्, 'सक्कारणिज्जे'
सत्करणीयम्, 'सम्माणणिज्जे' सम्माननीयम्, 'कल्लाणं' कल्याणम् 'मंगलं'
मङ्गलम् 'देवयं' दैवतम्, 'चेइयं' चैत्यम्, 'विणएणं' विनयेन, 'पज्जुवासणिज्जे'
पर्युपासनीयम्, 'दिव्वे' दिव्यम्, 'सच्चे' सत्यं, 'सच्चोवाए' सत्यावपातं—सफलसेवम्,

वयस्स विस्सुयकित्तिए) इस यक्षायतन को प्रसिद्धि अनेक पुरवासियों एवं अनेक
नगरनिवासियों तक थी । (बहुजणस्स आहुस्स आहुणिज्जे) बहुत लोग इस
में दान दिया करते थे । (वंदणिज्जे नमंसणिज्जे अच्चणिज्जे पूयणिज्जे सक्कार-
णिज्जे सम्माणणिज्जे) यहां के लोग इस यक्षको वन्दनीय, नमस्करणीय, अर्चनीय,
पूजनीय, सत्करणीय, और सम्माननीय मानते थे । (कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं
विणएणं पज्जुवासणिज्जे दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सण्णिहियपाडिहेरे जागसहस्स-
भागपडिच्छए०) तथा कल्याण, मंगल, दैवत मानते थे, और चैत्य अर्थात्
लोगों की अभिलाषा को जानने वाले मानते थे, विनय से उपासना करने के
योग्य मानते थे, दिव्य और सत्य मानते थे, सफल सेवा मानते थे, जगह २ इसके

वयस्स विस्सुयकित्तिए) आ यक्षायतननी प्रसिद्धि अनेक पुरवासीओ तेभज्ज
अनेक नगरवासीओ सुधी पडोंथी डती. (बहुजणस्स आहुस्स आहुणिज्जे)
धण्णो दोडो ओमां दान आभ्या करता डता. (वंदणिज्जे नमंसणिज्जे अच्चणिज्जे
पूयणिज्जे सक्कारणिज्जे सम्माणणिज्जे) अहीना दोडो आ यक्षने वंदनीय,
नमस्करणीय, अर्चनीय, पूजनीय, सत्करणीय, अने सम्माननीय मानता डता.
(कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासणिज्जे दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सण्णिहिय-
पाडिहेरे जागसहस्सभागपडिच्छए) तथा कल्याण, मंगल, दैवत मानता डता
अने चैत्य अर्थात् दोडोनी अलिखाषाने जणुवावाजा मानता डता, विनयथी
उपासना करवा योग्य मानता डता, दिव्य अने सत्य मानता डता, सक्षल

जागसहस्सभागपडिच्छए बहुजणो अच्चेइ आगम्म पुण्ण-
भदचेइयं पुण्णभदचेइयं ॥ सू. २ ॥

मूलम्—से णं पुण्णभदं चेइए एक्केणं महया वणसंडेणं
सव्वओ समंता परिकिखत्ते । से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे

‘ सण्णिहियपाडिहेरे ’ सन्निहितप्रातिहार्यम्—सन्निहितं—प्रातिहार्यम्—उपहाररूपं यस्य तत् ,
‘ जागसहस्सभागपडिच्छए ’ यागसहस्रभागप्रतीक्षकम् यागो — देवतोद्देशेन
परोपकाराय दानकरणम् , तेषां सहस्राणि, तेषां भागाः—स्वयमादेयाः, तान् प्रतीक्षते इति याग-
सहस्रभागप्रतीक्षकम्, ‘ बहुजणो ’ बहुजनः, ‘ अच्चेइ ’ अर्चति—सत्कुरुते, ‘ आगम्म’
आगत्य, ‘ पुण्णभदं चेइयं२ ’ पूर्णभद्रं चैत्यम्२—पूर्णभद्रचैत्यमागत्य पूर्णभद्रचैत्य-
मर्चति—सत्कुरुते ॥ सू० २ ॥

टीका—पुनः कीदृशं पूर्णभद्रं चैत्यम् ? इत्याह ‘ से णं पुण्णभदे
चेइए ’ तत्खलु पूर्णभद्रं चैत्यम् । ‘ एक्केणं महया वणसंडेणं ’ एकेन—परस्परसंमि-
लिततया एकीभूतेन, महता—विशालेन, वनषण्डेन ‘ सव्वओ समंता संपरिकिखत्ते ’
सर्वतः समन्तात् सम्परिक्षिप्तम् , सर्वत्र—सर्वासु दिक्षु, समन्तात्—सर्वासु विदिक्षु, सम्परिक्षिप्तं-
वेष्टितम् । स वनषण्डः कीदृशः ? इत्याह (से णं) इत्यादि । ‘ से णं वणसंडे ’ स वनषण्डः खलु
पास भेंटरूप प्रातिहार्य रत्ने हुए नजर आते थे । इनके नाम से हजारों आदमी
दान देते थे, और बहुत से लोग आकर सांसारिक अभिलाषा की पूर्ति के लिये
इसकी अर्चना करते थे ॥ सू० २ ॥

‘ से णं पुण्णभदे चेइए० ’ इत्यादि—

(से णं पुण्णभदे चेइए) वह पूर्णभद्र चैत्य (एक्केणं महया वणसंडेणं) एक
विस्तृत वनखंड—वनषण्ड से (सव्वओ समंता परिकिखत्ते) समस्त दिशाओं एवं विदि-
शाओं में घिरा हुआ था । (से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे नीले नीलोभासे

सेवा मानता होता, ठेकठेकाणु तेमनी पासे उपहाररूप प्रसाद राखेला नजर
पडतो होता. तेमना नामथी दुब्बरें माणुसो दान देता होता अने धणु
दोडो आवीने सांसारिक अलिवाषानी पूर्णता माटे तेनी पूज्ज अर्था करता
होता. (सू. २)

‘ से णं पुण्णभदे चेइए ’ इत्यादि,

(से णं पुण्णभदे चेइए) ते पूर्णभद्र चैत्य (एक्केणं महया वणसंडेणं) ओंके
विशाल वनखंड—वनषण्ठी (सव्वओ समंता परिकिखत्ते) समस्त दिशाओं तेमज
विदिशाओंमां घेरायेला होता. (से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे नीले

नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धो-
भासे तिब्बे तिब्बोभासे, किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए
हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिब्बे

कृष्णः-कृष्णवर्णः, 'किण्होभासे' कृष्णावभासः-कृष्ण इवाऽवभासते, नतु वस्तुतःकृष्ण
एव, 'नीले नीलोभासे' नीलो नीलावभासः-मयूरकण्ठवत्प्रतिभासमानः, 'हरिए हरि-
ओभासे' हरितो हरिताऽवभासः-हरितवर्णपर्णानां प्राचुर्यात् शुकपक्षवदवभासमानः, इदानीं
स्पर्शपिक्षया वर्ण्यते-'सीए सीओभासे' शीतः शीताऽवभासः-लतापुञ्जव्याप्तत्वात् शीत-
स्पर्शवान् इत्यर्थः, 'णिद्धे णिद्धोभासे' स्निग्धः स्निग्धावभासः-नवनीतमिव चिक्कणः-चिक्कण-
वदवभासमानः नतु रूक्षः । 'तिब्बे तिब्बोभासे' तीव्रस्तीव्रावभासः तीव्रः-प्रभाप्रकर्षवान्
तीव्रावभासः-प्रकृष्टप्रभाऽवभासमानः, 'किण्हे किण्हच्छाए' कृष्णः कृष्णच्छायः-एते द्वे अपि
विशेषणे गाढकृष्णतां ब्रूतः, तेन करालकालिमावलीवलीढो वनखण्ड इत्युक्तो भवति ।

हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धोभासे तिब्बे तिब्बोभासे किण्हे
किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए णिद्धे
णिद्धच्छाए तिब्बे तिब्बच्छाए) यह वनखंड अतिशय सघन
होने की वजह से कृष्ण तथा कृष्ण आभावाला था, देखने वालों के यह नील एवं
नीलप्रभा से विशिष्ट ज्ञात होता था । यह हरित तथा हरित आभावाला था, इस
कारण से इस वनखंड की कांति हरी प्रतीत होती थी । रंग भी हरा २ मालूम देता
था । जहां २ वृक्षों की अतिशय सघन पंक्ति थी वहां २ की छाया अत्यंत शीतल थी ।
सदा वहां तरावट रहने से प्रभामें भी शीतलता रहा करती थी । जमीन कहीं २

नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धोभासे तिब्बे
तिब्बोभासे, किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए
सीयच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिब्बे तिब्बच्छाए) आ वनखंड अतिशय घाटे
होवाना कारण्थी काणे तथा काणाशनी आभावाणे । उतो. जेनाराओ भाटे
ते लीढो तेमज लीढी प्रभाथी विशिष्ट जणुतो । उतो. ते हरित तथा हरित
आभावाणे । उतो. ते कारण्थी आ वनखंडनी कांति हरी लागती । उती. रंग
पणु हराहरा (लीढोछम) देखातो । उतो. ज्यां ज्यां वृक्षानी भहु घाटी हार
। उती त्यांनी छाया भहु ज ठंडी । उती. सदा त्यां ठंडक रहेवाथी प्रभामां
(उज्जसमां) पणु ठंडक रह्या करती । उती. जमीन कयांक कयांक अटली चिकण्णी

તિવ્વચ્છાણ ઘણકડિયકડિચ્છાણ રમ્મે મહામેહણિકુરંબ-
ભૂણ ॥ સૂ. ૩ ॥

‘ઘણકડિયકડિચ્છાણ’ ‘ઘનકટિતકડિચ્છાયઃ’—પરસ્પરં શાખાનામનુપ્રવેશાદ્ ઘનઃ—સાન્દ્રઃ,
કટિતઃ—કટાચ્છાદિત इव નિબિડઃ—બહુલનિરન્તરચ્છાય इत्यર્થઃ । રમ્યઃ—રમણીયગુણયુક્તઃ ।
‘મહામેહણિકુરંબભૂણ’ મહામેઘનિકુરમ્બભૂતઃ—મહાન્તઃ—વિશાલાઃ, મેઘાઃ—જલધરાઃ,
તેષાં નિકુરમ્બમ્—મહામેઘનિકુરમ્બમ્ સજલજલદવૃન્દમ્ તથાભૂતઃ—તત્સદૃશઃ—મહામેઘનિકુર-
મ્બભૂતઃ—મહાજલદવૃન્દોપમઃ સશ્રીકઃ શ્યામતમો વનષ્ઠંડ ઇતિ યાવત્ ॥ સૂ. ૩ ॥

પર ઇતની ચિકની થી કિ લોગોં કો ઇસકી પ્રમા મેં મી ચિકનાઈ લક્ષિત હોતી થી ।
વર્ણાદિક સે યહ તીવ્ર એવં તીવ્ર છાયાવાલા થા । (ઘણકડિયકડિચ્છાણ
રમ્મે મહામેહણિકુરંબભૂણ) યહાં જિતને મી વૃક્ષ થે ઊન સવકી શાખાઈ એક
દૂસરે વૃક્ષોં કી શાખાઓં સે પરસ્પર મેં મિલ ગઈ થી, ઇસસે યહાં છાયા કી અત્યંત
સઘનતા રહા કરતી થી । યહ વન બડા હી સુહાવના લગતા થા । એસા માલૂમ પડતા
થા કિ માનો મહામેઘોં કા યહ એક વિશાલ સમુદાય હી હૈ । અથવા (કિણ્હે)
ઇત્યાદિ પદોં કી વ્યાખ્યા ઇસ પ્રકાર મી હો સકતી હૈ—અત્યંત સઘન હોને સે ઇસ
વનખંડ મેં સૂર્ય કી કિરણોં કા પ્રવેશ તક મી નહીં હો સકતા થા ઇસલિયે ઇસમેં ચારોં
ઓર અંધકાર છાયા રહતા થા, અતઃ યહ કાલા જૈસા પ્રતીત હોતા થા । જૈસે મયૂર કા
કંઠ નીલા હોતા હૈ યહ મી ઊસી તરહ નીલા થા । ઇસમેં હોરેર પત્તોં કી પ્રચુરતા
થી ઇસલિયે ઇસ વનકી કાંતિ મી તોતે કી પાંચોં—જૈસી હરી જ્ઞાત હોતી થી । વન કા

હતી કે દોડોને જેની પ્રભામાં પણ ચિકાશ લાગતી હતી. વર્ણાદિક(રૂપરંગ)થી
એ તીવ્ર તેમજ તીવ્રછાયાવાળો હતો. (ઘણકડિયકડિચ્છાણ રમ્મે મહા-
મેહણિકુરંબભૂણ) અહીં જેટલાં વૃક્ષો હતાં તે બધાંયની શાખાઓ
એક બીજા વૃક્ષોની શાખાઓ સાથે પરસ્પર મળી ગઈ હતી. આથી અહીં
છાયા બહુ જ ઘાટી થઈ રહી હતી. આ વન ઘણું જ શોભાયમાન લાગતું હતું.
એમ જણાતું હતું કે બહુ મહામેઘોનો એ એક મોટો સમુદાય જ છે.
અથવા (કિણ્હે) ઇત્યાદિ પદોની વ્યાખ્યા એમ પણ થઈ શકે છે કે અત્યંત
ઘાટું હોવાથી આ વનખંડમાં સૂર્યનાં કિરણોનો પ્રવેશ માત્ર પણ થઈ શકતો
નહિ. એથી તેમાં ચારે તરફ અંધકાર છવાઈ રહેતો હતો. તેથી તે કાળા
જેવું પ્રતીત થતું હતું. જેમ મોરનો કંઠ લીલો હોય છે તેમ આ પણ લીલું
હતું. એમાં લીલાંછમ પાંદડાં બહુ જ હતાં, તેથી આ વનની કાંતિ પણ
પોપટની પાંખો જેવી લીલી જણાતી હતી. વનનો સ્પર્શ ઠંડો એ કારણથી

**मूलम्—ते णं पायवा मूलमंतो कंदमंतो
खंधमंतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुष्पमंतो**

टीकाः—‘ते णं पायवा’ इत्यादि । ‘ते’ तत्सम्बन्धिनः—तच्छब्दस्य लक्षणया तत्सम्बन्धिन इत्यर्थः, तच्छब्देन बुद्धिस्थविषयपरामर्शात् वनखण्डस्य परामर्शः । वनखण्डसम्बन्धिन इत्यर्थः, पादपा वृक्षाः, कीटशास्ते वृक्षाः? इत्यत्राऽऽह—
‘मूलमंतो’ मूलवन्तः—मूलानि सन्ति एषाम् इति मूलवन्तः मूलसम्बद्धा वृक्षा इत्यर्थः ।
‘कंदमंतो’ कन्दवन्तः—मूलानामुपरि ग्रन्थिरूपाः कन्दाः, ते सन्ति येषां ते तथा ।
‘खंधमंतो’ स्कन्धवन्तः—शाखाविभागस्थानं स्कन्धः, ते स्कन्धाः सन्त्येषां ते स्कन्ध-
वन्तः । ‘तयामंतो’ त्वग्वन्तः—त्वचो—बल्कलानि सन्त्येषामिति ते तथा । ‘सालमंतो’
शालावन्तः—शालाः शाखाः सन्त्येषामिति । ‘पवालमंतो’ प्रवालवन्तः—प्रवाला—बाल-

स्पर्श शीत इसलिये था कि यहां लताओं का कुंज अधिक था । मक्खन के समान यह स्पर्श में चिकन था । प्रभा के प्रकर्ष से इसकी प्रभा भी तीव्र थी । कृष्ण एवं कृष्णावभास इन दो विशेषणों से सूत्रकार का यह अभिप्राय है कि यहां पर जो कृष्णता थी वह गाढ थी । ॥ सू० ३ ॥

‘ते णं पायवा०’ इत्यादि—

(ते णं पायवा मूलमंतो) उस वनखंड के ये वृक्ष जमीन के भीतर गहरी फैली हुई बड़ी २ जड़ों वाले थे । (कंदमंतो खंधमतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुष्पमंतो फलमंतो वीर्यमंतो) कंद—मूलों के ऊपर गांठ—वाले थे । स्कंध—शाखाओं के रहने के स्थानवाले थे । त्वचा—छाल युक्त थे । शालाओं—शाखाओं से विशिष्ट थे । प्रवाल—कोपल सहित थे । पत्रों से भरे हुए थे, पुष्पों से युक्त थे ।

હતો કે અહીં લતાઓના કુંજ વધારે હતા. માખણના જેવો તેનો સ્પર્શ ચિકણો હતો. ઉબસ વધારે હોવાથી તેનો ઉબસ પણ તીવ્ર હતો. કૃષ્ણ તેમજ કૃષ્ણાવભાસ એ બે વિશેષણોથી સૂત્રકારનો એ અભિપ્રાય છે કે અહીં જે કાળાશ હતી તે ઘેરી હતી. (સૂ. ૩)

‘ते णं पायवा.’ इत्यादि,

(ते णं पायवा मूलमंतो) એ વનખંડમાં આ વૃક્ષો જમીનની અંદર ઉંડાં ફેલાય ગયેલાં મોટાં મોટાં મૂળવાળાં હતાં. (કંદમંતો खंधमतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुष्पमंतो फलमंतो वीर्यमंतो) कंद—मूल ઉપર ગાંઠ—વાળાં હતાં, સ્કંધ—શાખાઓને રહેવાનાં સ્થાનરૂપ હતાં. ત્વચા—છાલયુક્ત હતા, શાલાઓ—શાખાઓથી વિશિષ્ટ હતા, પ્રવાલ—કુપળોવાળા હતા, પત્ર—પાંદડાંથી ભરેલાં

फलमंतो बीयमंतो अणुपुव्व-सुजाय-रुडल-वट्टभाव-परिणया
एकखंधा अणेगसाला अणेग-साह-प्पसाह-विडिमा अणेग-नर-वाम-
सुप्पसारिय-अग्गेज्झ-घण-विउल-वट्ट-खंधा अच्छिदपत्ता अविरलप-

पल्लवानि सन्त्येषामिति । एवं 'पत्तमंतो' पत्रवन्तः, 'पुष्पमंतो' पुष्पवन्तः ।
'फलमंतो' फलवन्तः । 'बीयमंतो' बीजवन्तः—बीजान्यङ्कुरजनकानि सन्त्येषामिति ते तथा
'अणुपुव्व-सुजाय-रुडल-वट्टभाव-परिणया' अनुपूर्व-सुजात-रुचिर-वृत्तभावपरिणताः—अनुपूर्वं
यथाक्रमं सुजाताः रुचिराः सुन्दराश्चामी वृत्तभावैर्वर्तुलभावैर्गोलाकारैः परिणताश्च । 'एक-
खंधा' एकस्कन्धाः—एकस्कन्धवन्तः, 'अणेगसाला' अनेकशालाः, 'अणेग-साह-प्पसाह-
विडिमा' अनेक-शाखा-प्रशाखा-विडिमाः—अनेकाःशाखाः—स्कन्धसञ्जाताः प्रशाखाः—शाखा-
प्रसूताः, विडिमाः—ऊर्ध्वविनिर्गताः शाखाश्च येषु ते तथा, अनेकशाखाप्रशाखायुक्त-
वृक्षा इत्यर्थः । 'अणेग-नर-वाम-सुप्पसारिय-अग्गेज्झ-घण-विउल-वट्ट-खंधा' अनेक-
नर-वाम-सुप्रसारिताऽ-ग्राह्य-घन - विपुल - वृत्त-स्कन्धाः—अनेकैः नरव्यामैः—नराणां=
व्यामैः = तिर्यग्बाहुद्वयप्रसारणप्रमाणैः सुप्रसारितैः अग्राह्यः = अप्रमेयः
घनः—सान्द्रः, विपुलो—विशालो, वृत्तो—वर्तुलः, स्कन्धो येषां ते, अतिस्थूल-

फलों से लदे हुए थे । बीजों से भरे हुए थे । (अणुपुव्व-सुजाय-रुडल-वट्टभाव-
परिणया) ये सब के सब वृक्ष अनुक्रम से उत्पन्न हुए थे और छत्ते के जैसे रम्य
गोल-आकारवाले थे । (एकखंधा अणेगसाला अणेग-साह-प्पसाह-विडिमा) इनके
स्कन्ध एक थे और अनेक शाखा प्रशाखा एवं विडिमाओं—ऊपरकी ओर गयी हुई शाखाओं
से युक्त थे । (अणेग-नरवाम-सुप्पसारिय-अग्गेज्झ-घण-विउल-वट्ट-खंधा) अनेक
पुरुषों द्वारा अच्छी तरह पसारे गये हाथों से भी इनका सान्द्र, विपुल एवं
वर्तुलाकार स्कंधका ग्रहण नहीं हो सकता था । (अच्छिदपत्ता) इनके पत्र भी इतने

હતાં, ફૂલોવાળાં હતાં, ફૂલોથી ભરેલાં હતાં, બીજોથી ભરપૂર હતાં. (અણુપુવ્વ-
સુજાય-રુડલ-વટ્ટભાવ-પરિણયા) આ તમામે-તમામ વૃક્ષો અનુક્રમવાર ઉત્પન્ન
થયેલાં હતાં અને છત્રી જેવાં રમ્ય ગોળ આકારવાળાં હતાં. (એકચંધા
અણેગસાલા અણેગ-સાહ-પ્પસાહ-વિડિમા) એમનું થડ એક હતું અને અનેક શાખા
પ્રશાખા તેમજ વિડિમાઓ—ઉપરની તરફ ગયેલી શાખાઓથી યુક્ત હતાં.
(અણેગ-નર-વામ-સુપ્પસારિય-અગ્ગેજ્ઝ-ઘણ-વિઉલ-વટ્ટ-ચંધા) અનેક પુરૂષો-
દ્વારા ખૂબ પહોળા કરેલા હાથોથી પણ તેમનાં સાન્દ્ર વિશાળ તેમજ વર્તુળા-
કાર થડને બાથ ભીડી શકતા નહોતા. (અચ્છિદ્ધપત્તા) તેમનાં પાંદડાં પણ

त्ता अवाईणपत्ता अणईयपत्ता निद्धूय-जरढ-पंडु-पत्ता णव-हरिय-
भिसंत-पत्तभारं-धयार-गंभीर - दरिसणिज्जा उवणिग्गय - णवतरुग-

सधनविशालतया प्रसारितपाणिभिः नरैर्दुर्ग्रहवर्तुलस्कन्धा इति यावत् ।
'अच्छिद्रपत्ता' अच्छिद्रपत्राः—अच्छिद्राणि—सूर्यकिरणैरपि दुष्प्रवेशानि, पत्राणि येषां ते,
परस्परमिलितदलाः । 'अविरलपत्ता' अविरलपत्राः—बहुलपत्राः । 'अवाईणपत्ता'
अवाचीनपत्राः—अवाचीनानि—अधोमुखानि, पत्राणि येषां ते तथा । 'अणईयपत्ता'
अनीतिकपत्राः—ईतयःषट्—अतिवृष्टिः, अनावृष्टिः, मूषकः, शलभः, खगः, दिग्विजयादौ
प्रस्थितो भूत्वाऽतिनिकटसमागतो नृपश्चेति; अविद्यमाना ईतयो येषां तानि—अनीतिकानि
निरुपद्रवाणि पत्राणि येषां ते तथा । 'निद्धूय-जरढ-पंडु-पत्ता' निर्दूत-जरठ-पाण्डु-पत्राः—
निर्दूतानि—क्षितानि, जरठानि—जोर्णानि, पाण्डूनि—परिणतानि—पीतानि, पत्राणि येषां ते तथा ।
'णव-हरिय-भिसंत-पत्तभारं-धयार-गंभीर-दरिसणिज्जा' नव-हरित-भासमान-पत्रभाराऽ-

सधन थे कि जिनके बीच में जरा भी अन्तराल नहीं था । (अविरलपत्ता) इसो-
लिये इनके पत्र दूर २ नहीं थे, बिल्कुल पास २ में चिपके हुए जैसे थे । (अवाईण-
पत्ता) जितने भी पत्र इन वृक्षों में लगे हुए थे वे सब अधोमुख थे । (अणईयपत्ता)
ये पत्र अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक, शलभ, पक्षी और राजा इन छह ईतियों—विपत्तियों से
रहित थे । (निद्धूय-जरढ-पंडु-पत्ता णव-हरिय-भिसंत-पत्तभारं-धयार-गंभीर-दरिसणिज्जा)
इन वृक्षों से पुराने पत्ते, पीले पत्ते एवं सड़े हुए पत्ते गिर गये थे, उनके स्थान पर
नवीन हरे चमकीले पत्र आगये थे उससे वहां अन्धकार जैसा सदा व्याप्त हो
रहा था । अतः इस हालत में 'ये वृक्ष ऐसे हैं' इस प्रकार लोकों के लिये
इनका स्पष्टरीति से विवेचन करना अशक्य था । (उवणिग्गय-णव-तरुण-पत्त-पल्लव-को-

अेटलां घाटां डुतां डे जेनी वयमां जरा पणु अंतर नडोटुं. (अविरलपत्ता)
आम तेमनां पांढडां छे छे नडोटतां, जिलकुल पासे पासेज येण्टेलां जेवां
डुतां (अवाईणपत्ता) ये वृक्षेमां जेटलां पांढडां लागेलां डुतां ते अधां अधो-
मुख (नीचे मुखवाणां) डुतां. (अणईयपत्ता) आ पांढडां अतिवृष्टि, अना-
वृष्टि, उंदर, शलभ (तीड), पक्षी अने राजा ये छ धतिओ—विपत्तिओथी
रहित डुतां. (निद्धूय-जरढ-पंडु-पत्ता णव-हरिय-भिसंत-पत्तभारं-धयार-गंभीर-दरिसणिज्जा)
ये वृक्षे उपरथी जुनां पान, पीणां पान, तेमज सडी गयेलां पान पडी गयां
डुतां अने तेमने ठेकाणे नवां लीलां यमकद्वार पान आवी गयां डुतां तेथी
त्यां अंधकार जेवुं सदा व्याप्त थछ रह्युं डुतुं. आ प्रमाणे आवी स्थितिमां
' ये वृक्षे जेवांज छे ' ये प्रकारे स्पष्टपणे विवेचन करवुं दोडोने माटे

**पत्त-पल्लव-कोमल-उज्जल-चलंत-किसलय-सुकुमाल-पवाल-सोहिय-
वरंकुर-गसिहरा णिच्चं कुसुमिया णिच्चं मऊरिया णिच्चं पल्लविया**

न्धकार-गम्भीर-दर्शनीयाः—नवेन हरितेन भासमानो—दीप्यमानो यः पत्रभारः—पत्रसमूहः,
तेन अन्धकाराः—सान्धकाराः, अतएव-गम्भीरदर्शनीया-गम्भीरम्-‘इदमीदृग्’-इति विवेक्तुमशक्यं
यथा स्यात्तथा दृश्यन्ते इति गम्भीरदर्शनीयाः । ‘उवणिग्गय-णव-तरुण-पत्त-पल्लव-कोमल-
उज्जल-चलंत-किसलय-सुकुमाल-पवाल-सोहिय-वरंकुर-गसिहरा ’ उपनिर्गत-नवतरुण-
पत्र-पल्लव-कोमलो-ज्ज्वल-चलत्किसलय-सुकुमार - प्रवाल - शोभित - वराऽङ्कुराऽग्रशिखराः—
तत्र—उपनिर्गतानि—सद्यःप्रकटितानि, नवतरुणानि—नवीनागततरुणतासम्पन्नानि पत्रपल्लवानि—
पत्ररूपाणि गुच्छरूपाणि तैः, तथा कोमलो-ज्ज्वलैः—मृदुनिर्मलैः, चलद्भिः, किसलयैः—
सद्योजातैः पत्रविशेषैः सुकुमारप्रवालैः - कोमलपल्लवैः, शोभितवराऽङ्कुराणि=सुन्दराङ्कुर-
युक्तानि अग्रशिखराणि—उपरितनभागा येषां ते तथा । अत्र विशेषणे अङ्कुरप्रवालपल्लव-
किसलयपत्राणि स्वल्पवहुवहुतरादिकालकृतावस्थाभेदद्विजानाति भावः ।

‘ णिच्चं कुसुमिया ’ नित्यं कुसुमिताः—सदा सर्वर्तुसंजातकुसुमोपेताः—न तु ऋतुभेद-

मल-उज्जल-चलंत-किसलय-सुकुमाल-पवाल-सोहिय-वरंकुर-गसिहरा) इनके जो पत्र
एवं पल्लव थे वे नवीन निकलने की वजह से नवीनतरुणता—संपन्न थे, कुम्हलाये या
मुझाये हुए नहीं थे । इन पर जो किसलय—कोपले थीं वे कोमल थीं उज्जल थीं
तथा मृदु पवन के झोके से हिलती रहती थीं । इनमें जो प्रवाल थे वे बहुत ही
कोमल थे । इस प्रकार पत्रों से, पल्लवों से, कोपलों से और प्रवालों से इनके उत्तम
अंकुर शोभित हो रहे थे, इन अंकुरों से इन वृक्षों का अग्रभाग लहलहा रहा था ।
[णिच्चं कुसुमिया] ये वृक्ष सदा सर्व ऋतुओं के पुष्पों से फूले रहते थे ।

अशक्यं इत्तुं. (उवणिग्गय-णव-तरुण-पत्त-पल्लव-कोमल-उज्जल-चलंत-किसलय-सुकुमाल-
पवाल-सोहिय-वरंकुर-गसिहरा) येनां जे पान तेमज पल्लव इतां ते नवीन
उगवानां डारणुथी नवीन तडणुता—संपन्न इतां. डरमाध गयेदां डे थीमडाध
गयेदां नडोतां. तेना पर जे डिसलय-डुंपणो इतां ते डोमण इतां, उज्जवण
इतां तथा मंद पवननी लडेरीथी इलतां इतां. तेमां जे प्रवाल इतां
ते ञ्हुं डोमण इतां. आ प्रडारे पत्रोथी, पल्लवोथी, डुंपणोथी अने प्रवा-
लोथी तेमनां उत्तम अंकुरे शोभी रहेतां इतां. जे अंकुरोथी जे वृक्षानो
आगणनो भाग सुशोभित इतो. (णिच्चं कुसुमिया) जे वृक्षो डुमेशां सर्व
ऋतुओनां पुष्पोथी ञ्जिरी रहेदां रहेतां इतां (णिच्चं मऊरिया) सर्वदा जे

णिच्चं थवइया णिच्चं गुलइया णिच्चं गोच्छिया णिच्चं जमलिया
णिच्चं जुवलिया णिच्चं विणमिया णिच्चं पणमिया णिच्चं कुसुमिय-

प्रतिबन्धितकुसुमाः । ‘ णिच्चं मऊरिया ’ नित्यं मयूरिताः—मयूराः सन्त्येषामिति मयूरिताः
नित्यं मयूरयुक्ता इत्यर्थः । ‘ णिच्चं पल्लविया ’ नित्यं पल्लविताः—सर्वदा पल्लवसम्पन्नाः ।
‘ णिच्चं थवइया ’ नित्यं स्तवकिताः—नित्यं स्तवकवन्तः, गुच्छवन्त इत्यर्थः । ‘ णिच्चं
गुलइया ’ नित्यं गुल्मिताः जातियूथिकानवमल्लिकादिलतावन्तः, ‘ णिच्चं गोच्छिया ’
नित्यं गुच्छिताः सदापुष्पगुच्छयुक्ताः । ‘ णिच्चं जमलिया ’ नित्यं यमलिताः समपंक्ति-
तया स्थिताः—अथवा यमलाः युग्मतया जाताः, ते सन्ति येषां ते यमलिताः । ‘ णिच्चं
जुवलिया ’ नित्यं युगलिता—युगलतया स्थिताः । ‘ णिच्चं विणमिया ’ नित्यं विनमिताः—
फलपुष्पादिभारेण नताः । ‘ णिच्चं पणमिया ’ नित्यं प्रणमिताः—केचित् प्रकर्षेण नम्रीभूताः ।

[णिच्चं मऊरिया] सर्वदा इन वृक्षों पर मोर रहते थे । (णिच्चं पल्लविया) ये वृक्ष
नित्यपल्लवित रहते थे, अकाल में पतझड़ इनमें नहीं होता था । (णिच्चं थवइया)
गुच्छों से ये हमेशा अन्वित बने हुए रहते थे [णिच्चं गुलइया] इनपर सदा नवमल्लिका
आदि लताएं लिपटी रहती थीं । ‘ णिच्चं गोच्छिया ’ ये हमेशा फूलों और फलों के
गुच्छों से युक्त रहते थे । ‘ णिच्चं जमलिया णिच्चं जुवलिया ’ ये जितने भी वृक्ष
यहां पर थे वे सब जोड़े सहित एक सी कतार में आजू-बाजू खड़े हुए थे ।
‘ णिच्चं विणमिया ’ ऐसा कोई सा भी समय नहीं था कि जब ये फल एवं
पुष्पादिक के भार से झुके न रहते हों । ‘ णिच्चं पणमिया ’ कोई २ वृक्ष तो ऐसे
भी थे जो पुष्पादिकों के भार से बिल्कुल जमीन तक भी झुके हुए थे । [णिच्चं-कुस-

વૃક્ષો પર મોર રહેતા હતા (ણિચ્ચં પલ્લવિયા) એ વૃક્ષો હંમેશાં પલ્લવિત રહ્યા
કરતાં હતાં. દુકાળમાં પણ તેમનાં પાન ખરતાં નહોતાં (ણિચ્ચં થવइया)
ગુચ્છોથી તે હંમેશા સભર રહેતાં હતાં (ણિચ્ચં ગુલइया) તેમના પર સદા નવ-
મલ્લિકા આદિ લતાઓ (વેલો) વીંટળાયેલી રહેતી હતી. (ણિચ્ચં ગોચ્છિયા) તે
હંમેશાં ફૂલો અને ફળોના ગુચ્છોથી યુક્ત રહેતા હતા. (ણિચ્ચં જમલિયા
ણિચ્ચં જુવલિયા) એ બેટલાં વૃક્ષો અહીં હતાં તે બધાં ભેડે ભેડે એક જ
હારમાં આબુબાબુમાં ઉભાં હતાં. (ણિચ્ચં વિણમિયા) એવો કોઈપણ સમય
નહોતો કે જ્યારે તેઓ ફલ તેમજ પુષ્પાદિકના ભારથી ઝુકેલાં ન રહેતાં હોય.
(ણિચ્ચં પણમિયા) કોઈ કોઈ વૃક્ષ તો એવાં પણ હતાં કે જે પુષ્પાદિકના
ભારથી બિલકુલ જમીન સુધી નમી ગયેલાં હતાં (ણિચ્ચં-કુસમિય-મऊरिय-

मऊरिय-पल्लविय-थवइय-गुलइय-गोच्छिय - जमलिय - जुवलिय-
विणमिय-पणमिय-सुविभत्त-पिंड-मंजरी-वडिसय-धरा सुय-बरहिण-
मयणसाल - कोइल-कोभगक-भिंजारग-कोंडलग-जीवंजीवग-णं-
दीमुह-कविल-पिंगलक्खग-कारंड-चक्कवाय-कलहंस-सारस-
अणैग-सउणगण-मिहुण-विरइय-सद्दुण्णइय - महुर - सर-णाइया

‘णिच्चं-कुसुमिय-मऊरिय-पल्लविय-थवइय-गुलइय-गोच्छिय-जमलिय-जुवलिय-
विणमिय-पणमिय-सुविभत्त-पिंड-मंजरी-वडिसय-धरा’ नित्यं-कुसुमित-मयूरित-
-पल्लवित-स्तवकित - गुल्मित-गुच्छित-यमलित-युगलित-विनमित-प्रणमित-सुविभक्त-
पिण्ड-मञ्जर्यवतंसकधराः, अत्र-कुसुमितादि-प्रणमितान्तं प्रतिपदं पूर्वं व्याख्यातम्, कुसु-
मितादयः प्रणमितान्ता ये पादपास्ते कीदृशा इत्याह-सुविभत्त इत्यादि, सुविभक्ताः-
पृथक्-पृथक् स्थिताः पिण्डाः=पिण्डीभूताः-धनीभूता या मञ्जर्यस्ता एवाऽवतंसकाः-
शिरोभूषणभूता इव तासां धराः-धारका इत्यर्थः ।

पुनस्ते पादपाः कीदृशाः ? इत्याह-‘ सुय-बरहिण-मयणसाल-
कोइल-कोभगक-भिंजारग-कोंडलग- जीवंजीवग-णंदीमुह-कविल-पिंगलक्खग-
कारंड-चक्कवाय-कलहंस-सारस-अणैग-सउणगण-मिहुण-विरइय-सद्दुण्णइय-
महुर-सर-णाइया ’ शुक-बहिं-मदनशाला-कोकिल-कोभगक-भृङ्गारक-कोण्डलक-जीवञ्जीवक-
नन्दीमुख-कपिल-पिङ्गलाक्षक-कारण्ड-चक्रवाक-कलहंस-सारसाऽनेक-शकुनगण-मिथुन-विरचित-
मिय-मऊरिय-पल्लविय-थवइय-गुलइय-गोच्छिय-जमलिय-जुवलिय-विणमिय-पणमिय
सुविभत्त-पिंड-मंजरी-वडिसय-धरा] इस प्रकार ये सब के सब कुसुमित, मयूरित, पल्लवित,
स्तवकित, गुल्मित, गुच्छित, यमलित, विनमित, युगलित और प्रणमित वृक्ष, पृथक् पृथक् धनीभूत
मंजरीरूप शिरोभूषणों से सदा युक्त बने हुए थे । (सुय-बरहिण-मयणसाल-कोइल-कोभगक-
भिंजारग-कोंडलग-जीवंजीवग-णंदीमुह-कविल-पिंगलक्खग-कारंड-चक्कवाय-कलहंससा-
रस-अणैग-सउणगण-मिहुण-विरइय-सद्दुण्णइय-महुर-सर-णाइया) ये वृक्ष शुक-[तोता]

पल्लविय-थवइय-गुलइय-गोच्छिय-जमलिय-जुवलिय-विणमिय-पणमिय-सुविभत्त-पिंड-मं-
जरी-वडिसय-धरा) आ प्रकारे ते तमाभे तमाभ वृक्षे। कुसुमित, मयूरित, पल्लवित,
स्तवकित, गुल्मित, गुच्छित, यमलित, युगलित, विनमित अने प्रणमित थर्ध
जुहां जुहां धाटां मंजरीइय शिरोभूषणोथी सदा युक्त बनेलां हुतां. (सुय-बर-
हिण-मयणसाल-कोइल-कोभगक-भिंजारग-कोंडलग-जीवंजीवग-णंदीमुह-कविल-पिंगलक्ख-
ग-कारंड-चक्कवाय-कलहंस-सारस-अणैग-सउणगण-मिहुण-विरइय-सद्दुण्णइय-महुर-सर-

**सुरम्मा संपिडिय-दरिय-भमर-महुयरि-पहकर-परिलित-मत्तछप्पय-
कुसुमासव-लोल-महुर-गुमगुमंत-गुंजंत-देसभाया अब्भितर-पुप्फ-**

शब्दोन्नत-मधुर-स्वरनादिताः । तत्र-शुकाः=प्रसिद्धाः, बर्हिणः=मयूराः, मदनशालाः-सारि-
काविशेषाः 'मैना' इति प्रसिद्धाः, कोकिलाः-प्रसिद्धाः, कोभगकाः-पक्षिविशेषाः,
भृङ्गारकाः-पक्षिविशेषाः, कोण्डलकाः-पक्षिविशेषाः, जीवञ्जीवकाः-चकोरपक्षिणः, नन्दीमुखाः-
पक्षिविशेषाः, कपिलाः=पक्षिविशेषाः, पिङ्गलाक्षकाः-पक्षिविशेषाः, कारण्डकाः-पक्षिविशेषाः,
चक्रवाकाः-चक्रवा इति प्रसिद्धाः, कलहंसाः, सारसाः-प्रसिद्धाः, शुकादि-
सारसान्ता येऽनेके पक्षिगगास्तेषां मिथुनानि स्त्रीपुंसयुग्मानि, तैर्विरचिताः=कृताः शब्दोन्नता
उन्नतशब्दाः-दीर्घशब्दाः मधुरस्वरास्तैर्नादिताः-विविधपक्षिकृतमधुरध्वनियुक्ताः पादपा इत्यर्थः,
'सुरम्मा' सुरम्याः-अतीव रमणीयाः । 'संपिडिय-दरिय-भमर-महुयरि-पहकर-परिलित-
मत्तछप्पय-कुसुमासव-लोल-महुर-गुमगुमंत-गुंजंत-देसभाया' सम्पिण्डित-दत्त-भ्रमर-
मधुकरी-प्रकर-परिमिलन्मत्तषट्पद-कुसुमासव-लोल-मधुर-गुमगुमेति-गुञ्जदेशभागाः, तत्र-सम्पि-
ण्डिताः परस्परसंमिलिताः, दूतानां=मदमत्तानां भ्रमराणां मधुकरीणां=भ्रमरीणां प्रकाराः=समूहास्तैः
प्रकरैः परिमिलन्तो ये मत्तषट्पदाः, त एव पुनः कुसुमाऽऽसवलोलश्च पुष्परसाऽऽस्वाद-
बर्हिण-मयूर, मदनशाल-मैना, कोकिल-कोयल, कोभगक-पक्षिविशेष, भृङ्गारक-पक्षिवि-
शेष, कोण्डलक-पक्षिविशेष, जीवञ्जीव-चकोर, नन्दीमुख-पक्षिविशेष, कपिल-तीतर, पिङ्गला-
क्षक-बटेर, कारण्ड, चक्रवाक-चक्रवा, कलहंस-वतक, सारस-इत्यादि अनेक पक्षि-
योके जोड़ों की उन्नत एवं मधुरस्वरवाली ध्वनियों से युक्त थे । [सुरम्मा) इस-
लिये बड़े ही आनन्दप्रद थे, देखनेवालों को बहुत ही सुहावने लगते थे । (संपिडिय-
दरिय-भमर-महुयरि-पहकर-परिलित-मत्तछप्पय-कुसुमासव-लोल-महुर-गुम-
गुमंत-गुंजंत-देसभाया) मद से उन्मत्त भ्रमर और भ्रमरियों के समुदाय जो पुष्पों के
रस के पान से उन्मत्त बने हुए थे, अथवा पुष्पों के रस को पान करने के लिये

णाइया)ये वृक्षा पोपट, अर्द्धिणु-मयूर, मदनशाल-मैना, कोकिल-कोयल, कोभगक-
पक्षिविशेष, भृङ्गारक-पक्षिविशेष, कोण्डलक-पक्षिविशेष, जीवञ्जीव-चकोर, नन्दी-
मुख-पक्षिविशेष, कपिल-तीतर, पिङ्गलाक्षक-बटेर, कारण्डक, चक्रवाक-चक्रवा,
कलहंस-वतक, सारस इत्यादि अनेक पक्षीयोनो जेडांनी उन्नत तेमज
मधुर स्वरवाणी वालीथी युक्त हुतां (सुरम्मा) तेथी भूज ज आनंदमय हुतां.
जेनारने जहु ज सुंदर लागतां हुतां. (संपिडिय-दरिय-भमर-महुयरि-पहकर-परि-
लित-मत्तछप्पय-कुसुमासव-लोल-महुर-गुमगुमंत-गुंजंत-देस-भाया) मदथी उन्मत्त भ्रमर
अने भ्रमरीयोनो समुदाय जे पुष्पोना रस पीने उन्मत्त अन्यो हुतो अथवा

फला बाहिरपत्तोच्छण्णा पत्तेहि य पुप्फेहि य ओच्छन्नवलिच्छत्ता
साउफला निरोयया अकंटया णाणाविह-गुच्छ-गुम्म-मंडवग-रम्म-
सोहिया विचित्तसुहकेउभूया वावीपुक्खरिणीदीहियासु य सुनि-

लोलुपाः तेषां मधुरं यथा तथा गुमगुमेत्यव्यक्तनादानुकरणे तैर्मधुरमृद्गसङ्गीतैर्गुञ्जन-
देशभागो येषां पादपानां ते तथा । ‘अभिंतरपुष्पफला’ अभ्यन्तरपुष्पफलाः-अभ्यन्तरे
पुष्पफलसंभृताः । ‘बाहिरपत्तोच्छण्णा’ बाह्यपत्रावच्छन्नाः-बहिःपत्रातपत्रसमूह-
प्रच्छन्नाः । ‘पत्तेहि य’ पत्रैश्च, ‘पुप्फेहि य’ पुष्पैश्च, ‘ओच्छन्नवलिच्छत्ते’ अवच्छन्न-
प्रतिच्छन्नः-सर्वथाऽऽच्छादितः । ‘साउफला’ स्वादुफलाः ‘निरोयया’ नीरोगकाः
शीतविद्यदातपादिजनितोपघातरहिताः । ‘अकंटया’ अकण्टकाः - कण्टकरहिताः,
‘णाणाविह-गुच्छ-गुल्म-मंडवग-रम्म-सोहिया’ नानाविध - गुच्छ-गुल्म-मण्डपक-
रम्य-शोभिताः-नानाविधैर्बहुप्रकारैः गुच्छगुल्ममण्डपकैः = पुष्पस्तवक-लताप्रतान-

लालायित हो रहे थे, उनके ‘गुमगुम’ इस प्रकार के अव्यक्तनाद से गूँजते
रहते थे । [अभिंतरपुष्पफला] भीतर में पुष्प एवं फल से [बाहिरपत्तोच्छण्णा]
तथा बाहिर में पत्तों से ये वृक्ष व्याप्त हो रहे थे । (पत्तेहि य पुप्फेहि य ओच्छन्न-
वलिच्छत्ते) इसलिये देखनेवालों को ऐसा मात्सम होता था कि ये पत्र और
पुष्पों से ही आच्छादित हो रहे हैं । (साउफला) ये मीठे फलवाले थे,
(निरोयया) नीरोग थे अर्थात् इनको न तो कभी विद्युत्पात का भय था और
न कभी आतप-जनित पीडा का ही त्रास था । [अकंटया] कंटक-रहित थे ।
[णाणाविह-गुच्छ-गुल्म-मंडवग-रम्म-सोहिया] ये अनेक प्रकार के गुच्छगुल्मों-पुष्प
स्तवकों से मंडित लताप्रतानों के निकुंजों से युक्त थे, इससे इनकी शोभा निराली

પીવાને માટે ઝંખી રહેતો હતો તેના ગણગણાટના અવ્યક્ત નાદથી ગુંજત
હતાં (અભિંતરપુષ્પફલા) અંદરના ભાગમાં પુષ્પ તેમજ ફલથી (બાહિરપત્તોચ્છણ્ણા)
તથા બહારના ભાગમાં પાનથી આ વૃક્ષો વ્યાપ્ત બની રહેલાં હતાં.
(પત્તેહિ ય પુષ્પેહિ ય ઓચ્છન્નવલિચ્છત્તે) આથી બેનારાઓને એમ જણાતું હતું કે
આ વૃક્ષો પાન અને પુષ્પોથી જ ઢંકાયેલાં રહે છે. (સાઉફલા) એ મીઠાં ફળવાળાં
હતાં, (નિરોયયા) નિરોગ હતાં અર્થાત્ તેમને ન તો કદી વિજળી પડવાનો
ભય હતો અને ન તો તડકાની પીડાનો ત્રાસ હતો. (અકંટયા) કાંટા રહિત
હતાં. (ણાણાવિહ-ગુચ્છ-ગુમ્મ-મંડવગ-રમ્મ-સોહિયા) એ અनेક પ્રકારનાં ગુચ્છ-
ગુલ્મો-પુષ્પ સ્તવકોથી શોભતાં લતાપ્રતાનોનાં નિકુંજોથી યુક્ત હતાં. તેથી

વેસિય-રમ્મ-જાલ-હરયા પિંડિમણીહારિમં સુગંધિં સુહ-સુરભિ-
મણહરં ચ મહયાગંધદ્ધર્ણિં મુયંતા ણાણાવિહ-ગુચ્છ-ગુમ્મ-મંડવગ-

વિનિર્મિતમણ્ડપૈર્યે રમ્યાઃ=રમગીયાઃ શોભિતાઃ= શોભાસંપન્નાશ્ચ તે તથા । ‘વિચિત્તસુહકે-
ઉભૂયા’ વિચિત્રસુખકેતુભૂતાઃ—વિચિત્રસુખાનાં વિવિધસુખાનાં ધ્રાણનયનરસના—
હૃદયપ્રમોદાનાં કેતુભૂતાઃ । ‘વાવી-પુસ્કરિણી-દીહિયાસુ ય સુનિવેસિય-રમ્મ-
જાલ-હરયા’ વાવી-પુસ્કરિણી-દીર્ઘિકાસુ ચ સુનિવેશિત-રમ્ય-જાલ-ગૃહકાઃ, તત્ર-વાવીષુ-
ચતુષ્કોણરૂપાસુ પુસ્કરિણીષુ-ગોલાકારાસુ કમલવતીષુ વા, દીર્ઘિકાસુ આયામરૂપાસુ
‘સુનિવેસિય’ સુનિવેશિતાઃ—સુષ્ટુપ્રકારેણ રચિતાઃ, ‘રમ્મજાલહરયા’ રમ્યાઃ—સુન્દરાઃ
જાલગૃહાઃ—ગવાક્ષાઃ ‘જાલી ઝરોસ્વા’ इति भाषाप्रसिद्धा यैस्ते तथा । ‘પિંડિમણી-
હારિમં’ इत्यादि, पिण्डिमणिहारिमां—शुभपुद्गलसमूहरूपेण दूरदेशगामिनीम् । ‘સુગંધિં’
સુગન્ધિ—શોભનગન્ધવતીમ્ । ‘સુહસુરભિમણહરં’ શુભસુરભિમનોહરાં શ્રેષ્ઠસુગન્ધમનોહારિણીં

હો રહી થી । (વિચિત્તસુહકેઉભૂયા) વિચિત્ર સુખોં કે કેન્દ્ર બને હુણ થે ।
(વાવી-પુસ્કરિણી-દીહિયાસુ ય સુનિવેસિય-રમ્મ-જાલ-હરયા) વનખંડ મેં જિતની મી
વાવી-ચારકોને વાલી વાવડિયાં એવં પુસ્કરિણી-ગોલાકાર તથા કમલનિયોં સે યુક્ત
વાવડિયાં તથા દીર્ઘિકાયેં—લમ્બે આકારવાલી વાવડિયાં થીં, ઇન સવ પર વૃક્ષોં કે
યથાયોગ્ય સંનિવેશસે સ્થાન ૨ પર સુન્દર જાલી-ઝરોસ્વે બને હુણ થે । અર્થાત્
વાવડિયોં કે ઉપર રહે હુણ ચે વૃક્ષ જાલી-ઝરોસ્વે કે આકારવાલે દીક્ષતે થે ।
ઇસ વનખંડ મેં કિતનેક એસે મી વૃક્ષ થે જો (પિંડિમણીહારિમં) શુભ પુદ્ગલોં કે
સમૂહરૂપ સે દૂર ૨ તક ફેલનેવાલી, (સુગંધિં) તથા જિસમેં અચ્છી ગન્ધ આતી થી—

તેમની શોભા અનોખી જ થઈ રહેતી હતી. (વિચિત્તસુહકેઉભૂયા) વિચિત્ર સુ-
ખોનું કેન્દ્ર બની ગયાં હતાં (વાવી-પુસ્કરિણી-દીહિયાસુ ય સુનિવેસિય-રમ્મ-જાલ-હરયા)
વનખંડમાં બેઠેલી એ વાવો—ચાર ખૂણાવાળી વાવડિઓ તેમજ પુસ્કરિણી-ગોલાકાર
તથા કમલિનીઓથી યુક્ત વાવડિઓ તથા દીર્ઘિકાઓ—લાંબા આકારવાળી
વાવડિઓ હતી. એ બધી ઉપર વૃક્ષોના યથાયોગ્ય સંનિવેશથી ઠેકઠેકાણે
સુંદર બાળી-ઝરોખા બનાવેલાં હતાં. અર્થાત્ વાવડિઓની ઉપર ઝૂકી રહેલાં
એ વૃક્ષો બાળી ઝરોખાના આકારવાળાં દેખાતાં હતાં. આ વનખંડમાં કેટલાંક
એવાં પણ વૃક્ષો હતાં કે જે (પિંડિમણીહારિમં) શુભ પુદ્ગલોના સમૂહરૂપથી
હર હર સુધી ફેલાઈ જનારી (સુગંધિં) તથા જેમાં સારી સુગંધ આવતી

ઘરગ-સુહસેડ-કેડ-બહુલા અળેગ-રહ-જાણ-જુગ-સિવિય - પરિમો-

‘મહયાગંધદ્રણિ’ મહાગન્ધધ્રાણિમ્-ગન્ધ એવ ધ્રાણિઃ અર્થાત્-ગન્ધતૃપ્તિઃ, મહતી ત્રાસૌ ગન્ધધ્રા-
ણિસ્તાં ‘મુયંતા’ મુચ્ચન્તઃ, પુનઃ કીદશા વૃક્ષાઃ ? અત્રાહ—‘ળાળાવિહ-ગુચ્છ-ગુમ્મ-મંડવ-
ગ-ઘરગ-સુહસેડ-કેડ-બહુલા’ નાનાવિધ-ગુચ્છ-ગુલ્મ - મળ્ડપક-ગૃહક-સુખસેતુ-કેતુ-બહુલાઃ-
નાનાવિધગુચ્છગુલ્માનાં મળ્ડપકાઃ, ગૃહકાઃ સુખાઃ=સુખકારકાઃ સેતવઃ=માર્ગાઃકેતવશ્ચ
પતાકાઃ બહુલાઃ=પ્રચુરા યેષુ તે તથા, ‘અળેગ-રહ-જાણ-જુગ-સિવિય-પરિમોયણા’ અનેક-
રથ-જાન-યુગ્ય-શિબિકા-પ્રવિમોચનાઃ, અનેકે રથાઃ, યાનાનિ=અશ્વાદીનિ, યુગ્યાનિ શકટાદીનિ,
શિબિકાઃ-પુરુષવાહ્યયાનવિશેષાઃ—‘પાલસી’ इति પ્રસિદ્ધાઃ, તાસાં રથાદિશિબિકાન્તાનાં
પરિમોચનં-સ્થાપનં યત્ર તાદૃશાઃ, ક્રીડાદ્યર્થમાગતાનાં જનાનાં રથાદયસ્તત્ર તિષ્ઠન્તીતિ
ભાવઃ । ‘સુરમ્મા’ સુરમ્યાઃ—અતિશયરમણીયાઃ । ‘પાસાઈયા’ પ્રસાદીયાઃ—
હૃદયપ્રસાદકારકાઃ, ‘દરિસણિજ્જા’ દર્શનીયાઃ—દ્રષ્ટું યોગ્યાઃ, ‘અભિરુવા’

સુગંધી સે જો મંડિત થી, ઓર ઇસીલિએ (સુહસુરભિમળહરં) જો અપની ઇસ શુભ-
સુરભિસે મન કો આનંદિત કરતી થી એસો (મહયાગંધદ્રણિ) વિશિષ્ટ ગંધધ્રાણિ-
સુગંધ કી પરમ્પરા કો (મુયંતા) છોડતે થે । (ળાળાવિહ-ગુચ્છ-ગુમ્મ-મંડવગ-ઘરગ-સુહસેડ-
કેડ-બહુલા) ઇસ પ્રકાર યે વૃક્ષ ગુચ્છોં ઓર ગુલ્મોં સે બને હુએ અનેક મંડપ, ઘર,
સુંદર માર્ગ ઓર પાતકાઓં સે સદા સુશોભિત થે (અળેગ-રહ-જાણ-જુગ-સિવિય-
પરિમોયણા) ઇન્કે નીચે વનક્રીડા કે નિમિત્ત આર્યેં હુએ વ્યક્તિયોં કે અનેક રથ,
યાન, યુગ્ય-તાંગા-વગેરહ, પાલસી આદિ સવારિયોં કે સાધન રખે જાતે થે (સુરમ્મા,
પાસાઈયા, દરિસણિજ્જા, અભિરુવા, પડિરુવા,) ઇસલિયે યે વૃક્ષ બડે હી સુરમ્ય,

હતી. સુગંધથી જે ભરેલી હતી અને તેથી જ (સુહસુરભિમળહરં) જે પોતાની
આ શુભ સુવાસથી મનને આનંદિત કરતી હતી એવી (મહયાગંધદ્રણિ)
વિશિષ્ટ ગંધધ્રાણિ-સુગંધની પરંપરાને (મુયંતા) છોડતા હતા.
(ળાળાવિહ-ગુચ્છ-ગુમ્મ-મંડવગ-ઘરગ-સુહસેડ-કેડ-બહુલા) એ પ્રકારે એ વૃક્ષો
ગુચ્છો અને ગુલ્મોથી અનેકાં અનેક મંડપ, ઘર, સુંદર માર્ગ અને પતાકાઓથી
સદા સુશોભિત રહેતાં હતાં. (અળેગ-રહ-જાણ-જુગ-સિવિય-પરિમોયણા) એમની
નીચે વનક્રીડાને નિમિત્તે આવેલી વ્યક્તિઓના અનેક રથ-યાન, અગી, ટાંગા
વગેરે, પાલખી આદિ સવારિઓનાં સાધન રાખવામાં આવતાં હતાં. (સુરમ્મા,
પાસાઈયા, દરિસણિજ્જા, અભિરુવા, પડિરુવા) એથી તે વૃક્ષો બહુજ સુરમ્ય,

यणा सुरम्मा पासार्इया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥सू०४॥
मूलम्-तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं
एक्के असोगवरपायवे पणत्ते, कुस-विकुस-विसुद्ध-रुक्खमूले

अभिरूपाः—सुन्दराकृतिमन्तः, ‘पडिरूवा’ प्रतिरूपाः—अभिमतरूपवन्तः=सकलजनचि-
त्ताकर्षकाः वनषण्डस्य वृक्षाः सन्तीत्यर्थः ॥सू०४॥

टीका—अशोकवृक्षवर्णनमाह— ‘तस्स णं वणसंडस्स’ इत्यादि । तस्य खलु
वनषण्डस्य—पूर्ववर्णितवनषण्डस्य ‘बहुमज्झदेशभाए’ बहुमध्यदेशभागे—सर्वथा
मध्यभागे इत्यर्थः, ‘एत्थ णं’ अत्र खलु—वनषण्डमध्यप्रदेशे ‘महं’ महान्—
अतिशयसमुन्नतः ‘एक्के’ एकः प्रधानः असोगवरपायवे’ अशोकवरपादपः=अशोक-नामकः
श्रेष्ठवृक्षः ‘पणत्ते’ प्रज्ञप्तः,—कीदृशः सः ? इत्याह ‘कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूले’ कुश-विकुश—
विशुद्धवृक्षमूलः—कुश दर्भाः, विकुशाः कुशभिन्नास्तत्सदृशास्तृणविशेषा एव, तैर्विशुद्धं—
विरहितं—तृणवर्जितमित्यर्थः, वृक्षमूलं—वृक्षाऽधःस्थलं यस्य अशोकपादपस्य स तथा । पुनः
कीदृशः सः ? अत्राऽऽह—‘मूलमंते’ मूलवान्, ‘कंदमंते’ कन्दवान् ‘जाव’ यावच्छब्दात्—

हृदय—आह्लादक, दर्शनीय, सुन्दर आकृति से युक्त एवं यथेच्छरूपविशिष्ट प्रति-
भासित होते थे ॥ सू० ४ ॥

‘तस्स णं वणसंडस्स०’ इत्यादि

[तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए] इस वनखंड के ठीक बीचो-
बीचवाले प्रदेश में (एत्थ णं) इसके सिवाय अन्यत्र नहीं (महं एक्के असोगवर-
पायवे पणत्ते) एक विस्तृत अशोक नामका श्रेष्ठ वृक्ष था । (कुस-विकुस-विसुद्ध-
रुक्खमूले) इसका अधोभाग कुश एवं कुश—जैसे अन्य तृणादिकों से रहित था । (मूलमंते

हुदयाह्लादक, दर्शनीय, सुंदर आकृतिथी युक्त तेमज् यथेच्छरूपविशिष्ट
भासतां हुतां. (सू. ४)

तस्स णं वणसंडस्स इत्यादि,

(तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए) आ वनखंडना अराअर वन्थोवन्थना
लागमां (एत्थ णं) तेना सिवाय भीजे नहि (महं एक्के असोगवरपायवे पणत्ते)
એક વિશાળ અશોક નામનું શ્રેષ્ઠ વૃક્ષ હતું. (કુસ-વિકુસ-વિસુદ્ધ-રુક્ષમૂલે)
તેની નીચેનો ભાગ કુશ તેમજ કુશ જેવાં અન્ય તૃણાદિકોથી રહિત હતો.
(મૂલમંતે કંદમંતે જાવ પરિમોચણે) જે વૃક્ષોના વિષયનું વર્ણન થોથા સૂત્રમાં

મૂલમંતે કંદમંતે જાવ પરિમોયણે સુરમ્મે પાસાઈણ દરિસણિજ્જે
અભિરૂવે પઢિરૂવે ॥ સૂ. ૫ ॥

મૂલમ્—સે ણં અસોગવરપાયવે અણ્ણેહિં બહૂહિં તિલણ્ણેહિં વડલેહિં-
લડણ્ણેહિં છત્તોવેહિં સિરીસેહિં સત્તવણ્ણેહિં દહિવણ્ણેહિં લોદ્ધેહિં

સ્કન્ધ—ત્વક્—શાલા—પ્રબાલ—પત્ર—પુષ્પ—ફલ—બીજાનામપિ ગ્રહણમ્, ‘પરિમોયણે’
પરિમોચનઃ—અનેકરથાદિવાહનાનાં પરિમોચનં સ્થાપનં યત્ર સ તથા, ક્રીડાદ્યર્થમાગ-
તાનાં જનાનાં રથાદયસ્તત્ર તિષ્ઠન્તીતિ ભાવઃ । ‘સુરમ્મે’ સુરમ્યઃ—અતિશય-
ગ્મગીયઃ । ‘પાસાઈણ’ પ્રાસાદીયઃ—પ્રસાદાય હિતઃ પ્રસાદોયઃ સ એવ, મનઃ પ્રસન્નતાહેતુભૂતઃ
‘દરિસણિજ્જે’ દર્શનીયઃ—દ્રષ્ટું યોગ્યઃ । ‘અભિરૂવે’ અભિરૂપઃ—અભિમતં રૂપં યસ્ય સ
તથા । ‘પઢિરૂવે’ પ્રતિરૂપઃ—પ્રતિ=વિશિષ્ટમ્—અસાધારણં રૂપં યસ્ય સ તથા ॥સૂ.૦૫॥

ટીકા—‘સે ણં અસોગવરપાયવે’ इत्यादि । स खल्वशोकवरपादपः=
पूर्ववर्णितः अशोकनामकः श्रेष्ठवृक्षः, अन्यैः बहुभिःबहुविधैर्वृक्षैर्वेष्टितः, तथाहि ‘तिलण्हिं’

કંદમંતે જાવ પરિમોયણે) જો વૃક્ષોં કે વિષયકા વર્ણન ચતુર્થ સૂત્રમેં આયા હૈ, ઉસ
સમસ્ત વર્ણન સે યહ યુક્ત થા । ઇસલિયે યહ મી [સુરમ્મે પાસાઈણ દરિસણિજ્જે
અભિરૂવે પઢિરૂવે) સુરમ્ય, ચિત્તાહ્લાદક, દર્શનીય, અભિરૂપ એવં વિશિષ્ટ આસાધારણ
શોભા—સંપન્ન થા ॥ સૂ. ૫ ॥

‘સે ણં અસોગવરપાયવે૦’ इत्यादि—

(સે ણં અસોગવરપાયવે) યહ સુન્દર અશોક વૃક્ષ (અણ્ણેહિં બહૂહિં)
અન્ય અનેક પ્રકારકે વૃક્ષોં સે પરિવેષ્ટિત થા, ઉનમેં સે કિતનેક વૃક્ષોંકે નામ યે હૈ—
(તિલણ્ણેહિં વડલેહિં) તિલક, બકુલ (લડણ્ણેહિં છત્તોવેહિં સિરીસેહિં સત્તવણ્ણેહિં

કરવામાં આવેલું છે એ સમસ્ત વર્ણનથી તે યુક્ત હતું તેથી તે પણ
(સુરમ્મે પાસાઈણ દરિસણિજ્જે અભિરૂવે પઢિરૂવે) સુરમ્ય, ચિત્તાહ્લાદક,
દર્શનીય, અભિરૂપ તેમજ વિશિષ્ટ અસાધારણ શોભા—સંપન્ન હતું. (સૂ. ૫)

‘સે ણં અસોગવરપાયવે’ इत्यादि.

(સે ણં અસોગવરપાયવે) આ સુંદર અશોક વૃક્ષ (અણ્ણેહિં બહૂહિં) અન્ય
અનેક પ્રકારનાં વૃક્ષોથી વીંટળાયેલું હતું. તેમાંથી કેટલાંક વૃક્ષોનાં નામ
આ પ્રમાણે છે. (તિલણ્ણેહિં વડલેહિં) તિલક, બકુલ (લડણ્ણેહિં છત્તોવેહિં સિરીસેહિં

धवेहिं चंदणेहिं अज्जुणेहिं णीवेहिं कुडएहिं कलंबेहिं सव्वेहिं
फणसेहिं दाडिमेहिं सालेहिं तालेहिं तमालेहिं पियएहिं पियं-
गूहिं पुरोवगेहिं रायरुक्खेहिं नंदिरुक्खेहिं सव्वओ समंता
संपरिक्खत्ते ॥ सू० ६ ॥

तिलकैः 'वउलेहिं' बकुलैः 'लउएहिं' लकुचैः विहारादिदेशेषु (बडहर) इति ख्यातैः—
'छत्तोवेहिं' छत्रोपै—वृक्षविशेषैः । 'सिरीसेहिं' शिरीषैः प्रसिद्धैः पुष्पवृक्षैः ।
'सत्तवण्णेहिं' सप्तपर्णैः, 'दहिवण्णेहिं' दधिवर्णैः—वृक्षविशेषैः । 'लोद्धेहिं' लोध्रैः—श्वेत-
रक्तकुपुमपुक्तैर्वृक्षविशेषैः । 'धवेहिं' धवैः प्रसिद्धैः । 'चंदणेहिं' चन्दनैः 'अज्जुणेहिं'
अर्जुनैः—वृक्षविशेषैः । 'णीवेहिं' नीपैः=कदम्बैः । 'कुडएहिं'—कुटजैः—गगनम-
ल्लिकापर्यायैः । 'कलंबेहिं' कदम्बैः । 'सव्वेहिं' सव्यैः—त्वक्प्रदैर्वृक्षविशेषैः ।
'फणसेहिं' पनसैः । 'दाडिमेहिं' दाडिमैः । 'सालेहिं' शालैः । 'तालेहिं' तालैः ।
'तमालेहिं' तमालैः । 'पियएहिं' प्रियैः 'पियंगूहिं' प्रियङ्गुभिः—वृक्षविशेषैः ।
'पुरोवगेहिं' पुरोपगैर्वृक्षभेदैः । 'रायरुक्खेहिं' राजवृक्षैरश्वत्थैः । 'नंदिरुक्खेहिं'
नन्दिवृक्षैः । 'सव्वओ' सर्वतः—सर्वदिक्षु—'समंता' समन्तात् परितः । 'संपरिक्खत्ते'
सम्परिक्षिप्तः—सम्यक् प्रकारेण वेष्टितः ॥ सू० ६ ॥

दहिवण्णेहिं लोद्धेहिं धवेहिं) लकुच, (विहार आदि देशों में इसे “ बडहर ”
कहते हैं) छत्रोप—वृक्षविशेष, शिरीष, सप्तपर्ण, दधिवर्ण, लोध्र, धव (चंदणेहिं अज्जुणेहिं,
णीवेहिं, कुडएहिं, कलंबेहिं, सव्वेहिं, फणसेहिं, दाडिमेहिं) चंदन, अर्जुन, नीप,
कुटज, कदम्ब, सव्य, पनस, दाडिम—अनार के वृक्ष, (सालेहिं तालेहिं तमालेहिं
पियएहिं पियंगूहिं पुरोवगेहिं रायरुक्खेहिं नंदिरुक्खेहिं) शाल, ताल, तमाल, प्रिय,
प्रियंगु, पुरोपग, पीपल और नन्दिवृक्ष; इन वृक्षों से यह अशोक वृक्ष (सव्वओ

सत्तवण्णेहिं दहिवण्णेहिं, लोद्धेहिं धवेहिं) लकुच, (विहार आदि देशों में तेने
अउडर उडे छे) छत्रोप—वृक्षविशेष, शिरीष, सप्तपर्ण, दधिवर्ण, लोध्र, धव,
(चंदणेहिं, अज्जुणेहिं, णीवेहिं, कुडएहिं, कलंबेहिं, सव्वेहिं, फणसेहिं, दाडिमेहिं)
चंदन, अर्जुन, नीप, कुटज, कदम्ब, सव्य, पनस, दाडिम—अनारनां वृक्ष,
(सालेहिं तालेहिं तमालेहिं पियएहिं पियंगूहिं, पुरोवगेहिं राजरुक्खेहिं नंदिरुक्खेहिं)
शाल, ताल, तमाल, प्रिय, प्रियंगु, पुरोपग, पीपल अने नन्दिवृक्ष, ये
वृक्षाथी ते अशोक वृक्ष (सव्वओ समंता संपरिक्खत्ते) सर्व दिशाओं में आरे

મૂલમ્-તે ણં તિલયા વડલા લડયા જાવ ણંદિરુક્ષા
કુસવિકુસવિસુદ્ધરુક્ષમૂલા મૂલમંતો કંદમંતો ણ્ણસિં વણ્ણઓ
ભાણિયવ્વો જાવ સિવિયપડિમોયણા સુરમ્મા પાસાઈયા

ટીકા-તસ્ય પૂર્વવર્ણિતસ્યાઽશોકવૃક્ષસ્ય પરિવેષ્ટકાઃ તિલકાઃ પૂર્વવર્ણિતાઽશોક-
વૃક્ષવદ્ વર્ણનીયાઃ, તથા વકુલાઃ લકુચાઃ યાવત્-શબ્દસ્યોપાદાનાત્ નન્દિવૃક્ષેભ્યઃ
પૂર્વવર્તિનઃ છત્રોપશિરીષસપર્ણાદયો રાજવૃક્ષાન્તાઃ સર્વે વૃક્ષા ગ્રાહ્યાઃ, નન્દિવૃક્ષાઃ,
એતે વૃક્ષાઃ કીદૃશાઃ ? इत्याह-‘कुसविकुसविसुद्धरुक्खमूला’ कुश-विकुश विशुद्धवृक्षमूला-
दर्भादितृणापनयनात् निर्मलतरुतलाः, एतेषां पदानां ‘वण्णओ’ वर्णकः-वर्णनम्,
‘भाणियव्वो’ भणितव्यः चतुर्थसूत्रवत् कथनीय इति यावत्, ‘जाव’ यावत् ‘सिविय-
परिमोयणा’ शिबिकापरिमोचनाः-रथादिशिबिकान्त-वाहनानां परिमोचनं स्थापनं यत्र

સમંતા સંપરિક્ષિવત્તે) સબ દિશાઓં મેં ચારોં ઓર સે અચ્છી તરહ ઘિરા
હુઆ થા ॥ સૂ. ૬ ॥

‘ તે ણં તિલયા વડલા ’ ઇત્યાદિ,

(તે ણં તિલયા વડલા લડયા જાવ) યહ સબ તિલકવકુલ લકુચવૃક્ષ સે લગાકર
નંદિવૃક્ષ-પર્યન્ત-વૃક્ષસમૂહ (કુસ-વિકુસ-વિસુદ્ધ-રુક્ષમૂલા) અપને ૨ નીચે ભાગ મેં
કુસ એવં અન્ય કુસ જૈસી ઘાસ આદિ સે રહિત થા (મૂલમંતો કંદમંતો ણ્ણસિં
વણ્ણઓ ભાણિયવ્વો જાવ સિવિયપરિમોયણા) પહિલે ૪ ચતુર્થસૂત્ર મેં જો “ મૂલમંત
કંદમંત ” ઇત્યાદિ પદ વૃક્ષોં કે વર્ણન કરને મેં કહે ગયે હેંં ડન સમી પદોં કા
અધ્યાહાર ડન વૃક્ષોંકે વર્ણન કરને મેં મી કર લેના ચાહિયે । ડન વૃક્ષોં કે નીચે

બાબુથી સારી રીતે ઘેરાયેલું હતું. (સૂ. ૬)

‘ તે ણં તિલયા વડલા ’ ઇત્યાદિ,

(તે ણં તિલયા વડલા લડયા જાવ) આ બધો તિલકબકુલ લકુચવૃક્ષથી માંડીને
નંદિવૃક્ષ સુધીનો વૃક્ષસમૂહ (કુસ-વિકુસ-વિસુદ્ધ-રુક્ષમૂલા) પોતપોતાના નીચેના-
ભાગમાં કુસ તેમજ બીજાં કુસ જેવાં ઘાસ આદિથી રહિત હતાં. (મૂલમંતો
કંદમંતો ણ્ણસિં વણ્ણઓ ભાણિયવ્વો જાવ સિવિયપરિમોયણા) એથા સૂત્રમાં
“મૂલમંત કંદમંત” ઇત્યાદિ વૃક્ષોનાં વર્ણન કરવામાં જે પદો કહેલાં
છે તે બધાં પદોનો અધ્યાહાર આ વૃક્ષના વર્ણનમાં પણ કરી લેવો જોઈએ.
તે વૃક્ષોની નીચે જે પ્રકારે રથોથી માંડીને શિબિકા (પાલખી) સુધીનાં

દરિસણિજ્ઞા અભિરૂવા પડિરૂવા ॥ સૂ. ૭ ॥

મૂલમ્—તે ણં તિલયા જાવ ણંદિરૂક્ષા અણ્ણેહિં
બહૂહિં પડમલયાહિં ણાગલયાહિં અસોગલયાહિં ચંપગલયાહિં

તે તથા, ક્રીડાવર્થમાગતાનાં જનાનાં રથાદયસ્તત્ર તિષ્ઠન્તીતિ ભાવઃ । ‘સુરમ્મા’ સુરમ્યાઃ—અતીવરમણીયાઃ । ‘પાસાર્ઝ્યા’ પ્રાસાદીયાઃ—હૃદયોલ્લાસકાઃ, ‘દરિસણિજ્ઞા’ દર્શનીયાઃ—દ્રષ્ટું યોગ્યા ‘અભિરૂવા’ અભિરૂપાઃ—અભિમતસુન્દરાકૃતિમન્તઃ । ‘પડિરૂવા’ પ્રતિરૂપાઃ—અસાધારણસૌન્દર્યવન્તઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—અયમત્ર વક્તવ્યોઽર્થઃ—યથાઽશોકવરપાદપો બહુવિધૈસ્તિલકાદિવૃક્ષૈઃ પરિતો વેષ્ટિતઃ, તથૈવ તે વેષ્ટકવૃક્ષા અપિ અન્યાભિર્વહ્યમાણાભિઃ બહુવિધાભિર્લતાભિઃ પરિવેષ્ટિતા અભૂવન્ । કાસ્તાઃ પરિવેષ્ટનસાધનીભૂતા લતા इत्यत्रાह—‘તે ણં’ તે સ્વલ્પ અશોકવરપાદપસ્ય પરિવેષ્ટકાઃ ‘તિલયા જાવ ણંદિરૂક્ષા’ તિલકા યાવન્નન્દિવૃક્ષાઃ પચ્ચવિંશતિ-જાતીયા इत्यर्थः, તે પુનઃ કોદૃશાઃ ? इत्याह—‘અણ્ણેહિં બહૂહિં’ અન્યાભિર્બહૂભિઃ—

જિસ પ્રકાર રથોં સે લેકર શિબિકાપર્યન્ત કે વાહન રખે જાતે થે વૈસે હી યે સર્વ વાહન ઇન્ વૃક્ષોં કે મો અધોભાગ મેં રખે હુએ રહતે થે । (સુરમ્મા પાસાર્ઝ્યા દરિસણિજ્ઞા અભિરૂવા પડિરૂવા) યે વૃક્ષ મો સુરમ્ય, પ્રાસાદીય, દર્શનીય, અભિરૂપ એવં પ્રતિરૂપ—અસાધારણ સૌન્દર્યવાલે થે ॥ સૂ. ૭ ॥

‘તે ણં તિલયા જાવ’ इत्यादि,

જિસ પ્રકાર અશોક વૃક્ષ અનેક પ્રકારકે તિલકાદિક વૃક્ષોં સે ચારોં ઓર સે ઘેરા હુઆ થા ડસી પ્રકાર યે તિલકવૃક્ષ સે લેકર નંદિવૃક્ષતકકે સમસ્ત અશોક-વૃક્ષકો પરિવેષ્ટિત કરનેવાલે વૃક્ષ મો (અણ્ણેહિં બહૂહિં પડમલયાહિં) અન્ય અનેક

વાહન રાખવામાં આવતાં હતાં, તે જ પ્રકારે તે બધા આ વૃક્ષોની નીચે પણ રાખવામાં આવતાં હતાં. (સુરમ્મા પાસાર્ઝ્યા દરિસણિજ્ઞા અભિરૂવા પડિરૂવા) એ વૃક્ષો પણ સુરમ્ય, પ્રાસાદીય, દર્શનીય, અભિરૂપ તેમજ પ્રતિરૂપ—અસાધારણ સૌન્દર્યવાળાં હતાં. (સૂ. ૭)

‘તે ણં તિલયા જાવ’ इत्यादि,

જે પ્રકારે અશોક વૃક્ષ અનેક પ્રકારનાં તિલકાદિક વૃક્ષોથી ચારે બાજુથી ઘેરાએલું હતું તે જ પ્રકારે આ તિલક વૃક્ષથી માંડીને નંદિવૃક્ષ સુધીનાં સમસ્ત વૃક્ષો કે જે અશોક વૃક્ષને વીંટળાઈ ગયેલાં હતાં તે પણ (અણ્ણેહિં બહૂહિં પડમલયાહિં)

ચૂયલયાહિં વળલયાહિં વાસંતિયલયાહિં અહ્મુત્તયલયાહિં કુંદ-
લયાહિં સામલયાહિં સવ્વઓ સમંતા સંપરિક્ષિત્તા ॥ સૂ. ૮ ॥

મૂલમ્—તાઓ ણં પડમલયાઓ ણિચ્ચં કુસુમિયાઓ

વહુવિધાભિઃ । ‘પડમલયાહિં’ પદ્મલતાભિઃ । ‘નાગલયાહિં’—નાગલતાભિઃ । ‘અસોગલયાહિં’
અશોકલતાભિઃ । ‘ચંપગલયાહિં’ ચંપકલતાભિઃ, ‘ચૂયલયાહિં’ આમ્રલતાભિઃ, ‘વળલયાહિં’
વનલતાભિઃ, ‘વાસંતિયલયાહિં’ વાસન્તિકલતાભિઃ, ‘અહ્મુત્તયલયાહિં’ અતિમુક્તકલ્પતાભિઃ
‘કુંદલયાહિં’ કુંદલતાભિઃ । ‘સામલયાહિં’ શ્યામલતાભિઃ, ઇમાભિર્દશજાતીયા-
ભિર્લતાભિઃ, ‘સવ્વઓ સમંતા સંપરિક્ષિત્તા’ સર્વતઃ સમન્તાત્સમ્પરિક્ષિતાઃ—સર્વદિશુ
પરિતઃ સમ્યક્ પરિવેષિતાઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

‘તાઓ ણં પડમલયાઓ’ તાઃ સ્વલ્પ પદ્મલતાઃ—યાભિસ્તિલકાદિનન્દિવૃક્ષાન્તા
વૃક્ષાઃ પરિતો વેષિતાઃ તા લતાઃ કીદૃશ્યઃ ? અત્રાહ—‘ ણિચ્ચં કુસુમિયાઓ ’ નિત્યં

પ્રકારકી પદ્મલતાઓં સે (નાગલયાહિં) નાગલતાઓં સે, (ચંપગલયાહિં) ચંપક-
લતાઓં સે, (ચૂયલયાહિં) આમ્ર—લતાઓં સે, (વળલયાહિં) વનલતાઓં સે
(વાસંતિયલયાહિં) વાસંતીલતાઓં સે, (અહ્મુત્તયલયાહિં) અતિમુક્તલતાઓં સે
(કુંદલયાહિં) કુંદલતાઓં સે ઓર (સામલયાહિં) શ્યામલતાઓં સે (સવ્વઓ
સમંતા સંપરિક્ષિત્તા) સમસ્ત દિશાઓંમેં ચારોં ઓર સે ઘેરે હુણ થે ॥ સૂ. ૮ ॥

‘તાઓ ણં પડમલયાઓ’ ઇત્યાદિ,

યે પદ્મલતા આદિ લતાઈં કિ જિનસે તિલકસે પ્રારંભકર નંદિવૃક્ષ તકકે
સમસ્તવૃક્ષ પરિવેષિત બને હુણ થે. વે (ણિચ્ચં કુસુમિયાઓ) નિત્ય પ્રફુલ્લિત પુષ્પોં સે

બીજી અનેક પ્રકારની પદ્મલતાઓથી (નાગલયાહિં) નાગલતાઓથી (ચંપગલ-
યાહિં) ચંપકલતાઓથી (ચૂયલયાહિં) આમ્રલતાઓથી (વળલયાહિં) વન-
લતાઓથી (વાસંતિયલયાહિં) વાસંતીલતાઓથી (અહ્મુત્તયલયાહિં) અતિ
મુક્તક લતાઓથી (કુંદલયાહિં) કુંદલતાઓથી અને (સામલયાહિં) શ્યામ-
લતાઓથી (સવ્વઓ સમંતા સંપરિક્ષિત્તા) સમસ્ત દિશાઓમાં ચારે
તરફથી ઘેરાયેલાં હતાં. (સૂ. ૮)

“ તાઓ ણં પડમલયાઓ ” ઇત્યાદિ,

આ પદ્મલતા આદિ લતાઓ કે જેનાવડે તિલકથી માંડીને નંદિવૃક્ષ
સુધીનાં સમસ્ત વૃક્ષો વીંટળાયેલાં હતાં તે (ણિચ્ચં કુસુમિયાઓ) નિત્ય

जाव वडिसयधराओ पासार्इयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ
पडिरूवाओ ॥ सू. ९ ॥

मूलम्—तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ईसिं

कुसुमिताः सदासञ्जातपुष्पाः । ‘जाव वडिसयधराओ’ यावदवतंसकधराः—शिरोभूषण—
भूषिता इव दृश्यमानाः, यावच्छब्दोपादानात्—‘मऊरियलवइयथवइयगुलइय०’ इत्यादि
द्रष्टव्यम्, मयूरितपल्लवितस्तवकितगुल्मितादीनि विशेषणानि लतास्वपि संयोज्यानि,
अतएव—तादृश्यो लताः—‘पासार्इयाओ’ प्रासादीयाः—चित्तप्रसन्नताकारिण्यः । ‘दरि-
सणिज्जाओ’ दर्शनीयाः—द्रष्टुं योग्याः । ‘अभिरूवाओ’ अभिरूपाः,—अभिमत—रूपवत्यः
‘पडिरूवाओ’ प्रतिरूपाः—प्रतिविशिष्टरूपवत्यः ॥ ९ ॥

टीका—‘तस्स णं असोगवरपायवस्स’ इत्यादि । तस्य अशोकवरपादपस्य
‘ईसिं खंधसमल्लीणे’ ईषत् स्कन्धमंलीनः—वृक्षस्कन्धसमीपवर्ती यः ‘हेट्ठा’ अशोक-

युक्त थीं । (जाव वडिसयधराओ) अतएव ऐसी ज्ञात होती थीं कि मानों इन्होंने शिरोभूषण
ही धारण कर रक्खा है । यहां ‘यावत्’ शब्द से “ मयूरित-पल्लवित-स्तवकित-गुल्मित ”
इत्यादि विशेषणोंका ग्रहण हुआ है । अतएव ये लताएँ भी (पासार्इयाओ दरि-
सणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ) देखने वालोंके चित्तको प्रसन्न करनेवालीं.
देखने योग्य, अभिरूप एवं असाधारण शोभा से युक्त थीं ॥ सू. ९ ॥

‘तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा’ इत्यादि,

(तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा) उस उत्तम अशोकवृक्षके नीचे (ईसिं
खंधसमल्लीणे) स्कन्ध (पेड) से कुछ दूरी पर (एत्थ णं) किन्तु उसीके अधः

प्रकुट्टित पुष्पोथी युक्त होती. (जाव वडिसयधराओ) तेथी अेम लागतुं हुतुं
के अण्णु तेअोअे शिरोभूषणु (मुकुट) ञ धारणु करेला छे. अही यावत्
शब्दथी ‘ मयूरित पल्लवित स्तवकित गुल्मित ’ इत्यादि विशेषणु लीधेलां छे
तेथी लताअे पणु (पासार्इयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ) नेना-
राअेना चित्तने प्रसन्न करवावाणी, नेवायेअ्य, अलिइय, तेमअ असाधारण
शोभायुक्त होती. (सू. ९)

“ तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ” इत्यादि,

(तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा) ते उत्तम अशोक वृक्षनी नीचे (ईसिं
खंध-समल्लीणे) स्कन्ध (वृक्ष) थी अरु इर (एत्थ णं) पणु तेना नीचेना

खंधसमल्लीणे एत्थ णं महं एक्के पुढविसिलापट्टए पणत्ते विक्खं-
भायामउस्सेहसुप्पमाणे किण्हे अंजण-घण-किवाण-कुवलय-हल-
हर-कोसेजा-गास-केस-कज्जलंगी खंजण-सिंगभेद-रिट्ठय-जंबूफल-

वृक्षस्य अधः प्रदेशः, आसीदिति शेषः 'एत्थ णं महं एक्के पुढविसिलापट्टए पणत्ते'
अत्र-अस्मिन्-अधःप्रदेशे 'महं' महान्, 'एक्के' एकः 'पुढविसिलापट्टए'
पृथ्वीशिलापट्टकः-पृथ्वीशिलापीठ इत्यर्थः । 'पणत्ते' प्रज्ञतः कथितः । स पृथ्वीशिलापीठः
कीदृशः ? इत्याह- 'विक्खंभा-याम-उस्सेह-सुप्पमाणे' विष्कम्भाऽऽयामो-त्सेध-सुप्रमाणः,
विष्कम्भः-पृथुत्वं-परितो विशालत्वम् । 'आयामो' दीर्घत्वम् । 'उत्सेधः'-उच्चत्वम् । एतैर्विष्कम्भा-
ऽऽयामोत्सेधैः सु-सुष्ठुप्रमाणं यस्य स विष्कम्भाऽऽयामोत्सेधसुप्रमाणः, कस्यापि प्रमेयस्य
त्रिधा परिमाणं भवति; तेषु विष्कम्भः पृथुत्वं-स्थूलत्वं, आयामो दैर्घ्यम्, उत्सेध उच्चैस्त्वम्,
एतैस्त्रिभिः प्रमाणैः सुष्ठु युक्तः नातिन्यूननात्यधिकप्रमाणयुक्त इति भावः । तथा-'किण्हे'
कृष्णः-कृष्णवर्णः नील इति यावत् । कीदृशः कृष्णः ? अत्राह-'अंजण-
घण-किवाण-कुवलय-हलहरकोसेजा-गास-केस-कज्जलंगी खंजण-सिंगभेद-
रिट्ठय-जंबूफल-असणग-सणबंधण-णीलुप्पलपत्तनिकर-अयसिकुसुम-प्पगासे'
अञ्जन-घन-कृपाण-कुवलय-हलधरकौशेया-काश-केश-कज्जलाङ्गी खञ्जन-शृङ्गभेद-रिष्टक
-जम्बूफला-सनक-शणबन्धन-नीलोत्पलपत्रनिकराऽ-तसी-कुसुम-प्रकाशः, तत्र-अञ्जनः-

प्रदेश में (महं) विशाल (एक्के पुढविसिलापट्टए पणत्ते) एक पृथिवीशिलापट्ट था ।
(विक्खंभा-याम-उस्सेह-सुप्पमाणे) यह लम्बाई, चौड़ाई, एवं ऊंचाई में बराबर
प्रमाणवाला था, हीनाधिक-प्रमाणवाला नहीं था । (किण्हे) वर्ण इसका कृष्ण-श्याम था ।
(अंजण-घण-किवाण-कुवलय-हलहरकोसेजा-गास-केस-कज्जलंगी खंजण-सिंगभेद-
रिट्ठय-जंबूफल-असणग-सणबंधण-णीलुप्पलपत्तनिकर-अयसिकुसुम-प्पगासे) अतः
इसका प्रकाश अंजनवृक्ष, घन-नीलमेघ, कृपाण-तलवार, कुवलय-नीलकमल, हलधरकौशेय-

आगमां (महं) विशाल (एक्के पुढविसिलापट्टए पणत्ते) ओ३ पृथिवीशिला-
पट्ट इतो (विक्खंभा-याम-उस्सेह-सुप्पमाणे) ओ३ लं०आ३ पडो०आ३ तेम० ओ३ आ-
३मां सर०आ३ भापवाणे३ इतो० ओ३ आ३ वधारे३ भापने३ नडोतो० (किण्हे)
वर्ण३ तेने३ कृष्ण३-श्याम (डाणे३) इतो३ (अंजण-घण-किवाण-कुवलय-हलहरकोसे-
ज्जा-गास-केस-कज्जलंगी खंजण-सिंगभेद-रिट्ठय-जंबूफल-असणग-सणबंधण-णीलुप्पल-
पत्तनिकर-अयसिकुसुम-प्पगासे) आ३ तेने३ प्रकाश आ३ ओ३ ओ३ वे३, नीलमेघ,

असणग-सणबन्धन-णीलुत्पलपत्तनिकर-अयसिकुसुम-प्पगासे मर-
गयमसार-कलित्त-णयणकीय-रासिवण्णे णिद्धघणे अट्टसिरे आयं-

अञ्जनकनामको वृक्षः । घनः—नीलजलधरः । कृपाणः—खड्गः, कुवलयं—नीलकमलम्, हलधर-
कौशेयं—बलभद्रकौशेयं—बलदेववस्त्रम् । आकाशं—दूरतया—नीलाऽवभासम् । केशाः—तरुणसम्बद्धा
एव तेषामतिकृष्णत्वात् । कज्जलाङ्गी—कज्जलगृहं यत्र पात्रे कज्जलं स्थाप्यते, कज्जलकूपिका
इति यावत् । खञ्जनः—खञ्जननामा कृष्णपक्षिविशेषः । शृङ्गभेदः—महिषशृङ्गखण्डः । रिष्टकं—नील-
वर्णरत्नं । जम्बूफलम्—अतिपक्वम्—जम्बूफलं नीलतमं भवति । ‘असणग’ असनकः—
बीयकाभिधानो वृक्षविशेषः । ‘शणबन्धनं—शणकुसुमवृन्तम् । नीलोत्पलपत्रनिकरः—
नीलकमलपत्रसमूहः । अतसीकुसुमम् ‘अलसीफूल’ इति भाषाप्रसिद्धं पुष्पम् । अत्र—अञ्जना-
द्यतसीकुसुमान्तानां प्रकाश इव प्रकाशो यस्य स तथा, अञ्जनादिसदृशस्यामवर्णवान्
पृथिवीशिलापट्टक इत्यर्थः । तथा—‘मरगय—मसार—कलित्त—णयणकीय—रासिवण्णे’
मरकत—मसार—कटित्र—नयनकनीनिका—राशिवर्णः । तत्र मरकतः—नीलमणिः पन्ना इति भाषायाम् ।
मसारः—पाषाणस्य चिकणीकरणार्थं शिलाखण्ड एव, अथवा—कषपट्टः—कसौटीति लोके-
ख्यातः, कटित्रं—कृष्णचर्मण एव निर्मितम् । नयनकनीनिका—नेत्रकनीनिका—एतेषां राशिः=
पुञ्जः, तस्य वर्ण इव वर्णो यस्य स तथा, णिद्धघणे’ स्निग्धघनः—सजलमेघ इव

बलदेवका वस्त्र, आकाश, केश—युवापुरुष के बाल, कज्जलाङ्गी—काजल रखने की डिबिया,
खंजनपक्षी, शृंगभेद—महिष के शृंग का टुकड़ा, रिष्टक—नीलवर्ण का रत्न, जम्बूफल—
अतिशय पका हुआ जामुन, असनक—बीयक नामक वृक्षविशेष, सणबन्धन—सनके फूल का
बैट, नीलोत्पलपत्रनिकर—नीलकमल के पत्रों का समूह, और अतसीकुसुम—अलसी का
पुष्प—इन सब के प्रकाश जैसा था । अर्थात् पृथिवीशिलापट्ट अञ्जन से लेकर अलसी
के फूल के समान श्यामवर्ण था । [मरगय—मसार—कलित्त—णयणकीय—रासिवण्णे]

कृपाणु—तलवार, कुवलय—नीलकमल, हलधरकौशेय—बलदेवनांवस्त्र, आकाश, केश—
युवान् पुरुषनावाण, कज्जलाङ्गी—काजल राखवानी डब्बी, खंजन—खंजनपक्षी,
शृंगभेद—भेसना शींगना डटका, रिष्टक—नीलवर्णनां रत्न, जम्बूफल—
अतिशय पाकेल जंभु, असनक—बीयक नामे वृक्षविशेष, सणबन्धन—सनना
कूबोनो जेंट, नीलोत्पलपत्रनिकर—नील कमलनां पाननो समूह अने अतसी-
कुसुम—अलसीनां पुष्प ओ अधांना प्रकाश जेवो डतो. अर्थात् पृथिवी-
शिलापट्ट अंजनथी भांडीने अलसीना कूलना जेवो श्यामवर्णनो डतो.

सयतलोवमे सुरम्मे ईहामिय-उसभ-तुरग-गर-मगर-विहग-बालग-
किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्ति-चित्ते आई-

श्यामः । आकास्तस्य कीदृश इत्याह—‘अट्टसिरे’ अष्टशिरस्कः—अष्टकोण इत्यर्थः । ‘आयं-
सयतलोवमे’ आदर्शतलोपमः—आदर्शतलस्य=दर्पगतलस्योपमा यस्य स तथा । ‘सुरम्मे’ अतीवर-
मणीयः । ‘ईहामिय-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-बालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-
कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्ति-चित्ते’ ईहामृग-वृषभ-तुरग-नर-मकर-विहग-व्यालक-
किन्नर-रुरु-शरभ-चमर-कुञ्जर-वनलता-पद्मलता-भक्ति-चित्रः । तत्र—ईहामृगाः—वृकाः
‘भेडिया’ इति भाषाप्रसिद्धाः । वृषभाः—बलीवर्दाः, तुरगाः—अश्वाः, नराः—मनुष्याः,
मकराः—ग्राहाः, विहगाः—पक्षिणः, व्यालकाः—सर्पाः, किन्नराः—व्यन्तरदेवाः, रुरुवः—
मृगाः, शरभाः—अष्टापदाः, कुञ्जराः—हस्तिनः, वनलताः—प्रसिद्धाः, पद्मलताः—कमललताः,

मरकत-पन्ना, मसार-पत्थर को चिकना करने वाला पत्थर अथवा कसौटी, कटित्र-
कृष्णचमडे की बनी हुई वस्तुविशेष और नयनकीका-नेत्र की कर्नीनिका—इनसब के
पुंज जैसा इसका वर्ण था । (गिद्धघणे) वह सजल-मेघ के समान श्याम था ।
[अट्टसिरे] आठ इसके कोने थे । [आयंसयतलोवमे] इसका तलभाग आदर्श-काच-
दर्पण जैसा चमकीला था । (सुरम्मे) इससे यह देखने में विशेषकर रमणीय लगता था ।
(ईहामिय-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-बालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-
पउमलय-भत्ति-चित्ते) ईहामृग-वृक-भेडिया, वृषभ-बलीवर्द, तुरग-अश्व, नर-मनुष्य,
मकर-ग्राह, विहग-पक्षी, व्यालक-सर्प, किन्नर-व्यन्तरदेव, रुरु-मृग, सरभ-अष्टापद,

(मरगय-मसार-कलित्त-णयणकीय-रासि-वण्णे) मरकत-पन्ना, मसार-पत्थरने चिकण्डा
करवावाणो पत्थर अथवा कसौटी, कटित्र-कृष्ण श्यामडानी अनावेली वस्तु-
विशेष अने नयनकीका-आंभनी कर्नीनिका-अे अधाना पुंज जेवो तेनो वणुं
डतो. (गिद्धघणे) ते सजल मेघना जेवो श्याम डतो. (अट्टसिरे) आठ तेना
भूण्डा डता. (आयंसयतलोवमे) अेनो तजियांनो लाग आदर्श-काच-दर्पण जेवो
चमकीलो डतो. (सुरम्मे) तेथी ते जेवाभां विशेष करीने रमणीय लागतो डतो.
(ईहामिय-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-बालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर - वणलय -
पउमलय-भत्ति-चित्ते) ईहामृग-वृक, वृषभ-अ ग्राह, तुरग-अश्व, नर-मनुष्य, मकर-
ग्राह, विहग-पक्षी, व्यालक-सर्प, किन्नर-व्यन्तरदेव, रुरु-मृग, सरभ-अष्टापद,
चमर, कुंजर-हाथी, वनलता तेमज पद्मलता अे अधानां चित्रो वडे अे सुंदर

णग-रूय-बूर-णवणीय-तूल-फरिसे सीहासणसंठिए पासाईए
दरिसणिजे अभिरूवे पडिरूवे ॥ सू. १० ॥

मूलम्—तत्थ णं चंपाए णयरीए कूणिए णामं राया परिवसइ

ईहामृगादिपद्मलतान्तानां भक्तयः—रचनाविशेषाश्चित्राणि, ताभिश्चित्रः सुन्दरः । ‘आईणग-रूय-बूर-णवणीय-तूल-फरिसे’ आजिनक-रूत-बूर-नवनीत-तूल-स्पर्शः । तत्र आजिनक-चर्ममयवस्त्रम्, रूतं-मृदुकार्पासविशेषः, बूरो-वृक्षविशेषः, नवनीतम्—‘मक्खन’ इति प्रसिद्धम्, तूलम्—अर्कतूलम्, एतेषां स्पर्श इव स्पर्शो यस्य शिलापट्टकस्य स आजिनक-रूत-बूर-नवनीत-तूल-स्पर्शः—अत्यन्तकोमल इत्यर्थः, ‘सीहासणसंठिए’ सिंहासनसंस्थितः सिंहासनाकारः । ‘पासाईए’ प्रासादीयः—हृदयहर्षकः । ‘दरिसणिजे’ दर्शनीयः—नेत्रा-ह्लादजनकः ‘अभिरूवे’ अभिरूपः, ‘पडिरूवे’ प्रतिरूपः ॥ सू. १० ॥

टीका—‘तत्थ णं चंपाए णयरीए’ इत्यादि—तत्र खलु चम्पायां नगर्याम्,

चमर, कुञ्जर—हाथी, वनलता एवं पद्मलता इन सबके चित्रों से यह सुन्दर था । (आई-णग-रूय-बूर-णवणीय-तूल-फरिसे) इसका स्पर्श आजिनक-चर्ममयवस्त्र, रूत-रूई, बूर-वृक्षविशेष, नवनीत-मक्खन और तूल-अर्कतूल इनके स्पर्श के समान था । तात्पर्य यह अत्यन्त कोमल स्पर्शवाला था । (सीहासनसंठिए) इसका आकार सिंहासन जैसा था । [पासाईए दरिसणिजे अभिरूवे पडिरूवे] हृदय को हर्ष देनेवाला, नेत्रोंको आह्लादित करनेवाला, एवं सुन्दर—आकृति संपन्न यह पृथिवीशिलापट्ट अपूर्व शोभा-संपन्न था ॥ सू० १० ॥

‘तत्थ णं चंपाए णयरीए’ इत्यादि,

(तत्थ णं चंपाए णयरीए] उस चंपानगरी में (कूणिए णामं राया)

होता. (आईणग-रूय-बूर-णवणीय-तूल-फरिसे) तेनो स्पर्श आजिनक-चर्ममयवस्त्र, इ-मृदुकापास, बूर-वृक्षविशेष, नवनीत-माषणु अने तूल-अर्कतूल (आकडानुं इ) तेना जेवो હતો. मतલબ કે તે અત્યન્ત કેમળ સ્પર્શવાળો હતો (सीहासनसंठिए) तेनो आकार सिंहासन जेवो હતો. (पासाईए दरिसणिजे अभिरूवे पडिरूवे) હૃદયને હર્ષ પમાડનાર, નેત્રોને આહ્લાદકારક તેમજ સુંદર આકૃતિસંપન્ન આ પૃથિવીશિલાપટ્ટ અપૂર્વ શોભાયુક્ત હતો. (सू. १०)

‘तत्थ णं चंपाए णयरीए’ इत्यादि,

(तत्थ णं चंपाए णयरीए) ते चंपानगरीमां (कूणिए णामं राया) कूण्डिक

महया - हिमवंत-महंतमलय-मंदर-महिंदसारे अचंचंतविसुद्ध-
दीह-रायकुल-वंस-सुप्पसूए णिरंतरं रायलक्खण-विराइयंग-
पच्चंगे बहुजणबहुमाणपूइए सव्वगुणसमिद्धे खत्तिए मुइए मुद्धा-

‘कूणिए णामं राया परिवसइ’ कूणिको नाम राजा परिवसति स्म, कूणिको भूपः
कीदृशः ? इत्याह-‘महयाहिमवंत-महंतमलय-मंदर-महिंदसारे’ महाहिमवन्महाम-
लयमन्दरमहेन्द्रसारः-महाहिमवन्महामलय-मन्दर-महेन्द्राणाम् एतन्नामकशैलानां सारः
=शक्तिरिव सारो यस्य स तथा । ‘अचंचंतविसुद्ध-दीह-रायकुल-वंस-सुप्पसूए’
अत्यन्तविशुद्ध-दीर्घ-राजकुल-वंश-सुप्रसूतः अत्यन्तविशुद्धौ=सर्वातिशायिनिर्मलौ दीर्घौ-
अतिपुरातनौ यौ राज्ञां कुलवंशौ=मातापितृवंशौ तत्र सु-सुष्ठु प्रसूतः=प्रादुर्भूतः-समुत्पन्न
इति यावत्; ‘णिरंतरं’ निरन्तरम्, ‘रायलक्खण-विराइयंगपच्चंगे’ राजलक्षण-
विराजिताङ्गप्रत्यङ्गः-राजलक्षणैः = सामुद्रिकशास्त्रोक्तैर्विराजितमङ्गं=हस्तादिकं प्रत्यङ्गम्=
अङ्गुल्यादिकं यस्य स तथा । ‘बहुजणबहुमाणपूइए’ बहुजनबहुमानपूजितः-
बहुभिर्जनैर्बहुमानैरतिशयसत्कृतः, ‘सव्वगुणसमिद्धे’ सर्वगुणसमृद्धः-सर्वैः=अशेषैः गुणैः=

कूणिक नाम के राजा [परिवसइ] राज्य करते थे । (महया-हिमवंत-महंतमलय-
मंदर-महिंदसारे) यह महाहिमवंत पर्वत, महामलय पर्वत, मेरु पर्वत, और महेन्द्रपर्वत के
तुल्य श्रेष्ठ थे । (अचंचंतविसुद्ध-दीह-रायकुल-वंस-सुप्पसूए) अत्यंत विशुद्ध एवं अति-
प्राचीन मातापिता संबंधी कुल एवं वंशमें इनका जन्म हुआ था । (णिरंतर-रायलक्खण-विरा-
इयंगपच्चंगे) अग्रंडित राजचिह्नों से इनके अंग एवं उपांग मुशोभित थे । (बहुजणबहुमाणपूइए)
अनेकजनों द्वारा ये बहुमानपूर्वक मन्त्रित होते रहते थे । (सव्वगुणसमिद्धे) अनेक
नीति, दया एवं दाक्षिण्यादिक सद्गुणों से समृद्ध थे । (मुइये) ये सदा प्रसन्न-

नामे राजा (परिवसइ) राज्य करता होता । (महया-हिमवंत-महंत-मलय-मंदर-
महिंद-सारे) ये महाहिमवंत पर्वत, महामलय पर्वत, मेरु पर्वत, अने महेन्द्र
पर्वतना जेभ श्रेष्ठ होता । (अचंचंत-विसुद्ध-दीह-रायकुल-वंस-सुप्पसूए) अत्यंत
विशुद्ध तेमज्ज अति प्राचीन मातापिता संबंधी कुल तेमज्ज
वंशमां तेमनो जन्म थये होता । (णिरंतर-राय-लक्खण-विराइयंगपच्चंगे)
अग्रंडित राजचिह्नोधी तेमनां अंग तेमज्ज उपांग मुशोभित होतां । (बहुजण-
बहुमाण-पूइए) अनेक दोडाद्वारा ते बहुमान पूर्वक सत्कार पाभता होता ।
(सव्वगुणसमिद्धे) अनेक नीति तेमज्ज दाक्षिण्य आदि सद्गुणोधी वधारे

हिसित्ते माउपिउसुजाए दयपत्ते सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे
खेमंधरे मणुस्सिदे जणवयपिया जणवयपाले जणवयपुरोहिण

नीतिदयादाक्षिण्यादिभिः समृद्धः=सम्पन्नः, 'मुइये' मुदितः=प्रसन्नः, अथवा 'मुइये' इति निर्दोषमातृकार्थो देशशब्दः। उक्तं च 'मुइये जे होइ जोगिसुद्धे' इति। निर्दोषमातृकः—निर्दोषाया मातुरपत्यं पुमान्। 'खत्तिए' क्षत्रियः—शुद्धक्षत्रियगोत्रोत्पन्नः। 'मुद्धाहिसित्ते' मूर्द्धाभिषिक्तः—सर्वैरपि प्रत्यन्तराजैः प्रतापमसहमानैर्नान्यथा—ऽस्माकं गतिरिति परिभाष्य मूर्द्धभिर्मस्तकैरभिषिक्तः सम्मानितो मूर्द्धाभिषिक्तः। 'माउपिउसुजाए' मातापितृसुजातः—मातृभक्तः पितृनिदेशकारको विनीतश्च 'दयपत्ते' दयाप्राप्तः—निसर्गकारुणिकः। 'सीमंकरे' सीमाकरः—सीमा कुलमर्यादा, तस्याः करः=कारकः। 'सीमंधरे' सीमाधरः=कुलमर्यादाधारकः 'खेमंकरे' क्षेमङ्करः=लब्धवस्तुपालनशीलः। 'खेमंधरे' क्षेमधरः—क्षेमस्य धारकः, लब्धस्य परिपालनं क्षेमः—

चित्त रग करते थे। अथवा निर्दोष माता के ये पुत्र थे। (खत्तिए) शुद्ध क्षत्रिय वंश में ये उत्पन्न हुए थे। (मुद्धाहिसित्ते) उनके प्रबल प्रताप को सहन करने में असमर्थ हो उनके राज्य की चतुर्दिग्वर्ती सीमाओं के राजा लोग उनके चरणों में अपना शिर नमाते थे। (माउपिउसुजाए) यह माताके भक्त एवं पिता की आज्ञा के परमपालक थे। (दयपत्ते सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे) ये स्वभाव से दयालु थे, यह कुलमर्यादा के कारक थे, तथा उसका आराधक भी थे, लब्ध वस्तु के पालक एवं उसके धारक भी थे। अर्थात्—प्रजा—हित के योग्य वस्तुओं को प्राप्त करते थे, और प्राप्त वस्तुओं का रक्षण करते थे, उन पर स्वयं

समृद्ध होता। (मुइये) ते सदा प्रसन्नचित्त रह्या करता होता अथवा निर्दोष माताना ते पुत्र होता। (खत्तिए) शुद्ध क्षत्रियवंशमां ते उत्पन्न थया होता। (मुद्धाहिसित्ते) तेमना प्रबल प्रतापने सहुन करवामां असमर्थ, तेमना राज्यानी आरेआनुनी सीमाओना राजदोडे तेमनां अरण्णोमां पोतानां शिर नभावता होता। (माउपिउसुजाए) ते माताना लकत, तेमज पितानी आज्ञाना परम पालक होता। (दयपत्ते सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे) तेओ स्वभावे दयालु होता। तेओ कुलमर्यादानुं पालन करता कारवता अने तेना आराधक पणु होता। मेणवेदी वस्तुना पालक तेमज तेना धराक पणु होता। अर्थात् प्रजहितने योग्य वस्तुओने प्राप्त करता होता अने प्राप्त

સેઝકરે કેઝકરે ણરપવરે પુરિસવરે પુરિસસીહે પુરિસવઘે પુરિસા-
સીવિસે પુરિસપુંડરીણ પુરિસવરગંધહત્થી અડ્ઢે દિત્તે વિત્તે વિચ્છિણ્ણ-

તસ્ય કારકો ધારકશ્ચેતિભાવઃ । ‘મણુસ્સિંદે’ મનુષ્યેન્દ્રઃ—મનુષ્યેષુ ઇન્દ્ર ઇવ પરમૈ-
શ્વર્યવાન્ । ‘જણવયપિયા’ જનપદપિતા—જનપદસ્ય—જનપદવાસિનાં જનાનાં વિનય-
શિક્ષાપ્રદાનાદ્રક્ષગાત્ ભરણપોષણ—શીલતયા ચ પિતેવ—પિતા । ‘જણવયપાલે’ જન-
પદપાલઃ—જનપદવાસિજીવમાત્રપ્રતિપાલકઃ । ‘જણવયપુરોહિણ’ જનપદપુરોહિતઃ—
જનપદસ્ય=જનપદવાસિનાં જનાનાં શાન્તિકારિતયા પુરોહિત ઇવ પુરોહિતઃ, ‘સેઝકરે’
સેતુકરઃ—માર્ગઃ સેતુઃ મર્યાદાઽપિ સેતુઃ, તદુભયસ્ય કરઃ કર્તેતિ યાવત્ । ‘કેઝકરે’
કેતુકરઃ=ચિહ્નકારકઃ, અદ્ભુતકાર્યકરણાત્; ‘ણરપવરે’ નરપ્રવરઃ—નરાઃ સાધારણાઃ
તેષુ પ્રવરઃ=કોશસૈન્યબલશાલિતયા શ્રેષ્ઠઃ, ‘પુરિસવરે’ પુરુષવરઃ—પુરુષેષુ—પુરુષાર્થ-

દેવ-રેવ રચતે થે । [મણુસ્સિંદે જણવયપિયા જણવયપાલે જણવયપુરોહિણ]
મનુષ્યોં મેં યે ઇન્દ્ર સમાન પરમૈશ્વર્યશાલી થે । જનપદનિવાસિયોં કો વિનય સંબંધી
શિક્ષા કે દાતા હોને સે ઇવં ડનકા અચ્છી તરહ સે રક્ષણ કરને સે તથા ભરણ-
પોષણ કરને સે યે દેશ કે પિતા તુલ્ય થે । ઇસીલિયે યે જનપદપાલક ઇસા વિરુદ્ધ
ધારણ કિયે હુણ થે । ઓર ઇસીલિયે યે પ્રજાજન કે લિયે પુરોહિત—સવસે પહિલે
હિત મેં સાવધાન રહને વાલે થે । [સેઝકરે] યે ડન્માર્ગગામી મનુષ્યોં
કો માર્ગ પર લાતે થે ઓર ડન્હેં મર્યાદા મેં સ્થિર કરતે થે । [કેઝ-
કરે] યે અક્ષત કાર્યોં કે કરને વાલે થે । [ણરપવરે] યે મનુષ્યોં મેં શ્રેષ્ઠ થે,
(પુરિસવરે) ઓર પુરુષોં મેં પ્રધાન થે । “ નર ” ઇસ શબ્દ સે યહાં સાધારણ

વસ્તુઓનું રક્ષણ કરતા હતા. તેમના પર બીજા દેખરેખ રાખતા હતા. (મણુ-
સ્સિંદે જણવયપિયા જણવયપાલે જણવયપુરોહિણ) મનુષ્યોમાં તે ઇન્દ્ર સમાન
પરમ ઐશ્વર્યશાલી હતા. જનપદ નિવાસીઓને વિનય સંબંધી શિક્ષા દેવા
વાળા હોવાથી તેમજ તેમનું સારી રીતે રક્ષણ કરવાથી તથા ભરણપોષણ
કરવાથી તેઓ દેશના પિતા—તુલ્ય હતા. તે માટે જ તેઓ જનપદપાલક એવું
બિરુદ્ધ ધારણ કરતા હતા. અને એટલા માટે જ પ્રજાજનને માટે પુરોહિત—સર્વથી
પહેલા હિતમાં સાવધાન રહેવાવાળા હતા. (સેઝકરે) તેઓ ડન્માર્ગગામી મનુષ્યોને
માર્ગ પર લાવતા હતા અને તેમને મર્યાદામાં સ્થિર કરતા હતા. (કેઝકરે) તેઓ
અદ્ભુત કાર્યો કરનારા હતા. (ણરપવરે) તેઓ મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ હતા. (પુરિસવરે)

चतुष्टयकारकेषु जनेषु परमार्थचिन्तकतयाऽग्रेसरः । ‘पुरिससीहे’ पुरुषसिंहः, पुरुषः सिंह इव, सिंह इव निर्भयो बलवांश्च इत्यर्थः, ‘पुरिसवगे’ पुरुषव्याघ्रः—व्याघ्रसदृशशूर इत्यर्थः, ‘पुरिसासीविसे’ पुरुषाशीविषः—अबन्ध्यकोपत्वाद्भुजङ्गतुल्यः । ‘पुरिसपुंडरीए’ पुरुषपुण्डरीकः—पुरुषः पुण्डरीकमिव=श्वेतकमलमिव मृदुहृदयवत्वात्, जनानां सुखकरत्वाच्च । ‘पुरिसवरगंधहत्थी’ पुरुषवरगन्धहस्ती—विपक्षपक्षमर्दकतया राजा पुरुषवरगन्धहस्ती-त्युच्यते । ‘अड्डे’ आढ्यः—प्रचुरधनस्वामित्वात्, ‘दित्ते’ दत्तः—दर्पवान्—शत्रुविजयकारित्वात्, स्वदेशस्वधर्माभिमतत्वाच्च । ‘वित्ते’ वित्तः—प्रख्यातः, ‘विच्छिण्ण-विउल-भवण-सयणा-सण-जाण-वाहणा-इण्णे’ विस्तीर्ण-विपुल-भवन-शयनाऽऽ-सन-यान-वाहनाकीर्णः,

मनुष्यों का ग्रहण हुआ है । उनमें श्रेष्ठ ये इसलिये थे कि ये कोश एवं सैन्यबल आदि से समृद्ध थे । पुरुष शब्द से चारों पुरुषार्थों को साधन करनेवाले मनुष्य—विशेष का ग्रहण हुआ है, उनमें ये प्रधान इसलिये थे कि ये परमार्थ के चिन्तक थे । (पुरिससीहे पुरिसवगे पुरिसासीविसे पुरिसपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्डे दित्ते वित्ते विच्छिण्ण-विउल-भवण-सयणा-सण-जाण-वाहणा-इण्णे) पुरुषसिंह ये इसलिये थे कि पुरुषों में ये सिंह के समान निर्भय एवं बलिष्ठ थे । पुरुषव्याघ्र ये इसलिये थे कि ये पुरुषों में व्याघ्र के समान शूर थे । पुरुषाशीविष ये इसलिये थे कि ये पुरुषों में सर्प के समान अबन्ध्यकोपवाले थे । पुरुषों में पुंडरीक तुल्य ये

अने पुरुषोभां प्रधान-मुज्जु हुता. ‘नर’ आ शब्दथी अड्डीं साधारण मनुष्योना अर्थ लेवाय छे. तेमनामां श्रेष्ठ तेओ अटला भाटे हुता के तेओ कोश तेमज सैन्यबल आदिथी समृद्ध हुता. ‘पुरुष’ शब्दथी आरे पुरुषार्थोने साधन करवावाणा मनुष्य विशेषनो अर्थ अड्डणु कराये छे. तेमनामां तेओ प्रधान (मुज्जु) अटला भाटे हुता के तेओ परमार्थना चिन्तक हुता. (पुरिससीहे पुरिसवगे पुरिसासीविसे पुरिसपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्डे दित्ते वित्ते विच्छिण्ण-विउल-भवण-सयणा-सण-जाण-वाहणा-इण्णे) पुरुषसिंह तेओ अटला भाटे हुता के पुरुषोभां तेओ सिंहुना जेवा निर्भय तेमज बलिष्ठ हुता. पुरुषव्याघ्र तेओ अटला भाटे कडेवाता के तेओ पुरुषोभां वाघना जेवा शूरां हुता. पुरुषाशीविष अटला भाटे हुता के पुरुषोभां तेओ सर्पना जेवा सक्ष-कोपवाणा हुता. पुरुषोभां पुंडरीक तुल्य तेओ अभाटे हुता के तेमनुं हृदय गरीओ प्रति ह्यार्द्र-कोमल हुतुं, तेमज साधा.

**વિઊલ-ભવણ-સયણા-સણ-જાણ-વાહણાઇણે બહુધણ-બહુ-
જાયરૂવરયણ આઓગપઓગસંપઁત્તે વિચ્છઙ્ગિય-પઁરભત્તપાણે**

વિસ્તીર્ણાનિ=વિસ્તારમુપગતાનિ, વિપુલાનિ=પ્રચુરાગિ, ભવનાનિ=ગૃહાઃ, શયનાનિ=શય્યાઃ, આસ-
નાનિ, યાનાનિ=રથાઃ, વાહનાનિ=અશ્વાદયઃ, તૈરાકીર્ણઃ=પરિપૂર્ણઃ, ‘બહુધણબહુજાયરૂવરયણ’
બહુધાન્યબહુજાતરૂપરજતઃ-બહૂનિ ધાન્યાનિ યસ્ય સ બહુધાન્યઃ, બહૂનિ જાતરૂપરજતાનિ-
જાતરૂપાણિ=સુવર્ગાનિ રજતાનિ=રૂપ્યાણિ ચ યસ્ય સ બહુજાતરૂપરજતઃ, બહુધાન્ય-
શ્રાસૌ બહુજાતરૂપરજતશ્ચેતિ તથા, બહુધાન્યબહુસુવર્ણરજત-પરિપૂર્ણ ઇત્યર્થઃ ।
‘ આઓગ-પઓગ-સંપઁત્તે ’ આયોગ-પ્રયોગસમ્પ્રયુક્તઃ-આયોગો=ધનલાભઃ, તસ્ય
પ્રયોગો=વ્યવહારઃ, તત્ર સમ્પ્રયુક્તો=વ્યાપ્તઃ-કૃતોદયમ ઇત્યર્થઃ । ‘ વિચ્છઙ્ગિયપઁર-

ઇસલિયે થે કિ ઇનકા હૃદય ગરીબોં કે પ્રતિ દયાર્દ્ર-કોમલ થા, ંવં સાધારણ સે મી
સાધારણ મનુષ્ય કે લિયે ંયે સુઁવકારી થે । પુરુષોં મેં ઉત્તમ ગંધહસ્તી કે તુલ્ય ંયે
ઇસલિયે થે કિ ંયે શત્રુઓં કે મર્દક થે । પ્રચુર ધનકા સ્વામી હોને સે ંયે આઢય
થે । શત્રુઓં કે જીતનેવાલે હોને સે ંયે દુઃસ થે । સ્વદેશ ંવં સ્વધર્મ કા પાલક હોને
સે ંયે વિત્ત-પ્રખ્યાત થે । ઇનકે અનેક વિસ્તૃત પ્રાસાદ થે । બહુત અધિક અનેક
પ્રકાર કે શય્યા, આસન, યાન ંરે વાહન ઇનકે પાસ થે । [બહુધણ-બહુજાયરૂવરયણ]
ઇનકા કોઠાગાર શાલિ ગોધૂમાદિ ધાન્યોં સે ભરા રહતા થા । તથા-ઇનકા
મળ્ડાર સોને ચાન્દી સે સદા ભરા રહતા થા । [આઓગપઓગસંપઁત્તે]
ધનકે લાભકે વ્યવહાર મેં ંયે સદા ઉદયમશીલ રહેતે થે । (વિચ્છઙ્ગિય-પઁર-ભત્ત-પાણે)

રણુમાં પણ સાધારણ મનુષ્યને માટે તેઓ સુખદાતા હતા. પુરૂષોમાં ઉત્તમ
ગંધહસ્તીના જેવા તેઓ ંયે માટે હતા કે તેઓ શત્રુઓને મર્દન કરનારા
હતા. ઘણા ધનના સ્વામી હોવાથી તેઓ આઢય હતા. શત્રુઓને જીતવા-
વાળા હોવાથી તેઓ દુઃસ હતા. સ્વદેશ તેમજ સ્વધર્મના પાલક હોવાથી
તેઓ વિત્ત-પ્રખ્યાત હતા. તેમના અનેક મોટા મોટા મહેલો હતા. બહુજ
વધારે અનેક પ્રકારની શય્યા, આસન, યાન (રથ) અને વાહનો તેમની પાસે
હતાં. (બહુધણ-બહુજાયરૂવ-રયણ) તેમનો કોઠાગાર (કોઠાર) શાલિ ગોધૂમ
આદિ ધાન્યોથી ભરેલો રહેતો હતો તથા તેમનો ભંડાર સોનાં ચાંદીથી સદા
ભરપૂર રહેતો હતો. (આઓગ-પઓગ-સંપઁત્તે) ધનના લાભના વ્યવહારમાં તેઓ
હમેશા ઉદયમશીલ રહેતા હતા. (વિચ્છઙ્ગિય-પઁર-ભત્ત-પાણે) તેમના રસોડામાં

बहु-दासी-दास-गो-महिस-गवेलगप्पभूए पडिपुण्ण-जंत-कोस-
कोट्टागारा-उधागारे बलवं दुब्बलपच्चामित्ते ओहयकंटयं निहय-

भक्तपाणे ' विच्छर्दितप्रचुरभक्तपानः—विच्छर्दिते=दत्ते प्रचुरे=बहुले भक्तपाने=आहार-
पानीये येन स तथा, वितीर्णबहुतरान्नजल इत्यर्थः । ' बहु-दासी-दास-गो-महिस-
गवेलगप्पभूए ' बहु-दासी-दास-गो-महिष-गवेलकप्रभूतः—बहवो दास्यो दासा गावो
महिष्यो गवेलकाः=मेषाश्च, तैः प्रभूतः=सुवृद्धिमुपगतः । ' पडिपुण्ण-जंत-कोस-कोट्टा-
गारा-उधागारे' प्रतिपूर्ण-यन्त्र-कोश-कोष्ठागारा-SS-युधाSSगारः, तत्र-यन्त्रं-शिल्पादि-
साधनरूपं-जलयन्त्रादिकं प्रस्तरप्रक्षेपणादिरूपं च, कोशो-दीनार-रत्नादिभाण्डागारम्,
कोष्ठागारं-धान्यगृहम्, आयुधागारं=विविधशस्त्रास्त्रगृहं च प्रतिपूर्ण यस्य स तथा ।
'बलवं' बलवान् — तनुबल-धनबल-सैन्यबलसम्पन्नः । ' दुब्बलपच्चामित्ते ' दुर्बल-

इनके रसोई घर में इतना भक्तपान बनता था, कि सबके भोजन कर लेने पर
भी बहुतसा बच जाता था, जो गरीबों को दे दिया जाता था । (बहु-दासी-दास-गो-
महिस-गवेलग-प्पभूए) इनकी सेवा के लिये बहुत से दासी दास इनके पास सर्वदा
रहते थे । और इनकी पशुशाला में गाय, भैंस तथा मेंढोंका झुण्डका झुण्ड
रहता था । (पडिपुण्ण-जंत-कोस-कोट्टागारा-उधागारे) उनका यन्त्रागार यन्त्रों से-शिल्प
के साधनों से, फुहारा के साधनों से, तथा पत्थर फेंकने के साधनों से परिपूर्ण था,
इनका कोश सुवर्णमुद्रा रत्न आदि से भरा रहता था, अनेक प्रकार के धान्यों से
इनका कोष्ठागार परिपूर्ण था, तथा इनका शस्त्रागार अनेक प्रकारों के अस्त्रशस्त्रों
से सदा भरा रहता था । (बलवं) ये राजा विशेष बलवान् थे, अर्थात् तनुबल

એટલી તો રસોઈ બનતી હતી કે બધાં ભોજન કરી લીધા પછી પણ ઘણીએ
રસોઈ વધી પડતી હતી કે જે ગરીબોને આપી દેવામાં આવતી. (બહુ-દાસી-
દાસ-ગો-મહિસ-ગવેલગ-પ્પભૂએ) તેમની સેવા માટે ઘણા દાસીદાસ તેમની પાસે
સર્વદા રહ્યા કરતા હતા. તેમની પશુશાલામાં ગાય ભેંસ તથા ઘેંટાનાં
ટોળાનાં ટોળાં રહેતાં હતાં. (પડિપુણ્ણ-જંત-કોસ-કોષ્ઠાગારા-ઉધાગારે) તેમના યંત્રા-
ગાર યંત્રોથી-શિલ્પનાં સાધનોથી, કુવારાનાં સાધનોથી, તથા પત્થર ફેંકવાના
સાધનોથી પરિપૂર્ણ હતા. તેમનો બજનો સોનાના સિક્કા રત્નો આદિથી
ભરપૂર રહેતો હતો. અનેક પ્રકારનાં ધાન્યોથી તેમનો કોઠાર પરિપૂર્ણ હતો
તથા તેમનું શસ્ત્રાગાર અનેક પ્રકારનાં અસ્ત્રશસ્ત્રોથી સદા ભરેલું રહેતું

કંટયં મલિકંટયં ઉદ્વિયકંટયં અકંટયં ઓહયસત્તું નિહયસત્તું

પ્રત્યમિત્રઃ—દુર્બલાઃ=બલહીનાઃ પ્રત્યમિત્રાઃ=શત્રવો यस્ય સ દુર્બલપ્રત્યમિત્રઃ । અતઃ પરં સર્વાણિ વિશેષાણિ રાજ્યસ્ય, પ્રશાસદિતિ ક્રિયાયા વા સન્તિ, તસ્માદ્ વિશેષાણાં નપુંસકત્વં દ્વિતીયૈકવચનાન્તત્વં ચ । ‘ઓહયકંટયં’ ઉપહતકણ્ટકમ્—ઉપહતાઃ=સંપત્તિહરણાદિભિઃ ઉપઘાતં પ્રાપ્તાઃ કણ્ટકાઃ=કણ્ટકવત્ અન્તઃપ્રવિષ્ટતયા વેદનાપ્રદાઃ તસ્કરાદયો યસ્મિન્ રાજ્યે, શાસને વા, તત્ તથા । ‘નિહયકંટયં’ નિહતકણ્ટકમ્—નિહતાઃ=બંધનાદિભિર્દણં પ્રાપ્તાઃ કણ્ટકાઃ યત્ર તત્ ‘મલિકંટયં’ મલિતકણ્ટકમ્—મલિતાઃ=પ્રહારાદિભિર્મથિતા કણ્ટકાઃ યત્ર તત્ । ‘ઉદ્વિયકંટયં’ ઉદ્વૃતકણ્ટકમ્—ઉદ્વૃતાઃ=નિજજનપદાદ્બહિષ્કૃતાઃ કણ્ટકા યત્ર તત્ તથા । ‘અકંટયં’ અકણ્ટકમ્—

ધનબલ એવં મૈન્યબલ સે સંપન્ન થે । (દુબ્બલપચ્ચામિત્તે) इनके जितने भी वैरी थे वे सब दुर्बल-बलहीन थे । राज्य भी इनका (ओहयकंटयं निहयकंटयं मलिकंटयं उद्विजकंटयं) उपहतकंटक—भीतरप्रविष्ट होकर चुभनेवाले कांटोंकी तरह प्रजाको पीड़ित करनेवाले तस्कर आदिकों से सर्वथा रहित था । निहतकंटक इसलिये कि जितने भी राज्य में चोर आदि थे वे सब बंधनद्वारा बद्धकर कारावास में बन्द कर दिये गये थे । मलितकंटक इसलिये था कि राज्य में जो भी चोर आदि थे वे सब प्रहारों द्वारा मथित कर दिये गये थे । उद्धृतकंटक इसलिये था कि राज्य के समस्त चोर आदि अपने जनपद से बाहर कर दिये गये थे । इसप्रकार इनका राज्य (अकंटयं)

હતું. (બલવં) આ રાજ્ય વિશેષ બળવાન હતા અર્થાત્ તનુબલ (શારીરિક બળ) ધનબલ તેમજ સૈન્યબલથી સંપન્ન હતા. (દુબ્બલપચ્ચામિત્તે) તેમના જેટલા વેરી હતા તેઓ બધા દુર્બલ-બલહીન હતા. તેમનું રાજ્ય પણ (ઓહયકંટયં નિહયકંટયં મલિકંટયં ઉદ્વિયકંટયં) ઉપહતકંટક-અંદરમાં જતો રહી હુખ્યા કરે તેવા કાંટાના જેવા પ્રબળને દુઃખ-પીડા કરનાર તસ્કર આદિકોથી સર્વથા રહિત હતું. નિહતકંટક—એટલા માટે કે રાજ્યમાં જે કોઈ ચોર આદિ હતા તેઓ બધાને બંધનથી બાંધીને કારાવાસમાં પુરી મુકેલા હતા. મલિતકંટક એટલા માટે હતું કે રાજ્યમાં જે કોઈ ચોર આદિ હતા તેઓ બધાને પ્રહારોથી મથિત કરવામાં (મારવામાં) આવ્યા હતા. ઉદ્વૃતકંટક એટલા માટે હતું કે રાજ્યના તમામ ચોર આદિને પોતાનાં દેશથી બહાર કરી દેવામાં આવ્યા હતા. આ પ્રકારે તેમનું રાજ્ય (અકંટયં) એ ઉપાયો દ્વારા તસ્કર આદિ કાંટાઓને કાઢીને સર્વથા નિષ્કંટક

मलियसत्तुं उद्धियसत्तुं निज्जियसत्तुं पराइयसत्तुं ववगयदुब्भिव्वं
मारिभयविप्पमुक्कं खेमं सिवं सुभिव्वं पसांतडिंबडमरं रज्जं
पसासेमाणे विहरइ ॥ सू. ११ ॥

प्रबलप्रतापभयाद् अविद्यमानाः कण्टकाः, यद्वा उपघात-निहनन-मलनोद्धारणक्रियाभि-
निर्मूलीकृताः कण्टका यस्मिन् तत्तथा । ‘ओहयसत्तुं’ उपहतशत्रु-उपहताः=वंपत्ति-
हरणादिभिरुपघातं प्राप्ताः शत्रवो यत्र तत् उपहतशत्रु राज्यं शासनं वा; ‘निहयसत्तुं’
निहतशत्रु निहताः=बन्धादिभिर्दण्डं प्राप्ताः शत्रवो यत्र तत्तथा, ‘मलियसत्तुं’ मलितशत्रु-
प्रहारादिभिर्मलिताः=मथिताः शत्रवो यत्र तत्तथा, ‘उद्धियसत्तुं’ उद्धृतशत्रु-स्वदेश-
बहिष्कृतशत्रु । ‘निज्जियसत्तुं’ निर्जितशत्रु-तत्सैन्यसंहारादिभिः परिभूतशत्रु ।
‘पराइयसत्तुं’ पराजितशत्रु-पराजिताः शत्रवो यत्र तत्तथा, वशीकृतशत्रु इत्यर्थः ।
‘ववगयदुब्भिव्वं’ व्यपगतदुर्भिक्षम्-दुर्लभा भिक्षादुर्भिक्षा, व्यपगता-दुर्भिक्षा यस्मात्
तद् व्यपगतदुर्भिक्षं भिक्षादौर्लभ्यरहितमित्यर्थः, ‘मारिभयविप्पमुक्कं’ मारीभयविप्रमुक्तम्=
मरकीभयरहितम् । ‘खेमं’ क्षेमम्-क्षेमयुक्तं सकुशलम्, ‘सिवं’ शिवं-निरुपद्रवम् ।
‘सुभिव्वं’ सुभिक्षं-सुलभा भिक्षा यत्र तत्तथा । ‘पसांतडिंबडमरं’ प्रशान्त-

इन उपायों द्वारा तस्कर आदि कांटों से रहित होकर सर्वथा अकंटक बना हुआ था ।
(ओहयसत्तुं निहयसत्तुं मलियसत्तुं उद्धियसत्तुं निज्जियसत्तुं पराइयसत्तुं) इसी प्रकार
इनका राज्य उपहतशत्रु, निहतशत्रु, मथितशत्रु, उद्धृतशत्रु, निर्जितशत्रु एवं पराजितशत्रु
था । [ववगयदुब्भिव्वं मारिभयविप्पमुक्कं] इनके राज्य में भिक्षुकों को भिक्षा
की दुर्लभता नहीं थी । मरकी का भयतक भी जनता को पीड़ित नहीं करता
था । अतः राज्य में सर्वत्र (क्षेमं) कुशलता का सद्भाव था । (सिवं) यहां
की जनता में कुशलता छाने का एक कारण यह भी था कि यहां किसी भी

अन्युं इतुं. (ओहयसत्तुं निहयसत्तुं मलियसत्तुं उद्धियसत्तुं निज्जियसत्तुं पराइय-
सत्तुं) अे प्रकारे अे तेनुं राज्य उपहतशत्रु, निहतशत्रु, मथितशत्रु, उद्धृत-
शत्रु, निर्जितशत्रु तेम अे पराजितशत्रु इतुं. (ववगयदुब्भिव्वं मारिभयविप्प-
मुक्कं) तेना राज्यमां भिक्षुकेने भिक्षा भणवी दुर्लभ नहोती. मरकीनेो लय
पणु प्रणने दुःख आपतो नहि. आम राज्यमां सर्वत्र (क्षेमं) कुशलतानेो
सद्भाव इतो. (सिवं) अहीनी प्रणमां कुशलता छवाई अवानुं अेक कारण
अे पणु इतुं के अहीं कोअपणु प्रकारनेो उपद्रव नहोतो. उपद्रवनेो अभाव

मूलम्—तस्स णं कोणियस्स रत्तो धारिणी णामं
देवी होत्था, सुकुमालपाणिपाया अहीण-पडिपुण्ण-पंचिंदियस-

डिम्बडमरम्—विघ्नकलहाभ्यां रहितम्, एवं यथा स्यात्तथा, एवंभूतं वा 'रज्जं'
राज्यं—'पसासेमाणे' प्रशासत्—पालयन् 'विहरइ' विहरति=तिष्ठति ॥ सू. ११ ॥

टीका—तस्स णं कोणियस्स रत्तो' तस्य खलु कोणिकस्य राज्ञः
'धारिणी णामं देवी होत्था' धारिणी नाम देवी=राज्ञी आसीत्, सा धारिणी
राज्ञी कीदृशी? अत्रोच्यते—'सुकुमालपाणिपाया' सुकुमारपाणिपादा—पाणी च पादौ च
पाणिपादम्, प्राण्यङ्गत्वादेकवद्भावः, ततः सुकुमारं=कोमलं पाणिपादं यस्याः सा तथा,
सुकोमलकरचरणा । 'अहीण-पडिपुण्ण-पंचिंदिय-सरीरा' अहीन-परिपूर्ण-पञ्चेन्द्रिय-शरीरा-
लक्षणतोऽहीनानि=सम्पूर्णलक्षणानि, स्वरूपतः परिपूर्णानि=नातिह्रस्वानि नातिदीर्घाणि

प्रकार का उपद्रव नहीं था । उपद्रव का अभाव भी इसलिये था कि (सुभिक्षं)
इसमें लोगों को खाद्यसामग्री सुलभ थी । (पसांतडिंबडमरं) विघ्न और कलहका
यहाँ नाम भी नहीं था । इस प्रकार, अथवा ऐसे [रज्जं पसासेमाणे विहरइ]
राज्य का पालन करते हुए कोणिक राजा राज्य करते थे ॥ सू० ११ ॥

‘तस्स णं कोणियस्स रत्तो’ इत्यादि,

(तस्स णं कोणियस्स रत्तो) उस कोणिक राजा की (धारिणी णामं)
धारिणी नाम की (देवी) रानी (होत्था) थी । (सुकुमालपाणिपाया) इसके
हाथ और पैर दोनों ही बड़े सुकुमार थे । (अहीण-पडिपुण्ण-पंचिंदिय-सरीरा)
इसका शरीर लक्षणसे अहीन एवं स्वरूप से परिपूर्ण—न अतिह्रस्व और न अति-

पण्य એટલા માટે હતો કે (સુભિક્ષ) તેમાં લોકોને ખાવાની સામગ્રી સુલભ
હતી. (પસાંતડિંબડમરં) વિઘ્ન અને કલહ (કળ્યા)નું નામ નિશાન જ
નહોતું. આ પ્રકારે અથવા—એવાં (રજ્જં પસામેમાણે વિહરइ) રાજ્યનું પાલન
કરતા થકા કેણિક રાજા રાજ્ય કરતા હતા. (સૂ. ૧૧)

“તસ્સ णं कोणियस्स रत्तो” इत्यादि.

(तस्स णं कोणियस्स रत्तो) ते केणिक राज्ञी (धारिणी णामं) धारिणी-नामनी
(देवी) राणी (होत्था) હતી. (सुकुमाल-पाणि-पाया) तेना हाथ અને પગ બન્નેય બહુ
સુકુમાર (કોમળ) હતા (અહીં-પડિપુણ્ણ-પંચિંદિય-સરીરા) તેનું શરીર
લક્ષણોથી અહીંન તેમ જ સ્વરૂપથી પરિપૂર્ણ—બહુ નાનું નહિ તેમ બહુ મોટું

रीरा लक्खण-वंजण-गुणोववेया माणु-म्माण-प्पमाण-पडिपुण्ण-
सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगी ससि-सोमाकार-कंत-पिय-दंसणा सुरूवा

नातिपीनानि नातिकृशानि पञ्च इन्द्रियाणि यत्र तदहीनपरिपूर्णपञ्चेन्द्रियं, तादृशं शरीरं
यस्याः सा अहीनपरिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरा—न्यूनाधिकवैकल्यादिदोषरहितलक्षणसहित—
पञ्चेन्द्रियपूर्णसुन्दरशरीरा इति यावत् । ‘लक्खण-वंजण-गुणोववेया’ लक्षण—व्यञ्जन-
गुणोपपेता, तत्र—लक्षणानि=चिह्नानि हस्तरेखादिरूपाणि स्वस्तिकादीनि, व्यञ्जनानि=मशति-
लादीनि, तान्येव गुणाः=प्रशस्तरूपाः तैरुपपेता=सुसम्पन्ना । ‘माणु-म्माण-प्पमाण-
पडिपुण्ण-सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगी’ मानोन्मान-प्रमाण-प्रतिपूर्ण-सुजात-सर्वाङ्ग-सुन्दराङ्गी,
मानं=जलादिपरिपूर्णकुण्डादिप्रविष्टे पुरुषादौ यदा द्रोणपरिमितं जलादि निस्सरति तदा
स पुरुषादिर्मानवानुच्यते, तस्य शरीरावगाहनाविशेषो मानमत्र गृह्यते । उन्मानम्=
ऊर्ध्वमानं यत् तुलायामारोप्य तोलनेऽर्धभारप्रमाणं भवति तत् । प्रमाणं=निजाङ्गुलीभिर-
ष्टोत्तशताङ्गुलिपरिमितोच्छ्रायः, मानं च उन्मानं च प्रमाणं चेति मानोन्मानप्रमाणानि,
तैः प्रतिपूर्णानि=संपन्नानि, अत एव सुजातानि=यथोचितावयवसंनिवेशयुक्तानि, सर्वाणि=
सकृदानी, अङ्गानि=मस्तकादारभ्य चरणान्तानि यस्मिंस्तत् तादृशम्—अत एव सुन्दर-

दीर्घ और पांचों इन्द्रियों से परिपूर्ण था । (लक्खण-वंजण-गुणोववेया) लक्षण-
हस्तरेखादिकरूप एवं व्यंजन-मसतिल आदिरूप चिह्नों से यह सुसंपन्न थी । (माणु-
म्माण-प्पमाण-पडिपुण्ण-सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगी) मान, उन्मान एवं प्रमाण से
परिपूर्ण होने के कारण यथोचित अवयवों की रचना से इसके मस्तक से लेकर
चरणतक के समस्त अंग एवं उपांग बड़े ही सुहावने थे, अतः इसका शरीर सर्वांग-
सुन्दर था । (ससि-सोमाकार-कंत-पियदंसणा) चंद्रमा के तुल्य इसका स्वरूप

કે લાંબું ટુંકું નહિ તેવું અને પાંચેય ઇન્દ્રિયોથી પરિપૂર્ણ હતું (લક્ષણ-
વંજણ-ગુણોવવેયા) લક્ષણ-હસ્ત રેખાદિકરૂપ તેમ જ વ્યંજન-મસા તલ આદિ
રૂપ ચિહ્નોથી તે સુસંપન્ન હતી. (માણુ-મ્માણ-પ્પમાણ-પડિપુણ્ણ-સુજાય-સવ્વંગ-
સુંદરંગી) માન, ઉન્માન તેમ જ પ્રમાણથી પરિપૂર્ણ હોવાના કારણે યથો-
ચિત અવયવોની રચનાથી તેના માથાથી લઈને પગ સુધીનાં સમસ્ત અંગ
તેમ જ ઉપાંગો ઘણાં જ સુંદર હતાં તેથી તેનું શરીર સર્વાંગ-સુંદર હતું.
(સસિ-સોમાકાર-કંત-પિયદંસણા) ચંદ્રમા સમાન તેનું સ્વરૂપ હોવાથી તે

करयल-परिमिय-पसत्थ-तिवली-वलियमज्झा कुंडलु-ल्लिहिय-गंड-
लेहा कोमुइय-रयणियर-विमल-पडिपुण्ण-सोमवयणा सिंगारागार-

मङ्गं=वपुर्यस्याः सा तथोक्ता 'ससि-सोमाकार-कंत-पिय-दंसणा' शशि-सौम्याकार-
कान्त-प्रियदर्शना, शशीव=चन्द्र इव सौम्यः=सुन्दरः आकारः=स्वरूपं यस्याः सा तथा,
कान्ता=कमनीया-मनोहरा, प्रियं=हृदयाह्लादकं दर्शनं यस्याः सा तथा । ततः पदत्र-
यस्य कर्मधारयः । 'सुरूवा' सुरूपा-शोभनं रूपं यस्याः सा तथा । 'करयल-परि-
मिय-पसत्थ-तिवली-वलिय-मज्झा' करतल-परिमित-प्रशस्त-त्रिवली-वलित-
मध्या-करतलेन परिमितः=प्रमाणितः-मुष्टिग्राह्य इत्यर्थः, स चासौ प्रशस्तः=शुभः, त्रिवली-
वलितः=उदरोपरि वर्तमाना त्रिरेखा त्रिवलिस्तया वलितो=युक्तो मध्यो=मध्यभागा
यस्याः सा तथा । 'कुंडलु-ल्लिहिय-गंडलेहा' कुण्डलो-ल्लिखित-गण्डलेखा, कुण्ड-
लाभ्यामुल्लिखिता=घृष्टा गण्डलेखा=कपोलमण्डले रचिता पत्रावली यस्याः सा तथोक्ता,
'कोमुइय-रयणियर-विमल-पडिपुण्ण-सोमवयणा' कौमुदित-रजनीकर-विमल-परिपूर्ण-
सौम्यवदना, कौमुदितः शरच्चन्द्रिकासहितो यो रजनीकरः=पूर्णचन्द्रस्तद्वद् विमलं

होने से यह देखनेवालों के लिये बड़ी ही कान्त-मनोहर लगती थी, इसलिये इसका
दर्शन हृदय का आह्लादक होता था । (सुरूवा) और यही कारण था कि
जिसकी वजह से यह सुरूपा थी । (करयल-परिमिय-पसत्थ-तिवली-वलियमज्झा)
इसका मध्यभाग-कटिप्रदेश करतलपरिमित अर्थात् मूठी में आसके इतना पतला था,
प्रशस्त था, तथा इसका उदर त्रिवलीयुक्त था । (कुंडलु-ल्लिहिय-गंडलेहा कोमु-
इय-रयणियर-विमल-पडिपुण्ण-सोमवयणा) इसके कपोलमंडल पर जो पत्रावली
रचित थी वह कानों में पहिरे हुए दोनों कुण्डलों से उल्लिखित-घृष्ट होती रहती थी ।
इसका जो सौम्यवदन-सुन्दर मुख था वह चन्द्रिका से समन्वित रजनीकर अर्थात्

जेनाराओ भाटे घण्णीज कांत-मनोहर लागती હતી. તેથી તેનું દર્શન હૃદયને
આહ્લાદક થતું હતું. (સુરૂવા) અને એજ કારણથી તે સુરૂપા હતી.
(કરયલ-પરિમિય-પસત્થ-તિવલી-વલિયમજ્ઞા) તેનો મધ્યભાગ-કટિપ્રદેશ કરતલ-
પરિમિત એટલે મુઠ્ઠીમાં સમાઈ શકે એવો પાતળો હતો, પ્રશસ્ત હતો તથા
પેટ ત્રિવલી (ત્રણ વલી) વાળું હતું. (કુંડલુ-લ્લિહિય-ગંડલેહા કોમુ-
ઇય-રયણિયર-વિમલ-પડિપુણ્ણ-સોમવયણા) તેના કપોલમંડલ (એ ગાલ) પર જે પત્રાવલી
(શોભા વધારવા બનાવેલ રચના) બનાવેલી હતી તે તેના કાનમાં પહેરેલાં
બન્ને કુંડલોથી ઘસાતી હતી. તેનું જે સૌમ્ય વદન-મુખ હતું તે ચંદ્રિકાથી

चारुवेसा संगय-गय-हसिय-भणिय-विहिय-विलास-सललिय-संलाव-
-णिउण-जुत्तोवयार-कुसला सुंदर-घण-जघण-वयण-कर-चरण-

परिपूर्ण सौम्यं वदनं मुखं यस्याः सा तथा । 'सिंगारागारचारुवेसा' शृङ्गाराऽऽगार-
चारुवेसा, शृङ्गारस्य=शृङ्गाररसस्य अगारमिव=गृहमिव चारुः=शोभनो वेषो=नेपथ्यं-
वस्त्रादिरचना यस्याः सा तथा । 'संगय-गय-हसिय-भणिय-विहिय-विलास-
सललिय-संलाव-णिउण-जुत्तोवयार-कुसला'-सङ्गत-गत-हसित-भणित-विहित-
विलास-सललित-संलाप-निपुण-युक्तोपचार-कुशला, संगतेषु=समुचितेषु गत-हसित-
भणित-विहित-विलास-सललित-संलापेषु निपुणा, तत्र-गतं=गमनं गजहंसादिवत्,
हसितं=स्मितं, भणितं=वचनं कोकिलवीणादिस्वरेण च युक्तं, विहितं=चेष्टितं,
विलासो=नेत्रचेष्टा, सललितसंलापः=वक्रोक्त्याद्यलङ्कारेण सहितं परस्परभाषणं, तेषु
निपुणा=चतुरेत्यर्थः, तथा-युक्तोपचारेषु=सद्व्यवहारेषु कुशला=दक्षेत्यर्थः, ततः पदद्वय-

चन्द्रमा के समान बिलकुल विमल था । [सिंगारागारचारुवेसा] इसका नेपथ्य
अर्थात् वेष शृङ्गार का घर था । [संगय-गय-हसिय-भणिय-विहिय-विलास-
सललिय-संलाव-णिउण-जुत्तोवयार-कुसला] इसकी गति गज एवं हंसादिकों की
गति जैसी मनोमुग्धकारी थी, इसका स्मित बहुत सुन्दर था, एवं इसका भाषण
कोकिल और वीणा आदि के स्वर जैसा कर्णप्रिय था, इसकी चेष्टाएँ और विलास अति
मनोहर थे, तथा सललितसंलाप-परस्परसंभाषण वक्रोक्ति आदि अलंकारों से युक्त था ।
मतलब कहने का यह है कि यह इन गमनादिक क्रियाओं में विशेष चतुर थी ।
साथ २ योग्य सद्व्यवहारों में भी यह कुशल थी । [सुंदर-घण-जघण-वयण-

शोभता चन्द्रमा समान बिलकुल निर्मल હતું. [सिંગारा-गार-
चारुवेसा] તેનો નેપથ્ય અર્થાત્ વેષ બાણે શશુગારનું' ઘર હતું. (સંગય-
ગય-હસિય-ભણિય-વિહિય-વિલાસ-સલલિય-સંલાવ-ણિઉણ-જુત્તોવયાર - કુસલા) તેની
ચાલ ગજ (હાથી) તેમ જ હંસ આદિકોની ગતિ જેવી મનોમુગ્ધકારી
હતી. તેનું સ્મિત (હસવું) અતિ સુંદર હતું. તેની બોલી કોયલ અને વીણા
આદિના સ્વર જેવાં કર્ણપ્રિય હતાં. તેની ચેષ્ટાઓ અને વિલાસ અતિ
મનોહર હતા. તથા સલલિતસંલાપ-પરસ્પર સંભાષણ-વક્રોક્તિ આદિ અલં-
કારોવાળાં હતાં. કહેવાનો મતલબ એ છે કે તે ગમન (ચાલ) આદિક ક્રિયા-
ઓમાં બહુ ચતુર હતી. સાથે સાથે ઉચિત સદ્વ્યવહારોમાં પણ તે કુશલ

नयण-लावण-विलास-कलिया पासार्इया दरिसणिज्जा अभिरूवा
पडिरूवा, कोणिएणं रण्णा भंभसारपुत्तेण सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता,
इट्ठे सह-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणु-
भवमाणी विहरइ ॥ सू. १२ ॥

स्य कर्मधारयः । 'सुंदर-थण-जघण-वयण-कर-चरण-नयण-लावण-विलास-
-कलिया' सुन्दर-स्तन-जघन-वदन-कर-चरण-नयन-लावण्य-विलास-कलित-
'पासार्इया' प्रासादीया-
'दरिसणिज्जा' दर्शनीया । 'अभिरूवा' अभिरूपा 'पडि-
रूवा' प्रतिरूपा, 'कोणिएण रण्णा भंभसारपुत्तेण' कोणिकेन राज्ञा भंभसारपुत्रेण
'सद्धिं' सार्द्ध-सह । 'अणुरत्ता' अनुरक्ता-अनुरागवती, 'अविरत्ता' अविरक्ता-पत्यौ प्रति-
कूलेऽपि कोपरहिता, 'इट्ठे' इष्टान्-मनोऽनुकुलान्, 'सह-फरिस-रस-रूव-गंधे'
शब्द-स्पर्श-रस-रूप-गन्धान्, 'पंचविहे' पञ्चविधान्, 'माणुस्सए कामभोए'
मानुष्यकान्=मनुष्यसम्बन्धिनः कामभोगान्, 'पच्चणुभवमाणी' प्रत्यनुभवन्ती-भुञ्जाना
'विहरइ' विहरति स्म इति ॥ सू० १२ ॥

कर-चरण-नयण-लावण-विलास-कलिया] इसके पयोधरयुगल पुष्ट, जघन
कदलीस्तंभ जैसे, वदन राकाशशि जैसा अर्थात् पूर्णिमा के चन्द्र जैसा था, कमल जैसे
कोमल इसके कर चरण थे, नयनलावण्य अनुपम, एवं विलास मनोहर था ।
[पासार्इया] यह राजा के चित्त को प्रतिसमय प्रमुदित करती रहती थी ।
द्रष्टव्य वस्तुओं में यह भी एक [दरिसणिज्जा] द्रष्टव्य वस्तु थी । [अभि-
रूवा पडिरूवा] अभिरूप एवं प्रतिरूप थी । (कोणिएणं रण्णा भंभसारपुत्तेण
सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सह-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए
कामभोए पच्चणुभवमाणी विहरइ] यह रानी अपने प्रियपति कोणिक राजा के साथ,

हुती. [सुंदर-थण-जघण-वयण-कर-चरण-नयण-लावण - विलास - कलिया]
तेनां अन्ने स्तनो पुष्ट, जघन डेणनां स्तंभ जेवां, वदन-मुण राकाशशि-
अर्थात् पूर्णिमाना अंद्र जेवुं हुतुं. कमल जेवा सुंवाणा डाय पण हुतां.
नेत्रनुं लावण्य अनुपम तेम ज विलास मनोहर हुतुं. (पासार्इया) ते राजाना
चित्तने हरवअत भुशी करती रहेती हुती. जेध शक्य तेवी वस्तुओमां ते
पथु ओध (दरिसणिज्जा) जेवालायड हुती. [अभिरूवा पडिरूवा] अभिरूप
तेम ज प्रतिरूप हुती. (कोणिएणं रण्णा भंभसारपुत्तेण सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता

મૂલમ્—તસ્સ ણં પુરિસસ્સ બહવે અણ્ણે પુરિસા દિણ્ણ-
ભઇ-ભત્ત-વેયણા ભગવઓ પવિત્તિવાડયા ભગવઓ તદ્દેવસિઅં
પવિત્તિં ણિવેદેતિ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

ટીકા—તસ્સ ણં પુરિસસ્સ’ इत्यादि, तस्य भगवद्वार्ताहरस्य पुरुषस्य
भृत्यस्य ‘बहवे अण्णे पुरिसा’ बहवोऽन्ये पुरुषाः—राजसेवकाः, ते कौदृशा ? इत्याह—
‘दिण्ण-भइ-भत्त-वेयणा’ दत्त-भृति-भक्त-वेतनाः—भृतिः स्वर्णमुद्रादिरूपा, भक्तम्—

आजीविका मिलती थी । (भगवओ पवित्तिवाउए) “ भगवान्
कब कहां से विहार कर किस ग्राम में समवसृत हुए हैं ” इस समाचार को
जानने के लिये वह नियुक्त किया गया था । तथा [भगवओ तद्देवसियं पवित्ति
णिवेदेइ] भगवान् के दैनिक वृत्तान्त का भी—अर्थात्—आजदिन भगवान् इस नगर
से विहार कर इस नगर में विराज रहे हैं इस प्रकार की उनकी दैनिक विहारवार्ता
का भी ध्यान रखता था । यह वृत्तान्त राजा के निकट निवेदन करता था ॥ सू० १३ ॥

‘ તસ્સ ણં પુરિસસ્સ બહવે ’ इत्यादि,

[તસ્સ ણં પુરિસસ્સ બહવે અણ્ણે પુરિસા] इस पुरुष के हाथ के नीचे
और भी बहुत से अनेक पुरुष कि जिन्हें (दिण्ण-भइ-भत्त-वेयणा) इसकी
तरफ से सुवर्णमुद्रादिरूप भृति, एवं अन्नादिरूप भक्त इस प्रकार दोनों तरह का

એવો પુરુષ રાખેલો હતો કે જેને રાજા તરફથી (વિઝલકયવિત્તિ) મોટી
આજીવિકા મળતી હતી. [ભગવઓ પવિત્તિવાડય] “ ભગવાન કયારે
કયાંથી વિહાર કરી કયા ગામમાં સમવસૃત થયા છે ” એ સમાચાર જાણવાને
માટે તેની નિમણૂક કરેલી હતી. તથા [ભગવઓ તદ્દેવસિયં પવિત્તિ ણિવેદેइ]
ભગવાનનો દૈનિક વૃત્તાન્ત=અર્થાત્ આજરોજ ભગવાન આ નગરથી વિહાર
કરીને આ નગરમાં બિરાજે છે એ પ્રકારની તેની દૈનિક (દિવસ સંબંધી)
વિહારવાર્તા નું પણ ધ્યાન રાખતો હતો. આ વૃત્તાન્ત રાજાની પાસે નિવેદન
કરતો હતો. (સૂ. ૧૩)

“ તસ્સ ણં પુરિસસ્સ બહવે ” इत्यादि.

(તસ્સ ણં પુરિસસ્સ બહવે અણ્ણે પુરિસા) તે પુરુષના હાથ નીચે બીજા
પણ ઘણા પુરુષો હતા. જેમને (દિણ્ણ-ભइ-ભત્ત-વેયણા) તેના તરફથી
સુવર્ણમુદ્રારૂપ ભૃતિ તેમજ અન્નાદિરૂપ ભક્ત-ખોરાક એમ બન્ને પ્રકારનું વેતન

**मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं कोणिए राया
भंभसारपुत्ते बाहिरियाए उवट्टाणसालाए अणेग-गणणायग-दंड-**

अन्नरूपम्—इदं द्विविधं वेतनं—जीविका दत्तं येभ्यः, ते दत्तभृति—भक्तवेतनाः ‘भगवओ पवित्तिवाउआ’—भगवतः प्रवृत्तिव्यापृताः—भगवद्विहारसमवसरणादिवृत्तान्त—निवेदने नियुक्ताः, भगवतस्तद्देवसिकीं प्रवृत्तिं निवेदयन्ति—कथयन्तीति यावत्, नह्येकेन भृत्येन तादृगप्रतिबन्धविहारिणो भगवतः विहारसमवसरणवार्तानिवेदनं सुलभम्—इति हेतोरेत्र कार्ये बहवो नियुक्ता इति भावः ॥ सू० १४ ॥

टोका—‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि, तस्मिन् काले तस्मिन् समये ‘कोणिए राया भंभसारपुत्ते’ कोणिको राजा भंभसारपुत्रः—अयं कोणिको नृपो भंभसारस्य—श्रेणिकापरनामवतो नृपस्य पुत्रः, ‘बाहिरियाए उवट्टाणसालाए’ बाह्याया-मुपस्थानशालायाम्—बाह्ये सभागृहे—‘अणेग-गणणायग-दंडणायग-राई-सर-तलवर-माडं-वेतन दिया जाता था । (भगवओ) वे भगवान् महावीर के (पवित्तिवाउआ) विहार और समवसरण आदि वृत्तान्त का निवेदन करने के लिये नियुक्त थे, [भगवओ तद्देवसियं पवित्तिं निवेदेति] इसलिये वे भगवान् की विहारसंबन्धी एवं समवसरणसंबन्धी वार्ता प्रतिदिन आकर के निवेदन करते थे ॥ सू० १४ ॥

‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि ।

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल उस समय (कोणिए राया भंभसारपुत्ते) भंभसार—श्रेणिक नृप के पुत्र कोणिक राजा (बाहिरियाए उवट्टाणसालाए) बाहर की उपस्थान शाला में (अणेग-गणणायग-दंडणायग—

(पगार) आपवाभां आवतुं. (भगवओ) तेओ। लगवान भडावीरना (पवित्तिवाउआ) विहार अने समवसरण आदि वृत्तांतनुं निवेदन करवा भाटे राओला डतां. (भगवओ तद्देवसियं पवित्तिं निवेदेति) तेथी तेओ। लगवाननी विहार संबंधी तेमज्ज समवसरण संबंधी वार्ता हररोज्ज आवीने निवेदन करता डता. (सू. १४)

“ तेणं कालेणं तेणं समएणं ” इत्यादि.

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते डाल ते समये (कोणिए राया भंभसारपुत्ते) भंभसार—श्रेणिक राजाना पुत्र डेणिक राजा (बाहिरियाए उवट्टाणसालाए) अडारनी उपस्थान शालाभां (अणेग-गणणायग-दंडणायग-राई-सर-तलवर-माडं-

णायग-राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-मंति-महामंति-गणग-
दोवारिय-अमच्च-चेड-पीठमद-नागर-नेगम-सेट्टि-सेणावड-सत्थ-
वाह-दूय-संधिवाल सद्धिं संपरिवुडे विहरइ ॥ सू० १५ ॥

बिय-कोडुंबिय-मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च-चेड-पीठमद-नागर-नेगम-सेट्टि-
सेणावड-सत्थवाह-दूय-संधिवाल सद्धिं' अनेक-गणनायक-दण्डनायक-राजेश्वर-तलवर-माड-
म्बिक-कौटुम्बिक-मन्त्रि-महामन्त्रि-गणक-दौवारिका-ऽमात्य-चेट-पीठमद-नागर-नैगम-श्रेष्ठि-सेना-
पति-सार्थवाह-दूत-सन्धिपालैः सार्धम्, तत्र-अनेके ये गणनायकाः=समुत्पन्ने प्रयोजने ये गणं
कुर्वन्ति ते गणनायकाः, गणप्रधाना इत्यर्थः, दण्डनायका-दण्डदातारः, राजानः-मण्डलाऽधिपाः,
ईश्वरा-ऐश्वर्यसम्पन्नाः युवराजाः, तलवराः-तलं=सौवर्णपट्टबन्धः, परितुष्टनरपतिप्रदत्तेन तेन
तलेन वराः, तलवराः-सन्तुष्टभूप्रदत्तपट्टबन्धसुशोभितराजकल्पाः इत्यर्थः, 'माडंबिय'
माडम्बिकाः, ग्रामपञ्चशतीपतय इत्यर्थः, यद्वा-सार्धक्रोश-द्वयपरिमितप्रान्तरैर्विच्छिद्य विच्छिद्य
स्थितानां ग्रामाणामधिपतयः, कोडुंबिय-कौटुम्बिकाः-बहुकुटुम्बभरणतत्पराः, मन्त्रिणः-

राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च-चेड-
पीठमद-नागर-नेगम-सेट्टि-सेणावड-सत्थवाह-दूय-संधिवाल सद्धिं संपरिवुडे
विहरइ) अनेक गणनायकों से-प्रयोजन उपस्थित होने पर जो गण तैयार करते
थे ऐसे लोगों से, दण्डनायकों से, माण्डलिक राजाओं से, ईश्वरों से=युवराजों से,
तलवरों से=राजाने संतुष्ट होकर जिन लोगों को सुवर्णका पट्टबन्ध दिया, उस पट्टबन्ध
से सुशोभित राजातुल्य पुरुषों से, माडम्बिकों से=पाँच सौ ग्रामों के अधिपतियों से,
अथवा-ढाई ढाई कोशका अन्तर जिन दो गामों के बीच में होता है ऐसे अनेक
गामों के अधिपतियों से, कौटुम्बिकों से=कुटुम्ब के भरण-पोषण में तत्पर व्यक्तियों से

बिय-कोडुंबिय-मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च-चेड-पीठमद-नागर-नेगम-
सेट्टि-सेणावड-सत्थवाह-दूय-संधिवाल सद्धिं संपरिवुडे विहरइ) अनेक गणनाय-
केथी=प्रयोजन उपस्थित थाय त्तारे ने गण तैयार करता उता उता
तेवा दोकेथी, दंडनायकेथी, मांडलिक राजाओथी, ईश्वरोथी=युवराजोथी,
तलवरोथी=राजोथे संतुष्ट थधने ने दोकेने सुवर्णने पट्टबन्ध आये
होय ते पट्टबन्धथी सुशोभित राजा नेवा पुइयोथी, माडम्बिकेथी=पांचसो
गामना अधिपतिओथी अथवा अढी अढी गाडनुं अंतर ने जे गामोनी
वन्धे होय ओवा अनेक गामोना अधिपतिओथी, कौटुम्बिकेथी=कुटुम्बना
भरण पोषण; तत्पर व्यक्तिओथी, मन्त्रिओथी,=कर्तव्यनी समीक्षा (निर्णय)

कर्तव्यालोचनं मन्त्रः, सोऽस्यास्तीति मन्त्री, बहुसंख्यका मन्त्रिणः, विचारकारका इत्यर्थः, महामन्त्रिणः—मन्त्रिमण्डलप्रधानाः—सूक्ष्मातिसूक्ष्मविचारका इत्यर्थः, गणग—गणकाः—ज्योतिषिकाः—शुभाशुभफलदेशकारिणः, 'दौवारिय' दौवारिका द्वारपालाः, अमात्याः—राज्यहितचिन्तकाः—अष्टादशानां प्रकृतीनां—नागरिकश्रेणीनां महत्तरा इति यावत्, चेटाः—दासाः, पीठमर्दाः—अङ्गसंवाहकाः—आसनसमीपवर्तिनः—सेवकाः, नागराः—नगरवासिनो नागरिका, नैगमाः—पौरवणिजः, श्रेष्ठिनः—लक्ष्मीकृपासूचकपट्टालंकृतकाः प्रधानव्यवहारिणः 'सेणावड्' सेनापतयः—चतुरङ्गसेनायाश्चतुर्विधा अधिपाः, सार्थवाहाः—सार्थ समानव्यवसायिसमूहं वाहयन्ति योगक्षेमाम्भ्यां रक्षन्ति इति अर्थात्—समूहेन दूरदेशं गत्वा क्रयविक्रयकर्तारः । दूताः—सन्देशहराः, सन्धिपालाः—युध्यमानेन राज्ञा कृतःसन्धिःतं पालयन्तीति सन्धिपालाः । एतेषां द्वन्द्वं विधाय तैर्गणनायकादिसन्धिपालाऽन्तैः सार्द्धम्, अत्र आर्षत्वात् सन्धिपालशब्दोत्तरवर्तितृतीयाविभक्त्येर्लोपः, 'संपरिवुडे' सम्परिवृतः—सं—सम्यक्—समन्ताद्वेष्टितः 'विहरड्' विहरति—मुखेन कालं नयति स्मेति भावः ॥ सू० १५ ॥

मान्त्रियों से=कर्तव्य की समीक्षा करनेवाले विचारवान पुरुषों से, महामन्त्रियों से=सूक्ष्मातिसूक्ष्मविचारशील मन्त्रिमण्डल के प्रधानों से, गणकों से=शुभ, अशुभ फल वा निवेदन करनेवाले ज्योतिषियों से, दौवारिकों से=द्वारपालों से, अमात्यों से=राज्य के हित चिन्तकों से अर्थात् अठारह प्रकृतियों—ज्ञातियों के मुखियों से, चेटों से=दासों से, पीठमर्दकों से=अङ्गमर्दकों से अर्थात् समीप में रहनेवाले सेवकों से, नागरों से=नागरिक पुरुषों से, नैगमों से=पौरवणिग्जनों से, श्रेष्ठियों से=लक्ष्मी की कृपा का सूचक पट्ट से सुशोभित मुख्य मुख्य सेठों से, सेनापतियों से=चतुरङ्गिणी सेना के नायकों से, सार्थवाहों से, दूतों से, तथा—सन्धिपालों से=शत्रु राजाओं के साथ सन्धि करने के लिये नियुक्त अधिकारी पुरुषों से परिवृत होकर बैठे हुए थे ॥ सू० १५ ॥

करनारा विचारवान पुश्पोथी, महुमन्त्रियोथी=सूक्ष्मातिसूक्ष्म विचारशील मन्त्रिमण्डलना प्रधानोथी, गणुडोथी=शुभ अशुभ इदनां निवेदन करवावाणा ज्योतिषियोथी, दौवारिकोथी=द्वारपालोथी, अमात्योथी,=राज्यहितचिन्तकोथी अर्थात् अठार प्रकृतियो—ज्ञातियोना मुखियोथी, चेटोथी=दासोथी, पीठमर्दोथी—अङ्गमर्दोथी अर्थात् पासो रहवावाणा (हुजुरीआ) सेवकोथी, नागरोथी=नागरिक पुश्पोथी, नैगमोथी=पौर वणिक् जनोथी, श्रेष्ठियोथी=लक्ष्मीनी कृपाना सूचक पट्टोथी सुशोभित मुख्य मुख्य सेठोथी, सेनापतियोथी=चतुरङ्गिणी सेनाना नायकोथी, सार्थवाडोथी, दूतोथी तथा सन्धिपालोथी=शत्रु राज्ञोनी साथे सन्धि करवाने भाटे निभाणुं करेला अधिकारी पुश्पोथी वींटणाधने जेठा हुता. (सू. १५).

મૂલમ—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણે ભગવં મહા-

ટીકા—‘ તેણં કાલેણં ’ ઇત્યાદિ । અધુના ચરમતીર્થકરં ભગવન્તં શ્રીમહાવીરસ્વામિનં વર્ણયતિ— ‘ તેણં ’ ઇતિ સૂત્રેણ । સ સ્વત્રુ ભગવાન્ વચનાગોચરગુણનિકરુચિગે મહાવીરેઽપ્રતિબંધવિહારક્રમેણ પૂર્ણભદ્રમુદ્યાનં સમવસર્તુકામઃ ચમ્પાયા નગર્યાઃ સર્માપં ગ્રામમુપાગત ઇતિ વર્ણયતે ‘ તેણં કાલેણં તેણં સમણં ’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ સ્વત્રુ કાલે=ચતુર્થાન્કલક્ષણે તસ્મિન્ સમયે=કોણિકભૂપગાસનસમયે, ‘સમણે’ શ્રમણઃ—શ્રામ્યતિ—તીવ્રતપસિ યતતે, ઇતિ શ્રમણઃ । ‘ભગવં’ ભગવાન્—સમગ્રૈશ્વર્યસમ્પન્નઃ, ‘મહાવીરે’ મહાવીરઃ—મહાવીરનામ્ના પ્રમિદ્ધશ્ચરમતીર્થકરઃ, ગુણનિષ્પન્નમિદં નામઃ અધુના મહાવીરશબ્દ-વ્યુત્પત્તિમાહ-વિશેષતઃ શિવપદમિયતિ—ગચ્છતીતિ વીરઃ અથવા વિદારયતિ

‘ તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણે ભગવં મહાવીરે ’ ઇત્યાદિ.

અવ ચરમતીર્થકર ભગવાન મહાવીર સ્વામી કા “ તેણં કાલેણં ” ઇત્યાદિ ૧૬ વેં સૂત્રદ્વારા વર્ણન ક્રિયા જાતા હૈ । ઇસમેં સર્વપ્રથમ વચન—અગોચર-પ્રશસ્ત ગુણોં કે સમૂહ સે વિગજિત વે પ્રભુ અપ્રતિબંધ વિહાર કરતે હુણ પૂર્ણભદ્ર નામ કે ઉદ્યાન મેં પધારને કે નિમિત્ત ચંપાનગરી કે સર્માપવર્તી ગ્રામ મેં પધારે । (તેણં કાલેણં તેણં સમણં) અવસર્પિણી કાલકે ચતુર્થ ઓર કે ઉસ સમયમેં કિ જિસ સમય મેં કોણિક રાજા ગજ્ય કરતે થે, (સમણે) શ્રમણ—તીવ્ર તપસ્યા કરનેવાલે (ભગવં) ભગવાન—સમગ્ર શૈશ્વર્ય સંપન્ન (મહાવીરે) મહાવીર—જો અપુન-રાગમનરૂપ સે શિવપદ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં વે વીર હૈં, કર્મશત્રુઓં કા જો વિદારણ

“ તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણે ભગવં મહાવીરે ” ઇત્યાદિ.

હવે ચરમ તીર્થકર ભગવાન મહાવીર સ્વામીનું વર્ણન “ તેણં કાલેણં ” ઇત્યાદિ ૧૬મા સૂત્રદ્વારા કરવામાં આવે છે. તેમાં સર્વથી પ્રથમ વચન અગોચર-પ્રશસ્ત ગુણોના સમૂહથી વિરાજમાન તે પ્રભુ અપ્રતિબંધ વિહાર કરતાં કરતાં પૂર્ણભદ્ર નામના ઉદ્યાનમાં પધારવાના નિમિત્તે ચંપા-નગરીના નજીકના ગામમાં પધાર્યા. (તેણં કાલેણં તેણં સમણં) અવસર્પિણી કાલના ચાથા આરાના તે સમયે કે જે સમયમાં કોણિક રાજા રાજ્ય કરતા હતા, (સમણે) શ્રમણ—તીવ્ર તપસ્યા કરવાવાળા (ભગવં) ભગવાન—સમગ્ર શૈશ્વર્યસંપન્ન (મહાવીરે) મહાવીર—જે અપુનરાગમન-રૂપથી શિવ-પદને પ્રાપ્ત કરે છે તે વીર છે, કર્મશત્રુઓનો જે નાશ કરે છે તે વીર છે.

वीरे आङ्गरे तित्थगरे सयंसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे पुरिस-

रिपुसंघ-मिति वीरः। यद्वा—अनन्याऽनुभूतमहातपःश्रिया विराजते इति वीरः, यद्वा अन्तरङ्ग-
मोहमहाबलनिर्दलनार्थमनन्ततपोवीर्यं व्यापारयति इति वीरः सामान्यजिनः; तदपेक्षया महांश्चासौ
वीरः महावीरः। महत्त्वगुणयुक्तवीरत्वमस्य विविधपरिषहोपसर्गनिपातेऽपि निश्चलत्वात् जन्मसमये
निजङ्गुष्ठेन मेरोश्चालनाच्च। ‘आङ्गरे’ आदिकरः—आदौ प्रथमतः स्वशासनापेक्षया श्रुतचारित्रधर्म-
लक्षणं कार्यं करोति तच्छील आदिकरः। ‘तित्थगरे’ तीर्थकरः—तीर्यते—पार्यते संसारमोहमहोद-

करते हैं—वे वीर हैं, जो अनन्य सदृश तपस्या की शोभा से विराजमान होते हैं—वे
वीर हैं, जिन्होंने अन्तरंग—अन्तःस्थित मोहके महाबल का नाश करने के लिये अपने
अनन्त तप वीर्यका प्रयोग किया है—वे वीर हैं। इस प्रकार के वीरों—सामान्य जिनोंकी
अपेक्षा भगवान् महत्त्व गुणों से युक्त हैं, इसलिये वे महावीर हैं। अनेक परिषह
उपसर्ग उपस्थित होने पर भी वे निश्चल थे, जन्म समय में अपने अंगूठे से
मेरु को हिलाया था यही इनका महत्त्व है। ऐसे अन्तिम तीर्थकर महावीर प्रभु
जो इन निम्नलिखित विशेषणों से संपन्न हैं वे चंपानगरी के समीपस्थ ग्राममें पधारे,
इस प्रकार इस सूत्रका संबंध लगाना चाहिये। वे महावीर प्रभु कैसे हैं ? इस
बात को नीचे लिखे हुए विशेषणों द्वारा सूत्रकार स्पष्ट करते हैं। वे प्रभु (आङ्-
गरे) आदिकर—स्वशासन की अपेक्षा श्रुतचारित्ररूप धर्म की आदि करने वाले हैं,
(तित्थगरे) तीर्थकर हैं—जिसको प्राप्त कर जीव संसाररूपी महासमुद्र पार करते हैं

જે અનન્ય—સદૃશ તપસ્યાની શોભાવડે વિરાજમાન છે તે વીર છે. જેઓએ
અંતરંગ—અંતઃસ્થિત મોહના મહાબલનો નાશ કરવાને માટે પોતાના અનંત
તપવીર્ય (બલ)નો પ્રયોગ કર્યો છે તે વીર છે. એ પ્રકારના વીરોની—સામાન્ય
જનોની અપેક્ષા ભગવાન મહત્ત્વ ગુણોથી યુક્ત છે, તેથી તેઓ મહાવીર
છે. અનેક પરીષદ ઉપસર્ગ ઉપસ્થિત થતાં પણ તેઓ નિશ્ચળ રહેતા, જન્મ
સમયે પોતાના અંગુઠાવડે મેરૂ પર્વતને હલાવ્યો હતો એજ તેમનું મહત્ત્વ છે.
એવા અંતિમ તીર્થકર મહાવીર પ્રભુ કે જે નિમ્ન લિખિત વિશેષણોથી
સંપન્ન છે તે ચંપાનગરીના નજીકના ગામમાં પધાર્યા. એ પ્રકારે આ સૂત્રનો
સંબંધ ઘટાવવો જોઈએ. તે મહાવીર પ્રભુ કેવા છે તે વાતને નીચે લખેલાં
વિશેષણોદ્વારા સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે. તે પ્રભુ (આઙ્ગરે) આદિકર—સ્વશાસ-
નની અપેક્ષા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને આદિ કરવાવાળા છે, (તિત્થગરે) તીર્થ-

ધિર્યેન તત્ તીર્થમ્—ચતુર્વિધઃ સદ્ધઃ, તત્કરગશીલત્વાત્ તીર્થકરઃ । ‘સયંસંબુદ્ધે’ સ્વયંસંબુદ્ધઃ—
સ્વયં પરોપદેશમન્તેગ્ણ સંબુદ્ધઃ=સમ્યક્તયા બોધં પ્રાપ્તઃ—સ્વયંસંબુદ્ધઃ । ‘પુરિસુત્તમે’
પુરુષોત્તમઃ—પુરુષેષુ ઉત્તમઃ—શ્રેષ્ઠઃ—જ્ઞાનાદ્યનન્તગુણવત્વાત્પુરુષોત્તમઃ । ‘પુરિસસીહે’
પુરુષસિંહઃ—પુરુષેષુ સિંહઃ—રાગદ્વેષાદિશત્રુપરાજયે દૃષ્ટાદ્ભુતપરાક્રમત્વાત્ इति, યદ્વા—પુરુષઃ
સિંહ इव इति પુરુષસિંહઃ । ‘પુરિસવરપુંડરીક’ પુરુષવરપુંડરીકમ્—પુંડરીકં—ધવલ-
કમલં, વરશ્ચ તત્પુંડરીકં વરપુંડરીકં=ધવલકમલપ્રધાનં, પુરુષો વરપુંડરીકમિવેત્યુપમિ-
તસમાસે પુરુષવરપુંડરીકમ્, ભગવતો વરપુંડરીકોપમા ચ વિનિર્ગતાઽસ્થિલાઽશુભમલીમસ-
ત્વાત્ સર્વેઃ શુભાનુભાવૈઃ પરિશુદ્ધત્વાચ્ચ, યદ્વા યથા પુંડરીકં પદ્માજ્ઞાતમપિ સલિલે
વર્દ્ધિતમપિ ચોભયસંબન્ધમપહાય નિર્લેપં જલોપરિ રમણીયં સંદૃશ્યતે નિજાનુપમગુણ-
ગગવલેન મુરમુર—નર—નિકર—શિરોધારણીયતયાઽતિમહનીયં પરમસુખાઽસ્પદશ્ચ ભવતિ

ऐसे चतुर्विध संघरूप तीर्थ के कर्त्ता हैं (सयंसंबुद्धे) परोपदेश के विना स्वयमेव
बोध को प्राप्त हुए हैं, इसलिये स्वयंसंबुद्ध हैं, (पुरिसुत्तमे) ज्ञानादिक अनन्तशुद्ध
गुणों की जागृति—विशिष्ट होने से पुरुषों में उत्तम हैं, (पुरिससीहे) रागद्वेषादिक
शत्रुओं के पराजित करने में अद्वितीय—पराक्रम प्रदर्शित करने के कारण पुरुषसिंह हैं ।
(पुरिसवरपुंडरीक) पुरुषवरपुंडरीक—समस्त प्रकार की मलिनता के अभाव से
पुरुषों में श्रेष्ठ शुभ्र कमल जैसे हैं । यहां भगवान् को जो वरपुंडरीक की उपमा
दी गई है उसका भाव यह है कि जिस प्रकार कमल कीचड़ से उद्भूत होने पर
एवं जल में वर्द्धित होने पर भी इन दोनों (कीचड़ और जल) के संबंध से
रहित होकर निर्लेप होता है, जल से भिन्न होकर उसीमें रहता हुआ भी जैसे

કર છે. જેને પ્રાપ્ત કરીને જીવ સંસારરૂપી મહાસમુદ્ર પાર કરે છે એવા
ચતુર્વિધ સંઘરૂપ તીર્થના કર્તા છે. (સયંસંબુદ્ધે) પરોપદેશના વગર પોતાની
મેળેજ બોધને પ્રાપ્ત કર્યો છે તેથી સ્વયંસંબુદ્ધ છે. (પુરિસુત્તમે) જ્ઞાનાદિક
અનન્ત શુદ્ધ ગુણોની જાગૃતિ—વિશિષ્ટ હોવાથી પુરુષોમાં ઉત્તમ છે. (પુરિસસીહે)
રાગ દ્વેષાદિક શત્રુઓને પરાજિત કરવામાં અદ્વિતીય પરાક્રમ બતાવવાના કાર-
ણથી પુરુષ—સિંહ છે. (પુરિસવરપુંડરીક) પુરુષવરપુંડરીક—સમસ્ત પ્રકારની
મલિનતાના અભાવથી પુરુષોમાં શ્રેષ્ઠ શુભ્ર કમલ જેવા છે. અહીં ભગવાનને
જે વરપુંડરીકની ઉપમા આપેલી છે તેનો ભાવ એ છે કે જે પ્રકારે કમલ
કીચડથી ઉત્પન્ન થાય છે તેમજ જલમાં વધતું જાય છે છતાં પણ એ બન્ને
(કીચડ અને જલ) ના સંબંધથી રહિત થઈને નિર્લેપ રહે છે. જલથી જુદા

વરપુંડરીણ પુરિસવરગંધહસ્તી લોગુત્તમે લોગનાહે લોગહિણ લોગ-

તથાઽયં ભગવાન્ કર્મપટ્ટાજ્ઞાતો ભોગાઽમ્ભોવદ્વિતઃ સન્નપિ નિર્લેપસ્તદુમયમતિવર્તતે, ગુણસમ્પદાઽઽસ્પદતયા ચ કેવલાદિગુણભાવાદસ્થિભવ્યજનશિરોધારણીયો ભવતીતિ ।
'પુરિસવરગંધહસ્તી' પુરુષવરગન્ધહસ્તી-ગન્ધયુક્તો હસ્તી ગન્ધહસ્તી વરશ્ચાસૌ ગન્ધ હસ્તી વરગન્ધહસ્તી પુરુષો વરગન્ધહસ્તીવ-પુરુષવરગન્ધહસ્તી, ગન્ધહસ્તિલક્ષણં યથા-

યસ્ય ગન્ધં સમાગ્રાય, પલાયન્તે પેરે ગજાઃ ।

તં ગન્ધહસ્તિનં વિદ્યાન્તપતેર્વિજયાવહમ્ ॥ ઇતિ ॥

અત એવ યથા ગન્ધહસ્તિગન્ધમાગ્રાય અન્યે ગજા ઇતસ્તતો દ્રુતં પલાય્ય ક્વાપિ નિલીયન્તે તદ્વદચિન્ત્યાતિશયપ્રભાવવશાદ્ વિહરણસમીરણગન્ધસમ્બન્ધગન્ધતોઽપિ-ઈતિ-

સુન્દર દિશ્વતા હૈ ઔર સુર, અસુર એવં નરોં દ્વારા અપને ૨ શિરપર ધારણ કિયે જાને સે અતિમહનીય એવં અત્યંત પ્રશંસનીય હોતા હૈ, ડસીપ્રકાર પ્રભુ મી કર્મરૂપ પટ્ટ સે ડદ્ભૂત હોને પર એવં મોગરૂપ જલ મેં વદ્વિત હોને પર મી ઇન ડોનોં સે નિર્લિપ્ત હી હૈં એવં જ્ઞાનાદિકગુણરૂપી સમ્પત્તિ કે સ્થાન હોને સે અર્થાત્ કેવલજ્ઞાનાદિક ગુણોં સે વિશિષ્ટ હોને સે સમસ્ત ભવ્યજનોં દ્વારા શિરોધાર્ય હૈં । (પુરિસવર-ગંધહસ્તી) મગવાન્ પુરુષોં મેં ગંધહસ્તી જૈસે હૈં । જિસકી ગંધ સે અન્ય ગજ દૂર મોગ જાવેં ડસકા નામ ગંધહસ્તી હૈ । યહ હસ્તી જિસ રાજા કે પાસ હોતા હૈ વહ નિયમ સે શત્રુઓં કે બીચ મેં રહને પર મી વિજયલક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઇસી પ્રકાર પ્રભુ કે વિહાર કી ગંધ સે મી ડસ ૨ સ્થાન સે ડમર-મરકી આદિ ડપદ્રવ

રહીને પણ તેમાંજ રહેતાં છતાં જેમ સુંદર લાગે છે અને સુર, અસુર તેમજ મનુષ્યોદ્વારા પોતપોતાને માથે ધારણ કરવામાં આવતાં અતિમહનીય તેમજ અત્યંત પ્રશંસનીય બને છે, તેમ પ્રભુ પણ કર્મરૂપ પટ્ટ (કીચડ) થી ઉત્પન્ન થયા છતાં તેમજ ભોગરૂપ જલમાં વૃદ્ધિ પામ્યા છતાં પણ એ બન્નેથી નિર્લેપજ રહેલા છે તેમજ જ્ઞાનાદિક ગુણરૂપી સંપત્તિનું સ્થાન હોવાથી અર્થાત્ કેવલ જ્ઞાનાદિક ગુણોથી વિશિષ્ટ હોવાથી સમસ્ત ભવ્ય જીવો દ્વારા શિરોધાર્ય બનેલા છે. (પુરિસવરગંધહસ્તી) ભગવાન્ પુરુષોમાં ગંધહસ્તી જેવા છે, જેની ગંધથી બીજા હાથીઓ દૂર ભાગી બચ તેનું નામ ગંધહસ્તી છે. આ હાથી જે રાજાની પાસે હોય છે તે નિયમથી શત્રુઓની વચમાં રહેવા છતાં પણ વિજયલક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરે છે. એવી જ રીતે પ્રભુના વિહારની ગંધથી પણ

ડમર—મરકાદય ઉપદ્રવા દ્રાગ્ દિશ્વ પ્રદ્રવન્તીતિ, ગન્ધગજાશ્રિતરાજવદ્ ભગવદાશ્રિતો
ભવ્યગણઃ સર્વદા વિજયવાન્ ભવતીતિ ભવત્યુભયોર્યુક્તં સાદૃશ્યમ્ । ‘લોગુત્તમે’
લોકોત્તમઃ—લોકેષુ=ભવ્યસમાજેષુ ઉત્તમઃ=ઉત્કૃષ્ટતમઃ, ચતુર્વિંશદતિશયપચ્ચત્રિંશદ્વાગીગુણો-
પેતત્વાત્ । ‘લોગનાહે’ લોકનાથઃ—લોકાનાં=ભવ્યાનાં નાથઃ=નેતા—યોગક્ષેમકરત્વાત્ ।
‘લોગહિણ’ લોકહિતઃ—લોકઃ=એકેન્દ્રિયાદિઃ સર્વપ્રાણિગણસ્તસ્મૈ હિતઃ—તદ્રક્ષોપાય-
પ્રદર્શકત્વાત્ । ‘લોગપર્ણવે’ લોકપ્રદીપઃ—લોકસ્ય=ભવ્યજનસમુદાયસ્ય પ્રદીપઃ; તન્મનો-
ઽભિનિવિષ્ટાનાદિમિથ્યાત્વતમઃપટલવ્યપગમેન વિશિષ્ટાત્મતત્ત્વપ્રકાશકત્વાત્; યથા પ્રદીપસ્ય
સકલજીવાર્થં તુલ્યપ્રકાશકત્વેઽપિ ચક્ષુષ્મન્ત એવ તત્પ્રકાશસુખભાજો ભવન્તિ ન ત્વન્ધા-
સ્તથા ભવ્યા એવ ભગવદનુભાવસમુદ્ભૂતપરમાનન્દસન્દોહભાજો ભવન્તિ નાભવ્યા ઇતિ

મી ઇતસ્તતઃ ભાગ જાતે હૈં । એવં ભગવાન કા મક્તજન મી સર્વદા વિજયશીલ રહા
કરતે હૈં । (લોગુત્તમે) ચૌત્રીસ અતિશય ઓર પૈત્રીસ વાણીગુણોં સે યુક્ત હોને
કે કારણ ભગવાન ભવ્યરૂપી લોક મેં ઉત્કૃષ્ટતમ હૈં । (લોગનાહે) લોકોં કે
અર્થાત્ ભવ્યોં કે યોગક્ષેમ કરનેવાલે હોને સે ભગવાન લોકનાથ હૈં ।
(લોગહિણ) સમી પ્રાણિયોં કી રક્ષા કે ઉપાય દિશ્વલોને કે કારણ ભગવાન્ લોકોં
કે અર્થાત્ એકેન્દ્રિય આદિ સમી પ્રાણિયોં કે હિતકારક હૈં । ઇસલિયે વે લોકહિત
હૈં । (લોગપર્ણવે) ભગવાન્ લોગોં કે=ભવ્યોં કે મન મેં વસે હુણ અનાદિમિથ્યાત્વ
પુઝા કો દૂર કર વિશિષ્ટ આત્મતત્ત્વ પ્રકાશિત કરને કે કારણ લોકપ્રદીપ હૈં ।
જૈસે—પ્રદીપ યદપિ સમી જીવોં કે લિયે તુલ્યપ્રકાશ દેને વાલા હૈ, તથાપિ નેત્રવાન્
મનુષ્ય હી ઉસકે પ્રકાશ કા આનન્દ લે સકતા હૈ, ઉસી પ્રકાર ભવ્યલોગ હી

તે તે સ્થાનમાંથી ડમર, મરકી-આદિ ઉપદ્રવ પણ આમતેમ ભાગી જાય છે, તેમજ
ભગવાનના ભક્તજનો પણ સર્વદા વિજયશીલ રહ્યા કરે છે. (લોગુત્તમે) ચૌત્રીસ
અતિશયો અને પાંત્રીસ વાણો ગુણોથી યુક્ત હોવાના કારણે ભગવાન ભવ્યરૂપી
લોકમાં ઉત્કૃષ્ટતમ છે, (લોગનાહે) લોકોના અર્થાત્ ભવ્યોના યોગક્ષેમ કરવા-
વાળા હોવાથી ભગવાન લોકનાથ છે. (લોગહિણ) તમામ પ્રાણીઓની રક્ષાના
ઉપાય બતાવનાર હોવાના કારણે ભગવાન લોકોનાં અર્થાત્ એકેન્દ્રિય આદિ
તમામ પ્રાણીઓના હિતકારક છે. તે માટે લોકહિત છે. (લોગપર્ણવે) ભગવાન
લોકોના—ભવ્ય જીવોના મનમાં વસેલા અનાદિ મિથ્યાત્વપુંજને દૂર કરીને
વિશિષ્ટ આત્મતત્ત્વ પ્રકાશિત કરનારા હોવાના કારણે લોકપ્રદીપ છે. જેમકે
પ્રદીપ જે કે બધા જીવોને માટે સમાન પ્રકાશ આપવાવાળો હોય છે, તેપણ

પર્વે લોગપજ્જોયગરે અભયદણ ચક્ષુદણ મગ્ગદણ સરણ-

પ્રતિબોધયિતું પ્રદીપદૃષ્ટાન્તઃ; અતएव લોકપદેન મન્યાનાં ગ્રહણમ્ ।
 ‘લોગપજ્જોયગરે’ લોકપ્રદ્યોતકરઃ—લોકશબ્દેનાત્ર લોકયતે=દૃશ્યતે કેવલાલોકેન યથા-
 વસ્થિતતયેતિ વ્યુત્પત્ત્યા લોકાલોકયોરુભયોર્ગ્રહણમ્. તેન—લોકસ્ય—લોકાલોકલક્ષણસ્ય
 સકલપદાર્થસ્ય પ્રદ્યોતઃ—લોકાલોકપ્રદ્યોતસ્તં કરોતીત્યેવં શીલો લોકાલોકપ્રદ્યોતકરઃ
 સર્વલોકપ્રકાશકરણશીલઃ । તાચ્છીલ્યે કર્તારિ ટઃ પ્રત્યયઃ । ‘અભયદયે’ અભયદયઃ-
 ન મયમ્—અમયમ્, મયાનામભાવો વા—અમયમ્—અક્ષોભલક્ષણ આત્મનોઽવસ્થાવિશેષો
 મોક્ષસાધનભૂતમુત્કૃષ્ટધૈર્યમિતિ યાવત્, દયતે—દદાતીતિ દયઃ, અમયસ્ય દયઃ
 અમયદયઃ, યદ્વા—અમયા—મયરહિતા—દયા—સર્વજીવસદ્ગુણપ્રતિમોચનસ્વરૂપાઽનુકમ્પા
 યસ્ય સોઽમયદયઃ । ‘ચક્ષુદયે’ ચક્ષુર્દયઃ—ચક્ષુર્જ્ઞાનં—નિસ્થિલવસ્તુતત્વાઽવમાસકતયા

ભગવાન કે પ્રભાવ—જનિત પરમાનન્દ કે ભાગી હોતે હૈં; અભવ્ય નહીં । (લોગપજ્જો-
 યગરે) ભગવાન્ લોકાલોકલક્ષણ સર્વી પદાર્થોં કે પ્રકાશક હૈં, ઇસલિયે વે લોક-
 પ્રદ્યોતકર હૈં । (અમયદણ) ભગવાન્ અમયદય હૈં—આત્માકી અક્ષોભપરિણતિ કા ના
 અમય હૈ । દૂસરે શબ્દ મેં ઇસે મોક્ષકા સાધનભૂત ઉત્કૃષ્ટ ધૈર્ય મી કહતે હૈં । પ્રમુમ
 ઇસે પ્રદાન કરતે હૈં; અતઃ વે અમયદય કહે ગયે હૈં । અથવા મયરહિત દયા જિનકે
 પાસ હૈ વે અમયદય હૈં । ભગવાન કી દયા સમસ્ત જીવોં કો સંકટોં સે છુડાને
 વાલી હોતી હૈ; ઇસલિયે પ્રમુ અમયદય હૈં । (ચક્ષુદયે) ભગવાન ચક્ષુર્દય હૈં ।
 જિસ પ્રકાર હરિગાદિ જંગલી જાનવરોં સે યુક્ત વન મેં ચોરોં દ્વારા લૂટે ગયે ઓર

નેત્રવાળો મનુષ્ય જ તેના પ્રકાશનો આનંદ લઈ શકે છે, તે પ્રકારે જ ભવ્ય
 દોઝ જ ભગવાનના પ્રભાવજનિત પરમાનન્દના ભાગી થાય છે; અભવ્ય નહિં.
 (લોગપજ્જોયગરે) ભગવાન્ દોઝાદોઝ લક્ષણ તમામ પદાર્થોના પ્રકાશક છે,
 તેથી તેઓ દોઝપ્રદ્યોતકર છે. (અમયદયે) ભગવાન અભયદાતા છે. આત્માના
 ક્ષોભરહિતપણાની પરિણતિનું નામ અભય છે. બીજા શબ્દમાં તેને મોક્ષના
 સાધનભૂત ઉત્કૃષ્ટ ધૈર્ય પણ કહે છે. પ્રમુ તેને પ્રદાન કરવાવાળા છે
 તેથી તેઓ અભયદય છે. અથવા ભયરહિત દયા જેની પાસે છે તે
 અભયદય છે. ભગવાનની દયા સમસ્ત જીવોને સંકટોથી છોડાવવાવાળી
 હોય છે તે કારણથી પ્રમુ અભયદય છે. (ચક્ષુદયે) ભગવાન ચક્ષુર્દય છે.
 જે પ્રકારે હરિણ આદિ જંગલી જાનવરોથી યુક્ત વનમાં ચોરોદ્વારા લૂંટવામાં

चक्षुःसादृश्यात् तस्य दयो दायकश्चक्षुर्दयः, यथा हरिणादिशरण्येऽरण्ये लुण्टाक-
लुण्टितेभ्यः पट्टिकादिदानेन चक्षूषि पिधाय हस्तपादादि बद्ध्वा तैर्गते पातितेभ्यः कश्चि-
त्पट्टिकाऽपनोदेन चक्षुर्दत्त्वा मार्गं प्रदर्शयतीति तथा भगवानपि भवारण्ये रागद्वेषलुण्टाक-
लुण्टिताऽऽत्मगुणधनेभ्यो दुराग्रहपट्टिकाऽऽच्छादितज्ञानचक्षुर्भ्यो मिथ्यात्वगते पातितेभ्यस्त-
दपनयनपूर्वकं ज्ञानचक्षुर्दत्त्वा मोक्षमार्गं प्रदर्शयति । एतदेव प्रकारान्तरेणाऽऽह ' मग्गदए '
मार्गदयः—सम्यग्गृत्तनत्रयलक्षणः शिवपुरपथः, यद्वा—विशिष्टगुणस्थानप्रापकः क्षयोपशमभावो

आंखों के ऊपर पट्टी बांधकर एवं हाथ पैर बांधकर खड्डे में पटके गये प्राणियों को कोई दयालु सज्जन उनकी आंखों की पट्टी खोल कर एवं उन्हें खड्डे से निकाल कर मार्ग दिखलाता है और इस अपेक्षा जैसे वह उन्हें व्यावहारिकरूप से चक्षु का दाता कहा जाता है उसी प्रकार भगवान् भी इस संसाररूप अरण्य में रागद्वेष आदि चोरों द्वारा जिनका आत्मगुणरूपी धन हरण किया जा चुका है एवं दुराग्रहरूपी पट्टी द्वारा जिनके ज्ञानरूपी नेत्र ढके हुए हैं तथा जो मिथ्यात्वरूपी खड्डे में पड़े हैं ऐसे प्राणियों को उस मिथ्यात्वरूपी खड्डे से निकालकर ज्ञानरूपी चक्षु देकर उन्हें मुक्तिमार्ग दिखलाते हैं, अतः प्रभु चक्षुर्दय हैं । इसी बातको प्रकारान्तर से सूत्रकार पुनः प्रदर्शित करते हैं—(मग्गदए) वे प्रभु मार्गदय हैं—सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रय मुक्ति का मार्ग है, अथवा विशिष्ट गुणस्थानों का प्रापक क्षयोपशमभाव भी मार्ग है । प्रभु इसके दाता हैं । (सरणदए) कर्मरूपी शत्रुओं से वशीकृत होने के कारण

आवेલાં અને આંખોના ઉપર પટ્ટી બાંધીને તેમજ હાથ પગ બાંધીને ખાડામાં નાખી દેવામાં આવેલાં પ્રાણિઓને કોઈ દયાળુ સજ્જન તેમની આંખોની પટ્ટી ખોલીને તેમજ તેમને ખાડામાંથી બહાર કાઢીને રસ્તો બતાવે છે અને તે અપેક્ષાએ તે જેમ તેના વ્યાવહારિકરૂપથી ચક્ષુનો દાતા કહેવાય છે, તેજ પ્રકારે ભગવાન પણ આ સંસારરૂપ અરણ્યમાં રાગદ્વેષ આદિ ચોરો દ્વારા જેના આત્મગુણરૂપી ધન હરણ કરવામાં આવી ચુકેલું છે તેમજ દુરાગ્રહરૂપી પટ્ટીદ્વારા જેનાં જ્ઞાનરૂપી નેત્ર ઢાંકી દીધેલાં છે તથા જે મિથ્યાત્વરૂપી ખાડામાં પડ્યા છે તેવાં પ્રાણિઓને તે મિથ્યાત્વરૂપી ખાડામાંથી કાઢીને જ્ઞાનરૂપી ચક્ષુ આપીને તેમને મુક્તિમાર્ગ બતાવે છે—તેથી પ્રભુ ચક્ષુર્દય છે. આ વાતને પ્રકારાન્તરથી સૂત્રકાર ફરીને પ્રદર્શિત કરે છે, (મગ્ગદણ) તેઓ (પ્રભુ) માર્ગ-દય છે—સમ્યગ્દર્શનાદિ રત્નત્રય મુક્તિનો માર્ગ છે અથવા વિશિષ્ટ ગુણસ્થાનોને પ્રાપ્ત કરાવનાર ક્ષયોપશમભાવ પણ માર્ગ છે. પ્રભુ તેનો દાતા છે. (સરણ-

દણ જીવદણ બોહિદણ ધમ્મદણ ધમ્મદેસણ ધમ્મનાયણ ધમ્મ-

માર્ગઃ, તસ્ય દયઃ—દાતા, ‘સરણદણ’ શરણદયઃ—શરણં—પરિત્રાણં કર્મરિપુવશીકૃતતયા વ્યાકુલાનાં પ્રાણિનાં રક્ષણસ્થાનં વા તસ્ય દયઃ । ‘જીવદણ’ જીવદયઃ—જીવેષુ—એકેન્દ્રિયાદિસમસ્તપ્રાણિષુ દયા—સઙ્કટમોચનલક્ષણા યસ્યેતિ, યદ્વા—જીવન્તિ મુનયો યેન સ જીવઃ—સંયમજીવિતં તસ્ય દયઃ । ‘બોહિદણ’ બોધિદયઃ—બોધિઃ—જિનપ્રણીતધર્મમૂલભૂતા તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનલક્ષણસમ્યગ્દર્શનરૂપા તસ્યા દયઃ । ‘ધમ્મદણ’ ધર્મદયઃ—ધર્મઃ—દુર્ગતિ-પ્રપતજન્તુસંરક્ષણલક્ષણઃ શ્રુતચારિત્રાત્મકસ્તસ્ય દયઃ । ‘ધમ્મદેસણ’ ધર્મદેશકઃ—ધર્મઃ=પ્રાક્ષપ્રતિપાદિતલક્ષણસ્તસ્ય દેશકઃ=ઉપદેશકઃ । ‘ધમ્મનાયણ’ ધર્મનાયકઃ—

વ્યાકુલ હુણ પ્રાણિયોં કો પ્રભુ નિર્ભય સ્થાન કે પ્રદાયક હૈં, (જીવદણ) ભગવાન્ કી દયા કેવલ સંજી પંચેન્દ્રિય જીવોં તક હી સીમિત (વ્યાપ્ત) નહીં હૈ, કિન્તુ એકેન્દ્રિય સે લેકર સમસ્ત સંજી અસંજી પંચેન્દ્રિય પ્રાણિયોંતક ભી વહ એકરસ હોકર બહ રહી હૈ, ફસલિયે વે જીવદય હૈં । અથવા—મુનિજન જિસ જીવનસે જીતે હૈં એસા જો સંયમરૂપ જીવિત હૈં ઉસકે પ્રદાતા હોંને સે પ્રભુકો જીવદય કહા ગયા હૈ । (બોહિદણ) ભગવાન્ સમકિતરૂપી બોધકો દેને વાલે હૈં । (ધમ્મદણ) દુર્ગતિ મેં ગિરતે હુણ પ્રાણિયોંકો જો ધારણ અર્થાત્ રક્ષણ કરે વહ શ્રુતચારિત્રાત્મક ધર્મ હી ધર્મ હૈ । ભગવાન ઉસ ધર્મકે દાતા હૈં । (ધમ્મદેસણ) ભગવાન્ ઉક્તસ્વરૂપ ધર્મકે ઉપદેશક હૈ । (ધમ્મનાયણ) ભગવાન્ ઉસ ધર્મકે નાયક=નેતા અર્થાત્ પ્રભવસ્થાન હૈં ।

દણ) કર્મરૂપી શત્રુઓથી વશ કરાએલા હોવાના કારણે વ્યાકુલ થએલાં પ્રાણિઓને પ્રભુ નિર્ભય સ્થાનનો પ્રદાયક છે. (જીવદયે) ભગવાનની દયા કેવલ સંજી પંચેન્દ્રિય જીવો સુધી જ વ્યાપ્ત (મર્યાદિત) નથી, પરંતુ એકેન્દ્રિયથી માંડીને સમસ્ત સંજી અસંજી પંચેન્દ્રિય પ્રાણિઓ સુધી પણ તેઓ એકરસ થઈને વહે છે, તે માટે તેઓ જીવદય છે. અથવા મુનિજન જેવું જીવન જીવે છે તેવું સંયમરૂપ જીવન જે છે તેના પ્રદાતા હોવાથી પ્રભુને જીવદય કહેલા છે. (બોહિદયે) ભગવાન્ સમકિતરૂપી બોધને દેવાવાળા છે. (ધમ્મદણ) દુર્ગતિમાં પડતાં પ્રાણિઓનો ઉદ્ધાર અર્થાત્ રક્ષણ કરે તે શ્રુતચારિત્રાત્મક ધર્મ જ ધર્મ છે. ભગવાન્ તે ધર્મના દાતા છે. (ધમ્મદેસણ) ભગવાને ઉપર કહેલા સ્વરૂપ ધર્મના ઉપદેશક છે. (ધમ્મનાયણ) ભગવાન તે ધર્મના નાયક=નેતા અર્થાત્ પ્રભવસ્થાન છે. (ધમ્મસારહી) ભગવાન ધર્મરૂપ

સારહી ધમ્મવરચાઉરંત-ચક્કવટ્ટી દીવો તાણં સરણગર્હ પડટ્ટા

ધર્મસ્ય નાયકઃ=નેતા પ્રભવ इति यावत् । ‘ ધમ્મસારહી ’ ધર્મસારથિઃ—ધર્મસ્ય સારથિઃ, ભગવતિ સારથિત્વાગેપેણ ધર્મે રથત્વારોપો વ્યજ્યતે इति પરમ્પરિતરૂપકાલઙ્કારસ્તસ્માદ્ યથા સારથી રથદ્વારા તત્સ્થમધ્વનીનં સુખપૂર્વકમભીષ્ટં સ્થાનં નયતિ ઉન્માર્ગગમનાદિતશ્ચ પ્રતિરુણદ્વિ તથા ભગવાન્ ધર્મદ્વારા મોક્ષસ્થાનમિતિ ભાવઃ । ‘ ધમ્મવર-ચાઉરંત-ચક્કવટ્ટી ’ ધર્મવરચાતુરંતચક્કવર્તી—દાન—શીલ—તપો—ભાવૈઃ ચતસૃણાં નરકાદિગતીનાં ચતુર્ણાં વા કષાયાણામન્તો નાશો યસ્માત્, અથવા—ચતસ્રો ગતીશ્ચતુરઃ કષાયાન્ વાઽન્તયતિ નાશયતીતિ, યદ્વા—ચતુર્ભિર્દાનશીલતપોભાવૈઃ કૃત્વાઽન્તો રમ્યોઽથવા ચત્વારો દાનાદયોઽન્તા—અવયવા

(ધમ્મસારહી) ભગવાન્ ધર્મરૂપ રથકા સંચાલન કરનેવાળે છે । ભગવાનમાં સારથિત્વકા આરોપ કરનેસે ધર્મમાં રથત્વકા આરોપ વ્યજ્જિત હોતા છે, इसलिये यहाँ परम्परितरूपक अलंकार समझना चाहिये । इसका अभिप्राय यह है कि, जैसे सारथी रथद्वारा रथ पर बैठे हुए पथिकोंको सुखपूर्वक उनके अभीष्ट स्थानमें पहुँचाता है, उन्मार्गगमन आदिसे उनको रोकता है, उसी प्रकार भगवान् भी धर्मरूप रथमें भव्य प्राणियोंको बैठाकर उनके द्वारा उन्हें उनका अभीष्ट मोक्ष स्थानतक सुखपूर्वक पहुँचा देते हैं और उन्हें उन्मार्गसे रोकते हैं । इसलिये भगवान् धर्मसारथि कहे गये हैं । (धम्वर-चाउरंतचक्कवट्टी) दान, शील, तप, एवं भाव इन धर्मके जिन चार पायों द्वारा चार नरकादि गतियोंका अथवा चार क्रोधादि कषायोंका नाश होता है, अथवा—चार गतियोंका एवं चार कषायोंका जो नाश करता है, अथवा दान, शील, तप एवं

રથના સંચાલન કરવાવાળા છે. ભગવાનમાં સારથિત્વના આરોપ કરવાથી ધર્મમાં રથત્વનો આરોપ વ્યંજિત (પ્રગટ) થાય છે. તેથી અહીં પરંપરિતરૂપક અલંકાર સમજવો જોઈએ. તેનો અભિપ્રાય એ છે કે જેમ સારથી રથદ્વારા રથ પર બેઠાં બેઠાં પથિકોને સુખપૂર્વક તેના અભીષ્ટ સ્થાને પહોંચાડે છે, આડા—અવળા માર્ગથી તેને રોકે છે, તે જ પ્રકારે ભગવાન પણ ધર્મરૂપ રથમાં ભવ્ય પ્રાણિઓને જેસાડીને તે દ્વારા તેમને તેમના અભીષ્ટ મોક્ષ સ્થાન-સુધી સુખપૂર્વક પહોંચાડી દે છે અને તેમને ખોટા માર્ગથી રોકે છે. આથી ભગવાન ધર્મસારથિ કહેવાય છે. (ધમ્મવરચાઉરંતચક્કવટ્ટી) દાન, શીલ, તપ, તેમજ ભાવ એ ધર્મના જે ચાર પાયા છે તે વડે ચાર નરકાદિ ગતિઓનો અથવા ચાર કષાયોનો નાશ થાય છે અથવા ચાર ગતિઓનો તેમજ ચાર

યસ્ય, યદ્વા-ચત્વારિ દાનાદીનિ અન્તાનિ સ્વરૂપાણિ યસ્ય, 'અન્તોઽવયવે સ્વરૂપે ચ'—ઇતિ હેમચન્દ્રઃ । સ ચતુરન્તઃ, સ એવ સ્વાર્થિકે પ્રજ્ઞાઘણિ ચાતુરન્તઃ, ચાતુરન્ત એવ ચક્રં જન્મજરામરગોચ્છેદકત્વેન ચક્રતુલ્યત્વાત્, વરશ્ચ તત્-ચાતુરન્તચક્રં વરચાતુરન્તચક્રમ્, વરપદેન રાજચક્રાપેક્ષયાઽસ્ય શ્રેષ્ઠત્વં વ્યજ્યતે લોકદ્વયસાધકત્વાત્, ધર્મ એવ વરચાતુરન્તચક્રં ધર્મવરચાતુરન્તચક્રં તાદૃશસ્ય ધર્માઽતિરિક્તસ્યાસમ્ભવાત્ । અતએવ સૌગતાદિ-ધર્માભાસનિરાસઃ, તેષાં તાત્ત્વિકાર્થપ્રતિપાદકત્વાભાવેન શ્રેષ્ઠત્વાભાવાત્, ધર્મવરચાતુરન્તચક્રેણ વર્તિતું શીલં યસ્યેતિ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી, ચક્રવર્તિપદેન ષટ્સ્વખંડાધિપતિ-સાદૃશ્યં વ્યજ્યતે, તથાહિ-ચત્વારઃ-ઉત્તરદિશિ હિમવાન્ શેષદિક્ષુ ચોપાધિભેદેન સમુદ્રા અન્તાઃ સીમાનસ્તેષુ સ્વામિત્વેન ભવશ્ચાતુરન્તઃ, ચક્રેણ-રત્નભૂત-પ્રહરણવિશેષસદૃશેન ચારિત્રરત્નેન વર્તિતું શીલં યસ્ય સ ચક્રવર્તી, ચાતુરન્તશ્ચાસૌ ચક્રવર્તી ચ ચાતુરન્તચક્રવર્તી,

ભાવ ઇન ચારકો લેકર જો રમ્ય-શ્રેષ્ઠ હૈ, અથવા-દાનાદિક ચાર જિસકે અવયવ હૈ, અથવા-દાનાદિક ચાર જિસકે સ્વરૂપ હૈ, વહ ચતુરન્ત હૈ, ચતુરન્ત શબ્દસે સ્વાર્થમેં અણ્ પ્રત્યય કરને પર “ચાતુરન્ત” બન જાતા હૈ, ચાતુરન્તહી જન્મ, જરા ઓર મરણકા ઉચ્છેદક હોનેસે એક ચક્ર હૈ, ઇસે વર શબ્દકે સાથ સંબંધિત કરને પર “વરચાતુરન્તચક્ર” એસા પદ બન જાતા હૈ, વર પદ ઇસ ચાતુરન્તચક્રકો રાજચક્રકી અપેક્ષા શ્રેષ્ઠ પ્રકટ કરનેકે લિયે દિયા ગયા હૈ । રાજચક્ર તો કેવલ ઇસ લોકકાહી સાધક હોતા હૈ તબ કિ યહ ચાતુરન્તચક્ર ઇહલોક ઓર પરલોક ઇન દોનોં લોકોંકા સાધક માના ગયા હૈ । અબ ઇસ “વરચાતુરન્તચક્ર” પદકો ધર્મકે સાથ મિલોને પર “ધર્મવરચાતુરન્તચક્ર” ઇસ પ્રકારકા પદ નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ,

કષાયોનો જે નાશ કરે છે અથવા દાન, શીલ, તપ તેમજ ભાવ એ ચારને લઈને જે રમ્ય-શ્રેષ્ઠ છે અથવા દાનાદિક ચાર જેનાં અવયવો છે અથવા દાનાદિક ચાર જેનું સ્વરૂપ છે તે ચતુરન્ત છે. ચતુરન્ત શબ્દથી સ્વાર્થમાં અણ્ પ્રત્યય કરવાથી ચાતુરન્ત બને છે. ચાતુરન્ત જ જન્મ જરા અને મરણનો નાશ કરનાર હોવાથી ચક્ર છે, તેને વર શબ્દની સાથે જોડવાથી ‘વરચાતુરન્તચક્ર’ એવું પદ બની જાય છે. વર પદ આ ચાતુરન્તચક્રને રાજચક્રની અપેક્ષાએ શ્રેષ્ઠ પ્રકટ કરવા માટે આપેલું છે. રાજચક્ર તો કેવલ આજ દોકનો સાધક બને છે જ્યારે આ ચાતુરન્તચક્ર ઈહલોક અને પરલોક એ બન્ને દોકોનો સાધક માનવામાં આવે છે. હવે આ ‘વરચાતુરન્તચક્ર’ પદને ધર્મની સાથે જોડવાથી ‘ધર્મવરચાતુરન્તચક્ર’ આ પ્રકારનું પદ

અપ્પહિહય-વર-નાણ-દંસણ-ધરે વિયદ્દચ્છડમે જિણે જાવણ તિણે

ધર્મેણ—ન્યાયેન વરઃ શ્રેષ્ઠઃ इतरतीर्थिकाऽपेक्षयेति धर्मवरः, धर्माः पुण्य—यम—न्याय स्वभावा-
ऽऽचारसोमपाः, इत्यमरः, स चासौ चातुरन्तचक्रवर्ती च । यद्वा—चातुरन्तं च तच्चक्रं
चातुरन्तचक्रं, वरञ्च तच्चातुरन्तचक्रं वरचातुरन्तचक्रं धर्मो वरचातुरन्तचक्रमिव धर्मवरचातुरन्त-
चक्रं, तेन वर्तितुं वर्तयितुं वा शीलं यस्य स तथा । ‘दीवो’ द्वीपः—संसारसमुद्रे
निमज्जतां द्वीपतुल्यत्वात् । ‘ताणं’ त्राणं कर्मकदर्थितानां भव्यानां रक्षणसमर्थः । अत एव तेषां
‘सरणगई’ शरणगतिः—आश्रयस्थानम् । ‘पइट्ठा’ प्रतिष्ठा—कालत्रयेऽप्यविनाशित्वेन
स्थितः । ‘अप्पडिहय—वर—नाण—दंसण—धरे’ अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरः—प्रतिहतं

જિસકા અર્થ “ ધર્મહી વરચાતુરન્તચક્ર હૈ ” એસા હોતા હૈ । અન્ય સૌગતાદિક ધર્મ
ધર્મવરચાતુરન્તચક્ર નહીં હૈ; ક્યોંકિ ઉનમૈં તાત્વિકતા કા અભાવ હૈ । ઇસકા મી કારણ એક
યહી હૈ કિ વે યથાવસ્થિત અર્થકા યથાર્થ પ્રતિપાદન નહીં કરતે હૈ । ઇસ ધર્મવર-
ચાતુરન્તચક્રકે અનુસાર જિસકે વર્તન કરનેકા સ્વભાવ હૈ વહ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી
હૈ, અત એવ ભગવાન્ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી હૈ । ભગવાન્ સંસાર સમુદ્રમૈં ડૂબનેવાલે
પ્રાણિયોંકે દ્વીપતુલ્ય હૈ; ઇસલિયે વે સ્વયં (દીવો) દ્વીપ હૈ । (તાણં) કર્મોં સે
કદર્થિત ભવ્યોંકે પ્રભુ રક્ષક હૈ ઇસલિયે ત્રાતા કહે ગયે હૈ, ઓર ઇસી કારણ વે
(સરણગઈ) ભવ્યોંકે લિયે શરણસ્વરૂપ હૈ । (પइट्ठा) પ્રભુ સ્વયં પ્રતિષ્ઠાસ્વરૂપ
ઇસલિયે હૈં કિ તીનોં કાલોં મૈં મી ઉનકા કમી મી વિનાશ નહીં હોતા હૈ । (અપ્પ-
હિહય—વર—નાણ—દંસણધરે) પ્રભુકા અનંતજ્ઞાન એવં અનંત દર્શન અપ્રતિહત—નિરા-

નિષ્પન્ન થાય છે. જેનો અર્થ ‘ધર્મ જ વરચાતુરન્તચક્ર’ છે એવો થાય
છે. બીજા સૌગત આદિ, ધર્મ ધર્મવરચાતુરન્તચક્ર નથી; કેમકે તેમાં તાત્વિ-
કતાનો અભાવ છે. તેનું પણ કારણ એક તો એ છે કે તેઓ યથાવસ્થિત
અર્થને યથાર્થ (બરાબર) પ્રતિપાદન કરતા નથી. આ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રને
અનુસરીને જેનો વર્તન કરવાનો સ્વભાવ છે તે ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી છે.
એટલે જ ભગવાન ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી છે. ભગવાન સંસાર સમુદ્રમાં
ડૂબવાવાળા પ્રાણિઓના દ્વીપ જેવા છે તેથી તેઓ પોતે (દીવો) દ્વીપ છે.
(તાણં) કર્મોથી કદર્થિત ભવ્યોના પ્રભુ રક્ષક છે તે માટે તેઓ ત્રાતા કહે-
વાય છે, અને તે જ કારણથી તેઓ (સરણગઈ) ભવ્યોને માટે શરણસ્વરૂપ
છે. (પइट्ठा) પ્રભુ પોતે પ્રતિષ્ઠા—સ્વરૂપ એટલા માટે છે કે ત્રણે કાળમાં પણ
તેમનો કદીએ વિનાશ થતો નથી. (અપ્પહિહય—વર—નાણ—દંસણ—ધરે) પ્રભુનું

તારણ બુદ્ધે બોહણ મુત્તે મોયગે સવ્વન્નૂ સવ્વદરિસી સિવ-મયલ-

ભિત્તાઘાવરણસ્વલિતં ન પ્રતિહતમ્—અપ્રતિહતં, જ્ઞાનઞ્ચ દર્શનઞ્ચેતિ જ્ઞાનદર્શને, વરે શ્રેષ્ઠે ચ તે જ્ઞાનદર્શને—વરજ્ઞાનદર્શને—કેવલજ્ઞાનકેવલદર્શને, અપ્રતિહતે વરજ્ઞાનદર્શને—અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શને, ધરતીતિ ધરઃ—અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનયોર્ધરઃ—અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધરઃ—આવરણરહિતકેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનધારી । ‘વિયટ્ટચ્છુત્તમે’ વ્યાવૃત્તચ્છદ્ધા—છાદ્યતે—આવ્રિયતે કેવલજ્ઞાન—કેવલદર્શનાદ્યાત્મનોડનેતિ છદ્ધા—ઘાતિકકર્મવૃન્દં—જ્ઞાનાવરણીયાદિરૂપં કર્મજાતમ્, વ્યાવૃત્તં—નિવૃત્તં છદ્ધા યસ્માત્ સ વ્યાવૃત્તચ્છદ્ધા । ‘જિણે’ જિનઃ—રાગદ્વેષશત્રુવિજેતા । ‘જાવણે’ જાપકઃ—જાપયતિ—રાગદ્વેષાદિશત્રૂન્ જયન્તં ભવ્યજીવગણં ધર્મ-દેશનાદિના પ્રેરયતીતિ જાપકઃ । ‘તિણે’ તીર્ણઃ—સ્વયં સંસારોઘં તીર્ણઃ—ઉત્તીર્ણઃ । ‘તારણે’ તારકઃ—તારયતિ—તરતોડન્યાન્ ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ તારકઃ । ‘બુદ્ધે’ બુદ્ધઃ—સ્વયં

વરગ એવં વર=શ્રેષ્ઠ છે અર્થાત્ પ્રભુ આવરણરહિત કેવલજ્ઞાન, કેવલદર્શન કે ધારક છે । (વિયટ્ટચ્છુત્તમે) કેવલજ્ઞાન એવં કેવલદર્શનાદિક જિસકે દ્વારા આવૃત્ત હોતે છે વહ યહાં છદ્ધા શબ્દસે ગૃહીત હુઆ છે, અતઃ ઇસ દષ્ટિસે ‘છદ્ધા’ શબ્દકા અર્થ ઘાતિક કર્મ હોતા છે, યહ છદ્ધા પ્રભુકી આત્માસે સર્વથા નિવૃત્ત હો ચુકા છે, ઇસલિયે પ્રભુ વ્યાવૃત્તચ્છદ્ધા છે । (જિણે) રાગાદિક અન્તરંગ શત્રુઓં પર વિજય પાને સે પ્રભુ જિન છે । (જાવણે) જોતનેવાલે ભવ્યજોવાં કો પ્રભુ ને અપની ધર્મદેશના દ્વારા આત્મ-કલ્યાણ કે માર્ગ કી ઓર પ્રેરિત કિયા, ઇસલિયે પ્રભુ જાપક—જિતાનેવાલે છે । (તિણે) સંસારસમુદ્ર સે પાર હોને કી વજહ સે પ્રભુ સ્વયં તીર્ણ છે । (તારણે) ભગવાન ને સંસારસમુદ્ર સે પાર હોને કે ઇચ્છાવાલે જીવોં કો પ્રેરિત કિયા ઇસલિયે

અનંતજ્ઞાન તેમજ અનંત દર્શન અપ્રતિહત—નિરાવરણ તેમજ વર=શ્રેષ્ઠ છે અર્થાત્ પ્રભુ આવરણરહિત કેવલજ્ઞાન અને કેવલ દર્શનના ધારક છે. (વિયટ્ટચ્છુત્તમે) કેવલજ્ઞાન તેમજ કેવલ દર્શનાદિક જેના દ્વારા ઢંકાઈ જાય છે તે અહીં છદ્ધા શબ્દથી લેવામાં આવેલ છે. આમ એ દષ્ટિથી છદ્ધા શબ્દનો અર્થ ઘાતિકકર્મ થાય છે. આ છદ્ધા પ્રભુના આત્માથી સર્વથા નિવૃત્ત થયેલો છે. માટે પ્રભુ વ્યાવૃત્ત—છદ્ધા છે. (જિણે) રાગાદિક અન્તરંગ શત્રુઓ પર વિજય મેળવવાથી પ્રભુ જિન છે. (જાવણે) જીતવાવાળા ભવ્ય જીવોને પ્રભુએ પોતાની ધર્મદેશના દ્વારા આત્મકલ્યાણના માર્ગના તરફ પ્રેરિત કર્યાં તે માટે પ્રભુ જાપક—જીતાવવાવાળા છે. (તિણે) સંસાર સમુદ્રથી પાર થવાના કારણે પ્રભુ પોતે તીર્ણ છે. (તારણે) ભગવાને સંસાર સમુદ્રથી પાર થવાના ઇચ્છાવાળા જીવોને

બોધં પ્રાપ્તઃ । ‘બોદ્ધે’ બોધકઃ બુદ્ધમાનાન્ અન્યાન્ ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ બોધકઃ । ‘મુક્તે’ મુક્તઃ—અમોચિ સ્વયં કર્મપંજરાદિતિ મુક્તઃ । ‘મોચયે’ મોચકઃ—મુચ્યમાનાનન્યાન્ ભવ્યજીવાન્ પ્રેરયતીતિ મોચકઃ । ‘સર્વજ્ઞ’ સર્વજ્ઞઃ—સર્વં સકલદ્રવ્ય—ગુણ—પર્યાયલક્ષણં વસ્તુજ્ઞાતં યાથાતથ્યેન જાનાતીતિ સર્વજ્ઞઃ । ‘સર્વદર્શિ’ સર્વદર્શી—સર્વ—સમસ્તં પદાર્થસ્વરૂપં સામાન્યેન દ્રષ્ટું શીલમસ્યાઽસૌ સર્વદર્શી । ‘સિવ’ શિવં નિર્વિલોપદ્રવરહિતત્વાચ્છિવં—કલ્યાણમયં, સ્થાનમિત્યસ્ય વિશેષગમિદમ્ । શિવાદીનાં સર્વેષાં દ્વિતીયાન્તાનામગ્રેતનેન સંપાવિતકામે—ઇત્યનેન સમ્બન્ધઃ । ‘અચલ’ અચલં સ્વાભાવિકપ્રાયોગિકચલનક્રિયાશૂન્યમ્ । ‘અરુચં’ અરુજમ્—અવિધમાના રુજા યસ્ય

તારક હૈં । (બુદ્ધે) સ્વયં બોધ કો પ્રાપ્ત હોને કે કારણ ભગવાન્ બુદ્ધ હૈં, (બોદ્ધે) બુદ્ધમાન અનેક ભવ્ય જીવોં કો પ્રેરિત કરને સે વે બોધક હૈં, (મુક્તે) ભગવાન ને સ્વયં કર્મરૂપી પાંજરે સે મુક્તિ પ્રાપ્ત કી, इसलिये मुक्त हॆं । (मोचये) और कर्मरूपी पांजरे से मुक्त होने की इच्छावाले जीवों को उन्हों ने मुक्त किया इसलिये वे मोचक हॆं । (सर्वज्ञ) सकलद्रव्यों के समस्त गुण और पर्यायों को युगपत् हस्तामलकवत् यथार्थ जानने से प्रभु सर्वज्ञ हॆं । (सर्वदर्शि) तथा सामान्यरूप से त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यों के द्रष्टा होने से प्रभु सर्वदर्शी हॆं । (सिव—मयल—मरुच—मणंत—मक्खय—मच्चावाह—मपुणरावत्ति सिद्धिगणामधेयं ठाणं संपाविउकामे) निखिल उपद्रव रहित होने से शिव=कल्याणमय, स्वाभाविक एवं प्रायोगिक चलनक्रिया से शून्य होने के कारण अचल, शरीर तथा मन से

પ્રેરિત કર્યા તેથી તેઓ તારક છે. (બુદ્ધે) પોતે બોધ પામેલા હોવાના કારણે ભગવાન બુદ્ધ છે. (બોદ્ધે) બુદ્ધમાન અનેક ભવ્ય જીવોને બોધ માટે પ્રેરિત કરવાથી તેઓ બોધક છે. (મુક્તે) ભગવાને પોતે કર્મરૂપી પાંજરામાંથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી તેથી તેઓ મુક્ત છે. (મોચયે) અને કર્મરૂપી પાંજરામાંથી મુક્ત થવાના ઇચ્છાવાળા જીવોને તેઓએ મુક્ત કર્યા તેથી તેઓ મોચક છે. (સર્વજ્ઞ) સકલ દ્રવ્યો (પદાર્થોના) સમસ્ત ગુણ અને પર્યાયોને યુગપત્ હસ્તામલકવત્ યથાર્થરૂપે જાણવાથી પ્રભુ સર્વજ્ઞ છે. (સર્વદર્શિ) તથા સામાન્ય રૂપથી ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત દ્રવ્યોના દ્રષ્ટા હોવાથી પ્રભુ સર્વદર્શી છે. (સિવ—મયલ—મરુચ—મણંત—મક્ખય—મચ્ચાવાહ—મપુણરાવત્તિ સિદ્ધિગણામધેયં ઠાણં સંપાવિતકામે) સકળ ઉપદ્રવ રહિત હોવાથી શિવ=કલ્યાણમય, સ્વાભાવિક તેમજ પ્રાયોગિક ચલન ક્રિયાથી શૂન્ય હોવાના કારણે અચલ,

મરુચ-મણંત-મક્ષય-મઘ્વાબાહ-મપુણરાવિત્તિ સિદ્ધિગણામધેયં
ઠાણં સંપાવિઝકામે અરહા જિણે કેવલી સત્તહત્થુસ્સેહે સમચઝ-

તત્—અવિદ્યમાનશરીરમનસ્કત્વાત્—આધિવ્યાધિરહિતમ્ इत्यर्थः । ‘અણંતં’ અનન્તમ્—
અવિદ્યમાનોઽન્તો નાશો यस્ય તત્ । અત એવ ‘અક્ષયં’ અક્ષયં—નાસ્તિ લેશતોઽપિ
ક્ષયો यस્ય તત્—અવિનાશીત્યર્થઃ । ‘અઘ્વાબાહં—અવ્યાબાધં ન વિદ્યતે વ્યાબાધા—પીડા
દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ યત્ર તત્ । ‘અપુણરાવિત્તિ’ અપુનરાવૃત્તિ—અવિદ્યમાના પુનરા-
વૃત્તિઃ—સંસારે પુનરવતરણં યસ્માત્ તત્, યત્ર ગત્વા ન કદાચિદપ્યાત્મા વિનિવર્તતે,
સમાન્નાતમન્યત્રાઽપિ—ન સ પુનરાવર્તતે, ન સ પુનરાવર્તતે—इति । इत्थमुक्तશिवत्वादि—
વિશેષગવિશિષ્ટં—‘સિદ્ધિગણામધેયં’ સિદ્ધિગતિનામધેયં—સિદ્ધિગતિરિતિ નામધેયં=
પ્રશસ્તં નામ यस્ય તત્, ‘ઠાણં’ સ્થાનમ્—સ્થીયતેઽસ્મિન્ इति स्थानं—લોકાગ્રલક્ષણમ્ ।
‘સંપાવિઝકામે’ સમ્પ્રાપ્તુકામઃ સમ્યક્ પ્રાપ્તું પ્રયત્નવાન્ इत्यर्थः । ‘અરહા’ અરહાઃ—અવિદ્યમાનં
રહઃ—તિરોહિતં વસ્તુજાતં यस્ય સોઽરહાઃ, ‘અરહસ્’ इति सकारान्तः शब्दः; કેવલજ્ઞાનબલાત્
હસ્તામલકીકૃતલોકાલોકવર્તિવસ્તુકલાપ इति यावत् । ‘જિણે’ જિનઃ—રાગદ્રેષાદિવિજેતા ।
‘કેવલી’ કેવલી—કેવલજ્ઞાનસમ્પન્નઃ । ‘સત્તહત્થુસ્સેહે’સત્તહસ્તોત્સેધઃ—ઉત્સેધઃ=ઉચ્ચૈસ્ત્વં

રહિત હોને કે કારણ અરુજ—આધિવ્યાધિરહિત, અનંત—નાશરહિત, અતએવ અક્ષય,
અવ્યાબાધ—દ્રવ્યપીડા એવં ભાવપીડાસે સર્વથા નિર્મુક્ત, અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ—જહાં પ્રાપ્ત હોને પર
પુનઃ સંસાર મેં વાપિસ જીવ કા આના ન હો એસે સ્વરૂપવાલે, સિદ્ધિગતિ ઇસ પ્રશસ્ત
નામ સે પ્રસિદ્ધ સ્થાન—લોકાગ્રસ્થાન કો પ્રાપ્ત કરને વાલે [અરહા] કેવલજ્ઞાન કે
બલ સે લોકાલોકવર્તિ સમસ્ત વસ્તુજાત કો હસ્તામલકવત્ જાનને વાલે વે પ્રભુ હૈં,
એવં (જિણે) રાગદ્રેષાદિકે વિજેતા હૈં [કેવલી] કેવલજ્ઞાનસંપન્ન હૈં । [સત્ત-

શરીર તથા મનથી રહિત હોવાના કારણે અરુજ—આધિ—વ્યાધિ—રહિત,
અનંત—નાશ રહિત, અને તેટલા માટે અક્ષય, અવ્યાબાધ—દ્રવ્યપીડા તેમજ
ભાવપીડાથી સર્વથા નિર્મુક્ત, અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ—જ્યાં પહોંચ્યા પછી ફરીથી
સંસારમાં પાછા જીવનું આવવું ન થાય એવાં સ્વરૂપવાળા સિદ્ધિગતિ એ
પ્રશસ્ત નામથી પ્રસિદ્ધ સ્થાન—લોકાગ્ર સ્થાનને પ્રાપ્ત કરવાવાળા (અરહા) કેવલ
જ્ઞાનના બળથી લોકાલોકવર્તી સમસ્ત વસ્તુજાતને હસ્તામલકવત્ બાણુવાવાળા
તે પ્રભુ છે, તેમજ (જિણે) રાગદ્રેષ આદિના વિજેતા છે (કેવલી) કેવલજ્ઞાન-
સંપન્ન છે. (સત્તહત્થુસ્સેહે) સાત હાથ ઉંચા છે (સમ—ચઝરંસ—સંઠાણ—સંઠિય)

**रंस-संठाण-संठिए वज्ज-रिसह-नाराय-संघयणे अणुलोमवाउवेगे
कंकग्गहणी कवोयपरिणामे सउणिपोस-पिट्ठंतरोरुपरिणए पउमु-**

सप्तहस्त उत्सेधो यस्य स सप्तहस्तोत्सेधः—सप्तहस्तोच्छ्रित इत्यर्थः । ‘सम—चउ—रंस—
संठाण—संठिए’ सम—चतुरस्र—संस्थान—संस्थितः—समाः—तुल्याःअन्यूनाधिकाः, चतस्रोऽ-
स्रयः=हस्तपादोपर्यधोरूपाश्चत्वारोऽपि विभागाः [शुभलक्षणोपेताः] यस्य (संस्थानस्य)
तत् समचतुरस्रं—तुल्यारोहपरिणाहं तच्च संस्थानम्—आकारविशेष इति समचतुरस्र-
संस्थानं, तेन संस्थितः=युक्तः । ‘वज्ज-रिसह-नाराय-संघयणे’ वज्रर्षभनाराचसंहननः—
वज्रं=कीलिकाकारमस्थि, ऋषभः—तदुपरिवेष्टनपट्टाऽऽकृतिकोऽस्थिविशेषः, नाराचम्—
उभयतोमर्कटबन्धः, तथा च द्वयोरस्थनोः परिवेष्टितयोरुपरि तदस्थित्रयं पुनरपि दृढी-
कर्तुं तत्र निखातं कीलिकाऽऽकारं वज्रनामकमस्थि यत्र भवति तद् वज्रऋषभनाराचं तत्
संहनम्—संहन्यन्ते=दृढीक्रियन्ते शरीरपुद्गला येन तत्संहननम्—अस्थिनिचयो यस्य
स वज्रऋषभनाराचसंहननः । ‘अणुलोमवाउवेगे’ अनुलोमवायुवेगः—अनुलोमोऽनुकूलो
वायुवेगः=शरीराऽन्तर्वर्ती वायुवेगो यस्य स तथा, वायुप्रकोपरहितदेह इत्यर्थः,
‘कंकग्गहणी’ कङ्कग्रहणी—कङ्कः पक्षिविशेषः, तस्य ग्रहणीव ग्रहणी यस्य स कङ्कग्रहणी—
कङ्कगुदाशयवद् गुदाशयवान् । ‘कवोयपरिणामे’ कपोतपरिणामः—कपोतस्यैव परिणामः
आहारपरिपाको यस्य स तथा, यथा कपोतस्य जाठराऽनलः पाषाणकणानपि
पाचयति तथा तस्यापि जाठरानलोऽन्तप्रान्तादिसर्वविधाऽऽहारपरिपाचकः । ‘सउणि-

हत्थुस्सेहे] सात हाथ उँचे हैं । (समचउरंस—संठाण—संठिए) समचतुरस्रसंस्थान-
वाले [वज्ज—रिसह—नाराय—संघयणे] वज्र—ऋषभ—नाराच—संहनन से युक्त [अणु-
लोमवाउवेगे] अनुकूल शरीरान्तर्वर्ती वायु के वेग से समन्वित, [कंकग्गहणी]
कंकपक्षी के गुदाशय के समान गुदाशयवाले, [कवोयपरिणामे] कपोत की
जठराग्नि जिस प्रकार कंकर पत्थर के कणों को भी पचा देती है उसी प्रकार प्रभु
की जठराग्नि भी सब प्रकार के आहार को पचा देती है ऐसी जठराग्नि वाले,

समचतुरस्र संस्थानवाला (वज्ज—रिसह—नाराय—संघयणे) वज्र—ऋषभ—नाराच-
संहननથી युक्त (अणुलोमवाउवेगे) अनुकूल शरीरान्तर्वर्ती वायुना वेगથી
समन्वित, (कंकग्गहणी) कंक पक्षीना गुदाशयना जेवां गुदाशयवाला
(कवोयपरिणामे) कपोतना जठराग्नि जे प्रकारे कंकरा—पत्थरनी कण्ठिओने पण
पचावी दे छे तेज प्रकारे प्रभुना जठराग्नि पण अन्त प्रान्तआदि सर्व प्रका-

प्पल-गंध-सरिस-निस्सास-सुरभि-वयणे छवी निरायंक-उत्तम-पस-

पोस-पिटुंतरोरु-परिणए' शकुनि-पोस-पृष्ठान्तरोरुपरिणतः-शकुनेः पक्षिणः पोसवत् पुरीषसम्पर्करहितो निरुपलेपः पोसः-गुदाशयो यस्य स शकुनिपोसः, पृष्ठञ्च अन्तरे च-पृष्ठोदरयोरन्तरालवर्तिनी अङ्गे-पार्श्वविति यावत्, ऊरू च जङ्घे एतेषां प्राण्यङ्गत्वात्समाहार-द्वन्द्वे-पृष्ठा-ऽन्तरोरु पृष्ठपार्श्वजङ्घम्-तत् परिणतं-विशिष्टपरिणामवत्-सुजातं यस्य स तथा, शकुनिपोसश्चासौ पृष्ठान्तरोरुपरिणतश्च स शकुनिपोसपृष्ठाऽन्तरोरुपरिणतः-निलेपमलद्वारसुन्दरपृष्ठपार्श्वजङ्घावान्-इत्यर्थः । 'पउमु-प्पल-गंध-सरिस-निस्सास-सुरभि-वयणे' पद्मोत्पल-गन्ध-सदृश-निःश्वास-सुरभि-वदनः-पद्मं=कमलम्, उत्पलं=नीलकमलं तयोर्गन्धः, अथवा पद्मं-पद्मकाभिधानं गन्ध-द्रव्यम्, उत्पलं च उत्पलकुष्ठं तयोर्गन्धः, तेन सदृशः-समो यो निःश्वासः-श्वासोच्छ्वासपवनः तेन सुरभि-सौरभमयं वदनं-मुखं यस्य स तथा, परिमल-मयपदार्थसौरभसम्भारसम्भृतश्वासोच्छ्वाससुरभितमुख इति भावः । 'छवी' छविः-छविमान्-दीप्तिदेदीप्यमानशरीर इत्यर्थः । 'निरायंक-उत्तम-पसत्थ-अइ-सेय-निरुवम-पले' निरातङ्कोत्तमप्रशस्ताऽतिश्वेतनिरुपमपलः, तत्र-आतङ्को रोगो निर्गतो यस्मात् तन्निरातङ्कं नीरोगम्, उत्तमम्-उत्कृष्टतमम् अत एव प्रशस्तम्, अतिश्वेतम्-

(सउणिपोस-पिटुंतरोरु-परिणए) शकुनि-पक्षी के-गुदाशय की तरह पुरीष के उत्सर्ग के संसर्ग से रहित गुदाशयवाले, एवं सुन्दर पृष्ठ, पार्श्व और जंघावाले (पउमु-प्पल-निस्सास-सुरभिवयणे) पद्म-कमल एवं उत्पल-नीलकमल अथवा पद्म-पद्मकनामक गंध द्रव्य और उत्पल-उत्पलकुष्ठ-सुगन्धद्रव्य विशेष, इनकी सुगंध के समान उच्छ्वासवायु से सुरभितमुखवाले [छवी] कान्तियुक्त शरीरवाले, [निरायंक-उत्तम-पसत्थ-अइसेय-निरुवम-पले] रोगमुक्त, सर्वोत्तमगुणयुक्त,

रना आडारने पयावी हे छे એવા જઠરાગ્નિવાળા છે. (સડણિ-પોસ-પિટુંતરોરુ-પરિણએ) શકુનિ-પક્ષીના ગુદાશયની પેઠે મળના સંસર્ગથી રહિત ગુદાશયવાળા તેમજ સુંદર પૃષ્ઠ (પીઠ) પાર્શ્વ (પડખાં) અને જંઘા-વાળા (પડમુ-પ્પલ-નિસ્સાસ-સુરભિ-વયણે) પદ્મ-કમલ તેમજ ઉત્પલ-નીલકમલ, અથવા પદ્મ-પદ્મક નામક ગંધ દ્રવ્ય અને ઉત્પલ-ઉત્પલ કુષ્ઠ-સુગન્ધ દ્રવ્ય વિશેષ, એમની સુગંધના જેવા ઉચ્છ્વાસ વાયુથી સુરભિત-સુગંધિત મુખવાળા (છવી) કાંતિયુક્ત શરીરવાળા (નિરાયંક-ઉત્તમ-પસત્થ-અइસેય-નિરુવમ-પલે) રોગમુક્ત,

त्थ-अइसेय-निरुपम-पले जल्ल-मल्ल-कलंक-सेय-रय-दोस-वज्जिय-सरी-
र-निरुवलेवे छाया-उज्जोइयंग-पच्चंगे घण-निचिय-सुबद्ध-लक्खणु-
णय-कूडागारनिभपिंडिय-सिरए सामलिवोंड-घणनिचिय-च्छोडिय-

अतिशयशुक्लगुणयुक्तं, निरुपमम्—अनुपमं पलं मांसं यस्य सः; रोगमुक्तसर्वोत्तम-
गुणयुक्तश्चेतनिरुपम—मांसवान्—इत्यर्थः । 'जल्ल-मल्ल-कलंक-सेय-रय-दोस-वज्जिय-
शरीर-निरुवलेवे' जल्ल—मल्ल—कलङ्क—स्वेद—रजो—दोष—वर्जित—शरीर—निरुपलेपः,
तत्र-जल्लः—शरीरमलं शुष्कस्वेदरूपं, 'जल्ल' इति देशीयः शब्दः, मल्लः—
शरीरगतं प्रयत्नविशेषापनेयं कठिनीभूतं रजः, कलङ्कः—दुष्टमशतिलादिरूपः, स्वेदः—
प्रस्वेदः, रजः—धूलिः, तेषां यो दोषः—मलिनीकरणं तेन वर्जितम् अतएव निरुलेपं—
निर्मलं शरीरं यस्य स तथा, विविधमलकलङ्कस्वेदरेणुदोषरहिततया निर्लेपनिर्मल-
शरीरवानित्यर्थः । 'छाया-उज्जोइयंग-पच्चंगे' छायोदयोतिताङ्गप्रत्यङ्गः—छायया—
कान्त्या उद्द्योतितानि—चाकचिक्ययुक्तानि अङ्गप्रत्यङ्गानि—अङ्गोपाङ्गानि यस्य स तथा,
अनुपमकान्त्या देदीप्यमानाऽङ्गप्रत्यङ्ग इत्यर्थः । 'घण-निचिय-सुबद्ध-लक्खणु-णय-
कूडागारनिभ-पिंडिय-सिरए' घन—निचित—सुबद्ध—लक्ष्मणोन्नत—कूटाऽऽकारनिभ—पिण्डित-
शिरस्कः, तत्र—घनम्—अतिशयेन निचितं घननिचितम्—अतिनिबिडम्, सुष्ठु—अतिशयेन

श्चेत एवं निरुपम मांसवाले [जल्ल-मल्ल-कलंक-सेय-रय-दोस-वज्जिय-सरीर-
निरुवलेवे] विविध प्रकार के मैल-शुष्कस्वेदरूप जल्ल, कठिनीभूत रजःस्वरूप मल्ल,
दुष्ट मसा तिल आदिरूप कलंक, एवं-स्वेद प्रस्वेद रज-धूलि के दोष से वर्जित
शरीर होने से निर्मल शरीरवाले, [छायाउज्जोइयंगपच्चंगे] कान्ति से चमकते हुए
अंगोपांगवाले, (घणनिचिय-सुबद्ध-लक्खणु-णय-कूडागारनिभ-पिंडिय-सिरए)
अतिनिबिड, स्पष्टरीति से प्रकटित-शुभलक्षण-संपन्न, उन्नत कूटाकार तुल्य एवं

सर्वोत्तमशुण्ययुक्त, श्वेत, तेमज्ज निरुपम मांसवाणा (जल्ल-मल्ल-कलंक-सेय-
रय-दोस-वज्जिय-सरीर-निरुवलेवे) विविध प्रकारना मैल-सुकायेला परसेवा रुप
जल्ल, कल्ल जनेल रजस्वरूप मल्ल, दुष्ट मसा तल आदि रुप कलंक, तेमज्ज
स्वेद-प्रस्वेद रज-धूलना दोषथी वर्जित शरीर होवाथी निर्मल शरीरवाणा
(छाया-उज्जोइयंगपच्चंगे) कान्तिथी अभकारा भारतां अंग उपांगवाणा (घण-निचिय-
सुबद्ध-लक्खणु-णय-कूडागारनिभ-पिंडिय-सिरए) अतिनिबिड, स्पष्ट रीतथी
प्रकटित शुभलक्षण-संपन्न, उन्नत कूटाकार तुल्य तेमज्ज निर्माण नामना

मिउ-विसय-पसत्थ-सुहुम-लक्खण-सुगंधि-सुंदर-भुयमोयग-भिग-
नेल-कज्जल-पहट्ट-भमरगण-णिद्ध-निकुरुंब-निचिय-कुंचिय-पया-

बद्धानि—अवस्थितानि प्रकटतया विद्यमानानि लक्षणानि शिरःसम्बन्धि शुभलक्षणानि यत्र
तत् सुबद्धलक्षणम्, उन्नतम्—मध्यभागे उच्चं यत् कूटं तस्य य आकारस्तन्निभम्—
उन्नतकूटाकारसदृशमिति भावः । पिण्डितं—निर्माणकर्मणा संयोजितं शिरो यस्य स
घन-निचित—सुबद्ध—लक्षणोन्नत—कूटाकारनिभ-पिण्डित-शिरस्कः । ‘सामलिबोंड-घणनिचिय-
च्छोडिय-मिउ-विसय-पसत्थ-सुहुम-लक्खण-सुगंधि-सुंदर-भुयमोयग-भिग-नेल-कज्ज-
ल-पहट्ट-भमरगण-णिद्ध-निकुरुंब-निचिय-कुंचिय-पयाहिणावत्त-मुद्ध-सिरए’ शाल्मलि-
बोण्ड-घननिचित-च्छोटित-मृदु-विशद-प्रशस्त-सूक्ष्म-लक्षग-सुगन्धि-सुन्दर-भुजमोचक-भृङ्ग-नैल-
कज्जल-प्रहृष्ट-भ्रमरगण-स्निग्ध-निकुरम्ब-निचित-कुञ्चित-प्रदक्षिणाऽऽवर्त-मूर्द्ध-
शिरोजः—शाल्मलिः वृक्षविशेषः, तस्य बोण्डं=फलं, घननिचितम्—अतिनिबिडं, छोटितं—
स्फोटितं—तूलव्याप्तं शाल्मलि-फलखण्डं तद्वत् मृदवः—मृदुलाः—इति शाल्मलिबोण्डघननि-
चितच्छोटितमृदवः, अधस्तले शिरोभागः कठिनः, उपरिभागे शाल्मलिफलखण्डगत-तूल-
वन्मृदुला केशाः इति भावः । तथा—विशदाः—निर्मलाः, प्रशस्ता—उत्तमाः सूक्ष्माः—
तनुतराः, लक्षणाः—सुलक्षणवन्तः, सुगन्धयः—शोभनगन्धयुक्ताः, सुन्दराः—मनोहराः, तथा
भुजमोचकवत्=नीलरत्नविशेष इव, भृङ्गवत्—भ्रमरवत्, एवं नैलवत्—नीलीविकारवद्—

निर्माणनाम कर्म द्वारा सुरचित ऐसे मस्तकवाले, [सामलिबोंड-घणनिचिय-च्छो-
डिय-मिउ-विसय-पसत्थ-सुहुम-लक्खण-सुगंधि-सुंदर-भुयमोयग-भिग-नेल-
कज्जल-पहट्ट-भमरगण-णिद्ध-निकुरुंब-निचिय-कुंचिय-पयाहिणावत्त-मुद्ध-
सिरए] सेमरवृक्ष के फलान्तर्गत तूल के समान मृदुल, विशद—निर्मल, प्रशस्त—उत्तम,
सूक्ष्म—तनुतर (पतले), लक्षग—सुलक्षगयुक्त, सुगन्ध—शोभनगंधसंपन्न, सुन्दर—मनोहर
तथा—नील रत्नविशेष की तरह लच्छेदार, नीलगुलिका की तरह नीले, कज्जल की

उभंथी सुरचित जेवां भस्तकवाणा (सामलिबोंड-घणनिचिय-च्छोडिय-मिउ-
विसय-पसत्थ-सुहुम-लक्खण-सुगंधि-सुंदर-भुयमोयग-भिग-नेल-कज्जल-पहट्ट-भमर-
गण-निद्ध-निकुरुंब-निचिय-कुंचिय-पयाहिणावत्त-मुद्ध-सिरए) सेमर वृक्षना
इलनी अंतर्गत इना जेवां डोमण, विशद—निर्मल, प्रशस्त—उत्तम, सूक्ष्म-
इणवां पातणां, लक्षणु—सुलक्षणयुक्त, सुगंध—शोभनगंधसंपन्न, सुंदर—मनोहर
तथा नील रत्नविशेषनी पेडे लच्छेदार, नीलगुलिकानी जेम दीदां, कज्जलना

हिणावत्त-मुद्घसिरए दालिमपुष्पप्पगास-नवणिज्ज-सरिस-निम्मल-
सुणिद्ध-केसंत-केसभूमी छत्तागारुत्तिमंगदेसे णिव्वण-सम-लट्ठ-
मट्ठ-चंदद्ध-सम-णिडाले उडुवड्-पडिपुण्ण-सोम्मवयणे अल्लीण-

नीलीगुलिकावत्, कज्जलवत्-मषीवत्, प्रहृष्ट-भ्रमर-गगवत्-सोलास-भ्रमर-वृन्दवत्
स्निग्धं=कान्तियुक्तम्-अतीवश्याममित्यर्थः, निकुरम्बं=समूहो येषां ते भुजमोचक-भृङ्ग-नैल-
कज्जल-प्रहृष्ट-भ्रमर-गगस्निग्धनिकुरम्बाः, ते च पुनर्निचिताः=परस्परं श्लिष्टाः कुञ्चिताः=
वक्रीभूताः-कुण्डलवद्वर्तुलाकाराः प्रदक्षिणाऽऽवर्त्ताः-प्रदक्षिणम् आवर्तन्ते ते तथा मूर्द्धनि-
मस्तके, शिरोजाः-केशा यस्य स तथा-शाल्मलि-फलखण्डवत्कोमलातिश्यामल-कृष्णमणि-
भ्रमरकज्जलवत्कृष्णतर-परस्परश्लिष्ट-प्रदक्षिणावर्त-कुञ्चित-मस्तककेशवानिति यावत् ।
केशोत्पत्तिस्थानं वर्ण्यते-‘दालिम-पुष्प-प्पगास-तवणिज्ज-सरिस-निम्मल-सुणिद्ध-
केसंत-केसभूमी’ दालिम-पुष्प-प्रकाश-तपनीय-सदृश-निर्मल-सुस्निग्ध-केशान्त-
केशभूमिः, तत्र-दालिम-पुष्प-प्रकाशा रक्तवर्णेत्यर्थः, तपनीयसदृशी-अग्निप्रतप्त-
सुवर्णसदृशवर्णा, तथा-निर्मल-उज्ज्वला, सुस्निग्धा-सुचिक्रगा, केशान्ते=केशसमीपे-
केशमूले केशभूमिः-केशोत्पत्तिस्थानं-मस्तकत्वक् यस्य स तथा, पूर्वोक्तमेव-विशेषणं
प्रकारान्तरेणाह-‘छत्तागारुत्तिमंगदेसे’ छत्राऽऽकारोत्तमाङ्गदेशः-छत्राऽऽकारः-वर्तुलान्न-
तत्त्वगुणयोगाच्छत्राऽऽकृतिः-उत्तमाङ्गदेशः-मस्तकप्रदेशो यस्य सः, अत्युन्नतोत्तमाङ्गवान् इति

तरह काले, प्रहृष्टभ्रमरगग की तरह कान्तियुक्त, परस्पर में संश्लिष्ट-विरले नहीं;
टेढ़े कुण्डल की तरह वर्तुल आकारयुक्त दक्षिणावर्त केशों से युक्त थे, अर्थात्-
धुँधरवालवाले थे । [दालिमपुष्प-प्पगास - तवणिज्जसरिस - निम्मल-सुणिद्ध-
केसंत-केस-भूमी] भगवान् के मस्तक की त्वचा दालिम के पुष्प के समान
लाल, तथा ताये हुए सुवर्ण के समान निर्मल एवं स्निग्ध=चिक्रग थी । (छत्ता-
गारुत्तिमंगदेसे) भगवान् का मस्तक छत्र समान गोलकार था । (णिव्वण-सम-

जेवां डाणां, प्रहृष्ट भ्रमरानी पेठे डांतियुक्त, परस्परमां संश्लिष्ट, विरल नडि;
वांका कुंडलानी पेठे वर्तुल आकारवाणा दक्षिणावर्त केशोथी युक्त भगवान् उता.
अर्थात् धुंधरवाणा वाण वाणा उता. (दालिमपुष्प-प्पगास-तवणिज्ज-सरिस-निम्मल-
सुणिद्ध-केसंत-केस-भूमी) भगवान्ना मस्तकनी त्वचा [आभडी] दाडभना
पुष्पना जेवी दाड, तथा तावेडा सुवर्णना जेवी निर्मल तेभज स्निग्ध-
चिक्रशी उती, (छत्तागारुत्तिमंगदेसे) भगवाननुं मस्तक छत्रनी पेठे गोलाकार

**पमाणजुत्त-सवणे सुस्सवणे पीण-मंसल-कवोल-देसभाए आणा-
मिय-चाव-रुइल-किण्हब्भराइ-तणु-कसिण-गिद्ध-भमुहे अवदा-**

भावः, 'णिव्वण-सम-लट्ठ-मट्ठ-चंदद्ध-सम-गिडाले' निर्वग-सम-लट्ठ-मृष्ट-चन्द्रार्द्ध-सम-ललाटः तत्र-निर्वर्ण-अंतरहित तथा व्रगकिगरहितं, सम-विषमतारहितं, लष्टं-सुन्दरं, मृष्टं-शुद्धं चन्द्रार्द्धसमम्-अष्टमी-चन्द्र-मण्डलाऽऽकारम्, ललाटं-भालस्थलं यस्य सः, अष्टमी-चन्द्र-मण्डल-समानाकार-सुन्दर-ललाट-इति भावः । 'उडुवइ-पडिपुण्ण-सोम्मवयणे' उडुपति-प्रतिपूर्णा-सौम्यवदनः-उडुपतिः-शारदीयपूर्णचन्द्रस्तद्वत् परिपूर्णा-प्रभासमूहसम्भृतं, सौम्यं-सुन्दरं, वदनं-मुखं यस्य स तथा, शारदपूर्णचन्द्र-समान-सुन्दर-मुख इत्यर्थः । 'अल्लीण-पमाणजुत्त-सवणे' आलीन-प्रमाणयुक्त-श्रवणः-समुचितप्रमाणकर्णयुक्तः, अत एव-सुस्सवणे' सुश्रवणः, शोभनकर्णवान् 'पीण-मंसल-कवोल-देसभाए' पीन-मांसल-कपोल-देशभागः-पीनौ-पुष्टौ, मांसलौ मांसपूर्णौ कपोलदेशभागौ-कपोलावयवौ यस्य स तथा-सुपुष्टकपोलयुक्त इति भावः । 'आणामिय-चाव-रुइल-किण्हब्भराइ-तणु-कसिण-गिद्ध-भमुहे' आनामित-चाप-रुचिर-कृष्णाभराजि-तनु-कृष्ण-स्निग्ध-भ्रूः-आनामित-चापः-वक्राकृतधनुः, तद्वदरुचिरे-सुन्दरे तथा कृष्णा-भराजी इव श्याममेघपङ्क्ती इव तनू-सूक्ष्मे, कृष्णे-श्यामे, स्निग्धे-चिक्रणे-भ्रुवौ यस्य स तथा, वक्रकृष्णसूक्ष्मचिक्रण-लट्ठ-मट्ठ-चंदद्ध-सम-गिडाले) भगवान् का भालस्थल व्रग के चिह्न से रहित, विषमता से वर्जित, सुन्दर, शुद्ध एवं अष्टमी के चंद्रमा के समान था । [उडु-वइ-पडिपुण्ण-सोम्मवयणे] प्रभु का मुख शरद ऋतु के पूर्णचन्द्रमण्डल समान सुन्दर और आह्लादक था । [अल्लीण-पमाण-जुत्त-सवणे] कान प्रमाणयुक्त थे । [सुस्सवणे] इसलिये भगवान् सुन्दर कानवाले थे । (पीण-मंसल-कवोल-देसभाए) भगवान् के पुष्ट एवं भरे हुए सुन्दर कपोल थे । (आणामिय-चाव-रुइल-किण्ह-ब्भराइ-तणु-कसिण-गिद्ध-भमुहे) वक्रित धनुष के समान रुचिर, तथा कृष्णमेघ

इतुं (णिव्वण-सम-लट्ठ-मट्ठ-चंदद्ध-सम-गिडाले) भगवाननुं ललाट वल्लुना चिह्नथी रहित, विषमताथी वर्जित, सुंदर, शुद्ध तेमज्ज अष्टमीना चंद्र ना जेवुं इतुं. (उडुवइ-पडिपुण्ण-सोम्म-वयणे) प्रभुनुं मुख शरदऋतुना पूर्णचंद्रमंडल समान सुंदर तथा आह्लादक इतुं (अल्लीण-पमाण-जुत्त-सवणे) कान मापसर इता. (सुस्सवणे) तेथी भगवान् सुंदर कानवाणा इता (पाण-मंसल-कवोल-देसभाए) भगवानना पुष्ट तेमज्ज लरेला सुंदर गाल इता. (आणामिय-चाव-रुइल-किण्हब्भराइ-तणु-कसिण-गिद्ध-भमुहे) वक्र थयेलां धनुषना जेम रुचिर, तथा कृष्णमेघ (कानां वाहणां) नी डारना जेवी

લિય-પુંડરીય-ળયળે કોઆસિય-ધવલ-પત્તલચ્છે ગરુલાયય-ઉજ્જુ
તુંગ-ળાસે ઉવચિય-સિલપ્પવાલ-વિંબફલ-સણિભાહરોદ્દે પંડુર-
સસિ-સયલ-વિમલ-ળિમ્મલ-સંઘ-ગોક્ષીર-ફેળ-કુંદ-દગરય-મુળા-

મૂયુક્ત ઇત્યર્થઃ । ‘અવદાલિય-પુંડરીય-ળયળે’ અવદલિત-પુણ્ડરીક-નયનઃ-અવદલિતે-
વિકસિતે, પુણ્ડરીકે-શ્વેતકમલે ઇવ નયને-નેત્રે યસ્ય સઃ, વિકસિતશ્વેતકમલસદૃશ-
નેત્ર ઇતિ ભાવઃ । ‘કોઆસિય-ધવલ-પત્તલચ્છે’ વિકસિત-ધવલ-પત્રલાઽક્ષઃ-કમલવદ્
વિકસિતે ધવલે-શ્વેતે, પત્રલે-પદ્મયુક્તે, અક્ષિગી-નેત્રે યસ્ય સઃ, વિશાલનેત્રવાનિત્યર્થઃ ।
‘ગરુલા-યય-ઉજ્જુ-તુંગ-ળાસે’ ગરુડા-યત-જુતુઙ્ગ-નાસિકઃ-ગરુડસ્યેવ-ગરુડપક્ષિચન્ચુવદ્-
આયતા-દીર્ઘા, ઋજ્વી-સરલા, તુઙ્ગા-ઉન્નતા, નાસિકા યસ્ય સ તથા, ગરુડચન્ચુ-
વદીર્ઘસરલોચનાસિકાવાન્ ઇત્યર્થઃ । ‘ઉવચિય-સિલપ્પવાલ-વિંબફલ-સણિભા-હરોદ્દે’
ઉપચિત-શિલાપ્રવાલ-વિમ્બફલ-સન્નિભાઽધરોષ્ઠઃ-ઉપચિત-કૃતમંસ્કારં યચ્છિલાપ્રવાલં-વિદ્રુમં,
વિમ્બફલં-રક્તાતિરક્તં તયોઃ સન્નિભઃ-સદૃશો રક્તઃ અધરોષ્ઠો યસ્ય સઃ, અતિરક્તોષ્ઠવાન્-
ઇત્યર્થઃ । ‘પંડુર-સસિ-સયલ-વિમલ-ળિમ્મલ-સંઘ-ગોક્ષીર-ફેળ-કુંદ-દગરય-મુળા-
લિયા-ધવલ-દંતસેઢી’ પાણ્ડુર-શશિ-શકલ-વિમલ-નિર્મલ-શંઘ-ગોક્ષીર-ફેન-કુન્દ-દક-

કી પંક્તિ કે સમાન કાલી, પતલી ઓર ચિકની મગવાન કી મૈહેં થીં । (અવ-
દાલિય-પુંડરીય-ળયળે) વિકસિત શ્વેતકમલ કે સમાન નેત્ર થે । (કોઆસિય-
ધવલ-પત્તલચ્છે) વે નેત્ર-વિકસિત, સ્વચ્છ ઇવં પદ્મલ-મુન્દર પીપળી વાલે
થે । (ગરુલા-યય-ઉજ્જુ-તુંગ-ળાસે) ગરુડ પક્ષી કી ચંચુ સમાન દીર્ઘ, સરલ
ઇવં ઉન્નત નાસિકા થી । (ઉવચિય-સિલપ્પવાલ-વિંબફલ-સણિભાહરોદ્દે) સંસ્કાર-
યુક્ત વિદ્રુમ ઇવં રક્તાતિરક્ત-અતિશય લાલ કુન્દુરુફલ કે સમાન અધરોષ્ઠ થા ।
(પંડુર-સસિસયલ-વિમલ-ળિમ્મલ-સંઘ-ગોક્ષીર-ફેળ-કુંદ-દગરય-મુળાલિયા-

કાળી, પાતળી અને ચિકણી ભમરો હતી. (અવદાલિય-પુંડરીય-ળયળે)
ખીલેલાં શ્વેત કમળના જેવાં નેત્ર હતાં. (કોઆસિય-ધવલ-પત્તલચ્છે) તે નેત્ર
વિકસેલાં સ્વચ્છ તેમજ પદ્મલ (સુંદર પાંપણવાળાં) હતાં (ગરુલા-યય-
ઉજ્જુ-તુંગ-ળાસે) ગરુડ પક્ષીની આંધ સમાન લાંબા સરલ તેમજ ઉન્નત
નાસિકા હતી (ઉવચિય-સિલપ્પવાલ-વિંબફલ-સણિભા-હરોદ્દે) સંસ્કારયુક્ત
વિદ્રુમ તેમજ રક્તાતિરક્ત-અતિશય લાલ કુંદરૂ ફલના જેવો અધરોષ્ઠ
(હેઠ) હતો. (પંડુર-સસિસયલ-વિમલ-ળિમ્મલ-સંઘ-ગોક્ષીર-ફેળ-કુંદ-દગ-

लिया-धवल-दंतसेढी अखंडदंते अप्फुडियदंते अविरलदंते सुणि-
द्धदंते सुजायदंते एगदंतसेढीविव अणेगदंते हुयवह-णिद्धंत-

रजो-मृणालिका-धवल-दन्तश्रेणिः-पाण्डुरं-श्वेतं यत्-शशिशकलं-चन्द्रखण्डः, तद्वद् विमला, तथा
निर्मलः-अतिस्वच्छः, शङ्खः प्रसिद्धः. गोक्षीरं-गोदुग्धम्, -फेनः-जलोपरिवर्तमानो नवनीतस-
मः, कुन्दं-तन्नामकं श्वेतकुसुमम्-दकरजः-जलकगः, मृणालिका-विसिनी-तद्वद् धवला-
महाश्वेता, दन्तश्रेणिः-दन्तपङ्क्तिर्यस्य स तथा, शुभ्रातिशुभ्रदन्तपङ्क्तिमा-
नित्यर्थः । 'अखंडदंते' अखण्डदन्तः-दन्तपङ्क्तौ दन्तवैकल्याभावात्,
'अप्फुडियदंते' अस्फुटितदन्तः दन्तपङ्क्तौ दन्तानां-देशतोऽपि भङ्गाभावात्,
'अविरलदंते' अविरलदन्तः-अन्तरावकाशरहितदन्तः 'सुणिद्धदंते' सुस्निग्धदन्तः-चिकण-
दन्तवान्, 'सुजायदंते' सुजातदन्तः-सुन्दरदन्तवान्-इत्यर्थः । 'एगदंतसेढीविव
अणेगदंते' एकदन्तश्रेणीवाऽनेकदन्तः, 'हुतवह-णिद्धंत-धोय-तत्त-तवणिज्ज-रत्त-
तल-तालुजीहे' हुतवह-निर्ध्मात-धौत=तप्ततपनीय-रक्ततर=तालुजिह्वः-हुतवहेन-वह्निना
पूर्वं निर्ध्मातं-निश्शेषेण संयोजितं पश्चाज्जलादिना धौतम्, अत एव-तप्तं-वह्नितापं प्राप्तं

धवल-दंतसेढी) श्वेत चन्द्रखंडके के समान विमल, तथा निर्मल शंख, गोक्षीर,
फेन, श्वेतकुसुम, जलकग, एवं मृणाल के समान धवल दन्तपंक्तियाँ थीं ।
(अखंडदंते) भगवान के दाँत अखण्ड थे, (अप्फुडियदंते) अत्रुटित थे,
(अविरलदंते) अवकाश रहित थे । (सुणिद्धदंते) चिककग थे, (सुजायदंते)
सुन्दर थे, । (एगदंतसेढीविव अणेगदंते) एक दाँत की श्रेणी के समान सभी
दाँत मालूम होते थे । (हुतवह-णिद्धंत-धोय-तत्ततवणिज्ज-रत्ततल-तालुजीहे)
पहले अग्नि में तपाये गये पश्चात् जलादिक द्वारा धोये गये पुनः अग्नि में तपाये

रय-मुणालिया-धवल-दंत-सेढी) श्वेत चंद्रखंडना जेवी विमल, तथा निर्मल
शंख, गायत्रुं हृद्य, क्षीणु, श्वेतपुष्प, जलकणु (पाण्णीनां पुंढ) तेमज
मृणाल ना जेवी सक्षेह दांतनी डार डती. (अखंडदंते) भगवानना दांत
अखंड डता. (अप्फुडियदंते) तूटया वगरना दांत डता. (अविरलदंते)
अवकाश (पोल) रहित डता, (सुणिद्धदंते) चिकणु डता,
(सुजायदंते) सुंदर डता, (एगदंतसेढी-विव अणेगदंते) ऐक दांतनी
श्रेणी (डार) ना जेम अधा दांत देभाता डता. (हुतवह-णिद्धंत-धोय-तत्त-
तवणिज्ज-रत्ततल-तालुजीहे) पडेदां अग्निमां तपावेदा पाछलथी जणहिद्वारा

धोयतत्ततवणिज्ज-रक्ततल-तालुजीहे अवट्टिय-सुविभक्त-चित्त-मंसू
मंसल-संठिय-पसत्थ-सद्दूल-विउल-हणुए चउरंगुल-सुप्पमाण-कंबु-
वर-सरिसग्गीवे वरमहिस-वराह-सीह-सद्दूल-उसभ-नागवर-पडि-

यत्तपनीयं=सुवर्णं तद्वद् रक्ततरम्—अतीवरक्तं, तालु च जिह्वा च यस्य स तथा, अतिरक्त-
तालुजिह्वावान् इत्यर्थः । ‘ अवट्टिय—सुविभक्त—चित्त—मंसू ’ अवस्थित-सुविभक्त-चित्र-
श्मश्रुः—अवस्थितानि—अवर्द्धनशीलानि, सुविभक्तानि—द्विभागाभ्यां विभक्ततया स्थितानि,
चित्राणि—शोभासम्पन्नानि श्मश्रूणि—‘दाढी मूछ’—इति भाषाप्रसिद्धानि यस्य सः, अवर्धन-
शील-सुविभक्त-सुशोभितश्मश्रुवान् इत्यर्थः । ‘ मंसल—संठिय—पसत्थ—सद्दूल—विउल—
हणुए ’ मांसल—संस्थित—प्रशस्त—शार्दूल—विपुल—हनुः—तत्र मांसलः—पुष्टः, संस्थितः—सुन्दरा-
ऽऽकारः, प्रशस्तः—अतिरमणीयः, शार्दूलस्येव व्याघ्रस्येव, विपुलः—दीर्घः हनुः—चिबुकं यस्य स
तथा-शार्दूल-वत्सुन्दर-सुविशालचिबुक इति भावः । ‘ चउरंगुल—सुप्पमाण—कंबुवर-
सरिसग्गीवे ’ चउरंगुल-सुप्पमाण-कम्बवरमदश-जीवः—भगवदङ्गुलपेक्षया चउरङ्गुल-

**पुण्ण-विउलक्खंधे जुगसन्निभ-पीण-रइय-पीवर-पउट्ट- सुसंठिय-
सुसिलिट्ट-विसिट्ट-घण-थिर-सुबद्ध-संधि-पुरवर-फलिह-वट्टिय-भुए**

विपुलस्कन्धः-श्रेष्ठमहिषवराह सिंहव्याघ्रवृष गजवरागामिव प्रतिपूर्ण-प्रमाणयुक्तौ-विपुलौ=विस्ती-
र्णौ सामुद्रिकशास्त्रोक्तलक्षणयुक्तौ स्कन्धौ यस्य स तथा, ' सिंहव्याघ्रादिवत्सामुद्रि-
कोक्तलक्षणयुक्तप्रमाणसहितविशालस्कन्धवान् इति भावः । ' **जुगसन्निभ-पीण-रइय-
पीवर-पउट्ट-सुसंठिय-सुसिलिट्ट-विसिट्ट-घण-थिर-सुबद्ध-संधि-पुरवर-फलिह-वट्टियभुए** '
युगसन्निभ-पीन-रतिद-पीवर-प्रकोष्ठ-सुसंस्थित-सुश्लिष्ट-विशिष्ट-घन - स्थिर-सुबद्ध-सन्धि-पुरवर-
परिघ-वर्तितभुजः, युगेन=शकटाग्रायामस्थितकाष्ठेन सन्निभौ=तुल्यौ, पीनौ=पुष्टौ,
रतिदौ=प्रीतिप्रदौ, पीवरप्रकोष्ठौ-कफोणेः ' **स्वूणी** ' इति प्रसिद्धादधस्तान्मणिवन्धपर्यन्तः
प्रकोष्ठः; पीवरौ पुष्टौ प्रकोष्ठौ ययोर्भुजयोस्तौ, सुसंस्थितौ=सुन्दरसंस्थानवन्तौ, पुनः
कीदृशौ ?-सुश्लिष्टाः-संयुक्ताः, विशिष्टाः-प्रधानाः, घनाः-सघनाः, स्थिराः-दृढाः-सुबद्धाः=सुष्ठु
बद्धाःस्नायुभिःसन्वयः=सक्थिसंयोगस्थानानि ययोस्तौ-सुश्लिष्टविशिष्टघनस्थिरसुबद्धसन्धी,
पुनः-पुरवरपरिघवत्=नगरश्रेष्ठा-गर्लावत् वर्तितौ-वर्तुलौ बाहू=भुजौ यस्य स
तथा; सुन्दरनगरगर्लावत् दृढदीर्घभुजवान् इति भावः । ' **भुयगीसर-
विउल-भोग-आयाण-पलिहउच्छूढ-दीह-बाहू-भुजगेश्वर-विपुल-भोगा - दान-पर्यवक्षित-दीर्घ-**

नागवर-पडिपुण्ण-विउल-क्खंधे) श्रेष्ठ महिष, वराह, सिंह, शार्दूल, वृषभ, एवं
श्रेष्ठ हाथी के स्कंध जैसे विपुल स्कन्ध थे, (**जुगसन्निभ-पीण-रइय-पीवर-पउट्ट-
सुसंठिय-सुसिलिट्ट-विसिट्ट-घण-थिर-सुबद्धसंधि-पुरवर-फलिह-वट्टियभुए**) गाढी
के जुए के समान प्रीतिप्रद, पीवरप्रकोष्ठयुक्त-पुष्टपौंचावाली, सुन्दर आकृतिसंपन्न ऐसे,
एवं सुश्लिष्ट-संयुक्त-मिली हुई, विशिष्ट-उत्तम, घन-गठीली, मजबूत, स्थिर-स्नायुओं
से सुबद्ध ऐसी बंधियों वाली, तथा नगर की परिघा-भोगल-जैसी वर्तुल भुजायें
थीं । (**भुयगीसर-विउलभोग-आयाण-पलिहउच्छूढ-दीह-बाहू**) वाञ्छित वस्तु

वर-पडिपुण्ण-विउल-क्खंधे] श्रेष्ठ पाडा, वराह, सिंहा, शार्दूल, अण्ड, तेमज
श्रेष्ठ हाथीना आंध जेवी विपुल आंध डती. (**जुगसन्निभ-पीण-रइय-पीवर-
पउट्ट-सुसंठिय-सुसिलिट्ट-विसिट्ट-घण-थिर-सुबद्ध-संधि-पुरवर-फलिह-वट्टियभुए**)
गाडाना घांसरा जेवी पुष्ट, प्रीतिप्रद, पीवर प्रकोष्ठ-पुष्ट डांडो वाणी, सुंदर
आकृतिवाणी तेमज सुश्लिष्ट-संयुक्त-मिलित, विशिष्ट-उत्तम, घन-भराड,
स्थिर-मजबूत स्नायुआथी सुसंयुक्त संधिआवाणी तथा नगरनी भोगल
जेम गोण्डाकार बुजआ डती. [**भुयगी-सर-विउलभोग-आयाण-पलिहउच्छूढ-**

भुयगीसर-विउल-भोग-आयाण-पलिहउच्छूढ-दीह-बाहू रत्ततलो-
वड्य-मउय-मंसल - सुजाय-लक्खण-पसत्थ-अच्छिदजाल - पाणी
पीवर-कोमल-वरं-गुली आयंवतंव-तलिण-सुइ-रुइल-णिद्ध-णखे

बाहुः, भुजगेश्वरः-सर्पराजः, तस्य विपुलभोगः-विशालदेहः, स च आदानाय-वाञ्छितवस्तुग्रह-
णाय 'पलिहउच्छूढ' पर्यवक्षितः-प्रेरितः-सर्वथा दण्डवत्प्रसारितः, तद्वत् दीर्घो=लम्बो-
विशालौ, बाहू=भुजौ यस्य स तथा, लम्बविशालबाहुमान्-इत्यर्थः । 'रत्ततलो-वड्य-
मउय-मंसल-सुजाय-लक्खणपसत्थ-अच्छिद-जाल-पाणी' रक्ततलो-पचित-मृदु-मांसल-
सुजात-लक्षणप्रशस्ता-च्छिद्रजाल-पाणिः, तत्र-रक्ततलौ-रक्ते तले ययोस्तौ तथा, तलभागे रक्त-
वर्णयुक्तौ इत्यर्थः, उपचितौ पृष्ठभागे उन्नतौ, मृदुकौ-कोमलौ, मांसलौ-पुष्टौ, सुजातौ-सुन्दरौ
प्रशस्तलक्षणौ-शुभचिह्नयुतौ, अच्छिद्रजालौ-च्छिद्रजालवर्जितौ, पाणी-हस्तौ यस्य स तथा,
'पीवर-कोमल-वरं-गुली' पीवर-कोमल-वराङ्गुलिः-पीवराः-पुष्टाः, कोमलाः-मृदुलाः,
वराः-श्रेष्ठाः, अङ्गुलयो यस्य स तथा, 'आयंव-तंव-तलिण-सुइ-रुइल-णिद्ध-णखे'
आताम्र-ताम्र-तलिन-शुचि-रुचिर-स्निग्धनग्नः-आताम्रताम्राः=ईषद्रक्ताः, तलिनाः=प्रतलाः
शुचयः=शुद्धाः, रुचिराः=मनोज्ञाः, स्निग्धाः=सरसाः, नग्ना यस्य स तथा, 'चंदपाणि-
लेहे' चन्द्रपाणिर्गन्धः-चन्द्राकाराः पाणौ गन्धा यस्य सः, चन्द्रेगन्धाचिह्नितहस्तवानित्यर्थः,

को ग्रहण करने के लिये फैलाये हुए सर्पराज के शरीर समान दीर्घबाहु थे ।
(रत्ततलो-वड्य-मउय-मंसल-सुजाय-लक्खण-पसत्थ-अच्छिदजाल-पाणी) तलभाग
में लाल, पृष्ठभाग में उन्नत, कोमल, पुष्ट, शुभचिह्नों से युक्त, एवं छिद्रों से रहित
हाथ थे । (पीवर-कोमल-वरं-गुली) हाथों की अंगुलियाँ पुष्ट, कोमल एवं
सुन्दर थीं । (आयंवतंव-तलिण-सुइ-रुइल-णिद्ध-णखे) ईषद्रक्त, पतले, शुद्ध,
सुन्दर, एवं चिकने नग्न थे । (चंदपाणिलेहे) हाथों में चन्द्रेखा थी ।

दीह-बाहू] डोई छिछित वस्तु लेवाने भाटे देखावेला सर्पराजना शरीर
समान लांबा आहुँ हुता. (रत्ततलो-वड्य-मउय-मंसल-सुजाय-लक्खण-पसत्थ-
अच्छिद-जाल-पाणी] तणीयाना भागमां लाल, पाछणना भागमां उन्नत,
डोमण, पुष्ट, शुभ चिह्नेथी युक्त तेमण छिद्रो वगरना हाथ हुता.
[पीवर-कोमल-वरं-गुली] हाथोनी आंगणीयो पुष्ट, डोमण तेमण सुंदर
हुती. [आयंवतंव-तलिण-सुइ-रुइल-णिद्ध-णखे] ईषद्रक्त पातणा, शुद्ध,
सुंदर तेमण चिकणा नथ हुता. (चंदपाणिलेहे) हाथोमां चन्दरेखा हुती.

चंदपाणिलेहे सूरपाणिलेहे संखपाणिलेहे चक्रपाणिलेहे दिसा-
सोत्थियपाणिलेहे चंद-सूर-संख-चक्र-दिसासोत्थिय-पाणिलेहे
कणग-मिलायलुज्जल - पसत्थ-समतल-उवचिय-विच्छिण्ण-
पिहुलवच्छे सिरिवच्छंकियवच्छे अकरंडुय-कणग-रुयय-निम्मल-

‘संखपाणिलेहे’ शङ्खपाणिरेखः-शङ्खरेखायुक्तहस्त इत्यर्थः, ‘चक्रपाणिलेहे’
चक्रपाणिरेखः-चक्ररेखायुक्तहस्तः, ‘दिसासोत्थियपाणिलेहे’ दिक्स्वस्तिकपाणिरेखः-
दक्षिणाऽऽवर्तस्वस्तिकाऽऽकार-रेखा-युक्त-हस्तवान् इति भावः । ‘चंद-सूर-संख-चक्र-
दिसासोत्थिय-पाणिलेहे’ चन्द्रसूरशङ्खचक्रदिक्स्वस्तिकपाणिरेखः-चन्द्रसूर्यादिहस्तेरेखा
हस्ते विद्यमानाः प्रशस्तफलप्रदा भवन्ति, तामिश्चन्द्रादिरेखाभिश्चिह्नितहस्तवानित्यर्थः,
‘कणग-सिलायलु-ज्जल-पसत्थ-समतल-उवचिय-विच्छिण्ण-पिहुलवच्छे’ कनक-
शिलातलो-ज्ज्वल-प्रशस्त-समतलो-पचित-विस्तीर्ण-पृथुल-वक्षस्कः- कनकशिलातलवत्-सौ-
वर्णपट्टिकावत्, उज्ज्वलं=देदीप्यमानं प्रशस्तं=मुलक्षगोपेतं समतलञ्च-उन्नताऽऽनतरहितम्,
उपचितं-पुष्टं, विस्तीर्णपृथुलम्, -अतिविशालं, वक्षः-उरस्थलं यस्य स तथा,

(सूरपाणिलेहे) सूर्यरेखा थी, (संखपाणिलेहे) शंखरेखा थी, (चक्रपाणिलेहे)
चक्ररेखा थी, (दिसासोत्थियपाणिलेहे) दक्षिणावर्त स्वस्तिक रेखा थी, (चंद-
सूर-संख-चक्र-दिसासोत्थिय-पाणिलेहे) इस प्रकार चन्द्रमा, सूर्य, शंख, चक्र
एवं दक्षिणावर्त स्वस्तिक की रेखाओं से भगवान के हाथ सुशोभित थे । (कणग-
सिलायलु-ज्जल-पसत्थ-समतल-उवचिय-विच्छिण्ण-पिहुल-वच्छे) कनक शिला
के समान-सुवर्ण के पाट के समान देदीप्यमान, शुभलक्षणों से युक्त, सम, पुष्ट,
विस्तीर्ण एवं अतिविशाल वक्षस्थल था । वह वक्षस्थल (सिरिवच्छंकियवच्छे)

(सूरपाणिलेहे) सूर्यरेखा होती. [संखपाणिलेहे] शंखरेखा होती. (चक्र-
पाणिलेहे) चक्ररेखा होती, (दिसासोत्थियपाणिलेहे) दक्षिणावर्त स्वस्तिक रेखा
होती. (चंद-सूर-संख-चक्र-दिसासोत्थिय-पाणिलेहे) ये प्रकारे चंद्रमा, सूर्य,
शंख, चक्र तेमज्ज दक्षिणावर्त स्वस्तिकनी रेखाओंथी भगवानना हाथ
सुशोभित होता. (कणग-सिलायलु-ज्जल-पसत्थ-समतल-उवचिय-विच्छिण्ण-
पिहुल-वच्छे) कनक शिला समान-सोनानी पाटाना जेवुं देदीप्यमान,
शुभलक्षणोंवाणुं, सरभुं, पुष्ट, विशाल तेमज्ज भड्ड पड्डाणुं वक्षस्थल [छाती]
होतुं. ते वक्षस्थल (सिरिवच्छंकियवच्छे) श्रीवत्सना चिह्नवाणुं होतुं. अने

सुजाय-निरुवहय-देह-धारी अट्टसहस्स-पडिपुण्ण-वरपुरिस-लक्खण-धरे सण्णयपासे संगयपासे सुंदरपासे सुजायपासे मियमाइय-

‘सिरिवच्छंक्रियच्छे’ श्रीवत्साङ्कितवक्षस्कः—श्रीवत्सेन=शुभचिह्नविशेषेण अङ्कितं=चिह्नितं—वक्षः—हृदयस्थलं यस्य स तथा, ‘अकरंडुय—कणग—रुयय—निम्मल—सुजाय—निरुवहय—देह—धारी’, अकरण्डुक—कनक—रुचक—निर्मल—सुजात—निरुपहत—देहधारी, अकरण्डुकः—‘करंडुय’ इति देशीयः शब्दः, अदृश्यमानं कण्डुकं=गृष्ठभागास्थिकं यस्य देहस्य स अकरण्डुकः, तथा कनकरुचकः—सुवर्णवर्णयुक्तः, तथा—निर्मलः, सुजातः, निरुपहतः=रोगादिबाधारहितो यो देहस्तं देहं धरतीत्येवं शीलो यः स तथा, ‘अट्टसहस्स—पडिपुण्ण—वरपुरिस—लक्खण—धरे’ अष्टसहस्र—प्रतिपूर्ण—वरपुरुष—लक्षणधरः—अष्टोत्तरं सहस्रम्—अष्टसहस्रं, प्रतिपूर्णम्—अन्यूनं, वरपुरुषाणां लक्षणं—स्वस्तिकादिकम्, तस्य धरः—धारकः, महापुरुषाणामष्टोत्तरसहस्रपरिमितानि सुलक्षणानि सन्ति, तेषां सर्वेषां धारकः—इति भावः । ‘सण्णयपासे’ सन्नतपार्श्वः—सन्नतौ अधोऽधोऽवनतौ पार्श्वौ—पार्श्वभागौ यस्य स सन्नतपार्श्वः, ‘संगयपासे’ सङ्गतपार्श्वः—सङ्गतौ—प्रमाणोचितौ, पार्श्वौ—भुजमूलादधःप्रदेशौ यस्य सः, प्रमाणयुक्तपार्श्वप्रदेशवानिति भावः । ‘सुंदरपासे’ सुन्दरपार्श्वः—दर्शनीयपार्श्वयुक्तः, ‘सुजायपासे’ सुजातपार्श्वः—सुन्दरपार्श्ववानित्यर्थः ।

श्रीवत्सके चिह्न से युक्त था । और प्रभुका शरीर (अकरंडुय—कणग—रुयय—निम्मल—सुजाय—निरुवहय—देह—धारी) अकरण्डुक—अदृश्यमान गृष्ठभाग की हड्डीयुक्त, तथा सुवर्ण के जैसा निर्मल एवं रोगादिक बाधा से रहित था । भगवान् (अट्टसहस्स—पडिपुण्ण—वर—पुरिस—लक्खण—धरे) न्यूनतारहित ऐसे १००८ स्वस्तिकादिक उत्तम पुरुषों के योग्य लक्षणों के धारक थे । भगवान् के शरीरका पार्श्वभाग (सण्णयपासे संगयपासे सुंदरपासे सुजायपासे मियमाइय—पीण—रइय—पासे) क्रमिक अवन्त

प्रभुनुं शरीर (अकरंडुय—कणग—रुयय—निम्मल—सुजाय—निरुवहय—देह—धारी) अकरंडुक—अदृश्यमान—न देखाय तेवी रीते वांसा—अरडा—नी करेडवाणुं तथा सोनाना वणुं जेवुं निर्माण तेमज रोगादिङ्की पीडा वगरनुं डतुं । भगवान् (अट्टसहस्स—पडिपुण्ण—वर—पुरिस—लक्खण—धरे) न्यूनतारहित जेवां १००८ स्वस्तिक आदिङ्क उत्तम पुरुषोने योग्य लक्षणोना धारक डता । भगवान्ना शरीरने पड्यानो भाग (सण्णयपासे संगयपासे सुंदरपासे सुजायपासे मियमाइय—पीण—रइय—पासे) कमथी नभेवो डतो, उचित प्रमाणुःणो डतो, सुंदर

पीण-रइय-पासे उज्जुय-सम-सहिय-जच्च-तणु-कसिण-णिद्ध-
आइज्ज-लडह-रमणिज्ज-रोम-राई झस-विहग-सुजाय-पीण-कुच्छी
झसोयरे सुइकरणे पउम-वियड-णामे गंगावत्तग-पयाहिणावत्त-

‘ मियमाइय-पीण-रइय-पासे ’ मित्तमात्रिक-पीन-रतिद-पार्श्वः, तत्र-मित्तमात्रिकौ-
समुचितपरिमाणवन्तौ, पीनौ-पुष्टौ, रतिदौ-रम्यौ, पार्श्वौ-कक्षाभ्यामधो वामदक्षिणशरीर-
भागौ यस्य स तथा, ‘ उज्जुय-सम-सहिय-जच्च-तणु-कसिण-णिद्ध-आइज्ज-लडह-
रमणिज्ज-रोमराई ’ ऋजुक-सम-संहित-जात्य-तनु-कृष्ण-स्निग्धा-ऽऽदेय-ललित-
रमणीय-रोमराजिः, ऋजुकाणां-सरलानां, समसंहितानां-मिलितानां, जात्यानां-
स्वजातीयेषूत्तमानां, तनूनां-सूक्ष्माणां, स्निग्धानां-सरसानाम्, आदेयानाम्-उपादेयानां,
‘ लडह ’ ललितानां=रमणीयानां-मनोरमाणां रोम्णां राजिः-पङ्क्तिर्यस्य स तथा, सरल-
सूक्ष्म-कृष्ण-सरस-रम्य-रोमराजिमान् इत्यर्थः । ‘ झस-विहग-सुजाय-पीण-कुच्छी
झष-विहग-सुजात-पीन-कुक्षिः-मत्स्य-पक्षिगोरिव सुजातः=सुन्दरः, पीनः-पुष्टः, कुक्षिः-उदरं
यस्य स तथा, ‘ झसोयरे ’ झषोदरः-मीनवत्सुन्दरोदरवान् इति भावः । ‘ सुइकरणे ’
शुचिकरणः-शुचीनि-पवित्राणि, करणानि-इन्द्रियाणि यस्य सः, इन्द्रियाणां मलवाहित्वेऽपि
भगवदतिशयाद्-निर्मलतया निर्मल-निरुपलेपेन्द्रियवान् इति भावः । ‘ पउम-वियड-

था, उचित प्रमाण से युक्त था, सुन्दर था, शोभन था, तथा-परिमित मात्रावाला,
पुष्ट एवं रम्य था । रोमराजि (उज्जुय-सम-सहिय-जच्च-तणु-कसिण-णिद्ध-आइज्ज-लडह-
रमणिज्ज-रोम-राई) सरल, परस्पर में मिलित, उत्तम, पतली, काली, चिकनी, उपादेय
एवं अत्यन्त मनोहर थी । उनकी कुक्षि (झस-विहग-सुजाय-पीण-कुच्छी) मत्स्य एवं
पक्षी के समान सुन्दर और पुष्ट थी । (झसोयरे) उनका उदर मत्स्य के जैसा सुन्दर
था । (सुइकरणे) इन्द्रियाँ यद्यपि स्वभावतः मलवाहिनी हैं, तथापि अतिशय के प्रभाव

होता, शोभन होता, तथा भयानक धाटनो पुष्ट तेमज्ज रम्य होता. रोमराजि
(शरीर उपरना वाणनी पङ्क्ति) (उज्जुय-समसहिय-जच्च-तणु-कसिण-णिद्ध-
आइज्ज-लडह- रमणिज्ज-रोम-राई) सरली, परस्परमां भणी गयेली, उत्तम,
पातली, काली, चिकली, उपादेय तेमज्ज ञहुज्ज मनोहर होती. तेमनी कांथ
(भगल) (झस-विहग-सुजाय-पीण-कुच्छी) मत्स्य तेमज्ज पक्षीना जेवी सुंदर
अने पुष्ट होती. (झसोयरे) तेमनुं उदर (पेट) भाछलीना जेवुं सुंदर हुतुं.
(सुइकरणे) इन्द्रियो जेडे स्वभावथी मलवाहिनी छे तो पणु अतिशयना

તરંગ-ભંગુર-રવિ-કિરણ-તરુણ-બોહિય-અકોસાયંત-પડમ-ગંભીર-વિ-
યડ-ળામે સાહય-સોળંદ-મુસલ-દર્પણ-ણિકરિય-વર-કળગચ્છ-
રુસરિસ-વરવદ્દર-વલિયમજ્ઞે પમુડય-વરતુરગ-સીહ-વર-વદ્દિય-કડી

ળામે ' પદ્મ-વિકટ-નાભઃ-પદ્મકોશવદ્ વિકટા-ગમ્ભીરા નાભિર્યસ્ય સ તથા, ' ગંગાવત્તગ-
પયાહિણાવત્ત-તરંગ-ભંગુર-રવિ-કિરણ-તરુણ-બોહિય-અકોસાયંત-પડમ-ગંભીર-
-વિયડળામે ' ગજ્ઞાઽઽવર્તક-પ્રદક્ષિણાઽઽવર્ત-તરજ્ઞ-મજ્જુર-રવિ-કિરણ-તરુણ-બોધિત-
વિકસત્પદ્મ-ગમ્ભીર - વિકટ-નાભઃ-તત્ર - ગજ્ઞાઽઽવર્તકસમ્બન્ધિપ્રદક્ષિણાવર્તતરજ્ઞવદ્મજ્જુરા=
ચક્રાકારવર્તુલા, રવિકિરણતરુણબોધિતવિકસત્પદ્મવદ્ ગમ્ભીરા, વિકટા=વિશાળા ચ
નાભિર્યસ્ય સ તથા, ' સાહય-સોળંદ-મુસલ-દર્પણ-ણિકરિય-વરકળગચ્છરુ-
સરિસ-વરવદ્દર-વલિય-મજ્ઞે ' મંહત-સોનન્દ-મુસલ-દર્પણ-નિકરિત-વરકનકત્સરુ-
સદૃશ-વરવત્ર-વલિત-મધ્યઃ-મંહતં-મંક્ષિતમધ્યં યત્-સોનન્દં=ત્રિકાષ્ઠિકા, મુસલઃ-પ્રસિદ્ધઃ,
દર્પણઃ-દર્પણદણ્ડઃ, નિકરિતવરકનકત્સરુઃ=નિકરિતં=સારીકૃતં સર્વથા મંશોધિતં યદ્
વરકનકં-શ્રેઠ્ઠસુવર્ગ, તસ્ય ત્સરુઃ-સ્વર્ણમુષ્ટિઃ, એતેવામિતેરતરયોગદ્વન્દ્વઃ, તૈઃ સદૃશઃ-વર-

સે ભગવાન કી ઇન્દ્રિયોં નિર્લેપ રહતી થીં । (પડમવિયડળામે) નાભિ પદ્મકોશ કે સમાન
ગંભીર થીં, (ગંગાવત્તગ-પયાહિણાવત્ત-તરંગ-ભંગુર-રવિ-કિરણ-તરુણ-બોહિય-અકોસાયંત-
પડમ-ગંભીર-વિયડ-ળામે) તથા-ગંગાવર્તક-સંબંધી પ્રદક્ષિણાવર્તયુક્ત તરંગ કી તરહ ભંગુર,
ચક્રસમાન ગોલ, મધ્યાહ્નકાલકે સૂર્યકી કિરણોં દ્વારા વિકસિત પદ્મ કે સમાન
ગંભીર એવં વિશાલ થીં । (સાહય-સોળંદ-મુસલ-દર્પણ-ણિકરિય-વરકળગચ્છરુ-
સરિસ-વરવદ્દર-વલિય-મજ્ઞે) કટિપ્રદેશ ત્રિકાષ્ઠિકા કે મધ્યભાગ સમાન, મુસલ કે
મધ્યભાગ સમાન, દર્પણ કે દણ્ડ કે મધ્યભાગ સમાન, ચલકતે હુએ સોનેકી

પ્રભાવથી ભગવાનની ઈંદ્રિયોં નિર્લેપ રહેતી હતી. (પડમવિયડળામે) નાભિ
પદ્મકોશ જેવી ગંભીર હતી. (ગંગાવત્તગ-પયાહિણાવત્ત-તરંગ-ભંગુર-રવિ-કિરણ-
તરુણ-બોહિય-અકોસાયંત-પડમ-ગંભીર-વિયડ-ળામે) તથા ગંગાવર્તક સંબંધી
પ્રદક્ષિણાવર્તયુક્ત તરંગની પેઠે ભંગુર, ચક્રના જેવી ગોળ, મધ્યાહ્ન
કાળના સૂર્યનાં કિરણોથી વિકસેલાં પદ્મ સમાન ગંભીર તેમજ વિશાળ હતી.
(સાહય-સોળંદ-મુસલ-દર્પણ-ણિકરિય-વરકળગચ્છરુ-સરિસ-વરવદ્દર-વલિય-મજ્ઞે)
કટિપ્રદેશ ત્રિકાષ્ઠિકા (ઘોડી અથવા તિરપાઈ) ના મધ્યભાગ જેવો, મુસલના
મધ્યભાગ જેવો, દર્પણના ઢંડના મધ્યભાગ જેવો, ચળકતા સોનાની ખડ્ગ-

વર-તુરગ-સુજાય-ગુજ્ઞ-દેસે આઈળળ-હઝવ્વ ણિરુવલેવે વર-
વારણ-તુલ્લ-વિક્રમ-વિલસિય-ગઈ ગય-સસળ-સુજાય-સન્નિભોરૂ

વજ્ર ઇવ વલિતઃ=ક્ષામઃ-કૃશઃ, મધ્યઃ=મધ્યભાગો यस્ય સ તથા, 'પમુડ્ય-વરતુરગ-સીહ-વર-વટ્ટિય-કડી' પ્રમુદિત-વરતુરગ-સિંહવર-વર્તિત-કટિઃ-પ્રમુદિતસ્ય રોગાદિ-રહિતતયા પ્રસન્નસ્ય, વરતુરગસ્ય-શ્રેષ્ઠહયસ્ય, તાદૃશસ્ય સિંહસ્ય ચેવ વરા=શ્રેષ્ઠા વર્તિતા-વર્તુલા, કટિર્યસ્ય સ તથા, 'વર-તુરગ-સુજાય-ગુજ્ઞ-દેસે' વર-તુરગ-સુજાત-ગુહ્યદેશઃ-વરસ્ય=શ્રેષ્ઠસ્ય અશ્વસ્યેવ સુજાતઃ-સુન્દરો ગુહ્યદેશો यस્ય સ તથા । 'આઈળળહઝવ્વ ણિરુવ-લેવે' આકીર્ણહય ઇવ નિરુપલેપઃ-આકીર્ણઃ=મુલક્ષણયુક્ત ઉત્તમ-જાતીયો યો હયઃ=અશ્વઃ, સ ઇવ નિરુપલેપઃ=નિર્ગત ઉપલેપાત્-મલિનસમ્પર્કાત્ ઇતિ નિરુપલેપઃ-નિર્મલ ઇત્યર્થઃ । 'વર-વારણ-તુલ્લ-વિક્રમ-વિલસિય-ગઈ' વર-વારણ-તુલ્ય-વિક્રમ-વિલસિત-ગતિઃ-વરવારણસ્ય=શ્રેષ્ઠગજસ્ય તુલ્યઃ=સમાનઃ વિક્રમઃ=પરાક્રમઃ, તથા તત્તુલ્યા વિલસિતા=ચરણસંચરણરણનરહિતા ગતિર્ગમનં यस્ય સઃ, ગજેન્દ્રવદતુલબલશાલી લલિતગમનશીલશ્ચેતિ ભાવઃ । 'ગય-સસળ-સુજાય-સન્નિભોરૂ' ગજ-શ્વસન-સુજાત-સન્નિભોરૂઃ-ગજશ્વસનસ્ય=હસ્તિશુળ્ડાદણ્ડસ્ય સુજાતસ્ય=સુષ્ટૂત્પન્નસ્ય હસ્તિશ્વસનસ્યૈવ સન્નિભૌ-સદૃશૌ

સ્વઙ્ગમુષ્ટિ કે મધ્યભાગ સમાન ઔર વ્રજકે મધ્યભાગ સમાન પતલા થા । તથા (પમુડ્ય-વરતુરગ-સીહવર-વટ્ટિય-કડી) કટિપ્રદેશ રોગાદિકરહિત હોને સે પ્રસન્ન શ્રેષ્ઠ ઘોડે કે સમાન ઔર સિંહ કે સમાન ગોલ થા । (વર-તુરગ-સુજાય-ગુજ્ઞ-દેસે) ગુહ્ય પ્રદેશ સુન્દર ઘોડે કે ગુહ્ય પ્રદેશ કે સમાન થા । (આઈળળહઝવ્વ ણિરુવલેવે) આકીર્ણ જાતીય ઘોડેકે ગુહ્ય પ્રદેશ કે સમાન ભગવાનકા ગુહ્ય પ્રદેશ નિરુપલેપ થા । તથા (વર-વારણ-તુલ્લ-વિક્રમ-વિલસિય-ગઈ) ભગવાનકા પરાક્રમ ઉત્તમ હાથી કે સમાન થા, તથા ઉનકી ગતિ મી ઉર્સીકે સમાન સુન્દર થી । (ગય-સસળ-સુજાય-સન્નિભોરૂ) હસ્તિશુળ્ડા-

મુઠીના મધ્યભાગ જેવો અને વજ્રના મધ્યભાગ જેવો પાતળો હતો. તથા (પમુડ્ય-વરતુરગ-સીહ-વર-વટ્ટિય-કડી) કટિપ્રદેશ રોગ આદિકથી રહિત હોવાથી પ્રસન્ન શ્રેષ્ઠ ઘોડાની પેઠે અને સિંહની પેઠે ગોળ હતો. (વરતુરગ-સુજાય-ગુજ્ઞ-દેસે) ગુહ્યપ્રદેશ સુંદર ઘોડાના ગુહ્યપ્રદેશના જેવો હતો. (આઈ-ળળહઝવ્વ ણિરુવલેવે) આકીર્ણ-જાતવાન ઘોડાના ગુહ્યપ્રદેશના જેવો ભગવાનનો ગુહ્યપ્રદેશ નિરૂપલેપ હતો. તથા (વર-વારણ-તુલ્લ-વિક્રમ-વિલસિય-ગઈ) ભગવાનનું પરાક્રમ ઉત્તમ હાથીના જેવું હતું, તથા તેમની ચાલ પણ તેના

**समुग्ग-णिमग्ग-गूढ-जाणू एणी-कुरुविंदा-वत्त-वट्ठा-णुपुव्व-जंघे
संठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-गूढ-गुप्फे सुपइट्ठिय-कुम्म-चारु-चलणे**

ऊरू यस्य स तथा, सुन्दर-गजशुण्डादण्डसदृशोरुयुगलवानिति भावः, 'समुग्ग-णिमग्ग-गूढ-जाणू' समुद्ग-निमग्न-गूढ-जानुः-समुद्गः-सम्पुटकः-तस्योपरितनाधस्तन-रूपयोर्भागयोः संधिवत् निमग्नगूढे=अत्यन्तावृते-मांसपुष्टे इत्यर्थः, तादृशे जानुनी 'घुटना' इति प्रसिद्धे यस्य स तथा, उपचितत्वाददृश्यमानजान्वस्थिक इत्यर्थः । 'एणी-कुरुविंदावत्त-वट्ठा-णुपुव्व-जंघे' एणी-कुरुविन्द - वर्त्र-वृत्ता-नुपूर्यजङ्घः-एण्याः-हरिण्या इव, कुरुविन्दः-तृणविशेषः, वर्त्र=सूत्रबलनकं च, ते इव च वृत्ते-वर्तुले, आनुपूर्येण तनुरूपे जङ्घे यस्य स तथा यद्वा-एणी-कुरुविन्दावर्त्त-वृत्ता-नुपूर्यजङ्घः-इति च्छाया, तत्र-एण्या इव, कुरुविन्दावर्त्तः=भूषणविशेष इव च वृत्ते=वर्तुले आनुपूर्येण तनुस्वरूपे जङ्घे यस्य स तथा, 'संठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-गूढ-गुप्फे' संस्थित-सुश्लिष्ट-विशिष्ट-गूढ-गुल्फः-संस्थितौ-सुसंस्थानवन्तौ, सुश्लिष्टौ-

दण्ड के समान उन प्रभुकी दोनों जंघाएँ थीं । (समुग्ग-निमग्ग-गूढ-जाणू) डिब्बे के समान प्रभुके घुटने गुप्तढकनी से युक्त एवं अन्तर रहित होनेसे सुन्दर थे । अर्थात् उपचित होनेसे प्रभुके जानु की अस्थियाँ दृष्टिगोचर नहीं होती थीं । (एणी-कुरुविंदा-वत्त-वट्ठा-णुपुव्व-जंघे) एणी-हिरणी की जङ्घा समान, तथा-कुरु-विन्द-तृणविशेष और डोरी के बलके समान अथवा कुरुविन्दावर्त्त नामक भूषणके समान गोल पतली-ऊपर से मोटी नीचेकी ओर उतरतीं २ पतली प्रभुकी दोनों जंघाएँ थीं । (संठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-गूढ-गुप्फे) शोभन आकारयुक्त, अच्छी

जेवीज सुंदर હતી. (ગય-સસણ-સુજાય-સન્નિમોહ) હસ્તિશુંડાદંડના (હાથીના સૂઢના) જેવી તે પ્રભુની બન્ને જંઘાઓ હતી. (સમુગ્ગ-ણિમગ્ગ-ગૂઢ-જાણૂ) ડબ્બાની પેઠે પ્રભુના ઘુટણો શુભ ઢાંકણવાળાં તેમજ અંતર રહિત હોવાથી સુંદર હતા.; અર્થાત્ ઉપચિત હોવાથી પ્રભુના ઘુટણનાં હાડકાં દેખાતાં નહતાં. (એણી-કુરુવિંદા-વત્ત-વટ્ઠા-ણુપુવ્વ-જંઘે) એણી-હિરણીની જંઘાં સમાન, તથા-કુરુવિંદ-તૃણવિશેષ, અને દોરીની વલ સમાન, અથવા કુરુ-વિન્દાવર્ત્ત નામક ભૂષણ સમાન ગોળ પાતળી-ઉપરથી જાડી તેમજ નીચેની તરફ ઉતરતી ઉતરતી પાતળી પ્રભુની બન્ને જંઘાઓ હતી. (સંઠિય-સુસિ-લિટ્ઠ-વિસિટ્ઠ-ગૂઢ-ગુપ્ફે) શોભાયમાન આકારવાળા, સારી રીતે મળેલા તેમજ

अणुपुव्व-सुसंहयं-गुलीए उण्णय-तणुतंब-णिद्ध-णक्खे रत्तुप्पल-
पत्त-मउय-सुकुमाल-कोमल-तले नग-नगर-मगर-सागर-चक्कं-
क-

सुमिलितौ, गूढौ-मांसलत्वाददृश्यौ गुल्फौ यस्य स तथा, पुष्टतया तिरोहितगुल्फः ।
'सुप्पइट्ठिय-कुम्म-चरुचलणे' सुप्रतिष्ठित-कूर्मचारु-चरणः-सुप्रतिष्ठितौ-शोभनरूपेण
स्थितौ, कूर्मवत्-कच्छपवत्, चारु=सुन्दरौ चरणौ यस्य स तथा, संकोचिताङ्गक-
च्छपपृष्ठवचरणवानिति भावः । 'अणुपुव्व-सुसंहयं-गुलीए' आनुपूर्व्य-सुसंहताऽङ्गु-
लीकः-आनुपूर्व्येण=क्रमेण हीयमाना वर्द्धमाना वा, तथा सुसंहताः-विभिन्ना अपि
संमिलिता अङ्गुल्यः=चरणाङ्गुल्यो यस्य स तथा, 'उण्णय-तणु-तंब-णिद्ध-
णक्खे' उन्नत-तनुताम्र-स्निग्ध-नखः-समुन्नत-प्रतल-रक्तचिक्कण-नख-युक्त इत्यर्थः,
'रत्तुप्पल-पत्त-मउय-सुकुमाल-कोमल-तले' रक्तोत्पल-पत्र-मृदुक-सुकुमार-कोमलतलः-रक्तक-
मलदलवदतिकोमलारुणवर्णचरणतलवानित्यर्थः । 'नग-नगर-मगर-सागर-चक्कं-
क-वरंग-मंगलं-किय-चलणे' नग-नगर-मकर-सागर-चक्राङ्क-वराङ्क-मङ्गलाङ्कित-चरणः, तत्र-नगः=पर्वतः,

रीति से मिलित एवं गूढ-मांसल-पुष्ट होनेसे अदृश्य ऐसे प्रभुके दोनों पैरोंके
गुल्फ थे । (सुप्पइट्ठिय-कुम्म-चारु-चलणे) प्रभुके पाँव सकुच कर बैठे हुए
कच्छाके समान सुन्दर थे । (अणुपुव्व-सुसंहयं-गुलीए) अनुक्रमसे उचित आकार-
रवाली एवं भिन्न २ होने पर भी परस्पर में संमिलित प्रभुके चरणोंकी अंगुलियां थीं ।
(उन्नय-तणु-तंब-णिद्ध-णक्खे) समुन्नत, प्रतल, रक्त एवं चिक्कण प्रभुके नख
थे । (रत्तुप्पल-पत्त-मउय-सुकुमाल-कोमल-तले) रक्तकमलके दलके समान
अति कोमल लालवर्णके प्रभुके चरणोंके तले थे । (नग-नगर-मगर-सागर-
चक्कं-क-वरंग-मंगलं-किय-चलणे) नग-पर्वत, नगर-पुर, मकर-जलचरजीवविशेष,

गूढ-मांसल-पुष्ट-होवाथी न हेभाय એવા પ્રભુના બન્ને પગના ગોઠણો હતા.
(સુપ્પઇટ્ઠિય-કુમ્મ-ચારુ-ચલણે) પ્રભુના પગ સંકુચાઈને બેઠેલા કાચબાની
પેઠે સુંદર હતા. (અણુપુવ્વ-સુસંહયં-ગુલીએ) અનુક્રમથી ઉચિત આકારવાળી
તેમજ જુદી જુદી હોવા છતાં પણ પરસ્પરમાં બેડાએલી પ્રભુના ચરણોની
આંગળીઓ હતી. (ઉન્નય-તણુ-તંબ-ણિદ્ધ-ણક્ખે) સમુન્નત, પ્રતલ, લાલ
તેમજ ચિક્કણા પ્રભુના નખ હતા. (રત્તુપ્પલ-પત્ત-મઉય-સુકુમાલ-કોમલ-તલે)
રક્ત કમલના દલના જેવાં અતિશય ઠોમળ લાલ વર્ણનાં પ્રભુના ચરણોનાં
તળિયાં હતાં. (નગ-નગર-મગર-સાગર-ચક્કંક-વરંગ-મંગલં-કિય-ચલણે)
નગ-પર્વત, નગર-પુર, મકર-જલચર જીવ વિશેષ, સાગર-સમુદ્ર અને ચક્ર

वरंग-मंगलं-किय-चलणे विसिद्वरूवे हुयवह-निद्धूम-जलिय-तडि-
तडिय-तरुण-रवि-किरण-सरिस-तेए अणासवेअममे अकिंचणे

नगरं=पुरं, मकरः=जलचरजीवविशेषः, सागरः=समुद्रः, चक्रं=प्रसिद्धम्, एतान्येव अङ्का-
लक्षणानि, तथा वराऽङ्काश्च=शुभमृचकस्वस्तिकादिलक्षणानि, मङ्गलः=शुभलक्षण-
विशेषश्च, तैरलङ्कृतौ मुशोभितौ-चरणौ यस्य स तथा, नगनगरमकरादिचिह्न-स्वस्तिका-
दिचिह्न-मङ्गलचिह्नरूप-शुभलक्षणमुशोभितचरणयुगवानिति भावः । 'विसिद्वरूवे' विशि-
ष्टरूपः-अतिसुन्दरः, 'हुयवह-निद्धूम-जलिय-तडितडिय-तरुण-रवि-किरण-सरिस-तेए'
हुतवह - निर्द्धूम - ज्वलित - तडितडि - तरुण - रवि-किरण - सदृश - तेजस्कः,
हुतवहनिर्द्धूमज्वलितस्य=अग्नेर्निर्द्धूमज्वालायाः, तडितडितः - धारावाहिकतया पुनः
पुनर्विद्योतितविद्यतः,-तथा तरुणरविकिरणानां-सदृशं=समानं तेजः-दीप्तिर्यस्य स
तथा, 'अणासवे' अनास्रवः-अविद्यमाना आस्रवा यस्य स तथा,
कर्मागमरहित इत्यर्थः, 'अममे' अममः-ममत्वरहितः 'अकिंचणे' अकिञ्चनः-नास्ति

सागर-समुद्र और चक्र इनके शुभ चिह्नों से, स्वस्तिकादि शुभ चिह्नों से तथा
मङ्गल नामक शुभ चिह्नसे मुशोभित प्रभुके दोनों चरण थे । (विसिद्वरूवे) प्रभुका
रूप विशिष्ट-असाधारण अर्थात् अनुपम था । (हुयवह-निद्धूम-जलिय-तडित-
डिय-तरुण-रवि-किरण-सरिस-तेए) निर्द्धूम अग्नि के समान, बार बार चम-
कती हुई बिजली के समान तथा मध्याह्नकालिक रविकिरणोंके समान प्रभुका तेज
था । (अणासवे) नवीन कर्मोंके आस्रवसे प्रभु सर्वथा रहित थे । (अममे)
प्रभुके किसी भी पर पदार्थमें ममत्व नहीं था । (अकिंचणे) प्रभु अकिंचन-परिग्रह-
रहित थे । (छिन्नसोए) भगवानने अपनी भवपरम्पराको नष्ट कर दिया था ।

येनां शुभ चिह्नोथी-स्वस्तिकादि शुभचिह्नोथी, तथा मंगलनामक चिह्नोथी
मुशोभित प्रभुना अन्ने चरणे उता (विसिद्वरूवे) प्रभुनुं इय विशिष्ट-असाधा-
रण अर्थात् अनुपम इतुं. (हुयवह-निद्धूम-जलिय-तडि-तडिय-तरुण-रवि-
किरण-सरिस-तेए) धुमाडा वगरना अग्निना जेपुं, बारंवार चणकती विज-
लीना जेपुं, तथा मध्याह्न काणना सूर्यनां किरणो जेपुं प्रभुनुं तेज इतुं
(अणासवे) नवीन कर्मोना आस्रवथी प्रभु सर्वथा रहित उता. (अममे)
प्रभुने कोछ पण पर पदार्थमां ममत्व नहोतुं (अकिंचणे) प्रभु अकिंचण-परि-
ग्रह वगरना उता. (छिन्नसोए) लगवाने पोताना भवपरंपरानो नाश करी

**छिन्नसोए निरुवलेवे ववगय-पेम-राग-दोस-मोहे निगंथस्स
पवयणस्स देसए सत्थनायगे पइट्ठावए समणगपई समणग-**

किञ्चन यस्य स तथा, परिग्रहग्रन्थिरहितः । ‘छिन्नसोए’ छिन्नस्रोताः—निवर्तित-
भवप्रवाहः, ‘निरुवलेवे’ निरुपलेपः—उपलेपो—मालिन्यं; तद् द्विविधं द्रव्यरूपं भावरूपञ्च,
तादृशाद् द्विविधादुपलेपात्—निर्गतो निरुपलेपः, द्रव्यतो निर्मलशरीरः, भावतः कर्मबन्धहेतु-
भूतोपलेपरहितः । पूर्वोक्तमेवार्थं विशेषतः स्पष्टयन्नाऽऽह ‘ववगय-पेम-राग-दोस-मोहे’
व्यपगतप्रेमरागद्वेषमोहः—प्रेम च रागश्च द्वेषश्च मोहश्चेति प्रेमरागद्वेषमोहाः, प्रेम—आसक्ति-
लक्षणम्, रागः—विषयेषु अनुरागरूपः, द्वेषः—अप्रीतिरूपः मोहः—अज्ञानरूपः, एते
प्रेमादयो व्यपगताः—विनष्टा यस्य स तथा, ‘निगंथस्स पवयणस्स देसए’
निर्ग्रन्थस्य प्रवचनस्य देशकः—निर्ग्रन्थस्य—निर्गतं ग्रन्थाद् द्रव्यतः सुवर्णादिरूपाद्,
भावतो मिथ्यात्वादिलक्षणात्—निर्ग्रन्थं तस्य निर्ग्रन्थस्य, प्रवचनस्य—प्रकर्षेण—
उच्यते—परमकल्याणाय कथ्यते—इति प्रवचनम्—तस्य प्रवचनस्य देशकः—उपदेशकः—
निरारम्भ—निष्परिग्रह—धर्मोपदेशक इति भावः । ‘सत्थनायगे’ सार्थनायकः—सार्थस्य—
मोक्षप्रस्थितभव्यसमूहस्य, नेता—स्वामीत्यर्थः ‘पइट्ठावए’ प्रतिष्ठापकः—श्रुतचारित्र-
लक्षणधर्मसंस्थापकः । ‘समणगपई’ श्रमणकपतिः—श्राम्यन्ति=सोत्साहं कर्मनिर्जरार्थं

(निरुवलेवे) द्रव्य एवं भाव रूप दोनों प्रकारकी मलिनतासे प्रभु वर्जित थे ।
इसी बातको पुनः विशेष रूपसे इन विशेषणों से सूत्रकार स्पष्ट करते हैं—(ववगय-
पेम-राग-दोस-मोहे) भगवानने अपनी आत्मा से प्रेम, राग द्वेष एवं मोहको नष्ट
कर दिया था । (निगंथस्स पवयणस्स देसए) प्रभु निर्ग्रन्थ प्रवचनके उपदेशक
थे । (सत्थनायगे) मोक्षकी ओर प्रस्थित भव्यसमूहके भगवान नेता थे । (पइ-
ट्ठावए) श्रुतचारित्ररूप धर्मके प्रभु संस्थापक थे । (समणगपई) भगवान् तप एवं

दीधो हुतो. (निरुवलेवे) द्रव्य तेमज्ज लावइय अन्ने प्रकारनी मलिनताथी
प्रभु वर्जित हुता. आ वातने इरीने विशेष इयथी तेमनां अंगोनां विशे-
षणोथी सूत्रकार स्पष्ट करे छे. (ववगय-पेम-राग-दोस-मोहे) भगवाने
पोताना आत्माभांथी प्रेम, राग, द्वेष तेमज्ज भोइनो नाश कर्यो हुतो.
(निगंथस्स पवयणस्स देसए) प्रभु निर्ग्रन्थ प्रवचनना उपदेशक हुता.
(सत्थनायगे) मोक्षना तरइ वणेला भव्यसमूहना भगवान नेता हुता.
(पइट्ठावए) श्रुत चारित्रइय धर्मना प्रभु संस्थापक हुता. (समणगपई)

વિંદ-પરિયટ્ટિણ ચતુતીસ-બુદ્ધા-ઈસેસ-પત્તે, પળતીસ-સચ્ચવયળા-

શ્રમં કુર્વન્તિ તપઃ—સ્વાધ્યાયાદિષુ ઇતિ શ્રમળાઃ—ત ંવ શ્રમળકાઃ, તેષાં પતિઃ—
 ચતુર્વિધસદ્ધાધિપતિરિતિ ભાવઃ, ‘ સમળગ-વિંદ-પરિયટ્ટિણ ’ શ્રમળક-વૃન્દ-પરિવર્દ્ધકઃ—
 શ્રમળકાનાં ચતુર્વિધાનાં, વૃન્દં—સદ્ધઃ—તસ્ય પરિવર્દ્ધકઃ—વૃદ્ધિકારી । અથવા ‘ પરિયટ્ટિણ ’
 પર્યટકઃ—અગ્રેસરઃ, યદ્વા પર્યાયકઃ—તૈઃ પરિપૂર્ણઃ । ‘ ચતુતીસ-બુદ્ધાઈસેસ-પત્તે ’
 ચતુર્વિંશદ્—બુદ્ધાતિશેષ—પ્રાપ્તઃ=ચતુર્વિંશત્=ચતુર્વિંશત્સંખ્યકા યે બુદ્ધાનાં=તીર્થકરાગામ્
 અતિશેષાઃ—અતિશયાઃ તાન્ પ્રાપ્તઃ, તત્ર-અવૃદ્ધિસ્વભાવકં કેશસ્મશ્રુરોમનસ્વમિતિ પ્રથમોઽતિશયઃ,
 અન્યેઽપ્યતિશયાઃ સમવાયાઙ્ગસૂત્રેઽભિહિતાસ્તતોઽવગન્તવ્યાઃ । ‘ પળતીસ—સચ્ચવયળાઈ-
 સેસ-પત્તે ’ પચ્ચત્રિંશત્સત્યવચનાઽતિશેષપ્રાપ્તઃ—પચ્ચત્રિંશત્સંખ્યકા યે સત્યવચનસ્ય અતિ-
 શેષાઃ—અતિશયાઃ તાન્ પ્રાપ્તઃ, અર્થાત્ પચ્ચત્રિંશદ્વાળીગુણયુક્ત ઇતિ ભાવઃ । પચ્ચત્રિંશ-
 દ્વાળીગુણા આચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય મત્કૃતાઽઽચારચિન્તામણિટીકાયાં પ્રથમાધ્યયને

સ્વાધ્યાય આદિ ક્રિયાઓમેં કર્મનિર્જરાકે લિયે પરિશ્રમ કરનેવાલે શ્રમળોકે સ્વામી થે ।
 (સમળગ-વિંદ-પરિ-યટ્ટિણ) ચતુર્વિધ સંધકે વે પ્રભુ વર્દ્ધક થે । અથવા ઉસકે
 અગ્રેસર યા ઉસસે પરિપૂર્ણ થે । (ચતુતીસ—બુદ્ધાઈસેસ—પત્તે) તીર્થકરોકે ચૈતીસ
 અતિશયોસે પ્રભુ વિરાજમાન થે । ઇનમેં નસ્ત્ર, કેશ ંવંસ્મશ્રુ—દાઢી—મૂંછકા નહીં વઢના
 યહ પહ્લ્લા અતિશય હૈ, અવશિષ્ટ અતિશય સમવાયાઙ્ગ સૂત્ર સે જાન લેના ચાહિયે ।
 (પળતીસ-સચ્ચવયળા—ઈસેસ-પત્તે) વાળીકે પૈતીસ ગુણો સે પ્રભુ યુક્ત થે । ૩૫વાળી-
 ગુણરૂપ અતિશય આચારાંગ સૂત્રકે પ્રથમ અધ્યયનકી આચારચિન્તામણિ ટીકા મેં
 કહે હૈં, અતઃ વહાં સે જાન લેના ચાહિયે । (આગાસગણં ચક્રેણં) આકાશગત

લગવાન તપ તેમજ સ્વાધ્યાય આદિ ક્રિયાઓમાં કર્મનિર્જરારને માટે પરિ-
 શ્રમ કરવાવાળા શ્રમણોના સ્વામી હતા. (સમળગ-વિંદ-પરિયટ્ટિણ) ચતુ-
 વિંધ સંધના તે પ્રભુ વર્દ્ધક હતા અથવા તેના અગ્રેસર કે તેનાથી પરિ-
 પૂર્ણ હતા. (ચતુતીસબુદ્ધા-ઈસેસપત્તે) તીર્થકરોના ચોત્રીસ અતિશયોથી પ્રભુ
 બિરાજમાન હતા. તેમાં નખ કેશ તેમજ શ્મશ્રુ-દાઢી-મૂંછતું ન વધવું એ
 પહેલો અતિશય છે, બાકીના અતિશય સમવાયાંગ સૂત્રથી બાણી દેવા
 બોધ્યે. (પળતીસ-સચ્ચ-વયળાઈસેસ-પત્તે) વાણીના પાંત્રીસ ગુણોથી પ્રભુ
 યુક્ત હતા. ૩૫ વાણી ગુણરૂપ અતિશય આચારાંગ સૂત્રના પ્રથમ અધ્યય-
 નની આચાર-ચિન્તામણિ ટીકામાં કહેલા છે, એટલે ત્યાંથી તે બાણી દેવા

इसेस-पत्ते आगासगणं चक्रेणं आगासगणं छत्तेणं आगास-
मियाहिं चामराहिं आगासगणं फालियामणं सपायवीढेणं
सीहासणेणं धम्मज्झणं पुरओ पकढिज्जमाणेणं चउदसहिं सम-
णसाहस्सीहिं छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं सद्धिं संपडिवुडे

व्याख्याताः, 'आगासगणं चक्रेणं' आकाशगतेन चक्रेण । 'आगासगणं-
छत्तेणं' आकाशगतेन छत्रेण । 'आगासमियाहिं' आकाशमिताभ्यां=प्राप्ताभ्यां,
'चामराहिं' चामराभ्याम्-अतिशयप्रभावाच्चक्रादिभिरुपलक्षित इति भावः । 'आगास-
गणं फालियामणं' आकाशगतेन स्फटिकमयेन-आकाशस्थितेन स्फटिकनिर्मितेन
'सपायवीढेणं' सपादपीठेन-पादस्थापनपीठसहितेन 'सीहासणेणं' सिंहासनेन,
'धम्मज्झणं' धर्मध्वजेन, 'पुरओ' पुरतः-अग्रतः, 'पकढिज्जमाणेणं' अतिशय-
महिम्ना प्रकट्यमानेन 'चउदसहिं समणसाहस्सीहिं' चतुर्दशभिः-श्रमणसाहस्रीभिः
श्रमणानां चतुर्दशसहस्रैः 'छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं' षट्त्रिंशता आर्यिकासाह-
स्रीभिः-आर्यिकाणां षट्त्रिंशत्सहस्रैः 'सद्धिं' सार्द्धं-सह । 'संपडिवुडे' सम्परिवृतः-

चक्रसे, (आगासगणं छत्तेणं) आकाशगत छत्रों से (आगासमियाहिं चामराहिं)
आकाशगत चामरों से वे प्रभु उपलक्षित थे । (आगासगणं फालियामणं
सपायवीढेणं सीहासणेणं धम्मज्झणं पुरओ पकढिज्जमाणेणं) आकाशगत,
स्फटिकमय एवं पादपीठसहित ऐसे सिंहासन से एवं अतिशय की महिमा से प्रकटित
और आगे २ चलनेवाले ऐसे धर्मध्वजा से युक्त, तथा-(चउदसहिं समणसाहस्सीहिं
छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं सद्धिं संपरिवुडे) १४ हजार श्रमणों के, एवं

नेर्धये. (आगासगणं चक्रेणं) आकाशगत चक्रेथी (आगासगणं छत्तेणं)
आकाशगत छत्रेथी (आगासमियाहिं चामराहिं) आकाशगत चामरेथी ते
प्रभु उपलक्षित (देखाता) हुता. (आगासगणं फालियामणं सपायवीढेणं सीहा-
सणेणं धम्मज्झणं पुरओ पकढिज्जमाणेणं] आकाशगत, स्फटिकमय तेभञ्ज
पादपीठ सहित अथां सिंहासनथी तेभञ्ज अतिशयनी भडिमाथी प्रकटित
अने आगण आगण आदनार अथा धर्मध्वजथी युक्त [चउदसहिं समणसा-
हस्सीहिं छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं सद्धिं संपरिवुडे] १४ हुन्नर श्रमणाना तेभञ्ज
छत्रीसहुन्नर आर्याओना परिवारथी युक्त लगवान श्री भडावीर प्रभु

पुव्वाणुपुर्व्वि चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहर-
माणे चंपाए णयरीए बहिया उवणगरग्गामं उवागए चंपं नगरिं
पुण्णभदं चेइयं समोसरिउकामे ॥ सू० १६ ॥

भगवान्—श्रीमहावीरः, ‘पुव्वाणुपुर्व्वि’ पूर्वानुपूर्व्या—तीर्थकरपरिपाट्या—तीर्थङ्करपर-
म्परया । ‘चरमाणे’ चरन्—विहरन्, ‘गामाणुग्गामं’ ग्रामानुग्रामम् एकस्माद्
ग्रामाद् ग्रामान्तरम्, ‘दूइज्जमाणे’ द्रवन्—गच्छन् एकस्माद् ग्रामादनन्तरं ग्राममनुल-
ङ्घयन्नित्यर्थः, ‘सुहंसुहेणं’ सुखसुखेन—व्ययमबाधारहितेन, ‘विहरमाणे’ विहरन्—अप्र-
तिवद्भविहारं कुर्वन्, ‘चंपाए नयरीए’ चम्पाया नगर्याः, ‘बहिया’ बहिः
‘उवणगरग्गामं’ उपनगरग्रामम् नगरसमीपवर्तिनं ग्रामम् । ‘उवागए’ उपागतः—सम-
वसृतः, किमर्थमुपागतः ? इत्याह—‘चंपं णयरीं’ चम्पायां—चम्पानाम्भ्यां नगर्यां
‘पुण्णभदं चेइयं समोसरिउकामे’ पूर्णभद्रं=पूर्णभद्रनामकं चैत्यम्=उद्यानं समवस-
र्तुकामः—आगन्तुकामः सन् उपागत इति सम्बन्धः ॥ सू० १६ ॥

छत्तीसहजार आर्यिकाओं के परिवार से युक्त भगवान् श्रीमहावीर प्रभु (पुव्वाणुपुर्व्वि
चरमाणे) तीर्थकरों की परंपरा के अनुसार विहार करते हुए (गामाणुग्गामं
दूइज्जमाणे) एकग्राम से दूसरे ग्राम पधारते हुए (सुहंसुहेणं विहरमाणे) सुख
सुख से विचरते हुए (चंपाए णयरीए बहिया उवणगरग्गामं उवागए) चंपा-
नगरी के बाहरभाग की ओर स्थित; परन्तु वहां से बहुत दूर नहीं; किन्तु थोड़ी
दूर पर रहे हुए ऐसे ग्राम में पधारें, यहां आने का कारण उनका यह था कि
वे प्रभु (चंपं णयरीं पुण्णभदं चेइयं समोसरिउकामे) चंपानगरी के पूर्णभद्र नामक
उद्यान में पधारनेवाले थे ॥ सू० १६ ॥

(पुव्वाणुपुर्व्वि चरमाणे) तीर्थङ्करानी परंपराने अनुसरिने विहार करता
करता (गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे) ओइ गामथी ओणे गाम पधारता
(सुहंसुहेणं विहरमाणे) सुअ सुअथी विचरता (चंपाए णयरीए बहिया उव-
णगरग्गामं उवागए) चंपा नगरीनी अडारना लाग तरइ परंतु अनाथी अहु
दूर नहि पणु जरा दूर आवेता ओवा गाममां पधार्या. अही आववानुं
कारण तेभने ओ हुतुं के ते प्रभु (चंपं णयरीं पुण्णभदं चेइयं समोसरिउकामे)
चंपानगरीना पूर्णभद्र नामना उद्यानमां पधारवावाजा हुता. [सू. १६]

मूलम्—तए णं से पवित्तिवाउए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ-तुट्ठ-चित्त-माणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए

टीका—‘तए णं’ इत्यादि, ततः खलु=यदा भगवान्—चम्पानगरीसमीपग्राम—मुपागतः तदनन्तरं—तत्पश्चात्, ‘से पवित्तिवाउए’ स प्रवृत्तिव्यापृतः=स पूर्वोक्तः—भगवद्वाक्ताऽऽनयने नियुक्तः ‘इमीसे कहाए’ अस्याः कथायाः ‘लद्धट्ठे समाणे’ लब्धार्थः सन्—ज्ञातभगवदागमनवृत्तान्तः सन्, ‘हट्ठ-तुट्ठ-चित्त-माणंदिए’ हृष्ट-तुष्ट-चित्त-नन्दितः—हृष्टतुष्टं=अतितुष्टम्, यद्वा हृष्टं=हर्षितम्, तुष्टम् प्राप्तसन्तोषं—तादृशं चित्तं यस्य स हृष्टतुष्टचित्तः, अत एव आनन्दितः=आनन्दं प्राप्तः संजात—मानसोल्लास इत्यर्थः । सूत्रे ‘चित्तमाणंदिए’ इत्यत्र मकारः प्राकृतत्वात् । ‘पीइमणे’ प्रीतिमनाः—प्रीतिः—तृप्तिर्मनसि यस्य स प्रीतिमनाः—तृप्तमानसः । ‘परमसोमणस्सिए’ परमसौमनस्यितः—परमम्—उत्कृष्टं च तत् सौमनस्यं प्रसन्नचित्तता चेति परमसौमनस्यं तदस्य संजातं परमसौमनस्यितः परमानुरागपूर्णमनस्कः,

‘तए णं से पवित्तिवाउए’ इत्यादि—

(तए णं) जब भगवान् चंपानगरी के समीपवर्ती ग्राम में पधारे तब (से पवित्तिवाउए) भगवान की वार्ता के लाने के लिये नियुक्त किया हुआ वह पुरुष (इमीसे कहाए) इस समाचार को (लद्धट्ठे समाणे) जानकर कि भगवान् चंपानगरी के समीपवर्ती ग्राम में आकर विराजमान हो चुके हैं, (हट्ठ-तुट्ठ-चित्त-माणंदिए) इससे उसके चित्त में अत्यन्त हर्ष और सन्तोष हुआ । अतः वह अत्यन्त आनंदित हुआ, (पीइमणे) मन में प्रेम छा गया, (परमसोमणस्सिए) अत्यंत अनुराग से उसका मन भर गया (हरिस-वस-विसप्पमाण-हियए) अपार

‘तए णं से पवित्तिवाउए’ इत्यादि—

(तए णं) ज्यारे भगवान् चंपानगरीना समीपवतीं ग्राममां पधायीं त्यारे (से पवित्तिवाउए) भगवाननी वार्ता-समाचार लध जवा भाटे निभायेला ते पुइये (इमीसे कहाए) ये समाचारने (लद्धट्ठे समाणे) जणया के भगवान् चंपानगरीना समीपवतीं ग्राममां आवीने गिराजमान थध थूकया छे, (हट्ठ-तुट्ठ-चित्त-माणंदिए) आथी तेना मनमां अत्यंत हर्ष अने सन्तोष थये। अने तेथी ते जहु आनंद पाभ्ये, (पीइमणे) मनमां प्रेम छवाध गये, (परमसोमणस्सिए) अत्यंत अनुरागथी तेनुं मन भरार्थ गयुं,

हरिस-वस-विसप्पमाण-हियए ण्हाए कयबलिकम्मे कय-कोउय-
मंगल-पायच्छित्ते सुद्धप्पवेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवर परिहिए
अप्प-महग्घा-भरणा-लंकिय-सरीरे सयाओ गिहाओ पडिणिक्ख-

‘हरिस-वस-विसप्पमाण-हियए’ हर्ष-वश-विसर्प-हृदयः-हर्षवशेन विसर्पत्-परित
उच्छलद् हृदयं यस्य स तथा, भगवदर्शनादमन्दानन्दतरङ्गसमुच्छलितचित्त इत्यर्थः ।
‘ण्हाए’ स्नातः-कृतस्नानः, ‘कयबलिकम्मे’ कृतबलिकर्मा-स्नाने कृते पशुपक्ष्या-
दर्थं कृतान्नभागः ‘कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ते’ कृत-कौतुक-मङ्गल-प्रायश्चित्तः-
कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि-दुःस्वप्नादिविघातार्थमवश्यकरणीयत्वात् येन स
तथा, तत्र कौतुकानि=मर्षातिलकादीनि, मङ्गलानि तु सिद्धार्थदध्यक्षतादीनि । ‘सुद्धप्प-
वेसाइं’ शुद्धप्रवेश्यानि-शुद्धानि=प्रक्षालितत्वात् निर्मलानि, प्रवेश्यानि=राजसभाप्रवेशाऽऽर्हाणि
-राजसभायोग्यानि ‘मंगलाइं’ मङ्गलानि-मङ्गलकारकाणि, ‘वत्थाइं’ वस्त्राणि-विविधरूप-
प्रकाराणि—‘पवर’-प्रवराणि-मूल्यतो महार्घाणि, रूपत उज्ज्वलानि मृदूनि सान्द्राणि
च; प्राकृतत्वाद् विभक्तेर्लोपः, ‘परिहिए’ परिहितः-शरीरे यथास्थानं योजितः ।
‘अप्प-महग्घा-भरणा-लंकियसरीरे’ अल्प-महार्घा-भरणा-ऽलंकृत-शरीरः-अल्पानि=

हर्ष से उसका हृदय उछलने लगा । फिर उसने कोणिक राजा के पास जाने की तैयारी
की । उसने (ण्हाए) स्नान किया, (कयबलिकम्मे) पश्चात् पशुपक्षी आदि के
लिये अन्न का विभागरूप बलिकर्म किया, (कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ते)
दुःस्वप्नादि निवारण के लिए मर्षातिलकादि किये और दही अक्षतादि धारण किये ।
(सुद्धप्पवेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवर परिहिए) पश्चात् उसने स्वच्छ, राजसभा में
जाने योग्य, मांगलिक, बहुमूल्य, तथा रूप से उज्ज्वल वस्त्रों को धारण किये ।
(अप्प-महग्घा-भरणा-लंकिय-सरीरे) वस्त्र पहिर चुकने के अनन्तर फिर उसने

(हरिस-वस-विसप्पमाण-हियए) अपार हर्षवशी तेन हृदय उच्छलवा लायुं.
पक्षी तेणे केण्डिउ राजनी पासो जवानी तैयारी करी तेणे (ण्हाए) स्नान
कयुं, (कयबलिकम्मे) पक्षी पशु पक्षि आदि ने भाटे अन्नना विभागइय
अलिकर्म कयुं. (कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ते) दुःस्वप्नादि दोषना निवा-
रयुने भाटे मर्षा-तिलक आदि कय्यां अने दही अक्षत आदि धारण कय्यां.
(सुद्धप्पवेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवर परिहिए) पक्षी तेणे स्वच्छ, राजसभाभां
पडेरी जवा योग्य, मांगलिक, बहुमूल्य तथा रूपवती उज्ज्वल वस्त्रो धारण
कय्यां. (अप्प-महग्घा-भरणा-लंकिय-सरीरे) वस्त्र पडेरी लीधा पक्षी तेणे ओछा

मइ, पडिणिकखमित्ता चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव
कोणियस्स रण्णो गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव
कूणिए राया भिंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छि-

परिमाणतो न्यूनानि, महार्घाणि-महान्=अतिशयः-अर्घो=मूल्यं येषां तानि, आभ्रियन्ते=
सम्यग् धार्यन्त इत्याभरणानि- अलङ्काराः, तैरलकृतं शरीरं यस्य स तथा, अल्पबहुमूल्य-
भूषणभूषितदेह इत्यर्थः, 'सयाओ गिहाओ' स्वकाद् गृहाद्, 'पडिणिकखमइ'
प्रतिनिष्क्राम्यति-निर्गच्छति। 'पडिणिकखमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य-निर्गत्य, 'चंपाए णयरीए'
चम्पाया नगर्याः, 'मज्झंमज्झेणं' मध्यमव्येन-चतुर्दिगपेक्षमध्यभागेन, 'जेणेव
कोणियस्स रण्णो गिहे' यत्रैव कोणिकस्य राज्ञो गृहं-भवनम्, 'जेणेव
बाहिरिया उवट्ठाणसाला' यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला-आस्थानमण्डपः, 'जेणेव
कूणिए राया भिंभसारपुत्ते' यत्रैव कोणिको राजा भिंभसारपुत्रः, 'तेणेव
उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति, 'उवागच्छित्ता' उपागत्य, 'करयलपरिग्गहियं'

भार से अल्प एवं बहुमूल्य आभरण भी शरीर पर धारण किये। इस प्रकार
सज-ज कर वह (सयाओ गिहाओ पडिणिकखमइ) अपने घर से निकला,
(पडिणिकखमित्ता चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव कोणियस्स रण्णो गिहे)
घर से निकलकर यह चंपानगरी के ठीक मध्य के मार्ग से होकर जहां कोणिक
राजा का प्रासाद था, (जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला) जहां पर बाहरी
उपस्थानशाला थी, और (जेणेव कूणिए राया भंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ)
उस उपस्थानशाला में, जहाँ भंभसार के पुत्र कोणिक राजा बैठे हुए थे, वहां
पहुँचा। (उवागच्छित्ता) वहाँ पहुँचते ही सर्वप्रथम उसने (करयलपरिग्गहियं

वञ्जननां तेभञ्ज अहुमूल्य आभरणं यत् शरीरं उपर धारणं कर्था. आ
प्रकारे शङ्खगार करीने ते (सयाओ गिहाओ पडिणिकखमइ) पोताने धेरथी
नीकल्ले. (पडिणिकखमित्ता चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव कोणियस्स रण्णो
गिहे) धेरथी नीकलीने ते चंपानगरीना अराअर मध्यभागमां थर्धने न्यां
केल्लिक्क राज्ञेनो मडेल्ल डते. (जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला) अने न्यां आद्य
उपस्थान शाला डती, तथा (जेणेव कूणिए राया भंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ)
ते उपस्थान-शालामां न्यां भंभसारना पुत्र केल्लिक्क राज्ञे अड्डा डता त्यां
पडोअथे. (उवागच्छित्ता) त्यां पडोअतां सर्व प्रथम तेले (करयलपरिग्गहि-

त्ता करयलपरिगृहीतं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं
विजएणं वद्धावेइ, वद्धावित्ता एवं वयासी ॥ सू० १७ ॥

मूलम्—जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं कंखंति, जस्स

करतलपरिगृहीतं=करतलेन करतलं परिगृहीतं=परस्परं संश्लिष्टम् । ‘सिरसावत्तं’
शिरआवर्तम्—शिरसि=शिरसोऽग्रभागे आ—समन्ताद् वर्तते—परिभ्राम्यति इति शिर—
आवर्तस्तम् । ‘अंजलिं’ संमिलितकरयुगम् । ‘मत्थए’ मस्तके—ललाटदेशे,
‘कट्टु’—कृत्वा ‘जएणं’ जयेन—जयः=उत्कर्षप्राप्तिरूपः तेन—‘जय जय महाराज’
इति रूपेण, ‘विजएणं’ विजयेन—विशिष्टः प्रचण्डशत्रुनिग्रहरूपो जयो विजयः
तेन—अर्थात्—विजयस्व विजयस्व महाराज इति रूपेण ‘वद्धावेइ’ वर्द्धयति—जयेन
विजयेन वर्द्धस्वेति वृद्धिकामनारूपामाशिषं प्रयुङ्क्ते स्म, वर्द्धयित्वा ‘एवं वयासी’
एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत् ॥ सू० १७ ॥

टीका—भगवद्विहारादिवार्तानिवेदकः पुरुषः कोणिकनृपं किमवादीत् ? इत्याह—
‘जस्स णं’ इत्यादि, यस्य भगवतः श्रीमहावीरस्य खलु=निश्चयेन, हे देवानु-
प्रियाः ! ‘दंसणं’ दर्शनं सबहुमानं रूपावलोकनं भवन्तः ‘कंखंति’ काङ्क्षन्ति—

सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावित्ता एवं
वयासी) दोनों हाथ जोड़कर और अञ्जलिरूप में परिणत उन्हें मस्तक के
दाँयें—बाँये घुमाकर पश्चात् उन्हें मस्तक पर लगाकर अर्थात् नमस्कार कर “जय
हो महाराज की, विजय हो महाराज की”—इस प्रकार जय विजय शब्दों द्वारा
राजा को बधाया। बधाने के बाद फिर वह इस प्रकार बोला—॥सू० १७॥

‘जस्स णं देवाणुप्पिया’ इत्यादि—

(देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! (जस्स णं) जिनके सदा आप
(दंसणं कंखंति) दर्शनों की इच्छा किया करते हैं (जस्स णं देवाणुप्पिया

यं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ वद्धावित्ता एवं वयासी)
બને હાથ જોડીને અને તેમને મસ્તકની જમણી અને ડાબી બાજુએ
ફેરવીને અંજલિ રૂપમાં પરિણત કરી માથે લગાવીને અર્થાત્ નમસ્કાર કરીને
“જય હો મહારાજનો, વિજય હો મહારાજનો” એ પ્રકારે જય વિજય શબ્દો
દ્વારા રાજાને વધાવ્યા અને વધાવ્યા પછી તે નીચે પ્રમાણે બોલ્યો. (સૂ. ૧૭)

‘जस्स णं देवाणुप्पिया’ इत्यादि—

(देवाणुप्पिया !) हे देवानुप्रिय ! (जस्स णं) જેમનાં સદા આપ (દંસણં

णं देवाणुप्पिया दंसणं पीहंति, जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं पत्थंति, जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं अभिलसंति, जस्स णं देवाणु-

अप्राप्तं प्राप्तुमिच्छन्ति 'जस्स खलु देवाणुप्पिया दंसणं पीहंति' हे देवानुप्रियाः ! यस्य भगवतः श्रीमहावीरस्य खलु दर्शनाय भवन्तः स्पृहयन्ति=कदा मे भगवद्दर्शनं भविष्यतीत्युत्कण्ठां सततं धरन्ति, प्राप्तं सत् पुनस्तत्परित्यक्तुं नेच्छन्तीति भावः । हे देवानुप्रियाः ! यस्य भगवतः खलु 'दंसणं' दर्शनं 'पत्थंति' प्रार्थयन्ति-भवन्तो याचन्ते-हे भगवन् ! भवद्दर्शनादेव मम जन्मनः सफलता स्यादतो भवन्तश्चरणपङ्कजं दर्शयन्तु-इति रहसि पुनः पुनः प्रार्थनां कुर्वन्ति, यद्वा-अस्मत्सदृशेभ्यो जनेभ्यः सततं याचन्ते-भगवद्दर्शनं कारयतेति भावः । 'जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं अभिलसंति' यस्य खलु देवानुप्रिया दर्शनमभिलष्यन्ति=कदाऽहं भगवत्समीपमुपगत्य तत्पर्युपासनं करिष्यामीत्यभिलाषमन्तःकरणे कुर्वन्तो भवन्तः सन्ति । 'जस्स णं देवाणुप्पिया

दंसणं पीहंति) जिनके आप देवानुप्रिय दर्शन करने की सदा स्पृहा रखा करते हैं-कब मुझे भगवान् के दर्शन होंगे इस प्रकार की उत्कंठा निरन्तर किया करते हैं, (जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं पत्थंति) हे देवानुप्रिय ! जिनके दर्शनों की याचना किया करते हैं, अर्थात्-हे भगवन् ! आपके दर्शन से ही मेरा जन्म सफल होगा, इसलिये आप कृपा करके अपने चरणकमल का दर्शन दीजिये, इस प्रकार एकान्त में आप बार-बार प्रार्थना किया करते हैं, अथवा-हमारे जैसे लोगों से आप प्रार्थना करते हैं कि-मुझे भगवान का दर्शन कराओ । (जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं अभिलसंति) हे देवानुप्रिय ! आप जिनके दर्शनों की चित्तमें सदा अभिलाषा धारण किये रहते हैं कि कब मैं प्रभु के चरणोंमें उपस्थित होकर उनकी

कंखंति) दर्शननी छिन्हा कया करे। छे, (जस्स णं देवाणुप्पिया ! दंसणं पीहंति) जेभनां आप दर्शन करवानी सदा स्पृहा राखे। छे छे कयारे भने भगवाननां दर्शन थशे-अे प्रकारनी उत्कंठा निरन्तर कया करे। छे, (जस्स णं देवाणुप्पिया ! दंसणं पत्थंति) छे देवानुप्रिय ! जेभनां दर्शनोनी याचना कया करे। छे, अर्थात् छे भगवान् ! आपनां दर्शनथीज भारे जन्म सकल थशे;अे भाटे आप कृपा करीने आपनां चरण कमलनां दर्शन आपशे-अे प्रकारे अेकांतमां आप बारंवार प्रार्थना कया करे। छे, अथवा-अभारा जेवा दोडे पास आप प्रार्थना करे। छे छे भने भगवाननां दर्शन कराये। (जस्स णं देवाणुप्पिया ! दंसणं अभिलसंति) छे देवानुप्रिय ! आप जेनां दर्शनोनी मनमां सदा अभिलाषा धारण

પ્પિયા નામગોયસ્સવિ સવળયાણ હઠ્ઠ-તુઠ્ઠ-જાવ-હિયયા ભવંતિ,
 સે ણં સમણે ભગવં મહાવીરે પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણે ગામાણુગામં
 દૂઙ્ગમાણે ચંપાણ ણયરીણ ઉવળગરગ્ગામં ઉવાગણ ચંપં ણયરિં
 પુણ્ણભદ્દં ચેદ્ધયં સમોસરિઉકામે । તં એવં દેવાણુપ્પિયાણં પિયદ્ધયાણ
 પિયં ણિવેદેમિ, પિયં તે ભવત્ ॥ સૂ. ૧૮॥

નામગોયસ્સવિ સવળયાણ હઠ્ઠ-તુઠ્ઠ-જાવ-હિયયા ભવંતિ ' યસ્ય ભગવતઃ સ્વલુ હે
 દેવાનુપ્રિયાઃ ! નામગોત્રમ્યાપિ-નામ=' મહાવીર ' इति, ગોત્રં=વંશઃ-કાશ્યપં ગોત્રમ્ इति
 તયોરિત્યર્થઃ, શ્રવણતયા-શ્રવણેન इत्यર્થઃ, સ્વાર્થિકસ્તાપ્રત્યયઃ પ્રાકૃતશૈલીપ્રભવ इति,
 હઠ્ઠ-તુઠ્ઠ-યાવત્-હૃદયા ભવન્તિ, ' સે ણં સમણે ભગવં મહાવીરે ' સ સ્વલુ શ્રમગો
 ભગવાન્ મહાવીરઃ-અતિશયમહિમાન્વિતઃ શ્રમણઃ-સાધુઃ, ભગવાન્-પરમૈશ્વર્યસમ્પન્નઃ
 મહાવીર इति અન્વર્થનામા ' પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણે ગામાણુગામં દૂઙ્ગમાણે
 ચંપાણ ણયરીણ ઉવળગરગ્ગામં ઉવાગણ ' પૂર્વાનુપૂર્વ્યા ચરન્ ગ્રામાનુગ્રામં દ્રવન્-ચમ્પાયા
 નગર્યા ઉપનગરગ્રામં-નગરસમીપવર્તિનં ગ્રામમ્ ઉપાગતઃ-સમાગતઃ । કિમર્થમ્ ? અત્રાહ-
 ' ચંપં ણયરિં પુણ્ણભદ્દં ચેદ્ધયં સમોસરિઉકામે ' ચમ્પાં નગરીં પૂર્ણભદ્રનામકમ્
 ઉપાસના કરૂંગા, (જસ્સ ણં દેવાણુપ્પિયા નામગોયસ્સવિ સવળયાણ હઠ્ઠ-તુઠ્ઠ-
 જાવ-હિયયા ભવંતિ) હે દેવાનુપ્રિય ! જિનકા નામ તથા ગોત્ર-વંશ સુનકર મ્હો
 આપકા હૃદય હઠ્ઠ તુઠ્ઠ હુઆ કરતા હૈ, (સે ણં સમણે ભગવં મહાવીરે) વે શ્રમણ
 ભગવાન્=પરમૈશ્વર્યસમ્પન્ન, ગુણનિષ્પન્ન નામવાલે મહાવીર (પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણે
 ગામાણુગામં દૂઙ્ગમાણે ચંપાણ ણયરીણ ઉવળગરગ્ગામં ઉવાગણ) પૂર્વાનુપૂર્વીરૂપ સે
 વિહાર કરતે હુણ, એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં વિચરતે હુણ આજ ચંપા નગરી કે
 સમીપ ગ્રામ મેં પધાર હુણ હૈ, (ચંપં ણયરિં પુણ્ણભદ્દં ચેદ્ધયં સમોસરિઉકામે) ઓર
 કર્યા કરો છો કે કર્યારે હું પ્રભુનાં ચરણોમાં ઉપસ્થિત થઈને તેમની ઉપાસના
 કરું, (જસ્સ ણં દેવાણુપ્પિયા ! નામગોયસ્સવિ સવળયાણ હઠ્ઠ-તુઠ્ઠ-જાવ-હિયયા
 ભવંતિ) હે દેવાનુપ્રિય ! જેમનું નામ તથા ગોત્ર-વંશ સાંભળીને પણ આપનું
 હૃદય હઠ્ઠ-તુઠ્ઠ થઈ જાય છે, (સે ણં સમણે ભગવં મહાવીરે) તે શ્રમણ ભગવાન્-
 પરમૈશ્વર્યસંપન્ન, ગુણનિષ્પન્ન નામવાળા મહાવીર (પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણે
 ગામાણુગામં દૂઙ્ગમાણે ચંપાણ ણયરીણ ઉવળગરગ્ગામં ઉવાગણ) પૂર્વાનુપૂર્વી રૂપથી
 વિહાર કરતા કરતા એક ગામથી બીજે ગામ વિચરતા વિચરતા આજ
 ચંપાનગરીની સમીપના ગામમાં પધાર્યા છે. (ચંપં ણયરિં પુણ્ણભદ્દં ચેદ્ધયં

मूलम्—तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते तस्स पवित्तिवाउयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ-जाव

उद्यानं समवसर्तुकामः 'तं एवं देवाणुप्पियाणं पियट्ठयाए' तदेवं देवानुप्रियाणां प्रियार्थतया=उत्कण्ठाविषयत्वादनुकूलार्थतया, एवम्=अमुना प्रकारेण तद् वृत्तम् 'पियं णिवेदेमि' प्रियं=प्रीतिकारकं निवेदयामि=सविनयं कथयामीति भावः। 'पियं ते भवउ' प्रियं ते भवतु ॥सू० १८॥

टीका—'तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते' इत्यादि । ततः= तदनन्तरं खलु स कूणिको राजा भंभसारपुत्रः 'तस्स पवित्तिवाउयस्स अंतिए' तस्य प्रवृत्तिव्यापृतस्य भगवद्विहारनिवेदकस्य पुरुषस्य अन्तिके=समीपे-तन्मुखादिति भावः, 'एयमट्ठं' एतमर्थम्-भगवद्गमनरूपम्-'सोच्चा' श्रुत्वा-श्रवणविषयं कृत्वा, 'णिसम्म' निशम्य-हृदि धृत्वा 'हट्ठ-तुट्ठ-जाव-हियए' दृष्ट-तुष्ट-यावद्-हृदयः=हर्षाति-

चम्पानगरी के पूर्णभद्रचैत्य में पधारेंगे; (तं एवं देवाणुप्पियाणं पियट्ठयाए पियं णिवेदेमि पियं ते भवउ) इसलिये हे देवानुप्रिय ! मैं आपको यह प्रिय आत्म-हितकारी समाचार आपके हितके लिये सविनय निवेदन करता हूँ। आपका कल्याण हो ॥ सू० १८ ॥

'तए णं से कूणिए राया' इत्यादि—

(तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते) उसके बाद भंभसार का पुत्र वह कोणिक राजा (तस्स पवित्तिवाउयस्स अंतिए) उस संदेशवाहक के मुख से (एयमट्ठं सोच्चा) 'भगवान पधारें हैं' इस कर्णप्रिय समाचार को सुनकर (णिसम्म) और हृदय में अच्छी तरह धारण कर (हट्ठ-तुट्ठ-जाव-हियए)

समोसरिउकामे) અને અંપાનગરીના પૂર્ણભદ્ર ચૈત્યમાં પધારશે. (તં एवं देवा-णुप्पियाणं पियं णिवेदेमि पियं ते भवउ) आथी હે દેવાનુપ્રિય ! હું આપને આ પ્રિય આત્મહિતકારી સમાચાર આપનાં હિતને માટે સવિનય નિવેદન કરું છું. આપનું કલ્યાણ થાઓ. (સૂ. ૧૮.)

'તए णं से कूणिए राया' इत्यादि—

(तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते) त्यारपत्री ભંભસારના પુત્ર તે કોણિક રાજા (તસ્સ પવિત્તિવાઉયસ્સ અંતિએ) તે સંદેશવાહકના મુખથી (એયમટ્ઠં સોચ્ચા) 'ભગવાન પધાર્યા છે' એ કર્ણપ્રિય સમાચાર સાંભળીને (ણિસમ્મ) અને હૃદયમાં સારી રીતે ધારણ કરીને (હટ્ઠ-તુટ્ઠ-જાવ-હિયએ)

हियए धारा-हय-नीव-सुरहि-कुसुमंव चंचुमालइय-ऊसविय-रोमकूवे
वियसिय-वर-कमल-णयण-वयणे पयलिय-वर-कडग-तुडिय-केऊर-

शयेन प्रमुदितहृदयः, ' धारा-हय-नीव-सुरहि-कुसुमंव चंचुमालइय-ऊसविय-रोमकूवे ' धारा-हत-नीप-सुरभि-कुसुममिव रोमाञ्चितो-च्छ्रित-रोमकूपः, तत्र-धाराभिः-जलधरजलधाराभिः आहतं=संसिक्तं यत्-नीपस्य=कदम्बस्य सुरभि=परिमलयुक्तं कुसुमं=पुष्पम् तदिव ' चंचुमालइय ' इति देशीयः शब्दः, रोमाञ्चित इत्यर्थः, अतएव-उच्छ्रितः-उच्चतां गतो रोमकूपो-रोमस्थानं यस्य स उच्छ्रितरोमकूपः, ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः । ' वियसिय-वर-कमल-णयण-वयणे ' विकसित-वर-कमल-नयन-वदनः-विकसितवरकमलवन्नयनवदनं यस्य स तथा, ' पयलिय-वर-कडग-तुडिय-केऊर-मउड-कुंडल-हार-विरायंत-रइय-वच्छे ' प्रचलित-वर-कटक-त्रुटित-केयूर-मुकुट-कुण्डल-हार-विराजमान-रचित-वक्षस्कः-प्रचलितानि=प्रकम्पितानि वर-कटक-त्रुटित-केयूर-मुकुट-कुण्डलानि यस्य स तथा, तत्र-वरौ=श्रेष्ठौ, कटकौ=वल्यौ, त्रुटिते-बाहुरक्षकभूषणे, केयूरौ-बाहुभूषणे भुजबन्धविशेषौ, मुकुटं=शिरोभूषणम्, कुण्डले=कर्णभूषणे-इति, तथा हारः=अष्टादशसरिकादिकः, विराजमानः=शोभमानः, रचितः=विन्यस्तः-

बहुत ही दृष्ट तुष्ट एवं आनन्दित हुए, (धारा-हय-नीव-सुरहि-कुसुमंव चंचुमालइय-ऊसविय-रोमकूवे) जिस प्रकार बरसात की धारा से सींचे जाने पर कदम्ब के सुगन्धित फूल एकदम विकसित हो जाते हैं, उसी प्रकार भगवान् के पधारने का समाचार सुनकर राजा के रोम खड़े हो गये, (वियसिय-वर-कमल-णयण-वयणे) उनके नेत्र और मुख दोनों कमल के समान विकसित हो गये । (पयलिय-वर-कडग-तुडिय-केऊर-मउड-कुंडल-हार-विरायंत-रइय-वच्छे) अपार हर्ष के मारे कम्पित इनके शरीर पर धृत श्रेष्ठ दोनों वलय, दोनों त्रुटित-बाहुरक्षकभूषण,

धाराण्ण इष्ट तुष्ट तेभण्ण आनन्दित थया. [धारा-हय-नीव-सुरहि-कुसुमंव चंचु-मालइय-ऊसविय-रोमकूवे) ने प्रकारे वरसाहनी धाराथी सींचायेता कदम्बनां सुगन्धित फूल एकदम भीली नीकणे छे तेण प्रकारे लगवानना पधारवाना समाचार सांभलीने राजनां रोमे रोम आनन्दथी पुलकित थछ उलां थयां, (वियसिय-वर-कमल-णयण-वयणे) तेभनां नेत्र तथा भुज अन्ने कमलना नेम विकसी गयां. (पयलिय-वर-कडग-तुडिय-केऊर-मउड-कुंडल-हार-विरायंत-रइय-वच्छे) अपार दुर्षने लक्षणे कंपायमान थतां तेभनां शरीर पर धारण्ण करेलां श्रेष्ठ अन्ने वलय (कडां), अन्ने त्रुटित-बाहुरक्षक भूषण्ण, अन्ने केयूर

मउड-कुंडल-हार-विरायंत-रइय-वच्छे पालंबपलंबमाण-घोलंत-
भूषणधरे ससंभमं तुरियं चवलं नरिंदे सीहासणाओ अब्भुट्टेइ,
अब्भुट्टित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता वेरुलिय-वरिट्ट-रिट्ट-

परिवृतः वक्षसि=वक्षःस्थले यस्य स तथा, ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः ।

‘पालंब-पलंबमाण-घोलंत-भूषण-धरे’ प्रालम्ब-प्रलम्बमान-घूर्णमान-भूषण-
धरः-प्रालम्बः-कण्ठाभरणविशेषः, स एव प्रलम्बमानं=लम्बाकारं घूर्णमानं=दोलायमानं
भूषणं तस्य धरः-धारकः, एतादृशः ‘नरिंदे’ नरेन्द्रः कूणिकनृपः ‘ससंभमं’
ससम्भ्रमं-सादरं यथा स्यात्, ‘तुरियं’ त्वरितं-शीघ्रतया यथा स्यात्, ‘चवलं’
चपलं-चञ्चलतया यथा स्यात् तथा ‘सीहासणाओ अब्भुट्टेइ’ सिंहासानदभ्युत्तिष्ठति-
अवतरति, ‘अब्भुट्टित्ता’ अभ्युत्थाय-अवतीर्य ‘पायपीढाओ पच्चोरुहइ’ पादपीठात्प्र-
त्यवरोहति-अवतरति, प्रत्यवरुह्य-अवतीर्य पादपीठादधोऽवतीर्य ‘पाउआओ ओमुअइ’
पादुके अवमुञ्चति, कीदृशे पादुके ? इत्याह-‘वेरुलिय’ इत्यादि, ‘वेरुलिय-वरिट्ट-रिट्ट-

दोनों केयूर-बाजूबन्द, मुकुट, दोनों कुण्डल, एवं १८ लरका हार, जो वक्षस्थल में
धारण किया हुआ था और जिसकी शोभा से वक्षःस्थल सुशोभित हो रहा था;
ये सब के सब आभूषणादि कंपित हो उठे । (पलंब-पालंबमाण-घोलंत-भूषण-
धरे) हर्ष-जनित कम्प से चलायमान उनका प्रलम्बमान कण्ठाभरण उनकी शोभा
को बढ़ा रहा था । बाद में (ससंभमं तुरियं चवलं नरिंदे) राजा बड़े ही
संभ्रम से-आदरपूर्वक, अर्थात् एकदम जैसे बैठे थे वैसे ही; शीघ्र ही चंचल जैसा होकर
(सीहासणाओ अब्भुट्टेइ) अपने सिंहासन से उठे, और (अब्भुट्टित्ता पायपीढाओ
पच्चोरुहइ) उठ कर पादपीठ पर पैर रखकर नीचे उतरे, (पच्चोरुहित्ता वेरु-

(आब्भुअंध), मुकुट, अन्ने कुंडल तेमज १८ सरनेा डार जे वक्षःस्थल उपर
धारणु करवामां आब्भेा डतो, अने जेनी शोलाथी वक्षःस्थल सुशोभित थछ रह्युं
डतुं, ते तमाभे तमाभ आभूषणु आदि डली रद्यां डतां, (पालंब-पलंबमाण-
घोलंत-भूषण-धरे) डर्षथी उत्पन्न थतां डंपथी चलायमान थतां तेना गणामां
पछेरेला लांआ लटकता डार तेनी शोलाभां वधारो करी रद्या डता. पछी
(ससंभमं तुरियं चवलं नरिंदे) राजा धणु संभ्रमथी-आदरथी अर्थात् अेकदम जेवा
जेठेला डता तेवाज उतावणा चंयण जेवा थछने (सीहासणाओ अब्भुट्टेइ)
पोताना सिंहासन परथी डड्या, अने (अब्भुट्टित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ)
डडीने पादपीठ पर पग राभीने नीचे डतर्या, (पच्चोरुहित्ता-वेरुलिय-वरिट्ट-रिट्ट-

अंजण-निउणो-विय-मिसिमिसंत-मणि-रयण-मंडियाओ पाउ-
याओ ओमुयइ, ओमुइत्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं, तंजहा-खग्गं
१, छत्तं २, उप्फेसं ३, वाहणाओ ४, बालवीयणं ५ । एगसाडियं

रिट्ठ-अंजण-निउणो-विय-मिसिमिसंत-मणि-रयण-मंडियाओ ' वैडूर्य-वरिष्ठ-
रिष्टा-अन्न-निपुणाऽवरोपित-चिकिचिकायमान-मणि-रत्न-मण्डिते, तत्र-वरिष्ठानि=श्रेष्ठानि
वैडूर्याणि रिष्टानि अन्नानि-एतन्नामकानि रत्नानि ययोः पादुकयोस्ते वैडूर्य-वरिष्ठ-
रिष्टाअन्ने,—वैडूर्यादिभिश्चित्रिते इत्यर्थः; पुनः ' निपुणावरोपित-चिकिचिकायमान-
मणि-रत्न-मण्डिते '—निपुणेन=शिल्पकलाकुशलेन अवरोपितानि=परिकर्मितानि-
संस्कारितानि यथास्थानजटितानि यानि चिकिचिकायमानानि=चाकचिक्यमयानि मणि-
रत्नानि तैर्मण्डिते, ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः; अवमुच्य, ' अवहट्टु पंच रायककु-
हाइं ' अपहृत्य पञ्च राजककुदानि-अवतार्य पञ्चसंख्यकानि राजचिह्नानि, तान्येव
पृथक्२ परिसंख्याति-तद्यथा-तानि-इमानि १-‘ खग्गं ’ खड्गं त्यजति, २-‘ छत्तं ’
छत्रं-जहाति । ३-उप्फेसं-मुकुटम्-अवतारयति, ४ वाहणाओ-उपानहौ, पूर्व-
परित्यक्ते पादुके अत्र ' वाहणाओ ' इति पदेन गृह्येते; त्यजति । ५-‘ बालवीयणं ’

लिय-वरिट्ठ-रिट्ठ-अंजण-निउणो-विय-मिसिमिसंत-मणि-रयण-मंडियाओ पाउयाओ
ओमुयइ) नीचे उतर कर इन्होंने फिर दोनों पैरों से पादुकाएँ उतारीं, ये पादुकाएँ
श्रेष्ठ वैडूर्य, रिष्ट एवं अंजन नाम के रत्नों से खचित थीं, तथा शिल्पकलामें कुशल
ऐसे कारीगरों द्वारा यथास्थान निवेशित चमकते हुए अनेक रत्नों से मंडित थीं ।
(ओमुइत्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं) पादुकाएँ उतारने के बाद इन्होंने पांच राज-
चिह्नों का भी परित्याग कर दिया । वे पांच राजचिह्न ये हैं—(खग्गं छत्तं उप्फेसं
वाहणाओ बालवीयणं) खड्ग, छत्र, उप्फेस=मुकुट, दोनों पैरों के जूते-पादुकाएँ

अंजण-निउणो-विय-मिसिमिसंत-मणि-रयण-मंडियाओ पाउयाओ ओमुयइ) नीचे
उतरीने पछी तेमणे अन्ने पगमांथी पादुकाओ उतारी नाभी, ओ पादुकाओ
श्रेष्ठ वैडूर्य, रिष्ट तेमज्ज अंजन नामना रत्नोथी जडेली हुती तथा शिल्पकलाभां
कुशल ओवा कारीगरों द्वारा यथास्थान जेसाडेलां चमकार भारतां अनेक
रत्नोथी ते शोलित हुती. (ओमुइत्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं) पादुकाओ
उतार्या पछी तेमणे पांच राजचिह्नों पणु परित्याग कर्यो. ते पांच
राजचिह्न आ प्रमाणे, हुतां—(खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ बालवीयणं) खड्ग,
छत्र, उप्फेस=मुकुट, अन्ने पगना जेडा-पादुकाओ तेमज्ज आभर. पछी

उत्तरासंगं करेइ, करित्ता अंजलिमउलियहत्थे तित्थगराभिमुहे
सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ, अंचित्ता
दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्ठु तिकखुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि

बालव्यजनं—चामरयुगलं त्यजति । त्यक्त्वा ‘एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ’ एक-
शाटिकमुत्तरासङ्गं करोति, एकशाटिकम्—अस्फाटितमयोजितं स्थूतरहितम् उत्तरासङ्गम्—
=उत्तरीयवस्त्रं मुखोपरि यतनार्थं करोति—धरति ‘करित्ता’ कृत्वा ‘अंजलि-
मउलियहत्थे’ अञ्जलिमुकुलितहस्तः—अञ्जलिना—अञ्जलिबन्धनेन मुकुलितौ—कमलमुकुल-
तुल्यौ, हस्तौ यस्य स तथा—बद्धाञ्जलिपुट इत्यर्थः । ‘तित्थगराभिमुहे’ तीर्थङ्करा-
भिमुखः—यस्यां दिशि महावीरप्रभुर्वर्तते तस्यां दिशि कृतमुखः ‘सत्तट्ठपयाइं
अणुगच्छइ’ सप्त अष्ट पदानि अनुगच्छति—आनुकूल्येन व्रजति—सिंहासनात्प्रभु-
सम्मुखं सप्ताष्टपदानि गच्छति, ‘अणुगच्छित्ता’ अनुगम्य ‘वामं जाणुं अंचेइ’ वामं
जानु आकुञ्चयति—उर्ध्वं करोति, ‘अंचित्ता’ वामं जान्वाकुञ्चय—उर्ध्वीकृत्य, ‘दाहिणं
जाणुं धरणितलंसि साहट्ठु’ दक्षिणं जानु धरणितले संहृत्य—अधः संस्थाप्य,
‘तिकखुत्तो’ त्रिकृत्वः—त्रिरावृत्तं—त्रिवारमिति यावत्—‘मुद्धाणं धरणितलंसि

एवं दोनों चामर । फिर (एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ) पश्चात् अस्फाटित, अयो-
जित—विना सीये ऐसे उत्तरीयवस्त्र को मुख के ऊपर यतनानिमित्त धारण किया ।
(करित्ता) धारण कर (अंजलिमउलियहत्थे तित्थगराभिमुहे सत्तट्ठपयाइं अणु-
गच्छइ) बद्ध कमल के समान अञ्जलिपुट करके जिस दिशामें तीर्थंकर विराजमान
थे उस ओर सन्मुख होकर सात आठ पग आगे गये, (अणुगच्छित्ता वामं जाणुं
अंचेइ) जाकर वहां उन्होंने अपने बायें घुटने को ऊपर किया और (दाहिणं
जाणुं धरणितलंसि साहट्ठु) दाहिने घुटने को जमीन पर रखकर (तिकखुत्तो

(एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ) अस्फाटित, (इटाया वगरनुं) अथोजित-स्थूत-
रहित (सीव्या वगरनुं) अथा उत्तरीय वस्त्रने मुख उपर यतना निमित्त
धारण कथुं. (करित्ता) धारण करीने (अंजलिमउलियहत्थे तित्थगराभिमुहे
सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ) अध कमलनी पेठे अंजलिपुट करीने जे दिशाभां
तीर्थंकर विराजमान हुता ते तरङ्ग सन्मुख थधने सात आठ पगदां आगल
गया, (अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ) जधने त्यां तेमणु पोताने डाओ
ढींयणु उपर राख्ये अने (दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्ठु) जमणु ढींयणुने
जमीन उपर राखीने (तिकखुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवेसेइ) त्रणु वार

निवेसेइ, निवेसित्ता ईसिं पच्चुण्णमइ, पच्चुण्णमित्ता कडग-
तुडिय-थंभियाओ भुयाओ पडिसाहरइ, पडिसाहरित्ता करयल-
जाव-कट्टु एवं वयासी ॥ सू. १९ ॥

‘निवेसेइ’ मूढानिं धरणितले निवेशयति=निजमस्तकं भूमिसंलग्नं करोति । ‘निवे-
सित्ता’ निवेश्य, ‘ईसिं पच्चुण्णमइ’ ईषत् प्रत्युन्नमति—अल्पनम्रीभूतकायो भवति,
‘पच्चुण्णमित्ता’ प्रत्युन्नम्य—अल्पनम्रीभूतकायो भूत्वा ‘कडग—तुडिय—थंभियाओ भुयाओ
पडिसाहरइ’ कटकत्रुटितस्तम्भितौ भुजौ प्रतिसंहरति,—कटकत्रुटिताभ्यां-कङ्कण-भुजरक्षकाभ्यां-
स्तम्भितौ—स्तम्भरूपौ यौ भुजौ तौ प्रतिसंहरति-उर्ध्वं नयति-उत्थापयतीत्यर्थः, ‘पडिसाहरित्ता’
प्रतिसंहत्य—उत्थाप्य, ‘करयल जाव कट्टु’ करतल यावत् कृत्वा, अत्र-यावच्छब्देन-
परिगृहीतं—परस्परं संमिलितं शिरआवर्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वेति बोध्यते, ‘एवं वयासी’ एवं=
वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत् ॥ सू० १९ ॥

मुद्धानं धरणितलंसि निवेसेइ) तीनबार अपने मस्तक को जमीन पर झुकाया—
जमीन से माथे को लगाया । (निवेसित्ता ईसिं पच्चुण्णमइ) लगाने के बाद
फिर ये थोड़े से उठे, (पच्चुण्णमित्ता कडग-तुडिय-थंभियाओ भुयाओ पडिसाहरइ)
उसके पश्चात् इन्होंने अपने दोनों हाथों को कि जो कंकण एवं भुजरक्षक अलंकारों
से स्तम्भित थे, उँचा किया, (पडिसाहरित्ता करयल-जाव-कट्टु एवं वयासी)
ऊँचे करने के बाद फिर ये मस्तक पर अंजलिपुट रख कर इस प्रकार बोले—

भावार्थ—संदेशहर से प्रभु के आगमन की वार्ता सुनकर कोणिकराजा मारे
अतिशय आनन्द के कारण उल्लसित हो गये । इस समाचार को सुनते ही ये
रोमाञ्चित हो उठे । कमल के समान मुख आनन्दातिग्ग से खिल उठा । नयनों ने

पोताना मस्तकने जमीनपर नमाव्युं—जमीनने माथुं अडाव्युं (निवेसित्ता
ईसिं पच्चुण्णमइ) अडाउया पछी तेओ जरा उठ्या. (पच्चुण्णमित्ता कडग-
तुडिय-थंभियाओ भुयाओ पडिसाहरइ) त्यार पछी तेओओ पोताना जन्ने डाथ
डे जे कंकण तेमज कडां भुजरक्षक वगेरे अलंकारोथी स्तम्भित हुता ते
उँया कयां. (पडिसाहरित्ता करयल जाव कट्टु एवं वयासी) उँया करीने पछी
तेओओ मस्तक उपर अंजलिपुट राभीने आ प्रमाणे कह्युं:—

भावार्थ—संदेशवाहकद्वारा प्रभुना आगमनना समाचार सांभलीने
कोणिक राजा अतिशय आनंद थवाना कारणे उद्वेगसमां आवी गया. ओ
समाचार सांभलता ज तेओ रोमाञ्चित थय गया. कमलनी चेहे मुख आनंदना

मूलम्—नमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थ-

टीका—‘नमोत्थु णं’ इत्यादि—

‘नमोत्थु णं’ नमोऽस्तु खलु, ‘अरिहंताणं’ अरिहन्तृभ्यः—
अरीन्-रागदिरूपान्-शत्रून् घ्नन्ति-नाशयन्तीति व्युत्पत्त्याऽत्र सिद्धाऽर्हतोरुभयोररिहन्तृपदेन
ग्रहणं बोध्यम्, तेभ्यः, ‘भगवंताणं’ भगवद्भ्यः, भगः-१ ज्ञानं-सर्वार्थविषयकम्,

भी मुख का साथ दिया। हर्षातिरेक के कारण इनका सम्पूर्ण शरीर कम्पित होने लगा, इस हेतु धारण किये हुए आभूषणादिक भी चंचल हो उठे। ये एकदम सिंहासन से उठे, उठकर पादपीठपर पैर रखकर नीचे उतरे। मणि-वैडूर्य-खचित दोनों पादुकाएँ उतारीं। खर्ज आदि राजचिह्नों का परित्याग कर ये एकशाटिक उत्तरासंग कर जिस दिशा की तरफ वे महावीर प्रभु विराजमान थे उस दिशाकी ओर सात आठ पैर आगे जाकर नमस्कारविधि के अनुसार प्रभुकी परोक्ष वंदना करने लगे। उसमें यह पाठ बोले—॥ सू० १९ ॥

‘नमोत्थु णं’ इत्यादि—

(नमोत्थु णं अरिहंताणं) रागादिकरूप शत्रुओं पर विजय पानेवाले अरिहंतों को नमस्कार हो। (भगवंताणं) भगवान के लिये नमस्कार हो, भग जिनके हो वे भगवान हैं। भग शब्द के दस (१०) अर्थ हैं। वे इस प्रकार हैं—ज्ञान=

अतिरेकथी भिल्ली उठ्युं. नेत्रोअे पणु मुअने साथ आअ्यो. दुर्षातिरेक थवाना डारणे तेभनुं आअुं शरीर धुअवा लाअ्युं अने तेथी शरीर पर धारणु करेलां आभूषणुादिक पणु अंअल (अणायमान) थर्छ गयां. तेअो अेकदम आसन उपरथी उठ्या अने उठीने पादपीठ पर पग राभीने नीअे उतर्यां. मणिवैडूर्य जडेला अंने पादुकाअो उतारी. अउग आदि राजचिह्नोंे परित्याग करी तेअो अेकशाटिक उत्तरासंग धारणु करी जे दिशा तरअ ते महावीर प्रभु भिराजमान हुता ते दिशा तरअ सात आठ पगलां आगण जर्छ ने नमस्कार विधि अनुसार प्रभुनी परोक्ष वंदना करवा लाअ्या. तेमां आ पाठ ओल्या. (सू. १९)

‘नमोत्थुणं’ इत्यादि.

(नमोत्थु णं अरिहंताणं) रागादिकरूप शत्रुओं पर विजय भेजववा वाणा अरिहंतोंने नमस्कार डो. (भगवंताणं) भगवानने नमस्कार डो. जेने भग डोय ते भगवान छे. भग शब्दना १० अर्थ छे, ते आ प्रकारे छे.

१ ज्ञान-समस्त त्रलुकाणना पदार्थने युगपत् ज्ञानार डेवज्ज्ञान,

૨-માહાત્મ્યમ્—અનુપમ—મહનીય-મહિમ-સમ્પન્નત્વમ્, ૩-યશઃ-વિવિધાનુકૂલપ્રતિકૂલ-પરીષ-
હોપસર્ગસહન—સમુદ્ભૂતા કીર્તિઃ । યદ્વા-જગદ્રક્ષણપ્રજ્ઞાસમુત્થા કીર્તિઃ । ૪-વૈરાગ્યમ્—સર્વથા
કામભોગામિલાષરાહિત્યમ્, યદ્વા-ક્રોધાદિકષાયનિગ્રહલક્ષણમ્, ૫-મુક્તિઃ-સકલકર્મક્ષયલક્ષણો
મોક્ષઃ, ૬ રૂપમ્-સકલહૃદયહારિ સૌન્દર્યમ્, ૭-વીર્યમ્-અન્તરાયાન્તજન્યમનન્તસામર્થ્યમ્, ૮-
કર્મપલટવિઘટનજનિતજ્ઞાનદર્શનસુખવીર્યરૂપાઽનન્તચતુષ્ટયલક્ષ્મીઃ, ૯-ધર્મઃ—અપવર્ગદ્વાર-
કપાટોદ્ઘાટનસાધનં શ્રુતચારિત્ર—લક્ષણમ્ ; ૧૦-ऐश्वर्यं-લોકત્રયાધિપત્યમ્, ચાસ્યાસ્તીતિ ભગ-
વાન્, તદ્બ્રહ્મત્વે ભગવન્તઃ, તેમ્યઃ । ‘આઙ્ગરાણં’આદિકરેમ્યઃ-આદૌ પ્રથમતઃ સ્વસ્વશાસનાપેક્ષયા
શ્રુત-ચારિત્રધર્મ-લક્ષણં કાર્યં કુર્વન્તિ તચ્છીલા આદિકરાસ્તેમ્યઃ । ‘તિત્થયરાણં’ તીર્થ-

સમસ્ત ત્રૈકાલિક પદાર્થોં કો યુગપત્ જાનનેવાલા કેવલજ્ઞાન, ૨ માહાત્મ્ય—અનુપમ
એવં મહનીય મહિમા (૩) યશ—વિવિધ અનુકૂલ એવં પ્રતિકૂલ પરીષહોં કે જીતને સે
ઉદ્ભૂત અસાધારણ કીર્તિ અથવા જગત્ કો સંરક્ષણ કરને કે બુદ્ધિચાતુર્ય સે પ્રાપ્ત યશ, (૪)
વૈરાગ્ય—કામભોગોં કી અમિલાષાકા સર્વથા અભાવ અથવા ક્રોધાદિક કષાયોં કા
બિલકુલ વિનાશ, (૫) મુક્તિ—સમસ્ત કર્મોંકા અત્યંત ક્ષયરૂપ મોક્ષ, (૬) રૂપ—
સમસ્ત જનતા કે હૃદય કો હરણ કરનેવાલા સૌન્દર્ય, (૭) વીર્ય—અન્તરાય કર્મ કે
સર્વથા વિલયસે પ્રાપ્ત અનન્તસામર્થ્ય, (૮) લક્ષ્મી—સમસ્ત કર્મોંકે સર્વથા પ્રક્ષીણ
હોને સે લબ્ધ અનન્તચતુષ્ટય, (૯) ધર્મ—મોક્ષ કે દ્વાર કો खोलने મેં સાધકતમ
શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ, એવં (૧૦) ऐश्वर्य—લોકત્રયકા આધિપત્ય; યે દશોં પ્રકાર જિનમેં
હોં વે ભગવાન્ હૈં । (આઙ્ગરાણં) અપને ૨ શાસન કી અપેક્ષા જો સર્વપ્રથમ ઇસ

(૨) મહાત્મ્ય—અનુપમ તેમજ મહનીય મહિમા, (૩) યશ—વિવિધ અનુકૂળ તેમજ
પ્રતિકૂળ પરીષહોંને જીતવાથી ઉદભવ પામેલી અસાધારણ કીર્તિ,
અથવા જગતનાં સંરક્ષણ કરવાના બુદ્ધિચાતુર્યથી પ્રાપ્ત યશ, (૪) વૈરાગ્ય—
કામભોગોની અમિલાષાનો સર્વથા અભાવ અથવા ક્રોધાદિક કષાયોનો
બિલકુલ વિનાશ, (૫) મુક્તિ—સમસ્ત કર્મોનો અત્યંત ક્ષયરૂપ મોક્ષ, (૬)
રૂપ—સમસ્ત પ્રાણિનાં હૃદયનું હરણ કરે તેવું સૌન્દર્ય, (૭) વીર્ય—અન્તરાય
કર્મનો સર્વથા નાશ કરીને પ્રાપ્ત થયેલું અનન્ત સામર્થ્ય, (૮) લક્ષ્મી—સમસ્ત
કર્મો એકદમ ક્ષીણ થવાથી પ્રાપ્ત થયેલ અનન્તચતુષ્ટય (૯) ધર્મ—મોક્ષનાં
દ્વારને ખોલવામાં મુખ્ય સાધન શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ, તેમજ (૧૦) ऐश्वर्य—ત્રણે
લોકનું આધિપત્ય. આ દશેય પ્રકાર જેનામાં હોય તે ભગવાન છે. (આઙ્ગરાણં)
પોતપોતાના શાસનની અપેક્ષાએ જે સર્વથી પહેલાં આ કર્મભૂમિમાં શ્રુત-

યરાણં સયંસંબુદ્ધાણં પુરિસુત્તમાણં પુરિસસીહાણં પુરિસવરપુંડરીયાણં

કોરેમ્યઃ-નીર્યતે=પાર્યતે સંસારમોહમહોદધિર્યસ્માદ્ इति તીર્થમ્-ચતુર્વિધઃ સદ્વસ્તત્કરણ-
શીલ્ત્વાત્ તીર્થકરાસ્તેમ્યઃ । ‘સયંસંબુદ્ધાણં’ સ્વયંસંબુદ્ધેમ્યઃ-સ્વયં=પરોપદેશમન્તરેણ
સંબુદ્ધાઃ સમ્યક્તયા બોધં પ્રાપ્તાઃ સ્વયંસંબુદ્ધાસ્તેમ્યઃ । ‘પુરિસુત્તમાણં’ પુરુષોત્તમેમ્યઃ-પુરુષેષુ
ઉત્તમાઃ=શ્રેષ્ઠાઃ જ્ઞાનાદ્યનન્તગુણવત્ત્વાત્-इति પુરુષોત્તમાસ્તેમ્યઃ । ‘પુરિસસીહાણં’ પુરુષસિંહેમ્યઃ-
પુરુષેષુ સિંહા રાગદ્વેષાદિશત્રુપરાજયે દૃષ્ટાદ્ભુત-પરાક્રમત્વાદિતિ, યદ્વા પુરુષાઃ સિંહા ઇવેતિ
પુરુષસિંહાસ્તેમ્યઃ ‘પુરિસવરપુંડરીયાણં’ પુરુષવરપુન્ડરીકેમ્યઃ-પુન્ડરીકં-ધવલકમલં
વરંચ તત્પુન્ડરીકં-ધવલકમલપ્રધાનં, પુરુષો વરપુન્ડરીકમિવેત્યુપમિતસમાસે પુરુષવરપુન્ડરીકં,

કર્મભૂમિ મેં શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં વે આદિકર હૈં, એસે આદિકરોં
કે લિયે નમસ્કાર હો । (તિથ્યગરાણં) તીર્થકરોં કે લિયે નમસ્કાર હો ।
જિસકે સહારે સંસારી જીવ ઇસ સંસારરૂપ સમુદ્ર કા પાર પા જાતે હૈં ઉસ
ચતુર્વિધ સંધકા નામ તીર્થ હૈ, ઇસ તીર્થકી સ્થાપના તીર્થકર કરતે હૈં । (સયં-
સંબુદ્ધાણં) સ્વયં-સંબુદ્ધોં કે લિયે નમસ્કાર હો । જો કિસી કે ઉપદેશ વિના પ્રબુદ્ધ
હોતે હૈં વે સ્વયંસંબુદ્ધ હૈં । (પુરિસુત્તમાણં) જ્ઞાનાદિક અનંત ગુણોં કે ધની હોને
સે પુરુષોં મેં જો ઉત્તમ હૈં ઉન્કે લિયે નમસ્કાર હો । (પુરિસસીહાણં) રાગદ્વેષ
આદિ શત્રુઓં કે પરાજય કરને મેં જિનકી અદ્ભુત શક્તિ હૈ વે પુરુષસિંહ હૈં,
ઉન્કો નમસ્કાર હો (પુરિસવરપુંડરીયાણં) પુરુષોં મેં વરપુન્ડરીક કે તુલ્ય જો
હૈં વે પુરુષવરપુંડરીક હૈં, ઉન્કે લિયે નમસ્કાર હો । પ્રભુ કો જો વરપુંડરીક કી

ચારિત્રરૂપ ધર્મની પ્રરૂપણા કરે છે તે આદિકર છે, તેવા આદિકરોને નમસ્કાર
હો. (તિથ્યગરાણં) તીર્થકરોને નમસ્કાર હો. જેના આશ્રયથી સંસારી જીવ
આ સંસારરૂપ સમુદ્રને પાર કરી જાય છે તે ચતુર્વિધ સંધનું
નામ તીર્થ છે. એ તીર્થની સ્થાપના તીર્થકર કરે છે. (સયંસંબુદ્ધાણં)
સ્વયંસંબુદ્ધોને નમસ્કાર હો. જે બીજા કોઈએ આપેલા ઉપદેશ વિનાજ
પ્રબુદ્ધ હોય છે તે સ્વયંસંબુદ્ધ છે. (પુરિસુત્તમાણં) જ્ઞાનાદિક અનંત ગુણોના
સ્વામી હોવાથી પુરુષોમાં જે ઉત્તમ છે તેમને નમસ્કાર હો. (પુરિસસીહાણં)
રાગદ્વેષ આદિ શત્રુઓનો પરાજય કરવામાં જેની અદ્ભુત શક્તિ છે તે
પુરુષસિંહ છે, તેમને નમસ્કાર હો. (પુરિસવરપુંડરીયાણં) પુરુષોમાં વરપુંડરીક=
શ્રેષ્ઠ કમળના તુલ્ય જે છે તે પુરુષવરપુંડરીક છે, તેમને નમસ્કાર હો. પ્રભુને

પુરુષવરપુણ્ડરીકઞ્ચ પુરુષવરપુણ્ડરીકઞ્ચેત્યાદિરીત્યૈકશેષે પુરુષવરપુણ્ડરીકાગિ તેમ્યઃ । ભગવતો વરપુણ્ડરીકોપમા ચ વિનિર્ગતાઽસ્થિલાઽશુભમલીમસત્વાત્સર્વૈઃ શુભાનુભાવૈઃ ઋશિશુદ્ધત્વાચ્ચ, યદ્વા યથા પુણ્ડરીકાગિ પદ્માજ્ઞાતાન્યપિ સલિલે વર્ધિતાન્યપિ ચોભયસમ્બન્ધમપહાય નિર્લેપાનીવ જલોપરિ રમણીયાનિ સન્દૃશ્યન્તે નિજાનુપમગુણગગબલેન સુરાસુરનરનિકરશિરોધારણીયતયાઽતિમહનીયાનિ પરમમુખાઽઽસ્પદાનિ ચ ભવન્તિ, તથેમે ભગવન્તઃ કર્મપદ્માજ્ઞાતા ભોગાઽમ્ભોવર્દિતાઃ સન્તોઽપિ નિર્લેપાસ્તદુભયમતિવર્તન્તે, ગુણસમ્પદાસ્પદતયા ચ કેવલાદિગુણભાવાદસ્થિલભવ્યજનશિરોધારણીયા ભવન્તીતિ, વિસ્તરસ્તુ શાસ્ત્રાન્તેરઽવલોકનીયઃ । ‘પુરિસવરગંધહત્યીગં’ પુરુષવરગન્ધહસ્તિમ્યઃ-

ઉપમા સે યુક્ત ક્રિયા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ પ્રભુ કી આત્મા સે સમસ્ત અશુભ મલિન કર્મ નષ્ટ હો ગયે હૈં એવં શુભ અનુભાવોં સે પ્રભુ સમી પ્રકાર સે શુદ્ધ હૈં । ધવલ કમલ જિસ પ્રકાર કીચડ સે ઉદ્ભૂત હોને પર ઓર જલ મેં વર્દિત હોને પર મી ઉન દોનોં સે અલિપ્ત રહતા હૈ, જલકે ડુપર બહુત હી રમણીય પ્રતિભાસિત હોતા હૈ, તથા સુર અસુરાદિકોં દ્વારા શિરોધાર્ય હોને સે વહ અતિમહનીય એવં પરમ સુખ કા આસ્પદ હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રભુ મી નામકર્મ કે ઉદય સે, કર્મરૂપ પંક સે પૈદા હોને પર એવં ભોગરૂપ જલ સે સંવર્દિત હોને પર મી ઇન દોનોં કે સંબંધ સે સર્વથા નિર્લેપ રહા કરતે હૈં, એવં ગુણરૂપસંપત્તિ કે આસ્પદ હોને સે તથા કેવલજ્ઞાન કી જાગૃતિ હોને સે વે અસ્થિલ ભવ્યજનોં દ્વારા શિરોધાર્ય મી હોતે હૈં । (પુરિસવરગંધહત્યીગં) પુરુષોં મેં ઉત્તમ ગંધહસ્તી કે સમાન જો હોતે હૈં વે પુરુષવરગંધહસ્તી કહે જાતે હૈં,

જે વરપુંડરીકની ઉપમા આપી છે તેનું કારણ એ છે કે પ્રભુના આત્મામાંથી સમસ્ત અશુભ કાલિમા નષ્ટ થઈ ગયી છે તેમજ શુભ અનુભાવોથી પ્રભુ સારી રીતે શુદ્ધ છે, શ્વેત કમલ જે પ્રકારે કીચડથી ઉત્પન્ન થાય છે અને જલમાં વધે છે છતાં પણ તે બન્નેથી અલિપ્ત રહે છે, જલની ઉપર બહુજ રમણીય પ્રતિભાસિત થાય છે, તથા સુર અસુર આદિકોથી શિરપર ધારિત હોવાથી તે અતિમહનીય તેમજ પરમ સુખને આપનાર બને છે, તેવીજ રીતે પ્રભુ પણ નામ કર્મના ઉદયથી, કર્મરૂપ પંકથી પૈદા થવા છતાં તેમજ ભોગરૂપ જલથી સંવર્ધન પામવા છતાં પણ એ બન્નેના સંબંધથી સર્વથા નિર્લેપ રહ્યા કરે છે તેમજ ગુણરૂપ સંપત્તિના આપનાર હોવાથી તથા કેવલ જ્ઞાનની જાગૃતિ થવાથી તેઓ તમામ ભવ્યજનો દ્વારા શિરોધાર્ય પણ થઈ બાધ છે. (પુરિસ-વર-ગંધ-હત્યીગં) પુરુષોમાં ઉત્તમ ગંધહસ્તીના જેવા જે હોય

પુરિસવરગંધહસ્તીણં લોગુત્તમાણં લોગનાહાણં લોગહિયાણં લોગ-

ગન્ધયુક્તા હસ્તિનો ગન્ધહસ્તિનઃ, વરાશ્ચ તે ગન્ધહસ્તિનો વરગન્ધહસ્તિનઃ, પુરુષા વરગન્ધ-
હસ્તિન ઇવ પુરુષવરગન્ધહસ્તિનસ્તેભ્યઃ, ગન્ધહસ્તિલક્ષણં યથા—

યસ્ય ગન્ધં સમાગ્રાય, પલાયન્તે પેરે ગજાઃ ।

તં ગન્ધહસ્તિનં વિદ્યાન્નૃપતેર્વિજયાવહમ્ ॥ ઇતિ ।

અતઃપ્રથમ યથા ગન્ધહસ્તિગન્ધમાગ્રાય ગજાન્તરાણીતસ્તતો દ્રુતં પલાય્ય
પ્રચ્છન્નસ્થાનં પ્રાપ્નુવન્તિ, તદ્વદચિન્ત્યાતિશયપ્રભાવવશાદ્ ભગવદ્વિહરણસમીરણગન્ધ-
સમ્બદ્ધગન્ધતોઽપિ—ઈતિ—ડમર—મરકાદય ઉપદ્રવા દ્રાગ્ દિક્ષુ પ્રદ્રવન્તીતિ, ગન્ધગ-
જાઽઽશ્રિતરાજવદ્ ભગવદાશ્રિતો મન્યગણઃ સર્વદા વિજયવાન્ ભવતીતિ મવત્યુભયોઃ
સાદૃશ્યમ્ । ‘લોગુત્તમાણં’ લોકોત્તમેભ્યઃ, લોકેષુ—મન્યસમાજેષુ ઉત્તમાશ્ચતુર્લિંગશદતિ-

उनके लिये नमस्कार हो, गंधहस्तीका लक्षण इस प्रकार है—

“ यस्य गन्धं समाग्राय पलायन्ते परे गजाः ।

तं गंधहस्तिनं विद्यान्नृपतेर्विजयावहम् ” ॥

જિસકી ગંધ કો સૂંઘકર મી અન્ય હાથી ભાગ જાતે હૈં વહ ગંધહસ્તી કહલાતા
હૈ । યહ જિસ રાજા કે પાસ હોતા હૈ વહ અવશ્ય હી યુદ્ધ મેં વિજય પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—જિસ પ્રકાર ગંધહસ્તી કી ગંધ કો સૂંઘકર અન્યગજ ભાગ જાતે હૈં
ઉસી પ્રકાર પ્રભુ કે વિહાર કી ગંધ સૂંઘ કર, અર્થાત્—પ્રભુકે વિહાર કી વાયુ કે સંબંધ
સે ઈતિ, ડમર ઓર મરકી આદિ ઉપદ્રવ બિલકુલ શાંત હો જાતે હૈં । (લોગુત્તમાણં)

છે તે પુરુષવરગંધહસ્તી કહેવાય છે. તેમને નમસ્કાર હો. ગંધહસ્તીનું લક્ષણ
આ પ્રકારે છે—

“ यस्य गन्धं समाग्राय पलायन्ते परे गजाः ।

तं गन्धहस्तिनं विद्यान्नृपतेर्विजयावहम् ”

જેની ગંધ સૂંઘવામાત્રથી બીજા હાથી ભાગી જાય તે ગંધહસ્તી
કહેવાય છે. તે જે રાજાની પાસે હોય છે તે અવશ્યમેવ યુદ્ધમાં વિજય
પ્રાપ્ત કરે છે. તાત્પર્ય એ છે કે—જે પ્રકારે ગંધહસ્તીની ગંધને સુંઘીને
બીજા હાથી ભાગી જાય છે તેવી જ રીતે પ્રભુના વિહારની ગંધને સુંઘીને
અર્થાત્ પ્રભુના વિહારના વાયુના સંબંધથી ઇતિ ડમર અને મરકી આદિ
ઉપદ્રવ બિલકુલ શાંત થઈ જાય છે. (લોગુત્તમાણં) ચોત્રીશ અતિશયો તેમજ

શયપચ્ચત્રિશદ્વાળીગુણોપેતત્વાત્, તેમ્ય: 'લોગનાહાણં' લોકનાથેમ્ય:, લોકાનાં=ભવ્યાનાં નાથા=નેતારો યોગક્ષેમકારિત્વાદિતિ લોકનાથાસ્તેમ્ય: । 'લોગહિયાણં' લોકહિતેમ્ય:-લોક:-એકેન્દ્રિયાદિ: સર્વપ્રાણિગણસ્તસ્મૈ હિતા રક્ષોપાયપથપ્રદર્શકત્વા-લોકહિતાસ્તેમ્ય: । 'લોગપર્વવાણં' લોકપ્રદીપેમ્ય:, લોકસ્ય=ભવ્યજનસમુદાયસ્ય પ્રદીપાસ્તન્મનોઽભિનિવિષ્ટાઽનાદિમિથ્યાત્વતમ:પટલભ્યપગમેન વિશિષ્ટાત્મતત્ત્વપ્રકાશક-ત્વાત્પ્રદીપતુલ્યાસ્તેમ્ય: । યથા પ્રદીપસ્ય સકલજીવાર્થં તુલ્યપ્રકાશકત્વેપિ ચક્ષુષ્મન્ત એવ તત્પ્રકાશસુખભાજો ભવન્તિ નત્વન્ધાસ્તથા ભવ્યા એવ ભગવદનુભાવસમુદ્ભૂત-પરમાનન્દસન્દોહભાજો ભવન્તિ નાઽભવ્યા ઇતિ પ્રતિબોધયિતું પ્રદીપદૃષ્ટાન્ત:, અત એવ ચ લોકપદેન ભવ્યાનામેવ ગ્રહણમ્ । 'લોગપજ્જોયગરાણં' લોકપ્રવોતકરેમ્ય:-

ચૌતીસ અતિશયોં એવં પૈતીસ વાળી કે ગુણોં સે યુક્ત હોને સે પ્રભુ લોકોત્તમ કહલાતે હૈં; એસેાં ઉનકે લિયે નમસ્કાર હો । (લોગનાહાણં) ભવ્યજીવોં કે યોગ-ક્ષેમ-કારી હોને સે લોકનાથ પ્રભુ કો નમસ્કાર હો । (લોગહિયાણં) એકેન્દ્રિય પ્રાણિયોં સે લેકર પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવોં સે વ્યાપ્ત ઇસ લોક કે લિયે રક્ષાકે ઉપાયમૂત માર્ગ કે પ્રદર્શક હોને સે લોકહિતસ્વરૂપ પ્રભુકે લિયે નમસ્કાર હો । (લોગપર્વવાણં) ભવ્યજનોં કે મન મેં અનાદિકાલ સે ઠસાઠસ ભરે હુએ મિથ્યાત્વરૂપી અન્ધકાર કે પટલ કે વિનાશ સે વિશિષ્ટ આત્મતત્ત્વ કે પ્રકાશક હોને સે ભગવાન્ પ્રદીપતુલ્ય હૈ, જિસ પ્રકાર દીપક સકલ જીવોં કે લિયે સમાન પ્રકાશક હોતા હુઆ મી ચક્ષુષ્માન જીવોં કે લિયે વિશેષ આનંદપ્રદ હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર પ્રભુ કો લખકર ભવ્ય જીવ હી અમન્દ આનંદ કે સંદોહ સે સુખી હુઆ કરતે હૈં; એસેાં લોકકે પ્રદીપસ્વરૂપ કો નમસ્કાર

પાંત્રીશ વાણીના ગુણોથી યુક્ત હોવાથી પ્રભુ લોકોત્તમ કહેવાય છે, તેમને નમસ્કાર હો. (લોગનાહાણં) ભવ્ય જીવોના યોગક્ષેમ કરનાર હોવાથી લોકનાથ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (લોગહિયાણં) એકેન્દ્રિય પ્રાણિઓથી માંડીને પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવોથી વ્યાપ્ત આ લોકના માટે રક્ષાના ઉપાયમૂત માર્ગના પ્રદર્શક હોવાથી લોકહિતસ્વરૂપ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (લોગપર્વવાણં) ભવ્ય જનોના મનમાં અનાદિકાલથી ઠસાઠસ ભરેલા મિથ્યાત્વરૂપી અન્ધકારના સમૂહના વિનાશથી વિશિષ્ટ આત્મતત્ત્વના પ્રકાશક હોવાથી ભગવાન પ્રદીપ સમાન છે, જેમ દીવો બધા જીવોને સમાન પ્રકાશક હોય છે છતાં ચક્ષુવાળા જીવોને વિશેષ આનંદપ્રદ થાય છે તેવી રીતે પ્રભુને જેઠ ભવ્ય જીવો જ ઘણો આનંદ મેળવીને સુખ પ્રાપ્ત કરે છે; એવા લોકના પ્રદીપસ્વરૂપને નમસ્કાર હો. [લોગપજ્જોયગરાણં]

પર્વવાણં લોગપજોયગરાણં અભયદયાણં ચક્ષુદયાણં મગ્ગદયાણં

લોકશબ્દેનાઽત્ર લોક્યતે—દૃશ્યતે કેવલાઽલોકેન યથાવસ્થિતતયેતિ વ્યુત્પત્ત્યા લોકા-
લોકયોરુભયોર્ગ્રહણમ્ , તેન લોકસ્ય—લોકાલોકલક્ષણસ્ય સકલપદાર્થસ્ય પ્રદ્યોતઃ—લોકા-
લોકપ્રદ્યોતસ્તં કર્તુ શીલં યેષાં તે લોકાલોકપ્રદ્યોતકરાઃ લોકાલોકસકલપદાર્થ-
પ્રકાશકરણશીલાસ્તેભ્યઃ । ‘અભયદયાણં’ અભયદયેભ્યઃ—ન ભયમ્ અભયમ્, ભયા-
નામભાવો વા અભયમ્, અક્ષોભલક્ષણ આત્મનોઽવસ્થાવિશેષો મોક્ષસાધનભૂતમુત્કૃષ્ટધૈર્યમિતિ
યાવત્, દયન્તે=દદતીતિ દયાઃ, દયધાતોઃકર્તરિ પચાદિત્વાદચ્; અભયસ્ય દયા અભયદયાઃ,
યદ્વા અભયા=ભયવિરહિતા દયા=સર્વજીવસંકટપ્રતિમોચનસ્વરૂપા અનુકમ્પા યેષાં તેઽભયદયા-
સ્તેભ્યઃ । ‘ચક્ષુદયાણં’ ચક્ષુર્દયેભ્ય ચક્ષુઃ—જ્ઞાનં—નિશ્ચિલવસ્તુતત્વાઽવભાસકતયા ચક્ષુઃ—
સાદૃશ્યાત્, તસ્ય દયાઃ—દાયકાશ્ચક્ષુર્દયાસ્તેભ્યઃ, યથા હરિણાદિશરણ્યેઽરણ્યે લુપ્તાક-

હો । (લોગપજોયગરાણં) લોકાલોકસ્વરૂપ સકલપદાર્થોં કો પ્રકાશ કરનેકે સ્વભાવવાલે લોક-
પ્રદ્યોતકરોં કે લિયે નમસ્કારહો । (અભયદયાણં) અભયદયોં કે લિયે નમસ્કાર હો । આત્મા
કો અક્ષોભલક્ષણ અવસ્થાવિશેષ કા નામ અભય હૈ, હસે મોક્ષસાધનરૂપ ઉત્કૃષ્ટ ધૈર્ય-
સ્વરૂપ જાનના ચાહિયે । હસે પ્રદાન કરનેવાલે હોને સે પ્રભુ અભયદય કહે ગયે હૈં ।
અથવા—જિનકી દયા ભયરહિત હૈ અર્થાત્ ભગવાન્ દ્વારા પ્રતિપાદિત દયા સમસ્ત
જીવોં કે સંકટોંકો દૂર કરનેવાલી હૈ, ભગવાને હસ પ્રકાર કી દયાકા સ્વરૂપ
પ્રકટ કિયા હૈ કિ જિસસે જીવોં કે ઉપર કોઈ મી સંકટ નહીં આ સકતા હૈ ।
(ચક્ષુદયાણં) જ્ઞાનરૂપચક્ષુ કે દાતાર કો નમસ્કાર હો । પ્રભુ ચક્ષુર્દય હસલિયે
કહે ગયે હૈં કિ જિસપ્રકાર હરિણાદિ જન્તુઓં સે વ્યાપ્ત જંગલ મેં છુટેરોં સે છૂટે ગયે

લોકાલોક સ્વરૂપ સકલ પદાર્થોંનો પ્રકાશ આપવાના સ્વભાવવાળા લોકપ્રદ્યો-
તકરોંને નમસ્કાર હો । [અભયદયાણં] અભયદયોંને નમસ્કાર હો । આત્માના અક્ષોભ-
લક્ષણ અવસ્થાવિશેષનું નામ અભય છે, એને મોક્ષ સાધનરૂપ ઉત્કૃષ્ટ ધૈર્ય-
સ્વરૂપ બાણુવા બેઠ્યો. એનું પ્રદાન કરવાવાળા હોવાથી પ્રભુ અભયદય કહેવાય
છે. અથવા—એમની દયા ભયરહિત છે અર્થાત્ ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત
દયા સમસ્ત જીવોનાં સંકટને દૂર કરવાવાળી છે. ભગવાને એ પ્રકારે દયાનું
સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું છે કે જેથી જીવો ઉપર કોઈ પણ સંકટ ન આવી શકે.
(ચક્ષુદયાણં) જ્ઞાનરૂપ ચક્ષુના દાતારને નમસ્કાર હો. પ્રભુ ચક્ષુર્દય એટલા
માટે કહેવાય છે કે જે પ્રકારે હરિણ આદિ જનવરોથી વ્યાપ્ત જંગલમાં
લુટારાથી લૂટાયેલા પછી આંખો પર પાટા બાંધીને ખાડા આદિમાં ધક્કા

લુપ્તિતેભ્યઃ પટ્ટિકાદિદાનેન ચક્ષુર્ધિ પિધાય હસ્તપાદાદિ બદ્ધ્વા તૈર્ગતે પાતિતેભ્યઃ કશ્ચિ-
ત્પટ્ટિકાદ્યપનોદનેન ચક્ષુર્દત્વા માર્ગ પ્રદર્શયતિ તથા ભગવન્તોઽપિ ભવાઽરણ્યે રાગદ્વેષ-
લુપ્તાકલુપ્તિતાઽઽત્મગુણધનેભ્યો દુરાગ્રહપટ્ટિકાચ્છાદિતજ્ઞાનચક્ષુર્મ્યો મિથ્યાત્વોન્માર્ગે
પાતિતેભ્યસ્તદપનયનપૂર્વકં જ્ઞાનચક્ષુર્દત્વા મોક્ષમાર્ગ પ્રદર્શયન્તિ । એતદેવ મહ્યન્તરેણાઽઽહ
'મગ્ગદયાણં' માર્ગદયેભ્યઃ—માર્ગઃ=સમ્યગ્સ્ત્રયલક્ષણઃ શિવપુરપથઃ, યદ્વા—વિશિષ્ટ—

પશ્ચાત્ આંખોં પર પટ્ટી વાંધકર ગર્ત આદિ મેં ધક્કા દેકર પટકે ગયે માનવોં કે
લિયે કોઈ દયાલુ માનવેં उनकी આંખોંકી પટ્ટી ગ્વોલકર ચક્ષુર્દાતા બનેં ઉન્હેં માર્ગકા
પ્રદર્શન કરાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર પ્રભુ મીં હસ અશરણ ભવરૂપ અરણ્ય મેં રાગદ્વેષ
આદિ લુટેરોં દ્વારા આત્મગુણરૂપ ધનોં કે અપહરણ હોને સે દીનહીન બને હુએ સમસ્ત
સંસારી જીવોંકો કિ જિનકી જ્ઞાનરૂપ આંખોં પર દુરાગ્રહરૂપી પટ્ટી કર્મોને બાંધ રહી હૈ
ઔર હસીસે જિનકા જ્ઞાનરૂપ નેત્ર આચ્છાદિત હો રહા હૈ ઔર હસીકે વજહ સે જો
ઉન્માર્ગરૂપી ગર્ત મેં ધકેલ દિયે ગયે હૈં, પ્રભુને અપને દિવ્ય ઉપદેશ દ્વારા ઉન્હેં
સત્ જ્ઞાન દિયા, હસસે ઉનકા દુરાગ્રહ નષ્ટ હો ગયા, ઔર જ્ઞાનરૂપ અંતરંગ નેત્ર
નિર્મલ હો જાને સે પ્રભુને ઉન્હેં મોક્ષમાર્ગ દિઘાયા । હસલિયે પ્રભુ ઉનકે ચક્ષુર્દાતા
સમાન માને ગયે હૈં । હસી વિષય કો વિશેષ સ્પષ્ટ કરને કે લિયે સૂત્રકાર પ્રકારાન્તર
સે કહતે હૈં—કિ (મગ્ગદયાણં) મોક્ષમાર્ગ મેં લગાનેવાલોં કે લિયે નમસ્કાર હો ।
યહાં સ્ત્રય યહી મોક્ષમાર્ગ હૈ, અથવા—ગુણસ્થાનોંકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલા ક્ષયોપશમ

હધને નાખી દેવાયેલા માણસને જેમ કેઈ દયાળુ માણસ તેની આંખોના
પાટા ખોલીને ચક્ષુર્દાતા બની તેને માર્ગ બતાવે છે તેજ પ્રકારે પ્રભુ પણ
આ અશરણ ભવરૂપ અરણ્યમાં રાગદ્વેષ આદિ લૂટારા દ્વારા આત્મગુણરૂપ
સંપત્તિ લુટાઈ જતાં દીનહીન બનેલા સમસ્ત સંસારી જીવોને કે જેમની
જ્ઞાનરૂપ આંખો પર દુરાગ્રહરૂપી પાટા કર્મોએ બાંધી રાખેલા છે અને તેથીજ
જેનાં જ્ઞાનરૂપી નેત્ર ઢંકાઈ ગયાં છે અને એજ કારણથી જે ખોટા માર્ગરૂપી
ખાડામાં ધકેલાઈ ગયા છે તેમને પ્રભુએ ખોતાના દિવ્ય ઉપદેશ દ્વારા સત્ જ્ઞાન
આપ્યું, તેથી તેમના દુરાગ્રહ નાશ પામ્યા અને જ્ઞાનરૂપ અંતરંગનાં નેત્ર
નિર્મળ થઈ જવાથી પ્રભુએ તેમને મોક્ષમાર્ગ દેખાડ્યો. તેથી પ્રભુ તેમના
ચક્ષુર્દાતા સમાન મનાય છે. આજ વિષયને વિશેષ સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રકાર
પ્રકારાંતરથી કહે છે કે (મગ્ગદયાણં) મોક્ષ માર્ગમાં લગાડવાવાળાને નમસ્કાર
હો. અહીં સ્ત્રય એજ મોક્ષમાર્ગ છે. અથવા ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ કરા-

સરણદયાણં જીવદયાણં બોહિદયાણં ધમ્મદયાણં ધમ્મદેસયાણં

ગુણસ્થાનપ્રાપ્તકઃ ક્ષયોપશમભાવો માર્ગસ્તસ્ય દયાઃ—દાતાસ્તેભ્યઃ । ‘ સરણદયાણં ’ શરણદાયેભ્યઃ—શરણં=ચારિત્રાણં—કર્મરિપુવશીકૃતતયા વ્યાકુલનાં પ્રાણિનાં રક્ષણસ્થાનં વા તસ્ય દયાસ્તેભ્યઃ । ‘ જીવદયાણં ’ જીવદાયેભ્યઃ—જીવેષુ—એકેન્દ્રિયાદિસમસ્તપ્રાણિષુ દયા—સંકટમોચનલક્ષણા યેષામિતિ, યદ્વા—જીવન્તિ મુનયો યેન સ જીવઃ—સંયમજીવિતં તસ્ય દયાસ્તેભ્યઃ । ‘ બોહિદયાણં ’ બોધિદાયેભ્યઃ—બોધિર્જિનપ્રણીતધર્મમૂલભૂતા-તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાનલક્ષણસમ્યગ્દર્શનરૂપા તસ્યા દયાઃ—બોધિદયાસ્તેભ્યઃ । ‘ ધમ્મદયાણં ’ ધર્મ-દાયેભ્યઃ—ધર્મઃ—દુર્ગતિપ્રપતજ્જન્તુનંરક્ષણલક્ષણઃ શ્રુતચારિત્રાત્મકસ્તસ્ય દયાસ્તેભ્યઃ ।

ભાવરૂપ માર્ગ હૈ, મહ્ય જીવોંકે લિયે પ્રમુ ઇસકે દાતાર હૈં । ઇસલિયે પ્રમુ માર્ગદય હૈં । (સરણદયાણં) શરણદાતારોં કે લિયે નમસ્કાર હો । પ્રમુ શરણદાતાર ઇસલિયે હૈં કિ ઉંહોંને કર્મરૂપી રિપુ દ્વારા વશીકૃત હોનેકે કારણ વ્યાકુલ બને હુએ સમસ્ત પ્રાણિયોં કો નિર્ભય સ્થાન મેં પહુંચનેકા ઉપદેશ દિયા, અથવા—તુમ્હારી રક્ષા કૈસે હો સકતી હૈ ઇસકા ઉપાય બતલાયા । (જીવદયાણં) જીવોં કે ઉપર દયા રાખને કા ઉપદેશ દેનેવાલોં કે લિયે, અથવા—સંયમરૂપ જીવન કો પ્રદાન કરનેવાલોં કે લિયે નમસ્કાર હો । (બોહિદયાણં) બોધિકે દાતારોંકો નમસ્કાર હો । પ્રમુને સમસ્ત સંસારી જીવોં કો જો મોક્ષામિલાષી થે ઉંહેં તત્ત્વાર્થ કે શ્રદ્ધાન કરને રૂપ બોધિ કો પ્રદાન કિયા; ક્યોંકિ આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં સર્વપ્રથમ યહી એક પ્રધાન સાધક હૈ । ઇસલિયે પ્રમુ ઇસ અપેક્ષા સે બોધિદાતાર કહે ગયે હૈં । (ધમ્મદયાણં) ધર્મકે

વનારા ક્ષયોપશમભાવરૂપ માર્ગ છે. ભવ્ય જીવોનેમાટે પ્રમુ તેના દાતાર છે. તેથી પ્રમુ માર્ગદય છે. (સરણદયાણં) શરણદાતારોને નમસ્કાર હો. પ્રમુ શરણ-દાતાર એટલા થાટે છે કે તેમણે કર્મરૂપી રિપુદ્વારા વશીભૂત થઈ જવાના કારણે વ્યાકુલ બની ગયેલાં સમસ્ત પ્રાણિયોને નિર્ભય સ્થાનમાં પહોંચવાનો ઉપદેશ કર્યો, અથવા તેમની રક્ષા કેમ થઈ શકે તેનો ઉપાય બતાવ્યો. (જીવદયાણં) જીવોના ઉપર દયા રાખવાનો ઉપદેશ દેવાવાળા અથવા સંયમરૂપ જીવન પ્રદાન કરવા વાળાને નમસ્કાર હો. (બોહિદયાણં) બોધિના દાતારોને નમસ્કાર હો. પ્રમુએ સમસ્ત સંસારી જીવોને જે મોક્ષામિલાષી હતા તેમને તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ બોધિ પ્રદાન કર્યું; કેમકે આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં સૌથી પ્રથમ આજ એક મુખ્ય સાધન છે. એ માટે પ્રમુ એ અપેક્ષાએ બોધિ-દાતાર કહેવાય છે (ધમ્મદયાણં) ધર્મના દાતારોને નમસ્કાર હો. દુર્ગતિમાં

ધમ્મનાયગાણં ધમ્મસારહીણં ધમ્મ-વર-ચાઉરંત-ચક્ક-વટ્ટીણં દીવો

इहोक्तेषु विशेषणेषु तं दयन्ते इत्यपव्याख्यानम् . ‘अधीगर्थदयेशाम्’ इति कर्मणि शेषत्वविवक्षायां षष्ठ्युत्पत्तेः । शेषत्वाऽविवक्षायां तु द्वितीयायाः सत्त्वेऽपि ‘कर्मण्यण्’ इत्यणुत्पत्त्या अभयदायेभ्य इत्याद्यनिष्ठप्रयोगापत्तेर्दुर्वारत्वात् । ‘धम्मदेसयाणं’ धर्मदेशकेभ्यः—धर्मः=प्राक्प्रतिपादितलक्षणः, तस्य देशकाः उपदेशकास्तेभ्यः । ‘धम्म-नायगाणं’ धर्मनायकेभ्यः—धर्मस्य नायकाः=नेतारः—जनानामन्तःकरणे धर्मप्रचार-करणाद् इति यावत्—धर्मनायकास्तेभ्यः । ‘धम्मसारहीणं’ धर्मसारथिभ्यः—धर्मस्य सार-थयः धर्मसारथयस्तेभ्यः, भगवत्सु सारथित्वाऽऽरोपेण धर्मे रथत्वारोपो व्यज्यते इति परम्परितरूपकमलङ्कारस्तस्माद्यथा सारथयो रथद्वारा रथस्थान् पथिकान् सुखपूर्वक-मभीष्टं स्थानं नयन्त्युन्मार्गगमनादितश्च प्रतिरुन्धते, तथा भगवन्तो धर्मद्वारा मोक्षस्थान—

दातारोंको नमस्कार हो । दुर्गति में पड़ने से जीवोंको रोकनेवाला एक सर्वज्ञ वीतराग प्रभु द्वारा प्रतिपादित श्रुतचारित्ररूप धर्म ही है । प्रभुने ऐसे धर्मका जीवों को अपनी दिव्यवाणी द्वारा उपदेश दिया, अतः वे धर्मके दातार कहलाये । (धम्मदेसयाणं) धर्मदेशकों के लिये नमस्कार हो । (धम्मनायगाणं) धर्मके नायकों के लिये नमस्कार हो । प्रभु धर्म के नायक इसलिये कहलाये हैं कि उन्होंने जनता के अन्तःकरण में धर्मका प्रचार किया है । (धम्मसारहीणं) धर्मके सारथियों को नमस्कार हो । यहां परम्परितरूपकालंकार है । क्योंकि भगवान में सारथित्व का जब आरोप किया गया है तो धर्ममें रथत्वका आरोप प्रकट होता है । इसलिये जिसतरह सारथी रथ द्वारा रथस्थ पथिक को सुखपूर्वक अभीष्ट स्थान पर पहुँचा दिया करता है,

પડવાથી જીવોને રોકવાવાળા એક સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મજ છે. પ્રભુએ એવા ધર્મનો જીવોને પોતાની દિવ્યવાણી દ્વારા ઉપદેશ આપ્યો; માટે તેઓ ધર્મના દાતાર કહેવાયા. (ધમ્મદેસયાણં) ધર્મ-દેશકો ને નમસ્કાર હો. (ધમ્મનાયગાણં) ધર્મના નાયકોને નમસ્કાર હો. પ્રભુ ધર્મના નાયક એટલા માટે કહેવાય છે કે તેમણે જનતાના અંતઃકરણમાં ધર્મનો પ્રચાર કર્યો છે. (ધમ્મસારહીણં) ધર્મના સારથિઓને નમસ્કાર હો. અહીં પરંપરિત-રૂપક અલંકાર છે; કેમકે ભગવાનમાં સારથિત્વનો આરોપ કરવાથી ધર્મમાં રથત્વનો આરોપ પ્રકટ થાય છે. આ માટે જેવી રીતે સારથી રથદ્વારા રથમાં બેસનાર પથિકને સુખપૂર્વક અભીષ્ટ સ્થાને પહોંચાડી દે છે તેમજ ખોટા માર્ગથી તેની રક્ષા કરે છે તેવીજ રીતે પ્રભુએ પણ

મિતિભાવ: । ‘ ધમ્મ-વર-ચાઉરંત-ચક્ક-વટ્ટીણં ’-ધર્મ-વર-ચાતુરન્ત-ચક્ર-વર્તિમ્બ્ય: દાનશીલતપોભાવૈશ્વતસૃણાં નરકાદિગતીનાં ચતુર્ણાં વા કષાયાણામન્તો નાશો યસ્માત્, અથવા ચતસ્રો ગતીશ્ચતુર: કષાયાર્ વા અન્તયતિ=નાશયતીતિ, યદ્વા-ચતુર્ભિર્દાનશીલ-તપોભાવૈ: કૃત્વા અન્તો રમ્ય:, ‘ મૃતાવવસિતે રમ્યે સમાપ્તાવન્ત ઇષ્યતે ’ ઇતિ વિશ્વકોષાત્ । અથવા ચત્વારો દાનાદયોઽન્તા:=અવયવા યસ્ય, યદ્વા ચત્વારો દાનાદય: અન્તા:સ્વરૂપાણિ યસ્ય, ‘ અન્તોઽવયવે સ્વરૂપે ચ ’ ઇતિ હેમચન્દ્ર:, સ ચતુરન્ત: સ એવ ચાતુરન્ત:, સ્વાર્થિક: પ્રજ્ઞાદયણ; ચાતુરન્ત એવ ચક્રં-

એવં ઉન્માર્ગ ગમન સે ઉસકી રક્ષા કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર પ્રભુ ને મી ધર્મદ્વારા જીવોં કો ઉનકે અમીષ્ટ સ્થાનરૂપ મુક્તિસ્થાન મેં પહુંચાયા હૈ, એવં કુમાર્ગ-કુધર્મ-સે ઉનકી રક્ષા કી હૈ । (ધમ્મ-વર-ચાઉરંત-ચક્ક-વટ્ટીણં) દાન, શીલ, તપ એવં ભાવ ઇન ચાર કા સહારા લેકર ચાર નરકાદિગતિયોં કા, અથવા-ચાર ક્રોધાદિક કષાયોં કા જિસસે નાશ હોતા હૈ, અથવા-ચાર ગતિયોં એવં ચાર કષાયોં કા જો વિનાશ કરતા હૈ, અથવા દાન, શીલ, તપ એવં ભાવ ઇનકો લેકર જો રમ્ય હૈ, અથવા-યે ચાર દાનાદિક જિસકે અવયવ હૈં, અથવા-યે ચાર દાનાદિક જિસકે નિજસ્વરૂપ હૈં વહ ચાતુરન્ત હૈ । અન્ત શબ્દ કે કોષોં મેં “ મૃતાવવસિતે રમ્યે સમાપ્તાવન્ત ઇષ્યતે ” “ અન્તોઽવયવે સ્વરૂપે ચ ” ઇસ પ્રકાર અનેક અર્થ હૈં । ઉન્હોં અર્થોં કો લેકર યહાં “ અન્ત ” શબ્દ કે અર્થ કા સ્પષ્ટીકરણ કિયા ગયા હૈ । સ્વાર્થ મેં અળ્ પ્રત્યય કરને સે “ ચાતુરન્ત ” એસા પદ નિષ્પન્ન હો જાતા

ધર્મદ્વારા જીવોને તેમના અભીષ્ટ સ્થાનરૂપ મુક્તિસ્થાનમાં પહોંચાડ્યા છે તેમજ કુમાર્ગ કુધર્મથી તેમની રક્ષા કરી છે. (ધમ્મવર-ચાઉરંત-ચક્ક-વટ્ટીણં) દાન, શીલ, તપ, તેમજ ભાવ એ ચારનો આશ્રય લઈને ચાર નરકાદિ ગતિઓનો, અથવા ચાર ક્રોધાદિક કષાયોનો જે વિનાશ કરે છે, અથવા દાન, શીલ, તપ તેમજ ભાવ એ લઈને જે રમ્ય છે, અથવા એ ચાર દાનાદિક જેમનાં અવયવ છે, અથવા એ ચાર દાનાદિક જેના નિજસ્વરૂપ છે તે ચાતુરન્ત છે. અન્ત શબ્દના કોષોમાં “ મૃતાવવસિતે રમ્યે સમાપ્તાવન્ત ઇષ્યતે ” “ અન્તોઽવયવે સ્વરૂપે ચ ” એ પ્રકારે અનેક અર્થ છે. તે અર્થો લઈને અહીં અન્ત શબ્દના અર્થનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવેલું છે. સ્વાર્થમાં અળ્ પ્રત્યય કરવાથી “ ચાતુરન્ત ” એવું પદ નિષ્પન્ન થઈ જાય છે. આ ચાતુરન્ત જ એક ચક્ર છે, કેમકે ચક્ર જે પ્રકારે બીજાનો ઉચ્છેદ કરે છે

જન્મજરામરણોચ્છેદકત્વેન ચક્રતુલ્યત્વાત્, વરં ચ તચ્ચાતુરન્તચક્રં વરચાતુરન્તચક્રમ્, વરપદેન રાજચક્રાઽપેક્ષયાઽસ્ય શ્રેષ્ઠત્વં વ્યજ્યતે લોકદ્વયસાધકત્વાત્, ધર્મ એવ વરચાતુરન્તચક્રં—ધર્મવરચાતુરન્તચક્રં, તાદૃશસ્ય ધર્માતિરિક્તસ્યાઽસમ્ભવાત્; અત- એવ સૌગતાદિધર્માઽસંભાસનિરાસ; તેષાં તાત્ત્વિકાર્થપ્રતિપાદકત્વાભાવેન શ્રેષ્ઠત્વાઽભાવાત્; ધર્મવરચાતુરન્તચક્રેણ વર્તિતું શીલં યેષામિતિ ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તિનસ્તેભ્યઃ । ચક્રવર્તિપદેન ષટ્સ્વઙ્ગાધિપતિસાદૃશ્યં વ્યજ્યતે, તથા હિ ચત્વારઃ=ઉત્તરદિશિ હિમવાન્ શેષદિક્ષુ ચોપાધિભેદેન સમુદ્રા અન્તાઃ=સીમાનસ્તેષુ સ્વામિત્વેન ભવાશ્ચાતુરન્તાઃ, ચક્રેણ=રત્ન-

હૈ । યહ ચાતુરન્ત હી એક ચક્ર હૈ; ક્યોં કિ ચક્ર જિમ પ્રકાર પર કા ઉચ્છેદક હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ “ચાતુરન્તચક્ર” મીં જીવોં કે જન્મ, જરા એવં મરણ કા ઉચ્છેદક હૈ । ઇસલિયે ઇસમેં ચક્ર કી ઉપમા સાર્થક હોતી હૈ । ‘વર’ શબ્દ કા અર્થ ઉત્કૃષ્ટ હૈ, યહ ચાતુરન્તચક્ર મેં ઉત્કૃષ્ટતા દ્યોતિત કરતા હૈ । રાજચક્ર કી અપેક્ષા યહ ચક્ર ઉત્કૃષ્ટ હૈ । ક્યોં કિ યહ લોકદ્વય મેં હિત કા સાધક હોતા હૈ । ધર્મ હી એક ઉત્કૃષ્ટ ચાતુરન્ત ચક્ર હૈ, અન્ય નહીં ! ઇસ કથન સે અન્ય સૌગતા- દિક સંમત ધર્મ મેં ધર્માભાસતા હોને સે તાત્ત્વિક અર્થ કો પ્રતિપાદન કરને કા અભાવ કથિત હુઆ હૈ, અતઃ ઉનમેં શ્રેષ્ઠતા નહીં હૈ । ઇસ ધર્મવરચાતુરન્તચક્ર કે અનુસાર જિનકા વર્તન કરને કા સ્વભાવ હૈ વે ધર્મવરચાતુરન્તચક્રવર્તી કહે ગયે હૈ । “ચક્રવર્તી” પદ સે ષટ્સ્વઙ્ગ કે અધિપતિ કા સાદૃશ્ય અભિવ્યક્ત હોતા હૈ । “ચત્વારઃઅન્તાઃ—ચતુરન્તાઃ” યહાં અન્ત શબ્દ કા અર્થ સીમા હોતા હૈ । ઉત્તરદિશા મેં હિમવાન્ એવં શેષ ત્રીન દિશાઓં મેં ઉપાધિ કે ભેદ સે ત્રીન સમુદ્ર યે ચતુરન્ત પદ સે ગૃહીત

તેજ પ્રકારે આ ચાતુરન્તચક્ર પાંચુ જીવોનાં જન્મ, જરા તેમજ મરણનો ઉચ્છેદ કરે છે. એ માટે આમાં ચક્રની ઉપમા સાર્થક થાય છે. ‘વર’ શબ્દનો અર્થ ઉત્કૃષ્ટ છે. આ પદ ચાતુરન્તચક્રમાં ઉત્કૃષ્ટતા દ્યોતિત કરે છે. રાજચક્રની અપેક્ષાએ આ ચક્ર ઉત્કૃષ્ટ છે. કેમકે આ બંને લોકમાં હિતનું સાધક થાય છે. ધર્મજ એક ઉત્કૃષ્ટ ચાતુરન્તચક્ર છે, બીજું નહિ ! આ કથનથી બીજાં સૌગત આદિક સંમત ધર્મમાં ધર્માભાસતા હોવાથી તાત્ત્વિક અર્થને પ્રતિપાદન કરવાનો અભાવ કહેવામાં આવ્યો છે, માટે તેમાં શ્રેષ્ઠતા નથી. આ ધર્મવર-ચાતુરન્તચક્ર અનુસાર જેનું વર્તન કરવાનો સ્વભાવ છે તે ધર્મવરચાતુરન્ત-ચક્રવર્તી કહેવાય છે. “ચક્રવર્તી” પદથી ષટ (છ) ખંડનાં અધિપતિનું સાદૃશ્ય અભિવ્યક્ત થાય છે. “ચત્વારઃઅન્તાઃ ચતુરન્તાઃ” અહીં અન્ત શબ્દનો અર્થ સીમા થાય છે. ઉત્તરદિશામાં હિમવાન્ તેમજ શેષ (બાકીની)

भूतप्रहरणविशेषसदृशसम्यक्चारित्ररूपरत्नेन वर्तितुं शीलं येषां ते चक्रवर्तिनः, चातुरन्ताश्च ते चक्रवर्तिनः चातुरन्तचक्रवर्तिनः, धर्मग—न्यायेन वगः श्रेष्ठा इतरतीर्थिकाऽपेक्षयेति धर्मवगः. धर्माः=प्राणातिपातादिनिवृत्तिदानशीलादिरूपाः, 'धर्माः पुण्य-यम—न्याय—स्वभावाऽऽचार—सोमपा'—इत्यमरः. तैर्वराः=श्रेष्ठा अन्यतीर्थिकापेक्षयेति धर्मवराः, ते च ते चातुरन्तचक्रवर्तिनश्चेति—धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्तिनः । यद्वा चातुरन्तं च तच्चक्रं चातुरन्तचक्रं, वरञ्च तच्चातुरन्तचक्रं वरचातुरन्तचक्रं, धर्मो वरचातुरन्तचक्रमिव धर्मवरचातुरन्तचक्रं, तेन वर्तितुं-वर्तयितुं वा शीलं येषां ते धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्तिनस्तेभ्यः, 'दीवो' द्वीपेभ्यः-संसारसमुद्रे निमज्जतां द्वीपतुल्यत्वात् । 'ताण' त्राणेभ्यः-कर्मकद-

किये गये हैं । इन चार सीमाओं के जो स्वामी हैं वे चातुरन्त हैं । चक्रशब्द का अर्थ रत्नरूप प्रहरण—शस्त्रविशेष है । चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक रत्न चक्र भी होता है । चक्रवर्ती के चक्ररत्नसदृश सम्यक्चारित्ररूपी रत्न से वर्तन करने का जिनका स्वभाव है वे चक्रवर्ती हैं । धर्म शब्द का अर्थ न्याय और प्राणातिपातादि—निवृत्ति, दान, शील, आदि भी है । धर्म से—न्याय से, अथवा—प्राणातिपातादि—निवृत्ति, दान, शील—आदि से जो अन्यतीर्थिकों की अपेक्षा उत्तम हैं वे धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्ती हैं । अथवा—चातुरन्तचक्रसदृश धर्म से जिनका वर्तन का स्वभाव है वे धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्ती हैं । ऐसे धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्तियों के लिये नमस्कार हो । 'दीवो' संसारसमुद्र में डूबते हुए प्राणियों के जो द्वीप के समान आधार हैं ऐसे प्रभु के लिये नमस्कार हो । (ताणं) कर्मों से कदर्थित प्राणियों

त्रणु द्विशाओमां उपाधिना लेहथी त्रणु समुद्र ओ यतुरन्त पदथी लेवायुं छे. आ चार सीमाओना जे स्वामी छे ते चातुरन्त छे. यक शब्दने अर्थ रत्नरूप प्रहरण अर्थात् शस्त्रविशेष छे. यकवर्तीना चौदह रत्नोमां ओक रत्न यक पणु होय छे. यकवर्तीना यकरत्नसदृश सम्यक्चारित्ररूपी रत्नथी वर्तन करवाने जेनो स्वभाव छे ते यकवर्ती छे. धर्म शब्दने अर्थ न्याय अने प्राणातिपातादिनिवृत्ति, दान, शील आदि पणु छे. धर्मथी, न्यायथी अथवा प्राणातिपातादिनिवृत्ति, दान, शील आदिथी जे अन्यतीर्थिकोनी अपेक्षाओ उत्तम छे ते धर्मवरचातुरन्तयकवर्ती छे. अथवा वरचातुरन्तयकसदृश धर्मथी जेनो वर्तवाने स्वभाव छे ते धर्मवरचातुरन्तयकवर्ती छे. ओवा धर्मवरचातुरन्तयकवर्तीओने नमस्कार हो. (दीवो) संसारसमुद्रमां डूबता प्राणीओने द्वीपना समान जे आधार छे

તાણં સરણગર્હ પડદા અપ્પડિહય-વર-નાણ-દંસણ-ધરાણં વિયટ્ટ-

ર્થિતાનાં ભવ્યાનાં રક્ષસક્ષણેભ્યઃ । અતએવ તેષાં ભવ્યાનાં ‘સરણગર્હ’ શરણગતિભ્યઃ— આશ્રયસ્થાનેભ્યઃ, ‘પડદા’ પ્રતિષ્ઠાભ્યઃ—કાલત્રયેઽપિ અવિનાશિત્વાત્ સ્થિતેભ્યઃ, ‘દીવો’ ઇત્યાદીનિ ‘પડદા’ ઇત્યન્તાનિ ચતુર્થ્યર્થે પ્રથમાન્તાનિ, અત્રૈકવચનં નપુંસકત્વં સ્ત્રીત્વં ચાવિવક્ષિતમ્ । ‘અપ્પડિહય-વર-નાણ-દંસણ-ધરાણં’ અપ્રતિહતવર-જ્ઞાન દર્શન-ધરેભ્યઃ—પ્રતિહતં—મિત્યાધાવરણસ્વલિતં—ન પ્રતિહતમ્—અપ્રતિહતં, જ્ઞાનઞ્ચ દર્શનઞ્ચેતિ જ્ઞાનદર્શને, યતોઽપ્રતિહતે અતએવ વરે—શ્રેષ્ઠે ચ તે જ્ઞાનદર્શને વરજ્ઞાનદર્શને કેવલ-જ્ઞાનકેવલદર્શને, અપ્રતિહતે વરજ્ઞાનદર્શને અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શને, તયોર્ધરાઃ— અપ્રતિહતવરજ્ઞાનદર્શનધરાઃ — સમ્પૂર્ણાઽવરણગરહિતકેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનધારિણસ્તેભ્યઃ । ‘વિયટ્ટચ્છુમાણં’ વ્યાવૃત્તચ્છદ્મભ્યઃ—છાદ્યતે=આવ્રિયતે કેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનગુણાવા-ત્મનોઽનેનેતિ છદ્મ-જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્માષ્ટકં, વ્યાવૃત્તં—નિવૃત્તં છદ્મ યેભ્યસ્તે વ્યાવૃ-

કે જો ત્રાતા હૈં એસે પ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો । (સરણગર્હ) ભવ્યોં કે લિયે આશ્રયસ્થાનસ્વરૂપ પ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો । (પડદા) કાલત્રય મેં મી અવિનશ્વરસ્વરૂપ પ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો (દીવો) યહાં સે લેકર (પડદા) તક કે સમસ્ત વિશેષણ ચતુર્થી વિભક્તિ કે અર્થ મેં પ્રથમાન્ત પ્રયુક્ત હુએ હૈં । યહાં એકવચન, નપુંસકત્વ એવં સ્ત્રીત્વ અવિવક્ષિત હૈં । (અપ્પડિહય-વર-નાણ-દંસણ-ધરાણં) જો અપ્રતિહત અનન્ત જ્ઞાન ઓર અનન્ત દર્શન કે ધારક હૈં, ડનકે લિયે નમસ્કાર હો । (વિયટ્ટચ્છુમાણં) જિનકે દ્વારા આત્મા કા સ્વભાવભૂત કેવલજ્ઞાન એવં કેવલ દર્શન આવૃત્ત હોતા હૈં એસે આઠોં હી કર્મ ‘છદ્મ’ શબ્દ સે ગૃહીત હુએ હૈં, યહ છદ્મ જિનકી આત્મા સે સદા કે લિયે દૂર હો ચુકા હૈં

એવા પ્રભુને નમસ્કાર હો. (તાણં) કર્મોથી અથડાતાં પ્રાણિઓના જે ત્રાણ અર્થાત્ રક્ષક છે. એવા પ્રભુને નમસ્કાર હો. (સરણગર્હ) ભવ્યોને માટે આશ્રય-સ્થાન સ્વરૂપ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (પડદા) ત્રણે કાળમાં અવિનાશીસ્વરૂપ પ્રભુને નમ-સ્કાર હો (દીવો) અહીંથી લઈને (પડદા) સુધીના બધાં વિશેષણો ચતુર્થી વિભક્તિના અર્થમાં પ્રથમાન્ત વપરાયેલાં છે, અહીં એકવચન નપુંસકત્વ (નાન્યતર જાતિ) તેમ જ સ્ત્રીત્વ [નારી જાતિ] અવિવક્ષિત છે. [અપ્પડિહય-વર-નાણ-દંસણ-ધરાણં] જે અપ્રતિહત અનંતજ્ઞાન અને અનંત દર્શનના ધારક છે તેમને નમસ્કાર હો. (વિયટ્ટચ્છુમાણં) જેમના દ્વારા આત્માના સ્વભાવભૂત કેવલ જ્ઞાન તેમજ કેવલ દર્શન આવૃત્ત થાય છે એવાં આઠેય કર્મ ‘છદ્મ’ શબ્દથી ગૃહીત થાય

છઠ્ઠમાણં જિણાણં જાવયાણં તિણ્ણાણં તારયાણં બુદ્ધાણં બોહ-
યાણં મુત્તાણં મોયગાણં સઠ્ઠવણ્ણૂણં સઠ્ઠવરિસીણં સિવ-મયલ-

ત્તછઠ્ઠાનસ્તેમ્યઃ । ‘જિણાણં’ જિનેમ્યઃ—સ્વયં રાગદ્વેષશત્રુજેતૃમ્યઃ, ‘જાવયાણં’
જાપકેમ્યઃ—જાપયન્તિ કર્મશત્રૂન્ જયન્તં ભવ્યજીવગણં ધર્મદેશનાદિના પ્રેરયન્તીતિ
જાપકા, જિઘાતોર્ણો ‘ક્રીડ્ઝ્જીનાં ણો’ ઇતિસૂત્રેણ આત્મે પુકિ જાપિ ઇતિ પ્યન્તાદ્ઘાતો-
ર્ણુલિ જાપકપદસિદ્ધિઃ, તેમ્યો જાપકેમ્યઃ । ‘તિન્નાણં’ તીર્ણેમ્યઃ—સ્વયં સંસારૌઘ-
સંસારાર્ણવં તીર્ણાઃ=ઉત્તીર્ણાસ્તેમ્યઃ । ‘તારયાણં’ તારકેમ્યઃ—તારયન્ત્યન્યાન્ ઇતિ
તારકાસ્તેમ્યઃ । ‘બુદ્ધાણં’ બુદ્ધેમ્યઃ—સ્વયં બોધં પ્રાપ્તેમ્યઃ । ‘બોહયાણં’ બોધ-
કેમ્યઃ—બોધયન્ત્યન્યાન્ ઇતિ બોધકાસ્તેમ્યઃ । ‘મુત્તાણં’ મુક્તેમ્યઃ—અમોચિષત સ્વયં
કર્મબન્ધાદિતિ મુક્તાસ્તેમ્યઃ । ‘મોયગાણં’ મોચકેમ્યઃ—મુચ્યમાનાન્ અન્યાન્ પ્રેરય-

એસે વ્યાવૃત્તછઠ્ઠવાલે સિદ્ધ પ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો । (જિણાણં) રાગ દ્વેષ
આદિ અંતરંગ શત્રુઓં કે વિજેતા એસે પ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો । (જાવયાણં)
જો કર્મશત્રુઓં કે જીતને કે લિયે ઉદ્યત ભવ્યગણોં કો ધર્મદેશનાદિ દ્વારા પ્રેરિત
કરતે હૈં વે જાપક હૈં, એસે જાપક સિદ્ધ પ્રભુ કો નમસ્કાર હો । (તિન્નાણં)
સ્વયં સંસાર સમુદ્ર સે જો પાર હુણ હૈં વે તીર્ણ હૈં, એસે તીર્ણ સિદ્ધ પ્રભુ કો
નમસ્કાર હો । (તારયાણં) જો પર કો પાર કર દેતે હૈં વે તારક હૈં, એસે તારક
પ્રભુ કો નમસ્કાર હો । (બુદ્ધાણં) સ્વયં બોધ કો પ્રાપ્ત જો હોતે હૈં વે બુદ્ધ
કહલાતે હૈં ઉનકો નમસ્કાર હો । (બોહયાણં) પર કો બોધ કરને વાલે પ્રભુ કે
લિયે નમસ્કાર હો । (મુત્તાણં) મુક્ત પ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો । (મોયગાણં)

છે. આ ‘છઠ્ઠ’ જેમના આત્માથી સદાને માટે દૂર થઈ ચુકેલાં છે એવા વ્યા-
વૃત્તછઠ્ઠવાળા સિદ્ધ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (જિણાણં) રાગદ્વેષ આદિ અંતરંગ
શત્રુઓના વિજેતા એવા સિદ્ધ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (જાવયાણં) જે કર્મશત્રુ-
ઓને જીતવાને માટે ઉદ્યત (તૈયાર) ભવ્યગણોને ધર્મદેશના આદિ દ્વારા
પ્રેરિત કરે છે તે જાપક છે એવા જાપક સિદ્ધ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (તિન્નાણં)
પોતે સંસાર સમુદ્રથી પાર થયેલા છે તે તીર્ણ કહેવાય છે એવા તીર્ણ સિદ્ધ
પ્રભુને નમસ્કાર હો. (તારયાણં) જે બીજાને પાર ઉતારી દે છે તે તારક છે
એવા તારક પ્રભુને નમસ્કાર હો. (બુદ્ધાણં) પોતે બોધને પ્રાપ્ત થયેલા છે તે
બુદ્ધ કહેવાય છે તેમને નમસ્કાર હો. (બોહયાણં) બીજાને બોધ કરવાવાળા
પ્રભુને નમસ્કાર હો. (મુત્તાણં) મુક્ત પ્રભુને નમસ્કાર હો. (મોયગાણં) બીજાને

મરુચ-મણંત-મચ્ચય-મઢ્વાવાહ-મપુગરાવિત્તિ સિદ્ધિગઢ્નામધેયં

નર્તીતિ મોચકાસ્તેમ્યઃ, ' સઢ્ચન્નૂણં ' સર્વજ્ઞેમ્યઃ—સર્વ=મકલઢ્વયગુણ—પર્યાયલક્ષણં વસ્તુજાતં યાથાતથ્યેન જાનન્તીતિ સર્વજ્ઞાસ્તેમ્યઃ, ' સઢ્ચદરિસીણં ' સર્વદર્શિન્યઃ—સર્વ=સમસ્તં પદાર્થસ્વરૂપં સામાન્યેન દ્રષ્ટું શીલં યેષાં તે સર્વદર્શિનસ્તેમ્યઃ, સ્થાન-વિશેષણમાહ—' સિવં ' શિવં—નિશ્ચિલોપદ્વગહિતત્વાચ્છિવં—કલ્યાણમયમ્, ' અચલં ' અચલમ્ સ્વાભાવિકપ્રાયોગિકચલનક્રિયાશૂન્યમ્, ' અરુચં ' અરુજમ્—અવિદ્યમાના રુજા યત્ર તત્, અવિદ્યમાનશરીરમનસ્કત્વાદ્ આધિવ્યાધિરહિતમિત્યર્થઃ, ' અણંતં ' અનન્તમ્—અવિદ્યમાનોઽન્તો નાશો યસ્ય તત્, અત એવ—' અક્ષયં ' અક્ષયમ્—નાસ્તિ લેશતોઽપિ ક્ષયો યસ્ય તત્—અવિનાશીત્યર્થઃ, ' અઢ્વાવાહં ' અઢ્વાવાધમ્—ન વિદ્યતે વ્યાઢ્વાધા—પીઢ્ઢા દ્રઢ્વયતો ભાવતશ્ચ યત્ર તત્ । ' અપુગરાવિત્તિ ' અપુનરાવૃત્તિ=ન સંસારે પુનરાવૃત્તિ:=પુનરવતરણં યસ્માત્ તત્, યત્ર ગત્વા ન કદાચિદપ્યાત્મા નિવર્તતે, સમામ્નાતમન્ય-

દૂસરોં કો મુક્ત કરાને વાલે સિદ્ધ પ્રમુ કે લિયે નમસ્કાર હો । (સઢ્ચન્નૂણં સઢ્ચદરિસીણં) સર્વજ્ઞ—સમસ્ત ગુણપર્યાયસ્વરૂપ વસ્તુસમૂહ કે યુગપત્ યથાર્થ જ્ઞાતા કે લિયે નમસ્કાર હો, એવં યથાર્થ દ્રષ્ટા કે લિયે નમસ્કાર હો । વિશેષાકાર બોધ કા નામ જ્ઞાન એવં સામાન્યાકાર બોધ કા નામ દર્શન હૈ । (સિવ—મચ્ચલ—મરુચ-મણંત—મચ્ચય—મઢ્વાવાહ—મપુગરાવિત્તિ સિદ્ધિગઢ્નામધેયં ઠાણં સંપત્તાણં) નિશ્ચિલ ઉપદ્રવોં સે રહિત હોને કે કારણ શિવ=કલ્યાણમય, અચલ=સ્વાભાવિક એવં પ્રાયોગિક ક્રિયા સે શૂન્ય, અરુજ=શારીરિક એવં માનસિક વ્યાધિ ઓર આધિ સે સર્વથા પરિવર્જિત, અનન્ત, અવિનાશી, અતએવ અક્ષયસ્વરૂપ, અઢ્વાવાધ—દ્રઢ્વય ઓર ભાવ દોનોં પ્રકાર કી પીઢ્ઢા સે નિર્મુક્ત, અપુગરાવૃત્તિ—જહાં જાકર ફિર સંસાર મેં

મુક્ત કરાવવાવાળા સિદ્ધ પ્રભુને નમસ્કાર હો. (સઢ્ચન્નૂણં સઢ્ચદરિસીણં) સર્વજ્ઞ-સમસ્ત-ગુણ-પર્યાય-સ્વરૂપ વસ્તુસમૂહના યુગપત્ યથાર્થ જ્ઞાતાને નમસ્કાર હો, તેમજ યથાર્થ દ્રષ્ટાને નમસ્કાર હો. વિશેષાકાર બોધનું નામ જ્ઞાન તેમજ સામાન્યાકાર બોધનું નામ દર્શન છે. (સિવ મચ્ચલ-મરુચ-મણંત-મચ્ચય-મઢ્વાવાહ-મપુગરાવિત્તિ સિદ્ધિગઢ્નામધેયં ઠાણં સંપત્તાણં) સકળ ઉપદ્રવોથી રહિત હોવાના કારણે શિવ—કલ્યાણમય, અચલ—સ્વાભાવિક તેમજ પ્રાયોગિક ક્રિયાઓથી શૂન્ય, અરુજ-શારીરિક તેમજ માનસિક વ્યાધિ અને આધિથી સર્વથા પરિવર્જિત (મુક્ત), અનંત, અવિનાશી અને તેથી અક્ષય-સ્વરૂપ, અઢ્વાવાધ-દ્રઢ્વય અને ભાવ બન્ને પ્રકારની પીઢ્ઢાથી નિર્મુક્ત, અપુનરાવૃત્તિ—જ્યાં જઈને પાછું

ठाणं संपत्ताणं, नमोत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स

त्रापि— 'न स पुनरावर्त्तते न स पुनरावर्त्तते'—इति । इत्थम्—उक्तशिवत्वादि—विशेषणविशिष्टम् । 'सिद्धिगङ्गनामधेयं' सिद्धिगतिनामधेयम्, सिद्धिगतिरिति नामधेयं=नाम यस्य तत्, सिद्धिगतिनामकम् 'ठाणं' स्थानम्—स्थीयतेऽस्मिन् इति स्थान—लोकाग्रलक्षणम्, 'संपत्ताणं' सम्प्राप्तेभ्यः—समाश्रितेभ्यः । इयदवधि—समुच्चयेन सर्व—सिद्धापेक्षया विशेषणोपादानपूर्वकं नमस्कारवाक्यमभिधाय सम्प्रति भगवन्महावीरोद्देश्यकं नमस्कारमभिधत्ते—'नमोत्थु णं' नमोऽस्तु खलु—'समणस्स भगवओ महावीरस्स' श्रमणाय भगवते—महावीराय, अत्र श्रमणशब्देनायमर्थो बोद्धव्यः—परकृतस्थान—निवासा—दुरगसमः, परीषहोपसर्गेष्वप्रकम्पत्वाद्गिरिसमः, तपस्तेजोमयत्वादनलसमः, गम्भीरत्वाद्—

जीव का अवतरण नहीं होवे ऐसे सिद्धिगति नामके स्थान को—लोक के अग्रभाग में स्थित मुक्तिस्थान को—प्राप्त हुए श्री सिद्धों को नमस्कार हो। यहां तक के इन विशेषणों से समस्त सिद्धों की अपेक्षा से नमस्कार का कथन किया गया है। अब भगवान् महावीर को उद्देश्य कर के यहां से नमस्कार करने का कथन सूत्रकार करते हैं—(नमोत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स तित्थगरस्स जाव संपाविउकामस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स) श्रमण भगवान् महावीर के लिये नमस्कार हो। श्रमण शब्द से सूत्रकार ने प्रभु महावीर में इन विशेषताओं का कथन किया है: वे कहते हैं भगवान् महावीर सर्प की तरह परकृत स्थान में निवास करने के कारण सर्प—सदृश हैं। परीषह एवं उपसर्गों के आने पर भी प्रभु अप्रकंप थे; अतः वे गिरिसम हैं। तप एवं तेजके धारक होने से प्रभु अग्नि—जैसे प्रतापशाली हैं। गंभीर्य एवं ज्ञानादिकरूप

संसारमां ज्वने अवतरणुं न थाय येवा, सिद्धिगति नामना स्थानने ज्ञोक्ता अग्रभागमां रडेदां मुक्तिस्थानने प्राप्त थयेद श्रीसिद्ध प्रभुने नमस्कार डे। अहीं सुधीनां आ विशेषणोत्थी समस्त सिद्धोनी अपेक्षाये नमस्कारनुं कथन कथुं छे। डवे भगवान् महावीरने उद्देशीने अहींथी नमस्कार करवानुं कथन सूत्रकार करे छे—(नमोत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स तित्थगरस्स जाव संपाविउकामस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स) श्रमण भगवान् महावीरने नमस्कार डे। श्रमण शब्दथी सूत्रकारे प्रभु महावीरमां आ विशेषतायेनुं कथन कथुं छे। तेयो कडे छे डे भगवान् महावीर सर्पनी पेडे भीलये करेदां निवासस्थानमां रडेवाने कारण सर्प जेवा छे। परीषड तेमज उपसर्गो आवतां पणु प्रभु धुणु जता नडि; भाटे ते पर्वत

આદિગરસ્સ તિત્થગરસ્સ જાવ સંપાવિડકામસ્સ મમ ધમ્માય-

જ્ઞાનાદિરત્નાકરત્વાત્ મર્યાદાધારકત્વાત્ સાગરસમઃ । નિરાલમ્બનત્વાદ્ ગગનસમઃ । સુખદુઃસ્વયોરદ-
ર્શિતવિકારભાવાદ્ વૃક્ષસમઃ । અનિયતવૃત્તિત્વાદ્ ભ્રમરસમઃ । સંસારમયોદ્વિગ્નત્વાત્ મૃગસમઃ ।
સર્વસહત્વાદ્ ધરણિસમઃ । કામભોગોદ્ભવત્વેઽપિ વિષયવિરક્તતયા પદ્મજલોપરિ વર્તમાન-
કમલવન્નિર્લેપત્વાત્ કમલસમઃ । લોકાલોકયોરવિશેષત્વેન પ્રકાશકત્વાદ્રવિસમઃ । સર્વત્રા-
પ્રતિહતગતિત્વાત્પવનસમઃ । સ એવંભૂતો ભગવાનસ્તીતિ ભાવઃ । ભગવતે—સમગ્રૈશ્વ-
ર્યયુક્તાય, મહાવીરાય—મહાંશ્વાસૌ વીરઃ—‘વીર વિક્રાન્તૌ’—અસ્માદ્વાતોરિગુપધત્વાત્કપ્રત્યયે
વીરઃ—કષાયાદિમહારિપુવિજેતા इत्यर्थः, તસ્મૈ મહાવીરાય=અસ્યામવસર્પિण्याં ચતુર્વિંશતિત-
મચરમતીર્થઙ્કરાય । ‘આદિગરસ્સ’ આદિકરાય, ‘તિત્થગરસ્સ’ તીર્થકરાય, ‘જાવ
સંપાવિડકામસ્સ’ યાવત્ સમ્પ્રાપ્તુકામાય—યાવચ્છલ્લદ્વાત્—‘સયંમંબુદ્ધસ્સ’ इत्यारभ्य—

રત્નોં સે ભરે હુએ હોને કે કારણ, એવં મર્યાદા કે ધારક હોને કે કારણ પ્રમુ
સમુદ્રતુલ્ય હૈં । ગગન કી तरह નિરાલંબ, વૃક્ષકી तरह સુખ એવં દુઃસ્વ મેં
અદર્શિતવિકારભાવયુક્ત, ભ્રમર કી तरह અનિયતવૃત્તિસંપન્ન, મૃગ કી तरह इस
સંસારરૂપી મય સે અત્યંત ત્રસ્ત, ધરણી કી तरह ક્ષમા કે મંડાર વે પ્રમુ હૈં ।
પ્રમુ કામભોગ સે ઉત્પન્ન હૈં તો મી વિષયોં સે વિરક્ત હોને કે કારણ પંક સે
ઉત્પન્ન એવં જલ સે સંવર્દિત કમલ કી तरह બિલકુલ વૈષયિક ભાવોં સે નિર્લિપ્ત
હૈં, इसलिये પ્રમુ કમલ જૈસે હૈં । પ્રમુ લોક ઓર અલોક કે સમાનરૂપ સે પ્રકા-
શક હૈં, इसलिये रवितुल्य હૈં । પ્રમુ સર્વત્ર અપ્રતિહત—વિહારી હૈં, इसलिये वायु जैसे
હૈં । પ્રમુ સમગ્ર ऐश्वर्यसम्पन्न હૈં, इसलिये भगवान् હૈં । પ્રમુ એક મહાવીર હૈં;

જેવા છે. તપ તેમજ તેજના ધારક હોવાથી પ્રભુ અગ્નિ જેવા પ્રતાપશાલી
છે. ગાંભીર્ય તેમજ જ્ઞાનાદિકૃપ રત્નોથી ભરેલા હોવાના કારણે, તેમજ
મર્યાદાના ધારક હોવાના કારણે પ્રભુ સમુદ્ર સમાન છે. આકાશની પેઠે નિરા-
લંબ, વૃક્ષની પેઠે સુખ તેમજ દુઃખમાં ન દેખાય જેનો વિકાર એવા,
ભ્રમરની પેઠે અનિયતવૃત્તિસંપન્ન, મૃગની પેઠે આ સંસારરૂપી ભયથી
અત્યંત ત્રાસી ગયેલા, ધરતીની પેઠે ક્ષમાના ભંડાર, તે પ્રભુ છે. પ્રભુ કામ-
ભોગથી ઉત્પન્ન થયેલા છે તો પણ વિષયોથી વિરક્ત હોવાના કારણે કીચડથી
પેદા થયેલ તેમજ જલથી વધેલા કમળની પેઠે બિલકુલ વિષયના ભાવોથી
નિર્લેપ છે, તેથી પ્રભુ કમલ જેવા છે. પ્રભુ લોક અને અલોકનો સમાનરૂપથી
પ્રકાશક છે તેથી રવિ (સૂર્ય) સમાન છે. પ્રભુ સમગ્ર—ઐશ્વર્ય—સંપન્ન છે
તેથી ભગવાન છે. પ્રભુ એક મહાન વીર છે; કેમકે તેમણે કષાય આદિક

‘सिद्धिगइनामधेयं ठाणं’ इत्यदवधि ग्राह्यम् । अत्रैतावान् विशेषः—‘ठाणं संपत्ताणं’ स्थानं संप्राप्तेभ्यः—इति प्रागुक्तम्. इह तु ‘संपाविउकामस्स’ संप्राप्तुकामाय—मोक्षगामिने—इत्युच्यते, चरमस्य तीर्थकरस्य कृणिकनृपशासनकाले विद्यमानत्वात् । ‘मम धम्मायरियस्स’ मम धर्माऽऽचार्याय=ज्ञानाचारादिपञ्चविधाचारधारकाय, न तु कलाचार्याय;

क्यों कि उन्होंने कषायादिक अन्तरंग शत्रुओं पर विजय प्राप्त की है । महावीर प्रभु इस अवसर्पिणी काल के चौबीसवें अन्तिम तीर्थकर हैं । “आदिगरस्स” इस पद—द्वारा प्रभु में अपने शासन की अपेक्षा धर्म की आदिकर्तृता प्रकट की गयी है । भगवान् महावीर चतुर्विध संध के संस्थापक हैं । “जाव” पदसे “सयंसंबुद्धस्स” यहां से लेकर “सिद्धिगइनामधेयं ठाणं” यहां तकका पाठ संगृहीत किया गया है । यहां इस पाठ में इतनी विशेषता पहिले पाठ की अपेक्षा जान लेनी चाहिये कि पहिले पाठ में “ठाणं संपत्ताणं—स्थानं संप्राप्तेभ्यः” ऐसा पद रखा गया है और यहां पर “ठाणं संपाविउकामस्स—स्थानं संप्राप्तुकामाय” ऐसा पाठ रखा है; क्योंकि प्रभु महावीर अभी उस सिद्धिगतिनामक स्थान की प्राप्ति करनेवाले हैं । ‘मम धम्मायरियस्स’—कोणिक कहते हैं कि ये श्रमण भगवान् महावीर प्रभु, जो कि ज्ञानाचारादि पाँच प्रकार के आचारों के धारक होने के कारण मेरे धर्माचार्य हैं, कलाचार्य नहीं; उनके लिये नमस्कार है । इससे यह सूचित होता है कि जो ज्ञानाचारादि पाँच प्रकार के आचारों के धारक हैं वे ही धर्माचार्य कहे जाते हैं ।

अंतरंग शत्रुओं पर विजय प्राप्त कियी छे. महावीर प्रभु आ अवसर्पिणी कालना चौबीसमा अन्तिम तीर्थकर छे. “आदिगरस्स” ओ पढ़थी प्रभुमां पोताना शासननी अपेक्षाओ धर्मना आदिकर्तापणुं प्रगट करुं छे. भगवान् महावीर चतुर्विध संधना संस्थापक छे. ‘जाव’ पढ़थी “सयंसंबुद्धस्स” अहीथी लधने “सिद्धिगइनामधेयं ठाणं” अहीं सुधीने पाठ लेवामां आव्यो छे. अहीं आ पाठमां ओटली विशेषता ओडेला पाठनी अपेक्षाओ जाणुवी ओधओ के ओडेला पाठमां “ठाणं संपत्ताणं”—स्थानं संप्राप्तेभ्यः” ओवुं पढ़ वपरायुं छे अने अहीं “ठाणं संपाविउकामस्स—स्थानं संप्राप्तुकामाय” ओवे पाठ लीघो छे, केमके प्रभु महावीर हुणु ते सिद्धिगतिनामक स्थानने प्राप्त करवावाणा छे. “मम धम्मायरियस्स” कोणिक कहे छे के ते श्रमण भगवान् के ने ज्ञानाचारादि पांचप्रकारना आचारोना धारक होवाना कारणे मारा धर्माचार्य छे, कलाचार्य नथी, ओवा प्रभु ने नमस्कार हो. आथी ओम सूचित थाय छे के ने ज्ञानाचारादि पांचप्रकारना आचारोना धारक होय

રિયસ્સ ધમ્મોવદેસગસ્સ, વંદામિ ણં ભગવંતં તત્થ ગયં ઇહગણ,
પાસડ મે ભગવં તત્થગણ ઇહગયંતિ—કટ્ટુ વંદઇ ણમંસઇ, વંદિત્તા

ધર્માચાર્યત્વમેવ પ્રકટીકરોતિ—‘ ધમ્મોવદેસગસ્સ ’ ધર્મોપદેશકાય, શ્રુતચારિત્રલક્ષણરૂપ-
ધર્મપ્રરૂપકાય, ‘વંદામિ ણં ભગવંતં તત્થગયં ઇહગણ’ વંદે સ્વલુ ભગવન્તં તત્રગતમિહગતઃ—ઇહ
ગતઃ—ચમ્પાનગરીસ્થિતોઽહમ્-કોગિકઃ, તત્રગતં=ચમ્પા-નગરીસમીપ—ગ્રામે સ્થિતં ભગવન્તં મહાવીરં,
વંદે—પૂર્વોક્તસ્તુત્યા સ્તુતિવિષયં કરોમિ । ‘ પાસડ મે ભગવં તત્થગણ ઇહગયં તિકટ્ટુ ’
પશ્યતુ માં ભગવાન્ તત્રગત ઇહગતમિતિ કૃત્વા—સર્વજ્ઞત્વાત્ તત્રગતો=દૂરસ્થિતો ભગવાન્
ઇહગતં=વ્યવધાનેન સ્થિતં માં પશ્યતુ—ઇતિ કૃત્વા=ઇત્યુક્ત્વા—‘ વંદઇ ણમંસઇ, વંદિત્તા
ણમંસિત્તા ’ વંદતે—સ્તૌતિ, નમસ્યતિ=પચ્ચાઙ્ગનમનપૂર્વકં પ્રગમતિ, વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા

‘ ધમ્મોવદેસગસ્સ ’ ભગવાન વીર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકા ઉપદેશ કરતે હૈં, ઇસલિયે વે
ધર્મોપદેશક હૈં, અતઃ એસે વીરપ્રભુ કે લિયે નમસ્કાર હો । કોગિક રાજા ઇસ પ્રકાર
કહકર પ્રભુવીર કો પરોક્ષ વંદન કરતે હૈં કિ—(તત્થગયં ઇહગણત્તિ કટ્ટુ વંદઇ
ણમંસઇ) વે વીરપ્રભુ કિ જિન્હેં મૈં ઇસ સમય નમસ્કાર કર રહા હૂં; યદ્યપિ મૈરે પ્રત્યક્ષ
નહીં હૈં તથાપિ વે ઇસ ચંપાનગરી કે પાસ કે ગ્રામ મૈં વિરાજમાન હૈં ઓર મૈં યહાં
પર હૂં, અતઃ યહાં ચંપાનગરી મૈં રહા હુઆ મૈં ઉપનગરગ્રામ મૈં વિરાજમાન વીર
પ્રભુ કો નમસ્કાર કરતા હૂં । “ પાસડ મે ભગવં તત્થગણ ઇહગયં ” વે પ્રભુ
વહાં પર વિરાજમાન હોતે હુએ વ્યવધાન સે સ્થિત મુઝે અપને જ્ઞાનરૂપી નેત્ર દ્વારા
દેસે ।/ ઇસ પ્રકાર કહકર કોગિક રાજાને પ્રભુ કો વંદન કિયા એવં નમસ્કાર કિયા—
પંચાંગનમનપૂર્વક નમસ્કાર કિયા । (વંદિત્તા નમંસિત્તા સીહાસણવરગણ પુરત્થાભિમુદે

છે તેમને જ ધર્માચાર્ય કહેવામાં આવે છે. “ ધમ્મોવદેસગસ્સ ” ભગવાન
મહાવીર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના ઉપદેશક છે તેથી તેઓ ધર્મોપદેશક છે,
માટે એવા મહાવીર પ્રભુને નમસ્કાર હો. કોણિકરાજા આ પ્રકારે કહીને
પ્રભુ વીરને પરોક્ષ વંદન કરે છે કે (તત્થગયં ઇહગણત્તિ કટ્ટુ વંદઇ ણમંસઇ)
તે વીર પ્રભુ કે જેમને હું આ સમયે નમસ્કાર કરી રહ્યો છું તે જો કે મને
પ્રત્યક્ષ નથી તો પણ તેઓ આ ચંપાનગરીની પાસેના ગામમાં છે અને
હું અહીં છું; આથી હું અહીં ચંપાનગરીમાં રહીને ઉપનગર ગામમાં વિરા-
જમાન વીર પ્રભુને નમસ્કાર કરું છું. [પાસડ મે ભગવં તત્થગણ ઇહગયં] પ્રભુ
ત્યાં વિરાજમાન હોવા છતાં દૂર રહેલા એવા મને પોતાના જ્ઞાનરૂપી
નેત્રદ્વારા જુઓ. આ પ્રકારે કહીને કોણિક રાજાએ પ્રભુને વંદન કર્યા,

નમંસિત્તા સીહાસણવરગણ પુરત્થાભિમુહે નિસીયઈ, નિસીઈત્તા
તસ્સ પવિત્તિવાઉયસ્સ અટ્ટુત્તરં સયસહસ્સં પીઠ્ઠાણં દલયઈ,
દલઈત્તા સક્કારેઈ સમ્માણેઈ, સક્કારિત્તા સંમાણિત્તા એવં
વયાસી ॥ સૂ. ૨૦ ॥

‘સીહાસણવરગણ’ સિંહાસનવરગતઃ, ‘પુરત્થાભિમુહે’ પૌરસ્ત્યાભિમુખઃ,—પૂર્વાભિમુખઃ
સન્ન ‘નિસીયઈ’ નિર્ણદતિ—ઉપવિશતિ. ‘નિસીઈત્તા’ નિષદ્ય—ઉપવિશ્ય ‘તસ્સ પવિત્તિ—
વાઉયસ્સ’ તસ્મૈ પ્રવૃત્તિવ્યાપૃતાય—ભગવદ્ગમનનિવેદકાય, ‘અટ્ટુત્તરં સયસહ-
સ્સં પીઠ્ઠાણં દલયઈ’ અષ્ટોત્તરં શતસહસ્રં પ્રીતિદાનં દદાતિ—અષ્ટાધિકં
લક્ષમિતં રાજતમુદ્રારૂપં પ્રીતિદાનં=તુષ્ટિદાનં પારિતોષિકં દદાતિ । ‘દલઈત્તા સક્કારેઈ
સંમાણેઈ’ દત્વા સત્કરોતિ—વસ્ત્રાદિના, નંમાનયતિ આસનાદિના, દાનં વિધિસહિતમેવ
ભવ્યસ્ય ભવતિ—ઈતિ ભાવઃ । ‘સક્કારિત્તા સમ્માણિત્તા એવં વયાસી’ સત્કૃત્ય=
સન્તોષ્ય, નંમાન્ય=સન્માનં વિધાય, એવં=વક્તવ્યમાણપ્રકારેણ અવાદીત્ ॥ સૂ. ૨૦ ॥

નિસીયઈ) વંદન નમન કરકે વહ કોણિક રાજા અપને સિંહાસન પર પીછે જાકર
પૂર્વ કી તરફ મુખ કરકે વૈઠ ગયે । (નિસીઈત્તા તસ્સ પવિત્તિવાઉયસ્સ અટ્ટુત્તરં
સયસહસ્સં પીઠ્ઠાણં દલયઈ) વૈઠકર ફિર ઊંઠોને ઉસ સંદેશવાહક કો પ્રીતિદાન
મેં—પારિતોષિકરૂપસે ૧ લાખ ૮ ચાંદી કી મુદ્રાઈ દીં । (દલઈત્તા સક્કારેઈ
સમ્માણેઈ) દેકર ઉસકા સ્તૂબ સત્કાર કિયા ઓર સન્માન કિયા, (સક્કારિત્તા
સંમાણિત્તા એવં વયાસી) આદર સત્કાર કર ચુકને પર ફિર રાજાને ઉસસે ઇસ
પ્રકાર કહા—॥સૂ. ૨૦॥

તેમજ નમસ્કાર કર્યા—પંચાંગ—નમન—પૂર્વક નમસ્કાર કર્યા. (વંદિત્તા નમંસિત્તા
સીહાસણવરગણ પુરત્થાભિમુહે નિસીયઈ) વંદન નમસ્કાર કરીને તે કેણિકરાજા
પોતાના સિંહાસન પર પાછા જઈને પૂર્વ તરફ મુખ કરીને બેસી ગયા.
(નિસીઈત્તા તસ્સ પવિત્તિવાઉયસ્સ અટ્ટુત્તરં સયસહસ્સં પીઠ્ઠાણં દલયઈ) બેસીને
પછી તેમણે તે સંદેશવાહકને પ્રીતિદાનમાં પારિતોષિક (ધનામ) રૂપે
૧ લાખ ૮ મુદ્રાઓ આપી. (દલઈત્તા સક્કારેઈ સંમાણેઈ) દહને
તેનો ખૂબ સત્કાર કર્યો અને સન્માન કર્યું (સક્કારિત્તા સંમાણિત્તા એવં વયાસી)
આદર સત્કાર કરી ચુક્યા પછી રાજાએ તેને આ પ્રકારે કહ્યું:—(સૂ. ૨૦)

मूलम्—जया णं देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महा-
वीरे इहमागच्छेज्जा, इह समोसरिज्जा, इहेव चंपाए णयरीए
बहिया पुण्णभदे चेइए अहापडिरुवं ओग्गहं ओगिण्हित्ताणं
अरहा जिणे केवली समणगणपरिवुडे संजमेणं तवसा अप्पाणं
भावेमाणे विहरेज्जा, तथा णं तुमं मम एयमट्ठं निवेदिज्जासि-त्ति
कट्ठु विसज्जिए ॥ सू० २१ ॥

टीका—राजा कृणिको भगवद्वार्तानिवेदकं पुरुषमादिशति ' जया णं ' इत्यादि ।
यदा खलु देवानुप्रिय ! श्रमणो भगवान् महावीरः इहाऽऽगच्छेत्, इह समवसरेत्,
इहैव चम्पायां नगर्या बाह्ये पूर्णभद्रे चैत्ये यथाप्रतिरूपमवग्रहमवगृह्य अरहा जिनः
केवली श्रमणगणपरिवृतः संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरेत्, तदा खलु मह्य-
मेतमर्थं निवेदयेरितिकृत्वा विसर्जितः ॥ सू० २१ ॥

‘ जया णं ’ इत्यादि—

(देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! (जया णं) जिस समय (समणे
भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर प्रभु (इहमागच्छेज्जा) यहां पर विहार
करते हुए पधारें, (इह समोसरिज्जा) यहाँ समवसृत हों, और (इहेव चंपाए
णयरीए बहिया पुण्णभदे चेइए अहापडिरुवं ओग्गहं ओगिण्हित्ताणं अरहा जिणे
केवली समणगणपरिवुडे संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरेज्जा) इस
चंपानगरी के बाहर पूर्णभद्र नामक उद्यान में यथाप्रतिरूप-साधु को कल्पने योग्य-
अवग्रह-वसति की आज्ञा वनमाली से ग्रहण कर वे श्रमणगण से परिवृत अरहा जिन

‘ जया णं ’ इत्यादि—

(देवाणुप्पिया) ! हे देवानुप्रिय ! (जया णं) जे समये (समणे भगवं
महावीरे) श्रमणु लगवान् महावीर प्रभु (इहमागच्छेज्जा) विहार करता करता
अही पधारें, (इह समोसरिज्जा) अही समयवसृत थाय, अने (इहेव चंपाए
णयरीए बहिया पुण्णभदे चेइए अहापडिरुवं ओग्गहं ओगिण्हित्ताणं अरहा जिणे
केवली समणगणपरिवुडे संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरेज्जा) आ
चंपानगरीनी अहार पूण्णभद्र नामना उद्यानमां यथाप्रतिरूप-साधुने कल्पवा
योग्य अवग्रह-वसतीनी आज्ञा ग्रहणु करीने तेओ श्रमणुगणथी वीटणाओला
अरहा जिन देवद्वी लगवान् महावीर स्वामी सत्तर प्रकारना संयम वडे

मूलम्—तए णं समणे भगवं महावीरे कल्लं पाउप्प-
भायाए रयणीए फुल्लुप्पल-कमल-कोमलु-म्मीलियम्मि अहपंडुरे
पहाए रत्तासोग-प्पगास-किंसुय-सुयमुह-गुंजद्धराग-सरिसे कम-

टीका—‘तए णं’ इत्यादि । ततस्तदनन्तरं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः ‘कल्लं’
कल्ये-द्वितीयदिवसे ‘पाउप्पभायाए रयणीए’ प्रादुष्प्रभातायां प्रकटीभूत-प्रभातायां रजन्यां
‘फुल्लुप्पल-कमल-कोमलु-म्मीलियम्मि’ फुल्लो-त्पल-कमल-कोमलोन्मीलिते-फुल्लं-विकसितं च
तत्-उत्पलं-पद्मं, कमलश्च=चित्रमृगः—हरिगविशेषः, तयोः कोमलं-मृदुकम्, उन्मीलितं-
पत्राणां नयनयोश्चोन्मीलनं यस्मिन् तत्तथा तस्मिन्, इदं प्रभातविशेषणम् । ‘अह’
अथ-अनन्तरं-रजनीपर्यवसानाऽनन्तरम्-‘पंडुरे’ पाण्डुरे-शुक्ले ‘पभाए’ प्रभाते-प्रातःकाले,
अथ सूर्यविशेषगान्याह-‘रत्तासोग’ इत्यादि । ‘रत्तासोग-प्पगास-किंसुय-सुयमुह-गुंज-
द्धराग-सरिसे’ रक्ताऽशोक-प्रकाश-किंशुक-शुकमुख - गुञ्जाऽर्द्धराग - सदृशे, रक्ताऽ
केवली भगवान् महावीर स्वामी सत्रह प्रकार के संयम से और बारह प्रकार के तप से
अपनी आत्मा को भावते हुए जब विचरें, (तया णं) तब तुम निश्चय से
(मम एयमट्ठं निवेदिज्जासि) मुझे यह समाचार निवेदित करना; (तिकट्टु
विसज्जिए) ऐसा कहकर उसे विसर्जित कर दिया ॥सू० २१॥

‘तए णं’ इत्यादि—

(तए णं) तदनन्तर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर
(कल्लं) दूसरे दिन (पाउप्पभायाए रयणीए) जिसमें प्रभात प्रकट हो चुका है
ऐसी रजनी के होने पर (फुल्लु-प्पल-कमल-कोमलु-म्मीलियंमि अहपंडुरे पहाए)
तथा विकसित कमलपत्रों एवं चित्रमृग के नयनों का उन्मीलन जिसमें हो चुका
है ऐसे शुभ्र आभायुक्त प्रातःकाल के होने पर, तथा (रत्तासोग-प्पगास-किंसुय-

अने बार प्रकारना तप वडे पोताना आत्माने लावित करता न्यारे विचरे
(तया णं) त्यारे तमे ४३२ (मम एयमट्ठं निवेदिज्जासि) मने अे सभाचार
निवेदन करजे. (तिकट्टु विसज्जिए) अेम उड़ीने तेने विदाय कर्यो. [सू. २१].

‘तए णं’ इत्यादि.

(तए णं) त्यार पछी (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर
(कल्लं) भीजे द्विवसे (पाउप्पभायाए रयणीए) ते रात्रिनुं न्यारे प्रभात
प्रकट थयुं, (फुल्लु-प्पल-कमल-कोमलु-म्मीलियंमि अहपंडुरे पहाए) तथा
विकसितां कमलपत्रो तेभज चित्रमृगनां नयन न्यारे उधडी चुक्या होय अेवी
शुभ आभावाणे प्रातःकाल थये, तथा (रत्तासोग-प्पगास-किंसुय-सुयमुह-

लागर-संड-बोहए उट्टियम्मि सूरे सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा
जलंते, जेणेव चंपा णयरी, जेणेव पुण्णभदे चेइए, जेणेव वणसंडे,

शोकः=प्रसिद्धवृक्षः—तस्य प्रकाशः=प्रभा, स रक्ताऽशोकप्रकाशः सच किंशुकं=पलाशपुष्पं,
शुकमुखं च, गुञ्जा=रक्तकृष्णः फलविशेषः—तद्वर्द्धं च रक्तार्द्धभागः, एतेषां यो रागः—
रक्तवर्णः तेन सदृशः—समानः तस्मिन्=तत्तुल्यलालिमयुक्ते, 'कमलागर-संड-बोहए'
कमलाऽऽकर-षण्ड-बोधके-कमलानामाकराः=कमलोत्पत्तिस्थानानि-तडागादयः, तेषु-कमलाकरेषु
यानि षण्डानि=कमलवनानि, तेषां बोधकः=विकाशकः तस्मिन्-कमल-वनविकाशकारिणीत्यर्थः,
'उट्टियम्मि' उत्थिते—उदिते 'सूरे' सूर्ये, पुनः कीदृशेः 'सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा
जलंते' सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति—सहस्रं—सहस्रपरिमिताः रश्मयः=किरणा यस्य स
तस्मिन् तादृशे दिनकरे—दिवसकारके, तेजसा—किरणपुञ्जेन, ज्वलति—जाज्वल्यमाने सति,
'जेणेव चंपा णयरी' यत्रैव चम्पा नगरी वर्तत इति शेषः । 'जेणेव पुण्णभदे चेइए'
यत्रैव पूर्णभद्रं चैत्यमुद्यानमस्ति । 'जेणेव वणसंडे' यत्रैव वनषण्डः, 'जेणेव
असोगवरपायवे' यत्रैवाशोकवरपादपः, 'जेणेव पुढविसिलापट्टए' यत्रैव पृथ्वी-

सुयमुह-गुंजद्धराग-सरिसे कमलागर-संड-बोहए) रक्त-अशोक के प्रकाशतुल्य,
पलाशपुष्प के समान,) शुक के मुख के समान और गुंजा के आधे भाग की
ललाई के समान, कमलवनों को विकसित करनेवाला प्रभात होने पर (उट्टियम्मि
सूरे) (आकाश में सूर्य का उदय होने पर,) और पश्चात् (सहस्सरस्सिमि दिणयरे
तेयसा जलंते) सहस्रकिरणवाला दिनकर जब अपने तेजसे आकाश में चमकने लगा
तब (जेणेव चंपाणयरी जेणेव पुण्णभदे चेइए जेणेव वणसंडे जेणेव असोगवर-
पायवे जेणेव पुढवीसिलापट्टए तेणेव उवागच्छइ) जहाँ (वह चंपानगरी थी, जहाँ वह
(पूर्णभद्र उद्यान था, जहाँ वह अशोक वरवृक्ष था, जहाँ पृथिवीशिलापट्टक था, वहाँ

गुंजद्धराग-सरिसे) रक्त अशोकना प्रकाश समान, किंशुक-केसुडांना पुष्प समान,
शुकमुख-पोपटना मुख समान, अने गुंजना अर्धभागनी दादाश समान
(कमलागरसंडबोहए) कमलनां वनोने भीलववावाणुं प्रभात यतां (उट्टियम्मि सूरे)
आकाशमां सूर्यो उदय यतां अने पछी (सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा
जलंते) सहस्रकिरणवाणो सूर्य ज्यारे पोताना तेजवडे आकाशमां चमकवा
दाज्यो त्यारे, (जेणेव चंपाणयरी जेणेव पुण्णभदे चेइए जेणेव वणसंडे जेणेव
असोगवरपायवे जेणेव पुढवीसिलापट्टए तेणेव उवागच्छइ) ज्यो ते चंपानगरी
हती, ज्यो ते पूर्णभद्र उद्यान हुतुं, ज्यो ते अशोक वरवृक्ष हुतुं अने ज्यो

जेणेव असोगवरपायवे जेणेव, पुढवीसिलापट्टए तेणेव उवा-
गच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरूवं ओगहं ओगिण्हित्ताणं
असोगवरपायवस्स अहे पुढविमिलापट्टगंसि पुरत्थाभिमुहे पलि-
यंकनिसन्ने अरहा जिणे केवली समणगणपरिवुडे संजमेणं
तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ सू० २२ ॥

शिलापट्टकोऽस्ति, 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य, 'अहापडिरूवं'
यथाप्रतिरूपम्—यथासाधुकल्पं, 'ओगहं' अवग्रहम्—आज्ञाम्, 'ओगिण्हित्ता णं'
अवग्रह—गृहीत्वा स्वल् 'असोगवरपायवस्स अहे' अशोकवरपादपस्य अधः=अधःप्रदेशे,
'पुढविसिलापट्टगंसि' पृथ्वीशिलापट्टके—पृथ्वीशिलापट्टकोपरि, 'पुरत्थाभिमुहे' पौरस्त्याऽभि-
मुखः—पूर्वाऽभिमुखः, 'पलियंकनिसन्ने' पल्यङ्कनिषण्णः—पल्यङ्केन—पल्यङ्कीतिरुपातेन
आसनविशेषेण निषण्णः—उपविष्टः, 'अरहा' अरहाः—अविद्यमानं—रहः=एकान्तम् यस्य
सोऽरहाः—केवलज्ञानबलेन सर्वज्ञः, 'जिणे' जिनः—रागद्वेषविजेता, 'केवली' प्राप्तकेवलज्ञानः,
'समणगणपरिवुडे' श्रमणगणपरिवृतः—साधुपरिवारनयुक्तः 'संजमेणं तवसा अप्पाणं
भावेमाणे' संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् 'विहरइ' विहरति स्म ॥ सू० २२ ॥

पधारे)। (उवागच्छित्ता अहापडिरूवं ओगहं ओगिण्हित्ताणं असोगवरपायवस्स
अहे पुढवीसिलापट्टगंसि पुरत्थाभिमुहे पलियंकनिसन्ने अरहा जिणे केवली
समणगणपरिवुडे संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) पधारने के बाद
वे प्रभु साधुसमाचारी के अनुसार वनमाली की आज्ञा लेकर अशोकवृक्ष के नीचे
पृथ्वीशिलापट्टक पर पूर्वकी ओर मुख कर पर्यङ्क आसन से (पलथी मारकः) विराज-
मान हुए । तथा श्रमणगणों से परिवृत वे अरहा केवली जिन महावीर प्रभु तप
एवं संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे)। सू० २२ ॥

पृथिवीशिला—पट्टक डोता, त्यां पधार्या. (उवागच्छित्ता अहापडिरूवं ओगहं
ओगिण्हित्ताणं असोगवरपायवस्स अहे पुढवीसिलापट्टगंसि पुरत्थाभिमुहे पलियंक-
निसन्ने अरहा जिणे केवली समणगणपरिवुडे संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे
विहरइ) पधार्या पछी ते साधु—समाचारी प्रमाणे वनमालीनी आज्ञा
लईने अशोकवृक्षनी नीचे पृथिवीशिलापट्टक उपर पूर्वदिशा तरई मुअ
राभीने पर्यङ्क आसनथी (पट्टोड़ी वाणीने) विराजमान थया. तथा श्रमण-
गणोथी वींटणाईने अरहा केवली जिन महावीर प्रभु, तप तेमज संयमथी
पोताना आत्माने भावित करता विचरवा लाग्या. सू. २२.

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे समणा भगवंतो, अप्पेगइया उग्ग-

टीका—चम्पायां नगर्या पूर्णभद्रोद्याने यदा भगवतः श्रीमहावीरस्य समवसरण-
मभूत् तदा तेन सार्धं समागतानां श्रमणानां वर्णनं कुर्वन्नाह—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि ।
तस्मिन् खलु काले तस्मिन् खलु समये च श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य=श्रीमहावीर-
स्वामिनः अन्तेवापिनः—अन्ते=समीपे चारित्रक्रियाद्यर्थं वस्तु शीलं=स्वभावो येषां तेऽन्ते-
वासिनः—शिष्याः, ‘बहवे’—बहवः—बहु-संख्यकाः, ‘समणा’ श्रमणाः—साधवः ‘भग-
वंतो’—भगवन्तः—वैराग्येण श्रुतचारित्रलक्षणधर्मेण च युक्तत्वात् श्रमणा अपि भगवन्त
इत्युच्यन्ते । ‘अप्पेगइया’ अग्रेके—अपिः—समुच्चये, एके=केचिदित्यर्थः । ‘उग्गपव्वइया’
उग्रप्रव्रजिताः—उग्राः=आदिनाथेन ये नगररक्षकत्वेन—आरक्षकत्वेन नियुक्तास्तद्राजः प्रव-
जिताः=दीक्षिताः, उग्र इति क्षत्रियजातिभेदः, तदन्त उग्रा उच्यन्ते, ते प्रव्रजिता इत्यर्थः ।

‘तेणं कालेणं’ इत्यादि

‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ (उसी काल और उसी समयमें (समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे समणा भगवंतो) श्रमण भगवान् महावीर के बहुत से श्रमण भगवंत अन्तेवासी=समीप में रह कर चारित्रक्रिया आदिके आराधन करने वाले शिष्य थे । शिष्यों का विशेषण जो “समणा भगवंतो” है, उसका अभिप्राय यह है कि वे सब श्रमण—साधु थे, और वैराग्य से, एवं श्रुतचारित्ररूप धर्म से युक्त थे । इनमें (अप्पेगइया) कितनेक (उग्गपव्वइया) उग्रवंश के—आदिनाथ प्रभुने पहिले जिन्हें नगरों की रक्षा के लिये नियुक्त किया था उन पुरुषों के वंशके थे । कितनेक

“तेणं कालेणं” इत्यादि.

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) तेज काल अने तेज समयमां (समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे समणा भगवंतो) श्रमणु लगवान भडा-
वीरना धणाय श्रमणु लगवंत अंतेवासी=समीपमां रहीने चारित्रक्रिया
आदिना आराधना करवावाणा शिष्यो हुता. शिष्योनुं विशेषणु ने समणा
भगवंतो छे, तेनो अभिप्राय अे छे के तेओ अधा श्रमणु=साधु हुता अने
वैराग्य तेमज श्रुतचारित्ररूप धर्मथी युक्त हुता. तेओमां (अप्पेगइया)
केटलाअेक (उग्गपव्वइया) उग्र वंशना—आदिनाथ प्रभुअे पडेलां नेओने
नगरोनी रक्षा भाटे नियुक्त कया हुता ते पुरुषोना वंशना—हुता.

पव्वइया, भोगपव्वइया, राइण्ण-णाय-कोरव्व-खत्तिय-पव्व-
इया, भडा जोहा सेणावई पसत्थारो सेट्ठी इब्भा, अण्णे य बहवे

‘भोगपव्वइया’ भोगप्रव्रजिताः—ऋषभदेवेन ये पूर्व गुरुत्वेन स्थापितास्तद्वंशजा भोगा इत्युच्यन्ते, भोगाश्च ते प्रव्रजिताः=दीक्षिताः भोगप्रव्रजिताः, भोगकुलोत्पन्ना दीक्षिता इत्यर्थः । ‘राइण्ण-णाय-कोरव्व-खत्तिय-पव्वइया’ राजन्य-ज्ञात-कौरव-क्षत्रिय प्रव्रजिताः—ये तेनैव मित्रत्वेन व्यवस्थापितास्तद्वंशजाश्च राजन्या उच्यन्ते, ज्ञाता इक्ष्वा-कुवंशविशेषे जाताः, कौरवाः—कुरुवंशोत्पन्नाः, ‘खत्तिय’ क्षत्रियाः—ज्ञातात् त्रायन्ते इति क्षत्रियाः, ते राजन्यादयः प्रव्रजिताः, ‘भडा’—भटाः—चारभटाः—पदातयः, ‘जोहा’—योधाः—भटभ्यो विशिष्टतराः सहस्रपरिमितैरपि रिपुसैनिकैरेकाकिनोऽपि योद्धुं समथाः । ‘सेणावई’ सेनापतयः—सैन्यनायकाः, ‘पसत्थारो’ प्रशास्तारः—शासका नीतिशास्त्रवुरीगाः, ‘सेट्ठी’ श्रेष्ठिनः—लक्ष्मीदेवताऽध्यासितसौवर्णपट्टमण्डितमस्तकाः. ‘इब्भा’ इभ्या—इभो—हस्ती तत्प्रमाणपरिमितसुवर्णादिराशिस्वामिनः । एते सर्वे प्रव्रजिता अन्तेवासिनो जाताः । ये—च—

(भोगपव्वइया) जिन्हें आदिनाथ प्रभुने गुरुरूप से स्थापित किया था उन भोगों के वंश के थे । कितनेक (राइण्ण-णाय-कोरव्व-खत्तिय-पव्वइया) प्रभुने जिन्हें अपने मित्ररूप से स्थापित किया था उन राजन्यों के वंश के थे, कितनेक ज्ञात=इक्ष्वाकुवंश के थे, कितनेक कौरव=कुरुवंश के थे, कितनेक क्षत्रियवंश के थे । ऐसे ही (भडा जोहा सेणावई पसत्थारो सेट्ठी इब्भा) भट=सामान्यवीर, योद्धा=अकेले ही हजारों शत्रुसैनिकों से युद्ध करने में समर्थ वीर, तथा=सेनापति, प्रशास्ता=न्यायाधीश, सेठ=सर्वापेक्षा अधिक धनी होने का सूचक राजप्रदत्त पट्टबन्ध को धारण करने वाले नगरसेठ, और इभ्य=हाथी प्रमाण सुवर्गादि राशिके स्वामी भी भगवान् के समीप प्रव्रजित हुए थे ।

केटलायेक (भोगपव्वइया) नेभने आदिनाथ प्रभुये गुइइये स्थापित कया हुता ते लोग-वंशना हुता. केटलायेक (राइण्ण-णाय-कोरव्व-खत्तिय-पव्वइया) प्रभुये नेभने पोताना मित्रइये स्थापित कया हुता ते राजन्य-वंशना हुता. केटलायेक ज्ञात= इक्ष्वाकुवंशना हुता. केटलाक कौरव=कुरुवंशना हुता, केटलाक क्षत्रियवंशना हुता. तेभज (भडा जोहा सेणावई पसत्थारो सेट्ठी इब्भा) भट=सामान्यवीर, योद्धा-येकलाज हुत्तरो शत्रु सैनिक साथे युद्धकरवाभां समर्थवीर, तथा सेनापति, प्रशास्ता=धाराशास्त्रभां निपुण, सेठ=सर्वनी अपेक्षाये वधारे पैसाहार होवानुं सूचक राजन्यतरकथी अपायेल पट्टबन्ध (छलकाज) धारण करवा-वाणा नगरसेठ, अने इभ्य=हाथी नेवडा सुवर्णना ढगलाना स्वामी पणु लग-वान पासे प्रव्रजित थया हुता. (अण्णे य बहवो एवमाइणो) लगवाननी पासे भीज

एवमाङ्गो उत्तम-जाइ-कुल-रूप-विणय-विण्णाण-वण्ण-
लावण्ण-विक्रम-पहाण-सोभग्ग-कंति-जुत्ता बहु-धण-धण्ण-

पुनः 'अण्णे' अन्ये-उक्तातिरिक्ताः, 'बहवे' बहवः-बहुसंख्यकाः । 'एवमाङ्गो' एवमादयः-एवम्प्रकाराः, 'उत्तम-जाइ-कुल-रूप-विणय-विण्णाण-वण्ण-विक्रम-पहाण-सोभग्ग-कंति-जुत्ता' उत्तम-जाति-कुल-रूप-विनय-विज्ञान-वर्ण-लावण्य-विक्रम-प्रधान-सौभाग्य-कान्ति-युक्ताः-उत्तमाः-श्रेष्ठा जात्यादयो विक्रमान्ताः; तत्र-जातिर्मातृवंशः, कुलं-पितृवंशः, रूपं-शरीराऽऽकारः, विनयः-कायिक-वाचिक-मानसिक-विशुद्धिर्नम्रता च, विज्ञानं-संसारोऽसारतारूपं विशिष्टज्ञानं, वर्णः-कायकान्तिः, लावण्यम्-आकारस्यैव स्मृहणीयता, विक्रमः-पराक्रमः, प्रधाने-श्रेष्ठे ये सौभाग्यकान्ती-सौभाग्यं-सुन्दरभाग्यम्, कान्तिः-दीप्तिः-एताभ्याम् सौभाग्यकान्तिभ्याम्, तथा उत्तमजात्यादिभिर्युक्ता उत्तमजात्यादिमन्तः प्रव्रजिताः, तथा 'बहु-धण-धण्ण-णिचय-परियाल-फिडिया' बहु-धन-धान्य-निचय-परिवार-

(अण्णे य बहवो एवमाङ्गो) भगवान् के समीप और भी बहुत से प्रव्रजित हुए थे, वे सब (उत्तम-जाइ-कुल-रूप-विणय-विण्णाण-वण्ण-लावण्ण-विक्रम-पहाण-सोभग्ग-कंति-जुत्ता) उत्तमजाति=निर्मलमातृवंश, उत्तमकुल=निर्मलपितृवंश, उत्तमरूप=सुन्दर आकार, विनय=कायिक वाचिक मानसिक विशुद्धि, अथवा नम्रता, विज्ञान=संसार को असार समझने की बुद्धि, वर्ण=शरीरकान्ति, लावण्य=शरीर का जगमगाहट, विक्रम=शारीरिक बल, श्रेष्ठ सौभाग्य और उत्तम दीप्ति से युक्त थे । (बहु-धण-धण्ण-णिचय-परियाल-फिडिया णरवइ-गुणा-इरेगा इच्छियभोगा सुहसंपललिया) कितनेक इस शिष्यमंडली में ऐसे भी थे जो दीक्षित होने के पहिले गणिम एवं धरिमरूप धन की एवं शाली आदि धान्य की राशियों से, और

पणु धणाय प्रव्रजित थया हुता.तेओ अधा (उत्तम-जाइ-कुल-रूप-विणय-विण्णाण-वण्ण-लावण्ण-विक्रम-पहाण-सोभग्ग-कंति-जुत्ता) उत्तमजाति=निर्भण मातृवंश, उत्तम-कुल=निर्भण पितृवंश, उत्तमरूप=सुंदरआकार, विनय=कायिक वाचिक मानसिक विशुद्धि, नम्रता, विज्ञान-संसारने असार समजवानीबुद्धि, वर्ण=शरीरनी कान्ति, लावण्य=शरीरने जगमगाहट, विक्रम=शारीरिकबल, श्रेष्ठ सौभाग्य तथा उत्तम दीप्तिवाला हुता. (बहुधण-धण्ण-णिचय-परियाल-फिडिया णरवइ-गुणा-इरेगा इच्छियभोगा सुहसंपललिया) डेटलाओक आ शिष्यमंडलीमां ओवा पणु हुता के ओ दीक्षित थया पडेलां गणिम तेमज धरिमरूप धनना, तेमज शाली आदि धान्यना ढगलाथी अने दासदासीओ आदि परिवार समुदायथी राजसी

નિચય-પરિચાલ-ફિડિયા નરવદ-ગુણા-રેગા ઇચ્છિયભોગા
સુહસંપલલિયા કિંપાગફલોવમં ચ મુણિય વિસયસોવ્રવં, જલ-

સ્ફુટિતાઃ, તત્ર-ધનાનિ-ગગિમ-ધરિમાદીનિ, ધાન્યાનિ-શાલ્યાદીનિ તેષાં નિચયા રાશયઃ, વહવશ્ચર્મા ધનધાન્યનિચયાશ્ચ, પરિવારાઃ-દાસીદાસાદિપરિકરાઃ, તૈઃ સ્ફુટિતાઃ=પ્રકાશિતાઃ, 'નરવદ-ગુણારેગા' નરપતિ-ગુણા-તિરેકાઃ, નરપતિગુણૈર્વિભવવિલાસાદિભિરતિરેક આધિક્યં યેષાં તે તથા, 'ઇચ્છિયભોગા' રૂપિતભોગાઃ-રૂપિતાઃ-વાચ્છિતા ભોગા-ભુજ્યન્તે इति ભોગાઃ=શબ્દરૂપાદયો વિષયા યેષાં તે તથા, પરમવિલાસિનઃ, 'સુહસંપલલિયા' સુખસમ્પ્રલાલિતાઃ-સુખેન-અનુકૂલવેદનીયેન-શુભપરિણામોપાર્જિતાનુકૂલશબ્દાદિજનકપુણ્યપુજ્જેન સમ્પ્રલાલિતાઃ-સમ્યક્ વર્ધિતાઃ, એવંવિધાઃ પૂર્વ સુખિનોઽપિ પ્રવ્રજિતાઃ; કિં કૃત્વા પ્રવ્રજિતા इत्याહ-'કિંપાગફલોવમં ચ' इत्याદિ । કિમ્પાક-ફલો-વમં=કિંપાકો વૃક્ષવિશેષસ્તત્ફલતુલ્યમ્, કિમ્પાકફલં દર્શને આસ્વાદે ચ મનોરમં પરિણામે પ્રાગહારકં ભવતિ તદ્વદિત્યર્થઃ । 'વિસયસોવ્રવં' વિષયસૌખ્યમ્-વિષયાણાં-શબ્દસ્પર્શાદીનાં સૌખ્યં સુવ્રવં 'મુણિય' જ્ઞાત્વા, ચ-પુનઃ 'જલ-બુબ્બુય-સમાણં' જલ-બુદ્બુદ-સમા-

દાસીદાસ આદિ પરિવાર સમુદાય સે રાજસી ઠાઠ વાલે થે, જો વાચ્છિત શબ્દ-રૂપાદિક વિષયોં મેં તલ્લીન થે, પરમ વિલાસી થે, એવં પુણ્ય કે પુંજ સે હી જિનકા માનોં લાલન-પાલન હોતા રહતા થા । (કિંપાક-ફલો-વમં ચ મુણિય વિસય-સોવ્રવં જલબુબ્બુય-સમાણં કુસગ્ગ-જલ-વિંદુ-ચંચલં જીવિયં ય ણાઝ્ઞ)
ઇન્હોને કયા સમજકર કે દીક્ષા ધારણ કી ! ઇસ પ્રશ્ન કા સમાધાન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં-ઉન્હોને યહ સમજા કિ યે વૈષયિક સુવ્રવ કિંપાકફલકે સમાન પરિણામ મેં અનિષ્ટકારક હૈં, ઓર યહ માનવજીવન પાની કે બુલબુલે કે સમાન ક્ષણભંગુર હૈ, એવં કુશ કે અગ્ર પર રહે હુએ જલ કે વિંદુ કે સમાન ચંચલ હૈ

ઠાઠવાળા હતા, જે મનવાંછિત શબ્દરૂપ આદિક વિષયોમાં તલ્લીન હતા, બહુજ વિલાસી હતા, તેમજ પુણ્યના ઢગલાથી જ બાણે જેમનું લાલન પાલન થતું રહેતું હતું. (કિંપાક-ફલો-વમં ચ મુણિય વિસયસોવ્રવં જલ-બુબ્બુય-સમાણં કુસગ્ગ-જલ-વિંદુ-ચંચલં જીવિયં ય ણાઝ્ઞ) તેઓ એ શું સમજીને દીક્ષા ધારણ કરી હતી ? એ પ્રશ્નનું સમાધાન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-તેઓ એમ સમજ્યા કે આ વિષયસુખ કિંપાકફલની પેઠે પરિણામે અનિષ્ટકારક છે, અને આ માનવ જીવન પાણીના પરપોટાની પેઠે ક્ષણભંગુર છે, તેમજ કુશના છેડાપર રહેલાં પાણીનાં ટીપાંની પેઠે ચંચલ છે. એમ બાણીને (અદ્ભુતમિણં રયમિવ પદમા-

बुब्बुयसमाणं कुसग्ग-जल-विंदु-चंचलं जीवियं च णाऊण,
अध्रुवमिणं रयमिव पडग्गलग्गं संविधुणित्ताणं, चइत्ता हिरण्णं,
चिच्चा सुवण्णं, चिच्चा धणं, एवं धण्णं बलं वाहणं कोसं कोट्टा-

नम्-यथा जले बुद्बुदाः प्रादुर्भवन्ति झटित्येव नश्यन्ति च तद्वत् आशुविनाशि, तथा
'कुसग्ग-जलविंदु-चंचलं' कुशाग्र-जलविन्दु-चञ्चलं-कुशाऽग्रे-दर्भपत्राग्रभागे यो
जलविन्दुः तद्वच्चञ्चलं-झटिति पतनशीलं, 'जीवियं' जीवितं-मनुष्यजीवनम्,
'णाऊण-ज्ञात्वा-अवगत्य, 'अध्रुवमिणं' अध्रुवमिदम्-इदं विषयसौख्यधनादिसञ्च-
याऽऽदिकम्, अध्रुवम् अनियतरूपं, 'पडग्गलग्गं' पटाग्रलग्नं, 'रयमिव-रज इव-धूलि-
कणमिव 'संविधुणित्ताणं' संविधूय-सम्यक्-विशेषरूपेण, पृथक्कृत्य, तथा 'चइत्ता'
त्यक्त्वा, 'हिरण्णं' हिरण्यं-रूप्यम्, 'चिच्चा सुवण्णं' त्यक्त्वा सुवर्णम्, 'चिच्चा धणं'
त्यक्त्वा धनम्, 'एवं' एवम्-अनेन प्रकारेण 'धण्णं'-धान्यं-शाल्यादिसञ्चयम्,
बलं-चतुर्विधं सैन्यम्, 'वाहणं' वाहनं-रथादिकम्, 'कोसं' कोशम्-स्वर्णरजतादि-
गृहम्, 'कोट्टागारं' कोष्ठागारं धान्यराशिगृहम् 'रज्जं'-राज्यं-राजाधिकृतदेशम्

ऐसा जानकर (अध्रुवमिणं रयमिव पडग्गलग्गं संविधुणित्ताणं) तथा ये विषयसुख
एवं धन आदि का संचय सब के सब अध्रुव-अनित्यस्वरूप है, ऐसा विचार कर,
उन्होंने पटके अग्रभाग में लगी हुई धूलि के समान उन्हें भावतः मन से
सर्वथा दूर कर दिया। और ये द्रव्यतः बाह्यरूप से भी (चइत्ता हिरण्णं, चिच्चा
सुवण्णं, चिच्चा धणं एवं धण्णं बलं वाहणं कोसं कोट्टागारं रज्जं रट्ठं पुरं
अंतेउरं चिच्चा, विउल-धण-कणग-रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिलप्पवाल-रत्तरयण-
माइयं संत-सार-सावतेज्जं विच्छड्डइत्ता विगोवइत्ता, दाणं च दाइयाणं परिभायइत्ता,
मुंडा भवित्ता, अगाराओ अणगारियं पव्वइया) हिरण्य-चान्दी-का परित्याग कर, सुवर्ण
का परित्याग कर, सोनाचान्दी से अतिरिक्त धन का परित्याग कर, इसी तरह धान्य का,

लग्गं संविधुणित्ताणं) तथा आ विषयसुख तेमञ्ज धन आदिने। संचय तमाभे-
तमाभ अध्रुव-अनित्यस्वरूप छे, अम विचारीने तेओओ पस्सना छेडा
उपर लागेदा धूणनी जेम तेमने। सावपूर्वक मनमांथी तदन त्याग कर्यो।
अने तेओ द्रव्यथी बाह्यरूपे पणु (चइत्ता हिरण्णं, चिच्चा सुवण्णं, चिच्चा धणं,
एवं धण्णं बलं वाहणं कोसं कोट्टागारं रज्जं रट्ठं पुरं अंतेउरं चिच्चा, विउल-धण-
कणग-रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिलप्पवाल-रत्तरयण-माइयं संत-सार-सावतेज्जं
विच्छड्डइत्ता विगोवइत्ता, दाणं च दाइयाणं परिभायइत्ता, मुंडा भवित्ता, अगाराओ
अणगारियं पव्वइया) डिश्य-चांद्दीने। परित्याग करीने, सुवर्णने। परित्याग करीने,

गारं रज्जं रट्टं पुरं अंतेउरं चिच्चा, विउल-धण-कणग-रयण-
मणि-मोत्तिय-संख-सिलप्पवाल-रत्तरयण-माइयं संत-सार-
सावतेज्जं विच्छड्डुइत्ता विगोवइत्ता, दाणं च दाइयाणं परिभाय-

एकभूपाज्ञावशवर्तिदेशम् । ' रट्टं ' राष्ट्रं-देशम्, ' पुरं-प्राकारयुक्तं नगरम् । ' अंते-
उरं ' अन्तःपुरं-राजस्त्रीणां निवासगृहम्, । ' चिच्चा ' त्यक्त्वा ' विउल-धण-कणग-
रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिलप्पवाल-रत्तरयण-माइयं, विपुल-धन-कनक-रत्न-
मणि-मौक्तिक-शङ्ख-शिलाप्रवाल-रत्तरत्नाऽऽदिकम्, तत्र-विपुलानि धनानि-गोवृषादीनि, कनकं
सुवर्णम्-अघटितसुवर्णसमूहम्, रत्नानि-कर्केतनादीनि, मणयः-चन्द्रकान्तादयः, मौक्ति-
कानि-मुक्ताफलानि, शङ्खाः-पद्मशङ्खादयः, शिलाप्रवालानि-विद्रुमाणि, रत्तरत्नानि-पद्मरागा-
दीनि, आदिशब्दात् शय्यासिंहासनादिपरिग्रहः । एतत्सर्वसारभूतं कथयति-' संत-सार-
सावतेज्जं ' सत्सारस्वापतेयम्-सन्=विद्यमानः सारो=बहुमूल्यता यत्र तत् सत्सारं, स्वपतौ
साधु स्वापतेयं-धनं, सत्सारश्च तत्स्वापतेयं सत्सारस्वापतेयं प्रधानधनं त्यक्त्वा, पुनः
' विच्छड्डुइत्ता ' विच्छर्दय-परित्यज्य, विच्छर्दवत् कृत्वेत्यर्थः । ' विगोवइत्ता ' विगोप्यं

चतुर्विध सैन्य का, रथादिकरूप वाहनका, स्वर्ण रजत आदि के स्थानभूत कोशका, कोष्ठागार
का, राज्यका, देशका, पुरका, अन्तःपुरका परित्याग कर, एवं विपुलधन-गोवृष-
भादिकका, कनक-सामान्य सुवर्णका, रत्न का, मणि-मौक्तिकका, शंख-पद्मशंख आदि
का, शिलाप्रवाल-विद्रुम का, रत्तरत्न-पद्मरागादिक मणियों का, आदि शब्द से गृहीत
शय्यासिंहासन वगैरह इन सबका परित्याग कर, तथा उत्तमसारभूत-कोहीनूर जैसे
बहुमूल्य होने से जिसमें सार विद्यमान है ऐसे स्वापतेय-प्रधानधन को भी छोड़कर,
वमन के समान उससे ममत्व बुद्धि हटाकर, एवं जो खजाने में भी पहिले से गुप्त

सोना आन्हीथी अतिरिक्त धननो परित्याग करीने, अने अेवी रीते धान्यनो,
अतुर्विध सैन्यनो, रथ आदिइय वाहननो, सोना आन्ही आदिना स्थानभूत अण-
नानो, कोष्ठागारनो, राज्यनो, देशनो, पुरनो, अंतःपुरनो परित्याग करीने, तेमज
विपुल (अहु) धननो-गाय अणह आदिअनो, कनकनो-सामान्य सुवर्णनो, रत्ननो,
मणिमोतीनो, शंख-पद्मशंख आदिनो, शिलाप्रवाल-विद्रुमनो, रत्तरत्न-
पद्मराग आदिअ मणिअनो, आदि शब्दथी अेम समजवानुं के शय्या
सिंहासन वगेरे अे अधानो परित्याग करीने, तथा उत्तम सारभूत कोहीनूर
अेवां किमती छोवाथी अेमां सार मोणुह छे अेवां स्वापतेय-मुष्य धनने
पणु छोडीने, वमन (उलटी) नी पेठे तेमांथी ममत्व बुद्धि डटावी द्धने
तेमज अे अणनानां पणु पडेलेथी ज गुप्त द्रव्य डतुं तेने पणु अडार

इत्ता, मुंडा भवित्ता, अगाराओ अणगारियं पव्वइया; अप्पे-
गइया अद्धमासपरियाया, अप्पेगइया मासपरियाया, एवं दुमास-

यदपि गुप्तं—निधौ निक्षिप्तं धनं प्रागासीत् तदपि प्रकटीकृत्य=निःसार्य, उदारतापूर्वकं
'दाणं' दानं दत्त्वा, 'दाइयाणं' दायादेभ्यः—स्वगोत्रिकेभ्यः 'परिभायइत्ता' विभागशो-
दत्त्वा च 'मुंडा भवित्ता' मुण्डा भूत्वा=द्रव्यतः शिगेदुञ्चनेन. भावतः क्रोधाद्यपनयनेन
च मुण्डिता भूत्वा, 'पव्वइया' प्रव्रजिताः—श्रमणा जाता इत्यर्थः । 'अप्पेगइया'
अप्येके—केचिद् 'अद्धमासपरियाया' अर्द्धमासपर्यायाः कथञ्चित्प्रागवस्थात्यागेन अव-
स्थान्तराऽऽसौ पर्यायः, स पर्यायो जन्मना दीक्षया चेति द्विविधः, प्रथमो जन्मपर्यायः,
द्वितीयो दीक्षापर्यायः, अत्र दीक्षापर्यायो गृह्यते, केचिदर्द्धमासाद् गृहीतन्यमपर्यायाः ।
'अप्पेगइया' अप्येके—केचन, 'मासपरियाया' मासपर्यायाः—मासाऽवधेः कालाद्
गृहीतश्रमणपर्यायाः । एवम्—अमुना प्रकारेण केचिद्द्विमासपर्यायाः, केचित् त्रिमास-

द्रव्य था उसे भी बाहर निकाल कर, और उदारतापूर्वक उसे दान में व्यय करके
तथा सगोत्रियों में विभक्त करके, मुंडित हो—द्रव्यरूप से मस्तक लुंचितकर एवं
भावरूप से क्रोधादिक का परिहार कर प्रव्रजित हुए थे । (अप्पेगइया) कितनेक
(अद्धमासपरियाया) इनमें ऐसे थे जिन्हें दीक्षा ग्रहण किये केवल अर्धमास ही
हुआ था । (अप्पेगइया मासपरियाया एवं दुमासपरियाया त्रिमासपरियाया
जाव एक्कारसमासपरियाया) इसी प्रकार कितनेक ऐसे थे जिन्हें दीक्षा लिये
हुए दो मास हुए थे, कितनेक ऐसे थे जिन्हें दीक्षा लिये ३ मास हुए थे,
कितनेक ऐसे थे जिन्हें चार, पांच, छह, सात, आठ, नौ, दश एवं ११ ग्यारह

કાઠીને અને ઉદારતાપૂર્વક તેનો દાનમાં વ્યય કરીને તથા સગોત્રિઓમાં
વહેંચી દઈને મુંડિત થઈ—દ્રવ્યરૂપથી મસ્તકને લુંચિત કરીને તથા ભાવરૂપથી
ક્રોધાદિકને છોડીને પ્રવ્રજિત થયા હતા. (અપ્પેગइया) કેટલાએક (અદ્ધમાસ-
પરિયાયા) એમાં એવા હતા જેઓને દીક્ષા લીધાને માત્ર અર્ધમાસ મહિને જ
થયો હતો. (અપ્પેગइया માસપરિયાયા एवं દુમાસપરિયાયા ત્રિમાસપરિયાયા
જાવ એક્કારસમાસપરિયાયા) તેવીજ રીતે કેટલાએક તેઓમાં એવા હતા કે
જેઓને દીક્ષા લીધાને એક માસ થયો હતો, કેટલાએક એવા હતા કે જેઓને
દીક્ષા લીધાને બે માસ થયા હતા, કેટલાએક એવા હતા કે જેઓને દીક્ષા
લીધાને ત્રણમાસ થયા હતા, કેટલાએક એવા હતા જેમને ચાર, પાંચ, છ,
સાત, આઠ, નવ, દશ તેમજ અગત્યાર મહિના થયા હતા. (અપ્પેગइया

परियाया, तिमासपरियाया जाव एक्कारसमासपरियाया, अप्पे-
गइया वासपरियाया, दुवासपरियाया, तिवासपरियाया, अप्पेग-
इया अणैगवासपरियाया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा
विहरंति ॥ सू. २३ ॥

पर्याया यावदेकादशमासपर्यायाः, केचिद्वर्षपर्यायाः, केचिद् द्विवर्षपर्यायाः, केचित् त्रिवर्ष-
पर्यायाः, केचिदनेकवर्षपर्यायाः, 'संजमेणं' संयमेन सप्तदशविधेन, तपसा कर्मनिवारकेण
द्वादशविधेन 'अप्पाणं' आत्मानं 'भावेमाणा' भावयन्तो विहरन्ति ॥ सू० २३ ॥

महिने हुए थे । (अप्पेगइया वासपरियाया दुवासपरियाया तिवासपरियाया)
कितनेक इनमें ऐसेभी थे कि जिन्हें दीक्षा लिये हुए १ वर्ष, २ वर्ष, एवं
तीनवर्ष आदि हो चुके थे । (अप्पेगइया अणैगवासपरियाया) कितनेक ऐसे भी
मुनिजन थे जिन्हें दीक्षा लिए हुए अनेक वर्ष व्यतीत हो चुके थे । ये सबके
सब मुनिजन (संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरंति) १७ प्रकार के
संयम से एवं १२ प्रकारके तपसे अपनी आत्माको भावित करते हुए विचरते थे ॥

भावार्थ—भगवान् महावीर प्रभुकी शिष्यमंडली में अनेक मुनिजन थे ।
कोई उग्रकुलके थे, कोई भोगकुलके थे, कोई राजन्यकुलके थे । कोई कौरव वंश के थे,
कोई क्षत्रियवंश के थे । कितनेक भट-सामान्य वीर, योधा, सेनापति, प्रशासक,
श्रेष्ठी और इभ्य आदि थे । विनय विज्ञान आदि अनेक सद्गुणों से संपन्न ये मुनिजन
दीक्षा लेने के पहिले अनेक प्रकार के धनादिक से, एवं भोगोपभोग की सामग्री

वासपरियाया दुवासपरियाया तिवासपरियाया) डेटलाअेक तेआमां अेवा पणु
डता डे जेमने दीक्षा लीधाने १ वर्ष, २ वर्ष, तेमज त्रणु वर्ष आदि थर्छ
गयां डतां. (अप्पेगइया अणैगवासपरियाया) डेटलाअेक अेवा पणु मुनि डता डे
जेआने दीक्षा लीधाने अनेक वर्ष वीती गयेलां डतां. ते तमाभे तमाम मुनिजने
(संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति) १७ प्रकारना संयमथी तेमज १२
प्रकारना तपथी पोताना आत्माने भावित करता थता विचरता डता.

भावार्थ—भगवान् महावीर प्रभुनी शिष्यमंडलीमां अनेक मुनिजने
डता. डेअ उग्रकुलना डता, डेअ भोगकुलना डता, डेअ राजन्यकुलना डता,
डेअ कौरव वंशना डता, डेअ क्षत्रिय वंशना डता, डेटलाअेक भट सामान्यवीर,
योद्धा-विशिष्टवीर, सेनापति, प्रशासक, श्रेष्ठी अने इभ्य आदि डता. विनय
विज्ञान आदि अनेक सद्गुणोथी संपन्न अेवा आ मुनिजन दीक्षा लीधा पडेलां

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ

ટીકા—‘ તેણં કાલેણં ’ ઇત્યાદિ,

તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘ અંતેવાસી ’

સે યુક્ત થે । ઇનકા વૈભવવિલાસ રાજાઓં કે વૈભવવિલાસ તુલ્ય થા । ઇન્હોને અપને જીવન મેં યહ વિચાર કિયા થા કિ યે સાંસારિક વિષયભોગ કિંપાકફલ કે સમાન બાહર સે હી મનોહર લગતે હૈં, પરિણામ મેં યે જીવકો મહાન્ દુઃખદાયી હૈં । જલબિન્દુ કે સમાન યે ક્ષણવિનશ્વર હૈં । કુશાગ્રભાગમેં સ્થિત ઓસકી બૂંદ કે તુલ્ય દેખતે ૨ નષ્ટ હો જાતે હૈં । અતઃ ઇનકા પરિત્યાગ હી સર્વશ્રેયસ્કર હૈ । એસા સમજ કર હી ઇન્હોને સમસ્ત ધનધાન્યાદિક પરિગ્રહકા પરિત્યાગ કિયા ઓર પ્રભુ કે પાસ દીક્ષિત હો ગયે । ઇનમેં કિતનેક મુનિજનોંકી દીક્ષાપર્યાય ૧૫ દિન, એકમાસ આદિ કી થી, કિતનેક મુનિજનોં કી ૧ વર્ષ ૨ વર્ષ આદિ કી થી, એવં કિતનેક મુનિજનોં કી અનેક વર્ષ કી થી ॥ સૂ. ૨૩ ॥

‘ તેણં કાલેણં ’ ઇત્યાદિ૦

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસ કાલ મેં ઓર ઉસ સમયમેં (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે (બહવે) અનેક (અંતેવાસી) શિષ્ય

અનેક પ્રકારના ધન આદિક તેમજ ભોગોપભોગની સામગ્રીવાળા હતા. તેમના વૈભવ વિલાસ રાજાઓના વૈભવવિલાસ જેવા હતા. તેઓએ પોતાના જીવનમાં એમ વિચાર કર્યો હતો કે આ સાંસારિક વિષયભોગ કિંપાકફલની પેઠે બહારથી જ મનોહર લાગે છે, પરિણામમાં તે આ જીવને દુઃખદાયી છે. પાણીનાં ટીપાંની પેઠે તે ક્ષણમાં નાશ પામે તેવા છે. કુશળા અગ્રભાગમાં રહેલા ઓસના ટીપાની પેઠે જોતજોતામાં જ નાશ પામી જાય છે. આથી તેમનો પરિત્યાગ જ સર્વશ્રેયસ્કર છે એમ સમજીને તેઓએ તમામ ધન ધાન્ય આદિક પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કર્યો, અને પ્રભુની પાસે દીક્ષિત થઈ ગયા. તેઓમાં કેટલાએક મુનિજનોની દીક્ષાપર્યાય ૧૫ દિવસ, એક માસ વગેરે મુદતની હતી, અને કેટલાએક મુનિજનોની દીક્ષાપર્યાય ૧ વર્ષ ૨ વર્ષ આદિની હતી, તેમજ કેટલાક મુનિજનોની અનેક વર્ષની હતી. (સૂ. ૨૩)

“ તેણં કાલેણં ” ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલમાં અને તે સમયમાં (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરના (બહવે) અનેક (અંતેવાસી)

મહાવીરસ્મ અંતેવાસી બહવે નિગ્ગંથા ભગવંતો, અપ્પેગઇયા આ- ભિણિબોહિયણાણી જાવ કેવલણાણી, અપ્પેગઇયા મળવલિયા

અન્તેવાસિન:-શિષ્યા: ‘બહવે’ બહવ:-બહુસંખ્યકા:, ‘નિગ્ગંથા’ નિર્ગ્રન્થા:-ગ્રન્થો દ્વિવિધ આમ્યન્તરો બાહ્યશ્ચ, તત્ર-કષાયાદિરૂપ આમ્યન્તર:, ધનધાન્યાદિપરિગ્રહરૂપો બાહ્ય:, તેન દ્વિવિધેન બાહ્યામ્યન્તરરૂપેગ ગ્રન્થેન નિર્મુક્તા નિર્ગ્રન્થા:, અથવા ગ્રન્થાનિર્ગતા નિર્ગ્રન્થા:-ક્રોધાદિભિર્ધનાદિભિશ્ચ મુક્તા इत्यर्थ:, ભગવન્ત: ‘અપ્પેગઇયા’ અપ્યેકકે-કેચિત્ ‘આભિણિબોહિયણાણી’ આભિનિબોધિકજ્ઞાનિન:-‘અભિ’ इति આભિમુખ્યે, ‘નિ’-इति નૈયત્યે; તતશ્ચ-અભિમુખો=વસ્તુયોગ્યદેશાઽવસ્થાનાઽપેક્ષી બોધ:-અભિનિ-બોધ:, સ એવ આભિનિબોધિકમ્, સ્વાર્થે વિનયાદિત્વાત્ ઇકળ્ પ્રત્યય:, કવિત્સ્વાર્થિકો-ઽપિ પ્રત્યય: પ્રકૃતિં વચનચ્ચાતિવર્તતે, તેન અભિનિબોધસ્ય પુંસ્ત્વેઽપિ આભિનિબોધિકસ્ય નપુંસકત્વં; યથા વિનય એવ વૈનયિકમ્, આભિનિબોધિકં ચ તજ્ઞાનમ્ આભિનિબોધિકજ્ઞાનમ્, તદસ્યેષામિત્યાભિનિબોધિકજ્ઞાનિન:, ‘જાવ’ યાવત્ ‘કેવલણાણી’ કેવલજ્ઞાનિન: - કેવલં - શુદ્ધં - નિર્મલં - સકલાઽઽવરગમલકલઙ્કવિગમસમ્ભૂતત્વાત્, અથવા

થે, જો (નિગ્ગંથા) બાહ્ય એવં અન્તરંગ પરિગ્રહ કે સર્વથા ત્યાગી થે, તથા (ભગવંતો) ત્યાગ એવં વૈરાગ્ય સે જિનકા અન્ત:કરણ ભરપૂર થા । इनमें (अप्पेगइया) कितनेक (आभिणिबोहियणाणी) आभिनिबोधिक ज्ञानी थे । जो ज्ञान अभिमुख एवं योग्यक्षेत्र में स्थित वस्तु को इंद्रिय और मनकी सहायता से जानता है वह अभिनिबोध है, अभिनिबोध ही आभिनिबोधिक है । आभिनिबोधिक ज्ञान का दूसरा नाम मतिज्ञान है । इस ज्ञान से जो युक्त थे वे आभिनिबोधिकज्ञानी कहे गये हैं । (जाव केवलणाणी) कितनेक श्रुतज्ञानी थे, कितनेक अवधिज्ञानी थे, कितनेक मन:पर्ययज्ञानी थे और कितनेक केवलज्ञानी

શિષ્યો હતા. (નિગ્ગંથા) જે બાહ્ય તેમજ અંતરંગ પરિગ્રહના સર્વથા ત્યાગી હતા, તથા (ભગવંતો) ત્યાગ તેમજ વૈરાગ્યથી જેમનાં અંત:કરણ ભરપૂર હતાં. તેઓમાં (અપ્પેગઇયા) કેટલાએક (આભિણિબોહિયણાણી) આભિનિબોધિકજ્ઞાની હતા. જે જ્ઞાન અભિમુખ એટલે યોગ્ય ક્ષેત્રમાં રહેલ વસ્તુને ઈન્દ્રિય અને મનની સહાયતાથી જાણે છે તે અભિનિબોધ છે. અભિનિબોધ એજ આભિનિબોધિક છે. આભિનિબોધિક જ્ઞાનનું જ બીજું નામ મતિજ્ઞાન છે. આ જ્ઞાનથી જે યુક્ત હતા તેમનેજ આભિનિબોધિકજ્ઞાની કહેવામાં આવે છે. (જાવ કેવલણાણી)કેટલાએક શ્રુતજ્ઞાની હતા, કેટલાએક અવધિજ્ઞાની હતા, કેટલાએક મન:પર્યયજ્ઞાની હતા, તથા કેટલાએક કેવલજ્ઞાની હતા. કેવલ

વચ્ચલિયા કાયલિયા ણાણલિયા દંસણલિયા ચારિત્તલિયા

સકલં—પરિપૂર્ણ—સમ્પૂર્ણજ્ઞેયગ્રાહિત્વાત્, યદ્વા કેવલમ્ અસાધારણં તાદૃશાઽપરજ્ઞાનાઽભાવાત્, કેવલચ્ચ તદ્ જ્ઞાનં કેવલજ્ઞાનં, તદસ્તિ યેષાં તે કેવલજ્ઞાનિનઃ । અત્ર—આભિનિબોધિકજ્ઞાનિ—કેવલજ્ઞાનિનોર્મધ્યે યાવચ્છબ્દાન્મત્યવધિ-મનઃપર્યયજ્ઞાનિનોઽપિ ગૃહ્યન્તે, વિસ્તરમયાદેષાં વ્યાખ્યાતો વિરમ્યતે; ‘અપ્પેગઈયા’ અપ્પેકકે—કેચિત્ ‘મણલિયા’ મનોલલિકાઃ—અનુકૂલપ્રતિકૂલપરિષ-હેઽપિ તત્સહનશીલતયા મનોલલધારિણઃ, ‘વચ્ચલિયા’ વાચ્ચલિકાઃ—પ્રતિજ્ઞાતાર્થનિર્વાહક્ષમાઃ, ‘કાયલિયા’ કાયલિકાઃ—ક્ષુધાદિ—પરિષહેષુ તાંત્રેષુ ગ્લાનિરહિતદેહાઃ, ‘ણાણલિયા’

થે । કેવલ શબ્દકા શુદ્ધ પરિપૂર્ણ અથવા અસાધારણ એસા અર્થ હૈ । યહ જ્ઞાન શુદ્ધ ઇસલિયે કહા ગયા હૈ કિ યહ આત્મા મેં ચતુર્વિધ ધાતિકર્મોં કે સર્વથા વિનાશ સે ઉદ્ભૂત હોતા હૈ । પરિપૂર્ણ—સંપૂર્ણ ઇસલિયે હૈ કિ યહ ત્રિકાલગત સમસ્ત જ્ઞેયરાશિ કો યુગપત્ જાનતા હૈ । અસાધારણ ઇસલિયે હૈ કિ ઇસકે જૈસા ઓર કોઈ દૂસરા જ્ઞાન નહીં હૈ । યહ કેવલજ્ઞાન જિનકે આત્મામેં અભિવ્યક્તરૂપમેં વિદ્યમાન હૈ વે કેવલ-જ્ઞાની હૈ । (અપ્પેગઈયા મણલિયા વચ્ચલિયા કાયલિયા) કિતનેક મનોલલધારી થે । ઇસલલ કે પ્રભાવ સે હી અનુકૂલ ઇવં પ્રતિકૂલ પરિષહોં કે સહનેમેં શક્તિ આત્મા કો મિલતી હૈ । કિતનેક વચ્ચનલલ કે ધારી થે । પ્રતિજ્ઞાત અર્થ કો નિર્વાહ કરને કીં ક્ષમતા ઇસ લલદ્વારા આત્મા કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ । કિતનેક કાયલલ કે ધારી થે । ઇસકે દ્વારા તીવ્ર ક્ષુધાદિક પરીષહોં કે હોને પર મી દેહમેં થોડીસી મી ગ્લાનિ ઉદ્ભૂત નહીં હોને પાતી હૈ । (ણાણલિયા દંસણલિયા ચારિત્તલિયા) કિતનેક નિરતિ-

શબ્દનો અર્થ શુદ્ધ પરિપૂર્ણ અથવા અસાધારણ એવો છે. આ જ્ઞાન શુદ્ધ એટલા માટે કહેવામાં આવ્યું છે કે તે આત્માનાં ચતુર્વિધ ધાતિકર્મોના સર્વથા વિનાશથી ઉત્પન્ન થાય છે, પરિપૂર્ણ—સંપૂર્ણ એટલા માટે છે કે તે ત્રણે કાળમાં સમસ્ત જ્ઞેયરાશિને યુગપત્ જાણે છે. અસાધારણ એટલા માટે છે કે તેના જેવું બીજું કોઈ જ્ઞાન નથી. આ કેવલજ્ઞાન જેના આત્મામાં અભિવ્યક્તરૂપમાં વિદ્યમાન છે તે કેવલજ્ઞાની છે. (અપ્પેગઈયા મણલિયા વચ્ચ-લિયા કાયલિયા) કેટલાએક મનોબલધારી હતા, આ બલના પ્રભાવથીજ અનુકૂળ તેમજ પ્રતિકૂળ પરીષદોને સહન કરવાની શક્તિ આત્માને મળે છે. કેટલાએક વચ્ચનબલના ધારી હતા, પ્રતિજ્ઞાત અર્થાત્ પ્રતિજ્ઞા કરેલા અર્થનું પાલન કરવાની ક્ષમતા આ બલથી જ આત્માને પ્રાપ્ત થાય છે. કેટલાએક કાયબલના ધારી હતા. તેના દ્વારા તીવ્ર ક્ષુધા આદિક પરીષદો આવતાં પણ

लिया, अप्पेगइया मणेणं सावा-णुग्गह-समत्था, एवं वएणं

ज्ञानबलिकाः—निरतिचारज्ञानवन्तः । ‘ दंसणबलिया ’ दर्शनबलिकाः दर्शनं—श्रद्धा तद्रूपं बलमस्त्येषामिति दर्शनबलिकाः—सुरैरपि सम्यक्त्वधर्मतश्चालयितुमशक्या इत्यर्थः, ‘ चारित्तबलिया ’ चारित्रबलिकाः—दृढचारित्रबलयुक्ताः, ‘ अप्पेगइया ’ अप्येकके—केचित्, ‘ मणेणं सावा-णुग्गह-समत्था ’ मनसा शापाऽ—नुग्रह—समर्थाः—मनसैव मनोभावादिनैव परेषां शापाऽनुग्रहौ=निग्रहाऽनुग्रहौ कर्तुं समर्थाः, ‘ एवं ’ एवम्—अनेन प्रकारेण ‘ वएणं काएणं ’ वाचा कायेन च निग्रहाऽनुग्रहयोः समर्थाः । ‘ अप्पेगइया ’ अप्येकके—‘ खेलोसहिपत्ता ’ खेलौषधिप्राप्ताः—खेलः—श्लेष्मा, स एवौषधिः सकलरोगादच-

चारज्ञानवान् थे । कितनेक श्रद्धारूपबलसंपन्न थे । इस बल की प्राप्ति होने पर सम्यक्त्व से चलायमान करने के लिये कोई भी शक्ति कार्यकर नहीं हो सकती है । कितनेक चारित्ररूपबलविशिष्ट थे । इस शक्ति की जागृतिमें आत्मा अपने गृहीत चारित्र से रंचमात्र भी शिथिलित नहीं होता है । (अप्पेगइया मणेणं सावा-णुग्गह-समत्था एवं वएणं कायेणं) कितनेक मन से ही शाप एवं अनुग्रह करने में समर्थ थे । इसी तरह वचन और काय से भी समझ लेना चाहिये । (अप्पेगइया खेलो-सहिपत्ता, एवं जल्लोसहिपत्ता, विप्पोसहिपत्ता, आमोसहिपत्ता, सच्चोसहिपत्ता) कितनेक ऐसे थे जिन्हें खेलौषधिरूप लब्धि प्राप्त थी । इस लब्धिवाले मुनिजन का स्वेद-ज मल भी समस्त शारीरिक उद्भवों का अपहारक होता है । कितनेक ऐसे थे जिन्हें विप्रुडोषधि प्राप्त थी । इस लब्धिवाले मुनि के थूक की बूंदें तक भी रोगोंपर ओषधिका

દેહમાં જરા-જેટલીએ ગ્દાનિ ઉત્પન્ન થતી નથી. (જાણબલિયા દંસણબલિયા ચારિત્તબલિયા) કેટલાએક નિરતિચાર જ્ઞાનવાન હતા. કેટલાએક શ્રદ્ધારૂપ-બલ-સંપન્ન હતા, આ બલની પ્રાપ્તિ થતાં સમ્યક્ત્વથી ચલાયમાન કરવાને કોઈ પણ સમર્થ નથી. કેટલાએક ચારિત્રરૂપ બલવિશિષ્ટ હતા. આ શક્તિની જાગૃતિમાં આત્મા પોતે ગ્રહણ કરેલ ચારિત્રથી થોડો પણ શિથિલ થતો નથી. (અપ્પેગઇયા મણેણં સાવાણુગ્ગહસમત્થા એવં વણં કાયેણં) કેટલાએક મનથી જ શાપ તેમ જ અનુગ્રહ કરવામાં સમર્થ હતા. એવી જ રીતે વચન અને કાયાથી પણ સમજી લેવા જોઈએ. (અપ્પેગઇયા खेलोसहिपत्ता, एवं जल्लो-सहिपत्ता विप्पोसहिपत्ता आमोसहिपत्ता सच्चोसहिपत्ता) કેટલાએક એવા હતા જેઓને જલ્દોષધિ લબ્ધિ પ્રાપ્ત હતી. આ લબ્ધિ (સિદ્ધિ)વાળા મુનિજનના સ્વેદ (પરસેવા)ના મલ પણ સમસ્ત શારીરિક ઉપદ્રવોનો નાશ કરે છે. કેટલાએક એવા હતા

કાણં, અપ્પેગહયા ચ્વેલોસહિપત્તા, એવં જલ્લોસહિપત્તા, વિપ્પો-
સહિપત્તા, આમોસહિપત્તા, સવ્વોસહિપત્તા, અપ્પેગહયા કોટ્ટબુદ્ધી, એવં

નથોપશમનહેતુત્વાત્, તાં પ્રાપ્તાઃ, યેષાં શ્લેષ્મસ્પર્શેન સર્વે રોગા વિનશ્યન્તિ તે-ઇત્યર્થઃ,
એવમ્-અમુના પ્રકારેણ 'જલ્લોસહિપત્તા' જલ્લૌષધિપ્રાપ્તાઃ - જલ્લઃ-સ્વેદજો મલઃ
સ એવૌષધિઃ સકલવ્યાધિપ્રશમનહેતુત્વાત્તાં પ્રાપ્તાઃ, યેષાં સ્વેદજમલસ્પર્શેન રોગાઃ
વિનશ્યન્તિ તે ઇતિ ભાવઃ, 'વિપ્પોસહિપત્તા' વિપ્રુડોષધિપ્રાપ્તાઃ-વિપ્રુષઃ-નિષ્ઠી-
વનાદિવિન્દવઃ, તદ્રૂપા ઔષધિસ્તાં પ્રાપ્તાઃ, 'આમોસહિપત્તા' આમર્ષૌષધિપ્રાપ્તાઃ-
આમર્ષણમ્-આમર્ષઃ-હસ્તાદિક્સંસ્પર્શ ઇતિ, સ ઔષધિરિવ ઇત્યામર્ષૌષધિસ્તાં પ્રાપ્તાઃ ।
'સવ્વોસહિપત્તા' સર્વૌષધિપ્રાપ્તાઃ-સર્વે ચ્વેલજલ્લવિપ્રુટ્કેશનચ્ચાદયસ્તે સર્વ એવૌ-
ષધયસ્તાઃ પ્રાપ્તાઃ, એષુ એકૈકસ્ય સર્વવિધરોગોપશમકતયૌષધિત્વાઽઽરોપઃ । 'અપ્પે-
ગહયા' અપ્પેકકે-કેચિત્-'કોટ્ટબુદ્ધી' કોષ્ઠબુદ્ધયઃ-કોષ્ઠવત્-કુશૂલવત્ સૂત્રાઽર્થ-
રૂપધાન્યસ્ય યથાલબ્ધસ્યાઽવિસ્મૃતસ્ય આજીવનધારણાત્ કોષ્ઠબુદ્ધયઃ, યથા ધાન્ય-

કામ કરતી હૈં । કિતનેક એસે થે જિન્હેં આમર્ષૌષધિ પ્રાપ્ત હો ચુકો થી । ઇસ લબ્ધિ
કે પ્રભાવ સે ઇસ લબ્ધિપ્રાપ્ત મુનિજન કા હસ્તાદિક સ્પર્શ ઔષધિ કા કામ કરતા
હૈ । કિતનેક એસે મી મુનિજન થે જિન્હેં સર્વૌષધિ નામકી લબ્ધિ પ્રાપ્ત હો ચુકો થી ।
ઇસ લબ્ધિપ્રાપ્ત મુનિજન કે ચ્વેલ-શ્લેષ્મા, જલ્લ-સ્વેદજ મેલ, વિપ્રુટ્-થૂંક આદિ કે
કળ, કેશ ઓર નચ્ચાદિક સબ ઔષધિ કા કામ કરતે હૈં । ઇન સબ કો ઔષધિ ઇસ-
લિયે કહા ગયા હૈ કિ જિસ પ્રકાર ઔષધિયાં રોગોપશામક હોતી હૈં ઊસી પ્રકાર યે
સબ મી રોગોપશામક હોતે હૈં । (અપ્પેગહયા કોટ્ટબુદ્ધી, એવં વીચબુદ્ધી, પડબુદ્ધી,
અપ્પેગહયા પયાણુસારી, અપ્પેગહયા સંભિન્નસોયા) કિતનેક એસે થે જિન્હેં કોષ્ઠ-

જેમને વિપ્રુડોષધિ લબ્ધિ પ્રાપ્ત હતી. આ લબ્ધિવાળા મુનિના થૂંકનું ટીપું પણ
ઔષધીનું કામ કરે છે. કેટલાએક એવા મુનિજનો હતા જેઓને આમર્ષૌષધિ
પ્રાપ્ત હતી. આ લબ્ધિના પ્રભાવથી આ લબ્ધિવાળા મુનિજનના હસ્તાદિકનો સ્પર્શ
પણ ઔષધીનું કામ કરે છે. કેટલાક એવા પણ મુનિજન હતા, જેમને સર્વૌષધિ
નામની લબ્ધિ પ્રાપ્ત હતી. આ લબ્ધિવાળા મુનિજનના ખેલ-કંક, જલ્લ-સ્વેદજ
મેલ, વિપ્રુટ્-થૂંક આદિના કણ, કેશ અને નખ આદિક બધું ઔષધીનું કામ કરે
છે. એ બધાને ઔષધિઓ એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે જે પ્રકારે ઔષધીઓ
રોગને મટાડે છે તે જ પ્રકારે એ પણ સમસ્ત રોગ મટાડે છે. (અપ્પેગહયા
કોટ્ટબુદ્ધી, એવં વીચબુદ્ધી, પડબુદ્ધી, અપ્પેગહયા પયાણુસારી, સંભિન્નસોયા) કેટલાએક

बीजबुद्धी पटबुद्धी, अप्पेगइया पयाणुसारी, अप्पेगइया संभि-

सम्भृतकुशूला इष्टदेवताऽनुग्रहप्रभावात्सदा पूर्णा आसते तथा प्रवर्धमानमेधापरिपूर्णा-
स्तेऽप्यन्तेवासिन इति भावः । 'एवम्'—इत्थम् 'बीजबुद्धी' बीजबुद्ध्यः—विविध-
सूत्राऽर्थागमरहस्याधिगमविशालवृक्षजननाद् बीजमिव बुद्धिर्येषां ते बीजबुद्ध्यः—अल्पेनापि
पदेन बहुवर्थप्रतिपादकबुद्धिशालिन इति भावः । 'पटबुद्धी' पटबुद्ध्यः—अत्र पट-
शब्देन पटसदृशा विस्तीर्णाः सूत्रार्था गृह्यन्ते, तद्विषयिका बुद्धिर्येषां ते तथा, तन्तुसमु-
दायात्मकवस्त्रवत्प्रभूतसूत्रार्थग्रहणसमर्थज्ञानवन्त इत्यर्थः । 'अप्पेगइया पयाणुसारी'
अप्येकके पदानुसारिणः—पदेनैकेनैव सूत्रपदेन तदनुकूलानि तदाकाङ्क्षितानि पदशतान्य-

बुद्धि प्राप्त थी । जिस प्रकार कोठा धान्य से इष्टदेवता के अनुग्रहवश सदा भरा हुआ
रहता है उसी प्रकार इस बुद्धि की प्राप्ति से मुनिजन भी सूत्रार्थरूप धान्य से जीवन-
पर्यन्त भरे हुए रहते हैं । वह इन्हें कभी भी विस्मृत नहीं होता है । कितनेक ऐसे
थे जिन्हें बीजबुद्धि प्राप्त थी । जिस प्रकार सूक्ष्म से भी सूक्ष्म बीज से विशालवृक्ष तैयार
हो जाता है उसी प्रकार इस बुद्धि के धारक मुनिजन भी विविध सूत्रों के अर्थों के
अर्थात् आगमों के रहस्यों के ज्ञाता हो जाते हैं । अल्पपद से भी ये विस्तृत अर्थ के
प्रतिपादन करने की योग्यता से विशिष्ट बन जाते हैं । कितनेक पटबुद्धि के धारक थे ।
पट शब्द से यहां विस्तृत सूत्रार्थ गृहीत हुए हैं । जिस प्रकार वस्त्र तन्तुओंका समुदायात्मक
होता है उसी प्रकार इस बुद्धि के प्रभाव से मुनिजन भी विस्तृत-सूत्रार्थ के ज्ञानविशिष्ट
होते हैं । कितनेक पदानुसारी थे । एक ही सूत्र के पद से इतर तदनुकूल एवं उस सूत्र

એવા હતા કે જેમને કોષ્ઠબુદ્ધિ પ્રાપ્ત હતી, જે પ્રકારે ઇષ્ટદેવતાના અનુગ્રહથી
કોઠાર ધાન્યથી સદા ભરેલા રહ્યા કરે છે તેજ પ્રકારે આ બુદ્ધિની પ્રાપ્તિથી
મુનિજન પણ સૂત્રના અર્થરૂપ ધાન્યથી જીવનપર્યન્ત ભરેલા રહ્યા કરે છે.
તેઓ તેને કદી પણ ભૂલી જતા નથી.

કેટલાએક એવા પણ હતા કે જેમને બીજબુદ્ધિ પ્રાપ્ત હતી. જે પ્રકારે
સૂક્ષ્મમાં પણ સૂક્ષ્મ બીજથી વિશાલ વૃક્ષ તૈયાર થઈ જાય છે તે જ પ્રકારે
આ બુદ્ધિના ધારક મુનિજન પણ વિવિધ સૂત્રોના અર્થોને એટલે આગમોના
રહસ્યોને જાણનારા થઈ જાય છે. અલ્પપદથી પણ વિસ્તૃત અર્થનું પ્રતિપાદન
કરવાની યોગ્યતાવાળા બની જાય છે. કેટલાએક પટબુદ્ધિના ધારક હતા.
પટ શબ્દથી અહીં વિસ્તૃત સૂત્રાર્થ લીધેલ છે. જે પ્રકારે વસ્ત્ર એ તંતુઓનું
સમુદાયાત્મક હોય છે તેજ પ્રકારે આ બુદ્ધિના પ્રભાવથી મુનિજન પણ વિસ્તૃત
સૂત્રાર્થના જ્ઞાનવિશિષ્ટ થાય છે. કેટલાક પદાનુસારી હતા. એક જ સૂત્રના

નસોયા, અપ્પેગડયા સ્વીરાસવા, અપ્પેગડયા મહુયાસવા, અપ્પે-

નુસરન્તિ તચ્છીલાઃ । અલ્પેનાઽપ્યનલ્પકલ્પકા इत्यर्थः । ‘ અપ્પેગડયા સંભિન્નસોયા ’ અપ્પેકકે સંભિન્નશ્રોતારઃ—સંભિન્નાન્ શબ્દાન્—પૃથક્ ૨ યુગપચ્છૃણ્વન્તિ इति સંભિન્ન-શ્રોતારઃ, યદ્વા સંભિન્નાનિ—શબ્દેન સંબદ્ધાનિ શબ્દગ્રાહકાગિ શ્રોતાંસિ—સર્વાંગીન્દ્રિયાગિ યેષાં તે સંભિન્નશ્રોતસઃ । ‘ અપ્પેગડયા સ્વીરાસવા ’ અપ્પેકે ક્ષીરાઽસ્રવાઃ—મધુરત્વેન ક્ષીરવદ્—દુગ્ધવચ્છ્રોતૃણાં સુસ્વકરાગિ વચનાન્યાસ્રવન્તિ—મુખેભ્યો વિનિર્ગચ્છન્તિ યેષાં તે ક્ષીરાઽસ્રવાઃ, ‘ અપ્પેગડયા મહુયાસવા ’ અપ્પેકે મધ્વાસ્રવાઃ—મધુવત્

મેં આકાંક્ષિત અન્ય સૈકડોં પદોં કા મી જો અનુસરણ કરનેવાલે હોતે હૈં વે પદાનુ-સારી કહલાતે હૈં । કિતનેક સંભિન્નશ્રોતા થે । સંભિન્નશ્રોતા મુનિજન અનેક મેદોં સે ભિન્ન ૨ શબ્દોં કો મી યુગપત્ પૃથક્ ૨ રૂપ સે સુન લિયા કરતે હૈં । એક હી સાથ અનેક શબ્દ એકત્ર હો રહે હોં, તો મી સંભિન્નશ્રોતા ઉન શબ્દોં કો પૃથક્ ૨ રૂપ સે યુગપત્ જાન લિયા કરતે હૈં, અથવા ‘ શ્રોતસ્ ’ શબ્દ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોં કા વાચક હૈ, ઇસસે યહ અર્થ લબ્ધ હોતા હૈ કિ સંભિન્નશ્રોતા મુનિજન કી સમસ્ત ઇન્દ્રિયોં શબ્દોં સે સંબદ્ધ રહા કરતી હૈં, અર્થાત્ વહ શ્રોત્ર—ઇન્દ્રિયકા કામ શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોં સે મી લેતે હૈં, એક ઇન્દ્રિય સે અન્ય ઇન્દ્રિયોં કા કામ લેતે હૈં । (અપ્પેગડયા સ્વીરાસવા અપ્પે-ગડયા મહુયાસવા અપ્પેગડયા સપ્પિયાસવા અપ્પેગડયા અક્ષીણમહાણસિયા) કિતનેક એસે મી થે જિનકે મુખ સે શ્રોતાજનોં કે પ્રતિ ક્ષીર કે જૈસે મધુર—મીઠે વચન

પદ્ધતી બીજા તેને અનુકૂળ તેમજ તે સૂત્રમાં આકાંક્ષિત અન્ય સેંકડો પદોના પણ જે અનુસરણ કરવાવાળા હોય છે તે પદાનુસારી કહેવાય છે. કેટલાએક સંભિન્ન-શ્રોતા હતા. સંભિન્નશ્રોતા મુનિજનો અનેકલેહોવાળા બુદ્ધા બુદ્ધા શબ્દોને પણ યુગપત્ બુદ્ધા બુદ્ધા રૂપથી સાંભળી લે છે. એકીસાથે અનેક શબ્દ એકત્ર થઈ જાય છે તો પણ સંભિન્નશ્રોતા તે શબ્દોને બુદ્ધા બુદ્ધા રૂપથી યુગપત્ જાણી લે છે. અથવા શ્રોતસ્ શબ્દ ઇન્દ્રિયોનો વાચક છે. તેથી એવો અર્થ નીકળે છે કે સંભિન્ન-શ્રોતા મુનિજનની સમસ્ત ઇન્દ્રિયો શબ્દ સાથે સંબદ્ધ રહ્યા કરે છે (જોડાએલી રહે છે), અર્થાત્ તે શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયનું કામ બીજી ચાર ઇન્દ્રિયો પાસેથી પણ લે છે. એક ઇન્દ્રિય પાસે બીજી ઇન્દ્રિયોનું કામ લે છે. (અપ્પેગડયા સ્વીરાસવા અપ્પેગડયા મહુયાસવા અપ્પેગડયા સપ્પિયાસવા અપ્પેગડયા અક્ષીણમહાણસિયા) કેટલાએક એવા પણ હતા, જેમના મુખથી

गइया सप्पियासवा, अप्पेगइया अक्खीणमहाणसिया, एवं

मधुरवचनान्यास्रवन्ति येषां ते तथा, 'अप्पेगइया सप्पियासवा' अप्येकके सर्पिरा-
सवा—घृतवच्छ्रोतृणां स्नेहातिशयसम्पादकाः, श्रोतृस्नेहातिशयसंपादकत्वादेव ते
क्षीरास्रवमध्वास्रवेभ्यो भेदेन कथिताः, 'अप्पेगइया अक्खीणमहाणसिया' अप्येकके
अक्षीणमहानसिकाः— अक्षीणमहानसीं नाम लब्धिं प्राप्ताः, अत्र महानसम्—अन्न-
पाकस्थानं, तदाश्रितत्वादनमपि महानसमुच्यते, अक्षीणं—भिक्षार्थमागताय लब्धिविशेष-
धारिणे साधवेऽन्ने प्रदत्ते सति तदवशिष्टमन्नं पुरुषशतसहस्रेभ्योऽपि दीयामनं न क्षीयते,
यावत्तदन्नस्वामी स्वयं न भुङ्क्ते; अपिच भिक्षापात्रगतं तदन्नं लब्धिविशेषप्रभावादेव साधु-
शतसहस्रेभ्योऽपि परिविध्यमाणं न क्षीयते यावत् तदन्नभिक्षाग्राहकः स्वयं न भुङ्क्ते,

निकला करते थे। क्षीरास्रवलब्धि का काम यही है कि यह जिसे प्राप्त होती है वह क्षीर के समान मधुर वचनों को सदा बोला करता है। कितनेक ऐसे मुनिजन थे जो मध्वास्रव थे, जिनके मुखकमल से मधु के तुल्य मधुर वचन निकला करते थे। कितनेक ऐसे थे जो सर्पिरास्रव थे—घृत के समान स्नेहापादन करनेवाले वचनों के प्रयोक्ता थे। कितनेक अक्षीणमहानसिक थे। इस लब्धिप्राप्त मुनिजन का यह प्रभाव होता है कि यह जिस घर से भिक्षा ले आवे उस घर का अवशिष्ट अन्न जबतक देनेवाला स्वयं न खा लेवे, तबतक लाख आदमियों को भी वितरित करने पर खूटता नहीं है। तथा उस साधुद्वारा लाया गया वह भिक्षान्न भी जबतक लानेवाला साधु स्वयं न खा लेवे तबतक लाख साधुओं द्वारा आहारित होने पर भी

श्रोताजनोना प्रति दूधपाक जेवां मधुर-भीठां वचन नीकज्या करतां हुतां.
क्षीरास्रव लब्धिनुं काम जेजे छे के ते जेने प्राप्त थाय छे ते दूधपाक
जेवां मधुर वचनो ज सहाय जेल्या करे छे. केटलाजेक जेवा पण मुनिजनो
हुता जे मध्वास्रव हुता.जेमना मुअकमलमांथी मधना जेवां मधुर वचन नीकजे
छे ते मध्वास्रव छे. केटलाजेक जेवा हुता के जे सर्पिरास्रव हुता, धीनी चेठे
स्नेहापादन करवावाणां वचनो जेलनारा हुता. केटलाजेक अक्षीणमहानसिक-
लब्धिधारी हुता, आ लब्धिप्राप्त मुनिजननो जेवो प्रभाव होय छे के ते
जे घरथी भिक्षा लधने आवे ते घरनुं भाडीनुं अन्न ज्यां सुधी देवावाजो
पोते न जाय त्यां सुधी लाजो भाषुसोमां वडेंची आपे तो पण भूटी जतुं
नथी. तथा ते साधुजे लावेहुं ते भिक्षानुं अन्न पण ते लध आवनार
साधु पोते जाय नहि, त्यां सुधी लाजो साधुजो तेनो आधार करे तोय पण

उज्जुमई, अप्पेगइया विउलमई विउव्वणिडिढपत्ता चारणा विज्जा-

एवम् 'उज्जुमई' ऋजुमतयः—मननं मतिः, संवेदनमित्यर्थः—ऋज्वी सामान्यग्राहिणी मतिर्येषां ते ऋजुमतयः । अर्द्धतृतीयोच्छ्रयाङ्गुलन्यूनमनुष्यक्षेत्रवर्तिसंज्ञिपञ्चेन्द्रिय-मनोद्रव्यप्रत्यक्षोकरणहेतुमनःपर्यवज्ञानविशेषवन्त इत्यर्थः । ऋजुमतिनामकलब्धि-विशेषधारिण इति भावः । अप्पेगइया विउलमई' अन्येकके विपुलमतयः— विपुला सविशेषणवस्तुग्राहितया विस्तीर्णा मतिः—मनःपर्यवज्ञानं येषां ते विपुलमतयः । ऋजुमतिविपुलमतिमतामयं तात्त्विको भेदः, विपुलमतयः— घटोऽनेन चिन्तितः, स घटो द्रव्यतः— सुवर्णघटितः, क्षेत्रतः— पाटलिपुत्रनगरस्थः, कालतः— शारदीयः, भावतः—पीतवर्ण इत्येवमशेषविशेषणयुक्तं वस्तु जानन्ति, ऋजुमतयस्तु सामान्यत एव जानन्ति । अर्द्धतृतीयोच्छ्रयाऽङ्गुलन्यूने मनुजक्षेत्रे वर्तमानानां संज्ञिपञ्चेन्द्रि-

खूटता नहीं है । (एवं उज्जुमई, अप्पेगइया विउलमई विउव्वणिडिढपत्ता चारणा विज्जाहरा आगासाइवाई) इस प्रकार कितनेक तपस्वी शिष्यजन ऋजुमति—मनः पर्यवज्ञानवाले थे । ऋजुमति—मनःपर्यवज्ञानी सामान्यतः संज्ञी—पंचेन्द्रिय के मन के भावों को जानते हैं । कितनेक विपुलमति—मनःपर्यव के धारक थे—विशेषणसहित वस्तु को ग्रहण करने की बुद्धिवाले थे । जैसे किसी ने द्रव्य की अपेक्षा सुवर्ण का, क्षेत्र की अपेक्षा पाटलिपुत्र का, काल की अपेक्षा शरदकाल का और भाव की अपेक्षा पीत वर्णका घट चिन्तित किया, विपुलमति इन समस्त विशेषणों सहित उस घट को जान लेते हैं । अर्द्धतृतीय अंगुलसे न्यून इस मनुष्य क्षेत्रमें वर्तमान संज्ञि-पंचेन्द्रिय जीवों के मनमें स्थित वस्तु का सामान्यतः जाननेवाला ऋजुमति—मनःपर्य-

ખૂટતું નથી. (એવં ઉજ્જુમઈ અપ્પેગઇયા વિઉલમઈ વિઉવ્વણિડિઢપત્તા ચારણા વિજ્જા-હરા આગાસાઈવાઈ) તેજ પ્રકારે કેટલાએક તપસ્વી શિષ્યજન ઋજુમતિ-મનઃ—પર્યવજ્ઞાની હતા. ઋજુમતિમનઃ—પર્યવજ્ઞાની સામાન્યતઃ સંજ્ઞી—પંચેન્દ્રિયના મનના ભાવોને જાણે છે. કેટલાએક વિપુલમતિ—મનઃપર્યવના ધારક હતા, વિશેષણસહિત વસ્તુને જાણનારી બુદ્ધિવાળા હતા. જેમ કે કેાઈએ દ્રવ્યની અપેક્ષા સુવર્ણના, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પાટલિપુત્રના, કાલની અપેક્ષાએ શરદકાલના, અને ભાવની અપેક્ષાએ પીળા રંગના ઘટનું ચિન્તવન કર્યું, ત્યારે વિપુલમતિ એ બધા વિશેષણો સહિત તે ઘટને જાણી લે છે. અર્દ્ધતૃતીયઅંગુળન્યૂન આ મનુષ્ય-ક્ષેત્રમાં વર્તમાન સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોના મનમાં રહેલ વસ્તુને સામાન્યતઃ જાણવા-વાળા ઋજુમતિ—મનઃપર્યવજ્ઞાન થાય છે, તેમજ સંપૂર્ણ મનુષ્યક્ષેત્રમાં વર્તમાન

याणां मनोऽवस्थितवस्तुनः सामान्यतो ग्राहिका ऋजुमतिः । सम्पूर्णे मनुजक्षेत्रेऽशेष-
विशेषवस्तुग्राहिका विपुलमतिः । विपुलमतिनामकलब्धिविशेषधारिण इति भावः ।
'विउव्वणिड्ढिपत्ता' विकुर्वणर्द्धिप्राप्ताः—विकुर्वणा—वैक्रियकरणलब्धिः सैव ऋद्धिः,
तां प्राप्ता ये ते तथा । 'विकुर्व' विक्रियाम् इति पारिभाषिकः सौत्रो धातुः, अस्माद्वा-
तोर्युच्प्रत्यये विकुर्वणा, नानारूपा विक्रिया— रचनेत्यर्थः; बाह्यपुद्गलान् भवधारणीय-
शरीरानवगाढक्षेत्रप्रदेशवर्तिनो वैक्रियसमुद्घातेन गृहीत्वा एका विकुर्वणा क्रियते, एवम्
आभ्यन्तरपुद्गला भवधारिणीयेनौदारिकेण वा शरीरेण ये क्षेत्रप्रदेशमवगाढास्तेष्वेव ये वर्तन्ते
तान् गृहीत्वा विज्ञेया । एवं बाह्यान्तरपुद्गलयोगेन तृतीया विकुर्वणा बोध्या ।
स्थानाङ्गसूत्रे—(३ ठा. १३०) सविस्तरं वर्णिता । 'चारणा' चारणाः—चरणं=गम-
नम् अतिशययुक्तमस्ति येषां ते चारणाः, 'ज्योत्स्नादिभ्योऽण्' इति पाणिनिसूत्रान्मत्वर्थी-
योऽण्प्रत्ययः । आकाशगमनागमनरूपलब्धिसम्पन्ना इत्यर्थः । ते द्विविधाः—विद्याचारणाः,
जङ्घाचारणाश्च । तत्र विद्या—पूर्वगतविवक्षितश्रुतज्ञानांशः, तदभ्याससमये षष्ठषष्ठनिरन्त-

वज्ञान होता है, एवं सम्पूर्ण मनुष्यक्षेत्र में वर्तमान समस्त वस्तुओं—बाहर पदार्थों को
विशेषरूप से जाननेवाला विपुलमतिमनःपर्यवज्ञान होता है । कितनेक वैक्रिय—लब्धि
के धारी थे । वैक्रियलब्धि अनेक प्रकार की होती है । इस ऋद्धि के धारी मुनिजन
अनेक प्रकार से अपने शरीर की विकुर्वणा कर लेते हैं । इसका विशेष वर्णन स्थानांग
सूत्र के तृतीय ठाणे के प्रथम उद्देशक में किया गया है । कितनेक चारणलब्धि के धारक
थे । चारणलब्धि के धारी मुनिजनों का गमन अतिशयसंपन्न होता है । इस ऋद्धि के
धारक मुनियों का गमनागमन आकाश में होता है । चारणऋद्धिधारी मुनिजन दो
प्रकार के होते हैं—एक विद्याचारण, दूसरे जङ्घाचारण । १४ पूर्वों में विवक्षित श्रुतज्ञान

समस्त वस्तुओ-आहर पदार्थोंने विशेषरूपे ळणुवावाणा विपुलमति-मनःपर्यवज्ञान
थाय छे. डेटलाओक वैक्रियलब्धिना धारक हुता. वैक्रियलब्धि अनेक प्रकारनी थाय
छे. ओ ऋद्धिना धारक मुनिजनो अनेक प्रकारथी पोताना शरीरनी विकुर्वणा करे
छे. आनुं विशेष वर्णन स्थानांग सूत्रना तृतीय ठाणु प्रथम उद्देशकमां करेलुं छे.
डेटलाक चारणलब्धिना धारक हुता. चारणलब्धिना धारक मुनिजनोनुं गमन
अतिशयसंपन्न होय छे. आ ऋद्धिना धारक मुनिओनुं गमनागमन आकाश
भागें थाय छे. चारण-ऋद्धिधारी मुनिजन ओ प्रकारना थाय छे—ओक विद्या-
चारण अने ओळ जङ्घाचारण. १४ पूर्वोमां विवक्षित श्रुतज्ञाननुं अंश विद्या

રતપઃકરણેન દ્વિચત્વારિંશદોષવર્જનપૂર્વકસામિગ્રહાન્તપ્રાન્તતુચ્છરૂક્ષાદિગ્રહણરૂપયા પિણ્ડ—
વિશુદ્ધ્યા ચ વિદ્યાચારણનામકલબ્ધિરુત્પદ્યતે, યે તયા લબ્ધ્યા યુક્તાસ્તે વિદ્યાચારણા ઉચ્યન્તે ।
યદપિ પિણ્ડવિશુદ્ધ્યાદિકં સર્વેષાં સાધૂનામપેક્ષ્યં તથાપ્યત્રાન્તપ્રાન્તાદિસામિગ્રહગ્રહણમાવશ્યક-
મિતિ વિશેષઃ । વિદ્યાચારણાસ્તિર્યગ્ગત્યા પ્રથમેનોત્પાતેન માનુષોત્તરં પર્વતં ગચ્છન્તિ, તતો
દ્વિતીયોત્પાતેનાષ્ટમં નન્દીશ્વરં ગચ્છન્તિ, તતઃ પરં તેષાં ગતિર્નાસ્તિ, નન્દીશ્વરદ્વીપાત્ પ્રતિ-
નિવર્તમાનાઃ એકેનૈવોત્પાતેન સ્વસ્થાનમાયાન્તિ । તે પુનરુર્ધ્વગત્યા મેરું જિગમિષ્વઃ પ્રથમે-

કા અંશ વિદ્યા હૈ । ઇસ વિદ્યા કે અભ્યાસ કે સમય મેં મુનિજન અન્તરરહિત ષષ્ઠ
ષષ્ઠ તપસ્યા કરતે હૈં, ઓર પારણા કે દિન ૪૨ દોષોં કો ટાલકર અન્તપ્રાન્ત એવં
તુચ્છ—રૂક્ષાદિક આહાર ગ્રહણ કરતે હૈં । ઇસપર મી અમિગ્રહ રખતે હૈં । ઇસ તરહ
ઉન્હેં વિદ્યાચારણ નામકી લબ્ધિ પ્રાપ્ત હોતી હૈ । ઇસ લબ્ધિ સે યુક્ત મુનિજન વિદ્યા-
ચારણ કહે ગયે હૈં । યદપિ પિણ્ડાદિક કી વિશુદ્ધિ સમસ્ત સાધુઓં કે લિયે સાપેક્ષ
હૈ, તથાપિ ઇસ ઋદ્ધિ કી પ્રાપ્તિ કે લિયે સામિગ્રહ અન્ત—પ્રાન્તાદિ આહાર કા ગ્રહણ
કરના આવશ્યક હૈ । વિદ્યાચારણ ઋદ્ધિ કે ધારક મુનિજન યદિ તિરછે ગમન કરેં
તો ઇસ ઋદ્ધિ કે પ્રભાવ સે પ્રથમ ઉત્પાત મેં માનુષોત્તર પર્વત તક ચલે જાતે હૈં ।
દ્વિતીય ઉત્પાત સે આઠવેં નંદીશ્વર દ્વીપ તક જાતે હૈં । ઇસસે આગે ઉનકા ગમન
નહીં હોતા હૈ । પુનઃ એક હી ઉત્પાત સે યે નંદીશ્વર દ્વીપ સે વાપિસ અપને સ્થાન-
પર આ જાતે હૈં । યદિ યે ઊપર કી ઓર ગમન કરેં, ઓર મેરુ પર્વત પર જાને
કે ઇચ્છુક હોં તો પ્રથમ ઉત્પાત સે નંદનવન તક જાતે હૈં ઓર દ્વિતીય ઉત્પાત સે

છે. આ વિદ્યાના અભ્યાસના સમયમાં મુનિજન અંતરરહિત છઠ્ઠા તપસ્યા
કરે છે. અને પારણાને દિવસે ૪૨ દોષોથી રહિત અંતપ્રાંત તેમજ તુચ્છ
રૂક્ષ આદિક આહાર ગ્રહણ કરે છે. તે ઉપરાંત પણ અલિગ્રહ રાખે છે.
આવી રીતે તેમને વિદ્યાચારણ નામની લબ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે. આ લબ્ધિવાળા
મુનિજન વિદ્યાચારણ કહેવાય છે. જે કે પિંડાદિકની વિશુદ્ધિ સમસ્ત સાધુઓ
માટે સાપેક્ષ છે, તો પણ આ ઋદ્ધિની પ્રાપ્તિ માટે સાલિગ્રહ અંતપ્રાંતાદિ
આહાર ગ્રહણ કરવો આવશ્યક છે. વિદ્યાચારણ ઋદ્ધિના ધારક મુનિજન જે
તિરછા ગમન કરે તો આ ઋદ્ધિના પ્રભાવથી પ્રથમ ઉત્પાતમાં માનુષોત્તર
પર્વતસુધી આવ્યા જાય છે, બીજા ઉત્પાતમાં આઠમા નંદીશ્વર દ્વીપ સુધી જાય
છે. તેનાથી આગળ તેમનું ગમન થતું નથી. પાછા એક જ ઉત્પાતથી એ
નંદીશ્વર દ્વીપથી પોતાના સ્થાને આવી જાય છે. જે તેઓ ઉપરની તરફ ગમન
કરે અને મેરુપર્વત પર જવાની ઇચ્છા હોય તો પ્રથમ ઉત્પાતથી નંદનવન

નોત્પાતેન નન્દનવનં ગચ્છન્તિ, તતો દ્વિતીયોત્પાતેન પ્ણડકવનમ્, તતઃ પ્રતિનિવર્તમાનાઃ એકેનૈવોત્પાતેન સ્વસ્થાનમાગચ્છન્તિ । પ્ણડકવનાદૂર્ધ્વં તેષાં ગતિર્નાસ્તિ ।

યેઽષ્ટમાષ્ટમનિરન્તરતપઃકરણેનાઽઽત્માનં ભાવયન્તિ તેષાં જઙ્ઘાચારણનામક-લબ્ધિઃ સમુત્પદ્યતે, યે તયા લબ્ધ્યા યુક્તાસ્તે જઙ્ઘાચારણા ઉચ્યન્તે । જઙ્ઘાચારણા-સ્તિર્યગ્ગત્યા એકેનોત્પાતેનેતસ્રયોદશં રુચકવરદ્વીપં ગચ્છન્તિ, તતઃ પરં તેષાં ગતિર્નાસ્તિ, તતઃ પ્રતિનિવર્તમાનાઃ પ્રથમોત્પાતેન નન્દીશ્વરવરં દ્વીપમાગચ્છન્તિ, દ્વિતીયોત્પાતેન સ્વસ્થાનમ્ । તે પુનરૂર્ધ્વગત્યા મેરું જિગમિષવઃ સ્વસ્થાનાદેકોત્પત્યા પ્ણડકવનમધિરોહન્તિ । તતઃ પ્રતિ-નિવર્તમાનાઃ પ્રથમોત્પાતેન નન્દનવનમાગચ્છન્તિ, તતો દ્વિતીયોત્પાતેન સ્વસ્થાનમાયાન્તિ । પ્ણડકવનાદૂર્ધ્વં જઙ્ઘાચારણાનામપિ ગતિર્નાસ્તિ ।

પ્ણડકવન તક ચલે જાતે હૈં । ફિર વહાં સે લૌટકર એક હી છલાંગ મેં અપને સ્થાન પર વાપિસ આજાતે હૈં । પ્ણડકવન સે આગે इनका गमन नहीं है । जंघाचारण नामकी लब्धि उन साधुजनों को प्राप्त होती है, जो निरन्तर-अन्तररहित अष्टम की तपस्या करते हैं । इस लब्धिसंपन्न मुनिजन यदि तिरछे गमन करें तो प्रथम ही उत्पात में तेरहवां द्वीप जो रुचकवर द्वीप है वहां तक पहुँच जाते हैं, इसके आगे नहीं जाते हैं । क्यों कि आगे इनकी गति नहीं होती है । वहां से वापिस होकर ये प्रथम उत्पात में नन्दीश्वर द्वीप आ जाते हैं और द्वितीय उत्पात में अपने स्थान पर आ जाते हैं । यदि ये ऊपर की ओर उड़ें और मेरुपर्वत पर जाने की इच्छावाले हों तो अपने स्थान से एक ही उत्पात में प्ण्डकवन में पहुँच जाते हैं । वहां से जब ये वापिस होते हैं तो प्रथम उत्पात में ये नंदनवन आजाते हैं और फिर द्वितीय उत्पात से अपने स्थान पर । प्ण्डकवन से आगे जंघाचारणवालों की भी गति नहीं है ।

સુધી જાય છે, અને બીજા ઉત્પાતથી પંડકવન સુધી ચાલ્યા જાય છે. પછી ત્યાંથી પાછા આવતાં એક જ છલાંગમાં પોતાના સ્થાનપર પાછા આવી જાય છે. પંડકવનથી આગળ તેમનું ગમન નથી.

જંઘાચારણ નામની લબ્ધિ એ સાધુઓને પ્રાપ્ત થાય છે કે જે નિરંતર-સતત અષ્ટમ-અષ્ટમની તપસ્યા કરે છે. આ લબ્ધિવાળા મુનિજનો જે તિરછા ગમન કરે તો પ્રથમ જ ઉત્પાતમાં તેરમો દ્વીપ જે રુચકવર નામે દ્વીપ છે, ત્યાં સુધી પહોંચી જાય છે, તેનાથી આગળ નથી જતા; કેમ કે આગળ તેમની ગતિ થતી નથી. ત્યાંથી પાછા વળતાં તેઓ પ્રથમ ઉત્પાતમાં નંદી-શ્વરદ્વીપ આવી જાય છે, અને બીજા ઉત્પાતમાં પોતાના સ્થાનપર આવી જાય

ચારણલબ્ધિસંપન્નો હિ સાધુઃ સ્વલુ ભગવદ્વર્ણિતગણિતાનુયોગં વિજ્ઞાય, સ્વેન સ્વેન ગમ્યં દ્વીપવનાદિકં વિલોકયિતુમૌત્સુક્યવશાત્ સ્વસ્વલબ્ધિ સ્ફોટયિત્વા તત્ર તત્ર જિગમિષતિ । ગત્વા ચ તત્ર તત્ર યથાભગવદ્વર્ણિતં દ્વીપવનાદિકં વિલોક્ય સંજાતાહ્લાદ-શ્ચૈત્યાનિ વન્દતે, અર્થાત્ ભગવતોઽનન્તાનિ જ્ઞાનાનિ સ્તૌતિ, સ્તુત્વા પ્રતિનિવર્તતે, પ્રતિ-ત્તિવૃત્ય ઇહ સ્વસ્થાનમાગચ્છતિ, આગત્ય ઇહ ચૈત્યાનિ વન્દતે—અર્થાત્—જ્ઞાનાનિ સ્તૌતિ । જ્ઞાનાનન્ત્યાદ્ બહુવચનમ્ । સર્વમેતદ્ ભગવતીસૂત્રેઽભિહિતમ્ । અધિકજિજ્ઞાસુમિસ્તત્ર દ્રષ્ટ-વ્યમ્ । ‘ વિજ્ઞાહરા ’ વિદ્યાધરાઃ—રોહિણીપ્રજ્ઞપ્ત્યાદિવિવિધવિદ્યાવિશેષધારિણઃ । ‘ આગા-

ચારણલબ્ધિસંપન્ન સાધુજન પ્રમુદ્ધારા વર્ણિત ગણિતાનુયોગ કો જાન કરકે અપનેર દ્વારા ગમ્ય દ્વીપવનાદિક કો દેખને કે લિયે ઉત્કંઠા કે વશવર્તી હો, અપનીર લબ્ધિ કો પ્રગટ કરતે હૈં ઓર વહાંર જાતે હૈં । ભગવાન્ ને દ્વીપવનાદિક કા સ્વરૂપ જૈસા કહા હૈં વૈસા વે વહાં ઉસે દેખતે હૈં ઓર અપાર આનંદ સે પુલકિત હોતે હૈં । પ્રમુ કે અપાર જ્ઞાન કી અતિશય સ્તુતિ કરતે હૈં । ફિર વહાં સે વાપિસ અપની જગહ પર આજાતે હૈં । આકર યહાં પર મી ચૈત્યોં કી અર્થાત્ પ્રમુ કે જ્ઞાન કી સ્તુતિ કરતે હૈં । યહ સબ પ્રકરણ ભગવતીસૂત્ર મેં કહા હુઆ હૈં । જિન્હેં અધિક જાનને કી ઇચ્છા હો વહ વહાં સે દેખ લેવેં । કિતનેક મુનિ રોહિણી—પ્રજ્ઞપ્તિ—આદિ વિવિધ પ્રકાર કી વિદ્યાઓં કે ધારણ કરનેવાલે

છે. જો તેઓ ઉપરની તરફ ઉડે અને મેરૂ પર્વત પર જવાની ઇચ્છા કરે તો પોતાના સ્થાનથી એક જ ઉત્પાતમાં પંડકવનમાં પહોંચી જાય છે. ત્યાંથી જ્યારે તેઓ પાછા વળે ત્યારે પ્રથમ ઉત્પાતમાં નંદનવન આવી જાય છે, અને પછી બીજા ઉત્પાતમાં પોતાના સ્થાન પર આવે છે. પંડકવનથી આગળ જંઘાચારણવાલાની પણ ગતિ હોતી નથી.

ચારણલબ્ધિસંપન્ન સાધુજન પ્રમુદ્ધે વર્ણવેલા ગણિતાનુયોગને જાણીને પોતપોતાથી ગમ્ય દ્વીપવન આદિકને જોવા માટે ઉત્કંઠાને વશવર્તી થઈને પોતપોતાની લબ્ધિને પ્રગટ કરે છે, અને ત્યાં ત્યાં જાય છે. ભગવાને દ્વીપવન આદિકનાં સ્વરૂપ જેવાં કહેલાં છે તેવાં જ તેઓ ત્યાં જુએ છે, અને અપાર આનંદથી પુલકિત થાય છે. પ્રભુના અપાર જ્ઞાનની અતિશય સ્તુતિ કરે છે. પછી ત્યાંથી પાછા પોતાના સ્થાને આવી જાય છે. આવીને અહીં પણ ચૈત્યની અર્થાત્ પ્રભુના જ્ઞાનની સ્તુતિ કરે છે. કેટલાએક મુનિ રોહિણી પ્રજ્ઞપ્તિ આદિ વિવિધ પ્રકારની વિદ્યાઓના ધારણ કરવાવાળા હતા. કેટલાએક મુનિજન

हरा आगासाइवाई,अप्पेगइया कणगावलितवोकम्मं पडिवण्णा,एवं
एगावल्लिं खुड्ढागसीहनिक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा,अप्पेगइया

साइवाई ' आकाशातिपातिनः—आकाशं—व्योम अतिपतन्ति—अतिक्रामन्ति—आकाशगामि-
विद्याप्रभावात्—ये ते तथा । 'अप्पेगइया कणगावलितवोकम्मं पडिवण्णा '
अप्येकके कनकावलीतपःकर्म प्रतिपन्नाः, ' एवं ' एवम्—अनेन प्रकारेण ' एगा-
वल्लिं ' एकावलीं प्रतिपन्नाः, एकावलीनामकतपःकर्मण आकृतिरन्यत्रोक्ता—इति न सा
विव्रियते । ' खुड्ढागसीहनिक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा ' क्षुल्लक—सिंह—निष्क्री-
डितम्—क्षुल्लकं—लघु, सिंहनिष्क्रीडितं—सिंहगमनं तदिव यत्तपस्तत् सिंहनीष्क्रीडितम्, एत-
त्तपो वक्ष्यमाणमहासिंहनिष्क्रीडिताऽपेक्षया क्षुल्लकं, सिंहगमनञ्च अतिक्रान्तदेशाऽवलोक-
नतो भवति, एवमतिक्रान्ततपःसेवनेन अपूर्वतपसोऽनुष्ठानं यस्मिन् तत् सिंहनिष्क्री-

थे । कितनेक ऐसे मुनिजन थे जो आकाशगामी थे । इनके पास आकाशगामिनी विद्या थी ।
उसके ही प्रभाव से ये आकाशमें उड़ते थे । (अप्पेगइया कणगावलितवोकम्मं पडिवण्णा
एवं एगावल्लिं खुड्ढागसीहनिक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा) कितनेक ऐसे मुनिजन थे
जो कनकावली तप को तपते थे, और कितनेक मुनिजन एकावली तप तपते थे ।
कितनेक ऐसे थे जो लघुसिंहनिष्क्रीडित तप की आराधना करते थे । इस तप के
साथ “क्षुल्लक” पद का प्रयोग हुआ है सो महासिंहनिष्क्रीडित तपकी अपेक्षा
समझना चाहिये । जिस प्रकार सिंह अपने द्वारा अतिक्रान्त देश को अवलोकन
करते हुए आगे २ गमन करता है । उसी प्रकार इस तप में भी अतिक्रान्त तप
के सेवन की अपेक्षा रखते हुए अपूर्व २ तपों का अनुष्ठान किया जाता है ।

એવા હતાકે જે આકાશગામી હતા. તેમની પાસે આકાશગામિની
વિદ્યા હતી. તેનાજ પ્રભાવથી તેઓ આકાશમાં ઉડતા હતા. (અપ્પેગઇયા
કણગાવલિતવોકમ્મં પડિવણ્ણા, एवं एगावल्लिं खुड्ढागसीहनिक्कीलियं तवोकम्मं पडि-
वण्णा) કેટલાએક એવા મુનિજનો હતા કે જે કનકાવલી તપ તપતા હતા,
અને કેટલાક મુનિજન એકાવલી તપ તપતા હતા. કેટલાક એવા હતા
જે લઘુસિંહ-નિષ્ક્રીડિત તપની આરાધના કરતા હતા. આ તપની સાથે
“ ક્ષુલ્લક ” પદનો પ્રયોગ થયો છે, તે મહાસિંહનિષ્ક્રીડિત તપની અપેક્ષાએ
સમજવો જોઈએ. જે પ્રકારે સિંહ પોતાથી અતિક્રાંત દેશને જોતો થકો
આગળ આગળ ગમન કરે છે તેજ પ્રકારે આ તપમાં પણ અતિક્રાંત તપના
સેવનની અપેક્ષા રાખતાં અપૂર્વ અપૂર્વ તપોનું અનુષ્ઠાન કરવામાં આવે છે.

મહાલયં સીહનિક્કીલિયં તવોકમ્મં પડિવણ્ણા, મહપડિમં મહામ-
હપડિમં સન્વઓમહપડિમં આયંબિલવદ્ધમાણં તવોકમ્મં પડિવ-
ણ્ણા, માસિયં ભિક્ખુપડિમં, એવં દોમાસિયં પડિમં, તિમાસિયં

હિતં તપઃકર્મ પ્રતિપન્નાઃ; ‘અપ્પેગઇયા મહાલયં સીહનીકીલિયં તવોકમ્મં પડિ-
વણ્ણા’ અપ્પેકકે મહાસિંહનિષ્ક્રીહિતં તપઃકર્મ પ્રતિપન્નાઃ, ‘મહપડિમં’ મદ્ર-
પ્રતિમાં ‘મહામહપડિમં’ મહામદ્રપ્રતિમાં, ‘સન્વઓમહપડિમં’ સર્વતોમદ્રપ્રતિમાં
પ્રતિપન્નાઃ, ‘આયંબિલવદ્ધમાણં તવોકમ્મં પડિવણ્ણા’ આચામામ્લવદ્ધમાનકં તપઃ-
કર્મ પ્રતિપન્નાઃ । ‘માસિયં ભિક્ખુપડિમં’ માસિકીં ભિક્ષુપ્રતિમાં—માસપરિમાણા
માસિકી તાં ભિક્ષુપ્રતિમામ્—અભિગ્રહરૂપામ્, તત્ર હિ માસં યાવદેકા દત્તિઃ—અવિચ્છિન્ન-
દાનમ્, અર્થાત્—અવિચ્છિન્નધારયા કસ્થાલ્યાદિમ્યઃ યદ્ ભક્તં પાનં ચ પતતિ સા

(અપ્પેગઇયા મહાલયં સીહનીકીલિયં તવોકમ્મં પડિવણ્ણા) કિતનેક મુનિજન મહાસિંહ-
નિષ્ક્રીહિત તપ કરતે થે । (મહપડિમં મહામહપડિમં સન્વઓમહપડિમં આયંબિલ-
વદ્ધમાણં તવોકમ્મં પડિવણ્ણા) કિતનેક મુનિ એસે થે જો મદ્રપ્રતિમા, મહામદ્ર-
પ્રતિમા એવં સર્વતોમદ્રપ્રતિમા—રૂપ તપ કા આગધન કરતે થે । કિતનેક એસે મી થે
જો આયંબિલવદ્ધમાન તપ કો કરતે થે । इनका विस्तृत वर्णन अन्य शास्त्रों में हैं ।
(માસિયં ભિક્ખુપડિમં, એવં દોમાસિયં પડિમં તિમાસિયં પડિમં જાવ
સત્તમાસિયં ભિક્ખુપડિમં પડિવણ્ણા) કિતનેક મુનિરાજ એસે થે જો એકમાસિક
ભિક્ષુપ્રતિમા કે ધારી થે । इस प्रतिमा में एक महिने तक एक दत्ति होती है ।
ભિક્ષાપાત્ર મેં અવિચ્છિન્નધારાપૂર્વક જો ભિક્ષા દાતા કે હાથ અથવા થાલી આદિસે ગિરતી

(અપ્પેગઇયા મહાલયં સીહનીકીલિયં તવોકમ્મં પડિવણ્ણા) કેટલાક મુનિજન
મહાસિંહનિષ્ક્રીહિત તપ કરતા હતા. (મહપડિમં મહામહપડિમં સન્વઓમહ-
પડિમં આયંબિલવદ્ધમાણં તવોકમ્મં પડિવણ્ણા) કેટલાએક મુનિઓ એવા હતા
કે જેઓ ભદ્રપ્રતિમા મહાભદ્રપ્રતિમા તેમજ સર્વતોભદ્રપ્રતિમા રૂપ તપનું
આરાધન કરતા હતા. કેટલાક એવા પણ હતા જે આયંબિલ-વદ્ધમાન તપ
કરતા હતા. આનું વિસ્તારપૂર્વક વર્ણન અન્ય શાસ્ત્રોમાં છે. (માસિયં ભિક્ખુ-
પડિમં, એવં દોમાસિયં પડિમં તિમાસિયં પડિમં જાવ સત્તમાસિયં ભિક્ખુપડિમં પડિ-
વણ્ણા) કેટલાએક મુનિરાજ એવા હતા કે જે એકમાસિક ભિક્ષુપ્રતિમાના
ધારક હતા. આ પ્રતિમામાં એક મહીના સુધી એક દત્તિ થાય છે. ભિક્ષા-

પડિમં જાવ સત્તમાસિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા, પઢમં સત્તરાઈં-
દિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા જાવ તચ્ચં સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુ-

દત્તિઃ, એવં દ્વિતીયાઘાઃ સપ્તમ્યન્તા એકૈકદત્તિવૃદ્ધિયુક્તાઃ । એવં ‘દોમાસિયં’
પડિમં ’ દ્વૈમાસિકીં પ્રતિમામ્ પ્રતિપન્નાઃ । ‘તિમાસિયં પડિમં ’ ત્રૈમાસિકીં
પ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ । ‘જાવ સત્તમાસિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા ’ યાવત્
સપ્તમાસિકીં ભિક્ષુપ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ । ‘પઢમં સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા
જાવ તચ્ચં સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા ’ પ્રથમાં સપ્તરાત્રિન્દિવાં ભિક્ષુ-
પ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ—યાવત્તૃતીયાં સપ્તરાત્રિન્દિવાં ભિક્ષુપ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ । તત્ર સપ્તરાત્રિન્દિવા-

હૈ ઉસકા નામ દત્તિ હૈ । ઇસ પ્રકાર ૧ મહીને તક આહાર કી એક દત્તિ ઔર
પાની કી એક દત્તિ ગ્રહણ કી જાતી હૈ । ઇસી પ્રકાર દોમાસ પ્રમાણવાલી—ભિક્ષુપ્રતિમા
કો, ત્રીન માસ કી પ્રમાણવાલી ભિક્ષુપ્રતિમા કો યાવત્ સાતમાસ પ્રમાણવાલી ભિક્ષુપ્રતિમા
કો પાલન કરનેવાલે મુનિજન થે । દ્વિમાસિક ભિક્ષુપ્રતિમામેં ૨ દત્તિયાં આહાર કા ૨
દત્તિયાં પાની કી લી જાતી હૈ । ઇસ ક્રમિક વૃદ્ધિ સે સાતમાસ—પ્રમાણવાલી સપ્ત-
ભિક્ષુપ્રતિમા મેં ૭ દત્તિયાં આહાર કી ઔર સાત દત્તિયાં પાની કી લી જાતી હૈ ।
(પઢમં સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા જાવ તચ્ચં સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુપડિમં
પડિવણ્ણા) ઔર પહલી સાત દિનરાત કી ભિક્ષુપ્રતિમા કે, દૂસરી સાત દિનરાત કી
ભિક્ષુપ્રતિમા કે, તથા ત્રીસરી સાત દિનરાત કી ભિક્ષુપ્રતિમા કે ધારી થે । ઇન ત્રીનો

પાત્રમાં અવિચ્છિન્ન—ધારાપૂર્વક જે ભિક્ષા દાતાના હાથે અથવા થાળીથી પડે
છે તેનું નામ દત્તિ છે. આ પ્રકારે એક મહિના સુધી આહારની એક દત્તિ
અને પાણીની એક દત્તિ ગ્રહણ કરાય છે. એ પ્રકારે જે માસના પ્રમાણ-
વાળી ભિક્ષુ—પ્રતિમાનું, ત્રણ માસ પ્રમાણવાળી ભિક્ષુપ્રતિમાનું, યાવત્ સાત
માસ પ્રમાણ વાળી ભિક્ષુપ્રતિમાનું પાલન કરવાવાળા મુનિજન હતા.
દ્વિમાસિકભિક્ષુપ્રતિમામાં ૨ દત્તિ આહારની, ૨ દત્તિ પાણીની દેવામાં આવે
છે. આ પ્રકારે ક્રમિક વૃદ્ધિથી સાત માસના પ્રમાણવાળી સપ્તમ ભિક્ષુપ્રતિ-
મામાં ૭ દત્તિ આહારની અને ૭ દત્તિ પાણીની દેવામાં આવે છે. (પઢમં
સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા જાવ તચ્ચં સત્તરાઈંદિયં ભિક્ષુપડિમં પડિવણ્ણા)
અને પહેલી સાત દિવસ રાતની ભિક્ષુપ્રતિમાના, બીજી સાત દિવસ—રાતની
ભિક્ષુપ્રતિમાના તથા ત્રીજી સાત દિવસરાતની ભિક્ષુપ્રતિમાનાં ધારકો હતા.
આ ત્રણેય સાત દિવસ—રાતની ભિક્ષુપ્રતિમાઓની વિધિ આ પ્રકારે છે:—

પડિમં પડિવળ્ણા, અહોરાઈંદિયં મિક્ષુપડિમં પડિવળ્ણા, એક-

સપ્ત રાત્રિન્દિવાનિ=અહોરાત્રા યસ્યાં સા સપ્તરાત્રિન્દિવા-સપ્તાહોરાત્રપ્રમાણા । પ્રથમાયાં ચ ચતુર્થચતુર્થેન પાનકાઽઽહારવિરહિત ઉત્તાનકો વા પાર્શ્વશાયી વા નિષઘોપગતો વા ગ્રામાદિભ્યો બહિર્વિહરતિ । દ્વિતીયા સપ્તરાત્રિન્દિવાઽપ્યેવંવિધૈવ, નવરમ્-દળ્ણડાઽયતો વા લગ્ણડશાયી વા ઉત્કુટુકો વા વિહરતિ । એવં તૃતીયા સપ્તરાત્રિન્દિવાઽપિ, નવરં વીરાઽસનિકો વા ગોદોહિકસ્થિતો વા આમ્રકુબ્જકો વાઽસ્તે । ‘ અહોરાઈંદિયં મિક્ષુપડિમં

સાત દિનરાત કી મિક્ષુપ્રતિમાઓં કી વિધિ ઇસ પ્રકાર હૈ-પ્રથમ સપ્તરાત્રિન્દિવ મિક્ષુપ્રતિમા મેં-અષ્ટમી મિક્ષુપ્રતિમા મેં-એકાન્તર ચઽવિહાર ઉપવાસ કરતે હુએ ગ્રામ સે બાહર કાયોત્સર્ગ કરે, ઓર ત્રીન આસન કરે । ઁનકે નામ (૧) ઉત્તાનાસન=ચિત્ત હોકર સોના (૨) એકપાર્શ્વાસન=એક કરવટ સે સોના, ઓર (૩) નિષઘાસન-પર્યઙ્કાસન સે રહના । ઢૂસરી ઓર ત્રીસરી સાત દિનરાત કી મિક્ષુપ્રતિમાયેં-નવમી તથા ઢસમી મિક્ષુપ્રતિમાયેં મી ઇસી પ્રકાર કી હૈં । કેવલ આસન કે મેદ હૈં । નૌમી કે ત્રીન આસન-દળ્ણડાસન, લગ્ણડાસન, ઉત્કુટુકાસન । (૧) દળ્ણડાસન=દળ્ણડ કે સમાન સીધે શયન કરના । (૨) લગ્ણડાસન=ટેડે કાઠ કે જૈસે શયન કરના અર્થાત્ મસ્તક ઓર ઁંડી કો પૃથ્વી પર સટા કર પીઠ કો અધર રલ્લ કર સોના, (૩) ઉત્કુટુકાસન=પૈરોં કે બલ બૈઠના । ઢસમી કે ત્રીન આસન-વીરાસન, ગોદોહિકાસન, આમ્રકુબ્જકાસન । (૧) વીરાસન=પૃથ્વી પર પૈર રલ્લ કર સિંહા-

પ્રથમ સપ્તરાત્રિન્દિવ મિક્ષુપ્રતિમામાં-અષ્ટમી મિક્ષુપ્રતિમામાં-એકાન્તર ચૌવિહાર ઉપવાસ કરતાં ગામથી બહાર જઈ કાયોત્સર્ગ કરવો. અને ત્રણ આસન કરવા. તેમનાં નામ-(૧) ઉત્તાનાસન-ચિત્તા થઈને સુવું. (૨) એકપાર્શ્વાસન-એક પડખે રહી સુવું, અને (૩) નિષઘાસન-પર્યંકાસનથી રહેવું. બીજી અને ત્રીજી સાત દિવસ-રાતની મિક્ષુપ્રતિમાઓ-નૌમી અને દશમી મિક્ષુપ્રતિમાઓ-પણ આ પ્રકારની છે. કેવલ આસનમાં ફેર છે. નવમી પ્રતિમાના ત્રણ આસન-દંડાસન, લગંડાસન, ઉત્કુટુકાસન. (૧) દંડાસન-દંડની પેઠે સીધા સુઈ જવું, (૨) લગંડાસન-વાંકા લાકડાની પેઠે શયન કરવું અર્થાત્ માથું અને એડી (પાની) ને પૃથ્વીપર લગાડી પીઠને અધર રાખી સુવું, (૩) ઉત્કુટુકાસન-પગના બલથી (ઉભડક પગે) બેસવું.

દશમી પ્રતિમાના ત્રણ આસન-વીરાસન, ગોદોહિકાસન, આમ્રકુબ્જકાસન. (૧) વીરાસન-પૃથ્વીપર પગ રાખીને સિંહાસન પર બેઠેલાની પેઠે

राइंदियं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा, सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं,

पडिवण्णा ' अहोरात्रिन्दिवां भिक्षुप्रतिमां प्रतिपन्नाः—आहोरात्रिकीमित्यर्थः । अत्र—रात्रि-
न्दिवशब्दो रात्रिपरो बोध्यः । अस्याञ्च षष्ठोपवासिको ग्रामादिभ्यो बहिः प्रलम्बभुज-
स्तिष्ठति । ' एकराइंदियं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा ' एकरात्रिन्दिवाम्=एकरात्रप्रमाणां
भिक्षुप्रतिमां प्रतिपन्नाः; अत्रापि ' रात्रिन्दिव ' शब्दो रात्रिपरो बोध्यः । अस्यां चाऽष्टम-
भक्तिको ग्रामाद् बहिरीषदवनतगात्रोऽनिमिषनयनः शुष्कपुद्गलनिबद्धदृष्टिर्जिनमुद्रास्थापि-

सन पर बैठे हुए के समान घुटने अलग २ रखकर विना सहारे स्थिर रहना, (२)
गोदोहिकासन—गोदोहिक के समान बैठना अर्थात् जैसे गाय दूहने वाला जब दूध दूहता
है तब वह अपने दोनों पैरों के अग्रभाग के सहारे बैठता है, उसी प्रकार बैठना ।
(३) आम्रकुब्जकासन=आम्रफल के समान कूबड़े होकर स्थिर रहना । आठवीं नौमी
दशमी प्रतिमा में तीन २ आसन बताये हैं, उन तीन तीन में से किसी एक आसन से
रहे । तथा (अहोराइंदियं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा) ग्यारहवीं अहोरात्रिक भिक्षुप्रतिमा
के धारक थे । इसमें चउविहार बेला किया जाता है, और गाम के बाहर आठ प्रहरों
तक काउसग किया जाता है । (एकराइंदियं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा) बारहवीं
एकरात्रिक भिक्षुप्रतिमा के धारक थे । इसमें चउविहार तेले के दिन गाम से बाहर
श्मशान भूमि में जाकर किसी एक पुद्गल पर दृष्टि स्थिर करके चार प्रहरों तक
कायोत्सर्ग किया जाता है । इन सभी प्रतिमाओं—अभिग्रहविशेषों में सभी का

ગોઠણો જુદા જુદા રાખીને ટેકો લીધા વિના સ્થિર રહેવું, (૨) ગોદોહિકાસન-
ગોદોહિકની પેઠે બેસવું અર્થાત્ જેમ ગાય દોહવાવાળો જ્યારે દૂધ દોહે છે
ત્યારે તે પોતાના બન્ને પગના અગ્રભાગને ટેકે બેસે છે, તેવી જ રીતે બેસવું (૩).
આમ્રકુબ્જકાસન—આમ્રફલની પેઠે કૂબડા થઈને સ્થિર રહેવું. આઠમી નોમી
અને દશમી પ્રતિમામાં ત્રણ ત્રણ આસન બતાવ્યાં છે. તે ત્રણ ત્રણમાંથી કેઈ
પણ એક આસનથી રહેવું. તથા (અહોરાઈંદિયં ભિક્ખુપડિમં પડિવણ્ણા) અહોરાત્ર-
દિવસરાતની અગ્યારમી ભિક્ષુપ્રતિમાના ધારકો હતા. આમાં ચૌવિહાર
છઠ કરાય છે, અને ગામની બહાર આઠ પહોરનો કાઉસગ કરાય છે. (એકરાઈંદિયં
ભિક્ખુપડિમં પડિવણ્ણા) બારમી એકરાત્રિક ભિક્ષુ પ્રતિમાના ધારક હતા.
આમાં ચૌવિહાર તથા અઠ્ઠમને દિવસે ગામથી બહાર શ્મશાન ભૂમિમાં જઈને
એક પુદ્ગલપર દૃષ્ટિ સ્થિર કરીને કાયોત્સર્ગ કરાય છે. આ બધી પ્રતિમાઓમાં-

તપાદઃ પ્રલમ્બિતમુજસ્તિઘ્ઠતિ । એતાસુ પ્રતિમાસુ ન સર્વેષામધિકારઃ, કિન્તુ વિશિષ્ટસંહનનવતામેવ । આહ ચ, ‘પડિવજ્જઈ એયાઓ, સંવયગધિઙ્ગુઓ મહાસત્તો । પડિમાઝ ભાવિયપ્પા સમ્મં ગુરુણા અણુન્નાઓ ॥ ૧ ॥’ इति, ‘सत्तसत्तमियं भिक्षुपडिमं’ सप्तसप्तमिकां भिक्षु-प्रतिमां—सप्त सत्तमानि दिनानि यस्यां सा सप्तसप्तमिका, इयं च सप्तभिर्दिनानां सप्तकैर्मवति अर्थात्—सप्तभिः सप्ताऽहैरिति । तत्र च प्रथमदिने एका दत्तिर्भक्तस्य, एकैव दत्तिः पानकस्य, एवं द्वितीयादिषु दिनेषु क्रमेणैकैकदत्तिवृद्ध्या सप्तमदिने सप्त दत्तयः । एवम्

અધિકાર નહીં હૈ; કિન્તુ વિશિષ્ટ સંહનનવાલે હો ઇન પ્રતિમાઓં કા આરાધન કર સકતે હૈં । કહા મી હૈ—‘પડિવજ્જઈ એયાઓ, સંવયગ-ધિઙ્ગુઓ મહાસત્તો । પડિમાઝ ભાવિયપ્પા, સમ્મં ગુરુણા અણુન્નાઓ ॥’ છાયા—પ્રતિપદ્યતે એતાઃ સંહનન-ધૃતિ-યુતો મહાસત્ત્વઃ । પ્રતિમા ભાવિતાત્મા, સમ્યગ્ગુરુણા અનુજ્ઞાતઃ ॥ અર્થાત્—મહાસત્ત્વશાલી, સંહનન ઓર ધૈર્ય સે યુક્ત ભાવિતાત્મા મુનિજન હી ગુરુ સે સમ્યક્ અનુજ્ઞાત હોકર ઇન પ્રતિમાઓં કો સ્વીકાર કરતે હૈં । તથા (સત્તસત્તમિયં ભિક્ષુપડિમં) સાત હૈં સાતવૈં દિન જિસમૈં એસી ભિક્ષુપ્રતિમા કૈ અર્થાત્ ડૂનપચાસ દિન કો ભિક્ષુપ્રતિમા કૈ ધારક થે । યહ પ્રતિમા સાતસપ્તાહોં મૈં કી જાતી હૈ । ઇસમૈં પ્રથમ સપ્તાહ કૈ પ્રથમદિન મૈં એક દત્તિ આહાર કી ઓર એક દત્તિ પાની કી લી જાતી હૈ, દ્વિતીય-દિન મૈં દો દત્તિયોં આહાર કી ઓર દો દત્તિયોં પાની કી લી જાતી હૈં । ઇસી તરહ પ્રતિદિન એક એક દત્તિ કો વૃદ્ધિ સે સાતવૈં દિન સાત દત્તિયોં આહાર કી ઓર

અભિગ્રહ વિશેષોમાં બધાનો અધિકાર નથી; પરંતુ વિશિષ્ટસંહનનવાદા જ આ બધી પ્રતિમાઓનું આરાધન કરી શકે છે. કહ્યું પણ છે—

“ પડિવજ્જઈ એયાઓ, સંવયગ-ધિઙ્ગુઓ મહાસત્તો ।

પડિમાઝ ભાવિયપ્પા, સમ્મં ગુરુણા અણુન્નાઓ ” ॥

છાયા—પ્રતિપદ્યતે એતાઃ સંહનન-ધૃતિયુતો મહાસત્ત્વઃ ।

પ્રતિમા ભાવિતાત્મા, સમ્યગ્ગુરુણા અનુજ્ઞાતઃ ॥

અર્થાત્ મહાસત્ત્વશાલી સંહનન અને ધૈર્યથી યુક્ત ભાવિતાત્મા મુનિજન સમ્યક્ અનુજ્ઞાત થઈને અર્થાત્ ગુરુની આજ્ઞા લઈને, પ્રતિમાઓનો સ્વીકાર કરે છે. તથા (સત્તસત્તમિયં ભિક્ષુપડિમં) સાતછે સાતમે દિવસ જેમાં એવી ભિક્ષુપ્રતિમાના અર્થાત્ ઓગણપચાસ દિવસની ભિક્ષુપ્રતિમાના ધારક હતા. આ પ્રતિમા સાત સપ્તાહોમાં કરાય છે. તેમાં પ્રથમ સપ્તાહના પ્રથમ દિવસે એક દત્તિ આહારની અને એક દત્તિ પાણીની દેવાય છે. બીજે

અટ્ટઅટ્ટમિયં ભિક્ષુપટ્ટિમં, ણવણવમિયં ભિક્ષુપટ્ટિમં, દસદસ-

‘અટ્ટઅટ્ટમિયં ‘ભિક્ષુપટ્ટિમં’ અષ્ટાષ્ટમિકાં ભિક્ષુપ્રતિમામ્, ‘ણવણવમિયં’ નવનવમિકાં ભિક્ષુપ્રતિમામ્, ‘દસદસમિયં’ દશદશમિકાં ભિક્ષુપ્રતિમામ્, નવરમ્-દત્તિવૃદ્ધિ:

સાત દત્તિયાં પાની કી લી જાતી હૈં । ઇસી પ્રકાર દૂસરે સપ્તાહ સે લેકર સાતવેં સપ્તાહ તક કી દત્તિયાં કે વિષય મેં ભી સમજના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર આહાર ઓર પાની કી સબ દત્તિયાં ૩૯૨ હોતી હૈં । તથા (અટ્ટઅટ્ટમિયં ભિક્ષુપટ્ટિમં) અષ્ટાષ્ટમિક ભિક્ષુપ્રતિમા કે ધારક થે । યહ ભિક્ષુપ્રતિમા આઠ અષ્ટાહોં મેં અર્થાત્ ચૌસઠ દિનોં મેં કી જાતી હૈં । ઇસમેં પ્રથમ અષ્ટાહ કે પ્રથમ દિન મેં એકદત્તિ આહાર કી ઓર એક દત્તિ પાની કી લી જાતી હૈં । પ્રત્યેક દિન મેં એક એક દત્તિ કી વૃદ્ધિ હોને કે કારણ આઠવેં દિન મેં આઠ દત્તિયાં આહાર કી ઓર આઠ દત્તિયાં પાની કી લી જાતી હૈં । ઇસી પ્રકાર અવશિષ્ટ સાતોં અષ્ટાહોં કે બારે મેં ભી સમજના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર આહાર ઓર પાની કી કુલ દત્તિયાં ૫૭૬ હોતી હૈં । તથા (નવનવમિયં ભિક્ષુપટ્ટિમં) નવનવમિકા ભિક્ષુપ્રતિમા કે ધારક થે । યહ ભિક્ષુપ્રતિમા નૌ નવાહોં મેં, અર્થાત્ ૮૧ દિનોં મેં પૂરી હોતી હૈં । પ્રત્યેક નૌ દિનોં કે અન્તિમ દિન મેં એક એક દત્તિ કી વૃદ્ધિ હોને સે નૌ દત્તિયાં આહાર કી ઓર નૌ દત્તિયાં પાની કી હોતી હૈં ।

દિવસે ઝે દત્તિ આહારની અને ઝે દત્તિ પાણીની દેવાય છે. એવી રીતે પ્રતિદિન એક એક દત્તિના વધારાથી સાતમે દિવસે ૭ દત્તિ આહારની અને ૭ દત્તિ પાણીની દેવાય છે. આ પ્રકારે બીજા સપ્તાહથી લઈને ૭ મા સપ્તાહ સુધીની દત્તિઓના વિષયમાં પણ સમજી દેવું જોઈએ. આ પ્રકારે આહાર અને પાણીની બધી દત્તિઓ ૩૬૨ થાય છે. તથા (અટ્ટઅટ્ટમિયં ભિક્ષુપટ્ટિમં) અષ્ટાષ્ટમિક ભિક્ષુપ્રતિમાના ધારકો હતા. આ ભિક્ષુપ્રતિમા આઠ અષ્ટાહોમાં અર્થાત્ ચૌસઠ દિવસોમાં કરાય છે. તેમાં પ્રથમ અષ્ટાહના (અઠવાડિયાના) પ્રથમ દિવસે એક દત્તિ આહારની અને એક દત્તિ પાણીની દેવાય છે. પ્રત્યેક દિવસે એક એક દત્તિનો વધારો થવાના કારણે આઠમે દિવસે આઠ દત્તિઓ આહારની અને આઠ દત્તિઓ પાણીની દેવાય છે. એજ પ્રકારે બાકીના ૭ અષ્ટાહો (અઠવાડિયા) ના બારામાં પણ સમજવું જોઈએ. એવી રીતે આહાર અને પાણીની કુલ દત્તિઓ ૫૭૬ થાય છે. તથા (નવનવમિયં ભિક્ષુપટ્ટિમં) નવનવમિકા ભિક્ષુપ્રતિમાના ધારકો હતા. આ ભિક્ષુપ્રતિમા નવનવાહોમાં અર્થાત્ ૮૧ દિવસોમાં પૂરી થાય છે. પ્રત્યેક નવ

મિયં ભિક્ષુપડિમં, સુહ્રિયં મોયપડિમં પડિવણ્ણા, મહલ્લિયં મોય-
પડિમં પડિવણ્ણા, જવમજ્ઞં ચંદપડિમં પડિવણ્ણા, વડ્ડર-

સંખ્યાક્રમેણ કાર્યા । કેચિત્ ‘ સુહ્રિયં મોયપડિમં પડિવણ્ણા ’ ક્ષુલ્લિકાં મોક-
પ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ, અસ્યાઃ ક્ષુલ્લકત્વં મહત્યપેક્ષયા વોધ્યમ્ । તથા ‘ મહલ્લિયં મોય-
પડિમં પડિવણ્ણા ’ મહતીં મોકપ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ । અનયોઃ પ્રતિમયોર્વ્યાખ્યા ગ્રન્થા-
ન્તરે વિલોકનીયા । ‘ જવમજ્ઞં ચંદપડિમં પડિવણ્ણા ’ યવમધ્યાં ચન્દ્રપ્રતિમાં પ્રતિ-
પન્નાઃ—યવસ્યેવ મધ્યં યસ્યાં સા યવમધ્યા, ચન્દ્ર ઇવ કલાવૃદ્ધિહાનિમ્બ્યાં યા પ્રતિમા
સા ચન્દ્રપ્રતિમા, તથા હિ શુક્લપ્રતિપદિ—એકં કવલમ્ અમ્યવહત્ય પ્રતિદિનમેકૈક-

इस प्रकार आहार और पानी की सब दत्तियाँ ८१० होती हैं । तथा (दसदसमियं
भिक्षुपडिमं) दशदशमिका भिक्षुप्रतिमा के धारक थे । यह भिक्षुप्रतिमा दश दशाहों
में, अर्थात् सौ दिनों में पूरी होती है । इसमें प्रत्येक दशवें दिनमें दस दत्तियाँ आहार
की और दस दत्तियाँ पानी की होती हैं । इस प्रकार आहार और पानी की कुल
दत्तियाँ ११०० होती हैं । कितनेक मुनिजन (सुह्रियं मोयपडिमं पडिवण्णा) क्षुल्लक
मोकप्रतिमा के धारक थे । तथा—(महल्लियं मोयपडिमं पडिवण्णा) महामोकप्रतिमा के
धारक थे । तथा कितनेक मुनिजन (जवमज्झं चंदपडिमं पडिवण्णा) यवमध्य चन्द्र-
प्रतिमा के धारक थे । इस प्रतिमा में शुक्ल पक्ष की एकम तिथि में एक कवल आहार
क्रिया जाता है । प्रतिदिन एक एक कवल की वृद्धि से पूर्णिमा में १५ कवल आहार

દિવસોના અંતના દિવસે એક એક દત્તિની વૃદ્ધિ થવાથી નવ દત્તિઓ આહાર-
ની અને નવ દત્તિઓ પાણીની થાય છે. આ પ્રકારે આહાર અને પાણીની
બધી દત્તિઓ ૮૧૦ થાય છે. તથા (દસદસમિયં ભિક્ષુપડિમં) દશદશમિકા ભિક્ષુ-
પ્રતિમાના ધારકો હતા. આ ભિક્ષુપ્રતિમા દશ દશાહોમાં અર્થાત્ સો દિવસોમાં
પૂરી થાય છે. એમાં પ્રત્યેક દશમા દિવસે દશ દત્તિઓ આહારની અને દશ
દત્તિઓ પાણીની હોય છે. આ પ્રકારે આહાર અને પાણીની કુલ દત્તિઓ ૧૧૦૦
થાય છે. કેટલાક મુનિજન (સુહ્રિયં મોયપડિમં પડિવણ્ણા) ક્ષુલ્લકમોકપ્રતિમાના
ધારક હતા. તથા (મહલ્લિયં મોયપડિમં પડિવણ્ણા) મહામોક પ્રતિમાના
ધારક હતા. તથા કેટલાક મુનિજન (જવમજ્ઞં ચંદપડિમં પડિવણ્ણા) યવમધ્યચન્દ્રપ્રતિમાના
ધારક હતા. આ પ્રતિમામાં શુક્લપક્ષની એકમ તિથિમાં
એક કોળિઆનો આહાર કરાય છે. પ્રતિદિન એક એક કોળિઆનો વધારો

મજ્ઞં ચંદ્રપટ્ટિમં પટ્ટિવણ્ણા, વિવેગપટ્ટિમં વિઓસગ્ગપટ્ટિમં ઉવ-

કવલવૃદ્ધ્યા પચ્ચદશ પૌર્ણમાસ્યાં, કૃષ્ણપ્રતિપદિ ચ પચ્ચદશૈવ ભુક્ત્વા દ્વિતીયાદૌ પ્રતિ-
દિનમ્ એકૈકકવલહાન્યા અમાવાસ્યાયામેકમેવ યસ્યાં ભુક્તે સા સ્થૂલમધ્યત્વાદ્ યવ-
મધ્યેતિ તાં પ્રતિપન્નાઃ । ‘વડ્ડર-(વજ્ઞ)મજ્ઞં ચંદ્રપટ્ટિમં પટ્ટિવણ્ણા’ વજ્રમધ્યાં ચન્દ્ર-
પ્રતિમાં પ્રતિપન્નાઃ—વજ્રસ્યેવ મધ્યં યસ્યાં સા તથા, યસ્યાં હિ કૃષ્ણપ્રતિપદિ પચ્ચદશ કવલાન્
ભુક્ત્વા તતઃ પ્રતિદિનમેકૈકહાન્યા અમાવાસ્યાયામેકં, શુક્લપ્રતિપદ્યપિ એકમેવ, તતો દ્વિતી-
યાદૌ પુનરેકૈકવૃદ્ધ્યા પૌર્ણમાસ્યાં પચ્ચદશ ભુક્તે સા તનુમધ્યત્વાદ્ વજ્રમધ્યા ઇતિ તાં પ્રતિ-

ક્રિયા જાતા હૈ । તથા કૃષ્ણપક્ષ કી એકમ તિથિ મેં ૧૫ કવલ આહાર ક્રિયા જાતા
હૈ, ઓર દ્વિતીયા^{મ્} એક એક કવલ ઘટાને સે અમાવાસ્યા તિથિ મેં માત્ર એક કવલ
આહાર ક્રિયા જાતા હૈ । જૈસે—યવ કા મધ્યભાગ સ્થૂલ હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર ઇસ
પ્રતિમા કા ભી મધ્યભાગ પૂર્ણિમા ઓર કૃષ્ણ પક્ષકી એકમ, પન્દ્રહ પન્દ્રહ કવલ આહાર-
લેને કે કારણ સ્થૂલ હૈ । ઇસલિયે ઇસ પ્રતિમા કો ‘યવમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા’ કહતે હૈં ।
તથા—કિતનેક મુનિજન (વડ્ડરમજ્ઞં ચંદ્રપટ્ટિમં પટ્ટિવણ્ણા) વજ્રમધ્ય ચન્દ્રપ્રતિમા કો
ધારણ ક્રિયે હુએ થે । યહ પ્રતિમા કૃષ્ણપક્ષ કી એકમ કે દિન પન્દ્રહ કવલ આહાર
કર કે પ્રારમ્ભ કી જાતી હૈ । પ્રતિદિન એક એક કવલ ઘટાને સે અમાવાસ્યા મેં એક
કવલ તથા—શુક્લપક્ષ કી એકમતિથિ મેં એક કવલ આહાર ક્રિયા જાતા હૈ । ફિર
પ્રતિદિન એક એક કવલકી વૃદ્ધિ સે પૂર્ણિમા કે દિન પન્દ્રહ કવલ આહાર લિયા જાતા

કરવાનો હોવાથી પૂનમના દિવસે ૧૫ કોળિઆનો આહાર કરાય છે, તથા કૃષ્ણપક્ષની
એકમ તિથિએ ૧૫ કોળિઆનો આહાર કરાય છે, અને બીજી એક એક
કોળિઆનો આહાર ઘટાડતાં અમાવાસ્યા તિથિમાં માત્ર એક કોળિ-
આનો આહાર કરાય છે. જેમ યવનો મધ્યભાગ સ્થૂલ હોય છે તેવી જ રીતે
આ પ્રતિમામાં પણ મધ્યભાગ પૂનમ અને કૃષ્ણપક્ષની એકમ, પંદર પંદર
કોળિઆ આહાર લેવાને કારણે, સ્થૂલ છે; તેથી આ પ્રતિમાને ‘યવમધ્ય-
ચંદ્રપ્રતિમા’ કહે છે. તથા કેટલાક મુનિજન (વડ્ડરમજ્ઞં ચંદ્રપટ્ટિમં પટ્ટિવણ્ણા)
વજ્રમધ્યચંદ્રપ્રતિમાને ધારણ કરવાવાળા હતા. આ પ્રતિમા કૃષ્ણપક્ષની
એકમને દિવસે પંદર કોળિઆ આહાર લઈને શરૂ કરાય છે. પ્રતિદિન એક
એક કોળિઆ આહાર ઘટાડતાં અમાવાસ્યાને દિવસે એક કોળિઆ તથા
શુક્લ પક્ષની એકમ તિથિએ એક કોળિઆ આહાર કરાય છે. પછી પ્રતિદિન

હાણપડિમં પડિસંલીણપડિમં પડિવળ્ળા સંજમેણં તવસા અપ્પાણં
ભાવેમાણા વિહરંતિ ॥ સૂ. ૨૪ ॥

પન્નાઃ । તથા—કેચિત્ ‘વિવેગપડિમં’ વિવેકપ્રતિમાં—વિવેચનં વિવેકઃ=ત્યાગઃ, સ ચ
આન્તરાણાં કષાયાદીનાં બાહ્યાનાં ચ ગગશરીરાનુચિતભક્તપાનાદીનામ્, તસ્ય પ્રતિમા=પ્રતિ-
પત્તિર્વિવેકપ્રતિમા તાં, ‘વિઓસગ્ગપડિમં’ વ્યુત્સર્ગપ્રતિમાં=કાયોત્સર્ગપ્રતિમામ્,
‘ઉવહાણપડિમં’ ઉપધાનપ્રતિમામ્—મોક્ષં પ્રતિ ઉપ=સામીપ્યેન દધાતિ=નયતીત્યુપ-
ધાનમ્—અનશનાદિકં તપસ્તદ્વિષયા પ્રતિમા=અભિગ્રહસ્તાં, તથા ‘પડિસંલીણપડિમં’
પ્રતિસંલીનપ્રતિમાં=ક્રોધાદિનિરોધાઽભિગ્રહં ‘પડિવળ્ળા’ પ્રતિપન્નાઃ સંયમેન તપસા
આત્માનમ્ ભાવયન્તઃ વિહરન્તિ ॥ સૂ. ૨૪ ॥

હૈ । જૈસે વજ્રકા મધ્યભાગ પતલા હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઇસ પ્રતિમા કા મી મધ્યભાગ
અમાવાસ્થ્યા ઔર શુક્લપક્ષ કી એકમ, એક એક કવલ આહાર લેને કે કારણ પતલા
હૈ; ઇસીલિયે ઇસ પ્રતિમા કો ‘વજ્રમધ્યચન્દ્રપ્રતિમા’ કહતે હૈં । તથા કિતનેક મુનિજન
‘વિવેગપડિમં’ વિવેકપ્રતિમાકે અર્થાત્ આમ્યન્તરિક કષાયાદિકોં કે, તથા—ગણ,
સ્વશરીર ઔર અકલ્પનીય ભક્તપાનાદિકોં કે ત્યાગ કી પ્રતિમા કે, ‘વિઓસગ્ગપડિમં’
વ્યુત્સર્ગપ્રતિમા કે, અર્થાત્ કાયોત્સર્ગપ્રતિમા કે, ‘ઉવહાણપડિમં’ ઉપધાન પ્રતિમા કે
અર્થાત્ અનશનાદિરૂપ ઉગ્ર તપસ્યા કી પ્રતિમા કે, તથા—(પડિસંલીણપડિમં)
પ્રતિસંલીન પ્રતિમા કે અર્થાત્ ક્રોધ આદિ કષાયોં કે નિરોધ કરને કે અભિગ્રહ કે
(પડિવળ્ળા) ધારક થે । પૂર્વોક્ત સમી પ્રકાર કે મુનિરાજ સત્રહ પ્રકાર કે સંયમ સે

એક એક કોળિઓ વધારતાં જઈ પૂનમને દિવસ પંદર કોળિઆ આહાર લેવાય
છે. જેમ વજ્રનો મધ્યભાગ પાતળો હોય છે તેવી જ રીતે આ પ્રતિમામાં
પણ મધ્યભાગ—અમાવાસ્થ્યા અને શુક્લ પક્ષની એકમ, એક એક કોળિઓ
આહાર લેવાના કારણે પાતળો છે; એ માટે જ આ પ્રતિમાને “ વજ્રમધ્ય-
ચંદ્રપ્રતિમા ” કહેવાય છે. તથા કેટલાએક મુનિજન (વિવેગપડિમં) વિવેક-
પ્રતિમાના અર્થાત્ આમ્યન્તરિક કષાય આદિના, તથા—ગણના, પોતાના-
શરીરના અને અકલ્પનીય ભોજન પાન આદિના ત્યાગની પ્રતિમાના (વિઓસગ્ગપડિમં)
વ્યુત્સર્ગપ્રતિમા એટલે કાયોત્સર્ગપ્રતિમાના, (ઉવહાણપડિમં) ઉપધાનપ્રતિમાના
અર્થાત્ અનશન આદિરૂપ ઉગ્ર તપસ્યાની પ્રતિમાના, તથા (પડિસંલીણપડિમં)
પ્રતિસંલીનપ્રતિમાના અર્થાત્ ક્રોધ આદિ કષાયોના નિરોધ કરવાના અભિગ્રહના
(પડિવળ્ળા) ધારક હતા. પૂર્વોક્ત સર્વ પ્રકારના મુનિરાજ સત્તર પ્રકારના સંય-

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ મહાવી-
સ્સ અંતેવાસીં બહવે થેરા ભગવંતો જાડસંપણ્ણા કુલસંપણ્ણા
બલસંપણ્ણા રૂવસંપણ્ણા વિણયસંપણ્ણા ણાણસંપણ્ણા દંસણસંપણ્ણા

ટીકા—‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય ભગ-
વતો મહાવીરસ્ય ‘અંતેવાસી’ અન્તેવાસિનઃ—શિષ્યા બહવઃ સ્થવિરાઃ= ચિરતરકાલ-
પાલિતશ્રામણ્યપર્યાયા, ભગવન્તઃ=સંયમશોભાશાલિનઃ, એવાં વિશેષગાન્યાહ—‘જાડ-
સંપણ્ણા’ જાતિસમ્પન્નાઃ—ઉત્તમમાતૃકવંશયુક્તાઃ, એવમ્ ‘કુલસંપણ્ણા’ કુલસમ્પન્નાઃ—શ્રેષ્ઠ-
પૈતૃકવંશયુક્તાઃ, ‘બલસંપણ્ણા’ બલસમ્પન્નાઃ—બલં—સંહનનસમુત્થિતઃ પરાક્રમઃ, તેન સમ્પન્નાઃ-
યુક્તાઃ, ‘રૂવસંપણ્ણા’ રૂપસમ્પન્નાઃ—રૂપમ્—આકૃતિઃ—સુન્દરાઽઽકારસ્તેન યુક્તાઃ । ‘વિણ-

તથા બારહ પ્રકાર કે તપ સે આત્મા કો ભાવિત કરતે હુણ વિચરતે થે ॥ સૂ. ૨૪ ॥

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસકાલ ઉસ સમય મેં (સમણસ્સ ભગવઓ મહા-
વીરસ્સ અંતેવાસીં બહવે થેરા ભગવંતો) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે અન્તેવાસી—શિષ્ય
અનેક સ્થવિર ભગવન્ત થે । દીક્ષાપર્યાય સે યુક્ત એવં ધર્મ સે પ્રચલિત કો પુનઃ ધર્મ મેં સ્થિર
કરનેવાલે કો સ્થવિર કહતે હૈં । સંયમશોભાસે જો યુક્ત હોં ઉન્હેં ‘ભગવન્ત’ કહતે હૈં ।
યે (જાડસંપણ્ણા) જાતિસંપન્ન—ઉત્તમમાતૃવંશ કે થે, ઓર (કુલસંપણ્ણા) કુલ-
સમ્પન્ન—ઉત્તમપિતૃવંશ કે થે । (બલસંપણ્ણા) સંહનનનામકર્મસે પ્રાપ્ત બલ સે વિશિષ્ટ
થે । (રૂવસંપણ્ણા) સુન્દર આકૃતિવાલે થે । (વિણયસંપણ્ણા) જિસસે અષ્ટવિધ કર્મમલ

મથી તથા બાર પ્રકારના તપથી આત્માને ભાવિત કરતા વિચરતા હતા. (સૂ. ૨૪)

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ તે સમયમાં (સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ અંતેવાસીં બહવે થેરા ભગવંતો) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરના
અંતેવાસી—શિષ્ય અનેક સ્થવિર ભગવંતો હતા. ધર્મથી ચલાયમાન થતા
સાધુઓને ફરીથી ધર્મમાં સ્થિર કરવાવાળાને સ્થવિર કહે છે. જે સંયમ-
શોભાવાળા હોય તેમને ભગવંત કહે છે. તેઓ (જાડસંપણ્ણા)
જાતિસંપન્ન—ઉત્તમ માતૃવંશના હતા, અને (કુલસંપણ્ણા) કુલ સંપન્ન—ઉત્તમ
પિતૃવંશના હતા. (બલસંપણ્ણા) સંહનનનામકર્મથી પ્રાપ્ત થયેલ બલવડે
વિશિષ્ટ હતા. (રૂવસંપણ્ણા) સુંદર આકૃતિવાળા હતા. (વિણયસંપણ્ણા) જેનાથી

ચરિત્તસંપણ્ણા લજ્જાસંપણ્ણા લાઘવસંપણ્ણા ઓયંસી તેયંસી

યસંપણ્ણા' વિનયસમ્પન્ના:—વિનીયતેડપનીયતે- સંકલેશકારકમષ્ટવિધં કર્મયેન સ વિનય:— અમ્યુત્થાનાદિ—ગુરુસેવાલક્ષણ: તેન યુક્તા:, 'જ્ઞાણસંપણ્ણા' જ્ઞાનસંપન્ના:, જ્ઞાનં=શ્રુતચારિત્ર- લક્ષણં તેન યુક્તા:, 'દંસણસંપણ્ણા' દર્શનસમ્પન્ના:—દર્શનં—સમ્યક્ત્વં તેન યુક્તા: 'ચરિત્ત- સંપણ્ણા' ચરિત્રસમ્પન્ના: ચરિત્રં-સમિતિગુણ્યાદિકં તેન યુક્તા:, 'લજ્જાસંપણ્ણા' લજ્જા-સમ્પન્ના લજ્જા—સંયમવિરાધનાયાં હૃદયસંકોચરૂપા તયા યુક્તા:, 'લાઘવસંપણ્ણા' લાઘવસમ્પન્ના: લાઘવં દ્રવ્યતો ડન્પોપધિતા, ભાવતો ગૌરવત્રયત્યાગ:—તેન યુક્તા:, 'ઓયંસી' ઓજસ્વિન:, ઓજો-માનસી શક્તિસ્તદ્વન્ત:, 'તેયંસી' તેજસ્વિન:—તેજઃઅન્તર્વહિર્દેદીપ્યમાનત્વં તેજોલેશ્યાદિ વા તદ્વન્ત:, 'વચ્ચંસી' વચસ્વિન:, વચઃ—આદેયવચનં—સૌભાગ્યાદ્યુપેતમેષામસ્તીતિ તે વચસ્વિન:,

અપનીત—નષ્ટ હોતા હૈ વહ વિનય હૈ, એસે વિનય સે યુક્ત થે । ગુરુઓં કે આને એવં જાને આદિ પર સ્વડે હોના ઇત્યાદિક ક્રિયાએં સવ વિનય કે હી અન્તર્ગત હૈ । (જ્ઞાણ- સંપણ્ણા) વિશિષ્ટજ્ઞાન સે સંપન્ન થે । (દંસણ-સંપણ્ણા) વિશિષ્ટદર્શનસે—સમ્યક્ત્વ સે સંપન્ન થે । (ચરિત્તસંપણ્ણા) સમિતિ—ગુણિ—આદિરૂપ ચારિત્ર સે સંપન્ન થે । (લજ્જા- સંપણ્ણા) સંયમવિરાધનામેં જો સ્વાભાવિક હૃદયકા સંકોચ ઉસે લજ્જા કહતે હૈ, ઉસસે વે યુક્ત થે । (લાઘવસંપણ્ણા) અલ્પ—ઉપધિરૂપ દ્રવ્યલાઘવ એવં ત્રીન ગૌરવકા પરિ- ત્યાગરૂપ ભાવલાઘવ સે યુક્ત થે । (ઓયંસી) યે ઓજસ્વી થે, અર્થાત્ તપ ઓર સંયમ કે પ્રભાવ સે યુક્ત થે । (તેયંસી) યે તેજસ્વી થે, અર્થાત્ મીતર ઓર બાહર દેદીપ્યમાન થે, અથવા દ્રવ્યભાવરૂપ તેજોલેશ્યા આદિસે યુક્ત થે । (વચ્ચંસી) યે આદેયવચન સે,

અષ્ટવિધ કર્મમલ અપનીત—નષ્ટ થાય છે તેને વિનય કહે છે એવા વિનયથી યુક્ત હતા. ગુરુઓ આવે તેમ જ જાય ત્યારે ઉભા થવું વિગેરે ક્રિયાઓ બધી વિનયની જ અંતર્ગત છે. (જ્ઞાણસંપણ્ણા) વિશિષ્ટજ્ઞાનવાળા હતા. (દંસણસંપણ્ણા) વિશિષ્ટ દર્શનથી—સમ્યક્ત્વથી સંપન્ન હતા. (ચરિત્તસંપણ્ણા) સમિતિગુણિ—આદિરૂપ ચારિત્રથી સંપન્ન હતા. (લજ્જાસંપણ્ણા) સંયમવિરાધ- નામાં જે સ્વાભાવિક હૃદયનો સંકોચ થાય તેને લજ્જા કહે છે તેનાથી યુક્ત હતા. (લાઘવસંપણ્ણા) અલ્પ—ઉપધિરૂપ દ્રવ્યલાઘવ તેમજ ત્રણ ગૌરવના પરિત્યાગરૂપ ભાવલાઘવથી યુક્ત હતા. (ઓયંસી) તેઓ ઓજસ્વી હતા, અર્થાત્ તપ અને સંયમના પ્રભાવવાળા હતા. (તેયંસી) તેઓ તેજસ્વી હતા અર્થાત્ અંદર અને બહાર દેદીપ્યમાન હતા, અથવા દ્રવ્યભાવરૂપ તેજોલેશ્યા આદિવાળા હતા. (વચ્ચંસી) તેઓ આદેયવચનવાળા, અથવા તપ સંયમના

વચ્ચંસી જિયકોહા જિયમાણા જિયમાયા જિયલોભા જિહંદિયા
જિયણિદા જિયપરીસહા જીવિયાસ-મરણ-ભય-વિપ્પમુક્કા વય-

અથવા-વર્ચઃ તેજઃ પ્રભાવઃ-તદ્વન્તો વર્ચસ્વિનઃ । ‘જસંસી’ યશસ્વિનઃ તપઃસંયમસમારા-
ધનશ્યાતિપ્રાપ્તાઃ । ‘જિયકોહા’ જિતક્રોધાઃ-જિતઃ ક્રોધો યૈસ્તે જિતક્રોધાઃ, ક્રોધજયઃ-ઉદયપ્રાપ્ત-
ક્રોધવિફલીકરણતો જ્ઞાતવ્યઃ । ‘જિયમાણા’ જિતમાનાઃ, તત્ર માનઃ-મન્યતેઽનેનેતિ માનઃ-અભિ-
માનઃ-જ્ઞાનાદિના અહમનુપમોઽસ્મીત્યભિમાનરૂપઃ-ગર્વં ઇતિ યાવત્ । ‘જિયમાયા’ જિતમાયાઃ-
તત્ર માયા-પરવચ્ચનાભિપ્રાયેણ શરીરાકારનેપથ્યમનોવાક્રાયકૌટિલ્યકરણરૂપા, સા જિતા
યૈસ્તે તથા, ઉદયપ્રાપ્તપરવચ્ચનકર્મવિફલીકારકાઃ, ‘જિયલોભા’ જિતલોભાઃ ‘જિહં-
દિયા’ જિતેન્દ્રિયાઃ ‘જિયણિદા’ જિતનિદ્રાઃ ‘જિયપરીસહા’ જિતપરીષહાઃ ‘જીવિ-
યાસ-મરણ-ભય-વિપ્પમુક્કા’ જીવિતાઽઽશા-મરણ-ભય-વિપ્રમુક્તાઃ-જીવિતસ્ય-પ્રાગ-

અથવા તપસંયમકે પ્રતાપસે યુક્ત થે । (જસંસી) યે યશસ્વી થે, અર્થાત્ તપ ઔર
સંયમકી આરાધના સે પ્રસિદ્ધિ પાયે હુએ થે । (જિયકોહા) ક્રોધકો જિન્હોને જીત
લિયા થા । (જિયમાણા) માનકો જિન્હોને દૂર કર દિયા થા, અર્થાત્ “ મૈં જ્ઞાનાદિક
ગુણોસે અનુપમ હૂં ” ઇસ પ્રકાર અભિમાનરૂપ ગર્વકો જિન્હોને પરાસ્ત કર દિયા થા ।
(જિયમાયા) દૂસરોંકો વંચન કરનેકે અભિપ્રાયસે વેષ બનાના, એવં મન-વચન ઔર
કાયકો કુટિલતામૈં પરિણત કરના ઇસકા નામ માયા હૈ; ઇસ માયાકા મી જિન્હોને
અપની શુભપરિણતિ દ્વારા નિવારણ કર દિયા થા । (જિયલોભા) ઇસી પ્રકાર લોભકો
મી જિન્હોને નષ્ટ કર દિયા થા । (જિહંદિયા) ઇન્દ્રિયોંકો જિન્હોને અચ્છી તરહ
અપને વશમૈં કર રખા થા । (જિયણિદા જિયપરીસહા) નિદ્રા ઔર પરીષહોં કો
જિન્હોને જીત લિયા થા । (જિવિયાસ-મરણ-ભય-વિપ્પમુક્કા) જીનેકી આશા એવં મરણકે

પ્રતાપવાળા હતા. (જસંસી) તેઓ યશસ્વી હતા, અર્થાત્ તપ અને સંયમની
આરાધનાથી પ્રસિદ્ધિ પામેલા હતા. (જિયકોહા) ક્રોધ જેમણે હત્યો છે.
(જિયમાણા) માન જેઓએ દૂર કરેલું છે, અર્થાત્ ‘ હું જ્ઞાનાદિક ગુણોથી
અનુપમ છું ’ એવાં અભિમાનરૂપ ગર્વને જેઓએ પરાસ્ત કર્યો છે. (જિયમાયા)
બીજાની વંચના-છેતરપિંડી કરવાના હેતુથી વેષ બનાવવા તેમ જ મન વચન-
કાયથી કુટિલતા કરવી તેનું નામ માયા છે. આ માયાનું પણ જેઓએ પોતાની
શુભપરિણતિથી નિવારણ કર્યું છે. (જિયલોભા) તેવી જ રીતે લોભનો પણ
જેઓએ નાશ કર્યો છે. (જિહંદિયા) જેઓએ સારીરીતે ઇન્દ્રિયોને પોતાને વશ
કરી લીધી હતી. (જિયણિદા જિયપરીસહા) નિદ્રા અને પરીષહોને જેઓએ હતી

પ્પહાણા ગુણપ્પહાણા કરણપ્પહાણા ચરણપ્પહાણા ણિગ્ગહપ્પ- હાણા નિચ્છયપ્પહાણા અજ્જવપ્પહાણા મદ્દવપ્પહાણા લાઘવપ્પહાણા

ધારણસ્ય-આશા જીવિતાઽઽશા, મરણસ્ય ભયં=ત્રાસઃ, એતાભ્યાં વિપ્રમુક્તાઃ, ‘વયપ્પહાણા’ વ્રતપ્રધાનાઃ—વ્રતં—સંયમઃ પ્રધાનમ્—ઉત્તમં—શાક્યાદિભિક્ષુકાઽપેક્ષ્યા નિર્ગ્રન્થત્વાદ્ યેષાં તે વ્રતપ્રધાનાઃ, અથવા વ્રતેન—સંયમેન પ્રધાનાઃ શ્રેષ્ઠાઃ—નિર્ગ્રન્થશ્રમણા इत्यर्थः । તે ચ ન કેવલં વ્યવહારત एव इत्यत आह—‘ગુણપ્પહાણા’ ગુણપ્રધાનાઃ—ગુણાઃ કારુણ્યાદયઃ, યથોક્તં—‘પરોપકારૈકરતિર્નિરીહતા, વિનીતતા સત્યમનુત્થચિત્તતા । શ્રુતે વિનોદોઽનુદિનં ન દીનતા, ગુણા ઇમે સત્ત્વવતાં સ્વભાવજાઃ । इति, एतैर्गुणैःप्रधानाः । ‘કરણપ્પહાણા’ કરણપ્રધાનાઃ—કરણં=ક્રિયા, તચ્ચેહ પિંડવિશુદ્ધચાદિરૂપં, તેન પ્રધાનાઃ, અથવા કરણં—પિંડવિશુદ્ધચાદિરૂપં પ્રધાનં યેષાં તે કરણપ્રધાનાઃ, ‘ચરણપ્પહાણા’ ચરણપ્રધાનાઃ—ચરણં=મહાવ્રતાદિમૂલગુણરૂપં તત્પ્રધાનાઃ, ‘ણિગ્ગહપ્પહાણા’ નિગ્રહપ્રધાનાઃ—ઇન્દ્રિયનોઽન્દ્રિયદમનપ્રધાનાઃ, ‘નિચ્છયપ્પહાણા’ નિશ્ચયપ્રધાનાઃ—નિશ્ચયઃ—તત્ત્વનિર્ણયઃ; તત્ર પ્રધાનાઃ, અથવા અવશ્યઙ્કરણીયામુ સંયમક્રિયાસુ નિશ્ચિતચિત્તાઃ, ‘અજ્જવપ્પહાણા’ આર્જવપ્રધાનાઃ—આર્જવં—માયા-રાહિત્યં તત્પ્રધાનાઃ, કર્પૂરવદન્તર્વહિર્નિર્મલાઃ, ‘મદ્દવપ્પહાણા’ માર્દવપ્રધાનાઃ—માર્દવં—માનો-

ભયસે જો સર્વથા વિપ્રમુક્ત થે । (વયપ્પહાણા) વ્રતપાલન કરનેકે કારણ પ્રધાન થે, (ગુણપ્પહાણા) ક્ષાન્ત્યાદિ ગુણોસે પ્રધાન થે, (કરણપ્પહાણા) પિંડવિશુદ્ધચાદિ રૂપ મુનિયોંકી ક્રિયામેં પ્રધાન થે, (ચરણપ્પહાણા) મહાવ્રત આદિ મૂલ ગુણોસે પ્રધાન થે, (ણિગ્ગહપ્પહાણા) ઇન્દ્રિય, નોઽન્દ્રિય (મનકે) દમન કરનેમેં પ્રધાન થે, (નિચ્છયપ્પહાણા) તત્ત્વનિર્ણય તથા અવશ્ય-કરણીય સંયમ ક્રિયામેં પ્રધાન થે । (અજ્જવપ્પહાણા) સરલતામેં પ્રધાન થે, અર્થાત્ કર્પૂર કે તુલ્ય અન્તર વાહર નિર્મલ થે । (મદ્દવપ્પહાણા) માનકે ઉદયકા નિરોધ કરનેવાલે

લીધા હતા, (જીવિયાસ-મરણ-ભય-વિપ્રમુક્તા) જીવવાની આશા તેમજ મરણના ભયથી જેઓ સર્વથા મુક્ત હતા. (વયપ્પહાણા) વ્રતપાલન કરવાના કારણે પ્રધાન હતા, (ગુણપ્પહાણા) ક્ષાન્તિ આદિ ગુણોથી પ્રધાન (મુખ્ય) હતા, (કરણપ્પહાણા) પિંડવિશુદ્ધિ-આદિરૂપ મુનિઓની ક્રિયામાં પ્રધાન હતા, (ચરણપ્પહાણા) મહાવ્રત આદિ મૂલગુણોથી પ્રધાન હતા, (ણિગ્ગહપ્પહાણા) ઇન્દ્રિય નો ઇન્દ્રિયનું દમન કરવામાં પ્રધાન હતા, (નિચ્છયપ્પહાણા) તત્ત્વ-નિર્ણય તથા અવશ્ય કરવાની સંયમક્રિયામાં પ્રધાન હતા. (અજ્જવપ્પહાણા) સરલતામાં પ્રધાન હતા, અર્થાત્ કર્પૂરની પેઠે અંતર બહારથી નિર્મળ હતા, (મદ્દવપ્પહાણા) માનના ઉદયનો નિરોધ કરવાવાળા અર્થાત્ બત્યાદિ આઠ પ્રકા-

स्वन्तिप्पहाणा मुत्तिप्पहाणा विज्जापहाणा मन्तप्पहाणा वेयप्पहाणा वंभप्पहाणा नयप्पहाणा नियमप्पहाणा सच्चप्पहाणा सोयप्पहाणा

दयनिरोधः, तत्प्रधानाः—जात्याद्यष्टविधमदवर्जिताः, ‘लाघवप्पहाणा’ लाघवप्रधानाः, लाघवं-
द्रव्यतोऽल्पोपधित्वं भावतो गौरवत्रयत्यागः, तत्प्रधानाः । ‘स्वन्तिप्पहाणा’ क्षान्तिप्रधानाः—
क्षान्तिः—क्रोधोदयनिरोधः—तत्प्रधानाः । ‘मुत्तिप्पहाणा’ मुक्तिप्रधानाः—मुक्तिलोभोदयनिरोधः,
तत्प्रधानाः, निर्लोभा इत्यर्थः । ‘विज्जापहाणा’ विद्याप्रधानाः—वेदनं विद्या—ससाधना
रोहिणीप्रज्ञप्तिप्रभृतिर्देव्यधिष्ठिता सा प्रधानं येषां ते विद्याप्रधानाः । ‘मन्तप्पहाणा’
मन्त्रप्रधानाः, ‘वेयप्पहाणा’ वेदप्रधानाः—वेद्यते ज्ञायते जीवाजीवादिस्वरूपमेभिरिति वेदाः—
आचाराङ्गादय आगमाः, तत्प्रधानाः, ‘वंभप्पहाणा’ ब्रह्मप्रधानाः, ब्रह्म—ब्रह्मचर्य—कुश-
लानुष्ठानं तत्प्रधानाः । ‘नयप्पहाणा’ नयप्रधानाः—नयन्ति बोधयन्ति अनेकधर्मात्मकवस्तुन
एकांशम् इति नयाः—नैगमादयःसप्त, तत्प्रधानाः, ‘नियमप्पहाणा’ नियमप्रधानाः, नियमो-
द्रव्य-क्षेत्रकालभावतो विविधाभिग्रहग्रहणम् तत्प्रधानाः, ‘सच्चप्पहाणा’ सत्यप्रधानाः—जीवा-

अर्थात् जात्यादि आठ प्रकारके मदसे रहित थे । (लाघवप्पहाणा) द्रव्यसे अल्प-
उपधियुक्त होने कारण तथा भावसे गौरवत्रयरहित होनेके कारण प्रधानं थे । (स्वन्ति-
प्पहाणा) क्रोधके उदयका निरोध करनेमें प्रधान थे । (मुत्तिप्पहाणा) लोभ के उदयका
निरोध करने में प्रधान थे । (विज्जापहाणा) रोहिणी प्रज्ञप्ति आदि
विद्याओंसे प्रधान थे । (मन्तप्पहाणा) मन्त्रोंसे प्रधान थे । (वेयप्पहाणा)
आचाराङ्ग आदि शास्त्रों से प्रधान थे । (वंभप्पहाणा) ब्रह्मचर्यसे प्रधान थे । (नयप्पहाणा)
नैगमादि सात—नयोंके स्वरूप निरूपण करनेमें प्रधान थे । (निगमप्पहाणा) द्रव्य क्षेत्र
काल भावसे विविध प्रकार के अभिग्रह करनेमें प्रधान थे । (सच्चप्पहाणा) जीवा-

रना भद्वथी रद्धित उता, (लाघवप्पहाणा) द्रव्यथी अल्प-उपधिवाना होवाना
कारण तथा लावथी त्रण गौरवथी रद्धित होवाना कारण प्रधान उता. (स्वन्ति-
प्पहाणा) क्रोधना उदयनो निरोध करवाभां प्रधान उता, (मुत्तिप्पहाणा) लोभना
उदयनो निरोध करवाभां प्रधान उता, (विज्जापहाणा) रोहिणी प्रज्ञप्ति आदि
विद्याओंभां प्रधान उता. (मन्तप्पहाणा) मन्त्रोथी प्रधान उता. (वेयप्पहाणा)
अचारांग आदि शास्त्रोथी प्रधान उता. (वंभप्पहाणा) ब्रह्मचर्यथी प्रधान
उता, (नयप्पहाणा) नैगम आदि सात नयोंनां स्वरूप निरूपण करवाभां
प्रधान उता. (नियमप्पहाणा) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावथी विविध प्रकारना अलि-
अड करवाभां प्रधान उता, (सच्चप्पहाणा) जिव अजिव आदि पदार्थोंनां

ચારુવળ્લા લજ્જા-તવસ્સી-જિહંદિયા સોહી અણિયાણા અપ્પેસુયા

જીવાદિપદાર્થાનાં યથાવસ્થિતસ્વરૂપકથનં સત્યં તત્પ્રધાનાઃ, ‘સોયપ્પહાણા’ શૌચપ્રધાનાઃ-શૌચમ્-અન્તઃકરણશુદ્ધિરૂપમ્, તત્પ્રધાનાઃ । યદપ્યત્ર ચરણકરણગ્રહણેઽપ્યાર્જવાદિકં ગૃહીતં ભવતિ, તથાપિ આર્જવાદીનાં પૃથક્કથનં પ્રધાનતાસ્થાપનાર્થમ્-ઇત્યવગન્તવ્યમ્ । ‘ચારુવળ્લા’ ચારુવર્ણાઃ-વર્ણઃ-કાન્તિઃ, કીર્તિઃ, મતિશ્ચ;-ચારુવર્ણો યેષાં તે, ગૌરવર્ણયુક્તાઃ, અથવા ઉત્તમકીર્તિમન્તઃ, પ્રશસ્તમતિયુક્તા વા; ‘લજ્જા-તવ-સ્સી-જિહંદિયા’ લજ્જાતપઃ-શ્રી-જિતેન્દ્રિયાઃ-લજ્જયા=સંયમવિરાધનાયાં હૃદયસંકોચરૂપયા તપઃશ્રિયા=તપસ્તેજસા જિતાનિ ઇન્દ્રિયાણિ યૈસ્તે તથા; યદપિ જિતેન્દ્રિયા ઇતિ પ્રાગુક્તં, તથાપ્યત્ર લજ્જાતપઃશ્રીવિશેષિતત્વાન્ન પુનરુક્તિદોષઃ । ‘સોહી’ શોધયઃ-શોધિયોગાત્ શોધિરૂપાઃ-શુદ્ધાઃ-અકલુષહૃદયા ઇત્યર્થઃ,

જીવાદિ પદાર્થોંકે યથાવસ્થિત સ્વરૂપકથનકો સત્ય કહતે હૈં, ઉસસે વે પ્રધાન થે । (સોયપ્પહાણા) અન્તઃકરણકી શુદ્ધિકો શૌચ કહતે હૈં, ઉસમેં વે પ્રધાન થે । (ચારુવળ્લા) વર્ણશબ્દકા પ્રયોગ કાન્તિ, કીર્તિ એવં મતિમેં હોતા હૈ । ઇસ અપેક્ષાસે યે સવ ગૌરવર્ણ વિશિષ્ટ થે, અથવા ઉત્તમકીર્તિસંપન્ન થે, યા ઉત્તમબુદ્ધિ-આત્મકલ્યાણમેં આગેર અધિકાધિકરૂપસે પ્રેરણા કરનેવાલી બુદ્ધિસે યુક્ત થે । (લજ્જા-તવ-સ્સી-જિહંદિયા) લજ્જા-સંયમવિરાધનામેં સંકોચ, એવં તપઃશ્રી કે પ્રભાવસે ઇન્હોને ઇન્દ્રિયોંકો જીત લિયા થા । યદપિ “જિહંદિયા” ઇસ પદ-દ્વારા ઉનમેં જિતેન્દ્રિયતા પ્રકટ કર દી ગઈ હૈ. ફિર મી યહાં પર જો પુનઃ જિતેન્દ્રિયતા વર્ણિત હુઈ હૈ, વહ લજ્જા એવં તપકે પ્રભાવ સે ઉનમેં જિતેન્દ્રિયતા થી યહ વિશેષરૂપસે કથિત હુઆ હૈ, અતઃ ઇસ કથનમેં પુન-

યથાવસ્થિત સ્વરૂપનું કથન સત્ય કહેવાય, તેમાં તેઓ પ્રધાન હતા. (સોયપ્પહાણા) અન્તઃકરણની શુદ્ધિને શૌચ કહે છે, તેમાં તેઓ પ્રધાન હતા. (ચારુવળ્લા) વર્ણ શબ્દનો પ્રયોગ કાન્તિ, કીર્તિ તેમજ મતિમાં થાય છે. આ અપેક્ષાએ તેઓ બધા ગૌરવર્ણવિશિષ્ટ હતા, અથવા ઉત્તમ કીર્તિ-સંપન્ન હતા, અથવા ઉત્તમબુદ્ધિ-આત્મ કલ્યાણમાં આગળ આગળ વધારેમાં વધારે રૂપથી પ્રેરણા કરવાવાળી બુદ્ધિવાળા હતા. (લજ્જા-તવસ્સી-જિહંદિયા) લજ્જા=સંયમવિરાધનામાં સંકોચ તેમજ તપશ્રીના પ્રભાવથી તેઓએ ઇન્દ્રિયોને જીતી લીધી હતી. જો કે “જિહંદિયા” એ પદથી તેમનામાં જિતેન્દ્રિયતા પ્રકટ કરી દીધેલું છે, છતાં પણ અહીં જે ફરીને જિતેન્દ્રિયતાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે લજ્જા તેમજ તપના પ્રભાવથી તેમનામાં જિતેન્દ્રિયતા હોવાનું વિશેષરૂપથી કથન કર્યું છે. માટે આ કથનમાં પુન-

अबहिल्लेसा अप्पडिलेस्सा सुसामण्णरया दंता इणमेव णिग्गंथं
पावयणं पुरओकाउं विहरंति ॥ सू० २५ ॥

यद्वा-सुहृदः-प्राणिमात्रस्य मित्ररूपाः, 'अणियाणा' अनिदानाः-निदायते=छिद्यते मोक्ष-
फलमनेन इति निदानं-स्वर्गादिकृद्भिप्रार्थनम्, न विद्यते निदानं येषां ते अनिदानाः, 'अप्पो-
सुया' अल्पौत्सुक्याः-अल्पम्-अपगतम् औत्सुक्यम्-उत्सुकता येषां ते-अल्पौत्सुक्याः-
विषयौत्सुक्यरहिताः, 'अबहिल्लेसा' अबहिल्लेश्याः-संयमादबहिर्भूता लेश्या मनोवृत्तयो येषां
ते इत्यर्थः । 'अप्पडिलेस्सा' अप्रतिलेश्याः-अविद्यमानाःप्रतिलेश्याः-सदृशमनोवृत्तयो
येषां ते-अप्रतिलेश्याःप्रवर्धमानपरिणामसम्पन्नाः, 'सुसामण्णरया' सुश्रामण्यरताः-श्रम-
णस्य भावःश्रामण्यं, शोभनं श्रामण्यं सुश्रामण्यं-सम्पूर्णःसकलसावधनिवृत्तिरूपःसंयमःतस्मिन्
रताः=संलग्नाः, 'दंता' दान्ताः-इन्द्रिय-नोइन्द्रियदमनपरायणा इति भावः । 'इणमेव'
इदमेव 'णिग्गंथं' नैर्ग्रन्थ्यं-निर्ग्रन्थानां भावो नैर्ग्रन्थ्यं-श्रमणधर्ममयम् 'पावयणं' प्रव-
चनं-प्र=प्रकृष्टतया-उच्यते जीवादिस्वरूपं यस्मिन् तत्प्रवचनं जैनागमः तत् 'पुरओकाउं'
पुरस्कृत्य=प्रमाणीकृत्य 'विहरंति' विहरन्ति ॥ सू० २५ ॥

रुक्तिदोष नहीं आता है । (सोही) ये शोधि-अकलुषहृदयवाले थे, अथवा प्राणि-
मात्रके मित्रस्वरूप थे । (अणियाणा) मोक्षरूप फल जिसके द्वारा काट दिया जाता
है वह निदान है, इस निदानसे ये सर्वथा रहित थे । (अप्पोसुया) इनमें विषय-
सम्बन्धी कोई उत्सुकता नहीं थी । (अबहिल्लेसा) इनका मानसिक व्यापार संयमकी
आराधनासे बाहिरकी ओर थोड़ा भी नहीं जाता था । (अप्पडिलेस्सा) मनके साधा-
रण प्रवृत्तिको प्रतिलेश्या कहते हैं, परन्तु वे अप्रतिलेश्या से-प्रवर्द्धमान मनके शुभ
परिणामोंसे युक्त थे । (सुसामण्णरया) वे सुश्रामण्य में रत थे, अर्थात् सकल सावधकी

इष्टि दोष आवतो नथी. (सोही) तेओ शोधि-अकलुषितहृदयवाणा हुता.
अथवा प्राणिमात्रना मित्रस्वरूप हुता. (अणियाणा) मोक्षरूप फल जेनाथी
कपाई अय छे तेने निदान कहे छे, तेवा निदानथी तेओ सर्वथा रहित हुता.
(अप्पोसुया) तेमनामां विषयसंबंधी केई उत्सुकता नहोती, (अबहिल्लेसा)
तेमने मानसिक व्यापार संयमनी आराधनाथी जहारनी तरई जरायु जते
नहोते. (अप्पडिलेस्सा) मननी साधारण प्रवृत्तिने प्रतिलेश्या कहे छे, परंतु
तेओ अप्रतिलेश्याथी=प्रवर्द्धमान मननां शुभ परिणामाथी युक्त हुता. (सुसा-
मण्णरया) तेओ सुश्रामण्यमां रत (लागी रहेला) हुता, अर्थात् सधना सावधनी
निवृत्तिरूप संयममां तेओ सदा संलग्न रहेला हुता, (दंता) दान्ता हुता-

**મૂલમ્—તેસિ ણં ભગવંતાણં આયાવાયા વિ વિદિતા ભવંતિ,
પરવાયા વિ વિદિતા ભવંતિ, આયાવાયં જમહત્તા નલવળમિવ-**

ટીકા—‘તેસિ ણં ભગવંતાણં’ ઇત્યાદિ । તેષાં સ્વલુ શ્રીમહાવીરશિષ્યાણાં ભગ-
વતાં=સંયમવિભૂષિતાનામ્ ‘આયાવાયા વિ’ આત્મવાદા અપિ—સ્વસિદ્ધાન્તવાદા અપિ-
આર્હતવાદા અપીત્યર્થઃ, વિદિતા—વિજ્ઞાતા ભવન્તિ, ‘પરવાયા વિ વિદિતા ભવંતિ’ પર-
વાદા અપિ વિદિતા ભવન્તિ—પરેષાં—શાક્યાદીનાં વાદાઃ—મતાનિ વિદિતા ભવન્તિ, સ્વપર—

નિવૃત્તિરૂપ સંયમમેં યે સદા સંલગ્ન રહેતે થે । (દંતા) દાન્ત થે, અર્થાત્ ઇન્દ્રિય
ઔર નોઇન્દ્રિય-મન કે દમન કરનેવાલે થે । (ઇણમેવ ણિગંથં પાવયણં પુરઓકાઝં વિહરંતિ)
યે મુનિજન ઇસી નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનકો આગે રચકર વિચરતે થે, અર્થાત્ ઇનકો સબ પ્રવૃત્તિ
આગમાનુકૂલ હો હોતી થી ॥ સૂ. ૨૫ ॥

‘તેસિ ણં ભગવંતાણં’ ઇત્યાદિ—

(તેસિ ણં ભગવંતાણં) ભગવાન્ મહાવીર કે સંયમ સે વિભૂષિત ઊન શિષ્યો
કે (આયાવાયા વિ) આત્મવાદ—સ્વસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત —આર્હતવાદ મો (વિદિતા
ભવંતિ) વિદિત થા, અર્થાત્ ભગવાન્ મહાવીર કે યે શિષ્ય સ્વસિદ્ધાન્ત—પ્રતિપાદિત-
તત્ત્વોં કે પૂર્ણ જ્ઞાતા થે । (પરવાયા વિ વિદિતા ભવંતિ) તથા શાક્યાદિકોં કા ક્યા
સિદ્ધાન્ત હૈ, યહ મો ઇન્હેં વિદિત થા । મતલબ કહને કા યહ હૈ કિ યે
મુનિજન સ્વપરસિદ્ધાન્ત કે પૂર્ણવેત્તા થે । ઇસા કોઈ મો સિદ્ધાન્ત નહીં થા જો ઇનકો

અર્થાત્ ઇન્દ્રિય અને નોઇન્દ્રિયનું દમન કરવાવાળા હતા, (ઇણમેવ ણિગંથં
પાવયણં પુરઓ કાઝં વિહરંતિ) તે મુનિજનો આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનને આગળ
રાખીને વિચરતા હતા, અર્થાત્ તેમની સર્વે પ્રવૃત્તિ આગમને અનુકૂળ જ
થતી હતી. (સૂ. ૨૫)

‘તેસિ ણં ભગવંતાણં’ ઇત્યાદિ.

(તેસિ ણં ભગવંતાણં) સંયમથી વિભૂષિત ભગવાન મહાવીરના તે શિષ્યો
(આયાવાયાવિ) આત્મવાદ—સ્વસિદ્ધાન્ત—પ્રતિપાદિત તત્ત્વ—આર્હતવાદ પણ
(વિદિતા ભવંતિ) જાણતા હતા, અર્થાત્ ભગવાન મહાવીરના તે શિષ્યો સ્વસિ-
દ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વોના સંપૂર્ણ જ્ઞાતા હતા. (પરવાયાવિ વિદિતા ભવંતિ)
તથા શાક્ય આદિકોનો શું સિદ્ધાન્ત છે તે પણ તેઓ જાણતા હતા. કહેવાનો
મતલબ એ છે કે તે મુનિજનો સ્વપર—સિદ્ધાન્તના પૂર્ણ જ્ઞાતા હતા. એવો
કોઈ પણ સિદ્ધાન્ત નહોતો કે જે તેમની નજર બહાર હોય. હજી તેઓ કેવા

મત્તમાતંગા અચ્છિદ્રપસિણવાગરણા રયણકરંડગસમાણા કુત્તિયા-

સિદ્ધાન્તપ્રવીણતયા ન કિશ્ચિદવિદિતં તેષાં ભવતીતિ ભાવઃ । પુનસ્તે કીદૃશાઃ ? इत्यनेकै-
વિશેષણૈઃ કથયતિ—‘આયાવાયં જમહ્તા’ આત્મવાદાન્ યમયિત્વા—સ્વસિદ્ધાન્તાન્ પુનઃ
પુનરભ્યસ્ય—અતિપરિચિતાન્ વિધાય, ‘નલવણમિવ મત્તમાતંગા’ નલવણમિવ મત્ત-
માતંગાઃ—ક્રીડાવર્થ પુનઃપુનઃપ્રવેશેન કમલવનં યથા મદોન્મત્તા ગજેન્દ્રા અતિપરિચિતં કુર્વ-
ન્તિ તથૈવ તે પુનઃપુનરભ્યાસેન નિજસિદ્ધાન્તં પરિચિતં કૃતવન્તોઽતસ્તે તત્તુલ્યા इत्यर्थः ।

‘અચ્છિદ્ર—પસિણ—વાગરણા’ અચ્છિદ્ર—પ્રશ્ન—વ્યાકરણાઃ—અચ્છિદ્રાઃ—નિરન્તરાઃ—ધારા-
વાહિકરૂપાઃ પ્રશ્ના, નિરન્તરાણ્યુત્તરાણિ યેષુ તાદૃશાનિ વ્યાકરણાનિ—વિસ્તારયુક્તવ્યાખ્યા-
નાનિ યેષાં તે—અચ્છિદ્રપ્રશ્નવ્યાકરણાઃ—પુનઃપુનઃપ્રશ્નોત્તરસમુચિતવ્યાખ્યાનિનિપુણાઃ,
અત એવ—‘રયણ—કરંડગ—સમાણા’ રત્ન—કરણ્ડક—સમાનાઃ—રત્નાનાં—મગિમાગિક્યા-
દીનાં કરણ્ડકો મજ્જૂષા તસ્ય સમાનાસ્તત્તુલ્યાઃ, કરણ્ડકો યથા બહુવિધરત્નપૂર્ણો ભવતિ

દષ્ટિ સે બાહર હો । ઓર મી યે કૈસે થે ? સો ઇસ બાત કો આમે કે વિશેષણો
દ્વારા સૂત્રકાર કહતે હૈં—(આયાવાયં જમહ્તા નલવણમિવ મત્તમાયંગા) જિસ
પ્રકાર મદોન્મત્ત ગજરાજ સરોવર આદિ મેં ક્રીડા કરને કે લિયે પુનઃપુનઃ પ્રવેશ કર
કમલવન સે પૂર્ણ પરિચિત હો જાતે હૈં ઁસી પ્રકાર યે મી જ્ઞાનરૂપી સરોવર મેં ક્રીડા
કરને કે લિયે પુનઃ ૨ પ્રવેશ કર સ્વપર—સિદ્ધાન્તરૂપી કમલવન સે પૂર્ણ પરિચિત થે ।

(અચ્છિદ્ર—પસિણ—વાગરણા) જબ યે પ્રવચન કરતે થે તબ ઁસમેં શ્રોતાજન ધારા-
વાહિકરૂપ સે પ્રશ્ન કિયા કરતે થે, ઁનકા ઉત્તર મી યે ઁસી ઢંગ સે દેતે થે ।

(રયણ—કરંડક—સમાણા) ઇસલિયે યે ઁસે જ્ઞાત હોતે થે કિ માનોં રત્નકરણ્ડક
હૈં; જૈસે રત્નોં કા કરણ્ડક ઁનેક પ્રકાર કે ઉત્તમોત્તમ અમૂલ્ય રત્નોં સે ભરપૂર હોતા

હતા તે વાત આગળના વિશેષણોદ્વારા સૂત્રકાર કહે છે—(આયાવાયં જમહ્તા
નલવણમિવ મત્તમાયંગા) જેવી રીતે મદોન્મત્ત ગજરાજ સરોવર આદિમાં
ક્રીડા કરવા માટે વારંવાર પ્રવેશ કરીને કમલોના વનથી પૂર્ણ પરિચિત થઈ
જાય છે, તેવીજ રીતે તેઓ પણ જ્ઞાનરૂપી સરોવરમાં ક્રીડા કરવાના કારણે
વારંવાર પ્રવેશ કરીને સ્વપર—સિદ્ધાન્તરૂપી કમલવનથી પૂર્ણ પરિચિત હતા.
(અચ્છિદ્ર—પસિણ—વાગરણા) જ્યારે તેઓ પ્રવચન કરતા હતા ત્યારે તેમાં શ્રોતા-
જનો એકધારી રીતે પ્રશ્ન કર્યા કરતા હતા અને તેના ઉત્તર પણ તેઓ તેવીજ રીતે
આપતા હતા. (રયણ—કરંડક—સમાણા) એથી તેઓ એવા લાગતા હતા કે જાણે
રત્નનો કરંડિઓ હોય. જેમ રત્નોનો કરંડિઓ અનેક પ્રકારના ઉંચામાં ઉંચાં

वणभूया परवाइपमइणा आचारधरा चोइसपुव्वी दुवालसंगिणो

तथैव तेऽपि मुनिवराः सम्यग्ज्ञानादिरत्नपूर्णाः सन्ति । पुनस्ते कीदृशाः ? इत्याह-‘कुत्तियावणभूया’ कुत्रिकाऽऽपणभूताः=कूनां=स्वर्गमर्त्यपातालभूमीनां त्रिकं कुत्रिकं, तात्स्थ्यात् तदव्यपदेश इति कृत्वा तत्र स्थितं वस्त्वपि कुत्रिकमुच्यते, कुत्रिकस्य आपणः कुत्रिकापणः । देवाधिष्ठितत्वेन स्वर्गमर्त्यपाताललोकत्रयसंभविवस्तुसम्पादकहृद् इत्यर्थः, तद्भूताः-समीहितार्थ-सम्पादनलब्धियुक्तत्वेन तत्तुल्या इति भावः । ‘परवाइपमइणा’ परवादिप्रमर्दनाः-परवादिनां शाक्यादीनां मतनिराकरणेन विजेतार इत्यर्थः । ‘आचारधरा’ आचारधराः-आचाराङ्गसूत्र-स्य धारकाः यावद्विपाकसूत्रधराः, ‘चोइसपुव्वी’ चतुर्दशपूर्विणः-चतुर्दशपूर्वाणि विषन्ते येषां ते चतुर्दशपूर्विणः षड्गुणहानिवृद्धिरूपस्थानसंस्थिताः परस्परं भवन्ति न्यूनाधिक्येन, तथाहि-यः कश्चित् सकलामिलाप्यवस्तुवेदितया चतुर्दशपूर्वी स उत्कृष्टः, ततोऽन्ये सूत्रार्थतदुभयरूपतार-तम्याच्चतुर्दशपूर्वधराः । ‘दुवालसंगिणो’ द्वादशाङ्गिनः-द्वादशानि-अङ्गानि आचाराङ्गादीनि सन्ति

है उसी प्रकार ये साधुजन भी सम्यग्दर्शन एवं सम्यग्ज्ञान आदि विविध गुणरूप रत्नों से भरपूर थे । (कुत्तियावणभूया) ये कुत्रिकापण तुल्य थे । जिस आपण (दूकान) में स्वर्ग मर्त्य, पाताल—तीनों लोक की वस्तुएँ रहती हैं, उसको ‘कुत्रिका-पण’ कहते हैं । उस कुत्रिकापण से सभी अभिलषित वस्तुएँ मिलती हैं । उसी प्रकार ये अभिलषित तीनों लोक के पदार्थों के सम्पादन करने की लब्धियों से युक्त थे । अत एव कुत्रिकापण—तुल्य थे । (परवाइपमइणा) परवादियों के मत को निराकरण करने से ये उनके विजेता थे । (आचारधरा) आचारांग सूत्र से लेकर विपाकसूत्रतक के आगमों के ये धारक थे । (चोइसपुव्वी) चौदहपूर्वों के ये पाठी थे । इस प्रकार ये सब के सब (दुवालसंगिणो) द्वादशांग के वेत्ता थे । (समत्त-

કિંમતી રત્નોથી ભરપૂર હોય છે તેમ એ સાધુજનો પણ સમ્યગ્દર્શન તેમજ સમ્યગ્જ્ઞાન આદિ વિવિધ ગુણરૂપ રત્નોથી ભરપૂર હતા, (કુત્તિયાવણભૂયા) તેઓ કુત્રિકાપણ જેવા હતા. જે આપણ (દૂકાન)માં સ્વર્ગ મર્ત્ય અને પાતાળ ત્રણે લોકોની વસ્તુઓ રહેતી હોય તેને ‘કુત્રિકાપણ’ કહે છે. તે કુત્રિકાપણમાં બધી ઇચ્છિત વસ્તુઓ મળે છે, તેવી રીતે તેઓ પણ ત્રણે લોકોના ઇચ્છિત પદાર્થો મેળવવાની લાબ્ધિઓવાળા હતા. એથી તેઓ કુત્રિકાપણ જેવા હતા. (આચારધરા) આચારાંગસૂત્રથી લઈને વિપાકસૂત્ર સુધીનાં આગમોના તેઓ ધારક હતા. (ચોइसपुव्वी) ચૌદ પૂર્વોના તેઓ જાણનારા હતા. એ પ્રકારે એ તમામે તમામ (दुवालसंगिणो) द्वादशांगના ज्ञाता હતા. (समत्तगणिपिडगधरा) समस्त

समस्तगणिपिटगधरा सव्वक्खरसण्णिवाइणो सव्वभासाणुगामिणो
अजिणा जिणसंकासा जिणा इव अवितहं वागरमाणा संजमेणं
तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति ॥ सू० २६ ॥

येषां ते द्वादशाङ्गिनः-द्वादशाङ्गमज्ञातारः, द्वादशाऽङ्गज्ञातृत्वेऽपि समस्तश्रुतधरत्वं न सिध्यती-
त्यत आह-‘समस्तगणिपिटगधरा’समस्तगणिपिटकधराः-गणो-गच्छः, गुणगणो वाऽस्याऽस्तीति
गणी-आचार्यः तस्य पिटक इव पिटकः सर्वस्वमित्यर्थः, समस्तस्य गणिपिटकस्य धराः=धारकाः
अतएव-‘सव्वक्खर-सण्णिवाइणो’ सर्वाऽक्षरसन्निपातिनः, यद्यपि न क्षरति-स्वभावान्न कदाचित्प्र-
च्यवते इत्यक्षरं परं तत्त्वं केवलज्ञानादिरूपम्, तथाप्यत्र अक्षर-शब्दो स्वरव्यञ्जनभेदेन भिन्ने वर्णस-
मुदाये, ततश्च-अक्षराणां सन्निपाताः संयोगाः स्ववर्गपरवर्गैः संमीलनानि-अक्षरसन्निपाताः, सर्वे च-
तेऽक्षरसन्निपाताः, ते सन्ति येषां ते सर्वाऽक्षरसन्निपातिनः सर्वाक्षरज्ञानवन्त इति भावः। ‘सव्वभासा-
णुगामिणो’ सर्वभाषानुगामिनः-सर्वाश्च ता भाषाः-भाषणानि, यद्वा भाष्यन्ते इति भाषाः=
व्यक्तवचनानि, आसां भाषाणां संकृतप्राकृताऽऽदय आर्याऽनार्यादयो बहवो भेदा
भवन्ति, ताःसर्वभाषा अनुगच्छन्ति एवं शीलः सर्वभाषानुगामिनः, ‘अजिणा’ अजिनाः-
असर्वज्ञत्वादिति भावः। जयन्ति कर्मरिपून् इति जिनाः=सर्वज्ञाः, ये जिना न भवन्ति ते
अजिनाः-असर्वज्ञाः, तथापि-‘जिनसंकासा, जिनसङ्काशाः-जिनसदृशाः पृष्टनिर्वचनकारि-

गणिपिटग-धरा) समस्तगणिपिटक के धारक थे। (सव्वक्खरसण्णिवाइणो) यद्यपि
केवलज्ञानादिरूप तत्त्व-अक्षर शब्द से गृहीत होना चाहिये था, परन्तु ऐसा अक्षर
यहां गृहीत नहीं हुआ है; किन्तु स्वर एवं व्यंजन के भेद से भिन्न वर्णसमुदाय का
ही यहां अक्षर शब्द से ग्रहण किया गया है। सन्निपात शब्द का अर्थ संयोग है।
ये मुनिजन, सर्व प्रकार के अक्षरों के संयोग से क्या अर्थ होता है, उसके ज्ञाता थे।
(सव्व-भासा-णुगामिणो) आर्य एवं अनार्य सब देश की भाषा के ये सब जान-
कार थे। (अजिणा) ये सर्वज्ञ तो नहीं थे पर (जिणसंकासा) सर्वज्ञ के जैसे थे।

गणिपिटकना तेओ धारक उता. (सव्वक्खरसण्णिवाइणो) जे के केवलज्ञान
आदिइय तत्त्व-अक्षर शब्दथी लेवो जेधतो उतो; परंतु ओवो अक्षर अडीं
लेवाये नथी, पणु स्वर तेमज व्यंजनना लेदथी जुदा वर्णसमुदायज अडीं
अक्षर शब्दथी लेवाभां आव्यो छे. सन्निपात शब्दने अर्थ संयोग छे. ओ
मुनिजने सर्व प्रकारना अक्षराना संयोगथी शुं अर्थ थाय छे तेना ज्ञाता
उता. (सव्व-भासा-णुगामिणो) आर्य तेमज अनार्य अथा देशनी भाषाना तेओ
अथा ज्ञाकार उता. (अजिणा) तेओ सर्वज्ञ तो नहोता; पणु (जिणसंकासा)

**मूलम्-तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ
महावीरस्स अंतेवासी बहवे अणगारा भगवंतो, इरियासमिया**

त्वाद् अविनंवादिवचनत्वाच्चेति भावः । जिणा इव अवितहं वागरमाणा' जिना इव अवितथं व्याकुर्वागाः—जिनवद् यथातथ्येन—यद्वस्तु यादृगेव तथा कथयन्तः 'संजमेण' संयमेन-सावद्ययोगविरमणलक्षणेन 'तवसा' तपसा 'अप्पाणं भावेमाणा विहरंति' आत्मानं भावयन्तो विहरन्ति ॥ सू० २६ ॥

टीका—'तेणं कालेणं' इत्यादि । तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य अन्तेवासिनो बहवोऽनगाराः, 'भगवंतो' भगवन्तः—संयमशोभावन्तः, 'इरियासमिया' ईर्यासमिताः—ईरणं—गमनमीर्या, तस्यां समिताः=सम्यक्प्रवृत्ताः, गमने

(जिणा इव अवितहं वागरमाणा) जिन—सर्वज्ञ—प्रभु जिस प्रकार यथार्थ की प्ररूपणा करते हैं उसी प्रकार ये भी अवितथ—जो वस्तु जैसी थी उसी तरह से उसकी व्याख्या करने वाले थे । (संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति) ये सब के सब साधुजन सावद्ययोगविरमणलक्षणरूप १७ प्रकार के संयम से एवं अनशनदि १२ प्रकार के तप से आत्मा को भावित करते हुए प्रभु के साथ विचरते थे ॥सू० २६॥

‘ तेणं कालेणं तेणं समएणं ’ इत्यादि—

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (अंतेवासी) पास में रहनेवाले (बहवे अणगारा भगवंतो) सभी अनगार भगवान (इरियासमिया) ईर्यासमिति से युक्त थे, अर्थात् अन्य जीवों की किसी भी प्रकार से विराधना न

सर्वज्ञ जेवा हुता. (जिणा इव अवितहं वागरमाणा) जिन—सर्वज्ञ—प्रभु जे प्रकारे यथार्थनी प्ररूपणा करे छे तेज प्रकारे तेओ पणु अवितथ—जे वस्तु जेवी हुती तेवीज रीतथी तेनी व्याख्या करनारा हुता. (संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति) तेओ तमाम साधुजनो सावद्ययोग विरमणु लक्षणरूप १७ प्रकारनां संयमथी तेम ज अनशन आदि १२ प्रकारनां तपथी आत्माने भावित करता करता प्रभुनी साथे विचरता हुता. (सू० २६)

“ तेणं कालेणं तेणं समएणं ” इत्यादि.

(तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काल अने ते समयमां (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीरना (अंतेवासी) पासे रहवावाणा (बहवे अणगारा भगवंतो) धणु अनगार भगवान (इरियासमिया) ईर्यासमिति-

ભાસાસમિયા એસણાસમિયા આયાણ-મંડ-મત્ત-નિવ્રક્ષેવણા-સમિ-

દત્તાવધાના इत्यर्थः, यथाऽन्यजीवस्य कथमपि विराधना न भवेत् तथोपयोगपूर्वकगमन-शीला इति भावः । ‘भासासमिया’ भाषासमिताः—भाषासमितियुक्ताः—भाषासमितिर्निर-वधवचनप्रवृत्तिस्तया युक्ता इत्यर्थः । ‘एसणासमिया’ एषणासमिताः—एषणायामुद्गमादि-द्विचत्वारिंशद्दोषवर्जनेन समितिः—सम्यक्प्रवृत्तिरेषणासमितिस्तया युक्ताः, विशुद्धाऽऽहा-रादिग्रहणान्वेषगोपयोगयुक्ता इत्यर्थः । ‘आयाण-मंड-मत्त-निव्रक्ષेवणा-समिया’ आदा-न-भाण्ड-मात्र-निक्षेपणासमिताः—आदाने=ग्रहणे—अस्य भाण्डमात्रयोरित्यनेन सम्बन्धः—प्रत्यास-त्तिन्यायात्, साहचर्याद्वा । देहलीदीपन्यायाद्वा भाण्डमात्रशब्दस्य आदाननिक्षेपाभ्यां संबन्धः, भाण्डमात्रयोः—भाण्डस्य=पात्रस्य, मात्रस्य=वस्त्राद्युपकरणस्य चेत्यर्थः;

હો इस प्रकार उपयोगपूर्वक गमन करने के स्वभाववाले थे । (भासासमिया) निरवधवचनप्रवृत्ति से युक्त थे । (एसणासमिया) एषणा में उद्गमादिक ४२ दोषों का परिवर्जनपूर्वक प्रवृत्ति करना इसका नाम एषणासमिति है । इस समिति से युक्त एषणासमित है । ये साधुजन विशुद्ध आहारादिके ग्रहण में एवं अन्वेषणमें उप-योग—विशिष्ट थे । (आयाण—मंड—मत्त—निव्रक्ષेवणा—समिया) आदान शब्द का अर्थ ग्रहण है । इसका संबंध प्रत्यासत्तिन्याय से, अथवा साहचर्य से भाण्डमात्र के साथ है । अथवा—भाण्डमात्र शब्द का सम्बन्ध ‘ देहली—दीपक ’ न्याय से आदान और निक्षेप इन दोनों के साथ होता है । ये साधुजन भाण्ड=पात्र एवं मात्र=वस्त्रा-दिक उपकरण के आदान—ग्रहण और निक्षेपण—रखना रूप समिति से युक्त थे ।

વાળા હતા, અર્થાત્ બીજા જીવોની કોઈ પણ પ્રકારે વિરાધના ન થાય એવી રીતે ઉપયોગપૂર્વક ગમન કરવાના સ્વભાવવાળા હતા. (ભાસાસમિયા) નિરવધ-વચન—પ્રવૃત્તિવાળા હતા. (એસણાસમિયા) એષણામાં ઉદ્ગમ આદિક ૪૨ દોષોનાં પરિવર્જનપૂર્વક પ્રવૃત્તિ કરવી તેનું નામ એષણાસમિતિ છે. આ સમિતિથી યુક્ત જે છે તે એષણાસમિત છે. તે સાધુજનો વિશુદ્ધ આહારાદિક દેવામાં તેમજ તેનાં અન્વેષણમાં ઉપયોગવિશિષ્ટ હતા, (આયાણ-મંડ-મત્ત-નિવ્રક્ષેવણા-સમિયા) આદાન શબ્દનો અર્થ ગ્રહણ છે, તેનો સંબંધ પ્રત્યાસત્તિન્યાયથી અથવા સાહચર્યથી ભાંડમાત્રની સાથે છે. અથવા ભાંડમાત્ર શબ્દનો સંબંધ ‘દેહલીદીપક’ ન્યાયથી આદાન અને નિક્ષેપ એ બેઉની સાથે થાય છે, તે મુનિઓ ભાંડપાત્રના અને વસ્ત્રાદિક ઉપકરણનાં આદાન=ગ્રહણ અને નિક્ષેપણ=મૂકવારૂપ સમિતિથી યુક્ત હતા, અર્થાત્ પાત્ર તેમજ વસ્ત્રાદિક ઉપકરણોનાં

યા ઉચ્ચાર-પાસવળ-સ્વેલ-જલ્લ-સિંઘાળ-પારિટ્ઠાવણિયા-સમિયા મળ-
ગુત્તા વચગુત્તા કાયગુત્તા ગુત્તા ગુત્તિંદિયા ગુત્તવંભયારી અમમા અર્કિં-

તયોર્નિક્ષેપણે—અવસ્થાપને સમિતા:—સુપ્રતિલેખન—પ્રમાર્જનાધુપયોગપૂર્વકપ્રવૃત્તિયુક્તા:; ‘ઉચ્ચાર-
પાસવળ—સ્વેલ—જલ્લ—સિંઘાળ—પારિટ્ઠાવણિયા—સમિયા’ ઉચ્ચાર—પ્રસવળ—શ્લેષ્મા—જલ્લ-
શિંઘાળ—પરિષ્ઠાપનિકા—સમિતા:; તત્ર-ઉચ્ચાર:—પુરીષમ્, પ્રસવળં—મૂત્રં, સ્વેલ:—શ્લેષ્મા, ઉપલક્ષણ-
ત્વાનિષ્ઠીવનસ્યાપિ ગ્રહણમ્, જલ્લ:—સ્વેદજમલમ્, શિંઘાળં—નાસિકામલમ્, એતેષાં પરિષ્ઠાપનિકા—
પરિષ્ઠાપના—પરિત્યાગ:—સૈવ પરિષ્ઠાપનિકા, સ્વાર્થે ક:; તસ્યાં સમિતા:; શુદ્ધસ્થળિંડલાશ્રયણા-
ત્સમ્યગુપયુક્તા: । ‘મળગુત્તા’ મનોગુત્તા:—(૧) ત્રિવિધા મનોગુત્તય:—આર્તરૌદ્રધ્યાનાનુબન્ધિ-
કલ્પનાજાલવિયોગ: પ્રથમા (૨) શાસ્ત્રાનુસારિણી પરલોકસાધિકા ધર્મધ્યાનાનુબન્ધિની માધ્યસ્થ્ય-
પરિણતિર્દ્વિતીયા, (૩) સકલમનોવૃત્તિનિરોધેન યોગનિરોધાઽવસ્થાભાવિની—આત્મરમણરૂપા

અર્થાત્ પાત્ર એવં વસ્ત્રાદિક ઉપકરણોં કે સુપ્રતિલેખન પ્રમાર્જનાદિક મેં યે સર્વ ઉપ-
યોગપૂર્વક પ્રવૃત્તિ કરને વાલે થે । (ઉચ્ચાર—પાસવળ—સ્વેલ—જલ્લ—સિંઘાળ—પારિટ્ઠા-
વણિયા—સમિયા) ઉચ્ચાર—પુરીષ, પ્રસવળ—મૂત્ર, સ્વેલ—શ્લેષ્મા, ઉપલક્ષણ સે નિષ્ઠીવન-
થૂકના, જલ્લ—સ્વેદજ મેલ, શિંઘાળ—નાસિકા કા મેલ, ઇન સર્વકે પરિષ્ઠાપન—રૂપ સમિતિ
સે યુક્ત થે । (મળગુત્તા વચગુત્તા કાયગુત્તા) ગુત્તિ ત્રીન પ્રકાર કી હૈ—મનોગુત્તિ,
વચનગુત્તિ ઓર કાયગુત્તિ; ઇનમેં મનોગુત્તિ ત્રીન પ્રકારકી હૈ—આર્ત એવં રૌદ્રધ્યાન કા પરિત્યાગ
કરના પ્રથમ મનોગુત્તિ હૈ, શાસ્ત્ર કે અનુસાર, પરલોક કી સાધક ઓર ધર્મધ્યાન કે સાથ
અનુબન્ધ રસ્તે વાલી માધ્યસ્થ્યપરિણતિરૂપ દ્વિતીય મનોગુત્તિ હૈ । સકલ મનોવૃત્તિ કે
નિરોધ સે યોગોં કી નિરોધાવસ્થા મેં હોનેવાલી પરિણતિ—આત્મા મેં રમણરૂપ પરિણતિ

સુપ્રતિલેખન અને પ્રમાર્જન આદિકમાં તે બધા ઉપયોગપૂર્વક પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા
હતા. (ઉચ્ચાર-પાસવળ-સ્વેલ-જલ્લ-સિંઘાળ-પારિટ્ઠાવણિયા-સમિયા) ઉચ્ચાર=પુરીષ,
પ્રસવળ=મૂત્ર, સ્વેલ=શ્લેષ્મા, ઉપલક્ષણથી નિષ્ઠીવન—થૂકવું, જલ્લ—પરસેવાનો મેલ,
શિંઘાળ—નાકનો મેલ, આ બધાના પરિષ્ઠાપનરૂપ સમિતિથી યુક્ત હતા. (મળગુત્તા
વચગુત્તા કાયગુત્તા) ગુત્તિ ત્રણ પ્રકારની છે. મનોગુત્તિ, વચનગુત્તિ અને કાયગુત્તિ,
તેમાં મનોગુત્તિ ત્રણ પ્રકારની છે—આર્ત તેમજ રૌદ્રધ્યાનનો પરિત્યાગ કરવો એ
પ્રથમ મનોગુત્તિ છે, શાસ્ત્રને અનુસરનારી પરલોકની સાધક અને ધર્મધ્યાનની
સાથે અનુબંધ રાખનારી માધ્યસ્થ્યપરિણતિરૂપ બીજી મનોગુત્તિ છે. બધી મનો-
વૃત્તિ માત્રના નિરોધથી યોગોની નિરોધાવસ્થામાં થનારી પરિણતિ—આત્મામાં

તૃતીયા । ઉક્તં ચ યોગશાસ્ત્રે—

વિમુક્તકલ્પનાજાલં સમત્વે સુપ્રતિષ્ઠિતમ્ ।

આત્મારામં મનસ્તજ્જૈર્મનોગુપ્તિરુદાહૃતા ॥૩૮૧॥

તયા મનોગુપ્ત્યા યુક્તાઃ—મનોગુપ્તાઃ । ‘વચગુપ્તા’ વચોગુપ્તાઃ—વચનગુપ્તિયુક્તાઃ, વચન-
ગુપ્તિશ્ચતુર્વિધા, ઉક્તં ચ—

સચ્ચા તહેવ મોસા ય સચ્ચામોસા તહેવ ય ।

ચતુર્થી અસચ્ચમોસા ય, વચગુપ્તી ચતુર્વિધા ॥ (ઉક્ત૦ અ. ૨૪ ગા. ૨૨)

છાયા—સત્યા તથૈવ મૃષા ચ સત્યમૃષા તથૈવ ચ ।

ચતુર્થ્યસત્યમૃષા ચ વચોગુપ્તિશ્ચતુર્વિધા ॥

વચોગુપ્તિઃ=વચનગુપ્તિશ્ચતુર્વિધા—સત્યા, મૃષા, સત્યમૃષા અસત્યમૃષા ચેતિ । જીવં પ્રતિ—‘અયં
જીવઃ’ ઇતિ કથનં સત્યા, જીવં પ્રતિ ‘અયમજીવઃ’ ઇતિ કથનં મૃષા, પૂર્વમનિર્ણય વદતિ—‘અઘાસ્મિન્

ત્રીસરી મનોગુપ્તિ હૈ । યોગશાસ્ત્ર મેં યહી બાત કહી હૈ—

વિમુક્તકલ્પનાજાલં સમત્વે સુપ્રતિષ્ઠિતમ્ ॥

આત્મારામં મનસ્તજ્જૈર્મનોગુપ્તિરુદાહૃતા ॥

ઇસ મનોગુપ્તિ સે યુક્ત હોને કા નામ મનોગુપ્ત હૈ । વચનગુપ્તિ સે યુક્ત હોના
સો વચનગુપ્ત હૈ । વચનગુપ્તિ ૪ પ્રકાર કી હૈ—

“સચ્ચા તહેવ મોસા ય, સચ્ચામોસા તહેવ ય ॥

ચતુર્થી અસચ્ચમોસા ય વચગુપ્તી ચતુર્વિધા ॥ (ઉક્ત૦ અ૦ ૨૪ ગા. ૨૨)

અર્થ ઇસ ગાથા કા ઇસ પ્રકાર હૈ । સત્ય, મૃષા, સત્યમૃષા ઓર અસત્ય-
મૃષા; ઇસ પ્રકાર વચન ૪ પ્રકાર કે હોતે હૈ; (૧) જિસ વસ્તુ કા જૈસા સ્વરૂપ

રમણરૂપ પરિણતિ એ ત્રીજી મનોગુપ્તિ છે. યોગશાસ્ત્રમાં એજ વાત કહી છે—

વિમુક્તકલ્પનાજાલં, સમત્વે સુપ્રતિષ્ઠિતમ્ ।

આત્મારામં મનસ્તજ્જૈ, — મનોગુપ્તિરુદાહૃતા ॥

આ મનોગુપ્તિથી યુક્ત હોવાનું નામ મનોગુપ્ત છે. વચનગુપ્તિથી યુક્ત
વચનગુપ્ત છે. વચનગુપ્તિ ૪ પ્રકારની છે.

સચ્ચા તહેવ મોસા ય સચ્ચામોસા તહેવ ય ।

ચતુર્થી અસચ્ચમોસા ચ વચગુપ્તી ચતુર્વિધા ॥ (ઉક્ત૦ અ૦ ૨૪ગા૦ ૨૨)

ગાથાનો અર્થ આ પ્રકારનો છે .સત્ય ૧, મૃષા ૨, સત્યમૃષા ૩ અને
અસત્યમૃષા ૪—એ પ્રકારે વચન ૪ પ્રકારના થાય છે.

(૧) જે વસ્તુનું જેવું સ્વરૂપ હોય તે વસ્તુને તે જ સ્વરૂપથી પ્રકાશિત

નગરે શતં બાલકા જાતાઃ 'ઇતિ તત્કથનં સત્યમૃષા । 'સ્વાધ્યાયસમં તપો નાસ્તિ' ઇતિ કથનં ચતુર્થી અસત્યમૃષા, યદ્વચનં ન સત્યં નાપિ મૃષા, સા ચતુર્થીતિ, ચતુર્વિધવચનયોગ-નિવૃત્તિર્વચોગુપ્તિરિતિ ભાવઃ । 'કાયગુપ્તા' કાયગુપ્તાઃ-ગમનાગમનપ્રચલનાદિક્રિયાયા ગોપનં-કાયગુપ્તિઃ, કાયગુપ્તિર્દ્વિધા-ચેષ્ટાનિવૃત્તિરૂપા, યથાગમં ચેષ્ટા-નિયમરૂપા ચ । તત્ર પરીષદ્દાપસર્ગાદિભવેઽપિ યત્કાયોત્સર્ગકરણાદિના કાયસ્ય નિશ્ચલતાકરણમ્, સર્વયોગનિરોધા-વસ્થાયાં વા સર્વથા યત્કાયચેષ્ટાનિરોધનં સા પ્રથમા । ગુરુમાપૃચ્છ્ય શરીરસંસ્તારકભૂમ્યાદિ-

હૈં ઉસ વસ્તુ કો ઉસી સ્વરૂપ સે પ્રકાશિત કરનેવાલા વચન સત્યવચન હૈ; જૈસે-યહ જીવ હૈ । (૨) જીવ કો અજીવ કહના મૃષાવચન હૈ । (૩) મિશ્રિતવચન સત્ય-મૃષા વચન હૈ; જૈસે-આજ ઇસ નગર મેં સૌ બાલક જન્મે હૈં । યહ વચન મિશ્રરૂપ ઇસલિયે હૈ કિ ઇસમેં સૌ કા નિર્ણય નહીં હૈ । (૪) જો વચન મૃષા મી ન હો ઓર સત્ય મી ન હો એસે વચન કા નામ અસત્યમૃષા હૈ; જૈસે-સ્વાધ્યાય સમાન તપ નહીં હૈ "—એસા વચન ન સત્ય હૈ ઓર ન અસત્ય હી હૈ, અર્થાત્ વ્યવહાર વચન હૈ । ઇસ ૪ પ્રકાર કે વચનયોગ કા વચનગુપ્તિ મેં નિરોધ હો જાતા હૈ । ગમન-આગમન આદિ ક્રિયા કા જિસમેં નિરોધ હૈ વહ કાયગુપ્તિ હૈ । યહ કાયગુપ્તિ ૨ પ્રકારકી હૈ-ચેષ્ટા-નિવૃત્તિરૂપ ૧, યથા-આગમ-ચેષ્ટાનિયમનરૂપ ૨ । પરીષદ્દા એવં ઉપસર્ગ કે આનેપર મી શરીર સે મમત્વ કા પરિત્યાગ કર જો ઉસે નિશ્ચલ કરના હૈ, અથવા સર્વયોગોં કી નિરોધ-અવસ્થા મેં જો સર્વથા કાય કી ચેષ્ટાઓં કા નિરોધ કરના હૈ યહ ચેષ્ટાનિવૃત્તિરૂપ પહલી કાયગુપ્તિ હૈ । ગુરુ સે પૂછકર શારીરિક ક્રિયાઓં કી નિવૃત્તિ કે સમય,

કરવાવાળું વચન સત્યવચન છે. જેમકે આ જીવ છે. (૨) જીવને અજીવ કહેવું એ મૃષાવચન છે. (૩) મિશ્રવચન સત્યમૃષાવચન છે; જેમ કે આજે આ નગરમાં સૌ બાળક જન્મ્યાં છે. આ વચન મિશ્રરૂપ એટલા માટે છે કે એમાં સૌનો નિર્ણય નથી. (૪) જે વચન મૃષા પણ ન હોય અને સત્ય પણ ન હોય એવાં વચનનું નામ અસત્યમૃષા છે, જેમ “સ્વાધ્યાયના જેવું તપ નથી.” એવા વચન નથી તો સત્ય કે નથી અસત્ય, અર્થાત્ વ્યવહારવચન છે. આ ચાર પ્રકારનાં વચનયોગનો વચનગુપ્તિમાં નિરોધ થઈ જાય છે. ગમન-આગમન-આદિ ક્રિયાઓનો જેમાં નિરોધ હોય તેને કાયગુપ્તિ કહે છે. આ કાયગુપ્તિ બે પ્રકારની છે-૧ ચેષ્ટાનિવૃત્તિરૂપ, અને ૨ યથા-આગમ-ચેષ્ટાનિયમનરૂપ. પરીષદ્દા તેમજ ઉપસર્ગના આવવા છતાં પણ શરીરથી મમત્વનો ત્યાગ કરીને જે તેને નિશ્ચલ કરવું, અથવા સર્વ યોગોની નિરોધ-અવસ્થામાં જે સર્વથા કાયની ચેષ્ટાઓનો નિરોધ કરવું તે ચેષ્ટા-

પ્રતિલેખનાપ્રમાર્જનાદિસમયોક્તક્રિયાકલાપપુરઃસરં શયનાસનાદિ વિધેયમ્, તતઃ શયનાસનનિ-
ક્ષેપાદાનાદિષુ સ્વેચ્છયા ચેષ્ટાપરિહારેણ નિયતા=શાસ્ત્રનિયમાનુસારિણી યા કાયચેષ્ટા સા દ્વિતીયેતિ ।

ઉક્તં ચ—ઉપસર્ગપ્રસન્નેઽપિ કાયોત્સર્ગજુષો મુનેઃ ।

સ્થિરીભાવઃ શરીરસ્ય કાયગુપ્તિર્નિગદ્યતે ॥૧॥

શયનાસનનિક્ષેપાદાનસંક્રમણેષુ ચ ।

સ્થાનેષુ ચેષ્ટાનિયમઃ કાયગુપ્તિસ્તુ સા પરા ॥૨॥ઈતિ॥

તયા યુક્તાઃ । ‘ગુપ્તા’ ગુપ્તાઃ—અશુભયોગનિગ્રહો ગુપ્તિસ્તયા યુક્તાઃ, ‘ગુપ્તિંદિયા’
ગુપ્તેન્દ્રિયાઃ—ગુપ્તાનિ—અસંયમસ્થાનેભ્યઃ સુરક્ષિતાનિ—ઇન્દ્રિયાણિ યૈસ્તે ગુપ્તેન્દ્રિયાઃ, ‘ગુપ્ત-

અથવા ભૂમિ આદિકી પ્રતિલેખના એવં પ્રમાર્જન કરતે સમય જો અપની ઇચ્છાનુસાર
શારીરિક ચેષ્ટાઓં કા પરિત્યાગ કરના હૈ, એવં ગુરુ આદિ કી આજ્ઞાનુસાર શયન, આસન,
નિક્ષેપણ એવં આદાનાદિક મેં કાયચેષ્ટા કા નિયમન કરના હૈ વહ દૂસરી કાયગુપ્તિ હૈ ।
કહા મી હૈ—ઉપસર્ગપ્રસન્નેઽપિ, કાયોત્સર્ગજુષો મુનેઃ । સ્થિરીભાવઃ શરીરસ્ય,
કાયગુપ્તિર્નિગદ્યતે ॥૧॥ શયનાસનનિક્ષેપા,—દાનસંક્રમણેષુ ચ । સ્થાનેષુ ચેષ્ટાનિયમઃ
કાયગુપ્તિસ્તુ સા પરા ॥૨॥ શ્લોકોં કા અર્થ ઉપર લિખે ભાવકે અનુસાર હૈ । યે
સાધુજન કાયગુપ્તિ કે આરાધક થે । અત એવ (ગુપ્તા) અશુભ યોગ કે નિગ્રહરૂપ
ગુપ્તિ સે યે મુનિજન યુક્ત થે । (ગુપ્તિંદિયા) અસંયમસ્થાનોં સે ઇન્દ્રિયોં કો સુર-
ક્ષિત રક્ષનેવાલે થે, ઇસલિયે ઇન્હેં ગુપ્તેન્દ્રિય કહા ગયા હૈ । (ગુપ્તવંભયારી) નૌ—

નિવૃત્તિરૂપ પહેલી કાયગુપ્તિ છે. ગુરુને પૃછીને શારીરિક ક્રિયાઓની (શૌચાદિની)
નિવૃત્તિના સમયે અથવા ભૂમિ આદિની પ્રતિક્ષેપના તેમજ પ્રમાર્જના કરવાના
સમયે જે પોતાની ઇચ્છાપ્રમાણે શારીરિક ચેષ્ટાઓનો પરિત્યાગ કરવાનો
છે, તેમજ ગુરુ આદિની આજ્ઞા—અનુસાર શયન, આસન, નિક્ષેપણ, તેમજ
આદાનાદિકમાં કાયચેષ્ટાનું નિયમન કરવાનું હોય છે, તે બીજી કાયગુપ્તિ છે.
કહ્યું પણ છે કે—ઉપસર્ગપ્રસન્નેઽપિ, કાયોત્સર્ગજુષો મુનેઃ ।

સ્થિરીભાવઃ શરીરસ્ય, કાયગુપ્તિર્નિગદ્યતે ॥

શયનાસનનિક્ષેપા,—દાનસંક્રમણેષુ ચ ।

સ્થાનેષુ ચેષ્ટાનિયમઃ કાયગુપ્તિસ્તુ સા પરા ॥

શ્લોકોનો અર્થ ઉપર લખેલા ભાવ પ્રમાણે છે. તે સાધુજનો કાયગુપ્તિના
આરાધક હતા. માટેજ (ગુપ્તા) અશુભયોગના નિગ્રહરૂપ ગુપ્તિથી તે મુનિજનો
યુક્ત હતા. (ગુપ્તિંદિયા) અસંયમના સ્થાનોથી ઇન્દ્રિયોને સુરક્ષિત રાખવાવાળા

વળા અકોહા અમાણા અમાયા અલોભા સંતા પસંતા ઉવસંતા
પરિણિવ્વુયા અણાસવા અગ્ગંથા છિણ્ણગ્ગંથા છિણ્ણસોયા નિરુવલેવા,

વંમયારી' ગુપ્તબ્રહ્મચારિણઃ—ગુપ્તં નવભિર્બ્રહ્મચર્યગુપ્તિર્મી રક્ષિતં બ્રહ્મ—મૈથુનવિરમણં ચરન્તિ તચ્છીલાઃ, 'અમમા' અમમાઃ—મમત્વરહિતાઃ, 'અકિંચણા' અકિંચ્છનાઃ—નાસ્તિ કિંચન યેષાં તે અકિંચ્છનાઃ—ધર્મોપકરણાતિરિક્તવસ્તુરહિતાઃ । 'અકોહા' અક્રોધાઃ=ક્રોધવર્જિતાઃ, 'અમાણા' અમાનાઃ=માનરહિતાઃ, 'અમાયા' અમાયાઃ=માયાવર્જિતાઃ, અલોભા' અલોભાઃ=લોભરહિતાઃ, 'સંતા' શાન્તાઃ=બહિર્વૃત્ત્યા શાન્તિયુક્તાઃ, 'પસંતા' પ્રશાન્તાઃ=અન્તર્વૃત્ત્યા શાન્તિયુક્તાઃ, અત એવ 'ઉવસંતા' ઉપશાન્તાઃ=શીતીભૂતાઃ 'પરિણિવ્વુયા' પરિણિર્વૃતાઃ=કર્મકૃતવિકારરહિતત્વાત્ સ્વસ્થીભૂતાઃ, અત એવ 'અણાસવા' અનાસ્રવાઃ=આસ્રવરહિતાઃ, 'અગ્ગંથા' અગ્રન્થાઃ=નિર્ગ્રન્થાઃ, 'છિણ્ણગ્ગંથા' છિન્નગ્રન્થાઃ ગ્રન્થાતિ બધ્નાતિ આત્માનં કર્મણેતિ ગ્રન્થઃ, સ દ્વિવિધઃ—દ્રવ્યભાવભેદાત્, દ્રવ્યં-હિરણ્યાદિઃ,

વાટિકા—સહિત બ્રહ્મચર્ય કે ધારક થે, ફસલિયે ગુપ્તબ્રહ્મચારી થે । (અમમા) મમત્વ સે રહિત થે । (અકિંચણા) ધર્મોપકરણ સે અતિરિક્ત ઓર ફનકે પાસ કુછ નહીં થા । (અકોહા) ક્રોધરહિત થે । (અમાણા) માનરહિત થે । (અમાયા) માયારહિત થે । (અલોભા) લોભરહિત થે । (સંતા) બાહ્યસે શાન્તિયુક્ત થે, (પસંતા) આમ્યન્તર સે શાન્તિયુક્ત થે, અત એવ (ઉવસંતા) શીતીભૂત થે । (પરિણિવ્વુયા) કર્મકૃત વિકાર સે રહિત હોને કે કારણ સ્વસ્થ થે, અત એવ (અણાસવા) આસ્રવ સે રહિત થે । (અગ્ગંથા) નિર્ગ્રન્થ થે । (છિણ્ણગ્ગંથા) જો આત્મા કો કર્મો સે જકડે (બાંધે) ઉસકા નામ ગ્રન્થ હૈ । યહ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । ૧ દ્રવ્યગ્રન્થ, દૂસરા ભાવગ્રન્થ । હિરણ્યાદિ દ્રવ્યગ્રન્થ હૈ ।

હતા, તેથી તેમને ગુપ્તેન્દ્રિય કહે છે. (ગુપ્તવંમયારી) નવવાટિકા (વાડ) સહિત બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર હતા. (અમમા) મમત્વથી રહિત હતા. (અકિંચણા) ધર્મોપકરણથી અતિરિક્ત બીજું તેમની પાસે કંઈ નહોતું (અકોહા) ક્રોધરહિત હતા. (અમાણા) માનરહિત હતા. (અમાયા) માયારહિત હતા. (અલોભા) લોભરહિત હતા. (સંતા) બહારથી શાન્તિયુક્ત હતા. (પસંતા) આમ્યન્તરથી શાન્તિયુક્ત હતા, અત એવ (ઉવસંતા) ઉપશાન્ત—શીતીભૂત અન્દર અને બહારથી શીતલ હતા. (પરિણિવ્વુયા) કર્મકૃત વિકારથી હોવાને કારણે સ્વસ્થ હતા, અત એવ (અણાસવા) આસ્રવથી રહિત હતા. (અગ્ગંથા) નિર્ગ્રન્થ હતા. (છિણ્ણગ્ગંથા) જે આત્માને કર્મોથી જકડી રાખે (બાંધે) તેનું નામ ગ્રન્થ છે. એ બે પ્રકારના થાય છે. ૧ દ્રવ્યગ્રન્થ અને ૨ ભાવગ્રન્થ.

કંસપાઈવ મુક્તોયા, સંસ્વ ઇવ નિરંગના, જીવો વિવ અપ્પહિહયગઈ,

ભાવો મિથ્યાત્વાદિઃ, સ દ્વિવિધો ગ્રન્થસ્થિતો યૈસ્તે તથા । ‘છિન્નસોયા’ છિન્નસ્રોત-
સઃ—છિન્નસંસારપ્રવાહાઃ । ‘નિરુવલેવા’ નિરુપલેપાઃ—કર્મબન્ધહેતુરુપલેપો રાગાદિસ્તેન રહિતાઃ,
નિરુપલેપતામેવ ‘કંસપાઈવ’ ઇત્યાદિ—‘સુહુયહુયાસણો ઇવ’ ઇત્યન્તૈરુપમાનોપમેયભાવૈઃ
પ્રદર્શયતિ, તત્ર—‘કંસપાઈવ મુક્તોયા’ કાંસ્યપાત્રીવ મુક્તોયા—મુક્તં—ત્યક્તં તોયમિવ
સંસારબન્ધહેતુત્વાત્સ્નેહો યૈસ્તે તથા, યથા કાંસ્યપાત્ર્યાં પતિતમપિ જલં લિપ્તં ન ભવતિ
તથા સંસારબન્ધહેતુસ્તેષુ લિપ્તો ન ભવતીતિ ભાવઃ; ‘સંસ્વ ઇવ નિરંગના’ રાજ્ઞ ઇવ

મિથ્યાત્વાદિ ભાવગ્રન્થ હૈં । ઇન દોનોં પ્રકાર કે ગ્રન્થોં સે રહિત હોને કે કારણ યે
‘છિન્નગ્રન્થ’ કહે ગયે હૈં । (છિન્નસોયા) સંસાર કા પ્રવાહરૂપ સ્રોત ઇનસે અલગ
હો ચુકા થા । (નિરુવલેવા) કર્મબંધ મેં કારણભૂત રાગાદિક લેપ સે મી યે રહિત
થે; ઇસલિયે નિરુપલેપ થે । ઇસી બાત કો આગે કે ‘કંસપાઈવ’ સે લેકર ‘સુહુય-
હુયાસણો ઇવ’ યહાં તક કે ઉપમાન પદોં કે દ્વારા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં ।
(કંસપાઈવ મુક્તોયા) કાંસે કા ભાજન જિસ પ્રકાર પાની કે સંસર્ગ સે સર્વથા રહિત
હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર જલ કે તુલ્ય સ્નેહ કો સંસાર કા બંધન કા હેતુ હોને સે
જિન્હોને સર્વથા છોડ દિયા, અથવા કાંસે કે ભાજન મેં ગિરા હુઆ જલ જૈસે લિપ્ત
નહીં હોતા ઉસી પ્રકાર સંસારબંધનહેતુ આસ્રવ જિનમેં લિપ્ત નહીં હોતા, અતઃ વે
કાંસે કે ભાજન કે સમાન નિરુપલેપ કહે ગયે હૈં । (સંસ્વ ઇવ નિરંગના) શંસ્વ મેં

હિરણ્ય આદિ દ્રવ્યગ્રંથ છે. મિથ્યાત્વ આદિ ભાવગ્રન્થ છે. આ બન્ને
પ્રકારના ગ્રન્થોથી રહિત હોવાના કારણે તેઓને છિન્નગ્રંથ કહેવામાં આવ્યા
છે. (છિન્નસોયા) સંસારના પ્રવાહરૂપ સ્રોત તેમનાથી અલગ થઈ ચુક્યા હતા.
(નિરુવલેવા) કર્મબંધમાં કારણભૂત રાગાદિકલેપથી પણ તેઓ રહિત હતા,
તેથી નિરૂપલેપ હતા. આજ વાતને આગળના ‘કંસપાઈવ’ થી લઈને ‘સુહુયહુ-
યાસણો ઇવ’ અહીં સુધીનાં ઉપમાનપદોથી સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે. (કંસપાઈવ
મુક્તોયા) કાંસાનું વાસણ જેમ પાણીના સંસર્ગથી સર્વથા રહિત હોય છે
તેજ રીતે જલના તુલ્ય સ્નેહ જે, સંસારના બંધનનો હેતુ છે તેને જેમણે
સર્વથા છોડી દીધો, અથવા કાંસાના વાસણમાં પડેલા પાણી જેમ લિપ્ત થતાં
(ચોટતાં) નથી, તેવીજ રીતે સંસારબંધનનો હેતુ આસ્રવ જેઓમાં લિપ્ત થતો
નથી, તેથી તેઓને કાંસાના વાસણની પેઠે નિરૂપલેપ કહેવામાં આવ્યો છે.
(સંસ્વ ઇવ નિરંગના) શંખમાં જેમ કોઈ પણ રંગ હોતો નથી તેવીજ રીતે

जच्चकणगं पिव जायरूवा, आदरिसफलगा इव पागडभावा, कुम्भो

નીરજ્ઞના:—રજ્ઞનં—રાગાદ્યુપરજ્ઞનં તસ્માન્નિર્ગતા:; શબ્દે યથા કિમપિ રજ્ઞનદ્રવ્યં સ્થિતિં ન લભતે તથૈતેષ્વનગારેષુ રાગાદયો ન તિષ્ઠન્તીત્યર્થ: । ‘જીવો વિવ અપ્પહિયગઈ’ જીવ ઇવ અપ્રતિહતગતય:—જીવો યથા શુભાશુભકર્મવશાદવ્યાહતગત્યા સર્વત્ર યાતિ તથા અપ્રતિહતા ગતિર્યેષાં તે તથા, દેશનગરાદિષુ અપ્રતિબન્ધવિહારિત્વેન વાદાદિષુ—કુતીર્થિકમતનિરાકરણસામર્થ્યોપેતત્વેન ચ અસ્ખલિતગતય:; ‘જચ્ચકણગં પિવ જાયરૂવા’ જાત્યકનકમિવ જાતરૂપા:—શોધિતસુવર્ણમિવ નિર્મલા:—રાગાદિરહિતા इत्यर्थ: । ‘આદરિસફલગા ઇવ પાગડભાવા’ આદર્શફલકા ઇવ પ્રકટભાવા:—પ્રકટા:—પ્રકટિતા:; ભાવા:—ઉત્પાદવ્યયઘ્રૌવ્યસ્વભાવકા જીવાજીવાદિપદાર્થા: યૈસ્તે તથા, આદર્શફલકા

જૈસે કોઈ મી રંગ સ્થિતિ નહીં પા સકતા, ડસી પ્રકાર રાગાદિક મી ડન અનગારોં મેં ઠહર નહીં સકતે થે । અતઃ યે શંખ કે સમાન નીરજ્ઞન કહે ગયે હેં । (જીવો વિવ અપ્પહિયગઈ) જીવ જિસ પ્રકાર શુભ ઓર અશુભ કર્મ કે વશ પ્રેરિત હોકર અવ્યાહત ગતિ સે સર્વત્ર ચલા જાતા હૈ ડસી પ્રકાર ઇનકા મી દેશ, નગર આદિમેં અપ્રતિહતગતિવિહાર હોને સે ઇવં વાદ—વિવાદ આદિ મેં કુતીર્થિક મતોં કે નિરાકરણ કરને કી સામર્થ્ય સે યુક્ત હોને સે યે મી જીવ કે સમાન અસ્ખલિતગતિવાલે થે । (જચ્ચકણગં પિવ જાયરૂવા) શોધિતસુવર્ણ કે સમાન યે બિલ્કુલ નિર્મલ થે । (આદરિસફલગા ઇવ પાગડભાવા) આદર્શ અર્થાત્ કાચ જિસ પ્રકાર પ્રતિબિંબિત મુખાદિક અવયવોં કો યથાવસ્થિત પ્રકટ કરતા હૈ ડસી પ્રકાર યે મી અપને જ્ઞાન કે દ્વારા ઉત્પાદ વ્યય ઇવં ઘ્રૌવ્ય—વિશિષ્ટ જીવાજીવાદિક પદાર્થોં કો પ્રકટ કરતે થે । ઇનકી

રાગાદિક પણુ તે અનગારોમાં રહી શકતા નથી, તેથી તેઓ શંખની પેઠે નીરંગણ કહેવાય છે. (જીવોવિવ અપ્પહિયગઈ) જીવ જેમ શુભ અને અશુભ કર્મવશ પ્રેરિત થઈને અવ્યાહત ગતિથી સર્વત્ર ચાલ્યો જાય, તેમ તેઓની પણ દેશ નગર આદિમાં અપ્રતિહતગતિ—વિહાર હોવાથી તેમજ વાદવિવાદ આદિમાં કુતીર્થિકમતોનું નિરાકરણ કરવાનું સામર્થ્ય હોવાથી તેઓ પણ જીવની પેઠે અસ્ખલિતગતિવાળા હતા. (જચ્ચકણગં પિવ જાયરૂવા) શોધેલાં સુવર્ણના જેવા તેઓ બિલકુલ નિર્મળ હતા. (આદરિસફલગા ઇવ પાગડભાવા) આદર્શ અર્થાત્ અરીસો જેમ પ્રતિબિંબિત મુખ આદિક અવયવોને યથાવસ્થિત પ્રકટ કરે છે (દેખાડે છે) તેમ તેઓ પણ પોતાનાં જ્ઞાનદ્વારા ઉત્પાદ, વ્યય તેમ જ ઘ્રૌવ્ય—વિશિષ્ટ જીવ—અજીવ—

इव गुत्तिंदिया, पुक्खरपत्तं व निरुवलेवा, गगणमिव निरालंबणा,

यथा प्रतिबिम्बितान् सुखाद्यवयवान् यथावस्थितं प्रकटीकुर्वन्ति, तथा यत्कृतदेशनया जनानां चित्तदर्पणे जीवाजीवादिसकलपदार्थाः सुस्पष्टं प्रकाशन्ते इत्यर्थः । ‘कुम्भो इव गुत्तिंदिया’ कूर्म इव गुप्तेन्द्रियाः—कूर्मो यथा भयहेतौ सति संवृतसर्वेन्द्रियो भवति तथा संसार-भ्रमणभयाद् गुप्तानि=विषयकषायेभ्यः संरक्षितानि इन्द्रियाणि येषां ते गुप्तेन्द्रियाः । ‘पुक्खरपत्तं व निरुवलेवा’ पुष्करपत्रमिव निरुपलेपाः—यथा कमलपत्रं निर्लिप्तं सत् जलोपरि तिष्ठति तथा निरुपलेपाः—पङ्कजलतुल्यस्वजनविषयसम्बन्धरहिता भवन्तीति भावः । ‘गगणमिव निरालंबणा’ गगनमिव निरालम्बनाः—कुलग्रामनगराद्यालम्बनवर्जिताः,

जीवाजीवादिविषयक देशना ऐसी होती थी कि जिससे मनुष्यों के चित्तरूपी दर्पण में उत्पादादि—स्वभाव वाले समस्त जीवादिक पदार्थ अच्छी तरह—स्पष्टरूप से प्रतिभासित होने लगते थे । (कुम्भो इव गुत्तिंदिया) कच्छप जिस प्रकार भय के कारणों के उपस्थित होने पर समस्त इन्द्रियों को लंगोपित कर लेता है उसी प्रकार ये मुनिजन भी संसारपरिभ्रमण के भयसे विषय—कषायों की ओर से अपनी २ इन्द्रियों को सुरक्षित किये हुए रहते थे । (पुक्खरपत्तं व निरुवलेवा) जिस प्रकार कमलपत्र जल से निर्लिप्त होकर उस के ऊपर रहता है और कीचड़ से उत्पन्न होने पर भी जैसे वह उसके संबंध से रहित होता है इसी प्रकार ये साधुजन भी कीचड़ एवं जलतुल्य स्वजन, एवं विषयों के संबंध से बिल्कुल रहित थे । (गगणमिव निरालंबणा) आकाश की तरह ये कुल, ग्राम और नगर आदि के सहारे की अपेक्षा नहीं रखते थे । (अणिलो इव निरालया) पवन की तरह घर

આદિક પદાર્થોને પ્રકટ કરતા હતા. તેમની જીવાજીવાદિ વિષયની દેશના એવી થતી હતી કે જેથી મનુષ્યોના ચિત્તરૂપી દર્પણમાં ઉત્પાદ આદિ સ્વ-ભાવવાળા સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થ સારી રીતે સ્પષ્ટરૂપે પ્રતિભાસિત થતા હતા. (કુમ્મો ઇવ ગુત્તિંદિયા) કાચવો જેમ ભયનાં કારણે આવી પડતાં સમસ્ત ઇન્દ્રિયોને સંગોપિત કરી લે છે તેમ એ મુનિજનો પણ સંસાર-પરિભ્રમણના ભયથી વિષયકષાયોની તરફથી પોતપોતાની ઇન્દ્રિયોને સુરક્ષિત રાખતા હતા. (પુક્કરપત્તં વ નિરુવલેવા) જેમ કમળપત્ર જલથી નિર્લિપ્ત થઈને તેની ઉપર રહે છે અને કીચડથી ઉત્પન્ન થાય છે તો પણ જેમ તે તેના સંબંધથી રહિત હોય છે તેવી જ રીતે સાધુજન પણ કીચડ તેમ જ જલતુલ્ય સ્વજન તેમ જ વિષયોના સંબંધથી બિલકુલ રહિત હતા. (ગગણમિવ નિરાલંબણા) આકાશની પેઠે તેઓ કુળ, ગામ અને નગર આદિના આશ્રયની

अणिलो इव निरालया, चंदो इव सोमलेस्सा, सूरु इव दित्ततेया,
सागरो इव गंभीरा, विहग इव सव्वओ विप्पमुक्का, मंदरो इव
अप्पकंपा, सारयसलिलं व सुद्धहियया, खगिविसाणं व एगजाया,

‘अणिलो इव निरालया’ अनिल इव निरालयाः—पवन इव गृहरहिताः, ‘चंदो इव सोमलेस्सा’ चन्द्र इव सौम्यलेश्याः—अनुपतापहेतुमनःपरिणामधारिणः, ‘सूरु इव दित्ततेया’ सूर्य इव दीप्ततेजसः—द्रव्यतः शरीरदीप्त्या भावतो ज्ञानेन च देदीप्यमानाः। ‘सागर इव गंभीरा’ सागर इव गम्भीराः—हर्षशोकादिकारणसंयोगेऽपि निर्विकारचित्ताः। ‘विहग इव सव्वओ विप्पमुक्का’ विहग इव सर्वतो विप्रमुक्ताः—परिवारपरित्यागात् नियत—वासरहितत्वाच्चेति भावः। ‘मंदरो इव अप्पकंपा’ मन्दर इव अप्रकम्पाः—मेरुवत् परिषहोपसर्गपवनैरचलिताः। ‘सारयसलिलं व सुद्धहियया’ शारदसलिलमिव शुद्ध—हृदयाः—यथा शरदृतौ जलं निर्मलं भवति तथा परमनिर्मलहृदया इति भावः। ‘खगिविसाणं

से रहित थे। (चंदो इव सोमलेस्सा) चन्द्र के समान इनकी लेश्या सौम्य थी। (सूरु इव दित्ततेया) सूर्य के समान ये दीप्त तेजवाले थे। शारीरिक कांति द्रव्यतेज, एवं ज्ञान यह भावतेज है। (सागर इव गंभीरा) सागर के तुल्य ये गंभीर प्रकृति के थे। हर्ष शोक आदि के कारणों के उपस्थित होने पर भी इनके चित्त में किसी भी तरह का विकार उत्पन्न नहीं होता था। (विहग इव सव्वओ विप्पमुक्का) पक्षी की तरह ये नियमित निवास से रहित थे। (मंदरो इव अप्पकंपा) मेरुपर्वत की तरह परीषह एवं उपसर्गरूप पवन से ये अचलित थे। (सारयसलिलं व सुद्धहियया) शरद ऋतु के जल समान उनका हृदय निर्मल था। (खगिविसाणं व एगजाया) खड्गी

अपेक्षा राखता नडता। (अणिलो इव निरालया) पवननी पेठे धरथी रडित डता। (चंदो इव सोमलेस्सा) चंद्रनी पेठे तेमनी लेश्या सौम्य डती। (सूरु इव दित्ततेया) सूर्यनी पेठे तेओ दीप्त—तेजस्वी डता। शारीरिक कांति द्रव्यतेज तेम ज्ञान ओ भावतेज छे। (सागर इव गंभीरा) सागरना जेवा गंभीर प्रकृतिना तेओ डता। हर्ष शोक आदिनां कारणे आवी जतां पणु तेमना चित्तमां डेअ पणु जतनो विकार उत्पन्न थतो नडेतो। (विहग इव सव्वओ विप्पमुक्का) पक्षीनी पेठे तेओ नियमित निवासथी रडित डता। (मंदरो इव अप्पकंपा) मेरु पर्वतनी पेठे परीषड तेमज उपसर्गइय पवनथी तेओ अचलित डता। (सारयसलिलं व सुद्धहियया) शरद ऋतुना जलनी पेठे तेमनां हृदय निर्मल डता। (खगिविसाणं व एगजाया) खड्गी (गेंडा)ना शींगडानी पेठे,

भारंडपक्षीव अप्पमत्ता, कुंजरो इव सोंडीरा, वसभो इव जाय-

व एगजाया 'खड्गविषाणमिवैकजाताः—खड्गी=आण्यजीवः—तस्य विषाणं शृङ्गं, तदेकमेव भवति, तदिव एकजाताः—एकीभूता—रागादिसहायरहिताः, कुटुम्बादिसाहाय्यवर्जिता इत्यर्थः। 'भारंडपक्षीव अप्पमत्ता' भारण्डपक्षीवाऽप्रमत्ताः—भारण्डपक्षी=भारण्डश्चासौ पक्षी च भारण्ड-पक्षी, अर्थं द्विजीवकलिचरणवान् द्वाभ्यां ग्रीवाभ्यां द्वाभ्यां मुखाभ्यां च युक्तः, द्वयोर्जीवयोरेकमेवोदरं भवति, तौ चात्यन्तमप्रमत्ततयैव निर्वाहं लभेते। यदि कदाचिदैवात् तत्रैकोऽपि जीवः प्रमादं करोति, तदा उभयोर्नाशो भवति, तस्मात् सर्वदा चकितचित्तौ प्रमादरहितौ तौ तिष्ठतः। तद्वद-प्रमत्ताः—तपःसंयमादिधर्मरक्षणे प्रमादरहिता इत्यर्थः। 'कुंजरो इव सोंडीरा' कुंजर इव शौण्डीराः—हस्तीव शूराः—कषायादिरिपुभञ्जनशीलाः। 'वसभो इव जायत्थामा' वृषभ इव जातस्थामानः—जातं स्थाम—बलं येषां ते जातस्थामानः—वृषभवत्संजातपराक्रमा

(गैंडा) के सींग की तरह, ये रागादिकों की सहायता से रहित होने के कारण, एक-स्वरूप थे। (भारंडपक्षीव अप्पमत्ता) भारंड पक्षी की तरह ये अप्रमत्त थे। यह पक्षी दो जीववाला होता है। इसके तीन पैर होते हैं। ग्रीवा और मुख इसके दो होते हैं। उदर अर्थात् पेट एकही होता है। ये दोनों जीव अत्यंत अप्रमत्त होते हैं। यदि कदाचित् एक जीव प्रमाद करे तो दोनों का नाश होवे। इसलिये अप्रमत्तचित्त होकर ये दोनों बहुत ही सावधानी से रहते हैं। उसी तरह ये मुनिजन भी तप एवं संयमादिक धर्म के रक्षण करने में प्रमादवर्जित थे। (कुंजरो इव सोंडीरा) कुंजर के समान ये कषायादिक के भंजन में शौण्डीर—शूरवीर थे। (वसभो इव जायत्थामा) वृषभ के

तेઓ રાગાદિકોની સહાયતાથી રહિત હોવાને કારણે, એકસ્વરૂપ હતા. (ભારંડ-પક્ષીવ અપ્પમત્તા) ભારંડ પક્ષીની પેઠે તેઓ અપ્રમત્ત હતા. આ પક્ષી બે જીવવાળાં હોય છે. તેને ત્રણ પગ હોય છે. ડોક અને મુખ તેને બે હોય છે. ઉદર (પેટ) તેને એક જ હોય છે. તે બંને જીવ બહુ અપ્રમત્ત હોય છે. બે કદાચિત્ એક જીવ પ્રમાદ (ભૂલ) કરે છે તો બંનેનો નાશ થાય છે. તેથી અપ્રમત્તચિત્ત (ચતુર) થઈને તે બંને બહુ જ સાવધાનીથી રહે છે. તેવી જ રીતે એ મુનિજનો પણ તપ તેમજ સંયમ આદિ ધર્મનાં રક્ષણ કરવામાં પ્રમાદરહિત હતા. (કુંજરો ઇવ સોંડીરા) કુંજર (હાથી)ની પેઠે તેઓ કષાય આદિકના ભંગ (નાશ) કરવામાં શૌંડીર—શૂરવીર હતા. (વસભો ઇવ જાયત્થામા) વૃષભની પેઠે તેઓ બલિષ્ઠ હતા. (સીહો ઇવ દુહ-

त्थामा, सीहो इव दुद्धरिसा, वसुंधरा इव सव्वफासविसहा,
सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंता ॥ सू० २७ ॥

इत्यर्थः । ‘ सीहो इव दुद्धरिसा ’ सिंह इव दुर्धषाः—सिंहवत्परीषहादिमृगैर्दुर्धषा इत्यर्थः ।
‘ वसुंधरा इव सव्वफासविसहा ’ वसुन्धरा इव सर्वस्पर्शविषहाः—पृथ्वी यथा सर्वं सहा-
मसह्यं वा स्पर्शं सहते सर्वसहेति चोच्यते तथैवैते साधवोऽपि अनुकूलप्रतिकूलपरीषहोपसर्ग-
सुसहा भवन्ति । ‘ सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंता ’ सुहुतहुताशन इव तेजसा
ज्वलन्तः—सुहुतः=सुष्टु हुतः—घृताद्याहुतिभिस्तर्पितो यो हुताशनो वह्निः—तद्वत्तेजसा—तपः—
संयमतेजसा ज्वलन्तो दीप्यमाना इति भावः॥

अत्र उपमानसंग्राहकम् इदं गाथाद्वयम्:—

‘ कंसे १ संखे २ जीवे ३, जच्चे कणगे य ४ आदरिसे ५ ।

कुम्मे ६ पुक्खरपत्ते ७, गयणे ८ अणिले ९ य चंद्र १० सूरं य ११॥

सागर १२ विहगे १३ मंदर १४, सारयसलिलं च १५ खग्गी य १६ ।

भारंडे १७ गय १८ वसहे १९, सीह २० वसुंधरा २१ सुहुयहुए
२२॥ २॥ इति ॥ सू० २७ ॥

समान ये बलिष्ठ थे । (सीहो इव दुद्धरिसा) सिंह के समान ये दुर्धष थे । सिंह जैसे
मृगादिकों से अप्रवृण्य होता है, उसी प्रकार मृग जैसे परीषहादिकों से ये भी चलितचित्त
नहीं होते थे । (वसुंधरा इव सव्वफासविसहा) पृथिवी के समान सर्वस्पर्शसह
थे । पृथिवी जिस तरह सहने योग्य अथवा नहीं सहन करने योग्य ऐसे भी स्पर्श
को सहती है उसी प्रकार ये मुनिजन भी अनुकूल एवं प्रतिकूल परीषहों के उपनिपात
को अच्छी तरह सहन करते थे । (सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंता) सुहुत
अग्नि की तरह ये तप और संयम के तेज से देदीप्यमान थे ॥सू. २७ ॥

रिसा) सिंङना जेवा तेओ दुर्धष डता. सिंङ जेम मृग आदिङोथी अप-
धृष्य डाय छे तेवी ज रीते मृगसमान परीषड आदिङोथी तेओ पणु चलित-
चित्त थता नडोता. (वसुंधरा इव सव्वफासविसहा) पृथिवीनी पेडे सर्व स्पर्श
सडन डरता डता. पृथिवी जेम सडेवा योग्य अथवा न सडन डरवा योग्य
ओवा पणु स्पर्शने सडन डरे छे तेवी ज रीते ओ मुनिजनो पणु अनुकूल
तेम ज प्रतिकूल परीषडोना उपनिपात ने सारी रीते सडन डरता डता.
(सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंता) सुहुत अग्निनी पेडे तेओ तप अने संयमना
तेजथी देदीप्यमान डता. (सू० २७)

मूलम्—नत्थि णं तेसि णं भगवंताणं कत्थइ पडिबंघे
भवइ । से य पडिबंघे चउव्विहे पण्णत्ते; तंजहा—दव्वओ
खेत्तओ कालओ भावओ । दव्वओ णं—सच्चित्ताचित्तमीसिएसु

टीका—‘ नत्थि ’ इत्यादि । नास्ति अयं पक्षः, यत् खलु ‘ तेसि
णं भगवंताणं ’ तेषां खलु भगवताम्—श्रीमहावीरस्वामिनः शिष्याणाम् ‘ कत्थइ ’
क्वापि—कस्मिन्नपि विषये ‘ पडिबंघे भवइ ’ प्रतिबन्धः—आसक्तिः भवतीति, श्री महावीर-
स्वामिनोऽन्तेवासिनां संयमप्रतिबन्धीभूतः कोऽपि हेतुः कुत्राऽपि न भवतीति भावः ।
‘ से य पडिबंघे चउव्विहे पण्णत्ते ’ स च प्रतिबन्धश्चतुर्विधः प्रज्ञतः ‘ तं जहा ’ तद्यथा-भेद-
प्रकारश्चेत्थम्—द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतश्च । तेषु ‘ दव्वओ णं ’ द्रव्यतः खलु ‘ सच्चित्ता-
चित्त-मीसिएसु दव्वेसु ’ सच्चित्ताऽचित्त-मिश्रितेषु द्रव्येषु । तत्र—सचित्तं=शिष्यादिकम्,
अचित्तं=ब्रह्मादिकम्, मिश्रितम्=शिष्यसहितब्रह्मादिकम्, एतेषु द्रव्येषु; ‘ खेत्तओ ’ क्षेत्रतः—

‘ नत्थि णं ’ इत्यादि ।

(तेसि णं भगवंताणं) भगवान् महावीर के समीप में रहनेवाले उन स्थविर
भगवन्तों का (कत्थइ) किसी भी विषय में (पडिबंघे) प्रतिबंध (नत्थि) नहीं
था । अर्थात् भगवान् वीर प्रभु के ये समस्त मुनिजन संयम के विधातक किसी भी विषय
में आसक्ति नहीं रखते थे । (से य पडिबंघे चउव्विहे पण्णत्ते) वह प्रतिबंध चार प्रकार
का कहा गया है; (तंजहा) वह इस प्रकार है—(दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ)
द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से एवं भाव से । (दव्वओ णं सच्चित्ता-चित्त-मीसिएसु
दव्वेसु) द्रव्य से प्रतिबंध ३ प्रकार का है—(१) सचित्त (२) अचित्त (३) सच्चित्ताचित्त ।

‘ नत्थि णं ’ इत्यादि ।

(तेसि णं भगवंताणं) भगवान् महावीरना समीपमां रहनेवाला ते
स्थविर भगवन्ताने (कत्थइ) कोऽपि विषयमां (पडिबंघे) प्रतिबंध (नत्थि)
न होता, अर्थात्—भगवान् वीरप्रभुना ते समस्त मुनिजनो संयमना विधातक
होय अथा कोऽपि विषयमां आसक्ति राखता न होता. (से य पडिबंघे
चउव्विहे पण्णत्ते) ते प्रतिबंध चार प्रकारना कहेला छे. (तंजहा) ते चार प्रकारे
छे. (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ) द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी तेभज भावथी.
(दव्वओ णं सच्चित्ता-चित्त-मीसिएसु दव्वेसु) द्रव्यथी प्रतिबंध त्रण प्रकारना
छे—(१) सचित्त, (२) अचित्त, (३) सच्चित्ताचित्त, शिष्य आदिक सचित्त छे.

દવ્વેસુ । સ્વેત્તઓ-ગામે વા ણયરે વા રણે વા સ્વેત્તે વા સ્વલે વા ઘરે
વા અંગણે વા । કાલઓ-સમણ વા આવલિયાણ વા આણા-

‘ગામે વા’ ગ્રામે વા, ‘ણયરે વા’ નગરે વા ‘રણે વા’ અરણ્યે વા, ‘સ્વેત્તે વા’ ક્ષેત્રે વા, સ્વલે=ધાન્યસંમ
ર્દનસંશોધનસ્થાને વા, ‘ઘરે વા અંગણે વા’ ગૃહે વાઽઙ્ગણે વા । ‘કાલઓ સમણ વા આવલિયાણ
વા’ કાલતઃ—સમયે સર્વતો જઘન્યે કાલે, સમયસ્ય વિસ્તૃતોઽર્થ ઉપાસકદશાઙ્ગત્યાગારધર્મસંજીવની-
વૃત્તિતોઽવસેયઃ । ‘આવલિકાયામ્’ અસંખ્યાતસમય રૂપાયામ્, ‘આણાપાણુણ વા’ આનપ્રાણે વા=

શિષ્યાદિક સચિત્ત હૈં । વસ્ત્રાદિક અજીવ પદાર્થ અચિત્ત હૈં । શિષ્યસહિત વસ્ત્રાદિક
સચિત્તાચિત્ત હૈં । इनमें इन मुनिजनों को बिलकुल भी आसक्ति नहीं थी । (स्वेत्तओ
गामे वा णयरे वा रण्णे वा स्वेत्ते वा स्वले वा घरे वा अंगणे वा) इसी तरह क्षेत्र की
अपेक्षा—ग्राम में, नगर में, जंगल में, क्षेत्र में, स्वल—धान्यादिक के कूटने और फटकने के
स्थान ऐसे खलिहान में, घर में अथवा आंगन में प्रतिबंध नहीं था । (कालओ
समण वा आवलियाण वा आणापाणुण वा थोवे वा लवे वा मुहुत्ते
वा अहोरत्ते वा पक्खे वा मासे वा अयणे वा अण्णयरे वा दीहकालसंजोगे)
कालकी अपेक्षा से समय—सब से छोटे काल में, इस समय और कालका विस्तृत
अर्थ ‘उपासकदशांग’ की ‘अगारधर्मसंजीवनी’ वृत्ति में कहा है, वहां से जान लेना चाहिये ।
आवलिका में, असंख्यात समयकी एक आवलिका होती है; उच्छ्वासनिश्वासकालरूप
आनप्राण में, स्तोकमें—सप्तप्राणप्रमाणवाले कालविशेषमें—सात उच्छ्वासमें, लवमें—सात-

વસ્ત્રાદિક અજીવ પદાર્થ અચિત્ત છે. શિષ્યસહિત વસ્ત્રાદિક સચિત્તાચિત્ત છે.
તેમાં એ મુનિજનોને બિલકુલ જ આસક્તિ નહોતી. (સ્વેત્તઓ ગામે વા ણયરે
વા રણે વા સ્વેત્તે વા સ્વલે વા ઘરે વા અંગણે વા) તેવી જ રીતે ક્ષેત્રની
અપેક્ષા—ગામમાં, નગરમાં, જંગલમાં, ખેતરમાં, ખલ—ધાન્ય વગેરેને કૂટવા-
ખાંડવાનાં સ્થાનભૂત એવાં ખલિહાનમાં, ઘરમાં, આંગણમાં પ્રતિબંધ નહોતો.
(કાલઓ સમણ વા આવલિયાણ વા આણાપાણુણ વા થોવે વા લવે વા મુહુત્તે
વા અહોરત્તે વા પક્ખે વા માસે વા અયણે વા અણ્ણયરે વા દીહકાલસંજોગે) કાલની
અપેક્ષાએ સમય—સૌથી થોડા કાળમાં (આ સમય અને કાલનો વિસ્તૃત
અર્થ ‘ઉપાસકદશાંગની’ ‘અગારધર્મસંજીવની’ વૃત્તિમાં કહેલો છે ત્યાંથી
જાણી લેવો જોઈએ.), આવલિકામાં (અસંખ્યાત સમયની એક આવલિકા થાય
છે), ઉચ્છ્વાસ—નિઃશ્વાસ—કાલરૂપ આનપ્રાણમાં, સ્તોકમાં—સપ્તપ્રાણના પ્રમાણ

पाणुए वा थोवे वा लवे वा मुहुत्ते वा अहोरत्ते वा पक्खे वा मासे
वा अयणे वा अण्णयरे वा दीहकालसंजोगे । भावओ—कोहे वा
माणे वा मायाए वा लोहे वा भए वा हासे वा । एवं तेसिं ण भवइ
॥ सू० २८ ॥

उच्छ्वासनिःश्वासकाल इत्यर्थः, 'थोवे वा' स्तोके वा=सप्तप्राणमाने वा कालविशेषे,
'सप्त पाणाणि से थोवे' इत्युक्तेः । 'लवे वा'—'सप्त थोवाणि से लवे'
इति सप्तस्तोकमिते काले वा, 'मुहुत्ते वा' मुहूर्त्ते वा—लवानां सप्तसप्ततिप्रमाणे काले,
'अहोरत्ते वा' अहोरात्रे वा—रात्रिदिवसप्रमाणे काले वा, 'पक्खे वा' पक्षे—पञ्चदशदिवस-
प्रमाणके काले वा 'मासे वा' त्रिंशदिवसप्रमाणके काले वा, 'अयणे वा' अयने—
उत्तरायणदक्षिणायनभेदाद्विविधे षण्मासप्रमिते काले वा, 'अण्णयरे वा दीहकालसंजोगे'
अन्यतरस्मिन् वा दीर्घकालसंयोगे—उक्तप्रभेदाद् भिन्ने वा संवत्सरादिरूपे काले । 'भावओ'
भावतः—'कोहे वा' क्रोधे वा 'माणे वा'—माने वा, 'मायाए वा'—मायायां वा, 'लोहे वा'
लोभे वा 'भए वा' भये वा, हासे वा । 'एवं तेसिं ण भवइ' एवं तेषां न भवति,
एवं—पूर्ववर्णितप्रकारेण तत्र तत्र प्रतिबन्धः—आसक्तिस्तेषां मुनीनां न भवति ॥सू० २८॥

स्तोक अर्थात् ४९ उच्छ्वास—प्रमित कालमें, मुहूर्त्तमें—७७ लवोंसे प्रमित कालमें, अहो-
रात्रमें, पक्ष—१५ दिनके कालमें, मास—३० दिन—प्रमाण समयमें, अयनमें—उत्तरायण—
दक्षिणायन रूप छ छ महिनोमें, एवं और भी संवत्सरादिरूप बृहत्समयमें प्रतिबंध नहीं था ।
(भावओ) भावकी अपेक्षासे (कोहे वा माणे वा मायाए वा लोहे वा भए वा हासे वा
एवं तेसिं ण भवइ) क्रोधमें, मानमें, मायामें, लोभमें, भयमें, अथवा हास्यमें उन
मुनिजनोंको किसीभी तरहका प्रतिबंध नहीं था ॥ सू० २८ ॥

जेटला काणविशेषमां—सात उच्छ्वासमां, लवमां—सात स्तोत्र अर्थात् ४९
उच्छ्वासना प्रमाणना काणमां, मुहूर्त्तमां—७७ लवोथी प्रमित काणमां, अहो-
रात्रिमां, पक्ष—१५ दिवसना काणमां, मास—३० दिवसना समयमां, अयनमां—
उत्तरायण—दक्षिणायनइय छ छ महिनामां, तेमज्जीणीपणु संवत्सर आदिइय
लांआ समयमां प्रतिबंध नहोतो. (भावओ) भावनी अपेक्षाये (कोहे वा
माणे वा मायाए वा लोहे वा भए वा हासे वा एवं तेसिं ण भवइ) क्रोधमां,
मानमां, मायामां, लोभमां, भयमां अथवा हास्यमां ते मुनिओने केध पणु
तरेहुनो प्रतिबंध नहोतो. (सू. २८)

મૂલમ્—તે ણં ભગવંતો વાસાવાસવજ્ઞં અદ્વ ગિમ્હહેમંતિયાણિ માસાણિ ગામે એગરાહ્યા ણયરે પંચરાહ્યા, વાસીચંદણસમાણ-

‘તે ણં ભગવંતો’ इत्यादि। ते=श्रीवर्धमानस्वामिनः शिष्याः खलु भगवन्तो ‘वासावासवज्ज्ञं’ वर्षावासवर्जम् ‘अद्व गिम्हहेमंतिયાणि’ अष्टौ ग्रैष्महैमन्तिकान् ‘मासाणि’ मासान्, ‘गामे एगराह्या’ ग्रामे एकरात्रिकाः—यस्मिन् दिवसेऽनगारा ग्राममागच्छन्ति स दिवसः पुनर्यावन्नावर्तते तावत्पर्यन्तः काल एकरात्रशब्देन गृह्यते; तेनैकसप्ताहनिवासिन इत्यर्थः। ‘णयरे पंचराह्या’—नगरे पञ्चरात्रिकाः—यस्मिन् दिवसेऽनगारा नगरमागच्छन्ति स दिवसः पञ्चवारमावर्तितः पञ्चरात्रमुच्यते, तेनैकोनत्रिंशदिवसवासिन इत्यर्थः। स्थविरकल्पिनां शेषकाले एकस्मिन् नगरे मासकल्पविहारित्वात्। ‘वासी-चंदण-समाण-कप्पा’ वासी-चन्दन-समान-कल्पाः, वासी-‘वसुला’ इति प्रसिद्धः काष्ठतक्षणशस्त्रविशेषः, वासीव वासी अपकारी, तां चन्दनसमानं-चन्दनवत् कल्पयन्ति=मन्यन्ते ये ते वासीचन्दनसमानकल्पाः—अपकारिण-मप्युपकारकत्वेन मन्यमाना इत्यर्थः। तथा चोक्तम्—

‘તેણં ભગવંતો’ इत्यादि,

(તેણં ભગવંતો) વર્દ્ધમાન સ્વામી કે વે સંયમી શિષ્યજન (વાસાવાસવજ્ઞં) વર્ષાકાલ—ચૌમાસા છોડકર (અદ્વ ગિમ્હહેમંતિયાણિ માસાણિ) ગ્રીષ્મકાલ એવં શીત-કાલકે ૮ મહીનોમાં (ગામે) છોટે ગામમાં (એગરાહ્યા) એકરાત્રિપર્યન્ત—એક સપ્તાહ તક ઓર (ણયરે) નગરમાં (પંચરાહ્યા) પાંચ રાત્રિતક—૨૯ દિવસ—પર્યન્ત ઠહરતે થે। (વાસી-ચંદણ-સમાણ-કપ્પા) યે અપને અપકારીજનકો મો ઉપકારીરૂપસે માનતે થે। અથવા કોઈં ચાહેં ઇન્હેં વસૂલાસે છીલે, ચાહેં ચંદનસે ચર્ચે, દોનોં પર સમાન દૃષ્ટિ રાખતે થે। કહા મો હૈ

‘તેણં ભગવંતો’ इत्यादि

(તેણં ભગવંતો) વર્દ્ધમાન સ્વામીના તે સંયમી શિષ્યજનો (વાસાવાસ-વજ્ઞં) વર્ષાકાલ—ચૌમાસાં છોડીને (અદ્વ ગિમ્હહેમંતિયાણિ માસાણિ) ગ્રીષ્મકાલ તેમજ શીતકાલના આઠ મહિનામાં (ગામે) નાના ગામમાં (એગરાહ્યા) એક રાત્રિ સુધી—એક અઠવાડીયા સુધી, અને (ણયરે) નગરમાં (પંચરાહ્યા) પાંચ રાત્રિ સુધી—૨૯ દિવસ સુધી રોકાતા હતા. (વાસીચંદણસમાણકપ્પા) તે પોતાના અપકારીજનોને પણ ઉપકારીરૂપ ગણતા હતા. અથવા કોઈં ભલે તેમને વાંસલાથી છોલે કે ભલે ચંદનથી ચર્ચે બેઉપર સમાન દૃષ્ટિ રાખતા હતા. કહ્યું પણ છે—

“ યો મામપકરોત્યેષ, તત્ત્વેનોપકરોત્યસૌ ॥

શિરામોક્ષાદ્યુપાયેન, કુર્વાણ ઇવ નીરુજમ્ ॥ ” ઇતિ ॥

યદા-વાસ્યાં ચન્દનસમાનઃ કલ્પ આચારો યેષાં તે વાસીચન્દનસમાનકલ્પાઃ,

યો મામપકરોત્યેષ તત્ત્વેનોપકરોત્યસૌ ।

શિરામોક્ષાદ્યુપાયેન, કુર્વાણ ઇવ નીરુજમ્ ॥ ૧ ॥

સજ્જનોંકા જબ કોઈ મનુષ્ય અપકાર કરતા હૈ, તબ વે એસા સમજતે હૈં કિ યહ જો મેરા અપકારી હૈ સો તો વસ્તુતઃ ઉપકારી હી હૈ । ક્યોં કિ ઇસકે અપકાર સે હમારી સહનશીલતા આદિ ગુણોંકી પરીક્ષા હોતી હૈ, શત્રુ-મિત્રમેં, નિન્દા-સ્તુતિ-આદિમેં સમ-દૃષ્ટિતા બઢતી હૈ । અતઃ યહ મેરા અપકારી નહીં, પ્રત્યુત ઉપકારી હૈ । જૈસે કિસીકી ગર્દનકી નસ યદિ ચઢ જાતી હૈ, ઇસકો યથાસ્થાનમેં બૈઠાનેકે વૈદ ઇસકા શિર પકડ-કર બાયેં-દાયેં ઘુમાતા હૈ, ઇસ સમય રોગીકો પીડા હોતી હૈ, પરન્તુ નસકે અપને સ્થાન પર બૈઠ જાને પર પીડિતકી પીડા શાન્ત હો જાતી હૈ, વહ નીરોગ હો જાતા હૈ, ઇસી પ્રકાર અપકારી ભી અપકારકે દ્વારા સજ્જનોંકી આત્માકો, જો અનાદિકાલસે સ્વ-સ્થાનચ્યુત હો સંસારમેં ભ્રમણ કર રહી હૈ; સ્વસ્થાનમેં સ્થિત કરતા હૈ । ઇસલિયે સજ્જન અપને અપકારીકો ઉપકારીહી માનતે હૈં, ઇસ પર આક્રોશ કમી ભી નહીં કરતે ।

યો મામપકરોત્યેષ તત્ત્વેનોપકરોત્યસૌ ।

શિરામોક્ષાદ્યુપાયેન કુર્વાણ ઇવ નીરુજમ્ ॥ ૧ ॥

સજ્જનોના કોઈ મનુષ્ય જ્યારે અપકાર કરે છે ત્યારે તેઓ એમ સમજે છે કે આ જે અમારો અપકારી છે તે તો ખરીરીતે ઉપકારી જ છે. કેમકે તેના અપકારથી અમારી સહનશીલતા આદિગુણોની પરીક્ષા થાય છે, શત્રુ-મિત્રમાં, નિંદા-સ્તુતિ આદિમાં સમદૃષ્ટિપણું વધે છે. તેથી તે અમારો અપકારી નથી; પરંતુ ઉપકારી છે. જેમકે કોઈની ગરદનની નસ જે ચડી જાય છે તો તે બરાબર ઠેકાણે ખેસાડી દેવાને માટે વૈદ તેનું માથું પકડીને જમણું-ડાણું ફેરવે છે. તે વખતે રોગીને પીડા થાય છે; પરંતુ નસને પોતાને ઠેકાણે ખેસી જવાથી તે રોગીની પીડા શાંત થઈ જાય છે, અને તે નિરોગી થઈ જાય છે. તેવીજ રીતે અપકારી પણ અપકારદ્વારા સજ્જનોના આત્માને-કે જે અનાદિકાલથી પોતાના સ્થાનથી ચ્યુત થઈ સંસારમાં ભ્રમણ કરી રહેલો છે તેને-પોતાના સ્થાનમાં સ્થિર કરે છે. તેથી સજ્જન પોતાના અપકારીને ઉપકારીજ માને છે. તેના પર ગુસ્સો કદી પણ કરતા નથી.

કપ્પા સમલેટ્ટુકંચણા સમસુહદુક્ષ્વા ઇહલોગ-પરલોગ-અપ્પડિબદ્ધા
સંસારપારગામી કમ્મણિગ્ધાયણદ્વાણ અભુદ્ધિયા વિહરંતિ ॥ સૂ. ૨૧ ॥

તથાચોક્તમ્—

“ અપકારપરેડપિ પરે, કુર્વંત્યુપકારમેવ હિ મહાન્તઃ ।

સુરમીકરોતિ વાસીં, મલયજમપિ તક્ષમાણમપિ ॥ ” ઇતિ ।

‘સમલેટ્ટુકંચણા’ સમલેટ્ટુકાચ્ચનાઃ=લેટ્ટુઃ—મૃત્તિકાચ્ચણ્ડઃ, કાચ્ચનં—સુવર્ણ, તે ઉમે સમે તુલ્યે યેષાં તે તથા, ‘સમસુહદુક્ષ્વા’ સમસુહદુઃસ્વાઃ, સુખે દુઃખે ચ સમાનપરિણામા

હૈં, અથવા—વાસી—અપકારીમાં ચંદનકે સમાન હૈ આચાર જિનકા એસે વે સાધુજન થે । ચંદન વાસી દ્વારા—વસૂલા દ્વારા—કાટે જાને પર મી વસૂલાકે મુખકો સુવાસિત કરતા હૈ । કહા મી હૈ—

અપકારપરેડપિ પરે, કુર્વંત્યુપકારમેવ હિ મહાન્તઃ ।

સુરમીકરોતિ વાસીં મલયજમપિ તક્ષમાણમપિ ॥ ૧ ॥

તથા દુષ્ટ—સ્વભાવવાલે મનુષ્ય યદપિ સજ્જનોંકા નિરન્તર અપકાર હી કરતે રહતે હૈં, તો મી વે સજ્જન ઉન અપકારિયોં પર કમી મી ક્રુદ્ધ નહીં હોતે હૈં, ઉનકા કમી મી અપકાર નહીં કરતે હૈં । પ્રત્યુત વે અપકારિયોંકા મી ઉપકાર હી કરતે હૈં । જૈસે ચંદનવૃક્ષ અપને અંજીકો કાટનેવાલે મનુષ્યકો, કાટને કે સાધન કુઠારકે મુખકો મી સુરમિત હી કરતા હૈ ॥૧॥

(સમલેટ્ટુકંચણા) પાષાણ ઓર સુવર્ણ ઇન દોનોં કો બરાબર સમજતે થે । (સમસુહ-

અથવા વાસી—અપકારી પ્રતિ ચંદનના સરખો આચાર છે જેમનો એવા તે સાધુજનો હતા. ચંદન વાસીદ્વારા—વાંસલાથી કપાઈ જવા છતાં પણ વાંસલાના મુખને સુવાસિત કરે છે. કહ્યું પણ છે—

અપકારપરેડપિ પરે, કુર્વંત્યુપકારમેવ હિ મહાન્તઃ ।

સુરમીકરોતિ વાસીં મલયજમપિ તક્ષમાણમપિ ॥

તથા તે દુષ્ટ સ્વભાવવાળા મનુષ્ય જે કે સજ્જનોનો હમેશ અપકાર જ કર્યા કરે છે તો પણ તે સજ્જનો તે અપકારીઓ ઉપર કદી પણ ક્રોધ કરતા નથી, કદી પણ તેમનો અપકાર કરતા નથી; પરંતુ તે અપકારીઓ ઉપર પણ ઉપકાર જ કરે છે. જેમ ચંદનવૃક્ષ પોતાનાં અંગને કાપવાવાળા મનુષ્યને, અને કાપવાના સાધન કુડાડાના મુખને પણ સુગંધિત કરે છે. (૧) (સમલેટ્ટુ-કંચણા) પાષાણ અને સુવર્ણ એ બન્નેને બરાબર સમજતા હતાં. (સમસુહ-

मूलम्—तेसि णं भगवंताणं एएणं विहारेणं विहरमा-

इत्यर्थः । ‘ इहलोक-परलोक-अप्पडिबद्धा ’ इहलोकपरलोकाऽप्रतिबद्धाः—लोकद्वयसुखास-
क्तिरहिताः, ‘ संसार-पार-गामी ’ संसार-पार-गामिनः—भवसमुद्रतः स्वपरात्मतारकाः,
‘ कम्मणिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिया विहरंति ’ कर्मनिर्घातनार्थमभ्युत्थिताः—सकलकर्मनिर्जरणार्थं
कृतोद्यमा विहरन्ति ॥ सू० २९ ॥

टीका—‘ तेसि णं ’ इत्यादि । तेषां श्रीमहावीरस्वामिशिष्याणां ‘ भगवंताणं ’
भगवतां—तपःसंयमशोभाशालिनाम्, ‘ एएणं विहारेणं विहरमाणं ’ एतेन विहारेण
विहरताम्—तत्र विहारः=विचरणं—मुनिचर्या, यद्वा विविधैरनेकप्रकारैरुपधिभारवहन—पादचलन—
परोषहसहनादिरूपैः कायक्लेशैः कर्माणि ह्रियन्तेऽनेनेति विहारः, एतेन विहारेण—ग्रामनगरा-

दुःखा) सुख एवं दुःखमें समान परिणाम वाले थे । सुखमें हर्ष एवं दुःखमें विषाद
इस प्रकार विषमता लिये इनके परिणाम नहीं थे । (इहलोक-परलोक-अप्पडिबद्धा)
इस लोक—संबंधी एवं परलोक संबंधी सुखोंकी आसक्ति इनके हृदयमें नहीं थी । (संसार-
पारगामी) ये भवरूपी समुद्रको तिरनेवाले थे । (कम्मणिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिया
विहरंति) समस्त कर्मोंकी निर्जरा करनेके लिये ही संयमाराधनमें तत्पर होकर विचरते
थे ॥ सू० २९ ॥

‘ तेसि णं भगवंताणं ’ इत्यादि,

(तेसि णं भगवंताणं) महावीर स्वामीके इन स्थविर भगवन्तोंका जो (एएणं
विहारेण विहरमाणं) इस प्रकारके विहार करते थे । विहार शब्दका अर्थ मुनिचर्या

दुःखा) सुख तेमज दुःखमां समान परिणामवाणा हुता. सुखमां हर्ष
तेमज दुःखमां विषाद (शोक) जेवी विषमता तेमनामां नहोती. (इहलोक-
परलोक-अप्पडिबद्धा) आ दोक-संबंधी तेमज परदोक-संबंधी सुखोनी
आसक्ति तेमना हृदयमां नहोती. (संसारपारगामी) तेओ लवइपी समुद्रने
तरवावाणा हुता. (कम्मणिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिया विहरंति) समस्त कर्मोनी
निर्जरा करवा भाटे ज संयम-आराधनमां तत्पर थछने विचरता हुता.
(सू. २९)

‘ तेसि णं भगवंताणं ’ इत्यादि,

(तेसि णं भगवंताणं) ओ महावीर स्वामीना ते स्थविर भगवन्तो
(एएणं विहारेणं विहरमाणं) आ प्रकारे विहार करता हुता. विहार शब्दने

णाणं इमे एयारूवे सव्भंतरवाहिरए तवोवहाणे होत्था । तं जहा—अब्भितरणे वि छव्विहे, बाहिरए वि छव्विहे । से

दिगमनरूपेण सञ्चरताम्, 'इमे एयारूवे' इदमेतद्रूपं=वक्ष्यमाणस्वरूपं 'सव्भंतरवाहिरए' साम्यन्तरबाह्यं 'तवोवहाणे' तपउपधानं=तपःकर्म 'होत्था' आसीत्; 'तं जहा' तद्यथा—'अब्भितरणे वि छव्विहे' आभ्यन्तरकमपि षड्विधं, 'बाहिरए वि छव्विहे' बाह्यमपि षड्विधम् । 'से किं तं बाहिरए छव्विहे पणत्ते' ?—अथ किं तद् बाह्यं षड्विधं प्रज्ञप्तम् ?—अथेति

है । अथवा—“विविधैः—अनेकप्रकारै—रूपधिभारवहन-पादचलन-परीषहसहनादिरूपैः कायक्लेशैः कर्माणि ह्रियन्ते अनेनेति विहारः” इस व्युत्पत्तिके अनुसार संयमोपयोगी वस्त्रपात्रादिरूप उपधिको स्वयं उठाना, विना किसी सवारीके पादत्राण—रहित होकर चलना, क्षुधापरीषह आदिका सहना—आदि विविध कायक्लेशों द्वारा कर्मोंका हरण किया जाता है जिससे उसका नाम विहार है । इस विहार से वे मुनिवर ग्राम-नगरादि में विचरते थे । इन मुनिवरों के (इमे एयारूवे) इस प्रकार वक्ष्यमाण रूप से (सव्भंतरवाहिरए तवोवहाणे होत्था) आभ्यन्तर एवं बाह्य तप—उपधान था, अर्थात् वे तपस्या में तत्पर थे । (तं जहा) वह इस प्रकार है—(अब्भितरणे वि छव्विहे बाहिरए वि छव्विहे) तप दो प्रकार का है—एक आभ्यन्तर तप और दूसरा बाह्य तप । इनमें आभ्यन्तर तप भी छह प्रकार का है और बाह्यतप भी छह प्रकार का है । (से किं तं बाहिरए छव्विहे पणत्ते) ये छ प्रकार के बाह्यतप

અર્થ મુનિચર્યા છે. અથવા—“વિવિધૈઃ=અનેકપ્રકારૈરુપધિભારવહન-પાદચલન-પરી-ષહસહનાદિરૂપૈઃ કાયક્લેશૈઃ કર્માણિ હ્રિયન્તે અનેન ઇતિ વિહારઃ” એ વ્યુત્પત્તિ-અનુસાર સંયમ-ઉપયોગી વસ્ત્રપાત્ર આદિરૂપ ઉપધિને પોતે ઉપાડવી, કોઈ પાડન વિના અને પગરખાં વિના ચાલવું, ક્ષુધા (ભૂખ)—પરીષદ આદિ સહન કરવાં વિગેરે વિવિધ કાયકલેશોદ્વારા કર્મોનો ક્ષય થાય છે જેનાથી તેનું નામ વિહાર છે. આ વિહારથી તે મુનિવરો ગામ નગર આદિમાં વિચરતા હતા. તે મુનિવરોનું (ઇમે એયારૂવે) આ પ્રકારે વક્ષ્યમાણરૂપથી (સવ્ભંતર-વાહિરે તવોવહાણે હોત્થા) આભ્યંતર તેમ જ બાહ્ય તપ હતું; અર્થાત્ તે તપસ્યામાં તત્પર હતા. (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(અબ્ભિતરણે વિ છવ્વિહે બાહિરે વિ છવ્વિહે) તપ બે પ્રકારનાં છે—એક આભ્યંતર તપ, અને બીજું બાહ્યતપ. તેમાં આભ્યંતર તપ પણ છ પ્રકારનાં છે અને બાહ્યતપ પણ છ પ્રકારનાં છે. (સે કિં તં બાહિરે વિ છવ્વિહે પણત્તે ?) તે છ પ્રકારનું બાહ્યતપ

કિં તં બાહિરેષુ છવિહે પળ્લભ્યે ? તં જહા-અણસણે ? ઓમોય-
રિયા ૨ ભિક્ષાયરિયા ૩ રસપરિચ્છાદ ૪ કાયકિલેસે ૫ પડિ-
સંલીણયા ૬ । સે કિં તં અણસણે ? અણસણે દુવિહે પળ્લભ્યે, તં

આનન્તર્યે, તદ્ બાહ્યં=બહિર્દૃશ્યમાનં પડિવધં=ષટ્પ્રકારકં તપઃ કિં=કીદૃશં પ્રજ્ઞતમ્ ?-ઇતિ
પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-‘તં જહા’-ઇત્યાદિ । ‘તં જહા’ તદ્યથા, ‘અણસણે’ અનશનમ્ ૧,
‘ઓમોઅરિયા’ અવમોદરિકા (૨), ‘ભિક્ષાયરિયા’ ભિક્ષાચરિકા (૩), ‘રસપરિચ્છાદ’
રસપરિત્યાગઃ (૪), ‘કાયકિલેસે’ કાયક્લેશઃ (૫), ‘પડિસંલીણયા’ પ્રતિસંલીનતા (૬),
એતત્ પડિવધં તપો બહિર્દૃશ્યતે ઇતિ બાહ્યમ્ । એષુ અનશનં જિજ્ઞાસુઃ શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-‘સે
કિં તં અણસણે’ અથ કિન્તદનશનમ્ : અનશનં કિંસ્વરૂપં કતિવિધં ચેતિ પ્રશ્નુરભિપ્રાયઃ ।
અસ્યોત્તરમ્-‘અણસણે દુવિહે પળ્લભ્યે’ અનશનં દિવિધં પ્રજ્ઞતમ્ :-અનશનમ્=આહારપરિ-
ત્યાગઃ, તદ્ દિવિધં પ્રજ્ઞતમ્, દિવિધત્વં પ્રકટયતિ-‘તં જહા’ તદ્યથા ‘ઇત્તરિયં ય’ ઇત્વ-

કૌન હૈં ? યહ પ્રશ્ન હૈં । ઉત્તર-(તં જહા) વે છહ પ્રકાર કે બાહ્ય તપ ઇસ પ્રકાર હૈં-(અણ-
સણે, ઓમોયરિયા, ભિક્ષાયરિયા, રસપરિચ્છાદ, કાયકિલેસે, પડિસંલીણયા)
અનશન, અવમોદરિકા, ભિક્ષાચરિકા, રસપરિત્યાગ, કાયક્લેશ ઓર પ્રતિસંલીનતા યે બાહ્યતપ
હૈં । બાહ્યતપ યે ઇસલિયે કહે ગયે હૈં કિ સબકે લિયે પ્રકટરૂપસે દૃષ્ટિગોચર હોતે હૈં ।
(સે કિં તં અણસણે) શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈં-હે મહન્ત ! અનશન તપ કા ક્યા સ્વરૂપ હૈં ?
વહ કિતને પ્રકાર કા હૈં, ઉત્તર (અણસણે દુવિહે પળ્લભ્યે) અનશન દો પ્રકાર કા હૈં ।
(તં જહા) ઉસકે વે દો પ્રકાર યે હૈં-(ઇત્તરિયં ય આવકહિયં ય) ઇત્વરિક ઓર યાવ-
ત્કથિક । ઇનમેં ઇત્વરિક અન્ન કાઠ કા હૈં, ઓર યાવત્કથિક યાવજીવ કા હૈં । શ્રીમહાવીર

શું છે ? (તં જહા) તે છ પ્રકારના બાહ્યતપ આ પ્રમાણે છે-(અણસણે,
ઓમોયરિયા, ભિક્ષાયરિયા, રસપરિચ્છાદ, કાયકિલેસે, પડિસંલીણયા) અનશન,
અવમોદરિકા, ભિક્ષાચરિકા, રસપરિત્યાગ, કાયકલેશ અને પ્રતિસંલીનતા
એ બાહ્યતપ છે. એ બધાંને બાહ્યતપ એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે
બધાને તે પ્રકટરૂપે દૃષ્ટિગોચર થાય છે. (સે કિં તં અણસણે ?) શિષ્ય પ્રશ્ન
કરે છે-હે ભદ્રન્ત ! અનશન તપનું શું સ્વરૂપ છે ? તે કેટલા પ્રકારનું છે ?
ઉત્તર-(અણસણે દુવિહે પળ્લભ્યે) અનશન બે પ્રકારનું છે. (તં જહા) તેના એ બે પ્રકાર
આ પ્રમાણે છે-(ઇત્તરિયં ય આવકહિયં ય) ઇત્વરિક અને યાવત્કથિક. તેમાં
ઇત્વરિક થોડા સમયનું છે, અને યાવત્કથિક જીવનપર્યંતનું છે. શ્રી મહાવીર

**જહા—ઇત્તરિણ ય ૧ આવકહિણ ય ૨ । સે કિં તં ઇત્તરિણ ? ઇત્તરિણ
અળેગવિહે પળ્ણત્તે, તં જહા—ચઉત્થમત્તે ૧ છટ્ઠમત્તે ૨ અટ્ઠમમત્તે**

રિકં ચ—એતિ—ગચ્છતિ તચ્છીલમ્ ઇત્વરં, તદેવ—ઇત્વરિકમ્—અલ્પકાલિકમ્, યથા શ્રીમહાવીર-
સ્વામિનસ્તીર્થે નમસ્કારસહિતપ્રત્યાખ્યાનકાલાદારમ્બ્ય ષમ્માસપર્યન્તમ્, શ્રીનામેયતીર્થઙ્કર-
તીર્થે સંવત્સરપર્યન્તમ્—ઇતિ ૧ । ‘આવકહિણ ય’ યાવત્કથિકઞ્ચ—યાવત્—યદવધિર્મનુષ્યોઽ-
યમિતિ મુખ્યવ્યવહારરૂપા કથા યાવત્કથા, તત્ર ભવં યાવત્કથિકં—જીવનપર્યન્તમ્ અનશનમિતિ ।
અનયોરિત્વરિકં પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં ઇત્તરિણ’ અથ કિંતદ્ ઇત્વરિકમ્, અસ્યોત્તરમાહ—
‘ઇત્તરિણ અળેગવિહે પળ્ણત્તે’ ઇત્વરિકમ્ અનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, ‘તં જહા’—તદ્વથા—તાનિ
યદ્દૂપાણિ સન્તિ તથા કથયતિ—‘ચઉત્થમત્તે’ ચતુર્થમક્તમ્—एकोपवासरूपम्? । ‘છટ્ઠમત્તે’
ષષ્ઠમક્તમ્—निरन्तरदिनद्वयोपवासरूपम्? । ‘અટ્ઠમમત્તે’ અષ્ટમમક્તં—निरन्तरदिनत्रयोपवासरूप-

સ્વામી કે તીર્થ મેં ઇત્વરિક તપ નમસ્કારસહિત=નૌકારસી પ્રત્યાખ્યાન કાલ સે લેકર છહ
માસપર્યન્ત કા કહા ગયા હૈ । શ્રી આદિનાથ તીર્થંકર કે શાસનમેં इसकी मर्यादा नौका-
रसी से लेकर एकवर्ष पर्यन्त की थी । शेष २२ तीर्थंकरों के शासनमें अष्टमास पर्यन्त इसकी
अवधि थी । (से कિं तं इत्तरिण ?) इत्वरिक तप क्या है ? उत्तर—(इत्तरिण अणेग-
विहे पण्णत्ते) यह इत्वरिक तप अनेक प्रकार का कहा गया है; (तं जहा) वे प्रकार ये हैं—
(चउत्थमत्ते छट्ठमत्ते अट्ठममत्ते दसममत्ते बारसमत्ते चउद्दसमत्ते सोलसमत्ते अद्धमासिय-
मत्ते मासियमत्ते दोमासियमत्ते तेमासियमत्ते चउमासियमत्ते पंचमासियमत्ते छम्मा-
सियमत्ते) चतुर्थमक्त—एक उपवास, षष्ठमक्त—दो उपवास—निरन्तर—लगातार—दो दिन का
उपवास, अष्टममक्त—निरन्तर तीन दिन तक उपवास, दशममक्त—चार—उपवास—लगातार

સ્વામીના તીર્થમાં ઇત્વરિક તપ નમસ્કારસહિત—નૌકારસી પ્રત્યાખ્યાનકાલથી
લઈને છ માસ સુધીનું કહેલું છે. શ્રી આદિનાથ તીર્થંકરના સમયે તીર્થમાં
તેની મર્યાદા નૌકારસીથી લઈને એક વર્ષ સુધીની હતી. બાકીના ૨૨ તીર્થં-
કરોના તીર્થમાં ૮ માસ સુધીની તેની અવધિ હતી. (સે કિં તં ઇત્તરિણ ?)
ઇત્વરિક તપ શું છે ? ઉત્તર—(ઇત્તરિણ અણેગવિહે પળ્ણત્તે) આ ઇત્વરિક તપ
અનેક પ્રકારનું કહેલું છે; (તંજહા) તે આમ છે. (ચઉત્થમત્તે છટ્ઠમત્તે અટ્ઠમ-
મત્તે દસમમત્તે બારસમત્તે ચઉદ્દસમત્તે સોલસમત્તે અદ્દમાસિયમત્તે માસિયમમત્તે
દોમાસિયમત્તે તેમાસિયમમત્તે ચઉમાસિયમમત્તે પંચમાસિયમત્તે છમ્માસિયમત્તે)
ચતુર્થ—મક્ત એક ઉપવાસ, ષષ્ઠમક્ત—બે ઉપવાસ—નિરન્તર—લગાતાર બે દિવ-
સનો ઉપવાસ, અષ્ટમમક્ત—એક સાથે ત્રણદિવસનો ઉપવાસ—ત્રણ ઉપવાસ, દશમ-

३ दसमभक्ते ४ वारसभक्ते ५ चउदसभक्ते ६ सोलसभक्ते ७ अद्ध-
मासियभक्ते ८ मासियभक्ते ९ दोमासियभक्ते १० तेमासियभक्ते ११
चउमासियभक्ते १२ पंचमासियभक्ते १३ छम्मासियभक्ते १४,

पम् ३ । 'दसमभक्ते' दशमभक्तम्—निरन्तरदिनचतुष्टयोपवासरूपम् ४ । 'वारसभक्ते' द्वादश-
भक्तम्—निरन्तरदिनपञ्चकोपवासरूपम् ५ । 'चउदसभक्ते' चतुर्दशभक्तम्—निरन्तरदिनषट्को-
पवासरूपम् ६ । 'सोलसभक्ते' षोडशभक्तम्—निरन्तरदिनसप्तकोपवासरूपम् ७ । 'अद्धमासिय-
भक्ते' अर्द्धमासिकभक्तम्—निरन्तरपञ्चदशदिवसोपवासरूपम् ८ । 'मासियभक्ते' मासिकभक्तम्—
निरन्तरत्रिंशदिवसोपवासरूपम् ९ । 'दोमासियभक्ते' द्वैमासिकभक्तम् 'तेमासियभक्ते' त्रैमा-
सिकभक्तम् । 'चउमासियभक्ते' चातुर्मासिकभक्तम् । 'पंचमासियभक्ते' पाञ्चमासिकभक्तम् ।
'छम्मासियभक्ते' षाण्मासिकभक्तम् । 'से तं इत्तरिए' तदेतदित्वरिकम् । 'से किं तं
'आवकहिए' अथ किन्तद् यावत्कथिकम् ? 'आवकहिए' यावत्कथिकम्—यावत्—यदवधिः

४ दिन के उपवास, द्वादशभक्त—पाँच उपवास—लगातार पाँच दिन तक उपवास, चतुर्दशभक्त-
छ उपवास—लगातार ६ दिनतक उपवास करना, षोडशभक्त—७ दिन उपवास—लगातार ७
दिनतक उपवास करना, अर्द्धमासिकभक्त—निरन्तर—लगातार १५ दिनतक उपवास करना,
मासिकभक्त—लगातार एक महिने भरके उपवास करना, द्वैमासिकभक्त—लगातार एकही साथ
दोमास के उपवास, त्रैमासिकभक्त—लगातार—एकही साथ ३ मास के उपवास, चातुर्मा-
सिकभक्त—लगातार—एकहीसाथ चार महिने का उपवास, पाञ्चमासिकभक्त—पाँच महिने के
लगातार उपवास, और षाण्मासिकभक्त—लगातार छह महिने के उपवास करना । यह सब
इत्वरिक नामका अनशन तप है । यावत्कथिक का मतलब है—जबतक “ यह मनुष्य है ” इस

लक्ष्य—चार उपवास—એક સાથેજ ચાર દિવસનો ઉપવાસ, દ્વાદશલક્ષ્ય—પાંચ ઉપ-
વાસ—એકસાથે પાંચ દિવસ સુધી ઉપવાસ, ચતુર્દશલક્ષ્ય—એક સાથે ૬ દિવસો
સુધી ઉપવાસ કરવો, ષોડશલક્ષ્ય—૭ દિવસ એક સાથે ઉપવાસ કરવો, અર્ધ-
માસિકલક્ષ્ય નિરંતર એક સાથે ૧૫ દિવસ સુધી ઉપવાસ કરવો, માસિકલક્ષ્ય—
એક સાથે એક મહિના સુધી ઉપવાસ કરવો, દ્વિમાસિકલક્ષ્ય—એક સાથે બે
મહિના સુધીના ઉપવાસ, ત્રિમાસિક લક્ષ્ય—એક સાથે ત્રણ માસ સુધી ઉપવાસ,
ચાતુર્માસિક લક્ષ્ય—એક સાથે ચાર મહિનાના ઉપવાસ, પાંચમાસિકલક્ષ્ય=પાંચ
મહિના સુધી એકીસાથે ઉપવાસ, અને પાણ્માસિક લક્ષ્ય—છ મહિના સુધી
એકીસાથે ઉપવાસ કરવો. આ બધું ઈત્વરિકનામનું અનશન તપ છે. યાવત્ક-

સે તં ઇત્તરિણ્ । સે કિં તં આવકહિણ્ ? આવકહિણ્ દુવિહે પળ્લત્તે,
તં જહા—પાઓવગમણે ય ૧ ભત્તપચ્ચક્ખાણે ય ૨ । સે કિં તં પાઓ-

કથા—‘મનુષ્યોઽયમ્’ એતદ્રૂપા સા યાવત્કથા, તત્ર ભવં યાવત્કથિકમ્—યાવજ્જીવનમિત્યર્થઃ,
તદ્ ‘દુવિહે પળ્લત્તે’ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । ‘તં જહા’ તથા—‘પાઓવગમણે ય ભત્તપચ્ચ-
ક્ખાણે ય’ પાદપોષગમનં ચ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં ચ, તત્ર—પાદપસ્યેવ વૃક્ષસ્યેવોપગમનમ્—
અર્સ્પન્દતયા—નિશ્ચલતયાઽવસ્થાનં પાદપોષગમનમ્—ચતુર્વિધાઽઽહારપરિત્યાગેન શરીરપ્રતિ-
ક્રિયાવર્જનેન ચ વૃક્ષવનિશ્ચલાવસ્થાનમિત્યર્થઃ । ‘સે કિં તં પાઓવગમણે’—અથ કિન્તત્પાદ-
પોષગમનમ્?—પાદપોષગમનં કીદૃશમ્? અત્રાહ—‘પાઓવગમણે દુવિહે પળ્લત્તે’ પાદપો-

પ્રકાર કા ઉસકે—તપ કરને વાલે કે—સાથ વ્યવહાર ચલતા રહે તબતક જો વ્રત કિયા જાય
વહ યાવત્કથિક હૈ—જીવનપર્યન્ત આરાધિત અનશન વ્રત યાવત્કથિક હૈ । (સે કિં તં આવ-
કહિણ્ ?) યાવત્કથિક તપ કિતને પ્રકાર કા હૈ : ઉત્તર—(આવકહિણ્ દુવિહે પળ્લત્તે)
યહ તપ દો પ્રકાર કા હૈ—(તં જહા) વહ ઇસ પ્રકારસે (પાઓવગમણે ય ભત્તપચ્ચ-
ક્ખાણે ય) પાદપોષગમન ઓર દૂસરા ભક્તપ્રત્યાખ્યાન । જિસમેં કટે વૃક્ષ કી તરહ નિશ્ચલ
હો કર સ્થિતિ રહે વહ પાદપોષગમન હૈ—ચારોં પ્રકાર કે આહાર કે પરિત્યાગ સે એવં શરીર કી
શુશ્રૂષા આદિ ક્રિયાઓં કે પરિત્યાગ સે કટે વૃક્ષ કી તરહ નિશ્ચલ હો જાના ઇસકા નામ
પાદપોષગમન હૈ । (સે કિં તં પાઓવગમણે ?) પાદપોષગમન કિતને પ્રકાર કા હૈ : , (પાઓવ-
ગમણે દુવિહે પળ્લત્તે) યહ પાદપોષગમન સંથારા દો પ્રકાર કા હૈ; (તં જહા) વહ ઇસ

થિકની મતલબ છે, જ્યાં સુધી “ આ મનુષ્ય છે ” એ પ્રકારનો તેના—તપ
કરનારના સાથે વ્યવહાર ચાલતો રહે ત્યાં સુધી જે વ્રત કરવામાં આવે તે
યાવત્કથિક છે—જીવનપર્યન્ત આરાધિત અનશન વ્રત યાવત્કથિક છે. (સે કિં તં
આવકહિણ્) યાવત્કથિક વ્રત કેટલા પ્રકારના છે ? ઉત્તર (આવકહિણ્ દુવિહે
પળ્લત્તે) આ તપ બે પ્રકારનું છે. (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે. (પાઓવ-
ગમણે ય ભત્તપચ્ચક્ખાણે ય) (૧) પાદપોષગમન અને બીજું ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન. જેમાં કાપેલાં વૃક્ષની પેઠે નિશ્ચલ જેવી સ્થિતિ રહે તે પાદપોષગમન
છે—આરેય પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરીને તેમજ શરીરની સેવા—શુશ્રૂષા
આદિ ક્રિયાઓના ત્યાગ કરીને કાપેલાં વૃક્ષની પેઠે નિશ્ચલ થઈ જવું તેનું
નામ પાદપોષગમન છે. (સે કિં તં પાઓવગમણે ?) પાદપોષગમન કેટલા પ્રકારના
છે ? (પાઓવગમણે દુવિહે પળ્લત્તે) આ પાદપોષગમન સંથારા બે પ્રકારના

વગમણે ? પાઓવગમણે દુવિહે પળ્લત્તે; તં જહા—વાઘાઈમે ય ૧
નિવ્વાઘાઈમે ય ૨ નિયમા અપ્પઙ્કિમ્મે । સે તં પાઓવગમણે ।
સે કિં તં ભત્તપચ્ચક્ખાણે ? ભત્તપચ્ચક્ખાણે દુવિહે પળ્લત્તે; તં

પગમનં દિવિધં પ્રજ્ઞતમ્; ‘તં જહા’ તથા—‘વાઘાઈમે ય’ વ્યાઘાતવચ્ચ—વ્યાઘાતઃ—વ્યાઘ્ર-
સિંહ—દાવાનલાદિ—સંજાતોપદ્રવઃ, તેન સહિતં વ્યાઘાતવત્ । ‘નિવ્વાઘાઈમે ય’ નિર્વ્યાઘાતવચ્ચ—
સિંહદાવાનલાદ્યુપદ્રવરહિતં યત્પ્રતિપદ્યતે તત્ નિર્વ્યાઘાતવત્, વ્યાવાર્તવિરહિતમિત્યર્થઃ । એતદ્ દિવિધં
‘નિયમા અપ્પઙ્કિમ્મે’ નિયમાદપ્રતિકર્મ=નિયમતઃ શરીરચલનાદિક્રિયારહિતં ભવતિ ।
‘સે તં પાઓવગમણે’ તદેતત્પાદપોષગમનમ્ । ‘સે કિં તં ભત્તપચ્ચક્ખાણે?’ અથ
કિં તદ્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમ્?,—‘ભત્તપચ્ચક્ખાણે દુવિહે પળ્લત્તે’ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં દિવિધં
પ્રજ્ઞતમ્, તત્ર—ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં—ચતુર્વિધસ્યાઽઽહારસ્ય, ત્રિવિધસ્ય પાનકરહિતસ્ય વાઽઽહારસ્ય
વર્જનરૂપં દિવિધં પ્રજ્ઞતમ્—દ્વિપ્રકારકં કથિતમ્ । ‘તં જહા’ તથા—‘વાઘાઈમે ય’

પ્રકાર સે—(વાઘાઈમે ય ૧ નિવ્વાઘાઈમે ય ૨ નિયમા અપ્પઙ્કિમ્મે) ૧ વ્યાઘાતવત્, ૨
નિર્વ્યાઘાતવત્ । જો વ્યાઘ્ર, સિંહ એવં દાવાનલ આદિ સે ઉદ્ભૂત ઉપદ્રવ સે સહિત હોતા હૈ
વહ વ્યાઘાતવત્ હૈ । જિસમેં ઇસ પ્રકાર કે ઉપદ્રવ ન હોં વહ નિર્વ્યાઘાતવત્ હૈ । યહ પાદપોષ-
ગમન નિયમતઃ શારીરિક હલનચલન આદિ ક્રિયાઓં સે રહિત હોતા હૈ । તથા ઇસમેં ઔષધો-
પચાર આદિ નહીં ક્રિયા જાતા હૈ । (સે તં પાઓવગમણે) યહ પાદપોષગમન સંથારા હૈ ।
અબ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કા વર્ણન કરતે હૈ—(સે કિં તં ભત્તપચ્ચક્ખાણે) યહ ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન કિતને પ્રકાર કા હોતા હૈ, (ભત્તપચ્ચક્ખાણે દુવિહે પળ્લત્તે) યહ ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન દો પ્રકાર કા હૈ, (તં જહા) વહ ઇસ પ્રકાર—(વાઘાઈમે ય નિવ્વાઘાઈમે ય

છે—(તં જહા) તે આ પ્રકારે—(વાઘાઈમે ય ૧ નિવ્વાઘાઈમે ૨ ય નિયમા
અપ્પઙ્કિમ્મે) ૧ વ્યાઘાતવત્ અને બીજો નિર્વ્યાઘાતવત્. જે વાઘ (સાવજ)
તેમજ દાવાનલથી થતા ઉપદ્રવવાળા હોય છે તે વ્યાઘાતવત્ છે. જેમાં એ
પ્રકારના ઉપદ્રવ ન હોય તે નિર્વ્યાઘાતવત્ છે. આ પાદપોષગમન નિયમ પ્રમાણે
શારીરિક હલનચલન આદિ ક્રિયાઓથી રહિત હોય છે, તથા એમાં ઔષધો-
પચાર આદિ નથી કરતા. (સે તં પાઓવગમણે) એ પાદપોષગમન સંથારે. આ
પ્રમાણે થાય છે. હવે ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનું વર્ણન કરે છે—(સે કિં તં ભત્તપચ્ચક્ખાણે?)
આ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કેટલા પ્રકારના થાય છે? (ભત્તપચ્ચક્ખાણે દુવિહે પળ્લત્તે)
એ બે પ્રકારના છે—(તં જહા) તે આ પ્રકારે—(વાઘાઈમે ય નિવ્વાઘાઈમે ય નિયમા

જહા—વાઘાઈમે ય ૧ નિવ્વાઘાઈમે ય ૨ ણિયમા સપ્પઙ્કિકમ્મે । સે તં
ભત્તપચ્ચક્કવાણે । સે તં અણસણે । સે કિં તં ઓમોયરિયા ? ઓમોય-
રિયા દુવિહા પણ્ણત્તા, તં જહા—દવ્વોમોયરિયા ય ૧ ભાવોમો-

વ્યાઘાતવચ્ચ વિગ્નયુક્તચ્ચ । ‘નિવ્વાઘાઈમે ય’ નિર્વ્યાઘાતવચ્ચ—વિગ્નરહિતં ચ । એતદ્ દ્વયં ‘ણિયમા
સપ્પઙ્કિકમ્મે’ નિયમાત્ સપ્રતિકર્મ—નિયમતઃ શરીરચલનાદિક્રિયાસહિતં ભવતિ । તેન બાહ્યૌ-
ષધોપચારો વૈયાવૃત્યં ચ તસ્ય ભવતિ । ‘સે તં ભત્તપચ્ચક્કવાણે’ તદેતદ્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમ્ ।
‘સે તં અણસણે’ તદેતદનશનમ્ ।

‘સે કિં તં ઓમોયરિયા’ અથ કા સાઽવમોદરિકા ૧, ‘ઓમોયરિયા દુવિહા
પણ્ણત્તા’ અવમોદરિકા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞતા—અવમોદરિકા—અવમમ્—ઊનમ્, ઉદરં યસ્મિન્ ભોજને
તદ્ અવમોદરં, તદસ્ત્યસ્યામિતિ અવમોદરિકા—તપોરૂપા ક્રિયા, સા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞતા,—દ્વિપ્રકા-

નિયમા સપ્પઙ્કિકમ્મે) ૧ વ્યાઘાતવત્ ૨ નિર્વ્યાઘાતવત્ । ઇસ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મેં ચૌ-
વિહાર એવં તેવિહાર દોનોં કિયા જાતા હૈ । વિગ્નયુક્ત કા નામ વ્યાઘાતવત્ એવં વિગ્નરહિત
કા નામ નિર્વ્યાઘાતવત્ હૈ । ઇસ તપ મેં નિયમતઃ શારીરિક હલન—ચલનાદિક ક્રિયાઈં હોતી
હૈં । ડનકા ઇસમેં પરિત્યાગ નહીં હૈ । ઇસલિયે ઇસમેં બાહ્ય ઔષધોપચાર, એવં વૈયાવૃત્ય કિયે
જાતે હૈં । (સે તં ભત્તપચ્ચક્કવાણે) યહ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કે ભેદોં કા વર્ણન હૈ ।
(સે તં અણસણે) ઇસ પ્રકાર તપકે ૧૨ ભેદોં મેં સે અનશન નામકા ૧ પ્રથમ બાહ્યતપ કા
વર્ણન સમ્પૂર્ણ હુઆ । (સે કિં તં ઓમોયરિયા ?) પ્રશ્ન—અવમોદરિકા કિસે કહતે હૈં
ઔર વહ કિતને પ્રકાર કી હૈ ? (ઓમોયરિયા દુવિહા પણ્ણત્તા) ઉત્તર—યહ અવમોદરિકા

સપ્પઙ્કિકમ્મે) ૧ વ્યાઘાતવત્ ૨ નિર્વ્યાઘાતવત્. આ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમાં ચૌવિહાર-
૪ ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ તેમજ તેવિહાર બંને કરવામાં આવે છે. વિધન-
વાળાનું નામ વ્યાઘાતવત્ તેમજ વિધનરહિતનું નામ નિર્વ્યાઘાતવત્ છે. આ તપમાં
નિયમપ્રમાણે શારીરિક હલનચલન આદિક ક્રિયાઓ થાય છે. તેનો આમાં
પરિત્યાગ નથી. તેથી આમાં બાહ્ય ઔષધોપચાર તેમજ વૈયાવૃત્ય કરાય છે.
(સે તં ભત્તપચ્ચક્કવાણે) આ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના ભેદોનું વર્ણન છે. (સે તં
અણસણે) એ પ્રકારે તપના ૧૨ ભેદોમાંથી અનશનનામના ૧ પ્રથમ બાહ્ય-
તપનું વર્ણન સંપૂર્ણ થયું.

(સે કિં તં ઓમોયરિયા) પ્રશ્ન—અવમોદરિકા કેને કહે છે ? અને તે કેટલા
પ્રકારની છે ? (ઓમોયરિયા દુવિહા પણ્ણત્તા) ઉત્તર—એ અવમોદરિકા બે પ્રકારની

યરિયા ય ૨ । સે કિં તં દ્વોમોયરિયા ? દ્વોમોયરિયા દુવિહા
પણ્ણત્તા, તં જહા—ઉવગરણદ્વોમોરિયા ય ૧ ભક્તપાણદ્વોમો-
યરિયા ય ૨ । સે કિં તં ઉવગરણદ્વોમોયરિયા ? ઉવગરણદ્વોમો-
યરિયા તિવિહા પળ્ણત્તા, તં જહા—એગે વત્થે ૧ એગે પાણ ૨ ચિય-

રા કથિતા ‘તં જહા’ તથા—‘દ્વોમોયરિયા ય’ દ્રવ્યાવમોદરિકા ચ । ‘ભાવોમોયરિયા
ય’ ભાવાવમોદરિકા ચ । ‘સે કિં તં દ્વોમોયરિયા ?’ અથ કા સા દ્રવ્યાવમોદરિકા ;,
‘દ્વોમોયરિયા દુવિહા પળ્ણત્તા’ દ્રવ્યાવમોદરિકા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞતા, ‘તં જહા’—તથા
‘ઉવગરણદ્વોમોયરિયા ય’ ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ચ ૧ । ‘ભક્તપાણદ્વોમોય-
રિયા ય’ ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા ચ ૨ । ‘સે કિં તં ઉવગરણદ્વોમોયરિયા’ અથ
કા સા ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ? ‘ઉવગરણદ્વોમોયરિયા તિવિહા પળ્ણત્તા’ ઉપકરણ-
દ્રવ્યાવમોદરિકા ત્રિવિધા પ્રજ્ઞતા, ‘તં જહા’ તથા—૧ ‘એગે વત્થે’ એકં વસ્ત્રમ્—એકં—
ચોલપટ્તરૂપં વસ્ત્રં ન દ્વિતીયમ્; ૨—‘એગે પાણ’ એકં પાત્રમ્; ૩—‘ચિયત્તોવગરણસાહ-

દો પ્રકારની છે; [તં જહા] વે દો પ્રકાર યે હૈં—[દ્વોમોયરિયા ય ભાવોમોયરિયા ય]
એક દ્રવ્યાવમોદરિકા ઓર દૂસરી ભાવાવમોદરિકા । [સે કિં તં દ્વોમોયરિયા] પ્રશ્ન—
વહ દ્રવ્યાવમોદરિકા ક્યા હૈ—કિતને ભેદવાલી હૈ? ઉત્તર—[દ્વોમોયરિયા દુવિહા પળ્ણ-
ત્તા] દ્રવ્યાવમોદરિકા દો ભેદવાલી હૈ; [તં જહા] વે દો પ્રકાર હસ તરહ હૈં—[ઉવગરણ-
દ્વોમોયરિયા ય ભક્તપાણદ્વોમોયરિયા ય] ૧ ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ઓર ૨
ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા । [ઉવગરણદ્વોમોયરિયા તિવિહા પળ્ણત્તા] હનમેં ઉપકરણ-
દ્રવ્યાવમોદરિકા ત્રીન પ્રકાર કો હૈ । (તં જહા) વે ત્રીન પ્રકાર યે હૈં—[એગે વત્થે એગે પાણ
ચિયત્તોવગરણસાહજ્ઞણયા] એક વસ્ત્ર ૧, એક પાત્ર ૨, ઓર ત્રીસરા ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા

છે. (તંજહા) તે બે પ્રકાર આ છે—(દ્વોમોયરિયા ય ભાવોમોયરિયા
ય) એક દ્રવ્યાવમોદરિકા અને બીજી ભાવાવમોદરિકા. (સે કિં તં
દ્વોમોયરિયા) પ્રશ્ન—એ દ્રવ્યાવમોદરિકા શું છે? કેટલા પ્રકારની છે?
(દ્વોમોયરિયા દુવિહા પળ્ણત્તા) ઉત્તર—તે બે પ્રકારની છે—(તં જહા) તે
બે પ્રકાર આવી રીતે છે. (ઉવગરણદ્વોમોયરિયા ય ભક્તપાણદ્વોમોયરિયા
ય) ૧ ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા અને બીજી ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા. (ઉવગ-
રણદ્વોમોયરિયા તિવિહા પળ્ણત્તા) તેમાં ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ત્રણ પ્રકાર-
ની છે. (તં જહા) તે ત્રણ પ્રકાર આ છે—(એગે વત્થે એગે પાણ ચિયત્તોવગરણસા-
હજ્ઞણયા) ૧ એક વસ્ત્ર, બીજું એક પાત્ર, અને ત્રીજું ત્યક્તોપકરણસ્વા-

તોવગરણસાદ્જ્ઞાયા ૩ સે તં ઉવગરણદવ્વોમોયરિયા । સે કિં
તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા ? ભત્તપાણદવ્વોમોરિયા—અણેગવિહા
પણ્ણત્તા, તં જહા—અટ્ટ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહાર-

જ્ઞાયા' ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા, ત્યક્તા—ઉપકરણસ્ય સ્વાદનતા—આસક્તિર્યસ્યામવમોદરિકાયાં
સા તથા, ભાણ્ડોપકરણાદિષુ મૂર્છાપરિત્યાગિતેત્યર્થઃ । 'સે તં ઉવગરણદવ્વોમોયરિયા'
સૈષા ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા । 'સે કિં તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા' અથ કા સા ભત્તપાન-
દ્રવ્યાવમોદરિકા : ' ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા '—ભત્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા—' અણેગવિહા
પણ્ણત્તા' અનેકવિધા પ્રજ્ઞતા, 'તં જહા' તથા—'અટ્ટ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહાર-
માણે અપ્પાહારે' અષ્ટૌ કુક્કુટાઽણ્ડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્નલ્પાહારઃ—અષ્ટ કુક્કુટા-

૩ । વસ્ત્ર મેં એક હી વસ્ત્ર રચના; જૈસે કોઈ ચોલપટ્ટ રચતા હૈ તો વહ વહી રચેગા, અન્ય
દૂસરા વસ્ત્ર નહીં રચ સકતા । દૂસરે પ્રકાર મેં એક હી પાત્ર રચના દૂસરા પાત્ર
નહીં । જિસ અવમોદરિકા મેં ઉપકરણ કી આસક્તિ ત્યક્ત હો જાતી હૈ વહ ઉસકા તૈસરા
પ્રકાર હૈ, અર્થાત્—ભાણ્ડોપકરણ મેં મૂર્છા કા પરિત્યાગ । (સે તં ઉવગરણદવ્વોમોયરિયા)
ઇસ પ્રકાર યે ત્રીન ભેદ ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા કે કહે ગયે હૈ । [સે કિં તં ભત્તપાણ-
દવ્વોમોયરિયા] પ્રશ્ન—ભત્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા ક્યા હૈ ;, અર્થાત્—ભત્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા
કે કિતને ભેદ હૈ ;; (ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા અણેગવિહા પળ્ણત્તા) યહ ભત્તપાન-
દ્રવ્યાવમોદરિકા અનેક પ્રકાર કી કહી ગયી હૈ; (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—(અટ્ટ કુક્કુડિ-
યંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે અપ્પાહારે) પ્રથમ ભેદ અલ્પાહાર હૈ, ઇસમેં

દનતા. વસ્ત્રમાં એકજ વસ્ત્ર રાખવું. જેમ કોઈ ચોલપટ્ટ રાખે છે તે તે જ રાખે,
બીજું વસ્ત્ર રાખી શકે નહિ. બીજા પ્રકારમાં એક જ પાત્ર રાખવું બીજું
(દ્વિતીયાદિક) પાત્ર નહિ. જે અવમોદરિકામાં ઉપકરણની આસક્તિ ત્યક્ત થઈ
જાય છે તે તેનો ત્રીજો પ્રકાર છે અર્થાત્ ભાંડોપકરણમાં મૂર્છાનો પરિત્યાગ.
(સે તં ઉવગરણદવ્વોમોયરિયા) એ પ્રકારના આ ત્રણ ભેદ ઉપકરણદ્રવ્યાવ-
મોદરિકાના કહેલા છે. (સે કિં તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા) પ્રશ્ન—ભત્તપાનદ્રવ્યાવ-
મોદરિકા શું છે ? અર્થાત્ ભત્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકાના કહેલા પ્રકાર છે ?
(ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા અણેગવિહા પળ્ણત્તા) આ ભત્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા
અનેક પ્રકારની કહેલી છે, (તંજહા) તે આ પ્રકારે છે—(અટ્ટ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણ-
મેત્તે કવલે આહારમાણે અપ્પાહારે) પ્રથમ ભેદ અલ્પાહાર છે. તેમાં કુકડાના ઇંડા

માણે અપ્પાહારે ૧, દુવાલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહાર-
માણે અવડ્ઢોમોયરિયા ૨, સોલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે
આહારમાણે દુભાગપત્તોમોયરિયા ૩, ચઝવીસં કુક્કુડિયંડગપ્પ-

ખંડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ ય આહરન્ ભવતિ, તસ્ય સ આહારઃ અલ્પાહારઃ । દ્વાત્રિશ-
ત્પરિમિતૈઃ કવલૈઃ પુરુષાઽઽહારઃ પર્યાપ્તઃ, તત્ર ચતુર્થાશસ્ય ગ્રહણાદલ્પાહારસ્તેનૈવ મક્તપાન-
દ્રવ્યાવમોદરિકાઽપિ સિદ્ધા (૧) । ‘દુવાલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે
અવડ્ઢોમોયરિયા’ દ્વાદશ કુક્કુટાઽખંડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્ યો ભવતિ તસ્ય સ
આહારઃ અપાર્દ્ધાવમોદરિકા, ષોડશ કવલા અર્દ્રમ્, તસ્માત્ અપકૃષ્ટા = ન્યૂના દ્વાદશકવલાત્મકત્વાદ્
યાઽવમોદરિકા સા-અપાર્દ્ધાઽવમોદરિકા (૨) । ‘સોલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે
આહારમાણે દુભાગપત્તોમોયરિયા’ ષોડશ કુક્કુટાખંડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્
દ્વિભાગપ્રાપ્તાઽવમોદરિકા—ષોડશ કુક્કુટાખંડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્ યો ભવતિ તસ્ય
સ આહારો દ્વિભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકા=દ્વિતીયભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકા ભવતિ । અયં માપઃ—
પર્યાપ્તપુરુષાહારદ્વાત્રિશત્કવલાનાં ભાગદ્વયે કૃતે સતિ પ્રાપ્તાન્ ષોડશ કવલાન્ મુજ્જાનસ્ય
દ્વિભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકા તપસ્યા ભવતીતિ (૩) । ‘ચઝવીસં કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે
કુક્કુટકે અખંડ પ્રમાણ આઠ કવલ કા આહાર હોતા હૈ । પુરુષ કે લિયે ૩૨ કવલપ્રમાણ આહાર
પર્યાપ્ત હોતા હૈ । ઇનમેં ચતુર્થાશ—આઠ કવલ પ્રમાણ આહાર કે લેને સે યહ અલ્પાહાર કહા ગયા
હૈ (૧) । (દુવાલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે અવડ્ઢોમોયરિયા)
દૂસરા મેદ અપાર્દ્ધ—અવમોદરિકા હૈ, ઇસમેં—કુક્કુડ અંડ પ્રમાણ ૧૨ કવલોં કા આહાર લિયા
જાતા હૈ (૨) । (સોલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે દુભાગપત્તોમોય-
રિયા) તીસરા મેદ દ્વિભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકા હૈ, ઇસમેં—કુક્કુટ—અંડ—પ્રમાણ ૧૬ કવલોં કા
આહાર કિયા જાતા હૈ (૩) । (ચઝવીસં કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે

જેટલો—કોળિઆનો આહાર થાય છે. પુરૂષને માટે ૩૨ કોળિઆ જેટલો આહાર
પર્યાપ્ત થાય છે. તેમાંથી ચતુર્થાશ કોળિઆ—જેટલો આહાર લેવાથી એને
અલ્પાહાર કહેવાય છે. (૧) (દુવાલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે
અવડ્ઢોમોયરિયા) બીજો ભેદ અપાર્દ્ધ—અવમોદરિકા છે. એમાં કુકડાનાં ઇંડા
જેવડા ૧૨ કોળિઆનો આહાર લેવાય છે. (૨) (સોલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે
કવલે આહારમાણે દુભાગપત્તોમોયરિયા) ત્રીજો ભેદ દ્વિભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકા છે.
એમાં કુકડાનાં ઇંડા જેવડા ૧૬ કોળિઆનો આહાર લેવાય છે. (૩) (ચઝ-
વીસં કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે પત્તોમોયરિયા) ચોથો ભેદ પ્રાપ્તાવ-

માણમેત્તે કવલે આહારમાણે પત્તોમોયરિયા ૪, એકતીસં કુકુડિયં-
ડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે કિંચૂળોમોયરિયા ૫, વત્તીસં
કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે પમાણપત્તે, એત્તો એગેણ
વિ ઘાસેણં ડળયં આહારમાહારેમાણે સમણે નિગ્ગંથે ણો પકામરસ-

આહારમાણે પત્તોમોયરિયા’—ચતુર્વિંશતિ કુકુટાણ્ડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્
પ્રાપ્તાઽવમોદરિકા—દ્વાત્રિશત્કવલાનાં ચતુર્થાંશન્યૂનમાહારમ્ આહરન્ યો ભવતિ, તસ્ય સ
આહારઃ પ્રાપ્તાવમોદરિકા—પાદમાત્રોનતયા પ્રાપ્તેવાઽવમોદરિકા પ્રાપ્તાવમોદરિકા ભવતિ, ॥૪॥
‘એકતીસં કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે કિંચૂળોમોયરિયા’ એક-
ત્રિશતં કુકુટાણ્ડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્ યો ભવતિ તસ્ય કિચ્છિદૂનાવમોદરિકા=
કવલૈકન્યૂનાવમોદરિકા ભવતિ ॥૫॥ ‘વત્તીસં કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે
પમાણપત્તે’ દ્વાત્રિશતં કુકુટાણ્ડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ આહરન્ પ્રમાણપ્રાપ્તઃ=પ્રમાણપ્રમિતા-
ઽઽહારયુક્તો ભવતીત્યર્થઃ, ‘એત્તો એગેણ વિ ઘાસેણં ડળયં આહારમાહારેમાણે સમણે
નિગ્ગંથે ણો પકામરસભોદ્ધિત્તિ વત્તવ્વં સિયા’ इत एकेनापि प्रासेन ऊनकम् आहरम्
आहरन् श्रमणो निर्ग्रन्थो नो प्रकामरसभोजीति वक्तव्यं स्यात्—इतः—एतेभ्यः—द्वात्रिंशत्कव-

પત્તોમોયરિયા) ચૌથા ભેદ પ્રાપ્તાવમોદરિકા હૈ, ઇસમેં કુકુટાણ્ડપ્રમાણ ૨૪ કવલોંકા આહાર
કિયા જાતા હૈ (૪) । (એકતીસં કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે કિંચૂ-
ળોમોયરિયા) પાંચવાં ભેદ કિંચિત્—ન્યૂન—અવમોદરિકા હૈ । ઇસમેં કુકુટા અંડ પ્રમાણ ૩૧
કવલોંકા આહાર લિયા જાતા હૈ । (વત્તીસં કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહાર-
માણે પમાણપત્તે) ૩૨—કવલ—પ્રમાણ આહાર કરના પર્યાપ્ત આહાર હૈ । યહ અવમો-
દરિકા તપ નહીં હૈ । (એત્તો એગેણવિ ઘાસેણં ડળયં આહારમાહારેમાણે સમણે
નિગ્ગંથે ણો પકામરસભોદ્ધિત્તિ વત્તવ્વં સિયા) ૩૨ કવલપ્રમાણ આહાર મેં સે જો શ્રમણ

ભોદરિકા છે. એમાં કુકડાના ઇંડા જેવડા ૨૪ કોળિઆનો આહાર કરાય છે.
(૪) (એકતીસં કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે કિંચૂળોમોયરિયા) પાંચમે
ભેદ કિંચિત્—ન્યૂન—અવમોદરિકા છે. તેમાં કુકડાના ઇંડા જેવડા ૩૧ કોળિઆનો
આહાર લેવાય છે. (વત્તીસં કુકુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે પમાણ-
પત્તે) ૩૨ કોળિઆ જેટલો આહાર કરવો એ મર્યાદા છે. આ અવમોદરિકા
તપ નથી. (એત્તો એગેણવિ ઘાસેણં ડળયં આહારમાહારેમાણે સમણે નિગ્ગંથે ણો પકામ-
રસભોદ્ધિત્તિ વત્તવ્વં સિયા) ૩૨ કોળિયા જેટલો આહારમાંથી જે શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ

મોહત્તિ વત્તવ્વં સિયા । સે તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા । સે તં
દવ્વોમોયરિયા । સે કિં તં ભાવોમોયરિયા ? ભાવોમોયરિયા અણેગ-
વિહા પણ્ણત્તા; તં જહા—અપ્પક્કોહે ૧, અપ્પમાણે ૨, અપ્પમાણ ૩,

લેખ્ય:—એકેનાડપિ ગ્રાસેનોનકમાહારમાહરન્ શ્રમગોનિર્ગ્રન્થો નો પ્રકામરસમોજી-નાત્યન્તમોજન-
શીલોડસ્તીતિ વક્તવ્યમ્ સ્યાત્, અયં ભાવ:—કિંચિદ્દૂનાવમોદરિકાં તપસ્યાં કુર્વન્ ‘પ્રકામમોજી’
इति नोच्यते इति । ‘સે તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા’ નૈષા ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા ।
અતઃ પરં ભાવાડમોદરિકામાહ—‘સે કિં તં ભાવોમોયરિયા’ અથ કા સા ભાવાડવમોદ-
રિકા ? ‘ભાવોમોયરિયા અણેગવિહા પણ્ણત્તા’ ભાવાડમોદરિકા અનેકવિધા પ્રજ્ઞતા, ‘તં
જહા’ તથથા ‘અપ્પક્કોહે’ અલ્પક્રોધ:—ક્રોધનં ક્રોધ:—ક્રોધમોહનીયોદયસમ્પાદ્ય: અક્ષમાપરિણ-
તિરૂપ:, અલ્પશબ્દોડત્ર પ્રતનુવાચક:—તેન અલ્પ:—સ્વરૂપ: ક્રોધ:—અલ્પક્રોધ: । ‘અપ્પમાણે’

નિર્ગ્રંથ એક કવલ મી આહાર કમ કરતે હૈં વે પ્રકામમોજી નહીં હૈં, અર્થાત્ જિહ્વા-
ઇન્દ્રિય કે વિજેતા હૈં—એસા સમજના ચાહિયે । (સે તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા) ઇસ
પ્રકાર યહાં તક ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા કા કથન કિયા, અર્થાત્ ઇસ પૂર્વોક્ત પ્રકાર
સે ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા કા સ્વરૂપ હૈ । (સે તં દવ્વોમોયરિયા) ઇસ પ્રકાર યહ
દ્રવ્યાવમોદરિકા કા સ્વરૂપ હૈ । યહાં સે આગે અવ ભાવાવમોદરિકા કા કથન કરતે
હૈ—(સે કિં તં ભાવોમોયરિયા ?) પ્રશ્ન—યહ ભાવાવમોદરિકા ક્યા હૈ: કિતને પ્રકાર કી
હૈ: (ભાવોમોયરિયા અણેગવિહા પણ્ણત્તા) ઉત્તર—ભાવાવમોદરિકા અનેક પ્રકાર કી
કહી ગઈ હૈ; (તં જહા) જૈસે—(અપ્પક્કોહે) અલ્પક્રોધ—અક્ષમાપરિણતિકા નામ ક્રોધ
હૈ, અલ્પશબ્દ પ્રતનુવાચી હૈ, અર્થાત્ ક્રોધકપાય મેં અલ્પતા કરના । (અપ્પ-

એક કેાજિયેા પણ આહાર ઓછો કરે તે પ્રકામભોજી નથી, અર્થાત્ જીભ-
ઇન્દ્રિયનો વિજેતા છે—એમ સમજવું જોઇએ. (સે તં ભત્તપાણદવ્વોમોયરિયા) એ
પ્રકારે અહીંસુધી ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકાનું કથન કર્યું, અર્થાત્ એ
પૂર્વોક્ત પ્રકારે ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકાનું સ્વરૂપ છે. (સે તં દવ્વોમોયરિયા)
આ પ્રકારે આ દ્રવ્યાવમોદરિકાનું સ્વરૂપ છે. અહિંથી આગળ હવે ભાવા-
વમોદરિકાનું કથન કરે છે—(સે કિં તં ભાવોમોયરિયા ?) પ્રશ્ન—આ ભાવાવમોદરિકા
શું છે, કેટલા પ્રકારની કહેવાય છે ? (ભાવોમોયરિયા અણેગવિહા પણ્ણત્તા) ઉત્તર-
ભાવાવમોદરિકા ઘણા પ્રકારની કહેવાય છે. (તં જહા) જેમકે (અપ્પક્કોહે)
અલ્પક્રોધ, અક્ષમા-પરિણતિનું નામ ક્રોધ છે, અલ્પ શબ્દ પ્રતનુવાચી
છે—અર્થાત્ ક્રોધકપાયમાં અલ્પપાણું (ઓછું) કરવું. (અપ્પમાણે અપ્પમાણ

અપ્પલોહે ૪, અપ્પસદ્દે ૫, અપ્પકલહે ૬, અપ્પઙ્ગંઙ્ગે ૭ । સે તં
ભાવોમોયરિયા । સે તં ઓમોયરિયા । સે કિં તં ભિક્ષાયરિયા ?
ભિક્ષાયરિયા અણેગવિહા પણ્ણત્તા; તં જહા-દઘ્વાભિગ્ગહચરણ ૧,

અલ્પમાનઃ—જાત્યાદ્યભિમાનરાહિત્યમ્ । ‘અપ્પમાણ’ અલ્પમાયા, ‘અપ્પલોહે’ અલ્પલોભઃ,—
‘અપ્પસદ્દે’ અલ્પશબ્દઃ,—‘અપ્પકલહે’ અલ્પકલહઃ=કલહાભાવઃ, ‘અપ્પઙ્ગંઙ્ગે’ અલ્પઙ્ગઙ્ગઃ=
પરસ્પરભેદોત્પાદકવચનવ્યાપારો ઙ્ગઙ્ગઃ, તસ્યાભાવઃ । ‘સે તં ભાવોમોયરિયા’ સૈષા
ભાવાઽવમોદરિકા । ‘સે તં ઓમોયરિયા’ સૈષાઽવમોદરિકા ।

‘સે કિં તં ભિક્ષાયરિયા’ અથ કા સા ભિક્ષાચર્યાઃ, ‘ભિક્ષાયરિયા
અણેગવિહા પણ્ણત્તા’ ભિક્ષાચર્યા અનેકવિધા પ્રજ્ઞતા, ‘તં જહા’ તદ્વથા—દઘ્વાભિ-
ગ્ગહચરણ’ દ્રવ્યાભિગ્રહચરકઃ—દ્રવ્યાઽઽશ્રિતાભિગ્રહેણ ‘અમુકવસ્તુ ગ્રહીષ્યામિ’ ઇતિ રૂપેણ

માણે અપ્પમાણ અપ્પલોહે અપ્પસદ્દે અપ્પકલહે અપ્પઙ્ગંઙ્ગે) માન કો અલ્પ કરના,
માયા કો અલ્પ કરના, લોભ કો અલ્પ કરના, શબ્દ કો અલ્પ કરના અર્થાત્ કમ બોલના,
કલહ કો અલ્પ કરના—અભાવ કરના, ઙ્ગંઙ્ગા કો અર્થાત્—ગણ મેં જિસ વચન સે છેદ—ભેદ
ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઉસ વચનકા અલ્પ કરના—અભાવ કરના, યહૌં પર ‘અલ્પ’ શબ્દ
અભાવાર્થક હૈં । (સે તં ભાવોમોયરિયા) યે સમી ભાવાવમોદરિકા હૈં । (સે તં ઓમો-
યરિયા) યહ અવમોદરિકા તપકા વર્ણન સંપૂર્ણ હુઆ ।

(સે કિં તં ભિક્ષાયરિયા ?) ભિક્ષાચર્યા ક્યા હૈ—કિતને તરહ કી હૈ ?

ઉત્તર—(ભિક્ષાયરિયા અણેગવિહા પણ્ણત્તા) ભિક્ષાચર્યા અનેક તરહ કી કહી
ગઈ હૈં । (તં જહા) જૈસે (દઘ્વાભિગ્ગહચરણ, સેત્તાભિગ્ગહચરણ, કાલાભિગ્ગહચરણ ભાવા-
ભિગ્ગહચરણ) ૧ દ્રવ્યાભિગ્રહચરક—મુનિ અભિગ્રહ લેતા હૈં કિ મુજે જો અમુક વસ્તુ ભિક્ષા મેં

અપ્પલોહે અપ્પસદ્દે અપ્પકલહે અપ્પઙ્ગંઙ્ગે) માન અલ્પ (ઓછું) કરવું, માયા અલ્પ કરવી,
લોભ અલ્પ કરવો, શબ્દ અલ્પ કરવા અર્થાત્ ઓછું બોલવું, કલહ (કંડાસ)
ઓછા કરવા, ઙ્ગંઙ્ગા અર્થાત્ લોકોના સમૂહમાં જે વચનોથી છેદ—ભેદ ઉત્પન્ન
થાય એવાં વચન નહીં બોલવાં, (સે તં ભાવોમોયરિયા) આ બધા ભાવાવમોદરિકા
છે. (સે તં ઓમોયરિયા) આ અવમોદરિકા તપનું વર્ણન સંપૂર્ણ થયું.
(સે કિં તં ભિક્ષાયરિયા) ભિક્ષાચર્યા શું છે—કેટલા જાતની છે ? ઉત્તર (ભિક્ષા-
યરિયા અણેગવિહા પણ્ણત્તા) ભિક્ષાચર્યા અનેકજાતની કહેવાય છે. (તં જહા) જેમકે
(દઘ્વાભિગ્ગહચરણ, સેત્તાભિગ્ગહચરણ, કાલાભિગ્ગહચરણ, ભાવાભિગ્ગહચરણ) ૧ દ્રવ્યા-

स्वेत्ताभिग्रहचरण २, कालाभिग्रहचरण ३, भावाभिग्रहचरण ४,
उक्खित्तचरण ५, णिक्खित्तचरण ६, उक्खित्तणिक्खित्तचरण ७,

चरति=भिक्षामटति, द्रव्याश्रिताऽभिग्रहं वा चरति—आसेवते यः स द्रव्याभिग्रहचरकः, इह
च भिक्षाचर्यायां प्रक्रान्तायां यद् द्रव्याभिग्रहचरक इत्युक्तं तद्धर्मधर्मिणोरभेदविवक्षणात् ।
द्रव्याभिग्रहश्च लेपकृतादिद्रव्यविषयः । १ । ‘स्वेत्ताभिग्रहचरण’ क्षेत्राऽभिग्रहचरकः—क्षेत्राऽभिग्रहः
‘अमुकस्थाने ग्रहीष्यामि’ इत्यादिरूपः । २ । ‘कालाभिग्रहचरण’ कालाभिग्रहचरकः, काला-
भिग्रहः—पूर्वाह्णादिविषयः । ३ । ‘भावाभिग्रहचरण’ भावाभिग्रहचरकः—भावाभिग्रहो-
गानहसनादिप्रवृत्तपुरुषादिविषयः, तेन चरतीति । ४ । ‘उक्खित्तचरण’ उत्क्षिप्तचरकः—
उत्क्षिप्तं—गृहस्थेन स्वप्रयोजनाय पाकभाजनादुद्धृतं तदर्थमभिग्रहतश्चरति—गच्छतीत्युत्क्षिप्तचरकः ।
। ५ । ‘णिक्खित्तचरण’ निक्षिप्तचरकः—निक्षिप्तं—पाकादिभाजनादुद्धृत्य अन्यभाजने स्थापितं,
तदर्थमभिग्रहं कृत्वा चरति—इति निक्षिप्तचरकः । ६ । ‘उक्खित्त-णिक्खित्त-चरण’ उत्क्षिप्त-
निक्षिप्तचरकः—पाकभाजनादुत्क्षिप्तं तदेव अन्यत्र स्थाने निक्षिप्तं यत् तदुत्क्षिप्तनिक्षिप्तम्,

मिलेगी तो ही लूंगा, अन्यथा नहीं । भिक्षाचर्या का यद्यपि प्रकरण है, परन्तु जो “ द्रव्या-
भिग्रहचरक ” ऐसा निर्देश किया है वह धर्म और धर्मी में अभेद की विवक्षासे समझना
चाहिये । २ क्षेत्राभिग्रहचरक—अमुक स्थान में मिलेगा तो लूंगा । ३ कालाभिग्रहचरक-
अमुक समय में लूंगा । ४ भावाभिग्रहचरक—अमुक प्रकार का दाता देगा तो लूंगा ।
५—(उक्खित्तचरण) उत्क्षिप्तचरक—गृहस्थने पाकभाजन से अपने लिये निकाला हो,
उसमें से यदि देगा तो लूंगा । (६) (निक्खित्तचरण) निक्षिप्तचरक—गृहस्थने पाक भाजन
से निकाल कर अन्य भाजन में रख दिया हो, उसमें से देगा तो लूंगा । ७—(उक्खित्त-

लिग्रहचरक—मुनि अलिग्रह करे छे के मनेजे अमुक वस्तु लिक्षाभां भणशे ते ज
हुं लधश, भीण नडि. लिक्षाचर्यानुं जे के प्रकरण छे; परंतु जे ‘द्रव्यालि-
ग्रहचरक’ जेम निर्देश करेदो छे ते धर्म अने धर्मीभां अलेदनी विवक्षाजे
समजये जेधजे. [२] क्षेत्रालिग्रहचरक—अमुक स्थानभां भणशे तो लधश,
[३] कालालिग्रहचरक—अमुक समयभां लधश, [४] भावालिग्रहचरक—अमुक
प्रकारने दाता आपशे तो लधश, [५] (उक्खित्तचरण) उत्क्षिप्तचरक—गृहस्थे
रांधवाना पात्रभांथी पोताने माटे डाढेहुं होय तेभांथी जे आपशे तो लधश,
[६] (निक्खित्तचरण) निक्षिप्तचरक—गृहस्थे रांधवाना पात्रभांथी डाढीने भीण
वासणुभां राभी दीधुं होय तेभांथी आपशे तो लधश. [७] (उक्खित्त-निक्खित्त-

णिक्रिखत्तउक्रिखत्तचरण ८, वट्टिज्जमाणचरण ९, साहरिज्जमाणचरण १०, उवणीयचरण ११, अवणीयचरण १२, उवणीय-अवणीयचरण

तदर्थमभिग्रहतश्चरति स उत्क्षिप्तनिक्षिप्तचरक इत्युच्यते । ७। 'णिक्रिखत्त-उक्रिखत्त-चरण' निक्षिप्तोत्क्षिप्तचरकः-निक्षिप्तं-पाकभाजनादन्यत्र स्थापितमुत्क्षिप्तं-तदेव पुनरुद्धृतं-हस्ते गृहीतं, तदर्थमभिग्रहं कृत्वा चरति स निक्षिप्तोत्क्षिप्तचरकः । ८। 'वट्टिज्जमाणचरण' कर्त्यमानचरकः-कर्त्यमानं-परिविष्यमाणं ग्रहीतुं चरति स कर्त्यमानचरकः । ९। 'साहरिज्जमाणचरण' संह्रियमाणचरकः-अत्युष्णं व्यञ्जनसूपादि शीतलीकरणाय स्थाल्यादिषु विस्तारितं तत्पुनर्भाजने क्षिप्यमाणं संह्रियमाणमुच्यते, तद् ग्रहीतुं चरति-इति संह्रियमाणचरकः । १०। 'उवणीयचरण' उपनीतम्=अन्येन केनचिद् गृहस्थाय प्रेषितं यत् तदुपनीतं, तदेव ग्रहीतुं चरति-इत्युपनीत-चरकः । ११। 'अवणीयचरण' अपनीतचरकः-अपनीतं गृहस्थेन अन्यस्मै कस्मै चिदातुं

निक्रिखत्त-चरण) उत्क्षिप्तनिक्षिप्तचरक-दाताने पहले पाकभाजन से अन्नादिक निकाला, फिर उसको उसने अन्य पात्रमें रखा, उसमें से यदि देगा तो लूंगा । ८-(निक्रिखत्त-उक्रिखत्त-चरण) निक्षिप्तउत्क्षिप्तचरक-दाताने पाकभाजन से अन्नादिक को निकाल कर दूसरे पात्र में रख दिया हो, उसीको हाथ में उठाया हुआ हो, उससे यदि देगा तो लूंगा । ९-(वट्टिज्जमाणचरण) कर्त्यमानचरक-दाता द्वारा परोसी जाती हुई वस्तु में से देगा तो लूंगा । १०-(साहरिज्जमाणचरण) संह्रियमाणचरक-दाताने उष्ण व्यञ्जन एवं सूपादिक को ठंडा करने के लिये स्थाली आदि में रखा, फिर उस व्यञ्जनादिक को उसी पात्र में रखता हुआ उसमें से देगा तो लूंगा । ११-(उवणीयचरण) उपनीतचरक-दाता से मैं उसी पदार्थ को लूंगा जो उसके लिये अन्य किसी व्यक्तिने भेजा होगा । १२. (अवणीयचरण) अपनीतचरक-मैं दाता से वही पदार्थ लूंगा जो उसने अन्य किसी

त्तचरण) उत्क्षिप्तनिक्षिप्तचरक-दाताये पडेदां रांधवानां वासणुमांथी अन्नादिक
डाढ्युं पछी तेने तेण्णे भील्लं वासणुमां राब्भुं डोय, तेमांथी ये आपशे तो
लधश. [८] (वट्टिज्जमाणचरण) कर्त्यमानचरक-दाता द्वारा पीरसवामां आवती
वस्तुमांथी आपशे तो लधश. [१०] (साहरिज्जमाणचरण) संह्रियमाणचरक-
दाताये गरम व्यंजन तेमज्ज सूय (हाल) आदि ने ठंडां करवा भाटे थाणी
आदिमां राब्भ्यां डोय, पछी ते व्यंजन आदिकने तेज्ज पात्रमां राब्भतां तेमांथी
आपशे तो लधश. [११] (उवणीयचरण) उपनीतचरक-दाता पासैथी हुं
येज्ज पदार्थ लधश के जे भील्ल डोढ्ये तेने भाटे भोक्ख्ये डोय. [१२]
(अवणीयचरण) अपनीतचरक-हुं दाता पासैथी तेज्ज पदार्थ लधश के जे

૧૩, અવળીય-ઉવળીયચરણ ૧૪, સંસટ્ટચરણ ૧૫, અસંસટ્ટચરણ ૧૬, તજ્જાયસંસટ્ટચરણ ૧૭, અણ્ણાયચરણ ૧૮, મોળચરણ ૧૯,

નિઃસાર્યાન્યત્ર સ્થાપિતં તદેવ અપનીતં, તદર્થં ચરતિ-इत्यपनीतचरकः । ૧૨ । ‘ઉવળીય-અવળીય-ચરણ’ ઉપનીતાપનીતચરકઃ-यदेव उपनीतम्-अन्येन प्रेषितं तदेव अपनीतं स्थानान्तरे स्थापितं तद् ग्रहीतुं चरति इत्युपनीताऽपनीतचरकः । ૧૩ । ‘અવળીય-ઉવળીય-ચરણ’ અપનીતો-પનીતચરકઃ-अपनीतम्=कस्मै चित् अन्यस्मै दातुं निःसार्यान्यत्र स्थापितं, तदेव उपनीतं=यस्य गृहस्थस्य समीपे प्रेषितं तस्य गृहस्थस्य गृहे प्रापितं तदपनीतोपनीतं, तदर्थं चरतीत्यपनीतोपनीतचरकः । ૧૪ । ‘સંસટ્ટચરણ’ સંસટ્ટચરકઃ-संसृष्टेन=खरण्डितेन हस्तादिना दीयमानं संसृष्टमुच्यते, तद् ग्रहीतुं चरति-इति संसृष्टचरकः । ૧૫ । ‘અસંસટ્ટચરણ’ અસંસટ્ટચરકઃ-असंसृष्टेन=अखरण्डितेन चरति-इत्यसंसृष्टचरकः । ૧૬ । ‘તજ્જાયસંસટ્ટચરણ’ તજ્જાત-સંસટ્ટચરકઃ-तज्जातेन=परिविध्यमाणद्रव्येण यत्संसृष्टं हस्तादि, तेन दीयमानं वस्तु ग्रहीतुं य-

દૂસરે કો દેને કે લિયે નિકાલ કર રખ દિયા હોગા । ૧૩-(ઉવળીય-અવળીય-ચરણ) ઉપનીત-અપનીતચરક-મैं वही पदार्थ लूंगा जो उस दाता के लिये किसी दूसरेने उसके पास रखा होगा, और दाताने उसी पदार्थ को यदि दूसरे को देने के लिये एक तरफ रख छोड़ा होगा । ૧૪-(અવળીય-ઉવળીય-ચરણ) અપનીતઉપનીતચરક-કિસી ગૃહ-સ્થને કિસી વ્યક્તિ કો દેને કે લિયે અન્નાદિક અન્યત્ર સ્થાપિત કર રખા હોગા ઓર ઉસકો ઉસને ઉસકે યહાં મેજ દિયા હોગા, તથા વહ ઉસકે ઘર મી પહુંચ ચુકા હોગા, ઉસમેં સે દેગા તો લૂંગા । ૧૫-(સંસટ્ટચરણ) સંસટ્ટચરક-भरे हुए हाथ से देगा तो लूंगा । ૧૬-(અસંસટ્ટચરણ) અસંસટ્ટચરક-विना भरे हुए हाथ से देगा तो लूंगा । ૧૭ (તજ્જાયસંસટ્ટચરણ) તજ્જાતસંસટ્ટચરક-हाथ जिस चीज से संसृष्ट-भरा रहा होगा, वही चीज यदि

તેણે ખીબા કેઈ માણસને દેવાને માટે કાઢી રાખેલો હોય. [૧૩] (ઉવળીય-અવળીયચરણ) ઉપનીત-અપનીત-ચરક-હું તે જ પદાર્થ લઈશ કે જે કેઈ ખીબાએ તે દાતાને માટે તેની પાસે મોકલ્યો હોય અને દાતાએ તે જ પદાર્થને કેઈ ખીબાને દેવા માટે એક તરફ રાખી મૂક્યો હોય. [૧૪] (અવળીય-ઉવળીયચરણ) અપનીત-ઉપનીત-ચરક-કેઈ ગૃહસ્થે કેઈ વ્યક્તિને દેવા માટે અન્નાદિક ખીબે ઠેકાણે રાખી મુકેલું હોય અને તે તેણે તેને ત્યાં મોકલી દીધું હોય અને તે તેને ઘેર પણ પહોંચી ગયું હોય તેમાંથી આપશે તો લઈશ. [૧૫] (સંસટ્ટચરણ) સંસટ્ટચરક-શાક આદિથી ભરેલા હાથથી આપશે તો લઈશ. (૧૬) (અસંસટ્ટચરણ) અસંસટ્ટચરક-વગર ભરેલા હાથથી આપશે તો લઈશ.

दिट्टलाभिण २०, अदिट्टलाभिण २१, पुट्टलाभिण २२, अपुट्टलाभिण

श्रुति स तज्जातसंसृष्टचरकः । १७। 'अण्णायचरण' अज्ञातचरकः—अज्ञातम्—अज्ञात-
साधुनियमं कुलं चरति यः सोऽज्ञातचरकः । १८। 'मोणचरण' मौनचरकः—मौनम्=
वाक्संयमनं, तेन चरति यः स मौनचरकः । १९। 'दिट्टलाभिण' दृष्टलाभिकः—दृष्टस्यैव
भक्तादेर्लाभो दृष्टलाभः, यद्वा दृष्टाप्रथमदृष्टादेव दातुर्गृहाद्वा लाभो दृष्टलाभः, सोऽस्ति यस्य
स दृष्टलाभिकः । २०। 'अदिट्टलाभिण' अदृष्टलाभिकः—अदृष्टस्य—आवरणाऽऽच्छादितस्य
दात्रादिभिः कृतोपयोगस्य भक्तादेर्लाभः, अथवा अदृष्टात्=पूर्वं कदापि न दृष्टाद् दायकालाभः;
सोऽस्याऽस्तीत्यदृष्टलाभिकः । २१। 'पुट्टलाभिण' पृष्टलाभिकः—भिक्षार्थं समागतं यं साधुं
'भो साधो! त्वं किमिच्छसि?' एवं कश्चिद् गृहस्थः पृच्छति स पृष्ट इत्युच्यते, तस्य साधो-

मुझे देगा तो लूंगा । १८—(अण्णायचरण) अज्ञातचरक—जो साधुओं के नियमों से अन-
भिज्ञ होगा उसी कुल की मैं भिक्षा लूंगा । १९—(मोणचरण) मौनचरक—मैं वहीं से भिक्षा-
प्राप्त करूँगा जो मेरे बिना बोले मुझे भिक्षा लाकर देगा । २०—(दिट्टलाभिण) दृष्टला-
भिक—मैं वही भिक्षा लूंगा जो सर्वप्रथम मेरी दृष्टि में आवेगी, अथवा मैं उसीसे भिक्षा
लूंगा जो सर्वप्रथम मुझे दिखाई देगा, अथवा मैं उसी स्थान से भिक्षा लूंगा जो सबसे
पहिले मुझे दिख जायगा । २१—(अदिट्टलाभिण) अदृष्टलाभिक—जो अशनादिक आवरण
से आच्छादित होने की वजह से दिखाई तो न पड़े, परन्तु दाता उसे अपने उपयोग में
ला चुका हो, उसमें से भिक्षा देगा तो लूंगा, अथवा—जिस दाता को मैं पहिले कभी
भी नहीं देखा वह देगा तो लूंगा । २२—(पुट्टलाभिण) पृष्टलाभिक—दाता यदि पूछेगा,

[१७] (तज्जायसंसृष्टचरण) तज्जायसंसृष्टचरक—हाथ ने चीजथी संसृष्ट थर्ध जय ते
चीज ने भने आपसे तो लधश (१८) (अण्णायचरण) अज्ञातचरक—ने
साधुओना नियमोथी अज्ञात होय ओवां कुणनी हुं लिक्षा लधश (१९)
(मोणचरण) मौनचरक—हुं तेना पासेथी लिक्षा लधश डे ने भारा ओल्या
बिनाज भने लिक्षा लावीने आपी देशे (२०) (दिट्टलाभिण) दृष्टलाभिक—हुं
ओ ज लिक्षा लधश डे नेने हुं सर्वथी पडेलां जेधश. अथवा हुं तेना ज
हाथथी लिक्षा लधश ने माणुस भारे सर्वप्रथम जेवामां आवशे, अथवा
हुं तेज जज्याथी लिक्षा लधश ने जज्या भारे सर्व-प्रथम देभाशे (२१)
(अदिट्टलाभिण) अदृष्टलाभिक—ने आवाना पहार्यो ठांङ्गुंथी ठांङ्गलां होवाना
कारणुथी देभाय नहि पणु दाता तेने पोताना उपयोगमां लावी थूङ्गला होय
तेमांथी लिक्षा आपसे तो लधश. अथवा ने दाताने में पडेलां कही जेयेला
न होय ते आपसे तो लधश. (२२) (पुट्टलाभिण) पृष्टलाभिक—दाता ने

२३, भिक्षालाभिः २४, अभिक्षालाभिः २५, अन्नगिलायः

स्तस्माद् गृहस्थाद् यो लाभः स पृष्ठलाभः, सोऽस्याऽस्तीति पृष्ठलाभिकः । २२। 'अपुट्टलाभिः' अपृष्ठलाभिकः—केनचिद् गृहस्थेनाऽपृष्ठस्यैव साधोर्यस्तस्माद् गृहस्थालाभः सोऽपृष्ठलाभः, सोऽस्याऽस्तीत्यपृष्ठलाभिकः । २३। 'भिक्षालाभिः' भिक्षालाभिकः—कस्यचित् क्षेत्राद् गृहाद्वा याचित्वा गृहस्थेन समानीततुच्छबलचगककोद्रवादिकनिष्पादित आहारो भिक्षा, तस्या लाभोऽस्यास्तीति भिक्षालाभिकः । २४। 'अभिक्षालाभिः' अभिक्षालाभिकः—अयाचितलाभः—अभिक्षा, तस्या लाभोऽस्याऽस्तीत्यभिक्षालाभिकः । २५। 'अन्नगिलायः' अन्नगलायकः—अन्नेन—आहारेण विना गलायकः, रात्रिनिष्पन्नमन्नं ग्रहीष्यामीत्यवग्रहं कृत्वा भिक्षाचरक इत्यर्थः, पर्युषितान्नभिक्षाचरक इति भावः । २६। 'ओवणिहिः' औपनिहितिकः—उपनिहितं—कथञ्चिद् गृहस्थेन स्वसमीपे समानीतमन्नादिकम्, तेन चरति इत्यौपनिहितिकः

महाराज! आप क्या चाहते हैं; तभी लूंगा । २३—(अपुट्टलाभिः) अपृष्ठलाभिक—दाता यदि नहीं पूछेगा तभी लूंगा । २४—(भिक्षालाभिः) भिक्षालाभिक—दाता गृहस्थ बाल चना एवं कोद्रव आदि अन्न को किसी के खेत से अथवा किसी के घर से मांग कर लाया होगा उस अन्न से निष्पादित आहारमें से यदि देगा तो लूंगा । २५ (अभिक्षालाभिः) अभिक्षालाभिक—दाता मांग कर जो पदार्थ नहीं लाया होगा उसमें से देगा तो लूंगा । २६—(अन्नगिलायः) अन्नगलायक—जो अशनादिक रात्रिमें पकाया गया होगा वही लूंगा, अर्थात्—पर्युषित अन्न की भिक्षा लेने का अभिग्रह लेनेवाला संयमी जन अन्नगलायक है । २७ (ओवणिहिः) औपनिहितिक—गृहस्थ अपने समीप में किसी प्रकार से लाया गया अशनादिक में से देगा तो लूंगा । २८—(परिमियपिंड-

પૂછશે કે મહારાજ ! આપને શું જોઈએ છે ત્યારે લઈશ. (૨૩) (અપુટ્ટલાભિઃ) અપૃષ્ઠલાભિક-દાતા જો નહિ પૂછશે તો જ લઈશ. (૨૪) (ભિક્ષાલાભિઃ) ભિક્ષાલાભિક-દાતા ગૃહસ્થ જે વાલ ચણા તેમજ કોદરૂ આદિ અનાજ કોઈના ખેતરથી અથવા કોઈને ઘેરથી માગીને લાવ્યા હોય તે અન્નથી બનાવેલા આહાર-માંથી આપશે તો લઈશ. (૨૫) (અભિક્ષાલાભિઃ) અભિક્ષાલાભિક-દાતાએ માગીને જે પદાર્થ નહોતો લાવ્યો હોય તેમાંથી આપશે તો લઈશ. (૨૬) (અન્નગિલાયઃ) અન્નગલાયક-જે ભોજન રાતમાં રાંધેલું હશે તે જ લઈશ-અર્થાત્ વાસી અન્નની ભિક્ષા લેવાનો અભિગ્રહ લેનાર સંયમી જન અન્નગલાયક છે. (૨૭) (ઓવણિહિઃ) ઔપનિહિતિક-ગૃહસ્થ પોતાની સમીપમાં કોઈ પણ પ્રકારે લાવેલા ભોજનમાંથી

૨૬, ઓવણિહિ ૨૭, પરિમિયપિંડવાઈ ૨૮, સુદ્દેસણિ ૨૯,
સંસ્વાદત્તિ ૩૦। સે તં મિક્ષાયરિયા ॥ સૂ. ૩૦ ॥

૧૨૭। ‘પરિમિયપિંડવાઈ’ પરિમિતપિંડપાતિકઃ—પરિમિતપિંડસ્ય — પ્રમાણપેતપિંડસ્ય પાતો લાભઃ પરિમિતપિંડપાતઃ, સોડસ્યાસ્તીતિ પરિમિતપિંડપાતિકઃ—આધાકર્માદિદોષરહિતં મક્તાદિકમેકસ્માદ્ ગૃહાદિ પર્યાપ્તં લભ્યેત તદા ગ્રાહ્યમ્—ઇત્યભિગ્રહવાન્ ૧૨૮। ‘સુદ્દેસણિ’ શુદ્ધૈષણિકઃ—શુદ્ધૈષણા—શંકાદિદોષરહિતતા, શુદ્ધસ્ય=ઉદ્ગમાદિદોષરહિતસ્ય વા ણ્ણના, સાડસ્યાડસ્તીતિ શુદ્ધૈષણિકઃ, સર્વથા શુદ્ધમેવ ગ્રાહ્યમિત્યભિગ્રહધારીતિ ભાવઃ ૧૨૯। ‘સંસ્વાદત્તિ’ સંસ્વાદત્તિકઃ—સંસ્વાપ્રધાના દત્તિઃ સંસ્વાદત્તિઃ, તયા ચરતીતિ સંસ્વાદત્તિકઃ। દર્વીકટોરકાદિતોડવિચ્છિન્નધારયા યા મિક્ષા પતતિ સા, તથા—એકક્ષેપરૂપા ચ મિક્ષા દત્તિરિત્યુચ્યતે ૧૩૦। ‘સે તં મિક્ષાયરિયા’ સૈવા મિક્ષાચર્યા ॥ સૂ. ૩૦ ॥

વાઈ) પરિમિતપિંડપાતિક—આધાકર્માદિક દોષોં સે રહિત મક્તાદિક યદિ એક હી ગૃહ સે પર્યાપ્તમાત્રા મેં મિલ જાય તો લ્લેંગા। ૨૯ (સુદ્દેસણિ) શુદ્ધૈષણિક—શંકાદિક દોષોં સે રહિત અથવા ઉદ્ગમાદિક દોષોં સે વર્જિત આહાર લેને વાલા। ૩૦-(સંસ્વાદત્તિ) સંસ્વાદત્તિક વહ હૈ જો હસ પ્રકાર કા સંકલ્પ કરતા હૈ કિ દર્વી—કડછી એવં કટોરી આદિ સે અવિચ્છિન્ન ધારારૂપ મેં જો મિક્ષા મેરે પાત્ર મેં પડ જાયગી ઉતનો હી મિક્ષા મેં ગ્રહણ કરુંગા। (સે તં મિક્ષાયરિયા) મિક્ષાચર્યા કે ચે ૩૦ ભેદ હૈ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

આપશે તો લઈશ. (૨૮) (પરિમિયપિંડવાઈ) પરિમિતપિંડપાતિક—આધા-
કર્મ આદિક દોષોથી રહિત ભક્તાદિક ને એક જ ઘેરથી પુરતા પ્રમાણમાં
મળી જાય તો લઈશ. (૨૯) (સુદ્દેસણિ) શુદ્ધૈષણિક—શંકા આદિક દોષોથી રહિત
અથવા ઉદ્ગમાદિક દોષોથી વર્જિત આહાર લેવાવાળા. ૩૦ (સંસ્વાદત્તિ)
સંસ્વાદત્તિક તે છે કે જે એવો સંકલ્પ કરે છે કે દર્વી—કડછી તેમજ કટોરી
આદિથી સતત ધારારૂપમાં જેટલી પણ ભિક્ષા મારા પાત્રમાં પડી જશે
એટલી જ ભિક્ષા લઈશ. (સે તં મિક્ષાયરિયા) ભિક્ષાચર્યાના આ ૩૦ ભેદ
છે. (સૂ. ૩૦)

મૂલમ્—સે કિં તં રસપરિચ્છાણ ? રસપરિચ્છાણ અણેગવિદ્દે
પણ્ણત્તે; તં જહા ૧ નિવ્વિદ્દણ, ૨ પળીયરસપરિચ્છાણ, ૩ આયંબિલિણ,

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—‘ સે કિં તં રસપરિચ્છાણ ’ અથ કોઽસૌ રસ-
પરિત્યાગઃ ૧, ‘ રસપરિચ્છાણ ’ રસપરિત્યાગઃ ‘ અણેગવિદ્દે પળ્ણત્તે ’ અનેકવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ,
‘ તં જહા ’ તદ્વથા—તદનેકવિધત્વં ચૈવમ્—‘ નિવ્વિદ્દણ ’ નિર્વિકૃતિકઃ—નિર્ગતા ઘૃતાદિરૂપા
વિકૃતિર્યસ્માત્ સ નિર્વિકૃતિકઃ ૧, ‘ પળીયરસપરિચ્છાણ ’ પ્રળીતરસપરિત્યાગઃ—પ્રળીતરસઃ
પ્રચુરત્વાત્ દ્રવદ્ઘૃતબિન્દુસન્દોહોઽપૂપાદિઃ, તસ્ય પરિત્યાગઃ ૨, ‘ આયંબિલિણ ’ આચામામ્લમ્—
વિકૃતિરહિતાનામોદનમર્જિતચળકાદીનાં રૂક્ષાન્નાનામચિત્ત ઉદકે પ્રક્ષિપ્યૈકાસનસ્થેન
સકૃદ્બોજનમાચામામ્લં નામ તપ ઉચ્યતે । તથા ચોક્તમ્—

‘ સે કિં તં રસપરિચ્છાણ ? ’ ઇત્યાદિ ।

(સે કિં તં રસપરિચ્છાણ ?) રસપરિત્યાગ તપ કિસે કહતે હૈં ? વહ કિતને
પ્રકાર કા હૈ ? ઇસ પ્રકાર શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ । ઉત્તર—(રસપરિચ્છાણ) રસપરિત્યાગ
તપ (અણેગવિદ્દે પળ્ણત્તે) અનેક પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(નિવ્વિ-
દ્દણ) નિર્વિકૃતિક—જિસ આહાર સે ઘૃતાદિક વિકૃતિ નિર્ગત હો ચુકી હો ઇસે આહારકા
ગ્રહણ કરના સો નિર્વિકૃતિક હૈ । અર્થાત્—વિગય નહીં લેના (૧) । (પળીયરસપરિચ્છાણ)
પ્રળીતરસપરિત્યાગ—અપૂપ અર્થાત્ માલપુઆ આદિ સરસ આહાર કા પરિત્યાગ કરના (૨) ।
(આયંબિલિણ) આચામામ્લ—વિગયરહિત ઓદન, ભૂંજે હુણ ચને આદિ રૂક્ષ અન્નકો
અચિત્ત પાની મેં ડાલકર ઇકસ્થાન પર બૈઠ ઇક બાર હી ખાના સો આચામામ્લ તપ હૈ ।

‘ સે કિં તં રસપરિચ્છાણ ? ’ ઇત્યાદિ

(સે કિં તં રસપરિચ્છાણ) હવે અહીં રસપરિત્યાગ તપ કેને કહે છે—તે
કેટલા પ્રકારનાં છે ? આ પ્રકારે શિષ્ય પ્રશ્ન કરે છે. ઉત્તર (રસપરિચ્છાણ) રસ-
પરિત્યાગ તપ (અણેગવિદ્દે પળ્ણત્તે) અનેક પ્રકારનાં કહેવાય છે. તે આ પ્રકારે
છે—(નિવ્વિદ્દણ) નિર્વિકૃતિક—જે આહારમાંથી ઘી વગેરેની વિકૃતિ નીકળી ગઈ હાય
એવો આહાર હોયો તે નિર્વિકૃતિક છે. અર્થાત્ વિગય (ઘી—દૂધ વગેરે)
લેવું નહિ. (૧) (પળીયરસપરિચ્છાણ) પ્રળીતરસપરિત્યાગ—અપૂપ અર્થાત્ માલપુઆ
આદિ સરસ આહારનો પરિત્યાગ કરવો. (૨) (આયંબિલિણ) આચામામ્લ—
વિગયરહિત ભાત, ભુંજેલ ચણા આદિ લુખું અન્ન અચિત્ત પાણીમાં નાખી

૪ આયામસિત્થમોર્ડ, ૫ અરસાહારે, ૬ વિરસાહારે, ૭ અંતાહારે,

વિગરહિયસ્સ ઓયણ, - મજ્જિયચળગાઇલુક્કવ-અન્નસ્સ ।

સ્વિત્તા જલે અચિત્તે, સ્વાણં આયંબિલં જાણ ॥ ૩ ॥ ઇતિ

‘આયામ-સિત્થ-મોર્ડ’ આયામ-સિક્થ-મોર્ડી, = અવસાવળગતસિક્થમોક્તા, ૪ ‘અર-સાહારે’ અરસાઽહારઃ-અરસઃ=જીરક-હિઙ્ગવાદિભિરમંસ્કૃત આહારો यस્ય સોઽરસાઽહારઃ ૫ । ‘વિરસાહારે’ વિરસાઽહારઃ-વિરસઃ=વિગતરસઃ-પુરાણધાન્યૌદનાદિઃ આહારો यस્ય સ વિરસાહારઃ ૬ । ‘અંતાહારે’ અન્ત્યાઽહારઃ-અન્તે ભવમ્ અન્ત્યં-જઘન્યધાન્યં કોદ્રવાદિ તદેવાઽહારો यस્ય સોઽન્ત્યાહારઃ ૭ । ‘પંતાહારે’ પ્રાન્તાઽહારઃ-પ્રકર્ષેણાન્તં પ્રાન્તં-પાક-પાત્રાદન્ને નિઃસારિતે તત્પાત્રશ્લિષ્ટં દર્શ્યાદિના ધર્ષણેન નિઃસારિતમન્નં, વલ્લચળકાદિનિષ્પાદિ-

કહા મી હૈ-“વિગરહિયસ્સ ઓયણમજ્જિયચળગાઇલુક્કવઅન્નસ્સ । સ્વિત્તા જલે અચિત્તે સ્વાણં આયંબિલં જાણ” इसका अर्थ आयंबिल का जो अर्थ किया है वही है (३) । (आयामसिक्थमोर्ड) आयामसिक्थमोर्डी-ओसामण, में आये हुए सीथ मात्र का आहार करना (४) । (अरसाहारे) अरसाहार-जीरे हींग आदि से विना बघारे हुए आहार का लेना (५) (विरसाहारे) विरसाहार-विगत रसवाले पुराने धान्य का आहार लेना (६) । (अंताहारे) अन्ताहार-कोद्रव आदि तुच्छ धान्य का आहार लेना (७) । (पंताहारे) प्रान्ताहार-पकाने के वर्तन में से अन्न के निकालने पर करछली आदि के धर्षण से पात्र में लगा हुआ जो कुछ अन्न निकाला जाता है वह, अथवा वल्ल चणा आदि से बना हुआ पश्चात् खड़ी छाछ से मिश्रित अन्नादि

|| એક ઠેકાણે બેસી એકવાર ખાવું તે આયામામ્લ તપ છે. “વિગરહિયસ્સ ઓયણમજ્જિયચળગાઇલુક્કવઅન્નસ । સ્વિત્તા જલે અચિત્તે સ્વાણં આયંબિલં જાણ” આનો અર્થ આયંબિલનો જે અર્થ કયો છે તે જ છે. (૩) (અયામસિત્થમોર્ડ) આયામસિક્થમોર્ડી-ઓસામણમાં આવેલા સીથનો જ માત્ર આહાર કરવો (૪) (અરસાહારે) અરસાહાર-જીર હીંગ આદિથી વધાર્યા વગરના ભોજનનો આહાર કરવો (૬) (વિરસાહારે) વિરસાહાર-રસ વગરના જુના ધાન્યથી બનેલું આહાર લેવો (અંતાહારે) અંતાહાર-કોદરા આદિ તુચ્છ ધાન્યનો આહાર લેવો. (૭) (પંતાહારે) પ્રાન્તાહાર-રાંધવાના વાસણમાંથી અન્ન કાઢી લીધા પછી કડછી આદિના ધર્ષણથી પાત્રમાં લાગેલું જે કાંઈ અન્ન નિકાળવામાં આવે છે તે અથવા વાલ-ચણા આદિનો બનેલો (લોટ) પછી ખાટી છાશમાં મેળવી રાંધેલું અન્ન આદિ તે

८ पंताहारे, ९ लूहाहारे, १० तुच्छाहारे, से तं रसपरिच्चाए ।

से किं तं कायकिलेसे ? कायकिलेसे अणेगविहे प-
ण्णत्ते; तंजहा-ठाणट्ठिइए १, उकुडुयासणिए २, पडिमट्टाई ३,

तमम्लतक्रमिश्रितं पर्युषितं वाऽन्नं, तदाहारो यस्य स तथा ८ । 'लूहाहारे' रूक्षाहारः—
रूक्षम्=अस्निग्धमन्नमेवाहारो यस्य स तथा ९ । 'तुच्छाहारे' तुच्छाहारः-तुच्छः—अल्पोऽसारश्च
श्यामाकादिनिष्पादित आहारो यस्य स तथा १० इति । उपमंहरन्नाह—'से तं रसपरिच्चाए'
स एष रसपरित्याग इति ।

इत्थं दशविधं रसपरित्यागं वर्णयित्वा कायक्लेशं वर्णयति—'से किं तं कायकिलेसे'
अथ कोऽसौ कायक्लेशः ? उत्तरमाह—'कायकिलेसे अणेगविहे पण्णत्ते' कायक्लेशोऽनेकविधः
प्रज्ञतः । 'तंजहा' तद्यथा—'ठाणट्ठिइए' स्थानस्थितिकः—स्थानं कायोत्सर्गः, तेन स्थितिर्यस्य
स स्थानस्थितिकः । १ । 'उकुडुयासणिए' उकुटुकाऽऽसनिकः—भूमावसंलग्नपुतेन

प्रान्त है, अथवा प्रान्तका अर्थ बासी अन्न भी है । इसका आहार करना प्रान्ताहार है (९) ।
(लूहाहारे) रूक्षाहार—रूक्षस्वभाववाला कुलथी आदि का आहार रूक्षाहार है (९) ।
(तुच्छाहारे) तुच्छाहार—असार—जिसमें कुछ भी सार नहीं है ऐसा श्यामाक, मलीचा आदि
तुच्छ धान्य का आहार तुच्छाहार है (१०) । (से तं रसपरिच्चाए) ये दस प्रकार के रस-
परित्याग तप हैं । अब कायक्लेश का वर्णन सूत्रकार करते हैं—(से किं तं कायकिलेसे?)
प्रश्न—वह कायक्लेश तप कितने प्रकार का है? (कायकिलेसे अणेगविहे पण्णत्ते) उत्तर-
कायक्लेश तप अनेक प्रकार का है; (तं जहा) वे प्रकार इस तरह हैं—(ठाणट्ठिइए) स्थान-
स्थितिक, स्थान शब्द का अर्थ कायोत्सर्ग है; इस कायोत्सर्ग से जिसकी स्थिति सर्वदा रहती
है वह स्थानस्थितिक है । (उकुडुयासणिए) उकुटुकासनिक—उकडु—आसन से बैठना

प्रान्त छे, अथवा—प्रान्तनो अर्थ वासी अन्न पणु छे, तेनो आहार करवो
ते प्रान्ताहार छे (८). (लूहाहारे) रूक्षाहार—रूक्ष स्वभावना कुलथी आदि नो
आहार रूक्षाहार छे (९). (तुच्छाहारे) तुच्छाहार—असार—जे अन्नमां कांछ
पणु सार नथी ओवुं सामो मलीचा आदि तुच्छ धान्यनो आहार ते
तुच्छाहार छे (१०). (से तं रसपरिच्चाए) आ दस प्रकारनां रसपरित्याग तप छे.
डवे कायक्लेशनुं वर्णन सूत्रकार करे छे—(से किं तं कायकिलेसे) प्रश्न—ते कायक्लेश
तप केटला प्रकारनां छे?—(कायकिलेसे अणेगविहे पण्णत्ते) कायक्लेश अनेक प्रका-
रनां छे; (तं जहा) ते प्रकार आभ छे—(ठाणट्ठिइए) स्थानस्थितिक=स्थान शब्दनो
अर्थ कायोत्सर्ग छे. आ कायोत्सर्गथी जेनी स्थिति सर्वदा रहे छे ते

વીરાસણિ ૪, નેસજિ ૫, દંડાયઈ ૬, લડડસાઈ ૭, આયા-

વદ્ધાઞ્જલિપુટેન ભૂમૌ ચરણતલમારોપ્યોપવેશનમ્—ઉત્કુટુકં, તદાસનમસ્યાસ્તીતિ ઉત્કુટુકાઽઽ-
સનિકઃ ।૨। ‘પડિમટ્ટાઈ’ પ્રતિમાસ્થાયી—પ્રતિમા=માસિક્યાદયઃ નિયમવિશેષાઃ, તામિ-
સ્તિષ્ઠતિ તચ્છીલઃ પ્રતિમાસ્થાયી ।૩। ‘વીરાસણિ’ વીરાઽઽસનિકઃ—સિંહાસનોપરિ સમુપ-
વિષ્ટસ્ય ભૂમિસ્થિતચરણસ્ય સિંહાસનાપનયને કૃતે સિંહાસનોપવિષ્ટવદવસ્થાનં વીરાસનં,
તદસ્યાસ્તીતિ વીરાસનિકઃ ।૪। ‘નેસજિ’ નૈષધિકઃ—નિષધા—પુતામ્યાં ભૂમ્યામુપવેશનં,
તયા ચરતીતિ નૈષધિકઃ ।૫। ‘દંડાયઈ’ દણ્ડાયતિકઃ—દણ્ડસ્યેવાયતમ્=આયામોઽસ્યાઽસ્તીતિ

યહ ઉત્કુટુક—આસન હૈ, જો ઇસ આસન સે બૈઠતા હૈ વહ ઉત્કુટુકાસનિક હૈ । ઇસ આસન
મેં ભૂમિ પર દેનોં ચરણોં કે તલિયોં કો જમાયા જાતા હૈ ઓર પુત-(બેઠક) જમીન કો
સ્પર્શ નહીં કરતે, તથા દેનોં હાથોં કો અંજલી બંધી રહતી હૈ । (પડિમટ્ટાઈ) પ્રતિમા-
સ્થાયી—સાધુ કી ૧૨ પ્રતિમાઓં કા ધારણ કરને વાલા પ્રતિમાસ્થાયી હૈ । (વીરાસણિ)
વીરાસનિક-વીરાસન સે ઠહરનેવાલા વીરાસનિક હૈ । ઇસ આસન કા યહ લક્ષણ હૈ—કોઈ
મનુષ્ય સિંહાસન પર બૈઠા હુઆ હૈ, ઉસ સિંહાસન કો હટા લેને પર વહ વૈસે હી યહ
રહ જાય, ઉસે ‘વીરાસન’ કહતે હૈ । ઉસ આસન સે તપ કરનેવાલે કો વીરાસનિક કહતે
હૈ । (નેસજિ) નૈષધિક—નિષધાકા અર્થ હૈ—પાલથી માર કર બૈઠના । ઇસ આસન સે
તપ કરનેવાલે કો નૈષધિક કહતે હૈ । (દંડાયઈ) દણ્ડાયતિક—દંડ કી તરહ લંબા હોકર
આસન મેં સ્થિતિ કરનેવાલા દંડાયતિક હૈ । (લડડસાઈ) લકુટશાયી—વક્રકાષ્ટ કા નામ

સ્થાનસ્થિતિક છે. (ઉત્કુટુયાસણિ) ઉત્કુટુકાસનિક=ઉકડુ આસનથી બેસવું તે
ઉત્કુટુક આસન છે. જે આ આસન કરે છે તે ઉત્કુટુકાસનિક છે. આ
આસનમાં ભૂમિ ઉપર બંને પગનાં તળિયાંને જમાવી દેવામાં આવે
છે અને પુત (બેઠક) જમીનને સ્પર્શ કરતી નથી. તથા બંને હાથની અંજલિ
બાંધેલી રહે છે. (પડિમટ્ટાઈ) પ્રતિમાસ્થાયી—સાધુની ૧૨ પ્રતિમાઓનો ધારણ
કરવાવાળો પ્રતિમાસ્થાયી છે. (વીરાસણિ) વીરાસનિક—વીરાસનથી બેસનાર
વીરાસનિક છે. આ આસનનું એ લક્ષણ છે કે—કોઈ મનુષ્ય સિંહાસન ઉપર
બેઠો હોય તે સિંહાસનને હટાવી દેવાથી તે જ પ્રમાણે ઉભો રહી જાય તેને
વીરાસન કહે છે. તે આસનથી તપ કરવાવાળાને વીરાસનિક કહે છે. (નેસજિ)
નૈષધિક—નિષધાનો અર્થ છે પલાંડી મારીને બેસવું. આ આસનથી તપ કરવાવાળાને
નૈષધિક કહે છે. (દંડાયઈ) દંડાયતિક—દંડની પેઠે લાંબા થઈને આસનમાં
સ્થિતિ કરવાવાળા દંડાયતિક છે. (લડડસાઈ) લકુટશાયી—વાંકા લાકડાનું નામ

વણ ૮; અવાડણ ૯, અકંડૂયણ ૧૦, અણિટૂહણ ૧૧, સવ્ગાય-
પરિકમ્મ-વિભૂસ-વિપ્પમુક્કે ૧૨, સે તં કાયકિલેસે।

લકુટશાયી: ૧૬। ‘લકુટશાયી’ લકુટશાયી—લકુટો=વક્રકાષ્ઠં તદ્વચ્છેતે તચ્છીલો લકુટ-
શાયી—ઉત્તાન: સન્ શયિત્વા પાર્શ્વિકદ્વયં (‘એડી’ इति भाषाप्रसिद्धद्वयं) શિરશ્ચેતિ ત્રયં ભૂમૌ
સ્થાપયિત્વા શેતે તચ્છીલ: ૧૭। ‘આયાવણ’ આતાપક:—આતાપયતિ શીતોષ્ણાદિભિર્દેહં સંતાપયતિ-
ક્લેશયતીત્યાતાપક:; આતાપના ચ સૂર્યાતપાદિસહનમ્ ૧૮। ‘અવાડણ’ અપ્રાવૃતક:—શીતકાલે
પ્રાવરણરહિત:—સદોરકમુખવસ્ત્રિકાચોલપટ્ટાતિરિક્તવસ્ત્રરહિત: ૧૯। ‘અકંડૂયણ’ અકણ્ડૂયક:—
કણ્ડૂયનં—ગાત્રઘર્ષણં, તદ્રહિત: ૨૦। ‘અણિટૂહણ’ અનિષ્ઠીવક:—નિષ્ઠીવનરહિત: ૨૧।
‘સવ્ગાય—પરિકમ્મ—વિભૂસ—વિપ્પમુક્કે’ સર્વગાત્ર—પરિકર્મ—વિભૂષા—વિપ્રમુક્ત:—સર્વસ્ય
ગાત્રસ્ય પરિકર્મ—માર્જનં વિભૂષા—વિભૂષણં ચ, તામ્યાં વિપ્રમુક્ત:—ત્યક્તસંમાર્જનવિભૂષણ: ૨૨।
‘સે તં કાયકિલેસે’ સ એષ કાયક્લેશ: ।

લકુટ હૈ । इस तरह होकर जो शयन करता है वह लकुटशायी है । ऊपर मुँह कर पहिले
सोना पश्चात् दोनों पैरों की एडियों को एवं शिर को जमीन पर टेकना, इस प्रकार शरीर को
अधर रखकर आसन करना ‘लकुटशयनासन’ है । (आयावण) आतापक—सूर्यादि की
आतापना लेने वाला, (अवाडण) अप्रावृतक—शीतकाल में सदोरक मुँहपत्ती एवं चोल-
पट्टा के अतिरिक्त अन्यवस्त्रों से रहित हो खुले शरीर से शीतको सहन करनेवाला अप्रावृतक है ।
(अकंडूयण) अकण्डूयक—खुजली चलने पर भी शरीर को नहीं खुजलाने वाला अकण्डूयक है ।
(अणिटूहण) अनिष्ठीवक—थूँक आने पर भी नहीं थूँकनेवाला अनिष्ठीवक है ।
(सव्वगाय—परिकम्म—विभूस—विप्पमुक्के) सर्वगात्रपरिकर्मविभूषाविप्रमुक्त—शरीर की
सर्वथा शुश्रूषा—विभूषा नहीं करनेवाला सर्वगात्रपरिकर्मविभूषाविप्रमुक्त है । (से तं काय-

લકુટ છે. એવી રીતે થઈને જે શયન કરે છે તે લકુટશાયી છે. ઉપર મોઢું
રાખીને પહેલાં સુવું, પછી બન્ને પગની એડીઓને તેમજ શિરને જમીન
ઉપર ટેકાવવું—આ પ્રકારે શરીરને અધર રાખીને આસન કરવું તે ‘લકુટ-
શયનાસન’ છે. (આયાવણ) આપાતક—સૂર્યઆદિની આતાપના લેવાવાળા, (અવા-
ડણ) અપ્રાવૃતક—શીતકાલમાં દોરાસાથે મુંડપત્તી તેમજ ચોલપટ્ટા સિવાયનાં
બીજાં વસ્ત્રો રહિત થઈને ખુલ્લે શરીરે શીતને સહન કરવાવાળા અપ્રાવૃતક
છે. (અકંડૂયણ) અકંડૂયક—ખુજલી આવતાં છતાં પણ જે શરીરને ખંજવાળે
નહિ તે અકંડૂયક છે. (અણિટૂહણ) અનિષ્ઠીવક—થૂંક આવવા છતાં પણ ન
થૂંકવાવાળા અનિષ્ઠીવક છે. (સવ્ગાય-પરિકમ્મ-વિભૂસ-વિપ્પમુક્કે) સર્વગાત્રપારકર્મ-

સે કિં તં પડિસંલીયણા? પડિસંલીયણયા ચઉવ્વિહા પળ્લન્તા;
તંજહા—૧ ઇંદિયપડિસંલીયણયા, ૨ કસાયપડિસંલીયણયા, ૩ જોગ-
પડિસંલીયણયા, ૪ વિવિત્ત-સયણા-સળ-સેવણયા । સે કિં તં ઇંદિયપ-
ડિસંલીયણયા ? ઇંદિયપડિસંલીયણયા પંચવિહા પળ્લન્તા, તં જહા—

‘સે કિં તં પડિસંલીયણયા?’ અથ કા સા પ્રતિસંલીનતા=પ્રતિસંલીનતા=ગોપનં;
સા કતિવિધા? ઉત્તરમાહ—‘પડિસંલીયણયા’ પ્રતિસંલીનતા—‘ચઉવ્વિહા પળ્લન્તા’
ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞતા, ‘તં જહા’ તથથા ૧—‘ઇંદિયપડિસંલીયણયા’ ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા—ઇન્દ્રિય-
નિરોધકરણશીલતા । ૨—‘કસાયપડિસંલીયણયા’ કષાયપ્રતિસંલીનતા । ૩—‘જોગ-
પડિસંલીયણયા’ યોગપ્રતિસંલીનતા । ૪—‘વિવિત્ત-સયણા-સળ-સેવણયા’ વિવિત્ત-શયના-
સન-સેવનતા । ‘સે કિં તં ઇંદિયપડિસંલીયણયા’ અથ કા સા ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા?, ‘ઇંદિય-

કિલેસે) કાયક્લેશ કે યે ૧૨ ભેદ હૈં । (સે કિં તં પડિસંલીયણયા) પ્રતિસંલીનતા તપ
કિતને પ્રકાર કા હૈ? (પડિસંલીયણયા ચઉવ્વિહા પળ્લન્તા) પ્રતિસંલીનતા તપ ચાર પ્રકાર
કા હૈ । (તં જહા) વે ચાર પ્રકાર યે હૈં—(ઇંદિયપડિસંલીયણયા) ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા—ઇન્દ્રિયો
કો ગોપ કરકે રક્ષના । (કસાયપડિસંલીયણયા) કષાયપ્રતિસંલીનતા—ક્રોધાદિકષાયો કો
ગોપ કરકે રક્ષના, (જોગપડિસંલીયણયા) યોગપ્રતિસંલીનતા—મન વચન કાયા કે વ્યાપાર
કો ગોપ કરકે રક્ષના (વિવિત્ત-સયણા-સળ-સેવણયા) વિવિત્તશયનાસનસેવનતા-
સ્ત્રી-પશુ-પણ્ડક-રહિત સ્થાન મેં શયનાસન કરના । (સે કિં તં ઇંદિયપડિસંલીયણયા)
ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા કિતને પ્રકાર કી હૈ? (ઇંદિયપડિસંલીયણયા પંચવિહા પળ્લન્તા) યહ

વિભૂષાવિપ્રમુક્ત—શરીરની સર્વથા શુશ્રૂષા (સેવા શણુગાર) ન કરવા-
વાળાને સર્વગાત્રપરિકર્મવિભૂષાવિપ્રમુક્ત કહે છે. (સે તં કાયકિલેસે)
કાયકલેશના આ ૧૨ પ્રકાર થાય છે. (સે કિં તં પડિસંલીયણયા) પ્રતિસંલીનતા તપ
કેટલા પ્રકારનાં છે? (પડિસંલીયણયા ચઉવ્વિહા પળ્લન્તા) પ્રતિસંલીનતા તપ ચાર
પ્રકારનાં છે. (તં જહા) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે. (ઇંદિયપડિસંલીયણયા) ઈન્દ્રિયોને
ગોપી રાખવી. (કસાયપડિસંલીયણયા) કષાયપ્રતિસંલીનતા—ક્રોધ આદિ કષાયોને
રોકી રાખવા. (જોગપડિસંલીયણયા) યોગપ્રતિસંલીનતા—વાણી, મન અને કાયાના
વ્યાપારને રોકી રાખવા. (વિવિત્ત-સયણા-સળ-સેવણયા) વિવિત્તશયનાસનસેવનતા-
સ્ત્રીપશુપંડકરહિત સ્થાનમાં શયનાસન કરવું. (સે કિં તં ઇંદિયપડિસંલીયણયા)
ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા કેટલા પ્રકારની છે? (ઇંદિયપડિસંલીયણયા પંચવિહા પળ્લન્તા)

सोइंदिय-विसय-प्पयार-निरोहो वा सोइंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु
रागदोसनिग्गहो वा १, चक्खिंदिय-विसय-प्पयार-निरोहो वा चक्खि-

पडिसंलीणया' इन्द्रियप्रतिसंलीनता 'पंचविहा पणत्ता' पञ्चविधा प्रज्ञा, 'तं जहा'
तद्यथा—'सोइंदिय-विसय-पयार-निरोहो वा, सोइंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु राग-
दोसनिग्गहो वा' श्रोत्रेन्द्रियविषयप्रचारनिरोधो वा श्रोत्रेन्द्रियविषयप्राप्तेष्वर्थेषु रागद्वेषनिग्रहो
वा—श्रोत्रेन्द्रिय=कर्णस्य विषये=शब्दे, प्रचारस्थ=प्रवृत्तेः, निरोधः=निषेधः, संयमशीलताविधा-
तकः शब्दो न श्रोतव्यः, यद्यकस्मात्कर्णकुहरगतः स्यात् तदा यत्कार्यं तदाह—श्रोत्रेन्द्रिय-विषय-
प्राप्तेष्वर्थेषु=श्रुतेषु भावेषु, रागद्वेषयोर्निग्रहो विधेयः; अर्थात्—मधुरमृदङ्गसङ्गीतेषु—अनुरागो न
कर्तव्यः, आक्रोशादिषु शब्देषु द्वेषः—अप्रीतिलक्षणश्चित्तविकारो न कार्यः १ । 'चक्खिंदिय-
विसय-प्पयार-निरोहो वा, चक्खिंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्ग-
हो वा' चक्षुरिन्द्रियविषयप्रचारनिरोधो वा चक्षुरिन्द्रियविषयप्राप्तेष्वर्थेषु रागद्वेषनिग्रहो वा—

इन्द्रियप्रतिसंलीनता पांच प्रकार की है; (तं जहा) वे प्रकार ये हैं—(सोइंदिय-विसय-प्पयार-
निरोहो वा, सोइंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा) श्रोत्र-इन्द्रिय को
विषय-शब्द में प्रवृत्ति करने से रोकना, संयम एवं शील को विधात करनेवाले शब्दों को
नहीं सुनना, यदि अकस्मात् इस प्रकार के शब्द कानमें आकर पड़ भी जावें तो उस विषयमें
राग-द्वेष नहीं करना, यह प्रथम प्रकार है १ । मतलब इसका यह है कि मधुर मृदङ्ग सङ्गीत
आदि प्रिय एवं आक्रोशादि अप्रिय शब्दों के प्रति प्रीति-अप्रीतिलक्षणरूप चित्तविकार नहीं
करना सो श्रोत्रेन्द्रियविषयप्रचारनिरोध, एव श्रोत्रेन्द्रियविषयप्राप्त्यारागद्वेषनिग्रहनामक प्रथम
प्रकार है १। चक्खिंदिय-विसय-प्पयार-निरोहो वा चक्खिंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु
रागदोसनिग्गहो वा) चक्षु इन्द्रिय को अपने विषयभूत पदार्थों में प्रवृत्त होने से रोकना,

आ इन्द्रियप्रतिसंलीनता ५ प्रकारनी छे—(तं जहा) ते प्रकार आ छे—
(सोइंदिय-विसय-प्पयार-निरोहो वा, सोइंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु रागदोसनिग्गहो वा)
श्रोत्र-इन्द्रियने विषय-शब्दमां प्रवृत्ति करवाथी रोकवी, संयम तेमज्ज शीलने
विधात करवावाणा शब्दो सांभणवा नहि. जे अकस्मात् आवा प्रकारना शब्द
कानमां आवीने पडी पणु जय तो ते विषयमां रागद्वेष न करवो. जे १ प्रथम
प्रकार छे. मतलब तेनी जे छे के मधुर मृदङ्ग संगीत आदि प्रिय, तेमज्ज
आक्रोश आदि अप्रिय शब्दोमां प्रीति अप्रीति-लक्षणरूप चित्तविकार न करवो ते
श्रोत्रेन्द्रियविषय-प्रचारनिरोध तेमज्ज श्रोत्रेन्द्रियविषयप्राप्त्यारागद्वेषनिग्रह नामने
प्रथम प्रकार छे. (चक्खिंदिय-विसय-प्पयार-निरोहो वा चक्खिंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु

દિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૨, ઘાણિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા ઘાણિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૩, જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૪, ફાસિંદિય-વિસય-પ્પયાર-

ચક્ષુરિન્દ્રિયસ્ય=નેત્રસ્ય વિષયે=રૂપે પ્રચારસ્ય=પ્રવૃત્તેર્નિરોધઃ કાર્યઃ, વા-અથવા ચક્ષુરિન્દ્રિય-વિષયપ્રાપ્તેષુ=દૃષ્ટેષુ અર્થેષુ-મનોજ્ઞામનોજ્ઞરૂપેષુ રાગદ્વેષયોર્નિગ્રહઃ કર્તવ્ય્ય ઇતિ શેષઃ ।૨। ‘ઘાણિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા, ઘાણિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા’ ઘ્રાણેન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધો વા ઘ્રાણેન્દ્રિયવિષયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહો વા-ઘ્રાણેન્દ્રિયં=નાસિકા, તસ્ય વિષયો=ગન્ધસ્તસ્ય પ્રવૃત્તેર્નિષેધો વિધેયઃ-સુરભિગન્ધે દુરભિગન્ધે વા નાસિકામાગતે રાગદ્વેષો નિરાકર્તવ્ય્યૌ ।૩। ‘જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા, જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા’ જિહ્વેન્દ્રિયવિષયસ્ય ભોજનરસસ્ય પ્રચારનિષેધઃ, જિહ્વાયામાગતેऽપિ મનોજ્ઞામનોજ્ઞરસે રાગદ્વેષયોર્નિગ્રહઃ ।૪। ‘ફાસિં-

અથવા પ્રવૃત્તિ હોને પર ઉસકે વિષય મેં રાગ ઔર દ્વેષ નહીં કરના, યહ દ્વિતીય પ્રકાર હૈ ૨। (ઘાણિંદિય-વિષય-પ્પયાર-નિરોહો વા, ઘાણિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા) ઘ્રાણ-ઇન્દ્રિય કો અપને વિષય મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે રોકના, તથા પ્રવૃત્તિ હોને પર ઉસ વિષયમેં રાગ દ્વેષ નહીં કરના; યહ તૃતીય પ્રકાર હૈ ૩। (જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા) જિહ્વા-ઇન્દ્રિય કો અપને વિષયમેં પ્રવૃત્તિ હોને સે રોકના, ંવં ઉસ વિષય મેં ઉસકે પ્રવૃત્તિ હોને પર પ્રાપ્ત વિષયમેં રાગ-દ્વેષકા નિગ્રહ કરના, યહ ચૌથા પ્રકાર હૈ ૪। (ફાસિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા, ફાસિંદિય-વિસયપત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા) ઇસી પ્રકાર સ્પર્શન, ઇન્દ્રિય

રાગદોસનિગ્ગહો વા) ચક્ષુ-ઇન્દ્રિયના વિષયભૂત પદાર્થોમાં તેની પ્રવૃત્તિ રોકવી અથવા પ્રવૃત્તિ થઈ જતાં તે બાબત રાગ અને દ્વેષ ન કરવો. એ બીજો પ્રકાર છે. (ઘાણિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા ઘાણિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા) ઘ્રાણ-ઇન્દ્રિયના વિષયમાં તેની પ્રવૃત્તિ રોકવી, અથવા પ્રવૃત્તિ થઈ જતાં તે બાબતમાં રાગ-દ્વેષ ન કરવો. એ ત્રીજો પ્રકાર છે. (જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા જિઙ્ઘિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા) જિહ્વા-ઇન્દ્રિયના વિષયમાં પ્રવૃત્તિ રોકવી તેમજ તેના વિષયમાં તે પ્રવૃત્તિ થઈ જાય તો પછી પ્રાપ્ત બાબતમાં રાગ દ્વેષ થતાં રોકવો. એ ચોથો પ્રકાર છે. (ફાસિંદિય-વિસય-

નિરોહો વા ફાસિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૫,
સે તં ઇંદિયપડિસંલીળયા । સે કિં તં કસાયપડિસંલીળયા ?
કસાયપડિસંલીળયા ચઠ્ઠિહા પળ્લત્તા, તં જહા—૧ કોહસ્સુદય-
નિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા કોહસ્સ વિફલીકરણં । ૨ માળ-

દિય-વિસય-પ્પયાર-નિરોહો વા, ફાસિંદિય-વિસય-પત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસ-
નિગ્ગહો વા ' સ્પર્શેન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધો વા સ્પર્શેન્દ્રિયવિષયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્ગહો વા-
સ્પર્શેન્દ્રિય=ત્વક્, તસ્ય વિષયઃ સ્પર્શઃ=શીતોષ્ણાદિકઃ, તત્ર પ્રવૃત્તેઃ પ્રતિષેધઃ, પ્રાપ્તેષ્વપિ
શુભાશુભસ્પર્શેષુ રાગદ્વેષયોર્નિષેધઃ । ' સે તં ઇંદિયપડિસંલીળયા ' સૈષા ઇન્દ્રિયપ્રતિ-
સંલીનતા । ' સે કિં તં કસાયપડિસંલીળયા ' અથ કા સા કષાયપ્રતિસંલીનતા, ' કસાય-
પડિસંલીળયા ' કષાયપ્રતિસંલીનતા ' ચઠ્ઠિહા પળ્લત્તા ' ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞતા, ' તં જહા ' તથા—
' કોહસ્સુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા કોહસ્સ વિફલીકરણં ' ક્રોધસ્યોદય-
નિરોધો વા, ઉદયપ્રાપ્તસ્ય વા ક્રોધસ્ય વિફલીકરણમ્—પ્રથમતસ્તુ ક્રોધસ્ય ઉદય એવ નિષે-

કો મી અપને વિષય મેં પ્રવૃત્ત હોને સે રોકના એવં ઉસ વિષય મેં ઉસકે પ્રવૃત્ત હોને
પર ઉસમેં રાગ દ્વેષ હોને કા વર્જન કરના; યહ પાંચવાં પ્રકાર હૈ । ઇન પાંચોં પ્રકારોં કા
ભાવ યહી હૈ કિ ઇન્દ્રિયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરના, તથા પ્રાપ્ત ઉનકે અપને ૨ મનોજ્ઞ એવં
અમનોજ્ઞ વિષયોં કે ઉપર રાગ એવં દ્વેષકી પરિણતિ સે વિરક્ત રહના । (સે તં ઇંદિયપડિ-
સંલીળયા) યહ સબ ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા હૈ । (સે કિં તં કસાયપડિસંલીળયા)
કષાયપ્રતિસંલીનતા ક્યા હૈ ? (કસાયપડિસંલીળયા ચઠ્ઠિહા પળ્લત્તા) કષાયપ્રતિસંલીનતા
ચાર પ્રકાર કી હૈ । (તં જહા) વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(૧—કોહસ્સુદયનિરોહો વા, ઉદય-

પ્પયાર-નિરોહો વા ફાસિંદિયવિસયપત્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા) એ પ્રકારે
સ્પર્શન-ઇંદ્રિયના વિષયમાં તેની પ્રવૃત્તિ રોકવી તેમજ તે વિષયમાં
તેની પ્રવૃત્તિ થઇ જાય તો તે માટે રાગ દ્વેષ ન કરવો. એ પાંચમો
પ્રકાર છે. આ પાંચેય પ્રકારોનો ભાવ એ જ છે કે ઇંદ્રિયો ઉપર વિજય પ્રાપ્ત
કરવો, તથા તે પ્રાપ્ત થતાં પોતપોતાના મનોજ્ઞ તેમજ અમનોજ્ઞ વિષયો ઉપર
રાગ કે દ્વેષની પરિણતિથી વિરક્ત રહેવું. (સે તં ઇંદિયપડિસંલીળયા) આ બધું
ઇંદ્રિયપ્રતિસંલીનતા છે. (સે કિં તં કસાયપડિસંલીળયા) પ્રશ્ન—કષાયપ્રતિસંલીનતા
શું છે ? ઉત્તર—(કષાયપડિસંલીળયા ચઠ્ઠિહા પળ્લત્તા) કષાયપ્રતિસંલીનતા ચાર
પ્રકારની છે. (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(કોહસ્સુદયનિરોહો વા ઉદયપત્તસ્સ વા

સ્સુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા માણસ્સ વિફલીકરણં ।
 ૩ માયાઉદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તાણ વા માયાણ વિફલી-
 કરણં । ૪ લોહસ્સુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા લોહસ્સ

ધનીયઃ, યથા ક્રોધો નોદયેત તથા યતિતવ્યમ્; અથાપિ યદિ ક્રોધ ઉદયં પ્રાપ્નુયાત્
 તદા તસ્ય વિફલીકરણમ્=વ્યર્થીકરણમ્ । ૧। ‘ માણસ્સુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા
 માણસ્સ વિફલીકરણં ’—માનસ્યોદયનિરોધો વા ઉદયપ્રાપ્તસ્ય વા માનસ્ય વિફલીકરણમ્—
 માનસ્ય—અભિમાનસ્યોદય એવ નિષેધિતવ્યઃ, માને ઉદયં પ્રાપ્તેઽપિ વિફલીકરણમ્=સતોઽપિ
 અસત્ત્વ ઇવ કરણમ્ । ૨। ‘ માયા—ઉદય—નિરોહો વા, ઉદયપત્તાણ વા માયાણ
 વિફલીકરણં ’ માયાયા ઉદયનિરોધો વા, ઉદયપ્રાપ્તાયા વા માયાયા વિફલીકરણમ્—
 ઉદયમાનાયા એવ માયાયાઃ=પરવચ્ચનારૂપાયા નિષેધઃ કર્તવ્યઃ, કથચ્છિદુદિતાયા વા માયાયાઃ=
 કપટક્રિયાયા વિફલીકરણમ્ । ૩। ‘ લોહસ્સુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા લોહસ્સ

પત્તસ્સ વા લોહસ્સ વિફલીકરણં, ૨—માણસ્સુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા
 માણસ્સ વિફલીકરણં, ૩ માયાઉદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તાણ વા માયાણ વિફલી-
 કરણં, ૪ લોહસ્સુદયનિરોહો વા ઉદયપત્તસ્સ વા લોહસ્સ વિફલીકરણં) પ્રથમ તો
 ક્રોધ કે ઉદય કા હી નિરોધ કરના, યહ સર્વોત્તમ પક્ષ હૈ, ઉદયનિરોધ હોને સે ક્રોધ કા
 મૂલ વિનષ્ટ હો જાતા હૈ । યદિ ક્રોધ ઉદિત હો જાય તો ઉસે વિફલ કર દેના ચાહિયે ૧ ।
 પ્રથમ તો ઈસા હી યત્ન કરના ચાહિયે કિ જિસસે માનકષાય કા ઉદય હી ન હો; યદિ
 માનકષાય ઉદિત હો જાય તો ઉસે વિફલ કર દેના ચાહિયે ૨ । ઉત્તમ બાત યહી હૈ કિ
 માયાકષાય આત્મા મેં ઉદિત ન હો, યદિ વહ ઉદિત હો જાતી હૈ તો ઉસકો વિફલ બના દેના

લોહસ્સ વિફલીકરણં, માણસ્સુદયનિરોહો વા ઉદયપત્તસ્સ વા માણસ્સ વિફલીકરણં, માયા-
 ઉદયનિરોહો વા ઉદયપત્તાણ વા માયાણ વિફલીકરણં, લોહસ્સુદયનિરોહો વા ઉદયપત્તસ્સ વા
 લોહસ્સ વિફલીકરણં) પ્રથમ તો ક્રોધનો ઉદય થતાં જ નિરોધ કરવો એ
 સર્વોત્તમ પક્ષ છે. ઉદયનિરોધ થવાથી ક્રોધનું મૂળ જ નાશ પામે છે. જો
 ક્રોધનો ઉદય થઈ જાય તો તેને વિફલ કરી દેવો જોઈએ ૧. પહેલાં તો
 એવો જ યત્ન કરવો જોઈએ કે જેથી માનકષાયનો ઉદય જ ન થાય. જો
 માનકષાયનો ઉદય થઈ જાય તો તેને વિફલ કરી દેવો જોઈએ ૨. ઉત્તમ
 વાત એ જ છે કે માયાકષાય પણ આત્મામાં ઉદય ન થઈ શકે એવી
 જાતની પ્રવૃત્તિ કરવી જોઈએ. જો તેનો ઉદય થઈ ચુકયો હોય તો તેને
 વિફલ કરી દેવું જોઈએ ૩. એ જ પ્રકારે લોભ પણ આત્મામાં ઉદિત ન થાય

વિફલીકરણં, સે તં કસાયપડિસંલીણયા । સે કિં તં જોગપડિસંલી-
ણયા ? જોગપડિસંલીણયા તિવિહા પળ્લત્તા; તં જહા-૧ મળજો-
ગપડિસંલીણયા, ૨ વયજોગપડિસંલીણયા, ૩ કાયજોગપડિસંલી-

વિફલીકરણં '—લોભસ્યોદયનિરોધો વા, ઉદયપ્રાપ્તસ્ય વા લોભસ્ય વિફલીકરણમ્—પરસ્વ-
ગ્રહણલાલસા લોભસ્તસ્યોદય એવ નિરાકરણીયઃ, કથચ્છિત્ત્વાપિ વસ્તુનિ લોભે સત્યપિ સ
લોભ ઉદિતોઽપિ નિષેધનીયઃ ।૪। 'સે તં કસાયપડિસંલીણયા' સૈષા કષાયપ્રતિ-
સંલીનતા ।૪। 'સે કિં તં જોગપડિસંલીણયા' અથ કા સા યોગપ્રતિસંલીનતા ?
'જોગપડિસંલીણયા' યોગપ્રતિસંલીનતા—'તિવિહા પળ્લત્તા' ત્રિવિધા પ્રજ્ઞા 'તં જહા'
તથથા 'મળજોગપડિસંલીણયા' મનોયોગપ્રતિસંલીનતા—યોગો=બન્ધઃ, કર્મણા સહ મનસો
યોગો—મનોયોગઃ, તસ્ય પ્રતિસંલીનતા—નિરોધશીલતા ૧। 'વયજોગપડિસંલીણયા'—વાગ્-
યોગપ્રતિસંલીનતા ૨। 'કાયજોગપડિસંલીણયા' કાયયોગપ્રતિસંલીનતા ૩। 'સે કિં તં

ચાહિયે ૩ । इसी प्रकार लोभ भी आत्मा में उदित न हो सके, इस प्रकार प्रवृत्ति करनी
चाहिये, यदि वह उदित हो चुका हो तो उसे विफल कर देना चाहिये ४ । तात्पर्य यह है कि
चारों कषायों को जैसे भी बने उस प्रकार से जीतना । (सें तं कसायपडिसंलीणया)
यह कषायप्रतिसंलीनता है । (सें किं तं जोगपडिसंलीणया) योगप्रतिसंलीनता क्या
है? (जोगपडिसंलीणया तिविहा पण्णत्ता) योगप्रतिसंलीनता तीन प्रकार की कही
गई है, (तंजहा) वह इस तरह से; (मणजोगपडिसंलीणया वयजोगपडिसंलीणया
कायजोगपडिसंलीणया) कर्मों के साथ मनका बंधन होना सो मनोयोग है, उसका
गोपन करना मनोयोगप्रतिसंलीनता है । वचनयोगप्रतिसंलीनता एवं काययोगप्रतिसंलीनता भी
वचनयोग को गोपना एवं काययोग को गोपना है । इसी विषय को आगे के सूत्रांश से सूत्र-

આ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. કદાચ તે ઉદિત થઈ ચુકયો હોય તો તેને
નિષ્ફળ કરી દેવું જોઈએ ૪.

તાત્પર્ય એ છે કે આરેય કષાયોને જેમ બને તેવા પ્રકારે જીતવા. (સે તં કસાય-
ડિસંલીણયા) આ કષાયપ્રતિસંલીનતા છે. (સે કિં તં જોગપડિસંલીણયા) પ્રશ્ન—યોગ-
પ્રતિસંલીનતા શું છે? ઉત્તર—(જોગપડિસંલીણયા તિવિહા પળ્લત્તા) યોગપ્રતિસંલીનતા
ત્રણ પ્રકારની કહેવાય છે, (તં જહા) તે આ પ્રમાણે છે—(મળજોગપડિસંલીણયા વય-
જોગપડિસંલીણયા કાયજોગપડિસંલીણયા) કર્મોની સાથે મનનું બંધન થાય તે
મનોયોગ છે. તેનું ગોપન કરવું તે મનોયોગપ્રતિસંલીનતા છે. વચનયોગપ્રતિ-
સંલીનતા તેમજ કાયયોગપ્રતિસંલીનતા પણ વચનયોગને ગોપવું તેમજ કાય-

ળયા । સે કિં તં મળજોગપડિસંલીળયા ? મળજોગપડિસંલી-
ળયા—૧ અકુસલમળનિરોહો વા, ૨ કુસલમળઉદીરણં વા । સે તં
મળ-જોગ-પડિસંલીળયા । સે કિં તં વચજોગપડિસંલીળયા ? વચજોગ-
પડિસંલીળયા—૧ અકુસલવચનિરોહો વા, ૨ કુસલવચઉદીરણં વા ।
સે તં વચજોગપડિસંલીળયા । સે કિં તં કાયજોગપડિસંલીળયા ?

મળજોગપડિસંલીળયા 'અથ કા સા મનોયોગપ્રતિસંલીનતા ? 'મળજોગપડિસંલીળયા' મનોયોગપ્રતિસંલીનતા 'અકુસલ-મળ-નિરોહો વા' અકુશલમનોનિરોધો વા, 'કુસલ-મળ-ઉદીરણં વા' કુશલમનઉદીરણં વા, શુભમનસ ઉદીરણં=પ્રવર્તનમ્, 'સે તં મળ-જોગ-પડિસંલીળયા' સૈષા મનોયોગપ્રતિસંલીનતા, । 'સે કિં તં વચજોગ-પડિસંલીળયા' અથ કા સા વાગ્યયોગપ્રતિસંલીનતા ? 'વચજોગપડિસંલીળયા' વાગ્ય-યોગપ્રતિસંલીનતા-અકુસલવચનિરોહો વા' અકુશલવાઙ્નિરોધો વા, 'કુસલવચઉદીરણં વા' કુશલવાગુદીરણં વા ૨ । 'સે તં વચજોગપડિસંલીળયા' સૈષા વાગ્યયોગપ્રતિસંલીનતા ।

કાર પ્રકટ કરતે હૈં — (સે કિં તં મળજોગપડિસંલીળયા) વહ મનોયોગપ્રતિસંલી-
નતા કયા હૈ ? (મળજોગપડિસંલીળયા-અકુસલમળનિરોહો, કુસલમળઉદીરણં
વા, સે તં મળજોગપડિસંલીળયા) અકુશલ-અશુભ મનકા નિરોધ હોના, અથવા શુભમન
કા પ્રવર્તન હોના સો યહ મનોયોગપ્રતિસંલીનતા હૈ । (સે કિં તં વચજોગપડિસંલીળયા)
વચનયોગપ્રતિસંલીનતા કયા હૈ ? (વચજોગપડિસંલીળયા અકુસલવચનિરોહો વા
કુસલવચઉદીરણં વા, સે તં વચજોગપડિસંલીળયા) અકુશલવાણી કા નિરોધ
કરના અથવા કુશલવાણી કા ઉદીરણ કરના, યહ વચનયોગપ્રતિસંલીનતા હૈ । (સે કિં
તં કાયજોગપડિસંલીળયા) કાયયોગપ્રતિસંલીનતા કિસકા નામ હૈ ? (કાયજોગ-

યોગને ગોપયું એ છે. આ વિષયને આગળના સૂત્રના અંશમાં સૂત્રકાર પ્રકટ
કરે છે--(સે કિં તં મળજોગપડિસંલીળયા) તે મનોયોગપ્રતિસંલીનતા શું છે ?
(મળજોગપડિસંલીળયા અકુસલમળનિરોહો કુસલમળઉદીરણં વા, સે તં મળજોગપડિસંલી-
ળયા)--અકુશલ-અશુભ મનનો નિરોધ થવો, અથવા શુભ મનમાં પ્રવર્તન થવું તે
મનોયોગપ્રતિસંલીનતા છે. (સે કિં તં વચજોગપડિસંલીળયા)-વચનયોગપ્રતિ-
સંલીનતા શું છે ? (વચજોગપડિસંલીળયા અકુસલવચનિરોહો વા કુસલવચઉદીરણં વા, સે તં
વચજોગપડિસંલીળયા)--અકુશલ વાણીનો નિરોધ કરવો, અથવા શુભ વાણીનું
ઉદીરણ કરવું તે વચનયોગપ્રતિસંલીનતા છે. (સે કિં તં કાયજોગપડિસંલીળયા)

કાયજોગપડિસંલીણયા-જં ણં સુસમાહિયપાણિપાણ કુમ્મો ઇવ
ગુત્તિંદિણ સવ્વગાયપડિસંલીણે ચિટ્ઠિ, સે તં કાયજોગપડિસંલી-
ણયા। સે કિં તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા? વિવિત્ત-સયણા-સણ-
સેવણયા-જં ણં આરામેસુ ઉજ્જાણેસુ દેવકુલેસુ સહાસુ પવાસુ પણિ-

કાયયોગપ્રતિસંલીનતામાહ-‘ સે કિં તં કાયજોગપડિસંલીણયા ? અથ કા સા કાય-
યોગપ્રતિસંલીનતા ? ‘ કાયજોગપડિસંલીણયા ’ કાયયોગપ્રતિસંલીનતા નામ-‘ જં ણં
સુસમાહિયપાણિપાણ કુમ્મો ઇવ ગુત્તિંદિણ સવ્વગાયપડિસંલીણે ચિટ્ઠિ ’ યત્ સ્વલ્પ
સુસમાહિતપાણિપાદઃ કૂર્મ ઇવ ગુપ્તેન્દ્રિયઃ સર્વગાત્રપ્રતિસંલીનસ્તિષ્ઠતિ । યત્ સ્વલ્પ=નિશ્ચયેન
સુસમાહિતપાણિપાદઃ=સુસંયતહસ્તચરણઃ, અત એવ કચ્છપવદ્ ગુપ્તેન્દ્રિયઃ=સુરક્ષિતસર્વેન્દ્રિયઃ,
સર્વગાત્રપ્રતિસંલીનઃ--સર્વેઃ ગાત્રૈઃ=અવયવૈઃ પ્રતિસંલીનઃ-નિવારિતવૃત્તિસ્તિષ્ઠતિ-કાયિક-
સાવધાનુષ્ઠાનવર્જિતો ભવતિ । ‘ સે તં કાયજોગપડિસંલીણયા ’ સૈષા કાયયોગપ્રતિ-
સંલીનતા । ‘ સે કિં તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા ’ અથ કા સા વિવિત્તશયના-
સસનસેવનતા ? વિવિત્તાનિ=દોષરહિતાનિ શયનાસનાનિ, તેષાં સેવનતા-સેવનમ્, સા કીદૃશી ?
ઇતિ પ્રશ્ન, ઉત્તરમાહ-‘ વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા-જં ણં આરામેસુ ઉજ્જાણેસુ
દેવકુલેસુ સહાસુ પવાસુ પણિયગિહેસુ પણિયસાલાસુ ઇત્થી-પસુ-પંડગ-સંસત્ત-
વિરહિયાસુ વસહીસુ ફાસુએસણિજ્જં પીઢ-ફલગ-સેજ્જા-સંથારગં ઉવસંપજ્જિત્તાણં

પડિસંલીણયા-જં ણં સુસમાહિયપાણિપાણ કુમ્મો ઇવ ગુત્તિંદિણ સવ્વગાય-
પડિસંલીણે ચિટ્ઠિ, સે તં કાયજોગપડિસંલીણયા) હાથ પૈરોં કો તથા ઇન્દ્રિયોં કો
કચ્છપ કે સમાન અચ્છી તરહ વિષયોં સે ગોપ કર રચના કાયયોગપ્રતિસંલીનતા હૈ ।
(સે કિં તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા) વિવિત્તશયનાસન-દોષરહિત શયન તથા આસન કી
સેવનતા કયા હૈ ? (વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા-જં ણં આરામેસુ ઉજ્જાણેસુ દેવ-
કુલેસુ, સહાસુ, પવાસુ, પણિયગિહેસુ, પણિયસાલાસુ, ઇત્થીપસુપંડગસંસત્તવિરહિયાસુ

કાયયોગપ્રતિસંલીનતા શેનું નામ છે ? -(કાયજોગપડિસંલીણયા-જં ણં સુસમાહિય-
પાણિપાણ કુમ્મો ઇવ ગુત્તિંદિણ સવ્વગાયપડિસંલીણે ચિટ્ઠિ, સે તં કાયજોગપડિસંલીણયા)
હાથ, પગ, તથા ઈન્દ્રિયોને કાયબાની પેઠે સારી રીતે વિષયોથી ગોપવી રાખવાં તે કાય-
યોગપ્રતિસંલીનતા છે. (સે કિં તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા) વિવિત્તશયનાસન-
દોષરહિત શયન તેમજ આસનનું સેવન શું છે ? (વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા-
જં ણં આરામેસુ ઉજ્જાણેસુ દેવકુલેસુ સહાસુ પવાસુ પણિયગિહેસુ પણિયસાલાસુ,

यगिहेसु पणियशालासु इत्थी-पसु-पंडग-संसक्त-विरहियासु वसहीसु
 फासुएसणिज्जं पीढ-फलक-सेज्जा-संधारगं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ,
 से तं विवित्तसयणासणसेवणया । से तं पडिसंलीणया । से तं
 बाहिरए तवे ॥ सू०३० ॥

विहरइ ' विवित्तशयनासनसेवनता—यत् खल्वारामेषु उद्यानेषु देवकुलेषु प्रपासु पणित-
 गृहेषु पणितशालासु स्त्री-पशु-पण्डक-संसक्त-विरहितासु वसतिषु प्रासुकैषणीयं पीठ-
 फलक-शय्या-संस्तारकम् उपसम्पद्य विहरति, ' स्त्री-पशु-पण्डक-संसक्त-विरहितासु '
 इत्यस्य लिङ्गविपरिणामेन आरामादिपदेष्वप्यन्वयः कार्यः, ततश्च—यत् खलु=निश्चयेन अनगारः,
 स्त्री-पशु-पण्डक-संसक्त-विरहितेषु=स्त्रियः, पशवः, पण्डकाः=नपुंसकाः, एतै सर्वैः संसक्तं=
 मंयोगः, तेन विरहितेषु आरामेषु=कृत्रिमवनेषु, उद्यानेषु=कुसुमकाननेषु, देवकुलेषु=यक्षकुलेषु,
 तथा स्यादिसंसक्तवर्जितासु सभासु, प्रपासु=पानीयशालासु, पणितगृहेषु=व्यावहारिक-
 जनोचितेषु पण्यगृहेषु, पणितशालासु = बहुग्राहकदायकजनयोग्यासु, स्यादि-
 संसर्गरहितासु वसतिषु=सामान्यगृहगृहेषु, एवंविधानेकस्थानेषु ' फासुएसणिज्जं ' प्रासु-
 कैषणीयं—प्रगता असवः=असुमन्तः प्राणिनो यस्मात् तत्प्रासुकम्=अचित्तम्, अत एव एष-

वसहीसु फासुएसणिज्जं पीढफलकसेज्जासंधारगं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ) दोषरहित
 शयन एवं आसन की सेवनता यह इस प्रकार से होती है—जो अनगार स्त्रियों, पशुओं, एवं
 नपुंसकों से रहित आरामों में—कृत्रिमवनों में, उद्यानों में—कुसुमित काननों में, देवकुलों
 में—यक्षायतनों में, सभाओं में, प्रपाओं में—पानीयशालाओं में, पणितगृहों में—व्यावहारिक-
 जनोचित पण्यगृहों में, पणितशालाओं में—अनेक ग्राहक एवं दायक जनों के योग्य ऐसे
 स्थानों में, वसतियों में—सामान्य गृहस्थजनों के घरों में, अचित्त एवं निरवद्य पीठ, फलक,

इत्थीपसुपंडगसंसक्तविरहियासु वसहीसु फासुएसणिज्जं पीढफलकसेज्जासंधारगं उवसं-
 पज्जित्ताणं विहरइ, से तं पडिसंलीणया) दोषरहित आसन तेमज्ज शयननुं सेवन
 करवुं ते आ प्रकारे थाय छे के जे अनगार स्त्रीओ, पशुओ, तेमज्ज पंडके-
 नपुंसकेथी रहित आरामोमां—ओटवे कृत्रिमवनोमां, उद्यानोमां—कुलवाडीओमां,
 देवकुलोमां—यक्षायतनोमां, सलाओमां, प्रपाओमां—पानीयशालाओमां (परबना
 स्थानमां) पणितगृहोमां—व्यवहारिक—दोकोथित हुकानोमां, पणितशालाओमां
 —अनेक ग्राहके तेमज्ज दायके (देनारा) दोकेने योग्य ओवां स्थानोमां ओटवे
 गोदाओमां, वसतिओमां—सामान्य गृहस्थ दोकेनां घरोंमां, अचित्त तेमज्ज निरवद्य

મૂલમ્—સે કિં તં અર્ભિતરણ તવે ?, અર્ભિતરણ તવે છવ્વિહે પણ્ણત્તે, તં જહા—૧ પાયચ્છિત્તે, ૨ વિણણ, ૩ વેયાવચ્ચં ૪ સજ્ઞાઓ, ૫ જ્ઞાણં, ૬ વિઉસગ્ગો ।

ળીયં=નિરવધમ્ પીઠ્ઠફલકશય્યાસંસ્તારકમ્ ઉપસમ્પદ્ય વિહરતિ । ‘સે તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા’ સૈવા વિવિત્ત-શયના-સન-સેવનતા । ‘સે તં પડિસંલીણયા’ સૈવા પ્રતિસંલીનતા, ‘સે તં બાહિરણ તવે’ તદિદં બાહ્યં તપઃ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

ટીકા—અથામ્યન્તરં તપઃ પ્રોચ્યતે—‘સે કિં તં અર્ભિતરણ તવે?’ અથ કિં તદ્ આમ્યન્તરં તપઃ ?, ઉત્તરમાહ—‘અર્ભિતરણ તવે છવ્વિહે પણ્ણત્તે’ આમ્યન્તરં તપઃ ષડ્વિધં પ્રજ્ઞતમ્; ‘તં જહા’ તથા—૧ ‘પાયચ્છિત્તં’ પ્રાયશ્ચિત્તમ્, ૨—‘વિણણ’ વિનયઃ, ૩ ‘વેયાવચ્ચં’ વૈયાવૃત્યમ્, ૪—‘સજ્ઞાઓ’ સ્વાધ્યાયઃ, ૫—‘જ્ઞાણં’ ધ્યાનમ્, ૬—‘વિઉસગ્ગો’ વ્યુત્સર્ગ ઇતિ । તત્ર પ્રાયશ્ચિત્તમાહ—‘સે કિં તં પાયચ્છિત્તે’ અથ કિં

શય્યા એવં સંસ્તારક અંગીકાર કર વિચરતા હૈ, (સે તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા) યહ વિવિત્તશયનાસનસેવનતા હૈ । (સે તં પડિસંલીણયા) ઇસ પ્રકાર યહ પ્રતિસંલીનતા હૈ । (સે તં બાહિરણ તવે) ઇસ પ્રકાર યહ છહ પ્રકાર કે બાહ્ય તપ કે ભેદ-પ્રભેદ કહે ગયે હૈ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

અબ આમ્યન્તર તપ કા સૂત્રકાર વર્ણન કરતે હૈ—‘સે કિં તં અર્ભિતરણ તવે?’ ઇત્યાદિ ।

(સે કિં તં અર્ભિતરણ તવે ?) આમ્યન્તર તપ કયા હૈ—કિતને પ્રકાર કા હૈ ? (અર્ભિતરણ તવે છવ્વિહે પણ્ણત્તે) આમ્યન્તર તપ છહ પ્રકાર કા હૈ; (તં જહા) વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ, (પાયચ્છિત્તં, વિણણ, વેયાવચ્ચં, સજ્ઞાઓ, જ્ઞાણં, વિઉસગ્ગો) ૧ પ્રાયશ્ચિત્ત, ૨ વિનય, ૩ વૈયાવૃત્ય, ૪ સ્વાધ્યાય, ૫ ધ્યાન ઓર ૬

પીઠ, ફલક, શય્યા તેમજ સંસ્તારક અંગીકાર કરીને વિચરે છે (સે તં વિવિત્ત-સયણા-સણ-સેવણયા) તે વિવિત્ત શયનાસનસેવનતા છે. (સે તં પડિસંલીણયા) આ પ્રકારે આ પ્રતિસંલીનતા છે. (સે તં બાહિરણ તવે) આ પ્રકારે તે છ પ્રકારના બાહ્યતપના ભેદ-પ્રભેદ કહેલા છે. (સૂ. ૩૦).

હવે આમ્યન્તર તપનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે—‘સે કિં તં અર્ભિતરણ તવે?’ ઇત્યાદિ.

(સે કિં તં અર્ભિતરણ તવે ?) પ્રશ્ન—આમ્યન્તર તપ શું છે ? કેટલા પ્રકારનાં છે ? (અર્ભિતરણ તવે છવ્વિહે પણ્ણત્તે) ઉત્તર—આમ્યન્તર તપ છ પ્રકારનાં છે. (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(પાયચ્છિત્તં વિણણ વેયાવચ્ચં, સજ્ઞાઓ જ્ઞાણં વિઉસગ્ગો) ૧ પ્રાયશ્ચિત્ત, ૨ વિનય, ૩ વૈયાવૃત્ય, ૪ સ્વાધ્યાય, ૫ ધ્યાન ૬

સે કિં તં પાયચ્છિત્તે ? પાયચ્છિત્તે—દસવિહે પણ્ણત્તે;
તં જહા-આલોયનારિહે ૧, પઙ્કમનારિહે ૨, તદુભયારિહે ૩, વિવે-

તપ્રાયશ્ચિત્તમ્ :—પ્રાયશ્ચિત્તં કિંસ્વરૂપં કતિવિવ્રજ્ઞેતિ પૃચ્છતિ, ઉત્તરમાહ—‘પાયચ્છિત્તે
દસવિહે પણ્ણત્તે’ પ્રાયશ્ચિત્તં દશવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્—પ્રાયઃ=પાપં, તસ્માત્ ચિત્તં=જીવં શોધ-
યતિ=કર્મમલિનં વિમલીકરોતીતિ પ્રાયશ્ચિત્તમિતિ । યદ્વા—પ્રાયો=બાહુલ્યેન ચિત્તમ્=
અન્તઃકરણં સ્વેન સ્વરૂપેણ અસ્મિન્ સતિ ભવતિ—ઇતિ પ્રાયશ્ચિત્તમ્—અનુષ્ઠાનવિશેષઃ ।
સંવરાદેરપિ તથૈવાત્મનઃ શુદ્ધિકરણાત્ પ્રાયોગ્રહણમિતિ । અસ્ય દશવિધત્વં દર્શયતિ—
‘તં જહા’ તથથા—‘આલોયનારિહે’ આલોચનાઽર્હમ્—આલોચના ગુરુસમીપે પાપસ્ય નિવે-
દનં, તાવન્માત્રેણૈવ યસ્ય પાપસ્ય શુદ્ધિસ્તદાલોચનાર્હમ્ । આલોચનાં=ગુરુનિવેદનાં વિશુદ્ધયે

વ્યુત્સર્ગ । (સે કિં તં પાયચ્છિત્તે) પ્રાયશ્ચિત્ત કિતને પ્રકાર કા હૈ :—(પાયચ્છિત્તે
દસવિહે પણ્ણત્તે) -- પ્રાયશ્ચિત્ત ૧૦ પ્રકારકા હૈ । (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—
(આલોયનારિહે^૧ પઙ્કમનારિહે^૨ તદુભયારિહે^૩ વિવેગારિહે^૪ વિઝસગ્ગારિહે^૫ તવારિહે^૬
છેયારિહે^૭ મૂલારિહે^૮ અણવટ્ટપ્પારિહે^૯ પારંચિયારિહે^{૧૦}) કર્મોં સે મલિન ચિત્ત—જીવકા સંશો-
ધન જિસસે હોતા હૈ, અથવા જિસકે હોને પર પ્રાયઃ કરકે અન્તઃકરણ અપને સ્વરૂપ મેં
સ્થિત હોતા હૈ, વહ પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । સંવરાદિક સે મી આત્મા કી શુદ્ધિ હોતી હૈ ઇસલિયે
અનસે ઇસે પૃથક્ કરનેકે લિયે પ્રાયશ્ચિત્ત મેં ‘પ્રાયઃ’ શબ્દકા પ્રયોગ હુઆ હૈ । ઇસ મેં પ્રથમ
પ્રાયશ્ચિત્ત આલોચનાર્હ હોતા હૈ । ગુરુ કે સમીપ પાપોં કા નિવેદન કરના ઇસકા નામ
આલોચના હૈ । ઇસ આલોચનામાત્ર સે જિસ પાપ કી શુદ્ધિ હો જાતી હૈ વહ આલોચનાર્હ

વ્યુત્સર્ગ. (સે કિં તં પાયચ્છિત્તે) પ્રાયશ્ચિત્ત કેટલા પ્રકારનાં છે ? (પાયચ્છિત્તે દસવિહે
પણ્ણત્તે) --પ્રાયશ્ચિત્ત ૧૦ પ્રકારનાં છે. (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—
(આલોયનારિહે^૧ પઙ્કમનારિહે^૨ તદુભયારિહે^૩ વિવેગારિહે^૪ વિઝસગ્ગારિહે^૫ તવારિહે^૬
છેયારિહે^૭ મૂલારિહે^૮ અણવટ્ટપ્પારિહે^૯ પારંચિયારિહે^{૧૦}) કર્મોંથી મલિન
થયેલાં ચિત્તનું સંશોધન જેનાથી થાય છે અથવા જે થવાથી પ્રાયઃ
અન્તઃકરણ પોતાના સ્વરૂપમાં આવી જાય છે તે પ્રાયશ્ચિત્ત છે. સંવરાદિકથી
પણ આત્માની શુદ્ધિ થાય છે તેથી તેનાથી આને જુદું કરવા માટે પ્રાયશ્ચિત્તમાં
પ્રાયઃ શબ્દ લીધો છે. આમાં પ્રથમ પ્રાયશ્ચિત્ત આલોચનાર્હ થાય છે. ગુરુની
પાસે પાપોનું નિવેદન કરવું તેનું નામ આલોચના છે. આ આલોચનામાત્રથી
જે પાપની શુદ્ધિ થઈ જાય છે તે આલોચનાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે. ભિક્ષાચર્યા

यदर्हति भिक्षाचर्यादौ संजातमतिचारजातं तदालोचनार्हं, तद्विशोधकमालोचनालक्षणं प्रायश्चित्तरूपं कार्यमपि अतिचाररूपे कारणे कार्योपचारादालोचनार्हमित्युच्यते । 'पडिकमणारिहे' प्रतिक्रमणार्हम्-प्रतिक्रमणं=प्रतिनिवर्तनं-शुभयोगादशुभयोगव्यक्रान्तस्यात्मनः पुनः शुभयोगे प्रत्यानयनं, मिथ्यादुष्कृतप्रदानरूपमित्यर्थः । अयं भावः-गुप्तित्रये समितिपञ्चके च सहसाकारतोऽनाभोगतो वा कथमपि प्रमादे सति मिथ्यादुष्कृतप्रदानलक्षणं प्रतिक्रमणम् । तत्र सहसाकारतोऽनाभोगतो वा यदि मनसा दुश्चिन्तितं, तथा वचसा दुर्भाषितं, कायेन दुश्चेष्टितं, तथा-ईर्यायां यदि कथां कथयन् व्रजेत्, भाषायामपि यदि गृहस्थभाषया, प्रहररात्र्यनन्तर-

प्रायश्चित्त है । भिक्षाचर्या आदि में लगे हुए अतिचारस्वरूप पापों की गुरु के समीप विशुद्धि के लिये आलोचना की जाती है; अतः ये पाप आलोचना के योग्य हैं । आलोचना के योग्य जो प्रायश्चित्त को कहा है वह कारण में कार्य के उपचार से जानना चाहिये । (पडिकमणारिहे) प्रतिक्रमण शब्द का अर्थ पीछे हटना है, शुभ योग से अशुभ योग की तरफ झुके हुए आत्मा को पुनः शुभ योग में लाने के लिये मिथ्यादुष्कृत देना सो प्रतिक्रमण के योग्य प्रायश्चित्त है । इसका भाव यह है-तीन गुप्तियों में, एवं पांच समितियों में अकस्मात्-सहसाकार से, अथवा अनाभोग-अनुपयोग से कथमपि प्रमाद के हो जाने पर मिथ्यादुष्कृत प्रदान करना सो प्रतिक्रमण है । इसमें यदि सहसाकार से अथवा अनाभोग से मन द्वारा खोटा चिन्तवन हो गया हो, वचन से दुर्भाषण हो गया हो, एवं काय से-दुश्चेष्टित हो गया हो, तथा ईर्यापथ में प्रवृत्ति करते (मागमें चलते) समय यदि कथा कही गयी हो, भाषासमिति में यदि गृहस्थ की भाषा के अनुसार, अथवा प्रहररात्रि के

आदिमां लागेलां अतिचारस्वरूप पापेनी गुरुनी पासे विशुद्धिने भाटे आलोचना कराय छे. आथी ते पाप आलोचनायोग्य छे. आलोचनाने योग्य जे प्रायश्चित्त ने कछुं छे ते कारणमां कार्याना उपचारथी जणवुं जेधये १. (पडिकमणारिहे) प्रतिक्रमण शब्दने अर्थ ' पाछुं डटवुं ' छे. शुभयोगथी डटी जधने अशुभ योगनी तरङ्ग वणतां चित्तने करीने शुभयोगमां लाववा भाटे मिथ्यादुष्कृत देवुं ते प्रतिक्रमणने योग्य प्रायश्चित्त छे. तेनो आ लाव छे-त्रण गुप्तिओमां, तेमज पांच समितिओमां अकस्मात्-अन्यानक, अथवा अनाभोग-अनुपयोगथी कांछ पण प्रमाद थर्ध जतां मिथ्यादुष्कृत प्रदान करवुं ते प्रतिक्रमण छे. आमां जे अन्यानक अथवा अनाभोगे मनथी ओटुं चिन्तवन थर्ध गयुं होय, वचनथी अराज लापण थयुं होय, तेमज कायाथी अराज चेष्टा थर्ध होय, तथा ईर्यापथमां प्रवृत्ति करतां (मागे चालतां) जे कथा कडेवाध गध होय, भाषासमितिमां जे गृहस्थनी भाषा

મુચ્ચૈઃસ્વરેણ વા, અન્યથા સાવધવચનેન ભાષેત, તથા—એષણાયાં=ભક્તપાનગવેષણવેલાયા-મનુપયુક્તઃ સદોષમાહારાદિકં ગૃહ્ણીયાત્, તથા સહસાઽનાભોગતો વા ભાણ્ડોપકરણસ્યા-દાનં નિક્ષેપં પ્રમાર્જનં પ્રતિલેખનં ચ કુર્યાત્, તથા—અપ્રત્યુપેક્ષિતે સ્થણ્ડિલે ઉચ્ચારાદીનાં પરિષ્ઠાપનં સહસાઽનાભોગતો વા કુર્યાત્ । ઉપલક્ષણમેતત્—તેન યદિ ચતુર્વિધા વિકથા, ક્રોધાદયઃ કષાયાઃ, શબ્દાદિવિષયેષ્વાસક્તિર્વા સહસાઽનાભોગતો વા કૃતા સ્યાત્, તદા એતેષુ સર્વેષુ સ્થાનેષુ મિથ્યાદુષ્કૃતપ્રદાનલક્ષણં પ્રાયશ્ચિત્તં; તચ્ચ પૂર્વવત્ કારણે કાર્યોપ-ચારાત્પ્રતિક્રમણાર્હમિત્યુચ્યતે ।૨। ‘તદુભયારિહે’ તદુભયાર્હમ્—આલોચનાપ્રતિક્રમણોભય-

અનન્તર ઉચ્ચસ્વર સે વચનકી પ્રવૃત્તિ હો ગઈ હો, યા સાવધવચન નિકલ ગયા હો, એષણા-સમિતિ મેં—ભક્તપાનગવેષણ કે કાલ મેં અનુપયુક્ત હોકર યદિ સદોષ આહાર ગ્રહણ કરને મેં આગયા હો, અનાભોગ સે—અનુપયોગ સે અથવા સહસાકાર સે ભાણ્ડોપકરણ કા આદાન એવં નિક્ષેપણ, પ્રમાર્જન યા પ્રતિલેખન હો ગયા હો, તથા અપ્રત્યુપેક્ષિત સ્થંડિલ મેં ઉચ્ચાર આદિકા પરિષ્ઠાપન સહસાકાર સે યા અનાભોગ સે કર દિયા ગયા હો, ઇસી તરહ યદિ સહસાકાર સે એવં અનાભોગ સે ચાર વિકથાઓં મેં, ચાર ક્રોધાદિક કષાયોં મેં, એવં શબ્દાદિ પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં આસક્તિ હો ગઈ હો તો ઇન સમસ્ત સ્થાનો મેં “ મેરે દુષ્કૃત મિથ્યા હો ” ઇસ પ્રકાર મિથ્યાદુષ્કૃતપ્રદાનસ્વરૂપ યહ પ્રતિક્રમણ પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । પહિલે કી તરહ યહ પ્રાયશ્ચિત્ત મી કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે પ્રતિક્રમણાર્હ કહા ગયા હૈ ૨ । (તદુભયારિહે) જો પ્રાયશ્ચિત્ત આલોચના એવં પ્રતિક્રમણ, ઇન દોનોં કે

અનુસાર અથવા પ્રહરરાત્રિ વીત્યા પછી ઉંચા સ્વરથી વચન બોલાઈ ગયું હોય, અથવા સાવધ વચન નીકળી ગયું હોય, એષણાસમિતિમાં—આહારપાણીના ગવેષણ કાલમાં અનુપયુક્ત થઈને જે સદોષ આહાર ગ્રહણ કરવામાં આવી ગયો હોય, અનાભોગથી અથવા અચાનક ભાંડોપકરણનાં આદાન તેમજ નિક્ષેપણ, પ્રમાર્જન અથવા પ્રતિલેખન થઈ ગયું હોય, તથા અપ્રત્યુપેક્ષિત સ્થંડિલમાં ઉચ્ચાર આદિનું પરિષ્ઠાપન સહસાકારથી કે અનાભોગથી (અચાનક કે અનાભોગથી) કરાઈ ગયું હોય, એવી જ રીતે જે સહસાકારથી કે અનાભોગથી ચાર વિકથાઓમાં, ચાર ક્રોધાદિક કષાયોમાં, તેમજ શબ્દાદિ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં આસક્તિ થઈ ગઈ હોય તો એ બધાં સ્થાનોમાં “ મારું દુષ્કૃત મિથ્યા થાયો ” એ પ્રકારે મિથ્યાદુષ્કૃતપ્રદાનસ્વરૂપ આ પ્રતિક્રમણ—પ્રાયશ્ચિત્ત છે. પહેલાની પેઠે આ પ્રાયશ્ચિત્ત પણ કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી પ્રતિક્રમણાર્હ કહેવાય છે ૨. (તદુભયારિહે) જે પ્રાયશ્ચિત્ત આલોચના તેમજ

गारिहे ४, विउस्सगारिहे ५, तवारिहे ६, छेदारिहे ७, मूलारिहे ८, अणवट्टप्पारिहे ९, पारंचियारिहे १०। से तं पायच्छित्ते ।

योग्यम् ।३। 'विवेगारिहे' विवेकाऽर्हम्—विवेकः—अनेषणीयभक्तादिपरित्यागः, तदर्हम् ।४। 'विउस्सगारिहे' व्युत्सर्गाऽर्हम्—व्युत्सर्गः=कायोत्सर्गः, तद्योग्यम् ।५। 'तवारिहे' तपोऽर्हम्—तपः=नमस्कारसहितकालादारम्य षण्मासपर्यन्तमनशनम्, तत्र कस्यापि तपसो योग्यं तपोऽर्हम्—अर्तीचारः, तद्विशोधकत्वात् प्रायश्चित्तमपि तपोऽर्हमुच्यते—इति ।६। 'छेदारिहे' छेदाऽर्हम्—छेदः—दिनपञ्चकादारम्य षण्मासपर्यन्तं साधुपर्यायस्य न्यून ताकरणं, तदर्हम् ।७। 'मूलारिहे' मूलाऽर्हम्—मूलं—पुनर्व्रतस्योपस्थापनम्—पुनर्दीक्षारोपणम्, तदर्हम् ।८। 'अणवट्टप्पारिहे' अनवस्थाप्याऽर्हम्—यस्मिन् आसेविते कं चन कालं व्रतेषु अनवस्थाप्यं कृत्वा पश्चात्तपश्चीर्णतया तदोषोपरतो व्रतेषु स्थाप्यते तदनवस्थाप्याऽर्हम् ।

योग्य होता है वह तदुभयार्ह प्रायश्चित्त है ३ । (विवेगारिहे) अनेषणीय भक्तादिक का परित्याग करना विवेक है, इसके योग्य जो प्रायश्चित्त है वह विवेकार्ह प्रायश्चित्त है ४ । (विउसगारिहे) व्युत्सर्ग शब्द का अर्थ कायोत्सर्ग है । इसके योग्य प्रायश्चित्त का नाम व्युत्सर्गार्ह प्रायश्चित्त है ५ । (तवारिहे) जो प्रायश्चित्त तपस्या के योग्य होता है वह तपोऽर्ह प्रायश्चित्त है । यह प्रायश्चित्त नोकारसी से लेकर छ मास तक होता है ६ । (छेदारिहे) साधुपर्याय में पाँच दिनसे लेकर छ मास तक की साधुपर्याय की न्यूनता करना छेदार्ह प्रायश्चित्त है ७ । (मूलारिहे) जो प्रायश्चित्त पुनः दीक्षा आरोपण के योग्य होता है वह मूलार्ह प्रायश्चित्त है ८ । (अणवट्टप्पारिहे) जिस दोषके सेवन करने पर संयमीजन कुछ काल तक महाव्रतों के विषय में अनवस्थापित अलग—कर दिये जाते हैं,

प्रतिक्रमण, એ બન્નેને યોગ્ય હોય છે તે તદુભયાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે ૩. (વિવેગારિહે) અનેષણીય ભોજન આદિકનો પરિત્યાગ કરવો તે વિવેક છે. તેને યોગ્ય જે પ્રાયશ્ચિત્ત છે તે વિવેકાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે ૪. (વિઉસગારિહે) વ્યુત્સર્ગ શબ્દનો અર્થ કાયોત્સર્ગ છે. તેને યોગ્ય પ્રાયશ્ચિત્તનું નામ વ્યુત્સર્ગાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે ૫. (તવારિહે) જે પ્રાયશ્ચિત્ત તપસ્યાને યોગ્ય હોય છે તે તપોઽર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે. આ પ્રાયશ્ચિત્ત નોકારસીથી લઈને છ માસ સુધી થાય છે ૬. (છેદારિહે) સાધુપર્યાયમાં પાંચ દિવસથી લઈને છ માસ સુધીની સાધુપર્યાયની ન્યૂનતા કરવી તે છેદાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે ૭. (મૂલારિહે) જે પ્રાયશ્ચિત્ત ફરીને દીક્ષા આરોપણને યોગ્ય હોય છે તે મૂલાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત છે ૮. (અણવટ્ટપ્પારિહે) જે દોષનું સેવન કરવાથી સંયમી જન કેટલાક કાળ સુધી મહાવ્રતોના વિષયમાં

અયં ભાવઃ—અનવસ્થાપ્યો દ્વિવિધો ભવતિ—આશાતનાઽનવસ્થાપ્યઃ, પ્રતિસેવનાનવસ્થાપ્યઃચેતિ । તત્ર તીર્થકર—સંઘ—શ્રુતા-ઽઽચાર્યો—પાધ્યાય—ગણધર—મહર્દ્રિકાન્ આશાતયન્ અનવસ્થાપ્યાર્હ-નામકં નવમં પ્રાયશ્ચિત્તં પ્રાપ્નોતિ । સ જઘન્યેન ષળ્માસાન્ ઉત્કર્ષતઃ સંવત્સરં યાવત્ તપઃ કુર્વન્ આશાતનતપોઽનવસ્થાપ્યઃ કર્તવ્યઃ । તાવતા ચ તપસા ક્ષપિતાઽઽશાતનાજનિતકર્મત્વા-દૂર્ઘ્વં મહાવ્રતેષુ સ્થાપ્યતે । પ્રતિસેવનાનવસ્થાપ્યસ્તુ સાધર્મિકાઽન્યધર્મિકવસ્તુસ્તૈન્યાઽન્યાં હસ્ત-તાલાદિભિશ્ચ ભવતિ । સ ચ જઘન્યતો વર્ષમ્ ઉત્કૃષ્ટતો દ્વાદશ વર્ષાણિ તપઃ કુર્વન્ ભવતિ,

એવં પુનઃ ઉસ દોષ કે નિવારણ કે લિયે તપસ્યા મેં લગાયે જાતે હૈં, ઇસ પ્રકાર જબ તપસે ઉસ દોષકી પૂર્ણતયા શુદ્ધિ હો જાતી હૈ તબ દોષોપરત વે સંયમી મહાવ્રતોં મેં સ્થાપિત કર દિયે જાતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કે પ્રાયશ્ચિત્ત કા નામ અનવસ્થાપ્યાર્હ હૈ, મતલબ ઇસકા યહ હૈ—અનવસ્થાપ્ય દો પ્રકારકા હોતા હૈ—૧ આશાતનાનવસ્થાપ્ય, ૨ પ્રતિસેવનાનવસ્થાપ્ય । જો તીર્થકર, સંઘ, શ્રુત, આચાર્ય, ઉપાધ્યાય, ગણધર એવં લબ્ધિધારિયોં કી આશાતના કરતા હૈ એસા સંયમી ઇસ અનવસ્થાપ્યાર્હ નામક નવમ પ્રાયશ્ચિત્ત કા ભાગી હોતા હૈ । ઇનસે આશા-તનાજન્ય દોષ કી શુદ્ધિ કે લિયે જઘન્ય સે છહમાહ તક, ઓર ઉત્કૃષ્ટ સે એક વર્ષ તક તપ કરાયા જાતા હૈ । ઇતને તપ સે આશાતનાજન્ય દોષ કી જબ શુદ્ધિ હો જાતી હૈ તબ બાદ મેં વહ સાધુ મહાવ્રતોં મેં સ્થાપિત કર દિયા જાતા હૈ । જો સ્વધર્મી ઓર અન્યધર્મી કી વસ્તુ ચુરાતા હૈ, અથવા દયારહિત બુદ્ધિ સે થપ્પડ આદિ મારતા હૈ, ઉસે પ્રતિસેવનાઽન-વસ્થાપ્યાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત કરના પડતા હૈ । યહ પ્રાયશ્ચિત્ત જઘન્ય સે એક વર્ષ કા હોતા હૈ,

અનવસ્થાપિત કરવામાં આવે છે, તેમજ પાછા તે દોષના નિવારણ માટે તપ-સ્યામાં લગાડવામાં આવે છે, એ પ્રકારે જ્યારે તપસેવનથી દોષની સંપૂર્ણ શુદ્ધિ થઈ જાય છે ત્યારે દોષોપરત (દોષમુક્ત) તે સંયમી મહાવ્રતોમાં સ્થાપિત કરવામાં આવે છે. આ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્તનું નામ અનવસ્થાપ્યાર્હ છે. એની મતલબ એ છે કે—અનવસ્થાપ્ય એ પ્રકારના થાય છે. ૧ આશા-તનાનવસ્થાપ્ય અને ૨ પ્રતિસેવનાનવસ્થાપ્ય. જે તીર્થકર, સંઘ, શ્રુત, આચાર્ય, ઉપાધ્યાય, ગણધર, તેમજ લબ્ધિધારિઓની આશાતના કરે છે, એવા સંયમી આ અનવસ્થાપ્યાર્હ નામના નવમા પ્રાયશ્ચિત્તના લાગી થાય છે. તેનાથી આશાતનાજન્ય દોષની શુદ્ધિને માટે જઘન્યથી છ મહિના સુધી અને ઉત્કૃષ્ટથી એક વર્ષ સુધી તપ કરાય છે. એટલા તપથી આશાતનાજન્ય દોષની જ્યારે શુદ્ધિ થઈ જાય છે ત્યાર બાદ તે સાધુ મહાવ્રતોમાં સ્થાપિત કરી દેવાય છે. જે સાધર્મીની અને અન્યધર્મીની વસ્તુને ચોરી લે છે, અથવા દયારહિત બુદ્ધિથી લાકેશ આદિ મારે છે તેને પ્રતિસેવનાનવસ્થાપ્યાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત કરવું પડે છે.

तदनन्तरं व्रतेषु स्थाप्यते । संहननादिगुणयुक्त एवानवस्थाप्यः क्रियते, अन्यस्य तु मूलमेव दीयते । संहननादिगुणयुक्तोऽपि यदि अनन्यसाध्यकुलगणसङ्घकार्यकारी बहुजनसाध्य-कार्यकारी वा भवेत्, तर्हि द्विविधोऽप्यनवस्थाप्यः खलु गुरुमुखात् सङ्घसाक्षितया च स्तोत्रं स्तोक्ततरं वा मासद्वयं मासैकमात्रं वा अनवस्थाप्यतपो वहेत् । यद्वा—चतुर्विधसंघाधारभूतोऽयं परमभद्रकः स्वयमेव तपश्चर्यादिनाऽनवस्थाप्यशोध्यमतीचारमलं क्षालयिष्यतीति कृत्वा सर्वं मुञ्चेत्=अनवस्थाप्यतपो न कारयेदिति ।

और उत्कृष्ट से बारह वर्ष का । इस प्रकार तपस्या करने के बाद वह साधु महाव्रतों में स्थापित किया जाता है । संहननादिगुणयुक्त ही इस प्रायश्चित्त के अधिकारी हैं । दूसरे को तो मूलार्ह प्रायश्चित्त ही दिया जाता है । संहननादिगुणयुक्त साधु यदि दूसरों से असाध्य ऐसे कुल गण संघ के कार्य करनेवाला हो, अथवा कुल गण संघ का जो कार्य बहुजनसाध्य हो उस कार्य को वह अकेले ही करनेवाला हो तो ऐसे आशातनाऽन-वस्थाप्य और प्रतिसेवनाऽनवस्थाप्य साधु के लिये संघकी साक्षी में गुरुके मुख से स्तोत्र—दो मास का, अथवा स्तोक्ततर—एकमास का तप दिया जाता है । तदनन्तर वह महाव्रतों में स्थापित किया जाता है । अथवा यदि कोई साधु चतुर्विध संघ का आधार हो, परमभद्रक हो, वह स्वयमेव तपस्या करके अनवस्थाप्य तप के द्वारा विशोधनीय पापमल का प्रक्षालन कर लेगा, ऐसा विश्वास हो, तो ऐसे साधु को अनवस्थाप्य प्राय-श्चित्त नहीं दिया जाता है ।

આ પ્રાયશ્ચિત્ત જઘન્યથી એક વર્ષનું થાય છે અને ઉત્કૃષ્ટથી બાર વર્ષનું થાય છે. આ પ્રકારે તપસ્યા કર્યા પછી તે સાધુ મહાવ્રતોમાં સ્થાપિત કરાય છે. સંહનનાદિગુણયુક્ત જ તે પ્રાયશ્ચિત્તના અધિકારી છે. બીજાને તો મૂલાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત જ અપાય છે. સંહનનાદિગુણયુક્ત સાધુ જો બીજાથી અસાધ્ય (ન બને) એવાં કુલ ગણ સંઘનાં કાર્ય કરવાવાળો હોય અથવા કુલ ગણ સંઘનાં જે કાર્ય બહુજનસાધ્ય હોય, એવાં કાર્યોને તે એકલો જ કરવાવાળો હોય તો એવા આશાતનાનવસ્થાપ્ય અને પ્રતિસેવનાનવસ્થાપ્ય સાધુને માટે સંઘની સાક્ષીમાં ગુરૂના મુખથી સ્તોત્ર—એ માસનું, અથવા સ્તોત્ર—એક માસનું તપ અપાય છે. ત્યાર પછી તે મહાવ્રતોમાં સ્થાપિત કરાય છે. અથવા જો કોઈ સાધુ ચતુર્વિધ સંઘનો આધાર હોય, પરમભદ્રક હોય, તે પોતે જ તપસ્યા કરીને અનવસ્થાપ્ય તપ દ્વારા વિશોધનીય પાપમલ ધોઈ નાખશે એવો વિશ્વાસ હોય તો એવા સાધુને અનવસ્થાપ્ય પ્રાયશ્ચિત્ત અપાતું નથી.

અનવસ્થાપ્યતપોવિધિરુચ્યતે—અનવસ્થાપ્યપ્રાયશ્ચિત્તી સાધુઃ પ્રશસ્તેષુ દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવેષુ ગુરુસમીપે સરલભાવેન સ્વાતિચારમાલોચયતિ। આલોચનાઽનન્તરં ગુરુઃ કાયોત્સર્ગં કારયતિ, તથાહિ-
 ણેર્યાપથિકીં સમગ્રાં શ્રાવયતિ, ‘તસ્સુત્તરીકરણેણં’ ઇત્યારમ્ય યાવત્—‘અપ્પાણં વોસિરામિ’
 ઇતિ પઠિત્વા કાયોત્સર્ગે વારદ્વયં ચતુર્વિંશતિસ્તવમનુચિન્ત્ય પારયિત્વા પુનશ્ચતુર્વિંશતિસ્તવમુચ્ચાર્યા-
 ચાર્યઃ સાધૂનામન્ત્ર્ય વદતિ—“એષોઽનવસ્થાપ્યો મુનિસ્તપઃ પ્રતિપદ્યતે, એષ યુષ્માન્નાલપિષ્યતિ,
 યુષ્માભિરપિ નાલપનીયઃ, એષ સૂત્રાર્થં શરીરવાર્તાં સુખશાતાદિરૂપાં વા ન પ્રદ્યતિ, યુષ્માભિરપિ ન
 પ્રષ્ટવ્યઃ, પરિષ્ઠાપનાદિકમસ્ય ભવદ્વિર્ન કર્તવ્યમ્, ન ચાઽયં ભવતાં કરિષ્યતિ। ઉપકરણમસ્ય ભવ-

અવ અનવસ્થાપ્યપ્રાયશ્ચિત્ત કી વિધિ કહતે હૈં—અનવસ્થાપ્ય પ્રાયશ્ચિત્ત લેને વાલા સાધુ પ્રશસ્ત દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવમેં ગુરુ કે નિકટ સરલ ભાવસે અપને અતીચારોં કી આલોચના કરતા હૈ। જવ વહ આલોચના કર ચુકતા હૈ તવ ગુરુ મહારાજ ઉસે કાયોત્સર્ગ કરવાતે હૈં। વહ ઇસ પ્રકાર હૈ—ગુરુ મહારાજ પહેલે સમગ્ર ઈર્યાપથિકી સુનાતે હૈં, ફિર ‘તસ્સુત્તરીકરણેણં’ યહાં સે લેકર “અપ્પાણં વોસિરામિ” યહાં તક પઢકર કાયોત્સર્ગ મેં દો વાર ચતુર્વિંશતિસ્તવ કી અનુચિન્તના કર, પાલ કર, ફિર એકવાર ચતુર્વિંશતિસ્તવ કા ઉચ્ચારણ કરતે હૈં, ઔર આચાર્ય તથા સાધુઓં કો બુલાકર ઇસ પ્રકાર કહતે હૈં—“યહ અનવસ્થાપ્ય મુનિ તપસ્યા કર રહા હૈ, યહ ન તુમ લોગોં સે બોલેગા, ન તુમ લોગ ઇસસે બોલના। યહ તુમ લોગોં સે સૂત્રાર્થ ઔર શરીર કી સુખશાતા આદિ નહીં પૂછેગા, તુમ લોગ મી ઇસ સે મત પૂછના। ઇસકી પરિષ્ઠાપનિકા આદિ તુમ લોગ મત કરના, યહ મી તુમ લોગોં કી નહીં કરેગા।

હવે અનવસ્થાપ્ય પ્રાયશ્ચિત્તની વિધિ કહે છે:—

અનવસ્થાપ્ય પ્રાયશ્ચિત્ત લેવાવાળો સાધુ પ્રશસ્ત દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ અને ભાવમાં ગુરુની પાસે સરલભાવથી પોતાના અતીચારોની આલોચના કરે છે. બ્યારે તે આલોચના કરી લે છે ત્યારે ગુરુ મહારાજ તેને કાયોત્સર્ગ કરાવે છે. તે આ પ્રકારે છે—ગુરુ મહારાજ પહેલાં સમગ્ર ઈર્યાપથિકી સંભળાવે છે. પછી ‘તસ્સુત્તરીકરણેણં’ અહીંથી લઈને ‘અપ્પાણં વોસિરામિ’ અહીં સુધી ભણીને કાયોત્સર્ગમાં ચતુર્વિંશતિસ્તવની અનુચિન્તના કરીને, પાળીને, પછી ચતુર્વિંશતિસ્તવનું ઉચ્ચારણ કરે છે, અને આચાર્ય તથા સાધુઓને બોલાવીને આ પ્રકારે કહે છે—“આ અનવસ્થાપ્ય મુનિ તપસ્યા કરી રહ્યો છે, તે ન તો તમારી સાથે બોલશે અને ન તમારે એને બોલાવવો. એ તમોને સૂત્રાર્થ અને શરીરની સુખશાતા આદિ નહિ પૂછે અને તમારે પણ તેને પૂછવું નહિ. તેની પરિષ્ઠાપનિકા આદિ તમારે ન કરવી અને તે પણ તમારી નહિ કરે. તેનાં

द्विर्न प्रतिलेख्यम्, न चायं भवतां प्रतिलेखयिष्यति । भक्तपानमस्मै न देयं, नाप्यस्माद्ग्राह्यम्, अनेन सार्धं नोपवेष्टव्यम्, न चाप्यनेन सहैकमण्डल्यां भोक्तव्यम्, अनेन सार्धं किमपि न कार्यमिति ।” अयं नवदीक्षितं साधुं वन्दते, एनं न कोऽपि वन्दते, ग्रीष्मे चतुर्थषष्ठाष्टमानि, शिशिरे षष्ठाष्टमदशमानि, वर्षास्वष्टमदशमद्वादशानि जघन्यमध्यमोत्कृष्टानि, पारणके च निर्लेपः, एवंप्रकारं सुदुश्चरं तपश्चरति । अस्य गच्छेन सह वासः एकक्षेत्रे एकोपाश्रये एकस्मिन् पार्श्वे शेषसाधुपरि-भोग्यप्रदेशे कल्पते, नत्वालपनादीनि शेषाणि । रोगादौ समुत्पन्ने सति रोगादिनिवृत्तिपर्यन्तं

इसके उपकरण की प्रतिलेखना तुम लोग मत करना, यह भी तुम लोगोंके उपकरण की प्रतिलेखना नहीं करेगा; न तुम लोग इसे भक्तपान दो, न इससे भक्तपान लो, न इसके साथ बैठो, न इसके साथ एक मण्डली में आहारादि करो, और न इसका सहकार लेकर कोई अन्य कार्य करो ।” यह साधु नवदीक्षित साधु की वन्दना करता है, इसको वन्दना कोई भी नहीं करता । यह साधु ग्रीष्म ऋतु में—जघन्य से उपवास, मध्यम से बेला, और उत्कृष्ट से तेला करता है; शिशिर ऋतु में—जघन्य से बेला, मध्यम से तेला और उत्कृष्ट से चौला करता है; एवं वर्षा ऋतु में—जघन्य से तेला, मध्यम से चौला और उत्कृष्ट से पँचोला करता है; पारणा में विकृतिवर्जित आहार लेता है । अनवस्थाप्य—प्रायश्चित्ती इस प्रकार का दुष्कर तप करता है । इस साधु को अन्य साधुओं के वसतियोग्य प्रदेश में रहना कल्पता है । यह गच्छ के साथ एकक्षेत्र में, एक उपाश्रय में, एक ही पार्श्व में रह सकता है, किन्तु इसको आलपन (बातचीत) आदि नहीं

उपकरणुनी प्रतिवेधना तभारे न करवी ते पणु तभारां उपकरणुनी प्रतिवेधना नहि करे. न तभारे तेने आहारपाणी देवां के न तेनी पासेथी आहारपाणी देवां. न तेनी साथे जेसपुं, न तेनी साथे ऐकमंडलीमां आहार आदि करवां अने न तेनो सङ्कार लधने कोरि अन्य कार्य करवुं.” आ साधु नव-दीक्षित साधुनी वंदना करे छे, तेनी वंदना कोरि पणु करतुं नथी. आ साधु ग्रीष्मऋतुमां जघन्यथी उपवास, मध्यमथी जेला, अने उत्कृष्टथी तेला करे छे, शिशिरऋतुमां जघन्यथी जेला, मध्यमथी तेला अने उत्कृष्टथी चौला करे छे, तेमज वर्षाऋतुमां जघन्यथी तेला, मध्यमथी चौला अने उत्कृष्टथी पंचोला करे छे. पारणां विकृतिवर्जित आहार ले छे. अनवस्थाप्यप्रायश्चित्ती आ प्रकारनुं दुष्कर तप करे छे. आ साधुने अन्य साधुओना वसतियोग्य प्रदेशमां रहवुं कल्पे छे. ते गच्छनी साथे ऐक क्षेत्रमां, ऐक उपाश्रयमां, ऐक ज पार्श्वमां रही शके छे परंतु तेने आलपन (वातचीत) आदि कल्पतुं

તદ્વૈયાવૃત્યં કરણીયં, તસ્મિન્નિવૃત્તે સતિ પુનસ્તપસિ સંસ્થાપ્યઃ । ઇતિ સંક્ષેપતોઽનવસ્થાપ્યતપો-
વિધિઃ । इदं नवमं प्रायश्चित्तम् । ९।

‘પારંચિયારિહે’ પારાશ્વિકાઽર્હમ્—પારં=તીરં તપસાઽપરાધસ્ય અશ્વતિ=ગચ્છતિ તતો
દીક્ષ્યતે યઃ સ પારાશ્વી, સ એવ પારાશ્વિકઃ; તસ્ય યદર્હ તત્ પારાશ્વિકાર્હ દશમં પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ।
યદ્વા—પારમન્તં પ્રાયશ્ચિત્તાનાં તત ઉત્કૃષ્ટતરપ્રાયશ્ચિત્તાઽભાવાદ્ અશ્વતિ—ગચ્છતીત્યેવંશીલઃ સાધુઃ
પારાશ્વિકસ્તદર્હ પ્રાયશ્ચિત્તમ્ । ૧૦। પારાશ્વિકઃ સંક્ષેપતો દ્વિવિધઃ—આશાતનાપારાશ્વિકઃ, પ્રતિ-
સેવનાપારાશ્વિકશ્ચેતિ । તત્ર—તીર્થંકર—સંઘ—શ્રુતાચાર્ય—ગણધર—મહર્દ્ધિકાન્ આશાતયતિ યઃ સ

કલ્પતા હૈ । यदि उस साधु को रोगादि हो जाय तो जबतक रोगादि की निवृत्ति
न हो तबतक अन्य साधु उसकी वैयावृत्य कर सकते हैं । जब वह साधु रोग से
निर्मुक्त हो जाय तो फिर उससे तपस्या करानी चाहिये । यह अनवस्थाप्यार्ह नामक
नवमा प्रायश्चित्त हुआ ।

‘પારંચિયારિહે’ જો સાધુ તપ કે દ્વારા અપને કિયે હુણ અપરાધ કો પાર
કરતા હૈ, અર્થાત્ અપરાધજનિત પાપસે મુક્ત હોતા હૈ; ફિર ઉસે દીક્ષા દી જાતી હૈ,
વહ સાધુ ‘પારાશ્વિક’ હૈ । ઉસ સાધુ કો પાપવિશોધનાર્થ જો પ્રાયશ્ચિત્ત દિયા
જાતા હૈ, વહ ‘પારાશ્વિકાર્હ’ પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । અથવા જો સાધુ ઉત્કૃષ્ટતર અન્ય પ્રાય-
શ્ચિત્ત કે ન હોને કે કારણ માત્ર અન્તિમ પ્રાયશ્ચિત્ત કા અધિકારી હોતા હૈ વહ
‘પારાશ્વિક’ કહા જાતા હૈ । ઉસ અન્તિમ પ્રાયશ્ચિત્ત કો ‘પારાશ્વિકાર્હ’ કહતે હૈ ।
પારાશ્વિક સાધુ દો પ્રકાર કા હૈ—પહલા આશાતનાપારાશ્વિક, દૂસરા પ્રતિસેવના
પારાશ્વિક । જો તીર્થંકર, સંઘ, શ્રુત, આચાર્ય, ગણધર ઔર લબ્ધિધારી કી આશાતના

નથી. જો તે સાધુને રોગાદિ થઈ જાય તો જ્યાં સુધી રોગાદિની નિવૃત્તિ ન
થાય ત્યાં સુધી અન્ય સાધુ તેનું વૈયાવૃત્ત્ય કરી શકે છે. જ્યારે તે સાધુ
રોગથી નિર્મુક્ત થઈ જાય ત્યાર પછી તેની પાસે તપસ્યા કરાવવી જોઈએ. આ
અનવસ્થાપ્યાર્હ નામનું નવમું પ્રાયશ્ચિત્ત થયું.

‘પારંચિયારિહે’ જે સાધુ તપદ્વારા પોતે કરેલા અપરાધને પાર કરે છે અર્થાત્
અપરાધજનિત પાપથી મુક્ત થાય છે તેને ત્યાર પછી દીક્ષા દેવાય છે. તે સાધુ
‘પારાશ્વિક’ છે તે સાધુને પાપવિશોધનાર્થ જે પ્રાયશ્ચિત્ત દેવાય છે તે ‘પારાશ્વિકાર્હ’
પ્રાયશ્ચિત્ત છે, અથવા જે સાધુ ઉત્કૃષ્ટતર અન્ય પ્રાયશ્ચિત્ત ન હોવાના કારણ
માત્રથી અંતિમ પ્રાયશ્ચિત્તનો અધિકારી છે તે ‘પારાશ્વિક’ કહેવાય છે. તે
અંતિમ પ્રાયશ્ચિત્તને ‘પારાશ્વિકાર્હ’ કહેવાય છે. પારાશ્વિક સાધુ બે પ્રકારના
છે—પહેલા આશાતનાપારાશ્વિક, બીજા પ્રતિસેવનાપારાશ્વિક. જે તીર્થંકર, સંઘ,

આશાતનાપારાશ્ચિકઃ । તસ્ય પારાશ્ચિકાર્હનામકં દશમં પ્રાયશ્ચિત્તં પ્રાપ્નોતિ । સ જઘન્યેન ષષ્માસાન્, ઉત્કર્ષતો દ્વાદશ માસાન્ ગચ્છતો નિઃસારિતસ્તપસિ તિષ્ઠતિ । પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિકલ્લિવિધઃ—દુષ્ટઃ, પ્રમત્તઃ, અન્યોન્યં કુર્વાગ્ચેતિ । તત્ર દુષ્ટો દ્વિવિધઃ—કષાયદુષ્ટો, વિષયદુષ્ટઃચેતિ । તત્ર કષાયદુષ્ટો દ્વિવિધઃ—સ્વપક્ષદુષ્ટઃ, પરપક્ષદુષ્ટઃચ । અત્ર ચતુર્મજ્જી, તદ્યથા—સ્વપક્ષઃ સ્વપક્ષે દુષ્ટઃ ૧, સ્વપક્ષઃ પરપક્ષે દુષ્ટઃ ૨, પરપક્ષઃ સ્વપક્ષે દુષ્ટઃ ૩, પરપક્ષઃ પરપક્ષે દુષ્ટઃ ૪ । પ્રથમમજ્જે—મૃતગુરુદન્તમઞ્જકઃ ૧, ગુરુગલમર્દકઃ ૨, નેત્રોત્સ્વાતકઃ ૩, દન્તૈર્દશકઃ ૪, ઇત્યાદીન્યુદાહરણાનિ । દ્વિતીયમજ્જે—રાજાદિગૃહસ્થવધકઃ ૨, તૃતીયે—યથા કેનાપિ ગૃહસ્થાવસ્થાયાં વાદે પરાજિતઃ કશ્ચિદ્ આસીત્,

કરતા હૈ વહ ‘આશાતનાપારાશ્ચિક’ હૈ । હિસે ‘પારાશ્ચિકાર્હ’ નામક દશવાં પ્રાયશ્ચિત્ત દિયા જાતા હૈ । યહ જઘન્ય સે છ માસ તક ઓર ઉત્કૃષ્ટ સે બારહ માસ તક ગચ્છ સે બહિષ્કૃત હોકર તપસ્યા કરતા હૈ । ‘પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિક’ ત્રીન પ્રકાર કા હોતા હૈ । વે પ્રકાર યે હૈ—(૧) દુષ્ટ, (૨) પ્રમત્ત ઓર (૩) અન્યોડન્ય-કુર્વાણ । હનમેં ‘દુષ્ટ’ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—(૧) કષાયદુષ્ટ ઓર (૨) વિષય-દુષ્ટ । કષાયદુષ્ટ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) સ્વપક્ષદુષ્ટ ઓર (૨) પરપક્ષદુષ્ટ । યહાં પર ચતુર્મજ્જી હોતી હૈ । ચતુર્મજ્જી કા પ્રકાર હિસ પ્રકાર હૈ—(૧) સ્વપક્ષ, સ્વપક્ષ મેં દુષ્ટ—સાધુઓં સે દ્વેષ કરનેવાલા સાધુ । હિસકા ઉદાહરણ હૈ—મૃત ગુરુ કા દાંત પાડનેવાલા, મૃત ગુરુ કી ગર્દન મરોડનેવાલા, મૃત ગુરુ તથા સાધુ કી આંખોં કો નિકાલનેવાલા, દાંતોં સે સાધુ કો કાટનેવાલા—સાધુ । (૨) સ્વપક્ષ—પરપક્ષ મેં દુષ્ટ—ગૃહસ્થોં સે દ્વેષ કરનેવાલા સાધુ । હિસકા ઉદાહરણ હૈ—રાજા આદિ ગૃહસ્થોં કા વધ

શ્રુત, આચાર્ય, ગણધર અને લલિધધારીની આશાતના કરે છે તે ‘આશાતના-પારાશ્ચિક’ છે. તેને પારાશ્ચિકાર્હ નામનું દશમું પ્રાયશ્ચિત્ત દેવાય છે. એ જઘન્યથી છ માસ સુધી અને ઉત્કૃષ્ટથી બાર માસ સુધી ગચ્છથી બહિષ્કૃત થઈને તપસ્યા કરે છે. ‘પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિક’ ત્રણ પ્રકારના થાય છે. તે આ પ્રકારે છે—(૧) દુષ્ટ, (૨) પ્રમત્ત અને (૩) અન્યોડન્યકુર્વાણ. તેમાં ‘દુષ્ટ’ બે પ્રકારનાં થાય છે. (૧) કષાયદુષ્ટ અને (૨) વિષયદુષ્ટ. કષાયદુષ્ટ બે પ્રકારનાં છે—(૧) સ્વપક્ષદુષ્ટ અને (૨) પરપક્ષદુષ્ટ. અહીં ચતુર્મજ્જી થાય છે. ચતુર્મજ્જીના પ્રકાર આમ છે—(૧) સ્વપક્ષ, સ્વપક્ષમાં દુષ્ટ—સાધુઓનો દ્વેષ કરવાવાળો સાધુ. તેનું ઉદાહરણ છે—મરેલા ગુરૂના દાંત પાડવાવાળો, મરેલા ગુરૂની ગર્દન મરડવાવાળો, મરેલા ગુરૂ તથા સાધુની આંખો કાઢી લેવાવાળો, દાંતથી સાધુને બટકાં ભરવાવાળો સાધુ. (૨) સ્વપક્ષ, પરપક્ષમાં દુષ્ટ—ગૃહસ્થોનો દ્વેષ કરવાવાળો સાધુ. તેનું ઉદાહરણ છે—રાજા આદિ ગૃહસ્થોનો વધ કરવા-

સ તસ્ય ગૃહસ્થાવસ્થાયાં વિજયિનઃ સાધોર્વૈરિકો જાતઃ; યથા સ્કન્દકુમારસ્ય પાલક ઇતિ ।૩।
યો રાજ્ઞો યુવરાજસ્ય વા વધકઃ સ ચતુર્થમજ્ઞાન્તર્ગતઃ । અદીક્ષિતત્વાત્ વધકઃ પરપક્ષઃ, રાજા
તુ પરપક્ષ એવાસ્તિ ।૪।

પ્રથમમજ્ઞે યોઽનુપરતઃ સ પ્રાયશ્ચિત્તાનર્હઃ, તસ્માત્ તસ્ય સાધુવેષમપહૃત્ય ગુરુણા
બહિર્નિસ્સારણં કરણીયમ્, યસ્તૂપરતઃ ‘પુનર્નૈવં કરિષ્યામી’ તિ પ્રતિજાનાતિ તસ્ય તપોરૂપં

કરનેવાલા સાધુ । (૩) પરપક્ષ, સ્વપક્ષ મેં દુષ્ટ—સાધુ સે દ્વેષ કરનેવાલા ગૃહસ્થ ।
ઇસકા ઉદાહરણ ઇસ પ્રકાર હૈ—કિસી સાધુને ગૃહસ્થાવસ્થા મેં વાદવિવાદ મેં કિસી
કો પરાજિત કિયા થા । પરાજિત મનુષ્ય ઉસકા વૈરી હો ગયા । બાદ મેં વિજયી
મનુષ્યને દીક્ષા લેકર સાધુત્વ કો અજ્ઞીકાર કિયા, ઉસ સમય પરાજિત મનુષ્ય તીવ્ર
વૈરાનુબન્ધ કે કારણ ઉસ સાધુ કો માર ડાલા । જૈસે—પાલકને સ્કન્દક આદિ પાંચસૌ
મુનિયોં કો માર ડાલા । તથા (૪) પરપક્ષ—પરપક્ષ મેં દુષ્ટ—ગૃહસ્થ સે દ્વેષ કરનેવાલા
ગૃહસ્થ । ઇસકા ઉદાહરણ હૈ—રાજા વા યુવરાજ કા વધ કરનેવાલા ગૃહસ્થ । હત્યા
કરનેવાલા અદીક્ષિત હોને કે કારણ પરપક્ષી હૈ, રાજા આદિ તો પરપક્ષી હૈ હી, ઇસલિયે
યહ ચતુર્થ મજ્ઞ કા ઉદાહરણ હૈ ।

પ્રથમમજ્ઞ મેં જો સાધુ અનુપરત હૈ, અર્થાત્ મૃતગુરુ કે દાંત પાડના આદિ દુષ્કૃત્ય સે
નિવૃત્ત નહીં હોતા હૈ, વહ પ્રાયશ્ચિત્ત કા અધિકારી નહીં હૈ । ગુરુ કો ચાહિયે કિ એસે સાધુ કા
વેષ છીન લે, ઓર ગચ્છ સે ઉસકો નિકાલ દે । જો સાધુ દાંત પાડના આદિ દુષ્કૃત્યોં સે
નિવૃત્ત હો જાતા હૈ, ઓર પ્રતિજ્ઞા કરતા હૈ કિ “મેં અબ ફિર કમી એસા કામ નહીં કરૂંગા”

વાળો સાધુ. (૩) પરપક્ષ, સ્વપક્ષમાં દુષ્ટ—સાધુનો દ્વેષ કરવાવાળો ગૃહસ્થ. આનું
ઉદાહરણ આમ છે—કોઈ સાધુએ ગૃહસ્થાશ્રમમાં વાદવિવાદમાં કોઈને પરાજિત
કર્યો હોતો. પરાજિત માણસ તેનો વૈરી થઈ ગયો. પછી વિજયી મનુષ્યે દીક્ષા
લઈ સાધુત્વ અંગીકાર કર્યું, તે સમયે પરાજિત મનુષ્યે તીવ્ર વૈરાનુબંધને
કારણે તે સાધુને મારી નાખ્યો. જેમ, પાલકે સ્કન્દક આદિ પાંચસો
મુનિઓને મારી નાખ્યા. તથા (૪) પરપક્ષ, પરપક્ષમાં દુષ્ટ—ગૃહસ્થોનો
દ્વેષ કરવાવાળો ગૃહસ્થ. તેનું ઉદાહરણ છે—રાજા અથવા યુવરાજનો વધ
કરવાવાળો ગૃહસ્થ. હત્યા કરવાવાળો અદીક્ષિત હોવાને કારણે પરપક્ષી છે,
રાજા આદિ તો પરપક્ષી છેજ, આથી એ ચતુર્થલંગનું ઉદાહરણ છે.

પ્રથમ લંગમાં—જે સાધુ અનુપરત છે અર્થાત્ મરેલા ગુરુના દાંત પાડવા
આદિ દુષ્કૃત્યથી નિવૃત્ત થતો નથી તે પ્રાયશ્ચિત્તનો અધિકારી નથી. ગુરુએ એવા
સાધુનો વેષ છીનવી લેવો જોઈએ અને ગચ્છથી તેનો બહિષ્કાર કરવો જોઈયે. જે

पाराश्रिकार्हं प्रायश्चित्तं कर्तव्यम् । ततः साधुवेषपरित्यागेन स गुरुनिदेशतः कपर्दिका वणिग्भ्यो याचित्वा गुरवे प्रदर्शयति, ततो गुरुमुनिवेषं दत्त्वा दीक्षां ददाति । पाराश्रिकतपोविधानं प्रागुक्तानवस्थाप्यतपोवद् ग्रीष्मे चतुर्थषष्ठाष्टमानि, शिशिरे षष्ठाष्टमदशमानि, वर्षास्वष्टम-दशमद्वादशानि जघन्यमध्यमोत्कृष्टानि, पारणके च निर्लेप इति ।

द्वितीयभङ्गेऽपि चानुपरतः प्रथमभङ्गवत् साधुवेषापहारेण गच्छाद् बहिष्करणीयः, उपर-

ऐसे साधु को गुरु पाराश्रिकार्ह प्रायश्चित्त दें । ऐसा साधु साधुवेष का परित्याग कर शिर के ऊपर कपड़ा बाँधकर गुरु की आज्ञा से बाजार में जाकर व्यापारियों से अपना पाष-निवेदनपूर्वक एक एक कौड़ी माँगता है, माँग कर उन कौड़ियों को गुरु महाराज को दिखलाता है । तब गुरु महाराज उसे मुनिवेष देकर फिर से दीक्षा देते हैं । पाराश्रिक तप का विधान पूर्वोक्त अनवस्थाप्य तप के समान है । इस तपस्या में वह साधु ग्रीष्म ऋतु में जघन्य से उपवास, मध्यम से बेला, उत्कृष्ट से तेला; शिशिर ऋतु में जघन्य से से बेला, मध्यम से तेला, उत्कृष्ट से चौला; और वर्षा ऋतु में जघन्य से तेला, मध्यम से चौला, उत्कृष्ट से पँचोला करता है । पारणा में विकृतिवर्जित आहार लेता है ।

द्वितीयभङ्ग में जो साधु अनुपरत है अर्थात् राजा आदि गृहस्थों के घातरूप व्यापार से निवृत्त नहीं होता है, ऐसे साधु का साधुवेष छीनकर गुरु महाराज उसे गच्छ से निकाल दें । जो साधु राजादिक गृहस्थ के घातरूप व्यापार

साधु हांत पाउवा आदि दुष्कृत्योथी निवृत्त थઈ જાય છે અને નિયમ કરે છે કે—‘હવે હું ફરીને એવું કામ નહિ કરું’ એવા સાધુને ગુરુ પારાશ્રિકાર્હ પ્રાય-શ્ચિત્ત આપે. એવો સાધુ, સાધુનો વેષ છોડી દઈ શિરના ઉપર કપડું બાંધી ગુરુની આજ્ઞા લઈ બજારમાં જાય છે અને વ્યાપારીઓની પાસે પોતાનું પાપનું નિવેદન કરી એક એક કોડી માંગે છે. માંગીને તે કોડિઓને ગુરુ મહારાજને બતાવે છે. ત્યારે ગુરુ મહારાજ તેને મુનિવેષ આપીને ફરીને દીક્ષા આપે છે. પારાશ્રિક તપનું વિધાન આગળ કહેલ અનવસ્થાપ્ય તપના સમાન છે. આ તપસ્યામાં તે સાધુ ગ્રીષ્મઋતુમાં જઘન્યથી ઉપવાસ, મધ્યમથી બેલા, ઉત્કૃષ્ઠથી તેલા, શિશિરઋતુમાં જઘન્યથી બેલા, મધ્યમથી તેલા, ઉત્કૃષ્ઠથી ચૌલા, અને વર્ષાઋતુમાં જઘન્યથી તેલા, મધ્યમથી ચૌલા, ઉત્કૃષ્ઠથી પંચોલા કરે છે. પારણામાં વિકૃતિવર્જિત આહાર લે છે.

દ્વિતીયભંગમાં—જે સાધુ અનુપરત હોય અર્થાત્ રાજા આદિ ગૃહસ્થોના ઘાતરૂપ વ્યાપારથી નિવૃત્ત થતો નથી, એવા સાધુનો સાધુવેષ છીનવી લઈને

તશ્ચેત્ તર્હિ તસ્ય ન પારાશ્વિકતપઃકરણં, નાપિ ચ સાધુવેષાપહારઃ, કિં તુ પુનર્દીક્ષાપ્રદાનમાત્રં પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ।

તૃતીયભક્તે ચતુર્થભક્તે ચ—યદતિશયજ્ઞાની ‘ઉપશાન્તોઽયમ્’ इति मन्यते, તદા સ્વદેશે દીક્ષિતું ન કલ્પતે, કિન્તુ અન્યસ્મિન્ દેશે ગત્વા દીક્ષા દાતવ્યા ।

વિષયદુષ્ટોઽપિ પૂર્વવદ્ દ્વિવિધઃ—સ્વપક્ષદુષ્ટઃ, પરપક્ષદુષ્ટઃ—ચેતિ । તત્રાપિ ચતુર્ભક્તી—તદ્યથા—સ્વપક્ષઃ સ્વપક્ષે દુષ્ટઃ ૧, સ્વપક્ષઃ પરપક્ષે દુષ્ટઃ ૨, પરપક્ષઃ સ્વપક્ષે દુષ્ટઃ ૩,

સે નિવૃત્ત હો જાય તો ઉસસે ગુરુ પારાશ્વિક તપ નહીં કરાયેં, ન ઉસકા સાધુવેષ હી છીનેં, કિન્તુ ઉસે ક્ષેત્રપારાશ્વિક કરકે ફિર સે દીક્ષા દેં, યહ ઉસકા પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ ।

તૃતીયભક્ત મેં—જો ગૃહસ્થ સાધુ કા ઘાતક હૈ વહ યદિ દીક્ષા લેના યાહે, ગુરુમહારાજ કો વહ ઉપશાન્ત જ્ઞાત હો તો ઉસે ગુરુમહારાજ અન્યદેશ મેં લે જાકર દીક્ષા દેં । ક્યોં કિ સ્વદેશ મેં ઇસકે લિયે દીક્ષા નહીં કલ્પતી હૈ । ચતુર્થભક્ત મેં—જો કોઈ ગૃહસ્થ, રાજા યુવરાજ આદિ ગૃહસ્થ કા ઘાતક હૈ, વહ યદિ દીક્ષા લેના યાહે ઓર ગુરુ મહારાજ કો વહ ઉપશાન્ત માલુમ હો, તો ઉસકો પરદેશ મેં લે જાકર દીક્ષા દેં । સ્વદેશ મેં ઉસકે લિયે દીક્ષા નહીં કલ્પતી હૈ ।

વિષયદુષ્ટ મી પૂર્વવત્ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—સ્વપક્ષદુષ્ટ ઓર પરપક્ષદુષ્ટ । યહાં પર મી ચતુર્ભક્તી હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર હૈ—(૧) સ્વપક્ષ, સ્વપક્ષ મેં દુષ્ટ—બાલા યા તરુણી સાધ્વી કા શીલ ભક્ત કરનેવાલા સાધુ । (૨) સ્વપક્ષ, પરપક્ષ મેં દુષ્ટ—શય્યાતર કી સ્ત્રી યા

ગુરુ મહારાજે તેને ગન્ધથી બહાર કરવો. જે સાધુ રાજાદિક ગૃહસ્થના ઘાતરૂપ વ્યાપારથી નિવૃત્ત થઈ જાય તો તેને ગુરુ પારાશ્વિક તપ ન કરાવે, ન તેનો સાધુવેશ પણ છીનવી લે, પરંતુ તેને ક્ષેત્રપારાશ્વિક કરીને ફરીથી તેને દીક્ષા આપે; એ જ તેનું પ્રાયશ્ચિત્ત છે.

તૃતીયભંગમાં—જે ગૃહસ્થ સાધુનો ઘાતક હોય તે જે દીક્ષા લેવા યાહે તો અતિશયજ્ઞાની ગુરુમહારાજને જે તે ઉપશાન્ત જણાય તો તેને ગુરુમહારાજ અન્ય-દેશમાં લઈ જઈને દીક્ષા આપે. કેમકે સ્વદેશમાં તેને માટે દીક્ષા કલ્પતી નથી. ચતુર્થભંગમાં—જે કોઈ ગૃહસ્થ, રાજા યુવરાજ આદિ ગૃહસ્થનો ઘાતક હોય, તે જે દીક્ષા લેવાને યાહે તો તેને પરદેશમાં લઈ જઈને દીક્ષા દેવી. સ્વદેશમાં તેને માટે દીક્ષા કલ્પતી નથી.

વિષયદુષ્ટ પણ પૂર્વ પ્રમાણે જ પ્રકારના થાય છે. સ્વપક્ષદુષ્ટ અને પરપક્ષ-દુષ્ટ. અહીં પણ ચતુર્ભંગી છે. તે આ પ્રકારે છે—(૧) સ્વપક્ષ, સ્વપક્ષમાં દુષ્ટ—બાલા અથવા તરુણી સાધ્વીનું શીયળ ભંગ કરવાવાળો સાધુ. (૨) સ્વપક્ષ,

પરપક્ષ: પરપક્ષે દુષ્ટ: ૪ । તત્ર—બાલાયાં તરુણ્યાં વા સાઘ્યાં ય: સાધુર્દુષ્ટ:—શીલભક્ષકારક:, સ પ્રથમો ભક્ષ: । સાધુરેવ શય્યાતરગૃહિણ્યામન્યતીર્થિકાયાં વા અધ્યુપપન્ન ઇતિ દ્વિતીય: । ગૃહસ્થો બાલાયાં તરુણ્યાં વા સાઘ્યામધ્યુપપન્ન ઇતિ તૃતીય: । ગૃહસ્થો ગૃહસ્થાયામિતિ ચતુર્થ: । એવં વિષયદુષ્ટોઽપિ ચતુર્વિધો મન્તવ્ય: ।

તત્ર—પ્રથમભક્ષે વર્તમાનો યોઽનુપરત: સ લિંગપારાશ્ચિક: કર્તવ્ય:—સાધુવેષાપ-
હારેણ સર્વથા ગચ્છાદ્ બહિષ્કરણીય: । યસ્તૂપરત:—ઉપશાન્ત: ‘પુનર્નૈવં કરિષ્યામી’—તિ પ્રતિ-
જાનાતિ, તસ્ય પારાશ્ચિકાર્હ તપોરૂપં પ્રાયશ્ચિત્તં કારયતિ, તત: સાધુવેષમનપહ્ય દીક્ષાપ્રદાનં
કર્તવ્યમ્, ઉપરતસ્ય વિષયદુષ્ટસ્ય લિંગપારાશ્ચિકત્વવિધાનાભાવાત્ ।

પરતીર્થિક કી સ્ત્રી સે વ્યભિચાર કરનેવાલા સાધુ । (૩) પરપક્ષ, સ્વપક્ષ મેં દુષ્ટ—બાલા યા તરુણી સાધ્વી કા શીલભક્ષ કરનેવાલા ગૃહસ્થ । (૪) પરપક્ષ, પરપક્ષ મેં દુષ્ટ—ગૃહસ્થ સ્ત્રી કે સાથ વ્યભિચાર કરને વાલા ગૃહસ્થ । વિષયદુષ્ટકે યે ચાર ભક્ષ હુએ । ઇનમેં પ્રથમ-
ભક્ષ મેં વર્તમાન સાધુ અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત ન હો તો ગુરુ ઉસકો લિંગપારાશ્ચિક કર દે, અર્થાત્—ઉસકા સાધુવેષ લે લે, ઓર ઉસકા ગચ્છ સે સર્વથા બહિષ્કાર કર દે । જો સાધુ અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત એવં ઉપશાન્ત હોકર એસી પ્રતિજ્ઞા કરે કિ “મેં અબ ફિર કમી મી એસા નહીં કરૂંગા” ઉસકો ગુરુ પારાશ્ચિકાર્હ તપોરૂપ પ્રાયશ્ચિત્ત દેતે હૈં । એસે સાધુકા સાધુ-
વેષ નહીં છીના જાતા હૈ, માત્ર ઉસે નવી દીક્ષા દી જાતી હૈ । અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત વિષયદુષ્ટ કે લિયે લિંગપારાશ્ચિક કા વિધાન નહીં હૈ, અર્થાત્—ઉસકા વેષ નહીં છીના જાતા હૈ ।

પરપક્ષમાં દુષ્ટ—શય્યાતરની સ્ત્રી અથવા પરતીર્થિકની સ્ત્રીથી વ્યભિચાર કરવા-
વાળો સાધુ. (૩) પરપક્ષ, સ્વપક્ષમાં દુષ્ટ—બાલા અથવા તરુણી સાધ્વીનું શીયળ
લંગ કરવાવાળો ગૃહસ્થ. (૪) પરપક્ષ, પરપક્ષમાં દુષ્ટ—ગૃહસ્થ સ્ત્રીની
સાથે વ્યભિચાર કરવાવાળો ગૃહસ્થ. વિષયદુષ્ટના આ ચાર લંગ થયા. તેમાં
પ્રથમ લંગમાં વર્તમાન સાધુ પોતાનાં દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત ન થાય તો ગુરુ તેને
લિંગપારાશ્ચિક કરી દે, અર્થાત્ તેનો સાધુ વેષ લઈ લે અને ગચ્છમાંથી તેનો
સર્વથા બહિષ્કાર કરી દે. જે સાધુ પોતાનાં દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત તેમ જ ઉપશાન્ત
થઈને એવી પ્રતિજ્ઞા કરે કે ‘હું હવે ફરીને કદી એવું નહિ કરું’ તેને ગુરુ
પારાશ્ચિકાર્હ—તપોરૂપ પ્રાયશ્ચિત્ત આપે છે. એવા સાધુનો સાધુવેષ છીનવી
લેવાતો નથી. માત્ર તેને નવી દીક્ષા અપાય છે. પોતાનાં દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત
વિષયદુષ્ટને માટે લિંગપારાશ્ચિકનું વિધાન નથી. અર્થાત્ તેનો વેષ છીનવી
લેવાતો નથી.

દ્વિતીયભક્તેઽપિ વર્તમાનો યોઽનુપરતઃ સ એવ લિંગપારાશ્ચિકઃ કર્તવ્યઃ, ઉપરતસ્તુ ન લિંગતઃ પારાશ્ચિકઃ કર્તવ્યઃ, ક્ષેત્રત એવ પારાશ્ચિકઃ કર્તવ્યઃ, પુનર્દીક્ષાપ્રદાનમાત્રં તસ્ય પ્રાયશ્ચિત્તમ્ । તૃતીયે ચતુર્થે ચ ભક્તે યદ્યુપશાન્તસ્તદાઽન્યસ્મિન્ દેશે દીક્ષા દાતવ્યા, અત્ર પારાશ્ચિકતપઃ પ્રસ્તુતત્વાત્ પરપક્ષે તસ્યાસમ્ભવાત્ । યદ્યનુપશાન્તસ્તર્હિ દીક્ષા ન દાતવ્યા । યેષુ ગ્રામાદિષુ તાઃ સાધ્વ્યો વિહરન્તિ તેષુ તેષુ સ્થાનેષુ વિહર્તુ સ પ્રથમભક્તે વર્તમાનઃ સાધુર્નિવાર્યતે । દ્વિતીયાદિષ્વપિ ભક્તેષુ તાનિ સ્થાનાનિ ગ્રામાદીનિ પરિહર્તવ્યાનિ । એતદુક્તં ભવતિ-દ્વિતીયભક્તે યસ્યાં

દ્વિતીયભક્તમેં વર્તમાન સાધુ યદિ અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત ન હો તો ગુરુ મહારાજ ઉસ સાધુકો લિંગપારાશ્ચિક કર દે, અર્થાત્ ઉસકા સાધુવેષ લેકર ઉસકો ગચ્છ સે સર્વથા કે લિયે નિકાલ દે । જો સાધુ નિવૃત્ત હો જાય ઉસકો લિંગસે પારાશ્ચિક ન કરે, અર્થાત્ ઉસકા સાધુવેષ નહીં છીને, કિન્તુ ઉસકો ક્ષેત્ર સે પારાશ્ચિક કર દે । એસે સાધુકો ફિર સે દીક્ષા દે । યહી ઇસકે લિયે પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । તૃતીય ચતુર્થ ભક્તમેં વર્તમાન ગૃહસ્થ ઉપશાન્ત અર્થાત્ અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત હો તો ઉસકો અન્યદેશ મેં દીક્ષા દેની ચાહિયે । યદિ વહ ઉપશાન્ત ન હો તો અન્ય દેશ મેં મી દીક્ષા નહીં દે । યહાં પારાશ્ચિક કા પ્રસ્તાવ, અર્થાત્-ઉપક્રમ હૈ, પારાશ્ચિક તપ પરપક્ષ અર્થાત્ ગૃહસ્થ કે લિયે સમ્ભવિત નહીં હૈ, ઇસલિયે ગૃહસ્થ કે લિયે દેશાન્તર મેં દીક્ષા દેને કા વિધાન કિયા હૈ ।

પ્રથમભક્ત કે સાધુ કો, જિન સાધ્વિયોં કા ઉસને શીલ ભક્ત કિયા હૈ વે સાધ્વિયોં

દ્વિતીયભંગમાં વર્તમાન સાધુ જે પોતાનાં દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત ન થાય તો શુરૂ તે સાધુને લિંગપારાશ્ચિક કરી દે, અર્થાત્ તેનો સાધુ વેષ લઈ લે અને તેને ગચ્છથી સર્વથા માટે બહિષ્કાર કરે. જે સાધુ નિવૃત્ત થઈ જાય તેને લિંગથી પારાશ્ચિક ન કરે, અર્થાત્ તેનો સાધુવેષ ન લઈ લે. પરંતુ તેને ક્ષેત્રથી (તે સ્થળથી) પારાશ્ચિક કરે. એવા સાધુને ફરીને દીક્ષા દે, એ જ તેને માટે પ્રાયશ્ચિત્ત છે.

તૃતીય ચતુર્થભંગમાં વર્તમાન ગૃહસ્થ ઉપશાન્ત અર્થાત્ પોતાનાં દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત થાય તો તેને બીજા દેશમાં દીક્ષા દેવી જોઈએ. જે તે ઉપશાન્ત ન થાય તો બીજા દેશમાં પણ દીક્ષા ન દેવી. અહીં પારાશ્ચિકનો પ્રસ્તાવ, અર્થાત્ ઉપક્રમ છે, પારાશ્ચિક તપ પરપક્ષ અર્થાત્ ગૃહસ્થને માટે સંભવિત નથી, તેથી ગૃહસ્થને માટે દેશાંતરમાં દીક્ષા દેવાનું વિધાન કર્યું છે.

પ્રથમ ભંગના સાધુને, જે સાધ્વીઓનું તેણે શીલભંગ કર્યું હોય તે સાધ્વીઓ જે ગામ નગરાદિ સ્થાનોમાં વિહાર કરતી હોય ત્યાં વિહાર કરવા દેવામાં આવતો નથી.

નગર્યાં યસ્મિન્ ગૃહસ્થકુલે દોષ ઉત્પન્નઃ, ઉત્પત્સ્યતે વા, તદીયે કુલે પ્રવેષ્ટું વારગીયઃ। તથા—યત્ર નિર્ગમપ્રવેશયોદ્વારમેકમેવાસ્તિ તત્ર, તથા દ્વયોર્ગ્રામયોરપાન્તરાલે યત્ર દ્વચાદિગૃહાણાં સંનિવેશ-સ્તત્રાપિ ગમનાગમનં વાર્ણીયમ્। અયં ક્ષેત્રપારાશ્ચિક્ષિક્ષિત્વમ્ ઇત્યુચ્યતે।

દ્વિવિધેઽપિ દુષ્ટપારાશ્ચિક્ષિકે પ્રથમભક્ષાધિકારઃ। શેષાગિ પુનર્દ્વિતીયભક્ષાદીનિ શિષ્ય-બુદ્ધિવૈશદ્યાર્થં પ્રદર્શિતાનિ।

અથ પ્રમત્તપારાશ્ચિક્ષિક ઉચ્યતે—સ્થાનર્દ્વિનિદ્રાવાન્ પ્રમત્તપારાશ્ચિક્ષિકઃ, તસ્ય સામાન્ય-લોકબલાદ્ દ્વિગુણં ત્રિગુણં ચતુર્ગુણં વા બલં ભવતિ, તસ્માદસૌ ગુરુણા એવં પ્રજ્ઞાપનીયઃ—સૌમ્ય! લિઙ્ગં મુચ્ચ, ચારિત્રં તવ નાસ્તિ। યદ્યેવં ગુરુણા સાનુનયમુક્તઃ સાધુવેષં મુચ્ચતિ, તતઃ

જિન ગ્રામનગરાદિ સ્થાનોં મેં વિહાર કરતી હૈં વહાં વિહાર નહીં કરને દિયા જાતા હૈ। દ્વિતી-યભક્ષા કે સાધુ કો જિસ નગરી મેં, જિસ કુલમેં ઉસસે દોષ હો ગયા ઓર હોને કી સંભાવના હૈ, વહાં નહીં જાને દિયા જાતા હૈ, ઓર જહાં નિકલને તથા પ્રવેશ કરને કા દ્વાર એક હી હૈ વહાં, તથા દો ગાવોં કે બીચ મેં જહાં દો ત્રીન ઘર વસે હુએ હોં વહાં મી, ઇસ સાધુ કા ગમનાગમન રોક દિયા જાતા હૈ। યહી ક્ષેત્રપારાશ્ચિક્ષિક કહા જાતા હૈ।

પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિક્ષિક કે દુષ્ટ નામક પ્રથમ ભેદ કે કષાયદુષ્ટ ઓર વિષયદુષ્ટ યે દો ભેદ હુએ। ઇન દોનોં ભેદોં મેં પ્રથમ ભક્ષાકા હી યહાં અધિકાર હૈ, ક્યોં કિ પ્રથમ ભક્ષા મેં હી પારાશ્ચિક્ષિક પ્રાયશ્ચિત્ત દિયા જાતા હૈ। દ્વિતીયભક્ષા આદિ તો શિષ્યોં કી બુદ્ધિ વિશદ હો, ઇસલિયે દિશ્વલાયે ગયે હૈં।

અબ પ્રમત્તપારાશ્ચિક્ષિક કહતે હૈં। સ્થાનર્દ્વિનિદ્રાવાન્ સાધુ પ્રમત્તપારાશ્ચિક્ષિક હૈ। ઉસે સામાન્ય લોગોં કે બલસે દ્વિગુણ, ત્રિગુણ વા ચતુર્ગુણ બલ હોતા હૈ। એસે સાધુ કો

દ્વિતીય ભંગના સાધુને, જે નગરીમાં જે કુળમાં તેનાથી દોષ થઈ ગયો હોય અને હોવાની સંભાવના હોય ત્યાં જવા દેવાતા નથી. અને જ્યાં નીકળવાનું તથા પ્રવેશ કરવાનું દ્વાર એક જ હોય ત્યાં, તથા જે ગામોની વચ્ચે જ્યાં જે ત્રણ ઘર વસેલાં હોય ત્યાં પણ તે સાધુનું ગમનાગમન રોકવામાં આવે છે, આ જ ક્ષેત્રપારાશ્ચિક્ષિક કહેવાય છે.

પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિક્ષિકના દુષ્ટ નામના પ્રથમ ભેદના કષાયદુષ્ટ અને વિષય-દુષ્ટ, એ જે પ્રકાર થયા. એ બન્ને પ્રકારોમાં પ્રથમ ભંગનો જ અહીં અધિકાર છે, કેમકે પ્રથમ ભંગમાં જ પારાશ્ચિક્ષિક પ્રાયશ્ચિત્ત દેવાય છે. દ્વિતીય ભંગ આદિ તો શિષ્યોની બુદ્ધિ વિશદ થાય તે માટે બતાવ્યા છે.

હવે પ્રમત્તપારાશ્ચિક્ષિક કહે છે. સ્થાનર્દ્વિનિદ્રાવાન્ સાધુ પ્રમત્તપારાશ્ચિક્ષિક છે. તેનામાં સામાન્યલોકોનાં બળ કરતાં બમણું ત્રણગણું અથવા ચારગણું બળ

શોભનમ્ । અથ ન મુશ્ચતિ તતઃ સંઘો મિલિત્વા તસ્ય સાધુવેષં હરતિ, ન ત્વેક એવ જનઃ, તસ્યૈકસ્યોપરિ પ્રદેષસંભવાત્, પ્રદેષયુક્તશ્ચ સ તસ્ય હિંસનમપિ કુર્યાત્ । તસ્મૈ પુનર્દીક્ષા ન દીયતે । યસ્તુ જ્ઞાનાતિશયવાન્ આચાર્ય એવં જાનાતિ—‘યન્ન પુનરેતસ્ય સ્થ્યાનર્દિનિદ્રોદયો ભવિષ્યતીતિ, તતઃ પારાશ્ચિકાર્હ પ્રાયશ્ચિત્તં કારયિત્વા તસ્મૈ દીક્ષાં દદાતિ । સંઘેન મિલિત્વા તસ્ય સાધુવેષાપહારે કૃતે પુનરાચાર્ય એવમુપદિશતિ—સ્થૂલપ્રાણાતિપાતવિરમણાદીનિ દેશ-વ્રતાનિ ગૃહાણ, તાનિ ચેત્ પ્રતિપત્તું ન સમર્થસ્તતો દર્શનં (સમ્યક્ત્વં) ગૃહાણ । અથૈવમુક્તોઽપિ

ગુરુમહારાજ ઇસ પ્રકાર કહે—“સોમ્ય! તુમ સાધુવેષ છોડ દો, ક્યોં કિ તુમ મેં ચારિત્ર કા અભાવ હૈ । ગુરુ સે ઇસ પ્રકાર સરલ ભાવ સે કહે જાને પર યદિ વહ સાધુવેષ કા પરિ-ત્યાગ કર દે તો અચ્છા હૈ; નહીં તો સંઘ મિલકર ઉસકા સાધુવેષ છીન લે, અકેલે નહીં; ક્યોં કિ સાધુવેષ છીને જાને કે સમય ઉસ સાધુ કો દ્વેષ ઉત્પન્ન હોગા, ઓર દ્વેષયુક્ત વહ સાધુ મનુષ્ય કી હિંસા મી કર સકતા હૈ । એસે સાધુ કો ફિર સે દીક્ષા નહીં દી જાતી હૈ । યદિ અતિશયજ્ઞાની ગુરુ કો એસા અનુભવ હો કિ યહ પ્રકૃતિભદ્રક હૈ, ઇસે અબ સ્થ્યાનર્દિનિદ્રા આદિ નહીં હોગી, તો ગુરુ ઉસ સાધુ કો પારાશ્ચિકાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત દેકર ફિર સે દીક્ષા દેં । સંઘ મિલકર ઉસ સાધુ કા જબ વેષ છીન લે, તબ ગુરુ મહારાજ સ્થ્યાનર્દિ-નિદ્રાવાન્ પ્રમત્તપારાશ્ચિક સાધુ કો ઇસ પ્રકાર ઉપદેશ દેં—આજ સે તુમ સ્થૂલપ્રાણાતિપાત-વિરમણરૂપ શ્રાવક ધર્મ કો સ્વીકાર કરો । યદિ તુમ ઇસકા આચરણ કરને મેં અસમર્થ હો તો તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ કો સ્વીકાર કરો । ઇસ પ્રકાર ઉપદેશ દેને પર મી યદિ

હોય છે. એવા સાધુને ગુરુમહારાજ આ પ્રમાણે કહે—“ સૌમ્ય ! તું સાધુવેષ છોડી દે, કેમકે તારામાં ચારિત્રનો અભાવ છે. ગુરુ તરફથી આ પ્રકારે સરલ ભાવે કહેવામાં આવતાં જો તે સાધુવેષનો પરિત્યાગ કરી દે તો સારું છે, નહિ તો સંઘે મળીને તેનો સાધુવેષ છીનવી લેવો, એકલાએ નહિ. કેમકે સાધુવેષ છીનવી લેતી વખતે તે સાધુને દ્વેષ ઉત્પન્ન થશે, અને દ્વેષવાળો તે સાધુ મનુષ્યની હિંસા પણ કરી શકે છે. એવા સાધુને ફરીને દીક્ષા દેવાતી નથી. જો અતિશય જ્ઞાનવાન્ ગુરુને એવો અનુભવ થાય કે આ પ્રકૃતિભદ્રક છે, હવે એને સ્થ્યાનર્દિનિદ્રા આદિ નહિ થાય તો ગુરુ તે સાધુને પારાશ્ચિકાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત દઈને ફરીને દીક્ષા આપે. સંઘ મળીને તે સાધુનો બ્યારે વેષ છીનવી લે ત્યારે ગુરુમહારાજ સ્થ્યાનર્દિનિદ્રાવાન્ પ્રમત્તપારાશ્ચિક સાધુને આ પ્રકારે ઉપદેશ આપે—આજથી તું સ્થૂલપ્રાણાતિપાતવિરમણરૂપ શ્રાવક ધર્મનો સ્વીકાર કર. જો તું તેનું આચરણ કરવામાં અસમર્થ હોય તો તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વનો સ્વીકાર કર. આ પ્રકારે ઉપદેશ દેવા છતાં પણ

શ્રાવકત્વં સમ્યક્ત્વં વા નેચ્છતિ, તદા તસ્ય સહવાસો વર્જનીયઃ ।

અથાઽન્યોન્યકુર્વાણપારાશ્ચિક ઉચ્યતે—મુખપાયુભ્યાં મૈથુની અન્યોન્યકુર્વાણપારાશ્ચિકઃ । સ પુનર્ન દીક્ષણીયઃ । યદિ તુ અતિશયજ્ઞાની આચાર્યઃ—‘અયં ન પુનરેવં કરિષ્યતિ’ ઇતિ જાનાતિ, તદા પારાશ્ચિકાર્હં તપઃ કારયિત્વા પુનસ્તસ્મૈ દીક્ષા પ્રદેયા ।

વિષયદુષ્ટોઽનુપરત એવ લિજ્જતઃ પારાશ્ચિકઃ ક્રિયતે । યસ્તુ વિષયદુષ્ટ ઉપરતઃ સ ઉપાશ્રયાદિક્ષેત્રત એવ પારાશ્ચિકઃ ક્રિયતે, ન તુ લિજ્જતઃ । શેષાઃ કષાયદુષ્ટપ્રમત્તાન્યોન્યકુર્વાણા નિયમાલિજ્જપારાશ્ચિકાઃ ક્રિયન્તે ।

વહ શ્રાવકત્વ અથવા સમ્યક્ત્વ કો સ્વીકાર કરના નહીં યાહે, તબ સંઘ ઉસકા સહવાસ કમી મી નહીં કરે, સર્વદા કે લિયે ઉસકા બહિષ્કાર કર દે ।

અબ અન્યોઽન્યકુર્વાણ પારાશ્ચિક કહતે હૈં—જો સાધુ મુખમૈથુની ઓર ગુદા-
મૈથુની હો, વહ ‘અન્યોઽન્યકુર્વાણ પારાશ્ચિક’ હૈ । એસે સાધુ કો ફિર સે દીક્ષા નહીં દી જાતી હૈ । યદિ અતિશયજ્ઞાની ગુરુ મહારાજ કો એસા અનુભવ હો કિ—યહ ફિર એસા નહીં કરેગા, તબ વે ઉસસે પારાશ્ચિકાર્હં તપ કરા કર ફિર સે ઉસે દીક્ષા દે ।

વિષયદુષ્ટ સાધુ યદિ અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત નહીં હોતા હૈ તો વહ લિજ્જપારાશ્ચિક હોતા હૈ, અર્થાત્ ઉસકા સાધુવેષ લે લિયા જાતા હૈ, ઓર ઉસે ગચ્છ સે નિકાલ દિયા જાતા હૈ । જો વિષયદુષ્ટ સાધુ અપને દુષ્કર્મ સે નિવૃત્ત હો જાતા હૈ, વહ ઉપાશ્રયાદિ ક્ષેત્ર સે હી પારાશ્ચિક ક્રિયા જાતા હૈ, અર્થાત્ વહ અન્ય પ્રદેશ મેં મેજ દિયા જાતા હૈ, ઉસકા સાધુવેષ

જે તે શ્રાવકત્વ અથવા સમ્યક્ત્વનો સ્વીકાર કરવા ન યાહે તો સંઘ તેનો સહવાસ કદી પણ કરે નહિ, સર્વદા માટે તેનો બહિષ્કાર કરી દે.

હવે અન્યોઽન્યકુર્વાણ—પારાશ્ચિક કહે છે—જે સાધુ મુખમૈથુની અને ગુદા-
મૈથુની હોય તે ‘અન્યોઽન્યકુર્વાણ—પારાશ્ચિક’ છે. એવા સાધુને ફરીને દીક્ષા અપાતી નથી. જે અતિશયજ્ઞાની ગુરુમહારાજને એવો અનુભવ થાય કે આ ફરીને એવું નહિ કરે, તો તેઓ તેની પાસે પારાશ્ચિકાર્હં તપ કરાવીને ફરીને તેને દીક્ષા આપે.

વિષયદુષ્ટ સાધુ જે પોતાનાં દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત ન થાય તો તેને લિંગ-
પારાશ્ચિક કરાય છે, અર્થાત્ તેનો સાધુવેષ લઈ લેવાય છે, અને તેને ગચ્છથી કાઢી મૂકવામાં આવે છે. જે વિષયદુષ્ટ સાધુ પોતાના દુષ્કર્મથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તે ઉપાશ્રયાદિ ક્ષેત્રમાંથી જ પારાશ્ચિક કરાય છે, અર્થાત્ તેને બીજા પ્રદેશમાં મોકલવામાં આવે છે. તેનો સાધુવેષ લઈ લેવામાં આવતો નથી. વિષયદુષ્ટથી બુદ્ધા જે કષાયદુષ્ટ, પ્રમત્ત અને અન્યોઽન્યકુર્વાણ છે, એ ત્રણને નિયમપ્રમાણે લિંગપારાશ્ચિક કરવામાં આવે છે, અર્થાત્ તેમનો સાધુવેષ લઈ લેવાય છે.

यस्तु साधुः कर्मदोषात् पाराश्रिकापत्तियोग्यात् उत्कृष्टमपराधपदं प्राप्तः, स यदि भद्रकः 'पुनरेवं न करिष्यामी'—ति व्यवसितस्तदा स तपःपाराश्रिकः—अर्थात् तपःसमाराधन-तत्परः पाराश्रिकः क्रियते । तस्य तपःकरणयोग्यता यथा भवति तदुच्यते—वज्रऋषभनाराचं संहननं, वज्रकुडचसमानं वीर्यं, सागरवद्गम्भीरता, मेरुवद्भीरता, आगमज्ञानं—जघन्येन नवम-पूर्वान्तर्गतमाचाराख्यं तृतीयं वस्तु, उत्कर्षतो दशमपूर्वं संपूर्णं, तच्च सूत्रतोऽर्थतश्च यदि परिचितं भवति । एतैः संहननादिभिः सम्पन्नः, तथा सिंहविक्रीडितादितपःकर्मभावितः, इन्द्रिय-कषायाणां निग्रहे समर्थः, प्रवचनरहस्यार्थज्ञानसम्पन्नश्च, तथा गच्छान्निःसारितस्यापि यस्य

नहीं छीना जाता है । विषयदुष्ट से भिन्न जो कषायदुष्ट, प्रमत्त और अन्योऽन्यकुर्वाण हैं, ये तीन नियमतः लिङ्गपाराश्रिक किये जाते हैं, अर्थात् इनका साधुवेष ले लिया जाता है ।

जिस दुष्कर्म से साधु पाराश्रिक होता है, उस दुष्कर्म के कारण जो साधु उत्कृष्ट अपराधी हो गया हो, वह साधु यदि भद्रक हो और वह ऐसा नियम करे कि "मैं अब फिर कभी भी ऐसा नहीं करूँगा" तब वह साधु तपःपाराश्रिक किया जाता है, अर्थात् उससे पाराश्रिक तप कराया जाता है । पाराश्रिक तप करने की योग्यता जैसे होती है सो कहते हैं—जो साधु वज्र-ऋषभ-नाराच-संहननवाला हो, वज्र की भीत के समान दृढ़ जिसका वीर्य=परा-क्रम हो, समुद्र के समान जिसमें गाम्भीर्य हो, मेरु के समान जिसमें धीरता हो, तथा जो आगम को जानने वाला हो अर्थात् जघन्य से नवमपूर्वान्तर्गत आचाराख्य तृतीय वस्तु को, उत्कृष्ट से सम्पूर्ण दशम पूर्व को सूत्र से और अर्थ से जानने वाला हो, सिंहविक्रीडित आदि तप कर चुका हो, इन्द्रिय और कषायों के निग्रह करने में समर्थ हो, प्रवचन के गूढार्थ को जानने वाला हो, गच्छ से निकाले जाने पर भी जिसके मनमें 'मैं गच्छ से निकाला

जे दुष्कर्मथी साधु पाराश्रिक थाय छे ते दुष्कर्मना कारणे जे साधु उत्कृष्ट अपराधी थये। होय ते साधु जे प्रकृतिलद्रक होय अने जे ते अेवी प्रतिज्ञा करे के 'हुं हुवे इरीने कही आवुं नहि कइं' ते। ते साधु तपःपाराश्रिक कराय छे, अर्थात् तेनी पासे पाराश्रिक तप कराववाभां आवे छे। पाराश्रिक तप करवानी योग्यता केवी होय ते कहे छे—जे साधु वज्रऋषभनाराच-संहननवाणा होय, वज्रनी भीतना जेवा दृढ़ जेनुं वीर्य-पराक्रम होय, समुद्रनी जेम जेनाभां गाम्भीर्य होय, मेरुनी पेठे जेनाभां धीरता होय, तथा जे आगमने ज्ञातुवावाणा होय अर्थात् जघन्यथी नवमपूर्वगत आचाराख्य त्रीण वस्तुने, उत्कृष्टथी संपूर्ण दशम पूर्वने सूत्रथी तथा अर्थथी ज्ञातु-नारा होय, सिंहविक्रीडित आदि तप करी चुक्या होय, इन्द्रिय अने कषायेना निग्रह करवामां समर्थ होय, प्रवचनना गूढार्थने ज्ञातुवावाणा होय, गच्छ-

સે કિં તં વિણે ? વિણે સત્તવિહે પળ્લત્તે, તં જહા-

અહં ગચ્છાન્નિઃસારિતોઽસ્મીત્યશુભો ભાવઃ સ્વપ્તરોઽપિ ન વિદ્યતે સ એવંવિધગુણસમ્પન્ન એવ પારાશ્ચિકં પ્રાયશ્ચિત્તં કર્તુમર્હતિ । યસ્ત્વેતદ્ગુણરહિતસ્તસ્ય પારાશ્ચિકાપત્તિં પ્રાપ્તસ્ય મૂલમેવ પ્રાયશ્ચિત્તં ભવતિ ।

આશાતનાપારાશ્ચિકો જઘન્યેન ષમ્માસાન્, ઉત્કર્ષતશ્ચ દ્વાદશ માસાન્ ભવતિ, એતાવન્તં કાલં ગચ્છાન્નિર્યૂઢ (નિષ્કાશિત) સ્તિષ્ઠતિ । પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિકો જઘન્યેન મંવત્સરમુત્કર્ષતો દ્વાદશ વર્ષાણિ નિર્યૂઢ આસ્તે । વિસ્તરસ્તુ—અન્યત્ર દ્રષ્ટવ્યઃ । ‘ સે તં પાયચ્છિત્તે ’ તદેત-પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ।

‘ સે કિં તં વિણે ’ અથ કોઽસૌ વિનયઃ ? વિનયઃ કિંસ્વરૂપ ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘વિણે’ વિનયઃ—વિનયતિ—અપનયતિ અષ્ટવિધકર્માર્ણીતિ વિનયઃ=અમ્યુધ્યાનવન્દન-ગયા હું’ યહ અશુભ ભાવ અણુમાત્ર મી ન હો, ઇસ પ્રકાર કે ગુણોં સે યુક્ત હી સાધુ પારા-શ્ચિક પ્રાયશ્ચિત્ત કા અધિકારી હૈ । જો સાધુ ઇન ગુણોં સે રહિત હૈ, ડસસે પારાશ્ચિકાહ પ્રાયશ્ચિત્ત યોગ્ય અપરાધ હો ગયા હૈ, ડસકો મૂલાર્હ પ્રાયશ્ચિત્ત હી દિયા જાતા હૈ ।

આશાતનાપારાશ્ચિક સાધુ જઘન્ય સે છ માસ તક ઓર ઉત્કર્ષ સે બારહ માસ-તક ગચ્છ સે બહિષ્કૃત રહતા હૈ । પ્રતિસેવનાપારાશ્ચિક સાધુ જઘન્ય સે ણક વર્ષ ઓર ઉત્કર્ષ સે બારહ વર્ષ ગચ્છ સે બહિષ્કૃત રહતા હૈ । ઇસકા વિસ્તૃત વર્ણન અન્યત્ર દેઘના ચાહિયે । (સે તં પાયચ્છિત્તે) યે દસ પ્રકાર કે પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

(સે કિં તં વિણે) વિનય કા ક્યા સ્વરૂપ હૈ? (વિણે સત્તવિહે પળ્લત્તે) વિનય સાત પ્રકાર કા હૈ । જો અષ્ટવિધ કર્મોં કો દૂર કરતા હૈ, વહ વિનય હૈ ।

માંથી કાઢેલા છતાં પણ જેના મનમાં ‘ હું ગચ્છથી બહિષ્કાર પામેલો છું ’ એ અશુભ ભાવ અણુમાત્ર પણ ન હોય, એ પ્રકારના ગુણોવાળો જ સાધુ પારાશ્ચિક પ્રાયશ્ચિત્તનો અધિકારી છે. જે સાધુ એ ગુણોથી રહિત છે તેનાથી પારાશ્ચિકાહ પ્રાયશ્ચિત્ત યોગ્ય અપરાધ થઈ ગયો હોય તો તેને મૂલાર્હ પ્રાય-શ્ચિત્ત જ અપાય છે. આશાતનાપારાશ્ચિક સાધુ જઘન્યથી છ માસ સુધી અને ઉત્કર્ષથી બાર માસ સુધી ગચ્છથી બહિષ્કૃત રહે છે. પ્રતિસેવના-પારાશ્ચિક સાધુ જઘન્યથી એક વર્ષ અને ઉત્કર્ષથી બાર વર્ષ સુધી ગચ્છથી બહિષ્કૃત રહે છે. તેનું વિસ્તૃત વર્ણન બીજેથી જોઈ લેવું જોઈએ. (સે તં પાયચ્છિત્તે) આ દશ પ્રકારનાં પ્રાયશ્ચિત્ત છે. (સૂ. ૩૦)

(સે કિં તં વિણે) વિનય તપનું સ્વરૂપ શું છે? ઉત્તર—(વિણે સત્તવિહે પળ્લત્તે) તે સાત

ળાણવિણે ૧, દંસણવિણે ૨, ચરિત્તવિણે ૩, મળવિણે ૪, વચવિણે ૫, કાયવિણે ૬, લોગોવચારવિણે ૭ । સે કિં તં ણાણવિણે ? ણાણવિણે પંચવિહે પળ્લત્તે, તં જહા- આભિણિ- બોહિયણાણવિણે ૧, સુચણાણવિણે ૨, ઓહિણાણવિણે ૩,

મક્ત્યાદિરૂપઃ, સ 'સત્તવિહે પળ્લત્તે' સત્તવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ । 'તં જહા' તદ્વથા—૧—'ળાણવિણે' જ્ઞાનવિનયઃ, ૨—'દંસણવિણે' દર્શનવિનયઃ, ૩—'ચરિત્તવિણે' ચારિત્રવિનયઃ, ૪ 'મળોવિણે' મનોવિનયઃ, ૫—'વચવિણે' વાગ્વિનયઃ, ૬ 'કાયવિણે' કાયવિનયઃ, ૭—'લોગોવચારવિણે' લોકોપચારવિનયઃ । એવ સત્તવિધોઽપિ વિનયઃ ક્રમેણ સ્વરૂપતો ભેદતઃશ્ચ નિરૂપ્યતે—'સે કિં તં ણાણવિણે' અથ કોઽસૌ જ્ઞાનવિનયઃ ? ઉત્તરમાહ—'ળાણવિણે' જ્ઞાનવિનયઃ 'પંચવિહે પળ્લત્તે' પચ્ચવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ, 'તં જહા' તદ્વથા—તત્પચ્ચવિધત્વં દર્શયતિ—'આભિણિબોહિયણાણવિણે' આભિનિબોધિકજ્ઞાનવિનયઃ, 'સુચણાણ-

યહ વિનય ગુરુ આદિ કે આને પર યજ્ઞે હો જાના, તથા વંદના, શુશ્રૂષા, મક્તિ આદિ કરના, ઇસ રૂપ સે શાસ્ત્રોં મેં પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈ । (તં જહા) વિનય કે સાત પ્રકાર યે હૈ—(ળાણવિણે, દંસણવિણે, ચરિત્તવિણે, મળવિણે, વચવિણે, કાયવિણે, લોગોવચારવિણે) જ્ઞાનવિનય, દર્શનવિનય, ચારિત્રવિનય, મનોવિનય, વચનવિનય, કાયવિનય, ઓર લોકોપચારવિનય । અવ યથાક્રમ ઇન્કે સ્વરૂપ ઓર ભેદોં કા વર્ણન સૂત્રકાર કરતે હૈ—(સે કિં તં ણાણવિણે) વહ જ્ઞાનવિનય ક્યા હૈ ? અર્થાત્ જિસમેં જ્ઞાન કા વિનય કિયા જાતા હૈ ઇસા વહ જ્ઞાનવિનય કિતને પ્રકાર કા હૈ, (ળાણવિણે પંચવિહે પળ્લત્તે) જ્ઞાનવિનય પાંચ પ્રકાર કા કહા હૈ । (તં જહા) વે પાંચ પ્રકાર યે હૈ—(આભિણિબોહિયણાણવિણે, સુચ-

પ્રકારનાં છે. જે આઠ જ્ઞાનનાં કર્મોને દૂર કરે છે તે વિનય છે. આ વિનય તપ, શુરુ આદિ પધારતાં ઉભા થઈ જવું, તથા વંદના શુશ્રૂષા આદિ કરવાં, એ રૂપે શાસ્ત્રોમાં પ્રતિપાદન કર્યું છે. (તં જહા) વિનય તપના તે સાત પ્રકાર આ છે—(ળાણવિણે દંસણવિણે ચરિત્તવિણે મળવિણે વચવિણે કાયવિણે લોગોવચારવિણે) ૧ જ્ઞાનવિનય, ૨ દર્શનવિનય, ૩ ચારિત્રવિનય, ૪ મનોવિનય, ૫ વચનવિનય, ૬ કાયવિનય, અને ૭ લોકોપચારવિનય. હવે તેનું ક્રમવાર સ્વરૂપ તથા પ્રકારોનું વર્ણન સૂત્રકાર કરે છે—(સે કિં તં ણાણવિણે) તે જ્ઞાનવિનય શું છે ? અર્થાત્ જેમાં જ્ઞાનનો વિનય કરાય છે એવો તે જ્ઞાનવિનય કેટલા પ્રકારનો છે ? (ળાણવિણે પંચવિહે પળ્લત્તે) જ્ઞાનવિનય પાંચ પ્રકારનો કહેલો છે. (તં જહા) તે પાંચ પ્રકાર આ છે—(આભિણિબોહિયણાણવિણે, સુચણાણવિણે, ઓહિણાણવિણે,

મળપજ્જવણાણવિણ ૪, કેવલણાણવિણ ૫ । સે કિં તં દંસણ-
વિણ ? દંસણવિણ દુવિહે પળ્લત્તે, તં જહા-સુસ્સૂસણાવિણ ૧,
અણચ્ચાસાયણાવિણ ૨ । સે કિં તં સુસ્સૂસણાવિણ ? સુસ્સૂ-

વિણ ' શ્રુતજ્ઞાનવિનયઃ, 'ઓહિણાણવિણ' અવધિજ્ઞાનવિનયઃ 'મળપજ્જવણાણ-
વિણ' મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનયઃ, 'કેવલણાણવિણ' કેવલજ્ઞાનવિનયઃ । અથ દર્શનવિનયં
પૃચ્છતિ—'સે કિં તં દંસણવિણ' અથ કોઽસૌ દર્શનવિનયઃ ? 'દંસણવિણ' દર્શન-
વિનયઃ—દર્શનમોહનીયક્ષયાદિજનિતસ્તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ આત્મપરિણામો દર્શનં, તત્સમ્બન્ધી વિનયઃ
દર્શનવિનયઃ, સ 'દુવિહે પળ્લત્તે' દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ, દ્વૈવિધ્યં દર્શયતિ—'તં જહા' તથા—
'સુસ્સૂસણાવિણ' શુશ્રૂષણાવિનયઃ—વિધિવત્સામીપ્યેન ગુર્વાદેઃ સેવનં શુશ્રૂષણા, તદ્રૂપો
વિનયઃ । 'અણચ્ચાસાયણાવિણ' અનત્યાશાતનાવિનયઃ — 'અતિ=અર્તાવ, આયઃ=
સમ્યક્ત્વાદિલાભઃ—અત્યાયઃ, તસ્ય શાતના=ધ્વંસના—અત્યાશાતના, તન્નિષેધરૂપો વિનયોઽનત્યા-
શાતનાવિનયઃ, ગુર્વાદેરવર્ણવાદાદિનિવારણમ્ । પૃષ્ઠોદરાદિત્વાત્સિદ્ધિઃ ।

ણાણવિણ, ઓહિણાણવિણ મળપજ્જવણાણવિણ કેવલણાણવિણ) આભિનિબોધિક-
જ્ઞાનવિનય, શ્રુતજ્ઞાનવિનય, અવધિજ્ઞાનવિનય, મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનય, એવં કેવલજ્ઞાનવિનય ।
(સે કિં તં દંસણવિણ) દર્શનવિનય કિતને પ્રકાર કા હૈ ? (દંસણવિણ
દુવિહે પળ્લત્તે) દર્શનવિનય દો પ્રકાર કા હૈ । (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—(સુસ્સૂસણા-
વિણ અણચ્ચાસાયણાવિણ) પહલા—શુશ્રૂષાવિનય—ગુરુ આદિ કે સમીપ રહ કર વિધિ-
પૂર્વક સેવા કરના । દૂસરા—અનત્યાશાતનાવિનય—સમ્યક્ત્વાદિક કે લાભ કો જો નષ્ટ કરતા
હૈ વહ અત્યાશાતના હૈ, ઇસકા નિષેધરૂપ જો વિનય હૈ વહ અનત્યાશાતનાવિનય હૈ । ગુરુ
આદિ કે અવર્ગવાદ કો દૂર કરના—નિવારણ કરના, ઇસકા નામ અનત્યાશાતનાવિનય હૈ ।

મળપજ્જવણાણવિણ, કેવલણાણવિણ) ૧ આભિનિબોધિકજ્ઞાનવિનય, ૨ શ્રુતજ્ઞાન
વિનય, ૩ અવધિજ્ઞાનવિનય, ૪ મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનય, ૫ કેવલજ્ઞાનવિનય.
પ્રશ્ન—(સે કિં તં દંસણવિણ) દર્શનવિનય કેટલા પ્રકારનો છે ? ઉત્તર—(દંસણ-
વિણ દુવિહે પળ્લત્તે) દર્શનવિનય બે પ્રકારનો છે, (તં જહા) તે આ પ્રકારે
છે—(સુસ્સૂસણાવિણ અણચ્ચાસાયણાવિણ) પહેલો—શુશ્રૂષાવિનય—ગુરુ આદિની
પાસે રહીને વિધિપૂર્વક સેવા કરવી; બીજો અનત્યાશાતનાવિનય—સમ્યક્ત્વ
આદિકના લાભનો જે નાશ કરે છે તે અત્યાશાતના છે, તેનો નિષેધરૂપ જે
વિનય છે તે અનત્યાશાતનાવિનય છે. ગુરુ આદિના અવર્ણવાદને દૂર કરવો—તેનું
નિવારણ કરવું તેનું નામ અનત્યાશાતનાવિનય છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં સુસ્સૂસણા-

સળાવિળા અળેગવિહે પળળત્તે; તં જહા-અબ્બુટ્ટાણે ઇ વા ૧,
આસળાભિગ્ગહે ઇ વા ૨, આસળપ્પદાણે ઇ વા ૩, સક્કારે ઇ વા ૪,
સમ્માણે ઇ વા ૫, કિઙ્કમ્મે ઇ વા ૬; અંજલિપ્પગ્ગહે ઇ વા ૭, એંત-

‘સે કિં તં સુસ્મૂસળાવિળા’ અથ કોઽસૌ શુશ્રૂષળાવિનયઃ :- ‘સુસ્મૂસળાવિળા’ શુશ્રૂષળાવિનયઃ ‘અળેગવિહે પળળત્તે’ અનંકવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ- ‘તં જહા’ તથા- ‘અબ્બુટ્ટાણે ઇ વા’ અમ્યુત્થાનમિતિ વા, ‘ઇતિ’ ‘વા’ ઇતિ પદદ્વયં વાક્યાલક્ષારે, એવમગ્રેઽપિ બોધ્યમ્ । અમ્યુત્થાનમ્- આચાર્યદિગતસ્ય અભિમુગ્ધમ્-રૂથાનમ્ અમ્યુત્થાનં-વિનયાઽર્હસ્ય દર્શનાદેવાઽસનત્યાગઃ । ૧। ‘આસળાભિગ્ગહે ઇ વા’ આસનાભિગ્રહ ઇતિ વા, આસનાભિગ્રહઃ-ગુર્વાદિર્યત્ર યત્રોપવેષ્ટુમિચ્છતિ તત્ર તત્રાઽસનપ્રાપ્તમ્ । ૨। ‘આસળપ્પદાણે ઇ વા’ આસનપ્રદાન મિતિ વા, ગુરૌ સમાગતે સતિ આસનદાનમ્ । ૩। ‘સક્કારે ઇ વા’ સત્કાર ઇતિ વા-વિનયાઽર્હસ્ય ગુર્વાદિઃ વન્દનાદિનાઽસરકરણં-સત્કારઃ । ૪। ‘સંમાણે ઇ વા’ સમ્માન ઇતિ વા, સંમાનો વા-ગુર્વાદિઃ આહારવસ્ત્રાદિપ્રશસ્ત-વસ્તુના નંમાનનમ્ । ૫। ‘કિઙ્કમ્મે ઇ વા’ કૃતિકર્મ ઇતિ વા-કૃતિકર્મ-યથાવિધિ વન્દનમ્ । ૬।

(સે કિં તં સુસ્મૂસળાવિળા) શુશ્રૂષળાવિનય કિતને પ્રકાર કા-હે ? (સુસ્મૂસળાવિળા અળે-ગવિહે પળળત્તે) શુશ્રૂષળાવિનય અનંક પ્રકાર કા-હે : (તં જહા) જૈસે-(અબ્બુટ્ટાણે ઇ વા) આયે હુણ આચાર્ય આદિ કે આને પર ચ્ઢે હોના । વિનય કે યોગ્ય સાધુજન કો દેખતે હી આસન કા પરિત્યાગ કરના (૧) । (આસળાભિગ્ગહે ઇ વા) ગુર્વાદિક જહાં ૨ બૈઠના ચાહેં વહાં ૨ આસન લેકર ઉપસ્થિત રહના, અથવા આસન પહુંચાના (૨) । (આસળપ્પદાણે ઇ વા) ગુરુકે આને પર આસન પ્રદાન કરના (૩) (સક્કારે ઇ વા) વિનયયોગ્ય ગુર્વાદિક કા વન્દના આદિ દ્વારા સત્કાર કરના (૪) । (સંમાણે ઇ વા) ગુર્વાદિકોં કા આહાર, વસ્ત્રાદિક પ્રશસ્તવસ્તુઓં દ્વારા સંમાન કરના (૫) । (કિઙ્કમ્મે ઇ વા) યથાવિધિ વન્દના કરના યહ કૃતિકર્મ હૈ, અર્થાત્-ગુર્વા-

વિળા) શુશ્રૂષળાવિનય કેટલા પ્રકારનો છે ? (સુસ્મૂસળાવિળા અળેગવિહે પળળત્તે) શુશ્રૂષળાવિનય અનંક પ્રકારનો છે, (તં જહા) જેમ કે-(અબ્બુ-ટ્ટાણે ઇ વા) અહીં “ઇ” “વા” એ બે શબ્દો વાક્યાલક્ષારમાં વપરાયા છે. પધા-રેલા આચાર્ય આદિની સામે જવું, વિનયને યોગ્ય સાધુજનોને બેતાં જ આસનનો પરિત્યાગ કરવો (૧). (આસળાભિગ્ગહે ઇ વા) શુરુ આદિક જ્યાં જ્યાં બેસવા ચાહે ત્યાં ત્યાં આસન લઈને હાજર રહેવું, અથવા આસન પહોંચાડવું (૨). (આસળપ્પ-દાણે ઇ વા) શુરુ આવે ત્યારે આસન પ્રદાન કરવું (૩). (સક્કારે ઇ વા) વિનય યોગ્ય શુરુ આદિકનો વન્દના આદિ દ્વારા સત્કાર કરવો (૪). (સંમાણે ઇ વા) શુરુ આદિકનું આહાર-વસ્ત્રાદિક પ્રશસ્ત વસ્તુઓથી સન્માન કરવું (૫). (કિઙ્ક-

સ્સ અણુગચ્છળયા ૮, ઠિયસ્સ પજ્જુવાસળયા ૯, ગચ્છંતસ્સ પડિ-
સંસાહળયા ૧૦, સે તં સુસ્સૂસળાવિળણ ૧. સે કિં તં અળચ્ચાસાય-
ળાવિળણ ? અળચ્ચાસાયળાવિળણ પળયાલીસવિહે પળ્લત્તે; તં જહા-
અરહંતાણં અળચ્ચાસાયળયા ૧, અરહંતપળ્લત્તસ્સ ધમ્મસ્સ અળ-

‘અંજલિપ્પગ્ગહે ઇ વા’ અંજલિપ્રગ્રહ इति वा—અંજલિપ્રગ્રહઃ=ગુરુસંમુખે અંજલીકર-
ણમ્ । ૭। ‘એંતસ્સ અણુગચ્છળયા’ આગચ્છતોડનુગમનતા—ગુર્વાદિકમ્ આયાન્તં પ્રતિ સંમુખે
ગમનમ્ । ૮। ‘ઠિયસ્સ પજ્જુવાસળયા’ સ્થિતસ્ય પર્યુપાસનતા—ઉપવિષ્ટસ્ય ગુર્વાદિરિચ્છાનુ-
કૂલસેવા । ૯। ‘ગચ્છંતસ્સ પડિસંસાહળયા’ ગચ્છતઃ પ્રતિસંસાધનતા=ગચ્છતો ગુર્વાદિઃ
પશ્ચાદ્ ગમનશીલતા । ૧૦। ‘સે તં સુસ્સૂસળાવિળણ’ સ એષ શુશ્રૂષળાવિનયઃ । અનત્યાશા-
તનાં પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં અળચ્ચાસાયળાવિળણ’ અથ કોડસૌ અનત્યાશાતનાવિનયઃ ?
‘અળચ્ચાસાયળાવિળણ’ અનત્યાશાતનાવિનયઃ—‘પળયાલીસવિહે પળ્લત્તે’ પચ્ચત્વારિં-
શદ્વિધઃ પ્રજ્ઞતઃ । ‘તં જહા’ તદ્વથા—‘અરહંતાણં અળચ્ચાસાયળયા’ અર્હતામનત્યાશાતનતા—

દિકોં કી સવિધિ વંદના કરના (૬) । (અંજલિપ્પગ્ગહે ઇ વા) ગુરુ કે સન્મુખ બોનોં હાથ
જોડના (૭) । (એંતસ્સ અણુગચ્છળયા) ગુર્વાદિક આ રહે હોં તો અનેક સન્મુખ જાના
(૮) । (ઠિયસ્સ પજ્જુવાસળયા) જબ વે બેઠે હોં તો અનેકી ઇચ્છાનુકૂલ સેવા કરના
(૯) । (ગચ્છંતસ્સ પડિસંસાહળયા) જબ વે જાને લંગેં તો અનેક પીછે ર ચડના (૧૦) ।
(સે તં સુસ્સૂસળાવિળણ) યહ સબ શુશ્રૂષળાવિનય હૈ । (સે કિં તં અળચ્ચાસાયળાવિ-
ળણ) અનત્યાશાતનાવિનય કિતને પ્રકાર કા હૈ ? (અળચ્ચાસાયળાવિળણ પળયા-
લીસવિહે પળ્લત્તે) અનત્યાશાતનાવિનય પૈંતાલીસ પ્રકાર કા હૈ; (તં જહા) વે પ્રકાર
યે હૈ—(અરહંતાણં અળચ્ચાસાયળયા) અર્હંત ભગવાન્ કા અવર્ણવાદ આદિ નહીં કરના (૧),

મ્મે ઇ વા) યથાવિધિ વંદના કરવી એ કૃતિકર્મ છે, અર્થાત્ ગુરુ આદિકોની સવિધિ
વંદના કરવી (૬). (અંજલિપ્પગ્ગહે ઇ વા) ગુરુની સામે બંને હાથ જોડવા (૭).
(એંતસ્સ અણુગચ્છળયા) ગુરુ આદિ પધારતા હોય ત્યારે તેમની સામે જવું (૮).
(ઠિયસ્સ પજ્જુવાસળયા) જ્યારે તેઓ બેઠા હોય ત્યારે તેમની ઇચ્છાને અનુકૂળ
સેવા કરવી (૯). (ગચ્છંતસ્સ પડિસંસાહળયા) જ્યારે તેઓ જવા લાગે ત્યારે તેમની
પાછળ પાછળ ચાલવું (૧૦). (સે તં સુસ્સૂસળાવિળણ) એ બધા શુશ્રૂષળાવિનય છે.
પ્રશ્ન—(સે કિં તં અળચ્ચાસાયળાવિળણ) અનત્યાશાતનાવિનય કેટલા પ્રકારનો છે ?
ઉત્તર—(અળચ્ચાસાયળાવિળણ પળયાલીસવિહે પળ્લત્તે) અનત્યાશાતના વિનય પિસતા-
લીસ પ્રકારનો છે, (તં જહા) તે પ્રકાર આ છે—(અરહંતાણં અળચ્ચાસાયળયા): અર્હંત

च्चासायणया २, आयरियाणं अणच्चासायणया ३, एवं उवज्झा-
याणं ४, थेराणं ५, कुलस्स ६, गणस्स ७, संघस्स ८, किरि-
याणं ९, संभोगस्स १०, आभिणिबोहियणाणस्स ११, सुयणाणस्स

अर्हद्भगवतामवर्णवादादिनिवारणम् । १। 'अरहंतपणत्तस्स धम्मस्स अणच्चासायणया' अर्हत्प्रज्ञप्तस्य धर्मस्य अनत्याशातनता—सर्वज्ञकथितधर्मस्याऽवर्णवादादिनिवारणम् । २। 'आय-
रियाणं अणच्चासायणया' आचार्याणामनत्याशातनता । ३। एवम्—'उवज्झायाणं' उपाध्या-
यानाम् । ४। 'थेराणं' स्थविराणाम् । ५। 'कुलस्स' कुलस्य—एकाचार्यसन्ततिरूपस्य समानाऽऽ-
चारसाधुसमूहस्य । ६। 'गणस्स' गणस्य—परस्परसापेक्षाऽनेककुलसाधुसमुदायस्य । ७। 'संघस्स'
संघस्य—सम्यग्दर्शनादियुक्तसाधुसाध्वीश्रावकश्राविकारूपस्य । ८। 'किरियाणं' क्रियाणाम्—ईर्या-
पथिकादीनाम् । ९। 'संभोगस्स' सम्भोगस्य—सम्=एकत्र भोगो=भोजनं—संभोगः—समानसामा-
चारी तथा साधूनां परस्परमुपव्यादिदानग्रहणन्यव्यवहारस्तस्य, एकसामाचारिकताया इत्यर्थः । १०।
'आभिणिबोहियणाणस्स' आभिनिबोधिकज्ञानस्य । ११। 'सुयणाणस्स' श्रुतज्ञानस्य । १२।

(अरहंतपणत्तस्स धम्मस्स अणच्चासायणया) अर्हत भगवान् द्वारा प्रज्ञप्त धर्मका
अवर्णवाद आदि नहीं करना (२), (आयरियाणं अणच्चासायणया) आचार्य महाराज का
अवर्णवाद नहीं करना (३), इसी तरह (उवज्झायाणं) उपाध्याय का (४), (थेराणं)
स्थविरो का (५), (कुलस्स) एक आचार्य के सन्ततिरूप समान आचार वाले साधुओं
के समूह का (६), (गणस्स) परस्पर सापेक्ष अनेककुलवाले साधुसंप्रदाय का (७), (संघ-
स्स) सम्यग्दर्शन आदि से युक्त साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकारूप संघ का (८), (किरियाणं)
ईर्यापथिक आदि क्रियाओं का (९), (संभोगस्स) संभोग—एकसामाचारिकता का (१०),
(आभिणिबोहियणाणस्स) आभिनिबोधिक ज्ञान का (११), (सुयणाणस्स) श्रुतज्ञान का

भगवान्नेो अवर्णवाद् न ओलवो (१), (अरहंतपणत्तस्स धम्मस्स अणच्चासा-
यणया) अर्हंत भगवान् द्वारा प्रज्ञप्त धर्मनेो अवर्णवाद् न ओलवो (२), (आयरि-
याणं अणच्चासायणया) आचार्य महाराजनेो अवर्णवाद् न ओलवो (३), ओ रीते
(उवज्झायाणं) उपाध्यायोनेो (४), (थेराणं) स्थविरोनेो (५), (कुलस्स) ओक्क आचा-
र्येना संततिरूप समान आचारवाणा साधुओनेो समूहनेो (६), (गणस्स) परस्पर-
सापेक्ष अनेक्कुलवाणा साधुसंप्रदायनेो (७), (संघस्स) सम्यग्दर्शन आदिथी
युक्क साधु—साध्वी—श्रावक्—श्राविका इय संघनेो (८), (किरियाणं) ईर्यापथिक
आदि क्रियाओनेो (९), (संभोगस्स) संभोग—ओक्कसामाचारिकतानेो (१०),
(आभिणिबोहियणाणस्स) आभिनिबोधिक ज्ञाननेो (११), (सुयणाणस्स) श्रुतज्ञाननेो

૧૨, ઓહિણાણસ્સ ૧૩, મણપજ્જવણાણસ્સ ૧૪, કેવલણાણસ્સ
૧૫, એસિં ચેવ ભત્તિવહુમાણે ૩૦, એસિં ચેવ વણસંજલણયા
૪૫, સે તં અણચ્ચાસાયણાવિણે. સે કિં તં ચરિત્તવિણે?,

‘ઓહિણાણસ્સ’ અવધિજ્ઞાનસ્થ ૧૨૩। ‘મણપજ્જવણાણસ્સ’ મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્થ ૧૨૪।
‘કેવલણાણસ્સ’ કેવલજ્ઞાનસ્થ ૧૨૫। ‘એસિં ચેવ ભત્તિવહુમાણે’ એતેષાંચૈવ ભક્તિવહુ-
માનમ્—ભક્તિયુક્તં વહુમાનમ્ ‘અરહંતાણં’ ઇત્યાદિ ‘કેવલણાણસ્સ’ ઇતિ—પર્યન્તાનામનત્યા-
શાતનતા પચ્ચદશવિધાઃ પુનરેતેષામેવ અર્હદાદીનાં ભક્તિવહુમાનયોગે ત્રિંશદ્વિધત્વમ્ । પુનઃ—‘એ-
સિં ચેવ વણસંજલણયા’ એતેષામેવ વર્ણસંજ્વલનતા=સદ્ભૂતગુણોત્કર્તનતા, અત્રેદં
બોધ્યમ્—અનત્યાશાતનાવિનયો હિ પચ્ચચત્વારિંશદ્વિધઃ પ્રોક્તઃ; તત્ર—અર્હદાદિવિનયાઃ પચ્ચદશ,
અર્હદાદિભક્તિવહુમાનાનિ પચ્ચદશ, અર્હદાદીનાં વર્ણસંજ્વલનતાશ્ચ પચ્ચદશ, તદિત્યમનત્યાશા-
તનાવિનયઃ પચ્ચચત્વારિંશદ્વિધઃ ઇતિ । ઉપત્તંહરન્નાહ—‘સે તં અણચ્ચાસાયણાવિણે’ સ એષોઽ
નત્યાશાતનાવિનયઃ । ઇતિ । ‘સે કિં તં ચરિત્તવિણે ?’ અથ કોસૌ ચારિત્ર-

(૧૨), (ઓહિણાણસ્સ) અવધિજ્ઞાન કા (૧૩), (મણપજ્જવણાણસ્સ) મનઃપર્યવજ્ઞાન
કા (૧૪) ઓર (કેવલણાણસ્સ) કેવલજ્ઞાન કા અવર્ણવાદ નહીં કરના (૧૫) । (એસિં
ચેવ ભત્તિવહુમાણે) તથા ઇન્હીં પંદ્રહ ભેદોં કા ભક્તિપૂર્વક વહુમાન કરના । ઇસ પ્રકાર
ઇન પંદ્રહ ભેદોં કો ભક્તિવહુમાન કે સાથ દ્વિગુણિત કરને સે તીસ ભેદ હો જાતે હૈં ।
પુનઃ (એસિં ચેવ વણસંજલણયા) ઇન્હીં કે સદ્ભૂત ગુણોં કા ઉત્કર્તન કરના । ઇસ
તરહ તીસ મેં પંદ્રહ વર્ણસંજ્વલનતા મિલાને સં પૈંતાલીસ ભેદ અનત્યાશાતનાવિનય કે હોતે હૈં ।
ઇસ પ્રકાર (સે તં અણચ્ચાસાયણાવિણે) યહ સવ અનત્યાશાતનાવિનય હૈ ।
પ્રશ્ન—(સે કિં તં ચરિત્તવિણે) ચારિત્રવિનય કિતને પ્રકાર કા હૈ ? ઉત્તર—(ચરિત્ત-

(૧૨), (ઓહિણાણસ્સ) અવધિજ્ઞાનને । (૧૩), (મણપજ્જવણાણસ્સ) મનઃપર્યવજ્ઞાનને ।
(૧૪), અને (કેવલણાણસ્સ) કેવલજ્ઞાનને । અવર્ણવાદ ન બોલવો । (૧૫). (એસિં ચેવ
ભત્તિવહુમાણે) તથા આ બે પંદર પ્રકારોનું ભક્તિપૂર્વક બહુમાન કરવાં. એ પ્રકારે
પંદર પ્રકારના ભક્તિબહુમાનની સાથે બમણા કરવાથી તીસ પ્રકાર થઈ
જાય છે. વળી (એસિં ચેવ વણસંજલણયા) તેમના સદ્ભૂત ગુણોનું ઉત્કર્તન
કરવું. એ રીતે તીસ માં પંદર વર્ણસંજ્વલનતા મેળવવાથી પિંચતાલીસ પ્રકાર
અનત્યાશાતનાવિનયના થાય છે. (સે તં અણચ્ચાસાયણાવિણે) આ પ્રકારે એ બધા
અનત્યાશાતનાવિનય છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં ચરિત્તવિણે) ચારિત્રવિનય—કેટલા
પ્રકારનો છે ? ઉત્તર—(ચરિત્તવિણે પંચવિદે પણ્ણત્તે) ચારિત્રવિનય પાંચ પ્રકારનો

ચરિત્તવિણે પંચવિહે પળ્લત્તે; તં જહા—સામાઙ્યચરિત્તવિણે ૧,

વિનયઃ?—અનેકજન્મસશ્ચિતાઽષ્ટવિધકર્મસશ્ચયસ્ય ક્ષયાય ચરણં ચારિત્રં—સર્વવિરતિલક્ષણમ્, તત્સમ્યન્ધી વિનયશ્ચારિત્રવિનયઃ, સ કતિવિધઃ ૬, इति प्रश्नः, उत्तरमाह—‘चरित्तविणए पंचविहे पणत्ते’ चारित्रविनयः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः ‘तं जहा’ तद्वथा—‘सामाङ्यचरित्तविणए’ सामायिकचारित्रविनयः—सर्वजीवेषु रागद्वेषविरहितो भावः समः, तस्य समस्य=प्रतिक्षणम-पूर्वापूर्वकर्मनिर्जगहेतुभूताया विशुद्धेरायो लाभः समायः, स एव सामायिकम्—सावधयोग-विरतिरूपम्, विनयादित्वात् स्वार्थे ठक्; तद्रूपं चारित्रं, तस्य विनयः—सामायिकचारित्रवि-

વિણે પંચવિહે પળ્લત્તે) અનેક જન્મ મેં ઉપાર્જિત આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કે ક્ષય કે લિયે જો આચરણ ક્રિયા જાય વહ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર હૈ । ઇસ ચારિત્ર કા વિનય કરના સો ચારિત્રવિનય હૈ । વહ પાંચ પ્રકાર કા હૈ । (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—(સામા-ઙ્યચરિત્તવિણે છેદોવદ્ધાવણિયચરિત્તવિણે પરિહારવિમુદ્ધિચરિત્તવિણે સુહુમ સંપરાયચરિત્તવિણે અહક્રવાયચરિત્તવિણે) સામાયિકરૂપ ચારિત્ર કા વિનય, છેદો-પસ્થાપનીયચારિત્ર કા વિનય, પરિહારવિશુદ્ધિચારિત્ર કા વિનય, સૂક્ષ્મસંપરાયચારિત્ર કા વિનય, એવં યથાખ્યાતચારિત્ર કા વિનય । સમસ્ત જીવોં મેં રાગ એવં દ્વેષ કી પરિણતિ કા પરિહાર કરના ઇસકા નામ “સમ” હૈ । પ્રતિક્ષણ અપૂર્વ અપૂર્વ કર્મનિર્જરા કે કારણ ઇસ સમરૂપ વિશુદ્ધિ કા આય=લાભ હોના ઇસકા નામ ‘સમાય’ હૈ । “સમાય” હી સામાયિક હૈ । યહ સામાયિક સર્વસાવધયોગવિરતિરૂપ હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇસ સર્વસાવધયોગવિરતિરૂપ સામાયિકચારિત્ર કા જો વિનય હૈ વહ સામાયિકચારિત્રવિનય હૈ ૧ । પૂર્વદીક્ષાપર્યાય કા છેદન

છે. અનેક જન્મમાં ઉપાર્જિત આઠ પ્રકારનાં કર્મોના ક્ષયને માટે જે આચરણ કરાય છે તે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર છે. (તં જહા) તે પ્રકાર આ છે—(સામાઙ્ય-ચરિત્તવિણે છેદોવદ્ધાવણિયચરિત્તવિણે પરિહારવિશુદ્ધિચરિત્તવિણે, સુહુમસંપરાય-ચરિત્તવિણે, અહક્રવાયચરિત્તવિણે) સામાયિકરૂપચારિત્રનો વિનય, છેદો-પસ્થાપનીયચારિત્રનો વિનય, પરિહારવિશુદ્ધિચારિત્રનો વિનય, સૂક્ષ્મસંપ-રાયચારિત્રનો વિનય, તેમ જ યથાખ્યાતચારિત્રનો વિનય. સમસ્ત જીવોમાં રાગ તેમજ દ્વેષની પરિણતિનો પરિહાર (ત્યાગ) કરવો તેનું નામ “સમ” છે. પ્રતિક્ષણે અપૂર્વ અપૂર્વ કર્મનિર્જરાના કારણભૂત આ સમરૂપ વિશુદ્ધિનો લાભ થવો તેનું નામ “આય” છે. સમ અને આય એ બંને પદોને મેળવવાથી ‘સમાય’ એવું પદ બની જાય છે. સમાય એ જ સામાયિક છે. આ સામાયિક સર્વસાવધયોગવિરતિરૂપ છે. આ પ્રકારે આ સર્વસાવધયોગવિરતિરૂપ

છેદોવદ્વાવણિયચરિત્તવિણ ૨, પરિહારવિશુદ્ધિચરિત્તવિણ ૩, સુદુમસંપરાયચરિત્તવિણ ૪, અહઃસ્વાયચરિત્તવિણ ૫, સે તે

નયઃ ।૧। ‘છેદોવદ્વાવણિયચરિત્તવિણ’ છેદોપસ્થાપનીયચારિત્રવિનયઃ—છેદેન=પૂર્વપર્યાય-
છેદેન ઉપસ્થાપ્યતે=આરોપ્યતે યન્મહાવ્રતલક્ષણં ચારિત્રં તચ્છેદોપસ્થાપનીયમ્; તચ્ચ તચ્ચા-
રિત્રં ચ, તત્સમ્બન્ધી વિનયઃ ।૨। ‘પરિહારવિશુદ્ધિચરિત્તવિણ’ પરિહારવિશુદ્ધિ-
ચારિત્રવિનયઃ—પરિહરણં—પરિહારસ્તપોવિશેષઃ, તેન કર્મનિર્જારૂપા વિશુદ્ધિર્યસ્મિન્ ચારિત્રે
તત્પરિહારવિશુદ્ધિ, તાદૃશં ચારિત્રં, તત્સમ્બન્ધી વિનયઃ ।૩। ‘સુદુમસંપરાયચરિત્તવિણ’
સૂક્ષ્મસંપરાયચારિત્રવિનયઃ—સમ્પર્યેતિ સંસારમનેનેતિ સમ્પરાયઃ=કષાયોદયઃ, સૂક્ષ્મો લોભાંશાવ-
શેષઃ સમ્પરાયો યત્ર તત્સૂક્ષ્મસમ્પરાયં, તદ્રૂપં યચ્ચારિત્રં, તત્સમ્બન્ધી વિનયઃ, ।૪। ‘અહ-
ઃસ્વાયચરિત્તવિણ’ યથાસ્વાયતચારિત્રવિનયઃ—યાથાતથ્યેનાઽભિવિધિના ચ યદાસ્વાયતં

કર પુનઃ મહાવ્રતોં કા જિસમેં આરોપણ કિયા જાતા હૈ વહ છેદોપસ્થાપનીયચારિત્ર હૈ ।
ઇસ ચારિત્રસંબંધી જો વિનય હૈ વહ છેદોપસ્થાપનીયચારિત્રવિનય હૈ ૨। “પરિહરણં પરિહારઃ”
પરિહરણ અર્થાત્ ગચ્છ કા પરિત્યાગ કરને કા નામ પરિહાર હૈ, યહ પરિહાર એક પ્રકાર કા
વિશેષ તપ હૈ । ઇસસે કર્મોં કી નિર્જારૂપ વિશુદ્ધિ જિસ ચારિત્ર મેં હોતી હૈ ઇસકા નામ
પરિહારવિશુદ્ધિચારિત્ર હૈ, ઇસ ચારિત્રસંબંધી જો વિનય હૈ વહ પરિહારવિશુદ્ધિચારિત્રવિનય
હૈ ૩। ‘સંપરાય’ શબ્દ કા અર્થ કષાય હૈ, ક્યોં કિ ઇસીકે વશ મેં હોકર જીવ સંસાર મેં
પરિભ્રમણ કિયા કરતા હૈ । જિસ ચારિત્ર મેં સૂક્ષ્મ લોભ કે અંશ કા સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ
વહ સૂક્ષ્મસંપરાયચારિત્ર હૈ । ઇસ ચારિત્ર કે વિનય કરને કા નામ સૂક્ષ્મસંપરાયચારિત્રવિનય
હૈ ૪। તીર્થંકર પ્રભુ ને જિસ યથાર્થતા એવં અભિવિધિ કે અનુસાર ચારિત્ર કા પ્રતિપાદન કિયા

સામાયિક ચારિત્રનો જે વિનય તે સામાયિકચારિત્રવિનય છે. પૂર્વ દીક્ષા-
પર્યાયનું છેદન કરી કરીને મહાવ્રતોનું જેમાં આરોપણ કરાય છે તે છેદોપ-
સ્થાપનીયચારિત્ર છે. આ ચારિત્રસંબંધી જે વિનય છે તે છેદોપસ્થાપનીય-
ચારિત્રવિનય છે. “પરિહરણં પરિહારઃ,” પરિહરણ અર્થાત્ ગચ્છનો પરિત્યાગ
કરવાનું નામ પરિહાર છે, આ પરિહાર એક પ્રકારનું વિશેષ તપ છે. તેનાથી
કર્મોની નિર્જારૂપ વિશુદ્ધિ જે ચારિત્રમાં થાય છે તેનું નામ પરિહારવિશુદ્ધિ-
ચારિત્ર છે. આ ચારિત્રસંબંધી જે વિનય છે તે પરિહારવિશુદ્ધિચારિત્રવિનય
છે. ‘સંપરાય’ શબ્દનો અર્થ કષાય છે, કેમકે એને જ વશ થઈને જીવ સંસારમાં
પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. જે ચારિત્રમાં સૂક્ષ્મલોભના અંશનો સદ્ભાવ મળે છે તે
સૂક્ષ્મસંપરાયચારિત્ર છે. આ ચારિત્રના વિનયનું નામ સૂક્ષ્મસંપરાયચારિત્રવિનય

ચરિત્તવિણે । સે કિં તં મળવિણે ? મળવિણે દુવિહે પળ્લત્તે,
તં જહા—પસત્થમળવિણે ૧, અપ્પસત્થમળવિણે ૨ । સે કિં તં
અપ્પસત્થમળવિણે ? અપ્પસત્થમળવિણે—જે ય મળે સાવજ્જે ૧,

તીર્થકરૈઃ કથિતમકપાયં ચારિત્રમિતિ તત્ યથાહ્યાતચારિત્રં, તસ્ય કષાયરહિતચારિત્રસ્ય
વિનયઃ ।૫ । ‘સે તં ચરિત્તવિણે’ સ એષ ચારિત્રવિનયઃ । ‘સે કિં તં મળવિણે’
અથ કોઽસૌ મનોવિનયઃ ? ઉત્તરમાહ—‘મળવિણે’—મનોવિનયઃ—મન્યતે ચિન્ત્યતેઽનેનેતિ
મનઃ, તત્સમ્બન્ધી વિનયઃ, ‘દુવિહે પળ્લત્તે’ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞઃ, ‘તં જહા’ તથા—‘પસત્થમળ-
વિણે’ પ્રશસ્તમનોવિનયઃ—પ્રશસ્તમ્=અવચરહિતં મનોઽન્તઃકરણં, તસ્ય વિનયઃ ।૧।
‘અપ્પસત્થમળવિણે’ અપ્રશસ્તમનોવિનયઃ—અપ્રશસ્તમનસો વિનયઃ ।૨। ‘સે કિં તં અપ્પ
સત્થમળવિણે’ અથ કોઽસૌ અપ્રશસ્તમનોવિનયઃ ? ઉત્તરમાહ—‘અપ્પસત્થમળવિણે—જે

હૈ, ઇસ રૂપ કે ચારિત્ર કા નામ યથાહ્યાતચારિત્ર હૈ । ઇસ ચારિત્ર કા વિનય કરના સો
યથાહ્યાતચારિત્રવિનય હૈ ૫ । (સે તં ચરિત્તવિણે) યહ સ્વ ચારિત્રવિનય હૈ । પ્રશ્ન—
(સે કિં તં મળવિણે) મન કા વિનય કિતનં પ્રકાર કા હૈ ? ઉત્તર—(મળવિણે
દુવિહે પળ્લત્તે) મનોવિનય દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ; (તં જહા) જૈસે—(પસત્થમળવિણે)
પ્રશસ્ત મન કા વિનય—પાપરહિત મન કો અપનાના પ્રશસ્તમનોવિનય હૈ । (અપ્પસત્થ-
મળવિણે) અપ્રશસ્ત મન કા વિનય કરના સો અપ્રશસ્તમનોવિનય હૈ । પ્રશ્ન—(સે કિં
તં અપ્પસત્થમળવિણે) અપ્રશસ્તમનોવિનય ક્યા હૈ? ઉત્તર—(અપ્પસત્થમળવિણે જે
ય મળે સાવજ્જે ૧, સકિરિણે ૨, સકકસે ૩, કહુણે ૪, ણિદુરે ૫, ફરુસે ૬,

છે. તીર્થંકર પ્રભુએ જે યથાર્થતા તેમજ અભિવિધિના અનુસાર ચારિત્રનું
પ્રતિપાદન કર્યું છે તે રૂપના ચારિત્રનું નામ યથાહ્યાતચારિત્ર છે. આ ચારિત્રનો
વિનય કરવો તે યથાહ્યાતચારિત્રવિનય છે. (સે તં ચરિત્તવિણે) આ બધા
ચારિત્રવિનય છે.

પ્રશ્ન—(સે કિં તં મળવિણે) મનનો વિનય શું છે ? કેટલા પ્રકારનો છે ?

ઉત્તર—(મળવિણે દુવિહે પળ્લત્તે) મનોવિનય બે પ્રકારનો કહેલો છે. (તં
જહા) જેમ કે—(પસત્થમળવિણે) પ્રશસ્ત મનનો વિનય—પાપરહિત મનને અપનાવવું
તે પ્રશસ્તમનોવિનય છે. (અપ્પસત્થમળવિણે) અપ્રશસ્ત મનનો વિનય કરવો તે
અપ્રશસ્તમનોવિનય છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં અપ્પસત્થમળવિણે) અપ્રશસ્તમનોવિનય
શું છે ? ઉત્તર—(અપ્પસત્થમળવિણે—જે ય મળે સાવજ્જે, સકિરિણે, સકકસે, કહુણે,
ણિદુરે, ફરુસે, અણ્હયકરે, છેયકરે, મેયકરે પરિતાવણકરે, उद्दवणकરે, भूओवघाइए.)

सकिरिए २, सकक्से ३, कडुए ४, णिट्टुरे ५, फरुसे ६, अण्हयकरे ७, छेयकरे ८, भेयकरे ९, परितावणकरे १०, उद्वणकरे ११, भूओवघाइए १२, तहप्पगारं मणो णो पहारेज्जा, से तं अप्पस-

य मणे' यच्च मनः—'सावज्जे' सावद्यं-सपापम् । १। 'सकिरिए' सक्रियम्=प्राणातिपाताधार-
म्भक्रियायुक्तम् । २। 'सकक्से' सकर्कश्यम्=कर्कशतासहितम् । ३। 'कडुए' कटुकम्—
स्वस्य परस्य च कटुकरसवद् उद्वेजकम् । ४। 'णिट्टुरे' निष्ठुरं—दयारहितम् । ५। 'फरुसे'
परुषं—कठोरम् । ६। 'अण्हयकरे' आस्रवकरम्=आस्रवकारि । ७। 'छेयकरे' छेदकरम्=
न्ययमसमाधिविनाशकम् । ८। 'भेयकरे' भेदकरम्=समाधिविधातकम् । ९। 'परितावणकरे'
परितापनकरम्—प्राणिनां सन्तापजनकम् । १०। 'उद्वणकरे' उपद्रवणकरम्—प्राणान्तकष्टकारकम्
। ११। 'भूओवघाइए' भूतोपघातिकम्-भूतानां=प्राणिनामुपघातो हिंसा, सोऽस्याऽस्तीति भूतोप-
घातिकम् । १२॥ 'तहप्पगारं मणो णो पहारेज्जा' तथाप्रकारं=तादृशं मनो नो प्रधारयेत्
=नो प्रवर्तयेत्—असंयमक्रियासु मनो नोदीरयेत् । 'से तं अप्पसत्थमणविणए' स एषोऽ-
प्रशस्तमनोविनयः । 'से किं तं पसत्थमणविणए' अथ कोऽसौ प्रशस्तमनोविनयः ?—

अण्हयकरे ७, छेयकरे ८, भेयकरे ९, परितावणकरे १०, उद्वणकरे ११, भूओ-
वघाइए १२) —जो मन सावद्य-पापसहित हो १, सक्रिय-प्राणातिपातादिक आरम्भक्रिया-
युक्त हो २, सकर्कश-प्रेमभाव से रहित हो ३, कटुक-अपने तथा पर के लिये कटुकरस के
समान उद्वेजक हो ४, निष्ठुर-दयारहित हो ५, परुष-कठोर हो ६, आस्रवकर-आस्रवकारी
हो ७, छेदकर-न्ययमरूपसमाधि का विध्वंसक हो ८, भेदकर-समाधिविधातक हो ९, परिताप-
नकर-प्राणियों को सन्ताप का जनक हो १०, उपद्रवणकर-उपद्रव का कर्त्ता हो ११, एवं भूतो-
पघातिक-प्राणियोंका प्राणहर्त्ता हो १२, वह मन अप्रशस्त है । (तहप्पगारं मणो णो पहारेज्जा)
ऐसे मन को असंयम क्रियाओं में प्रवृत्त नहीं करना । (से तं अप्पसत्थमणविणए) वह
अप्रशस्तमनोविनय है । (से किं तं पसत्थमणविणए) प्रशस्तमनोविनय क्या है ? उत्तर—

जो मन सावद्य-पापसहित होय, सक्रिय-प्राणातिपातादिक आरम्भक्रियायुक्त
होय, प्रेमभावहीन रहित होय, पोताना तथा पारका भाटे कडवा रसनी पेडे उपद्रव-
जनक होय, निष्ठुर-दयारहित होय, परुष-कठोर होय, आस्रवकारी होय, संयम-
रूप समाधिनो विध्वंसक होय, शरीरादिकनुं भेदक होय, प्राणिओने सन्तापजनक
होय, उपद्रव करनारुं होय, तेमज्ज प्राणिओनुं प्राणु वेनारुं होय ते मन अप्रशस्त
छे. (तहप्पगारं मणो णो पहारेज्जा) ओवां मनने असंयम क्रियाओमां प्रवृत्त न करवुं,
(से तं अप्पसत्थमणविणए) ते अप्रशस्तमनोविनय छे. प्रश्न—(से किं तं पसत्थमणविणए)

ત્થમણવિણે । સે કિં તં પસત્થમણવિણે ? પસત્થમણવિણે-
તં ચેવ પસત્થં ણેયવ્વં । એવં ચેવ વઙ્ગિણઓવિ એણ્હિં પેણ્હિં ચેવ
ણેયવ્વો । સે તં વઙ્ગિણે ।

‘પસત્થમણવિણે’ પ્રશસ્તમનોવિનયઃ ‘તં ચેવ પસત્થં ણેયવ્વં’ તદેવ પ્રશસ્તં
નેતવ્યમ્=અપ્રશસ્તે યદ્વિશેષણં તદેવ પ્રશસ્તરૂપેણ પરિવર્તનીયમ્; યથા—પ્રાક્ તત્ર સાવધ-
મિત્યુક્તં, અત્ર તુ નિરવધમિતિ વાચ્યમ્ । इत्थं सर्वाणि विशेषणानि परिवर्तनीयानि, तथा सति
પ્રશસ્તમનોવિનયઃ । ‘એવં ચેવ વઙ્ગિણઓવિ એણ્હિં પેણ્હિં ચેવ ણેયવ્વો’ એવમેવ વાગ્-

(પસત્થમણવિણે તં ચેવ પસત્થં ણેયવ્વં) અપ્રશસ્ત મન કે જો વિશેષણ હૈં ઉનકા પ્રશ-
સ્તરૂપ મેં પરિવર્તન કરને સે પ્રશસ્તમન હોતા હૈ । જૈસે—જો મન નિરવધ—પાપરહિત હો ૧,
અક્રિય—પ્રાણાતિપાતાદિક ક્રિયા સે વિરત હો ૨, અકર્કશ—પ્રેમસહિત હો ૩, અકટુક—
સ્વપર કા ઉદ્દેગ કરને વાલા નહીં હો ૪, અનિષ્ઠુર—દયાયુક્ત હો ૫, અપરુષ—કોમલ હો ૬,
અનાસ્રવકર—સંવરયુક્ત હો ૭, અચ્છેદકર—છેદકર નહીં હો, અર્થાત્ સંયમસમાધિ સે યુક્ત હો ૮,
અભેદકર—ભેદકર નહીં હો, અર્થાત્ સમાધિયુક્ત હો ૯, અપરિતાપનકર—પ્રાણિયોં કે લિયે
સંતાપકર નહીં હો, અર્થાત્ શાન્તિજનક હો ૧૦, અનુપદ્રવકર—પ્રાણિયોં કા ઉપદ્રવકારી
નહીં હો ૧૧, ઓર અભૂતોપધાતિક—પ્રાણિયોં કા ઉપધાત કરનેવાલા નહીં હો ૧૨ । એસા મન
પ્રશસ્તમન કહા ગયા હૈ । ઇસકા જો વિનય—આદર સો પ્રશસ્તમનોવિનય હૈ । (એવં ચેવ
વઙ્ગિણઓવિ એણ્હિં પેણ્હિં ચેવ ણેયવ્વો) ઇસી પ્રકાર વચન કા વિનય મી પ્રશસ્ત

પ્રશસ્તમનોવિનય શું છે ? ઉત્તર—(પસત્થમણવિણે—તં ચેવ પસત્થં ણેયવ્વં) અપ્રશસ્ત
મનનાં જે વિશેષણો છે તેમનું પ્રશસ્ત રૂપમાં પરિવર્તન કરવાથી પ્રશસ્ત મન થાય છે.
જેમકે—જે મન નિરવધ—પાપરહિત હોય, અક્રિય—પ્રાણાતિપાતાદિક ક્રિયાઓથી
વિરત હોય, અકર્કશ—પ્રેમસહિત હોય, અકટુક—સ્વપરનો ઉદ્દેગ કરવાવાળું ન હોય,
અનિષ્ઠુર—દયાવાળું હોય, અપરુષ—કોમળ હોય, અનાસ્રવકર—સંવરવાળું હોય,
અચ્છેદકર—છેદન કરવાવાળું ન હોય અર્થાત્ સંયમસમાધિથી યુક્ત હોય,
અભેદકર—ભેદ કરનાર ન હોય, અર્થાત્ સમાધિયુક્ત હોય, અપરિતાપનકર—
પ્રાણિઓને માટે સંતાપકર ન હોય, અર્થાત્ શાન્તિજનક હોય, અનુપદ્રવકર—
પ્રાણિઓને ઉપદ્રવકારી ન હોય અને અભૂતોપધાતિક—પ્રાણિઓનો ઉપધાત
કરનાર ન હોય, એવું મન પ્રશસ્તમન કહેવાય છે. તેનો જે વિનય—આદર
તે પ્રશસ્તમનોવિનય છે. (એવં ચેવ વઙ્ગિણઓવિ એણ્હિં પેણ્હિં ચેવ ણેયવ્વો) એ ૪

विनयोऽप्येतैः पदैरव नेतव्यः—प्रथमं प्रशस्ताऽप्रशस्तभेदेन द्विविधं विधाय, ततः परम् अप्रशस्तवाग्विनये सावद्यादिविशेषणानि देयानि, प्रशस्तवाग्विनये निरवद्यादीनि विशेष-

और अप्रशस्त भेद से दो प्रकार का है । जो वचन सावद्य-पापसहित हो, सक्रिय-प्राणा-तिपातादिक की आरम्भक्रिया से युक्त हो, सकर्कश-कर्कशता से युक्त हो, कटुक-स्वपर को कटुकरस के समान उद्दिग्ग करने वाला हो, निष्ठुर-दयारहित हो, परुष-कठोर हो, आस्रवकर-आस्रवका उत्पादक हो, छेदकर-संयमसमाधि का विनाशक हो, भेदकर-समाधि का विधातक हो, परितापनकर-प्राणियों के लिये सन्तापजनक हो, उपद्रवणकर-प्राणियों के लिये उपद्रवकारी हो, तथा भूतोपघातिक-प्राणियों की हिंसा करने वाला हो, ऐसा वचन अप्रशस्तवचन है । इस तरह का वचन नहीं बोलना अप्रशस्तवचनविनय है ।

तथा—जो वचन निरवद्य-पापरहित हो, अक्रिय-प्राणातिपातादिक क्रिया से विरत हो, अकर्कश-प्रेमसहित हो, अकटुक-स्वपर के लिये उद्देगजनक नहीं हो, अनिष्ठुर-दया-सहित हो, अपरुष-कोमल हो, अनास्रवकर-संवरयुक्त हो, अच्छेदकर-छेदकर नहीं हो अर्थात् संयमसमाधि से युक्त हो, अभेदकर-भेदकर नहीं हो, अर्थात् समाधियुक्त हो, अपरितापनकर-प्राणियों को सन्ताप देने वाला नहीं हो, अनुपद्रवणकर-प्राणियों के लिये उपद्रव करने वाला नहीं हो, और अभूतोपघातिक-प्राणियों की हिंसा करने वाला नहीं हो,

प्रकारे वचनने। विनय यणु प्रशस्त अने अप्रशस्त लेहे करीने जे प्रकारने छे. जे वचन सावद्य-पापसहित होय, सक्रिय-प्राणातिपातादिकनी आरंभ-क्रियाथी युक्त होय, सकर्कश-कर्कशतावाणुं होय, कटुक-स्वपरना कटु (कडवा) रसनी पेठे उद्दिग्ग करवावाणुं होय, निष्ठुर-दयारहित होय, परुष-कठोर होय, आस्रवकर-आस्रवनुं उत्पादक होय, छेदकर-संयम समाधिनुं विनाशक होय, भेदकर-समाधिनुं विधातक होय, उपद्रवणकर-प्राणिओने माटे उपद्रवकारी होय, तथा भूतोपघातिक-प्राणिओनी हिंसा करनां होय, एवुं वचन अप्रशस्त वचन छे. एवी जतनुं वचन जोलवुं नहि ते अप्रशस्तवचनविनय छे. तथा जे वचन निरवद्य-पापरहित होय, अक्रिय-प्राणातिपातादिक क्रियाथी विरत होय, अकर्कश-प्रेमसहित होय, अकटुक-स्वपरना माटे उद्देगजनक न होय, अनिष्ठुर-दयावाणुं होय, अपरुष-कोमल होय, अनास्रवकर-संवर-युक्त होय, अच्छेदकर-छेदकर न होय, अर्थात् संयम-समाधिवाणुं होय, अच्छेदकर-छेदकर न होय, अर्थात् समाधियुक्त होय, अपरितापनकर-प्राणि-ओने संताप आपनार न होय, अनुपद्रवणकर-प्राणिओने माटे उपद्रव करनां न होय अने अभूतोपघातिक-प्राणिओनी हिंसा करवावाणुं न होय एवां

સે કિં તં કાયવિણે?, કાયવિણે દુવિહે પણ્ણત્તે; તં
જહા-પસત્થકાયવિણે ૧, અપ્પસત્થકાયવિણે ૨ । સે કિં તં
અપ્પસત્થકાયવિણે ? અપ્પસત્થકાયવિણે સત્તવિહે પણ્ણત્તે;
તં જહા-અણાઉત્તં ગમણે ૧, અણાઉત્તં ઠાણે ૨, અણાઉત્તં

ણાનિ યોજનીયાનિ । ‘સે તં વડ્ઢવિણે’ સ એવ વાગ્વિનયઃ ।

કાયવિનયં પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં કાયવિણે’ અથ કોઽસૌ કાયવિનયઃ ?
ઉત્તરમાહ—‘કાયવિણે’—કાયવિનયઃ ‘દુવિહે પણ્ણત્તે’ ટિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, ૧ ‘પસત્થ-
કાયવિણે’ પ્રશસ્તકાયવિનયઃ, ૨—‘અપ્પસત્થકાયવિણે’ અપ્રશસ્તકાયવિનયઃ ।
‘સે કિં તં અપ્પસત્થકાયવિણે’ અથ કોઽસૌ અપ્રશસ્તકાયવિનયઃ ? ‘અપ્પસત્થ-
કાયવિણે’ અપ્રશસ્તકાયવિનયઃ ‘સત્તવિહે પણ્ણત્તે’ સત્તવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । સત્તવિધત્વં
દર્શયતિ—‘તં જહા’ તદ્વથા—‘અણાઉત્તં ગમણે’ અનાયુક્તં ગમનમ્=એર્યાપથિક્યામસા-
વધાનતયા ગમનમ્ । ૧ । ‘અણાઉત્તં ઠાણે’ અનાયુક્તં સ્થાનમ્=ઉપયોગાભાવેન અવસ્થાનમ્

એસે વચન કો પ્રશસ્તવચન કહતે હૈં । એસે વચન કા બોલના સો પ્રશસ્તવચનવિનય હૈ ।
(સે તં વડ્ઢવિણે) સો યહ પૂર્વોક્ત વચનવિનય હૈ । અવ કાયવિનય કયા હૈ ? ઇસ બાત કો
શિષ્ય પૃછતા—હૈ (સે કિં તં કાયવિણે) કાયવિનય કયા—કિતને પ્રકાર કા હૈ ?
ઉત્તર—(કાયવિણે દુવિહે પણ્ણત્તે) કાયવિનય દો પ્રકાર કા હૈ (પસત્થકાયવિણે
અપ્પસત્થકાયવિણે) એક પ્રશસ્તકાયવિનય ઓર દૂસરા અપ્રશસ્તકાયવિનય ।
‘સે કિં તં અપ્પસત્થકાયવિણે ?’ અપ્રશસ્તકાયવિનય કિતને પ્રકાર કા હૈ ?
‘અપ્પસત્થકાયવિણે સત્તવિહે પણ્ણત્તે’ અપ્રશસ્તકાયવિનય સાત પ્રકાર કા હૈ;
(તં જહા) જૈસે—(અણાઉત્તં ગમણે) અનુપયુક્ત ગમન—ઈર્યાપથ મેં વિના ઉપયોગ કે
ગમન કરના, (અણાઉત્તં ઠાણે) વિના ઉપયોગ કે સ્થાન હોના, (અણાઉત્તં નિસીયણે)

વચનને પ્રશસ્ત વચન કહે છે. એવાં વચન બોલવાં તે પ્રશસ્તવચનવિનય છે. હવે
કાયવિનય શું છે ? તે વાત શિષ્ય પૂછે છે—(સે કિં તં કાયવિણે) કાયવિનય શું
છે—કેટલા પ્રકારનો છે ? ઉત્તર—(કાયવિણે દુવિહે પણ્ણત્તે) કાયવિનય બે પ્રકારનો છે—
(પસત્થકાયવિણે અપ્પસત્થકાયવિણે) એક—પ્રશસ્તકાયવિનય અને બીજો—અપ્રશસ્ત-
કાયવિનય. (સે કિં તં અપ્પસત્થકાયવિણે) અપ્રશસ્તકાયવિનય કેટલા પ્રકારનો
છે ? (અપ્પસત્થકાયવિણે સત્તવિહે પણ્ણત્તે) અપ્રશસ્તકાયવિનય સાત પ્રકારનો
છે; (તં જહા) જેમ કે (અણાઉત્તં ગમણે) અનુપયુક્ત ગમન—ઈર્યાપથમાં વિના ઉપયોગનું
ગમન કરવું, (અણાઉત્તં ઠાણે) વિના ઉપયોગનું ઉભા રહેવું. (અણાઉત્તં નિસીયણે)

નિસીયણે ૩, અણાઉત્તં તુયટ્ટણે ૪, અણાઉત્તં ઉલ્લંઘણે ૫, અણાઉત્તં પલ્લંઘણે ૬, અણાઉત્તં સર્વિંદિયકાયજોગજુંજણયા ૭, સે તં અપ્પસત્થકાયવિણે ? । પસત્થકાયવિણે એવં ચેવ પસત્થં માણિયઘ્વં । સે તં પસત્થકાયવિણે । સે તં કાયવિણે । સે કિં

।૨। ‘અણાઉત્તં નિસીયણે’ અનાયુક્તં નિષદનમ્=અનુપયોગેનોપવેશનમ્ ।૩। ‘અણાઉત્તં તુયટ્ટણે’ અનાયુક્તં ત્વગ્વર્તનમ્=અનવધાનતયા ત્વગ્વર્તનં=સંસ્તારકે પાર્શ્વપર્ગિર્તનમ્ ।૪। ‘અણાઉત્તં ઉલ્લંઘણે’ અનાયુક્તમુલ્લઙ્ઘનમ્=કર્દનાદીનામતિક્રમણમ્ ।૫। ‘અણાઉત્તં પલ્લંઘણે’ અનાયુક્તં પ્રોલ્લઙ્ઘનમ્=પુનઃ પુનરુલ્લઙ્ઘનમ્ ।૬। ‘અણાઉત્તં સર્વિંદિયકાયજોગજુંજણયા’ અનાયુક્તં સર્વેન્દ્રિયકાયયોગયોજનતા=સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં કાયયોગસ્ય ચ યોજનં=પ્રવર્તનમ્—અસાવધાનતયા સર્વેન્દ્રિયકાયયોગવ્યાપારણમ્ ।૭। ‘સે તં અપ્પસત્થકાયવિણે’ સ્વ ઇષોઽપ્રશસ્તકાયવિનયઃ । ‘સે કિં તં પસત્થકાયવિણે’ અથ કોઽસૌ પ્રશસ્તકાયવિનયઃ ? ‘પસત્થકાયવિણે’ પ્રશસ્તકાયવિનયઃ—‘એવં ચેવ પસત્થં માણિયઘ્વં’ એવમેવ=અપ્રશસ્તવદેવ પ્રશસ્તકાયવિનયો માણિતવ્યઃ=વક્તવ્યઃ; યથા તત્રાના-

વિના ઉપયોગ કે બૈઠના, (અણાઉત્તં તુયટ્ટણે) વિના ઉપયોગ કે વિસ્તર પર કરબટ બદલના, (અણાઉત્તં ઉલ્લંઘણે) વિના ઉપયોગ કે કીચડ આદિ કા લાંઘના, (અણાઉત્તં પલ્લંઘણે) વિના ઉપયોગ કે વાર વાર કીચડ આદિકા ઉલ્લંઘન કરના । (અણાઉત્તં સર્વિંદિયકાયજોગજુંજણયા) વિના ઉપયોગ કે સમસ્ત ઇન્દ્રિયોં કી એવં કાયયોગ કી પ્રવૃત્તિ કરના, (સે તં અપ્પસત્થકાયવિણે) ઇન સમી અપ્રશસ્ત ક્રિયાઓં સે કાય કો રોકના અપ્રશસ્તકાયવિનય હૈ । પ્રશ્ન—(સે કિં તં પસત્થકાયવિણે) પ્રશસ્તકાયવિનય કયા હૈ ? ઉત્તર—(પસત્થકાયવિણે એવં ચેવ માણિયઘ્વં સે તં પસત્થકાયવિણે) ઇસી તરહ પ્રશસ્તકાયવિનય હૈ, અર્થાત્ અપ્રશસ્તકાયવિનય મેં અનુપયુક્ત અવસ્થા સે હોને વાલી ગમનાદિક ક્રિયાએં રોકી

વિના ઉપયોગનું બેસવું, (અણાઉત્તં તુયટ્ટણે) વિના ઉપયોગનું પથારીમાં પાસાં બદલવાં, (અણાઉત્તં ઉલ્લંઘણે) વિના ઉપયોગે કીચડ વગેરે ટપવું, (અણાઉત્તં પલ્લંઘણે) ઉપયોગવગર વારંવાર કીચડ વિગેરેનું ઉલ્લંઘન કરવું, (અણાઉત્તં સર્વિંદિયકાયજોગજુંજણયા) વિના ઉપયોગનું સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની તેમજ કાયયોગની પ્રવૃત્તિ કરવી, (સે તં અપ્પસત્થકાયવિણે) એ બધી અપ્રશસ્ત ક્રિયાઓથી કાયને રોકવી તે અપ્રશસ્તકાયવિનય છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં પસત્થકાયવિણે) પ્રશસ્તકાયવિનય શું છે ? ઉત્તર—(પસત્થકાયવિણે—એવં ચેવ માણિયઘ્વં સે તં પસત્થકાયવિણે) પ્રશસ્તકાયવિનય આ જ રીતે છે. અર્થાત્ અપ્રશસ્તકાયવિનયમાં અનુપયોગી અવ-

તં લોગોવયારવિણે ? લોગોવયારવિણે સત્તવિહે પણ્ણત્તે; તં
જહા—અભાસવત્તિયં ૧, પરચ્છંદાણુવત્તિયં ૨, કજ્જહેઓ ૩,
કયપડિકિરિયા ૪, અત્તગવેસણયા ૫, દેસકાલણ્ણયા ૬, સવ્વદ્દેસુ
અપ્પહિલોમયા ૭, સે તં લોગોવયારવિણે । સે તં વિણે
॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

યુક્તમુક્તમ્, અત્ર સોપયોગં ગમનાદિકં વાચ્યમિત્યર્થઃ । ‘ સે તં પસસ્થકાયવિણે ’ સ એષ
પ્રશસ્તકાયવિનયઃ । ‘ સે તં કાયવિણે ’ સ એષ કાયવિનયઃ । ‘ સે કિં તં લોગોવયાર-
વિણે ’ અથ કોઽસૌ લોકોપચારવિનયઃ? લોકાનામુપચરણં લોકોપચારઃ, તત્સમ્બન્ધી વિનયો,
લોકોપચારવિનયઃ, લોકવ્યવહારસાધકો વિનય इत्यर्थः; ‘ લોગોવયારવિણે સત્તવિહે
પણ્ણત્તે ’ લોકોપચારવિનયઃ સત્તવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ,—‘ તં જહા ’ તથા—‘ અભાસવત્તિયં ’
અભ્યાસવૃત્તિતા=કલાચાર્યાદિસમીપસ્થિતિશીલતા ।૧। ‘ પરચ્છંદાણુવત્તિયં ’ પરચ્છંદાનુ-
વર્તિતા=પરાભિપ્રાયાનુવર્તનમ્ ।૨। ‘ કજ્જહેઓ ’ કાર્યહેતો:=વિદ્યાદિપ્રાપ્તિનિમિત્ત—‘ શ્રુતં

જાતી હૈં ઓર ઇસ પ્રશસ્તકાયવિનય મેં યે સબ હી કાયસંબંધી ક્રિયાઈ ઉપયુક્ત હોકર કી
જાતી હૈં । પ્રશ્ન—(સે કિં તં લોગોવયારવિણે) લોકોપચાર વિનય ક્યા—કિતને પ્રકાર
કા હૈં? ઉત્તર—(લોગોવયારવિણે સત્તવિહે પણ્ણત્તે) લોકવ્યવહારસાધક યહ લોકોપચારવિનય
સાત પ્રકાર કા કહા ગયા હૈં, (તં જહા) વે સાત સાત પ્રકાર યે હૈં—(અભાસવત્તિયં) અભ્યાસ-
વર્તિતા—કલાચાર્ય આદિ કે સમીપ મેં સ્થિતિશીલતા, અર્થાત્—ગુરુ આદિ કે નિકટ રહને
કા સ્વભાવ હોના, (પરચ્છંદાણુવત્તિયા) પરચ્છંદાનુવર્તિતા—ગુરુ આદિ કી આજ્ઞા કે
અનુકૂલ અપની પ્રવૃત્તિ રખના, (કજ્જહેઓ) વિદ્યા આદિ કી પ્રાપ્તિ કે નિમિત્ત ભક્તપાન

સ્થાથી થવાવાળી ગમનઆદિક ક્રિયાઓને રોકાય છે અને આ પ્રશસ્તકાયવિનયમાં
તે બંધી કાયસંબંધી ક્રિયાઓ ઉપયોગી અવસ્થાથી કરાય છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં
લોગોવયારવિણે) લોકોપચાર વિનય શું છે—કેટલા પ્રકારનો છે ? ઉત્તર—(લોગોવ-
યારવિણે સત્તવિહે પણ્ણત્તે) લોકવ્યવહારસાધક આ લોકોપચારવિનય સાત પ્રકારનો
કહેલો છે, (તં જહા) તે સાત પ્રકાર આ છે—(અભાસવત્તિયં) અભ્યાસવર્તિતા—
કલાચાર્યઆદિના સમીપમાં સ્થિતિશીલતા, અર્થાત્ ગુરુ આદિની પાસે રહેવાનો
સ્વભાવ હોવો, (પરચ્છંદાણુવત્તિયા) પરચ્છંદાનુવર્તિતા—ગુરુ આદિની આજ્ઞાને
અનુકૂળ પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખવી, (કજ્જહેઓ) વિદ્યા આદિની પ્રાપ્તિને નિમિત્તે

મૂલમ્—સે કિં તં વેયાવચ્ચે ? વેયાવચ્ચે દસવિહે પણ્ણત્તે;

પ્રાપિતોઽહમનેને'—તિ હેતોઃ શુશ્રૂષા । ૩ । 'કયપડિકિરિયા' કૃતપ્રતિક્રિયા "ભક્તાદિનોપચારે કૃતે સતિ પ્રસન્ના ગુરવો મે શ્રુતદાનરૂપાં પ્રતિક્રિયાં—પ્રત્યુપકારં કરિષ્યન્તી"તિ બુદ્ધચા ગુરુણાં શુશ્રૂષાકરણમ્ । ૪ । 'અત્તગવેસણયા' આર્તગવેષણતા—આર્તસ્ય=દુઃસ્વિતસ્ય ગવેષણતા—ઔષધભૈષજ્યાદિના પીડિતસ્યોપકાર इत्यर्थः । ૫ । 'દેસકાલણ્ણુયા' દેશકાલજ્ઞતા=દેશકાલોચિતાર્થસમ્પાદનમ્ । ૬ । 'સવ્વદ્દેસુ અપ્પડિલોમયા' સર્વાર્થેષુ અપ્રતિલોમતા=સર્વપ્રયોજનેષુ આનુકૂલ્યમ્ । 'સે તં લોગોવયારવિણ્ણ, સે તં વિણ્ણ' સ એષ લોકોપચારવિનયઃ, સ એષ વિનયઃ ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

ટીકા—આમ્યન્તરતપસસ્તૃતીયભેદં વૈયાવૃત્યં નામ તપઃ પૃચ્છતિ—'સે કિં તં વેયાવચ્ચે' અથ કિં તદ્ વૈયાવૃત્યમ્ : સાધૂનામાહારૌષધાદિભિઃ સાહાય્યકરણં વૈયાવૃત્યમ્, તત્ આદિ લાકર દેના, (કયપડિકિરિયા) કૃતપ્રતિક્રિયા—કૃત ઉપકાર કા ધ્યાન રાખકર પ્રત્યુપકાર કરને કી ભાવના સે પ્રીતિયુક્ત વ્યવહાર કરના, (અત્તગવેસણયા) આર્તગવેષણતા—રોગાદિ અવસ્થા સે યુક્ત ગુરુ મહારાજ આદિ કા ઔષધ—ભૈષજ દ્વારા ઉપચાર કરના, (દેસકાલણ્ણુયા) દેશકાલજ્ઞતા—દેશકાલ કે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરના, (સવ્વદ્દેસુ અપ્પડિલોમયા) સર્વ કાર્યોં મેં અપ્રતિકૂલતા અર્થાત્ અનુકૂલતા રાખના । (સે તં લોગોવયારવિણ્ણ) યહ સર્વ લોકોપચારવિનય હૈ । (સે તં વિણ્ણ) હિસ પ્રકાર વિનય તપ કા વર્ણન જાનના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

‘સે કિં તં વેયાવચ્ચે’ ।

સૂત્રકાર અબ આમ્યન્તર તપ કા જો તૃતીય ભેદ વૈયાવૃત્ય તપ હૈ ઉસકા

ખાન—પાન આદિ લાવી આપવું, (કયપડિકિરિયા) કૃતપ્રતિક્રિયા—કરેલા ઉપકારને ધ્યાનમાં રાખીને પ્રત્યુપકાર કરવાની ભાવનાથી પ્રીતિયુક્ત વ્યવહાર કરવો, (અત્તગવેસણયા) આર્તગવેષણતા—રોગાદિ અવસ્થાવાળા ગુરુમહારાજ આદિનો ઔષધ—ભૈષજથી ઉપચાર કરવો, (દેસકાલણ્ણુયા) દેશકાલજ્ઞતા—દેશ કાલને અનુસરીને પ્રવૃત્તિ કરવી, (સવ્વદ્દેસુ અપ્પડિલોમયા) બધાં કાર્યોંમાં અપ્રતિકૂલતા અર્થાત્ અનુકૂળતા રાખવી. (સે તં લોગોવયારવિણ્ણ) એ બધા લોકોપચારવિનય છે. (સે તં વિણ્ણ) એ પ્રકારે વિનય તપનું વર્ણન બાણુવું જોઈએ. (સૂ. ૩૦)

‘સે કિં તં વેયાવચ્ચે’ ઇત્યાદિ.

સૂત્રકાર હવે આમ્યન્તર તપનો જે ત્રીજો ભેદ વૈયાવૃત્ય તપ છે તેનું

તં જહા—આયરિયવેયાવચ્ચે ૧, ઉવજ્જાયાવેયાવચ્ચે ૨, સેહવેયાવચ્ચે ૩, ગિલાણવેયાવચ્ચે ૪, તવસ્સિવેયાવચ્ચે ૫, થેરવેયાવચ્ચે ૬, સાહમ્મિય-

‘દસવિહે પણ્ણત્તે’ દશવિધં પ્રજ્ઞમ્, તં જહા—તથા ‘આયરિયવેયાવચ્ચે’ આચાર્ય-વૈયાવૃત્યમ્—આચાર્યસ્ય વૈયાવૃત્યમ્=આહારાદિભિઃ શુશ્રૂષાકરણમ્ ।૧। ‘ઉવજ્જાયાવેયાવચ્ચે’ ઉપાધ્યાયવૈયાવૃત્યમ્ ।૨। ‘સેહવેયાવચ્ચે’ શૈક્ષવૈયાવૃત્યમ્—નવદીક્ષિતો વાલઃ શૈક્ષઃ, તૈસ્ય સંયમસાહાય્યદાનમ્ ।૩। ‘ગિલાણવેયાવચ્ચે’ ગ્લાનવૈયાવૃત્યમ્—ગ્લાનસ્ય=તપમા રુજયા વા સ્વિનસ્ય વૈયાવૃત્યમ્ ।૪। ‘તવસ્સિવેયાવચ્ચે’ તપસ્વિવૈયાવૃત્યમ્=નિરન્તરં ચતુર્ભક્તાદિ-કરણશીલસ્ય માસક્ષપણાદિકરણશીલસ્ય વા વૈયાવૃત્યમ્, ‘થેરવેયાવચ્ચે’ સ્થવિરવૈયાવૃત્યમ્—સ્થવિ-

વર્ણન કરતે હૈં । શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! (સે કિં તં વેયાવચ્ચે) વૈયાવૃત્ય તપ ક્યા—કિતને પ્રકાર કા હૈં ? ઉત્તર—(વેયાવચ્ચે દસવિહે પણ્ણત્તે) યહ વૈયાવૃત્યતપ દસ પ્રકાર કા હૈં । આહાર ઔષધ આદિ દ્વારા સહાયતા કરના વૈયાવૃત્ય હૈં । (તં જહા) ઉસકે વે દસ ભેદ ઇસ પ્રકાર સે હૈં—(આયરિયવેયાવચ્ચે, ઉવજ્જાયાવેયાવચ્ચે, સેહવેયાવચ્ચે, ગિલાણવેયાવચ્ચે, તવસ્સિવેયાવચ્ચે, થેરવેયાવચ્ચે, સાહમ્મિયવેયાવચ્ચે, કુલવેયાવચ્ચે, ગણવેયાવચ્ચે, સંઘવેયાવચ્ચે, સે તં વેયાવચ્ચે) આચાર્ય મહારાજ કા વૈયાવૃત્ય—આહાર પાની આદિ દ્વારા સેવા કરના, ઉપાધ્યાય કા વૈયાવૃત્ય, શૈક્ષ—નવદીક્ષિત સાધુ કા વૈયાવૃત્ય, ગ્લાન—તપસ્યા સે અથવા રોગ સે ગ્લાન સાધુ કા વૈયાવૃત્ય, તપસ્વી—નિરન્તર ચતુર્થભક્ત આદિ તપસ્યા કરને વાલે અથવા માસક્ષપણાદિ કી તપસ્યા કરનેવાલે તપસ્વી મહારાજ કા વૈયાવૃત્ય, સ્થવિર—જરા સે જર્જરિત અથવા જ્ઞાન સે વૃદ્ધ સાધુ કા વૈયાવૃત્ય, સાધર્મિક—સમાન

વર્ણન કરે છે. શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! (સે કિં તં વેયાવચ્ચે) વૈયાવૃત્ય તપ શું છે—કેટલા પ્રકારનું છે ? ઉત્તર—(વેયાવચ્ચે દસવિહે પણ્ણત્તે) આ વૈયાવૃત્ય તપ ૧૦ પ્રકારનું છે. આહાર ઔષધ આદિ દ્વારા સહાયતા કરવી તે વૈયાવૃત્ય છે. (તં જહા) તેના એ દશ ભેદ આ પ્રકારે છે. (આયરિયવેયાવચ્ચે, ઉવજ્જાયાવેયાવચ્ચે, સેહવેયાવચ્ચે, ગિલાણવેયાવચ્ચે, તવસ્સિવેયાવચ્ચે, થેરવેયાવચ્ચે, સાહમ્મિયવેયાવચ્ચે, કુલવેયાવચ્ચે, ગણવેયાવચ્ચે, સંઘવેયાવચ્ચે, સે તં વેયાવચ્ચે) આચાર્ય મહારાજનું વૈયાવૃત્ય—આહાર પાણી આદિ દ્વારા સેવા કરવી, ઉપાધ્યાયનું વૈયાવૃત્ય, શૈક્ષ—નવદીક્ષિત સાધુનું વૈયાવૃત્ય, ગ્લાન—તપસ્યાથી અથવા રોગથી ક્લાન્ત (દુર્બળ) સાધુનું વૈયાવૃત્ય, તપસ્વી—નિરન્તર ચતુર્થભક્ત આદિ તપસ્યા કરવાવાળા અથવા માસક્ષપણુ આદિની તપસ્યા કરવાવાળા તપસ્વી મહારાજનું વૈયાવૃત્ય, સ્થવિર—વૃદ્ધાવસ્થાથી જર્જરિત અથવા જ્ઞાનથી વૃદ્ધ સાધુનું વૈયા-

વૈયાવચ્ચે ૭, કુલવૈયાવચ્ચે ૮, ગણવૈયાવચ્ચે ૯, સંઘવૈયાવચ્ચે ૧૦, સે તં વૈયાવચ્ચે । સે કિં તં સજ્ઞાણ ? સજ્ઞાણ પંચવિદ્દે પળ્લન્તે, તં જહા-વાયણા ૧, પુચ્છણા ૨, પરિયટ્ટણા ૩, અણુપ્પેહા ૪, ધમ્મ-

સ્ય=જરાજીર્ણસ્ય જ્ઞાનવૃદ્ધસ્ય વા વૈયાવૃત્ત્યમ્ । ૬। ‘સાહમ્મિયવૈયાવચ્ચે’ સાધર્મિકવૈયાવૃત્ત્યમ્—સમાનધર્મિનાં વૈયાવૃત્ત્યમ્ । ૭। ‘કુલવૈયાવચ્ચે’ કુલવૈયાવૃત્ત્યમ્—एकाचार्यसन्ततिरूपं कुलं, तस्य वैयावृत्यम् । ૮। ‘ગણવૈયાવચ્ચે’ ગણવૈયાવૃત્ત્યમ્—कुलानां समूहो गणो-गच्छस्तस्य वैयावृत्यम् । ૯। ‘સંઘવૈયાવચ્ચે’ સંઘવૈયાવૃત્ત્યમ્—गणानां समुदायः सङ्घः तस्य वैयावृत्यम्, । ૧૦। ‘સે તં વૈયાવચ્ચે’ તદેતદ્ વૈયાવૃત્ત્યમ્ । ‘સે કિં તં સજ્ઞાણ’ અથ કઃ સ સ્વાધ્યાયઃ ? સ્વાધ્યાયઃ કિંસ્વરૂપઃ કતિવિધઃ ? इति प्रश्ने—उत्तरमाह—‘सज्ज्ञाण पंचविदे पण्णत्ते’ स्वाध्यायः पञ्चविधः प्रज्ञतः, स्वाध्यायः—सु=सुष्ठु आ=मर्यादया कालवेलापरिहारेण पौरुष्यपेक्षया वा अध्यायः=श्रुतस्य अध्ययनं स्वाध्यायः । तत्पञ्चविधत्वं दर्शयति—‘तं जहा’ तद्यथा—‘वायणा’ वाचना—अध्यापनम्,

ધર્મવાલોંં કા વૈયાવૃત્ત્ય, કુલ—એક આચાર્ય કી સંતતિરૂપ મુનિજનોંં કા વૈયાવૃત્ત્ય, ગણ—કુલ-સમૂહરૂપ ગચ્છ કા વૈયાવૃત્ત્ય ઔર ગણ કે સમૂહરૂપ સંઘકા વૈયાવૃત્ત્ય કરના સો યહ સબ વૈયાવૃત્ત્ય તપ કે ભેદ હૈં । પ્રશ્ન—(સે કિં તં સજ્ઞાણ) સ્વાધ્યાય તપ કયા—કિતને પ્રકાર કા હૈં ? ઉત્તર—(સજ્ઞાણ પંચવિદ્દે પળ્લન્તે) સ્વાધ્યાય તપ પાંચ પ્રકાર કા હૈં । અકાલ—વેલા કા પરિહાર કરતે હુર અપની શક્તિ કે અનુસાર શ્રુતકા અધ્યયન કરના સ્વાધ્યાય હૈ, ઉસકે વે પાંચ પ્રકાર યે હૈં—(વાયણા, પુચ્છણા, પરિયટ્ટણા, અણુપ્પેહા, ધમ્મકહા)વાચના, પ્રચ્છના, પરિવર્તના, અનુપ્રેક્ષા ઁવં ધર્મકથા । (સે તં સજ્ઞાણ) ઇસ પ્રકાર સ્વાધ્યાય પાંચ પ્રકાર કા હૈં । આચાર્યાદિક

વૃત્ત્ય, સાધર્મિક—સમાનધર્મિવાળાનું વૈયાવૃત્ત્ય, કુલ—એક આચાર્યની સંતતિ રૂપ મુનિજનોનું વૈયાવૃત્ત્ય, ગણ—કુલસમૂહરૂપ ગચ્છનું વૈયાવૃત્ત્ય, અને ગણના સમૂહરૂપ સંઘનું વૈયાવૃત્ત્ય કરવું; એ બધા વૈયાવૃત્ત્ય તપના ભેદ છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં સજ્ઞાણ) સ્વાધ્યાય તપ શું છે—કેટલા પ્રકારનું છે ? ઉત્તર—(સજ્ઞાણ પંચવિદ્દે પળ્લન્તે) સ્વાધ્યાય તપ પાંચ પ્રકારનું છે. અકાલવેળાનો ત્યાગ કરીને પોતાની શક્તિ અનુસાર શ્રુતનું અધ્યયન કરવું તે સ્વાધ્યાય છે. તેના એ પાંચ પ્રકાર આ છે—(વાયણા, પુચ્છણા, પરિયટ્ટણા, અણુપ્પેહા, ધમ્મકહા) વાચના, પ્રચ્છના, પરિવર્તના, અનુપ્રેક્ષા તેમજ ધર્મકથા. (સે તં સજ્ઞાણ) આ પ્રકારે સ્વાધ્યાય પાંચ પ્રકારના છે. આચાર્ય આદિક પાસેથી સૂત્ર આદિક ગ્રંથો કરવાં તે ‘વાચના’ છે. સૂત્ર આદિને પૂછવાં તે ‘પ્રચ્છના’ છે. શીખાવેલાં સૂત્રનું વિસ્મરણ ન થઈ જાય તે

કહા ૫, સે તં સજ્ઞાણે । સે કિં તં જ્ઞાણે ? જ્ઞાણે ચઉવ્વિહે પણ્ણત્તે, તં જહા—અટ્ટજ્ઞાણે ૧, રુદ્ધજ્ઞાણે ૨, ધમ્મજ્ઞાણે ૩, સુક્કજ્ઞાણે ૪ ।

‘પુચ્છણા’ પ્રચ્છના, ૧૨। ‘પરિવર્તના’ પરિવર્તના=અધીતસ્ય સૂત્રસ્ય ‘મા ભૂદ્ વિસ્મરણ’—મિતિ કર્મનિર્જરાર્થં પુનઃ પુનઃ કસ્મિંશ્ચિદેકસ્મિન્ વસ્તુનિ અન્તર્મુહર્તમાત્રકાલં ચિત્તં સ્થિરીકૃત્ય ચિન્તનં, તત્પઠનં, સૂત્રસ્ય ગુણનમિત્યર્થઃ । ૩। ‘અણુપ્પેહા’ અણુપ્રેક્ષા—સૂત્રવદર્થેઽપિ વિસ્મરણં સંભવતિ; અતઃ સોઽપિ પરિભાવનીષાં ઇત્યણુપ્રેક્ષણં—ચિન્તનિકેત્યર્થઃ । ૪। ‘ધમ્મકહા’ ધર્મકથા—ધર્મસ્ય=શ્રુતરૂપસ્ય યા કથા=વ્યાખ્યા સા । ૫। ‘સે તં સજ્ઞાણે’ સ એષ સ્વાધ્યાયઃ । ‘સે કિં તં જ્ઞાણે’ અથ કિં તદ્ ધ્યાનમ્ । ‘જ્ઞાણે ચઉવ્વિહે પણ્ણત્તે’ ધ્યાનં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞતમ્, તં જહા—તદ્વથા—૧—‘અટ્ટજ્ઞાણે’ આર્તધ્યાનમ્—ઋતં=દુઃખં, તસ્ય નિમિત્તં, યદ્વા—તત્ર ભવમ્—આર્તં તદ્વ તદ્ ધ્યાનમ્, આર્તસ્ય=દુઃસ્વિતસ્ય વા ધ્યાનમ્—આર્તધ્યાનમ્—મનોજ્ઞામનોજ્ઞવસ્તુસંયોગવિયોગાદિ-નિબન્ધનચિત્તવૈકલ્યરૂપમ્ । તથા ચોક્તમ્—

સે સૂત્રાદિક કા ગ્રહણ કરના ‘વાચના’ હૈ । સૂત્ર આદિ કા પૂછના ‘પ્રચ્છના’ હૈ । અધીત સૂત્ર કા વિસ્મરણ ન હો જાય, ઇસ વિચાર સે પુનઃ પુનઃ ડસકી આવૃત્તિ કરના ‘પરિવર્તના’ હૈ । સૂત્રાર્થ કા પુનઃ પુનઃ ચિન્તન કરના ‘અણુપ્રેક્ષા’ હૈ । તથા ધર્મ કી કથા કરના—‘ધર્મકથા’ હૈ । પ્રશ્ન—(સે કિં તં જ્ઞાણે) ધ્યાનકા કયા સ્વરૂપ હૈ—વહ કિતને પ્રકાર હૈ ? ઉત્તર—(જ્ઞાણે ચઉવ્વિહે પણ્ણત્તે) ધ્યાન કે ચાર પ્રકાર હૈ, (તં જહા) વે ચાર પ્રકાર યે હૈ—(અટ્ટજ્ઞાણે, રુદ્ધજ્ઞાણે, ધમ્મજ્ઞાણે, સુક્કજ્ઞાણે) આર્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન, ઇવં શુક્લધ્યાન । ઇનમેં દુઃખ કે નિમિત્ત અથવા દુઃખ મેં જો ધ્યાન હોતા હૈ વહ આર્તધ્યાન હૈ, મનોજ્ઞ ઇવં અમનોજ્ઞ વસ્તુ કે સંયોગ ઓર વિયોગ મેં જો ઇક પ્રકાર કી ચિત્ત મેં વિકલતા હોતી હૈ વહ આર્તધ્યાન હૈ । કહા મી હૈ—

વિચારથી ફરી ફરીને તેની આવૃત્તિ કરવી તે ‘પરિવર્તના’ છે. સૂત્રના અર્થનું ફરી ફરીને ચિંતન કરવું તે ‘અણુપ્રેક્ષા’ છે. તથા ધર્મની કથા કરવી ‘ધર્મ-કથા’ છે. પ્રશ્ન—(સે કિં તં જ્ઞાણે) ધ્યાનનું શું સ્વરૂપ છે ? તે કેટલા પ્રકારનું છે ? ઉત્તર—(જ્ઞાણે ચઉવ્વિહે પણ્ણત્તે) ધ્યાનના ચાર પ્રકાર છે, (તં જહા) તે આ છે—(અટ્ટજ્ઞાણે, રુદ્ધજ્ઞાણે, ધમ્મજ્ઞાણે, સુક્કજ્ઞાણે,) આર્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મ-ધ્યાન તેમજ શુક્લધ્યાન. તેમાં દુઃખને નિમિત્તે અથવા દુઃખને સમયે જે ધ્યાન થાય છે તે આર્તધ્યાન છે, મનોજ્ઞ તેમજ અમનોજ્ઞ વસ્તુના સંયોગથી તેમજ વિયોગથી જે એક પ્રકારની ચિત્તમાં વિકળતા થાય છે તે આર્તધ્યાન છે. કહ્યું પણ છે—

राज्योपभोगशयनासनवाहनेषु, स्त्रीगन्धमाल्यमणिरत्नविभूषणेषु ।

इच्छाभिलाषमतिमात्रमुपैति मोहाद्, ध्यानं तदार्त्तमिति संप्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥१॥

२-‘रुद्रज्ज्ञाणे’ रौद्रध्यानम्-रोदयत्यपरान् इति रुद्रः=प्राण्युपघातादिपरिणतो जीवस्तस्य कर्म रौद्रम्-हिंसावतिक्रूरतारूपं, तद्रूपं ध्यानं रौद्रध्यानम् । तदुक्तम्—

संछेदनैर्दहनभञ्जनमारणैश्च, बन्धप्रहारदमनैर्विनिकृन्तनैश्च ।

यो याति रागमुपयाति च नानुकम्पां, ध्यानं तु रौद्रमिति तत्प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥२॥ इति ।

राज्योपभोगशयनासनवाहनेषु, स्त्रीगन्धमाल्यमणिरत्नविभूषणेषु ।

इच्छाभिलाषमतिमात्रमुपैति मोहाद्, ध्यानं तदार्त्तमिति संप्रवदन्ति तज्ज्ञाः” ॥ १ इति॥

राज्य का उपभोग, पलङ्ग आदि सुकोमल शय्या, सुन्दर आसन, घोड़े हाथी आदि वाहन, मनोहारिणी स्त्रियाँ, इत्र आदि सुगन्धित वस्तुएँ, सुन्दर सुन्दर पुष्पां की सुलज्जित मालाये, तथा मणिरत्नमय आभूषण, इन सबों में मोह के कारण जो मनुष्य की उत्कट अभिलाषा है, उस अभिलाषा को विज्ञ जन ‘आर्त्तध्यान’ कहते हैं ॥ १ ॥

“रोदयति अपरान् इति रुद्रः” जो दूसरों को रुलाता है वह रुद्र है, अर्थात् प्राणियों की उपघात आदि क्रिया में लवलीन जो जीव है वह रुद्र है, रुद्र का जो कर्म वह रौद्र है । उसका हिंसादिक अतिक्रूरतारूप जो ध्यान है वह रौद्रध्यान है ॥ कहा भी है—

संछेदनैर्दहनभञ्जनमारणैश्च बन्धप्रहारदमनैर्विनिकृन्तनैश्च ।

यो याति रागमुपयाति च नानुकम्पां, ध्यानं तु रौद्रमिति तत्प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥२॥

राज्योपभोगशयनासनवाहनेषु स्त्रीगन्धमाल्यमणिरत्नविभूषणेषु ।

इच्छाभिलाषमतिमात्रमुपैति मोहाद्, ध्यानं तदार्त्तमिति संप्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥१॥

राज्यનો ઉપભોગ, પલંગ આદિ સુકોમલ શય્યા, સુંદર આસન, ઘોડા હાથી આદિ વાહન, મનોહારિણી સ્ત્રીઓ, અત્તર આદિ સુગંધિત વસ્તુઓ, સુંદર સુંદર પુષ્પોની બનાવેલી સુલલિત માળાઓ, તથા મણિરત્નમય આભૂષણો, આ બધાંમાં મોહને કારણે જે મનુષ્યની ઉત્કટ અભિલાષા છે તે અભિલાષાને વિદ્વાનો ‘આર્તધ્યાન’ કહે છે. (૧)

“રોદયતિ અપરાન્ ઇતિ રુદ્રઃ” જે બીજાંને રોવરાવે તે રુદ્ર છે, અર્થાત્ પ્રાણીઓની ઉપઘાત (મારવું) આદિ ક્રિયાઓમાં લવલીન રહેતો જે જીવ છે તે રુદ્ર છે, રુદ્રનું જે કર્મ તે રૌદ્ર છે. તેનું હિંસાદિક અતિક્રૂરતા-રૂપ જે ધ્યાન છે તે રૌદ્રધ્યાન છે. કહ્યું પણ છે:—

સંછેદનૈર્દહનભજ્જનમારણૈશ્ચ, બન્ધપ્રહારદમનૈર્વિનિકૃન્તનૈશ્ચ ।

યો યાતિ રાગમુપયાતિ ચ નાનુકમ્પાં, ધ્યાનં તુ રૌદ્રમિતિ તત્પ્રવદન્તિ તજ્ઞાઃ ॥૨॥

૩-‘ધર્મજ્ઞાણે’ ધર્મધ્યાનમ્=સર્વજ્ઞાઽઽજ્ઞાધનુચિન્તનમ્ । ઉક્તશ્ચ—

“ સૂત્રાર્થસાધનમહાવ્રતધારણેષુ,

બન્ધપ્રમોક્ષગમનાગમનેષુ ચિન્તા ।

પञ्चेन्द्रિયव्युपरमश्च दया च भूते,

ध्यानं तु धर्ममिति संप્રवदन्ति तज्ज्ञाः” ॥૩॥ ઇતિ ।

જો મનુષ્ય છેદન, દહન અર્થાત્ જલના, મઝન—તોડના—ભાંગના. મારણ—પ્રાણરહિત કરના, બાંધના, પ્રહાર કરના, દમન કરના, કાટના આદિ ક્રિયાઓં મેં આનન્દ માનતા હૈ, પ્રાણિયોં પર જિસકો અનુકમ્પા નહીં હોતી હૈ, ણેસે મનુષ્ય કી उन दुष्प्रवृत्तियों को विज्ञ जन ‘રૌદ્રધ્યાન’ કહતે હૈ ॥ ૨ ॥

સર્વજ્ઞ કી આજ્ઞા આદિ કા અનુચિન્તનરૂપ ધર્મધ્યાન હૈ । કહા મી હૈ—

સૂત્રાર્થસાધનમહાવ્રતધારણેષુ, બન્ધપ્રમોક્ષગમનાગમનેષુ ચિન્તા ।

પञ्चेन्द्रિયव्युपरमश्च दया च भूते, ध्यानं तु धर्ममिति संप्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥૩॥

સૂત્ર ઓર સૂત્ર કૈ અર્થ કા ચિન્તન કરના, સાધન કા ચિન્તન કરના, અર્થાત્ સાધૂપકરણ કી પ્રતિલેખના કરને મેં તત્પરતા રખના, મહાવ્રત ધારણ કા ચિન્તન કરના અર્થાત્ મહાવ્રત જો ધારણ કિયે હૈં उनमें कोई अतिचार न लगे इसके लिये सर्वदा प्रयत्न-शील होना . बन्ध और मोक्ष के स्वरूप का चिन्तन करना, ‘ચતુર્ગતિક સંસાર મેં જીવ કા ગમનાગમન કિસ કારણ સે હોતા હૈ’ उसका चिन्तन करना, પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કા નિગ્રહ કરના,

જે મનુષ્ય છેદન, દહન અર્થાત્ બાળવું, ભાંગન=તોડવું—ભાંગવું, મારણ—પ્રાણરહિત કરવું, બાંધવું, પ્રહાર કરવો, દમન કરવું, કાપવું આદિ ક્રિયાઓમાં આનંદ માને છે, પ્રાણિઓ ઉપર જેને દયા નથી આવતી એવા મનુષ્યની એ દુષ્પ્રવૃત્તિઓને વિદ્વાનો ‘રૌદ્રધ્યાન’ કહે છે. (૨)

સર્વજ્ઞની આજ્ઞા આદિનું અનુચિન્તનરૂપ ધર્મધ્યાન છે. કહ્યું પણ છે:—

સૂત્રાર્થસાધનમહાવ્રતધારણેષુ, બન્ધપ્રમોક્ષગમનાગમનેષુ ચિન્તા ।

પञ्चेन्द्रિયव्युपरमश्च दया च भूते, ध्यानं तु धर्ममिति संप्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥૩॥

સૂત્ર અને સૂત્રના અર્થનું ચિન્તન કરવું, સાધનનું ચિન્તન કરવું અર્થાત્ સાધુનાં ઉપકરણની પ્રતિલેખના કરવામાં તત્પરતા રાખવી, મહાવ્રત ધારણનું ચિન્તન કરવું, અર્થાત્ મહાવ્રત જે ધારણ કર્યાં છે તેમાં કોઈ અતિચાર ન લાગે તે માટે સર્વદા પ્રયત્નશીલ રહેવું, બાંધ અને મોક્ષના સ્વરૂપનું ચિન્તન કરવું, ચતુર્ગતિક સંસારમાં જીવનું આવવા-જવાનું શું કારણથી થાય છે ?

४-‘शुक्लज्ञाने’ शुक्लध्यानम्-शुक्लं=शोकं क्लमयति=अपनयतीति शुक्लं-भवक्षयकारणं, शुक्लं च तद् ध्यानं शुक्लध्यानम् । तथा चोक्तम्—

यस्येन्द्रियाणि विषयेषु पराङ्मुखानि,

संकल्पकल्पनविकल्पविकारदोषैः ।

योगैः स च त्रिभिरहो निभृतान्तरात्मा,

ध्यानोत्तमं प्रवरशुक्लमिदं वदन्ति ॥ ३ ॥ इति ।

एवं सभी प्राणियों पर दया रखना, इस प्रकार की आत्मा की शुभ प्रवृत्ति को विज्ञान जन ‘धर्मध्यान’ कहते हैं ॥३॥

“ शुक्लं-शोकं क्लमयतीति शुक्लं ” शोक को जो नष्ट करे वह ‘शुक्ल’ है। “शुक्लं च तद् ध्यानं च शुक्लध्यानं” शुक्लरूप जो ध्यान वह शुक्लध्यान है। अर्थात् जो भवक्षय का कारण होता है अथवा जिससे शोक का अपनयन होता है, वह शुक्लध्यान है। कहा भी है—

यस्येन्द्रियाणि विषयेषु पराङ्मुखानि, संकल्पकल्पनविकल्पविकारदोषैः ।

योगैः स च त्रिभिरहो निभृतान्तरात्मा, ध्यानोत्तमं प्रवरशुक्लमिदं वदन्ति ॥

जिनकी इन्द्रिया विषयप्रवृत्तियों से रहित हैं; जो संकल्प-विकल्प-जनित विकार-दोषों से वर्जित हैं, कायिक, वाचिक, मानसिक तीनों योगों को वश कर लेने के कारण जिनकी आत्मा निश्चल है, ऐसे महात्माओं की प्रशस्त परिणति को विज्ञान जन ‘शुक्लध्यान’ कहते हैं ॥ ४ ॥

तेનું ચિંતન કરવું, પાંચેય ઇન્દ્રિયોનો નિગ્રહ કરવો, તેમ જ બધાં પ્રાણિઓ ઉપર દયા રાખવી, એ પ્રકારની આત્માની શુભ પ્રવૃત્તિને વિદ્વાનો ‘ધર્મધ્યાન’ કહે છે.

“ શુક્લં-શોકં ક્લમયતીતિ શુક્લં ” શોકનો જે નાશ કરે તે ‘શુક્લ’ છે. “શુક્લં ચ તદ્ ધ્યાનં ચ-શુક્લધ્યાનં” શુક્લરૂપ જે ધ્યાન તે શુક્લધ્યાન છે, અર્થાત્ જે ભવક્ષયનું કારણ હોય છે અથવા જેનાથી શોકનું અપનયન થાય છે તે શુક્લધ્યાન છે. કહ્યું પણ છે—

યસ્યેન્દ્રિયાણિ વિષયેષુ પરાઙ્મુખાનિ, સંકલ્પકલ્પનવિકલ્પવિકારદોષૈઃ ।

યોગૈઃ સ ચ ત્રિભિરહો નિભૃતાન્તરાત્મા, ધ્યાનોત્તમં પ્રવરશુક્લમિદં વદન્તિ ॥૧॥

જેની ઇન્દ્રિયો વિષયપ્રવૃત્તિથી રહિત છે, જે સંકલ્પવિકલ્પજનિત વિકારદોષોથી વર્જિત છે, કાયિક, વાચિક, માનસિક, ત્રણેય યોગોને વશ કરી લેવાના કારણે જેનો આત્મા નિશ્ચલ છે, એવા મહાત્માઓની પ્રશસ્ત પરિણતિને વિદ્વાનો ‘શુક્લધ્યાન’ કહે છે (૧).

અટ્ટજ્ઞાણે ચતુર્વિદ્ધે પળ્લન્તે; તં જહા-અમણ્ણસંપઓગ-
સંપપ્પત્તે તસ્સ વિપ્પઓગસંપપ્પણાગણ યાવિ ભવઈ ૧, મણ્ણ-

एषु चतुर्विधेषु ध्यानेषु प्रथममार्तध्यानं चतुर्विधमाह—‘अट्टज्ज्ञाणे चतुर्विद्वहे पण्णत्ते’
आर्तध्यानं चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, ‘तं जहा’ तद्यथा—१—‘अमणुण्णसंपओगसंपपुत्ते तस्स विप्प-
ओगसंसमण्णागए यावि भवइ’ अमनोज्ञसम्प्रयोगसम्प्रयुक्तस्तस्य विप्रयोगस्मृतिसमन्वा-
गतश्चापि भवति—अमनोज्ञः=अनिष्टो यः शब्दादिः, तस्य सम्प्रयोगो=योगस्तेन सम्प्रयुक्तो यः
स तथाविधः सन् तस्य अमनोज्ञशब्दादेः विप्रयोगस्मृतिः=वियोगचिन्ता, तथा समन्वागतः=
अनुगतश्चापि भवति, एतद् आर्तध्यानम्; ध्यानध्यानवतोरभेदोपचाराद् ध्यानवानपि ध्यान-
मुच्यते, एवमग्रेऽपि बोध्यम् । २—मणुण्णसंपओगसंपपुत्ते तस्स अविप्पओगसंस-

इन चार प्रकार के ध्यानों में प्रथम जो आर्तध्यान है, वह चार प्रकार का है, इसी बात को बताने के लिये सूत्रकार कहते हैं—(अट्टज्ज्ञाणे चतुर्विद्वहे पण्णत्ते) आर्तध्यान ४ प्रकार का कहा गया है । (तं जहा) वह इस प्रकार से—(अमणुण्णसंप-ओगसंपपुत्ते तस्स विप्पओगसंसमण्णागए यावि भवइ) अमनोज्ञ-अनिष्ट शब्दादि के संबंध होने पर उसके विप्रयोग-दूर करने के लिये जो बारंबार विचार किया जाता है वह अनिष्टसंयोगज आर्तध्यान है । यहां ध्याता को जो ध्यान कहा है वह ध्यान और ध्यान-वान् में अभेद के उपचार से जानना चाहिये । इसी तरह से आगे के ध्यानों में भी अभेद का उपचार जानना । (मणुण्णसंपओगसंपपुत्ते तस्स अविप्पओगसंसमण्णागए यावि

આ ચારેય પ્રકારનાં ધ્યાનોમાંથી પ્રથમ જે આર્તધ્યાન છે તે ચાર પ્રકારનું છે, એ વાત કહેવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—(અટ્ટજ્ઞાણે ચતુર્વિદ્ધે પળ્લન્તે) આર્તધ્યાન ચાર પ્રકારનાં કહેલાં છે (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(અમણ્ણસંપ-ઓગસંપપ્પત્તે તસ્સ વિપ્પઓગસંપપ્પણાગણ યાવિ ભવઈ) અમનોજ્ઞ-અનિષ્ટ શબ્દાદિકનો સંબંધ થતાં તેને વિપ્રયોગ-દૂર કરવા માટે જે વારંવાર વિચાર કરવામાં આવે છે તે અનિષ્ટસંયોગજન્ય આર્તધ્યાન છે. અહીં ધ્યાન કરનારને જે ધ્યાન કહેવામાં આવ્યું છે તે ધ્યાન અને ધ્યાનવાનમાં અભેદ (એકતા)ના ઉપચારથી થયો છે તેમ જાણવું જોઈએ, એ જ રીતે આગળના ધ્યાનોમાં પણ અભેદનો ઉપચાર જાણી લેવો. (મણ્ણસંપઓગસંપપ્પત્તે તસ્સ અવિપ્પઓગસંપપ્પણાગણ યાવિ ભવઈ) મનોજ્ઞ-ઈષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોની

સંપઓગસંપઉત્તે તસ્સ અવિપ્પઓગસહસમળ્લાગણે યાવિ
ભવહ ૨, આયંકસંપઓગસંપઉત્તે તસ્સ વિપ્પઓગસહસમળ્લાગણે
યાવિ ભવહ ૩, પરિજૂસિયકામભોગસંપઉત્તે તસ્સ અવિપ્પઓગ-
સહસમળ્લાગણે યાવિ ભવહ ૪। અટ્ટસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લ-

મળ્લાગણે યાવિ ભવહ ' મનોજ્ઞસમ્પ્રયોગસમ્પ્રયુક્તસ્તસ્યાઽવિપ્રયોગસ્મૃતિસમન્વાગતશ્ચાપિ
ભવતિ—મનોજ્ઞઃ=ઇષ્ટો યઃ શબ્દાદિઃ, તસ્ય સમ્પ્રયોગઃ=સંયોગસ્તેન સમ્પ્રયુક્તઃ સન્ તસ્ય=
મનોજ્ઞશબ્દાદેરવિપ્રયોગસ્મૃતિઃ=અવિયોગચિન્તા, તથા સમન્વાગતઃ=સંયુક્તશ્ચાપિ ભવતિ ।

૩ — આયંકસંપયોગસંપઉત્તે તસ્સ વિપ્પઓગસહસમળ્લાગણે યાવિ ભવહ '
આતંકસમ્પ્રયોગસમ્પ્રયુક્તસ્તસ્ય વિપ્રયોગસ્મૃતિસમન્વાગતશ્ચાપિ ભવતિ—આતંકો રોગઃ, તસ્ય
સમ્પ્રયોગઃ=સંયોગઃ, તેન સમ્પ્રયુક્તઃ સન્ તસ્યાઽતંકસ્ય વિપ્રયોગસ્મૃતિઃ=વિયોગચિન્તા, તથા
સમન્વાગતશ્ચાપિ ભવતિ । ૪—' પરિજૂસિયકામભોગસંપઓગસંપઉત્તે તસ્સ અવિપ્પઓગ-
સહસમળ્લાગણે યાવિ ભવહ ' પરિજુષ્ટકામભોગસમ્પ્રયોગસમ્પ્રયુક્તસ્તસ્યાઽવિપ્રયોગસ્મૃતિ-
સમન્વાગતશ્ચાપિ ભવતિ, પરિ=સમન્તાત્, જુષ્ટઃ=સેવિતઃ—પ્રીતો વા યઃ કામભોગસ્તસ્ય સંપ્રયોગેણ
સંપ્રયુક્તઃ સન્, તસ્ય કામભોગસ્ય અવિપ્રયોગસ્મૃતિઃ=અવિયોગચિન્તા તથા, સમન્વાગતઃ=
સંયુક્તશ્ચાપિ ભવતિ । 'અટ્ટસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પળ્લાગણા' આર્તસ્ય સ્વલુ ધ્યા-

ભવહ) મનોજ્ઞ-ઇષ્ટ શબ્દાદિક વિષયો કી સંપ્રાપ્તિ હોને પર અનેક અવિપ્રયોગ—વિયોગ ન
હોને કા વારંવાર ચિન્તવન કરના સો વહ ઇષ્ટસંયોગજ આર્તધ્યાન હૈ । (આયંકસંપઓગ-
સંપઉત્તે તસ્સ વિપ્પઓગસહસમળ્લાગણે યાવિ ભવહ) આતંક—રોગ કે સંપ્રયોગ—સંયોગ
હોને પર જો ઉસકે વિયોગ હોને કા વારંવાર ચિન્તવન કરના હૈ વહ વેદનાજન્ય આર્ત-
ધ્યાન હૈ । (પરિજૂસિયકામભોગસંપઓગસંપઉત્તે તસ્સ અવિપ્પઓગસહસમળ્લાગણે
યાવિ ભવહ) સેવિત કામભોગોં કી પ્રાપ્તિ હોને પર અનેક કમી મી વિયોગ ન હો એસા
વિચાર કરના સો યહ ચૌથા આર્તધ્યાન હૈ । (અટ્ટસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા

સંપ્રાપ્તિ થતાં તેમને અવિપ્રયોગ—વિયોગ ન થાય તેનું વારંવાર ચિન્તવન
કરવું તે ઇષ્ટસંયોગજન્ય આર્તધ્યાન છે. (આયંકસંપઓગસંપઉત્તે તસ્સ વિપ્પઓગ-
સહસમળ્લાગણે યાવિ ભવહ) આતંક—રોગને સંપ્રયોગ—સંયોગ થતાં જે તેને
વિયોગ થવાનું વારંવાર ચિન્તવન કરે છે તે વેદનાજન્ય આર્તધ્યાન છે.
(પરિજૂસિયકામભોગસંપઓગસંપઉત્તે તસ્સ અવિપ્પઓગસહસમળ્લાગણે યાવિ ભવહ)
સેવન કરેલ કામભોગોની પ્રાપ્તિ થતાં તેમને કદી પણ વિયોગ ન થાય

કચ્છણા પળ્લતા; તં જહા—કંદળયા ૧, સોયળયા ૨, તિપ્પળયા ૩, વિલવળયા ૪ । રુદ્ધજ્ઞાણે ચતુર્વિહે પળ્લત્તે; તં જહા—હિંસાળુવંધી ૧, મોસાળુવંધી ૨, તેળાળુવંધી ૩, સારકચ્છણા-

નસ્ય ચત્વારિ લક્ષણાનિ પ્રજ્ઞમાનિ. ‘તં જહા’ તથા—૧ ‘કંદળયા’ કન્દનતા=સશબ્દાઽ-શ્રુપ્રક્ષેપરૂપા । ૨ ‘સોયળયા’ શોચનતા=માનસગ્લાનિરૂપા । ૩ ‘તિપ્પળયા’ તેપનતા=નિશ્શબ્દાશ્રુમોચનમ્ । ૪ ‘વિલવળયા’ વિલપનતા=પુનઃ પુનઃ સ્વકૃતાશુભકર્મણામુચ્ચારણમ્, “ક્રીદશં પૂર્વજન્મનિ મયા દુષ્કૃતમાચરિતં ચાપ્લમધુનેદશં મયા લબ્યતે” ઇત્યાદિરૂપમ્ । ‘રુદ્ધજ્ઞાણે ચતુર્વિહે પળ્લત્તે’ ગૌદ્રધ્યાનં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞમ્, ‘તં જહા’ તથા—૧ ‘હિંસાળુવંધી’ હિંસાનુબન્ધિ—હિંસાં=પરપ્રાણહરણરૂપામનુબન્ધનાતિ=કરોતીતિ હિંસાનુબન્ધિ, ૨—‘મોસા-

પળ્લતા) હસ આર્તધ્યાન કે ૪ ચાર લક્ષણ બતલાવે ગયે હૈ; (તં જહા) વે હસ પ્રકાર હૈ—(કંદળયા સોયળયા તિપ્પળયા વિલવળયા) કન્દનતા—શબ્દસહિત આંમુઓં કો નિકાલતે હુવે રોના (૧) । શોચનતા—માનસિક ગ્લાનિ કરના (૨) । તેપનતા—એસા રોદન હો કિ જિસમેં રોને કો આવાજ આવે નહીં; પરંતુ આંસુ નિકલતે રહે (૩) । વિલપનતા—વારંવાર અપને કિયે હુવે કર્મોં કા જિસમેં ચિન્તવન કરતે હુવે ઉચ્ચારણ હો, જૈસે—મેંને પૂર્વજન્મ મેં કૈસે પાપ કિયે, જિસકા ફલ મુજે ભોગના પડ રહા હૈ; યે સબ આર્તધ્યાન કે લક્ષણ હૈ । હન લક્ષણોં સે આર્તધ્યાન કો સત્તા જાની જાતી હૈ । (રુદ્ધજ્ઞાણે ચતુર્વિહે પળ્લત્તે) ગૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, જૈસે—(હિંસાળુવંધી, મોસાળુવંધી, તેળાળુવંધી, સારકચ્છણાળુવંધી) જિસ ધ્યાન મેં હિંસા કા અનુવંધ હો વહ હિંસાનુવંધી ગૌદ્રધ્યાન હૈ ।

એવો વિચાર કરવો તે આ ચોથું આર્તધ્યાન છે. (અદૃશ્ય ણં જ્ઞાણમ્ ચત્તારિ લક્ષણા પળ્લતા) આ આર્તધ્યાનનાં ચાર લક્ષણ બતાવેલાં છે, (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(કંદળયા સોયળયા તિપ્પળયા વિલવળયા) કન્દન—શબ્દ સાથે આંસુઓ પાડતાં રડવું (૧), શોચન—માનસિક ગ્લાનિ કરવી (૨), તેપન—એવું રોદન થાય કે જેમાં રોવાનો અવાજ આવે નહિ; પરંતુ આંસુ વહેતાં રહે (૩), વિલપન—વારંવાર પોતે કરેલાં કર્મોંનું ચિન્તવન કરતાં મોટેથી વિલાપ કરવો, જેમકે—મેં પૂર્વ જન્મમાં કેવાં પાપ કર્યાં કે જેનું ફળ મારે ભોગવવું પડે છે. આ બધાં આર્તધ્યાનનાં લક્ષણ છે. એ લક્ષણોથી આર્તધ્યાનની સત્તા બાણી લેવાય છે. (રુદ્ધજ્ઞાણે ચતુર્વિહે પળ્લત્તે) ગૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકારનું કહેલું છે, (તં જહા) જેમ કે—(હિંસાળુવંધી, મોસાળુવંધી, તેળાળુવંધી, સારકચ્છણાળુવંધી)

**ગુવંધી ૪। રુદ્રસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પણ્ણત્તા, તં જહા-
ઉસણ્ણદોસે ૧, બહુદોસે ૨, અણ્ણાણદોસે ૩, આમરણંતદોસે**

ગુવંધી' મૃષાનુબન્ધિ—મૃષા=અસત્યં, તદનુવન્નાતિ=કરોતીતિ મૃષાનુબન્ધિ, અસત્યવચ્ચનેન ધર્મોપ-
ધાતકુમાર્ગપ્રરૂપગાનિન્દાદિકારકમિત્યર્થઃ । ૩—'તેગાણુવંધી' સ્તૈન્યાનુબન્ધિ=અદત્તાદાનકાર-
કમ્, ૪ 'સારલક્ષણાણુવંધી' સંરક્ષણાનુબન્ધિ—વિષયસાધનસ્ય ધનાદિકસ્ય તંરક્ષણે અનુબન્ધઃ=
સમ્બન્ધોઽસ્યાસ્તીતિ તત્ સંરક્ષણાનુબન્ધિ । 'રુદ્રસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા
પણ્ણત્તા' રૌદ્રસ્ય સ્વલુ ધ્યાનસ્ય ચત્તારિ લક્ષણાનિ પ્રજ્ઞાનિ, 'તં જહા' તથથા - 'ઉસણ્ણ-
દોસે' વાહુલ્યદોષઃ—અનુપરતતયા વાહુલ્યેન=પ્રાચુર્યેણ દોષો હિંસાઽનૃતાઽદત્તાઽદાનસંરક્ષણા-
નામન્યતમઃ—વાહુલ્યદોષઃ । 'ઉસન્ન' इति વાહુલ્યાર્થે દેશીયશબ્દઃ । ૧। તથા—'બહુદોસે' બહુ-
દોષઃ—બહુષુ હિંસાદિષુ પ્રવૃત્તિલક્ષણો દોષો બહુદોષઃ । ૨। 'અણ્ણાણદોસે' અજ્ઞાનદોષઃ—અજ્ઞાના-
ત્=કુશાસ્ત્રાદિસંસ્કારાત્ હિંસાદિષુ અધર્મસ્વરૂપેષુ ધર્મવુદ્ધિયા પ્રવૃત્તિલક્ષણો દોષોઽજ્ઞાનદોષઃ । ૩।

જિસ ધ્યાન મેં મૃષા—ઝૂઠા કા અનુવંધ હો વહ મૃષાનુવંધી રૌદ્રધ્યાન હૈ । જિસ ધ્યાન મેં ચોરી
કરને કા અનુવંધ હો વહ સ્તૈન્યાનુવંધી રૌદ્રધ્યાન હૈ । જિસ ધ્યાન મેં વિષય કે સાધનભૂત
ધનાદિક કે તંરક્ષણ કા અનુવંધ હૈ વહ તંરક્ષણાનુવંધી રૌદ્રધ્યાન હૈ । (રુદ્રસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ
લક્ષણા પણ્ણત્તા) ઇસ રૌદ્રધ્યાન કે ૪ લક્ષણ કહે હુણ હૈ, જૈસે—(ઉસણ્ણદોસે, બહુ-
દોસે, અણ્ણાણદોસે આમરણંતદોસે) હિંસા, ઝૂઠા, ચોરી આદિ પાપકર્મો મેં સે કિસી એક
પાપકર્મ મેં જો વાહુલ્યેન પ્રવૃત્તિ હોના સો ઉસન્નદોષ હૈ । હિંસાદિક સર્મો પાપ કર્મો મેં જો
વાહુલ્યેન પ્રવૃત્તિ હોના સો બહુદોષ હૈ । કુશાસ્ત્રાદિક કે સંસ્કારજન્ય અજ્ઞાન સે હિંસાદિકો
મેં ધર્મવુદ્ધિ સે પ્રવૃત્તિ હોના સો અજ્ઞાનદોષ હૈ । મરણપર્યન્ત પશ્ચાત્તાપ નહીં કરતે હુણ હિંસા-

જે ધ્યાનમાં હિંસાનો અનુબંધ હોય તે હિંસાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન છે. જે ધ્યાનમાં
મૃષા—જુઠાણાનો અનુબંધ હોય તે મૃષાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન છે. જે ધ્યાનમાં ચોરી
કરવાનો અનુબંધ હોય તે સ્તૈન્યાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન છે. જે ધ્યાનમાં વિષયના
સાધનભૂત ધન આદિકના સંરક્ષણનો અનુબંધ છે તે સંરક્ષણાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન
છે. (રુદ્રસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પણ્ણત્તા) આ રૌદ્રધ્યાનનાં ચાર લક્ષણ કહેલાં
છે; (તં જહા) જેમ કે—(ઉસણ્ણદોસે, બહુદોસે, અણ્ણાણદોસે, આમરણંતદોસે) હિંસા,
જુઠાણું, ચોરી, આદિ પાપકર્મોમાંથી કોઈ પણ એક પાપકર્મમાં જે બળવાન પ્રવૃત્તિ
થવી તે ઉસન્નદોષ છે. હિંસાદિક બધાં પાપકર્મોમાં જે બળવાન પ્રવૃત્તિ થવી તે બહુ-
દોષ છે. કુશાસ્ત્રાદિકનાં સંસ્કારજન્ય અજ્ઞાનથી હિંસાદિકમાં ધર્મવુદ્ધિથી પ્રવૃત્તિ
થવી તે અજ્ઞાનદોષ છે. મરણપર્યન્ત પશ્ચાત્તાપ કર્યા વગર હિંસાદિક કર્મોમાં

૪। ધમ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે ચત્ત્વડોયારે પળ્લત્તે; તં જહા-આણા-

‘આમરણંતદોસે’ આમરણાન્તદોષઃ—મરણમેવ અન્તો મરણાન્તઃ, મરણપર્યન્તમ્ અસંજ્ઞાતાનુ-
તાપસ્ય કાલશૌકરિકાદેરિવ યા હિંસાદિષુ પ્રવૃત્તિઃ સા પ્રવૃત્તિર્ગ્રામ્ય આમરણાન્તદોષઃ । ૪। એષુ
ધ્યાનેષુ આર્તરૌદ્રે ત્યાગ્યે ધર્મશુક્લે તુ ગ્રાહ્યે । ‘ધમ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે ચત્ત્વડોયારે પળ્લત્તે’
ધર્મધ્યાનં ચતુર્વિધં ચતુષ્પ્રત્યવતારં પ્રજ્ઞમમ્ । ધર્મધ્યાનં ચતુર્વિધં—ચતસ્રો વિધાઃ=સ્વરૂપ-
લક્ષણાલમ્બનાનુપ્રેક્ષારૂપાઃ પ્રકારા યસ્મિન્ તત્ તથોક્તમ્ । ચતુષ્પ્રત્યવતારં ચ—સ્વરૂપાદિષુ એકૈકસ્ય
ચતુષ્પ્રકારગતયા પ્રત્યવતારો=વિચારણીયત્વેન અવતરણં યસ્મિન્ તત્, પ્રત્યેકં ચતુર્વિધમિત્યર્થઃ, પ્રજ્ઞ-
મમ્ । તત્ર સ્વરૂપસ્ય ચાતુર્વિધ્યમાહ—તથથા—‘આણાવિચય’ આજ્ઞાવિચયમ્—આજ્ઞા=જિનપ્રવચનં,
તસ્યા વિચયઃ=વ્યાખ્યાનં યત્ર તત્તથા, આજ્ઞાગુણાનુચિન્તનમિત્યર્થઃ, આજ્ઞામેવં ચિન્તયેત્—આજ્ઞા
ભગવતઃ સર્વજ્ઞસ્ય પૂર્વાપરવિશુદ્ધા નિરવશેષજીવકાયહિતાનવદ્યા મહાર્થા મહાનુભાવા નિપુણજન-

દિકોં મેં પ્રવૃત્તિશીલરહના સો આમરણાન્તદોષ હૈ । ઇન ચાર ધ્યાનોં મેં આર્ત—રૌદ્ર—ધ્યાન છોડને
યોગ્ય હૈ, ઓર ધર્મધ્યાન એવં શુક્લધ્યાન યે દો ધ્યાન ગ્રાહ્ય હૈં । અબ ધર્મધ્યાન કા ભેદ કહતે
હૈ—(ધમ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે ચત્ત્વડોયારે પળ્લત્તે) ધર્મધ્યાન—સ્વરૂપ, લક્ષણ, આલમ્બન,
એવં અનુપ્રેક્ષા કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કા હૈ, ઇન ચારોં મેં મોં એક એક કે ચાર ચાર ભેદ
હોતે હૈં । ઇમ પ્રકાર કુલ ઇસકે ૧૬ ભેદ હો જાતે હૈં । ધર્મધ્યાન કે ચાર સ્વરૂપ યે હૈં—
(આણાવિચય, અવાયવિચય, વિવાગવિચય, સંઠાણવિચય,) આજ્ઞાવિચય, અપાયવિચય,
વિપાકવિચય, ઓર સંસ્થાનવિચય । તીર્થંકર પ્રભુ કી આજ્ઞા કા જિસમેં વિચાર ક્રિયા જાય
વહ આજ્ઞાવિચય ધર્મધ્યાન હૈ । તીર્થંકર પ્રભુકી આજ્ઞા કા ચિન્તવન ઇસમેં ઇસ પ્રકાર ક્રિયા
જાતા હૈ—ભગવાન કા આજ્ઞારૂપ પ્રવચન પૂર્વાપર મેં નિર્દોષ હૈ, નિરવશેષ જીવોં કા હિતકર્તા

પ્રવૃત્તિશીલ રહેવું તે આમરણાન્ત દોષ છે. આ ચારેય ધ્યાનોમાં આર્ત—રૌદ્ર-
ધ્યાન છોડવા યોગ્ય છે અને ધર્મધ્યાન તેમજ શુક્લધ્યાન એ એ ધ્યાન ગ્રહણ
કરવા યોગ્ય છે. હવે ધર્મધ્યાનના પ્રકાર કહે છે—(ધમ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે ચત્ત્વ-
ડોયારે પળ્લત્તે) ધર્મધ્યાન, સ્વરૂપ, લક્ષણ, આલમ્બન તેમજ અનુપ્રેક્ષાના ભેદથી
ચાર પ્રકારનું છે. આ ચારમાં પણ એકએકના ચાર ચાર ભેદ થાય છે.
એ રીતે કુલ તેના સોળ (૧૬) ભેદ થઈ જાય છે. (તજહા) ધર્મધ્યાનના ચાર ૪
સ્વરૂપ આ છે—(આણાવિચય, અવાયવિચય, વિવાગવિચય, સંઠાણવિચય) આજ્ઞા-
વિચય, અપાયવિચય, વિપાકવિચય અને સંસ્થાનવિચય, તીર્થંકર પ્રભુની
આજ્ઞાનો જેમાં વિચાર કરવામાં આવે તે આજ્ઞાવિચય ધર્મધ્યાન છે. તીર્થં-
કર પ્રભુની આજ્ઞાનું ચિન્તવન એમાં આ રીતે કરાય છે—ભગવાનનું આજ્ઞારૂપ
પ્રવચન પૂર્વાપરમાં નિર્દોષ છે, તમામ જીવોને હિતકર્તા છે, અનવદ્ય છે,

વિચર ૧, અપાયવિચર ૨, વિપાકવિચર ૩, સંસ્થાનવિચર ૪।
ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પણ્ણત્તા, તં જહા-આણા-

વિજ્ઞેયા દ્રવ્યપર્યાયપ્રપञ્ચબોધિની અનાધનન્તા ભવપ્રપञ્ચમોચની નરકનિગોદાદિદુઃસ્વવિધ્વંસિની કર્મ-
 પ્રન્થિભેદિની વિવતે । ૨-‘અપાયવિચર’ અપાયવિચયમ્-આપાયા=રાગદ્વેષાદિજન્યા અન-
 થાસ્તેષાં વિચયો યત્ર તત્તથા, વિષયદોષાઽનુચિન્તનમિત્યર્થઃ । ૩ ‘વિપાકવિ-
 ચયમ્-વિપાકઃ=કર્મફલં, તસ્ય વિચયો યત્ર તત્તથા, કર્મફલાઽનુચિન્તનમિત્યર્થઃ । ૪-
 ‘સંસ્થાનવિચર’ સંસ્થાનવિચયમ્-સંસ્થાનાનિ=લોકદ્વીપસમુદ્રાદિકૃતયઃ, તેષાં વિચયો યત્ર તત્
 તથા, ‘ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પણ્ણત્તા’ધર્મસ્ય સ્વલ્પ ધ્યાનસ્ય ચત્તારિ લક્ષ-
 ãાનિ પ્રજ્ઞતાનિ, ‘તં જહા’ તથથા-૧-‘આણારુઈ’ આજ્ઞારુચિઃ-આજ્ઞા=સર્વજ્ઞવચનરૂપા, તથા

હૈ, અનવદ્ય હૈ, ગંભીર હૈ, પ્રભાવશાલી હૈ. નિપુણજનવિજ્ઞેય હૈ, દ્રવ્ય એવં પર્યાયોં કા બોધક
 હૈ, અનાદિ એવં અનન્ત હૈ, સંસાર કા અન્ત કરને વાલા હૈ. નરક એવં નિગોદાદિક કૈ દુઃસ્વોં
 કા વિનાશક હૈ ઓર કર્મપ્રન્થિ કા ઉચ્છેદક હૈ ॥૧॥ અપાયવિચય-રાગદ્વેષ આદિ સે જન્ય
 અનર્થોં કા નામ અપાય હૈ । ઇનકા વિચારના જિસમેં હોતા હૈ-અર્થાત્ શબ્દાદિ વિષયોં કૈ
 દોષોં કા અનુચિન્તન જિસમેં કિયા જાતા હૈ વહ અપાયવિચય ધર્મધ્યાન હૈ ॥૨॥ વિપાક-
 વિચય-કર્મફલ કા નામ વિપાક હૈ, ઇસકા ચિન્તન કરના અર્થાત્ કર્મ સે વદ્ધ હો આત્મા
 ચતુર્ગતિક સંસાર મેં ભ્રમણ કરતા હૈ એસા જો વિચારના સો વિપાકવિચય હૈ ॥૩॥ સંસ્થાન-
 વિચય-ચૌથા ભેદ હૈ, સંસ્થાનકા અર્થ લોકદ્વય એવં સમુદ્રાદિક કા આકાર હૈ. ઇનકા
 વિચાર કરના સો સંસ્થાનવિચય હૈ ॥૪॥ (ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પણ્ણત્તા)

ગંભીર છે, પ્રભાવશાલી છે, નિપુણ જ્ઞોકોથી જાણવા યોગ્ય છે, દ્રવ્ય તેમજ
 પર્યાયોનું બોધક છે, અનાદિ અનંત છે, સંસારનો અંત કરવાવાળું છે,
 નરક તેમજ નિગોદ આદિકનાં દુઃખોનું વિનાશક છે, કર્મની પ્રન્થિનું ઉચ્છે-
 દક છે (૧). અપાયવિચય-રાગદ્વેષ આદિથી થતા અનર્થોનું નામ અપાય છે.
 તેનો વિચાર જેમાં કરાય છે અર્થાત્ શબ્દાદિ વિષયોના દોષોનું અનુચિન્તન
 જેમાં કરાય છે તે અપાયવિચય ધર્મધ્યાન છે (૨). વિપાકવિચય-કર્મફલનું
 નામ વિપાક છે. તેનું ચિન્તન કરવું, અર્થાત્ કર્મથી બંધાયેલો આત્મા
 ચતુર્ગતિક સંસારમાં ભ્રમણ કરે છે. એમ જે વિચારવું તે વિપાકવિચય
 છે (૩). સંસ્થાનવિચય ચોથો પ્રકાર છે. સંસ્થાનનો અર્થ લોક, દ્વીપ તેમજ
 સમુદ્રાદિકનો આકાર છે; તેનો વિચાર કરવો તે સંસ્થાનવિચય છે (૪).
 (ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ લક્ષણા પણ્ણત્તા) ધર્મધ્યાનના ચાર લક્ષણ કહ્યાં છે.

રૂઢ ૧, ણિસગ્ગરૂઢ ૨, ઉવણ્ણસરૂઢ ૩, સુત્તરૂઢ ૪ । ધમ્મસ્સ ણં
જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ આલંબણા પણ્ણત્તા; તં જહા—વાયણા ૧, પુચ્છણા

ધર્માનુશાનગતા રુચિઃ=શ્રદ્ધાનમ્ । ૨-‘**ણિસગ્ગરૂઢ**’ નિસર્ગરુચિઃ=સ્વભાવતસ્તત્ત્વશ્રદ્ધાનમ્ ।
૩-‘**ઉવણ્ણસરૂઢ**’ ઉપદેશરુચિઃ=સાધૂપદેશાત્તત્ત્વશ્રદ્ધાનમ્ । ૪-‘**સુત્તરૂઢ**’ સૂત્રરુચિઃ સૂત્રે=આગમે
રુચિઃ=શ્રદ્ધાનમ્ । આજ્ઞાSSગમવિષયયા રુચિઃ—આજ્ઞારુચિઃ ‘આજ્ઞા પૂર્વાપરવિશુદ્ધાSSનવચ્ચા’—પ્રતદ્દૂષા
યાSSગમવિષયયા રુચિઃ સા સૂત્રરુચિરિતિ તયોર્ભેદઃ । ‘**ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણમ્મ ચત્તારિ આલંબણા
પણ્ણત્તા**’ ધર્મસ્ય ચત્તુર્ધ્યાનસ્ય ચત્વાર્યાલ્મ્બનાનિ પ્રજ્ઞમાનિ—ધર્મધ્યાનશિશ્વગમેહગાર્થં યાન્યા-
લ્મ્બ્યન્તે=આશ્રીયન્તે તાન્યાલ્મ્બનાનિ ચતુર્વિધાનિ કથિનાનિ, ‘**તં જહા**’ તથથા—૧-‘**વાયણા**’

ધર્મધ્યાન કે ચાર લક્ષણ કહે ગયે હૈ; (તં જહા) તે હસ પ્રકાર સે હૈ—(આગારૂઢ, ણિસગ્ગ-
રૂઢ, ઉવણ્ણસરૂઢ, સુત્તરૂઢ) આજ્ઞારુચિ, નિસર્ગરુચિ, ઉપદેશરુચિ, સૂત્રરુચિ । તીર્થંકર ભગવાન્
કી આજ્ઞા કે આરાધન કરને મેં શ્રદ્ધા કા ઉપન્ન હોના આજ્ઞારુચિ હૈ ૧ । સ્વભાવ સે જિન-
પ્રરૂપિત તત્ત્વો મેં શ્રદ્ધા હોના નિસર્ગરુચિ હૈ ૨ । સાધુ—મુનિગજો કે ઉપદેશ સે તત્ત્વો મેં
શ્રદ્ધા હોના ઉપદેશરુચિ હૈ ૩ । જૈનાગમો મેં શ્રદ્ધા હોના સૂત્રરુચિ હૈ ૪ । આજ્ઞારુચિ ઔર
સૂત્રરુચિ મેં કયા ભેદ હૈ : હસકા ઉત્તર યહ હૈ કિ તીર્થંકર ભગવાન કી આજ્ઞા કા આરાધન
કરના—આજ્ઞારુચિ હૈ, તથા તીર્થંકર ભગવાન્ કી આજ્ઞા પૂર્વાપરવિશુદ્ધ હૈ, અનવચ્ચ હૈ—હસ
પ્રકાર આગમ કે વિષય મેં દૃઢશ્રદ્ધા હોના—સૂત્રરુચિ હૈ । ઘટી નન દોનો મેં ભેદ હૈ ।
(ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણમ્મ ચત્તારિ આલંબણા પણ્ણત્તા) ધર્મધ્યાન કે આલંબન ૪ ચાર હૈ । યે
આલંબન ધર્મધ્યાન કે શિશ્વર પર ચઢને કે ક્રિયે ત્રીવો કો મહોર કા કામ દેતે હૈ, (તં જહા)

(તં જહા) તે આ પ્રકારે હૈ—(આગારૂઢ, ણિસગ્ગરૂઢ, ઉવણ્ણસરૂઢ, સુત્તરૂઢ) આજ્ઞારુચિ,
નિસર્ગરુચિ, ઉપદેશરુચિ, સૂત્રરુચિ. તીર્થંકર ભગવાનની આજ્ઞાનું આરાધન
કરવામાં શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવી તે આજ્ઞારુચિ હૈ ૧. સ્વભાવથી જ જિનપ્રરૂપિત
તત્ત્વોમાં શ્રદ્ધા થવી તે નિસર્ગરુચિ હૈ ૨. સાધુ મુનિરાજેના ઉપદેશથી તત્ત્વોમાં
શ્રદ્ધા થવી તે ઉપદેશરુચિ હૈ ૩, જૈન આગમોમાં શ્રદ્ધા થવી તે સૂત્રરુચિ હૈ ૪,
આજ્ઞારુચિ અને સૂત્રરુચિમાં શું ભેદ હૈ ? તેનું ઉત્તર આ હૈ કે—તીર્થંકર
ભગવાનની આજ્ઞાનું આરાધન કરવું તે આજ્ઞારુચિ હૈ, તથા—તીર્થંકર ભગ-
વાનની આજ્ઞા પૂર્વાપરવિશુદ્ધ હૈ, અનવચ્ચ હૈ. એ પ્રકારે આગમના વિષયમાં
દૃઢ શ્રદ્ધા થવી તે સૂત્રરુચિ હૈ. આ જ એ બન્નેમાં તફાવત હૈ. (ધમ્મસ્સ ણં
જ્ઞાણમ્મ ચત્તારિ આલંબણા પણ્ણત્તા) ધર્મધ્યાનનાં આલંબન ચાર હૈ. તે આલંબન
ધર્મધ્યાનના શિશ્વર ઉપર ચડવા માટે જીવોને આશ્રય-આધારનું કામ કરી દે

૨, પરિયટ્ટણા ૩, ધમ્મકહા ૪। ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ
અણુપ્પેહાઓ પણ્ણત્તાઓ, તં જહા-અણિચ્છાણુપ્પેહા ૧, અસર-
ણાણુપ્પેહા ૨, ઇગત્તાણુપ્પેહા ૩, સંસારાણુપ્પેહા ૪।

વાચના, ૨ ‘પુચ્છણા’ પ્રચ્છના. ૩-‘પરિયટ્ટણા’ પરિવર્તના. ૪-‘ધમ્મકહા’ ધર્મકથા,
‘ધમ્મસ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ અણુપ્પેહાઓ પણ્ણત્તાઓ’ ધર્મસ્વ સ્વલ્પ ધ્યાનસ્વ ચત્તારોઽનુપ્રેક્ષાઃ
પ્રજ્ઞા: ‘તં જહા’ તથા-‘અણિચ્છાણુપ્પેહા’ અનિત્યાનુપ્રેક્ષા=અનિત્યચિન્તનિકા, તથા ચોક્તમ્-

“ કાય: સંનિહિતાપાય:, સંપદ: પદમાપદામ્ ।

સમાગમા: સાપગમા:, સર્વમુત્પાદિ ભજ્જરમ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

વેં ફસ પ્રકાર હેં-(વાયણા) વાચના ૧, (પુચ્છણા) પ્રચ્છના ૨, (પરિયટ્ટણા) પરિવર્તના
૩, (ધમ્મકહા) ધર્મકથા ૪ । ફનકા સ્વરૂપ પીંછે કહ દિયા ગયા હે । (ધમ્મસ્સ ણં
જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ અણુપ્પેહાઓ પણ્ણત્તાઓ) ધર્મધ્યાન કી ચાર અનુપ્રેક્ષા કહી હેં, (તં
જહા)વેં યે હેં-(અણિચ્છાણુપ્પેહા) અનિત્યાનુપ્રેક્ષા-ફસમેં સમસ્ત પૌદ્ગલિક પદાર્થોં કા
અનિત્યરૂપ સં ચિન્તવન કિયા જાતા હે; જૈસે-

કાય: સંનિહિતાપાય:, સંપદ: પદમાપદામ્ ।

સમાગમા: સાપગમા:, સર્વમુત્પાદિ ભજ્જરમ્ ॥૧॥

ફસ શરીર કે પીંછે અપાય-રોગાદિ લગા હુઆ હે । ફસલિયે યહ નષ્ટ હોને વાલા
હે । યહ વનધાન્યાદિ સમ્પત્તિ, આપત્તિયોં કા સ્થાન હે । ક્યો કિ ફસીકે કારણ સ્ત્રી, પુત્ર,
મિત્ર, સ્વજન, પરિજન ઓર ગ્રામજન આદિ સં શત્રુતા હોતી હે, લડાઈ હોતી હે. અન્ત મેં

છે, (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે-(વાયણા) વાચણા-વાંચણુ ૧, (પ્રચ્છણા) પ્રચ્છણા-
પુચ્છણુ ૨, (પરિયટ્ટણા) પરિવર્તના-આવૃત્તિ કરવી ૩, (ધમ્મકહા) ધર્મકથા ૪,
એમનું સ્વરૂપ પાછળ કહેવાઈ ગયું છે. (ધમ્મસ્સ ણં જ્ઞાણસ્સ ચત્તારિ અણુપ્પેહાઓ
પણ્ણત્તાઓ) ધર્મધ્યાનની ચાર અનુપ્રેક્ષા કહી છે; (તં જહા) તે આ પ્રમાણે
છે-(અણિચ્છાણુપ્પેહા) અનિત્યાનુપ્રેક્ષા-આમાં સમસ્ત પૌદ્ગલિક પદાર્થોનું
અનિત્યરૂપથી ચિન્તવન કરવામાં આવે છે. જેમકે-

કાય: સંનિહિતાપાય:, સંપદ: પદમાપદામ્ ।

સમાગમા: સાપગમા:, સર્વમુત્પાદિ ભજ્જરમ્ ॥ ૧ ॥

આ શરીરની પાછળ અપાય-રોગ-આદિ લાગી રહેલા છે, તે માટે તે
નાશ પામવાવાળું છે. આ ધન-ધાન્યાદિ-સંપત્તિ આપત્તિઓનું સ્થાન છે

‘ અસરણાણુપ્પેહા ’ અશરણાનુપ્રેક્ષા—અશરણત્વપર્યાલોચના અસ્થાં સંસૃતૌ ન કોઽપિ કસ્યાપિ રક્ષકઃ એતદ્રૂપા, જન્મજરામરણભયૈરભિદ્રુતે વ્યાધિવેદનાગ્રસ્તે જિનવરવચનાદન્યન્નાસ્તિ શરણં ક્વચિલ્લોકે—इत्येवमशरणस्य=अत्राणस्य अनुप्रेक्षा=पर्यालोचना ।

પ્રાણ તક સ્થોના પડતા હૈ । જિન જિન અભિલષિત પ્રિય સ્ત્રી, પુત્ર, ધન આદિ કા સમાગમ અર્થાત્ પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, વે સવ વિલુહને વાલે હૈ । ક્યોં કિ સંયોગ કે બાદ વિયોગ અવશ્ય હોતા હૈ । અધિક ક્યાઃ જો જો ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ સવ નિયમતઃ નષ્ટ મી હોતા હી હૈ; ક્યોં કિ ઉત્પત્તિશીલ સમી પદાર્થ વિનશ્વર અર્થાત્ નાશવાન્ હોતે હૈ । એસે વિનશ્વર પદાર્થોં મેં ફિર આસક્તિ ઔર પ્રેમ ક્યોં ! ઉચિત યહ હૈ કિ જો ધર્મ કમી મી નષ્ટ હોને વાલા નહીં હૈ, ઉસી પર મુજે આકર્ષણ હોના ચાહિયે, ઇન વિનશ્વર સાંસારિક પદાર્થોં પર નહીં ! ઇસ પ્રકાર સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થોં કે પ્રતિ અનિત્યત્વ કા ચિન્તન કરના અનિત્યાનુપ્રેક્ષા હૈ ॥૧॥

(અસરણાણુપ્પેહા) અશરણાનુપ્રેક્ષા—સંસાર મેં ઇસ જીવ કા કોઈ મી શરણ નહીં હૈ । જન્મ, જરા એવં મરણ કે ભય સે વ્યાકુલ હુએ એવં વ્યાધિ ઔર વેદના સે ગ્રસ્ત વને હુએ ઇસ પ્રાણી કા યદિ લોક મેં કોઈ શરણ હૈ તો વહ એક જિનવર કા ધર્મ હી હૈ, ઔર કોઈ નહીં ! ઇસ પ્રકાર સે ઇસ અનુપ્રેક્ષા મેં વિચાર કિયા જાતા હૈ । કહા મી હૈ—

કેમકે તેના જ કારણે સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્ર, સ્વજન, પરિજન અને ગામના લોકો આદિ સાથે શત્રુતા થાય છે, લડાઈ (ઝગડા) થાય છે, આખરે પ્રાણ સુધી ખોવો પડે છે. જે જે અભિલષિત પ્રિય સ્ત્રી, પુત્ર, ધન આદિનો સમાગમ અર્થાત્ પ્રાપ્તિ થાય છે તે બધાં વિખૂટા પડનાર છે, કેમકે સંયોગ પછી વિયોગ અવશ્ય થાય છે, વધારે શું ? જે જે ઉત્પન્ન થાય છે તે બધું નિયમપ્રમાણે નાશ પણ પામે છે જ, કેમકે ઉત્પત્તિશીલ તમામ પદાર્થ વિનશ્વર અર્થાત્ નાશવાન હોય છે; તો એવા વિનશ્વર પદાર્થોમાં વળી આસક્તિ અને પ્રેમ શા માટે ? ઉચિત તો એ છે કે—જે ધર્મ કહી પણ નાશ પામનાર નથી તે ઉપર જ મને આકર્ષણ થવું જોઈએ, આ વિનશ્વર સાંસારિક પદાર્થો પર નહિ. એ પ્રકારે સાંસારિક તમામ પદાર્થો માટે અનિત્યપણાનું ચિંતન કરવું તે અનિત્યાનુપ્રેક્ષા છે (૧). (અસરણાણુપ્પેહા) અશરણાનુપ્રેક્ષા—સંસારમાં આ જીવનું કોઈ પણ શરણ નથી. જન્મ, જરા તેમજ મરણના ભયથી વ્યાકુળ થતાં તેમજ વ્યાધિ અને વેદનાથી ગ્રસ્ત બની જતાં આ પ્રાણીનું જે કોઈ શરણ (આશ્રય) હોય તો તે એકમાત્ર આ લોકમાં જિનવરનો ધર્મ જ છે, બીજું કોઈ નહિ. આ પ્રકારના આ અનુપ્રેક્ષામાં વિચાર કરવામાં આવે છે. કહ્યું પણ છે—

कलत्रमित्रपुत्रादि,—स्नेहग्रहनिवृत्तये ।

इति शुद्धमतिः कुर्यादशरण्यत्वभावनाम् ॥१॥

अशरणभावना चैवम्—

इन्द्रोपेन्द्रादयोऽप्येते यन्मृत्योर्यान्ति गोचरम् ।

अहो तदन्तकातङ्के कः शरण्यः शरीरिणाम् ॥१॥

पितुर्मातुः स्वसुभ्रातुस्तनयानां च पश्यताम् ।

अत्राणो नीयते जन्तुः कर्मभिर्यमसद्गति ॥२॥

कलत्रमित्रपुत्रादि,—स्नेहग्रहनिवृत्तये ।

इति शुद्धमतिः कुर्यादशरण्यत्वभावनाम् ॥१॥

शुद्धबुद्धियुक्त भव्य प्राणी स्त्री, पुत्र, मित्र, स्वजन—सम्बन्धी आदिकों के स्नेह—बन्धन से मुक्त होने के लिये इस प्रकार से अशरणभावना की चिन्ता करे ।

अशरणभावना इस प्रकार से करनी चाहिये—

इन्द्रोपेन्द्रादयोऽप्येते, यन्मृत्योर्यान्ति गोचरम् ।

अहो ! तदन्तकातङ्के, कः शरण्यः शरीरिणाम् ॥१॥

ये महापराक्रमी अजेय इन्द्र, उपेन्द्र आदियों को भी जब कालने कवलित कर-
लिया, तो; अरे ! इस संसार में साधारण मनुष्य की फिर गणना ही क्या है ? उस सर्वविजयी
काल के आने पर मनुष्य का क्या कोई त्राण, शरण हो सकता है ? कोई नहीं ! ॥१॥

पितुर्मातुः स्वसुभ्रातुस्तनयानां च पश्यताम् ।

अत्राणो नीयते जन्तुः, कर्मभिर्यमसद्गति ॥२॥

कलत्रमित्रपुत्रादि—स्नेहग्रहनिवृत्तये ।

इति शुद्धमतिः कुर्यादशरण्यत्वभावनाम् । १॥

शुद्धबुद्धियुक्त लव्य प्राणी स्त्री, पुत्र, मित्र, स्वजन, सम्बन्धी आदिना
स्नेह—बन्धनથી मुक्त થવા માટે આ પ્રકારે અશરણુભાવનાની ચિંતા કરે.

અશરણુભાવના આ પ્રકારે કરવી જોઈએ—

इन्द्रोपेन्द्रादयोऽप्येते, यन्मृत्योर्यान्ति गोचरम् ।

अहो ! तदन्तकातङ्के, कः शरण्यः शरीरिणाम् ॥ १ ॥

એ મહાપરાક્રમી અજેય ઈન્દ્ર, ઉપેન્દ્ર આદિઓને પણ જ્યારે કાળ
કેળિઓ કરી ગયો, તો અરે ! આ સંસારમાં સાધારણ મનુષ્યની વળી ગણ-
ત્રી જ શું છે ? તે બધાનો વિજેતા એવો કાલ આવી જતાં મનુષ્યનું શું કોઈ
રક્ષણ કે શરણ થઈ શકે છે ? કોઈ જ નહિ (૧).

શોચન્તિ સ્વજનાનન્તં નીયમાનાન્ સ્વકર્મભિઃ ।

નેષ્યમાણં ન શોચન્તિ સ્વાત્માનં મૂઢબુદ્ધયઃ ॥૩॥

સંસારે દુઃસ્વદાવાગ્નિઃ જ્વલજ્વાલાકરાલિતે ।

વને મૃગાર્ભકસ્યેવ શરણં નાસ્તિ દેહિનઃ ॥૪॥

અસહાય જીવ અપને કર્મોં કે દ્વારા મૃત્યુ કે સમીપ પહુંચાયે જાતે હૈં । અર્થાત્— માતા, પિતા, માઈ, બહન, પુત્ર, પુત્રી, સ્ત્રી આદિ કે દેસ્વતે હી દેસ્વતે જીવ કો ઉસકા સ્વકૃત કર્મ મૃત્યુ કે લિયે સમર્પિત કર દેતા હૈં. ઉસ સમય ઉસ જીવ કે ત્રાણ કરને મેં માતા પિતા આદિ કોઈ મીં સમર્થ નહીં હોતે હૈં. જીવ અકેલા હી મૃત્યુ પ્રાપ્ત કર સ્વકૃત કર્માનુસાર ફલ ભોગતા હૈ ॥૨॥

શોચન્તિ સ્વજનાનન્તં, નીયમાનાન્ સ્વકર્મભિઃ ।

નેષ્યમાણં ન શોચન્તિ, સ્વાત્માનં મૂઢબુદ્ધયઃ ॥૩॥

અજ્ઞાની જીવ સ્વકૃત કર્મોં કે દ્વારા મરતે હુણ સ્વજનોં કે લિયે શોક કરતા હૈ, પરંતુ વહ અજ્ઞાની જીવ અપને લિયે નહીં સોચતા હૈ, જો વહ સ્વયં અપને કર્મ કે દ્વારા સ્વયં મૃત્યુ કે નિકટ પહુંચ રહા હૈ ॥૩॥

સંસારે દુઃસ્વદાવાગ્નિઃ—જ્વલજ્વાલાકરાલિતે ।

વને મૃગાર્ભકસ્યેવ, શરણં નાસ્તિ દેહિનઃ ॥૪॥

પિતુર્માતુઃ સ્વસુભ્રાતુ-સ્તનયાનાં ચ પશ્યતામ્ ।

અત્રાણો નીયતે જન્તુઃ, કર્મભિર્યમસદ્ગાનિ ॥૩॥

પિતા, માતા, બહેન, ભાઈ, પુત્ર આદિના જોતજોતામાં જ અસહાય જીવ પોતાનાં કર્મોંદ્વારા મૃત્યુની સમીપે જાય છે, અર્થાત્—માતા, પિતા, ભાઈ, બહેન, પુત્ર, પુત્રી, સ્ત્રી આદિના જોતજોતામાં જ જીવને તેનું પોતાનું કર્મ મૃત્યુને સમર્પણ કરી દે છે, તે સમયે તે જીવનું રક્ષણ કરવામાં માતા પિતા આદિ કોઈપણ સમર્થ થતા નથી. જીવ એકલો જ મૃત્યુ પ્રાપ્ત કરીને સ્વકૃત (પોતે કરેલાં) કર્માનુસાર ફળ ભોગવે છે (૨).

શોચન્તિ સ્વજનાનન્તં, નીયમાનાન્ સ્વકર્મભિઃ ।

નેષ્યમાણં ન શોચન્તિ, સ્વાત્માનં મૂઢબુદ્ધયઃ ॥૨॥

અજ્ઞાની જીવ સ્વકૃત કર્મોંદ્વારા મરી જતા સ્વજનો માટે શોક કરે છે, પરંતુ તે અજ્ઞાની જીવ પોતાને માટે નથી વિચાર કરતા કે તે પોતે પોતાનાં કર્મ દ્વારા મૃત્યુની પાસે પહોંચી રહ્યા છે (૩).

સંસારે દુઃસ્વદાવાગ્નિઃ—જ્વલજ્વાલાકરાલિતે ।

વને મૃગાર્ભકસ્યેવ, શરણં નાસ્તિ દેહિનઃ ॥૪॥

અન્યન્ન—પરલોકસહાયાર્થ પિતા માતા ન તિષ્ઠતઃ ।

ન પુત્રદારં ન જ્ઞાતિર્ધર્મસ્તિષ્ઠતિ કેવલઃ ॥૧॥

૩—‘ એગત્તાણુપ્પેદા ’ એકત્વાનુપ્રેક્ષા—આત્મન એકાકિત્વચિન્તનમ્ ; તથા ચોક્તમ્—

ઉત્પદ્યતે જન્તુરિહૈક એવ વિપદ્યતે ચૈકક એવ દુઃસ્વી ।

કર્માર્જયત્યેકક એવ ચિત્રમ્ આસેવતે તત્ફલમેક એવ ॥૧॥

જैसे પ્રચળદ દાવાગ્નિ કી જ્વાલા સે જલતે હુણ વન મેં મૃગ કે બચ્ચે કા કોઈ રક્ષક નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર દુઃસ્વરૂપી દાવાગ્નિ કી પ્રચળદ જ્વાલા સે જલતે હુણ ઇસ સંસાર મેં આત્મા કા કોઈ રક્ષક નહીં હૈ ॥૪॥ ઓર મી કહા હૈ—

પરલોકસહાયાર્થ, પિતા માતા ન તિષ્ઠતઃ ।

ન પુત્રદારં ન જ્ઞાતિ-ધર્મસ્તિષ્ઠતિ કેવલઃ ॥

માતા-પિતા પરલોક મેં જીવ કો સહાયતા કે લિયે નહીં જાતે હૈ, ન સ્ત્રી, પુત્ર, સ્વજન-સંબંધી આદિ હી જાતે હૈ । માત્ર એક ધર્મ હી પરલોક મેં જીવ કે સાથ જાતા હૈ ॥૪॥

—ઇસ પ્રકાર સે ચિન્તન કરના સો અશરણાનુપ્રેક્ષા હૈ ।

(એગત્તાણુપ્પેદા) એકત્વાનુપ્રેક્ષા—આત્મા અકેલા હૈ । ઇસ પ્રકાર સે ચિન્તન કરના—એકત્વાનુપ્રેક્ષા હૈ । એકત્વાનુપ્રેક્ષા કા ચિન્તન ઇસ પ્રકાર સે કરના ચાહિયે, જૈસે—કર્મ કે ફલોં કો યહ જીવ અકેલા હી ભોગતા હૈ । માતા પિતા આદિ કોઈ મી ઇસ જીવ કો સાથ નહીં દેતે હૈ । સબ અપને ૨ સ્વાર્થ કે હૈ । કહા મી હૈ —

જેમ પ્રચળદ દાવાગ્નિની જ્વાલાથી બળતા વનમાં મૃગનાં બચ્ચાંઓનો કોઈ રક્ષક થતો નથી, તે જ પ્રકારે દુઃખરૂપી દાવાગ્નિની પ્રચળદ જ્વાલાથી બળતા આ સંસારમાં આત્માનો કોઈ રક્ષક નથી (૪).

વળી પણ કહ્યું છે—

પરલોકસહાયાર્થ, પિતા માતા ન તિષ્ઠતઃ ।

ન પુત્રદારં ન જ્ઞાતિ, -ધર્મસ્તિષ્ઠતિ કેવલઃ ॥૫॥

માતા-પિતા પરલોકમાં જીવની સહાયતા માટે જતા નથી, ન સ્ત્રી, પુત્ર, સ્વજન, સંબંધી આદિ પણ જાય છે. માત્ર એક ધર્મ જ પરલોકમાં જીવની સાથે જાય છે. આ પ્રકારે ચિંતન કરવું તે અશરણાનુપ્રેક્ષા છે (૫)

(એગત્તાણુપ્પેદા) એકત્વાનુપ્રેક્ષા—આત્મા એકલો છે એ પ્રકારે ચિંતન કરવું તે એકત્વાનુપ્રેક્ષા છે. એકત્વાનુપ્રેક્ષાનું ચિંતન આ રીતે કરવું જોઈએ; જેમકે—કર્મનાં ફળને આ જીવ એકલો જ ભોગવે છે, માતા પિતા આદિ કોઈ પણ આ જીવને સાથ દેતા નથી. સૌ પોતપોતાના સ્વાર્થના છે.

યજ્ઞીવેન ધનં સ્વયં बहुविधैः कष्टैरिहोपाज्यते,
 तत्संभूय कलत्रमित्रतनयैर्भ्रात्रादिभिर्भुज्यते ।
 तत्तत्कर्मवशाच्च नारकनरस्वर्वासितिर्यग्भवे—,
 प्वेकः सैष मुदुःसहानि सहते दुःखान्यसह्यान्यहो ॥२॥

उत्पद्यते जन्तुरिहैक एव, विपद्यते चैक एव दुःखी ।
 कर्मार्जत्येक एव चित्रम्, आसेवते तत्फलमेक एव ॥१॥

જીવ અકેલા હી ઇસ સંસાર મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, અકેલા હી અપાર દુઃખ કા અનુભવ કરતે હુ, મૃત્યુ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, અકેલા હી વહ નાનાવિધ કર્મોં કા ઉપાર્જન કરતા હૈ, તથા અકેલા હી ઉમકા ફલ ભોગતા હૈ ॥૧॥

यज्जीवेन धनं स्वयं बहुविधैः कष्टैरिहोपाज्यते,
 तत्संभूय कलत्रमित्रतनयैर्भ्रात्रादिभिर्भुज्यते ।
 तत्तत्कर्मवशाच्च नारकनरस्वर्वासितिर्यग्भवे,—
 प्वेकः सैष मुदुःसहानि सहते दुःखान्यसह्यान्यहो ॥२॥

જીવ જો અનેકવિધ કષ્ટોં સે સ્વયં ધનોપાર્જન કરતા હૈ, ઉમ ધન કા ઉપભોગ સ્ત્રી, પુત્ર, ભાઈ—બંધુ, મિત્ર, સ્વજન—સમ્બંધી આદિ કરતે હૈં । પરંતુ ધનોપાર્જન કરનેવાલા વહ જીવ તો સ્વકૃતેકે અનુસાર દેવ મનુષ્ય નારક તિર્યક આદિ—

કહ્યું પણ છે.—

उत्पद्यते जन्तुरिहैक एव, विपद्यते चैक एव दुःखी ।
 कर्मार्जत्येक एव चित्रम्, आसेवते तत्फलमेक एव ॥१॥

અવ એકલો જ આ સંસારમાં ઉત્પન્ન થાય છે, એકલો જ અપાર દુઃખનો અનુભવ કરતો કરતો મૃત્યુને પ્રાપ્ત થાય છે, એકલો જ તે અનેક પ્રકારનાં કર્મોંનું ઉપાર્જન કરે છે, તથા એકલો જ તેનું ઇળ ભોગવે છે (૧).

यज्जीवेन धनं स्वयं बहुविधैः कष्टैरिहोपाज्यते,
 तत्संभूय कलत्रमित्रतनयैर्भ्रात्रादिभिर्भुज्यते ।
 तत्तत्कर्मवशाच्च नारक-नर-स्वर्वासितिर्यग्भवे—
 प्वेकः सैष मुदुःसहानि सहते दुःखान्यसह्यान्यहो ॥२॥

અવ જે વિધવિધ અનેક કષ્ટોથી પોતે ધન ઉપાર્જન કરે છે તે ધનનો ઉપભોગ સ્ત્રી, પુત્ર, ભાઈ—બંધુ, મિત્ર, સ્વજન—સંબંધી આદિ કરે છે. પરંતુ ધનોપાર્જન કરવાવાળો તે અવ તો પોતે કરેલાં તે તે કર્મોં અનુસાર દેવ મનુષ્ય નારક તિર્યક આદિ ભવોમાં એકલો જ અતિદુઃખ અનંત

જીવો યસ્ય કૃતે ભ્રમત્યનુદિશં દૈન્યં સમાલમ્બતે,
ધર્માદ્ ભ્રમ્યતિ વશ્ચયત્યતિહિતાન્ ન્યાયાદપક્રામતિ ।
દેહઃ સોઽપિ સહાત્મના ન પદમપ્યેકઃ પરસ્મિન્ભવે,
ગચ્છત્યસ્ય તતઃ કથં વદત મોઃ ! સાહાય્યમાધાસ્યતિ ॥૩॥
સ્વાર્થૈકનિષ્ઠં સ્વજનં સ્વદેહ,—મુખ્યં તતઃ સર્વમવેત્ય સમ્યક્ ।
સર્વસ્ય કલ્યાણનિમિત્તમેકં, ધર્મં સહાયં વિદધીત ધીમાન્ ॥૪॥

મવોં મેં અકેલા હી અતિદુઃસહ અનન્ત દુઃખોં કો સહતા રહતા હૈ । અહો ! ઇસ સંસાર મેં કોઈ મી અપના નહીં હૈ ॥ ૨ ॥ ઓર મી કહા હૈ—

જીવો યસ્ય કૃતે ભ્રમત્યનુદિનં દૈન્યં સમાલમ્બતે,
ધર્માદ્ ભ્રમ્યતિ વશ્ચયત્યતિહિતાન્ ન્યાયાદપક્રામતિ ।
દેહઃ સોઽપિ સહાત્મના ન પદમપ્યેકઃ પરસ્મિન્ ભવે,
ગચ્છત્યસ્ય તતઃ કથં વદત મોઃ ! સાહાય્યમાધાસ્યતિ ॥૩॥

જીવ જિસ શરીર કે લિયે ચારોં દિશાઓં મેં ઘૂમતા—ફિરતા રહતા હૈ, દીનતા પ્રદર્શિત કરતા હૈ, ધર્મ સે ભ્રષ્ટ હોતા હૈ, અપને અત્યન્ત હિતૈષિયોં કો મી ઠગતા હૈ, ન્યાયમાર્ગ સે ચલિત હોતા હૈ, વહ શરીર મી જીવ કે સાથ પરમવ મેં ઇક પગ મી નહીં સાથ દેતા । હે મવ્યો ! મોચો—વિચારો ! યહ શરીર તુમહારી ક્યા સહાયતા કર સકતા હૈ, કુછ નહીં ॥૩॥ ઓર મી કહા હૈ—

સ્વાર્થૈકનિષ્ઠં સ્વજનં સ્વદેહ,—મુખ્યં તતઃ સર્વમવેત્ય સમ્યક્ ।
સર્વસ્ય કલ્યાણનિમિત્તમેકં, ધર્મં સહાયં વિદધીત ધીમાન્ ॥૪॥

હુઃખોને સહન કરતો રહે છે. અહો ! આ સંસારમાં કોઈએ આપણું નથી (૨).
ખીજું પણ કહ્યું છે—

જીવો યસ્ય કૃતે ભ્રમત્યનુદિનં દૈન્યં સમાલમ્બતે,
ધર્માદ્ ભ્રમ્યતિ વશ્ચયત્યતિહિતાન્ ન્યાયાદપક્રામતિ ।
દેહઃ સોઽપિ સહાત્મના ન પદમપ્યેકઃ પરસ્મિન્ ભવે,
ગચ્છત્યસ્ય તતઃ કથં વદત મોઃ ! સાહાય્યમાધાસ્યતિ ॥૩॥

જીવ જે શરીરને માટે ચારેય દિશાઓમાં ભટકતો ફરતો રહે છે, દીનતા અતાવે છે, ધર્મથી ભ્રષ્ટ થાય છે, પોતાના અત્યંત હિતેન્દ્રિયોને પણ ઠગે છે, ન્યાયમાર્ગથી ચલિત થાય છે, તે શરીર પણ જીવની સાથે પરમવમાં એક ડગલુંએ સાથ આપતું નથી. હે મવ્યો ! મોચો—વિચારો ! આ શરીર તમારી શું સહાયતા કરી શકશે ? કાંઈ પણ નહિ !

૪—‘સંસારાણુપ્પેહા’ સંસારાનુપ્રેક્ષા—સંસારસ્ય ચતસૃષુ ગતિષુ સર્વાવસ્થામુ સંસારણલક્ષણસ્ય અનુપ્રેક્ષા—તથા ચોક્તમ્—

માતા પરમ્ભવે પુત્રી સૈવ જન્માન્તરે સ્વસા ।

પુનર્ભાર્યા ભવેત્ સૈવ પ્રાણિનાં ગતિરીદૃશી ॥ ૧ ॥

માતા, પિતા, સ્ત્રી, પુત્ર, સ્વજન, સંબંધી આદિ સર્વે સ્વાર્થનાં છે, અપના શરીર સ્વાર્થનાં છે. આથી બુદ્ધિમાન મનુષ્ય આ સર્વે વિષયો પર અચ્છી તરફ વિચાર કર સર્વેનાં કલ્યાણ કરવાનાં ધર્મનાં છે. આથી સહાયક બનાવે ॥૪॥

—આ પ્રકારે ચિંતન કરના એકત્વાનુપ્રેક્ષા છે

(સંસારાણુપ્પેહા) સંસારાનુપ્રેક્ષા—ચતુર્ગતિકલક્ષણ સંસારના વિષયમાં ચિંતન કરના—સંસારાનુપ્રેક્ષા છે । કહ્યું પણ છે—

માતા પરમ્ભવે પુત્રી, સૈવ જન્માન્તરે સ્વસા ।

પુનર્ભાર્યા ભવેત્ સૈવ, પ્રાણિનાં ગતિરીદૃશી ॥૧॥

આ ભવમાં આ જીવની જે માતા હોય છે, તે દુસરે ભવમાં તેની પુત્રી હો જાય છે. પછી ભવાન્તરમાં તેની બહેન હો જાય છે. તેના પછી અન્ય જન્મમાં પછી તે તેની ભાર્યા હો જાય છે । અધિક વ્યાજ કહ્યું જાય! સંસારની કુલ એવી જ વિચિત્ર દશા છે ॥ ૧ ॥ આથી કહ્યું છે—

કરી પણ કહ્યું છે—

સ્વાર્થેકનિષ્ઠં સ્વજનં સ્વદેહ, —મુખ્યં તતઃ સર્વમવેત્ય સમ્યક્ ।

સર્વસ્ય કલ્યાણનિમિત્તમેકં, ધર્મં સહાયં વિદધીત ધીમાન્ ॥૪॥

માતા, પિતા, સ્ત્રી, પુત્ર, સ્વજન—સંબંધી આદિ બધાં સ્વાર્થનાં છે. પોતાનું શરીર પણ સ્વાર્થનું જ છે, તેથી બુદ્ધિમાન મનુષ્ય આ બધાં વિષયો ઉપર સારી રીતે વિચાર કરી સર્વનું કલ્યાણ કરવાના ધર્મને જ સહાયક બનાવે. આ પ્રકારે ચિંતન કરવાં તે એકત્વાનુપ્રેક્ષા છે (૫).

(સંસારાણુપ્પેહા) સંસારાનુપ્રેક્ષા—ચતુર્ગતિકલક્ષણવાળા સંસારના વિષયમાં ચિંતન કરવાં તે સંસારાનુપ્રેક્ષા છે. કહ્યું પણ છે—

માતા પરમ્ભવે પુત્રી, સૈવ જન્માન્તરે સ્વસા ।

પુનર્ભાર્યા ભવેત્ સૈવ, પ્રાણિનાં ગતિરીદૃશી ॥૧॥

આ ભવમાં જે આ જીવની માતા હોય છે તે જ બીજા ભવમાં તેની પુત્રી થઈ જાય છે. વળી ભવાન્તરમાં તેની બહેન થઈ જાય છે. ત્યાર પછી બીજા જન્મમાં વળી તે તેની સ્ત્રી થઈ જાય છે. વધારે શું કહેવાય! સંસારની કોઈ એવી જ વિચિત્ર દશા છે. (૧) કરી પણ કહ્યું છે—

પિતા પરમ્વે પુત્રઃ સ તુ ભ્રાતા ભવાન્તરે ।
 પુનસ્તાતઃ પુનઃ પુત્રઃ પ્રાણિના ગતિરીદૃશી ॥૨॥
 માતાપિતૃસહસ્રાણિ પુત્રદારશતાનિ ચ ।
 સંસારેષ્વનુભૂતાનિ યાન્તિ યાસ્યન્તિ ચાપરે ॥૩॥
 કૃચ્છ્રેણામેધ્યમધ્યે નિયમિતતનુભિઃ સ્થીયતે ગર્ભવાસે,
 કાન્તાવિશ્લેષદુઃસ્વવ્યતિકરવિષમે યૌવને ચોપભોગઃ ।

પિતા પરમ્વે પુત્રઃ, સ તુ ભ્રાતા ભવાન્તરે ।
 પુનસ્તાતઃ પુનઃ પુત્રઃ, પ્રાણિનાં ગતિરીદૃશી ॥૨॥

ઇસ સંસાર મેં જીવ કી પર્યાય એકસી શાશ્વત નહીં રહતી હૈ । જો ઇસ ભવ મેં પિતા હોતા હૈ, વહી પરમ્વ મેં પુત્ર બન જાતા હૈ, એવં ભવાન્તર મેં ભ્રાતા મી હો જાતા હૈ, પશ્ચાત્ત ફિર પિતા હો જાતા હૈ, ફિર પુત્ર હો જાતા હૈ । ઇસ સંસાર મેં પ્રાણિયોં કી એસી હી કુછ વિચિત્ર ગતિ હૈ ॥૨॥ ઓર મી કહા હૈ—

માતાપિતૃસહસ્રાણિ, પુત્રદારશતાનિ ચ ।
 સંસારેષ્વનુભૂતાનિ, યાન્તિ યાસ્યન્તિ ચાપરે ॥૩॥

ઇસ સંસાર મેં ઇસ જીવ કે હજારોં માતા ઓર પિતા બન ચુકે હૈં, હજારોં પુત્ર—કલત્ર હો ચુકે હૈં । ઇસ સમય મી યે માતા, પિતા પુત્ર ઓર કલત્ર ઇસ જાવકે હૈં, ઓર આગે મી યે હોંગે ॥૩॥ ઓર મી કહા હૈ—

કૃચ્છ્રેણામેધ્યમધ્યે નિયમિતતનુભિઃ, સ્થીયતે ગર્ભવાસે,
 કાન્તાવિશ્લેષદુઃસ્વવ્યતિકરવિષમે યૌવને ચોપભોગઃ ।

પિતા પરમ્વે પુત્રઃ સ તુ ભ્રાતા ભવાન્તરે ।
 પુનસ્તાતઃ પુનઃ પુત્રઃ, પ્રાણિનાં ગતિરીદૃશી ॥૨॥

આ સંસારમાં જીવની પર્યાય એક જેવી કાયમ રહેતી નથી. જે આ ભવમાં પિતા હોય છે તેજ પરભવમાં પુત્ર થઈ જાય છે, તેમજ ભવાન્તરમાં ભાઈ પણ થઈ જાય છે. પછી પિતા થઈ જાય છે. વળી પુત્ર થઈ જાય છે. આ સંસારમાં પ્રાણિઓની એવીજ કંઈ વિચિત્ર ગતિ છે (૨) ફરી પણ કહું છે—

માતાપિતૃસહસ્રાણિ, પુત્રદારશતાનિ ચ ।
 સંસારેષ્વનુભૂતાનિ, યાન્તિ યાસ્યન્તિ ચાપરે ॥૩॥

આ સંસારમાં આ જીવના હજારોં માતાપિતા થઈ ચુક્યા છે. હજારોં પુત્ર—કલત્ર થઈ ચુક્યા છે. આ સમયે પણ એ માતા, પિતા, પુત્ર અને કલત્ર આ જીવના છે, અને આગળ પણ આ માતા—પિતા આદિ આ જીવને થશે જ. (૩) વળી કહું પણ છે.

सुकज्ज्ञाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पणत्ते; तं जहा-

नारीणामप्यवज्ञा विलसति नियतं वृद्धभावेऽप्यसाधुः,

संसारे रे मनुष्या! वदत यदि सुखं स्वल्पमप्यस्ति किञ्चित् ॥४॥

—इदं धर्मध्यानम् ॥

‘सुकज्ज्ञाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पणत्ते’ शुक्लध्यानं चतुर्विधं चतुष्प-

नारीणामप्यवज्ञा विलसति नियतं वृद्धभावेऽप्यसाधुः,

संसारे रे मनुष्याः! वदत यदि सुखं स्वल्पमप्यस्ति किञ्चित् ॥४॥

અત્યંત અપવિત્ર ગર્ભવાસ મેં રહ કર यह जीव अनेक कष्टों को सहता रहता है । वहाँ इसका शरीर सिकुड़ा रहता है । यौवन अवस्था में यह जीव विषय भोग के समय स्त्रीवियोगजनित दुःख से अत्यन्त दुःखी होता है । स्त्री यदि जीवित रहे तो वृद्धावस्था में यह अपनी उसी स्त्री का असह्य अपमान सहन करता है । फिर हे भव्यों! तुम ही कहो, इस संसार में किञ्चिन्मात्र भी सुख है : कुछ भी नहीं ॥५॥

इस प्रकार जीव को संसार के विषय में विचार करना चाहिये । इस प्रकार धर्मध्यान समझना चाहिये ।

अब शुक्लध्यान कहते हैं—(सुकज्ज्ञाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पणत्ते) शुक्लध्यान चार प्रकार का है. और यह स्वरूप लक्षण, आलंबन एवं अनुप्रेक्षा के भेद से सोलह

કૃત્ત્રેણામેધ્યમધ્યે નિયમિતતનુભિઃ સ્થીયતે ગર્ભવાસે,

કાન્તાવિશ્લેષદુઃખવ્યતિકરવિષમે યૌવને ચોપભોગઃ ।

नारीणामप्यवज्ञा विलसति नियतं वृद्धभावेऽप्यसाधुः,

संसारे रे मनुष्याः ! वदत यदि सुखं स्वल्पमप्यस्ति किञ्चित् ॥४॥

અત્યંત અપવિત્ર ગર્ભવાસમાં રહીને આ જીવ અनेક કષ્ટોને સહન કરતો રહે છે. ત્યાં તેનું શરીર સંકોચાઈને રહે છે. જુવાન અવસ્થામાં આ જીવ વિષયભોગના સમયે સ્ત્રીવિયોગથી ઉત્પન્ન થતા દુઃખથી બહુ જ દુઃખી થાય છે. સ્ત્રી જો જીવતી હોય તો પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં તે પોતાની તે જ સ્ત્રીનું અસહ્ય અપમાન સહન કરે છે. માટે હે ભવ્યો ! તમે જ કહો, આ સંસારમાં જરાપણ સુખ છે ? જરાય નહિ. (૮)

આ પ્રકારે જીવને સંસારના વિષયમાં વિચાર કરવો જોઈએ. એ પ્રકારે ધર્મ-ધ્યાન સમજવું જોઈએ.

હવે શુક્લધ્યાન કહે છે (સુક્કજ્ઞાણે ચउव्विहे चउप्पडोयारे पणत्ते) શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે, અને તે સ્વરૂપ લક્ષણ, આલં-

પુહુત્તવિયકે સવિયારી ૧, એગત્તવિયકે અવિયારિ ૨, સુહુમકિરિણ
અપ્પહિવાઈ ૩, સમુચ્છિન્નકિરિણ અણિયટ્ટી ૪। સુક્કસ્સ પં જ્ઞાણસ્સ

ત્યવતારં પ્રજ્ઞમ્ । યથા મલાપગમેન શુચિતાધર્માભિસમ્બન્ધાત્ પટઃ શુક્લઃ इत्युच्यते,
તથા રાગદ્વેષમલાપનયનાચ્છુચિતાધર્મસમ્બન્ધાદ્ ધ્યાનમપિ શુક્લમિત્યુચ્યતે, તત્તતુર્વિધં પ્રજ્ઞમ્,
તદ્ યથા—‘પુહુત્તવિયકે સવિયારી’ પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચારિ ૧, ‘એગત્તવિયકે અવિયારિ’
એકત્વવિતર્કમવિચારિ ૨, ‘સુહુમકિરિણ અપ્પહિવાઈ’ સૂક્ષ્મક્રિયમપ્રતિપાતિ, ૩, ‘સમુચ્છિન્ન-
કિરિણ અણિયટ્ટી’ સમુચ્છિન્નક્રિયમનિવર્તિ ૪—ઇતિ ।

તત્ર પૂર્વગતશ્રુતજ્ઞાનાનુસારેણ ધ્યેયવિશેષગતોત્પાદાદિનાનાપર્યાયાણાં દ્રવ્યાર્થિક-
પર્યાયાર્થિકાદિનાનાનયૈરર્થવ્યંજનયોગસંક્રાન્તિસહિતાનુચિન્તનં પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારમ્ ॥ ૧ ॥

પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । જિસ તરહ મૈલ કે દૂર હોને સે વસ્ત્ર બિલકુલ સાફ હો જાતા હૈ
ઔર “શુક્લઃ પટઃ” ઇસ પ્રકાર કહા જાતા હૈ, ઁસી તરહ રાગદ્વેષરૂપી મૈલ કે અપગમસે
ધ્યાન મી શુદ્ધ હો જાતા હૈ ઔર ઇસીસે વહ શુક્લધ્યાન કહા જાતા હૈ । (તં જહા) ઇસકે
વે ચાર પ્રકાર ઁ હૈ—(પુહુત્તવિયકે સવિયારી) પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર, (એગત્તવિયકે અવિ-
યારિ) એકત્વવિતર્કઅવિચાર, (સુહુમકિરિણ અપ્પહિવાઈ) સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતી, (સમુ-
ચ્છિન્નકિરિણ અણિયટ્ટી) સમુચ્છિન્નક્રિય—અનિવર્તિ । ઇનકા વર્ણન ઇસ પ્રકાર હૈ—પૂર્વગત
શ્રુતજ્ઞાન કે અનુસાર ધ્યેયવિશેષગત ઉત્પાદ, વ્યય ઁવં ધ્રૌવ્ય આદિ પર્યાયોં કા દ્રવ્યાર્થિક ઁવં
પર્યાયાર્થિક નયોં સે અર્થસંક્રાન્તિ, વ્યંજનસંક્રાન્તિ ઁવં યોગસંક્રાન્તિ યુક્ત હોકર વિચાર કરના
સો પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર શુક્લધ્યાન કા પ્રથમ ભેદ હૈ ॥૧॥ જિસ તરહ સિદ્ધગારુડિક આદિ

બન તેમજ અનુપ્રેક્ષાના ભેદથી સોળ પ્રકારનું કહેવાય છે. જેવી રીતે મેલ ધોવાઈ
જવાથી વસ્ત્ર બિલકુલ સાફ થઈ જાય છે અને “શુક્લઃ પટઃ” એ પ્રકારે
કહેવાય છે, એ જ રીતે રાગદ્વેષરૂપી મેલ દૂર થઈ જવાથી ધ્યાન પણ શુદ્ધ
થઈ જાય છે, અને તે કારણથી તેને શુક્લધ્યાન કહેવાય છે. (તં જહા)
તેના ચાર પ્રકાર આ છે—(પુહુત્તવિયકે સવિયારી) પૃથક્ત્વવિતર્ક—સવિચાર
(એગત્તવિયકે અવિયારિ) એકત્વવિતર્ક—અવિચાર (સુહુમકિરિણ અપ્પહિવાઈ)
સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતી (સમુચ્છિન્નકિરિણ અણિયટ્ટી) સમુચ્છિન્નક્રિય—અનિવૃત્તિ.

પૂર્વગત શ્રુતજ્ઞાન અનુસાર ધ્યેયવિશેષથી થતા ઉત્પાદ, વ્યય તેમજ
ધ્રૌવ્ય આદિ પર્યાયોના દ્રવ્યાર્થિક નયોથી, અર્થસંક્રાન્તિ, વ્યંજનસંક્રાન્તિ તેમજ
યોગસંક્રાન્તિથી યુક્ત થઈને વિચાર કરવો તે પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર શુક્લ-
ધ્યાનનો પ્રથમ પ્રકાર છે (૧).

यथा सिद्धगारुडिकादिमन्त्रः सकलशरीरस्यापि विषमं विषं मन्त्रसामर्थ्येन सर्वावयवेभ्यः समाकृष्य दंशस्थाने समानीय तंस्तम्भयति, तथा पूर्वगतश्रुतानुसारतोऽर्थव्यञ्जनयोग-संक्रान्तिराहित्येनाशेषविषयेभ्यः संहृत्यैकस्मिन्नेव पर्याये योगस्य निर्वातस्थाने दीपशिखावत स्थिरीकरणम् एकत्ववितर्काऽविचारम् ॥२॥

यदा जघन्ययोगवतः संज्ञिपर्याप्तस्य मनोद्रव्याणि समये निरुन्धन् असंख्यातसमयैः संपूर्णं मनोयोगं तत्पश्चात् पर्याप्तद्वीन्द्रियस्य वाग्योगपर्यायतोऽसंख्यातगुणन्यूनवाग्योगपर्यायान् प्रतिसमयं निरुन्धन् असंख्यातसमयैः संपूर्णं वाग्योगं, ततश्च प्रथमसमयसमुत्पन्ननिगोदजीवस्य जघन्यकाययोगपर्यायतोऽसंख्यातगुणहीनकाययोगं प्रतिसमयं निरुन्धन्, असंख्यात-

मंत्रवाला पुरुष समस्त शरीर के अवयवों में व्याप्त विषम विष को मंत्र के प्रभाव से खेंचकर काटे हुए स्थानपर स्तंभित कर देता है उसीतरह पूर्वगतश्रुतज्ञान के अनुसार अर्थ, व्यंजन एवं योगों की संक्रान्ति से रहित होने के कारण, अशेषविषयों से योगों को हटाकर एक ही पर्याय में योग का, वातरहित स्थान में दीपक की लौ की तरह, स्थिर करना सो एकत्ववितर्क-अविचार-नामक शुक्लध्यान का दूसरा भेद है ॥२॥ सूक्ष्मक्रिय-अप्रतिपाति शुक्लध्यान सिर्फ सूक्ष्मकाययोगवाले जीव को होता है। सूक्ष्मक्रिय-अप्रतिपाति शुक्लध्यान के सन्मुख हुआ जीव सर्वप्रथम मनोद्रव्यों का प्रतिसमय निरोध करता हुआ असंख्यातसमयप्रमाणकाल में समस्तमनोयोग का, इसीतरह प्रतिसमय वाग्योगपर्यायों का निरोध करता हुआ असंख्यातसमयप्रमाणकाल में समस्तवाग्योग का, एवं प्रथम समयमें समुत्पन्न निगोदजीवकी जघन्य-अवगाहनास्वरूप काययोगपर्यायों से असंख्यात-

जेवी रीते सिद्ध गारुडिक आदि मंत्रवाणे। पुरुष आभां शरीरनां अवयवोभां प्रसरेलां विषम अेरने मंत्रना प्रलावधी जेच्यीने करडेला स्थान उपर स्तंभित करी दे छे, तेवी ज रीते पूर्वगत श्रुतज्ञान अनुसार अर्थ, व्यंजन तेमज योगोनी संक्रांतिथी रडित होवाने कारणे, भील विषयोथी योगोने डटावीने अेक ज पर्यायभां योगने डवा वगरना स्थानभां दीपकनी ज्योतनी पेठे स्थिर करवो ते शुक्लध्यानना अेकत्ववितर्कअविचार नामनो भीले प्रकार छे. (२)

सूक्ष्मक्रिय-अप्रतिपाति शुक्लध्यानने सन्मुख थयेले जेव सर्वप्रथम मनोद्रव्योना डुरवअत निरोध करतां करतां असंख्यात-समय-प्रमाणे काळे समस्त मनोयोगनो, तेम ज वारंवार वाग्योगपर्यायोना निरोध करतां करतां असंख्यात-समय-प्रमाणे काणे समस्त वाग्योगनो, तेम ज प्रथम समयभां समुत्पन्न निगोद जेवनी जघन्यअवगाहनास्वरूप काययोगनी पर्यायोथी असंख्यातगुणहीनकाययोगनो वारंवार निरोध करतां

સમયૈર્વાદરકાયયોગં ચ સર્વથા નિરુણદ્ધિ, તદેદં સૂક્ષ્મક્રિયાઽપ્રતિપાતિધ્યાનમુપક્રમતે ॥૩॥
તત્ર શ્વાસોચ્છ્વાસસ્વરૂપં સૂક્ષ્મમપિ કાયયોગં નિરુધ્ય અયોગિત્વં પ્રાપ્ય શૈલેશીમવસ્થાં પ્રતિપદ્યતે,
મધ્યમકાલેન 'અ ઇ ઉ ઋ લૃ' ઇત્યેવંરૂપં પદ્મલધ્વક્ષરોચારણસમકાલસ્થિતિકં સમુચ્છિન્ન-
ક્રિયાનિવર્તિ ધ્યાનમનુભવતિ ॥૪॥ દશવૈકાલિકસૂત્રસ્યાચારમણિમંજૂષાટીકાયામસ્માભિઃ
સવિસ્તરં શુક્લધ્યાનવર્ણનં કૃતમ્, અતસ્તતોઽવગન્તવ્યમ્ ।

તથા—તત્ શુક્લધ્યાનં ચતુષ્પ્રત્યવતારં પ્રજ્ઞતમ્ । 'સુક્લસ્ય ણં જ્ઞાણસ્ય ચત્તારિ
લક્ષણા પળ્લણ્ણત્તા' શુક્લસ્ય સ્વલુ ધ્યાનસ્ય ચત્તારિ લક્ષણાનિ પ્રજ્ઞતાનિ । 'તં જહા' તથથા

ગુગહીનકાયયોગ કો પ્રતિસમય મેં નિરોધ કરતા હુઆ અધ્યાતસમયપ્રમાણકાલ મેં વાદરકાયયોગ
કા સર્વથા નિરોધ કર દેતા હૈ, તવ જાકર ઇસે સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતિનામક શુક્લધ્યાન કી
પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, યહ સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતિનામક તીસરા ભેદ હૈ ।૩। ઇસ અવસ્થામેં
શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ સૂક્ષ્મકાયયોગકા મી નિરોધ કર, અયોગિ—અવસ્થા કો પ્રાપ્ત હો, શૈલેશી
અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ, વહાં 'અ ઇ ઉ ઋ લૃ' ઇન પાંચ લઘુ અક્ષરોં કે મધ્યમ
કાલ સે ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય તક વહાં ઠહર કર સમુ-
ચ્છિન્નક્રિય—અનિવર્તિનામક શુક્લધ્યાનકા અનુભવ કરતા હૈ ।૪। ઇસ શુક્લધ્યાન
કા વિશેષ વિસ્તારપૂર્વક વર્ણન દશવૈકાલિક સૂત્ર કે ચૌથે અધ્યયન કી 'આચારમણિમંજૂષા'
નામકી ટીકા મેં લિખા ગયા હૈ, અતઃ વિશેષાર્થી કો ઇસકા વિશેષ વર્ણન વહાં સે
દેખ લેના ચાહિયે । (સુક્લસ્ય ણં જ્ઞાણસ્ય ચત્તારિ લક્ષણા પળ્લણ્ણત્તા) ઇસ શુક્લ-
ધ્યાન કે ચાર લક્ષણ હૈ; (તં જહા) વે ઇસ પ્રકાર હૈ—(વિવેગે) વિવેક—દેહ સે આત્માકો

કરતાં અસંખ્યાતસમયપ્રમાણ કાળે બાદરકાયયોગનો સર્વથા નિરોધ કરી
દે છે, ત્યારે તેને સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતિ નામક શુક્લધ્યાનની પ્રાપ્તિ થાય
છે. આ સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતિ નામે ત્રીજો પ્રકાર છે. (૩)

તે અવસ્થામાં શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ સૂક્ષ્મકાયયોગનો પણ નિરોધ કરી, અયોગિ-
અવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈ, શૈલેશી અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરી લે છે. ત્યાં અ ઇ ઉ ઋ લૃ આ
પાંચ લઘુ અક્ષરોનું મધ્યમકાલથી ઉચ્ચારણ કરવામાં જોડલો સમય લાગે તેટલા
સમયસુધી રોકાઈને સમુચ્છિન્નક્રિય—અનિવર્તિ નામક શુક્લધ્યાનનો અનુભવ કરે
છે (૪). આ શુક્લધ્યાનનું વિશેષ વિસ્તારપૂર્વક વર્ણન દશવૈકાલિકસૂત્રના ચોથા
અધ્યયનની આચારમણિમંજૂષા નામની ટીકામાં લખવામાં આવ્યું છે. તેથી
વિશેષ જાણવાવાળાને માટે તેનું વિશેષ વર્ણન ત્યાંથી જોઈ લેવું જોઈએ.

(સુક્લસ્ય ણં જ્ઞાણસ્ય ચત્તારિ લક્ષણા પળ્લણ્ણત્તા) આ શુક્લધ્યાનનાં ચાર
લક્ષણ છે. (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(વિવેગે) વિવેક—દેહથી આત્માને જુદો જાણવો,

चत्तारि लक्षणा पणत्ता; तं जहा—विवेगे १, विउस्सग्गे २, अव्वहे ३, असम्मोहे ४। सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि आलंबणा पणत्ता, तं जहा—खंती १, मुत्ती २, अज्जवे ३, महवे ४। सुक्कस्स

‘विवेगे’ विवेकः—पृथक्करणं, स च पृथक्कारः—देहादात्मनो बुद्ध्या विवेचनम् ॥१॥ ‘विउस्सग्गे’ व्युत्सर्गः—निस्सङ्गतया देहोपधित्यागः ॥२॥ ‘अव्वहे’ अव्यथम्—देवाद्युपसर्गजनितं भयं व्यथा—तया रहितम् ॥३॥ ‘असम्मोहे’ असंमोहः—देवमायाजनितस्य मूढत्वस्य निषेधः ॥४॥ ‘सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि आलंबणा पणत्ता’ शुक्लस्य खलु ध्यानस्य चत्वार्यालम्बनानि प्रज्ञप्तानि; ‘तं जहा’ तद्यथा—‘खंती’ क्षान्तिः—परकृताऽपकारसहनम् ॥१॥ ‘मुत्ती’ मुक्तिः—निर्लोभता ॥२॥ ‘अज्जवे’ अर्जवं—सरलता ॥३॥ ‘महवे’ मार्दवं—मृदुता ॥४॥ ‘सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पणत्ताओ’ शुक्लस्य

भिन्न जानना १। (विउस्सग्गे) व्युत्सर्ग—देह तथा उपधि का परित्याग करना २। (अव्वहे) अव्यथ—व्यथारहित होना—देवादिकृत उपसर्गजनित भय का नाम व्यथा है, इससे रहित का नाम अव्यथ है, अर्थात्—देवादिकृत उपसर्गों का निश्चल भावसे सहन करना ३। (असंमोहे) असंमोह—मोहरहित होना—देवादिक द्वारा प्रदर्शित मायाकी ओर आकृष्ट नहीं होना ४। (सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि आलंबणा पणत्ता) शुक्लध्यान के चार आलंबन हैं, (तं जहा) वे इस प्रकार हैं—(खंती) क्षान्ति—परकृत अपकार का सहन करना १, (मुत्ती) मुक्ति—लोभका परित्याग करना २, (अज्जवे) अर्जव—चित्त में सरलता रखना ३, और (महवे) मार्दव गुणका होना ४। (सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पणत्ताओ) शुक्लध्यान की चार अनुप्रेक्षा हैं; (तं जहा) वे ये हैं—(अवायाणुप्पेहा) अपायानुप्रेक्षा—

(विउस्सग्गे) व्युत्सर्ग—देह तथा उपधिने परित्याग करवो, (अव्वहे) अव्यथ—व्यथारहित होवुं—देवादिकृत उपसर्गथी थयेल भयनुं नाम व्यथा छे, तेनाथी रहितनुं नाम अव्यथ छे, अर्थात्—देवादिकथी करामेद उपसर्गोंने निश्चल भावथी सहन करवां। (असंमोहे) असंमोह—मोहरहित थवुं—देवादिकद्वारा प्रदर्शित माया तरङ्ग आकर्षावुं नहि। (सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि आलंबणा पणत्ता) शुक्लध्याननां चार आलंबन छे; (तं जहा) ते आ प्रकारे छे—(खंती) क्षान्ति—भीष्ममे करेद अपकारने सहन करवो, (मुत्ती) मुक्ति—दोषने परित्याग करवो, (अज्जवे) अर्जव—चित्तमां सरलता राखवी, अने (महवे) मार्दव—मृदुता शुणु थवुं। (सुक्कस्स णं ज्ञाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पणत्ताओ) शुक्लध्याननी चार अनुप्रेक्षा छे; (तं जहा) ते आ छे—(अवायाणुप्पेहा)

णं ज्ञाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पणत्ताओ; तं जहा-अवा-
याणुप्पेहा १ असुभाणुप्पेहा २ अणंतवत्तियाणुप्पेहा ३ विपरि-
णामाणुप्पेहा ४। से तं ज्ञाणे ॥ सू० ३० ॥

खलु ध्यानस्य चतस्रोऽनुप्रेक्षाः प्रज्ञाः; ‘तं जहा’ तद्यथा—‘अवायाणुप्पेहा’ अपायानु-
प्रेक्षा—अपायानां प्राणातिपाताद्यास्रवद्वारजनितानाम् अनर्थानामनुचिन्तनम् ॥१॥ ‘असुभा-
णुप्पेहा’ अशुभानुप्रेक्षा—संसारस्यैव अशुभस्वरूपतयाऽनुचिन्तनम् ॥२॥ ‘अणंतवत्तियाणुप्पेहा’
अनन्तवृत्तितानुप्रेक्षा—अनन्तवृत्तिता—तैलिकचक्रयोजितस्य वृषस्य मार्गाऽनवसानवत्कदाप्यस-
माप्तिशीलता तस्या अनुप्रेक्षा—अनुचिन्तनम् ॥३॥ ‘विपरिणामाणुप्पेहा’ विपरिणामानुप्रेक्षा—
उत्पादव्ययध्रौव्यस्वभावानां पदार्थानां यो विपरिणामः—प्रतिक्षणं नवनवपर्यायरूपः तस्यानु-
चिन्तनम् ॥४॥ ‘से तं ज्ञाणे’ तदेतद् ध्यानम् ॥ सू० ३० ॥

अपायों का अर्थात् प्राणातिपातादिक पाप, जो कर्मों के आस्रव के लिये द्वार जैसे हैं उनसे जनित
अनर्थों का बारंवार विचार करना सो अपायानुप्रेक्षा है १। (असुभाणुप्पेहा) अशुभानु-
प्रेक्षा—संसार स्वयं अशुभस्वरूप है, ऐसा बारंवार विचार करना सो अशुभानुप्रेक्षा है २।
(अणंतवत्तियाणुप्पेहा) अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा—भवपरंपरा की अनंतवृत्ति का विचार करना,
अर्थात् जिस प्रकार तेली का बैल कोल्हू में जोता जाने पर चक्र काटता है उसी प्रकार इस
जीव के भी, जबतक यह संसार में रहता है तबतक इसके भ्रमण की कभी भी समाप्ति नहीं होती
है, इस प्रकार का अनुचिन्तन करना अनंतवर्तितानुप्रेक्षा है ३। (विपरिणामाणुप्पेहा) विपरि-
णामानुप्रेक्षा—प्रत्येक द्रव्य, उत्पाद, व्यय एवं ध्रौव्य स्वभाववाले हैं, अतः वस्तु प्रतिसमय

अपायानुप्रेक्षा—अपायेनो अर्थात्—प्राणातिपातादिक पाप ने कर्मोंना आस्रवने
भाटे द्वार नेवां छे तेमनाथी थता अनर्थोने वारंवार विचार करवो ते
अपायानुप्रेक्षा छे. (असुभाणुप्पेहा) अशुभानुप्रेक्षा—संसार पोते अशुभस्वरूप
छे, अवे वारंवार विचार करवो ते अशुभानुप्रेक्षा छे. (अणंतवत्तियाणुप्पेहा)
अनंतवर्तितानुप्रेक्षा—भवपरंपरानी अनंतवृत्तितानो विचार करवो, अर्थात्
नेवी रीते धांच्चीनो अणद धाणीमां नेडाधने अक्करो—(आठ) इयां करे छे
अेवी रीते आ जव पणु न्यां सुधी संसारमां रहे छे त्यां सुधी तेना भ्रम-
णुनी कही पणु समाप्ति थती नथी, अे प्रकारनुं अनुचिंतन करवुं ते अनंत-
वर्तितानुप्रेक्षा छे. (विपरिणामाणुप्पेहा) विपरिणामानुप्रेक्षा—प्रत्येक द्रव्य
उत्पाद, व्यय तेमज ध्रौव्य स्वभाववाणां छे, तेथी डुरवअत वस्तु परिणमन

મૂલમ્—સે કિં તં વિડસ્સગ્ગે ? વિડસ્સગ્ગે દુવિહે પણ્ણત્તે; તં જહા—? દ્વવિડસ્સગ્ગે, ૨ ભાવવિડસ્સગ્ગે ય । સે કિં તં દ્વવિડસ્સગ્ગે ? દ્વવિડસ્સગ્ગે ચડવ્વિહે પણ્ણત્તે, તં જહા—? સરીર-

ટીકા—આમ્યન્તરતપસઃ ષષ્ઠભેદમાહ—‘ સે કિં તં વિડસ્સગ્ગે ’ અથ કોડસૌ વ્યુત્સર્ગઃ ? વ્યુત્સર્ગઃ કિંસ્વરૂપઃ કતિવિધશ્ચેતિ પ્રશ્નઃ । વ્યુત્સર્ગઃ—વિ=વિશેષેણ, ઉત્=ઉત્કૃષ્ટ-ભાવનયા સર્ગઃ=ત્યાગઃ । ‘વિડસ્સગ્ગે દુવિહે પણ્ણત્તે’ વ્યુત્સર્ગો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, ‘તં જહા’ તથથા ૧—‘ દ્વવિડસ્સગ્ગે ’ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગઃ, ૨—‘ ભાવવિડસ્સગ્ગે ’ ભાવવ્યુત્સર્ગઃ । ‘ સે કિં તં દ્વવિડસ્સગ્ગે ? ’ અથ કોડસૌ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગઃ ? ‘ દ્વવિડસ્સગ્ગે ચડવ્વિહે પણ્ણત્તે ’ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગઃ—ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ; ‘ તં જહા ’ તથથા—‘ સરીરવિડસ્સગ્ગે ’ શરીરવ્યુત્સર્ગઃ । ૧ ।

પરિણમતી રહતી હૈ । ઇસ પ્રકાર જો ચિન્તન કરના ઇસકા નામ વિપરિણામાનુપ્રેક્ષા હૈ । (સે તં જ્ઞાણે) ઇસ પ્રકાર ચાર ધ્યાનકા વર્ણન હુઆ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

‘ સે કિં તં વિડસ્સગ્ગે ’ ઇત્યાદિ,

અબ આમ્યન્તર તપકા જો છઠા ભેદ વ્યુત્સર્ગ હૈ ઇસકા વર્ણન કરતે હૈ—(સે કિં તં વિડસ્સગ્ગે) વિશેષ રીતિ સે ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાપૂર્વક પરિત્યાગ કરના વ્યુત્સર્ગ હૈ, વહ વ્યુત્સર્ગતપ ક્યા—કિતને પ્રકાર કા હૈ ? (વિડસ્સગ્ગે દુવિહે પણ્ણત્તે) વ્યુત્સર્ગ કે દો ભેદ હૈ; (તં જહા) વે યે હૈ—(દ્વવિડસ્સગ્ગે ભાવવિડસ્સગ્ગે) ૧—દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ઓર ૨—ભાવવ્યુત્સર્ગ । (સે કિં તં દ્વવિડસ્સગ્ગે) દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ક્યા—કિતને પ્રકાર કા હૈ ? (દ્વવિડસ્સગ્ગે ચડવ્વિહે પણ્ણત્તે) દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ચાર પ્રકાર કા હૈ । (તં જહા) જૈસે—

કરતી હોય છે, એક જ રૂપે કદી નથી રહેતી. એ પ્રકારે જે ચિંતન કરવું તેનું નામ વિપરિણામાનુપ્રેક્ષા છે. (સે તં જ્ઞાણે) એ પ્રમાણે ચાર ધ્યાનનું વર્ણન થયું. (સૂ. ૩૦)

‘ સે કિં તં વિડસ્સગ્ગે ? ’ ઇત્યાદિ

હવે સૂત્રકાર આમ્યન્તર તપનો જે છઠો પ્રકાર વ્યુત્સર્ગ છે તેનું વર્ણન કરે છે—(સે કિં તં વિડસ્સગ્ગે) વિશેષરીતિથી ઉત્કૃષ્ટભાવનાપૂર્વક પરિત્યાગ કરવો તે વ્યુત્સર્ગ છે. વ્યુત્સર્ગ તપ કેટલા પ્રકારનું છે ? (વિડસ્સગ્ગે દુવિહે પણ્ણત્તે) એના એ પ્રકાર છે,—(તં જહા) તે આ છે—(દ્વવિડસ્સગ્ગે ભાવવિડસ્સગ્ગે ય) ૧ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ અને ૨ ભાવવ્યુત્સર્ગ. દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ શું—કેટલા પ્રકારનું છે ? (દ્વવિડસ્સગ્ગે ચડવ્વિહે પણ્ણત્તે) એ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ચાર પ્રકારનું છે. (તં જહા)

વિડસ્સગ્ગે, ૨ ગણવિડસ્સગ્ગે, ૩ ઉવહિવિડસ્સગ્ગે, ૪ ભત્તપાણવિડ-
સ્સગ્ગે । સે તં દઘ્વવિડસ્સગ્ગે । સે કિં તં ભાવવિડસ્સગ્ગે ? ભાવવિડ-
સ્સગ્ગે તિવિહે પણ્ણત્તે, તં જહા-૧ કસાયવિડસ્સગ્ગે, ૨ સંસારવિડસ્સ-

‘ગણવિડસ્સગ્ગે’ ગણવ્યુત્સર્ગઃ । ૨। ‘ઉવહિવિડસ્સગ્ગે’ ઉપધિવ્યુત્સર્ગઃ—ઉપધેરુપકરણસ્ય
ત્યાગઃ । ૩। ‘ભત્તપાણવિડસ્સગ્ગે’ ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગઃ—અન્નજલત્યાગઃ । ૪। ‘સે તં દઘ્વ-
વિડસ્સગ્ગે’ સ ઇષ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગઃ । ‘સે કિં તં ભાવવિડસ્સગ્ગે’ અથ કોઽસૌ ભાવવ્યુત્સર્ગઃ ।
‘ભાવવિડસ્સગ્ગે તિવિહે પણ્ણત્તે’ ભાવવ્યુત્સર્ગઃ ત્રિવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ; ‘તં જહા’ તદ્વથા—‘કસાય-
વિડસ્સગ્ગે’ કષાયવ્યુત્સર્ગઃ । ૧। ‘સંસારવિડસ્સગ્ગે’ સંસારવ્યુત્સર્ગઃ । ૨। ‘કમ્મવિડ-
સ્સગ્ગે’ કર્મવ્યુત્સર્ગઃ । ૩। ‘સે કિં તં કસાયવિડસ્સગ્ગે’ અથ કોઽસૌ કષાયવ્યુત્સર્ગઃ ? ‘કસાય-

(સરીરવિડસ્સગ્ગે ૧, ગણવિડસ્સગ્ગે ૨, ઉવહિવિડસ્સગ્ગે ૩, ભત્તપાણવિડસ્સગ્ગે ૪)
શરીરવ્યુત્સર્ગ ૧, ગણવ્યુત્સર્ગ ૨, ઉપધિવ્યુત્સર્ગ ૩, ઓર ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ ૪ । ઇનમેં શરીર
કે મમત્વ કા ત્યાગ કરના સો શરીરવ્યુત્સર્ગ હૈ ૧ । પડિમા આદિ આરાધન કરને કે લિયે
ગણ—સંપ્રદાય સે મમત્વકા ત્યાગ કરના સો ગણવ્યુત્સર્ગ હૈ ૨ । વસ્ત્રાદિક ઉપધિ કે મમત્વ
કા ત્યાગ કરના સો ઉપધિવ્યુત્સર્ગ હૈ ૩ । ભોજન ઇવં પાની કા ત્યાગ કરના સો
ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ હૈ ૪ । (સે તં દઘ્વવિડસ્સગ્ગે) યહ સર્વ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ હૈ । (સે કિં
તં ભાવવિડસ્સગ્ગે) ભાવવ્યુત્સર્ગ કયા—કિતને પ્રકાર કા હૈ ? (ભાવવિડસ્સગ્ગે તિવિહે
પણ્ણત્તે) ભાવવ્યુત્સર્ગ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ; (તં જહા) વે પ્રકાર યે હૈ—(કસાયવિડસ્સગ્ગે ૧
સંસારવિડસ્સગ્ગે ૨ કમ્મવિડસ્સગ્ગે ૩) કષાયવ્યુત્સર્ગ ૧, સંસારવ્યુત્સર્ગ ૨, ઇવં કર્મવ્યુત્સર્ગ
૩ । (સે કિં તં કસાયવિડસ્સગ્ગે) કષાયવ્યુત્સર્ગ કયા કિતને પ્રકારકા હૈ ? (કસાય-

બેમકે—(સરીરવિડસ્સગ્ગે ગણવિડસ્સગ્ગે ઉવહિવિડસ્સગ્ગે ભત્તપાણવિડસ્સગ્ગે) શરીર-
વ્યુત્સર્ગ, ગણવ્યુત્સર્ગ, ઉપધિવ્યુત્સર્ગ અને ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ. તેમાં શરીરના
મમત્વનો ત્યાગ કરવો તે શરીરવ્યુત્સર્ગ છે. પડિમા આદિ આરાધન કરવા
માટે ગણ—સંપ્રદાયથી મમત્વનો ત્યાગ કરવો તે ગણવ્યુત્સર્ગ છે. વસ્ત્રાદિક
ઉપધિથી મમત્વનો ત્યાગ કરવો તે ઉપધિવ્યુત્સર્ગ છે. ભોજન તેમજ પાણીનો
ત્યાગ કરવો તે ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ છે. આ બધા દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ છે. (સે કિં તં
ભાવવિડસ્સગ્ગે) ભાવવ્યુત્સર્ગ શું—કેટલા પ્રકારનો છે ? (ભાવવિડસ્સગ્ગે તિવિહે પણ્ણત્તે)
ભાવવ્યુત્સર્ગ ત્રણ પ્રકારનો છે; (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે—(કસાયવિડસ્સગ્ગે
સંસારવિડસ્સગ્ગે કમ્મવિડસ્સગ્ગે) કષાયવ્યુત્સર્ગ, સંસારવ્યુત્સર્ગ તેમજ કર્મવ્યુત્સર્ગ.

ગો, ૩ કમ્મવિઉસ્સગ્ગે । સે કિં તં કસાયવિઉસ્સગ્ગે, ? કસાયવિઉ-
સ્સગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે; તં જહા-કોહકસાયવિઉસ્સગ્ગે, ૨ માણક-
સાય વિઉસ્સગ્ગે, ૩ માયાકસાયવિઉસ્સગ્ગે, ૪ લોહકસાયવિઉસ્સગ્ગે ।
સે તં કસાયવિઉસ્સગ્ગે । સે કિં તં સંસારવિઉસ્સગ્ગે ? સંસારવિઉસ્સ-
ગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે; તં જહા—? ણેરહ્યસંસારવિઉસ્સગ્ગે, ૨ તિરિ-

વિઉસ્સગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે' કષાયવ્યુત્સર્ગઃ ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞતઃ, 'તં જહા' તથથા-કોહકસાય-
વિઉસ્સગ્ગે ' ક્રોધકષાયવ્યુત્સર્ગઃ । ૧। ' માણકસાયવિઉસ્સગ્ગે ' માનકષાયવ્યુત્સર્ગઃ ।
' માયાકસાયવિઉસ્સગ્ગે ' માયાકષાયવ્યુત્સર્ગઃ । ૩। ' લોહકસાયવિઉસ્સગ્ગે ' લોભ-
કષાયવ્યુત્સર્ગઃ । ૪। ' સે તં કસાયવિઉસ્સગ્ગે ' સ ઇષ કષાયવ્યુત્સર્ગઃ । ' સે કિં
સંસારવિઉસ્સગ્ગે ' અથ કોઽસૌ સંસારવ્યુત્સર્ગઃ : ' સંસારવિઉસ્સગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે સંસાર-
વ્યુત્સર્ગઃ ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞતઃ, 'તં જહા' તથથા—' ણેરહ્યસંસારવિઉસ્સગ્ગે ' નૈરયિકસંસાર-
વ્યુત્સર્ગઃ । ૧। ' તિરિયસંસારવિઉસ્સગ્ગે ' તિર્યક્સંસારવ્યુત્સર્ગઃ । ૨। ' મણુયસંસારવિઉ-

વિઉસ્સગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે) કષાયવ્યુત્સર્ગ ચાર પ્રકારના છે । (તં જહા) વે ચાર પ્રકાર યે
હૈ—(કોહકસાયવિઉસ્સગ્ગે ૧, માણકસાયવિઉસ્સગ્ગે ૨, માયાકસાયવિઉસ્સગ્ગે ૩,
લોહકસાયવિઉસ્સગ્ગે ૪) ક્રોધકષાયવ્યુત્સર્ગ ૧, માનકષાયવ્યુત્સર્ગ ૨, માયાકષાયવ્યુત્સર્ગ ૩ એવં
લોભકષાયવ્યુત્સર્ગ ૪ । (સે તં કસાયવિઉસગ્ગે) इन क्रोधादि चार कषायोंका परित्याग करना
यह कषायव्युत्सर्ग है । (से किं तं संसारविउस्सगग्गे) સંસારવ્યુત્સર્ગ કયા—કિતને પ્રકાર ના છે ?
(સંસારવિઉસ્સગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે) સંસારવ્યુત્સર્ગ ચાર પ્રકાર ના છે, (તં જહા) વે ચાર
પ્રકાર યે હૈ—(ણેરહ્યસંસારવિઉસ્સગ્ગે ૧ તિરિયસંસારવિઉસ્સગ્ગે ૨ મણુયસંસારવિઉસ્સ-

(સે કિં તં કસાયવિઉસ્સગ્ગે) કષાયવ્યુત્સર્ગ કેટલા પ્રકારનો છે ? (કસાયવિઉસ્સગ્ગે
ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે) કષાયવ્યુત્સર્ગ ચાર પ્રકારનો છે (તં જહા) જેમકે—(કોહકસા-
યવિઉસ્સગ્ગે માણકસાયવિઉસ્સગ્ગે માયાકસાયવિઉસ્સગ્ગે લોહકસાયવિઉસ્સગ્ગે) ક્રોધ-
કષાયવ્યુત્સર્ગ, માનકષાયવ્યુત્સર્ગ, માયાકષાયવ્યુત્સર્ગ, તેમજ લોભકષાયવ્યુત્સર્ગ.
(સે તં કસાયવિઉસ્સગ્ગે) એ ક્રોધાદિ ચારેય કષાયોનો પરિત્યાગ કરવો તે આ કષાય-
વ્યુત્સર્ગ છે. (સે કિં તં સંસારવિઉસ્સગ્ગે) સંસારવ્યુત્સર્ગ કેટલા પ્રકારનો છે ? (સંસાર-
વિઉસ્સગ્ગે ચઉવ્વિહે પળ્લત્તે) સંસારવ્યુત્સર્ગ ચાર પ્રકારનો છે, (તં જહા) તે ચાર
પ્રકાર આ છે—(ણેરહ્યસંસારવિઉસ્સગ્ગે તિરિયસંસારવિઉસ્સગ્ગે મણુયસંસારવિઉસ્સગ્ગે

યસંસારવિઉસ્સગ્ગે, ૩ મણુયસંસારવિઉસ્સગ્ગે, ૪ દેવસંસારવિઉ-
સ્સગ્ગે । સે તં સંસારવિઉસ્સગ્ગે । સે કિં તં કમ્મવિઉસ્સગ્ગે ? કમ્મ-
વિઉસ્સગ્ગે અટ્ટવિહે પળ્લત્તે; તં જહા, ૧ ણાણાવરણિજ્જકમ્મવિઉ-
સ્સગ્ગે, ૨ દરિસણાવરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે, ૩ વેયણિજ્જકમ્મવિઉસ્સ-
ગ્ગે, ૪ મોહણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે, ૫ આડકમ્મવિઉસ્સગ્ગે, ૬ ણામક-
મ્મવિઉસ્સગ્ગે ૭, ગોયકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ૮, અંતરાયકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ।
સે તં કમ્મવિઉસ્સગ્ગે । સે તં ભાવવિઉસ્સગ્ગે ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

સ્સગ્ગે ’ મનુજસંસારવ્યુત્સર્ગઃ ।૩। ‘ દેવસંસારવિઉસ્સગ્ગે ’ દેવસંસારવ્યુત્સર્ગઃ ।૪।
‘ સે તં સંસારવિઉસ્સગ્ગે ’ સ એવં સંસારવ્યુત્સર્ગઃ । ‘ સે કિં તં કમ્મવિઉસ્સગ્ગે ’ અથ
કોઽસૌ કર્મવ્યુત્સર્ગઃ : ‘ કમ્મવિઉસ્સગ્ગે અટ્ટવિહે પળ્લત્તે ’ કર્મવ્યુત્સર્ગઃ અટ્ટવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ । ‘ તં
જહા ’ તદ્વથા—‘ ણાણાવરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ’ જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગઃ ।૧। ‘ દરિ-
સિણાવરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ’ દર્શનાઽવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગઃ ।૨। ‘ વેયણિજ્જકમ્મવિ-
ઉસ્સગ્ગે ’ વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગઃ ।૩। ‘ મોહણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ’ મોહનીયકર્મ-

ગ્ગે ૩, દેવસંસારવિઉસ્સગ્ગે ૪) નૈરયિકસંસારવ્યુત્સર્ગ, તિર્યક્સંસારવ્યુત્સર્ગ, મનુજસંસારવ્યુત્સર્ગ,
એવં દેવસંસારવ્યુત્સર્ગ, (સે તં સંસારવિઉસ્સગ્ગે) ઇસ પ્રકાર ચારગતિરૂપ સંસાર કા યહ વ્યુત્સર્ગ
(પરિત્યાગ) સંસારવ્યુત્સર્ગ હૈ । (સે કિં તં કમ્મવિઉસ્સગ્ગે) કર્મવ્યુત્સર્ગ કયા-કિતને પ્રકાર કા
હૈ । (કમ્મવિઉસ્સગ્ગે અટ્ટવિહે પળ્લત્તે) જિસમેં આઠ પ્રકાર કે કર્મોકા વ્યુત્સર્ગ—પરિત્યાગ હો
વહ કર્મવ્યુત્સર્ગ આઠ પ્રકાર કા હૈ; (તં જહા) જૈસે (ણાણાવરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ૧, દરિ-
સણાવરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ૨, વેયણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ૩, મોહણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે

દેવસંસારવિઉસ્સગ્ગે) નૈરયિકસંસારવ્યુત્સર્ગ, તિર્યક્સંસારવ્યુત્સર્ગ, મનુજ-
સંસારવ્યુત્સર્ગ તેમજ દેવસંસારવ્યુત્સર્ગ, (સે તં સંસારવિઉસ્સગ્ગે) એ પ્રકારે
ચારેય ગતિરૂપ સંસારનો આ વ્યુત્સર્ગ (પરિત્યાગ) તે સંસારવ્યુત્સર્ગ છે.
(સે કિં તં કમ્મવિઉસ્સગ્ગે) કર્મવ્યુત્સર્ગ કેટલા પ્રકારનો છે ? (કમ્મવિઉસ્સગ્ગે
અટ્ટવિહે પળ્લત્તે) જેમાં આઠેય પ્રકારનાં કર્મોનો વ્યુત્સર્ગ—પરિત્યાગ થઈ બાકી
છે એવો આ કર્મવ્યુત્સર્ગ આઠ પ્રકારનો છે; (તં જહા) જેમકે—(ણાણાવરણિજ્જ-
કમ્મવિઉસ્સગ્ગે, દરિસણાવરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે, વેયણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે, મોહણિ-

**મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ બહવે અણગારા ભગવંતો અપ્પેગહ્યા આયારધરા**

વ્યુત્સર્ગ: ૧૪૧ ‘આઝકમ્મવિઝસ્સગ્ગે’ આયુક્કમ્મવ્યુત્સર્ગ: ૧ ૧૫૧ ‘ણામકમ્મવિઝ-
સ્સગ્ગે’ નામકમ્મવ્યુત્સર્ગ: ૧૬૧ ‘ગોયકમ્મવિઝસ્સગ્ગે’ ગોત્રકમ્મવ્યુત્સર્ગ: ૧૭૧ ‘અંત-
રાયકમ્મવિઝસ્સગ્ગે’ અંતરાયકમ્મવ્યુત્સર્ગ: ૧૮૧ ‘સે તં કમ્મવિઝસ્સગ્ગે’ સ એષ
કમ્મવ્યુત્સર્ગ:, ‘સે તં ભાવવિઝસ્સગ્ગે’ સ એષ ભાવવ્યુત્સર્ગ: ૧. ઇત્થમનશનાદિભેદેન
ષટ્ઠવિધં બાહ્યં પ્રાયશ્ચિત્તાદિભેદેન ષટ્ઠવિધમાભ્યંતરં ચ તપો વ્યાખ્યાતમ્ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

ટીકા—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ. તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્
સમયે ‘સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ’ શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘બહવે
અણગારા ભગવંતો’ બહવોઽનગારા ભગવન્તઃ—વર્ણિતાઃ પુનર્વર્ણ્યમાનાઃ શિષ્યા

૪, આઝકમ્મવિઝસ્સગ્ગે ૫, ણામકમ્મવિઝસ્સગ્ગે ૬, ગોયકમ્મવિઝસ્સગ્ગે, ૭
અંતરાયકમ્મવિઝસ્સગ્ગે ૮) જ્ઞાનાવરણીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૧, દર્શનાવરણીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૨,
વેદનીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૩, મોહનીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૪, આયુક્કમ્મવ્યુત્સર્ગ ૫, નામકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૬,
ગોત્રકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૭, એવં અંતરાયકમ્મવ્યુત્સર્ગ ૮, (સે તં ભાવવિઝસ્સગ્ગે) યે સર્વ ભાવ-
વ્યુત્સર્ગે હૈં. ઇસ તરહ યહાં તક અનશનાદિક કે ભેદ સે છહ પ્રકાર બાહ્યતપ કા ઔર
પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ કે ભેદ સે છહ પ્રકાર આભ્યંતર તપ કા વર્ણન હુઆ ॥ સૂ. ૩૦ ॥

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસ કાલ ઔર ઉસ સમય (સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર પ્રભુ કે, જો (બહવે અણગારા ભગવંતો) બહુત

ઝઝકમ્મવિઝસ્સગ્ગે, આઝકમ્મવિઝસ્સગ્ગે, ણામકમ્મવિઝસ્સગ્ગે, ગોયકમ્મવિઝસ્સગ્ગે,
અંતરાયકમ્મવિઝસ્સગ્ગે) જ્ઞાનાવરણીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ, દર્શનાવરણીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ,
વેદનીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ, મોહનીયકમ્મવ્યુત્સર્ગ, આયુક્કમ્મવ્યુત્સર્ગ, નામકમ્મવ્યુત્સર્ગ,
ગોત્રકમ્મવ્યુત્સર્ગ તેમજ અંતરાયકમ્મવ્યુત્સર્ગ, (સે તં કમ્મવિઝસ્સગ્ગે) આ પ્રકારે
આ કમ્મવ્યુત્સર્ગ આઠ પ્રકારનો છે. (સે તં ભાવવિઝસ્સગ્ગે) એ બધા
ભાવવ્યુત્સર્ગ છે. એ રીતે અહીં સુધી અનશન આદિના ભેદથી છ પ્રકારનાં
બાહ્યતપનું અને પ્રાયશ્ચિત્ત આદિના ભેદથી છ પ્રકારનાં આભ્યંતર તપનું
વર્ણન થયું. (સૂ. ૩૦)

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ અને તે સમયે (સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર પ્રભુના જે (બહવે અણગારા ભગવંતો) ઘણા

जाव विवागसुयधरा तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे गच्छागच्छि
गुम्मागुम्मि फड्डाफड्ढि अप्पेगइया वायंति, अप्पेगइया पडि-

बहुसंख्यका आसन्, तेषु शिष्येषु 'अप्पेगइया' अप्येकके=केचित्—'आयारधरा जाव विवागसुयधरा' आचारधरा यावद् विपाकश्रुतधराः—आचाराङ्गादि—विपाकान्त—सर्वश्रुत-धारिणः, इमे पूर्वं वर्णिताः, 'तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे' तत्र तत्र तस्मिन् तस्मिन् देशे देशे—अत्र वीप्सया स्थानबाहुल्यकथनात्साधूनामधिकता अप्रतिबन्धविचरणं च सूचितम्, तथा बहवो बहुविधग्रामनगरवनादिषु गता इति च गम्यते। 'गच्छागच्छि' गच्छागच्छि—एकाचार्यपरिवारो गच्छः—गच्छेन गच्छेन विभज्य वाचनादिकं प्रवृत्तम्, इति विग्रहे 'तत्र तेनेदमिति सरूपे' इत्यनेन गच्छागच्छि, इत्यस्य साधुत्वम्। एवं 'गुम्मागुम्मि' गुल्मागुल्मि—गुल्मं=गच्छैकभागः, गुल्मेन गुल्मेन विभज्य इदं वाचनादिकं प्रवृत्तमिति गुल्मागुल्मि। 'फड्डाफड्ढि' फड्डकाफड्डकि—फड्डकं=लघुतरो गच्छैकभागः, फड्डकेन फड्डकेन विभज्येदं वाचनादिकं प्रवृत्तम्, इत्यर्थे फड्डकाफड्डकि—एषु प्रयोगेषु समासे कृते पूर्वपदस्य दीर्घः समासान्त इच्—प्रत्ययश्च। 'अप्पेगइया वायंति' अप्येकके

से अनगार भगवंत थे, उनमें (अप्पेगइया) कितनेक (आयारधरा जाव विवागसुयधरा) आचारांगसूत्र के धारक थे, 'यावत्' शब्द से कितनेक सूत्रकृताङ्ग से लेकर प्रश्नव्याकरण पर्यन्त सूत्रों में से एक २ सूत्र के धारक थे और कितनेक विपाकश्रुत के धारक थे, उपलक्षणसे कितनेक सबके भी धारक थे। (तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे) वे उसी बगीचे में भिन्न २ जगह पर (गच्छागच्छि) गच्छ गच्छरूप में विभक्त होकर, (गुम्मागुम्मि) गच्छ के एक २ भाग में विभक्त होकर (फड्डाफड्ढि) फुटकर फुटकर रूप में विभक्त होकर विराजते थे। इनमें से (अप्पेगइया वायंति) कितनेक सूत्र की वाचना प्रदान करते थे—सूत्र पढाते

अनगार भगवंतो उता; तेभनामां (अप्पेगइया) डेटलाड (आयारधरा जाव विवाग-सुयधरा) आचारांग सूत्रना धारड उता, 'यावत्' शब्दथी डेटलाड सूत्रकृतांगथी लधने प्रश्नव्याकरण सुधीना सूत्रोमांथी ओड ओड सूत्रना धारड उता, अने डेटलाड विपाकसूत्रना धारड उता, उपलक्षणथी डेटलाड अधा सूत्रोना धारड उता. (तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे) ते ज अगीयामां जुदी जुदी जज्याओ (गच्छागच्छि) गच्छ गच्छ-इपमां विलडत थधने, (गुम्मागुम्मि) गच्छना ओड ओड लागमां विलडत थधने (फड्डाफड्ढि) छूटा—छवाया इपमां विलडत थधने विराजतां उतां. तेभनामांथी (अप्पेगइया वायंति) डेटलाड सूत्रनी वाचना आपता उता—सूत्र लण्णावता

પુચ્છંતિ, અપ્પેગઇયા પરિયટ્ટંતિ, અપ્પેગઇયા અણુપ્પેહંતિ, અપ્પે- ગઇયા અક્ષેવણીઓ વિક્ષેવણીઓ સંવેયણીઓ ણિવ્વેયણીઓ

વાચયન્તિ—સૂત્રવાચનાં દદતે—ગચ્છૈકદેશં ગગાઽવચ્છેદકાધિષ્ઠિતં વિધાય સૂત્રવાચનાં વાચયન્તિ । ‘અપ્પેગઇયા પડિપુચ્છંતિ’ અપ્પેકકે પ્રતિપુચ્છન્તિ=સૂત્રાર્થો પુચ્છન્તિ, ‘અપ્પેગઇયા પરિયટ્ટંતિ’ અપ્પેકકે પરિવર્તયન્તિ=સૂત્રાર્થો પુનઃપુનરભ્યમ્યન્તિ । ‘અપ્પેગઇયા અણુપ્પેહંતિ’ અપ્પેકકે અનુપ્રેક્ષન્તે=પરિચિન્તયન્તિ । ‘અપ્પેગઇયા અક્ષેવણીઓ વિક્ષેવણીઓ સંવેયણીઓ ણિવ્વેયણીઓ बहुविहाओ कहाओ कहंति’ અપ્પેકકે આક્ષેપણીઃ વિક્ષેપણીઃ સંવેદિનીઃ નિર્વેદિનીર્बहुविहाः कथाः कथयन्ति; मोहादपनीय तत्त्वं प्रति आक्षिप्यते=आकृष्यते प्राणी यामिस्ता आक्षेपण्यस्ताः—‘કથા’ इत्यस्य विशेषणम् । विक्षेपणीः—विक्षिप्यते=कुमार्गे प्रसक्तः प्राणी कुमार्गात्पृथक् क्रियते यामिस्ताः विक्षेपण्यस्ताः । संवेदिनीः—संवेद्यते=मोक्षमुखाभिलाषः क्रियते यामिस्ताः । निर्वेदिनीः—निर्वेद्यते=संसाराद् निर्विण्णो

થે, (અપ્પેગઇયા) કિતનેક (પડિપુચ્છંતિ) સૂત્ર ઓર અર્થ કો પૂછતે થે, (અપ્પેગઇયા) કિતનેક (પરિયટ્ટંતિ) સૂત્ર ઓર અર્થ કો આવૃત્તિ કરતે થે, (અપ્પેગઇયા) કિતનેક (અણુ-પ્પેહંતિ) સૂત્ર—અર્થ કો અનુપ્રેક્ષા—પરિચિન્તન કરતે થે, (અપ્પેગઇયા) કિતનેક (અક્ષે-વણીઓ ૧, વિક્ષેવણીઓ ૨, સંવેયણીઓ ૩, ણિવ્વેયણીઓ ૪, बहुविहाओ कहाओ कहंति) આક્ષેપણી, વિક્ષેપણી, સંવેદિની, ઓર નિર્વેદિની, ઇન અનેક પ્રકાર કો કથાઓ કો કહતે થે । મોહ સે દૂર કરાકર પ્રાણી જિસ કથા કે દ્વારા તત્ત્વ કે પ્રતિ આકૃષ્ટ કિયા જાતા હૈ ઉસ કથા કા નામ ‘આક્ષેપણી કથા’ હૈ ૧, કુમાર્ગ મેં રત પ્રાણી જિસ કથા સે ઉસ કુમાર્ગ કો ઓર સે પૃથક્ કિયા જાતા હૈ ઉસ કથા કા નામ ‘વિક્ષેપણી કથા’ હૈ ૨,

હતા, (અપ્પેગઇયા) કેટલાક (પડિપુચ્છંતિ) સૂત્ર તથા અર્થ પૂછતા હતા. (અપ્પેગઇયા) કેટલાક (પરિયટ્ટંતિ) સૂત્ર તથા અર્થની આવૃત્તિ કરતા હતા. (અપ્પેગઇયા) કેટલાક (અણુપ્પેહંતિ) સૂત્ર—અર્થની અનુપ્રેક્ષા—પરિચિન્તન કરતા હતા. (અપ્પેગઇયા) કેટલાક (અક્ષેવણીઓ, વિક્ષેવણીઓ, સંવેયણીઓ ણિવ્વે-યણીઓ, बहुविहाओ कहाओ कहंति) આક્ષેપણી, વિક્ષેપણી, સંવેદની, અને નિર્વેદની, એ પ્રકારે અનેક પ્રકારની કથાઓ કરતા હતા. મોહથી દૂર કરીને જે કથા તત્ત્વના તરફ આકર્ષણ કરે છે તે કથાનું નામ ‘આક્ષેપણી કથા’ છે. કુમાર્ગમાં મગ્ન થયેલા પ્રાણીને જે કથાથી તે કુમાર્ગ તરફથી બુદ્ધો કરાવાય તે કથાનું નામ ‘વિક્ષેપણી કથા’ છે. જે કથા સાંભળવાથી પ્રાણી

बहुविहाओ कहाओ कहंति, अप्पेगइया उड्डजाणू अहोसिरा
झाणकोटोवगया संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति
॥ सू० ३१ ॥

=वैराग्यवान् विधीयते यामिस्ताः; एतादृशीः बहुविधाः कथाः कथयन्ति=श्रावयन्ति । या विविधाः
कथाः शृण्वन् श्रोता मोहं परित्यज्य तत्त्वं प्रति आक्षिप्तो भवति, तथा विक्षितः=कुमार्गविमुखो
भवति, एवं संवेदनीयः=मोक्षसुखामिलाषी, निर्विण्णः=संसारादुद्विग्नो भवति । ‘अप्पेगइया
उड्डजाणू अहोसिरा’ अप्येकके ऊर्ध्वजानवः, अधःशिरसः=अधोमुखा—नोर्ध्वं तिर्यग् वा
दत्तदृष्टयः ‘झाणकोटोवगया’ ध्यानकोटोपगताः—ध्यानरूपो यः कोष्ठस्तमुपगताः, संयमेन
तपसाऽऽत्मानं भावयन्तो विहरन्ति ॥ सू० ३१ ॥

जिस कथा के सुनने से प्राणी मोक्षमुख की अभिलाषावाला बन जाता है उस कथा का
नाम ‘संवेदनी कथा’ है ३, जिस कथा के सुनने से प्राणी संसार से विरक्त हो जाता
है उस कथा का नाम ‘निर्वेदनी कथा’ है ४ । इन कथाओं का सुनने वाला श्रोता मोह
का परित्याग कर तत्त्व के प्रति आकृष्ट होता है, कुमार्ग से विमुख होता है, मोक्ष सुखका
अभिलाषी होता है और निर्विण्ण—संसारसे—उद्विग्न—होता है । (अप्पेगइया उड्डजाणू
अहोसिरा झाणकोटोवगया संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति) कितनेक
मुनिजन दोनों घुटनों को ऊँचा कर नीचे मस्तक किये हुए—माथा झुकाये हुए—ध्यानरूपी
कोष्ठ में प्राप्त थे । इस प्रकार संयम और तपसे अपनी आत्मा को भावित करते हुए
साधुगण विचर रहे थे ॥सू० ३१॥

मोक्षना सुખ માટે અભિલાષવાળો બને છે તે કથાનું નામ ‘સંવેદની કથા’
છે, જે કથા સાંભળવાથી પ્રાણી સંસારથી વિરક્ત થાય છે તે કથાનું નામ
‘નિર્વેદની કથા’ છે. આ કથાઓના સાંભળનાર શ્રોતા મોહનો પરિત્યાગ
કરીને તત્ત્વના તરફ આકર્ષિત થાય છે, કુમાર્ગથી વિમુખ થાય છે,
મોક્ષના સુખના અભિલાષવાળા થાય છે અને સંસારથી નિર્વિણ્ણ-
ઉદ્વિગ્ન થાય છે. (અપ્પેગइया उड्डजाणू अहोसिरा झाणकोटोवगया संजमेण तवसा
अप्पाणं भावेमाणा विहरंति) કેટલાક મુનિજન બંને ઘુંટણો ઉંચા રાખી,
માથું નીચે રાખી—માથું નીચે કરીને—ધ્યાનરૂપી કોઠામાં પ્રાપ્ત હતા. એ પ્રકારે
સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા સાધુગણ વિચરતા હતા.
(સૂ० ૩૧).

મૂલમ્—સંસારમહાવિગ્ના મીયા જન્મણ-જર-મરણ- ગંભીર-દુઃખ-પ્રશ્નભિય-પર-સલિલં સંજોગ-વિઓગ-વીડ-

ટીકા—ભગવતઃ શ્રીમહાવીરસ્વામિનોઽનગારાઃ પુનઃ કીદૃશાઃ? ઇત્યાહ—‘સંસાર-મહાવિગ્ના’ ઇત્યાદિ । સંસારમહાવિગ્નાઃ—ચતુર્ગતિભ્રમણલક્ષણસંસારમહાવિગ્નાઃ=અધાકુલાઃ, ‘કેનોપાયેન સંસારસાગરાત્ તર્કિયામઃ’ ઇતિચિન્તાજાલકુલા ઇત્યર્થઃ । અતઃ એવ ‘મીયા’—મીતાઃ=મયયુક્તાઃ, અસ્ય તરન્તીત્યત્રાન્વયઃ । સૂત્રકારઃ સંસારસાગરં વર્ણયતિ—‘જન્મણ-જર-મરણ-કરણ-ગંભીર-દુઃખ-પ્રશ્નભિય-પર-સલિલં’ જન્મ-જરા-મરણ-કરણ-ગંભીર-દુઃખ-પ્રશ્નભિત-પ્રચુર-સલિલમ્—જન્મજરામરણાન્યેવ કરણાનિ=સાધનાનિ યસ્ય તત્ તથા, તદેવ ગંભીર-દુઃખ=પ્રગાઢદુઃખં, તદેવ પ્રશ્નભિતં=પ્રચલિતમ્, પ્રચુરં=વિપુલં સલિલં=જલં યસ્મિન્ સ જન્મ-જરા-મરણ-કરણ-ગંભીર-દુઃખ-પ્રશ્નભિત-પ્રચુરસલિલસ્તં, પુનઃ કીદૃશં સંસારસાગરમ્? ઇત્યા-

‘સંસારમહાવિગ્ના’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ મહાવીર કે અનગાર ઔર મી કૈસે થે ? इस बातको प्रकट करने के लिये सूत्रकार इस सूत्रकी प्ररूपणा करते हुए कहते हैं कि—भगवान् महावीर स्वामी के ये अन-गार (संसारमहविग्ना) चतुर्गति में भ्रमण करने रूप संसार के भय से उद्विग्न थे, ‘किस उपाय से हम लोग इस अथाह संसारसागर से पार होंगे’ इस प्रकार का चिन्तवन सर्वदा करते रहते थे । (मीया) इसलिये ये संसारभीरु थे । अब यहां से यह संसारसागर कैसा है? इस बात को नीचे लिखित विशेषणों द्वारा सूत्रकार स्पष्ट करते हैं—(जन्मण-जर-मरण-करण-गंभीर-दुःख-प्रश्नभिय-परसलिलं) जन्म, जरा और मरण, ये ही जिसके साधन हैं ऐसा प्रगाढ़ दुःख ही जिसमें उछलता हुआ अगाध जल भरा हुआ है, तथा

‘સંસારમહાવિગ્ના’ ઇત્યાદિ.

ભગવાન્ મહાવીરના અનગાર ફરીપણ કેવા હતા ? તે વાતને પ્રકટ કરવા સૂત્રકાર આ સૂત્રની પ્રરૂપણા કરતાં કહે છે કે—ભગવાન્ મહાવીર સ્વામીના તે અનગાર (સંસારમહાવિગ્ના) ચતુર્ગતિમાં ભ્રમણ કરાવવારૂપ સંસારના ભયથી ઉદ્વિગ્ન હતા, ‘કયા ઉપાયથી અમે આ અગાધ સંસારસાગરથી પાર થઈએ’ એ પ્રકારનું ચિન્તવન સર્વદા કર્યા કરતા હતા. (મીયા) એથી તેઓ સંસારભીરુ હતા. હવે અહીંથી આ સંસારસાગર કેવો છે ? તે વાત નીચે લખેલાં વિશેષણો દ્વારા સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—(જન્મણ-જર-મરણ-કરણ-ગંભીર-દુઃખ-પ્રશ્નભિય-પરસલિલં) જન્મ, જરા અને મરણ, એ જ જેનાં સાધન છે એવાં પ્રગાઢ દુઃખ જ જેમાં વિસ્તારથી ઉછળતા પાણીના જેમ ભરેલાં છે. તથા

ચિંતા-પસંગ-પસરિય-વહ-વંધ-મહલ્લ-વિઝલ-કલ્લોલ-કલુણ-
વિલવિય-લોભ-કલકલંત-બોલબહુલં અવમાણણ-ફેણ-તિવ્વ-

કાઢ્ઠાયામાહ-‘સંજોગ-વિઓગ-વીઢ-ચિંતા-પસંગ-પસરિય-વહ-વંધ-મહલ્લ-વિઝલ-કલ્લોલ-
કલુણ-વિલવિય-લોભ-કલકલંત-બોલ-બહુલં’ સંયોગ-વિયોગ-વીચિ-ચિન્તાપ્રસન્ન-પ્રસૂત-
વધ-વન્ધ-મહાવિપુલ-કલ્લોલ-કરુણ-વિલપિત-લોભ-કલકલાયમાન-બોલ-(ધ્વનિ)-બહુલમ્-સંયોગ-
વિયોગાઃ=અપ્રિયશબ્દાદિસંયોગ-પ્રિયશબ્દાદિવિયોગા એવ વીચયઃ=તરજ્ઞા યત્ર સાગરે સ સંયોગ-
વિયોગવીચિઃ, ચિન્તાપ્રસન્નઃ=પુનઃપુનઃચિન્તાપ્રાપ્તિઃ સ એવ પ્રસૂતં=પ્રસરણં યસ્ય સ તથા,
વધાઃ=હનનાનિ, વન્ધાઃ=સંયમનાનિ, ત એવ મહાન્તો=દીર્ઘાઃ, વિપુલાઃ=વિસ્તીર્ણાઃ
કલ્લોલાઃ=મહોર્મયો યત્ર સ વધવન્ધમહાવિપુલકલ્લોલઃ, કરુણાનિ=કરુણરસજનકાનિ વિલ-
પિતાનિ=વિલાપવચનાનિ, લોભાઃ=લોભસમ્ભૂતાઃક્રોશાશ્ચ ત એવ કલકલાયમાના બોલાઃ=ધ્વનયો
બહુલા યત્ર સ તથા, તતઃ સંયોગવિયોગવીચિશ્ચાસૌ ચિન્તાપ્રસન્નપ્રસૂતશ્ચ તથા વધવન્ધમહા-
વિપુલકલ્લોલશ્ચાસૌ કરુણવિલપિતલોભકલકલબોલબહુલશ્ચ સ તથા, તં તાદૃશં; સંયોગાદિતર-
જ્ઞતરજ્ઞિતં ચિન્તાવિસ્તીર્ણં વધવન્ધકલ્લોલં કરુણવિલાપલોભસમ્ભૂતાક્રોશપ્રચ્છન્ડનાદનાદિતમિત્યર્થઃ।
પુનઃ કથમ્ભૂતમ્? ‘અવમાણણફેણતિવ્વસ્તિસણપુલંપુલપ્પભૂયરોગવેયણપરિભવવિણિવાય-

(સંજોગ-વિઓગ-વીઢ-ચિંતાપસંગ-પસરિય-વહ-વંધ-મહલ્લ-વિઝલ-કલ્લોલ-કલુણ-વિલ-
વિય-લોભ-કલકલંત-બોલ-બહુલં) સંયોગ=અમનોજ્ઞ શબ્દાદિકોં કા સંબંધ, વિયોગ=મનોજ્ઞ
શબ્દાદિકોંકા અભાવ, યે જિસમેં વીચિ-કલ્લોલ હૈં, ચિન્તા જિસકા વિસ્તાર હૈ, વધ એવં વંધન હી
જિસમેં વિસ્તૃત તરંગેં હૈં, કરુણારસજનક વિલાપવચન એવં લોભ સે સંભૂત આક્રોશવચન, યે દો
જિસકી બહુલ કલકલાયમાન ધ્વનિયાં હૈં-ગર્જના હૈં, (અવમાણણ-ફેણ-તિવ્વ-સ્તિસણ-પુલંપુલ-
પ્પભૂય-રોગવેયણ-પરિભવ-વિણિવાય-ફરુસ-ધરિસણા-સમાવડિય-કઢિણ-કમ્મ-પત્થર-
તરંગ-રંગંત-નિચ્ચમચ્ચુભય-તોયપટ્ટં) અપમાન હી જિસમેં ફેનરાશિ હૈં । દુઃસહનિંદા, નિર-

(સંજોગ-વિઓગ-વીઢ-ચિંતાપસંગ-પસરિય-વહ-વંધ-મહલ્લ-વિઝલ-કલ્લોલ-કલુણ-વિલવિય-
લોભ-કલકલંત-બોલ-બહુલં) સંયોગ-મનને ન ગમે તેવા શબ્દ આદિકોનો
સંબંધ, મનને ગમે તેવા શબ્દ આદિકોનો વિયોગ, એ જેમાં વીચિ-લહેરો
છે, ચિંતા જેનો વિસ્તાર છે, વધ તેમજ બંધન જ જેમાં મોટાં મોટાં છે,
કરુણારસજનક વિલાપવચન તેમજ લોભથી ઉત્પન્ન થયેલ આક્રોશવચન
એ જે જેની મોટી કલકલાટ ધ્વનિઓ છે-ગર્જના છે, (અવમાણણ-ફેણ-તિવ્વ-
સ્તિસણ-પુલંપુલ-પ્પભૂય-રોગવેયણ-પરિભવ-વિણિવાય-ફરુસ - ધરિસણા - સમાવડિય-
કઢિણ-કમ્મ-પત્થર-તરંગ-રંગંત-નિચ્ચમચ્ચુભય-તોયપટ્ટં) અપમાન જ જેમાં કીણુના

સ્વિંસળ-પુલંપુલ (પલુંપળ)–પ્પભૂયરોગ-વેયળ–પરિભવ–વિણિવાય-
ફરુસ–ધરિસળા–સમાવડિય–કઢિળ-કમ્મ–પત્થર–તરંગ –રંગંત-
નિચ્ચમચ્ચુમયતોયપટ્ટં કસાય–પાયાલ–સંકુલં ભવસયસહસ્સ–

ફરુસધરિસળાસમાવડિયકઢિળકમ્મપત્થરતરંગરંગંતમચ્ચુમયતોયપટ્ટં’ અપમાનન-ફેન-
તીવ્ર–સ્વિંસન–પુલમ્પુલ-પ્રભૂત-રોગ-વેદના-પરિભવ-વિનિપાત-પરુષ-ધર્ષળા–સમાપતિત–કઠિનકર્મ-
પ્રસ્તર-તરંગ-રંગનિત્યમૃત્યુમય-તોયપૃષ્ઠમ્–અપમાનનમેવ ફેનો યત્ર સોઽવમાનનફેનઃ, તથા–તીવ્ર-
સ્વિંસનમ્=દુઃસહનિન્દા, પુલમ્પુલપ્રભૂતા=નિરંતરસમુત્પન્ના યા રોગવેદનાઃ પરિભવાઃ=અનાદરાઃ,
વિનિપાતાઃ=નાશાઃ, અથવા પરિભવવિનિપાતઃ–પરિભવઃ=પરાભવઃ પરાજયો હાનિર્વા, તસ્ય
વિનિપાતઃ=પ્રાપ્તિઃ પરુષધર્ષળાઃ–નિષ્ઠુરવચનનિર્ભર્સનનિ, તથા–સમાપન્નાનિ=વદ્ધાનિ યાનિ
કઠિનાનિ=કઠોરોદયાનિ કર્માણિ=જ્ઞાનાઽઽવરણીયાદીનિ, એતાન્યેવ પ્રસ્તરાઃ–પાષાળાસ્તૈઃ
કૃત્વા તત્ત્વંધનં પ્રાપ્ય સમુત્થિતૈઃ, તરંગૈઃ, રિંગત્=પ્રચલત્, નિત્યં=ધ્રુવં યન્મૃત્યુમયં=મરણમીતિઃ
તદેવ તોયપૃષ્ઠં=જલોપરિતનભાગો યત્ર સ તથા તાદૃશમ્; પુનઃ કીદૃશં ‘કસાયપાયાલસંકુલં’
કષાયપાતાલસંકુલમ્–કષાયા એવ પાતાલાઃ=પાતાલકલશાઃ–અધસ્તલનિ તૈઃ સંકુલઃ–વ્યાપ્ત-
સ્તમ્। ‘ભવસયસહસ્સ–કલુસ–જલ–સંચયં’ ભવશતસહસ્રકલુષજલસંચયમ્–ભવશતસહ-

ન્તર સમુત્પન્ન રોગવેદના, પરાભવ, વિનિપાત–વિનાશ. અથવા પરાભવ કી પ્રાપ્તિ, નિષ્ઠુર
વચન, અપમાન કે વચન, એવં કઠોર ઉદયવાળે સંચિત જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મ, યે
હી જિસમેં પાષાળ હૈં, ઓર ઇત પાષાળોં કે વંધન સે અનેક પ્રકાર કી આધિવ્યાધિરૂપ
તરંગેં ઉત્પન્ન હોતી હૈં, ઇન તરંગોં દ્વારા ચલાયમાન અવશ્યમાવી મૃત્યુમય હી જિસમેં તોય-
પૃષ્ઠ–જલ કા ઉપરિતનભાગ હૈ, એસા યહ સંસારમાગર હૈ। તથા યહ (કસાય–પાયાલ-
સંકુલં) કષાયરૂપ પાતાલકલશોં સે વ્યાપ્ત હૈ। (ભવ-સયસહસ્સ–કલુસ–જલ–સંચયં) લાસોં

ઢગલારૂપ છે, દુઃસહ નિંદા, નિરંતર થતી રોગવેદના, પરાભવ, વિનિપાત-
વિનાશ, અથવા પરાભવની પ્રાપ્તિ, નિષ્ઠુર વચન, અપમાનનાં વચન, તેમજ
કઠોર ઉદયવાળાં સંચિત જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મો, એ જ જેમાં પાષાળ
(ખડકો) છે, અને આ પાષાળો સાથે ભટકાવાથી જે અનેક પ્રકારનાં આધિ-
વ્યાધિરૂપ મોજાં ઉત્પન્ન થતાં રહે છે અને તે દ્વારા ચલાયમાન અવશ્યભાવી મૃત્યુ-
ભય જ જેમાં પાણીની સપાટીનો ભાગ છે; એવો આ સંસારમાગર છે. તથા આ
(કસાયપાયાલસંકુલં) કષાયરૂપ પાતાલકલશોથી વ્યાપ્ત છે. (ભવ-સયસહસ્સ-કલુ-

કલુસ-જલ-સંચયં પદ્મયં અપરિમિય-મહિચ્છ-કલુસમદ્-
વાતવેગ - ઉદ્દુમ્મમાણ-દગરય-રયંધઆર-વરફેણ-પર-આસા-

સાપ્યેવ કલુષજલસંચયો યત્ર સ તથા તમ્ । ‘પદ્મયં’ પ્રતિમયમ્=મહાભયઙ્કરમ્, ‘અપરિમિય-
મહિચ્છ-કલુસમદ્-વાતવેગ-ઉદ્દુમ્મમાણ-દગરય-રયંધઆર-વરફેણ-પર-આસા-પિવાસ-
ધવલં’ અપરિમિત-મહેચ્છ-કલુષમતિ-વાયુવેગો-દૂયમાનો-દકરજોરયાઽન્ધકાર-વરફેણ-પ્રચુરાઽઽશા-
પિપાસા-ધવલમ્-અપરિમિતાઃ=અત્યધિકા યે મહેચ્છાઃ-તીવ્રાભિલાષવન્તો લોકાઃ, તેષાં કલુષા-
મલિના યા મતિઃ સૈવ વાયુવેગેન ઉદૂયમાનમ્-ઉદકરજોરયઃ-જલકળમ્મૂહઃ, તેન અન્ધકાર
ઇવ યત્ર સ તથા, વરફેણૈરિવ-આશાપિપાસાભિર્ધવલ ઇવ ધવલો યઃ સ તથા તં, તત્રાપ્રાપ્તાર્થાનાં
પ્રાપ્તિર્નિભાવના આશાઃ, ધનસમ્બન્ધિન્યસ્તીવ્રલલસાઃ પિપાસાઃ । ‘મોહમહાવત્તભોગભમમાણ ગુપ્પ-
માણુચ્છલંતપચ્છોણિયત્તપાણિયપમાયચંડવહુદુટ્સાવયસમાહયુદ્ધાયમાણપઞ્ચમાર - ઘોર-
કંદિયમહારવરવંતભેરવરવં’-મોહમહાવર્તભોગભ્રામ્યદ્ગુપ્પદુચ્છલત્પ્રત્યવનિપતત્પાનીયપ્રમાદચંડ-

ભવ રૂપ હી જિસમેં કલુષ-મલિન-જલ કા સંચય હૈ, (પદ્મયં) મહાભયઙ્કર હૈ । (અપરિ-મિય-
મહિચ્છ-કલુસમદ્-વાતવેગ -ઉદ્દુમ્મમાણ-દગરયરયંધઆર-વરફેણ-પર-આસા-પિવાસ-
ધવલં) અપરિમિત-અત્યધિક અભિલાષાશાલી મનુષ્યોં કી જો વિવિધ પ્રકાર કી બુદ્ધિયાં હૈ
યે હી માનોં ફસકે વાયુકે જોકોં સે ઉડાયે હુએ જલકળ હૈ, ફસકે યહ સંસારસમુદ્ર અંધ-
કાર સે યુક્ત જૈસા હો રહા હૈ । આશા એવં પિપાસારૂપ પ્રચુર ફેણ સે યહ ધવલિત હો રહા હૈ ।
અપ્રાપ્ત અર્થ કી પ્રાપ્તિ કી નિભાવના કા નામ આશા હૈ, ઓર ધનસંબંધી તીવ્ર લલસા કા નામ પિપાસા
હૈ । (મોહ-મહાવત્ત-ભોગ-ભમમાણ-ગુપ્પમાણુ-ચ્છલંત-પચ્છોણિયત્ત-પાણિય-પમાય-ચંડ-
વહુદુટ્-સાવયસમાહયુદ્ધાયમાણ-પઞ્ચમાર-ઘોર-કંદિય-મહારવરવંત-ભેરવ-રવં) ફસ સંસાર

સ-જલ-સંચયં) લાખો ભવરૂપ જ જેમાં કલુષ-મેલાં પાણીનો સંચય છે; (પદ્મયં)
મહાભયંકર છે (અપરિમિય-મહિચ્છ-કલુસમદ્-વાતવેગ-ઉદ્દુમ્મમાણ-દગરય-રયંધ-
આર-વરફેણ-પર-આસા-પિવાસ-ધવલં) અપરિમિત-બહુ જ અભિલાષાવાળી મનુ-
ષ્યોની જે વિવિધ પ્રકારની બુદ્ધિ છે તે બધે તેના વાયુના અપાટાથી ઉડતાં
જલકળો છે. તેનાથી આ સંસારસમુદ્ર અંધકારથી ભરેલ જેવો થઈ ગયો
છે. આશા તેમજ પિપાસા (તૃષ્ણા) રૂપ પ્રચુર ક્ષીણથી તે સફેદ થઈ રહેલો
છે. અપ્રાપ્ત અર્થની પ્રાપ્તિની સંભાવનાનું નામ આશા છે અને ધન
સંબંધી તીવ્ર લાલસાનું નામ પિપાસા છે. (મોહ-મહાવત્ત-ભોગ-ભમમાણ-ગુપ્પમાણુ-
ચ્છલંત-પચ્છોણિયત્ત-પાણિય-પમાય-ચંડ-વહુદુટ્-સાવય-સમાહયુદ્ધાયમાણ-પઞ્ચમાર-ઘોર-

પિવાસ-ધવલં મોહમહાવત્-ભોગ-ભ્રમમાણ-ગુપ્તમાણ-ચ્છલંત-
પદ્મોપિયત્-પાણિય-પમાય-ચંડ-વહુદુટ્-સાવય-સમાહુદ્ધાય-
માણ-પ્રભાર-ધોર-કંદિયમહારવરવંત-ભૈરવરવં અણ્ણાણ-ભ્રમંતમ-

વહુદુટ્પદ્મપદ્મમાહુદ્ધાયપ્રાગ્ભારધોરકન્દિતમહારવરવદ્ભૈરવરવમ્-મોહરૂપે મહાવર્તે ભોગ
એવ ભ્રમ્યન્-ચક્રાકારંગ ભ્રમત્, ગુપ્યત્=ચપલીભવત્, ઉચ્છલત્=ઉત્થાનત્.
' પદ્મોપિય ' પ્રત્યવનિપતન્-અવઃપતત્, પાનીયં=જલં યત્ર સ તથા, પ્રમાદાઃ=પ્રમાદયસ્ત
એવ ચણ્ડપદ્મદુટ્પદ્મપદ્મઃ-ચણ્ડાઃ=ક્રોધશીલાઃ વહુદુટ્પાઃ=અતિદુષ્ટસ્વભાવાઃ, પ્રાપદાઃ=હિંસક-
જીવાસ્તૈર્થે ' સમાહય ' સમાહતાઃ=પ્રહતા-આધાતં પ્રાપ્તાઃ ' ઉદ્ધાયમાણ ' ઉદ્ધાનતઃ=
ઉચ્છલતઃ વિવિધં ચેષ્ટમાના વા સમુદ્રપક્ષે મત્સ્યાદયઃ સંસારપક્ષે પુરુષાદયઃ. તેવાં ' પદ્મોપિય '
પ્રાગ્ભારઃ=અમૃદો યત્ર સ તથા, તથા ધોરો યઃ કન્દિતમહારવઃ=રોદનમહારવઃ સ યત્ર સ્વન્-
પ્રતિચ્છન્-પ્રતિચ્છન્નિ કુર્વન્ ભૈરવરવો=ભયાનકશબ્દો યત્ર સ તથા, તત્તલ્લયાણાં પદ્માના કર્મધારયઃ,
તમ્-અણ્ણાણ-ભ્રમંત-મચ્છ-પરિહત્ય-અણિહુયિંદિય-મહાસાગર-તુરિય-ચરિય-સ્વોસ્વુભ્મ-
માણ-નચ્ચંત-ચવલ-ચંચલ-ચલંત-ધુમ્મંત-જલસમૂહં ' અજ્ઞાન-ભ્રમન્મત્સ્ય-પરિહસ્તાનિમૃતેન્દ્રિય-

સમુદ્ર કે મોહરૂપ મહા-આવર્તે મેં ભોગરૂપ જલ ચક્રાકાર સે ઘૂમ રહ્યા હૈ. અન્યન્ત ચંચલ
હો રહ્યા હૈ. ઉછલ રહ્યા હૈ, ઉછલ કર ફિર નીચે ગિર રહ્યા હૈ । તથા-ઇમ સંસાર સમુદ્ર મેં
પ્રમાદ આદિ હો ક્રોધી એવં અતિદુષ્ટ સ્વભાવ વાલે હિંસક જીવ હૈ । ઇન કે દ્વારા આધાત
કો પ્રાપ્ત હોકર સમસ્ત સંસારી જીવો-પુરુષ આદિ (સમુદ્રપક્ષ મેં મત્સ્યાદિક જલચર જીવો) કા
સમૂહ ઇવ-ઉવ ભાગતા ફિરતા હૈ । ઉન્હો સંસારી જીવો કે ભયંકર આક્રન્દન કી મહાભીષણ
પ્રતિધ્વનિ ઇમ સંસાર સમુદ્ર મેં હો રહી હૈ । તથા-(અણ્ણાણભ્રમંતમચ્છપરિહત્ય-અણિહુયિંદિ-
ય-મહાસાગર-તુરિય-ચરિય-સ્વોસ્વુભ્મમાણનચ્ચંત-ચવલ-ચંચલ-ચલંત-ધુમ્મંત - જલસમૂહં)

કંદિય-મહારવ-રવંત-ભૈરવ-રવં) આ સંસાર સમુદ્રના મોહરૂપ મહા આવર્તમાં
ભોગરૂપ જલચક્રની પેઠે ઘૂમી રહ્યું છે. બહુ વેગ થઈ રહ્યો છે, ઉછળી
રહ્યું છે. ઉછળીને પાછું નીચે પડે છે. તથા-આ સંસારસમુદ્રમાં પ્રમાદ
આદિ જ ક્રોધો તેમજ અતિદુષ્ટ સ્વભાવવાળા હિંસક એવ છે, તેમના દ્વારા
આધાત પામીને સમસ્ત સંસારી એવો-પુરુષ આદિ (સમુદ્ર પક્ષમાં મત્સ્યા-
દિક જલચર એવા)નો સમૂહ આમતેમ ભાગનાસ કરે છે. તે સંસારી
એવાનો ભયંકર આક્રન્દનનો મહાભીષણ પડ્યો આ સંસારસમુદ્રમાં પડે
છે. તથા (અણ્ણાણ-ભ્રમંત-મચ્છ-પરિહત્ય-અણિહુયિંદિય-મહાસાગર-તુરિય-ચરિય-સ્વોસ્વુ-

છપરિહત્થ-અણિહુયિંદિય-મહામગર-તુરિય-ચરિય-સ્વોલ્લુભમાણ-
નચંત-ચવલ-ચંચલ-ચલંત-ધુમ્મંત-જલ-સમૂહં અરહ-ભય-વિસાય-
સોગ-મિચ્છત્ત-સેલ-સંકડં અણાહસંતાણ-કમ્મવંધણ-કિલેસ-

મહામકર-ત્વરિતચરિત-ચોક્ષુમ્યમાણ-નૃત્યચપલાચચ્ચલ-ચલદ-ધૂર્ણજલ-સમૂહમ્-અજ્ઞાનાન્યેવ
ભ્રમન્તા મત્સ્યાઃ પ્રતિહસ્તા જલજન્તુવિશેષાઃ, યસ્મિન્ સંસારસાગરે સ તથા, અનિભૂતાનિ-
અનુપશાન્તાનિ યાનીન્દ્રિયાણિ તાન્યેવ મહામકરાસ્તેષાં યાનિ ત્વરિતાનિ=શીપ્રાણિ ચેષ્ટિતાનિ
=ચેષ્ટાઃ તૈઃ-ચોક્ષુમ્યમાણઃ અત્યન્તમુચ્છલન્ નૃત્યન્નિવ નૃત્યન્, ચપલાવચ્ચલં યથા સ્થાન્ તથા
ચક્રન્, ધૂર્ણન્=વિદ્યુત્સમાનવેગેન ચલચ્ચક્રાકારં ભ્રમન્ જલસમૂહઃ, સંસારપક્ષે તુ જડસમૂહો=વિવેક-
જ્ઞાનગદિતાનાં સમૂહો યત્ર સ તથા, તતઃ પદદ્વયસ્ય કર્મધારયઃ, તં તાદૃશમ્ । ‘અરહ-ભય-
વિસાય-સોગ-મિચ્છત્ત-સેલ-સંકડં’ અરતિભયવિશાદશોકમિથ્યાત્વશૈલસક્કટમ્-અરતિઃ, ભયં,
વિષાદઃ, શોકઃ, મિથ્યાત્વમ્ એતાનિ પ્રતિરોધકતયા શૈલા ઇવ તૈઃ સક્કટઃ=અતિવિકટઃ. તં તાદૃશમ્,
‘અણાહ-સંતાણ-કમ્મ-વંધણ-કિલેસ-ચિલ્લિલ-સુદુત્તારં’ અનાદિ-સન્તાન-કર્મવન્ધનતંત્ર-
કર્મમુદુત્તરમ્-અનાદિસન્તાનમ્=અનાદિપ્રવાહં યત્કર્મવન્ધનં તચ્ચ, કલેશાશ્ચ રાગાદયસ્તલ્લક્ષણં યત્

હસ સંસાર સમુદ્ર મેં અજ્ઞાન હી ધૂમતે હુએ મત્સ્ય એવં પરિહસ્ત-જલજન્તુવિશેષ હૈં । અનુપશાન્ત
ઇન્દ્રિયાં હી હસમેં વિકરાલ મગર હૈં । ઇન ઇન્દ્રિયરૂપ મહામકરોં કે ચંચલ ચેષ્ટાઓં સે
હસમેં અજ્ઞાનિયોં કા સમૂહરૂપ જલસમૂહ ક્ષુબ્ધ હો રહા હૈ, નાચ રહા હૈ, વિદ્યુદ્વેગ સે ચક્ર-
વત્ ધૂમ રહા હૈ । (અરહ-ભય-વિસાય-સોગ-મિચ્છત્ત-સેલ-સંકડં) અરતિ-અપ્રીતિ, ભય-ભીતિ,
વિષાદ, શોક એવં મિથ્યાત્વરૂપ પર્વતોં સે યહ સંસારસમુદ્ર અત્યંત વિકટ વના હુઆ હૈ ।
(અણાહ-સંતાણકમ્મવંધણકિલેસ-ચિલ્લિલ-સુદુત્તારં) અનાદિકાલ સે હમ જીવ કે સાથ

ભ્રમમાણ-નચંત-ચવલચંચલ-ચલંત-ધુમ્મંત-જલ-સમૂહં) આ સંસારસમુદ્રમાં અજ્ઞાન
જ ધુમતા માછલાં તેમજ પરિહસ્ત-જલજન્તુવિશેષ છે. અનુપશાન્ત
ઇન્દ્રિયો જ એમાં વિકરાળ મગર છે. તે ઇન્દ્રિયરૂપ મહામકરોની ચંચળ ચેષ્ટા-
ઓથી તેમાં અજ્ઞાનીઓના સમૂહરૂપ જલસમૂહ ક્ષુબ્ધ થઈ રહ્યો છે. નાચી
રહ્યો છે, વીજળીવેગે ચક્રની પેઠે ફરી રહ્યો છે. (અરહ-ભય-વિસાય-સોગ-મિ-
ચ્છત્ત-સેલ-સંકડં) અરતિ-અપ્રીતિ, ભય-ભીતિ, વિષાદ-શોક, તેમજ મિથ્યાત્વ-
રૂપ પર્વતોથી આ સંસારસમુદ્ર અત્યંત વિકટ બનેલો છે. (અણાહ-સંતાણ-
કમ્મ-વંધણ-કિલેસ-ચિલ્લિલ-સુદુત્તારં) અનાદિ કાળથી આ જીવની સાથે બંધન

**ચિક્ષિલ-સુદુત્તારં અમર-નર-તિરિય-નરયગઢ-ગમણ-કુડિલ-
પરિયત્ત-વિઝલવેલં ચરંતં મહંતમણવદગ્ગં રુદ્ધં સંસારસાગરં**

‘ચિક્ષલં’—કર્દમઃ, તેન સુષ્ટુ દુસ્તરઃ સ તથા તમ્ । ‘અમર-નર-તિરિય-નરય-ગઢ-ગમણ-
કુડિલ-પરિયત્ત-વિઝલ-વેલં’ અમર-નર-તિર્યઙ્નારક-ગતિગમન-કુટિલ-પરિવર્ત-વિપુલ-વેલમ્,
સુર-નર-તિર્યઙ્નારક-ગતિપુ ચતસૃષુ-ગમનં તદેવ કુટિલપરિવર્તાઃ=વક્રસમ્ભ્રમાસ્ત યવ વિપુલાઃ=
વિશાલાઃ વેલાઃ યસ્મિન્ સ તથા તં—ચતુર્ગતિગમનરૂપકુટિલાવર્તવિપુલતટમ્ । ‘ચરંતં’
ચતુરન્તમ્—દિગ્ભેદગતિભેદાભ્યાં ચતુર્વિભાગમ્ । ‘મહંતં’ મહાન્તમ્=વિશાલમ્ । ‘અણવદગ્ગં’
અનવદગ્ગમ્—અપર્યવસાનમ્ । ‘રુદ્ધં’ રૌદ્રમ્—ભયજનકમ્ । ‘भीमदरिसणिज्जं’ भीमदर्शनीयम्—
भीमं यथा भवतीत्येवं दृश्यते यःस भीमदर्शनीयस्तम्, यस्य दर्शनाद् भयमुत्पद्यते तमित्यर्थः ।

બંધન અવસ્થા કો પ્રાપ્ત-ચલા આ રહા જો કર્મ એવં ઇનસે ઉદ્ભૂત જો રાગાદિક પરિણામ હૈં,
યે હી જહાં ચિક્ષના કાદવ હૈં । ઇસીસે ઇસકા તિગ્ના ડુપ્કર હો રહા હૈ । (અમર-નર-
તિરિય-નરયગઢ-ગમણ-કુડિલ-પરિયત્ત-વિઝલ-વેલં) દેવગતિ, મનુષ્યગતિ, તિર્યંચગતિ એવં
નરકગતિ ઇન ચાર ગતિયોં મેં જો નિરન્તર જીવ કા પરિભ્રમણ હૈ વહી ઇસકી વક્ર પરિવર્દ્ધમાન
વિસ્તૃત વેલા હૈ । (ચરંતં) ચતુર્ગતિરૂપ ચાર દિશાઓં કે ચાર વિભાગોં સે જો વિભક્ત હૈ ।
(મહંતં) જો બડી વિશાલ હૈ । (અણવદગ્ગં) જિસકા પાર પાના વહુત હી કઠિન હૈ ।
(રુદ્ધં) જો વડા હી વિકરાલસ્વરૂપ વાલા હૈ । (भीमदरिसणिज्जं) જિસકે દેખને માત્ર સે હી
ભય કા હંચાર હોતા હૈ । એસા યહ સંસારસમુદ્ર હૈ । ઇસકા પાર પાના વિના સંયમરૂપ
જહાજ કે હો નહીં સકતા હૈ । અવ યહાં સે સંયમરૂપ જહાજ કા વર્ણન સૂત્રકાર કરતે હૈ—

અવસ્થાથી ચાલ્યાં આવતાં જે કર્મ તેમજ તેમનાથી પેદા થતા જે રાગાદિક
પરિણામ છે તેજ ચીકણો કાદવ છે અને તેથી તેને તરવું મુશ્કેલ થાય છે.
(અમર-નર-તિરિય-નરય-ગઢ-ગમણ-કુડિલ-પરિયત્ત-વિઝલ-વેલં) દેવગતિ, મનુષ્યગતિ,
તિર્યંચગતિ તેમજ નરકગતિ આ ચાર ગતિઓમાં જે નિરંતર જીવનું પરિભ્રમણ
છે તેજ તેની વાંટી, પરિવર્ધિત થતી વિશાળ વેલા છે. (ચરંતં) ચતુર્ગતિરૂપ
ચાર દિશાઓના ચાર વિભાગોથી જે વિભક્ત છે. (મહંતં) જે બહુ મોટી છે.
(અણવદગ્ગં) જેનો પાર પામવો બહુ જ કઠણ છે (રુદ્ધં) જે બહુ જ વિકરાળ
સ્વરૂપવાળો છે. (भीमदरिसणिज्जं) જેનાં દર્શન માત્રથી જ ભયનો સંચાર
થાય છે. એવો આ સંસારસમુદ્ર છે. તેનો પાર પામવો તે સંયમરૂપ નાવ
વગર બની શકતો નથી. હવે અહીંથી સંયમરૂપ નાવ (વહાણ)નું વર્ણન

भीमदरिसणिज्जं तरन्ति, धिइ-धणिय-निप्पकंपेण तुरिय-चवलं
संवर-वेरग्ग-तुंगकूवय-सुसंपउत्तेणं णाण-सिय-विमल-भूसि-
एणं सम्मत्त-विसुद्ध-लद्ध-णिज्जामएणं धीरा संजमपोएण सीलक-

‘સંસારસાગરમ્ તરન્તિ,—અસ્ય ‘સંયમપોતેન’ इत्यग्रे वक्ष्यमाणेन सम्बन्धः । संसारमयो-
द्विग्नाः संयमिनः संयमपोतेन तरीतुं पारयन्तीत्यर्थः । किम्भूतेन संयमपोतेनेत्याह—‘धिइधणि-
यनिप्पकंपेण’ धृतिधनिकनिष्प्रकम्पेण—धृतिरूपेण रज्जुबन्धनेन धनिकम्=अत्यर्थं निष्प्रकम्पः=
कम्पनरहितस्तेन संयमपोतेन, ‘तुरियचवलं’ त्वरितचपलम्=अतिशीघ्रम्,—‘संवर-वेरग्ग-तुंग-
कूवय-सुसंपउत्तेणं’ संवर-वैराग्य-तुङ्ग-कूपक-सुसंप्रयुक्तेन, तत्र संवरः=प्राणातिपातादिविरति-
रूपः, वैराग्यं=विषयानभिपङ्गः, एतद्रूपो यस्तुङ्गः=अयुच्चः कूपकः—पोतमध्यस्थितः स्तम्भः,
तेन सुष्ठु सम्प्रयुक्तः—सम्यक्तया प्रयोजितस्तेन, ‘णाण-सिय-विमल-भूसिएणं’ ज्ञान-सित-
विमलोच्छितेन, ज्ञानमेव सितं=श्वेतं वस्त्रं तदेव विमलम् उच्छ्रितं यत्र तेन, मूले
मकारः प्राकृतत्वात् । पवनप्रकम्पितश्वेतपटमण्डलमण्डितपटाकर्षणेन नौका वेगगामिनी
भवति । सति साधनोपेतेऽपि पोते कर्णवारेण भाष्यमित्याह—‘सम्मत्तविसुद्धलद्धणिज्जाम-

(धिइधणियनिप्पકંપેણ) ધૃતિરૂપ રજ્જુબંધન સે જો અત્યંત નિષ્પ્રકંપ હૈ । (તુરિયચવલં) ગતિ જિસકી અત્યંત શીઘ્રગામી હૈ (સંવર-વેરગ્ગ-તુંગ-કૂવય-સુસંપડત્તેણં) સંવર—પ્રાણાતિ-
પાતાદિ સે નિવૃત્તિરૂપ વિરતિ એવં વૈરાગ્ય—વિષયોં મેં અનભિષ્વઙ્ગરૂપ વૃત્તિ—યે દોનોં હી જિસકે બીચ મેં એક ઊંચા કૂપક—સ્તમ્ભ હૈ । (ણાણ-સિય-વિમલ-મૂસિણં) જ્ઞાનરૂપી સફેદ-
વસ્ત્ર કા જિસમેં પાલ તના હુઆ હૈ । નૌકા મેં એક લકડી કા શંખ લગા રહતા હૈ જિસ પર એક કપડા તના રહતા હૈ । ઇસસે હવા કી રુકાવટ હોને સે નૌકા બડે વેગ સે ચલતી હૈ । યહી રૂપક યહાં ધટિત કિયા ગયા હૈ । (સમ્મત્ત-વિસુદ્ધ-લદ્ધ-ણિજ્જામણં) જિસમેં

સૂત્રકાર કહે છે—(ધિइधणियनिप्पકंपेण) ધૃતિરૂપ દોરડાંનાં બંધનથી જે બહુજ નિષ્પ્રકંપ (૬૬) છે. (તુરિયચવલં) ગતિ જેની અત્યંત વેગવાળી છે. (સંવર-વેરગ્ગ-તુંગ-કૂવય-સુસંપડત્તેણં) સંવર—પ્રાણાતિપાતાદિથી નિવૃત્તિરૂપ વિરતિ તેમજ વૈરાગ્ય વિષયોમાં અનાસક્તિરૂપ વૃત્તિ—એ બન્ને જેના વચ્ચેમાં એક ઉંચો-
રૂપકસ્તંભ છે. (ણાણ-સિય-વિમલ-મૂસિણં) જ્ઞાનરૂપી સફેદ વસ્ત્રનો જેમાં સદે હોય છે. વડાણમાં એક લાકડાનો થાંભલો લાગેલો હોય છે જેના પર એક કપડું (સદે) તાણેલો હોય છે. તેમાં હવા રોકાઈ જાય છે તેથી ભરાઈને વડાણ બહુ વેગથી ચાલે છે. આ જ રૂપક અહીં ધરાવેલું છે. (સમ્મત્ત-વિસુદ્ધ-લદ્ધ-ણિજ્જામણં)

લિયા પસત્થજ્ઞાણ-તવ-વાય-પળોલ્લિયપહાવિણ્ણં ઉજ્જમવવસાય-
ગહિય-ગિજ્જરણ-જયણ-ઉવઓગ-ગાણ-દંસણ-[ચરિત્ત] વિસુદ્ધ-

ણં' સમ્યક્ત્વવિશુદ્ધસ્થનિર્વાસકેય સમ્યક્ત્વસ્થો વિશુદ્ધો નિર્વોદ્ધો ક્વચઃ=પ્રાપ્તો નિર્વાસકઃ=
કર્ણધારો-નૌકાવાહકો યત્ર સ તથા તેન, સમ્યક્ત્વસ્થાકર્ણપ્રાપ્તુક્તેત્યર્થઃ; ધીગઃ-સ્થિત્સ્વ
ભાવાઃ, 'સંજમપોણ' સંજમપોતેન=સંજમનૌકવા । 'સીલકલિયા' સીલકલિનાઃ=અષ્ટાદશ-
સહસ્ત્રશીલાદ્વયધારકાઃ-સીલસંવૃત્તાઃ; 'પસત્થજ્ઞાણતવવાયણોલ્લિયપહાવિણ્ણં' પ્રશસ્ત-
ધ્યાનતપોવાતપ્રગોદિતપ્રધાવિતેન-પ્રશસ્તં ધ્યાનં ધર્મશુદ્ધાદિકં તદ્વૃષં તપઃ તદેવ વાતો=વાયુઃ,
તેન પ્રગોદિતઃ=પ્રેરિતઃ, અતઃપ્રવ પ્રધાવિતસ્તેન, ' ઉજ્જમ-વવસાય-ગહિય-ગિજ્જરણ-જયણ-
ઉવઓગગાણદંમગચરિત્તવિસુદ્ધવચરમંડભરિયસારા' ઉવમવચરમાવગૃહીતનિર્જરણયતનો-
પયોગજ્ઞાનદર્શનચારિત્રવિશુદ્ધતત્ત્વરમાપ્તમૃતસાગ-ઉવમઃ=પ્રમાદપશ્ચિન્નમઃ વચસાદો=મોક્ષપ્રાપ્તિ-
નિશ્ચયઃ-નામ્યાં મૂલ્યરૂપામ્યાં વદગૃહીતં=કીર્તિં નિર્જરણયતનોપયોગજ્ઞાનદર્શનચારિત્રવિશુદ્ધં તત્ત્વરં=

વિશુદ્ધ સમ્યક્ત્વ હી નિર્વાસક-કર્ણવાગ કે સ્થાનપત્ર છે, અર્થાત્ વિશુદ્ધ સમકિત લાલ
જિસમેં લેવટિયા કે સમાન છે । (પસત્થ-જ્ઞાણતવ-વાય-પળોલ્લિય-પહાવિણ્ણં) પ્રશસ્ત ધ્યાન-
રૂપ તપરૂપી વાયુ સે પ્રેરિત હોકર જો આગે ૨ વદના રહતા છે । इस तरह इन
पूर्वोक्त विशेषणों से विशिष्ट इस संज्ञारूपा जहाज के वाय इस संज्ञारूप अपार दुस्तर
समुद्र को (धीरा) धीरवीर स्थिर स्वभाववाले मुनिजन ही (तरंति) पार करते हैं । अब यहां
से मुनिजनों के लिये प्रवृत्त विशेषणों का अर्थ स्पष्ट किया जाता है—(सीलकलिया) ये
मुनिजन-शील-१८ हजार वर्षों के सेतों को काट करने वाले हैं । (उज्जम-ववसाय-गहिय-
गिज्जरण-जयण-उवओग-गाण-दंसण-[चरित्त]विमुद्धवचर(मंडभरियसारा) उवम अर्थात्

જેમાં વિશુદ્ધ સમ્યક્ત્વ જ નિર્વાસક-કર્ણધારને સ્થાન (સુકાની) છે, અર્થાત્ વિશુદ્ધ
સમકિતનો લાલ જ જેમાં સુકાનીના સમાન છે. (પસત્થ જ્ઞાણતવ-વાય-પળો-
લ્લિય-પહાવિણ્ણં) પ્રશસ્ત ધ્યાનરૂપ તપરૂપી વાયુથી પ્રેરિત થઈને જે
આગળ આગળ વધતો રહે છે. અર્થાત્ તે પૂર્વાક્ત વિશેષણથી વિશિષ્ટ આ
સંયમરૂપી વહાણદ્વારા સંસારરૂપ અપાર દુસ્તર સમુદ્રને ધીર વીર સ્થિર સ્વભાવ
વાળા મુનિજનો જ (તરંતિ) પાર કરે છે. હવે અહીંથી મુનિજનો માટે લગાડેલાં
વિશેષણોના અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—(સીલકલિયા) એ મુનિજનો શીલ-
૧૮ હજાર શીલના પ્રકારને ધારણ કરવાવાળા છે. (ઉજ્જમ-વવસાય-ગહિય-ગિજ્જ-
રણ-જયણ-ઉવઓગ-ગાણ-દંસણ-[ચરિત્ત]-વિસુદ્ધ-વચર-મંડ-ભરિય-સારા) ઉવમ અર્થાત્

વચ્ચર-મંદુ-મરિયસારા જિણવર-વચ્ચણોવદિદ્ધ-મગ્ગેણ અકુદિલેણ
સિદ્ધિમહાપટ્ટણાભિમુક્કા સમણવર-સત્થવાહા સુસુદ્ધ-સુસંભાસ-

મહાવ્રતં તદેવ ભાણ્ડઃ=ક્રયગીયવસ્તુજાનરૂપઃ. મૃતઃ=સ્થાપિતઃ. નારો=રત્નાદિરૂપઃ. પદાર્થો યૈસ્તે
તથા. કેન પથા પ્રયાન્તસ્તસ્મીન્નાવાદ-‘જિણશ્ચયણોવદિદ્ધમગ્ગેણ’ જિનવરવચ્ચનોપદિષ્ટમાર્ગેણ
જિનવરવચ્ચનમ્=આગમરૂપં તેન ઉપદિષ્ટઃ=કલ્પિતઃ-માર્ગઃ=સંયમપથઃ-તેન, ‘અકુદિલેણ’ અકુદિ-
લેણ-કપટચાદિદોષરહિતેન, ‘સિદ્ધિપટ્ટણાભિમુક્કા’ સિદ્ધિપત્તનાભિમુક્કાઃ-સિદ્ધિર્એવ પત્તનં
વગિવપુરં તદ્ભિમુક્કાઃ-તસ્ય ભિમુક્કાઃ । ‘સમણવરસત્થવાહા’ શ્રમણવરસાર્થવાહાઃ-શ્રમણ-

પ્રમાદ કા પરિત્યાગ એવં વ્યવસાય અર્થાત્ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરને કા દદ્ધ નિશ્ચય, ઇન દોનોં
મૂલ્યોં સે ગૃહીત-ક્રીન ચરત્ત-મહાવ્રતરૂપ-ભાણ્ડોં કા-ક્રયગીય વસ્તુઓં કા-કિ જો નિર્જરા,
યતના, ઉપયોગ, જ્ઞાન, દર્શન એવં [ચાલિત્ત] સે વિદુદ્ધ હૈં, જિનમેં સાર ભગ દુઆ હૈં એસે મુનિજન
ઇસ સંસારરૂપ મહાસમુદ્ર સે પાર હોતે હૈં । કિસ માર્ગ પર ચલતે હુવ્, એ પાર હોતે હૈં ?
સો બતાતે હૈં-(જિણશ્ચયણોવદિદ્ધમગ્ગેણ) જિનવર કા જો વચ્ચન હૈ-આગમ હૈ, ઉસકે
દ્વારા ઉપદિષ્ટ જો સંયમરૂપ માર્ગ હૈ, ઉસ પર ચલકર હી એ મુનિજન ઇસ સંસારરૂપ સમુદ્ર
કો પાર કરતે હૈં । યહ માર્ગ કેસા હૈ, ઇમકે લિયે સૂત્રકાર (અકુદિલેણ) ઇસ વિશેષણ સે
સ્પષ્ટ કરતે હૈં-યહ માર્ગ કપટતા આદિ દોષોં સે રહિત હૈં, અર્થાત્-સરઝ હૈ-આડા-ટેઢા
નહીં હૈ । એસે માર્ગ સે પ્રયાગ કરને વાલે એ મુનિજન બુદ્ધ કેસે હોતે હૈં ? યહ અવ યહાં સે
સ્પષ્ટ કિયા જાતા હૈ-(સિદ્ધિપટ્ટણાભિમુક્કા) ઇસ પ્રકાર કે માર્ગ સે પ્રયાગ કરને વાલે

પ્રમાદનો પરિત્યાગ તેમજ વ્યવસાય અર્થાત્ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવાનો દદ્ધ નિશ્ચય,
એ બન્ને મૂલ્ય (કિંમત) થી લીધેલ-વેચાતાં લીધેલ ૧૨ વ્રત-મહાવ્રતરૂપ વાસ-
ણોના-વેચાતી લીધેલી વસ્તુઓના કે જે નિર્જરા, યતના, ઉપયોગ, જ્ઞાન, દર્શન
તેમજ ચારિત્રથી વિશુદ્ધ છે તેમાં સાર ભરેલો છે. એવા મુનિજન આ સંસારરૂપ
મહાસમુદ્રથી પાર થઈ જાય છે. કયા માર્ગ પર ચાલતાં તેઓ પાર થાય છે ? તે
બતાવે છે-(જિણવરવચ્ચણોવદિદ્ધમગ્ગેણ) જિનવરનું જે વચ્ચન છે-આગમ છે-તેના
દ્વારા ઉપદેશાએલ જે સંયમરૂપ માર્ગ છે, તેના પર ચાલીને જ તે મુનિજનો
આ સંસારરૂપ સમુદ્રને પાર કરે છે. આ માર્ગ કેવો છે ? તે માટે, સૂત્રકાર
(અકુદિલેણ) આ વિશેષણથી સ્પષ્ટ કરે છે. આ માર્ગ કપટતા આદિ દોષોથી
રહિત છે-અર્થાત્ સરળ છે, આડોટેડો નથી. એવા માર્ગથી પ્રયાણ કરનારા એ
મુનિજનો વળી કેવો હોય છે તે બધું અહીંથી સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.
(સિદ્ધિપટ્ટણાભિમુક્કા) એ પ્રકારના માર્ગે પ્રયાણ કરવાવાળા મુનિજનો સિદ્ધિરૂપ

સુપળ્હ-સાસા ગામે ગામે એગરાયં ણગરે ણગરે પંચરાયં દૂઝ્જંતા

શ્રેષ્ઠા:—સાર્થવાહા:—ધીભૂતવ્યવસાયિન: । ‘સુસુહ-સુસંભાસ-સુપળ્હ-સાસા’ સુશ્રુતિ(મુશુચિ) સુસમ્ભાષા—સુપ્રશ્ન—સ્વાશા:—મુષ્ટ શ્રુતયો યેષાં તે સુશ્રુતય:—સમ્યક્મૂત્રગ્રન્થા:—સત્સિદ્ધાન્તા:, અથવા સુશુચય:—સમ્યક્છુદ્ધિમન્ત: । સુખ:—મુખજનક: સમ્ભાષો યેષાં તે સુસમ્ભાષા:—કદાચિદપિ કટૂચ્ચારણં ન કુર્વન્ત: । શોભના: પ્રશ્ના યેષાં તે સુપ્રશ્ના:—પ્રમિતસમુચિતપ્રશ્નકારિણ:, શોભના આશા યેષાં તે સ્વાશા:—મુક્તિમાત્રેચ્છવ:, ચતુર્ગમિષાં કર્મધારયે—સુશ્રુતિસુસમ્ભાષાસુપ્રશ્ન-સ્વાશા:, એવંવિધા:સન્ત:—‘ગામે ગામે એગરાયં’ ગ્રામે ગ્રામે-એકરાત્રમ્-પ્રતિગ્રામમ્ એકરાત્રમ્, અસ્ય ‘દૂઝ્જંતા’ इत्यनेन सहान्वय: । ‘णगरे णगरे पंचरायं’ नगरे नगरे पञ्चरात्रम्—પ્રતિનગરં-પચ્ચરાત્રં, ‘દૂઝ્જંતા’ દ્રવન્ત:—વસન્ત:, ધાતૂનામનેકાર્થત્વાત્, ‘जिइंदिया’ जितेन्द्रिया: ‘णिब्भ-

મુનિજન સિદ્ધિરૂપ પટ્ટણ-પત્તન કે સન્મુખ હોતે હૈ । (સમળવરસત્થવાહા) इनके साथी श्रमणश्रेष्ठरूप सार्थवाह-व्यवसायिजन होते हैं । (सुसुह-सुसंभास-सुपल्हसासा) सत्सिद्धान्तों के ये पारंगत होते हैं, अथवा इनका सिद्धान्त समीचीन—निर्दोष होता है, अथवा ये विशिष्ट—शुद्धि—वृत्त होते हैं । भाषा इनकी बड़ी ही मनोमुग्धकारी होती है । कभी भी ये कटुक भाषा का उच्चारण नहीं करते हैं । ये जो भी प्रश्न करते हैं वह प्रमाणोपेत होता है—व्यर्थ के अक्षरों का उसमें समावेश नहीं रहता । सांसारिक पदार्थों में किसी में भी इनकी इच्छा जागृत नहीं होती; सिर्फ मुक्ति प्राप्त करने की भावना ही एक इनकी रहा करती है । (गाમે गाમે एगरायं णगरे पंचरायं दूड्जंता) ये साधु ग्रामों में एक रात और नगरों में पांच रात निवास करते थे । (जिइंदिया) ये जितेन्द्रिय थे,

પટ્ટણુ-પત્તનની સન્મુખ હોય છે. (સમળવરસત્થવાહા) તેમના સાથી શ્રમણશ્રેષ્ઠ રૂપ સાર્થવાહુ-વ્યવસાયી જન હોય છે. (સુસુહસુસંભાસસુપળ્હસાસા) સત્-સિદ્ધાન્તોમાં તેઓ પારંગત હોય છે અથવા-તેઓના સિદ્ધાન્તો નિર્દોષ હોય છે, અથવા તેઓ વિશિષ્ટ શુદ્ધિસંપન્ન હોય છે. ભાષા તેમની બહુ જ મનોમુગ્ધ કરવાવાળી હોય છે. કટીપણુ તેઓ કડવીભાષાનો ઉચ્ચાર કરતા નથી. તેઓ જે કંઈ પ્રશ્ન કરે છે તે પ્રમાણુવાળો હોય છે—વ્યર્થ અક્ષરોનો તેમાં સમાવેશ રહેતો નથી. સાંસારિક પદાર્થોમાં કંઈમાં પણ તેમની ઇચ્છા જાગૃત થતી નથી. માત્ર મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની ભાવના જ એક તેમને રહ્યા કરે છે. (ગામે ગામે એગરાયં ણગરે ણગરે પંચરાયં દૂઝ્જંતા) આ સાધુઓ ગામડાઓમાં એક રાત મુધી અને નગરોમાં પાંચ રાત મુધી નિવાસ કરતા હતા. (जिइंदिया)

जिइंदिया णिब्भया गयभया सच्चित्ताचित्तमीसिएसु दब्बेसु
विरागयं गया संजया [विरता] मुत्ता लहुया णिरवकंखा साहू
णिहुया चरंति धम्मं ॥ सू० ३२ ॥

या गयभया ' निर्भया गतभयाः, 'सच्चित्ताचित्तमीसिएसु दब्बेसु' सच्चित्ताऽचित्तमिश्रितेषु
द्रव्येषु=वस्तुषु 'विरागयं गया' विरागतां गताः—वैराग्यं प्राप्ताः । 'संजया' संयताः=तंयम-
वन्तः । 'विरता' विरताः=हिंसादिभ्यो निवृत्ताः, 'मुत्ता' मुक्ताः—लोभरहिताः, 'लहुआ' लघुकाः—
स्वल्पोपधिधारितया लघुभूताः । 'णिरवकंखा' निरवकाङ्क्षाः=उभयलोकसुखाभिलाषवर्जिताः,
यतः पूर्वोक्तगुणविशिष्टाः, अतएव 'साहू' साधवः—मोक्षसाधकाः । 'णिहुया' निभृताः—
विनीता जात्यादिमदवर्जिताः इत्यर्थः, 'धम्मं' धर्म—श्रुतचारित्रलक्षणम् । 'चरंति' चर-
न्ति=आराधयन्ति ॥ सू० ३२ ॥

(णिब्भया गयभया) निर्भय थे, इस हेतु इन्हें कहीं भी भय नहीं लगता
था, (सच्चित्ताचित्तमीसिएसु दब्बेसु विरागयं गया) सच्चित्त, अचित्त और
सच्चित्ताचित्त द्रव्यों में ये वैराग्य युक्त थे, (संजया विरता मुत्ता) तंयमशाली, हिंसादि-
निवृत्त और लोभरहित थे, [लहुया] स्वल्प उपधि के धारक होने से ये लघु—लाघवगुण-
संपन्न थे, (णिरवकंखा) इहलोक और परलोक के सुखों की अभिलाषा से रहित थे; अत
एव ये मुनि गण (साहू) साधु, अर्थात् मोक्षसाधक थे । भगवान महावीरके ये साधु
(णिहुया) निभृत—जात्यादि मद से रहित होनेके कारण विनीत होकर (धम्मं) श्रुत-
चारित्रलक्षण धर्म की (चरंति) आराधना करते थे ॥ सू० ३२ ॥

આ સાધુઓ જિતેન્દ્રિય હતા, (ણિબ્ભયા ગયભયા) નિર્ભય હતા, તેથી
તેમને કોઈ ઠેકાણે ભય લાગતું નહિ. તેઓ (સચ્ચિત્તાચિત્તમીસિયેસુ દબ્બેસુ વિરાગયં
ગયા) સચ્ચિત્ત, અચિત્ત અને સચ્ચિત્તાચિત્ત દ્રવ્યોમાં વૈરાગ્યવાન હતા,
(સંજયા વિરતા મુત્તા) સંયમશાલી, હિંસાદિથી નિવૃત્ત અને લોભરહિત
હતા, (લહુયા) સ્વલ્પ ઉપધિના ધારક હોવાથી તેઓ લઘુ—લાઘવગુણ-
સંપન્ન હતા, (ણિરવકંખા) ઇહલોક અને પરલોકના સુખોની અભિલાષાથી
રહિત હતા. તેથી જ તે મુનિઓ (સાહુ) સાધુ એટલે મોક્ષસાધક હતા.
ભગવાન મહાવીરના આ સાધુઓ (ણિહુઆ) નિભૃત—જાત્યાદિ મદથી રહિત
હોવાને કારણે વીનીત થઈને (ધમ્મં) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની (ચરંતિ) આરા-
ધના કરતા હતા. (સૂ. ૩૨)

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ બહવે અસુરકુમારા દેવા અંતિયં પાઉબ્ભવિત્થા, કાલ-
મહાનીલ-સરિસ-ળીલ-ગુલિય-ગવલ-અયસિકુસુમ-પ્પગાસા વિય-

ટીકા—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘બહવે અસુરકુમારા દેવા અંતિયં પાઉબ્ભવિત્થા’ બહવોઽસુરકુમારા દેવા અન્તિકં પ્રાદુરભૂવન્—ભગવતઃ શ્રીમહાવીરસ્વામિનોઽન્તિકં=સમીપમાગત્ય પ્રાદુર્ભૂતાઃ । અસુરકુમારાણાં વર્ણનમાહ—‘કાલ-મહાનીલ-સરિસ-ળીલ-ગુલિય-ગવલ-અય-સિકુસુમ-પ્પગાસા’ કાલ-મહાનીલ-સદૃશ-નીલ-ગુલિક-ગવલાઽતસીકુસુમ-પ્રકાશાઃ—કાલો યો મહાનીલો—મણિવિશેષઃ, તત્સદૃશાઃ વર્ણતો યે તે તથા, પુનર્નીલો મણિવિશેષઃ, ગુલિકા=નીલી-ગુલિકા, ગવલં=માહિષં શૃંગમ્, અતસીકુસુમં ચ, એતેષાં પ્રકાશ इव પ્રકાશો યેષાં તે તથા । ‘વિયસિય-સયવત્તમિવ’ વિકસિતશતપત્રમિવ=પ્રફુલ્લેન્દીરવરતુલ્યં ‘પત્તલ-ણિમ્મલા-ઈસી-

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ ।

इस सूत्रद्वारा मूत्रकार श्रमण भगवान महावीर के निकट आये हुए असुरकुमार देवों का वर्णन करते हैं— (तेणं कालेणं तेणं समणं) उस काल एवं उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान महावीर के (अंतियं) समीप (बहवे) अनेक (असुरकुमारादेवा) असुरकुमार देव (पाउब्भवित्था) प्रकट हुए । (काल-महानील-सरिस-णील-गुलिय-गवल-अयसिकुसुम-प्पगासा) कृष्ण महानील मणि, नीलमणि, गुलिका, भैंस के सींग के अन्दरका भाग, अलसीका फूल; इन सबों के समान ये असुरकुमार कृष्णवर्ण थे । (वियसियसयवत्तमिव) विकसित शतपत्र के समान—अर्थात् इन्दीवर—कमल—के तुल्य

“ तेणं कालेणं तेणं समणं ” इत्यादि.

આ સૂત્ર દ્વારા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની પાસે આવેલા અસુર-કુમાર દેવોનું વર્ણન કરવામાં આવે છે. (તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ તે સમયને વિષે (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (અંતિયં) પાસે (બહવે) અનેક (અસુરકુમારા દેવા) અસુરકુમાર દેવ (પાઉબ્ભવિત્થા) પ્રગટ થયા. તેમનાં શરીરનો વર્ણ કહે છે—(કાલ-મહાનીલ-સરિસ-ળીલ-ગુલિય-ગવલ-અયસિકુસુમ-પ્પગાસા) કૃષ્ણ મહાનીલ મણિ, નીલમણિ, ગુલિકા, ભેંસનાં શીંગ-ડાંની અંદરનો ભાગ અને અળશીનાં ફૂલ, આ સર્વની સમાન તે અસુરકુમાર કૃષ્ણ વર્ણના હતા. (વિયસિયસયવત્તમિવ) વિકસેલાં શતપત્રના સમાન, અર્થાત્

सिय-सयवत्तमिव पत्तलनिम्मला-ईसी-सिय-रत्त-तंबणयणा गरुला-
यय-उज्जु-तुंग-णासा ओयविय-सिलप्पवाल-बिंबफल-सण्णिभा-
हरोट्टा पंडुर-ससिसयल-विमल-णिम्मल-संख-गोखीर-फेण-दगरय-

‘सिय-रत्त-तंब-णयणा’ पत्रल-निर्मलेषत्सित-रक्त-ताम्र-नयनाः—पत्रञ्जलि=पद्मवन्ति—सूक्ष्मरो-
मयुक्तानि, तथा निर्मलानि तथा ईषत् सितानि—श्वेतानि तथा ईषद्रक्तानि तथा ईषत्ताम्राणि=
अरुणानि नयनानि येषां ते तथा—विकसितशतपत्रतुल्यकिञ्चिच्छुभ्ररक्तनेत्रा इत्यर्थः ।
‘गरुला-यय-उज्जु-तुंग-णासा’ गरुडाऽऽयतर्जुतुङ्गनासिकाः—गरुडस्येव आयता=दीर्घा,
ऋज्वी=सरला तुङ्गा=उच्चा नासिका येषां ते तथा—सरलदीर्घसुन्दरनासिकावन्तः । ‘ओयविय-
सिलप्पवाल-बिंबफल-सण्णिभा-हरोट्टा’ उपचित-शिलाप्रवाल-बिम्बफल-सन्निभाऽ-
धरोष्ठाः—उपचितः=पुष्टो यः शिलाप्रवालः=विद्रुमः, बिम्बफलम्—अतीवारुणं पुष्टं वनवल्लीफलम्,
तत्सन्निभौ तुल्यौ अधरोष्ठौ—ओष्ठद्वयं येषां ते, तथा—विद्रुमबिम्बफलवत् अतीवरक्तोष्ठद्वयवन्तः,
‘पंडुर-ससिसयल-विमल-णिम्मल-संख-गोखीर-फेण दगरय-मुणालिया-धवल-दंतसेढी’
पाण्डुर-शशिशकल-विमल-निर्मल-शङ्ख-गोक्षीर-फेन-दकरजो-मृणालिका-धवल-दन्तश्रेणयः, पाण्डुर-
शशिशकलं=शुभचन्द्रखण्डः, तद्वद्विमलनिर्मलाः-विमलेष्वपि निर्मलाः-अतीवोज्ज्वलाः, अतएव-शङ्ख-

इनके नेत्र थे । (पत्तल-णिम्मला-ईसी-सिय-रत्त-तंब-णयणा) ये नेत्र पद्मल थे—सूक्ष्म रोमयुक्त
थे, निर्मल थे, कुछ श्वेत थे, ईषद्रक्त थे, और कुछ २ लाल भी थे । (गरुला-यय-उज्जु-तुंग-णासा)
गरुड के समान दीर्घ, ऋज्वी—सरल एवं ऊँची इनकी नासिका थी । (ओयविय-सिलप्पवाल-
बिंबफल-सण्णिभा-हरोट्टा) पुष्ट शिलाप्रवाल—विद्रुम (मूँगा), एवं अतीव अरुण बिम्बफल
के समान लाल इनके दोनों ओष्ठ थे । (पंडुर-ससि-सयल-विमल-णिम्मल-
संख-गोखीर-फेण-दगरय-मुणालिया-धवल-दंतसेढी) धवलचन्द्र के खंड के

धन्दीवर-उभयना जेवां अेमनां नेत्र उतां. (पत्तल-णिम्मला-ईसी-सिय-रत्ततंबणयणा)
अे नेत्र पद्मल उतां—सूक्ष्म रोम (वाण) युक्त उतां, निर्मल उतां, उंछंछ धोणां
उतां, ईषद्रक्त उतां, अने जरा जरा दाद पणु उतां. (गरुलायय-उज्जु-तुंग-णासा) अरु-
उना जेवी दांभी, सरल अने जंची अेमनी नासिका उती. (ओयविय-सिलप्पवाल-
बिंबफल-सण्णिभा-हरोट्टा) पुष्ट शिलाप्रवाल-विद्रुम (मूँगा) अने अतिशय दाद वणुना
अिअक्षलना जेवा राता अेमना अन्ने डोठ उता. (पंडुर-ससिसयल-विमल-
णिम्मल-संख-गोखीर-फेण-दगरय-मुणालिया-धवल-दंतसेढी) सक्षेह अंद्रअं उना

મુણાલિયા-ધવલ-દંતસેદી, હુતવહ-ણિદ્ધંત-ધોય-તત્તતવણિજ્જ-રક્ત-
તલ-તાલુજીહા અંજણ-ઘણકસિણ-રુયગ-રમણિજ્જ-ણિદ્ધ-કેસા, વા-
મેગ-કુંડલધરા અદ-ચંદણા-ણુલિત્ત-ગત્તા ઈસી-સિલિંધ-પુપ્ફ-પ્પગા-

ગોક્ષીરફેનદકરજોમૃણાલિકાવદ્ ધવલાઃ દન્તશ્રેણયો યેષાં તે તથા, તત્ર દકરજઃ—જલકણઃ । ‘હુત-
વહ-ણિદ્ધંત-ધોય-તત્તતવણિજ્જ-રક્તતલ-તાલુજીહા’ હુતવહ-નિર્ધ્માત-ધૌત-તત્તતપનીયરક્ત-
લતાલુજિહ્વાઃ—હુતવહેન=વહિના નિર્ધ્માતિ-પ્રતાપિતં, ધૌતં—જલપ્રમાર્જિતં તપ્તં યત્ તપનીયં—સુવર્ણ,
તદ્વદ્ રક્તતલમ્-અરુણોપરિપ્રદેશં તાલુજિહ્વં યેષાં તે તથા-અતિપ્રતપ્તસંમૃષ્ટસુવર્ણવર્ણતાલુજિહ્વાવન્તઃ ।
‘અંજણ-ઘણકસિણ-રુયગ-રમણિજ્જણિદ્ધકેસા’ અઙ્ગનધનકૃષ્ણરુચકરમણીયસ્તિગ્ધકેશાઃ—
અઙ્ગનં—કઙ્ગલં, ઘનો—મેઘઃ, એત્તસદૃશાઃ કૃષ્ણાઃ કૃષ્ણવર્ગાઃ, તથા રુચકો—મણિવિશેષઃ,
તદ્વત્ સ્તિગ્ધાઃ—ચિક્કણાઃ—કેશા યેષાં તે તથા, ‘વામેગકુંડલધરાઃ’ વામૈકકુંડલધરાઃ—વામે
કર્ણે—એકકુંડલધારિણઃ, ન તુ દક્ષિણે કર્ણે; તજ્ઞાર્થીયસ્વભાવાત્ એકસ્મિન્નેવ કર્ણે કુંડલધારકાઃ
દક્ષિણે કર્ણે ત્વન્યામરણધારિણ ઇતિભાવઃ । ‘અદચંદણાણુલિત્તગત્તા’ આર્દ્રચન્દનનાનુલિત્તગત્તાઃ—સઘો-

સમાન શુભ્ર, એવં શઙ્ખ, ગોક્ષીર, ફેન, જલકણ, ઓર મૃણાલ કે સમાન અત્યન્ત નિર્મલ
ઇનકી દન્તપદ્ધિ થી । (હુતવહ-ણિદ્ધંત-ધોય-તત્ત-તવણિજ્જ-રક્તતલ-તાલુજીહા) પહિલે વહ્નિ મેં
તપાયે ગયે પશ્ચાત્ તેજાબ મેં ધોયે ગયે પુનઃ અગ્નિ મેં તપાકર ઉજ્જ્વલ કિયે ગયે સુવર્ણ કે
સમાન રક્તતલવાલે ઇનકે તાલુ ઓર જિહ્વા થી । (અંજણ—ઘણ—કસિણ—રુયગ—રમણિજ્જ-
ણિદ્ધ—કેસા) ઇનકે કેશ અંજન એવં કાલે મેઘ કે સમાન કાલે તથા રુચક કે સમાન ચિકને
થે । (વામેગકુંડલધરા) ઇનકે વામ કર્ણ મેં કુંડલ શોભિત હો રહ્યા થા । ઇનમેં એસી પ્રથા
હે કિ, યે લોગ બાયેં કાન મેં કુંડલ પહનતે હૈં ઓર દાહિને કાન મેં અન્ય આભૂષણ । દાહિને
કાન મેં યે કમીં મીં કુંડલ નહીં પહનતેં હૈં । (અદચંદણાણુલિત્તગત્તા) આર્દ્ર ચન્દન સે

સમાન શુભ્ર અને શંખ, ગોક્ષીર (દૂધ), ફીણ, જલકણ અને મૃણાલ (કમળ-
કંદ) ના જેવી અત્યન્ત નિર્મળ એમની દન્તપંકિતઓ હતી. (હુતવહ-ણિદ્ધંત-ધોય-
તત્ત-તવણિજ્જ-રક્તતલ-તાલુ-જીહા) પહેલાં અગ્નિમાં તપાવેલાં પછી તેજાબમાં ધોએલાં
સુવર્ણના જેવાં લાલ તળાં વાળાં એમનાં તાળવાં અને શુભ્ર હતાં. (અંજણ-ઘણ-
કસિણ-રુયગ-રમણિજ્જ-ણિદ્ધ-કેસા) એમના વાળ આંજણ અને કાળાં વાદળાં જેવા
કાળા તથા રુચકના જેવા ચીકણા હતા. (વામેગકુંડલધરા) એમના ડાબા
કાનમાં કુંડળ શોભી રહ્યાં હતાં. એઓમાં એવી પ્રથા છે કે એ લોક ડાબા
કાનમાં કુંડળ પહેરે છે અને જમણા કાનમાં બીજું ધરેણું. આ લોકો
જમણા કાનમાં ક્યારે પણ કુંડળ પહેરતા નથી. (અદચંદણાણુલિત્તગત્તા)

સાઈ અસંકિલિટાઈ સુહુમાઈ વત્થાઈ પવરપરિહિયા, વયં ચ પઢમં
સમઙ્કંતા વિઙ્ગયં ચ અસંપત્તા ભદ્રે જોવ્વણે વટ્ટમાણા, તલભંગય-

ઘૃષ્ટચન્દનચર્ચિતશરીરાઃ । અથ વસ્ત્રવિશેષણાન્યાહ-‘ઈસી-સિલિંધ-પુષ્પ-પ્પગાસાઈ’ઈષત્-સિલી-
ન્ધપુષ્પપ્રકાશાનિ-મનાક્સિલીન્ધ્રકુસુમપ્રમાણિ-ઈષત્સિતાનીત્યર્થઃ; સિલીન્ધ્રકુસુમ-વર્ષતૈ ભૂમિ-
ભિત્ત્વા છત્રકમિવ બહિર્નિસ્સરતિ, મતાન્તરે તુ એત્તકુસુમં રક્તવર્ણમેવ ગ્રાહ્યં યતોઽસુરા રક્તવસનાઃ પ્રાયો
ભવન્તીતિ । પુનઃકીદૃશાનિ વસ્ત્રાણિ ? અત્રાઽઽહ ‘સુહુમાઈ’ સૂક્ષ્માણિ ‘અસંકિલિટાઈ’ અસંક્લિષ્ટા-
નિ-દૂષણરહિતાનિ । ‘વત્થાઈ’ વસ્ત્રાણિ-‘પવરપરિહિયા’ પ્રવરપરિહિતાઃ-પ્રવરમ્-ઉત્કૃષ્ટં
યથા તથા પરિહિતાઃ=પરિધૃતવન્તઃ । ‘વયં ચ પઢમં સમઙ્કંતા’ વયશ્ચ પ્રથમમ્=ષોડશવર્ષપર્ય-

इनका समस्त शरीर लिप्त था । (इसी-सिलिंध-पुष्प-प्पगसाई) इन्होंने जो वस्त्र पहिन रखे
थे वे कुछ कम सफेद थे, जैसे सिलीन्ध्र पुष्पका प्रकाश होता है वैसा ही इनका प्रकाश था ।
वर्षाऋतु में जमीन को फोड़ कर छत्र के आकार जैसा जो पुष्प उत्पन्न होता है उसका नाम
सिलीन्ध्र है । किन्हीं २ का मत है कि यह पुष्प रक्तवर्ण भी होता है । अतः इसके ग्रहण से
उनके वस्त्र रक्तवर्ण के थे ऐसा ही समझना चाहिये । क्यों कि असुर जाति के देव प्रायः
लालवस्त्र धारण करने वाले होते हैं । (सुहुमाई) ये वस्त्र-जिन्हें इन्होंने पहिन रखे थे, अत्यन्त
सूक्ष्म-पतले थे, (असंकिलिट्टाई) और दोषरहित थे । (वत्थाई पवरपरिहिया) ऐसे वस्त्र इन्होंने
अच्छी तरह से अपने शरीर पर धारण कर रखे थे । (वयं च पढमं समङ्कंता) प्रथम
वय को ये उल्लङ्घन कर चुके थे; अर्थात् ये सब सोलह वर्ष से ऊपर के जैसे मातृम होते

આદ્ર (સીના) ચન્દન (સૂખડ) વળે તેમનાં આખા શરીર લિપ્ત હતાં.
(ઇસી-સિલિંધ-પુષ્પ-પ્પગાસાઈ) તેઓએ જે વસ્ત્રો પહેર્યાં હતાં તે
કંઈક ઓછાં સફેદ હતાં. જેવો સિલીન્ધ્ર પુષ્પનો પ્રકાશ હોય છે તેવો જ તેમનો
પ્રકાશ હતો. વર્ષાઋતુમાં જમીનને ફાડીને છત્રના આકાર જેવાં જે પુષ્પ ઉત્પન્ન
થાય છે તેનું નામ સિલીન્ધ્ર છે. કોઈ કોઈનો મત છે કે આ પુષ્પ લાલ-
રંગનાં થાય છે. ત્યારે એ અર્થ ગ્રહણ કરવાથી તેમનાં વસ્ત્ર લાલરંગનાં હતાં-
એમ જ સમજવું જોઈએ. કેમકે અસુર જાતિના દેવ ઘણું કરીને લાલવસ્ત્ર
ધારણ કરવાવાળા હોય છે. (સુહુમાઈ) આ વસ્ત્ર જે તેઓએ પહેર્યાં હતાં તે
અત્યંત સૂક્ષ્મ-પાતળાં હતાં (અસંકિલિટ્ટાઈ) અને દોષરહિત હતાં. (વત્થાઈ
પવર-પરિહિયા) એવાં વસ્ત્રો તેઓએ સારી રીતે પોતાના શરીરે ધારણ કર્યાં હતાં
(વયં ચ પઢમં સમઙ્કંતા) પ્રથમ વયનું તેઓ ઉલ્લંઘન કરી ચૂક્યા હતા, અર્થાત્

**तुडिय - पवर - भूसण - गिम्मल-मणि-रयण-मंडिय-भुया दसमुद्दा-
मंडिय-ग्गहत्था चूलामणि-चिंध-गया सुरूवा महडिढया महजुइया**

न्तमतिक्रान्ताः । 'विइयं च असंपत्ता' द्वितीयञ्चाऽसम्प्राप्ताः—द्वितीयं—तरुणं वयः, अन्तंप्राप्ताः= नाद्यापि प्राप्तवन्तः । अतएव—'भदे जोव्वणे वट्टमाणा' भदे यौवने वर्तमानाः—सदा यौवनवयो-धारिणः । 'तलभंगय-तुडिय-पवर-भूसण-निम्मल-मणि-रयण-मंडिय-भुया' तलभङ्गक-त्रुटिक-प्रवरभूषण-निर्मल-मणि-गन्तमण्डित-भुजाः—तलभङ्गकं=बाह्वाभरणम्, त्रुटिकानि च बाहुरक्षकाणि, तान्येव भूषणानि तैर्निर्मलमणिरत्नैश्च मण्डिता भुजा येषां ते तथा—विविधवरभूषणमणिरत्नभूषित-भुजा इत्यर्थः, 'दसमुद्दामंडियग्गहत्था' दशमुद्रामण्डिताऽग्रहस्ताः—दशभिर्मुद्राभिः=मुद्रिकाभिः मण्डिताः=भूषिताः—अग्रहस्ता अङ्गुल्यो येषां ते तथा । 'चूलामणिचिंधगया' चूडामणिचिह्नगताः—चूडामणिरूपचिह्नधारका इत्यर्थः । 'सुरूवा' सुरूपाः—सुन्दराऽऽकाराः 'महडिढया' महर्द्धिका=विशिष्टविमानपरिवारादियुक्ताः । 'महजुइया' महाद्युतिकाः—विशिष्टशरीराऽऽभरणादिप्रभाभा-

थे, (विइयं च असंपत्ता) और अभीतक ये तरुण अवस्था को जैसे प्राप्त नहीं हुए हों ऐसे दीखते थे । इसलिये ये सदा (भदे जोव्वणे वट्टमाणा) अभिनव यौवन अवस्थासे सम्पन्न थे । (तलभंगय-तुडिय-पवर-भूषण-गिम्मल-मणि-रयण-मंडिय-भुया) इनकी भुजाएँ तल-भंगक—बाहु के एक आभरण एवं त्रुटिक—बाहुरक्षक—भुजबंध इन उत्तम दोनों आभूषणों से और निर्मल मणिरत्नों से मण्डित थीं । (दसमुद्दा-मंडिय-ग्गहत्था) हाथ की सबकी सब अंगुलियाँ दस मुद्रिकाओं से मण्डित थीं, अर्थात्—हाथ की दसों अंगुलियों में मुद्रिकायें थीं । (चूडाम-णि-चिंध-गया) चूडामणिचिह्न के ये धारक थे । (सुरूवा) इनका रूप बड़ा ही सुन्दर था । (महडिढया) विशिष्ट विमान एवं परिवारादि रूप ऋद्धि के ये सभी देव धारक थे । (मह-

तेज्यो गंधा गेग वर्यथी डपरना डोय जेवा देआता डता. (विइयं च असंपत्ता) अने डण्ण सुधी तेज्येअ तरुण अवस्थाने प्राप्त न डरी डोय जेवा तेज्यो देआता डता, आथी तेज्यो सदा (भदे जोव्वणे वट्टमाणा) अलिनव यौवन अव-स्थाथी सम्पन्न डता. (तलभंगय-तुडिय-पवर-भूसण-गिम्मल-मणि-रयण-मंडिय-भुया) तेमनी भुज्येअ तलभंगक—आहुना आलरण अने त्रुटिक—आहुरक्षक—भुज-बंध जे अने उत्तम आभूषणोथी तथा निर्मल मणिरत्नोथी मंडित डती. (दस-मुद्दा-मंडिय-ग्गहत्था) डायनी तमानेतमान आंगणीज्ये दश मुद्रिकाज्योथी (वींटी-ज्योथी) मंडित डती. अर्थात् डायनी दशेय आंगणीज्येमां मुद्रिकाज्ये डती, (चूलामणि-चिंध-गया) चूडामणिचिह्न धारक तेज्यो डता. (सुरूवा) तेमनां ३५ अहुज सुंदर डतां. (महडिढया) विशिष्ट विमान अने परिवार आदि ३५

महब्बला महासोक्खा महानुभागा हार-विराडय-वच्छा कडग-
तुडिय-थंभिय-भुया अंगय-कुंडल-मट्ट-गंडयल-कण्णपीठधारी
विचित्त-वत्था-भरणा विचित्त-मात्ता-मउलि-मउडा कल्लाणग-पवर-

स्वराः । 'महब्बला' महाबलाः—विशेषबलशालिनः । 'महायसा' महायशसः—विशालकीर्ति-
मन्तः, 'महासोक्खा' महासौख्याः—विशिष्टमुखसम्पन्नाः । 'महाणुभागा' महानुभागाः—
अचिन्त्यप्रभावयुक्ताः । 'हारविराडयवच्छा' हारविराजितवक्षसः । 'कडगतुडियथंभियभुया'
कटकत्रुटिकस्तम्भितभुजाः—कटकैः=बलयैः त्रुटिकैः—बाहुरक्षकभूषणविशेषैः स्तम्भिता—सज्जिता
भुजा येषां ते तथा । 'अंगय-कुंडल-मट्ट-गंडयल-कण्णपीठ-धारी' अङ्गद-कुण्डल-मृष्ट-गण्डतल-
कर्णपीठ-धारिणः—अङ्गदानि=बाह्याभरणानि कुण्डलमृष्टगण्डतलानि कर्णपीठानि—कर्णाभरणा-
विशेषान् धरन्ति तच्छीलाः । 'विचित्त-वत्था-भरणा'—विचित्र-वन्त्राभरणाः—विचित्राणि=

ज्जुइया) शरीर एवं आभरण आदि की विशिष्ट प्रभा से ये सज्जित थे । (महब्बला) विशेष
शक्तिसम्पन्न थे । (महायसा) इनकी कीर्ति दिग्दिगन्त में फैली हुई थी । (महासोक्खा)
विशिष्ट सुख के ये भोक्ता थे । (महाणुभागा) अचिन्त्य प्रभाव के धारक थे । (हार-विराडय-
वच्छा) इनका वक्षःस्थल हार से शोभायमान था । (कडग-तुडिय-थंभिय-भुया) कटक,
बलय एवं त्रुटिक—भुजबन्ध से इनकी भुजायें सज्जित थीं । (अंगय-कुंडल-मट्ट-गंडयल-
कण्णपीठ-धारी) अङ्गद-बाजूबन्ध, कुण्डल-कर्णाभरणविशेष कि जिससे इनके कपोल घर्षित-
हो रहे हैं—इन दोनों को एवं और भी अन्य विशिष्ट कर्णाभरणों को ये धारण किये हुये थे ।
(विचित्तवत्थाभरणा) विविध प्रकार के वस्त्र एवं आभरणों को ये पहने हुए थे । (विचित्त-

ऋद्धिथी आ सर्व देवो संपन्न उता. (महज्जुइया) विशिष्ट शरीर अने
आभरण आदिनी प्रभाथी तेओ मंडित उता. (महब्बला) विशेषशक्तिसंपन्न
उता. (महायसा) तेमनी कीर्ति चोतरइ देलाध गध उती. (महासोक्खा) विशिष्ट
सुखना तेओ लोडता उता, (महाणुभागा) अचिन्त्य प्रभावना धारक उता. (हार-
विराडय-वच्छा) तेमनुं वक्षस्थल (छाती) डार वणे शोभायमान उतुं, (कडग-
तुडिय-थंभिय-भुया) कटक-बलय अने त्रुटिक-भुजबन्धथी तेमनी लुगथो सज्जित
उती. (अंगय-कुंडल-मट्ट-गंडयल-कण्णपीठधारी) अंगद-बाजूबन्ध, कुंडल-दानेनां
आभरण विशेष डे जेना वणे तेमना गाल घर्षित थतां उता, ओ यन्ने तथा
ते उपरांत भीनं विशिष्ट कर्ण आभरणोने तेओओ धारण कर्थां उतां. (विचि-
त्तवत्थाभरणा) विविध प्रकारनां वस्त्र तथा आभरणोने तेओओ धारण कर्थां उतां.

વત્થ-પરિહિયા કલ્લાણગ-પવર-મલ્લા-ણુલેવણા ભાસુરબોંદી પલં-
વવણમાલધરા દિવ્વેણં વણ્ણેણં દિવ્વેણં ગંધેણં દિવ્વેણં રૂવેણં

વિવિધાનિ વસ્ત્રાણિ આભરણાનિ ચ યેષાં તે તથા, 'વિચિત્તમાલા' વિચિત્રમાલા—વિચિત્રાઃ= વિવિધાઃકારા માલાઃ પુષ્પસ્રજો યેષાં તે તથા, 'મઝ્ઝલિમઝ્ઝા' મૌલિમુકુટાઃ—મૌલિષુ=મસ્તકેષુ મુકુટાનિ યેષાં તે તથા 'કલ્લાણગ-પવર-વત્થ-પરિહિયા' કલ્યાણક-પ્રવરવસ્ત્ર-પરિહિતાઃ—કલ્યાણ-કાનિ=માઙ્ગલિકાનિ પ્રવરાણિ=શ્રદ્ધાનિ વસ્ત્રાણિ પરિહિતાઃ=પરિધૃતવન્તઃ—પરિધૃતમાઙ્ગલિકશ્રેષ્ઠ-વસ્ત્રાઃ । 'કલ્લાણગ-પવર-મલ્લા-ણુલેવણા' કલ્યાણક-પ્રવર-માલ્યાનુલેપનાઃ—કલ્યાણકારીણિ પ્રવરાણિ માલ્યાન્યનુલેપનાનિ ચ યેષાં તે તથા, માઙ્ગલિકમાલ્યાનુલેપનવન્તઃ । 'ભાસુરબોંદી' ભાસ્વરદેહાઃ—દેદીપ્યમાનશરીરાઃ 'પલંબ-વણમાલ-ધરા' પ્રલમ્બવનમાલાધરાઃ, પ્રલમ્બઃ—જુમ્બનકં તદ્યુક્તા વનમાલા તસ્યા ધરાઃ, વનમાલા કણ્ઠતો જાનુપર્યન્તં લમ્બમાના ભવતિ તસ્યા ધારકાઃ, 'દિવ્વેણં વણ્ણેણં' દિવ્યેન વર્ણેન—'દિવ્વેણં ગંધેણં' દિવ્યેન ગન્ધેન—'દિવ્વેણં

માલા) इन्हों ने जो मालायें धारण कर रखी थीं वे विचित्र पुष्पों से गुँथी हुई थीं । अतः ये विचित्र—अनेक प्रकार की मालाओं को धारण किये हुए थे । (मउलिमउडा) इनके मस्तक मुकुटों से शोभित थे । (कल्लाणग-पवर-वत्थ-परिहिया) कल्याणकारी एवं विशेष कीमती वस्त्रों को इन्होंने धारण कर रखा था । (कल्लाणग-पवर-मल्ला-णुलेवणा) आनन्ददायक एवं सुन्दर आकार युक्त मालाओं से एवं विलेपनों से इनका शरीर सज्जित हो रहा था । (भासुरबोंदी) इनका शरीर विशिष्ट आभा से युक्त हो रहा था । (पलंबवणमालधरा) इन्होंने जो वनमालायें धारण कर रखी थीं वे घुटनों तक लटक रही थीं । ये सब (दिव्वेणं) रूवेणं एवं फासेणं संघाएणं संठाणेणं) दिव्य वर्ण से, दिव्य गन्ध से, दिव्य स्वरूपसे, इसी प्रकार दिव्य स्पर्श से, दिव्य संहनन से, समचतुरस्र संस्थान से, तथा—(दिवाए इड्ढीए

(વિચિત્તમાલા) તેઓએ જે માળાઓ ધારણ કરેલી હતી તે વિચિત્ર પુષ્પોથી ગુંથાયેલી હતી. આમ તેઓએ વિચિત્ર—અનેક પ્રકારની માળાઓ ધારણ કરી હતી. (મઝ્ઝલિમઝ્ઝા) તેમના મસ્તક મુકુટો વળે શોભી રહ્યા હતાં. (કલ્લાણગ-પવર-વત્થ-પરિહિયા) કલ્યાણકારી અને વિશેષ કિંમતી વસ્ત્રો તેઓએ ધારણ કરી રાખેલાં હતાં. (કલ્લાણગ-પવર-મલ્લા-ણુલેવણા) આનંદદાયક અને સુંદર આકાર-યુક્ત માળાઓથી તેમજ વિલેપનોથી તેમના શરીર સજ્જિત હતાં. (ભાસુ-રબોંદી) તેમના શરીર વિશિષ્ટ આભા વળે યુક્ત હતાં. (પલંબ-વણમાલધરા) તેઓએ જે વનમાલાઓ ધારણ કરી હતી. તે ઘુટણ સુધી લટકી રહી હતી. આ બધા (દિવ્વેણં વણ્ણેણં દિવ્વેણં ગંધેણં દિવ્વેણં રૂવેણં એવં ફાસેણં સંઘાણં સંઠાણેણં)

एवं फासेणं संघाएणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए जुईए पभाए
छायाए अच्चीए, दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ
उज्जोयमाणा पभासेमाणा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं

रूपेणं' दिव्येन रूपेण 'एवं फासेणं' एवं स्पर्शेन 'संघाएणं' संहननेन । 'संठाणेणं'
संस्थानेन—समचतुरस्रलक्षणेन । 'दिव्वाए इड्ढीए' दिव्यया ऋद्ध्या—देवोचितया परिवारादि-
रूपया । 'दिव्वाए जुईए' दिव्यया द्युत्या, 'दिव्वाए पभाए' दिव्यया प्रभया—प्रभया=
विमानदीप्त्या । 'दिव्वाए छायाए' दिव्यया छायाया—शोभया । 'दिव्वाए अच्चीए' दिव्यया
अर्चिषा—शरीरस्थरत्नादितेजोज्वालाया । 'तेएणं' तेजसा—शरीरसम्बन्धिरोचिषा, प्रभावेण वा ।
'दिव्वाए लेसाए' दिव्यया लेश्यया—शरीरकान्त्या 'दस दिसाओ उज्जोयमाणा' दश
दिशा उदयोतयन्तः प्रकाशकरणेन, 'पभासेमाणा' प्रभासयन्तः—शोभयन्तः 'समणस्स
भगवओ महावीरस्स' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य 'अंतियं' अन्तिकं—समीपम्—
'आगम्मागम्म' आगत्याऽऽगत्य—वारंवारमुपेत्य । 'रत्ता' रक्ताः—सानुरागाः 'समणं भगवं

जुईए पभाए छायाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए) दिव्य ऋद्धि से, दिव्य
द्युति से, दिव्य प्रभासे—विमान आदिकी दीप्ति से, दिव्य छाया से—शोभासे, शरीरस्थ रत्न
आदि के दिव्य तेज से, दिव्य शारीरिक कान्ति से एवं दिव्यलेश्यासे (दस दिसाओ उज्जोय-
माणा) दस दिशाओं को उदयोतयुक्त करते हुए (समणस्स भगवओ) श्रमण भगवान्
(महावीरस्स) महावीर के (अंतियं) समीप (आगम्मागम्म) वारंवार आ आकर (रत्ता)
बड़ी भक्ति के साथ (समणं भगवं महावीरं) श्रमण भगवान् महावीर को (तिक्खुत्तो) तीन

दिव्य वर्ण वणे, दिव्य गंध वणे, दिव्य स्वरूप वणे, ते ४ प्रकारे दिव्य स्पर्श
वणे, दिव्य संछन्न वणे, समचतुरस्र-समचोरस-संस्थान वणे, तथा—(दिव्वाए इड्ढी-
ए जुईए पभाए छायाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए) दिव्य ऋद्धि वणे,
दिव्य द्युति वणे, दिव्य प्रभा वणे—विमान आदिनी दीप्ति वणे, दिव्य छाया ओटले
शोभा वणे, शरीर उपरनां रत्न आदिनां दिव्य तेज वणे, दिव्य शारीरिक कान्ति
वणे, अने दिव्य लेश्या वणे (दस दिसाओ उज्जोयमाणा) दश दिशाओंने
उदयोत—युक्त (प्रकाशित) करता तथा (समणस्स भगवओ) श्रमण भगवान्
(महावीरस्स) महावीरनी (अंतियं) पास (आगम्मागम्म) वारंवार आवी
आवीने (रत्ता) बहुत ४ भक्तिपूर्वक (समणं भगवं महावीरं) श्रमण भगवान्
महावीरने (तिक्खुत्तो) त्रणुवार (आयाहिण—पयाहिणं) अंजलिपुट आंधीने तेने

આગમ્માગમ્મ રત્તા સમણં ભગવં મહાવીરં તિક્ખુત્તો આયાહિણ-
પયાહિણં કરેંતિ, કરિત્તા વંદંતિ નમંસંતિ, વંદિત્તા નમંસિત્તા
સાં સાં નામગોયાં સાવેંતિ, ણચ્ચાસણે ણાહૂરે સુસ્સૂસ-
માણા નમંસમાણા અભિમુહા વિણણં પંજલિહા પજ્જુવાસંતિ
॥ સૂ. ૩૩ ॥

મહાવીરં તિક્ખુત્તો આયાહિણપયાહિણં કરેંતિ' શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ત્રિકૃત્વ
આદક્ષિણપ્રદક્ષિણમ્—અંજલિપુટં બદ્ધ્વા તં બદ્ધાંજલિપુટં દક્ષિણકર્ણમૂલત આરમ્ભ્ય લલાટપ્રદેશેન
વામકર્ણાન્તિકેન ચક્રાકારં ત્રિઃ પરિભ્રામ્ય લલાટદેશે સ્થાપનરૂપં કુર્વન્તિ, કૃત્વા 'વંદંતિ'
વન્દન્તે=સ્તુવન્તિ, 'નમંસંતિ' નમસ્યન્તિ—નમસ્કુર્વન્તિ, 'વંદિત્તા' વન્દિત્વા 'નમંસિત્તા' નમ-
સ્યિત્વા 'સાં સાં નામગોયાં સાવેંતિ' સ્વાનિ સ્વાનિ નામગોત્રાણિ શ્રાવયન્તિ=કથયન્તિ ।
'ણચ્ચાસણે ણાહૂરે' નાત્યાસન્ને નાતિદૂરે 'સુસ્સૂસમાણા' શુશ્રૂષમાણાઃ—સેવાં કુર્વાણાઃ
'નમંસમાણા' નમસ્યન્તઃ=નમસ્કુર્વન્તઃ 'અભિમુહા' અભિમુઘ્નાઃ 'વિણણં' વિનયેન
'પંજલિહા' પ્રાંજલિપુટાઃ—બદ્ધાંજલયઃ પજ્જુવાસંતિ' પર્યુપાસતે=સેવન્તે ॥સૂ. ૩૩॥ ॥

બાર (આયાહિણપયાહિણં) અંજલિપુટ બાંધ કર ઉસે દક્ષિણ કાન સે લગા કર મસ્તક કે
પાસ સે બાયેં કાન તક ચક્રાકાર ઘુમાતે હુણ પુનઃ મસ્તક પર (કરેંતિ) રચતે થે; (કરિત્તા)
રચકર (વંદંતિ નમંસંતિ) વન્દના કરતે થે, નમસ્કાર કરતે થે, (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વન્દના
નમસ્કાર કરકે (સાં સાં નામગોયાં સાવેંતિ) અપને અપને નામ એવં ગોત્રોં કા ઉચ્ચારણ
કરતે થે । (ણચ્ચાસણે ણાહૂરે સુસ્સૂસમાણા નમંસમાણા અભિમુહા વિણણં પંજલિ-
હા પજ્જુવાસંતિ) ન અતિસમીપ ઓર ન અતિ દૂર હી, અર્થાત્—ભગવાન સે થોડી દૂર પર
ભગવાન કે સામને વૈઠ કર વિનયપૂર્વકં દોનોં હાથ જોડ કર સેવા કરને લગે ॥ સૂ. ૩૩ ॥

જમણા કાનથી લઈને મસ્તકની પાસેથી હાથા કાન સુધી ચક્રાકાર ફેરવીને,
ફરીને મસ્તક પર (કરેંતિ) રાખતા હતા. (કરિત્તા) રાખીને (વંદંતિ નમંસંતિ)
વંદન કરતા હતા, નમસ્કાર કરતા હતા. (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વંદના—નમસ્કાર
કરીને (સાં સાં નામગોયાં સાવેંતિ) પોત-પોતાનાં નામ એવં ગોત્રનાં
ઉચ્ચારણ કરતા હતા. (ણચ્ચાસણે ણાહૂરે સુસ્સૂસમાણા નમંસમાણા અભિમુહા
વિણણં પંજલિહા પજ્જુવાસંતિ) બહુ સમીપ નહિ, તેમ બહુ દૂર નહિ,
અર્થાત્ ભગવાનથી થોડે જ દૂર ભગવાનની સામે એસીને વિનયપૂર્વક બન્ને
હાથ જોડી સેવા કરવા લાગ્યા. (સૂ. ૩૩)

**મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ મહા-
વીરસ્સ બહવે અસુરિંદવજ્જિયા ભવણવાસી દેવા અંતિયં પાઉબ્ભ-**

ટીકા—અવશિષ્ટાન્ ભવનવાસિનો વર્ણયન્નાહ—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ इत्यादि ।

તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ‘સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ’ શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય, ‘બહવે અસુરિંદવજ્જિયા ભવણવાસી દેવા અંતિયં’ બહવોઽસુરેન્દ્રવર્જિતા ભવનવાસિનો દેવા અન્તિકં ‘પાઉબ્ભવિત્થા’ પ્રાદુર્ભૂવુઃ—ભગવતઃ શ્રીમહાવીરસ્ય સમીપે પ્રાદુર્ભૂતા इत्यर्थઃ । ભવનવાસિદેવાનાં જાતિભેદમાશ્રિત્ય દશ ભેદા ભવન્તિ, તથાહિ—
અસુરાઃ=અસુરકુમારાઃ નાગકુમારાઃ સુપર્ણકુમારાઃ વિદ્યુત્કુમારાઃ અગ્નિકુમારાઃ દ્વીપ-
કુમારાઃ ઉદધિકુમારા દિશાકુમારાઃ પવનકુમારા સ્તનિતકુમારાશ્ચેતિ । કુમારવત્ ક્રીડન-
પરાશ્ચૈતે કુમારા ઉચ્યન્તે । ભવનેષુ=પાતાલલોકદેવાઽઽવાસવિશેષેષુ વસન્તિ તચ્છીલા ભવન-

ભગવાન કે નિકટ આયે હુઐ ભવનવાસી દેવોં કે ભેદસ્વરૂપ અસુરકુમારોંકા વર્ણન કર, અબ સૂત્રકાર અવિશિષ્ટ ભવનવાસી દેવોં કા વર્ણન કરતે હૈં—‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि ।

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસ કાલ ઔર ઉસ સમય મેં (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કે (અંતિયં) પાસ (બહવે) અનેક (અસુરિંદવજ્જિયા) અસુરેન્દ્રોં કો છોડકર (ભવણવાસી દેવા) ભવનવાસી દેવ (પાઉબ્ભવિત્થા) પ્રકટિત હુઐ ।
इन भवनवासी देवों के दस भेद, जाति भेदको लेकर होते हैं । जैसे—असुरकुमार १, नाग-
कुमार २, सुपर्णकुमार ३, विद्युत्कुमार ४, अग्निकुमार ५, द्वीपकुमार ६, उदधिकुमार ७,
दिशाकुमार ८, पवनकुमार ९, स्तनितकुमार १० । कुमार की तरह ये क्रीडा करने में
सदा तत्पर रहते हैं, इसलिये इनकी कुमार संज्ञा है । पाताल लोक में जो देवों के आवास-

ભગવાનની પાસે આવેલા ભવનવાસી દેવોના ભેદ-સ્વરૂપ અસુર કુમા-
રોનું વર્ણન કરે છે.—‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि. (તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ
અને તે સમયમાં (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની
(અંતિયં) પાસે (બહવે) અનેક (અસુરિંદવજ્જિયા) અસુરેન્દ્રો છોડીને બીજા
(ભવનવાસી દેવા) ભવનવાસી દેવો (પાઉબ્ભવિત્થા) પ્રગટ થયા. આ ભવનવાસી
દેવોના દશ ભેદ જાતિભેદને લઈને થાય છે; જેમકે—અસુરકુમાર ૧, નાગ-
કુમાર ૨, સુપર્ણકુમાર ૩, વિદ્યુત્કુમાર ૪, અગ્નિકુમાર ૫, દ્વીપકુમાર ૬,
ઉદધિકુમાર ૭, દિશાકુમાર ૮, પવનકુમાર ૯, સ્તનિતકુમાર ૧૦.
કુમાર—બાળકની પેઠે તેઓ ક્રીડા કરવામાં સદા તત્પર રહે છે એ કારણથી
તેમની કુમાર સંજ્ઞા છે. પાતાલ લોકમાં જે દેવોના આવાસ-વિશેષ છે તેમાં
તેઓ રહે છે તે કારણથી તેઓ ભવનવાસી કહેવાય છે. સૂત્રકાર આવા

વિત્થા-નાગપદ્મો સુવર્ણા વિજ્ઞૂ અગ્નીયદીવ ઉદહી દિસાકુમા-
રા ય પવર્ણા થણિયા ય ભવર્ણવાસી નાગફડા-ગરુલ-વડર-પુર્ણ-

વાસિન ઇત્યુચ્યન્તે—ભવનવાસિનામેતેષુ દશસુ ભેદેષુ પ્રથમભેદં પરિત્યજ્ય નવ ભેદાનત્ર દર્શયતિ—
'નાગપદ્મો' નાગપતયો—નાગકુમારાઃ । 'સુવર્ણા' સુપર્ણકુમારાઃ । 'વિજ્ઞૂ'—વિદ્યુત્કુમારાઃ
'અગ્નીય' અગ્નિકુમારાશ્ચ । 'દીવા' દ્વીપકુમારાઃ । 'ઉદહી' ઉદધિકુમારાઃ । 'દિસા-
કુમારા ય' દિશાકુમારાશ્ચ 'પવર્ણા' પવનકુમારાઃ 'થણિયા ય' સ્તનિત-
કુમારાશ્ચ । એતે 'ભવર્ણવાસી' ભવનવાસિનઃ । એતેષાં નાગકુમારાદીનાં નાગફળાદીનિ
ચિહ્નાનિ ભવન્તિ, તાનિ ક્રમશો દર્શયન્નાહ—'નાગફડા—ગરુલ—વડર—પુર્ણકલસ—
સિંહ—હયવર—ગયંક—મયરંક—વરમઉડ—વદ્ધમાળ—ગિજ્જુત્ત—વિચિત્ત—ચિંધગયા' નાગફળા-
ગરુડ-વજ્ર-પૂર્ણકલશ-સિંહ-હયવર-ગજાઙ્ક-મકરાઙ્ક-વરમુકુટ-વદ્ધમાન-નિર્યુક્ત-વિચિત્ર-ચિહ્નગતાઃ-
નાગકુમારાણાં મુકુટેષુ નાગફળાચિહ્નનાનિ, સુપર્ણકુમારાણાં મુકુટેષુ ગરુડચિહ્નનાનિ, વિદ્યુત્કુમારાણાં
મુકુટેષુ વજ્રચિહ્નાનિ, અગ્નિકુમારાણાં મુકુટેષુ પૂર્ણકલશચિહ્નનાનિ, દ્વીપકુમારાણાં મુકુટેષુ સિંહચિ-

વિશેષ હૈં ઉનમૈં યે રહતે હૈં, ઇસલિયે યે ભવનવાસી કહલાતે હૈં । સૂત્રકાર ઇન્હીં ભવનવાસિયોં
કે પ્રથમ ભેદકો છોડકર અન્ય નૌ ભેદોં કો યહાં બતલા રહે હૈં—(નાગપદ્મો) નાગપતિ—
નાગકુમાર (સુવર્ણા) સુપર્ણકુમાર (વિજ્ઞૂ) વિદ્યુત્કુમાર (અગ્નીય) અગ્નિકુમાર (દીવા)
દ્વીપકુમાર (ઉદહી) ઉદધિકુમાર (દિસાકુમારા ય) દિશાકુમાર (પવર્ણા) પવનકુમાર
(થણિયા ય) સ્તનિતકુમાર (ભવર્ણવાસી) યે ઇસ પ્રકાર ભવનવાસી દેવોં કે ભેદ હૈં ।
ઇનમૈં (નાગફડા—ગરુલ—વડર—પુર્ણકલસ—સિંહ—હયવર—ગયંક—મયરંક—વરમઉડ—
વદ્ધમાળ—ગિજ્જુત્ત—વિચિત્ત—ચિંધ—ગયા) નાગકુમારોં કે મુકુટમૈં નાગકી ફળાકા ચિહ્ન
હૈ ॥૧॥ સુપર્ણકુમારોં કે મુકુટમૈં ગરુડકા ચિહ્ન હૈ ॥૨॥ વિદ્યુત્કુમારોં કે મુકુટોં મૈં વજ્રકા
ચિહ્ન હૈ ॥૩॥ અગ્નિકુમારોં કે મુકુટોં મૈં પૂર્ણકલશકા ચિહ્ન હૈ ॥૪॥ દ્વીપકુમારોં કે મુકુટોં

ભવનવાસિઓના પ્રથમ ભેદ છોડીને અહીં બીજા નવ ભેદોને
બતાવે છે—(નાગપદ્મો) નાગપતિ—નાગકુમાર (સુવર્ણા) સુપર્ણકુમાર (વિજ્ઞૂ)
વિદ્યુત્કુમાર (અગ્નીય) અગ્નિકુમાર, (દીવા) દ્વીપકુમાર (ઉદહી) ઉદધિકુમાર
(દિસાકુમારા ય) દિશાકુમાર (પવર્ણા) પવનકુમાર (થણિયા ય) સ્તનિતકુમાર;
(ભવર્ણવાસી) આ દશ પ્રકારે ભવનવાસી દેવોના ભેદ છે. આમાં (નાગફડા-
ગરુલ-વડર-પુર્ણકલસ-સિંહ-હયવર-ગયંક-મયરંક—વરમઉડ-વદ્ધમાળ—ગિજ્જુત્ત—
વિચિત્ત-ચિંધ-ગયા) નાગકુમારોના મુકુટમાં નાગની ક્ષણાનું ચિહ્ન છે ૧.
સુપર્ણકુમારોના મુકુટમાં ગરુડનું ચિહ્ન છે ૨. વિદ્યુત્કુમારોના મુકુટમાં

કલસ-સીહ-હયવર-ગયંક-મયરંક-વર-મઉડ-વદ્ધમાળ-ગિજ્જુત્ત-વિ-
ચિત્ત-ચિંધગયા સુરુવા મહિડિઢયા, સેસં તં ચેવ જાવ પજ્જુવા-
સંતિ ॥ સૂ૦ ૩૪ ॥

હુનાનિ, ઉદધિકુમારાણાં મુકુટેષ્વશ્ચચિહ્નાનિ, દિશાકુમારાણાં મુકુટેષુ હસ્તિચિહ્નાનિ, પવન-
કુમારાણાં વરમુકુટેષુ મકરચિહ્નાનિ, તથા સ્તનિતકુમારાણાં મુકુટેષુ વર્ધમાનચિહ્નાનિ ભવન્તિ, તાનિ
નાગફળાદીનિ વર્ધમાનાન્તાનિ 'નિજુત્ત' નિર્યુક્તાનિ-મુકુટેષુ સ્થિતાનિ, 'વિચિત્ત'વિચિત્રાણિ-નાના-
વિધાનિ, 'ચિંધ' ચિહ્નાનિ ગતાઃ=પ્રાપ્તાઃ એ તે તથા, નાગફળાદીનિ વર્ધમાનાન્તાનિ યથા-
સ્થાનસ્થિતાનિ વિચિત્રરૂપાણિ લક્ષણાનિ તેષાં મુકુટેષુ ભવન્તીત્યથઃ । 'સુરુવાઃ' સુરૂપાઃ—
સુન્દરાઽઽકારાઃ । 'મહિડિઢયા'—મહર્દ્ધિકાઃ—મહત્યા ઋદ્ધિચા યુક્તાઃ । 'સેસં તં ચેવ' શંષં
તદેવ—શંષમ્=અવશિષ્ટં તદેવ=પૂર્વવદેવ વાચ્યમ્, ક્રિયદવધિ વાચ્યમ્ ? ઇત્યાહ—'જાવ
પજ્જુવાસંતિ' યાવત્ પર્યુપાસતે-ઇતિ । તે નાગકુમારાદયઃ નવનિકાયભવનવાસિદેવાઃ અમુર-
કુમારવદ્ ભગવન્તં સેવન્તે ઇતિ ભાવઃ ॥સૂ૦ ૩૪ ॥

મેં સિંહકા ચિહ્ન છે ॥૫॥ ઉદધિકુમારોં કે મુકુટોં મેં અશ્વકા ચિહ્ન છે ॥૬॥ દિશાકુમારોં કે
મુકુટોં મેં હાથીકા ચિહ્ન છે ॥૭॥ પવનકુમારોં કે ઉત્તમ મુકુટોં મેં મગરકા ચિહ્ન છે ॥૮॥
તથા સ્તનિતકુમારોં કે મુકુટોં મેં વર્ધમાન (સ્વસ્તિક) કા ચિહ્ન છે ॥૯॥ એ સબ ચિહ્ન નિર્યુક્ત-
યથાસ્થાન સ્થિત છે, ઓર વિચિત્ર રૂપવાલે છે । (સુરુવા) એ સબ દેવ સુન્દર આકાર સંપન્ન,
એવં (મહિડિઢયા) મહતી ઋદ્ધિ સે યુક્ત છે । (સેસં તં ચેવ જાવ પજ્જુવાસંતિ) એ સબ
ભવનવાસી દેવોં કા નૌ પ્રકાર કે નિકાય અમુરકુમાર દેવોંકી તરહ ભગવાન કી સેવા કરને
લ્ગે ॥ સૂ૦ ૩૪ ॥

વજ્જનુ' ચિહ્ન છે ૩. અગ્નિકુમારોના મુકુટમાં પૂર્ણ-કલશનું ચિહ્ન છે ૪.
દ્વીપકુમારોના મુકુટમાં સિંહનું ચિહ્ન છે ૫. ઉદધિકુમારોના મુકુટમાં
અશ્વનું ચિહ્ન છે ૬. દિશાકુમારોના મુકુટમાં હાથીનું ચિહ્ન છે ૭.
પવનકુમારોના મુકુટમાં મગરનું ચિહ્ન છે ૮. તથા સ્તનિતકુમારોના મુકુ-
ટમાં વર્ધમાન (સ્વસ્તિક)નું ચિહ્ન છે ૯. આ બધાં ચિહ્નો નિર્યુક્ત-યથાસ્થાન
હોય છે. અને વિચિત્ર-રૂપવાળાં હોય છે. (સુરુવા) આ બધા દેવો સુંદર
આકાર-સંપન્ન, એવં (મહિડિઢયા) મહાન ઋદ્ધિથી યુક્ત હોય છે. (સેસં તં ચેવ
જાવ પજ્જુવાસંતિ) આ બધા ભવન-વાસી દેવોના નવ પ્રકારના નિકાય અમુર
કુમાર દેવોની પેઠે ભગવાનની સેવા કરવા લાગ્યા. (સૂ. ૩૪).

**મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ
બહવે વાણમંતરા દેવા અંતિયં પાઉબ્ભવિત્થા-પિસાય-ભૂયા ય જક્ક-**

ટીકા—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ इत्यादि। तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमण-
स्य भगवतो महावीरस्य ‘बहवे वाणमंतरा देवा अंतियं पाउब्भवित्था’ बहवो व्यन्तरा
देवा अन्तिके प्रादुर्बभूवुः, तत्र व्यन्तरा-अन्तरम्=अवकाशः, तच्चेहाश्रयरूपम्; विविधम् अन्तरं=
पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा आश्रयरूपं येषां ते व्यन्तराः—देवविशेषाः, यद्वा-‘वाणमन्तरा’
इतिच्छाया। तत्रेयं व्युत्पत्तिः—वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः, पृषोदरा-
दित्वान्मध्ये मकारागमः। भगवन्महावीरस्वामिसन्निधौ समवसरणे व्यन्तरा देवाः प्रकटीभूता
इत्यर्थः, ते कतिविधाः ? अत्राऽऽह — ‘पिसाय-भूया य’ पिशाचाः १, भूताश्च

‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि।

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) उस काल और उस समय में (समणस्स भगवओ
महावीरस्स) श्रमण भगवान महावीर के (अंतियं) समीप (बहवे) अनेक (वाणमंतरा देवा)
व्यंतर देव (पाउब्भवित्था) आये। व्यन्तर इनका नाम इसलिये है कि इनका अन्तर=अव-
काश अर्थात् निवासस्थान अनेक प्रकार के हैं, जैसे—पर्वत, गिरिकन्दरा, वन आदि।
अथवा—‘वाणमन्तर’ की संस्कृत छाया ‘वानमन्तर’ भी होती है। वनान्तरों में—वनों के
मध्य में—जिनका रहना हो वे वानमन्तर हैं। ये वानमन्तर भगवान महावीर के समवसरण
में उपस्थित हुए। ये व्यन्तर देव कितने प्रकार के हैं? इस प्रकार की आशंका होने पर
सूत्रकार उसका समाधान करते हुए उनके भेदों को गिनाते हैं—(पिसाय-भूया य जक्क-

‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ અને તે સમયને વિષે (સમણસ્સ
ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરની (અંતિયં) પાસે (બહવે)
અનેક (વાણમંતરા દેવા) વ્યંતર દેવો (પાઉબ્ભવિત્થા) આવ્યા. વ્યંતર એવું
તેમનું નામ એ કારણથી છે કે તેમનું અન્તર-અવકાશ, અર્થાત્—નિવાસ
સ્થાન, અનેક પ્રકારનું છે; જેમકે પર્વતો, પર્વતોની શુક્રા, તથા વન આદિ.
અથવા ‘વાણમંતર’ની સંસ્કૃત છાયા ‘વાનમન્તર’ થાય છે. વનાન્તરોમાં—વનોના
મધ્યમાં—જેમનું રહેવાનું થાય તે વાનમન્તર છે. આ વાનમન્તર ભગવાન
મહાવીરના સમવસરણમાં ઉપસ્થિત થયા. આ વ્યન્તર દેવ કેટલા પ્રકારના
છે ? આવી શંકાનું સમાધાન કરતાં સૂત્રકાર તેના ભેદો કહે છે—(પિયાસ-

રક્ષસા કિન્નર-કિંપુરિસ-ભુયગપદ્મો ય મહાકાયા ગંધર્વ-ણિકાય-
ગણા ણિઉગ-ગંધર્વગીય-રદ્મો અણવણિય-પણવણિય-ઇસિવા-
ઇય-ભૂયવાઇય-કંદિય-મહાકંદિયા ય કુહંડ-પયયદેવા ચંચલ-ચ-

૨, 'જક્ષ-રક્ષસા' યક્ષાઃ ૩, રાક્ષસાઃ ૪, 'કિન્નર-કિંપુરિસ-ભુયગપદ્મો' કિન્નર-કિંપુરુષ-ભુજગપતયઃ-કિન્નરાઃ ૫, કિંપુરુષા ૬, ભુજગપતયઃ-મહોરગાઃ ૭, 'મહાકાયા' મહાકાયાઃ=વિશાલશરીરધારિણઃ, ૮, 'ગંધર્વ-ણિકાય-ગણા' ગન્ધર્વનિકાયગણાઃ-ગન્ધર્વસમૂહગણાઃ, ગન્ધર્વજાતય इत्यर्थः, 'ણિઉગ-ગંધર્વ-ગીય-રદ્મો' નિપુગ-ગાન્ધર્વ-ગીત-રતયઃ-નિપુગ-પ્રશસ્તં, ગાન્ધર્વ=નાટ્યોપેતં ગાનં, ગીતઞ્ચ નાટ્યચર્વર્જિતગાનં, તત્ર રતિર્યેષાં તે તથા, 'અણવણિય-પણવણિય-ઇસિવાઇય-ભૂયવાઇય-કંદિય-મહાકંદિયા ય કુહંડ-પયય-દેવા' અપ્રજ્ઞતિક-પદ્મપ્રજ્ઞતિક-ઋષિવાદિક-ભૂતવાદિક-કન્દિત-મહાકન્દિતાશ્ચ કૂષ્માણ્ડ-પતંગદેવાઃ-એતેઽષ્ટૌ વ્યતરા નિકાયવિશેષભૂતા રત્નપ્રમાપૃથિવ્યા ઉપરિતનયોજન-

રક્ષસા કિન્નર-કિંપુરિસ-ભુયગપદ્મો ય મહાકાયા ગંધર્વણિકાયગણા) પિશાચ ૧, ભૂત ૨, યક્ષ ૩, રાક્ષસ ૪, કિન્નર ૫, કિંપુરુષ ૬, ભુજગપતિ ૭, એવં વિશાલ શરીર ધારણ કરનેવાલા મહોરગ ૮, ગંધર્વનિકાયગણ, અર્થાત્-ગન્ધર્વ ૯, એ વ્યન્તર દેવ હૈં । એ સર્વ (ણિઉગ-ગંધર્વ-ગીય-રદ્મો) પ્રશસ્ત નાટકીયગાન મેં એવં નાટ્યચર્વર્જિત ગાનવિદ્યા મેં રતિ રક્ષનેવાલે હોતે હૈં । (અણવણિય-પણવણિય-ઇસિવાઇય-ભૂયવાઇય-કંદિય-મહા-કંદિયા ય કુહંડ-પયયદેવા) અપ્રજ્ઞતિક, પદ્મપ્રજ્ઞતિક, ઋષિવાદિક, ભૂતવાદિક, કન્દિત, મહાકન્દિત, કૂષ્માણ્ડ ઓર પતંગદેવ; એ મી આઠ વ્યન્તરનિકાય કે દેવ હૈં । ઇન સર્વ કા નિવાસ રત્નપ્રમાપૃથિવી કે ઊપરી ભાગ મેં ૧૦૦ યોજન તક હૈં । એ કૈસે હોતે હૈં ? સો

ભૂયા ય જક્ષ-રક્ષસા કિન્નર-કિંપુરિસ-ભુયગપદ્મો ય મહાકાયા ગંધર્વણિકાય-ગણા) પિશાચ ૧, ભૂત ૨, યક્ષ ૩, રાક્ષસ ૪, કિન્નર ૫, કિંપુરુષ ૬, ભુજગપતિ ૭, એવં વિશાલ શરીર ધારણ કરવાવાળા મહોરગ ૮, ગંધર્વ નિકાયગણ અર્થાત્ ગંધર્વ ૯, એ વ્યન્તર દેવ છે. આ બધા (ણિઉગ-ગંધર્વ-ગીય-રદ્મો) પ્રશસ્ત નાટકીય ગાનમાં, તેમજ નાટ્ય-ચર્વર્જિત ગાનવિદ્યામાં પ્રેમ રાખવાવાળા હોય છે. (અણવણિય-પણવણિય-ઇસિવાઇય-ભૂયવા-ઇય-કંદિય-મહાકંદિયા ય કુહંડ-પયય-દેવા) અપ્રજ્ઞતિક, પદ્મપ્રજ્ઞતિક, ઋષિ-વાદિક, ભૂતવાદિક, કન્દિત, મહાકન્દિત, કૂષ્માણ્ડ અને પતંગદેવ આ પણ આઠ વ્યન્તર નિકાયના દેવ છે. આ બધાનો નિવાસ રત્નપ્રભા પૃથ્વીના ઉપરના ભાગમાં ૧૦૦ યોજન સુધી છે. તેઓ કેવા હોય છે ? તે કહે છે-(ચંચલ-

ચલ-ચિત્ત-કીલણ-દ્રવપ્પિયા ગંભીર-હસિય-ભણિય-પીયગીય-ગચ્છ- ગ-રડે વળમાલા-મેલ-મડક-કુંડલ-સચ્છંદ-વિઝવિયાહરણ-ચારુ-

શતવર્ત્તિનઃ, તે કીદૃશાઃ? અત્રાઽઽહ—‘ચંચલ-ચલ-ચિત્ત-કીલણ-દ્રવપ્પિયા’ ચચ્ચલ-ચપલ-ચિત્ત-ક્રીડન-દ્રવ-પ્રિયાઃ—ચચ્ચલાદપિ ચપલાનિ ચિત્તાનિ યેષાં તે ચચ્ચલચપલચિત્તાઃ=અતિચપલ-માનસાઃ, ક્રીડનં—ક્રીડા, દ્રવશ્ચ પરિહાસઃ ક્રીડાદ્રવૌ પ્રિયૌ-યેષાં તે ક્રીડાદ્રવપ્રિયાઃ, તતઃ પદ-દ્વયસ્ય કર્મધારયઃ । ‘ગંભીર-હસિય-ભણિય-પીય-ગીય-ગચ્છ-ગ-રડે’ ગમ્ભીર-હસિત-ભણિત-પ્રિય-ગીત-નર્તન-રતયઃ-ગમ્ભીરમ્=ઇતરૈરજ્ઞેયં હસિતં—હાસ્યમ્, ભણિતં—વાક્પ્રયોગઃ, પ્રિયં યેષાં તે ગમ્ભીર-હસિત-ભણિત-પ્રિયાઃ, ગીતનર્તનયો રતિર્યેષાં તે ગીતનર્તનરતયઃ, તતઃ પદદ્વયસ્ય કર્મધારયઃ । ‘વળમાલા-મેલ-મડક-કુંડલ-સચ્છંદ-વિઝવિયા-હરણ-ચારુ-વિભૂષણ-ધરા’ વળમાલા-ઽઽમેલ-મુકુટ-કુણ્ડલ-સ્વચ્છંદ-વિકુર્વિતાઽઽભરણ-ચારુ-વિભૂષણ-ધરા :—વળમાલા—રત્નાદિમયાઽઽભરણવિશેષઃ, આમેલઃ—પુષ્પરચિતાલંકારવિશેષઃ, મુકુટં=સુવર્ણમયશિરોભૂષણમ્, કુણ્ડલં-કર્ણાઽભરણમ્, એતદતિરિક્તાનિ-સ્વચ્છંદવિકુર્વિતાનિ=સ્વાભિપ્રાયानુસારાત્સવઃ પ્રકટીકૃતાનિ આભરણાનિ,

કહતે હૈં—(ચંચલ-ચલ-ચિત્ત-કીલણ-દ્રવ-પ્પિયા) અતિ ચપલ ચિત્તવાલે યે વ્યન્તર દેવ, ક્રીડા એવં પરિહાસ-પ્રિય હુઆ કરતે હૈં । (ગંભીર-હસિય-ભણિય-પીય-ગીય-ગચ્છ-ગ-રડે) દૂસરો દ્વારા અજ્ઞેય એસે હસિત-હસને મેં તથા બોલને કી ચતુરાઈ મેં યે વિશેષ નિપુણ હોતે હૈં, અથવા હસિત એવં ભણિત; યે દો વાતેં ઇન્હેં વિશેષ પ્રિય હોતી હૈં । ગીત ઓર નર્તન મેં ઇન્હેં વિશેષ અનુરાગ હોતા હૈં । (વળમાલા-મેલ-મડક-કુંડલ-સચ્છંદ-વિઝવિયા-હરણ-ચારુ-વિભૂષણ-ધરા) વળમાલા-રત્નાદિ દ્વારા નિર્મિત આભરણવિશેષ, આમેલક-પુષ્પો દ્વારા રચિત અલંકાર વિશેષ, મુકુટ-સુવર્ણમયશિરોભૂષણ, કુંડલ-કર્ણાભરણ, એવં અપની ઇચ્છાનુસાર નિષ્પાદિત ઓર મી અન્ય આભરણ યે હી જિનકે સુહાવને આભૂષણ

ચલ-ચિત્ત-કીલણ-દ્રવ-પ્પિયા) બહુ જ ચંચલ ચિત્તવાળા તે વ્યન્તર દેવ ક્રીડા એવં પરિહાસપ્રિય હોય છે. (ગંભીર-હસિય-ભણિય-પીય-ગીય-ગચ્છ-ગ-રડે) બીજાથી ન બાણી શકાય એવા હસિત-હસવામાં તેમ જ ભણિત-બોલવામાં તેઓ વિશેષ નિપુણ હોય છે. અથવા હસિત એવં ભણિત આ બે વાતો તેમને વિશેષ પ્રિય હોય છે. ગીત અને નાચમાં તેમને વિશેષ અનુરાગ હોય છે. (વળમાલા-મેલ-મડક-કુંડલ-સચ્છંદ-વિઝવિયા-હરણ-ચારુ-વિભૂષણ-ધરા) વળમાલા-રત્નાદિ દ્વારા નિર્મિત આભરણ વિશેષ, આમેલ-પુષ્પો દ્વારા રચિત અલંકાર વિશેષ, મુકુટ-સુવર્ણમય શિરોભૂષણ, કુંડલ-કર્ણાભરણ, તેમ જ પોતાની ઇચ્છા-નુસાર નિષ્પાદિત બીજાં પણ આભરણો; એ જ જેમનાં સોહામણાં આભૂષણો છે

વિભૂસણ-ધરા સઽવોઝય-સુરભિ-કુસુમ-સુરઙ્ગય-પલંબસોમંત-કંત-
વિયસંત-ચિત્ત-વણમાલ-રઙ્ગય-વચ્છા કામગમા કામરૂવધારી ણા-
ણાવિહ-વણ-રાગ--વરવત્થ--ચિત્ત-ચિલ્લય-ણિયંસણા વિવિહ-દેસ-

તાન્યેવ ચારુવિભૂષણાનિ તેષાં ધરાઃ। ‘સઽવોઝય-સુરભિ-કુસુમ-સુરઙ્ગય-પલંબ-સોમંત-કંત-
-વિયસંત-ચિત્ત-વણમાલ-રઙ્ગય-વચ્છા’ સર્વર્તુ-સુરભિ-કુસુમ-સુરચિત-પ્રલમ્બ-શોભમાન-કાન્ત-
વિકસચિત્રવનમાલા-રતિદ-વક્ષસઃ-સર્વેષુ ઋતુષુ સુરભીણિ યાનિ કુસુમાનિ તૈઃ સુરચિતા પ્રલમ્બા ચ
શોભમાના ચ કાન્તા ચ વિકસન્તી ચ ચિત્રા=વિચિત્રા ચાસૌ વનમાલા=પુષ્પસ્રક્, તથા રતિ-
દાનિ=સુન્દરાણિ વક્ષાંસિ યેષાં તે તથા, ‘કામગમા’ કામગામિનઃ-ઈચ્છાગામિનઃ। ‘કામ-
રૂવધારી’ કામરૂપધારિણઃ-સ્વેચ્છાનુસારરૂપધારકાઃ। ‘ણાણાવિહ-વણ-રાગ-વરવત્થ-
ચિત્ત-ચિલ્લિય-ણિયંસણા’ નાનાવિધ-વર્ણ-રાગ-વરવસ્ત્ર-ચિત્ર-દેદીપ્યમાન-નિવસનાઃ-નાનાવિધ-
વર્ણો રાગો યેષુ તાનિ-નાનાવિધવર્ણરાગાણિ તાનિ તથાભૂતાનિ વરવસ્ત્રાણિ ચિત્રાણિ-વિચિત્રાણિ
‘ચિલ્લિય’ દેદીપ્યમાનાનિ, નિવસનાનિ=પરિધાનાનિ યેષાં તે તથા, ‘ચિલ્લિય’ ઇતિદેશીયશબ્દઃ;
રક્તાદિબહુવિધપરિધાનવસનાનિ પરિધાના ઇત્યર્થઃ। ‘વિવિહ-દેસણેવચ્છ-ગહિય-વેસા’
વિવિધ-દેશ-નેપથ્ય-ગૃહીત-વેષાઃ-વિવિધાનામ્=અનેકેષાં દેશાનાં નેપથ્યૈઃ=પ્રસાધનવિશેષૈઃ ગૃહીતઃ

હૈં। (સઽવોઝય-સુરભિ-કુસુમ-સુરઙ્ગય-પલંબ-સોમંત-કંત-વિયસંત-ચિત્ત-વન-
માલ-રઙ્ગય-વચ્છા) इनके वक्षःस्थल, सदा समस्त ऋतुओं के सुरभित पुष्पों द्वारा रचित
लंबी २ सुन्दर विकसित चित्र-विचित्र वनमालाओं द्वारा सुहावने रहा करते हैं।
(कामगमा) इनका गमन इच्छानुसार हुआ करता है। (कामरूवधारी) इच्छानुसार
ये रूपों को धारण करते रहते हैं। (णाणाविह-वण-राग-वरवत्थ-चि-चिल्लिय-
णियंसणा) अनेक प्रकार के रंगवाले तथा चित्र-विचित्र प्रभावले ऐसे चमकते हुए
वस्त्रों को ये पहिरा करते हैं। (विविह-देसी-णेवचछ-गहिय-वेसा) अनेक देशों

(સઽવોઝય-સુરભિ-કુસુમ-સુરઙ્ગય-પલંબ-સોમંત-કંત-વિયસંત-ચિત્ત-વનમાલ-રઙ્ગય-વચ્છા)
તેમનાં વક્ષસ્થલ હમેશાં સમસ્ત ઋતુઓનાં સુંદર પુષ્પો દ્વારા બનાવેલી
લાંબીલાંબી સુંદર વિકસિત ચિત્ર-વિચિત્ર વનમાલાઓથી શોભાયમાન રહે છે.
(કામગમા) તેમનું ગમન ઇચ્છાનુસાર થતું હોય છે. (કામરૂવધારી) ઇચ્છા-
નુસાર તેઓ રૂપ ધારણ કરતા રહે છે. (ણાણાવિહ-વણ-રાગ-વરવત્થ-ચિત્ત-ચિલ્લિય-
ણિયંસણા) અનેક પ્રકારના રંગવાળાં તથા ચિત્રવિચિત્ર પ્રભાવાળાં એવાં
ચમકદાર વસ્ત્રો તેઓ પહેરે છે. (વિવિહ-દેસી-ણેવ-ચ્છગહિય-વેસા) અનેક દેશોનો
તેઓ પોશાક પહેરે છે. (પમુઙ્ગય-કંદમ્પ-કલહ-કેલી-કોલાહલ-પિયા) પ્રમુદિતોના

નેવચ્છ-ગહિય-વેસા પમુડય-કંદપ્પ-કલહ-કેલી-કોલાહલ-પ્પિયા
 હાસ-બોલ-બહુલા અળેગ-મણિ-રયણ-વિવિહ-ણિજ્જુત્ત-વિચિત્ત-ચિં-
 ધગયા સુરુવા મહિડ્ડિયા જાવ પજ્જુવાસંતિ ॥ સૂ. ૩૫ ॥

—કૃતઃ વેષઃ—શરીરશોભાઽઽધાયકપ્રસાધનં યૈસ્તે તથા, તત્ર નેપથ્યં-‘પોશાક’-ઇતિભાષાપ્રસિદ્ધમ્,
 ‘પમુડય-કંદપ્પ-કલહ-કેલી-કોલાહલ-પ્પિયા’ પ્રમુદિત-કન્દર્પ-કલહ-કેલિ-કોલાહલ-પ્રિયાઃ-
 પ્રમુદિતાનાં યઃ કન્દર્પપ્રધાનઃ કલહઃ કેલી=ક્રીડા, તજ્જન્યઃ કોલાહલઃ—કલકલઃ પ્રિયો યેષાં
 તે તથા, કામકલહક્રીડાકોલાહલપરાયણા इत्यर्थः । ‘હાસ-બોલ-બહુલા’ હાસધ્વનિબહુલાઃ
 ‘અળેગ-મણિ-રયણ-વિવિહ-ણિજ્જુત્ત-વિચિત્ત-ચિંધ-ગયા’ અનેક-મણિ-રત્ન-વિવિધ-નિર્યુક્ત—
 વિચિત્ર-ચિહ્નગતાઃ—અનેકાનિ-યાનિ મણિરત્નાનિ તાનિ વિવિધનિર્યુક્તાનિ=વિવિધપ્રકારેણ યથાસ્થા-
 નસ્થિતાનિ, તાન્યેવ વિચિત્રચિહ્નાનિ તાનિ ગતાઃ=પ્રાપ્તાઃ । ‘સુરુવા’ સુરુપાઃ—સુન્દરાઽઽકારાઃ ।
 ‘મહિડ્ડિયા’ મહદ્વિકાઃ—મહાસમ્પત્તિયુક્તાઃ । ‘જાવ પજ્જુવાસંતિ’ યાવત્પર્યુપાસતે—આદ-
 ળિણપ્રદક્ષિણ-વન્દનાદીનિ પૂર્વવત્ કૃત્વા ભગવતઃ શ્રીમહાવીરસ્યાભિમુખે સ્થિતાઃ કૃતપ્રાન્નલિપુટાઃ
 ભગવન્તં શ્રીમહાવીરં સેવન્તે-ઇતિ ॥ સૂ. ૩૫ ॥

કી યે પોશાક ધારણ કિયે રહતે હૈં । (પમુડય—કંદપ્પ—કલહ—કેલી—કોલાહલ-પ્પિયા)
 પ્રમુદિતોં કા જો કન્દર્પપ્રધાન કલહ એવં ક્રીડા હોતી હૈં ઇસસે જન્ય જો કોલાહલ હોતા
 હૈં વહ ઇન્હેં અધિક પ્રિય રહા કરતા હૈં । (હાસ—બોલ—બહુલા) યે હાંસી—મજાક કરને
 મેં વડે ચતુર હોતે હૈં । (અળેગ—મણિ—રયણ—વિવિહ—ણિજ્જુત્ત—વિચિત્ત—ચિંધ—ગયા)
 અનેક મણિરત્ન, જો કિ વિવિધ પ્રકાર સે યથાસ્થાન પર નિવેશિત રહા કરતે હૈં વે હી જિનકે
 વિચિત્ર ચિહ્ન હૈં એસે, (સુરુવા) સુન્દર આકાર વિશિષ્ટ, (મહિડ્ડિયા) એવં મહાઋદ્ધિયુક્ત
 વે વ્યન્તર દેવ (જાવ પજ્જુવાસંતિ) પૂર્વવર્ણિત અસુરકુમારોં કી તરહ દોનોં હાથ
 જોડકર વંદના એવં નમસ્કાર કરકે પ્રમુ મહાવીર કી સેવા મેં સંલગ્ન હુએ ॥ સૂ. ૩૫ ॥

જે કન્દર્પપ્રધાન કલહ એવં ક્રીડા થાય છે તેમાંથી જે કોલાહલ ઉત્પન્ન
 થાય છે તે તેમને અધિક પ્રિય લાગે છે. (હાસ-બોલ-બહુલા) હાંસી-મજાક
 કરવામાં આ બધું જ ચતુર હોય છે. (અળેગ-મણિ-રયણ-વિવિહ-ણિજ્જુત્ત-વિચિત્ત-
 ચિંધ-ગયા) અનેક મણિરત્ન કે જે વિવિધ પ્રકારે યથાસ્થાન નિવેશિત રહે
 છે તે જ જેઓનાં વિચિત્ર ચિહ્ન છે. એવા (સુરુવા) સુંદર આકાર યુક્ત
 (મહિડ્ડિયા) એવં મહા-ઋદ્ધિયુક્ત તે વ્યન્તરદેવ (જાવ પજ્જુવાસંતિ) પૂર્વે કહેલા
 અસુરકુમારોની પેઠે બન્ને હાથ જોડી વંદના તેમજ નમસ્કાર કરીને પ્રભુ
 મહાવીરની સેવામાં લગ્ન થયા. (સૂ. ૩૫)

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ મહા-
વીરસ્સ જોહસિયા દેવા અંતિયં પાઠ્ઠમવિત્થા—વિહસ્સઈ ચંદ-
સૂર-સુક-સણિચ્છરા રાહૂ ધૂમકેતુ-બુહા ય અંગારકા ય તત્ત-તવણિજ્જ-

ટીકા—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે
શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘જોહસિયા દેવા અંતિયં પાઠ્ઠમવિત્થા’ જ્યોતિષ્કા દેવા અન્તિ-
કે પ્રાદુર્ભૂવુઃ—શ્રીમહાવીરસ્ય સમીપે પ્રકટીભૂતાઃ । નામભિજ્યોતિષ્કાન્ કથયતિ—‘વિહસ્સઈ’
બૃહસ્પતયઃ—જ્યોતિષ્કાગામસંખ્યાતત્વાત્ પ્રત્યેકં તે બહવઃ સન્તિ-ઇતિ । ‘ચંદ-સૂર-સુક-સ-
ણિચ્છરા’ ચન્દ્રસૂર્યશુક્રશનૈશ્વરાઃ, ‘રાહૂ’ રાહવઃ, ‘ધૂમકેતુ-બુહા ય’ ધૂમકેતુબુધાશ્ચ, ‘અંગા-
રકા ય’ અંગારકાઃ—મંગ્ગલાશ્ચ, કિંવર્ણા એતે ? ઇત્યાહ—તત્ત-તવણિજ્જ—કણગ-વણ્ણા’
તપ્ત-તપનીય-કનક-વર્ણાઃ—તપ્તતનીયં=રક્તસુવર્ણ, કનકં=પીતસુવર્ણ તદ્વર્ણો યેષાં તે તથા ।
કેચિદ્રક્તાઃ કેચિત્પીતા ઇત્યર્થઃ; તથા—જે ય ગહા જોહસંમિ ચારં ચરંતિ’ યે ચ ગ્રહા જ્યોતિષે

‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ ।

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસ કાલ એવં ઉસ સમય મેં (સમણસ્સ
ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે (અંતિયં) સમીપ (જોહસિયા
દેવા) જ્યોતિષી દેવ (પાઠ્ઠમવિત્થા) પ્રકટિત હુણ । જ્યોતિષી દેવોં કે યે નામ હૈં—
(વિહસ્સઈ ચંદ-સૂર-સુક-સણિચ્છરા રાહૂ, ધૂમકેતુ-બુહા ય અંગારકા ય)
બૃહસ્પતિ, ચંદ્ર, સૂર્ય, શુક્ર, શનૈશ્વર, રાહુ, ધૂમકેતુ, બુધ ઓર અંગારક-મંગલ । (તત્ત-
તવણિજ્જ-કણગ-વણ્ણા) યે દેવ તપ્તતપનીય-રક્ત સુવર્ણ ઓર કનક-પીત સુવર્ણ
ઇનકે સમાન વર્ણવાલે હોતે હૈં । (જે ય ગહા જોહસંમિ ચારં ચરંતિ) ઉક્ત સે અતિરિક્ત

‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ તેમજ તે સમયમાં (સમણસ્સ ભગ-
વઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (અંતિયં) પાસે (જોહસિયા દેવા)
જ્યોતિષી દેવ (પાઠ્ઠમવિત્થા) પ્રકટ થયા. જ્યોતિષી દેવોનાં નામ આ પ્રમાણે
છે—(વિહસ્સઈ ચંદ-સૂર-સુક-સણિચ્છરા રાહૂ ધૂમકેતુ-બુહા ય અંગારકા ય) બૃહસ્પતિ,
ચંદ્ર, સૂર્ય, શુક્ર, શનૈશ્વર, રાહુ, ધૂમકેતુ, બુધ અને અંગારક-મંગલ. (તત્ત-
તવણિજ્જ-કણગ-વણ્ણા) તે દેવો તપ્ત તપનીય-રક્ત સુવર્ણ અને કનક-પીળાં
સુવર્ણના જેવા વર્ણવાળા હોય છે. અર્થાત કેટલાએક લાલવર્ણવાળા તથા
કેટલાએક પીળાવર્ણવાળા હોય છે. (જે ય ગહા જોહસંમિ ચારં ચરંતિ) ઉક્ત-

કળગ-વળ્ળા, જે ય ગહા જોડસંમિ ચારં ચરંતિ કેઝુ યગરૂડયા
અઢાવીસવિહા ય ણકલ્લત્તદેવગળા ણાળા-સંઠાળ-સંઠિયાઓ ય

ચારં ચરંતિ—ઁકાતિરિક્તા યે ગ્રહા જ્યોતિષે=જ્યોતિશ્ચક્રે—ચક્રવદ્વમાસમાને જ્યોતિ-
ર્મળ્ડલે ભ્રમણં કુર્વંતિ । બહુવાદ્ બહુવચનમ્ । ‘ કેઝુ ય ગરૂડયા ’ કેતવશ્ચ ગતિરચિતા:—
કેતવો—જલકેત્વાદયઃ, કિમ્ભૂતાઃ? અત્રાઽઽહ—ગતિરચિતા:—મનુષ્યલોકાઽપેક્ષયા ગતિમન્તઃ ।

‘અઢાવીસવિહા ય ણકલ્લત્ત-દેવ-ગળા ’ અષ્ટાવિંશતિવિધાશ્ચ નક્ષત્રદેવગળા:—અષ્ટાવિંશ-
તિર્નક્ષત્રદેવતાઃ । અત્ર-પ્રસજ્ઞાદન્યેષામપિ જ્યોતિષ્કદેવાનાં સંખ્યા ઁચ્યન્તે—જ્યોતિષ્કદેવાઃ
પન્ચવિધાઃ ભવંતિ, સૂર્યાઃ ૧, ચન્દ્રમસઃ ૨, ગ્રહાઃ ૩, નક્ષત્રાણિ ૪, પ્રકીર્ણતારકાશ્ચ ૫,
તત્ર દ્વૌ સૂર્યૌ જમ્બૂદ્વીપે, લવળે ચત્વારઃ, ધાતકીલ્લળ્ડે દ્વાદશ, કાલોદધૌ દ્વિચત્વારિંશત્,
પુષ્કરાર્દ્ધે દ્વિસપ્તતિઃ—ઇન્યેવં મનુષ્યલોકે દ્વાત્રિંશદધિકં શતં સૂર્યાઃ સન્તિ, ચન્દ્રમસોઽપિ

જો ગ્રહ જ્યોતિશ્ચક્ર મેં—ચક્ર કી તરહ પ્રતિભાસમાન ઇસ જ્યોતિર્મળ્ડલમેં—ભ્રમળ કરતે
હેં વે (કેઝુ ય ગરૂડયા) જલકેતુ આદિ કેતુગ્રહ, જો કિ મનુષ્યલોક કી અપેક્ષા હી સદા
ગતિવિશિષ્ટ હેં । અર્થાત્ યહ સમસ્ત જ્યોતિશ્ચક્ર ઇસ મનુષ્યલોક રૂપ ઢાંઈ દ્વીપ મેં હી
ગતિ વિશિષ્ટ હેં, અન્યત્ર નહીં । (અઢાવીસવિહા ય ણકલ્લત્તદેવગળા) તથા જો અઢાંઈસ
(૨૬) પ્રકાર કે નક્ષત્ર જાતિ કે દેવતા હેં ।

યહાં પર પ્રસંગવશ અન્ય જ્યોતિષી દેવાં કી મી સંખ્યા કહતે હેં । જ્યોતિષી દેવ
પાંચ પ્રકાર કે હેં—સૂર્ય ૧, ચન્દ્રમા ૨, ગ્રહ ૩, નક્ષત્ર ૪, ઁર પ્રકીર્ણ તારા ૫ । ઇન
સર્વો મેં પ્રત્યેક કી સંખ્યા ઇસ પ્રકાર હે—જમ્બૂદ્વીપ મેં દ્વૌ સૂર્ય હેં, લવળ સમુદ્ર મેં ચાર સૂર્ય
હેં, ધાતકીલ્લળ્ડ મેં બારહ સૂર્ય હેં, કાલોદધિ મેં બયાલીસ સૂર્ય હેં ઁર પુષ્કરાર્દ્ધ મેં બહત્તર
સૂર્ય હેં । ઇસ પ્રકાર મનુષ્યલોક મેં સૂર્ય કી સંખ્યા ઁક સૌ વત્તીસ હે । ચન્દ્રમા કી સંખ્યા

વર્ણવેલાથી ખીલ્લ જે ગ્રહો જ્યોતિશ્ચક્રમાં—ચક્રની પેઢે પ્રતિભાસિત આ જ્યોતિ-
ર્મંડલમાં—ભ્રમણ કરે છે તે (કેઝુ ય ગરૂડયા) જળકેતુ આદિ કેતુગ્રહ કે જે મનુષ્ય-
લોકની અપેક્ષા જ હુમેશાં ગતિ—વિશિષ્ટ છે. અર્થાત્—આ સમસ્ત જ્યોતિશ્ચક્ર
આ મનુષ્યલોકરૂપ અઢી દ્વીપમાં જ ગતિવિશિષ્ટ છે, ખીજે નહિ. (અઢા-
વીસવિહા ય ણકલ્લત્ત-દેવગળા) તથા જે ૨૬ પ્રકારના નક્ષત્ર જાતિના દેવતા છે.

અઢી પ્રસંગવશ ખીલ્લ જ્યોતિષી દેવોની પણ સંખ્યા કહે છે. જ્યો-
તિષી દેવ પાંચ પ્રકારના છે—સૂર્ય ૧ ચન્દ્રમા ૨ ગ્રહ ૩ નક્ષત્ર ૪ તથા પ્રકીર્ણ-
તારા ૫. આ બધામાં પ્રત્યેકની સંખ્યા આ પ્રકારે છે—જમ્બૂદ્વીપમાં ૨ સૂર્ય
છે. લવળ સમુદ્રમાં ચાર સૂર્ય છે. ધાતકીલ્લળ્ડમાં ૧૨ સૂર્ય છે. કાલોદધિમાં
૪૨ સૂર્ય છે. તથા પુષ્કરાર્દ્ધમાં ૭૨ સૂર્ય છે. આ પ્રકારે મનુષ્યલોકમાં

પંચવળ્ણાઓ તારાઓ ઠિયલેસા ચારિણો ય અવિસ્સામમંડલગર્ઈ
પત્તેયં ણામંકપાગડિયચિંધમડા મહિડિઢયા જાવ પજ્જુવાસંતિ
॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

પ્રતાવત્સંખ્યા એવ । નક્ષત્રસંખ્યા ઉક્તા એવ । અષ્ટાશીતિર્ગ્રહાઃ । એકસ્ય સ્વલુ
ચન્દ્રમસસ્તારાઃ કોટીનાં કોટચઃ પ્રતાવત્યો ભવન્તિ—ષટ્ષણ્ડિસહસ્રાણિ નવ ચ શતાનિ પચ્ચસ-
ત્ત્યધિકાનિ ‘ ણાણા-સંઠાણ-સંઠિયાઓ ’ નાના-સંસ્થાન-સંસ્થિતાઃ, ‘ પંચવળ્ણાઓ ’ પચ્ચવર્ણાઃ,
‘ તારાઓ ’ તારાઃ, ‘ ઠિયલેસા ’ સ્થિતલેશ્યા નિશ્ચલપ્રકાશાઃ । ‘ ચારિણો ય ’ ચારિણ્યશ્ચ-
સચ્ચરણશીલાઃ, ‘ અવિસ્સામ-મંડલ-ગર્ઈ ’ અવિશ્રામ-મળ્ડલ-ગતયઃ—નિરન્તરચંચરણશીલાઃ,
‘ પત્તેયં ’ પ્રત્યેકમ્-પૃથક્ પૃથક્ ‘ ણામંક-પાગડિય-ચિંધ-મડા ’ નામાઽઙ્ક-પ્રકટિત-ચિહ્ન-
મુકુટાઃ—નામાઙ્કાનિ=નામાઙ્કિતાનિ-નામાક્ષરયુક્તાનિ પ્રકટિતચિહ્નાનિ=સ્પષ્ટચિહ્નયુક્તાનિ મુકુટાનિ
યેષાં તે તથા, ‘ મહિડિઢયા ’ મહર્દ્રિકાઃ—મહર્દ્રિયુક્તાઃ સન્તો ડ્યોતિષ્કા દેવાઃ ‘ જાવ પજ્જુ-
વાસંતિ ’ યાવત્=પૂર્વવત્પ્રદક્ષિણવન્દનાદિભિઃ પર્યુપાસતે ॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

મી ઇસી પ્રકાર સમજની ચાહિયે । ગ્રહ અઢ્ઢાસી હૈં । નક્ષત્ર કી સંખ્યા ડપર કહી ગયી હૈ ।
પ્રકીર્ણતારકાઓં મેં કેવલ ચન્દ્રમા કે હી પરિવાર કે તારે ૬૬૯૭૫ (છિયાસઠ હજાર નૌ
સૌ પચહત્તર) કોડાકોડી હૈં । ઇસી તરહ ડૌર કે મી તારોં કે પરિવાર શાસ્ત્રાન્તર
સે સમજના ।

(ણાણા-સંઠાણ-સંઠિયાઓ) ઇન તારાઓં કા આકાર ઇકસા નિશ્ચિત નહીં
હૈ; ઇનકા આકાર અનેક પ્રકાર કા હૈ । (પંચવળ્ણાઓ) યે પાંચ વર્ણવાલે હૈં ।
(ઠિયલેસા) ઇનકી લેશ્યા સ્થિર હૈ—ઇનકી લેશ્યા મેં કોઈ પરિવર્તન નહીં હોતા હૈ ।
(ચારિણો ય) યે સંચરણ-શીલ હૈં । અતઃ (અવિસ્સામ-મંડલ-ગર્ઈ) નિરન્તર ગમન

સૂર્યની સંખ્યા ઁકસોબત્રીસ છે. ચંદ્રમાની સંખ્યા પણ ઁટલી જ સમજી
લેવી જોઈએ. ગ્રહ ૮૮ છે. નક્ષત્રની સંખ્યા ઉપર કહી છે. પ્રકીર્ણતારાઓમાં
કેવળ ચંદ્રમાના પરિવારના તારા ૬૬૯૭૫ (છાસઠ હજાર નવસો પીચોતેર)
કોડાકોડી છે. ઁવી જ રીતે બીજા ચંદ્રમાના પણ તારા-પરિવાર શાસ્ત્રાન્તરથી
સમજી લેવા.

(ણાણા-સંઠાણ-સંઠિયાઓ) આ તારાઓના આકાર ઁક જોવો નિશ્ચિત
નથી. તેમના આકાર અનેક પ્રકારના છે. (પંચવળ્ણાઓ) તેઓ પાંચ વર્ણવાળા
છે. (ઠિયલેસા) તેમની લેશ્યા સ્થિર છે, તેમની લેશ્યામાં કોઈ ફેરફાર થતો
નથી. (ચારિણો ય) તેઓ સંચરણશીલ છે. (અવિસ્સામ-મંડલ-ગર્ઈ) આમ નિરં-

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ મહા-
વીરસ્સ વેમાણિયા દેવા અંતિયં પાઉબ્ભવિત્થા, સોહમ્મી-સાણ-સણં-
કુમાર-માહિંદ-વંભ-લંતગ-મહાસુક્ક-સહસ્સારા-ણય-પાણયા-રણ-

ટીકા—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ । તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમ-
ણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘વેમાણિયા દેવા અંતિયં પાઉબ્ભવિત્થા’ વૈમાનિકા દેવા અન્તિકે
પ્રાદુર્ભૂવુઃ । કે તે વૈમાનિકા દેવાઃ ? ઇત્યાહ—સોહમ્મી-સાણ-સણંકુમાર-માહિંદ-વંભ-લંતય
મહાસુક્ક-સહસ્સારા-ણય-પાણયા-રણ-અચ્ચુયવર્ડ’ સૌધર્મે ૧-શાન ૨-સનત્કુમાર ૩-માહેન્દ્ર ૪,
બ્રહ્મ ૫-લાન્તક ૬-મહાશુક્ક ૭-સહસ્રારા-SSન્ત ૯-પ્રાણતા ૧૦SS-રણા ૧૧ ચ્યુતપતયઃ ૧૨,

કરતે રહના યહી ઇન્કા સ્વભાવ હૈ । (પત્તેયં ણામંક-પાગડિય-ચિંધ-મડડા)
પ્રત્યેક કે મુકુટ અપને અપને નામોં સે યુક્ત એવં સ્પષ્ટ ચિહ્ન વાલે હૈ । (મહિહિંદયા) યે
વંભ મહાકુદ્ધિ કે ધારી હૈ । (જાવ પજ્જુવાસંતિ) પૂર્વ મેં વર્ણિત અસુરકુમારોં કી તરહ
યે સબ જ્યોતિષી દેવ મી ભગવાન્ મહાવીર કી સેવા કરને લગે ॥ સૂ. ૩૬ ॥

‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ ।

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસ કાલ ઓર ઉસ સમય મેં (સમણસ્સ
ભગવઓ મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે (અંતિયં) સમીપ (વેમાણિયા
દેવા) વૈમાનિકદેવ (પાઉબ્ભવિત્થા) પ્રકટ હુએ । વૈમાનિક દેવ કોન હૈ ? સો કહતે
હૈ—(સોહમ્મી-સાણ-સણંકુમાર-માહિંદ-વંભ-લંતગ-મહાસુક્ક-સહસ્સારા-ણય-
પાણયા-રણ-અચ્ચુય-વર્ડ) સૌધર્મ, ઈશાન, સનત્કુમાર, માહેન્દ્ર, બ્રહ્મલોક, લાન્તક

તર ગમન કરતા રહેવું એ જ તેમનો સ્વભાવ છે. (પત્તેયં ણામંક-પાગડિય-
ચિંધ-મડડા) પ્રત્યેકના મુકુટ પોતપોતાનાં નામોથી યુક્ત એવં સ્પષ્ટ ચિહ્નવાળા
છે. (મહિહિંદયા) એ બંધા મહાકુદ્ધિના ધારક છે. (જાવ પજ્જુવાસંતિ) પૂર્વે કહેલ
અસુરકુમારોની પેઠે આ બધા જ્યોતિષીદેવ પણ ભગવાન મહાવીરની સેવા
કરવા લાગ્યા. (સૂ. ૩૬)

‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાલ અને તે સમયમાં (સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (અંતિયં) પાસે (વેમાણિયા દેવા) વૈમા-
નિક દેવ (પાઉબ્ભવિત્થા) પ્રગટ થયા. તે વૈમાનિક દેવો કોન છે ? તે કહે છે—
(સોહમ્મી-સાણ-સણંકુમાર-માહિંદ-વંભ-લંતગ-મહાસુક્ક-સહસ્સારા-ણય-પાણયા-રણ-અચ્ચુય-
વર્ડ) સૌધર્મ ૧, ઈશાન ૨, સનત્કુમાર ૩, માહેન્દ્ર ૪, બ્રહ્મલોક ૫, લાન્તક

અચ્ચુયવર્ઝ પહિટ્ઠા દેવા જિણ-દંસણુ-સ્સુયા-ગમણ-જણિય-હાસા
પાલગ-પુપ્ફગ-સોમણસ-સિરિવચ્છ-ળંદિયાવત્ત-કામગમ-પીઙ્ગમ-

સૌધર્માદ્યચ્યુતાઽન્તાઃ કલ્પાઃ સન્તિ, એષુ વૈમાનિકા દેવા ભવન્તિ, અત એવ સૌધર્માદ્યચ્યુતાન્તાનાં દેવલોકાનાં પતયઃ=સ્વામિનઃ ‘પહિટ્ઠા’ પ્રહૃષ્ટાઃ=અતિહર્ષ પ્રાપ્તાઃ દેવાઃ=વૈમાનિકાઃ । ‘જિણ-દંસણુ-સ્સુયા-ગમણ-જણિય-હાસા’ જિન-દર્શનોત્સુકા-ઽઽગમન-જનિત-હાસાઃ—જિનદર્શના-ર્થોત્સુકાનામ્ એષાં; દેવાનામાગમનં, તેન જનિતો હાસઃ=આનન્દો યેષાં તે તથા । જિનેન્દ્રદર્શ-નેત્કણ્ઠાઽઽગમનજાતપ્રમોદાઃ । સૌધર્માદિદ્વાદશકલ્પાનાં દશચંદ્રકા ઇન્દ્રાઃ સન્તિ, તત્ર નવમ-દશમયોરેક ઇન્દ્રો ભવતિ । શક્રાદીનામચ્યુતાન્તાનાં દશાનામિન્દ્રાણાં પાલકાદીનિ સર્વતોભદ્રાન્તાનિ દશ વિમાનાનિ ભવન્તિ, તાન્યાહ—‘પાલગ ૧, પુપ્ફગ ૨, સોમણસ ૩, સિરિવચ્છ ૪, ળંદિયાવત્ત ૫, કામગમ ૬, પીઙ્ગમ ૭, મણોગમ ૮, વિમલ ૯, સવ્વઓભદ્ ૧૦-સરિસણામધેજ્જેહિં વિમાણેહિં ઓઙ્ગણા’ પાલક-પુપ્પક-સૌમનસ-શ્રીવત્સ-નન્દ્યાવર્ત-કામ-ગમ-પ્રીતિગમ-મનોગમ-વિમલ-સર્વતોભદ્ર-સદૃશનામધેયૈર્વિમાનૈરવતીર્ણાઃ=તે દશ ઇન્દ્રાઃ પાલ-

મહાશુક્ર, સહસ્રાર, આનત, પ્રાણત, આરણ ઓર અચ્યુત યે દેવલોક હૈં । યે સૌધર્માદિક, વૈમાનિક દેવતાઓં કે રહને કે સ્થાન હૈં । યે દેવલોક ૧૨ હૈં । ઇનકી કલ્પ સંજ્ઞા હૈ । યે વૈમાનિક દેવ ઇનકે પતિ હૈં । ઇન કલ્પોં મેં જો ઉત્પન્ન હોતે હૈં વે વૈમાનિક યા કલ્પવાસી દેવ કહલાતે હૈં । (પહિટ્ઠા) અતિહર્ષ કો પ્રાપ્ત હુએ (દેવા) યે વૈમાનિક દેવેન્દ્ર કિ જિનેં (જિણ-દંસણુ-સ્સુયા-ગમણ-જનિય-હાસા) જિનેન્દ્ર કે દર્શન કે લિયે ઉત્સુકતાપૂર્વક આગમન સે અતિ આનંદ હુઆ હૈ । (પાલગ-પુપ્ફગ-સોમણસ-સિરિવચ્છ-ળંદિયાવત્ત કામગમ-પીઙ્ગમ-મણોગમ-વિમલ-સવ્વઓભદ્-સરિસ-ણામધેજ્જેહિં વિમાણેહિં) વે દસ વૈમાનિક દેવેન્દ્ર અપને ૨ પાલક, ૧ પુપ્પક ૨ સૌમનસ, ૩ શ્રીવત્સ,

૬, મહાશુક્ર ૭, સહસ્રાર ૮, આનત ૯, પ્રાણુત ૧૦, આરણ ૧૧, અને અચ્યુત ૧૨; આ દેવલોક છે. આ સૌધર્માદિક, વૈમાનિક દેવતાઓનાં રહેવાનાં સ્થાન છે. તે દેવલોક ૧૨ છે. તેમની કલ્પ સંજ્ઞા છે. તેમના સ્વામી ૧૦ છે. આ કલ્પોમાં જે ઉત્પન્ન થાય છે તે વૈમાનિક અથવા કલ્પવાસી દેવ કહેવાય છે. (પહિટ્ઠા) બહુ હર્ષ પ્રાપ્ત થતાં (દેવા) આ વૈમાનિક દેવેન્દ્ર કે જેને (જિણ-દંસણુ-સ્સુયા-ગમણ-જનિય-હાસા) જિનેન્દ્રના દર્શન માટે ઉત્સુકતાપૂર્વક આગમનથી અતિ આનંદ થયો છે. (પાલગ-પુપ્ફગ-સોમણસ-સિરિવચ્છ-ળંદિયાવત્ત-કામગમ-પીઙ્ગમ-વિમલ-સવ્વઓભદ્-સરિસણામધેજ્જેહિં વિમાણેહિં) તે દશ

विमल-सर्वओभद्र-सरिसणामधेजेहिं विमाणेहिं ओइण्णा वंदगा
जिणिंदं मिग-महिस-वराह-छगल-ददुर-हय-गयवइ-भुयग-खग्ग-
उसभंक-विडिम-पागडिय-चिंध-मउडा पसिढिल-वरमउड - तिरीड-

कादिसर्वतोभद्रान्तनामकैः, तथा तत्सदृशनामकैः—पूर्णभद्र—सुभद्रादिनामकैश्चान्यैर्विमानै-
रन्येऽपि देवाः ‘ओइण्णा’=अवतीर्णाः=भुवमागताः । ‘वंदगा जिणिंदं’ वन्दका जिनेन्द्रस्य
=जिनेन्द्रं वन्दितुकामा इत्यर्थः । ‘मिग-महिस-वराह-छगल-ददुर-हय-गयवइ-भुयग-खग्ग-
उसभंक-विडिम-पागडिय-चिंध-मउडा’ मृग-महिष-वराह-छगल-ददुर-हय-गजपति-भुजग-
खड्ग-ऋषभाऽङ्क-विडिमप्रकटित-चिह्नमुकुटाः, मृगमहिषादि-ऋषभान्ताः अङ्काः—चिह्नानि विडि-
मेषु=विस्तीर्णभागेषु येषां मुकुटानां तानि मृगमहिषवराह-छगल-ददुरहयगजपतिभुजगखड्ग-
ऋषभाङ्कविडिमानि, तानि अतएव प्रकटितचिह्नानि=रत्नादिदीप्त्यो प्रकाशितचिह्नयुक्तानि मुकुटा-

४ नंदावर्त, ५ कामगम, ६ प्रीतिगम, ७ मनोगम, ८ विमल, ९ सर्वतोभद्र १० इन
नामवाले विमानों से और पूर्वोक्त विमानों से अतिरिक्त पूर्णभद्र सुभद्र आदि विमानों से दश
देवेन्द्रों से भिन्न अन्य वैमानिक देव (ओइण्णा) पृथ्वी पर अवतरित हुए—आये, अर्थात्—
इन पूर्वोक्त नामवाले विमानों द्वारा दस देवेन्द्र, तथा और भी अन्य देव अपने अपने
विमानों द्वारा इस भूमण्डल पर अवतीर्ण हुए—उतरे । क्यों कि ये सब (वंदगा जिणिंदं)
जिनेन्द्र की वन्दना करने की कामना वाले थे । (मिग—महिस—वराह—छगल—ददुर—
हय—गयवइ—भुयग—खग्ग—उसभंक—विडिम—पागडिय—चिंध—मउडा) इनके मुकु-
टोंके विडिमों—विस्तीर्ण भागों में क्रमशः मृग, महिष, वराह, छगल—बकरा, ददुर—मेंढक,

वैमानिक देवेन्द्रो पोतपोताना पालक १, पुण्यक २, सौभनस ३, श्रीवत्स ४,
नंदावर्त ५, कामगम ६, प्रीतिगम ७, मनोगम ८, विमल ९, सर्वतोभद्र १०,
आ नामवाणां विमानोथी, तथा पूर्वोक्त विमानोथी अतिरिक्त पूर्णभद्र
सुभद्र आदि विमानोथी दश देवेन्द्रोथी लिन्न भीन्न वैमानिक देवो (ओइण्णा)
पृथ्वी पर आव्या. अर्थात् आ पूर्वोक्त-नामवाणां विमानो द्वारा ते देवेन्द्र
तथा भीन्न पशु देव पोतपोतानां विमानो द्वारा आ भूमण्डल पर उतरी
आव्या. केमडे ओ अधा (वंदगा जिणिंदं) जिनेन्द्रनी वंदना करवानी कामना-
वाणा उता. (मिग—महिस—वराह—छगल—ददुर—हय—गयवइ—भुयग—खग्ग—उसभंक-
विडिम-पागडिय-चिंध-मउडा) तेभना मुकुटोना विडिमो—विस्तीर्ण भागोभां क्रमशः
मृग, महिष, वराह, छगल—बकरा, ददुर—मेंढक [देउडे], हय—घोडा, गज-

धारी कुंडल-उज्जोविया-गणा मउड-दित्त-सिरया रत्ताभा पउम-पम्ह-

नि येषां ते तथा । तत्र ऋषभो वृषभः, मृगमहिषादिचिह्नयुक्तमुकुटसहिताः 'पसिढिल-वर-मउड-तिरीड-धारी' प्रशिथिल-वरकेशविन्यास-किरीटधारिणः, प्रशिथिला ये 'वरमउड' वरकेशविन्यासाः=प्रशस्तकेशविन्यासाः किरीटाश्च तान् धरन्ति ये ते तथा, 'मउड' इति केश-विन्यासार्थको देशीशब्दः । 'कुंडल-उज्जोविया-गणा' कुण्डलो-दयोतिता-ननाः=कुण्डलेन उदयोतितं=प्रकाशितम् आननं=मुखं येषां ते तथा; कुण्डलोद्भासितमुखा इत्यर्थः । 'मउड-दित्त-सिरया' मुकुट-दीप्त-शिरोजाः=मुकुटेन रत्न-स्वचितेन दीप्ताः शिरोजाः=केशा येषां ते तथा, 'रत्ताभा' रक्ताऽऽभाः=अरुणकान्तिमन्तः । 'पउम-पम्ह-गोरा'

हय=घोड़ा, गजपति=गजेन्द्र, भुजग=सर्प, खड्ग और वृषभ इनके चिह्न^१ थे । (पसिढिल-वर-मउड-तिरीड-धारी) प्रशिथिल उत्तम मउड=केशविन्यास एवं किरीट-मुकुट को ये धारण किये हुए थे, अर्थात् भगवान् के दर्शन करते की त्वरा में इनके प्रशस्त केश-विन्यास और मुकुट शिथिल हो गये थे । (कुंडल-उज्जोविया-गणा) कुंडलों की विशिष्ट आभा से इनका मुखमण्डल प्रकाशित हो रहा था । (मउड-दित्त-सिरया)

(१) ये चिह्न १० हैं, देवलोक १२ हैं । पर इनके इन्द्र १० हैं—(१) सौधर्मका इन्द्र, (२) ईशानका इन्द्र, (३) सनत्कुमारका इन्द्र, (४) माहेन्द्रका इन्द्र, (५) ब्रह्मलोक का इन्द्र, (६) लान्तकका इन्द्र, (७) महाशुक्रका इन्द्र, (८) सहस्रारका इन्द्र, (९) आनत एवं प्राण-तका इन्द्र और (१०) आरण एवं अच्युत देवलोकका इन्द्र; इस प्रकार ये १० इन्द्र इन १२ कल्पों के हैं । इन इन्द्रों के ये क्रमशः पालकादिक १० विमान होते हैं । मृग महिष आदिके क्रमशः ये १० चिह्न मुकुटों में इनके होते हैं ।

पति [डाथी], भुजग-सर्प, खड्ग अने वृषभ [वृषभ], येनां चिह्न^१ हुतां. (पसिढिल-वर-मउड-तिरीड-धारी) प्रशिथिल उत्तम मउड-केशविन्यास एवं किरीट-मुकुट तेमणे धारण किये हुतां. अर्थात् भगवाननां दर्शन करवानी उतावणमां तेमना प्रशस्त केश-विन्यास अने मुकुट शिथिल थय गये हुतां. (कुंडल-उज्जोविया-गणा) कुंडलोनी विशिष्ट आभा (प्रकाश)थी तेमनां भुज

(१) आ चिह्न १० छे, देवलोक १२ छे, पण तेना इन्द्र १० छे. (१) सौ-धर्मनो इन्द्र, (२) ईशाननो इन्द्र, (३) सनत्कुमारनो इन्द्र, (४) माहेन्द्रनो इन्द्र, (५) ब्रह्मलोकनो इन्द्र, (६) लान्तकनो इन्द्र, (७) महाशुक्रनो इन्द्र, (८) सहस्रारनो इन्द्र, (९) आनत एवं प्राणतनो इन्द्र, तथा (१०) आरण एवं अच्युत देवलोकनो इन्द्र. आ प्रकारे आ १० इन्द्र आ १२ कल्पोना छे. आ इन्द्रोना कुमथी पालक

ગોરા સેયા સુભ-વણ-ગંધ-ફાસા ઉત્તમવેડવિવિણો વિવિહ-વત્થ-ગંધ-મલ્લ-ધારી મહિડિઢયા મહજ્જુડયા જાવ પંજલિઉડા પજ્જુ-વાસંતિ ॥ સૂ૦૩૭ ॥

પદ્મ-પદ્મ-ગૌરા:-પદ્મકિઞ્જલ્કવદ્ ગૌરવર્ણા: । ‘સેયા’ શ્વેતા:-શુભ્રકાન્તિ-શાલિન: । ‘સુભ-વણ-ગંધ-ફાસા’ શુભ-વર્ણ-ગન્ધ-સ્પર્શા: । ‘ઉત્તમ-વેડવિવિણો’ ઉત્તમ-વિકુર્વિણ: = ઉત્તમવિકુર્વણાકારિણ: ‘વિવિહ-વત્થ-ગંધ-મલ્લ-ધારી’ વિવિધ-વસ્ત્ર-ગન્ધ-માલ્ય-ધારિણ: ‘મહિડિઢયા’ મહર્દ્ધિકા:-મહાસમ્પત્તિશાલિન: । ‘મહજ્જુડયા’ મહાદ્યુતિકા:-અતિશય-દ્યુતિમન્ત: । ‘જાવ પંજલિઉડા પજ્જુવાસંતિ’ યાવપ્રાઞ્જલિપુટા: પર્યુપાસતે-યાવચ્છન્દાત્-પૂર્વવત્ ત્રિકૃત્વ:, આદક્ષિણપ્રદક્ષિણ-વન્દન-નમનાદય: સૂચ્યન્તે; પ્રાઞ્જલિપુટા: = વદ્દાઽઞ્જલય: પર્યુપાસતે = સમન્તાદુપાસનાં કુર્વતે ॥ સૂ૦૩૭ ॥

મસ્તક કી કેશપંક્તિ મુકુટ કી કાંતિ સે દીપ્ત હો રહી થી । (રત્તામા) इनकी कान्ति अरुण-लाल थी, (पद्म-पद्म-गौरा) पर इनका शरीर कमल के केशरों के समान गौर-वर्णवाला था । इसलिये (सेया) ये शुभ्रकान्ति से शोभित थे । (सुभ-गंध-वण-फासा) इनके शरीर के गंध, वर्ण और स्पर्श शुभ थे । (उत्तमवेडविविणो) ये उत्तम वैक्रिय शरीर करनेवाले थे । (विविह-वत्थ-गंध-मल्ल-धारी) अनेक प्रकार के उत्तमोत्तम वस्त्रों को ये धारण किये हुए थे । गले में इनके सुगंधित पुष्पों की माला सुशोभित हो रही थी । तथा ये (महिडिढया) महर्द्धिक थे । एवं (महज्जुडया) महा-द्युतिधारी थे । (जाव पंजलिउडा पज्जुवासंति) ये पूर्ववर्णित असुरकुमारों की तरह तीन बार अंजलिपूर्वक सविधि वन्दना कर प्रभु की सेवा करने लगे ॥ सू० ३७ ॥

મંડળ પ્રકાશિત થઈ રહ્યાં હતાં. (મડ્ડ-દિત્ત-સિરયા) મસ્તકની કેશપંક્તિ મુકુટની કાંતિથી દીપ્તી ઉઠતી હતી. (રત્તામા) તેમની કાંતિ અરુણ-લાલ હતી. (પદ્મ-પદ્મ-ગૌરા) પણ તેમનાં શરીર કમલનાં કેશરો જેવાં ગૌર વર્ણનાં હતાં. આથી (સેયા) તેઓ શુભ્રકાંતિથી શોભતા હતા. (સુભ-ગંધ-વણ-ફાસા) એમના શરીરના ગન્ધ, વર્ણ અને સ્પર્શ શુભ હતા. (ઉત્તમવેડવિવિણો) તેઓ ઉત્તમ વૈક્રિય-શરીર ધારણ કરવાવાળા હતા. (વિવિહ-વત્થ-ગંધ-મલ્લ-ધારી) અनेक प्रकारના ઉત્તમોત્તમ વસ્ત્રો તેમણે ધારણ કર્યાં હતાં, તેમના ગળામાં સુગંધિત પુષ્પોની માળા શોભી રહી હતી. તથા તેઓ (મહિડિઢયા) મહર્દ્ધિક હતા. એવં (મહજ્જુડયા) મહાદ્યુતિધારી હતા. (જાવ પંજલિઉડા પજ્જુવાસંતિ) તેઓ

આદિક ૧૦ વિમાન હોય છે. મૃગ મહિષ, આદિનાં અનુક્રમે તેઓના મુકુટમાં ચિહ્નો હોય છે.

**मूलम्—तए णं चंपाए णयरीए सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-
चउम्मुह-महापह-पहेसु महया जणसहे इ वा जणवूहे इ वा**

टीका—‘तए णं’ इत्यादि। ततः=तदनन्तरं—चतुर्निकायदेवानामागमना-
नन्तरं, खलु ‘चंपाए णयरीए’ चम्पायां नगर्याम् ‘सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-
चउम्मुह-महापह-पहेसु’ शृङ्गाटक-त्रिक-चतुष्क-चत्वर-चतुर्मुख-महापथ-पथेषु-तत्र-
शृङ्गाटकं—‘सिंघाडा’ इति भाषाप्रसिद्धं जलजं फलं, तदाकारं स्थानं, त्रिकोणमित्यर्थः;
त्रिकं—मिलितत्रिमार्गस्थानम्, चतुष्कं—यत्र चत्वारो मार्गा मिलिताः सन्ति तत्—‘चौराहा’
इति भाषाप्रसिद्धं स्थानम्, चत्वरं=बहुमार्गसंमेलनस्थानम्, चतुर्मुखं=चतुर्द्वारं स्थानम्—आग-
न्तुकादीनां विश्रामस्थानम्, महापथः—राजमार्गः, पन्थाः—स्थायमात्रम्, तेषु सर्वेषु स्थानेषु
यत्र ‘महया जणसहे इ वा’ महान् जनशब्दः—परस्पराऽऽलापादिरूपो भवति ‘इकारो’
वाक्यालङ्कारार्थः, ‘वा’—प्रकारार्थः; तथा ‘जणवूहे इ वा’ जनव्यूहः—लोकसमूहः, ‘जण-

‘तए णं चंपाए णयरीए’ इत्यादि।

(तए णं) चतुर्निकाय के देवों के आगमन के अनन्तर (चंपाए णयरीए)
चंपा नगरी में (सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापह-पहेसु) शृङ्गाटक—
तीनकोनवाले स्थान पर, त्रिक—जहां पर तीन रास्ते आकर मिलते हैं ऐसे स्थान पर,
चतुष्क—जहां पर चार मार्ग आकर मिले रहते हैं ऐसे चौराहे पर, चत्वर—अनेकमार्गोंका
संमेलन जहाँ होता है ऐसे स्थान पर, चतुर्मुख—आगन्तुक जनों के विश्रामार्थ निर्मापित
स्थान पर, महापथ—राजमार्ग पर, एवं पथ अर्थात् जहाँ से गली निकलती हो ऐसे स्थान
पर, (महया जणसहे इ वा) महान् जन शब्द होने लगा—परस्पर मिलजुल कर लोग
बातचीत करने लगे। (जणवूहे इ वा) एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से पूछने लगा, अथवा—

पूवे^० कडेला असुरकुमारोनी पेठे त्रिषुवार अंजलिपूर्वक सविधि वंदना
करीने प्रभुनी सेवा करवा लाग्या. (सू. ३७.)

‘तए णं चंपाए णयरीए’ इत्यादि.

(तए णं) चतुर्निकायना देवाना आगमन पछी (चंपाए णयरीए) चंपा-
नगरीमां (सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापह-पहेसु) शृङ्गाटक—त्रिषु-
कोणवाला स्थान पर, त्रिक—ज्यां त्रिषु रस्ता आवीने भजे छे એવા स्थान पर,
चतुष्क—ज्यां चार मार्ग आवीने भजे छे એવા ચૌટા પર, चत्वर—अनेक
मार्गोंनुं संमेलन ज्यां थाय छे એવા स्थान पर, चतुर्मुख—आवनार भाषु-
सोना विश्राम भाटे मुकरर करेलां स्थान पर, महापथ—राजमार्गपर, એવં
પથ—अर्थात् ज्यांथी गली नीकणी હોય તેવાં स्थानો પર, (महया जणसहे इ वा)
મહાન જન-શબ્દ થવા લાગ્યા—परस्पर मेलामलाप करी दोडो वातचीत

जणबोले इ वा जणकलकले इ वा जणुम्मी इ वा जणुकलिया इ वा
जणसण्णिवाए इ वा; बहुजणो अणमणस्स एवमाइक्खइ, एवं
भासइ, एवं पणवेइ, एवं परूवेइ; एवं खलु देवाणुप्पिया !

बोले इ वा 'जनानामव्यक्तो ध्वनिर्वा, 'जणकलकले इ वा' जनकलकलो—जनानां व्यक्तवर्गामिको नादः 'जणुम्मी इ वा' जनोर्मिः=जनसंवाधः—तरङ्गवज्जनानामुपर्युपरि समा-
गमनम्, 'जणुकलिया इ वा' जनोत्कलिका वा—जनानां लघुतरः समुदायः, 'जण-
सण्णिवाए इ वा' जनसन्निपातः—जनानां संघर्षरूपेण संमिलनं भवति, तत्र—'बहुजणो'
बहुजनः 'अणमणस्स एवमाइक्खइ' अन्योऽन्यमेवमाचष्टे—एकोऽपरं वदति सामान्य-
रूपेण, 'एवं भासइ' एवं भाषते—वक्ष्यमाणप्रकारेण विशेषतः कथयति 'एवं पणवेइ'
प्रज्ञापयति—अपृष्टः सन् कथयति 'एवं परूवेइ' एवं प्ररूपयति=पृष्टः सन् कथयति,

मनुष्यों का एकत्र जमघड़ होने लगा । (जणबोले इ वा) मनुष्यों की अव्यक्तध्वनि होने लगी । (जणकलकले इ वा) प्रगट रूप में कहीं २ मनुष्यों का कलकल अर्थात् स्पष्ट ध्वनि सुनाई देने लगी । (जणुम्मी इ वा) समुद्र के तरंग समान ऊपर के ऊपर लोगों के झुंड आने लगे । कहीं २ पर (जणुकलिया इ वा) सामान्य रूप से जनसमुदाय एकत्रित हुआ । (जणसण्णिवाए इ वा) कहीं २ पर मनुष्यों का इतना अधिक संघट्ट हुआ कि वे सब परस्पर में एक दूसरे से संघट्ट होने लगे । इन सब में (बहुजणो) अनेक मनुष्य (अणमणस्स एवमाइक्खइ) परस्पर में एक दूसरे से इस प्रकार सामान्यरूप में कहने लगे, (एवं भासइ) कोई २ इस प्रकार विशेषरूप से कहने लगे, (एवं पणवेइ) कोई

करवा लाज्या. (जणबूहे इ वा) ओक भाणुस भीजने पूछवा लाज्यो—अथवा भाणु-
सोनुं टोणुं ओकत्र थवा लाज्युं. (जणबोले इ वा) दोडोनी अव्यक्त ध्वनि थवा
लागी. (जणकलकले इ वा) प्रगटरूपे कथांक कथांक मनुष्योनी कलकल अर्थात्
स्पष्ट ध्वनि संभगावा लागी. (जणुम्मी इ वा) समुद्रनां भोजनी पेडे उपरा-
उपर दोडोनां टोणां आववा लाज्यां. (जणुकलिया इ वा) सामान्यरूपे जन-
समुदाय ओकत्रित थयो. (जणसण्णिवाए इ वा) कोध कोध स्थाने मनुष्यो ओटला
ओकठा थया के ते भधा परस्परमां ओक भीजनी साथे अथडावा लाज्या.
आ भधामां (बहुजणो) अनेक मनुष्य (अणमणस्स एवमाइक्खइ) परस्परमां
ओक भीजने आ प्रकारे सामान्यरूपमां उडेवा लाज्या. (एवं भासइ) कोध
कोध आ प्रकारे विशेषरूपमां उडेवा लाज्या, (एवं पणवेइ) कोध कोध पूछया

સમણે ભગવં મહાવીરે આહારે તિથ્યગરે સયંસંબુદ્ધે પુરિસુત્તમે
જાવ સંપાવિત્કામે પુવ્વાણુપુવ્વિં ચરમાણે ગામાણુગામં દૂઝ્જમાણે
ઇહમાગણે ઇહ સંપત્તે, ઇહ સમોસઢે, ઇહેવ ચંપાણે ણયરીણે વહિં

કિં કથયતીતિ સૂત્રકાર આહ—‘ એવં સ્વલુ દેવાણુપ્પિયા ’ ઇત્યાદિ । એવં સ્વલુ મો
દેવાનુપ્પિયાઃ ! શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરઃ, ‘ આહારે તિથ્યગરે સયંસંબુદ્ધે ’
આદિકરસ્તીર્થકરઃ સ્વયંસંબુદ્ધઃ, ‘ પુરિસુત્તમે ’ પુરુષોત્તમઃ, ‘ જાવ સંપાવિત્કામે ’ યાવત્-
સમ્પ્રાપ્તુકામઃ—સિદ્ધિગતિનામધેયં સ્થાનં સંપ્રાપ્તુકામ ઇતિ ભાવઃ । ‘ પુવ્વાણુપુવ્વિં ’
પૂર્વાનુપૂર્વી—તીર્થકરપરમ્પરાગતમર્યાદામ્ ‘ ચરમાણે ’ ચરન્—આચરન્, ‘ ગામાણુગામં
દૂઝ્જમાણે ’ ગ્રામાનુગ્રામં દ્રવન્—પ્રત્યેકં ગ્રામં ગચ્છન્—ક્રમપ્રાપ્તગ્રામમત્યજન્, ‘ ઇહમાગણે ’
ઇહાઽઽગતઃ, ઇહ=ચમ્પાયામાગત ઇતિ ભાવઃ, ‘ ઇહ સંપત્તે ’ ઇહ સમ્પ્રાપ્તઃ, ઇહ પૂર્ણભદ્રે

કોઈ વિના પૂછે હી દૂસરે સે ઇસ પ્રકાર કહને લગે, (એવં પરુવેઙ) કોઈ કોઈ પૂછે જાને
પર દૂસરે સે ઇસ પ્રકાર કહને લગે । કયા કહને લગે ? ઇસકો સૂત્રકાર કહતે હૈં—
(એવં સ્વલુ દેવાણુપ્પિયા) હે દેવાનુપ્પિયો ! (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ
ભગવાન્ મહાવીર કિ, (આહારે તિથ્યગરે સયંસંબુદ્ધે પુરિસુત્તમે જાવ સંપાવિત્કામે
પુવ્વાણુપુવ્વિં ચરમાણે ગામાણુગામં દૂઝ્જમાણે ઇહમાગણે ઇહ સંપત્તે ઇહ સમોસઢે)
જો અપને શાસન કો અપેક્ષા સે ધર્મ કે આદિ કારક હૈં, ચતુર્વિધ સંઘ કે સંસ્થાપક હૈં,
સ્વયંસંબુદ્ધ હૈં, એવં પુરુષોં મેં ઉત્તમ હૈં, યાવત્ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરને કે કામી હૈં, વે અન્ય તીર્થ-
કરોં કી પરમ્પરા સે આગત મર્યાદા કા સંરક્ષણ કરતે હુણે એવં ગ્રામાનુગ્રામ વિચરણ કરતે
હુણે આજ યહોં પધારે હુણે હૈં, યહાં સંપ્રાપ્ત હુણે હૈં, સાધુસમાચારી કે અનુસાર યહોં સમવસૂત

વગર જ બીજાથી આ પ્રકારે કહેવા લાગ્યા, (એવં પરુવેઙ) કોઈ કોઈ પૂછવા-
પર બીજાઓથી કહેવા લાગ્યા. શું કહેવા લાગ્યા ? આ વાતને સૂત્રકાર પ્રકટ
કરે છે—(એવં સ્વલુ દેવાણુપ્પિયા) હે દેવાનુપ્પિયો (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ
ભગવાન્ મહાવીર (આહારે તિથ્યગરે સયંસંબુદ્ધે પુરિસુત્તમે જાવ સંપાવિત્કામે
પુવ્વાણુપુવ્વિં ચરમાણે ગામાણુગામં દૂઝ્જમાણે ઇહમાગણે ઇહ સંપત્તે ઇહ સમોસઢે) બેઓ
પોતાની શાસનની અપેક્ષાથી ધર્મના આદિકારક છે, ચતુર્વિધ સંઘના
સંસ્થાપક છે, સ્વયંસંબુદ્ધ છે તેમજ પુરુષોમાં ઉત્તમ છે, યાવત્ મોક્ષપ્રાપ્ત
કરવાની કામનાવાળા છે, તેઓ અન્ય તીર્થકરોની પરંપરાથી ચાલતી મર્યા-
દાનું સંરક્ષણ કરતાં કરતાં, એવં ગ્રામાનુગ્રામ વિચરતાં વિચરતાં આજે અહીં
પધાર્યા છે. અહીં સંપ્રાપ્ત થયા છે, સાધુસમાચારીને અનુસાર અહીં

पुण्णभदे चेइए अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा
अप्पाणं भावेमाणे विहरइ । तं महप्फलं खलु भो देवाणुप्पिया !
तहारूवाणं अरहंताणं णामगोयस्स वि सवणयाए, किमंग

संप्राप्त इति भावः, 'इह समोसढे' इह समवसृतः, साधुकल्यावग्रहे समवसृत इति भावः,
तदेवाह—'इहेव चंपाए णयरीए' इत्यादि, इहैव चंपाया नगर्याः, 'बहिं' बहिः—बहि-
र्भवे प्रदेशे, 'पुण्णभदे चेइए' पूर्णभद्रे चैत्ये—पूर्णभद्रनामक उद्याने, 'अहापडिरुवं उग्गहं
उग्गिण्हित्ता' यथाप्रतिरूपमवग्रहमवगृह्य—संयमानुकूलमावासस्थानं याचित्वा, 'संजमेणं
तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति ।

'तं महप्फलं खलु भो देवाणुप्पिया !' तन्महत्फलं खलु भो देवानुप्रियाः !
'तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोत्तस्सवि सवणयाए' तथारूपागामर्हतां भग-
वतां नामगोत्रयोरपि श्रवणतया=तादृशानां सर्वातिशयवतां भगवतां तीर्थङ्कराणां नामगोत्रश्रव-
णेनापि महत्फलं भवति, 'किमंग पुण अभिगमण-वंदण-णमंसण-पडिपुच्छण-पज्जु-
वासणयाए' किमङ्ग पुनरभिगमन-वन्दन-नमस्यन-प्रतिप्रच्छन-पर्युपासनया--हे अङ्ग !=हे

हुए हैं, और (इहेव चंपाए णयरीए बहिं पुण्णभदे चेइए अहापडिरुवं उग्गहं उग्गि-
ण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) इस चम्पा नगरी के बाहर
पूर्णभद्र उद्यान में ठहरने के लिये वनपाल की आज्ञा लेकर संयम एवं तप से अपनी आत्मा
को भावित करते हुए विचर रहे हैं । इसलिये (भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! जब
(तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोयस्स वि सवणयाए) तथारूप सर्वातिशय-
संपन्न भगवान् तीर्थंकरों के नाम एवं गोत्र के श्रवण से भी (महप्फलं) जीवों को महाफल
प्राप्त होता है, तब (किमंग ! पुण अभिगमण-वंदण-णमंसण-पडिपुच्छण-पज्जु-

समवसृत थया छे. तथा तेओ। (इहेव चंपाणयरीए बहिं पुण्णभदे चेइए अहापडि-
रुवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) आ चंपानगरीनी
अडार पूर्णभद्र उद्यानमां उतरवा माटे वनपालनी आज्ञा लधने संयम तेमज्ज
तपथी पोताना आत्माने भावित करतां विचरे छे. आ माटे (भो देवाणुप्पिया)
हे देवानुप्रिय ! ज्यारे (तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोयस्सवि सवणयाए)
तथाइय सर्वातिशयसंपन्न भगवान् तीर्थंकरानां नाम तेमज्ज गोत्रनां श्रवणुथी
पणु (महप्फलं) लोवोने भडाइल प्राप्त थाय छे, त्यारे (किमंग पुण अभिगमण-
वंदण-णमंसण-पडिपुच्छण-पज्जुवासणयाए) हे अंग-आयुष्मन् ! तेमना समीच-

पुण अभिगमण—वन्दण—णमंसण—पडिपुच्छण—पज्जुवासणयाए ?
एगस्सवि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए,
किमंग ! पुण विउलस्स अट्टस्स गहणयाए ? तं गच्छामो णं

आयुष्मन् ! तेषामभिगमनेन, वन्दनेन=स्तवेन, नमस्यनेन=नमस्कारेण, प्रतिप्रच्छनेन=प्रतिप्र-
श्नेन, पर्युपासनया=सेवनया पुनः यत् फलं भवति तत् किं वक्तव्यम्, अकथितमपि सुबुद्धं
भवतीति भावः । 'एगस्स वि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए' एक-
स्यापि आचार्यस्स धार्मिकस्य सुवचनस्य श्रवणतया—एकस्याऽपि आचार्यस्य—आचार्यप्रोक्तस्य,
धार्मिकस्य=धर्मप्रयोजनस्य, अत एव सुवचनस्य=सदुपदेशस्य श्रवणतया=श्रवणेन महाफलं भवति,
'किमंग पुण विउलस्स अट्टस्स गहणयाए' किमङ्ग ! पुनर्विपुलस्यार्थस्य ग्रहणतया—यावदुपदि-
ष्टस्य अर्थस्य ग्रहणेन किं वक्तव्यम्, यावत्प्रोक्तार्थग्रहणेन सर्वथा कृतार्थो भवतीति भावः । 'तं'
तत्—तस्मात् खलु 'देवाणुप्पिया !' हे देवानुप्रियाः । 'गच्छामो' गच्छामः=तदन्तिकं व्रजामः,

वासणयाए) हे अंग—आयुष्मन् ! उनके समीप जाने से, उनको वन्दना करने से—उनकी
स्तुति करने से, उन्हें नमन करने से, प्रश्न पूछने से और उनकी पर्युपासना करने से जीवों
को किस अनुपम फल की प्राप्ति न होती होगी, अर्थात् सब कुछ फल की प्राप्ति होगी,
इसमें संदेह के लिये अल्पमात्र भी स्थान नहीं है । (एगस्सवि आयरियस्स धम्मियस्स
सुवयणस्स सवणयाए, किमंग पुण विउलस्स अट्टस्स गहणयाए) जब तथारूप आचार्य
अरिहन्त भगवन्त से कहे हुए धार्मिक सदुपदेशरूप एक भी वचन के सुनने से जीव महा-
फल का भागी होता है, तब हे आयुष्मन् ! उनके द्वारा कथित विपुल अर्थों के ग्रहण
करने से जो फल होता है उसके विषय में तो कहना ही क्या ? (तं गच्छामो णं देवा-

ज्वाथी, तेमने वंदना करवाथी, तेमनी स्तुति करवाथी, तेमने नमस्कार कर-
वाथी, तेमने प्रश्न पूछवाथी तथा तेमनी पर्युपासना करवाथी जेवोने क्या
अनुपम इलानी प्राप्ति न थई शके ? अर्थात् सर्व इलानी प्राप्ति थशे.
जेभां संदेह भाटे अल्पमात्र पणु स्थान नथी. (एगस्स वि आयरियस्स धम्मिय-
स्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्टस्स गहणयाए) ज्यारे तथाइय
अरिहन्त भगवन्त तरइथी उडेवाभां आवता धार्मिक सदुपदेशइय जेउ पणु
वचनने सांलणवांथी जेव भडाइलना लागी थाय छे त्यारे हे आयुष्मन् !
तेमना द्वारा उडेवाभां आवता विपुल अर्थानुं थइणु करवाथी जे इल थाय
छे ते विषयभां तो उडेवानुं जे शुं ? (तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया) भाटे छे

देवाणुप्पिया ! समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो सक्कारेमो
सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासामो ।
एयं णे इहभवे पेच्चभवे य हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए

‘समणं भगवं महावीरं वंदामो’ श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दामहे—स्तुमः गुणगानेन,
‘णमंसामो’ नमस्कुर्मः पञ्चाङ्गनमनेन, ‘सक्कारेमो’ सत्कुर्मः अभ्युत्थानादिना, ‘सम्माणेमो’
सम्मानयामः—परमादरेण—भक्तिबहुमानेनेत्यर्थः, ‘कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं
पज्जुवासामो’ कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यं विनयेन पर्युपास्महे—कल्याणं=कल्याणप्राप्तिकारणम्,
मङ्गलं=दुरितदूरीकरणकारणम्, दैवतं=देवोचितप्रभावोपचितम्, चैत्यं=केवलज्ञानयुक्तं—चित्त-
प्रसादहेतुं वा एतादृशं भगवन्तं पर्युपास्महे=विनयेन सेवामहे, ‘एयं णे’ एतन्नः—एतद्=भग-
वद्वन्दनादि, नः—अस्माकम्, ‘इहभवे पेच्चभवे य’ इहभवे प्रेत्यभवे—परभवे च ‘हियाए’

णुप्पिया) इसलिये हे देवानुप्रिय ! उनके पास अपने चलें, वहां जाकर (समणं भगवं
महावीरं) श्रमण भगवान् महावीर को (वंदामो) वन्दना करें अर्थात् उनका गुणगान
करें । (णमंसामो) पंचांग—नमन—पूर्वक नमस्कार करें । (सक्कारेमो) अभ्युत्थानादिक
क्रियाओं द्वारा उनका सत्कार करें । (सम्माणेमो) भक्ति बहुमान के साथ उनका सम्मान
करें । (कल्लाणं) कल्याण प्राप्ति के कारणभूत, (मंगलं) पापों को दूर करने के लिये
निमित्तरूप, (देवयं) देवाधिदेव के प्रभाव से युक्त, (चेइयं) केवलज्ञान युक्त, ऐसे श्री भग-
वान् महावीर स्वामी की (विणएणं) विनयपूर्वक (पज्जुवासामो) सेवा करें । (एयं णे
इहभवे पेच्चभवे य) यह भगवान का वन्दन और नमस्कार आदि इस भव में और पर-
भव में (हियाए) आजीवन कल्याण के लिये (सुहाए) सुख के लिये अर्थात् भोगजनित

देवानुप्रिय ! तेमनी पासे आपण्हे जधये, त्यां जधने (समणं भगवं महावीरं)
श्रमणु भगवान् भडावीरने (वंदामो) वंदना करीये अर्थात् तेमनां गुणगान करीये.
(णमंसामो) पंचांग—नमनपूर्वक नमस्कार करीये. (सक्कारेमो) अभ्युत्थान आदि
क्रियाओं द्वारा तेमनो सत्कार करीये. (सम्माणेमो) लक्षित बहुमान साथे
तेमनुं सम्मान करीये. (कल्लाणं) कल्याण प्राप्तिना कारणभूत, (मंगलं) पापानो
नाश करवा भाटे निमित्तरूप, (देवयं) देवाधिदेवना प्रभावशी युक्त, (चेइयं)
केवलज्ञान युक्त, येवा श्री भगवान् भडावीर स्वामीनी (विणएणं) विनयपूर्वक
(पज्जुवासामो) सेवा करीये. (एयं णे इहभवे पेच्चभवे य) आ भगवानने वंदन
तथा नमस्कार आदि आ भवमां तथा परभवमां (हियाए) आजीवन कल्याण

**आणुगामियत्ताए भविस्सइ—त्ति कट्टु बहवे उग्गा उग्गपुत्ता भोगा
भोगपुत्ता, एवं दुपडोयारेणं राइण्णा खत्तिया माहणा भडा जोहा**

हिताय=जीवनादिनिर्वाहाय, 'सुहाए' सुखाय=भोगसंपादानन्दाय, 'खमाए' क्षमाय=समुचितसुखसामर्थ्याय, 'णिस्सेयसाए' निःश्रेयसाय=भाग्योदयाय, 'आणुगामियत्ताए' आनुगामिकतायै=अनुगमनशीलत्वेन भवपरम्पराऽनुबन्धिसुखाय भविष्यति । 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा इति=एवं कृत्वा=आख्यानं भाषणं प्रज्ञापनां प्ररूपणां च अन्योऽन्यं कृत्वा 'बहवे' बहवः, 'उग्गा उग्गपुत्ता' उग्रा उग्रपुत्राः, तत्र-उग्राः—आदिदेवाऽवस्थापिताः रक्षकवंशजाः, उग्रपुत्राः—त एव कुमारावस्थानंपन्नाः, 'भोगा भोगपुत्ता' भोगाः—भोगपुत्राः—भोगाः=आदिदेवावस्थापिताः गुरुवंशजाः, भोगपुत्राः—त एव कुमारावस्थासम्पन्नाः, 'एवं दुपडोयारेणं' एवं द्विपदोच्चारणेन—ते च तत्पुत्राश्चेति द्विवारोच्चारणेन 'राइण्णा' राजन्याः—भगवद्वयस्यवंशजाः, राजन्यपुत्राः—राज-आनन्द प्राप्ति के लिये (खमाए) समुचित सुख देने के लिये (णिस्सेयसाए) निःश्रेयस अर्थात् भाग्योदय के लिये, तथा (आणुगामियत्ताए) जन्म—जन्मान्तर में सुख देने के लिये (भविस्सइ) होगा, (त्तिकट्टु) इस प्रकार विचार कर (बहवे) बहुत से (उग्गा) भगवान् आदिनाथ प्रभु द्वारा स्थापित रक्षकवंश में उत्पन्न 'उग्र' कहलाते हैं, ऐसे उग्रवंशीय लोग, और (उग्गपुत्ता) उन उग्रवंशीय लोगों के पुत्र, तथा बहुत से (भोगा) भगवान् आदिनाथ प्रभु द्वारा स्थापित गुरुवंश में उत्पन्न 'भोग' कहलाते हैं, ऐसे भोगवंशीय लोग और (भोगपुत्ता) उन भोगवंशीय लोगों के पुत्र, (एवं दुपडोयारेणं) इसी तरह आगे के पदों का भी दुबारा उच्चारण करना चाहिये, जैसे—'राइण्णा राइण्णपुत्ता' इत्यादि । तथा—बहुत से (राइण्णा) राजन्य—अर्थात् भगवान् आदिनाथ के मित्रों के वंशज एवं उनके पुत्र, (खत्तिया)

भाटे, (सुहाए) सुख भाटे अर्थात् लोगजनित आनन्द प्राप्ति भाटे, (खमाए) समुचित सुख देवा भाटे (णिस्सेयसाए) निःश्रेयस् अर्थात् भाग्योदयने भाटे, तथा (आणुगामियत्ताए) जन्म—जन्मान्तरमां सुख देवा भाटे (भविस्सइ) थशे. (त्ति कट्टु) आ प्रकारे विचार करीने (बहवे) धण्णा दोडे (उग्गा) लगवान् आदिनाथ प्रभु द्वारा स्थापित रक्षकवंशमां उत्पन्न 'उग्र' उडेवाय छे, अेवा उग्रवंशीय दोड, तथा (उग्गपुत्ता) ते उग्रवंशीय दोडेना पुत्र, (भोगा) लगवान् आदिनाथ प्रभु द्वारा स्थापित गुरुवंशमां उत्पन्न 'भोग' उडेवाय छे, अेवा भोगवंशी दोड, तथा (भोगपुत्ता) ते भोगवंशी दोडेना पुत्र, (एवं दुपडोयारेणं) अे रीते आगणना पढेना पण्णी अीलवार उच्चारण्ण करवुं जेधअे, जेमडे—“राइण्णा, राइण्णपुत्ता” इत्यादि, तथा धण्णा (राइण्णा) राजन्य—अर्थात् लगवान् आदिनाथना मित्रेना वंशज अेवं तेमना पुत्र, (खत्तिया) क्षत्रिय

पसत्थारो मल्लई लेच्छई लेच्छइपुत्ता अण्णे य बहवे राई-सर-
तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-

न्यकुमाराश्च, 'स्वत्तिया' क्षत्रियाः, क्षत्रियकुमाराश्च, 'माहणा' ब्राह्मणाः, ब्राह्मणकुमाराश्च, 'भडा' भटाः-भटकुमाराश्च, 'जोहा' योधाः-युद्धव्यवसायवन्तः, तेषां कुमाराश्च, 'पसत्थारो' प्रशास्तारः-धर्मशास्त्रपाठकाः, तेषां पुत्राश्च, 'मल्लई' मल्लकिनः=विशिष्टक्षत्रियजातीयाः, तेषां पुत्राश्च, 'लेच्छई' लेच्छकिनः-क्षत्रियजातिभेदवन्तः, 'लेच्छइपुत्ता' लेच्छकिपुत्राः, 'अण्णे य बहवे' अन्ये च बहवः 'राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थ-वाह-प्पभिइओ' राजे-श्वर-तलवर-माडम्बिक-कौटुम्बिके-भ्य-श्रेष्ठि-सेनापति-सार्थवाह-प्रभृतयः, तत्र-राजानो=माण्डलिकाः नरपतयः, ईश्वराः=ऐश्वर्यसंपन्ना युवराजाः, तलवराः=संतुष्ट-भूपालदत्तपट्टबन्धपरिभूषिता राजकल्पाः, माडम्बिकाः=ग्रामपञ्चशतीपतयः, यद्वा-सार्धक्रोशद्वय-परिमितप्रान्तरैर्विच्छिद्य विच्छिद्य स्थितानां ग्रामाणामधिपतयः, कौटुम्बिकाः=कुटुम्बभरणे तत्पराः,

क्षत्रिय और उनके पुत्र, (माहणा) ब्राह्मण और ब्राह्मणपुत्र, (भडा) भट और भटपुत्र, (जोहा) योधा-युद्ध के व्यवसायवाले व्यक्ति और उनके पुत्र, (पसत्थारो) धर्मशास्त्रपाठक और उनके पुत्र, (मल्लई) मल्लकी-मल्लकि जाति के क्षत्रिय और उनके पुत्र, (लेच्छई) लेच्छकी-लेच्छकी जाति के क्षत्रिय और (लेच्छइपुत्ता) लेच्छकियों के पुत्र, तथा और भी बहुत से (राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थ-वाह-प्पभिइओ) राजा-मांडलिक नृपति, ईश्वर-ऐश्वर्यसंपन्न युवराज, तलवर-संतुष्ट हुए नृपतिद्वारा प्रदत्त पट्टबन्ध से परिभूषित राजा जैसे विशिष्ट व्यक्ति, माडंबिक-पांचसौ गांव के अधिपति, अथवा ढाई २ कोस पर बसे हुए ग्रामों के स्वामी, कौटुम्बिक-अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण करने वाले, अथवा-बहुत कुटुम्ब का पालनपोषण करने वाले, इभ्य-

तथा तेभना पुत्र, (माहणा) ब्राह्मण तथा ब्राह्मणपुत्र, (भडा) भट तथा भट-पुत्र, (जोहा) योद्धा-युद्धमां व्यवसायवाणा लोक तथा तेभना पुत्र, (पसत्थारो) धर्मशास्त्रपाठक तथा तेभना पुत्र, (मल्लई) मल्ल-मल्लजतिना क्षत्रिय अने तेना पुत्र, (लेच्छई) लेच्छकी-लेच्छकी जतिना क्षत्रिय तथा (लेच्छइपुत्ता) लेच्छकिओना पुत्र तथा भील्ल पणु धणु (राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-प्पभिइओ) राजा-मांडलिक नृपति, ईश्वर-ऐश्वर्य-संपन्न युवराज, तलवर-संतोष पाभेला नृपति द्वारा प्रदत्त पट्टबन्धथी परिभूषित राजा जेवा विशिष्ट लोक, माडम्बिक-पांचसौ गाभना अधिपति, अथवा अही २ कोस पर वसेलां गाभेना स्वामी, कौटुम्बिक-पोताना कुटुम्बनां भरण-पोषण करवावाणा, अथवा धणुं कुटुम्बनां पालन पोषण करवा-

યદ્રા-બહુકુટુમ્બપોષકાઃ, ઇમ્યાઃ=ઇમો હસ્તી, તન્પ્રમાણં દ્રવ્યમર્હન્તીતિ તથા, તે ચ જઘન્યમધ્યમોત્કૃષ્ટભેદાત્ ત્રિપ્રકારાસ્તત્ર હસ્તિપરિમિતમણિમુક્તાપ્રવાલસુવર્ણરજતાદિદ્રવ્યરાશિ-સ્વામિનો જઘન્યાઃ, હસ્તિપરિમિતવજ્રહીરકમણિમાણિક્યરાશિસ્વામિનો મધ્યમાઃ, હસ્તિપરિ-મિતકેવલવજ્રહીરકરાશિસ્વામિન ઉત્કૃષ્ટાઃ, હસ્તિપ્રમાણોચ્છિદ્રતધનરાશિસ્વામિન ઇમ્યા ઇત્યર્થઃ। શ્રેષ્ઠિનઃ = લક્ષ્મીકૃપાકટાક્ષપ્રત્યક્ષલક્ષ્યમાણદ્રવિણલક્ષલક્ષણવિલક્ષણહિરણ્યપદ્મસમલઙ્કૃતમૂર્ધાનો નગરપ્રધાનવ્યવહર્તારઃ, સેનાપતયઃ=ચતુરજ્ઞસૈન્યનાયકાઃ, સાર્થવાહાઃ=ગણિમ-ધરિમ-મેય-

હસ્તિ પ્રમાણ દ્રવ્યસંપન્ન ધનિક જન, જે જઘન્ય, મધ્યમ એવં ઉત્કૃષ્ટ કે ભેદ સે ૩ પ્રકાર કે હોતે હૈં; ઇનમેં જિનકે પાસ હસ્તિપ્રમાણપરિમિત મણિ, મુક્તા, પ્રવાલ, સુવર્ણ એવં રજત આદિ દ્રવ્ય કી રાશિ હોતી હૈ વે જઘન્ય ઇમ્ય હૈં, જિનકે પાસ હસ્તિપ્રમાણ પરિમિત વજ્ર હીરે, મણિ, માણિક્ય કી રાશિ હોતી હૈ વે મધ્યમ ઇમ્ય હૈં, પરન્તુ જિનકે પાસ કેવલ હસ્તિ-પ્રમાણ-પરિમિત વજ્ર હીરોં કી રાશિ હોતી હૈ વે ઉત્કૃષ્ટ ઇમ્ય હૈં। શ્રેષ્ઠી-લક્ષ્મી કી જિન પર પૂરી ૨ કૃપા હો, ઉસ કૃપાકોરકે કારણ જિનકે લાશ્વોં કે સ્વજાને હોં, તથા જિનકે શિર પર ઉન્હોં કો સૂચિત કરને વાલા ચાન્દી કા વિલક્ષણ પદ્મ શોભાયમાન હો રહા હો, જો નગર કે પ્રધાન વ્યાપારી હોં, ઉન્હેં શ્રેષ્ઠી કહતે હૈં, એસે શ્રેષ્ઠી જન, સેનાપતિ=ચતુરજ્ઞ સેના કે નાયક, સાર્થવાહ-જો ગણિમ=ગિન કર સ્વરીદને-વેચને યોગ્ય નારિયલ, સુપારી, કેલા આદિ વસ્તુઓં કો, ધરિમ=તૌલકર સ્વરીદને-વેચને યોગ્ય ધાન, જૌ, નમક, શકર આદિ વસ્તુઓં કો, મેય=સરાવા, આદિ છોટે વર્તન આદિ સે માપ કર સ્વરીદને વેચને યોગ્ય દૂધ,

વાળા, ઇલ્ય-હસ્તિ-પ્રમાણ-દ્રવ્ય-સંપન્ન ધનિક જનો, આ જઘન્ય, મધ્યમ તેમજ ઉત્કૃષ્ટના ભેદથી ૩ પ્રકારના હોય છે. તેમાં જેમની પાસે હસ્તિપ્રમાણ-પરિમિત મણિ, મુક્તા, પ્રવાલ, સુવર્ણ તેમજ ચાંદી આદિ દ્રવ્યના ઢગલા હોય તે જઘન્ય ઇલ્ય છે, જેની પાસે હસ્તિપ્રમાણપરિમિત વજ્ર, હીરા, મણિ, માણિક્યના ઢગલા હોય તે મધ્યમ ઇલ્ય છે. પરંતુ જેમની પાસે કેવલ હસ્તિ-પ્રમાણપરિમિત વજ્ર હીરાના ઢગલા હોય તે ઉત્કૃષ્ટ ઇલ્ય જન છે. શ્રેષ્ઠી-લક્ષ્મીની જેમના પર પુરેપુરી કૃપા હોય, તે કૃપાના કારણે જેના લાજોના ખજાના હોય તથા જેમના માથા ઉપર તેનું સૂચન કરવાવાળાં ચાંદીનાં વિલક્ષણ પદ્મ (પાદ્મહી) શોભી રહી હોય, જે નગરના મુખ્ય વ્યાપારી હોય તેમને શ્રેષ્ઠી કહેવાય છે. એવા શ્રેષ્ઠીજન, સેનાપતિ-ચતુરંગ સેનાના નાયક, સાર્થવાહ-જે ગણિમ=ગણતરી કરીને ખરીદાય તથા વેચાય તેને યોગ્ય નારિયલ, સોપારી, કેળાં આદિ વસ્તુઓ, ધરિમ=તોળીને ખરીદવા, વેચવા યોગ્ય ધાન, જવ, મીઠું, સાકર આદિ વસ્તુઓ, મેય=પાવણું કે ડબો એવાં નાનાં વાસણથી

**પ્પમિહો અપ્પેગહ્યા વંદણવત્તિયં અપ્પેગહ્યા પૂયણવત્તિયં एवं
સક્કારવત્તિયં સમ્માણવત્તિયં દંસણવત્તિયં કોઝહલવત્તિયં, અપ્પે-**

પરિચ્છેદ્યરૂપક્રેયવિક્રેયવસ્તુજાતમાદાય લાભેચ્છયા દેશાન્તરાણિ વ્રજતાં સાર્થં વાહયન્તિ=યોગ-
ક્ષેમાભ્યાં પરિપાલયન્તીતિ, દીનજનોપકારાય મૂલધનં દત્ત્વા તાન્ સમર્થયન્તીતિ તથા, એત-
ત્પ્રમૃતયઃ, એષુ-‘અપ્પેગહ્યા’ અપ્યેકકે-કેચિત્-‘વંદણવત્તિયં’ વન્દનવૃત્તિકમ્-વન્દનાય
વૃત્તિઃ=પ્રવૃત્તિર્યસ્મિન્ કર્મણિ તત્ તથા, ક્રિયાવિશેષણમિદં; વન્દનાર્થમિત્યર્થઃ, ‘અપ્પેગહ્યા’
અપ્યેકકે-કેચિત્ ‘પૂયણવત્તિયં’ પૂજનવૃત્તિકમ્-સેવાકરણાર્થમ્, ‘સક્કારવત્તિયં’
સત્કારવૃત્તિકમ્-સત્કારાર્થમ્, ‘સમ્માણવત્તિયં’ સમ્માનવૃત્તિકમ્-સમ્માનાર્થમ્, ‘દંસણ-
વત્તિયં’ દર્શનવૃત્તિકમ્-દર્શનાર્થમ્, ‘કોઝહલવત્તિયં’ કૌતૂહલવૃત્તિકમ્-કૌતૂહલાર્થમ્-

ધી, તેલ આદિ વસ્તુઓં કો, તથા-પરિચ્છેદ્ય=કસૌટી આદિ પર પરીક્ષા કરકે સ્વરીદને-બેચને
યોગ્ય મણિ, મોતી, મૂંગા, ગહના આદિ વસ્તુઓં કો લેકર નફા કે લિયે દેશાન્તર મેં જાને
વાલે સાર્થ (સમૂહ) કો લે જાતે હૈં, તથા યોગ (નવી વસ્તુ કી પ્રાપ્તિ) ઓર ક્ષેમ (પ્રાપ્ત
વસ્તુ કી રક્ષા) કે દ્વારા ઉનકા પાલન કરતે હૈં, ગરીબોં કી મલાઈ કે લિયે ઉન્હેં પૂંજી
દેકર વ્યાપાર દ્વારા ઉન્હેં ધનવાન બનાતે હૈં, વે સાર્થવાહ કહલાતે હૈં; એસે સાર્થવાહ લોગ;
ઇનમેં સે-(અપ્પેગહ્યા) કિતનેક (વંદણવત્તિયં) વન્દના કરને કે લિયે (અપ્પેગહ્યા) કિત-
નેક (પૂયણવત્તિયં) સેવા કરને કે લિયે, (અં) ઇસી તરહ (સક્કારવત્તિયં) સત્કાર કરને
કે લિયે, (સમ્માણવત્તિયં) સન્માન કરને કે લિયે, (દંસણવત્તિયં) દર્શન કરને કે લિયે,
(કોઝહલવત્તિયં) પહિલે કમી મી ભગવાન કો નહીં દેસે થે; અતઃ ઉનકો દેસને કે લિયે,

માપીને ખરીદવા વેચવા યોગ્ય દૂધ, ઘી, તેલ આદિ વસ્તુઓ તથા પરિચ્છેદ્ય
=કસૌટી આદિ ઉપર પરીક્ષા કરીને ખરીદવા વેચવા યોગ્ય મણિ, મોતી,
પરવાળાં, ઘરેણાં આદિ વસ્તુઓ લઈને નફો કરવા માટે દેશાંતરમાં જવાવાળા
સાર્થ (સમૂહ)ને લઈ જાય છે, તથા યોગ (નવી વસ્તુની પ્રાપ્તિ) અને ક્ષેમ
(પ્રાપ્ત વસ્તુની રક્ષા) દ્વારા તેમનું પાલન કરે છે, ગરીબોનાં ભલાં માટે તેમને
પુંજી દઈને વ્યાપાર દ્વારા ધનવાન બનાવે છે તે સાર્થવાહ કહેવાય છે. એવા
એવા સાર્થવાહ લોક, એમાંના (અપ્પેગહ્યા) કેટલાક (વંદણવત્તિયં) વંદના કરવા
માટે (અપ્પેગહ્યા) કેટલાક (પૂયણવત્તિયં) સેવા કરવા માટે, (અં) એવી રીતે
(સક્કારવત્તિયં) સત્કાર કરવા માટે (સમ્માણવત્તિયં) સન્માન કરવા માટે (દંસણ-
વત્તિયં) દર્શન કરવા માટે (કોઝહલવત્તિયં) પહેલાં કદી પણ ભગવાનને જોયેલા

गइया अट्टविणिच्छयहेउं अस्सुयाइं सुणेस्सामो सुयाइं निस्सं-
कियाइं करिस्सामो, अप्पेगइया अट्टाइं हेऊइं कारणाइं वागर-
णाइं पुच्छिस्सामो, अप्पेगइया सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता

अपूर्वदृष्टदर्शनार्थमित्यर्थः । ‘अप्पेगइया’ अप्येकके—केचित् ‘अट्ट-विणिच्छय-हेउं’
अर्थविनिश्चयहेतु—अर्थानां=जीवाजीवादिभावानां यत् स्वरूपं तस्य विनिश्चयो हेतुर्यस्मिंस्तत्,
जीवाजीवादिस्वरूपविनिश्चयार्थमित्यर्थः, ‘अस्सुयाइं’ अश्रुतानि आगमरहस्यानि, ‘सुणेस्सामो’
श्रोष्यामः-इत्याशया, ‘सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो’ श्रुतानि निशङ्कितानि करिष्यामः-
इत्याशया, ‘अप्पेगइया’ अप्येकके—केचित्—‘अट्टाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं’
अर्थान् हेतून् कारणानि व्याकरणाणि, तत्र—अर्थान्-जीवाजीवादिनवतत्त्वरूपान्
भावान्, हेतून् — जीवादिस्वरूपसाधकान्. कारणानि=अन्यथानुपपत्तिमात्ररूपाणि
व्याकरणानि=परप्रष्टार्थोत्तररूपाणि ‘पुच्छिस्सामो’ प्रक्ष्यामः, ‘अप्पेगइया’ अप्येकके,
‘सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता’ सर्वतः समन्ताद् मुण्डा भूत्वा—सर्वतः सावद्यव्यापार-

(अप्पेगइया) कितनेक (अट्टविणिच्छयहेउं) जीव अजीव—आदि पदार्थों के स्वरूप
को निश्चय करने के लिये, तथा (अस्सुयाइं सुणेस्सामो) आगम के रहस्य जो पहिले
कभी सुनने में नहीं आये हैं उन्हें सुनेंगे, और (सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो) जो
आगम के रहस्य सुने हैं उन्हें शंका रहित करेंगे इस प्रकार की भावना से, (अप्पेगइया)
और कितनेक (अट्टाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो) जीव अजीव आदि नव
तत्त्वरूप भावों को, जीवादिक के स्वरूप के साधकरूप हेतुओं को, अन्यथानुपपत्तिरूप कारणों
को, एवं पर के द्वारा पूछे गये अर्थ के उत्तररूप व्याकरण को पूछेंगे इस प्रकार की भावना
से, (अप्पेगइया) कितनेक (सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्व-

नडि तेथी तेमने जेवा भाटे, (अप्पेगइया) डेटलाड (अट्टविणिच्छयहेउं)
अव-अअव आदि पदार्थोंनां स्वरूपने निश्चय करवाने भाटे तथा (अस्सुयाइं
सुणेस्सामो) आगमनां रहस्य जे पडेलां इही सांलज्यां नडोतां ते सांलज्युं,
तथा (सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो) जे आगमनुं रहस्य सांलज्युं छे तेने
शंकारहित करशुं. जे प्रकारनी भावनाथी, (अप्पेगइया) तथा डेटलाड (अट्टाइं
हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो) अव अअव आदि नवतत्त्वइय भावने,
अव आदिकनां स्वरूपनां साधकइय हेतुआने, अन्यथानुपपत्ति इय कारणेने तेमज
भीज्ज द्वारा पूछाता अर्थना उत्तरइय व्याकरणेने पूछशुं—जे प्रकारनी भाव-
नाथी, (अप्पेगइया) डेटलाड (सव्वओ समंता मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगा-

अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो, [अप्पेगइया] पंचाणुव्वइयं
सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो, अप्पे-
गइया जीयमेयंति कट्ठु ण्हाया कयवलिकम्मा कय-कोउय-मंगल-

विरतिपूर्वकं मुण्डिताः—कृतकेशलुञ्चनाः सम्पद्य ‘अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो’ अगाराइ=गृहाइ अनगारिकतां=साधुत्वं प्रव्रजिष्यामः=प्राप्स्यामः—अनगारा भविष्यामः, ‘अप्पेगइया’ अप्येकके—‘पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो’ पञ्चानुव्रतिकं सप्तशिक्षाव्रतिकं द्वादशविधं गृहिधर्मं प्रव्रजिष्यामः, ‘अप्पेगइया’ अप्येकके—‘जिण-भत्ति-रागेणं’ जिनभक्तिरागेण, ‘अप्पेगइया’ अप्येकके, ‘जीयमेयंति कट्ठु’ जीतमेतदिति कृत्वा—कुलचारोऽयमिति मत्वा, ‘ण्हाया’ स्नाताः—‘कयवलिकम्मा’ कृत-वलिकर्माणः, ‘कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता’ कृत-कौतुक-मङ्गल-प्रायश्चित्ताः—

इस्सामो) सावध व्यापारों से सर्वथा विरत होकर, केशलुञ्चनपूर्वक गार्हस्थिक अवस्था का परित्याग कर अनगार बनेंगे—इस प्रकार की भावना से, तथा कितनेक—(पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो) पांच अणुव्रत एवं सात शिक्षाव्रत के भेद से १२ भेदरूप गृहस्थ के धर्म को स्वीकार करेंगे—इस भावना से, (अप्पेगइया) कितनेक (जिणभत्तिरागेणं) जिनेन्द्र की भक्ति करेंगे इस प्रकार भक्ति के अनुराग से, (अप्पेगइया,) कितनेक (जीयमेयंति कट्ठु) यह हम लोगों का कुलचार है—इस प्रकार मान कर; (ण्हाया) स्नान किये, (कयवलिकम्मा) काक आदि को अन्नादि दान रूप वलिकर्म किये, (कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता) दुःस्वप्नादि निवारण के लिये

रियं पव्वइस्सामो) सावध व्यापारोत्थी सर्वथा विरत थईने केशलुञ्चनपूर्वक गार्हस्थिक अवस्थानो परित्याग करीने अनगार बनशुं—ये प्रकारनी भावनाथी, तथा डेटलाड (पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो) पांच अणुव्रत तेमज्ज सात शिक्षाव्रतना लेहथी १२ लेह ३५ गृहस्थना धर्मनो स्वीकार करशुं. येवी भावनाथी, (अप्पेगइया) डेटलाड (जिणभत्तिरागेणं) जिनेन्द्रनी भक्ति करशुं ये प्रकारनी भक्तिना अनुरागथी, (अप्पेगइया) डेटलाड (जीयमेयंति कट्ठु) आ अमारो दुलाचार छे—ये प्रकारनी मान्यताथी, (ण्हाया) स्नान करी (कय-वलि-कम्मा) कागडा आदिने अन्न आदि दानइय पालिडर्म करी, (कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता) दुःस्वप्नादि निवारणने भाटे मसी तिलड दडी येआ आदि धारण करी, (सिरसा कंटे

पायच्छित्ता, सिरसा कंठे मालकडा आविद्ध-मणि-सुवर्णा कप्पिय-
हार-द्धहार-तिसर-पालंब-पलंबमाण-कटिसुत्त-सुकय-सोहा-
भरणा पवर-वत्थ-परिहिया चंदणो-ल्लित्त-गाय-सरीरा, अप्पे-

कृतं कौतुकं=मणीपुण्ड्रादिकं, मङ्गलं-दध्यक्षतादि, एतद्वयं प्रायश्चित्तं दुःस्वमादिप्रशमन-
त्वेनावश्यकर्णीयत्वाद् यैस्ते तथा, कौतुकमङ्गलरूपं प्रायश्चित्तं कृतवन्त इत्यर्थः । 'सिरसा
कंठे मालकडा' शिरसि कण्ठे कृतमालाः 'आविद्ध-मणि-सुवर्णा' आविद्ध-मणि-
सुवर्णाः-परिधृतमणिकनकभूषणाः; भूषणान्येव नामभिर्निर्दिशति-'कप्पिय-हार-द्धहार-
तिसर-पालंब-पलंबमाण-कटिसुत्त-सुकय-सोहाभरणा' कल्पित-हारा-द्धहार-तिसर-
प्रालम्बप्रलम्बमान-कटिसूत्र-सुकृत-शोभाऽऽभरणाः, तत्र-हारः अर्द्धहारः तिसरकश्च प्रसिद्धः;
तथा प्रालम्बः=झुम्बनकं स एव प्रलम्बमानः यत्र तत् कटिसूत्रं च तानि सुकृतशोभानि आभरणानि
कल्पितानि-धृतानि यैस्ते तथा, विविधभूषणभूषितशरीरा इत्यर्थः; तथा-'पवर-वत्थ-
परिहिया' प्रवरवस्त्रपरिहिताः-श्रेष्ठवस्त्रधारकाः, 'चंदणो-ल्लित्त-गाय-सरीरा' चन्दनो-ल्लित्त-
गात्र-शरीराः-चन्दनचर्चितशरीराः । 'अप्पेगइया' अन्त्येकके-'हयगया एवं गयगया रहगया

मणीनिलक दधि अक्षत आदि धारण किये, (सिरसा कंठे मालकडा आविद्ध-मणि-सुव-
र्णा) मस्तक एवं कंठ में मालाएँ धारण किये, जिनमें मणि जड़े हुए हैं ऐसे सुवर्णों के
आभूषण पहिने, तथा (कप्पिय-हार-द्धहार-तिसर-पालंब-पलंबमाण-कटिसुत्त-सुकय-
सोहा-भरणा) शरीरशोभावर्द्धक अठारह लर के हार, ९ लर के अर्धहार, तीन लर के
तिसरक, और नीचे की ओर लटकते हुए झूमके वाले कटिसूत्र पहिरे, (पवर-वत्थ-परि-
हिया) अच्छे २ सुन्दर बहुमूल्य वस्त्र पहिरे, (चंदणो-ल्लित्त-गाय सरीरा) शरीर पर
चन्दन लगाये; जब इस प्रकार वहाँ की जनता सज-धज कर तैयार हो चुकी तब उसमें से
(अप्पेगइया) कितनेक (चलने के लिये); (हयगया) घोड़ों पर सवार हुए, (एवं गयगया)

मालकडा आविद्ध-मणि-सुवर्णा) मस्तक तेमज्ज कंठमां मालाओ धारणु करी,
जेमां मणि जडेदां डोय ओवां सुवर्णनां आभूषण पडेयां, तथा (कप्पिय-हार-द्ध-
हार-तिसर-पालंब-पलंबमाण-कटिसुत्त-सुकय-सोहाभरणा) शरीरशोभावर्द्धक अठार
भर (लट)ना डार, ९ सरना अर्धडार, त्रणु सरना डार, नीचेनी तरङ्ग
लटकतां झूमभावाणां कटिसूत्र पडेयां, (पवर-वत्थ-परिहिया) सारा सारा
सुन्दर बहुमूल्य वस्त्रो पडेयां, (चंदणो-ल्लित्त-गाय सरीरा) शरीर पर
चन्दन लगाव्युं. ज्यारे आ प्रडारे त्यांनी जनता सज्जधज्जने तैयार थछ
गछ त्यारे तेमांथी (अप्पेगइया) डेटडाड आलवा भाटे (हयगया) घोडा पर

गइया हयगया एवं गयगया रहगया सिबियागया संदमाणियागया, अप्पेगइया पाय-विहार-चारिणो पुरिस-वग्गुरा-परि-
क्खित्ता महया उक्किट्ठि-सीह-णाय-बोल-कलकल-रवेणं पक्खु-
ब्भिय-महासमुद-रव-भूयं पिव करेमाणा चंपाए णयरीए मज्झं-

सिबियागया संदमाणियागया 'हयगता एवं गजगता रथगताः शिबिकागताः स्यन्दमानिकागताः—तत्र शकटोपरि दत्ता शिबिकैव स्यन्दमानिका, 'अप्पेगइया' अन्येकके 'पाय-विहार-चारिणो' पादविहारचारिणः 'पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता' पुरुषवागुरापरिक्षिताः—पुरुषसमूहेन परिवेष्टिताः, 'महया' महता 'उक्किट्ठि-सीहणाय-बोल-कलकल-रवेणं' उत्कृष्टि-सिंहनाद-बोल-कलकल-रवेण — उत्कृष्टिः=आनन्दमहाध्वनिः, सिंहनादः=प्रसिद्धः, बोलः=वर्णव्यक्तिसहितो ध्वनिः, कलकलः=वर्णव्यक्तिरहितो ध्वनिः, एषां समाहारः, तदेव यो रवः स तथा तेन, 'पक्खुब्भिय-महासमुद-रवभूयं पिव' प्रक्षुभित-महासमुद्र-रवभूत-मिव-प्रक्षुभितमहासमुद्रस्य यो रवभूतः=संजातशब्दस्तमिव=तद्वत् नगरं 'करेमाणा' कुर्वन्तः-

इसी प्रकार कितनेक हाथी पर आरूढ़ हुए, (रहगया) कितनेक रथों पर बैठे, (सिबिया-गया) कितनेक पालखियों में चढ़े, (संदमाणियागया) कितनेक बहेलियों-पालकीविशेष में बैठे; (अप्पेगइया) तथा कितनेक (पुरिस-वग्गुरा-परिक्खित्ता) पुरुषों के समूह से घिरे हुए होकर (पाय-विहार-चारिणो) पैदल ही निकले; ये सभी (महया) महान् (उक्किट्ठि-सीहणाय-बोल-कलकल-रवेणं) 'उक्किट्ठि'—उत्कृष्टि—अतिशय आनन्द जनित-ध्वनि से, (सीहणाय) सिंहनाद—सिंहनाद से, 'बोल'—व्यक्तवर्णयुक्त ध्वनिसे, तथा 'कल-कलरव'—अव्यक्त ध्वनि से (पक्खुब्भिय-महासमुद-रवभूयं पिव) चम्पानपरी को प्रक्षु-

सवार था। (एवं गयगया) आ प्रकारे डेटलाड डायीपर आइड था। (रहगया) डेटलाड रथ उपर जेडा। (सिबियागया) डेटलाड पालखीओमां थड्या। (संदमाणियागया) डेटलाड पालखीविशेषोमां जेडा, (अप्पेगइया) तथा डेटलाड (पुरिस-वग्गुरा-परिक्खित्ता) पुइओनां टोणां साथे धीमे-धीमे पगले (पाय-विहार-चारिणो) पेइलज नीडज्या, आ जधा (महया) मडान् (उक्किट्ठि-सीहणाय-बोल-कलकलरवेणं) 'उक्किट्ठि' उत्कृष्टि-अतिशय आनंद जनित ध्वनिथी, (सीहणाय) सिंहुनाद-सिंहुनादथी, (बोल) व्यक्तवर्णयुक्त ध्वनिथी तथा (कल-कलरव) अव्यक्त ध्वनिथी (पक्खुब्भिय-महासमुद-रवभूयं पिव) चंपा नगरीने

मज्झेणं णिग्गच्छंति, णिग्गच्छित्ता जेणेव पुण्णभदे चेइए तेणेव
उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूर-
सामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासंति, पासित्ता जाणवाहणाइं
ठवेंति, ठवित्ता जाणवाहणेहिंतो पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता जेणेव

चम्पानगरीं महाकोलाहलमयीं कुर्वन्तः, 'चंपाए णयरीए' चम्पायानगर्याः 'मज्झं-मज्झेणं'
मध्यमध्येन-सर्वतो मध्यमार्गेण 'णिग्गच्छंति' निर्गच्छन्ति, 'णिग्गच्छित्ता' निर्गत्य 'जेणेव पुण्ण-
भदे चेइए' यत्रैव पूर्णभद्रं चैत्यम्, 'तेणेव उवागच्छंति' तत्रैवोपागच्छन्ति, 'उवागच्छित्ता'
उवागत्य, 'समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य
अदूरसमीपे- 'छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासंति' छत्रादीन् तीर्थकरातिशेषान्=तीर्थकरातिशय-
द्योतकानि कानिचिच्छत्रादीनि चिह्नानि पश्यन्ति, 'पासित्ता' दृष्ट्वा 'जाणवा-
हणाइं ठवेंति' यानवाहनानि स्थापयन्ति, 'ठवित्ता' स्थापयित्वा 'जाणवाहणेहिंतो

भित महासमुद्र के महाध्वनि से मानो युक्त करते हुए, (चंपाए णयरीए) उस चंपा नगरी
के (मज्झंमज्झेणं) ठीक बीचो बीच के मार्ग से (णिग्गच्छंति) निकले, (णिग्गच्छित्ता)
ये सब निकल कर (जेणेव पुण्णभदे चेइए) जहां पर वह पूर्णभद्र नामका उद्यान था
(तेणेव उवागच्छंति) वहाँ पर पहुँचे, (उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स
अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासंति) वहाँ पहुँच कर उन्होंने भगवान् महा-
वीर के न अतिदूर और न अतिनिकट तीर्थकरों के अतिशय स्वरूप छत्र आदिकों को देखा,
ये छत्रादिक तीर्थकरों के अतिशय द्योतक चिह्न माने गये हैं; (पासित्ता जाणवाहणाइं
ठवेंति) इन चिह्नों के देखते ही उन सबों ने अपने २ यानवाहनादिकों को वहीं रोक

प्रक्षुब्धित महासमुद्रना महाध्वनिथी जेम युक्त करतां डोय तेम (चंपाए णयरीए) ते
चंपा नगरीनी (मज्झंमज्झेणं) अराअर वन्थोवन्थना मार्गथी (णिग्गच्छंति) नीडण्णा,
(णिग्गच्छित्ता) ते अधा नीडणीने (जेणेव पुण्णभदे चेइए) ज्थां ते पूण्णलद्र नामनुं
उद्यान डुतुं (तेणेव उवागच्छंति) त्यां पडोन्थ्या, (उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ
महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासंति) त्यां पडोन्थीने तेअओ
लगवान महावीरथी अहु दूर नडि तेम तीर्थं करेना अतिशयस्वरूप छत्र
आदिने जेयां, आ छत्र आदिउ तीर्थं करेना अतिशयद्योतक चिह्न बनाय
छे; (पासित्ता जाणवाहणाइं ठवेंति) ओ चिह्नेने जेतां ज ते अधांओ पोत-

समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छन्ति, उवागच्छित्ता समणं
भगवं महावीरं तिकखुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति, करित्ता
वंदन्ति णमस्सन्ति, वंदित्ता णमस्सित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सू-
समाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा
पज्जुवासन्ति ॥ सू० ३८ ॥

पच्चोरुहन्ति' यानवाहनेभ्यः प्रत्यवरोहन्ति—अधस्तादवतरन्ति, 'पच्चोरुहित्ता' प्रत्यवरुह्य,
'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः [विराजते] 'तेणेव
उवागच्छन्ति, उवागच्छित्ता' तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य 'समणं भगवं महावीरं तिकखु-
त्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य त्रिकृत्व आदक्षिणं प्रदक्षिणं
कुर्वन्ति—त्रिवारमादक्षिणप्रदक्षिणं कुर्वन्ति, 'करित्ता' कृत्वा 'वंदन्ति' वन्दन्ते—स्तुवन्ति,
'णमस्सन्ति' नमस्यन्ति=प्रणमन्ति, 'वंदित्ता णमस्सित्ता' वन्दित्वा नमस्यित्वा 'णच्चासण्णे
णाइदूरे' नात्यासन्ने नातिदूरे 'सुस्सूसमाणा' शुश्रूषमाणाः 'णमंसमाणा' नमस्यन्तः
'अभिमुहा' अभिमुखाः=संमुखाः, 'विणएणं पंजलिउडा' विनयेन प्राञ्जलिपुटः—विनय-
विनम्रबद्धाञ्जलयः, 'पज्जुवासन्ति' पर्युपासते—उपासनां कुर्वन्ति ॥ सू० ३८ ॥

दिये, (ठवित्ता जाणवाहणेहिंतो पच्चोरुहन्ति) जब वे अच्छी तरह रुक चुके तब वे सब-
के-सब अपने २ वाहनों से नीचे उतरें, (पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे
तेणेव उवागच्छन्ति) उतर कर फिर वे सब लोग जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे
वहाँ पहुँचें, (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिकखुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति)
बाद उन्होंने भगवान् महावीर को तीनबार हाथ जोड़कर प्रदक्षिणा की, (करित्ता) प्रदक्षिणा

पोतानां यानवाडनादिकेने त्यांञ् रोडी दीधां, (ठवित्ता जाणवाहणेहिंतो पच्चोरु-
हन्ति) न्यारे तेओ आरी रीते रोडाई गयां त्यारे ते अधा पोतपोतानां
वाडनोभांथी नीचे उतर्यां, (पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव
उवागच्छन्ति) उतरीने पथी ते दोडो अधा न्यां श्रमणु लगवान मडावीर विराज-
मान हुता त्यां पडोन्थ्या, (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिकखुत्तो आया-
हिणं पयाहिणं करेंति) आह तेओओ लगवान मडावीरने त्रणुवार हाथ जोडीने
प्रदक्षिणा डरी. (करित्ता) प्रदक्षिणा डरी दीधा पथी पगी ते आवेदा न्न

**मूलम्—तए णं से पवित्तिवाउए इमीसे कहाए लद्धट्टे
समाणे हट्ट-तुट्ट-जाव-हियए ण्हाए जाव अप्प-महग्घा-भरणा-**

टीका—‘तए णं से पवित्तिवाउए’ इत्यादि ।

‘तए णं से पवित्तिवाउए’ ततः खलु स प्रवृत्तिव्यापृतः=भगवद्विहारादिवृत्ता-
न्तनिवेदनेऽधिकृतः, ‘इमीसे कहाए लद्धट्टे समाणे’ अस्याः कथाया लब्धार्थः सन् ‘हट्ट-
तुट्ट-जाव-हियए’ हट्ट-तुट्ट-यावद्वृद्धयः ‘ण्हाए जाव अप्प-महग्घा-भरणा-लंकिय-
सरीरे’स्नातो यावदप्यमहार्घाभरणाऽलङ्कृतशरीरः ‘सयाओ गिहाओ’ स्वकाद्गृहात् ‘पडिणि-

कं चुकने वाद फिर उस आगत जनसमूहने (वंदंति नमस्संति) वन्दना एवं नमस्कार
क्रिया, (वंदित्ता णमस्सित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा
विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासंति) वंदना एवं नमस्कार करने के पश्चात् भगवान से न
अतिसमीप में एवं न अतिदूर ही उनके सामने उचित स्थान पर बैठ कर वे सब विनय-
पूर्वक हाथ जोड़कर सेवा करने लगे ॥ सू. ३८ ॥

‘तए णं से पवित्तिवाउए’ इत्यादि ।

(तए णं) इस के बाद (से पवित्तिवाउए) वह भगवान के विहार आदि के
समाचार लाने में नियुक्त किया हुआ व्यक्ति, (इमीसे कहाए) इस कथासे—भगवान के
आगमन के वृत्तान्त से (लद्धट्टे समाणे) परिचित होकर, (हट्ट-तुट्ट-जाव-हियए) अपने
अन्तःकरण में विशेषरूप से हर्षित एवं संतुष्ट हुआ, फिर उसने (ण्हाए
जाव अप्प — महग्घा — भरणा — लंकिय — सरीरे) स्नान किया, पश्चात् थोड़े

समूह (वंदंति णमस्संति) वंदना! तेभज्ज नमस्कार कया, (वंदित्ता णमस्सित्ता
णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जु-
वासंति) वंदना तेभज्ज नमस्कार कया पछी लगवानथी णहु दूर नडि तेम णहु
समीप नडि अम तेमनी सामा उचित स्थान पर जेसीने ते णधा विनय-
पूर्वक हाथ जेडीने सेवा करवा लाया. (सू. ३८)

‘तए णं से पवित्तिवाउए’ इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से पवित्तिवाउए) ते लगवानना विहार आदिना
समाचार लाववा भाटे नियुक्त करेत्ता भाणुस (इमीसे कहाए) आ वातथी-
लगवानना आगमनना वृत्तान्तथी (लद्धट्टे समाणे) परिचित थधने (हट्ट-तुट्ट-जाव-
हियए) पोताना अंतःकरणमां विशेषरूपथी हर्षित तेमज्ज संतुष्ट थयो. पछी तेण्णे
(ण्हाए जाव अप्प-महग्घा-भरणा-लंकिय-सरीरे) स्नान कथुं. पछी थोडा लारवाणां तथा

લંકિય-સરીરે સયાઓ ગિહાઓ પડિણિક્કમ્મઙ્ગ, પડિણિક્કમિત્તા
ચંપાણયરિં મઙ્ગમઙ્ગેણં જેણેવ બાહિરિયા સા ચેવ હેટ્ઠિલ્લા વત્ત-

ક્કમ્મઙ્ગ પડિણિક્કમિત્તા'પ્રતિનિષ્ક્રામતિ,પ્રતિનિષ્ક્રમ્ય,'ચંપાણયરિં મઙ્ગમઙ્ગેણં'ચંપાનગર્યા
મધ્યમધ્યેન,'જેણેવ બાહિરિયા'યત્રૈવ બાહ્યા ઉપસ્થાનશાલા,'સા ચેવ હેટ્ઠિલ્લા વત્તવ્વયા'સૈવાઽ-
ધસ્તાદ્ વત્તવ્યતા, અર્થાત્—યત્રૈવ રાજ્ઞઃ કોણિકસ્ય ગૃહં યત્રૈવ કોણિકો રાજા ભમ્મસારપુત્રસ્ત-
ત્રૈવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય કરતલપરિગૃહીતં શિરઆવર્ત્ત મસ્તકેઽઙ્ગલિં કૃત્વા જયેન વિજયેન
વર્ધયતિ,વર્ધયિત્વા એવમવાદીત્=ભગવતઃ સમવસરણં સવિસ્તરં નિગદિતવાન્,તદનુ ભૂપો ભગવદાગ-
મનં શ્રત્વા હૃષ્ટતુષ્ટઃ સન્ સિંહાસનાદુત્થાય રાજચિહ્નાનિ પરિત્યજ્ય ભગવદભિમુખં સપ્તાષ્ટપદાનિ ગત્વા

માર વાલે તથા બહુમૂલ્ય આભરણોં સે અલંકૃતશરીર હોકર (સયાઓ ગિહાઓ પડિ-
ણિક્કમ્મઙ્ગ)અપને ઘર સે નિકલા,(પડિણિક્કમિત્તા) નિકલકર(ચંપાણયરિં મઙ્ગમઙ્ગેણં)
ઠીક ચંપા નગરી કે બીચેબીચ માર્ગ સે હોતા હુઆ,(જેણેવ બાહિરિયા સા ચેવ હેટ્ઠિલ્લા
વત્તવ્વયા જાવ ણિસીયઙ્) જહાં નીચે બાહિર કી ઓર વહ ઉપસ્થાનશાલા થી, એવં જહાં
રાજા કોણિક કા ગૃહ થા, તથા જહાં પર વે વિરાજમાન થે, વહાં પર વહ પહુંચા; પહુંચકર
દોનોં હાથોં કો જોડકર ઉસને કોણિક નેશકો સાદર નમસ્કાર કિયા, પશ્ચાત્ આપકી જય
હો ઓર વિજય હો—ઇસ રૂપસે ઉન્હેં બધાઈ દી । બધાઈ દે ચુકને કે અનન્તર ફિર ઉસને 'હે
રાજન્ ! આજ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ ચંપાનગરી કે પૂર્ણભદ્ર ઉદ્યાન મેં સમવસૃત હુણ હૈં'—
ઇત્યાદિ વિસ્તૃત રૂપ સે ભગવાન્ કે સમવસરણ કા વૃત્તાન્ત કહા । રાજા ને જબ પ્રભુ કે
આગમન કા વૃત્તાન્ત સુના તબ વે ભી ચિત્ત મેં અધિક પ્રસન્ન એવં સંતુષ્ટ હુણ । મારે હર્ષ કે

બહુ મૂલ્યવાળાં આભરણોથી શરીરને શણગારીને તે (સયાઓ ગિહાઓ પડિણિક્કમ્મઙ્ગ)
પોતાના ઘેરથી નીકળ્યો, (પડિણિક્કમિત્તા) નીકળીને(ચંપાણયરિં મઙ્ગમઙ્ગેણં) બરા-
બર ચંપાનગરીની વચ્ચેવચ્ચેને ભાગેં થઈને (જેણેવ બાહિરિયા સા ચેવ હેટ્ઠિલ્લા વત્ત-
વ્વયા જાવ ણિસીયઙ્) જ્યાં નીચે બહારની તરફ તે ઉપસ્થાનશાલા હતી તેમજ જ્યાં
રાજા કોણિકનું ગૃહ હતું તથા જ્યાં તે વિરાજમાન હતા ત્યાં પહોંચ્યો, પહોંચીને
બન્ને હાથ બેડીને તેણે કોણિક નરેશને સાદર નમસ્કાર કર્યાં. પછી આપની જય થાવો
તથા વિજય થાવો એ રૂપે તેણે વધાઈ આપી. વધાઈ દઈ ચુક્યા પછી તેણે કહ્યું,
હે રાજન્ ! આજે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ ચંપાનગરીના પૂર્ણભદ્ર
ઉદ્યાનમાં સમવસૃત થયા છે. આ પ્રકારે તેણે વિસ્તૃતરૂપથી ભગવાનના
સમવસરણનો વૃત્તાન્ત કહ્યો. રાજાએ જ્યારે પ્રભુના આગમનનો વૃત્તાન્ત સાંભળ્યો
ત્યારે તેઓ પણ મનમાં બહુ પ્રસન્ન તેમજ સંતુષ્ટ થયા. આનંદમાં આવી

व्वया जाव णिसीयइ, णिसीइत्ता तस्स पवित्तिवाउयस्स अद्ध-
त्तेरस-सयसहस्साइं पीइदाणं दलयइ, दलइत्ता सक्कारेइ सम्मा-
णेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ ॥ सू० ३९ ॥

तत्रोपविश्य यावत् 'नमोऽस्त्यु णं' पठति 'जाव' यावत् सिंहासने 'णिसीयइ' निर्वाहति=उपवि-
शति, 'णिसीइत्ता' निषद्य=उपविश्य, 'तस्स पवित्तिवाउयस्स अद्धत्तेरससयसहस्साइं पीइ-
दाणं दलयइ' तस्मै प्रवृत्तिव्यापृताय अर्द्धत्रयोदशशतसहस्राणि प्रीतिदानं ददाति—सार्द्ध-
द्वादशशतसहस्राणि राजतमुद्राः प्रीतिदानं=पारितोषिकं समर्पयति । 'श्रमणो भगवान् महा-
वीरस्वामी चम्पानगर्या उपनगरग्राममुपागतः चम्पानगरीं पूर्णभद्रचैत्यं समवसर्तुकामः'
इति निवेदितं प्रवृत्तिव्यापृतेन, अतस्तदाऽष्टोत्तरैकलक्षसंख्यकं राजतमुद्रारूपं प्रीतिदानं प्रद-
त्तम् । अत्र तु अस्यामेव चम्पानगर्याम् अतिसन्निकृष्टे स्थाने पूर्णभद्रचैत्ये समवसृत—इति
वार्ता निवेदिता, अतो हर्षातिशयादेतद्वार्तानिवेदने सार्धद्वादशलक्षराजतमुद्रारूपं प्रीति-
दानं प्रवृत्तिव्यापृताय दत्तम्—इति भावः । 'दलइत्ता सक्कारेइ सम्माणेइ' दत्त्वा सत्कार-
यति—ब्रह्मादिदादेन, सम्मानयति—प्रियवचनेन, 'सक्कारित्ता सम्माणित्ता पडिविसज्जेइ'
सत्कृत्य सम्मान्य प्रतिविसर्जयति ॥ सू० ३९ ॥

वे एकदम सिंहासन से उठ के खड़े हुए और नीचे उतरकर जिस दिशा में भगवान् विराज-
मान थे, उस दिशा की ओर, सात आठ पग जाकर और बैठकर विधिपूर्वक "नमोस्त्यु णं"
दिये । बाद सिंहासन पर बैठे, (णिसीइत्ता तस्स पवित्तिवाउयस्स अद्धत्तेरस-सय-
सहस्साइं पीइदाणं दलयइ) बैठ कर उन्होंने उस संदेशवाहक के लिये साढ़े बारह लाख
चांदी की मुद्राओं का प्रीतिदान—पारितोषिक प्रदान किया, (दलइत्ता) प्रीतिदान देकर
उन्होंने (सक्कारेइ) उसका सत्कार किया (सम्माणेइ) मधुर वचनों से सन्मान किया । इस
प्रकार (सक्कारित्ता सम्माणित्ता) सत्कार एवं सन्मान करके उन्होंने उसे (पडिविसज्जेइ)

જઈ તેઓ એકદમ સિંહાસનેથી ઉઠીને ઉભા થયા તથા નીચે ઉતરીને જે
દિશામાં ભગવાન વિરાજમાન હતા તે દિશાની તરફ સાત આઠ પગલાં જઈને
તથા એસીને વિધિપૂર્વક “ નમોસ્ત્યુ ણં ” દીધું. બાદ સિંહાસન પર બેઠા,
(ણિસીइत्ता तस्स पवित्तिवाउयस्स अद्धत्तेरससयसहस्साइं पीइदाणं दलयइ) એસીને
તેઓએ તે સંદેશવાહકને માટે સાડાબાર લાખ ચાંદીના સિક્કાઓનું પ્રીતિ-
દાન—પારિતોષિક પ્રદાન કર્યું. (દલइत्ता) પ્રીતિદાન આપીને તેઓએ (સક્કારેइ)
તેનો સત્કાર કર્યો, (સમ્માणेइ) મધુર વચનોથી સન્માન કર્યું. આ પ્રકારે

**मूलम्—तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते बल-
वाउयं आमंतेइ, आमंतित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणु-**

टीका—‘तए णं से’ इत्यादि। ‘तए णं’ ततः खलु ‘से कूणिए राया भंभसारपुत्ते’ स कूणिको राजा भंभसारपुत्रः ‘बलवाउयं’ बलव्यापृतं=सैन्यव्यापारपरायणं—सेनापतिमित्यर्थः, ‘आमंतेइ’ आमन्त्रयति=आह्वयति, ‘आमंतित्ता’ आमन्त्र्य=आहूय, ‘एवं वयासी’—एवम-वादीत्—‘खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया’ क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिय ! ‘आभिसेकं हत्थिरयणं

विदा क्रिया। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी चंपानगरी के उपनगरग्राम में पधारे हुए हैं और वे चंपानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारनेवाले हैं—इस प्रकार का समाचार कोणिक राजा को जब इस संदेशवाहक ने सुनाया था तब उस समय राजाने उसे पारितोषिक रूप में १ लाख चांदी की मुद्राएँ दी थीं। परंतु जब उसने यह खबर दी कि प्रभु चंपानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधार चुके हैं तब इस बात को सुनकर उन्हें अत्यंत हर्षका आवेग बढ़ा, और इस आवेग के प्रभाव से उन्होंने उसे १२॥ लाख चांदी की मुद्राएँ दीं॥ सू० ३९॥

‘तए णं से कूणिए राया’ इत्यादि।

(तए णं) इसके अनन्तर (भंभसारपुत्ते) भंभसार अर्थात् श्रेणिक का पुत्र (से कूणिए राया) उस कूणिक राजा ने (बलवाउयं) अपने बलव्यापृत—सेनापति को (आमंतेइ) बुलाया, (आमंतित्ता) बुलाकर (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—(खिप्पा-

(सक्कारित्ता सम्मानित्ता) सत्कार तेमञ्ज सन्मान :रीने तेमण्णे तेने (पडिविस-ज्जेइ) विहाय कथे। श्रमणु भगवान् महावीर स्वामी चंपानगरीना उपनगर ग्राममां पधार्या छे तथा तेण्णो चंपानगरीना पूर्णभद्र उद्यानमां पधारवाना छे—अे प्रकारना समाचार कोणिक राजाने न्यारे आ संदेशवाहुके संलग्गाव्या त्यारे ते समये राजाण्णे तेने पारितोषिकरूपमां अेकलाख आठ चांदीना सिक्काण्णो आभ्या हुता. परंतु न्यारे तेण्णे आ भयर आपी के प्रभु चंपानगरीना पूर्णभद्र उद्यानमां पधारी चुक्या छे त्यारे आ वात सांलग्गी तेमने अत्यंत दुर्धने! आवेग वध्थे अने आवेगना प्रभावथी तेमण्णे तेने १२॥ लाख चांदीनी भडारे आपी. (सू. ३९)

‘तए णं से कूणिए राया’ इत्यादि.

(तए णं) त्यार पछी (भंभसारपुत्ते) भंभसार अर्थात् श्रेणिकना पुत्र (से कूणिए राया) ते कूणिक राजाण्णे (बलवाउयं) पेताना बलव्यापृत—सेना-पतिने (आमंतेइ) बोलाव्या, (आमंतित्ता) बोलावीने (एवं वयासी) आ प्रकारे

प्पिया ! आभिसेकं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि, हय-गय-रह-पवर-
जोहकलियं च चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेहि, सुभदापमुहाण
य देवीणं बाहिरियाए उवट्टाणसालाए पाडियक्कपाडियक्काइं
जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्टवेहि; चंपं च णयरिं सन्निभ-

पडिकप्पेहि' आभिषेक्यं हस्तिरत्नं परिकल्पय-पट्टहस्तिरत्नं सज्जितं कुरु, 'हय-गय-रह-पवर-
जोह-कलियं च चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेहि' हय-गज-रथ-प्रवरयोध-कलितां च
चतुरङ्गिणीं सेनां सन्नाहय=सुसज्जितां कुरु, 'सुभदापमुहाण य देवीणं' सुभद्राप्रमुखानाञ्च
देवीनाम् 'बाहिरियाए उवट्टाणसालाए' बाह्यायामुपस्थानशालायाम्, 'पाडियक्कपा-
डियक्काइं' प्रत्येकप्रत्येकानि-सर्वासां पृथक् पृथक् 'जत्ताभिमुहाइं' यात्राभिमुखानि-
गमनार्थमुद्यतानि, 'जुत्ताइं' युक्तानि-योजितबलीवर्दानि 'जाणाइं' यानानि=धार्मिकरथान्
'उवट्टवेहि' उपस्थापय=सज्जीकृत्य समानय, 'चंपं च णयरिं सन्निभतरबाहिरियं'

मेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! शीघ्र ही (आभिसेकं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि)
तुम पट्टहस्तिरत्न को सज्जित करो, (हय-गय-रह-पवरजोह-कलियं च चाउरंगिणिं सेणं
सण्णाहेहि) साथ में घोड़ों, हाथियों, रथों एवं उत्तम योधाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना को
भी सुसज्जित करना, तथा (सुभदापमुहाण य देवीणं बाहिरियाए उवट्टाणसालाए)
सुभद्राप्रमुख देवियों के लिये भी बाहिर उपस्थानशाला में (पाडियक्कपाडियक्काइं)
अलग २ रूप में (जत्ताभिमुहाइं) चलने में अच्छे (जुत्ताइं) एवं अच्छे बैलों वाले
(जाणाइं) धार्मिक रथों को (उवट्टवेहि) सज्जित करके ले आओ। (चंपं च णयरिं सन्निभ-

३६७- (खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! शीघ्र न (आभिसेकं
हत्थिरयणं पडिकप्पेहि) तमे पट्ट हस्तिरत्नने सज्जित करो. (हय-गय-रह-पवर-
जोह-कलियं च चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेहि) साथमां घोडा, हाथी, रथो, तेमज्ज
उत्तम योद्धाओथी युक्त चतुरंगिणी सेनाने पण सुसज्जित करो. तथा
(सुभदापमुहाण य देवीणं बाहिरियाए उवट्टाणसालाए) सुभद्राप्रमुख देवीओने
भाटे पण आहुरी उपस्थानशालाभां (पाडियक्क-पाडियक्काइं) अलग अलग
रूपमां (जत्ताभिमुहाइं) आलवाभां सारा (जुत्ताइं) तेमज्ज सारा अणहवाणा
(जाणाइं) धार्मिक रथोने (उवट्टवेहि) सज्जित करीने लई आवो. (चंपं च
णयरिं सन्निभतरबाहिरियं) अंपानगरीने अंदर तेमज्ज आहुरथी (आसित्त-सित्त-

તરવાહિરિયં આસિત્ત-સિત્ત-સુદ્-સમ્મદ્-રત્થંતરા-વળ-વીહિયં મંચા-
 ઇમંચ-કલિયં ણાણાવિહ-રાગ-ઉચ્છિય-જ્ઞય-પડાગા-ઇપડાગ-મંડિ-
 યં લાઉલ્લોઇયમહિયં ગોસીસ-સરસ-રત્તચંદળ-જાવ-ગંધવટ્ટિભૂયં

ચમ્પાં ચ નગરીં સામ્યન્તરવાહ્યામ્, 'આસિત્ત-સિત્ત-સુદ્-સમ્મદ્-રત્થંતરાવળ-વીહિયં' આસિત્ત-સિત્ત-શુચિ-સંમૃષ્ટ-રથ્યાન્તરા - SSપગ - વીથિકામ્ - આસિત્તાનિ=ઈષત્સિત્તાનિ, સિત્તાનિ=ભૂયસા જલેન ધૌતાનિ અતएव શુચીનિ=પવિત્રાગિ સંમૃષ્ટાનિ=કચવરાપનયનેન સંશોધિતાનિ રથ્યાન્તરાગિ=રથ્યામધ્યાનિ આપળવીથયશ્ચ-હટ્ટમાર્ગા યસ્યાં સા આસિત્ત-સિત્ત-શુચિ-સંમૃષ્ટ-રથ્યાન્તરાSSપગ-વીથિકા, તામ્, 'મંચા-ઇમંચ-કલિયં' મચ્ચા-તિમચ્ચ-કલિતામ્-મચ્ચા:=માલકા:-દર્શકજનોપવેશનયોગ્યા:, અતિમચ્ચા:=મચ્ચોપરિમચ્ચા:, તૈ: કલિતા-યુક્તા તામ્, 'ણાણાવિહ-રાગ-ઉચ્છિય-જ્ઞય-પડાગા-ઇપડાગ-મંડિયં' નાનાવિધ-રાગો-ચ્છિત-ધ્વજ-પતાકાઽતિપતાકા-મણ્ડિતામ્-નાનાવિધરાગા:=વિવિધવર્ણા યે ઉચ્છિતા ધ્વજા:, પતાકા-તિપતાકા: - પતાકા: - ધ્વજાગ્રવર્તિચેલાચ્ચલ્લાનિ, પતાકામતિક્રાન્તા અતિપતાકા: =પતાકોપરિવર્તિન્ય: પતાકા:, તાભિર્મણ્ડિતામ્=સુશોભિતામ્-નાનાવિધવર્ણસમુચ્છિતધ્વજ-પતાકાઽતિપતાકાભિર્મણ્ડિતામિત્યર્થ: । 'લાઉ-લ્લોઇય-મહિયં' લાઉલ્લોઇયમહિતામ્-'લાઉ-

તરવાહિરિયં) ચંપાનગરી કો ભીતર ઇવં વાહિર સે (આસિત્ત-સિત્ત-સુદ્-સમ્મદ્-રત્થંતરા-વળવીહિયં) પહિલે થોડે સે જલ સે છિડકવા કર પીછે અધિક જલ સે છિડકવાકર ગલિયોં કે ઇવં બજારોં કે રસ્તોં કો સાફ-સૂફ કરવાઓ ઓર જહાં મો કૂડા-કર્કટ પડા હો ઉસે ઝડ-વાકર સાફ કરવાઓ, (મંચા-ઇમંચ-કલિયં ણાણાવિહ-રાગ-ઉચ્છિય-જ્ઞય-પડાગા-ઇપડાગ-મંડિયં) માર્ગ મેં આજૂ-બાજૂ મંચોં પર મંચ જમવાકર લગવા દો, તાકિ લોગ ઉન પર અચ્છી તરહ સે બેઠ સકેં । અનેક રંગોં કી ઝૂંચી ૨ ધ્વજાઈ, પતાકાઈ ઇવં અતિપતા-કાઈ નગર ભર મેં લગાઓ, (લાઉલ્લોઇયમહિયં) જગહ ૨ પર ગોબર સે જમીન કો લિપવાઓ

સુદ્-સમ્મદ્-રત્થંતરાવળ-વીહિયં) પહેલાં થોડાંક પાણીનેા છંટકાવ કરીને પછી વધારે પાણી છંટાવીને ગલિયોના તેમજ બજારોના રસ્તાઓને સાફસૂફ કરાવો, અને જ્યાં પણ કૂડા-કર્કટ (કચરોપૂંજો) પડ્યો હોય તેને ઝાડુ મરાવી સાફ કરાવો. (મંચા-ઇમંચ-કલિયં ણાણાવિહ-રાગ-ઉચ્છિય-જ્ઞય-પડાગા-ઇપડાગ-મંડિયં) માર્ગમાં આબુઆબુ મંચ ઉપર મંચ ગોઠવાવી દો જેથી લોકો તેમનાપર સારી રીતે બેસી શકે. અનેક રંગોની ઉંચી ઉંચી ધ્વજાઓ, પતાકાઓ તેમજ અતિ-પતાકાઓ નગરભરમાં લગાવો. (લાઉલ્લોઇયમહિયં) જગા જગાપર છાણથી

करेहि य कारवेहि य, करेत्ता य कारवेत्ता य एयमाणत्तियं
पच्चप्पिणाहि, णिज्जाहिस्सामि समणं भगवं महावीरं अभि-
वंदिउं ॥ सू. ४० ॥

ल्लोइय' इति देशीयः शब्दः; गोमयादिना भूमौ यद् लेपनं सेटिकादिना कुड्यादिषु च
यद् धवलनं तद् 'लाउल्लोइयं' तेन महिताम्=सुसज्जिताम्, 'गोसीस-सरस-रत्तचंदण-
जाव-गंधवट्टिभूयं करेहि य' गोशीर्ष-सरस-रक्तचन्दन-यावद्-गन्धवर्तिभूतां कुरु-गोशीर्षैः=
चन्दनविशेषैः सरसरक्तचन्दनेन यावद् गन्धवर्तिभूतां=समुपचितगन्धद्रव्यरूपां कुरु,
'कारवेहि य' कारय च, अन्यानपि तथा कर्तुं प्रेरय, 'करेत्ता य कारवेत्ता य' कृत्वा च
कारयित्वा च, 'एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि' एतामाज्ञां प्रत्यर्पय, आज्ञापिताऽर्थान् सम्पाद्य
मह्यं कथय, 'णिज्जाहिस्सामि समणं भगवं महावीरं अभिवंदिउं' निर्यास्यामि=
निर्गमिष्यामि श्रमणं भगवन्तं महावीरमभिवन्दितुम् ॥ सू. ४० ॥

और भीतों को खड़ी से पुतवाओ, (गोसीस-सरस-रत्तचंदण-जाव-गंधवट्टि-भूयं) गोशीर्ष-
चन्दन विशेष, एवं सरस रक्तचंदन से समस्त नगर को सुगंधित बनवाओ ताकि वह सुगंध-
पुंज जैसा मादूम पड़ने लगे। (करेहि य कारवेहि य) यह सब काम स्वयं करो तथा
दूसरों को भी इस तरह करने के लिये प्रेरित करो। (करेत्ता य कारवेत्ता य) करके एवं करवा
करके(एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि) इस मेरी आज्ञा को पुनः मुझे प्रत्यर्पित करो-आपकी आज्ञा-
नुसार सब काम हो चुके हैं इसकी मुझे खबर दो। (णिज्जाहिस्सामि समणं भगवं
महावीरं अभिवंदिउं) बाद में मैं श्रमण भगवान महावीर की वन्दना के लिये निकलंगा
॥ सू. ४० ॥

જમીનને લીંપાવો અને ભીંતોને ખડીથી ઘોળાવો. (ગોસીસ-સરસ-રત્તચંદણ-
જાવ-ગંધવટ્ટિ-ભૂયં) ગોશીર્ષ-ચન્દન વિશેષ તેમજ સરસ રક્તચંદનથી સમસ્ત
નગરને સુગંધિત બનાવો. જેથી તે સુગંધપુંજ જેવી જણાવા લાગે. (કરેહિ
ય કારવેહિ ય) આ બધું કામ બંતે કરો તથા બીજાને પણ એવી રીતે
કરવા પ્રેરિત કરો, (કરેત્તા ય કારવેત્તા ય) કરીને તેમજ કરાવીને (એયમાણત્તિયં
પચ્ચપ્પિણાહિ) આ મારી આજ્ઞાને પાછી મને પ્રત્યર્પિત કરો-આપની આજ્ઞાનુ-
સાર બધું કામ થઈ ચૂક્યું છે એની મને ખબર દો. (ણિજ્જાહિસ્સામિ સમણં
ભગવં મહાવીરં અભિવંદિઉં) બાદ હું શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની વંદના માટે
નીકળીશ. (સૂ. ૪૦)

मूलम्—तए णं से बलवाउए कूणिएणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे
हट्टतुट्ट — जाव — हियए करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए
अंजलिं कट्ठु एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ,
पडिसुणित्ता हत्थिवाउयं आमंतेइ, आमंतेत्ता एवं वयासी—

टीका—‘तए णं’ इत्यादि । ‘तए णं से बलवाउए’ ततः खलु स बलव्यापृतः—
सेनापतिः ‘कूणिएणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे’ कूणिकेन राज्ञा एवमुक्तः सन्, ‘हट्टतुट्ट-
जाव-हियए’ हट्टतुष्टयावद्भूदयः ‘करयलपरिग्गहियं’ करतलपरिगृहीतं—वद्वकरतलयुगलम्,
‘सिरसावत्तं’ शिरआवत्तं ‘मत्थए अंजलिं कट्ठु’ मस्तके अञ्जलिं कृत्वा ‘एवं
सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ’ एवं स्वामिन् ! इति आज्ञाया विनयेन
वचनं प्रतिशृणोति=एवं स्वामिन् ! यद्यथाज्ञापयति देवस्तत्तथैव संपादयामि—इत्युक्त्वा
आज्ञाया वचनं सविनयं प्रतिशृणोति=स्वीकरोति, प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य ‘हत्थिवाउयं

‘तए णं से बलवाउए’ इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (से बलवाउए) वह सेनापति (रण्णा एवं वुत्ते समाणे)
राजा के द्वारा इस प्रकार से आज्ञापित होता हुआ (हट्ट-तुट्ट-जाव-हियए करयल-परि-
ग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्ठु एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडि-
सुणेइ) विशेष हर्षित एवं संतुष्ट हुआ, यावत् अन्तःकरण में प्रफुल्लित हो गया । दोनों
हाथों को जोड़कर मस्तकपर अंजलिरूप में उन्हें स्थापित करते हुए फिर वह इस प्रकार
बोला कि हे स्वामिन् ! आपने जिस प्रकार का आदेश प्रदान किया है वह मैं उसी प्रकार
से संपादित करूँगा । इस रीति से विनयपूर्वक उसने राजा के आदेश को स्वीकार कर लिया ।

‘तए णं से बलवाउए’ इत्यादि.

(तए णं) त्थार पथी (से बलवाउए) ते सेनापति (रण्णा एवं वुत्ते समाणे)
राजाना द्वारा आ प्रकारे आज्ञापित थतां (हट्ट-तुट्ट-जाव-हियए करयल-परिग्गहियं
सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्ठु एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ)
विशेष हर्षित तेमज् संतुष्ट थयो, यावत् अतःकरणमां प्रफुल्लित थय गयो.
अन्ने हाथो जेडीने मस्तक उपर अंजलि रूपे तेमने स्थापित करी पथी ते
आ प्रकारे बोड्यो हे हे स्वामिन् ! आपे जे प्रकारे आदेश प्रदान कयो छे
ते हुं तेवीज रीते संपादित करीश. आ रीते विनयपूर्वक तेणे राजाना

खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स
आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि, हय-गय-रह-पवरजोह-कलियं
चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेहि, सण्णाहेत्ता एयमाणत्तियं पच्च-
प्पिणाहि ॥ सू० ४१ ॥

आमंतेइ ' हस्तिव्यापृतमामन्त्रयति=महामात्रमाह्वयति, 'आमंतेत्ता' आमन्त्र्य-आह्वय
'एवं वयासी' एवमवादीन्-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कूणियस्स रण्णो
भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि' क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिय ! कूणिकस्य
राज्ञो भम्भसारपुत्रस्य आभिषेक्यं हस्तिरत्नं परिकल्पय; आभिषेक्यं हस्तिरत्नं=प्राप्ताभिषेकं,
मुख्यं हस्तिरत्नं परिकल्पय=सुसज्जितं कुरु, 'हय-गय-रह-पवरजोह-कलियं' हय-गज-
रथ-प्रवरयोध-कलिताम्, 'चाउरंगिणिं सेणं' चतुरङ्गिणीं सेनाम्, 'सण्णाहेहि'
सन्नाहय-सन्नद्धां कुरु, 'एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि' एतामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पय-इमां
मदीयामाज्ञां सम्पाद्य मह्यं निवेदय-इत्थं राज्ञाऽऽज्ञप्तो बलव्यापृतो हस्तिव्यापृत-
माज्ञापयामास ॥ सू० ४१ ॥

(पडिसुणित्ता हत्थिवाउयं आमंतेइ) राजा का आदेश प्रमाण कर उसने तुरंत ही
हाथियों के अधिकारी को बुलाया, (आमंतेत्ता) बुलाकर (एवं) इस प्रकार (वयासी) वह
बोला-(खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! तुम शीघ्र ही (कूणियस्स रण्णो
भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि) भंभसार अर्थात् श्रेणिक राजा के
पुत्र कूणिक राजा के पट्टहस्ती को सुसज्जित करो । (हय-गय-रह-पवरजोह-कलियं चाउ-
रंगिणिं सेणं सण्णाहेहि) साथ में हय-अश्व, गज-अन्यहार्थी, रथ, प्रवरभट इनसे युक्त

आदेशनो स्वीकार करी लीधो. (पडिसुणित्ता हत्थिवाउयं आमंतेइ) राजाना आदे-
शने प्रमाण करी तेणे तरतज्ज हाथीओना आधिकारीने ओलाव्यो. (आमंतेत्ता)
ओलावीने (एवं) आ प्रकारे (वयासी) तेणे कहुं-(खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया)
हे देवानुप्रिय ! तमे तुरत ज (कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं
हत्थिरयणं पडिकप्पेहि) भंभसार अर्थात् श्रेणिउ राजाना पुत्र कूणिउ राजाना
पट्टहस्तिने तैयार करे. (हय-गय-रह-पवरजोह-कलियं चाउरंगिणिं सेणं सण्णा-
हेहि) साथे साथे हय-घोडा, गज-भील हाथी, रथ, प्रवरभट अथी युक्त
चतुरंगिणी सेनाने पण तैयार करे. (सण्णाहेत्ता) सन्नद्ध करीने (एयमाणत्तियं

मूलम्—तए णं से हत्थिवाउए बलवाउयस्स एयमट्ठं सोच्चा आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता छेयायरिय-उवएस-मइ-कप्पणा-विकप्पेहिं सुणिउणेहिं उज्जल—णेवत्थ-

टीका—‘तए णं से’ इत्यादि । ‘तए णं’ ततः=बलव्यापृताज्ञाऽनन्तरं खलु ‘से हत्थिवाउए’ स हस्तिव्यापृतः—महामात्रः, ‘बलवाउयस्स एयमट्ठं सोच्चा’ बलव्यापृतस्य एतमर्थं=सुसज्जितगजाऽऽनयनादिरूपं वचनं श्रुत्वा, ‘आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ’ आज्ञाया विनयेन वचनं प्रतिशृणोति—विनयपूर्वकमाज्ञावचनं=सेनापति-निदेशमङ्गीकरोति. ‘पडिसुणित्ता’ प्रतिश्रुत्य ‘छेयायरिय-उवएस-मइ-कप्पणा-विकप्पेहिं’ छेकाऽऽचार्यो—पदेश—मति—कल्पना—विकल्पैः—छेकाचार्यस्य=पटुतरशिल्पशिक्षक-स्योपदेशाज्जाता या मतिः=बुद्धिः तथा या कल्पना=सज्जना—हस्तिनां शृङ्गारसमारचना, तां विविधप्रकारेण कल्पयन्ति ये ते तथा तैः, सुशिक्षकोपदेशलब्धबुद्ध्या विशिष्टशिल्पकल्पना-कारकैरित्यर्थः, अतएव ‘सुणिउणेहिं’ सुनिपुणैः—गजादिशृङ्गाररचनाकुशलैः ‘उज्जल—

चतुरंगिणी सेना को भी सुसज्जित करो । (सण्णाहेत्ता) सन्नद्ध करके (एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि) बाद में इस मेरी आज्ञा के यथावत् पालन करने की हमें पीछे खबर दो ॥सू. ४१॥

‘तए णं से हत्थिवाउए’ इत्यादि ।

(तए णं) सेनापति के आदेश देने के बाद (से हत्थिवाउए) वह हाथियों का अधिकारी (बलवाउयस्स) सेनापति के (एयमट्ठं) इस बातको (सोच्चा) सुनकर (आणाए वयणं) आज्ञा के वचन को (विणएणं) विनयपूर्वक (पडिसुणेइ) स्वीकार किया । (पडिसुणित्ता) स्वीकार कर उसने (छेयायरिय-उवएस-मइ-कप्पणा विकप्पेहिं) छेकाचार्य—विशिष्टनिपुणशिल्पशिक्षक के उपदेश से उद्भूत बुद्धि द्वारा विविध प्रकारकी रचना से हाथि-

पच्चप्पिणाहि) पछी आ भारी आज्ञाने यथावत् पाणी तेनी भने पाछी अजर आपो. (सू. ४१)

‘तए णं से हत्थिवाउए’ इत्यादि.

(तए णं) सेनापतिसे आदेश दीधा पछी (से हत्थिवाउए) ते हाथीसेना अधिकारी (बलवाउयस्स) सेनापतिनी (एयमट्ठं) से बातने (सोच्चा) सांभलीने (आणाए वयणं) आज्ञानां वचनने (विणएणं) विनयपूर्वक (पडिसुणेइ) स्वीकार कर्यां, (पडिसुणित्ता) स्वीकार करीने तेषु (छेयायरिय-उवएस-मइ-कप्पणा विकप्पेहिं) छेकाचार्य-विशिष्ट निपुण शिल्प शिक्षकना उपदेशथी उद्भवेनी बुद्धि-

हव्व-परिवत्थियं सुसज्जं धम्मिय-सण्णद्ध-बद्ध-कवड्य-उप्पी-
लिय-कच्छ-वच्छ-गेवेय-बद्ध-गलवर-भूषण-विरायंतं अहिय-
तेय-जुत्तं सललिय-वर-कण्णपूर-विराइयं पलंब-ओचूल-महुयर-

णेवत्थ-हव्व-परिवत्थियं ' उज्ज्वल-नेपथ्य-शीघ्र-परिवस्त्रितम्-उज्ज्वलनेपथ्येन=निर्मल-
वेषरचनया शीघ्रं, परिवस्त्रितं-आच्छादितम्, अलंकृतमित्यर्थः, अतएव ' सुसज्जं '
कृतसन्नाहम्, ' धम्मिय-सण्णद्ध-बद्ध-कवड्य-उप्पीलिय-कच्छ-वच्छ-गेवेय-
बद्ध-गलवर-भूषण-विरायंतं ' धार्मिक-सन्नद्ध-बद्ध-कवचिको-त्पीडित-कक्ष-वक्षो-
ग्रैवेय-बद्ध-गलवर-भूषण-विराजमानम्, धार्मिकं सन्नद्धं=सज्जीकृतं बद्धं यत् कवचं=सन्नाह-
विशेषः, तदस्यास्तीति-धार्मिकसन्नद्धबद्धकवचिकम्, उत्पीडिता=आकृष्य बद्धा, कक्षा=बन्धन-
रज्जुः, वक्षसि=वक्षःस्थले यस्य तत् तथा, ग्रैवेयकं=ग्रोवाभूषणं, बद्धं गले=कण्ठे यस्य
तत् तथा, वरभूषणैः = अन्यैर्गजस्य श्रेष्ठाभरणैर्विराजमानम्, ' अहियतेयजुत्तं '
अधिकतेजोयुक्तम्=परमतेजस्वि, ' सललिय-वरकण्णपूर-विराइयं ' सललित-वरकर्णपूर-

यों के शृंगार करने वाले (सुणिउणेहिं) निपुण व्यक्तियों से (उज्जल-णेवत्थ-हव्व-परि-
वत्थियं) हाथीका शृंगार करवाया; इसमें सर्वप्रथम उन कुशल पुरुषों ने उसे निर्मल
भूषणों की रचना से अलंकृत किया। (सुसज्जं) उस पर अच्छी तरह से झूलें वगैरह
सजायीं। (धम्मिय-सण्णद्ध-बद्ध-कवड्य-उप्पीलिय-कच्छ-वच्छ-गेवेय-बद्ध-गलवर-भूषण-
विरायंतं) धार्मिक उत्सव के समय जैसा हाथी का शृंगार होता है ठीक वैसा ही शृंगार
इसका किया गया। पेट या छाती पर इसके मजबूत कवच कसकर बांधा गया। गले में
इसके आभूषण पहिनाए गये। और इसके अंग-उपांगों में सुन्दर २ उसके योग्य आभूषण

द्वारा विविध प्रकारेण हाथीकोना शृंगार करवावाणा (सुणिउणेहिं) निपुण
व्यक्तिको द्वारा (उज्जल-णेवत्थ-हव्व-परिवत्थियं) हाथीकोना शृंगार कराव्या,
तेमां सर्वथी प्रथम ते कुशल पुरुषोको तेने सुन्दर अलंकारेनी रचनाथी
अलंकृत कर्या, (सुसज्जं) तेना उपर सारी रीते ओको वगेरे सज्जवी. (धम्मिय-
सण्णद्ध-बद्ध-कवड्य-उप्पीलिय-कच्छ-वच्छ-गेवेय-बद्ध-गलवर - भूषण - विरायंतं)
धार्मिक उत्सवना समये ओको हाथीकोना शृंगार होय छे तेको न परापर
शृंगार तेना कर्यो. पेट अथवा छाती उपर मज्जबूत कवच कसीने तेने
बांध्युं. गणामां तेने आभूषणो पहिराववामां आव्यां. तेनां भील्लं अंगो
तथा उपांगोमां सुंदर सुंदर तेने योग्य आभूषणो पहिराव्यां. (अहिय-

कयंधयारं चित्त-परित्योम-पच्छयं पहरणा-वरण-भरिय-जुद्ध-

विराजितम्—सललितौ=ललितयुक्तौ यौ वरकर्णपूरौ—प्रशस्तकर्णाभरणे ताभ्यां विराजितम्, 'पलंब-ओचूल-महुयर-कयंधयारं' प्रलम्बाऽवचूलमधुकरकृताऽन्धकारम्—प्रलम्बानि अवचूलानि=गजपृष्ठादधःप्रलम्बिशृङ्गारवस्त्रांशरूपाणि यस्य तत्तथा, तथा मधुकरैर्मदजलगन्ध-लुब्धैः कृतः अन्धकारो यत्र तत्तथा, ततः—अनयोः कर्मधारयः, तत्, 'चित्त-परिच्छेय-पच्छयं' चित्र-परिच्छेक-प्रच्छदम्—चित्रो=विचित्रः परिच्छेको=लघुः प्रच्छदः—आच्छादक-वस्त्रविशेषो यस्य तत्तथा तत्, 'पहरणा-वरण-भरिय-जुद्ध-सज्जं' प्रहरणा-वरण-भृतयुद्ध-सज्जम्—प्रहरणावरणैरायुधकवचैर्भूतं=सम्भृतम्, अत एव युद्धसज्जं=युद्धाय समुद्यतम्, 'सच्छत्तं'

पहिरा दिये गये । (अहियतेयजुत्तं) इससे स्वाभाविकरूप से तेजःसंपन्न वह गजराज देखने में और अधिक तेजस्वी दीखने लगा । (सललिय-वर-कर्णपूर-विराडयं) इसके कान में जो आभूषण—कर्णपूर पहिगने में आये थे वे चलते पमय इधर उधर जब हिलते थे तब उनके द्वारा यह गजराज बड़ा ही सुहावना लगता था । (पलंब-ओचूल-महुयर-कयंधयारं) इस पर जो झूल डाली गई थी वह पीठ से नीचे तक लटक रही थी । इसके कपोल स्थल से जो मदजल झर रहा था और उसकी सुगन्धि से जो भ्रमरसमूह उसके आसपास मंडरा रहा था वह ऐसा मादूम होता था कि मानो इसकी शरण में अंधकार ही आया है । (चित्त-परित्योम-पच्छयं) इसकी पीठ पर झूल के ऊपर जो छोटा सा आच्छादकवस्त्र डाला गया था वह सुन्दर वेलवूटियों से युक्त था । (पहरणा-वरण-भरिय-जुद्ध-सज्जं) प्रहरण—यन्त्र और आवरण—कवच से सुसज्जित यह हार्थी ऐसा मादूम पड़ता था कि मानो यह युद्ध के लिये ही सजाया गया है । (सच्छत्तं) यह छत्रसहित था ।

तेयजुत्तं) आधी स्वाभाविक तेजस्वी संपन्न ते गजराज वधारे तेजस्वी देखातो હતો. (સલલિય-વર-કર્ણપૂર-વિરાડયં) તેના કાનમાં જે આભૂષણ-કર્ણપૂર પહેરાવવામાં આવ્યાં હતા તે ચાલતી વખતે બ્યારે આમતેમ હાલતાં હતાં ત્યારે તેનાથી આ ગજગજ બહુ જ શોભાયમાન લાગતો હતો. (પલંબ-ઓચૂલ-મહુયર-કયંધયારં) તેના પર જે ઝૂલ રાખી હતી તે પીઠથી નીચે સુધી લટકી રહી હતી. તેના ગાંડસ્થલથી જે મદજલ ઝરી રહ્યું હતું તથા તેની સુગંધથી જે ભમરાઓના સમૂહ તેની આસપાસ ફરતો રહેતો હતો તેથી એમ જણાતું હતું કે બધું તેના શરણમાં અંધકાર જ આવ્યો છે. (ચિત્ત-પરિચ્છેય-પચ્છયં) તેની પીઠ પર ઝૂલ ઉપર જે નાનું ઢાંકેલું વસ્ત્ર નાખ્યું હતું તે સુંદર વેલ-બૂટિયોથી યુક્ત હતું (પહરણા-વરણ-ભરિય-જુદ્ધ-સજ્જં) પ્રહરણ-શસ્ત્ર અને આવરણ-કવચથી સુસજ્જિત આ હાથી એવો લાગતો હતો કે

सज्जं सच्छत्तं सज्झयं सघटं सपडागं पंचामेलय-परिमंडिया-
भिरामं ओसारिय-जमल-जुयल-घटं विज्जुपिणद्धं व कालमेहं
उप्पाइयपव्वयं व चंकमंतं मत्तं गुलगुलंतं मण-पवण-जइण-वेगं

सच्छत्रम्-छत्रयुक्तम्, 'सज्झयं' सध्वजम्-ध्वजयुक्तम् 'सघटं' सघण्टम्-घण्टाभूषितो-
भयपार्श्वम्, 'पंचामेलय-परिमंडिया-भिरामं' पञ्चामेलक-परिमण्डिताऽभिरामम्-
पञ्चभिरामेलकैः=पञ्चवर्णाभिः पुष्पमालाभिः परिमण्डितम्-अतएव अभिरामं=सुन्दरं यत्तथा
तत्, 'ओसारिय-जमल-जुयल-घटं' अवसारित-यमल-युगल-घण्टम्-अवसारितम्=
अधोऽवलम्बितं यमलं=समं युगलं=द्विकं घण्टयोर्यत्र तत् तथा तत्, 'विज्जुपिणद्धं' विद्यु-
त्पिनद्धम्-विद्युद्विद्योतितं 'कालमेहं व' कालमेघमिव-गजस्य कृष्णवर्णत्वात् उच्चतया च
मेघोपमा, 'उप्पाइय-पव्वयं व' औत्पातिकपर्वतमिव-अकस्मान्नूतनसमुद्भूतपर्वतमिव,
'चंकमंतं' चङ्क्रम्यमाणम्-अतिशयेन क्राम्यत्-स्वाभाविकपर्वतो हि न चङ्क्रम्यते इति
भावः । 'गुलगुलंतं' ध्वनत्=महामेघवद् ध्वनिं कुर्वत्-इत्यर्थः, 'मण-पवण-जइण-वेगं'

(सज्झयं) ध्वजासहित था (सघटं) घंटाओं से इसके उभयपार्श्व युक्त थे । (पंचामेलय-
परिमंडिया-भिरामं) पांचवर्ण के पुष्पमाला पहनाने के कारण यह अत्यन्त सुन्दर लगता
था । (ओसारिय-जमल-जुयल-घटं) नीचे तक एक ही साथ लटकते हुए दो घंटों
से यह शोभित था । (विज्जुपिणद्धं) इस पर जो भी आभरण सजाये गये थे वे बिजली
के समान चमकते थे, अतः यह गजराज (कालमेहं व) कृष्णवर्ण होने से काला मेघ के
जैसा ज्ञात होता था । (चंकमंतं उप्पाइयपव्वयं व) चलते समय यह औत्पातिक पर्वत
के समान दिखायी देता था । (गुलगुलंतं) जब यह चिंघाड़ता था तो ऐसा प्रतीत होता

जल्ले ऐ युद्धने भाटेज सज्झयेदो छे. (सच्छत्तं) ऐ छत्रसहित इतो.
(सज्झयं) ध्वजसहित इतो. (सघटं) घंटाओ जन्ने जालु लटकती इती.
(पंचामेलय-परिमंडिया-भिरामं) पांच वर्णुनी पुष्पमाला पहिराववाथी ऐ सुंदर
लागते। इतो. (ओसारिय-जमल-जुयल-घटं) नीचे सुधी ऐक साथे लटकता
ऐ घंटाओथी ते शोभते। इतो. (विज्जुपिणद्धं) तेना पर जे डोछ आलरल्लु
सज्झयेलां इतां ते वीज्जणीना जेवां चमकतां इतां. आथी आ गजराज
(कालमेहं व) कृष्णवर्णु डोवाथी डाला मेघना जेवो जल्लुतो। इतो. (चंकमंतं उप्पा
इयपव्वयं व) आलती वप्पते ऐ औत्पातिक पर्वतना जेवो देखाते। इतो.
(गुलगुलंतं) ज्यारे ते जराडतो। इतो. त्यारे ऐम प्रतीत थतुं इतुं डे जल्ले

भीमं संगामियाओज्जं आभिसेकं हत्थिरयणं पडिकप्पेइ, पडि-
कप्पित्ता हय — गय—रह — पवरजोह—कलियं चाउरंगिणीं सेणं
सण्णाहेइ, जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ ॥ सू० ४२ ॥

मनःपवनजयिवेगं—गत्या मनःपवनाधिकवेगयुक्तं, 'भीमं' भयङ्करम्, 'संगामियाओज्जं' सांग्रामिकाऽऽयोज्यम् संग्राम एव सांग्रामिकं तस्मिन् आयोज्यम्=आयोजनीयं—संग्राम-योग्यमित्यर्थः; 'आभिसेकं हत्थिरयणं' आभिषेक्यं हस्तिरत्नम् — अभिषेकाहं हस्तिश्रेष्ठम्, 'पडिकप्पेइ' परिकल्पयति, 'पडिकप्पित्ता' परिकल्प्य, 'हय-गय-रह-पवरजोह-कलियं' हय—गज—रथ—प्रवरयोध—कलितां—हयैर्गजै रथैः प्रवरयोधै महारथिभि-र्युक्ताम्, 'चाउरंगिणिं सेणं' चतुरङ्गिणीं सेनाम्=चतुरङ्गवर्ती सेनाम्, 'सण्णाहेइ' संना-हयति, 'जेणेव बलवाउए' यत्रैव बलव्यापृतः—सेनापतिः, 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति, 'उवागच्छित्ता' उपागत्य, 'एयमाणत्तियं' एतामाज्ञातिकाम्—सेना-पतेराज्ञाम् 'पच्चप्पिणइ' प्रत्यर्पयति—तदीयामाज्ञां सम्पाद्य पश्चान्निवेदयति, भवदाज्ञानुसारेण सर्वं संपादितमस्माभिरिति ॥ ४२ ॥

कि मानો મહામેઘની ગર્જના હો રહી છે । (મળ—પવણ—જડણ—વેગં) ઇસકી ગતિ મન ઓર પવન કે વેગ કો જીતને વાલી થી, (भीमं) देखने में यह बड़ा भयंकर जैसा लगता था । (संगामियाओज्जं) इस के ऊपर जितनी भी सामग्रियाँ रखने में आई थीं वे सब संग्राम के योग्य थीं । (आभिसेकं हत्थिरयणं) इस प्रकार इस पट्टहस्ति को (पडिकप्पेइ) उन निपुण मतिवाले पुरुषों से सजवाया, (पडिकप्पित्ता) सजवाने के बाद फिर उस हाथी के अधिकारी ने उन निपुण पुरुषों से (हय—गय—रह—पवरजोह—कलियं चाउरंगिणिं

મહામેઘની ગર્જના થાય છે. (મળ—પવણ—જડણ—વેગં) તેની ગતિ મન તથા પવનના વેગને જીતે એવી હતી. (भीमं) જેવામાં એ બહુ ભયંકર જેવો લાગતો હતો. (संगामियाओज्जं) તેના ઉપર જેટલીએ સામગ્રીઓ રાખવામાં આવી હતી તે બધી સંગ્રામને યોગ્ય હતી. (आभिसेकं हत्थिरयणं) આ પ્રકારે એ પટ્ટહસ્તિને (पडिकप्पेइ) તે નિપુણ બુદ્ધિવાલા પુરુષોએ સજાવ્યો હતો. (पडिकप्पित्ता) તૈયાર કરી લીધા પછી તે હાથીના આધકારીએ તે નિપુણ પુરુષોદ્વારા (हय—गय—रह—पवर—जोह—कलियं चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेइ) ઘોડા,

मूलम्—तए णं से बलवाउए जाणसालियं सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सुभदा-पमुहाणं देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए पाडियक्कपाडियक्काइं

टीका—‘तए णं से’ इत्यादि । ‘तए णं से बलवाउए’ ततः खलु स बलव्यापृतः—तदनन्तरम्—चतुरङ्गिणीसेनासज्जीकरणानन्तरं स सेनापतिः ‘जाणसालियं’ यानशालिकं=यानशालाधिकृतम्, ‘सदावेइ’ शब्दयति=आह्वयति, ‘सदावित्ता एवं वयासी’ शब्दयित्वा एवमवादीत् ‘खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया !’ क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिय ! ‘सुभदापमुहाणं देवीणं’ सुभद्राप्रमुखानां=सुभद्रादीनां देवीनां ‘बाहिरियाए उवट्ठाण-

सेणं सण्णाहेइ) घोडा, हाथी, रथ एवं सुभद्रों से युक्त चतुरंगिणी सेना सजवायी, सज-वा कर (जेणेव बलवाउए) जहाँ पर सेनापति थे (तेणेव उवागच्छइ) वहाँ पर गया, (उवागच्छित्ता) पहुँचकर (एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ) उमने निवेदन किया कि आपने जो आज्ञा प्रदान की थी वह सब मैंने आपकी आज्ञानुसार ठीक कर लिया है ॥ सू० ४२ ॥

‘तए णं से बलवाउए’ इत्यादि ।

(तए णं) चतुरंगिणी सेना जब सजी जा चुको तब (से बलवाउए) उस सेना-पतिने (जाणसालियं) यानशाला के अधिकारी को (सदावेइ) बुलाया, (सदावित्ता) बुलाकर (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—(खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! तुम शीघ्र ही (सुभदापमुहाणं देवीणं) सुभद्रा आदि देवियों के लिये (बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए) बाहिर की उपस्थानशाला में (पाडियक्कपाडियक्काइं) एक एक रानी

हाथी, रथ तेमज सुभद्रोथी युक्त चतुरंगिणी सेना तैयार करावी. तैयार करावीने (जेणेव बलवाउए) जहाँ सेनापति होता. (तेणेव उवागच्छइ) तहाँ गया, (उवागच्छित्ता) तेणु तहाँ पहुँचीने (एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ) निवेदन कयुं के आपे जे आज्ञा आपी हुती ते अधुं में आपनी आज्ञाप्रमाणे ठीक करी लीधुं छे. (सू० ४२)

‘तए णं से बलवाउए’ इत्यादि.

(तए णं) चतुरंगिणी सेना ज्यारे तैयार थई चुकी त्यारे (से बलवाउए) ते सेनापतिजे (जाणसालियं) यानशालाणा अधिकारीने (सदावेइ) बोलाव्ये, (सदावित्ता) बोलावीने (एवं वयासी) आ प्रकारे कहुं—(खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! तमे जलदी (सुभदापमुहाणं देवीणं) सुभद्रा आदि देवीजो भाटे (बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए) अहारनी उपस्थानशालाभां (पाडियक्क-

जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्टवेहि, उवट्टवित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि ॥ सू० ४३ ॥

मूलम्—तए णं से जाणसालिए बलवाउयस्स एयमट्ठं

सालाए ' बाह्यायामुपस्थानशालायाम्, 'पाडियक्कापाडियक्काइं' प्रत्येकं प्रत्येकम्=प्रत्ये-
काऽर्थम्, 'जत्ताभिमुहाइं' यात्राभिमुखानि=भगवद्दर्शनार्थगमनानुकूलानि 'जुत्ताइं' युक्तानि
'जाणाइं' यानानि 'उवट्टवेहि' उपस्थापय—सज्जीकृत्य समानय, 'उवट्टवित्ता' उपस्थाप्य
'एयमाणत्तियं पच्चप्पिणाहि' एतामाज्ञासिकां प्रत्यर्पय—मदीयामाज्ञां पश्चात् समर्पय—सर्वं
सम्पादितम् इति ब्रूहि ॥ सू० ४३ ॥

टीका—'तए णं से' इत्यादि ।

ततः खलु स 'जाणसालिए बलवाउयस्स एयमट्ठं' यानशालिको बलव्यावृत्त-
स्यैतमर्थम्=यानसज्जीकरणाऽऽनयनरूपं निदेशं श्रुत्वा, आज्ञाया विनयेन वचनं 'पडिसुणेइ'

के बैठने योग्य अलग २ रूप में (जत्ताभिमुहाइं) यात्रा के लायक—भगवान के दर्शन
करने के लिये जिसमें बैठकर जाया जाता है ऐसे (जुत्ताइं) एवं अच्छे २ बैलों से युक्त
(जाणाइं) रथादिक वाहनों को (उवट्टवेहि) उपस्थित करो, (उवट्टवित्ता) उपस्थित करके
(एयमाणत्तियं पच्चप्पिणेहि) इस मेरी आज्ञा को यथावत् पालन करने की खबर
पीछे मुझे बहुत जल्दी भेजो ॥ सू० ४३ ॥

'तए णं से जाणसालिए' इत्यादि ।

(तए णं) सेनापति के आदेश देने के बाद (से जाणसालिए) उस यानशाला
के अधिकारी ने (बलवाउयस्स) सेनापति के (एयमट्ठं) यान को सज्जित करके लानेकी

पाडियक्काइं) એક એક રાણીને બેસવા યોગ્ય અલગ અલગ રૂપમાં (જત્તા-
ભિમુહાઈ) યાત્રાને લાયક ભગવાનનાં દર્શન કરવા માટે જેમાં બેસીને જવાય
એવા, (જુત્તાઈ) તેમજ સારા સારા બળદોથી યુક્ત (જાણાઈ) રથ આદિક
વાહનોને (ઉવટ્ટવેહિ) હાજર કરો. (ઉવટ્ટવિત્તા) હાજર કરીને (એયમાણત્તિયં
પચ્ચપ્પિણેહિ) આ મારી આજ્ઞાનું પાલન કરવાની ખબર પછી મને બહુ
જલ્દી મોકલો. (સૂ० ૪૩)

“ તए णं से जाणसालिए ” इत्यादि.

(तए णं) सेनापतिना आदेश दीधा पछी (से जाणसालिए) ते यानशालाना
अधिकारीએ (बलवाउयस्स) सेनापतिनी (एयमट्ठं) यानने तैयार करीने लाव-

આળાણ વિણણં વયણં પડિસુણેઙ્, પડિસુણિત્તા જેણેવ જાણ-
સાલા તેણેવ ઉવાગચ્છઙ્, ઉવાગચ્છિત્તા જાણાં પચ્ચુવેક્ખેઙ્, પચ્ચુ-
વેક્ખિત્તા જાણાં સંપમજ્જેઙ્, સંપમજ્જિત્તા જાણાં સંવટ્ટેઙ્, સંવટ્ટિત્તા
જાણાં ણીણેઙ્, ણીણિત્તા જાણાં દૂસે પવીણેઙ્, પવીણિત્તા જાણાં

પ્રતિશૃણોતિ=સ્વીકરોતિ, પ્રતિશ્રુત્ય=આજ્ઞાવચનં સ્વીકૃત્ય યત્રૈવ યાનશાલા તત્રૈવોપાગચ્છતિ,
ઉપાગત્ય 'જાણાં પચ્ચુવેક્ખેઙ્' યાનાનિ પ્રત્યુપેક્ષતે=સમ્યક્ પશ્યતિ, પ્રત્યુપેક્ષ્ય=દૃષ્ટ્વા
'જાણાં સંપમજ્જેઙ્' યાનાનિ સમ્પ્રમાર્જયતિ-વિગતરજાંસિ કુરુતે, સમ્પ્રમાર્જ્ય, 'જાણાં
સંવટ્ટેઙ્' યાનાનિ સંવર્તયતિ-રુકસ્મિન્ સ્થાને સ્થાપયતિ, 'સંવટ્ટિત્તા' સંવર્ત્ય 'જાણાં
ણીણેઙ્' યાનાનિ નયતિ-શાલાતો બહિષ્કરોતિ, નીત્વા 'જાણાં' યાનાનાં 'દૂસે'
દૂષ્યાણિ=આચ્છાદનવસ્ત્રાણિ 'પવીણેઙ્' પ્રવિનયતિ=અપસારયતિ, પ્રવિનીય-અપસાર્ય,

આજ્ઞાકો સુનકર (આળાણ વિણણં વયણં) ઉસ આજ્ઞાવચન કો વિનયપૂર્વક (પડિસુ-
ણેઙ્) સ્વીકાર ક્રિયા, (પડિસુણિત્તા) સ્વીકાર કરકે ફિર વહ (જેણેવ જાણસાલા)
જહાં યાનશાલા થી (તેણેવ ઉવાગચ્છઙ્) વહાં પહુંચા, (ઉવાગચ્છિત્તા) પહુંચકર
(જાણાં પચ્ચુવેક્ખેઙ્) ઉસને વહાં પહિલે રથ આદિ યાનોં કો અચ્છી તરહ સે દેસા ।
(પચ્ચુવેક્ખિત્તા) દેસકર (જાણાં સંપમજ્જેઙ્) ઉસને ઉન્હેં અચ્છી તરહ જ્ઞાડ-જ્ઞાડ કર
સાફ ક્રિયા । (સંપમજ્જિત્તા જાણાં સંવટ્ટેઙ્) સાફ કરને કે બાદ ઉસને ફિર જિતને
ચાહિયે થે ઉતને યાન એક જગહ એકત્રિત ક્રિયે । (સંવટ્ટિત્તા) ઇકઠ કરને કે બાદ
(જાણાં ણીણેઙ્) વહાં સે ઉસને ઉન સવ કો બહિર નિકાલા । (ણીણિત્તા) બહિર

વાની આજ્ઞા સાંભળીને (આળાણ વિણણં વયણં) તે આજ્ઞાવચનને વિનયપૂર્વક
(પડિસુણેઙ્) સ્વીકાર કર્યો. (પડિસુણિત્તા) સ્વીકાર કરીને પછી તે (જેણેવ
જાણસાલા) જ્યાં યાનશાલા હતી (તેણેવ ઉવાગચ્છઙ્) ત્યાં પહોંચ્યો. (ઉવાગ-
ચ્છિત્તા) પહોંચીને (જાણાં પચ્ચુવેક્ખેઙ્) તેણે ત્યાં પહેલાં રથ આદિ યાનોને
સારી રીતે ભેંથા. (પચ્ચુવેક્ખિત્તા) ભેંથને (જાણાં સંપમજ્જેઙ્) તે તેણે
સારી રીતે વાળી-બૂડી સાફ કર્યા. (સંપમજ્જિત્તા જાણાં સંવટ્ટેઙ્) સાફ કરી
લીધા પછી તેણે બેટલાં ભેંથતાં હતાં તેટલાં યાન (વાહન) એક જગ્યાએ
એકઠાં કર્યાં (સંવટ્ટિત્તા) એકઠાં કરી લીધા પછી (જાણાં ણીણેઙ્) ત્યાંથી
તેણે એ બધાંને બહાર કાઢ્યાં. (ણીણિત્તા) બહાર કાઢીને (જાણાં દૂસે

સમલંકરેઈ, સમલંકરિત્તા જાણાઈં વરમંડગમંડિયાઈં કરેઈ, કરિત્તા
જેણેવ વાહણસાલા તેણેવ ઉવાગચ્છઈ, ઉવાગચ્છિત્તા વાહણસાલં
અણુપવિસઈ, અણુપવિસિત્તા વાહણાઈં પચ્ચુવેક્કચ્છેઈ, પચ્ચુવેક્કિત્તા
વાહણાઈં સંપમજ્જઈ, સંપમજ્જિત્તા વાહણાઈં ણીણેઈ, ણીણિત્તા વાહ-

‘જાણાઈં સમલંકરેઈ’ યાનાનિ સમલંકરોતિ=ચત્રયોગત્રાદિભિઃ કૃતાલંકારાણિ કરોતિ,
સમલંકૃત્ય ‘જાણાઈં વરમંડગમંડિયાઈં’ યાનાનિ વરમાણ્ડકમણ્ડિતાનિ=વરાભરણભૂષિ-
તાનિ ‘કરેઈ’ કરોતિ, કૃત્વા યત્રૈવ વાહનશાલા તત્રૈવોપાગચ્છતિ, ઉપાગત્ય, વાહનશાલા-
મનુપ્રવિશતિ, અનુપ્રવિશ્ય ‘વાહણાઈં પચ્ચુવેક્કચ્છેઈ’ વાહનાનિ પ્રત્યુપેક્ષતે, તેષામન્નપ્રત્યન્ન-
સૌન્દર્યં પશ્યતિ, દૃષ્ટ્વા—વાહનાનિ ‘સંપમજ્જઈ’ સમ્પ્રમાર્જયતિ=નિર્મલીકરોતિ, સમ્પ્રમાર્જ્યં વાહ-

નિકાલ્લકર (જાણાણં દૂસે પવીણેઈ) उनके ऊपर के वस्त्रों को उसने दूर किया । (पवी-
णित्ता) जब वस्त्र कि जिनसे ये ढके हुए थे दूर हो चुके तब उसने (जाणाईं सम-
लंकरेई) उन सब यानों को अलंकृत किया । (समलंकरित्ता) जब वे अच्छी तरह अलं-
कृत हो चुके तब (जाणाईं वरमंडगमंडियाईं करेई) उन यानों को उसने अच्छी रीति
से गादी-तकिया आदि उपकरणों से मंडित किया । (करित्ता) सुसज्जित कर (जेणेव वाहण-
साला तेणेव उवागच्छई) फिर वह जहां वाहनशाला थी वहां पहुँचा, (उवागच्छित्ता) पहुँच
कर (वाहणसालं अणुपविसई) वह उस वाहनशाला के भीतर प्रविष्ट हुआ । (अणुप-
विसित्ता) प्रविष्ट होकर (वाहणाईं पचुवेक्कचछेई) उसने वाहनों को देखा (पचुवे-

પવીણેઈ) તેમના ઉપરનાં વસ્ત્રોને તેણે દૂર મૂક્યાં (પવીણિત્તા) જ્યારે તે
વસ્ત્રો કે જેનાથી તે ઢંકાયા હતા તે દૂર થઈ ગયાં ત્યારે તેણે (જાણાઈં સમ-
લંકરેઈ) તે બધાં યાનોને શણગાર્યાં. (સમલંકરિત્તા) જ્યારે તે સારી રીતે
અલંકૃત થઈ ચુક્યાં ત્યારે (જાણાઈં વરમંડગમંડિયાઈં કરેઈ) તે યાનોને તેણે
સારીરીતથી ગાદી તકિયા આદિ ઉપકરણોથી મંડિત કર્યાં. (કરિત્તા) સુસ-
જ્જિત કરીને (જેણેવ વાહણસાલા તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) પછી તે જ્યાં વાહનશાલા
હતી ત્યાં પહોંચ્યા. (ઉવાગચ્છિત્તા) પહોંચીને (વાહણસાલં અણુપવિસઈ) તે
એ વાહનશાલાની અંદર દાખલ થયા. (અણુપવિસિત્તા) દાખલ થઈને
(વાહણાઈં પચ્ચુવેક્કચ્છેઈ) તેણે વાહનોને જોયાં. (પચ્ચુવેક્કિત્તા) જોઈને (વાહ-

णाइं अप्फालेइ, अप्फालित्ता दूसे पवीणेइ, पवीणित्ता वाहणाइं
समलंकरेइ, समलंकरित्ता वाहणाइं वरभंडगमंडियाइं करेइ, करित्ता
वाहणाइं जाणाइं जोएइ, जोइत्ता पओयलट्टिं पओयधरण य

नानि 'णीणेइ' नयति=बहिष्करोति, नीत्वा वाहनानि 'अप्फालेइ' आस्फालयति=हस्तेन
आस्फालयति, आस्फाल्य 'दूसे पवीणेइ' दूध्यागि प्रविनयति=आच्छादनवस्त्राण्यपनयति,
प्रविनीय 'वाहणाइं समलंकरेइ' वाहनानि समलङ्करोति, समलङ्कृत्य वाहनानि
'वरभंडगमंडियाइं करेइ' वरभाण्डकमण्डितानि करोति, कृत्वा 'वाहणाइं जाणाइं
जोएइ' वाहनानि यानेषु योजयति, योजयित्वा यानशालिकः 'पओयलट्टिं' प्रतोदयष्टिं
वाहनचालनार्थां यष्टिं 'पराणी' इति भाषाप्रसिद्धां 'पओयधरण य' प्रतोदधरान्=
शकटवाहकान् समं=युगपत्-एकस्मिन् काले 'आडहइ' आहरति=एकस्मिन् स्थाने सवा-

खित्ता) देखकर (वाहणाइं संपमज्जइ) उसने उन्हें साफ किया । (संपमज्जित्ता) साफ-
सूफ कर (वाहणाइं णीणेइ) वाहनों को उसने वहां से बाहिर निकाला, (णीणित्ता) बाहिर
निकालकर (वाहणाइं अप्फालेइ) उसने फिर उनके पीठ पर हाथ फिराया, (अप्फालित्ता)
हाथ फिराकर (दूसे पवीणेइ) फिर उसने उनकी खोलियों को अलग किया । (पवीणित्ता)
जब खोलियां उनकी अलग हो चुकीं तब फिर उसने (वाहणाइं समलंकरेइ) उन वाह-
नोंको शृंगारित किया । (समलंकरित्ता) जब वे अच्छी तरह से सजा दिये गये तब
(वाहणाइं वरभंडगमंडियाइं करेइ) उसने उनको उपकरणों से मंडित किया, (करित्ता)
करने के बाद (वाहणाइं जाणाइं जोएइ) फिर उसने उन वाहनों-बैलों को स्थों में
जोते, (जोइत्ता) जोतने के बाद (पओयलट्टिं पओयधरण य समं आडहइ) उसने

णाइं संपमज्जइ) तेण्हे तेमने साइ इयां. (संपमज्जित्ता) साइ-सूइ करीने
(वाहणाइं णीणेइ) वाडुनेने तेण्हे त्यांथी अडार डाढयां. (णीणित्ता) अडार
डाढीने (वाहणाइं अप्फालेइ) तेण्हे करीने तेमनी पीठ उपर हाथ ફેરવ્યો.
(अप्फालित्ता) हाथ ફેરવીने (दूसे पवीणेइ) पछी तेण्हे तेमनी ખોળોને જુદી
કરી, (पवीणित्ता) જ્યારે ખોળો તેમની જુદી કરાઈ ગઈ ત્યાર પછી તેણે
(वाहणाइं समलंकरेइ) ते वाडुनेने શણગાર્યાં, (समलंकरित्ता) ज्यारे ते सारी
रीते तैयार થઈ (सलंकरित्ता) गयां त्यारे (वाहणाइं वरभंडगमंडियाइं करेइ) तेण्हे
तेमने ઉપકરણોથી મંડિત કર્યાં. (करित्ता) इयां पछी (वाहणाइं जाणाइं जोएइ)
तेण्हे ते वाडुनेना अणदोने स्थोभां બેઠાવ્યાં, (जोइत्ता) બેઠાવ્યાં પછી (पओयलट्टिं

समं आडहइ, आडहिता वट्टमग्गं गाहेइ, गाहिता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता बलवाउयस्स एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ ॥ सू० ४४ ॥

मूलम्—तए णं से बलवाउए णयरगुत्तियं आमंतेइ,

हनयानानि तेषु प्रतोदयष्टीः प्रतोदधरान्=शकटवाहकांश्च स्थापयति । ‘आडहिता’ आहृत्य, ‘वट्टमग्गं’ वर्तमार्गम्=शकटादिगम्यमार्गं—राजमार्गं ‘गाहेइ’ ग्राहयति, ग्राहयित्वा यत्रैव बलव्यापृतस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य ‘बलवाउयस्स एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ’ बलव्यापृताय एतामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयति=आज्ञां सम्पाद्य पश्चान्निवेदयतीत्यर्थः ॥ सू० ४४ ॥

टीका—‘तए णं’ इत्यादि । ‘तए णं से बलवाउए’ ततः खलु स बलव्यापृतो

उन यानों में हांकने की चाबुकों एवं हांकने वालों को एक ही साथ स्थापित कर दिया, (आडहिता) चाबुक लेकर हांकने वाले जब अच्छी तरह उन यानों पर जमकर बैठ चुके तब (वट्टमग्गं गाहेइ) उसने उन यानों को राजमार्ग पर उपस्थित किये । (गाहिता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ) उन्हें राजमार्ग पर उपस्थित कर फिर वह यान-शालाधिकारी जहां सेनापति थे वहां पहुंचा । (उवागच्छिता बलवाउयस्स एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ) पहुँचकर उसने कहा कि हे स्वामिन् ! आपके आज्ञानुसार सभी यान तैयार हैं ॥ सू० ४४ ॥

‘तए णं से बलवाउए’ इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (से बलवाउए) उस सेनापतिने (णयरगुत्तियं) नगर की रक्षा

पओयधरण य समं आडहइ) तेणे ते यानोभां डांङ्कवानी चाणुडे। तेमज्ज डांङ्कवावाणाने अेक ज् साथे स्थापित करी दीधा. (आडहिता) चाणुक लधने डांङ्कवावाणा ज्यारे सारी रीते ते यानो उपर जेसी चुक्या त्यारे (वट्टमग्गं गाहेइ) तेणे ते यानोने राजमार्ग पर डांजर कर्या, (गाहिता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ) तेमने राजमार्ग पर डांजर करीने पछी ते यानशाणाधिकारी सेनापतिनी पास पडोन्थे. (उवागच्छिता बलवाउयस्स एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ) पडोन्थीने तेणे इधुं डे डे स्वामिन् ! आपनी आज्ञाप्रमाणे जधां यान तैयार छे. (सू० ४४)

“ तए णं से बलवाउए ” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से बलवाउए) ते सेनापतिअे (णयरगुत्तियं) नगरनी

आमंतित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चंपं णयरिं
सब्भितरबाहिरियं आसित्त जाव कारवेत्ता एयमाणत्तियं
पच्चप्पिणाहि ॥ सू० ४५ ॥

‘णयरगुत्तियं’ नगरगुत्तिकं=नगरगोप्तारम् ‘आमंतेइ’ आमन्त्रयति=आह्वयति,—‘आमंतित्ता
‘एवं वयासी’ आमन्त्रयैवमवादीत् ‘खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया’
क्षिप्पमेव भो देवानुप्रिय ! ‘चंपं णयरिं’ चम्पां नगरीं ‘सब्भितरबाहिरियं’ साम्यन्तर-
बाह्याम् ‘आसित्त जाव कारवेत्ता’ आसित्तशुचि-मृष्टरथ्यान्तरापगर्वाथिकां यावद्गन्ध-
वर्तिभूतां कुरु, कारय, कृत्वा, कारयित्वा ‘एयमाणत्तियं’ एतामाज्ञातिकां ‘पच्चप्पिणाहि’
प्रत्यर्पय ॥ सू० ४५ ॥

करनेवाले कोटवाल को (आमंतेइ) बुलाया, और (आमंतित्ता) बुलाकर (एवं वयासी) इस प्रकार
कहा—(खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! तुम शीघ्र ही (चंपं णयरिं) इस चंपा
नगरी की (सब्भितरबाहिरियं) भीतर बाहिर से सफाई कराओ। पानी से इसमें छिड़काव कराओ।
जगह २ इसे पानी से धुलवाओ। कहीं भी कूड़ा-करकट का नाम न मिले, इस तरह से
इसकी सफाई हो जानी चाहिये। प्रत्येक गली एवं बाजारों के मार्ग सब बहुत ही अच्छी
तरह से साफसूफ किये जायें। जगह २ सुगंधित जल का, गोरोचन का एवं सरस लाल
चंदन का छिड़काव हो, जिससे यह नगरी सुगंधित द्रव्य जैसी बन जावे। तुम से यही
कहना है, जाओ और इस आदेश की शीघ्र से शीघ्र पूर्ति करो और उन कामों को पूरा
कर के मुझे शीघ्र सूचित करो ॥ सू० ४५ ॥

रक्षा करवाणा कोटवालने (आमंतेइ) बोलाव्या. अने (आमंतित्ता) बोलावीने
(एवं वयासी) आ प्रकारे कह्युं. (खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय !
तमे जलदीथी (चंपं णयरिं) आ चंपानगरीनी (सब्भितरबाहिरियं) अंदर तथा
अहारथी सक्षार्थ करावो, तेमां पाणीने छंटकाव करावो, ठेक-ठेकाणु
तेने पाणीथी धोवरावो. कयांय पणु कूडाकरकटनुं नाम न रहे अमे तेनी
सक्षार्थ थवी जेधअ. प्रत्येक गल्ली तेमज अन्दरना रस्ता भूअज सारी रीते
साक्षसूक्ष करवा. ठेकठेकाणु सुगंधित जलनो, गोशीर्ष-सुअडनो तेमज सरस
रक्त अंदननो छंटकाव होय, जेथी आ नगरी सुगंधित थीज जेवी अनी
अय. तमने अज कहेवानुं छे. जअो अने आदेशने जदही पूर्ण करो अने
ते कामो पूरा करीने मने जदही अअर करो. (सू० ४५)

मूलम्—तए णं से णयरगुत्तिए बलवाउयस्स एयमट्ठं
(सोच्चा) आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता
चंपं णयरिं सब्भितरवाहिरियं आसित्त जाव कारवेत्ता जेणेव

टीका—‘तए णं’ इत्यादि। ‘तए णं से णयरगुत्तिए’ ततः खलु स नगर-
गुप्तिको ‘बलवाउयस्स एयमट्ठं’ बलव्यापृतस्यैतमर्थं ‘सोच्चा’ श्रुत्वा ‘आणाए विणएणं
वयणं पडिसुणेइ’ आज्ञाया विनयेन वचनं प्रतिशृणोति, ‘पडिसुणित्ता चंपं णयरिं
सब्भितरवाहिरियं आसित्त जाव कारवेत्ता’ प्रतिश्रुत्य चम्पां नगरीं साम्यन्तरवाह्या-
मासिच्य यावत् कारयित्वा ‘जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ’ यत्रैव बलव्यापृतस्त-

‘तए णं से णयरगुत्तिए’ इत्यादि।

(तए णं) इसके बाद (से णयरगुत्तिए) उस नगररक्षक कोटवालने (बल-
वाउयस्स) सेनापति के (एयमट्ठं) नगर की सफाई कराने के आदेश को (सोच्चा)
सुनकर (आणाए वयणं विणएणं) आज्ञा के वचन को बड़े विनय के साथ (पडि-
सुणेइ) स्वीकार किया। (पडिसुणित्ता चंपं णयरिं सब्भितरवाहिरियं) स्वीकार
करने बाद ही उसने चंपानगरी के भीतर बाहिर सब तरफ से (आसित्त जाव कारवेत्ता)
सफाई करवा दी। पहिले उसने उसे सब जगह पानी के छिड़काव से सिंचवाया। गली-कूचों
में जो कूड़ा-करकट पड़ा हुआ था उसकी सफाई करवाई। बाजारों के रास्तों को तथा
नालियों को अच्छी तरह से झाड़-पोंछकर साफ करवाया, मतलब यह कि सफाई में
किसी भी तरह की त्रुटि नहीं रखी। जब नगरी अच्छी तरह भीतर-बाहिर से साफ हो

“तए णं से णयरगुत्तिए” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से णयरगुत्तिए) ते नगररक्षक कोटवाले (बलवाउयस्स)
सेनापतिना (एयमट्ठं) नगरनी सफाई कराववाना आदेशने (सोच्चा) सांभलीने
(आणाए वयणं विणएणं) आज्ञानां वचनोने अहु विनयपूर्वक (पडिसुणेइ) स्वी-
कार कयेँ, (पडिसुणित्ता चंपं णयरिं सब्भितरवाहिरियं) स्वीकार कयां पछी ज तेणे
चंपानगरीनी अंदर अने अहार अधी तरइथी (आसित्त जाव कारवेत्ता) सफाई
करावी दीधी. पड़ेदां तेणे तेमां अधी जगाये पाणीना छंटकाव कराव्या.
गलीगुंथीमां जे कचरो-पूजे पडये हुते तेनी सफाई करावी. अन्न-
रोना रस्ता सारी रीते वाजुड करी साई कराव्या. मतलब अये के सफाईमां
कोइपणु प्रकारनी त्रुटि राणी नहि. ज्यारे नगरी सारी रीते अंदर अने

बलवाउए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पि-
णइ ॥ सू० ४६ ॥

मूलम्—तए णं से बलवाउए कोणियस्स रण्णो भंभ-
सारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पियं पासइ, हय—गय—

त्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणइ' उपागत्य एतामाज्ञप्तिकां
प्रत्यर्पयति ॥ सू० ४६ ॥

टीका—'तए णं' इत्यादि । 'तए णं से बलवाउए' ततः खलु स
बलव्यापृतः 'कोणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स' कूणिकस्य राज्ञो भंभसारपुत्रस्य 'आभि-
सेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पियं' आभिषेक्यं हस्तिरत्नं परिकल्पितं 'पासइ' पश्यति,
'हयगय जाव सण्णाहियं' हय-गज-यावत् संनाहितां 'पासइ' पश्यति, अत्र यावच्छब्देन

चुकी तब फिर वह कोटवाल (जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ) जहाँ सेनापति था
वहाँ पर पहुँचा । पहुँच कर उसने नगरी साफ हो चुकी है इस बात की उसे
खबर दी ॥ सू० ४६ ॥

'तए णं से बलवाउए' इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (से बलवाउए) उस सेनापतिने (भंभसारपुत्तस्स)
भंभसार अर्थात् श्रेणिक के पुत्र (कोणियस्स रण्णो) कूणिक राजा के (आभिसेक्कं)
अभिषिक्त-पट्ट (हत्थिरयणं) हस्तिरत्नको (पडिकप्पियं) अच्छी तरह से शृंगारित किया
हुआ (पासइ) देखा । (हयगय जाव सण्णाहियं पासइ) तथा—हय—गज आदि से
युक्त चतुरंगिणी सेना को भी सन्नद्ध देखा । (सुभद्दापमुहाणं देवीणं

अङ्गारथी साक्ष थर्ध त्यारे वणी ते कोटवाल (जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ)
ज्यां सेनापति हुता त्यां पडोन्थो अने पडोन्थीने तेणे नगरी साक्ष थर्ध गछ
छे, अे वातनी तेने अअर दीधी. (सू० ४६)

'तए णं से बलवाउए' इत्यादि.

(तए णं) त्थारपथी [से बलवाउए] ते सेनापतिअे [भंभसारपुत्तस्स] भंभसार
अर्थात् श्रेणिकना पुत्र (कोणियस्स रण्णो) कूणिक राजाना [आभिसेक्कं] आभिषेक्य-
पट्ट (हत्थिरयणं) ड्वाथीरत्नने (पडिकप्पियं) सारी रीते शृंगारेत्ते। (पासइ) ज्ञेयो.
(हयगय जाव सण्णाहियं पासइ) तथा—हय गज आदिथी युक्त चतुरंगिणी

જાવ-સળ્ળાહિયં પાસડ, સુભદ્રાપમુહાણં દેવીણં પડિજાણાં
 ઉવટ્ટવિયાં પામડ, ચંપં ણયરિં સંભિતર જાવ ગંધવટ્ઠિભૂયં કયં
 પાસડ, પાસિત્તા હટ્ટતુટ્ટચિત્તમાણંદિણ પીયમણે જાવ હિયણ
 જેણેવ કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે તેણેવ ઉવાગચ્છડ, ઉવાગચ્છિત્તા

‘રથ-પ્રવરયોધ-કલિતાં ચ ચતુરઙ્ગિણીં સેનામ્’ इति दृश्यम्, ‘सुभद्रापमुहाणं देवीणं’
 सुभद्राप्रमुखाणां=सुभद्रादीनां देवीनां ‘पडिजाणां उवट्टवियां’ प्रतियानानि=शकटानि
 उपस्थापितानि ‘पासड’ पश्यति. ‘चंपं णयरिं सन्भितर जाव गंधवट्ठिभूयं कयं
 पासड’ चम्पां नगरीं साऽभ्यन्तगं यावद् गन्धवर्तिभूतां कृतां पश्यति, दृष्ट्वा ‘हट्ट-तुट्ट-चित्त-
 माणंदिण’ हष्टतुष्टचित्ताऽऽनन्दितः ‘पीयमणे जाव हियण’ प्रीतमना यावद् हृदयो
 ‘जेणेव कूणिण राया मंभसारपुत्ते’ यत्रैव कूणिको राजा मंभसारपुत्रः. ‘तेणेव
 उवागच्छड’ तत्रैवोपागच्छति. ‘उवागच्छित्ता’ उपागत्य ‘करयल जाव एवं वयासी’

પડિજાણાં ઉવટ્ટવિયાં પાસડ) સુભદ્રાપ્રમુખ દેવિયોં કે લિયે આયે હુણ
 રથોં કો મીં દેશ્વા । (ચંપં ણયરિં સંભિતર જાવ ગંધવટ્ઠિભૂયં કયં પાસડ)
 ઓર યહ મીં દેશ્વા કિ ચંપાનગરી મીંતર બાહિર સે અચ્છી તરહ સે સ્વચ્છ હો ચુકી હૈ, ંવં
 ંસસે સુગંધિ કી મહક ંઠ રહી હૈ । (પાસિત્તા હટ્ટ-તુટ્ટ-ચિત્ત-માણંદિણ પીયમણે
 જાવ હિયણ જેણેવ કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે તેણેવ ઉવાગચ્છડ) યહ સવ દેશ્વકર
 વહ વહુત હી સુગ હુઆ હર્ષ કે મોગે વહ ફૂલો નહીં સમાયા । પ્રસન્ન મન હોકર વહ
 શીઘ્ર હી જહાં શ્રેણિક કે પુત્ર કૂણિક ગજા થે વહાં પહુંચા । (ઉવાગચ્છિત્તા કરયલ
 જાવ ંવં વયાસી) પહુંચકર ંસને સર્વપ્રથમ ગજા કો દો હાથ જોડકર પ્રણામ કિયા ંર

સેનાને પણ પાસેજ જોઈ. (સુભદ્રાપમુહાણં દેવીણં પડિજાણાં ઉવટ્ટવિયાં પાસડ)
 સુભદ્રાપ્રમુખ દેવીઓને માટે આવેલા રથોને પણ જોયા. (ચંપં ણયરિં
 સંભિતર જાવ ગંધવટ્ઠિભૂયં કયં પાસડ) અને એ પણ જોયું કે ચંપાનગરી
 અંદર અને બહારથી સારી રીતે સ્વચ્છ થઈ ગઈ છે, તેમજ તેમાંથી સુગંધીની
 મહક આવી રહી છે. (પાસિત્તા હટ્ટ-તુટ્ટ-ચિત્ત-માણંદિણ પીયમણે જાવ હિયણ
 જેણેવ કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે તેણેવ ઉવાગચ્છડ) આ બધું જોઈને તે બહુ જ
 ખુશ થયો અને અત્યંત હર્ષિત થઈ ગયો. મન પ્રસન્ન થવાથી તુરત જ
 બ્યાં શ્રેણિકના પુત્ર કૂણિક રાજા હતા ત્યાં પહોંચ્યો. (ઉવાગચ્છિત્તા કરયલ જાવ

करयल जाव एवं वयासी-कप्पिए णं देवाणुप्पियाणं आभिसेक्के
हत्थिरयणे, हय-गय-जाव-पवर-जोह-कलिया य चाउरंगिणी सेणा
सण्णाहिया, सुभदापमुहाण य देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए
पाडियक्कपाडियक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठावियाइं,

करतल यावदेवम् अवादीत्-‘ कप्पिए णं देवाणुप्पियाणं आभिसेक्के हत्थिरयणे ’
कल्पितं खलु देवानुप्रियाणामाभिषेक्यं हस्तिरत्नम् ‘ हयगयरहपवरजोहकलिया य ’
हयगजरथप्रवरयोधकलिता च ‘ चाउरंगिणी सेणा सण्णाहिया ’ चतुरङ्गिणी सेना सन्नाहिता,
‘ सुभदापमुहाण य देवीणं ’ सुभद्राप्रमुखानां च देवीनां ‘ बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए ’
बाह्यायामुपस्थानशालायां ‘ पाडियक्कपाडियक्काइं ’ प्रत्येकं प्रत्येकं ‘ जत्ताभिमुहाइं
जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठावियाइं ’ यात्राभिमुखानि युक्तानि यानानि उपस्थापितानि,

फिर इस प्रकार कहने लगा कि (कप्पिए णं देवाणुप्पियाणं आभिसेक्के हत्थिरयणे)
हे देवानुप्रिय ! आपका आभिषेक्य हस्तिरत्न शृंगारित हो चुका है । (हय-गय-रह-
पवरजोह-कलिया य चाउरंगिणी सेणा सण्णाहिया) घोड़े, हाथी, रथ एवं सुभद्रों
से युक्त चतुरंगिणी सेना भी सजा-बजाकर तैयार की जा चुकी है । (सुभदापमुहाण य
देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए पाडियक्कपाडियक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं
उवट्ठावियाइं सुभद्राप्रमुख देवियों के भी बाहिर की उपस्थानशाला में अलग २ बैठने
के लिये, यात्रा के योग्य एवं अच्छे २ बैलों से युक्त ऐसे रथ लाकर उपस्थित कर दिये

एवं वयासी) पडोन्हीने तेण्णे सर्वथी पडेल्लां राज्जने जन्ने हाथ जेडी प्रणाम
कर्यां जने पछी ते आ प्रकारे उडेवा लाग्ये । (कप्पिए णं देवाणुप्पियाणं
आभिसेक्के हत्थिरयणे) हे देवानुप्रिय ! आपने आभिषेक्य हाथीरत्न
शृंगारार्थ गये । (हय-गय-रह-पवरजोह-कलिया य चाउरंगिणी सेणा सण्णा-
हिया) घोड़ा, हाथी, रथ तेमज सुभद्रोत्थी युक्त चतुरंगिणी सेना पण
सज्ज थर्था गध । (सुभदापमुहाण य देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए
पाडियक्कपाडियक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठावियाइं) सुभद्राप्रमुख
देवीज्जने भाटे पण जहारनी उपस्थानशालामां अलग अलग जेसवाने
साइ, यात्राने योग्य तेमज सारा सारा जणहथी युक्त जेवा रथ लर्था आवी
डाजर राखेला । (चंपा णयरी सज्जितरबाहिरिया आसित्त-जाव-गंधबट्टिभूया कया)

ચંપાળયરી સર્વિભતરવાહિરિયા આસિત્ત જાવ ગંધવટ્ટિભૂયા કયા,
તં ણિજ્જંતુ ણં દેવાણુપ્પિયા ! સમણં ભગવં મહાવીરં અભિવંદિતં
॥ સૂ. ૪૭ ॥

મૂલમ—તણ ણં સે કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે બલ-

‘ચંપાળયરી સર્વિભતરવાહિરિયા’ ચંપા નગરી સાઽમ્યન્તરવાદ્યા ‘આસિત્ત જાવ ગંધવટ્ટિ-
ભૂયા કયા’ આસિત્ત યાવદ્ ગન્ધવર્તિભૂતા કૃતા, ‘તં ણિજ્જંતુ ણં દેવાણુપ્પિયા’ તન્નિર્યાન્તુ
સ્વલુ દેવાનુપ્રિયા ! ‘સમણં ભગવં મહાવીરં અભિવંદિતં’ ભગવન્તં મહાવીરમભિવન્દિતુમ્
॥ સૂ. ૪૭ ॥

ટીકા—‘તણ ણં’ ઇત્યાદિ । ‘તણ ણં’ તતઃ=સેનાપતિનિવેદનાનન્તરં સ્વલુ
‘સે કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે’ સ કૂણિકો ગજા મંભસારપુત્રઃ ‘બલવાડયસ્સ અંતિણ’
બલવ્યાપ્તસ્યાઽન્તિકે=બલવ્યાપ્તમુગ્ધાત્ ‘ણમટ્ટં’ એતમર્થ—‘ભવદાજ્ઞાનુસારેણ સર્વં સમ્પા-

હૈં । (ચંપાળયરી સર્વિભતરવાહિરિયા આસિત્ત જાવ ગંધવટ્ટિભૂયા કયા)
તથા ચંપાનગરી મી મીતર વાહિર સે અચ્છી તરહ ઝડવાકર સાફ કરા દી ગઈ હૈ । ઉસમેં
જલ મી છિડકવા દિયા ગયા હૈ. યાવત વહ મુગંધિત દ્રવ્ય જૈસી બન ચુકી હૈ;
(તં દેવાણુપ્પિયા) અતઃ હે દેવાનુપ્રિય ! (સમણં ભગવં મહાવીરં અભિવંદિતં ણિજ્જંતુ)
અબ આપ શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો વંદના કરને કે લિયે પધારે ॥ સૂ. ૪૭ ॥

‘તણ ણં સે કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે’ ઇત્યાદિ ।

(તણ ણં) હમકે વાદ (મંભસારપુત્તે સે કૂણિણ રાયા) મંભસાર અર્થાત્ શ્રેણિક કે પુત્ર
કૂણિક ગજા (બલવાડયસ્સ) સેનાપતિ કે મુગ્ધ સે (ણમટ્ટં સોચ્છા) હાથી આદિ કો

તથા ચંપાનગરી પણ અંદર-બહારથી સારી રીતે વાળીઝૂડી સાફ કરાવી
હીધી છે. તેમાં પાણી પણ છંટાંવ્યું છે. જેથી તે મુગંધિત દ્રવ્ય જેવી બની
ગઈ છે. (તં દેવાણુપ્પિયા) માટે હે દેવાનુપ્રિય ! (સમણં ભગવં મહાવીરં અભિવંદિતં
ણિજ્જંતુ) હવે આપ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદના કરવા સારૂ પધારો.
(સૂ. ૪૭)

‘તણ ણં સે કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે’ ઇત્યાદિ.

(તણ ણં) ત્યાર પછી (મંભસારપુત્તે સે કૂણિણ રાયા) ભંભસાર અર્થાત્ શ્રેણિકના
પુત્ર કૂણિક રાબા (બલવાડયસ્સ) સેનાપતિના મુખથી [ણમટ્ટં સોચ્છા] હાથી

वाउयस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए
जेणेव अट्ठणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अट्ठणसालं
अणुपविसइ, अणुपविसित्ता अणेग-वायाम-जोग्ग-वग्गण-वामदण-
मल्लजुद्ध-करणेहिं संते परिस्संते सयपागसहस्सपागेहिं सुगंध-

दितम्—एतद्रूपां वार्ता 'सोच्चा' श्रुत्वा 'णिसम्म' निशम्य—हृदि धृत्वा, 'हट्ठ—तुट्ठ जाव
हियए' हट्ठ—तुट्ठ—यावद्धृदयः—परमप्रसन्नमानसः सन् 'जेणेव' यत्रैव 'अट्ठणसाला'
अट्ठणशाला—व्यायामशाला 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति, 'उवागच्छित्ता'
उपागत्य 'अट्ठणसालं अणुपविसइ' अट्ठणशालामनुप्रविशति, 'अणुपविसित्ता'
अनुप्रविश्य 'अणेग—वायाम—जोग्ग—वग्गण—वामदण—मल्लजुद्ध—करणेहिं' अनेक—
व्यायाम—योग्य—वल्गन—व्यामर्दन—मल्लयुद्ध—करणैः—अनेके ये व्यायामाः—शारीरिकपरिश्रमाः
तद्योग्यं—तदनुकूलं, वल्गनं—कूर्दनं, व्यामर्दनं—परस्परबाह्याघङ्गमोटनं, मल्लयुद्धं—मल्लक्रीडनम्,
कण्णानि—मुद्गरादिचालनानि तैः सर्वैः 'संते' श्रान्तः—सामान्यतः, 'परिस्संते'

पूरी तैयारी के समाचार को सुनकर (णिसम्म) एवं अच्छी तरह से विचार कर (हट्ठ-तुट्ठ-
जाव-हियए) अपने मनमें बहुत ही अधिक हर्षित हुए एवं न्तुष्ट हुए । (जेणेव अट्ठण-
साला तेणेव उवागच्छइ) पश्चात् वे जहा व्यायामशाला थी वहाँ पर पहुँचे । (उवा-
गच्छित्ता अट्ठणसालं अणुपविसइ) पहुँचते हा वे उसमें प्रविष्ट हुए । (अणुपविसित्ता
अणेग—वायाम—जोग्ग—वग्गण—वामदण—मल्लजुद्ध—करणेहिं संते परिस्संते) प्रविष्ट
होकर उन्होंने वहा पर अनेक प्रकार का व्यायाम—शारीरिक परिश्रम किया, शारीरिक परि-
श्रम के योग्य दौड़ना—कूदना प्रारंभ किया । अपने अंग उपांगोंका अच्छी तरह से मर्दन

आदिनी पुरेपुरी तैयारीना समाचारने सांभलीने (णिसम्म) तेभज सारी
रीते विचार करीने (हट्ठ—तुट्ठ—जाव—हियए) पोताना मनमां ञहुंज हर्षित थया,
तेभज संतुष्ट थया. (जेणेव अट्ठणसाला तेणेव उवागच्छइ) पछी तेओ न्यां
व्यायामशाला हुती त्यां पडेअ्या. (उवागच्छित्ता अट्ठणसालं अणुपविसइ) पडेअं-
यतांज ते तेमां हाभल थया. (अणुपविसित्ता अणेग—वायाम—जोग्ग—वग्गण—वाम-
दण—मल्लजुद्ध—करणेहिं संते परिस्संते) हाभल थधने तेभणे त्यां अनेक प्रकारना
व्यायाम—शारीरिक कसरत करी. शारीरिक परिश्रमने योग्य दौडवा—कूदवाने
प्रारंभ कर्यो. पोतानां अंग—उपांगोने आम तेम वाज्यां मद्वोनी साथे कुस्ती
करी. त्यां राभवामां आवेल मुद्गरा इरव्यां. आ कियाओथी तेओ पडेलां

तेलमाइएहिं पीणणिजेहिं दप्पणिजेहिं मयणिजेहिं बिंहणिजेहिं
सर्व्विदियगायपल्हायणिजेहिं अब्भिगेहिं अब्भिगिए

परिश्रान्तः—अङ्गप्रत्यङ्गापेक्षया, 'सयपाग—सहस्सपागेहिं' शतपाकसहस्रपाकैः, शतकृत्वः पाको येषु ते शतपाकाः, शतसंख्यकौषधिमिश्रणेन वा पाको येषु ते, शतकार्षापणमूल्यकद्रव्यमिश्रणेन वा पाको येषु ते शतपाकास्तैलविशेषाः, एवं सहस्रपाका अपि, ततस्तयो द्वेन्द्रः, तैस्तैलविशेषैः, सुगन्धितैलादिकैः 'पीणणिजेहिं' प्रीणनीयैः=रसरुधिगादिधातुसुखप्रदैः, 'दप्पणिजेहिं' दर्पणीयैः=बलवर्द्धकैः, 'मयणिजेहिं' मदनीयैः=कामवर्द्धकैः, 'बिंहणिजेहिं' बृंहणीयैः=मांसोपचयकारिभिः, 'सर्व्विदिय-गाय-पल्हायणिजेहिं' सर्वेन्द्रिय-गात्र-प्रह्लादनीयैः, सर्वेषाम् इन्द्रियाणाम्, गात्राणां प्रह्लादनीयैः=प्रह्लादजनकैः,

किया। मल्लों के साथ कुस्तो लड़ी। वहां पर रखे हुए मुद्गरों को भी फिराया। इन क्रियाओं से वह पहिले साधारण श्रान्त हुए एवं बाद में अधिक परिश्रान्त हुए। इस तरह जब अच्छी रीति से वे खूब व्यायाम कर चुके तब (सयपागसहस्सपागेहिं) उन्होंने ने शत *पाकवाले एवं सहस्रपाकवाले तैलों से (पीणणिजेहिं दप्पणिजेहिं) जो तेल प्रीणनीय—रस—रुधिर आदिवर्धक एवं दर्पणीय—बलवर्द्धक होते हैं, (मयणिजेहिं) कामवर्द्धक होते हैं, (बिंह-णिजेहिं) बृंहणीय—मांसवर्द्धक होते हैं, (सर्व्विदिय—गाय—पल्हायणिजेहिं) समस्त इन्द्रिय एवं समस्त शरीर को आनन्द देनेवाले होते हैं ऐसे तैलों से तथा (अब्भिगेहिं)

* सौ बार पकाये गये, अथवा सौ प्रकार की औषधियों को मिश्रित कर पकाये गये, अथवा सौ रुपये मूल्यवाली औषधियों को गलाकर पकाये गये ऐसे तैलों से। इसी प्रकार सहस्रपाक में भी समझना चाहिये।

साधारण्ण थाअ्या, तेमज्ज त्थार पछी वधारे थाअ लाअ्ये। आवी रीते न्ण्यारे णहु कसरत्त करी लीधी त्थारे (सयपागसहस्सपागेहिं) तेमज्जे शतपाअवाणां तेमज्ज सहस्रपाअवाणां तेव्वीथी के जे तेव्वे। (पीणणिजेहिं दप्पणिजेहिं) प्रीणनीय-रस रुधिर आदि वर्धक तेमज्ज दर्पणीय—बलवर्धक होय छे, (मयणिजेहिं) कामवर्धक होय छे, (बिंहणिजेहिं) बृंहणीय—मांसवर्धक होय छे, (सर्व्वि-दिय—गाय—पल्हायणिजेहिं) समस्त इन्द्रियो तेमज्ज समस्त शरीरने आनंद

[१] सौवार पकावेलुं अथवा सौ प्रकारनी औषधीओथी मिश्रित करी पकावेलुं अथवा सौ रुपियानी किंमतनी औषधोओने गाणीने पकावेल अवां तेव्वे। आज रीते सहस्रपाअमां पण्ण समज्जपुं जेधअे।

સમાણે તેલચર્મ્મંસિ પડિપુણ્ણ-પાણિ-પાય-સુઝમાલ-કોમલ-તલેહિં
પુરિસેહિં છેણહિં દક્ષેહિં પટ્ટેહિં કુસલેહિં મેહાવીહિં નિઝણ-

‘અભિંગેહિં’ અભ્યંગૈઃ-સ્નેહનૈઃ ‘અભિંગિણ સમાણે’ અભ્યક્ષિતઃ-કૃતાભ્યંગ્નઃ સન્
‘તેલચર્મ્મંસિ’ તૈલચર્મ્મણા, અત્ર તૃતીયાર્થે સપ્તમી; તૈલાનુલિપ્તશરીરસ્ય મર્દનસાધનરૂપં
ચર્મ ‘તૈલચર્મ’ ઇત્યુચ્યતે; ‘સંવાહિણ સમાણે’ સંવાહિતઃ સન્-ઇત્યુત્તરેણ અન્વયઃ; કૈઃ
સંવાહિત ઇત્યાહ-‘પુરિસેહિં’ પુરુષૈઃ-અન્ગસંવાહનનિયુક્તમૃત્યૈઃ. તૈઃ કીદૃશૈરિત્યાહ-
‘પડિપુણ્ણ-પાણિપાય-સુઝમાલ-કોમલ-તલેહિં’ પ્રતિપૂર્ણ-પાણિપાદ-સુકુમાર-કોમલ-
તલૈઃ-પ્રતિપૂર્ણાનામ્=અવિકલાનાં, પાણિપાદાનાં સુકુમારકોમલાનિ=અતિમૃદુલાનિ તલાનિ
યેષાં તે તથા તૈઃ, ‘છેણહિં’ છેકૈઃ=મર્દનકલાનિપુણૈઃ, ‘દક્ષેહિં’ દક્ષૈઃ=અવિલમ્બિત-
કારિભિઃ, મર્દનકાર્યેઽપ્રેસૈઃ, ‘પટ્ટેહિં’ પ્રઠૈઃ, ‘કુસલેહિં’ કુશલૈઃ=મર્દનવિધિજ્ઞૈઃ,
‘મેહાવીહિં’ મેઘાવિભિઃ-પ્રતિમાશાલિભિઃ, ‘નિઝણ-સિપ્પો-વગણહિં’ નિપુણશિલ્પોપગતૈઃ,

ઊવટનોં સે (અભિંગિણ સમાણે) શરીર કીં સ્વૂં માલિશ કરવાઈ. *(તેલચર્મ્મંસિ) તૈલ-
ચર્મ્મસે માલિસ કરનેવાલે (પુરિસેહિં) પુરુષોં ને કિ જિનકે (પડિપુણ્ણ-પાણિ-પાય-સુઝ-
માલ-તલેહિં) હાથ ઓર પૈર કે તલવે અધિક સુકુમાર થે, (છેણહિં) મર્દન કરનેકી કલા
મેં જો અધિક નિપુણ થે, (દક્ષેહિં) ઇસીલિયે જો ઇસ કલા કે જાનનેવાલોં મેં સર્વપ્રથમ
ગિને જાતે થે, (પટ્ટેહિં) મર્દન કરને કી વિધિ ક્યા હૈ ઓર કિસ ઢંગ સે કિસ સમય કૈસા
મર્દન કરનાં ચાહિયે-ઇત્યાદિ વાતોં મેં જો વિશેષ પટુ થે, (મેહાવીહિં) નવીન ૨ રીતિ સે

* યહાં તૃતીયા કે અર્થ મેં સપ્તમી વિભક્તિ હુઈ હૈ, તૈલ સે ચિકને હુણ શરીર કો મર્દન
કરને કા સાધનરૂપ ચર્મ તૈલચર્મ કહલાતા હૈ.

દેવાવાળાં હોય છે, એવા તેલોથી, તથા (અભિંગેહિં) ઊવટનોથી (અભિંગિણ
સમાણે) શરીરની ખૂબ માલિશ કરાવી. †(તેલચર્મ્મંસિ) તૈલચર્મથી માલિશ
કરવાવાલા (પુરિસેહિં) પુરુષો કે જેના (પડિપુણ્ણ-પાણિ-પાય-સુઝમાલ-તલેહિં)
હાથ તથા પગનાં તળાં બહુ સુકુમાર કેમળ હતાં, (છેણહિં) મર્દન કરવાની
કળામાં જે બહુ નિપુણ હતા, (દક્ષેહિં) આથી જે આ કળાના બહુકારમાં
સર્વપ્રથમ ગણાતા હતા, (પટ્ટેહિં) મર્દન કરવાની વિધિ શું છે અને કેવી
રીતે કેવા સમયે કેમ મર્દન કરવું એઈએ-ઈત્યાદિ વાતોમાં જે વિશેષ
કુશળ હતા, (મેહાવીહિં) નવી નવી રીતે જે મર્દન કરવાની કલાના આવી-

[૨] અહીં તૃતીયાના અર્થમાં સપ્તમી વિભક્તિ થઈ છે. તેલથી ચીક્ષ્ણું
થયેલ શરીરને મર્દન કરવાનું સાધનરૂપ ચર્મ તૈલચર્મ કહેવાય છે.

સિપ્પો-વગર્હિં અઙ્ગિમગ્ન-પરિમદ્ગુ-વ્વલ્ગ-કરણગુણ-નિમ્મા- ર્હિં અદ્વિસુહાણ મંસસુહાણ તયાસુહાણ રોમસુહાણ ચતુર્વિહાણ

નિપુણાનિ=સૂક્ષ્માણિ યાનિ શિલ્પાનિ=અઙ્ગમર્દનાર્દાનિ તાન્યુપગતાનિ=અધિગતાનિ યૈસ્તે તથા
તૈઃ, અઙ્ગમર્દનક્રિયાજ્ઞાનસમ્પન્નૈરિત્યર્થઃ । ‘અઙ્ગિમગ્ન-પરિમદ્ગુ-વ્વલ્ગ-કરણ-ગુણ-નિમ્મા-
ર્હિં’અમ્યઙ્ગન-પરિમર્દનો-દ્વલન-કરણ-ગુણ-નિર્માતૃભિઃ-અમ્યઙ્ગનમ્=અમ્યઙ્ગ-તૈલમર્દનમ્, પરિમર્દ
નમ્=અઙ્ગસંવાહનમ્, ઉદ્વલનમ્=ઉદ્વર્તનમ્ તેષાં કરણે યે ગુણાઃ શરીરસ્વાસ્થ્યકાન્તિતુષ્ટિપુષ્ટિસ્ફૂ-
ર્ત્યાદિરૂપાઃ, તેષાં નિર્માતૃભિઃ=વિધાયકૈઃ, કયા સંવાહિતઃ ? इत्यत्राऽऽह-‘અદ્વિસુહાણ’
અસ્થિમુગ્ધયા=અસ્થિમુગ્ધકારિણ્યા, ‘મંસસુહાણ’ માંસમુગ્ધયા=માંસમુગ્ધકારિણ્યા, ‘તયાસુ-
હાણ’ ત્વક્મુગ્ધયા, ‘રોમસુહાણ’ રોમમુગ્ધયા, ‘ચતુર્વિહાણ’ ચતુર્વિધયા, ‘સંવાહણાણ’

જો મર્દન કરને કો કલા કે અવિષ્કારક થે. (નિઝણ-સિપ્પો-વગર્હિં) સૂક્ષ્મ સે સૂક્ષ્મ
મી અંગમર્દન આદિ ક્રિયાઓં કે જો પૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાતા થે. અથવા જિન્હોનેં ઇસ ક્રિયા કો
નિપુણ કલાચાર્ય સે સીગ્વા થા । (અઙ્ગિમગ્ન-પરિમદ્ગુ-વ્વલ્ગ-કરણ-ગુણ-નિમ્મા-
ર્હિં) અમ્યંગન-તૈલમર્દન, પરિમર્દન-અંગ કે સંવાહન એવં ઉદ્વલન-ઉવટન કરને સે જો
શરીરસ્વાસ્થ્ય, કાન્તિ, તુષ્ટિ-પુષ્ટિ તથા હર એક કાર્ય મેં સ્ફૂર્તિ આદિ ગુણ હોતે હૈં, ઊન
ગુણોં કો વે અપને અમ્યઙ્ગન આદિ કલા કે દ્રાગ પ્રત્યક્ષ કર દેતે થે । ઇનલોગોં નેં રાજા કા
કિસ પ્રકાર સે સંવાહન કિયા સો કહતે હૈં-(અદ્વિસુહાણ) હઢિયોં મેં મુગ્ધકારી (મંસસુહાણ)
માંસ મેં મુગ્ધકારી (તયાસુહાણ) ચમડી મેં મુગ્ધકારી (રોમસુહાણ) રોમ ૨ મેં મુગ્ધકારી,
ઇસ પ્રકાર અસ્થિમુગ્ધજનક, માંસમુગ્ધજનક, ચર્મમુગ્ધજનક એવં રોમમુગ્ધજનક રૂપ સે
(ચતુર્વિહાણ) ચાર પ્રકાર કો (સંવાહણાણ) માલિય ક્રિયા સે (સંવાહિણ સમાણે)

ખંડારક હતા, (નિઝણ-સિપ્પો-વગર્હિં) સૂક્ષ્મમાં સૂક્ષ્મ પણ અંગમર્દન આદિ
ક્રિયાઓના જે સંપૂર્ણ જ્ઞાતા હતા, અથવા જેઓ આ ક્રિયાઓ નિપુણ
કલાચાર્ય પાસેથી શીખેલા હતા, (અઙ્ગિમગ્ન-પરિમદ્ગુ-વ્વલ્ગ-કરણ-ગુણ-
નિમ્માર્હિં) અમ્યંગન-તૈલમર્દન, પરિમર્દન-અંગનું સંવાહન તેમજ ઉદ્વલન-ઉવ-
ટન કરવાથી જે શરીરસ્વાસ્થ્ય, કાન્તિ, તુષ્ટિ-પુષ્ટિ તથા હરેક કાર્યમાં સ્ફૂર્તિ
આદિ ગુણ હોય છે તે ગુણોને તેઓ પોતાના અમ્યંગન આદિ કલાઓ
દ્વારા પ્રત્યક્ષ કરી દેતા હતા. તે લોકોએ રાજાનું કેવા પ્રકારે સંવાહન કર્યું
તે કહે છે-(અદ્વિસુહાણ) હાડકાંમાં સુખકારી (મંસસુહાણ) માંસમાં સુખકારી
(તયાસુહાણ) ચામડીમાં સુખકારી (રોમસુહાણ) રોમ રોમમાં સુખકારી, એ
રીતે અસ્થિસુખજનક, માંસસુખજનક, ચર્મસુખજનક તેમજ રોમસુખ-

संवाहणाए संवाहिए समाणे अवगय-खेय-परिस्समे अट्टण-
सालाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ, अणुप-
विसित्ता समुत्त-जाला-उला-भिरामे विचित्तमणि-रयण-

संवाहनया=मर्दनेन 'संवाहिए समाणे' संवाहितो=मर्दितः सन्, 'अवगय-खेय-परि-
स्समे' अपगत-खेद-परिश्रमः=समपनीतखेदपरिश्रमः, 'अट्टणसालाओ' अट्टणशा-
लातः=व्यायामशालातः 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति, 'पडिणिक्खमित्ता' प्रतिनि-
ष्क्रम्य, 'जेणेव मज्जणघरं तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव मज्जनगृहं तत्रैवोपागच्छति, 'उवा-
गच्छित्ता' उपागत्य, 'मज्जणघरं अणुपविसइ' मज्जनगृहमनुप्रविशति, 'अणुपविसित्ता'
अनुप्रविश्य 'समुत्त-जाला-उला-भिरामे' समुत्त-जाला-कुला-भिरामे-समुत्त-
जालेन=मुक्तासहितेन जालेन=गवाक्षेण आकुलो=व्याप्तः, अतएव अभिरामः=सुन्दरस्तस्मिन्,
'वित्त-मणि-रयण-कुट्टिम-तले' विचित्र-मणि-रत्न-कुट्टिम-तले-विचित्रमणिर-

राजा की खूब मालिश की । जब राजा की अच्छी तरह से मालिश हो चुकी तब वे (अव-
गय-खेय-परिस्समे) परिश्रम एवं खेद से रहित हो (अट्टणसालाओ) उस व्यायाम-
शाला से (पडिणिक्खमइ) बाहर निकले, (पडिणिक्खमित्ता) निकल कर (जेणेव
मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ) जहां स्नान घर था वहाँ पहुँचे । (उवागच्छित्ता मज्ज-
णघरं अणुपविसइ) पहुँच कर स्नानघर में प्रविष्ट हुए । (अणुपविसित्ता) वहाँ प्रविष्ट
होकर (समुत्त-जाला-उला-भिरामे) मोतियों की लड़ियों वाले गोखलों से युक्त होने
के कारण अति सुन्दर (वित्त-मणिरयण-कुट्टिम-तले) तथा विविध मणियों से जटित

७८३३पी (चउव्विहाए) थार प्रकारनी (संवाहणाए) मालिशथी (संवाहिए समाणे)
राजानी भूअ मालिश करी. न्यारे राजानी सारी रीते मालिश थध रडी
त्यारे तेओ (अवगय-खेय-परिस्समे) परिश्रम तेमअ भेदथी मुक्ता थध (अट्टण-
सालाओ) ते व्यायामशालाभांथी (पडिणिक्खमइ) अडार नीकथ्या. (पडिणिक्ख-
मित्ता) नीकणीने (जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ) न्यां स्नानघर डुतुं त्यां
पडोंथ्या. (उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ) पडोंथीने स्नानघरमां दाअल
थया. (अणुपविसित्ता) तेमां दाअल थधने (समुत्त-जाला-उला-भिरामे) मोतिओनी
लटिओवाणा गोअलाओथी युक्ता डोवाना कारणे अतिसुंदर, (वित्त-

कुट्टिमयले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणा-मणि-रयणभत्ति-
चित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहणिसण्णे सुद्धोदएहिं गंधोदएहिं पुप्फो-
दएहिं सुहोदएहिं पुणो पुणो कल्लाणग-पवर-मज्जण-विहीए
मज्जिए, तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणग-पवर-मज्जणा-

तैः खचितं कुट्टिमतलं=भूभागो यस्य स तथा तस्मिन्, 'रमणिज्जे' रमणीये=मनोहरे,
'ण्हाणमंडवंसि' स्नानमण्डपे, 'णाणा-मणि-रयण-भत्ति-चित्तंसि' नाना-मणि-रत्न-
भक्ति-चित्रे=विविध-मणि-रत्न-रचनाविचित्रे, 'ण्हाणपीढंसि' स्नानपीठ 'सुहणिसण्णे'
सुखनिषण्णः=सुखाऽऽसीनः, 'सुद्धोदएहिं' शुद्धोदकैः=निरवद्यजलैः 'गंधोदएहिं' गन्धो-
दकैः=श्रीखण्डादिमिश्रितैः जलैः, 'पुप्फोदएहिं' पुष्पोदकैः=पुष्पमिश्रितजलैः, 'सुहोदएहिं'
सुखोदकैः=नातिशीतोष्णैः 'पुणो पुणो' पुनः पुनः 'कल्लाणग-पवर-मज्जण-विहीए' कल्याणक-
प्रवर-मज्जन-विधिना=कल्याणकारक-श्रेष्ठस्नान-विधानेन, 'मज्जिए' मज्जितः-स्नपितः,
'तत्थ' तत्र=स्नानावसरे, 'कोउयसएहिं' कौतुकशतैः, कौतुकानां=दृष्टिदोषनिवारणार्थं

अंगन वाले (रमणिज्जे) मनोहर (ण्हाणमंडवंसि) स्नानमंडप में रक्खे हुए (णाणा-मणि-
रयण-भत्ति-चित्तंसि) अनेक मणि और रत्नों की रचना से युक्त (ण्हाणपीढंसि) ऐसे
स्नान करने के पीठ (बाजोट) पर (सुहणिसण्णे) सुख से बैठ, और वहां बैठ कर (सुद्धो-
दएहिं) शुद्ध-निर्मल जलसे, (गंधोदएहिं) गंधोदक-चन्दनमिश्रित जल से (पुप्फोदएहिं)
पुष्पमिश्रितजल से, (सुहोदएहिं) किंचिदुष्ण जल से (पुणो पुणो) बारं बार (कल्लाणग-
पवर-मज्जण-विहीए मज्जिए) उन्होंने कल्याणकारक श्रेष्ठ स्नानविधि से स्नान किया।
(तत्थ कोउयसएहिं बहुविहेहिं) उस अवसर में विविध प्रकार के अनेक कौतुकों से-दृष्टि-

मणि-रयण-कुट्टिम-तले) तथा विविध भण्डिओथी जडित आंगणुवाणा, (रमणिज्जे)
मनोहर (ण्हाणमंडवंसि) स्नानमंडपमां राखेला (णाणा-मणि-रयण-भत्ति-
चित्तंसि) अनेकभण्डि तथा रत्नोनी अनावटथी युक्त (ण्हाणपीढंसि) ओवी
स्नान करवानी पीठ (आजेठ) उपर (सुहणिसण्णे) सुजेथी जेठा. अने
जेसीने (सुद्धोदएहिं) शुद्ध-निर्मल जल वडे, (गंधोदएहिं) गंधोदक-चंदन-
मिश्रित जलवडे, (पुप्फोदएहिं) पुष्पमिश्रित जल वडे, (सुहोदएहिं) जरा
उष्ण जलवडे, (पुणो पुणो) बारं बार (कल्लाणग-पवर-मज्जण-विहीए मज्जिए)
तेभण्डे कल्याणकारक श्रेष्ठ स्नानविधिथी स्नान कथुं. (तत्थ कोउयसएहिं

वसाणे पम्हल-सुकुमाल-गंध-कासाइय-लूहियंगे सरस-सुरहि-
गोसीस-चंदणा-णुलित्त-गत्ते अहय-सुमहग्घ-दूस-रयण-सुसंवुए

रक्षाबन्धनादीनां शतैः=बहुविधैर्युक्तः 'कल्लाणग-पवर-मज्जणा-वसाणे' कल्याणक-
प्रवरमज्जनावसाने, स्नानानन्तरमित्यर्थः; 'पम्हल-सुकुमाल-गंध-कासाइय-लूहियंगे'
पक्ष्मल-सुकुमार-गन्धकाषायिका-रूक्षिताऽङ्गः, पक्ष्मल=उत्थितसूक्ष्मतन्तुसमूहयुक्ता, सा च
सुकुमारा=सुकोमला गन्धवती च एतादृशी या काषायिका=कषायरक्तशाटिका-अङ्गप्रोज्झ-
निका तथा रूक्षिताङ्गः-निर्जलीकृतशरीरः, 'सरस-सुरहि-गोसीस-चंदणा-णुलित्त-
गत्ते' सरस-सुरभि-गोशीर्ष-चन्दना-नुलित्त-गात्रः, तत्र-गोशीर्षचन्दनं=गोशीर्षनाम्ना प्रसिद्धं
चन्दनम् । 'अहय-सुमहग्घ-दूस-रयण-सुसंवुए' अहत-सुमहार्घ्य-दूष्य-रत्न-सुसं-
वृतः-अहतम्-अखण्डितं=कीटमूषिकादिभिरकर्तितं नूतनमिति भावः, सुमहार्घ्यं=बहुमूल्यं यद्
दूष्यरत्नं=प्रधानवस्त्रं तेन सुसंवृतः=सुष्ठु आच्छादितः, परिधृतनूतनबहुमूल्यवस्त्र इत्यर्थः ।

दोष निवारणार्थं रक्षाबंधनादिकों के अनेक प्रकारों से युक्त उन राजा ने (कल्लाणग-पवर-
मज्जणा-वसाने) जब उस कल्याणकारक श्रेष्ठ स्नान की समाप्ति हो चुकी तब (पम्हल-
सुकुमाल-गंध-कासाइय-लूहियंगे) पक्ष्मल-उठे हुए कोमल तंतु वाले सुकुमार एवं
सुगंधित कषाय रंग की तोलिया से अपने समस्त शरीर को पोछा । पश्चात् (सरस-सुरहि-
गोसीसचंदणा-णुलित्त-गत्ते) समस्त शरीर पर सरस सुगंधित गोशीर्षचंदन का लेप
किया । (अहय-सुमहग्घ-दूसरयण-सुसंवुए) जब लेप अच्छी तरह से शुष्क हो चुका-
तब अहत-कीटमूषक आदि से नहीं काटे गये, नवीन-ऐसे बहुमूल्य प्रधान वस्त्रों को उन्होंने
शरीर पर धारण किया । (सुइ-माला-वण्णग-विलेवणे) पश्चात् शुद्धपुष्पों की माला

बहुविधेहिं) ते अवसरे विविध प्रकारना अनेक डौतुके। वडे-दृष्टिदोष-निवा-
रणार्थं रक्षाबंधनादि अनेक प्रकारयुक्त ते राजान्ने (कल्लाणग-पवर-मज्जणा-
वसाने) न्यारे ते उद्याणुकारक श्रेष्ठ स्नाननी समाप्ति थर्ध सुधी त्यारे
(पम्हल-सुकुमाल-गंधकासाइय-लूहियंगे) पक्ष्मल-उपसी आवेला सुंवाणां सुतरवाणा
डेभण तेभण सुगंधित कषाय रंगना टुवाल वडे पोतानां समस्त शरीरने
धुर्ध नाप्थुं। पछी (सरस-सुरहि-गोसीस-चंदणा-णुलित्त-गत्ते) समस्त शरीर पर
सरस तेभण सुगंधित गोशीर्ष चंदनने लेप कथे। (अहय-सुमहग्घ-दूसरयण-
सुसंवुए) न्यारे लेप सारी रीते सुकाध गये। त्यारे अहत-कीटमूषक (कीडा
डे उंदर) आदिथी कपायेलां नडि अेवां, नवीन-अेवां अडुकिंमती वस्त्रोने
तेभण शरीर उपर धारण कथे। (सुइ-माला-वण्णग-विलेवणे) पछी शुद्ध पुष्पोनी

सुइ-माला-वण्णग-विलेवणे आविद्ध-मणि-सुवण्णे कप्पिय-
हार-द्धहार-तिसरय-पालंब-पलंबमाण-कडिसुत्त-सुकय-सोभे
पिणद्ध-गेविज्ज-अंगुलिज्जग-ललियंगय-ललिय-कयाभरणे वर-

‘सुइ-माला-वण्णग-विलेवणे’ शुचि-माला-वर्णक-विलेपनः-शुचि=शुद्धं यत् माला-
वर्णकविलेपनं-तत्र-माला=पुष्पमाला, वर्णकः=अङ्गरागविशेषः तस्य विलेपनं, एतद्वयं यस्य
स तथा, ‘आविद्ध-मणि-सुवण्णे’ आविद्ध-मणि-सुवर्णः=परिहितमणिकनक-भूषणः
‘कप्पिय-हार-द्धहार-तिसरय-पालंब-पलंबमाण-कडिसुत्त-सुकय-सोभे’ कल्पि-
हारा-द्धहार-तिसरक-प्रालम्ब-प्रलम्बमान-कटिसूत्र-सुकृत - शोभः, कल्पितः=परिवृतः,
हारः=अष्टादशसरिकः, अर्धहारः=नवसरिकः, तिसरिकश्च-‘तिलडीहार’ इति प्रसिद्धः येन
स तथा, प्रालम्बः=भ्रुम्बनकं, प्रलम्बमानो यस्मिन् कटिसूत्रे तत् तेन कटिसूत्रेण=
‘कन्दोरा’ इति भाषाप्रसिद्धेन सुकृता=सुष्ठु रचिता शोभा येन स तथा, पदद्वयस्य
कर्मधारयः, हारादिधारणेन परमशोभासम्पन्न इत्यर्थः । ‘पिणद्ध-गेविज्जग-
अंगुलिज्जग-ललियंगय-ललिय-कयाभरणे’ पिणद्ध-ग्रैवेयका-ङ्गुलीयक-ललिताऽ-
ङ्गक-ललित-कृताऽऽभरणः, पिण्डानि ग्रैवेयकाणि=ग्रीवाभूषणानि, अङ्गुलीयकानि च, येन स
तथा, ललिताङ्गके=सुन्दरशरीरे ललितं यथा स्यात् तथा कृतं=विन्यस्तमाभरणं येन स तथा,

पहनी, एवं शुद्ध सुगंधित द्रव्य का विलेपन किया । (आविद्ध-मणि-सुवण्णे) पुनः सुवर्ण
के आभूषण कि जिनमें मणि जड़े हुए थे पहिने । (कप्पिय-हार-द्धहार-तिसरय-पालंब-
पलंबमाण-कडिसुत्त-सुकय-सोभे) अठारह लरका हार पहिरा, नव लर का हार पहिरा,
तीन लर का हार पहिरा और लम्बा लटकता हुआ कटिसूत्र (कन्दोरा) पहिरा । (पिणद्ध-
गेविज्जग-अंगुलिज्जग-ललियंगय-ललिय-कयाभरणे) गले में और भी सुन्दर आभू-
षण धारण किये । हाथों की अंगुलियों में मुद्रिकाएँ पहिरीं तथा शरीर पर उस समय के

भाजा पहिरी तेमज् शुद्ध सुगंधित द्रव्यनुं विलेपन कथुं. (आविद्ध-मणि-सुवण्णे)
वणी सुवर्णनां धरेणुं डे जेभां मणि जडेलां हुतां ते पहियां. (कप्पिय-हार-
द्धहार-तिसरय-पालंब-पलंबमाण-कडिसुत्त-सुकय-सोभे) अठार सरनो डार पहियो,
नव सरनो डार पहियो, त्रय सरनो डार पहियो तथा लांभो लटकतो कटि-
सूत्र (कन्दोरो) कभरभां धारणु कथो. (पिणद्ध-गेविज्जग-अंगुलिज्जग-ललियंगय-
ललिय-कयाभरणे) गणामां अहु ज सुंदर आभूषण धारणु कथो. हाथानां
आंगणामां वींटीओ पहिरी तथा शरीर उपर ते समयने उचित बीजां पणु

कडग-तुडिय-थंभिय-भुए अहिय-रूव-सस्मिरीए मुदिया-
पिंगलंगुलीए कुंडल-उज्जोविया-णणे मउड-दित्त-सिरए हारोत्थय-
सुकय-रइय-वच्छे पालंब-पलंबमाण-पड-सुकय-उत्तरिजे णाणा-

ततस्तयोः कर्मधारयः । यद्वा-पिनद्धानि यानि ग्रैवेयकाणि अङ्गुलीयकानि च तैर्ललिताङ्गकं,
तत्र ललितं कृतमाभरणम्=अन्यद् भूषणजातं येन स तथा । 'वरकडग-तुडिय-थंभिय-भुए'
वरकटक-त्रुटिक-स्तम्भित - भुजः, वरकटकत्रुटिकैः=श्रेष्ठवलयबाहुरक्षकाख्यैर्भूषणैर्भूषित-
बाहुः, 'अहिय-रूव-सस्मिरीए' अधिकरूपसश्रीकः-अधिकसौन्दर्येण शोभासम्पन्नः,
'मुदिया-पिंगलं-गुलीए' मुद्रिका-पिङ्गला-ङ्गुलीकः-मुद्रिकाभिः=अङ्गुलीयकैः पिङ्गला
अङ्गुल्यो यस्य स तथा, 'कुंडलउज्जोवियाणणे' कुण्डलोद्द्योतिताऽऽननः-कुण्डलदीप्त्या
विद्योतितमुखः, 'मउड-दित्त-सिरए' मुकुट-दीप्त-शिरस्कः, 'हारो-त्थय-सुकय-
रइय-वच्छे' हारा-वस्तृत-सुकृत-रतिद-वक्षाः-हारेण अवस्तृतम्=आच्छादितं सुकृतं=
शोभनीकृतम् अतएव रतिदं=दृष्टिसुखदं वक्षो यस्य स तथा, 'पालंब-पलंबमाण-पड-
सुकय-उत्तरिजे' प्रालम्ब-प्रलम्बमान-पट-सुकृतो-त्तरीयः-प्रालम्बेन=दीर्घेण

उचित और भी आभूषण धारण किये । (वर-कडग-तुडिय-थंभिय-भुए) दोनों हाथों
में सुन्दर कड़े पहिर एवं बाहुओं पर भुजबंध बांधे, (अहियरूवसस्मिरीए) इस प्रकार
उनके शरीर की शोभा और भी अधिक द्विगुणित हो गई । (मुदिया-पिंगलं-गुलीए) उनने
जो मुद्रिकाएँ अंगुलियों में पहिर रखी थीं उनसे उनकी अंगुलियां सब पीली झायीं से
चमकने लगीं । (कुंडलउज्जोवियाणणे) कुण्डलों से मुख चमकने लगा । (मउड-दित्त-
सिरए) मुकुट से मस्तक शोभित होने लगा । (हारोत्थय-सुकय-रइय-वच्छे) हार से
अच्छादित उनका वक्षस्थल बड़ा ही मनोहर मालूम होने लगा, अतः देखनेवालों को
आनन्द होता था । (पालंब-पलंबमाण-पड-सुकय-उत्तरिजे) अधिक लंबे वस्त्र का इनने

आभूषण धारण कियां. (वर-कडग-तुडिय-थंभिय-भुए) अपने हाथों में सुंदर कड़ों
पड़ेयां, तेमज आहुओ उपर भुजबंध बांध्या. (अहिय-रूव-सस्मिरीए) आ
प्रकारे तेना शरीरनी शोभा अहु वधारे थछ गछ. (मुदिया-पिंगलं-गुलीए)
तेमणे जे पींटीओ आंगणोंमां पड़ेरी छती तेनाथी तेमनी अधी आंगणोंओ
पीणी आंछथी चमकवा लागी. (कुंडल-उज्जोविया-णणे) कुंडणोंथी भुज चम-
कवा लाग्युं. (मउड-दित्त-सिरए) मुकुटथी मस्तक शोभवा लाग्युं. (हारोत्थय-सुकय-
रइय-वच्छे) हारथी ढंकायेव तेनुं वक्षस्थल (छाती) अहुज मनोहर देखातुं

મણિ-કણગ-રયણ-વિમલ-મહરિહ-ણિઉળો-વિય-મિસિમિસંત-વિર-
ઇય-સુસિલિટ્ટ-વિસિટ્ટ-લટ્ટ-સંઠિય-પસત્થ-આવિદ્ધ-વીર-વલણ,

પ્રલમ્બમાનેન પટન=વલ્લેગ મુકુતં=સુવિન્યસ્તમ્ ઉત્તરીયમ્=ઉત્તરાસન્નવસ્ત્રં યેન સ તથા,
'જાણા-મણિ-કણગ-રયણ-વિમલ-મહરિહ-ણિઉળો-વિય-મિસિમિસંત-વિરઇય-
સુસિલિટ્ટ-વિસિટ્ટ-લટ્ટ-સંઠિય-પસત્થ-આવિદ્ધ-વીર-વલણ' નાના-મણિ-કનક-
રત્ન-વિમલ-મહાર્હ-નિપુણ-પરિકર્મિત-દેદીપ્યમાન-વિરચિત-સુશ્લિષ્ટ-વિશિષ્ટ-લષ્ટ - નં-
સ્થિત-પ્રશસ્તા - ડડવિદ્ધ-વીર - વલયઃ - નાનાવિધાનિ માણિકનકરત્નાનિ = ચન્દ્રકાન્તા-
દિમણિ-મુવર્ણ-કર્કેતનાદિ-રત્નાનિ યસ્મિન્ સઃ, અત એવ વિમલઃ=નિર્મલઃ મહાર્હઃ=
મહતાં યોગ્યશ્ચ, તથા-નિપુણપરકર્મિતદેદીપ્યમાનઃ-નિપુણેન=શિલ્પકલાદક્ષેગ શિલ્પિના
'ઉવિય' પરિકર્મિતઃ=સંસ્કારમાપાદિતઃ, તત એવ 'મિસિમિસંત' દેદીપ્યમાનઃ=
દીપ્તિસમ્પન્નશ્ચ, પુનઃ-વિરચિત - સુશ્લિષ્ટ-વિશિષ્ટ-સંસ્થિતઃ-વિરચિતં=નિર્મિતં-સુશ્લિષ્ટં,
શોભનસન્ધિકં વિશિષ્ટમ્=ઉત્કૃષ્ટમ્ લષ્ટં=મનોહરં સંસ્થિતં=સંસ્થાનમ્-આકારો યસ્ય સ તથા,
અત એવ-પ્રશસ્તઃ=પ્રશંસનીયઃ, એતાદૃશઃ આવિદ્ધઃ=પરિધૃતઃ વીરવલયો=વિજયવલયો યેન

ઉત્તરાસન્ન ક્રિયા થા । (જાણા-મણિ-કણગ-રયણ-વિમલ-મહરિહ-ણિઉળો-વિય-
મિસિમિસંત-વિરઇય-સુસિલિટ્ટ-વિસિટ્ટ-લટ્ટ-સંઠિય-પસત્થ-આવિદ્ધ-વીરવલયે)દેદી-
પ્યમાન તથા નિપુણ કારીગરો દ્વારા સુસંસ્કારિત એવં બહે ભાગ્યશાલિયોં કે ધારણ
કરને યોગ્ય એમે નિર્મલ અનેક મણિયોં એવં રત્નોં સે યુક્ત સુવર્ણ કે બને હુએ વીરવલય કા
કિ જો મુસંધિ મે સંપન્ન, ઉત્કૃષ્ટ, મનોહર ઓર સુંદર આકાર સે વિશિષ્ટ તથા પ્રશંસનીય થા
ઇનને ધારણ કર રક્ષા થા । જિસ વલય (કહે) કો ધારણ કર શત્રુ પર વિજય પ્રાપ્ત કી
જાતી હે ઉસ વલય કા નામ વીરવલય હૈ. અથવા-જો ઇસ વલય કો ધારણ કરતા હૈ વહ

હતું, આથી જોનારને આનંદ થતો હતો. (પાલંબ-પલંબમાણ-પડ-સુકય-ઉત્તરિજ્જે)
ધણા લાંબા વસ્ત્રનું તેમણે ઉત્તરાસન્ન (પહેડી) કર્યું હતું. (જાણા-મણિ-કણગ-
રયણ વિમલ-મહરિહ-ણિઉળો-વિય મિસિમિસંત-વિરઇય-સુસિલિટ્ટ-વિસિટ્ટ-લટ્ટ-સંઠિય-પસ-
ત્થ-આવિદ્ધ-વીરવલયે) દેદીપ્યમાન અને નિપુણ કારીગરો દ્વારા સુસંસ્કારિત,
તેમજ ભાગ્યશાળીઓને ધારણ કરવા યોગ્ય એવાં નિર્મળ, અનેક મણિઓ
તથા રત્નોવડે યુક્ત સોનાનું બનાવેલું વીરવલય જે સુસંધિથી સંપન્ન,
ઉત્કૃષ્ટ, મનોહર અને સુંદર આકારથી વિશિષ્ટ તથા પ્રશંસનીય હતું તે તેણે
ધારણ કર્યું હતું. જે વલય (કહાં)ને ધારણ કરવાથી શત્રુ ઉપર વિજય
મેળવાય છે તે વલયનું નામ વીરવલય છે. અથવા જે આ વલયને ધારણ

**किं बहुणा ! कप्परुक्खए चेव अलंकिय-विभूसिए णरवई सको-
रंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं उभओ चउ-चामर-वाल-वीइ-**

स तथा, यं वलयं धृत्वा विजयते तर्ह्यश्वलयधारक इत्यर्थः । यद्वा—यदि कश्चिदस्ति वीर-
स्तदाऽसौ मां विजित्य मम हस्ताद्वहिष्करोत्वेतं वलयमिति स्पर्धयन् यं कटकं हस्ते परिधत्ते
स वीरवलय इत्युच्यते । ‘किं बहुणा’ किम्बहुना—किमधिकेन वर्णनेन ? ‘कप्परुक्खए
चेव अलंकियविभूसिए णरवई’ कल्पवृक्ष इवाऽलङ्कृतविभूषितो नरपतिः—अलङ्कृतो
मणिरत्नाऽऽभूषणैः, विभूषितश्च महार्हपरिधानीयादिविचित्रवसनैः नरपतिः कूणिको राजा
साक्षात्कल्पवृक्ष इव शोभते इति भावः । स नरपतिः ‘सकोरंट-मल्ल-दामेणं’ सकोरंट-
माल्य-दाम्ना-कोरण्टस्य माल्यानि=कुसुमानि तेषां दामानि=मालास्तैः सहितेन ‘छत्तेणं
धरिज्जमाणेणं’ छत्रेण ध्रियमाणेन शोभमानः, ‘उभओ चउ-चामर-वाल-वीइयंगे’
उभयतः चतुश्चामरवालवीजिताङ्गः, ‘मंगल-जयसद्द-कया-लोए’ मङ्गल-जयशब्द-कृताऽऽलोकः-

इस बात की घोषणा करता है कि जो भी कोई वीर हो वह मेरे हाथ से इस वलय को
खेचें—छुडावे, इस प्रकार की स्पर्धा से वीरों द्वारा जो वलय धारण किया जाता है वह भी
वीरवलय कहा गया है । (किं बहुणा) अधिक क्या कहा जाय ? (अलंकिय-विभूसिए)
मणिरत्नादिक के आभूषणों से अलङ्कृत एवं बहुमूल्य अनेक प्रकार के सुंदर सुंदर वस्त्रों से
विभूषित (णरवई) वे राजा (कप्परुक्खए चेव) कल्पवृक्षकी तरह शोभित होने लगे । उनके ऊपर
(सकोरंट-मल्ल-दामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं) कोरंट के पुष्पों की मालाओं से युक्त छत्र धरा
हुआ था, एवं उनके ऊपर (उभओ चउ-चामर-वाल-वीइयंगे) दोनों ओर से चार चामर ढोरें
जा रहे थे, (मंगल-जयसद्द-कया-लोए) तथा उनके देखते ही मनुष्यों ने ‘मंगल हो, जय

करे छे ते ओ वातनी घोषणा करे छे के ने कोरि पणु वीर डोय ते भारी
पासेथी डायभांथी आ वलयने जेथीने छोडावी जय आ प्रजारनी स्पर्धाथी
वीरो द्वारा ने वलय धारणु करवाभां आवे छे तेने वीरवलय
कडेवाभां आवे छे. (किं बहुणा) वधारे शुं कडेपुं डोय ! (अलंकिय-
विभूसिए) मणिरत्नोयुक्त आभूषणोथी अलङ्कृत तेमज्ज अहुमूल्य (धणुं
किंमती) अनेक प्रकारनां सुंदर वस्त्रोथी विभूषित (णरवई) ते राजा (कप्प-
रुक्खए चेव) कल्पवृक्षनी पेठे शोभवा लाया. तेमना उपर (सकोरंट-मल्ल-दामेणं
छत्तेणं धरिज्जमाणेणं) कोरंटना पुष्पोनी माला वडे युक्त छत्र धारणु करायेल
हुतुं. तेमज्ज तेमना उपर (उभओ चउ-चामर-वालवीइयंगे) अन्ने आणुअे
भणी चार चामर ढोणाछ रह्यां हुतां. (मंगल-जयसद्द-कया-लोए) तथा तेमने

यंगे मंगल-जयसह-कयालोए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ,
पडिणिक्खमित्ता अणेग-गणनायग-दंडनायग-राई-सर-तलवर-
माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूय-संधिवाल
सद्धिं संपडिवुडे धवल-महामेह-णिग्गए इव गहगण-दिप्पंत-

मङ्गलरूपो जयशब्दः कृतो जनेन आलोके=दर्शने यस्य स तथा, 'मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ'
मज्जनगृहात्प्रतिनिष्क्रामति=बहिर्निर्गच्छति, 'पडिणिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य 'अणेग-
गणनायग-दंडनायग-राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणा-
वइ-सत्थवाह-दूय-संधिवाल सद्धिं संपडिवुडे' अनेक-गणनायक-दण्डनायक-
राजेश्वर-तलवर-माडम्बिक-कौटुम्बिकेभ्य-श्रेष्ठि-सेनापति-सार्थवाह-दूत-सन्धिपालैः
सार्द्धं सम्परिवृतः-अत्रत्यानि पदानि प्राग् व्याख्यातानि, मज्जनगृहान्निष्क्रान्तो नरपतिः क इव
शोभते ? इत्याह-'धवल' इत्यादि। 'धवल-महामेह-णिग्गए इव' धवल-महामेघनिर्गत इव-
धवलमहामेघतो निर्गतः=मेघावरणविनिर्मुक्त इव 'गहगण-दिप्पंत-रिक्ख-तारागणाण मज्झे

हो' इस प्रकार का शब्द करने लगे। इस प्रकार वे राजा (मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ)
स्नान घर से निकले। (पडिणिक्खमित्ता) निकलते ही (अणेग-गणनायग-दंडना-
यग-राई-सर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूय-संधिवाल
सद्धिं संपडिवुडे) अनेक गणनायकों, अनेक दंडनायकों, राजा, ईश्वर, तलवर, माडंबिक,
कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह, दूत एवं संधिपालों से घिरे हुए वे राजा
(धवल-महामेह-णिग्गए इव) धवल महामेघ के आवरण से रहित (गहगण-दिप्पंत-
रिक्ख-तारागणाण मज्झे ससिब्ब) ग्रहगणों के बीच में वर्तमान तथा दीप्यमान ऐसे

जेतांञ् मनुष्ये। 'मंगल डो जय डो' ये प्रकारना शब्द जेलावा लाज्या।
आवी रीते ते राजा (मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ) स्नान घरभांथी नीकज्या।
(पडिणिक्खमित्ता) नीकजतां ञ् (अणेग-गणनायग-दंडनायग-राई-सर-तलवर-माडं-
बिय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूय-संधिवाल सद्धिं संपडिवुडे) अनेक
गणनायके, अनेक दंडनायके, राजा, ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य,
श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह, दूत तेमञ् संधिपालकेथी घेरायेला (गरवई)
ते राजा (धवल-महामेह-णिग्गए इव) धवल महामेघना आवरणुथी मुक्त (गह-
गण-दिप्पंत-रिक्ख-तारागणाण मज्झे ससिब्ब) ग्रहगणोना वय्थमां वर्तमान तथा

रिख-तारागणाण मज्जे ससिन्व पियदंसणे णरवई जेणेव बाहि-
रिया उवट्ठाणसाला जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवाग-
च्छइ, उवागच्छित्ता अंजण-गिरिकूड-सण्णिभं गयवइं णरवई
दुरूढे ॥ सू० ४८ ॥

ससिन्व' ग्रहगण-दीप्यमान-ऋक्ष-तारागणानां मध्ये शशीव=दीप्यमानानाम् ऋक्षाणां=नक्ष-
त्राणां तारागणानां च मध्ये चन्द्र इव, 'पियदंसणे' प्रियदर्शनः 'णरवई' नरपतिः 'जेणेव
बाहिरिया उवट्ठाणसाला' यत्रैव बाह्योपस्थानशाला, 'जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे'
यत्रैवाऽभिषेक्यं=पट्टं हस्तिरत्नम्, 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति, 'उवागच्छित्ता'
उपागत्य 'अंजणगिरि-कूड-सण्णिभं गयवइं णरवई दुरूढे' अञ्जनगिरिकूटसन्निभं
गजपतिं नरपतिर्दुरूढः = अञ्जनपर्वतशिखराऽऽकारं गजेन्द्रं नरेन्द्रो दुरूढः=आरूढवान्
॥ सू० ४८ ॥

नक्षत्र एवं तारागणों के मध्य में सुशोभित चंद्रमा के समान (पियदंसणे) देखने में बहुत
ही सुन्दर मालूम होते थे । मतलब इसका यह है कि यहाँ पर राजा को चंद्रमा की और
उनके स्नान घर को शुभ्र मेघों की, तथा गणनायक आदि को नक्षत्र और ताराओं की
उपमा दी गई है । इस प्रकार से वे राजा (जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव
आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवागच्छइ) जहां पर बाहिर की ओर उपस्थानशाला थी
और जहां वह आभिषेक्य हस्तिरत्न खड़ा हुआ था वहां पहुँचे । (उवागच्छित्ता अंजण-
गिरि-कूड-संणिभं गयवइं णरवई दुरूढे) पहुँचते ही वे अंजनगिरि के शिखर के
समान उस हाथी पर आरूढ हो गये ॥ सू० ४८ ॥

दीप्यमान એવા નક્ષત્ર તેમજ તારાગણોના મધ્યમાં સુશોભિત ચંદ્રમા જેવા
(પિયદંસણે) જેવામાં બહુજ સુંદર લાગતા હતા. મતલબ એ છે કે અહીં
રાજાને ચંદ્રમાની અને તેમના સ્નાનઘરને શુભ્રમેઘોની તથા ગણનાયક આદિને
નક્ષત્ર અને તારાઓની ઉપમા આપી છે. આ પ્રકારે તે રાજા (જેણેવ બાહિરિયા
ઉવટ્ઠાણસાલા જેણેવ આભિસેક્કે હત્થિરયણે તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) જ્યાં બહારની
બાબુએ ઉપસ્થાનશાલા હતી અને જ્યાં તે આભિષેક્ય હાથીરત્ન ઉભો
રહ્યો હતો ત્યાં પહોંચ્યા. (ઉવાગચ્છિત્તા અંજણગિરિ-કૂડ-સંનિભં ગયવઈં ણરવઈં
દુરૂઢે) પહોંચતાં જ અંજનગિરિના શિખરના જેવા તે હાથી ઉપર આરૂઢ
થઈ ગયા (સૂ. ૪૮)

मूलम्—तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स
आभिसेकं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे
अट्ठ मंगलया पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, तंजहा-सोवत्थिय-

टीका—गजेन्द्राधिरूढो नरेन्द्रो भगवदभिमुखं यियासतीति तस्य पुरतः प्रयातम्
अष्टमङ्गलादिपदात्यनीकान्तं कान्तं राजोचितवस्तुजातं वर्णयति—‘तए णं’ इत्यादि ।
‘तए णं’ ततः=तदनन्तरम्—सेनापतिसमानीतपट्टगजरत्नसमधिरोहणाऽनन्तरं ‘तस्स कूणि-
यस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसेकं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स’ तस्य कूणि-
कस्य राज्ञो भंभसारपुत्रस्याऽऽभिषेक्यं हस्तिरत्नमधिरूढस्य सतः ‘तप्पढमयाए इमे अट्ठ
मंगलया पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया’ तत्प्रथमतया इमान्याष्टाष्ट मङ्गलानि पुरतो
यथानुपूर्व्यां संप्रस्थितानि, ‘तंजहा’—तद्यथा—‘सोवत्थिय—सिरिवच्छ—णंदियावत्त—
वद्धमाणग—भद्दासण—कलस—मच्छ—दप्पणा’—सौवस्तिक—श्रीवत्स—नन्दावर्त—वर्द्धमा-
नक—भद्दासन—कलश—मत्स्य—दर्पणाः, तत्र—मत्स्यः—चित्रपटलिखितमत्स्यरूपः । एते

‘तए णं तस्स कूणियस्स’ इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (भंभसारपुत्तस्स) भंभसार अर्थात् श्रेणिक के पुत्र (तस्स
कूणियस्स रण्णो) उस कूणिक राजा के (आभिसेकं हत्थिरयणं) आभिषेक्य हस्तिरत्न के
ऊपर (दुरूढस्स समाणस्स) सवार होते ही (तप्पढमयाए) सर्वप्रथम उनके (पुरओ) आगे
आगे (इमे अट्ठ मंगलया अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया) ये आठ आठ मांगलिक द्रव्य अनुक्रम से
संप्रतिष्ठित हुए—चलने लगे, (तं जहा) वे मांगलिक द्रव्य ये हैं, (सोवत्थिय—सिरिवच्छ—
णंदियावत्त—वद्धमाणग—भद्दासण—कलस—मच्छ—दप्पणा) स्वस्तिक, श्रीवत्स, नन्दावर्त,
वर्द्धमानक, भद्दासन, कलश, मत्स्य और दर्पण ! इनमें से स्वस्तिक, श्रीवत्स, नन्दावर्त

“ तए णं तस्स कूणियस्स ” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (भंभसारपुत्तस्स) भंभसार अर्थात् श्रेणिकना पुत्र
(तस्स कूणियस्स रण्णो) ते इण्डिक राजाना (आभिसेकं हत्थिरयणं) आभिषेक्य हस्ति-
रत्नना उपर (दुरूढस्स समाणस्स) सवार थय जतां ज (तप्पढमयाए) सर्वथी
पडेतां तेभनी (पुरओ) आगण आगण (इमे अट्ठ मंगलया अहाणुपुव्वीए
संपट्ठिया) आ आठ आठ मांगलिक द्रव्य अनुक्रमथी गोठवाभां आव्या,
(तंजहा) ते मांगलिक द्रव्य आ उतां. (सोवत्थिय—सिरिवच्छ—णंदियावत्त—वद्धमाणग-
भद्दासण—कलस—मच्छ—दप्पणा) १ स्वस्तिक, २ श्रीवत्स, ३ नन्दावर्त, ४ वर्द्ध-

સિરિવચ્છ-ગંદિયાવત્ત-વદ્ધમાણગ-ભદ્દાસણ-કલસ-મચ્છ-દપ્પણા ।
તયાણંતરં ચ ણં પુણ્ણ-કલસ-ભિંગારં દિવ્વા ય છત્તપટ્ટાગા
સચામરા દંસણ-રહ્ય-આલોય-દરિસણિજ્ઞા વાઉ-દ્ધૂય-વિજય-

માઙ્ગલિકતયા યાત્રાયામુપયુક્તાઃ । તદનન્તરં ચ સ્વલુ ‘પુણ્ણ-કલસ-ભિંગારં’ પૂર્ણ-કલશ-
મૃદ્ધારં, જલપરિપૂર્ણા ધટ્ટા મૃદ્ધારાશ્ચ, તત્ર મૃદ્ધારઃ—‘જ્ઞારી’ ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ, એતે પુરઃ પ્રસ્થિતાઃ ।
‘દિવ્વા ય’ દિવ્યા—શોભના ચ ‘છત્તપટ્ટાગા’ છત્રપતાકા—છત્રેણ સહિતા પતાકા—છત્ર-
પતાકા ‘સચામરા’ સચામરા=ચામરાભ્યાં યુક્તા ચ, ‘દંસણ-રહ્ય-આલોય-દરિસણિજ્ઞા’
દર્શનરચિતા—લોક-દર્શનીયા-દર્શને=રાજો દષ્ટિવિષયે રચિતા=કૃતા, આ=સમન્તાત્ લોકૈઃ=જનૈ-
દર્શનોયા=દૃશ્યા ચ, ‘વાઉ-દ્ધૂય-વિજય-વેજયંતી ય’ વાતો-દ્ધૂત-વિજય-વૈજયન્તી
ચ—વાતોદ્ધૂતા = પવનપ્રકમ્પિતા ચાસૌ વિજયવૈજયન્તી ચ = વિજયસૂચિકા ધ્વજપતાકા

और वर्धमानक ये साथिये कहलाते हैं । मत्स्य से यहां चित्रपट में लिखित मत्स्य का ग्रहण
किया हुआ समझना चाहिये । ये आठ मंगलस्वरूप होने से प्रस्थान में उपयुक्त गिने जाते हैं ।
(तयाणंतरं च णं) इसके बाद (पुण्णकलसभिंगारं दिव्वा य छत्तपट्टागा सचामरा दंसण-
रह्य-आलोय-दरिसणिज्ज्ञा वाउ-द्धूय-विजय-वेजयंती य ऊसिया गगणतलमणु-
लिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टिया) कितनेक लोग पूर्णकलश=जल से भरे हुए कलश,
तथा जल से भरी हुई झारियाँ लेकर आगे २ चलने लगे ! कितनेक चामरसहित सुन्दर
छत्र-पताकाओं को लेकर आगे २ चलने लगे ! और कितनेक तो राजा की दृष्टि में आ सके
इस प्रकार से रखी हुई, देखने में सुंदर ऊँची अत एव आकाश को छूती हुई ऐसी विजय-

માનક, ૫ ભદ્રાસન, ૬ કલશ, ૭ મત્સ્ય અને ૮ દર્પણ. એમાંથી સ્વસ્તિક,
શ્રીવત્સ, નન્દાવર્ત અને વર્ધમાનક એ સાથિયા કહેવાય છે. મત્સ્ય એટલે
અહીં ચિત્રપટમાં આળેખેલાં માછલાંનું ચિત્ર સમજી લેવું. આ આઠ મંગલ-
સ્વરૂપ હોવાથી પ્રસ્થાન (બહાર જતી વખતે) ઉપયોગી ગણાય છે. (તયાણંતરં
ચ ણં) ત્યાર પછી (પુણ્ણકલસભિંગારં દિવ્વા ય છત્તપટ્ટાગા સચામરા દંસણ-
રહ્ય-આલોય-દરિસણિજ્ઞા વાઉ-દ્ધૂય-વિજય-વેજયંતી ય ઊસિયા ગગણતલમણુલિહંતી
પુરઓ અહાણુપુવ્વીણ સંપટ્ટિયા) કેટલાક લોક પૂર્ણ કલશ—જલથી ભરેલા કલશ
તથા જલથી ભરેલી ઝારીઓ લઈને આગળ આગળ ચાલવા લાગ્યા. કેટલાક
ચામર સહિત સુંદર છત્ર પટ્ટાઓને લઈને આગળ આગળ ચાલવા લાગ્યા,
અને કેટલાક તો રાજાની નજર પડી શકે એમ રાખેલી, જોવામાં સુંદર

वैजयन्ती य ऊसिया गगणतलमणुलिहन्ती पुरओ अहाणुपुव्वीए
संपट्टिया । तयाणंतरं च णं वेरुलिय-भिसंत-विमल-दंडं पलंब-
कोरंट-मल्लदामो-वसोभियं चंदमंडलणिभं समूसियं विमलं आय-
वत्तं पवरं सीहासणं वरमणिरयणपादपीठं सपाउयाजोयसमा-

‘ऊसिया’ उच्छ्रिता—उत्थापिता, अतएव ‘गगणतलमणुलिहन्ती’ गगनतलमनु-
लिखन्ती=व्योमतलं स्पृशन्ती—अत्युच्चा, पुरतो यथानुपूर्व्यां सम्प्रस्थिता=प्रचलिता । छत्रं वर्ण-
यन्नाह—‘वेरुलिय’ इत्यादि । तदनन्तरं खलु ‘वेरुलिय—भिसंत—विमल—दंडं’ वैदूर्यभास-
मान-विमल—दण्डम्—वैदूर्यस्य=रत्नविशेषस्य भासमानो=दीप्यमानो विमलो दण्डो यत्र तत् तादृ-
शम्,—‘पलंब—कोरंट—मल्ल—दामोवसोभियं’ प्रलम्बमान—कोरण्ट—माल्यदामोपशोभितम्
प्रलम्बमानेन कोरण्टाल्यमालोपयोगिकुसुमानां दाम्ना=मालया उपशोभितम् । अतएव—‘चंद-
मंडलणिभं’ चन्द्रमण्डलनिभं—चन्द्रमण्डलेन समानम्, ‘समूसियं’ समुच्छ्रितम्=विस्तारितम्,
‘विमलं आयवत्तं’ विमलम् आतपत्रम्; सिंहासनं वर्णयन्नाह—‘पवर—सीहासणं’ इति, प्रवर-
सिंहासनम्, तत् कीदृशम्? इत्याह—‘वर—मणि—रयण—पाद—पीठं’ वर—मणि—रत्न—पाद-

वैजयन्ती—विजयध्वजों को लेकर आगे २ चलने लगे । (तयाणंतरं च णं) इसके बाद (वेरु-
लिय—भिसंत—विमल—दंडं पलंब—कोरंट—मल्ल—दामो—वसोभियं चंदमंडलणिभं समू-
सियं विमलं आयवत्तं पवरं सीहासणं वर-मणि—रयण—पादपीठं सपाउयाजोयसमा-
उत्तं बहु—किंकर—कम्मकर—पुरिस—पायत्त—परिक्खित्तं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टियं)
कितनेक लोग वैदूर्य मणि की प्रभा से प्रकाशित दण्डवाले, लटकती हुई कोरंटमाला से
सुशोभित, चंद्रमण्डलसदृश तथा ऊँचे उठाये हुए ऐसे छत्र को लेकर आगे २ चले । तथा
बहुत से नौकर—चाकर और सैनिक लोग श्रेष्ठ सिंहासनको तथा पादुकासहित, उत्तम मणि-

डंभी ओटवे के आकाशने अउती होय तेवी विजयवैजयन्ती-विजयध्वज-
ओने लधने आगण आगण थालवा लाज्या. (तयाणंतरं च णं) तयार पछी
(वेरुलिय—भिसंत—विमल—दंडं पलंब—कोरंट—मल्ल—दामो—वसोभियं चंद—मंडल—णिभं
समूसियं विमलं आयवत्तं पवरं सीहासणं वर—मणि—रयण—पाद—पीठं सपाउया-
जोय—समाउत्तं बहु—किंकर—कम्मकर—पुरिस—पायत्त—परिक्खित्तं पुरओ अहाणुपुव्वीए
संपट्टियं) केटलाउ दोउ वैदूर्यभणिनी प्रलाथी प्रकाशित दंडवाणा, लटकती
कोरंटमाणाथी शोभता, चंद्रमंडल जेवा, तथा डंभी उपाउलां छत्रने लध

उत्तं बहु-किंकर-कम्मकर-पुरिस-पायत्त-परिक्खित्तं पुरओ अहाणुपु-
व्वीए संपट्ठियं । तयाणंतरं च णं बहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा चाव-
ग्गाहा चामरग्गाहा पासग्गाहा पोत्थयग्गाहा फलगग्गाहा पीढग्गा-
हा वीणग्गाहा कूवग्गाहा हडप्पयग्गाहा पुरओ अहाणुपुव्वीए संप-

पीठम्-श्रेष्ठ-मणि-रत्न-स्वचित-पादस्थापनपीठ-सहितम्, 'सपाउया-जोय-समाउत्तं' स्व-
पादुकायोग-समायुक्तम्-स्वपादुकयोर्यो योगः=संबन्धः, तेन समायुक्तम्, 'बहु-किंकर-कम्म-
कर-पुरिस-पायत्त-परिक्खित्तं' बहु-किङ्कर-कर्मकर-पुरुष-पादात्-परिक्षितम्-बहुभिः=अनेकैः
किङ्करैः=स्वामिनं पृष्ठा कार्यकरैः, कर्मकरैः=भृत्यैः, पुरुषैः=साधारणजनैः, पादातेन=पदातिसमूहेन
परिक्षितम्=उत्थापितम्, पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितम् । 'तयाणंतरं च णं' तदनन्तरञ्च खलु
'बहवे लट्ठिग्गाहा' बहवो यष्टिग्राहिणः, 'कुंतग्गाहा' कुन्तग्राहिणः=भल्लधारकाः 'चाव-
ग्गाहा' चापग्राहिणः=धनुर्धारिणः, 'चामरग्गाहा' चामरग्राहिणः, 'पासग्गाहा' पाशग्रा-
हिणः-उद्धतगजाश्वादिबन्धनसाधनं पाशस्तस्य धारकाः । 'पोत्थयग्गाहा' पुस्तकग्राहिणः,
'फलगग्गाहा' फलकग्राहिणः-फलकः='ढाल' इतिख्यातस्तस्य धारकाः, 'पीढग्गाहा' पीठ-
ग्राहिणः-पीठानि=आसनविशेषास्तेषां धारका इत्यर्थः । 'वीणग्गाहा' वीणाग्राहिणः-वीणा=वाद्य-

रत्नों के बने हुए पादपीठ को लेकर आगे २ चलने लगे । इसके बाद (बहवे लट्ठिग्गाहा)
अनेक लाठीधारी चलने लगे । (कुंतग्गाहा) अनेक भल्लधारी (चावग्गाहा) धनुर्धारी (चामर-
ग्गाहा) चामरधारी (पासग्गाहा) उद्धत हाथी और घोड़ों को जिसके द्वारा वश में किया
जाये ऐसे पाश को धारण करने वाले, (पोत्थयग्गाहा) पुस्तकधारी, (फलगग्गाहा) ढाल
को धारण करने वाले (पीढग्गाहा) आसनविशेष के धारी (वीणग्गाहा) वीणाधारी (कुतु-

आगण आगण आल्या, तथा धण्ण नोकर-आकर अने सैनिक लोक श्रेष्ठ
सिंहासनने तथा पादुकासहित उत्तम भण्डिरत्नानी अनेही पादपीठने लधने
आगण आगण आल्या. त्थार पछी (बहवे लट्ठिग्गाहा) अनेक लाठीधारी
आलवा लाज्या. (कुंतग्गाहा) अनेक लाटाधारी, (चावग्गाहा) धनुर्धारी,
(चामरग्गाहा) चामरधारी, (पासग्गाहा) उद्धत हाथी अने घोडाने जेना द्वारा
वशमां लध शक्य अेवा पाशने धारण करवावाणा, (पोत्थयग्गाहा) पुस्तकधारी,
(फलगग्गाहा) ढालने धारण करवावाणा, (पीढग्गाहा) आसन विशेषना धारण करवा-
वाणा, (वीणग्गाहा) वीणाधारी, (कुतुवग्गाहा) कुतुप अर्थात् आभरानां तेल पात्रने

ट्टिया। तयाणंतरं च णं बहवे दंडिणो मुंडिणो सिंहंडिणो जडिणो पि-
च्छिणो हासकरा डमरुयकरा चाडुकरा वादकरा कंदप्पकरा दवकरा
कोक्कुइया किडुकरा य वायंता य गायंता य हंसंता य णच्चंता य भासं-

विशेषस्तस्या धारका इत्यर्थः, 'कुतुवग्गाहा' कुतुपग्राहिणः—तैलादीनां चर्ममयं पात्रं कुतुपस्त-
स्य धारकाः, 'हडप्पयग्गाहा' हडप्पग्राहिणः—ताम्बूलदिभाजनं हडप्पस्तस्य धारका इत्यर्थः;
'पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टिया' पुरतो यथानुपूर्व्या संप्रस्थिताः। 'तयाणंतरं च णं'
तदनन्तरं च खलु 'बहवे' बहवो 'दंडिणो' दण्डिनः 'मुंडिणो' मुण्डिनः 'सिंहंडिणो'
शिखाण्डनः=शिखाविशेषधारिणः, 'जडिणो' जटिनः=जटावन्तः, 'पिच्छिणो'—पिच्छिनः=मयू-
रादिपिच्छवन्तः 'हासकरा' हास्यकराः 'डमरुयकरा' डमरुककराः='डुगडुगी'—तिप्रसिद्धवा-
द्यवादिनः, 'चाडुकरा' चाटुकारिणः=प्रियवचनवादिनः, 'वादकरा' वादकारिणः, 'कंदप्पकरा'
कन्दर्पकारिणः=कामकथाकारिणः, 'दवकरा' द्रवकराः=परिहासकारिणः 'कोक्कुइया' कौतु-
क्रिकाः=कुतूहलकारिणः, 'कीडुकरा' क्रीडाकराः, 'वायंता य' वादयन्तश्च—मृदङ्गादिकं

वग्गाहा) कुतुप अर्थात् चमड़े के तेलपात्र को धारण करने वाले, (हडप्पयग्गाहा) तथा
हडप्प—ताम्बूल पात्र को धारण करने वाले अनुक्रम से आगे २ चलने लगे। (तयाणंतरं
च णं) इसके बाद (बहवे) बहुत से (दंडिणो) दंडी, (मुंडिणो) मुण्डी, (सिंहंडिणो)
शिखाधारी, (जडिणो) जटाधारी, (पिच्छिणो) मयूर आदि पिच्छ के धारी (हासकरा)
हँसाने वाले (डमरुयकरा) डुगडुगी बजाने वाले, (चाडुकरा) प्रिय वचन बोलने वाले,
(वादकरा) वादविवाद करने वाले, (कंदप्पकरा) कामकथा करने वाले, (दवकरा) हँसी-
मजाक करने वाले, (कोक्कुइया) कुतूहल करने वाले, (किडुकरा य) खेल-तमाशा करने वाले,
(वायंता य) मृदंगादिक बाजे बजाने वाले, (गायंता य) गाना गाने वाले, (हंसंता य) विना कारण

(कुंभीओने) धारण करवावाणा, (हडप्पयग्गाहा) तथा डुडुङ्ग—(ताम्बूलपात्र)ने धारण
करवावाणा अनुक्रमेण आगण आगण आसवा दाग्या. (तयाणंतरं च णं) त्थार पछी
(बहवे) अनेके। (दंडिणो) दंडी (मुंडिणो) मुंडी (सिंहंडिणो) शिखाधारी
(जडिणो) जटाधारी (पिच्छिणो) मयूर आदि पीछाना धारण करनारा (हासकरा)
डुसावनारा (विद्वषडे) (डमरुयकरा) डुगडुगी वगाडनारा (चाडुकरा) प्रियवचन
ओदनारा, (वादकरा) वादविवाद करनारा, (कंदप्पकरा) कामकथा करनारा,
(दवकरा) डुंसीमजाक करनारा, (कोक्कुइया) कुतूहल करनारा, (किडुकरा) खेल-
तमासा करनारा, (वायंता य) मृदंगादिक (ढोल) वाजं वगाडनारा, (गायंता य)

ता य सावेता य रक्खंता य आलोयं च करेमाणा जयसहं पउंजमाणा
पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टिया । तयाणंतरं च णं जच्चाणं तर-
मल्लिहायणाणं हरिमेला-मउल-मल्लिय-च्छाणं चंचुच्चिय-ललिय-

नादयन्तः, 'गायंता' गायन्तः=गान्धर्वमनुतिष्ठन्तः, 'हसंता' हसन्तः, च-पुनः
'णच्चंता' नृत्यन्तः, 'भासंता' भाषमाणाः 'सावेता' श्रावयन्तः=भूत-भविष्यद्-वादिनः,
'रक्खंता' रक्षन्तः-राज्ञो देहरक्षां कुर्वन्तः, 'आलोयं च करेमाणा' आलोकं च
कुर्वन्तः-राजादिदर्शनं कुर्वन्तः, 'जयसहं पउंजमाणा' जयशब्दं प्रयुञ्जानाः=वदन्तः ।
'पुरओ' पुरतः-अग्रतः, 'अहाणुपुव्वीए' यथानुपूर्व्या=क्रमेण 'संपट्टिया' सम्प्रस्थिताः
-प्रचलिताः । 'तयाणंतरं च णं' तदनन्तरञ्च खलु 'जच्चाणं' जात्यानाम्-उत्तमजाति-
भवानाम्, 'तर-मल्लि-हायणाणं' तरोमल्लिहायनानां-तरो=वेगः तस्य मल्लिः=धारकः-
'मउल मल्ल धारणे' इति धातुपाठे स्थितान्मल्लधातोः कर्तरि इः, ततश्च तरोमल्लिः=वेगधारकः
हायनः=वेगसरो येषां ते तरोमल्लिहायनाः-यौवनवयःस्थितास्तेषाम्, तुरगाणामित्यग्रेण
अन्वयः, पुनः कीदृशानाम् ? अत्राऽऽह—'हरिमेला-मउल-मल्लिय-च्छाणं' हरिमेला-
मुकुल-मल्लिका-क्षाणाम्-हरिमेला=वृक्षविशेषः तस्य मुकुलं=कलिका, मल्लिका=वसन्तजः

हँसने वाले, (णच्चंता य) नाचने वाले, (भासंता य) भाषण करने वाले, (सावेता य) भूत-भवि-
ष्यत् कहने वाले, (रक्खंता य) राजा के आत्मरक्षक, (आलोयं च करेमाणा) राजा का
दर्शन करने वाले पुरुष, तथा—(जयसहं पउंजमाणा) 'जय जय' शब्द करने वाले, ये
सभी (पुरओ) आगे २ (अहाणुपुव्वीए) यथाक्रम से (संपट्टिया) चलने लगे । (तयाणं-
तरं च णं) इसके बाद (जच्चाणं तरमल्लिहायणाणं) उत्तम जाति के, वेगवाले नौजवान
घोड़े चलने लगे । (हरिमेला-मउल-मल्लिय-च्छाणं) ये घोड़े हरिमेला-वृक्षविशेष की

गायन गानारा, (हसंता य) विनाकारणु हँसनारा, (णच्चंता य) नाचनारा, (भासंता य)
भाषणु डरनारा, (सावेता य) भूत भविष्य डरनारा, (रक्खंता य) राजना आत्म-
रक्षक, (आलोयं च करेमाणा) राजना दर्शन डरनारा, तथा (जयसहं पउंजमाणा)
'जय जय' शब्द डरवावाणा, ओ अधा (पुरओ) आगण आगण (अहाणु
पुव्वीए) यथाक्रमथी (संपट्टिया) आलवा लाग्या. (तयाणंतरं च णं)
त्यार पथी (जच्चाणं तरमल्लिहायणाणं) उत्तम जातिना वेगवाणा नवजुवान
घोडा आलवा लाग्या. (हरिमेला-मउल-मल्लिय-च्छाणं) आ घोडा
हरिमेला-वृक्षविशेषनी डणी तेमज मल्लिकापुष्प-वेदानां डूल जेवी आंजो-

**પુલિય-ચલ-ચવલ-ચંચલ-ગર્દૈર્ણ લંઘણ-વગ્ગણ-ધાવણ-ધોરણ-તિવ-
ર્દ-જઈણ-સિક્કિચય-ગર્દૈર્ણ લલંત-લામ-ગલલાય-વર-ભૂસણાણં મુહ-**

કુંસુમવિશેષ: ‘વેલી’ ઇતિહ્યાતસ્તદ્વદક્ષિણી યેષાં તે તથા તેષાં, ‘ચંચુ-ચ્ચિય-લલિય-
પુલિય-ચલ-ચવલ-ચંચલ-ગર્દૈર્ણ’ચન્ચૂ-ચ્ચિત-લલિત-પુલિત-ચલ-ચપલ-ચચ્ચલ-ગતીનામ્,
ચન્ચુ: = શુકચન્ચુ: = તદ્વદ્વક્રતયા ઉચ્ચિતં = ચરણયોરુત્થાપનં તેન લલિતં = સવિલાસં યત્
પુલિતં = ગમનવિશેષ: = એતદ્રૂપા-ચલાનાં = ગતિમતાં ચપલચચ્ચલા = અતિચચ્ચલા, યદ્વા-ચપલા-
વિદ્યુત્, તદ્વચ્ચલા ગતિર્યેષાં તે તથા તેષાં, વક્રપદક્ષેપગમનવિશેષાઽતિશયચચ્ચલગમનવતામ્,
‘લંઘણ-વગ્ગણ-ધાવણ-ધોરણ-તિવર્દ-જઈણ-સિક્કિચય-ગર્દૈર્ણ’ લઢ્ઢન-વલ્ગન-ધાવન-
ધોરણ-ત્રિપદી-જયિની-શિક્ષિત-ગતીનામ્ લઢ્ઢનં-ગત્તાદિરુલ્લઢ્ઢનમ્, વલ્ગનમ્ = ઉત્કૂર્દનમ્,
ધાવનં = શીઘ્રમૃજુગમનમ્, ધોરણં = ગતિચાતુર્યમ્, ત્રિપદી = ભૂમૌ પદત્રયન્યાસ:, જયિની = જયિન્યા-
હ્યા અતિતીવ્રગતિ:, એતા: શિક્ષિતા = અભ્યસ્તા ગતયો યૈસ્તે તથા તેષામ્ । ‘લલંત-લામ-ગલ-
લાય-વર-ભૂસણાણં’ લલ-લામદ્-ગલલાત-વર-ભૂષણાનામ્-લલન્તિ = દોલાયમાનાનિ, લામન્તિ =
રમ્યાણિ, ગલલાતાનિ = ગ્રીવાસ્થિતાનિ વરભૂષણાનિ યેષાં તે તથા તેષાં, -ચચ્ચલસુન્દરગ્રીવાભરણ-

કલી એવં મલ્લિકાપુષ્પ-વેલા કે ફૂલ-કે સમાન આંચોંવાલે થે । (ચંચુ-ચ્ચિય-લલિય-પુલિય-
ચલ-ચવલ-ચંચલ-ગર્દૈર્ણ) શુક કી ચંચુ કે સમાન વક્ર પૈર ઉઠા કર સવિલાસ ચલને કે
કારણ વે બહુત મલે માલ્દમ હોતે થે, તથા ચલને મેં વિજલી કે સમાન ચંચલ થે । (લંઘણ
વગ્ગણ-ધાવણ-ધોરણ-તિવર્દ-જઈણ-સિક્કિચયગર્દૈર્ણ) લંઘન-ચર્જી આદિ કા લાંધના,
વલ્ગન-કૂદના, ધાવન-શીઘ્રતાપૂર્વક દૌડના, ધોરણ-સૂગર કે સમાન નીચે સિર કર કે દૌડના,
ત્રિપદી-ત્રીન પૈરોં સે ચડા હોના, જયિની-અતિતીવ્ર ચાલકા ચલના, -ઇન સર્વોં મેં યે અતિ-
નિપુણ થે । (લલંત-લામ-ગલલાય-વર-ભૂસણાણં) ઇનકે ગલે મેં જો આભૂષણ થે વે
ઇધર ઉધર હિલતે ડુલતે થે ઓર બહુત હી સુન્દર થે । (મુહમંડગ-ઓચૂલગ-થાસગ-અહિ-

વાળા હતા. (ચંચુ-ચ્ચિય-લલિય-પુલિય-ચલ-ચવલ ચંચલ-ગર્દૈર્ણ) પોપટની આંચની
જેમ વાંકા પગ ઉપાડીને વિલાસ કરતા ચાલવાના કારણે તેઓ બહુ ભલા
લાગતા હતા, તથા ચાલવામાં વિજળીની પેઠે આંચળા હતા. (લંઘણ-વગ્ગણ-
ધાવણ-ધોરણ-તિવર્દ-જઈણ-સિક્કિચય-ગર્દૈર્ણ) લાંધન-બડ્ડા આદિને લાંધવું (ટપવું);
વલ્ગન-કૂદવું, ધાવન-અડપથી દોડવું, ધોરણ-સૂકરની પેઠે નીચું માથું રાખી
દોડવું, ત્રિપદી-ત્રણ પગે ઉભા રહેવું, જયિની-અતિ અડપવાળા ચાલથી
ચાલવું. આ બધામાં તેઓ નિપુણ હતા. (લલંત-લામ-ગલલાય-વર-ભૂસણાણં)
તેમના ગળામાં જે આભૂષણ હતાં તે આમતેમ હાલતાં-ડોલતાં હતાં અને

મંડગ-ઓચૂલગ-થાસગ-અહિલાણ-ચામર-ગંડ - પરિમંડિય - કડીણં
કિંકર-વર-તરુણ-પરિગ્ગહિયાણં અટ્ટસયં વરતુરગાણં પુરઓ અહાણુ-
પુવ્વીણ સંપટ્ટિયં । તયાણંતરં ચ ણં ઈસીદંતાણં ઈસીમત્તાણં ઈસીતુંગાણં

ભૂષિતાનામ્ । ‘મુહમંડગ-ઓચૂલગ-થાસગ-અહિલાણ-ચામરગંડ-પરિમંડિય-કડીણં’
મુખમાણ્ડકા ડવચૂલક-સ્થાસકા-મિલાન-ચામરગણ્ડ-પરિમણ્ડિત-કટીનામ્ -મુખમાણ્ડકં=મુખા-
ભરણમ્, અવચૂલાઃ=પ્રલમ્બમાનગુચ્છાઃ, સ્થાસકાઃ=દર્પણાકારા અલંકારાઃ, અમિલાનાઃ=મુખ-
બન્ધવિશેષાશ્ચ, યેષાં તે, તથા ચામરગણ્ડૈઃ=ચામરસમૂહૈઃ, પરિમણ્ડિતા કટિર્યેષાં તે તથા, તતઃ
પદ્મસ્ય કર્મધારયઃ, તેષાં તથાભૂતાનામ્ । કિંકર-વર-તરુણ-પરિગ્ગહિયાણં’ કિંકર-
વરતરુણ-પરિગૃહીતાનામ્-કિંકરવરાશ્ચ તે તરુણાઃ-તરુણકિંકરશ્રેષ્ઠાઃ, તૈઃ પરિગૃહીતાનામ્,
‘અટ્ટસયં વરતુરગાણં’ અષ્ટશતં વરતુરગાણાં=શ્રેષ્ઠહયાનામઘાઢધિકં શતમ્, ‘પુરઓ અહાણુ-
પુવ્વીણ સંપટ્ટિયં’ પુરતો યથાનુપૂર્વ્યા સમ્પ્રસ્થિતમ્ । ‘તયાણંતરં ચ ણં’ તદનન્તરં ચ સ્વલુ-
ઈસીદંતાણં’ ઈષદન્તાનામ્=અલ્પદન્તવતામ્ ‘ઈસીમત્તાણં’ ઈષન્મત્તાનામ્=કિચ્ચિન્મદશાલિનામ્,

લાણ-ચામરગંડ-પરિમંડિય-કડીણં) મુખમાણ્ડક-મુખ કા આભૂષણ, અવચૂલ-પ્રલમ્બ-
માન ગુચ્છે જો મસ્તક કે ઉપર મુર્ગે કી કલંગી કે સમાન લગાયે જાતે હૈ, સ્થાસક-દર્પણ
કે આકાર જૈસે આભરણવિશેષ, તથા-અહિલાણ-મુખબન્ધવિશેષ સે યે શોભિત હો
રહે થે, તથા ચામરગંડ - ચામરસમૂહ-સે ઇનકા કટિભાગ વિશેષ અલંકૃત હો
રહા થા । (કિંકર-વરતરુણ-પરિગ્ગહિયાણં) ઇનકો પકડંને વાલે સર્સ ઉત્તમ ઇવં
તરુણ અવસ્થા વાલે થે । (અટ્ટસયં વર-તુરગાણં પુરઓ અહાણુપુવ્વીણ સંપટ્ટિયં) ઇસ પ્રકાર ૧૦૮
ઘોડે આગે આગે અનુક્રમ સે ચલને લગે । (તયાણંતરં ચ ણં ઈસીદંતાણં ઈસીમત્તાણં ઈસીતુંગાણં

બહુજ સુંદર હતાં. (મુહમંડગ-ઓચૂલગ-થાસગ-અહિલાણ-ચામરગંડ-પરિમંડિય-કડીણં)
મુખભાંડક-મુખનું આભૂષણ, અવચૂલ-પ્રલંબમાન ગુચ્છા જે મસ્તકના ઉપર
કુકડાની કલંગીના જેમ લગાવાય છે, સ્થાસક-દર્પણના આકાર જેવાં આભ-
રણ વિશેષ, તથા અહિલાણ-મુખબંધનવિશેષ, એ બધાથી તેઓ શોભિત
થઈ રહ્યા હતા, અને ચામરગંડ-ચામરસમૂહથી તેમનો કેડનો ભાગ
વિશેષ અલંકૃત થઈ રહ્યો હતો. (કિંકર-વર-તરુણ-પરિગ્ગહિયાણં)
તેમને પકડનારા સર્પસ ઉત્તમ તેમજ તરુણ અવસ્થાના હતા.
(અટ્ટ-સયં વર-તુરગાણં પુરઓ અહાણુપુવ્વીણ સંપટ્ટિયં) આ પ્રકારના ૧૦૮ ઘોડા
અનુક્રમથી આગળ આગળ ચાલવા લાગ્યા. (તયાણંતરં ચ ણં ઈસીદંતાણં ઈસી-

ईसी-उच्छंग-विसाल-धवल-दंताणं कंचण-कोसी-पविट्ट-दंताणं कंचण-मणि-रयण-भूसियाणं वर-पुरिसा-रोहग-संपउत्ताणं अट्टसयं गयाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टियं । तयाणंतरं च णं सच्छ-

‘ईसीतुंगाणं’ ईषत्तुङ्गानाम्=मनागुन्नतानाम्, ‘ईसी-उच्छंग-विसाल-धवल-दंताणं’ ईष-दुत्सङ्ग-विशाल-धवल-दन्तानाम्-ईषदुत्सङ्गे=मध्यभागे विशालाः अल्पवयस्कत्वात्, तथा धवला दन्ता येषां ते धवलदन्ताः, ततः पदद्वयस्य कर्मधारयः, तेषाम्, ‘कंचण-कोसी-पविट्ट-दंताणं’ काञ्चन-कोश-प्रविष्ट-दन्तानाम्, कंचण-मणि-रयण-भूसियाणं’ काञ्चनमणि-रत्न-भूषितानाम्, ‘वर-पुरिसा-रोहग-संपउत्ताणं’ वर-पुरुषा-ऽऽरोहक-सम्प्रयुक्तानाम्-वर-पुरुषाः=श्रेष्ठपुरुषाश्चामी-आरोहकाः तैः सम्प्रयुक्तानाम्=युक्तानाम्, एतादृशां-‘गयाणं’ गजानाम्=हस्तिनाम्, ‘अट्टसयं’ अष्टशतम्=अष्टाधिकं शतम्, ‘पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टियं’ पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितम् । अथ रथानां वर्णनमाह-‘तयाणंतरं’ इत्यादि । ‘तयाणंतरं

ईसी-उच्छंग-विसाल-धवल-दंताणं कंचण-कोसी-पविट्ट-दंताणं कंचण-मणि-रयण-भूसियाणं वर-पुरिसा-रोहग-संपउत्ताणं अट्टसयं गयाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टियं) इनके बाद आगे आगे १०८ हाथी चले, ये हाथी अल्पदंतवाले थे, पूरे दांत इनके बाहिर नहीं निकल पाये थे । किंचित् मदशाली थे । थोड़े ही ऊँचे थे, अधिक नहीं, इनका मध्यभाग भी अधिक विशाल नहीं था ! दांत इनके अत्यंत धवल थे । इनके दांतों में सोने की खोलियाँ पहनायी गयी थीं । ये सुवर्ण एवं मणिरत्नों से विभूषित हो रहे थे । इनके ऊपर श्रेष्ठ पुरुष बैठे हुए थे । (तयाणंतरं च णं सच्छत्ताणं सज्झयाणं सघंटाणं सपडागाणं सतोरणवराणं सणंदिघोसाणं स-खिंखिणी-जाल-परिक्खित्ताणं हेमवय-चित्त-

मत्ताणं ईसीतुंगाणं ईसी-उच्छंग-विसाल-धवल-दंताणं कंचण-कोसी-पविट्ट-दंताणं कंचण-मणि-रयण-भूसियाणं वर-पुरिसा-रोहग-संपउत्ताणं अट्टसयं गयाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्टियं) त्थारपछी आगण आगण १०८ हाथी आल्या. आ हाथी अल्प दांत-वाणा उता-तेना दांत पूरा अहार नीकजेला नहोता. किंचित् मदशाली उता. थोडाक उंचा उता अहु नहि. तेमनो पीठनो लाग वधारे पडोणो नहोतो. तेमना दांत अहु घोणा उता. तेमना दांतमां सोनानी जोणो पहरेवाही उती. तेओ सुवर्ण तेमज मणिरत्नो वडे विभूषित अन्या उता. तेमना उपर श्रेष्ठ पुरुष जेडा उता. (तयाणंतरं च णं सच्छत्ताणं सज्झयाणं सघंटाणं सपडागाणं सतोरणवराणं सणंदिघोसाणं स-खिंखिणी-जाल-परिक्खित्ताणं हेमवय-चित्त-तिणिस-कणग-

ત્તાણં સજ્ઞયાણં સઘંટાણં સપટાગાણં સતોરણવરાણં સણંદિ-

ચ ણં' તદન્તરઞ્ચ સ્વલુ 'સચ્છત્તાણં' સચ્છત્રાગાં=છત્રયુક્તાનામ્, 'સજ્ઞયાણં' સધ્વજાનામ્-
ધ્વજયુક્તાનામ્ 'સઘંટાણં' સઘણ્ટાનામ્, 'સપટાગાણં' સપતાકાનામ્-ધ્વજો ગરુડાદિચિહ્ન-
યુક્તસ્તદન્યા તુ પતાકા તદ્વતામ્, 'સતોરણવરાણં' સતોરણવરાગામ્=શ્રેષ્ઠતોરણવતામ્, 'સણં-
દિયોસાણં' સનન્દિઘોષાગામ્-નન્દી=દ્વાદશવિધવાદ્યનિર્ઘોષઃ, તદ્ યથા-૧ મંભા, ૨ મંડં, ૩ મદલ, ૪ કડંબ, ૫ જ્ઞલ્લરિ, ૬ હુડુક, ૭ કંસાલા । ૮ કાહલ, ૯ તલિમા, ૧૦ વંસો, ૧૧ શંખો, ૧૨ પણવો ય વારસમો ॥ ૧ ॥ તત્ર-'મંભા' મમ્ભા=મેરી ૧, 'મંડં' મુકુન્દ:=
વાદ્યવિશેષઃ ૨, 'મદલ' મદલઃ=મૃદંગઃ ૩, 'કડંબ' કડમ્બઃ=વાદ્યવિશેષઃ ૪, 'જ્ઞલ્લરિ'
જ્ઞલ્લરી-'જ્ઞાલર' इति ख्यातो वाद्यविशेषः ૫, 'હુડુક' હુડુકઃ=વાદ્યવિશેષઃ, અયં દેશીયઃ શબ્દઃ ૬, 'કંસાલા' કાંસ્યાલઃ=વાદ્યવિશેષઃ ૭, 'કાહલ' કાહલઃ=વાદ્યવિશેષઃ ૮, 'તલિમા' તલિમા=

તિગિસ-કળગ-ગિજ્જુત્ત-દારુયાણં કાલાયસ-સુકય-ગેમિ-જંત-કમ્માણં) इनके बाद आगे आगे १०८ रथ चल रहे थे, ये रथ छत्रसहित थे, ध्वजासहित थे, इनके ऊपर ध्वजाएँ फहरा रही थीं, इनमें घण्टे लटक रहे थे, जिससे चलते समय इनकी मधुर आवाज आती थी । पताकासहित थे । (गरुड आदि के चिह्नों से युक्त का नाम ध्वजा है और चिह्नरहित का नाम पताका है ।) इन रथों पर तोरण बंधे हुए थे । ये रथ नन्दिघोष सहित थे । बारह प्रकार के वाद्यों का नाम नन्दिघोष है, वे १२ बारह प्रकार के बाजे ये हैं-मंभा-मेरी, मंडं-मुकुंद (यह एक जात का बाजा होता है), मदल-मृदंग, कडंब-(यह भी एक जात का बाजा होता है), जल्लरी-जालर, हुडुक (यह भी एक जात का बाजा विशेष होता है), कंसाल-(यह भी एक जातका बाजाविशेष है), काहल-(यह भी एक जात का बाजा विशेष है), तलिमा-वाद्यविशेष, वंश-वाद्यविशेष, शंख, एवं १२वां पवण-

ગિજ્જુત્ત-દારુયાણં કાલાયસ-સુકય-ગેમિ-જંત-કમ્માણં) ત્યાર પછી આગળ આગળ ૧૦૮ રથ ચાલતા હતા. આ રથ છત્રવાળા હતા. ધ્વજવાળા હતા. તેમના ઉપર ધ્વજ ફરકી રહી હતી. તેમાં ઘંટ લટકી રહ્યા હતા જેથી ચાલતી વખતે તેમનો મધુર અવાજ આવતો હતો. પતાકાવાળા હતા. (ગરુડ આદિનાં ચિહ્નો જેમાં હોય તે ધ્વજ કહેવાય અને જે ચિહ્નવિનાની હોય તે પતાકા કહેવાય.) આ રથો ઉપર તોરણ બાંધેલાં હતાં. નન્દિઘોષવાળા હતા. બાર પ્રકારનાં વાદ્યો (વાજા)નાં નામ નન્દિઘોષ છે. તેઓ ૧૨ બારનાં નામ આ પ્રમાણે છે-મંભા-મેરી, મંડં-મુકુંદ (આ એક જાતનું વાજું હોય છે) જ્ઞલ્લરી-જાલર, હુડુક (આ પણ એક અમુક જાતનું વાજું હોય છે) કંસાલ-(આ પણ એક જાતનું વાજું વિશેષ છે.) કાહલ-આ પણ એક અમુક જાતનું વાજું વિશેષ છે. તલિમા-

घोसाणं सखिखिणीजालपरिक्खित्ताणं हेमवय-चित्त-तिणिस-कण-
ग-णिज्जुत्त-दारुयाणं कालायस-सुकय-णेमि-जंत-कम्माणं सुसि-

વાઘવિશેષ: ૯, 'વંસો' વંશ:—વાઘવિશેષ: ૧૦, 'સંહો' સહ: પ્રસિદ્ધ: , 'પણવો ય વાર-
સમો' પગવશ્ચ દ્વાદશ:—તત્ર પગવ:—પટહ: 'ઢોલ' ઇતિ પ્રમિદ્ધ: । 'સ—સિંચિણી—જાલ-
પરિક્કિર્ણાણં' સચ્ચિક્કિર્ણા—જાલ—પરિક્ષિતાનામ્—સહ ચિક્કિર્ણાભિ:—શુદ્ધઘણ્ટિકાભિ: સહિતં
યજ્જાલકં—આભરણવિશેષ: તેન જાલકેન પરિક્ષિતા:—સુશોભિતાસ્તેષામ્, 'હેમવય-ચિત્ત-તેણિસ-
કણગ-ણિજ્જુત્ત-દારુયાણં' હૈમવત—ચિત્ર—તૈનિશ—કનક—નિર્યુક્ત—દારુકાણામ્—હૈમવતાનિ—
હિમવદ્ગિરિસમ્ભૂતાનિ, ચિત્રાણિ—વિચિત્રાણિ, તૈનશાનિ—તિનશનામકતરુસમ્બધીનિ, કન-
કનિર્યુક્તાનિ—સુવર્ણચિત્તાનિ, દારુકાણિ—કાષ્ઠાનિ યેષુ રથેષુ તેષામ્, 'કાલાયસ—સુકય-
ણેમિ-જંતકમ્માણં' કાલાયસ—સુકૃત—નેમિ—યન્ત્ર—કર્મણામ્—કાલાયસેન—કર્કશલૌહેન—સુષ્ટુ
કૃતં નેમે:—ચક્રધારાયા યન્ત્રકર્મ—બન્ધનક્રિયા યેષાં તે તથા તેષાં કર્કશલૌહસંપાદિતનેમિ-
બન્ધનવદ્ધાનામ્, 'સુસિલિટ્ટ-વત્ત-મંડલધુરાણં' સુશ્લિષ્ટ—વૃત્ત—મંડલ—ધુરાણામ્—
સુષ્ટુ શ્લિષ્ટા વૃત્તમંડલા — અન્તગોળાકારા ધૂર્વેષાં તે તથા તેષાં દૃઢઘટિત-

પટહ—ઢોલ । इन बारह प्रकार के वादित्रों से विशिष्ट ये रथ थे । इन पर जो जालक-
आभरणविशेष सजाने में आये थे, अथवा इन रथों में जो जालियां थीं वे सब क्षुद्र—छोटी
छोटी घंटियों से युक्त थीं । इनसे रथों की शोभा में अधिक वृद्धि हो रही थी । ये रथ
जिस काष्ठ के बने हुए थे, वह काष्ठ तिनश नामका था । यह हिमवत गिरि से मंगाया
गया था और बहुत सुन्दर था । इस काष्ठ के ऊपर सुवर्ण का काम किया हुआ था ।
ये रथ इन्हीं काष्ठों के बने हुए थे । इनके पहियों पर मजबूत लोहे के पट्टे चढ़ाये हुए थे ।
(सुसिलि-वत्त-मंडल-धुराणं) इनकी धुरायें बहुत ही मजबूत एवं गोल आकार की थीं ।

વાઘવિશેષ—એક જાતનું વાજુ, વંશ—વાંસનું વાઘવિશેષ, સંખ, અને બારમું પગવ—
પટહ—ઢોલ. આ બારેય પ્રકારનાં વાજિત્રોથી વિશિષ્ટ આ રથ હતો. તેના ઉપર
જે જાલક-આભરણવિશેષ અજવવામાં આવ્યાં હતાં, અથવા આ રથોમાં જે
જાળીઓ હતી તે બધી ક્ષુદ્ર—નાની નાની ઘંટડીઓવાળી હતી. એનાથી
રથોની શોભામાં અધિક વૃદ્ધિ થતી રહેતી હતી. આ રથ જે લાકડાનો
બનાવ્યા હતા તે લાકડાં તિનશ નામનાં હતાં. એ હિમવંત ગિરિથી મંગા-
વેલાં હતાં અને બહુ જ સુંદર હતાં. આ લાકડાંની ઉપર સુવર્ણનું કામ
કરવામાં આવેલું હતું. એ રથ આ જ લાકડાના બનાવ્યા હતા. તેમનાં
પૈડાં ઉપર મજબૂત લોહના પટ્ટા ચડાવ્યા હતા. (સુસિલિટ્ટ-વત્ત-મંડલ-ધુરાણં)

लिङ्ग-वृत्त-मंडल-धुराणं आइण्ण-वर-तुरग-संपउत्ताणं कुसल-नर-
च्छेय-सारहि-सुसंपग्गहियाणं वत्तीस-तोरण-परिमंडियाणं सकंकड-
वडेंसगाणं सचाव-सर-पहरणा-वरण-भरिय-जुद्ध-सज्जाणं अट्टसयं

वृत्तमण्डलधुराणम् । ‘आइण्ण - वर - तुरग - संपउत्ताणं’ आर्कीर्ण - वर-
तुरग-सम्प्रयुक्तानाम् - योजितोत्तमजातिमद्घोटकानाम्, ‘कुसल-नर-च्छेय-सारहि-
सुसंपग्गहियाणं’ कुशल-नर-च्छेक-सारथि-सुसम्प्रगृहीतानाम्-कुशलनराः=विज्ञपुरुषाः
एव ये छेकाः=निपुणाः सारथयः तैः सुसम्प्रगृहीतानाम्=सञ्चारितानाम् । ‘वत्तीस-तोर-
ण-परिमंडियाणं’ द्वात्रिंशत्तोरगपरिमण्डितानां-तोरणानि=अर्धवर्तुलाऽऽकाराणि द्वाराणि-
तैर्द्वात्रिंशत्सङ्ख्यकैः तोरणैः=वन्दनवारैः परिमण्डितानां, प्रतिरथं द्वात्रिंशद्वन्दनवाराणि
सन्तीति भावः । ‘सकंकडवडेंसगाणं’ सकङ्कटाऽवतंसकानाम्-कङ्कटाः=कवचाः, अव-
तंसकाः=शिरस्त्राणानि ‘टोप’ इति प्रसिद्धाः, तैः युक्ताः सकङ्कटावतंसकाः तेषाम्-‘सचाव-
सर-पहरणा-वरण-भरिय-जुद्ध-सज्जानां’ सचाप-शर-प्रहरणा-ऽऽवरण-भृत-
युद्ध-सज्जानाम्-चापैः सहिताः शराः, सचापशराः प्रहरणानि=खड्गादीनि, आवरणानि=‘ढाल’

(आइण्ण-वर-तुरग-संपउत्ताणं) इनमें जो घोड़े जोतने में आये थे वे बहुत ही उत्तम
जाति के थे । (कुसल-नर-च्छेय-सारहि-सुसंपग्गहियाणं) इनके जो सारथी थे वे
अश्व-चालन क्रिया में विशेष निपुण थे । ये ही इन्हें चला रहे थे । (वत्तीस-तोरण-परि-
मंडियाणं) प्रत्येक रथों पर वत्तीस २ वन्दनवारें बंधी हुई थीं । (सकंकडवडेंसगाणं)
इनमें कवच और शिरस्त्राण-छोहे के टोप भी रखे हुए थे । (सचाव-सर-पहरणा-वरण-
भरिय-जुद्ध-सज्जानं) ये सब रथ चाप-धनुष, शर-बाण, प्रहरण-हथियार एवं आव-
रण-ढाल आदिकों से भरे हुए थे, अतः देखने वालों को ऐसे मादूम पड़ते थे कि मानो

तेमनां धोसरा णडुञ्ज मञ्जभूत तेमञ्ज गोण आकारनां उतां. (आइण्णवरतुरग-
संपउत्ताणं) तेमां जे घोडा जेडवाभां आव्या उता ते णडुञ्ज उत्तम जतिना
उता. (कुसल-वर-च्छेय-सारहि-सुसंपग्गहियाणं) तेना जे सारथी उता ते
अश्वसंयाजन क्रियाभां विशेष निपुण उता, तेओञ्ज तेमने चलावता उता.
(वत्तीस-तोरण-परिमंडियाणं) प्रत्येक रथोना उपर णत्रीस णत्रीस वंदनवारी
आंधी उती. (सकंकडवडेंसगाणं) तेमां कवच अने शिरस्त्राण-ढोढाना टोप पण्ण
राजेदां उतां. (स-चाव-सर-पहरणा-वरण-भरिय-जुद्ध-सज्जानं) ओ णधा
रथ चाप-धनुष, शर-आण्ण, प्रहरण-हथियार तेमञ्ज आवरण-ढाल आदिथी

રહાણં પુરઓ અહાણુપુઘ્વીણ સંપટ્ઠિયં । તયાણંતરં ચ ણં અસિ-
સત્તિ-કુંત-તોમર-સૂલ-લુલ-ભિંડિમાલ-ધણુ-પાણિ-સજ્જં પાયત્તાણી-
યં પુરઓ અહાણુપુઘ્વીણ સંપટ્ઠિયં ॥ સૂ૦ ૪૯ ॥

इति प्रसिद्धानि, तैर्भृताः, अतएव युद्धाय इव सज्जास्तेषां 'रहाणं' रथानाम् 'अट्टसयं' अष्टश-
तम्=अष्टाधिकशतं 'पुरओ अहाणुपुव्वीण संपट्ठियं' पुरतो यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितम् ।
अथ पदातिसैन्यवर्णनमाह- 'तयाणंतरं च णं' इत्यादि । तदनन्तरञ्च खलु 'असि-सत्ति-
कुंत-तोमर-सूल-लुल-भिंडिमाल-धणु-पाणि-सज्जं' असि-शक्ति-कुन्त-तोमर-
शूल-लकुट-भिन्दिपाल-धनुः-पाणि-सज्जम्-असिः=खड्गः, शक्तिः=अस्त्रविशेषः, कुन्तः=
भलः, तोमरः=बाणविशेषः, शूलम्=एकशूलम्-'बरछी' इति प्रसिद्धम्, 'लुल' लकु-
टः=यष्टिः, 'भिंडिमाल' भिन्दिपालः-अस्त्रविशेषः, 'गोफग' इति भाषाप्रसिद्धः, धनुः-
प्रसिद्धम्, एतानि पाणौ हस्ते यस्य तत् तथा, तच्च तत् सज्जं चेति समासः, तादृशम्,
'पायत्ताणीयं' पदात्यनीकम्=पदातिसैन्यम्, 'पुरओ अहाणुपुव्वीण संपट्ठियं' पुरतो
यथानुपूर्व्या सम्प्रस्थितम् ॥ सू० ४९ ॥

ये युद्ध के मैदान में जाने के लिये ही तैयार किये गये हैं; ऐसे (रहाणं अट्टसयं) १०८
एक सौ आठ रथ (पुरओ) आगे २ (अहाणुपुव्वीण) यथाक्रम से (संपट्ठियं) चलने लगे ।
(तयाणंतरं च णं असि-सत्ति-कुंत-तोमर-सूल-लुल-भिंडिमाल-धणु-पाणि-सज्जं
पायत्ताणीयं पुरओ अहाणुपुव्वीण संपट्ठियं) इनके आगे २ असि-तलवार, शक्ति-अस्त्रविशेष,
कुन्त-भाला, तोमर-अस्त्रविशेष, शूल-बरछी, लकुट-लाठियाँ, भिंडिमाल-भिन्दिपाल-गोफग
और धनुष ये सब इनके हाथों में थे, ऐसे पदातिसैन्य अनुक्रम से चलने लगे ॥सू. ४९॥

ભરેલા હતા. આથી બેનારને એમજ લાગે કે બાણે યુદ્ધના મેદાનમાં જવા
માટે જ તૈયાર કર્યા છે. એવા (રહાણં અટ્ટસયં) એકસો આઠ ૧૦૮ રથ
(પુરઓ) આગળ આગળ (અહાણુપુઘ્વીણ) યથાક્રમથી (સંપટ્ઠિયં) ચાલવા લાગ્યા.
(તયાણંતરં ચ ણં અસિ-સત્તિ-કુંત-તોમર-સૂલ-લુલ-ભિંડિમાલ-ધણુ-પાણિ-સજ્જં
પાયત્તાણીયં પુરઓ અહાણુપુઘ્વીણ સંપટ્ઠિયં) તેમની આગળ આગળ અસિ-તલ-
વાર, શક્તિ-અસ્ત્રવિશેષ, કુંત ભાલા, તોમર-અસ્ત્રવિશેષ, શૂલ-બરછી, લકુટ-
લાકડીઓ, ભિંડિમાલ-ભિંદિપાલ-ગોફગ અને ધનુષ એ બધાં બેના હાથોમાં
હતાં એવા પદાતિસૈન્ય અનુક્રમે ચાલવા લાગ્યા. (સૂ. ૪૯.)

मूलम्—तए णं से कूणिण राया हारोत्थय-सुकय-
रइय-वच्छे कुंडलउज्जोइयाणणे मउडदित्तसिरए णरसीहे णरवई
णरिंदे णरवसहे मणुयरायवसहकप्पे अब्भहियं रायतेयलच्छी-

टीका—‘तए णं से’ इत्यादि । ‘तए णं’ ततस्तदनन्तरम्=अष्टमङ्गलशृङ्गा-
रिहयगजादिप्रस्थानानन्तरं खलु ‘से कूणिण राया’ स कूणिको राजा ‘हारोत्थय-
सुकय-रइय-वच्छे’ हारावस्तुत्-सुकृत-रतिद-वक्षाः-हारावस्तुतं=हारप्रावृतं, सुकृतं=
सुरचितम् अतएव रतिदम्-प्रीतिप्रदं वक्षः=हृदयदेशो यस्य स तथा, ‘कुंडल-उज्जोइया-
णणे’ कुण्डलोद्द्योतिताऽऽननः, मुकुटदीप्तिशिरस्कः, ‘णरसीहे’ नरसिंहो, ‘णरवई’ नरपतिः,
‘णरिंदे’ नरेन्द्रः ‘णरवसहे’ नरवृषभः-अङ्गीकृतकार्यभारनिर्वाहकत्वात् । ‘मणुय-

‘तए णं से कूणिण राया’ इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (से कूणिण राया) वह कूणिक राजा कि जिनका वक्षस्थल
(हारोत्थय-सुकय-रइय-वच्छे) हारों से व्याप्त, सुरचित और रतिद-प्रीतिप्रद था, (कुंडल-
उज्जोइया-णणे) जिनका मुख कुंडलों की आभा से अधिक दीप्तिमत् हो रहा था । (मउड-
दित्त-सिरए) मुकुट धारण करने से जिनका मस्तक सुशोभित हो रहा था । (णरसीहे)
जो मनुष्यों में सिंह जैसे थे । (णरवई) जो मनुष्यों के स्वामी थे; क्यों कि हर तरह से
उनका पालन-पोषण करते थे । इसीलिये (णरिंदे) जो नरों में इन्द्र जैसे थे । (णरवसहे)
जो नरों में वृषभसमान थे, क्यों कि ये अपने ऊपर जो कार्य लेते थे उसे अवश्यमेव पूरा
करते थे । (मणुयराय-वसह-कप्पे) मानवों के राजाओं के भी जो राजा-चक्रवर्ती-जैसे

‘तए णं से कूणिण राया’ इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से कूणिण राया) ते इच्छिउ राजा के जेनुं वक्षः-
स्थल (छाती) (हारोत्थय-सुकय-रइय-वच्छे) हारोथी व्याप्त, सुरचित अने
प्रीतिप्रद हुतुं. (कुंडल-उज्जोइया-णणे) जेमनुं मुख कुंडलोनी आला-प्रकाश
वडे अधिक दीप्तिमत्पन्न थछ रह्युं हुतुं. (मउड-दित्त-सिरए) मुकुट धारण
करवाथी जेनुं मस्तक सुशोभित थछ रह्युं हुतुं. (णरसीहे) जे मनुष्योमां
सिंह जेवा हुता, (णरवई) जे मनुष्योना स्वामी हुता, जेभडे हर तरेहुथी
तेमनुं पालन-पोषण करता हुता. आथी (णरिंदे) तेओ नरोनां इन्द्र जेवा
हुता. (णरवसहे) जे पुरुषोमां वृषभ-समान हुता, जेभडे तेओ पोताना
उपर जे कार्य लेता हुता ते अवश्यमेव पूरुं करता हुता. (मणुयराय-वसह-

ए दिप्पमाणे हत्थिक्खंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरि-
ज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं २ वेसमणे चेव णरवई
अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती हय-गय-पवरजोहक-

राय-वसहकप्पे' मनुजराज-वृषभ-कल्पः-मनुराजानां=राज्ञां वृषभा=नायकाश्चक्रवर्तिनः
तैस्तुल्यः-मनाडन्यूनतया समानः, उत्तरभरतार्थस्यापि साधने प्रवृत्तत्वादिति भावः । 'अब्भ-
हियं' अभ्यधिकं-यथा स्यात् तथा-'राय-तेय-लच्छीए' राजतेजोलक्ष्या, 'दिप्प-
माणे' दीप्यमानः, 'हत्थि-क्खंध-वर-गए' हस्ति-स्कन्ध-वर-गतः, 'सकोरंट-
मल्ल-दामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं' सकोरंट-माल्य-दाम्ना छत्रेण ध्रियमाणेन,
'सेय-वर-चामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं उद्धुव्वमाणीहिं' श्वेतवरचामरैरुद्धूयमानैरुद्धूय-
मानैः शोभमानः 'वेसमणे चेव' वैश्रवण इव=लोकपालः कुबेर इव 'णरवई' नरपतिः,
'अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए' अमरपतिसन्निभया=इन्द्रसदृश्या ऋद्ध्या, 'पहियकित्ती'

थे । 'चक्रवर्ती जैसे थे'-इसका मतलब यह है कि उत्तर भरतार्थ के साधन में प्रवृत्त होने
से चक्रवर्ती जैसे थे । (अब्भहियं रायतेयलच्छीए दिप्पमाणे) जो राजसी तेज से और
राजलक्ष्मी से अधिक दीप्यमान थे । ऐसे ये कृषिक राजा (हत्थि-क्खंध-वर-गए) जब
हाथी पर बैठे तब इन्होंने अपने ऊपर (सकोरंट-मल्ल-दामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं)
कोरंट पुष्पों की मालाओं से युक्त छत्र धारण किया, और इनके ऊपर (सेय-वर-चामराहिं
उद्धुव्वमाणीहिं २) सफेद चमर ढुलने लगे । इनसे ये (णरवई) राजा (वेसमणे चेव)
कुबेर के समान दिखने लगे । तथा (अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए पहियकित्ती) इन्द्र के

कप्पे) भाणुसोना राज्ञोना पणु राज्ञ-चक्रवर्ती' जेवा हुता. 'चक्रवर्ती'
जेवा हुता'-जेनी मतलब जे छे के उत्तर भरताधने स्वाधीन करवाभां
प्रवृत्त होवाथी चक्रवर्ती' जेवा हुता. (अब्भहियं रायतेयलच्छीए दिप्पमाणे)
जेजो राजसा तेजथी तथा राजलक्ष्मीथी अधिक देदीप्यमान हुता. जेवा
आ कृषिक राज (हत्थि-क्खंध-वरगए) ज्यारे हुथी उपर जेहा त्यारे तेभणु
पोताना उपर (सकोरंट-मल्ल-दामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं) कोरंटपुष्पोनी
भाजाओथी युक्त छत्र धारणु कथुं, जेने तेभना उपर (सेयवरचामराहिं
उद्धुव्वमाणीहिं २) सफेद चामर ढोणावा लाग्यां. तेनाथी तेजो (णरवई) राज
(वेसमणे चेव) कुबेरना जेवा देखावा लाग्या. तथा (अमरवइसण्णिभाए इड्ढीए
पहियकित्ती) इन्द्रना जेवी ऋद्धिना कारणुथी विज्यात कीर्तीवाजा तेजो (हय-

लियाए चाउरंगिणीए सेणाए समणुगम्ममाणमग्गे जेणेव पुण्ण-
भद्दे चेइए तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० ५० ॥

मूलम्—तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स

प्रथितकीर्तिः, 'हय-गय-पवर-जोह-कलियाए चाउरंगिणीए सेणाए' हयगजरथ-
प्रवरयोधकलितया चतुरङ्गिण्या सेनया-हयैर्गजै रथैः प्रवरयोधै रथभिर्महारथिभिः कलितया=
युक्तया, चत्वारि अङ्गानि यस्यां सा चतुरङ्गिणी तया-हयगजरथपदातिरूपैश्चतुर्भिरङ्गैः समे-
तया सेनया 'समणुगम्ममाणमग्गे' समनुगम्यमानमार्गः-समनुगम्यमानो मार्गो यस्य
स तथा, 'जेणेव पुण्णभद्दे चेइए' यत्रैव पूर्णभद्रं चैत्यं 'तेणेव' तत्रैव 'पहारेत्थ'
प्रधारितवान् 'गमणाए' गमनाय=पूर्णभद्रोद्यानं गन्तुं मनसि निश्चयं कृतवान् ॥सू० ५०॥

'तए णं' इत्यादि । 'तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स
पुरओ' ततः खलु तस्य कूणिकस्य राज्ञो भंभसारपुत्रस्य पुरतः 'महं' महान्तः=उच्चाः,
'आसा' अश्वाः=तुरङ्गमाः, 'आसवरा' अश्ववरा-जात्या शृङ्गारेण च वराः=श्रेष्ठाः अश्वाः

समान ऋद्धि के कारण विख्यात कीर्तिवाले ये (हय-गय-पवरजोह-कलियाए चाउरंगि-
णीए सेणाए समणुगम्ममाणमग्गे जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव पहारेत्थ गमणाए)
घोड़ा, हाथी और श्रेष्ठ योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना से युक्त हो जहाँ पूर्णभद्र नामका
उद्यान था उस ओर चले ॥ सू. ५० ॥

'तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो' इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स) भंभसार के
पुत्र उन कूणिक राजा के (पुरओ) आगे आगे (महं आसा) बड़े उँचे २ घोड़े एवं
(आसवरा) जाति और शृंगार से उत्तम घोड़े चलने लगे । (उभओ पारिं णागा णाग-

गय-पवरजोह-कलियाए चाउरंगिणीए सेणाए समणुगम्ममाणमग्गे जेणेव पुण्णभद्दे
चेइए तेणेव पहारेत्थ गमणाए) घोड़ा, हाथी अने श्रेष्ठ योद्धाओथी युक्त
चतुरंगिणी सेनाथी युक्त थछ जयां पूर्णभद्र नामनुं उद्यान हुतुं ते तरइ
याइया (सू. ५०)

'तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो' इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स) भंभसारना
पुत्र ते कूणिक राजानी (पुरओ) आगण आगण (महं आसा) अहु उँचा
उँचा घोड़ा तेभज (आसवरा) जाति तथा शङ्खगारथी उत्तम घोड़ा याइया

पुरओ महं आसा आसवरा उभओ पासिं णागा णागवरा
पिट्ठओ रहसंगेल्ली ॥ सू० ५१ ॥

मूलम्—तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते अब्भु-
गयभिंगारे पग्गहियतालयंटे ऊसविय-सेय-च्छत्ते पवीइय-

संप्रस्थिताः, 'उभओ पासिं' उभयोः पार्श्वयोः=वामदक्षिणयोः 'णागा' नागाः=महान्तो
गजाः 'णागवरा' नागवराः=जात्या शृङ्गारेण च वराः=श्रेष्ठा गजाः संप्रस्थिताः, तथा—
'पिट्ठओ' पृष्ठतः='रहसंगेल्ली' रथ-संगेल्ली=रथसमूहः संप्रस्थितः । 'संगेल्ली' इति
समूहवाचको देशीयः शब्दः ॥ सू० ५१ ॥

टोका—'तए णं से' इत्यादि । 'तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते'
ततः खलु स कूणिको राजा भंभसारपुत्रः 'अब्भुगयभिंगारे' अभ्युद्गतभृङ्गारः—अभ्युद्ग-
तः=पुरतः प्रस्थितः भृङ्गारः='झारी' इति प्रसिद्धं जलपात्रं यस्य स तथा 'पग्गहिय-
तालयंटे' प्रगृहीततालवृन्तः—प्रगृहीतं तालवृन्तं यस्मै स प्रगृहीततालवृन्तः । 'ऊसविय-
सेय-च्छत्ते' उच्छ्रितश्चेतच्छत्रः—'ऊसविय' उच्छ्रितम्=उपरि वितानितं श्वेतं=धवलं छत्रं

वरा) तथा उनके दोनों तरफ बड़े २ हाथी एवं जाति से और शृंगार से श्रेष्ठ गजराज चलने
लगे, और (पिट्ठओ) उनके पीछे २ (रहसंगेल्ली) रथका समूह चला ॥ ५१ ॥

‘तए णं से कूणिए राया’ इत्यादि ।

(तए णं) उसके बाद (से कूणिए राया भंभसारपुत्ते) भंभसार के पुत्र वे कूणिक
राजा कि, जिनके आगे (अब्भुगयभिंगारे) जत्र से मरी हुई झारियाँ थीं, (पग्गहियतालयंटे)
जिनके दोनों ओर पवनपंखे हो रहे थे, (ऊसविय-सेय-छत्ते) जिनके ऊपर श्वेत छत्र धरा हुआ
था, तथा (पवीइय-वाल-वीयगीए) जिनके ऊपर वाल-व्यजन अर्थात् चमर ढोरा जा रहा था,

लाज्या. (उभओ पासिं णागा णागवरा) तथा तेमनी अन्ने तरइ भोटा भोटा
हुअथी तेमअ जतिथी शणुगारथी श्रेष्ठ गजराज आलवा लाज्या. तथा (पिट्ठओ)
तेमनी पाछण पाछण (रहसंगेल्ली) रथनो समूह आदथो. (सू. ५१)

“तए णं से कूणिए राया” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से कूणिए राया भंभसारपुत्ते) भंभसारना पुत्र ते
कूणिक राजा के लेना आगण (अब्भुगयभिंगारे) जलथी लरेली आरीओ
हुती, (पग्गहियतालयंटे) लेनी अन्ने आणुओ पवनपंखा थर्ध रह्या हुता,
(ऊसविय-सेय-छत्ते) लेना उपर श्वेत छत्र धरेहुं हुतुं, तथा (पवीइयवालवीय-

वाल-वीयणीए सव्विड्ढीए सव्वज्जुईए सव्वबलेणं सव्वसमु-
दएणं सव्वादरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं
सव्व-पुप्फ-गंध-मल्ला-लंकारेणं सव्व-तुडिय-सद्द-सण्णिणा-

यस्मै स तथा । 'पवीइय-वाल-वीयणीए' प्रवीजित-वाल-व्यजनिकः-प्रवीजिता=
प्रचालिता वालव्यजनिका यस्मै स तथा, 'सव्विड्ढीए' सर्वद्वर्चा=सर्वया ऋद्ध्या ।
'सव्वज्जुईए' सर्वद्यत्या=सकलवस्त्राभरणानां प्रभया, 'सव्वबलेणं' सर्वबलेन=सर्व-
सैन्येन, 'सव्वसमुदएणं' सर्वसमुदयेन = सर्वपरिवारादिसमुदायेन, 'सव्वादरेणं'
सव्वादरेण=सर्वप्रयत्नेन, 'सव्वविभूईए' सर्वविभूत्या=सर्ववैभवेन, 'सव्वविभूसाए'
सर्वविभूषया = सर्वविधनेपथ्यादिधारणेन, 'सव्वसंभमेणं' सर्वसम्भ्रमेण = सर्वेण औत्सु-
क्येन=स्नेहमयेन चाञ्चल्येनेत्यर्थः, 'सव्व-पुप्फ-गंध-मल्ला-लंकारेण' सर्व-पुष्प-
गन्ध-माल्या-लङ्कारेण, 'सव्व-तुडिय-सद्द-सण्णिणाएणं' सर्व-त्रुटित-शब्द-संनि-
नादेन=सर्वविधानां त्रुटितानां=वाद्यानां यो शब्दः तस्य संनिनादेन=प्रतिध्वनिना । 'महया

ऐसे वे कूणिक राजा (सव्विड्ढीए) अपनी समस्त राज्य ऋद्धिसे (सव्वज्जुईए) समस्त वस्त्र और
आभरणों की प्रभासे (सव्वबलेणं) अपनी समस्त सेनाओं से (सव्वसमुदएणं) अपने समस्त परि-
जनों से, (सव्वादरेणं) आदरसत्काररूप सभी प्रयत्नों से (सव्वविभूईए) अपने समस्त ऐश्वर्य
से (सव्वविभूसाए) सभी प्रकार के वस्त्राभरणों की शोभा से, (सव्वसंभमेणं) भक्तिजनित
अत्यधिक उत्सुकता से (सव्व-पुप्फ-गंध-मल्ला-लंकारेणं) सब तरह के पुष्पों से, सब
तरह के गन्ध द्रव्यों से, सब तरह की मालाओं से, एवं सब तरह के अलंकारों से (सव्व-
तुडिय-सद्द-सण्णिणाएणं) सभी प्रकार के वादित्तों की मधुर ध्वनि से, तथा-(महया

णीए) जेना उपर वालव्यजन अर्थात् यमर ढोणार्ध रद्यां हुतां, जेवा ते
कूणिक राजा (सव्विड्ढीए) पोतानी समस्त राज्य ऋद्धिथी, (सव्वज्जुईए) सम-
स्त वस्त्र तथा आभरणोना प्रभाव वडे, (सव्वबलेणं) पोतानी समस्त सेनाओ
वडे, (सव्वसमुदएणं) पोताना समस्त परिजनो वडे, (सव्वादरेणं) आदर
सत्कार रूप सधणा प्रयत्नो वडे (सव्वविभूईए) पोतानां समस्त ऐश्वर्य वडे,
(सव्वविभूसाए) तमाम प्रकारनां वस्त्राभरणोनी शोभा वडे, (सव्वसंभमेणं)
भक्तिजनित अत्यंत उत्सुकता वडे, (सव्व-पुप्फ-गंध-मल्ला-लंकारेणं) सर्व
प्रकारनां पुष्पो वडे, सर्व प्रकारना गंधद्रव्यो वडे, सर्व प्रकारनी भाणाओ
वडे तेभज सर्व प्रकारना अलंकारो वडे, (सव्व-तुडिय-सद्द-सण्णिणाएणं) सर्व
प्रकारनां वादित्तोना मधुर ध्वनि वडे, तथा (महया इड्ढीए) पोतानी विशिष्ट

एणं महया इड्ढीए महया जुईए महया बलेणं महया समुद-
 एणं महया वर-तुडिय-जमगसमग-प्पवाइएणं संख-पणव-
 पडह-भेरि-झल्लरि-खरमुहि-हुडुक्क-मुरय-मुअंग-दुंदुहि-णि-
 ग्घोस-णाइय-रवेणं चंपाए णयरीए मज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छइ
 ॥ सू० ५२ ॥

इड्ढीए 'महत्या ऋद्धि' 'महत्या जुईए' महत्या द्युत्या, 'महत्या बलेणं' महता बलेन-
 विपुलसैन्येन, 'महत्या समुदएणं' महता समुदायेन=समूहेन । 'महत्या वर-तुडिय-
 जमग-समग-प्पवाइएणं' महता वर-त्रुटित-यमकसमक-प्रवादितेन-महता=बृहता,
 वरत्रुटितानां = श्रेष्ठविविधवाद्यानां-यमकसमकं = युगपत्प्रवादितेन 'संख-पणव-पडह-भे-
 रि-झल्लरि-खरमुहि-हुडुक्क-मुरय-मुअंग-दुंदुहि-णिग्घोस-णाइय-रवेणं' शङ्ख-
 पणव-पटह-भेरी-झल्लरी-खरमुखी-हुडुक्क-मुरज-मृदङ्ग-दुन्दुभि-निर्घोष-नादित-रवेण-
 शङ्खादिदुन्दुभ्यन्तानां वाद्यविशेषाणां निर्घोषस्य नादितरवेण=प्रतिध्वनिना चम्पाया नगर्या
 मध्यमध्येन 'णिग्गच्छइ' निर्गच्छति ॥ सू. ५२ ॥

इड्ढीए) अपनी विशिष्ट ऋद्धि से, (महया जुईए) अपनी विशिष्ट द्युति से, (महया बलेणं)
 अपनी विशिष्ट सेना से (महया समुदएणं) अपने विशिष्ट परिजनों से (महया-वर-तुडिय-
 जमग-समग-पवाइएणं) एक ही साथ बजने वाले बाजों की मनोहर महाध्वनि से, तथा
 (संख-पणव-पडह-भेरि-झल्लरि-खरमुहि-हुडुक्क-मुरय-मुअंग-दुंदुहि-णिग्घोस-
 णाइय-रवेणं) शंख, पणव, पटह, भेरी, झल्लरी, खरमुखी, हुडुक्क, मुरज, मृदङ्ग एवं
 दुन्दुभि के निर्घोष की प्रतिध्वनि से शोभित होते हुए (चंपाए णयरीए मज्झंमज्जेणं
 णिग्गच्छइ) चम्पा नगरी के बीचो-बीच से होकर चले ॥ सू. ५२ ॥

ऋद्धि वडे, (महया जुईए) पोतानी विशिष्ट द्युति वडे, (महया बलेणं) पोतानी
 विशिष्ट सेना वडे, (महया समुदएणं) पोताना विशिष्ट परिजनो वडे, (महया
 वर-तुडिय-जमगसमग-पवाइएणं) ओकेसाथे वगाउतां वाजाना मनोहर भडा-
 ध्वनि वडे, तथा (संख-पणव-पडह-भेरी-झल्लरि-खरमुहि-हुडुक्क-मुरय-मुअंग-दुंदुहि-
 णिग्घोस-णाइय-रवेणं) शंख, पणव, पटह, भेरी, झल्लरी, खरमुभी, हुडुक्क,
 मुरज, मृदङ्ग, तेमज्ज दुंदुलिना निर्घोषनी प्रतिध्वनि वडे शोभता (चंपाए णयरीए
 मज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छइ) चंपा नगरीना वन्थो-वन्थ थधने चाल्या. (सू. ५२)

मूलम्—तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो चंपाए णय-
रीए मज्झंमज्झेणं निगच्छमाणस्स बहवे अत्थत्थिया कामत्थि-
या भोगत्थिया लाभत्थिया किव्विसिया कारोडिया कारवाहिया
संखिया चक्किया नंगलिया मुहमंगलिया वद्धमाणा पूसमाणया

टीका—‘तए णं’ इत्यादि । ‘तए णं’ ततः=चम्पानगरीमध्येन निर्गमनाऽनन्तरं
खलु ‘तस्स कूणियस्स रण्णो’ तस्य कूणिकस्य राज्ञः, ‘चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं
निगच्छमाणस्स’ चम्पाया नगर्या मध्यमध्येन निर्गच्छतः ‘बहवे’ बहवः=अनेके ‘अत्थ-
त्थिया’ अर्थाऽर्थिकाः=धनार्थिकाः, ‘कामत्थिया’ कामार्थिकाः=सुखार्थिकाः । ‘भोग-
त्थिया’ भोगार्थिकाः, ‘लाभत्थिया’ लाभार्थिकाः=लाभाऽभिलाषिणः, ‘किव्विसिया’
किव्विषिकाः=भण्डचेष्टाकारिणः—हास्यकरा इत्यर्थः, ‘कारोडिया’ कापालिकाः,
‘कारवाहिया’ कारबाधिताः—कर एव कारः, तेन बाधिताः=राजकरपीडिताः,
‘संखिया’ शाङ्खिकाः=शङ्खवादकाः ‘चक्किया’ चाक्रिकाः=चक्रधारकाः ‘नंगलिया’

‘तए णं तस्स कूणियस्स’ इत्यादि ।

(तए णं) उसके बाद (तस्स कूणियस्स रण्णो) उस कूणिक राजा के (चंपाए
णयरीए मज्झंमज्झेणं) चंपा नगरी के मध्यभाग से होकर निकलते समय (बहवे
अत्थत्थिया कामत्थिया) अनेक धनार्थियों ने—सुखार्थियों ने—(भोगत्थिया लाभत्थिया)
अनेक भोगार्थियों ने, अनेक लाभार्थियों ने, (किव्विसिया) भण्डचेष्टा करने वालों ने—हँसी-
मजाक करने वालों ने, (कारोडिया) अनेक कापालिकों ने—एक प्रकार के भिक्षुकों ने,
(कारवाहिया) अनेक राजकरपीडितों ने, (संखिया) अनेक शंख बजाने वालों ने (चक्किया)
अनेक चक्रधारियों ने, (नंगलिया) अनेक कृषकों ने, (मुहमंगलिया) अनेक शुभाशीर्वाद

‘तए णं तस्स कूणियस्स’ इत्यादि.

(तए णं) त्थार ५३ी (तस्स कूणियस्स रण्णो) ते कूणिक राजाना (चंपाए
णयरीए मज्झंमज्झेणं) चंपा नगरीना मध्यभागमांथी नीकणती वण्णते
(बहवे अत्थत्थिया कामत्थिया) अनेक धनार्थिओओ, अनेक कामार्थिओओ—
सुखार्थिओओ (भोगत्थिया लाभत्थिया) अनेक भोगार्थिओओ, अनेक लाभ-
ार्थिओओ, (किव्विसिया) भण्डचेष्टा करवावाणओओ—हंसी भण्ड करवावाणओओ,
(कारोडिया) अनेक कापालिकेओओ—एक प्रकारना भिक्षुओओ, (कारवाहिया) अनेक
राजकरपीडितेओओ, (संखिया) अनेक शंख अणववावाणओओ, (चक्किया)

खंडियगणा ताहिं इट्टाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं
मणाभिरामाहिं हिययगमणिज्जाहिं वग्गूहिं जय-विजय-मंगल-
सएहिं अणवरयं अभिणंदंता य अभित्थुणंता य एवं वयासी-

लाङ्गलिकाः=कर्षकाः 'मुहमंगलिया' मुखमङ्गलिकाः—मुखे मङ्गलं येषामस्ति ते मुखमङ्ग-
लिकाः=शुभवचनवादकाः, 'वद्धमाणा' वर्द्धमानाः=स्कन्धेष्वारोपिताः पुरुषाः, 'पूसमा-
णवा' पुष्यमानवाः=मागधाः, 'खंडियगणा' खण्डिकगणाः=छात्रसमुदायाः । एते सर्वे
'ताहिं' ताभिः=विवक्षिताभिः, 'इट्टाहिं' इष्टाभिर्वाञ्छिताभिः, 'कंताहिं' कान्ताभिः-
कमनीयाभिः, 'पियाहिं' प्रियाभिः, 'मणुण्णाहिं' मनोज्ञाभिः=सुन्दरतया मनोऽनुवू-
लाभिः, 'मणामाहिं' मनोऽमाभिः—मनसा अम्यन्ते=गम्यन्ते इति मनोऽमास्ताभिः—
मनसाऽवगमनीयाभिः—हृदयाह्लादकत्वात्; 'मणाभिरामाहि' मनोऽभिरामाभिः, 'वग्गूहि'
वाग्भिः, 'जय-विजय-मंगल-सएहिं' 'जय-विजय' इत्यादिभिर्मङ्गलकारकवचन-
शतैः 'अणवरयं' अनवरतम्, 'अभिणंदंता य' अभिनन्दयन्तश्च, 'अभित्थुणंता य'
अभिष्टुवन्तश्च ते पूर्वोक्ता अर्थाऽर्थिकादयो विरुदावलीपाठादिना राजानं प्रसादयन्तः
'एवं वयासी' एवमवादिषुः—'जय जय गंदा' जय जय नन्द ! नन्दयति=आनन्दयति

देने वालों ने, (वद्धमाणा) कंधों पर बैठे हुए अनेक पुरुषों ने, (पूसमाणया) विरुदावली
बोलने वालों ने (खंडियगणा) छात्रगणों ने (ताहिं इट्टाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं
मणामाहिं मणाभिरामाहिं) अपनी २ भाषा के अनुसार इष्ट, कमनीय, प्रिय, मनोज्ञ,
हृदयाह्लादक, मनोभिराम (हिययगमणिज्जाहिं) एवं हृदयंगम (वग्गूहिं) वचनों से
(जयविजयमंगलसएहिं) कि जिनमें जय और विजय के ही मंगलकारक शब्दों का
समावेश था, (अणवरयं) अच्छी तरह (अभिणंदंता य अभित्थुणंता य एवं वयासी)
अभिनंदन एवं स्तुति करते हुए इस प्रकार कहना प्रारंभ किया—(जय जय गंदा जय

અનેક ચક્રધારીઓએ (નંગલિયા) અનેક ખેડૂતોએ (મુહમંગલિયા) અનેક
શુભાશીર્વાદ દેવાવાળાઓએ (વદ્ધમાણા) કાંધ ઉપર બેઠેલા અનેક પુરૂષોએ
(પૂસમાણયા) ગિરદાવલી બોલનારાઓએ (ખંડિયગણા) છાત્રગણોએ (તાહિં
ઇટ્ટાહિં કંતાહિં પિયાહિં મણુણ્ણાહિં મણામાહિં મણાભિરામાહિં) પોતપોતાની ભાષા-
અનુસાર ઇષ્ટ, કમનીય, પ્રિય, મનોજ્ઞ, હૃદયાહ્લાદક, મનોભિરામ, (હિયય-
ગમણિજ્જાહિં) તેમજ હૃદયંગમ (વગ્ગૂહિં) વચનો દ્વારા (જય-વિજય-મંગલસએહિં)
કે જેમાં જય અને વિજયના મંગલકારક શબ્દોનો સમાવેશ હતો, (અણ-
વરયં) સારી રીતે (અભિણંદંતા ય અભિત્થુણંતા ય એવં વયાસી) અભિનંદન તેમજ

जय जय णंदा ! जय जय भद्रा ! भद्रं ते, अजियं जिणाहि,
जियं च पालेहि, जियमज्झे वसाहि । इंदो इव देवाणं, चमरो
इव असुराणं, धरणो इव नागाणं, चंदो इव ताराणं, भरहो इव

जनान्—इति नन्दः, तत्सम्बोधने हे नन्द ! जय जय=त्वं विजयवान् भव । ‘जय जय भद्रा’
जय जय भद्र ! हे भद्र ! =कल्याणस्वरूप ! विजयस्व । ‘भद्रं ते’ भद्रं तुभ्यमस्तु ।
‘अजियं जिणाहि’ अजितं जय=अजितं देशादिकं जय, ‘जियं च पालेहि’ जितं च
पालय, ‘जियमज्झे वसाहि’ जितमध्ये वस । तथा त्वम् ‘इंदो इव देवाणं’ इन्द्र इव
देवानाम्, ‘चमरो इव असुराणं’ चमर इव=एतन्नामक इन्द्र इव असुराणाम्=सुरवि-
रोधिनाम्, ‘धरणो इव नागाणं’ धरणेन्द्र इव नागानाम्, ‘चंदो इव ताराणं’ चन्द्र इव
ताराणाम्, ‘भरहो इव मणुयाणं’ भरत इव मनुजानाम्, ‘बहूइं वासाइं’ बहूनि वर्षाणि,
‘बहूइं वाससयाइं’ बहूनि वर्षशतानि, ‘बहूइं वाससहस्साइं’ बहूनि वर्षसहस्राणि,

जय भद्रा) हे नन्द—मनुष्यों को अपार आनंद प्रदान करनेवाले स्वामिन् ! आपकी जय
हो जय हो । हे भद्र !—कल्याणस्वरूप ! आप सदा विजयशाली रहें । (भद्रं ते) आपका
सदा कल्याण हो ! (अजियं जिणाहि) आपने जिसको नहीं जीता हो, उस पर विजय
करें । (जियं च पालेहि) जिसको आपने जीता है उसका पालन करें । (जियमज्झे
वसाहि) जीते हुए प्रदेश में सदा आपका निवास रहे ! (इंदो इव देवाणं, चमरो इव
असुराणं, धरणो इव नागाणं, चंदो इव ताराणं, भरहो इव मणुयाणं) देवों में इन्द्र
की तरह, असुरों में चमरेन्द्र की तरह, नागकुमारों में धरणेन्द्र की तरह, ताराओं में चंद्र
की तरह और मनुष्यों में भरत की तरह आप (बहूइं वासाइं बहूइं वाससयाइं बहूहिं

स्तुति करतां आ प्रकारे उडेवानो प्रारंभ कर्यो. (जय जय णंदा जय जय भद्रा)
हे नंद—मनुष्यों ने अपार आनंद आपवावाणा स्वामिन् ! आपनी जय हो
जय हो ! हे भद्र !—कल्याण स्वरूप ! आप सदा विजयशाली रहो ! (भद्रं ते)
आपनुं सदा कल्याण हो. (अजियं जिणाहि) आपे नेने न उत्था होय तेना
उपर विजय भेणवो. (जियं च पालेहि) नेने आपे उत्था होय तेमनुं
पालन करो. (जियमज्झे वसाहि) उत्तेला प्रदेशमां सदा आपने निवास रहे
(इंदो इव देवाणं, चमरो इव असुराणं, धरणो इव नागाणं, चंदो इव ताराणं, भरहो
इव मणुयाणं) देवोमां इंद्रनी नेम, असुरोमां चमरेन्द्रनी नेम, नागकुमारोमां
धरणेन्द्रनी नेम, ताराओमां चंद्रनी नेम अने मनुष्योमां भरतनी नेम,
आप (बहूइं वासाइं बहूइं वाससयाइं बहूइं वाससहस्साइं) धणुं वरसो सुधी,

मणुयाणं, बहूइं वासाइं बहूइं वाससयाइं बहूइं वाससहस्साइं
अणहसमग्गो हट्ठतुट्ठो परमाउं पालयाहि, इट्ठजणसंपडिवुडो
चंपाए णयरीए अण्णेसिं च बहूणं गामा-गर-णयर-खेड-

‘अणहसमग्गो’ अनघसमग्रः, अनघश्चासौ समग्रश्चेति विग्रहः, निष्पापः परिपूर्णसम्पत्तिपरि-
वारादिभिः सम्पन्नश्च, यद्वा-अनघेन=पुण्येन समग्रः=पूर्णः, यद्वा-न अघसमग्रः=अनघस-
मग्रः=सर्वविधपापरहित इत्यर्थः, ‘हट्ठतुट्ठो’ हट्ठतुष्टः सन् ‘पालयाहि’ पालय ‘परमाउं’
परमायुः-परमम्=उत्कृष्टम्-अपमृत्युवर्जितमखण्डितं पूर्णमायुः, तथा-‘इट्ठ-जण-संपरिवुडो’
इष्टजनसम्परिवृतः=परिवारादिसमेतः, चम्पाया नगर्याः, ‘अण्णेसिं च बहूणं गामा-
गर-गयर-खेड-कव्वड-दोणमुह-मडंब-पट्टण-आसम-निगम-संवाह - संनिवे-
साणं’ अन्येषाञ्च बहूनां ग्रामा-ऽऽकर-नगर-खेट-कर्वट-द्रोणमुख-मडम्ब-पट्टना-ऽऽश्र-
म-निगम-संवाह-संनिवेशानाम्-तत्र-ग्रामः=साधारणजनवासस्थानम्, आकरः=लवणा-
दिसम्भवस्थानम्, नगरम्=अविद्यमानकरम्, खेटं=धूलीप्राकारवेष्टितम्, कर्वटं=कुनगरम्,

वाससहस्साइं) बहुत वर्षों तक, बहुत सैकड़ों वर्षों तक, बहुत हजार वर्षों तक (अणहसम-
ग्गो) पूर्ण पुण्यशाली रहते हुए अथवा परिपूर्ण सम्पत्ति एवं परिवार आदि से संपन्न अथवा
सर्वविधपापरहित होते हुए (हट्ठतुट्ठो परमाउं पालयाहि) सदा आनंद और संतोष के
साथ अखण्ड आयु भोगवें । (इट्ठ-जण-संपडिवुडो चंपाए णयरीए अण्णेसिं च बहूणं
गामा-गर-णयर-खेड-कव्वड-दोणमुह-मडंब-पट्टण-आसम-निगम-संवाह-संनि-
वेसाणं आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्ठित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे
पालेमाणे) इष्ट जनों से परिवृत होते हुए आप चंपानगरी के तथा और भी बहुत से
गांवों के, आकर-लवण आदि के उत्पत्ति स्थानों के, नगरों-जिनमें कर नहीं लगता हो

धण्णा सेंडडा वरसो सुधी, धण्णा डुन्नर वरसो सुधी (अणहसमग्गो) पूर्ण
पुण्यशाली रहेंगे अथवा परिपूर्ण संपत्ति तेमञ्च परिवार आदिथी संपन्न
अथवा सर्वरीते पापरहित रहेंगे (हट्ठतुट्ठो परमाउं पालयाहि) सदा आनंद
तथा संतोषपूर्वक अर्थात् आयु भोगवें, (इट्ठजणसंपडिवुडो चंपाए णयरीए
अण्णेसिं च बहूणं गामा-गर-णयर-खेड-कव्वड-दोणमुह-मडंब-पट्टण-आसम-निगम-
संवाह-संनिवेसाणं आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्ठित्तं महत्तरगत्तं आणाईसर-
सेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे) इष्ट भाणुसो वडे परिवृत (विंटायेदा) आप
चंपानगरीना तथा भीन्नां पणु धण्णा गामेना, आडरेना-लवण आदिनां
उत्पत्तिस्थानेनां, नगरेना-जेमां कर न देवातो डोय ओवी वस्तीओना

**कव्वड-द्रोणमुह-मडंब-पट्टण-आसम-निगम-संवाह-संनिवेश-
साणं आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगतं आणा-ई-**

द्रोणमुखं=जलस्थलपथोपेतम्, मडम्बम्=अविद्यमानासनग्रामान्तरम्, 'पट्टणं' पत्तनम्=जलपथेन स्थलपथेन वा निर्गमप्रवेशौ यत्र तत् पत्तनम्, यथा क्राञ्चीतो मुम्बापुरी, यद्वा-जलपथेनैव निर्गमप्रवेशौ न तु स्थलपथेन, यथा-भारताद् आंग्लराजधानी 'इंग्लेण्ड' इति प्रसिद्धा; तत्, किञ्च-स्थलपथेनैव निर्गमप्रवेशौ न तु जलपथेन तत्, एतत् सर्वं पत्तनमुच्यते । यद्वा-यत्र सर्वं वस्तु लभ्यते तत् पत्तनम् । आश्रमः=तापसाद्यावासः, निगमः=वाणिज्यप्रधानं नगरम्, संवाहः=कृषीवलानां धान्यरक्षणस्थानम्, संनिवेशः=सार्थकटकादीनामुत्तरणस्थानम् । तेषाम्-'आहेवच्चं' आधिपत्यम्, 'पोरेवच्चं' पौरवृत्त्यम्=पुरोवर्तित्वम्-अग्रेसरत्वम् 'सा-

ऐसी बस्तियों के, खेटों के-धूलि के प्राकार से परिवेष्टित बस्तियों के, कर्वटों के-सामान्य नगरों के, द्रोणमुखों-जलमार्ग एवं स्थलमार्ग से युक्त प्रदेशों के, मडम्बों-जिनके आसपास दूसरे ग्राम नहीं होते हैं ऐसे प्रदेशों के, पत्तनों के-जहां जलपथ से भी एवं स्थलपथ से भी आना-जाना होता है; जैसे कराँची से बम्बई, अथवा जहां सिर्फ जलमार्ग से ही आना-जाना होता है; जैसे भारत से इङ्ग्लैण्ड, अथवा स्थलमार्ग से ही जहां आना-जाना होता है, ये सभी पत्तन कहलाते हैं । अथवा समस्त वस्तुओं का लाभ जहां होता है वह भी पत्तन है, ऐसे पत्तनों के, आश्रमों के अर्थात् तापस आदि के आवासों के, निगमों के अर्थात् व्यापारिक नगरों के, संवाहों के अर्थात् किसानों के धान्य आदि रखने के स्थलों के, तथा संनिवेशों के अर्थात् सार्थवाह और सेना आदि के उतरने के स्थानों के आधिपत्य को, पौरवृत्त्य को-अग्रेसरत्वको, स्वामित्व को-प्रभुत्व को, उनके भर्तृत्व को-पोषकत्व को, उनमें मह-

ખેટોના-ધૂળ (માટી)ના પ્રાકારથી પરિવેષ્ટિત વસ્તીઓના, કર્ણટોના-સામાન્ય નગરોના, દ્રોણમુખોના-જલમાર્ગ તેમજ સ્થલમાર્ગથી યુક્ત પ્રદેશોના, મડંબોના-જેની આસપાસ બીજાં ગામો ન હોય તેવા પ્રદેશોના, પત્તનોના-જ્યાં જલમાર્ગથી તેમજ સ્થલમાર્ગથી પણ આવી જઈ શકાતું હોય જેમકે કરાંચીથી મુંબઈ, અથવા જ્યાં માત્ર જલમાર્ગથી જ આવી જઈ શકાય, જેમકે ભારતથી ઇંગ્લેંડ, અથવા માત્ર સ્થલ માર્ગથી જ જ્યાં જઈ આવી શકાય તે બધાં પત્તન કહેવાય છે, અથવા સમસ્ત વસ્તુઓની પ્રાપ્તિ જ્યાં થઈ શકે તે પણ પત્તન છે. એવાં પત્તનોના, આશ્રમોના અર્થાત્ તાપસ આદિના આવાસોના, નિગમોના અર્થાત્ વ્યાપારિક નગરોના, સંવાહોના અર્થાત્ ખેડુતોનાં ધાન્ય આદિ રાખવાનાં સ્થળોના, તથા સંનિવેશોના અર્થાત્ સાર્થવાહ અને સેના આદિના ઉતરવાના સ્થાનોના આધિપત્યને, પૌરવૃત્ત્યને - અગ્રેસર-

सर-सेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महया-हय-नट-गीय-
वाइय-तंती-तल-ताल-तुडिय-घण-मुअंग-पडु-प्पवाइय-
खेणं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहराहिति कट्टु जय
जय सइं पउंजति ॥ सू. ५३ ॥

मित्तं भट्टित्तं महत्तरगतं' स्वामित्वं=प्रभुत्वम्, भर्तृत्वम्=पोषकत्वम्, महत्तरकत्वम्=नाय-
कत्वम्, 'आणा-ईसर-सेणावच्चं' आज्ञेश्वर-सेनापत्यम्-आज्ञेश्वरः=आज्ञाप्रदः सेनापतिषु
यः स आज्ञेश्वरसेनापतिः, यस्याज्ञामुपादाय सेनापतिः स्वकार्ये प्रवर्तते स इत्यर्थः, तस्य
भावस्तत्त्वं तत् 'कारेमाणे' कारयन् 'पालेमाणे' पालयन्=प्रजाजनान् रक्षन् 'महया-
हय-नट-गीय-वाइय-तंती-तल ताल-तुडिय-घण-मुअंग-पडु-प्पवाइय-खेणं'
महता अहत-नाट्य-गीत-वादित्र-तन्त्री-तल-ताल-तौर्यिक-घन-मृदङ्ग-पटु-प्रवादित-
खेण-महता=दीर्घेण, अहतम्=अव्यवच्छिन्नं यन्नाट्यं=नाटकम् तत्र यद् गीतं=गेयम्, वादित्रं=
वाद्यम्, तथा तन्त्री=वीणा, तलतालः=हस्तास्फोटाः, तौर्यिकम्=शेषवाद्यसमुदायः, घनमृ-
दङ्गः=मेघवद् ध्वनिकारको मर्दलः-एतत्सर्वं समुदितं पटुप्रवादितं=दक्षपुरुषंवादितं तस्य
खेण=नादेन-आनन्दित इति गम्यते, तथाभूतः सन् 'विउलाइं' विपुलानि=अत्यधि-

तरकत्वं-नायकत्व को, एवं आज्ञेश्वरसेनापत्य को-सेनापतियों के आज्ञाप्रदत्वरूप अधिकार को
(कारेमाणे पालेमाणे) कराते हुए, पालते हुए एवं सदा (महया-हय-नट-गीय-वाइय-
तंती-तलताल-तुडिय-घणमुअंग-पडु-प्पवाइयखेणं) व्यवधानरहित-अव्यवच्छिन्न-निर-
न्तर प्रवर्तित-नाटक में गाये गये गीतों के, चतुरपुरुषों द्वारा बजाये गये वादित्रों के, तथा तन्त्री-
वीणा के, तलताल=हस्तास्फोटशब्द-तालियों के, तौर्यिक-और भी अवशिष्ट बाजों के समूह
के, घनमृदङ्गों-मेघकी तरह गरजने वाले ढोलों के एवं मर्दलों के अविरल शब्दों से आनन्दित

त्वने, स्वामित्वने-प्रभुत्वने, भर्तृत्वने-पोषकत्वने, तेमां महत्तरकत्वने-नायक-
त्वने तेमञ्च आज्ञेश्वरसेनापत्यने - सेनापतियोना आज्ञाप्रदत्वइय अधिकारने
(कारेमाणे पालेमाणे) करावता अने पालता थका, तेमञ्च सदा (महया-हय-नट-
गीय-वाइय-तंती-तलताल-तुडिय-घणमुअंग-पडु-प्पवाइय-खेणं) व्यवधानरहित-
अव्यवच्छिन्न-निरन्तर प्रवर्तित-नाटकमां गवातां गीतोना तेमञ्च चतुर
पुरुषो द्वारा वगाडातां वादित्रोना, तथा तन्त्री-वीणोना, तलताल-तालियोना,
तौर्यिक-ओअं ओकीनां वाज्जोना समूहोना, घनमृदङ्गो-मेघनी पेडे गञ्ज-
नारा ढोलोना, तेमञ्च मर्दलोना अविरल शब्दो द्वारा आनन्दित थतां

મૂલમ્—તણ્ ણં સે કૂણિણરાયા મંભસારપુત્તે નયણ-
માલાસહસ્સેહિં પેચ્છિજ્જમાણે પેચ્છિજ્જમાણે, હિયયમાલાસહસ્સેહિં

કાનિ, ‘ભોગભોગાઈ’ ભોગભોગાન્ ‘મુંજમાણે વિહરાહિત્તિ કટ્ટુ’ મુજ્જન્ વિહર ઇતિ
કૃત્વા=ઇત્યુક્ત્વા, ‘જય જય સહં પડંજંતિ’ જયજયશબ્દં પ્રયુજ્જતે—જય જયેતિ
શબ્દાનુચારયન્તિ ॥ સૂ. ૫૩ ॥

ટીકા—‘તણ્ ણં સે’ ઇત્યાદિ । ‘તણ્ ણં સે કૂણિણ રાયા મંભસારપુત્તે’
તતઃ સ્વલ્પ સ કૂણિકો રાજા મંભસારપુત્રઃ ‘નયણમાલાસહસ્સેહિં પેચ્છિજ્જમાણે પેચ્છિ-
જ્જમાણે’ નયનમાલાસહસ્રૈઃ પ્રેક્ષ્યમાણઃ પ્રદ્યમાણઃ. બહુવિધદર્શકજનનયનપટ્ટિક્તિભિર્વારં
વારં નિરીક્ષ્યમાગઃ, ‘હિયયમાલાસહસ્સેહિં અભિગંદિજ્જમાણે અભિગંદિજ્જમાણે’
હૃદયમાલાસહસ્રૈરભિનન્દ્યમાનઃ અભિનન્દ્યમાનઃ—ધન્યોઽયં કૃતપુણ્યોઽયં સફલજન્માઽયમિત્યાદિ-

હોતે હુણ (વિઝલાઈં ભોગભોગાઈં મુંજમાણે વિહરાહિ) વિપુલ—અત્યધિક-ભોગભોગોં કો
ભોગતે હુણ અપના સમય નિર્વિઘ્નરીતિ સે વ્યતીત કરે, (ત્તિકટ્ટુ) ઇસ પ્રકાર (જય જય સહં
પડંજંતિ) વે પૂર્વોક્ત અર્થાભિલાષી આદિ સમસ્ત જય જય શબ્દ બોલતે થે ॥ સૂ. ૫૩ ॥

‘તણ્ ણં સે’ ઇત્યાદિ ।

(તણ્ ણં) ઇસકે બાદ (મંભસારપુત્તે) મંભસાર કે પુત્ર (સે) વે (કૂણિણ) કૂણિક
(રાયા) રાજા (નયણમાલાસહસ્સેહિં પેચ્છિજ્જમાણે પેચ્છિજ્જમાણે) હજારોં દર્શકજનોં
ક્રીં હજારોં નયનપંક્તિયોં દ્વારા નિરીક્ષિત હોતે હુણ, (હિયમાલાસહસ્સેહિં અભિગંદિજ્જમાણે
અભિગંદિજ્જમાણે) હજારોં મનુષ્યોં કે હૃદયસહસ્રોં દ્વારા અભિનંદિત હોતે હુણ, અર્થાત્—“ઇસ
રાજા કો ધન્યવાદ હૈ, યહ બડા પુણ્યશાલી હૈ, ઇસકા જન્મ સફલ હૈ” ઇત્યાદિ—રીતિ સે વારં-

(વિઝલાઈં ભોગભોગાઈં મુંજમાણે વિહરાહિ) વિપુલ—અતિશય ભોગભોગોને ભોગ-
વતા આપનો સમય નિર્વિઘ્ન રીતે વ્યતીત કરો. (ત્તિકટ્ટુ) આ પ્રકારે
(જય જય સહં પડંજંતિ) તે ઉપર કહેલા અર્થાભિલાષી આદિ બધા જય જય
શબ્દ બોલતા હતા. (સૂ. ૫૩)

‘તણ્ ણં સે’ ઇત્યાદિ.

(તણ્ ણં) ત્યાર પછી (મંભસારપુત્તે) મંભસારના પુત્ર (સે) તે (કૂણિણ)
કૂણિક (રાયા) રાજા (નયણમાલાસહસ્સેહિં પેચ્છિજ્જમાણે પેચ્છિજ્જમાણે) હજારો
ભેનારા લોકોની હજારો આંખો દ્વારા ભેવાતા, (હિયયમાલાસહસ્સેહિં અભિગંદિજ્જ-
માણે અભિગંદિજ્જમાણે) હજારો મનુષ્યોનાં હજારો હૃદય દ્વારા અભિનંદિત થતા,
અર્થાત્—“આ રાજાને ધન્યવાદ છે. તેઓ બહુ બહુ પુણ્યશાલી છે. તેમનો
જન્મ સફલ છે.” ઇત્યાદિ રીતથી વારંવાર હજારો લોકો દ્વારા હાર્દિક ભાવના-

अभिणंदिज्जमाणे अभिणंदिज्जमाणे, मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छि-
प्पमाणे विच्छिप्पमाणे, वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे
अभिथुव्वमाणे, कंति-दिव्व-सोहग्ग-गुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्ज-

रीत्याऽसकृत् सहस्राऽधिकजनहृदयैः स्तूयमानः, 'मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे
विच्छिप्पमाणे' मनोरथमालासहस्रैर्विस्पृश्यमानः विस्पृश्यमानः=हीनदीनरक्षणपूर्वकं
सकलमनोरथपूरकत्वात्-जनानां मनोरथमालासहस्रैर्मुहुर्मुहुः स्पृश्यमानः- 'नृपोऽयमस्माक-
मापदुद्धारकः पालकश्च, अतोऽयं शतं वर्षाणि जीवतु' इत्यादि मनोरथसहस्रविषयीभवन्-
इत्यर्थः । 'वयणमालासहस्सेहिं' वचनमालासहस्रैः-मञ्जुलोदारवचनरचनानिचयैः,
'अभिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे' अभिष्टूयमानः अभिष्टूयमानः, 'कंति-दिव्व-सोह-
ग्ग-गुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे' कान्तिदिव्यसौभाग्यगुणैः प्रार्थ्यमानः प्रार्थ्य-
मानः, कान्त्या=देहदीप्त्या, प्रशस्तसौभाग्यादिगुणैश्च हेतुना जनैः सातिशयम् अभिलष्यमाणः
अभिलष्यमाणः, 'बहूणं नरनारीसहस्साणं दाहिणहत्थेणं अंजलिमालासहस्साइं

बार सहस्राधिक जनों द्वारा हार्दिक भावना से स्तुत होते हुए, (मणोरहमालासहस्सेहिं
विच्छिप्पमाणे विच्छिप्पमाणे) हजारों जनों के मनोरथ सहस्ररूपी मालाओं द्वारा स्पृष्ट
होते हुए, अर्थात्-हीनदीन जनों के रक्षापूर्वक समस्त मनोरथों का पूरक होने से ये राजा
हम लोगों की आपत्ति से रक्षा करने वाले हैं, एवं पालक हैं, इसलिये ये सौ वर्ष तक जीवित
रहें" इस प्रकार से जनों के हजारों मनोरथ का पात्र होते हुए, (वयणमालासहस्सेहिं अ-
भिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे) मंजुल एवं उदार वचनों की रचनाओं द्वारा अभिष्टुत होते
हुए, (कंति-दिव्व-सोहग्ग-गुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे) देह की दीप्ति से एवं
दिव्य-असाधारण सौभाग्यादिक गुणों से जनों द्वारा प्रार्थित होते हुए, (बहूणं नरनारि-

पूर्वकं स्तुतिं कुरुता, (मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे विच्छिप्पमाणे) डुब्बरे
ढोडेना डुब्बरे मनोरथरूपी मालाओं द्वारा स्पर्शता, अर्थात् हीनदीनजनोनी
रक्षापूर्वकं समस्त मनोरथो परिपूर्णं कुरुता डोवाथी आ राज्ञ आभारी
आपत्तिथी रक्षा कुरुवावाणा छे तेमज्ज पालक छे, तेथी तेज्जो सो वर्षं सुधी
अवता रडे-आ प्रकारना डोडेना डुब्बरे मनोरथोने पात्र थता, (वयण-
मालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे) मंजुल तेमज्ज उदार वचनोनी
रचना द्वारा अलिष्टुत थता, (कंति-दिव्व-सोहग्ग-गुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे)
देहनी दीप्तिथी तेमज्ज दिव्य-असाधारण सौभाग्य आदिक गुणोथी डोडे द्वारा
प्रार्थित थता, (बहूणं नरनारिसहस्साणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छ-

माणे; बहूणं नरनारीसहस्साणं दाहिणहत्थेणं अंजलिमालासह-
स्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे, मंजुमंजुणा घोसेणं पडिबुज्झमाणे
पडिबुज्झमाणे, भवणपंतिसहस्साइं समइच्छमाणे समइच्छमाणे,
चंपाए नयरीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव
पुण्णभदे चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणस्स

पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे' बहूनां नरनारीसहस्राणां दक्षिणहस्तेनाञ्जलिमालासहस्राणि—
बहूनां नरनारीसहस्राणां यानि अञ्जलिमालासहस्राणि=राज्ञः सत्काराय विरचितानि मालारूपाणि
सहस्राणि प्राञ्जलिपुटानि तानि उत्थापितेन दक्षिणहस्तेन प्रतीच्छन् प्रतीच्छन्=वारंवारं स्वी-
कुर्वन्, 'मंजुमंजुणा घोसेणं पडिबुज्झमाणे पडिबुज्झमाणे' मञ्जुमञ्जुना घोषेण=अति-
कोमलेन शब्देन प्रतिबुध्यमानः २=अनुमोदयन् २, 'भवण-पंति-सहस्साइं समइच्छमाणे
समइच्छमाणे' भवनपङ्क्तिसहस्राणि समतिक्रामन् समतिक्रामन्, 'चंपाए नयरीए मज्झं-
मज्झेणं' चम्पाया नगर्या मध्यमध्येन, 'निग्गच्छइ' निर्गच्छति=निस्सरति, 'निग्गच्छित्ता'
निर्गत्य, 'समणस्स भगवओ महावीरस्स' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य 'अदूरसामंते'

सहस्साणं दाहिणहत्थेणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे) हजारों
नरनारियों की अंजलिरूप माला के सहस्रों को जो राजा के सत्कारार्थ विरचित हुई थीं; अपने
दक्षिण (दाहिने) हाथ से स्वीकृत करते हुए, (मंजुमंजुणा घोसेणं पडिबुज्झमाणे पडि-
बुज्झमाणे) अत्यन्त मधुर स्वर से उनलोगों के द्वारा किये हुए सत्कार-सम्मान का अनु-
मोदन करते हुए, (भवण-पंति-सहस्साइं समइच्छमाणे समइच्छमाणे) एवं हजारों
महलों की पंक्ति को पार करते हुए (चंपाए नयरीए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ) चंपा
नगरी के बीचमार्ग से होकर निकले, (निग्गच्छित्ता जेणेव पुण्णभदे चेइए तेणेव उवाग-

माणे) હબરો નરનારીઓના હાથની હબરો અંજલીરૂપ માલાઓ જે રાજાના
સત્કારાર્થ રચાઈ હતી તેનો પોતાના જમણા હાથથી સ્વીકાર કરતા, (મંજુ-
મંજુણા ઘોસેણં પડિબુજ્જમાણે પડિબુજ્જમાણે) અત્યંત મધુર સ્વરથી તે લોકો દ્વારા
કરેલા સત્કાર-સન્માનનું અનુમોદન કરતા, (ભવણપંતિસહસ્સાઈં સમइच्छमाणे
સમइच्छमाणે) તેમજ હબરો મહેલોની હારને પસાર કરતા (ચંપાએ નયરીએ
મજ્ઝંમજ્જેણં નિગ્ગચ્છइ) ચંપા નગરીના વચ્ચેના માર્ગમાં થઈને નીકળ્યા.
(નિગ્ગચ્છિત્તા જેણેવ પુણ્ણભદ્દે ચેइए તેણેવ ઉવાગચ્છइ) નીકળીને જ્યાં પૂર્ણભદ્ર

भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासइ, पासित्ता अभिसेक्कं हत्थिरयणं ठवेइ, ठवित्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता अवहट्ठु पंच रायकउहाइं, तंजहा—खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीयणिं; जेणेव समणे

अदूरसमीपे=नातिदूरे नातिसमीपे, किंचिद्दूरे इत्यर्थः । 'छत्ताईए तित्थयराइसेसे' छत्रादिकान् तीर्थकरातिशेषान्=तीर्थकरातिशयान् 'पासइ' पश्यति, 'पासित्ता' दृष्ट्वा, 'आभिसेक्कं हत्थिरयणं' आभिषेक्यं हस्तिरत्नम् 'ठवेइ, ठवित्ता' स्थापयति, स्थापयित्वा, 'आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ' आभिषेक्यात् हस्तिरत्नात् 'पच्चोरुहइ' प्रत्यवरोहति=अवतरति, 'पच्चोरुहित्ता' प्रत्यवरुह्य, 'अवहट्ठु पंच रायकउहाइं' अपहृत्य पञ्च राजककुदानि—त्यक्त्वा पञ्च राजचिह्नानि=राजाऽयमिति ज्ञापकानि चिह्नानि, 'तंजहा' तद्यथा—तानि चिह्नानि यथा—'खग्गं' खड्गम्, 'छत्तं' छत्रम्, 'उप्फेसं' मुकुटम् 'उप्फेस' इति

च्छइ) निकल कर जहाँ पूर्णभद्र उद्यान था वहाँ आये, (उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासइ) आकर उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर के न अतिसमीप और न अतिदूर—किन्तु कुछ ही दूर पर तीर्थ-करों के अतिशयस्वरूप छत्रादिकों को देखा, (पासित्ता आभिसेक्कं हत्थिरयणं ठवेइ) देखते ही उन्होंने अपने हाथी को खड़ा करवाया, (ठवित्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ) हाथी के खड़े होते ही वे उस हाथी से नीचे उतर, (पच्चोरुहित्ता अवहट्ठु पंच रायकउहाइं) नीचे उतरते ही उन्होंने इन पांच राजचिह्नों का परित्याग किया, (तं जहा) वे पांच राजचिह्न ये हैं—(खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीयणिं) खड्ग-

उद्यान इतुं त्यां आब्या, (उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासइ) आवीने तेओओ श्रमणु लगवान भडा-वीरथी ञहु इर नडि तेम ञहु समीप नडि, पणु जरा इरे, तीर्थं करेना अतिशय स्वरूप छत्रादिकेने जेयां, (पासित्ता आभिसेक्कं हत्थिरयणं ठवेइ) जेतांज तेओओ पोताना डथीने उलो रभाओ, (ठवित्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ) डथी उलो रडेतां ज तेओ ते डथी उपरथी नीचे उतर्या, (पच्चोरुहित्ता अवहट्ठु पंच रायकउहाइं) नीचे उतरीने ज तेओओ पांच राजचिह्नेने त्याग डये। (तंजहा) ते पांच राजचिह्ने आ छे—(खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीयणिं) ञङ्ग=तलवार, छत्र, उप्फेस=मुकुट, उद्यानत-

भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं
महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तंजहा—(१)
सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए, (२) अचित्ताणं दव्वाणं
अविओसरणयाए, (३) एगसाडियं उत्तरासंगकरणेणं, (४)

देशीयः शब्दः, 'वाहणाओ' उपानहौ 'वालवीयणि' वालव्यजनीम्—चामरम्, एतानि
त्यक्त्वा, 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः, 'तेणेव
उवागच्छइ, उवागच्छित्ता' तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य, 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं
भगवन्तं महावीरं 'पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ' पञ्चविधेनाऽभिगमेनाभिगच्छति—
पञ्चप्रकारेण अभिगमेन=सत्कारविशेषेण अभिमुखं गच्छति, 'तंजहा' तद्यथा—तत्पञ्चविधा-
भिगमनं यथा—'सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए' सचित्तानां द्रव्याणां व्युत्सर्जनतया-
हरितफलकुसुमादीनां वस्तूनां त्यागेन १, 'अचित्ताणं दव्वाणं अविओसरणयाए' अचि-
त्तानां द्रव्याणामव्युत्सर्जनतया, अचित्तानां वस्त्राभरणादीनाम् अत्यागेन २, 'एगसाडियमुत्त-

तलवार, छत्र, मुकुट, उपानत्—पगरखे, एवं वालव्यजनी—चामर । फिर वे (जेणेव समणे
भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहाँ पर
आये, (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ)
जाते ही वे पांच प्रकार के अभिगमन—सत्कारविशेष से युक्त होकर प्रभु के सन्मुख पहुँचे ।
वे पांच प्रकार के सत्कारविशेष इस प्रकार हैं—(सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए)
हरित फल फूल आदि सचित्त द्रव्यों का परित्याग करना, (अचित्ताणं दव्वाणं अवि-
ओसरणयाए) वस्त्र आभरण आदि अचित्त द्रव्यों का परित्याग नहीं करना, (एगसाडिय-
मुत्तरासंगकरणेणं) भाषा की यतना के लिये अखण्ड अर्थात् जो सीया हुआ न हो

पगरभां, तेभञ्ज आलव्यजनी—चामर. पछी तेओ। (जेणेव समणे भगवं महावीरे
तेणेव उवागच्छइ) ज्वां श्रमणु भगवान् महावीर विराजता हुता त्यां आव्या.
(उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ) आवतां
ञ्ज तेओ। पांच प्रकारनां अभिगमन—सत्कारविशेषथी युक्त थइने प्रभुना
सन्मुख पछोंओ। ते पांच प्रकारना सत्कारविशेष आ प्रकारना छे—(सचित्ताणं
दव्वाणं विओसरणयाए) लीलां इण् डूल आदि सचित्त द्रव्येनो परित्याग
करवो, (अचित्ताणं दव्वाणं अविओसरणयाए) वस्त्र—आभरणु आदि अचित्त
द्रव्येनो परित्याग न करवो, (एगसाडियमुत्तरासंगकरणेणं) भाषानी यतना

ચક્ષુષ્ફાસે અંજલિપગ્ગહેણં, (૫) મણસો એગત્તભાવકરણેણં, સમણં ભગવં મહાવીરં તિક્કલુત્તો આયાહિણપયાહિણં કરેઇ, કરિત્તા વંદઇ નમંસઇ, વંદિત્તા નમંસિત્તા તિવિહાણ પજ્જુવાસણ-

રાસંગકરણેણં ? એકશાટિકોત્તરાઽઽસજ્જકરણેન—ભાષાયતનાર્થમ્ અસ્યૂતેન એકપટેન ઉત્તરા-સજ્જકરણં તેન ૩, ‘ચક્ષુષ્ફાસે’ ચક્ષુઃસ્પર્શે—શ્રીમહાવીરે દષ્ટિમાગતે, ‘અંજલિપગ્ગ-હેણં’ અંજલિપ્રગ્રહેણ=કૃતાઽઽજ્જલિપુટેન ૪, ‘મણસો એગત્તભાવકરણેણં’ મનસ એકત્ર-ભાવકરણેન—મનસઃ ચિત્તસ્યૈકત્ર=ભગવદ્વિષયે ભાવકરણેન=સ્થિરીકરણેન, એવં પચ્ચવિધાભિગ-મેન ‘સમણં ભગવં મહાવીરં’ શ્રમણં ભગવન્તં મહાવીરમ્ અભિગમ્ય, તસ્ય શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘તિક્કલુત્તો’ ત્રિકૃત્વઃ ‘આયાહિણપયાહિણં’ આદક્ષિણપ્રદક્ષિણમ્=અંજલિપુટં વદ્ધ્વા, તં વદ્ધ્વાંજલિપુટં દક્ષિણકર્ણમૂલત આરમ્ભ્ય લલાટપ્રદેશેન વામકર્ણાન્તિકેન ચક્રાકારં ત્રિઃ પરિભ્રામ્ય લલાટદેશે સ્થાનરૂપં, ‘કરેઇ’ કરોતિ, ‘કરિત્તા’ કૃત્વા ‘વંદઇ નમંસઇ’ વન્દતે નમસ્યતિ—સ્તૌતિ નમસ્કરોતિ, ‘વંદિત્તા નમંસિત્તા’ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા, ‘તિવિ-

એસે વચ્ચ કા ઉત્તરાસજ્જ કરના, (ચક્ષુષ્ફાસે અંજલિપગ્ગહેણં) જવ સે ભગવાન દિસાચી દેં, તમી સે દોનોં હાથોં કો જોડના, ઓર (મણસો એગત્તભાવકરણેણં) મન કો એકાગ્ર કરકે ભગવાન મેં લગાના । ઇસ પ્રકાર ઇન પાંચ અભિગમનોં સે યુક્ત હોકર રાજાને ભગવાન મહાવીર પ્રભુ કો ત્રીન વાર (આયાહિણપયાહિણં) આદક્ષિણપ્રદક્ષિણ-અંજલિપુટ કો દાહિને કાન સે લેકર શિર પર ઘુમાતે હુણ બાયેં કાન તક લે જાકર ફિર ઉસે ઘુમાતે હુણ દાહિને કાન પર લે જાના ઓર બાદ મેં ઉસે અપને લલાટ પર સ્થાપન કરના—રૂપ આદક્ષિણપ્રદક્ષિણ (કરેઇ) ક્રિયા, (કરિત્તા) આદક્ષિણપ્રદક્ષિણ કર કે (વંદઇ નમંસઇ) વન્દના ઓર નમસ્કાર ક્રિયા । (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વન્દના નમસ્કાર કર કે (તિવિહાણ પજ્જુવાસણાણ પજ્જુવાસઇ)

માટે અખંડ અર્થાત્ જે સીવેલાં ન હોય તેવાં વચ્ચનું ઉત્તરાસંગ કરવું, (ચક્ષુષ્ફાસે અંજલિપગ્ગહેણં) ન્યારથી લગવાન દેખાય ત્યારથી જ બન્ને હાથને જોડવા, અને (મણસો એગત્તભાવકરણેણં) મનને એકાગ્ર કરીને લગવાનમાં જોડવું. આ પ્રકારે આ પાંચ અભિગમનોથી યુક્ત થઈને રાજાએ લગવાન મહાવીર પ્રભુને ત્રણ વાર (આયાહિણપયાહિણં) આદક્ષિણપ્રદક્ષિણ-અંજલિપુટને જમણા કાનથી લઈને શિર ઉપર ઘુમાવતાં ડાબા કાન સુધી લઈ જઈને પાછો તેને ઘુમાવીને જમણા કાને લઈ જવો અને પછી તેને પોતાના કપાળે સ્થાપન કરવારૂપ આદક્ષિણ-પ્રદક્ષિણ (કરેઇ) કર્યું, (કરિત્તા) આદક્ષિણ-પ્રદક્ષિણ કરીને (વંદઇ નમંસઇ) વંદના અને નમસ્કાર કર્યા. (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વંદના

યાએ પજ્જુવાસઈ, તંજહા—કાઠ્યાએ વાઠ્યાએ માણસિયાએ ।
કાઠ્યાએ—તાવ સંકુઠ્યગ્ગહત્થપાએ સુસ્સૂસમાણે ણમંસમાણે અ-
ભિમુહે વિણણં પંજલિઉઢે પજ્જુવાસઈ । વાઠ્યાએ—જં જં ભગવં

હાએ પજ્જુવાસણ્યાએ પજ્જુવાસઈ' ત્રિવિધયા પર્યુપાસનયા પર્યુપાસ્તે—ભગવતઃ પર્યુપાસનાં
વિધત્તે, 'તંજહા' તથા—તત્ ત્રિવિધત્વં દર્શયતિ—'કાઠ્યાએ વાઠ્યાએ માણસિયાએ'
કાયિકયા વાચિકયા માનસિકયા, પર્યુપાસ્તે इति પૂર્વેણાન્વયઃ । તત્ર કાયિકયા પર્યુપાસનયા
તાવત્ 'સંકુઠ્યગ્ગહત્થપાએ' સંકુચિતાઽગ્રહસ્તપાદઃ, 'સુસ્સૂસમાણે' શુશ્રૂષમાણઃ=
સેવમાનઃ, 'ણમંસમાણે' નમસ્યન્—અભિમુખે વિનયેન પ્રાજ્ઞલિપુટઃ પર્યુપાસ્તે, 'વાઠ્યાએ-
જં જં ભગવં વાગરેઈ' વાચિકયા પર્યુપાસનયા—યદ્ યદ્ ભગવાન્ વ્યાકરોતિ=વ્યાખ્યાતિ,

ત્રિવિધ પર્યુપાસના સે ડનકી ઉપાસના કી । વહ ત્રિવિધ ઉપાસના ઇસ પ્રકાર હૈ—(કાઠ્યાએ
વાઠ્યાએ માણસિયાએ) કાય સે ઉપાસના કરના, વચન સે ઉપાસના કરના ંવં મન સે
ઉપાસના કરના । (કાઠ્યાએ તાવ) કાયિક ઉપાસના ઇસ પ્રકાર સે ડસને કી—(સંકુઠ્યગ્ગ-
હત્થપાએ સુસ્સૂસમાણે ણમંસમાણે અભિમુહે વિણણં પંજલિઉઢે પજ્જુવાસઈ) પ્રમુ કે
સમીપ વે હાથપાવોં કો સંકુચિત કરકે ઉચિત આસન સે બેઠે । ડનસે ધર્મ સુનને કી ઇચ્છા
કરને લગે, ડન્હેં વારંવાર નમસ્કાર કરને લગે, પુનઃ નમ્ર હોકર પ્રમુ કે સમ્મુખ ડોનોં હાથોં
કો જોડિતે હુએ પ્રમુ કી સેવા કરને લગે । (વાઠ્યાએ) વચન સે ઉપાસના ડન્હોંને ઇસ
પ્રકાર કી—(જં જં ભગવં વાગરેઈ) જો જો ભગવાન્ કહતે થે, ડસ પર રાજા ઇસ પ્રકાર
કહતે થે, હે ભગવાન્ ! (સે જહેયં તુબ્હે વદહ) આપ જૈસા કહતે હૈં, (એવમેયં મંતે !) હે

નમસ્કાર કરીને (ત્રિવિહાએ પજ્જુવાસણાએ પજ્જુવાસઈ) ત્રિવિધ પર્યુપાસના વડે તેમની
ઉપાસના કરી. તે ત્રિવિધ ઉપાસના આ પ્રકારે છે—(કાઠ્યાએ વાઠ્યાએ માણ-
સિયાએ) કાયાથી ઉપાસના કરવી, વચનથી ઉપાસના કરવી તેમજ મનથી
ઉપાસના કરવી. (કાઠ્યાએ તાવ) કાયિક ઉપાસના તેણે આ પ્રકારે કરી—(સંકુ-
ઠ્યગ્ગહત્થપાએ સુસ્સૂસમાણે ણમંસમાણે અભિમુહે વિણણં પંજલિઉઢે પજ્જુવાસઈ)
પ્રભુની પાસે તેઓ હાથ—પગને સંકુચિત કરીને ઉચિત આસન પર બેઠા.
તેઓ પાસેથી ધર્મ સાંભળવાની ઇચ્છા કરવા લાગ્યા, તેમને વારંવાર નમ-
સ્કાર કરવા લાગ્યા, અને નમ્ર થઈને પ્રભુના સન્મુખ બંને હાથ બેડીને
પ્રભુની સેવા કરવા લાગ્યા. (વાઠ્યાએ) વચનથી તેમણે આ પ્રમાણે ઉપાસના
કરી—(જં જં ભગવં વાગરેઈ) જે જે ભગવાન કહેતા હતા તે ઉપર રાજા આ
પ્રકારે બોલતા હતા—હે ભગવાન્ ! (સે જહેયં તુબ્હે વદહ) આપ જેમ કહે છે

વાગરેઝ, એવમેયં મંતે ! તહમેયં મંતે ! અવિતહમેયં મંતે ! અ-
સંદિદ્ધમેયં મંતે ! ઇચ્છિયમેયં મંતે ! પડિચ્છિયમેયં મંતે !
ઇચ્છિયપડિચ્છિયમેયં મંતે ! સે જહેયં તુબ્હે વદહ—અપડિકૂલ-

તત્ર તત્ર—‘ એવમેયં મંતે ! ’ એવમેતદ્ ભદન્ત ! =હે ભગવન્ ! યદ્ ભવાનુપદિશતિ તદ્ એવમે-
વાસ્તિ, ‘ તહમેયં મંતે ! ’ તથૈતદ્ ભદન્ત ! =હે ભગવન્ ! ભવતા યદુપદિષ્ટં તત્તથૈવ ।
‘ અવિતહમેયં મંતે ! ’ અવિતથમેતદ્ ભદન્ત ! =હે ભગવન્ ! ભવદુક્તમેતત્ સર્વં સત્યમેવ ।
‘ અસંદિદ્ધમેયં મંતે ! ’ અસન્દિદ્ધમેતદ્ ભદન્ત ! =હે ભગવન્ ! એતત્ સન્દેહરહિતં =દેશ-
શઙ્કાસર્વશઙ્કાવર્જિતમ્ । ‘ ઇચ્છિયમેયં મંતે ! ’ ઇષ્ટમેતદ્ ભદન્ત ! =હે ભગવન્ ! એતદ્ભવ
દ્વચનમસ્માભિર્વાઙ્મિતમેવ, ‘ પડિચ્છિયમેયં મંતે ! ’ પ્રતીષ્ટમેતદ્ ભદન્ત ! =હે ભગવન્ ! પુનઃ
પુનરિષ્ટમેતદ્ ભવદ્વચનમ્, ‘ ઇચ્છિયપડિચ્છિયમેયં મંતે ! ’ ઇષ્ટપ્રતીષ્ટમેતદ્ ભદન્ત ! =હે
ભગવન્ ! એતદ્ વચનમ્ ઇષ્ટપ્રતીષ્ઠોભયરૂપં વર્તેતે । ‘ સે જહેયં તુબ્હે વદહ ’ તથૈતદ્
યૂયં વદથ—તદેતદ્ યથા ભવન્તઃ કથયન્તિ તત્તથૈવેતિ વદન્ ‘ અપડિકૂલમાણે પજ્જુવાસઙ્’
અપ્રતિકૂલયન્ = પ્રતિકૂલાચરણં વર્જયન્ પર્યુપાસ્તે । ‘ માણસિયાણ ’ માનસિકયા = મનઃ-

ભગવન્ ! યહ એસા હી હૈ, (તહમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! યહ વૈસા હી હૈ, (અવિતહમેયં
મંતે !) હે ભગવન્ ! આપને જો કહા સો સત્ય હૈ, (અસંદિદ્ધમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! યહ દેશ-
શઙ્કા ઓર સર્વશઙ્કા સે સર્વથા રહિત હૈ, (ઇચ્છિયમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! આપકા યહ
વચન હમ લોગોં કે લિયે સર્વદા વાઙ્મનીય હૈ, (પડિચ્છિયમેયં મંતે !) હે ભગવન્ !
યહ આપકા વચન હમ લોગોં કે લિયે સર્વથા વાઙ્મનીય હૈ, (ઇચ્છિયપડિચ્છિયમેયં મંતે !)
હે ભગવન્ ! યહ આપકા વચન હમ લોગોં કે લિયે સર્વદા ઓર સર્વથા વાઙ્મનીય હૈ । ઇસ
પ્રકાર રાજા—(અપડિકૂલમાણે) ભગવાન કે સાથ અનુકૂલ આચરણ કરતે હુણ (પજ્જુ-
વાસઙ્) ઉન્કી ઉપાસના કરને લગે । (માણસિયાણ) રાજા ને ભગવાન્ કી માનસિક ઉપા-

(એવમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! એ એમજ છે, (તહમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! એ
એમજ છે, (અવિતહમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! આપે જે કહ્યું તે સત્ય છે.
(અસંદિદ્ધમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! આ તમારું વચન દેશશંકા અને સર્વ-
શંકાઓથી સર્વથા રહિત છે. (ઇચ્છિયમેયં મંતે !) હે ભગવન્ ! આપનાં આ
વચન અમારા માટે સર્વદા વાંછનીય છે. (પડિચ્છિયમેયં મંતે !) હે ભગવન્ !
આ આપનાં વચન અમારા માટે સર્વથા વાંછનીય છે, (ઇચ્છિય-પડિચ્છિયમેયં
મંતે !) હે ભગવન્ ! આ આપનાં વચન અમારા માટે સર્વદા અને સર્વથા
વાંછનીય છે. આ પ્રકારે રાજા (અપડિકૂલમાણે) ભગવાનની સાથે અનુકૂલ

માળે પજ્જુવાસઇ । માળસિયાણ-મહયાસંવેગં જણહિત્તા તિવ્વધ-
મ્માણુરાગરત્તે પજ્જુવાસઇ ॥ સૂ૦ ૫૪ ॥

મૂલમ્—તણ ણં તાઓ સુમહપ્પમુહાઓ દેવીઓ અંતો
અંતેઊરંસિ ણહાયાઓ જાવ પાયચ્છિત્તાઓ સવ્વાલંકારવિભૂસિ-

સમ્બન્ધિન્યા પર્યુપાસનયા, ‘મહયાસંવેગં’ મહાનંવેગં=મહદ્વૈરાગ્યં ‘જણહિત્તા’ જનયિત્વા
‘તિવ્વ-ધમ્મા-ણુરાગ-રત્તે’ તીવ્ર-ધર્મા-નુરાગ-રક્તઃ સન્ ‘પજ્જુવાસઇ’ પર્યુપાસ્તે, અનેન
વીતરાગાણં પુષ્પધૂપાદિભિઃ સાવધપૂજા નિરાકૃતા ॥ સૂત્ર ૫૪ ॥

ટીકા—‘તણ ણં તાઓ’ इत्यादि । ‘तण णं’ ततः खलु ‘ताओ सुमहप्प-
मुहाओ’ ततः तदनन्तरम्—सुमद्राप्रमुखाः ‘देवीओ’ देव्यः=राज्ञ्यः अंतो अंतेउरंसि’
अन्तरन्तःपुरस्य स्त्रीभवनमध्ये, ‘णहायाओ जाव पायच्छित्ताओ’ स्नाताः यावत् प्राय-

સના ઇસ પ્રકાર કી—(મહયાસંવેગં જણહિત્તા તિવ્વ-ધમ્મા-ણુરાગ-રત્તે પજ્જુવાસઇ) પ્રમુ
કે મુખ સે ધર્મ કા ઉપદેશ સુન કર રાજા કે હૃદય મેં પરમ વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન હુઆ ઓર
ધર્માનુરાગ સે પ્રેરિત હોકર વે પ્રમુ કી ઉપાસના કરને લગે । ઇસ સૂત્ર સે વીતરાગોં કી પુષ્પ-
ધૂપ આદિ સે સાવધ પૂજા કરના સર્વથા નિષિદ્ધ હૈ—યહ સૂચિત હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૫૪ ॥

‘તણ ણં તાઓ’ इत्यादि ।

(તણ ણં) ઇસકે બાદ (તાઓ સુમહપ્પમુહાઓ દેવીઓ) વે સુમદ્રાપ્રમુખ દેવિયાં
મી (અંતો અંતેઊરંસિ) અંતઃપુરસ્થ સ્ત્રીભવન કે મધ્યવર્તી સ્નાનાગાર મેં (ણહાયાઓ જાવ

આચરણ કરતા (પજ્જુવાસઇ) તેમની ઉપાસના કરવા લાગ્યા. (માળસિયાણ)
રાજાએ ભગવાનની માનસિક ઉપાસના આ પ્રકારે કરી—(મહયાસંવેગં જણહિત્તા
તિવ્વ-ધમ્મા-ણુરાગ-રત્તે પજ્જુવાસઇ) પ્રભુના મુખથી ધર્મનો ઉપદેશ સાંભ-
ળીને રાજાના હૃદયમાં પરમ વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થયું, અને ધર્માનુરાગથી પ્રેરિત
થઈને તેઓ પ્રભુની ઉપાસના કરવા લાગ્યા. આ સૂત્રથી વીતરાગોની પુષ્પ
ધૂપ આદિ વડે સાવધપૂજા કરવી એ સર્વથા નિષિદ્ધ છે તે સૂચિત થાય છે.
(સૂ૦ ૫૪.)

“તણ ણં તાઓ” इत्यादि.

(તણ ણં) ત્યાર પછી (તાઓ સુમહપ્પમુહાઓ દેવીઓ) તે સુમદ્રા પ્રમુખ
દેવીઓ પણ (અંતો અંતેઊરંસિ) અંતઃપુરમાં સ્ત્રીભવનના મધ્યવર્તી સ્નાના-
ગારમાં (ણહાયાઓ જાવ પાયચ્છિત્તાઓ) સ્નાન કરીને કૌતુક તથા બલિકર્મથી

याओ बहूहिं खुज्जाहिं चिलाईहिं वामणीहिं वडभीहिं बब्बरीहिं
बउसियाहिं जोणियाहिं पल्हवियाहिं ईसणियाहिं चारुइणियाहिं

श्रित्ताः-यावत्-शब्दात्-‘कृतबलिकर्माणः कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्रित्ताः’ इति सङ्ग्रहः, तथा ‘सव्वा-
लंकार-विभूसियाओ’ सर्वा-ऽलङ्कार-विभूषिताः-सर्वैरलङ्कारैरलङ्कृताः : ‘बहूहिं खुज्जाहिं’
बह्वीभिः कुब्जाभिः-वक्रशरीराभिः ‘कूबडी’ इति प्रसिद्धाभिः, ‘चिलाईहिं’ किरातीभिः=किरात-
देशोत्पन्नाभिः, ‘वामणीहिं’ वामनाभिः-अतिह्रस्वशरीराभिः, ‘वडभीहिं’ वटभिकाभिः=वक्रा-
ऽधःकायाभिः, ‘बब्बरीहिं’ बर्बरीभिः=बर्बरदेशोत्पन्नाभिः, ‘बउसियाहिं’ बकुशिकाभिः,
‘जोणियाहिं’ योनिकाभिः=योनिकदेशोत्पन्नाभिः, ‘पल्हवियाहिं’ पल्हविकाभिः=पल्हवदेशो-
त्पन्नाभिः, ‘ईसणियाहिं’ ‘ईसिन’ नामकोऽनार्यदेशस्तत्रोत्पन्नाभिः ‘चारुइणियाहिं’ चारु-
किनिकाभिः, ‘चारुकिनिक’ देशविशेषोत्पन्नाभिः, ‘लासियाहिं’ लासिकाभिः=लासकदेशो-

पायच्छित्ताओ) स्नान करके कौतुक तथा बलिकर्म से निवृत्त होकर, (सव्वा-लंकार-विभू-
सियाओ) एवं समस्त अलंकारों को धारण कर (बहूहिं खुज्जाहिं चिलाईहिं) अनेक
कुबडी दासियों से, अनेक किरातिनियों-किरात देशमें उत्पन्न दासियों से, (वामणीहिं) अनेक
वामनियोंसे-जिनका शरीर अत्यंत ह्रस्व-छोटा था ऐसी दासियों से, (वडभीहिं) अनेक वट-
भियों-जिनकी कमर बिल्कुल झुक गई थी ऐसी दासियों से, (बब्बरीहिं) बर्बर देशोद्भव
अनेक दासियों से, (बउसियाहिं) बकुश देश की दासियों से, (जोणियाहिं) यूनान देश
की दासियों से, (पल्हवियाहिं) अनेक पल्हविकाओं-पल्हवदेश की दासियों से, (ईसणि-
याहिं) इसिन नाम का एक अनार्यदेश है इस देश की दासियों से, (चारुइणियाहिं)
चारुकिनिक देश की दासियों से, (लासियाहिं) लासकदेश की दासियों से, (लउसियाहिं)

निवृत्त थउने (सव्वालंकारविभूसियाओ) तेमज सर्व अलंकारोने धारण
उरीने (बहूहिं खुज्जाहिं चिलाईहिं) अनेक कुबडी दासीओथी, अनेक किरा-
तीओ-किरात देशमां उत्पन्न थयेली दासीओथी, (वामणीहिं) अनेक वाम-
निओ-जेनां शरीर अत्यंत नानां-(ठींगण्णु) हुतां ओवी दासीओथी,
(वडभीहिं) अनेक वटभीओ-जेमनी कमर छेक वणी गछ हुती ओवी
दासीओथी (बब्बरीहिं) अर्बर-देशोत्पन्न अनेक दासीओथी, (बउसियाहिं)
अकुश देशनी दासीओथी, (जोणियाहिं) यूनान देशनी दासीओथी,
(पल्हवियाहिं) अनेक पल्हविकाओ-पल्हव देशनी दासीओथी, (ईसि-
णियाहिं) इसिन नामनो ओक अनार्य देश छे ते देशनी दासीओथी,
(चारुइणियाहिं) चारुकिनिक देशनी दासीओथी, (लासियाहिं) लासक देशनी
दासीओथी, (लउसियाहिं) लकुशदेशनी दासीओथी (सिंहलीहिं) सिंहुल देशनी

लासियाहिं लउसियाहिं सिंहलीहिं दमलीहिं, आरबीहिं पुलि-
दीहिं पक्कणीहिं बहलीहिं मरुंडीहिं सबरीहिं पारसीहिं णाणादे-
सीहिं विदेस-वेस-परिमंडियाहिं इंगिय-चितिय-पत्थिय-
वियाणियाहिं सदेसणेवत्थ-ग्गहिय-वेसाहिं चेडिया-चक्कवाल-व-

त्पन्नाभिः, 'लउसियाहिं' लकुशिकाभिः=लकुशदेशोत्पन्नाभिः, 'सिंहलीहिं' सिंहलीभिः=
सिंहलदेशोत्पन्नाभिः, 'दमिलीहिं' द्रविडीभिः=द्रविडदेशोत्पन्नाभिः, 'आरबीहिं' आरबीभिः=
अरबदेशोत्पन्नाभिः, 'पुलिंदीहिं' पुलिन्दीभिः=पुलिन्ददेशोत्पन्नाभिः, 'पक्कणीहिं' पक्कणीभिः=
पक्कणदेशोत्पन्नाभिः, 'बहलीहिं' बहलीभिः=बहलनामकोऽनार्यदेशस्तत्रोत्पन्नाभिः, 'मुरुंडीहिं'
मुरुण्डीभिः=मुरुण्डदेशोत्पन्नाभिः, 'सबरीहिं' शबरीभिः=शबरदेशोत्पन्नाभिः, 'पारसीहिं' पार-
सीभिः=पारसदेशोत्पन्नाभिः, किरातादयः सर्वेऽनार्यदेशाः, 'णाणादेसीहिं' नानादेशीयाभिः, 'वि-
देस-वेस-परिमंडियाहिं' विदेश-वेष-परिमण्डिताभिः=विविध-देशपरिमण्डनयुक्ताभिः, 'इंगिय-
चितिय-पत्थिय-वियाणियाहिं' इङ्गित-चिन्तित-प्रार्थित-विज्ञाभिः, इङ्गितम्=अभिप्रायानुरूप-

लकुशदेश की दासियों से, (सिंहलीहिं) सिंहलदेश की दासियों से, (दमिलीहिं) द्रविड-
देश की दासियों से, (आरबीहिं) अरबदेश की दासियों से, (पुलिंदीहिं) पुलिन्ददेश की
दासियों से, (पक्कणीहिं) पक्कणदेश की दासियों से, (बहलीहिं) बहल नाम के अनार्य देश
की दासियों से, (मुरुंडीहिं) मुरुण्डदेश की दासियों से, (सबरीहिं) शबरदेश की दासियों
से, (पारसीहिं) पारसदेश की दासियों से, (ये किरात आदि जितने भी देश हैं वे सब
अनार्य देश हैं) इन (णाणादेसीहिं) अनेक देश की दासियाँ, जो (विदेस-वेस-
परिमंडियाहिं) विदेशी वेष भूषा से सज्जित थीं, (इंगिय-चितिय-पत्थिय-वियाणियाहिं)
इंगित को अर्थात् अभिप्राय के अनुरूप चेष्टा को, चिन्तित को अर्थात् मनोगत भावको,

दासीओथी, (दमिलीहिं) द्रविड देशनी दासीओथी, (आरबीहिं) अरब देशनी
दासीओथी (पुलिंदीहिं) पुलिंद देशनी दासीओथी (पक्कणीहिं) पक्कण देशनी
दासीओथी, (बहलीहिं) बहल नामना अनार्य देशनी दासीओथी, (मुरुंडीहिं)
मुरुण्ड देशनी दासीओथी, (सबरीहिं) शबर देशनी दासीओथी, (पारसीहिं)
पारस देशनी दासीओथी, आ किरात आदि जेटला देश छे ते अधा अनार्य
देश छे, आ (णाणादेसीहिं) अनेक देशनी दासीओ जे (विदेस-वेस-परि-
मंडियाहिं) विदेशी वेष भूषाथी सज्जित छती, (इंगिय-चितिय-पत्थिय-वियाणियाहिं)
इंगितने ओटवे अभिप्रायने अनुरूप चेष्टाने, चिन्तितने ओटवे मनोगत भावने,

रिसवर-कंचुइज्ज-महत्तर-वंद-परिक्खित्ताओ अंतेउराओ णिग्गच्छन्ति, णिग्गच्छित्ता जेणेव पाडियक्कजाणाइं तेणेव उवागच्छन्ति, उवागच्छित्ता पाडियक्कपाडियक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं दुरू-

चेष्टितम्, चिन्तितं=मनोगतं, प्रार्थितम्=अभिलषितं तेषां विज्ञाभिः, 'सदेस-णेवत्थ-ग्गहिय-वेसाहिं' स्वदेश-नेपथ्य-गृहीत-वेषाभिः-स्वदेशस्य यानि नेपथ्यानि=वस्त्रभूषण-धारणीतयः, तैर्गृहीता वेषा याभिः तास्तथा ताभिः, 'चेडिया-चक्रवाल-वरिसवर-कंचुइज्ज-महत्तर-वंद-परिक्खित्ताओ' चेटिका-चक्रवाल-वर्षवर-कञ्चुकीय-महत्तर-वृन्द-परिक्षिताः-चेटिकानां=दासीनां चक्रवालं मण्डलम्, वर्षवराः=क्लीबाः, कञ्चुकीयाः=अन्तःपुरबहिःप्रदेशरक्षकाः, तदन्ये ये महत्तराः=प्रामाणिका अन्तःपुररक्षकाः, तेषां यद् वृन्दं तेन परिक्षिताः=परिवेष्टिता यास्तास्तथा सुभद्राप्रमुखा द्रेव्यो=राज्यः 'अंतेउराओ णिग्गच्छन्ति' अन्तःपुरात्-स्त्रीगृहान्निर्गच्छन्ति, 'णिग्गच्छित्ता' निर्गत्य, 'जेणेव पाडियक्कजाणाइं' यत्रैव प्रत्येकयानानि=पृथक् २ यानानि सन्ति, तत्रैवोपागच्छन्ति, उपागत्य 'पाडियक्क-पाडि-

प्रार्थित को अर्थात्-अभिलषित को जानने में विज्ञ थीं, (सदेस-णेवत्थ-ग्गहिय-वेसाहिं) अपने २ देश की रीति के अनुसार वेषभूषा धारण की हुई थीं, ऐसी इन विदेशी दासियों से, तथा-(चेडिया-चक्रवाल-वरिसवर-कंचुइज्ज-महत्तर-वंद-परिक्खित्ताओ) विदेशी दासियों से भिन्न दासियों के समूह से, वर्षवरों से-नपुंसकों से, कंचुकियों से तथा और भी अन्य प्रामाणिक अन्तःपुर रक्षकों से परिक्षित-घिरी हुई होकर (अंतेउराओ णिग्गच्छन्ति) अन्तःपुर से निकलीं, (णिग्गच्छित्ता) निकलकर (जेणेव पाडियक्कजाणाइं) जहां अपने २ योग्य अलग २ यान रखे हुए थे, (तेणेव उवागच्छन्ति) वहां पर पहुँची, (उवागच्छित्ता पाडियक्कपाडियक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं दुरूहन्ति) पहुँच कर उन पृथक् २

प्रार्थितने એટલે અભિલાષાને બાણી લેવામાં નિપુણ હતી, (સદેસણેવત્થ-ગ્ગહિયવેસાહિં) જેઓએ પોતપોતાના દેશની રીત પ્રમાણે વેષ ધારણ કરેલો હતો. એવી આ વિદેશી દાસીઓથી, તથા (ચેડિયા-ચક્રવાલ-વરિસવર-કંચુઇજ્જ-મહત્તર-વંદ-પરિક્ખિત્તાઓ) વિદેશી દાસીઓથી બુદ્ધી દાઝીઓના સમૂહથી, તથા વર્ષવર-નપુંસકોથી, કંચુકીઓથી, તથા બીજા પણ પ્રામાણિક અંતઃપુરરક્ષકોથી પરિક્ષિત-વીંટાએલી બનીને (અંતેઝરાઓ ણિગ્ગચ્છન્તિ) અંતઃપુરથી નીકળી, (ણિગ્ગચ્છિત્તા) નીકળીને (જેણેવ પાડિયક્કજાણાઈ) જ્યાં પોતપોતાને યોગ્ય બુદ્ધાં બુદ્ધાં યાન (વાહનો) રાખવામાં આવ્યાં હતાં (તેણેવ ઉવાગચ્છન્તિ) ત્યાં પહોંચી. (ઉવાગચ્છિત્તા પાડિયક્કપાડિયક્કાઈ જત્તાભિમુહાઈ જુત્તાઈ જાણાઈ દુરુ-

હંતિ, દુરૂહિતા ણિયગ-પરિયાલ સદ્ધિ સંપરિવુડાઓ ચંપાણ
ળયરીણ મજ્ઞમજ્ઞેણં ણિગ્ગચ્છંતિ, ણિગ્ગચ્છિત્તા જેણેવ પુણ્ણ-
ભદ્દે ચેદ્દણ તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ, ઉવાગચ્છિત્તા સમણસ્સ ભગવ-
ઓ મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે છત્તાદીણ તિત્થયરાહસેસે પાસંતિ,

યક્કાઈ' પ્રત્યેકપ્રત્યેકાનિ=પૃથક્ ૨ કલ્પિતાનિ 'જત્તાભિમુહાઈં જુત્તાઈં જાણાઈં'—યાત્રા-
ભિમુખાનિ યુક્તાનિ યાનાનિ—યાત્રાભિમુખાનિ=ભગવદર્શનાર્થગમનાય સજ્જિતાનિ યુક્તાનિ=બલી-
વર્દે: યોજિતાનિ, યાનાનિ=રથાન્ 'દુરૂહંતિ' અધિરોહન્તિ, 'દુરૂહિતા' અધિરુહ્ય, 'ણિયગ-
પરિયાલ સદ્ધિ' નિજકપરિવારૈ: સાર્દ્ધમ્, 'સંપરિવુડાઓ' સમ્પરિવૃતા: =સમન્તાદ્દેષ્ટિતા:,
ચમ્પાયા નગર્યા મધ્યમધ્યેન, 'ણિગ્ગચ્છંતિ' નિર્ગચ્છન્તિ, 'ણિગ્ગચ્છિત્તા' નિર્ગત્ય, 'જેણેવ
પુણ્ણભદ્દે ચેદ્દણ તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ' યત્રૈવ પૂર્ણભદ્રં ચૈત્યં તત્રૈવોપાગચ્છન્તિ, 'ઉવાગચ્છિત્તા
સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે' ઉપાગત્ય શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્યા-
દૂરસમીપે 'છત્તાદીણ તિત્થયરાહસેસે' છત્રાદિકાન્ તીર્થકરાતિશેષાન્=તીર્થકરાતિશયાન્

યાનોં પર, જો ભગવાન કે દર્શન કે લિયે લે જાને કે નિમિત્ત પહિલે સે સજ્જિત કર રખે
હુણ એવં બલીવર્દ આદિકોં સે યુક્ત થે; સવાર હુઈં । (દુરૂહિતા ણિયગ-પરિયાલ સદ્ધિ)
સવાર હોકર અપને ૨ પરિવારોં કે સાથ (સંપરિવુડાઓ) પરિવેષ્ટિત હોતી હુઈં વે સબ દેવિયાં
(ચંપાણ ણયરીણ મજ્ઞમજ્ઞેણં) ચંપા નગરી કે ઠીક બીચોં બીચ કે માર્ગ સે હોકર
(ણિગ્ગચ્છંતિ) નિકલીં, (ણિગ્ગચ્છિત્તા) નિકલકર (જેણેવ પુણ્ણભદ્દે ચેદ્દણ તેણેવ
ઉવાગચ્છંતિ) જિસ ઓર પૂર્ણભદ્ર ચૈત્ય (ઉદ્યાન) થા, ઉસ ઓર આવીં, (ઉવાગચ્છિત્તા)
આકર (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે છત્તાદીણ તિત્થયરાહસેસે
પાસંતિ) ઉન્હોંને શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર સે કુછ દૂર પર રહે હુણ તીર્થકરોં કે અતિશય

હંતિ) પહોંચીને તે જુદા જુદા યાનો—રથો પર જે ભગવાનનાં દર્શને લઈ જવા
માટે પહેલાંથી તૈયાર કરી રાખવામાં આવ્યાં હતાં તેમજ બળદો બેડી
રાખેલાં હતાં તેમાં બેઠાં, (દુરૂહિતા ણિયગ-પરિયાલ સદ્ધિ) બેસીને પોતપોતાના
પરિવારની સાથે (સંપરિવુડાઓ) યુક્ત થઈને તે બધી દેવીઓ (ચંપાણ ણયરીણ
મજ્ઞમજ્ઞેણં) ચંપાનગરીના બરોબર વચ્ચે—વચ્ચના માર્ગે થઈને (ણિગ્ગચ્છંતિ)
નીકળી, (ણિગ્ગચ્છિત્તા) નીકળીને (જેણેવ પુણ્ણભદ્દે ચેદ્દણ તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) જે તરફ
પૂર્ણભદ્ર ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું તે તરફ આવી, (ઉવાગચ્છિત્તા) આવીને (સમણ-
સ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે છત્તાદીણ તિત્થયરાહસેસે પાસંતિ) તેમણે

પાસિત્તા પાડિયક્કપાડિયક્કાઈં જાણાઈં ઠવેંતિ, ઠવિત્તા જાણેહિંતો પચ્ચોરુહંતિ, પચ્ચોરુહિત્તા, બહૂહિંં સુજ્જાહિંં જાવ પરિક્કિસ્વત્તાઓ જે-નેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ, ઉવાગચ્છિત્તા સમણં ભગવં મહાવીરં પંચવિહેણં અભિગમેણં અભિગચ્છંતિ;

‘પાસંતિ’ પસ્યન્તિ, ‘પાસિત્તા’ દ્વણ, ‘પાડિયક્ક-પાડિયક્કાઈં જાણાઈં ઠવેંતિ’ પ્રત્યેકપ્રત્યેકાનિ યાનાનિ સ્થાપયન્તિ, સ્થાપયિત્વા, ‘જાણેહિંતો પચ્ચોરુહંતિ’ યાનેભ્યઃ પ્રત્યવરોહન્તિ=અવતરન્તિ, ‘પચ્ચોરુહિત્તા’ પ્રત્યવરુહ્ય, ‘બહૂહિંં સુજ્જાહિંં જાવ પરિક્કિસ્વત્તાઓ’ બહૂમિઃ કુબ્જિકાભિર્યાવત્પરિક્ષિતાઃ=પરિવેષ્ટિતાઃ, યાવચ્છબ્દાત્પૂર્વોક્તા વિવિધદેશજાતિસમુદ્ભૂતા ગ્રાહ્યાઃ, ‘જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ’ યત્રૈવ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરસ્તત્રૈવોપાગચ્છન્તિ, ‘ઉવાગચ્છિત્તા’ ઉપાગત્ય ‘સમણં ભગવં મહાવીરં પંચવિહેણં અભિગમેણં અભિગચ્છંતિ’ શ્રમણં ભગવન્તં મહાવીરં પંચવિધેનાઽભિગમેનાભિગચ્છન્તિ, પંચવિધમભિગમનં સ્ફુટીકરોતિ—‘તં જહા’ તદ્વથા

સ્વરૂપ છત્રાદિકોં કો દેસ્વા, (પાસિત્તા) દેસ્વ કર ઉન સવોને (પાડિયક્કપાડિયક્કાઈં જાણાઈં ઠવેંતિ) અપને ૨ (પૃથક્ ૨) યાનોં કો રોક દિયા ઓર વે (જાણેહિંતો પચ્ચોરુહંતિ) ઉન યાનોં સે નીચે ઉતરીં, (પચ્ચોરુહિત્તા) ઉતર કર (બહૂહિંં સુજ્જાહિંં જાવ પરિક્કિસ્વત્તાઓ જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) ઉન અનેક કુબ્જાદિક દાસિયોં સે પરિવૃત્ત હોતી હુઈં વે જહાં શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર થે વહાં પર આર્યોં, (ઉવાગચ્છિત્તા) આકર ઉન્હોં ને (સમણં ભગવં મહાવીરં પંચવિહેણં અભિગમેણં અભિગચ્છંતિ) પ્રભુ કે નિકટ જાને કે લિયે પાંચ પ્રકાર કે અભિગમનોં કો અચ્છી તરહ ધારણ કિયા । વે પાંચ પ્રકાર કે અભિગમન યે હૈં—(સચિત્તાણં દઘ્વાણં વિઓસરણયાએ, અચિત્તાણં દઘ્વાણં અવિ-

શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરથી જરા દૂર રહેલા તીર્થંકરોના અતિશય સ્વરૂપ છત્રાદિકોને બેયાં, (પાસિત્તા) બેઠને બધી (પાડિયક્કપાડિયક્કાઈં જાણાઈં ઠવેંતિ) પોતપોતાના (બુદ્ધા બુદ્ધા) યાનો-રથોને રોકી દીધા, અને તેઓ (જાણેહિંતો પચ્ચોરુહંતિ) તે યાનોમાંથી નીચે ઉતરી, (પચ્ચોરુહિત્તા) ઉતરીને (બહૂહિંં સુજ્જાહિંં જાવ પરિક્કિસ્વત્તાઓ જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છંતિ) તે અનેક કુબ્જા આદિક દાસીઓના પરિવાર સહિત બ્યાં શ્રમણુ ભગવાન મહાવીર હતા ત્યાં આવી, (ઉવાગચ્છિત્તા) આવીને તેઓએ (સમણં ભગવં મહાવીરં પંચવિહેણં અભિગમેણં અભિગચ્છંતિ) પ્રભુની પાસે જવા માટે પાંચ પ્રકારના અભિગમનોને સારી રીતે ધારણ કર્યા. તે પાંચ પ્રકારનાં અભિગમન આ છે—(સચિત્તાણં દઘ્વાણં

तंजहा-१ सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए, २-अचित्ताणं दव्वाणं अविओसरणयाए, ३-विणओणयाए गायलट्टीए, ४-चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं, ५-मणसो एगत्तीभावकरणेणं समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपायाहिणं करेंति,

‘सचित्ताणं दव्वाणं विओसरणयाए’ सचित्तानां द्रव्याणां व्युत्सर्जनतया-सचित्तद्रव्य-
त्यागेन, १, ‘अचित्ताणं दव्वाणं अविओसरणयाए’ अचित्तानां द्रव्याणामव्युत्सर्जन-
तया-अचित्तद्रव्याणां=वस्त्राभरणादीनामपरित्यागेन २, ‘विणओणयाए गायलट्टीए’
विनयावनतया गात्रयष्ट्या ३, ‘चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं’ चक्षुःस्पर्शेऽञ्जलिप्रग्रहेण=
श्रीवर्धमाने महावीरे चक्षुर्विषये सति अञ्जलिविरचनेन ४, ‘मणसो एगत्तीभावकर-
णेणं’ मनस एगत्तीभावकरणेन-मनसः=चित्तस्य एगत्तीभावकरणं-एकत्र=भगवद्विषये
स्थिरीकरणं तेन ५, एतद्रूपेण पञ्चप्रकारेण अभिगमेन, ‘समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो
आयाहिणपायाहिणं करेंति, करित्ता वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता’ श्रमणस्य

ओसरणयाए, विणओणयाए गायलट्टीए, चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं, मणसो एगत्ती-
भावकरणेणं) सचित्त द्रव्यों का परित्याग करना-प्रभु के दर्शन करने के लिये जाते समय
अपने पास सचित्त वस्तुओं को नहीं रखना, अचित्तवस्त्रादिकों का त्याग नहीं करना, विनय
से अवनत गात्र-शरीर होना-विनयभार से नम्रीभूत होना, प्रभु के दिखते ही दोनों हाथों
को जोड़ना, एवं प्रभु की भक्ति में मन को एकाग्र करना। इन पांच अभिगमनों से युक्त
सपरिवार उन रानियों ने (समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपायाहिणं करेंति)
श्रमण भगवान महावीर को तीन बार आदक्षिणप्रदक्षिण किया, (करित्ता वंदंति नमंसंति)

विओसरणयाए, अचित्ताणं दव्वाणं अविओसरणयाए, विणओणयाए गायलट्टीए, चक्खु-
प्फासे अंजलिपग्गहेणं, मणसो एगत्तीभावकरणेणं) सचित्त द्रव्यों का परित्याग
करवे।-प्रभु दर्शन करवा भाटे जाती वज्रते पोतानी पासे सचित्त वस्तुओं न
राखवी १, अचित्त वस्त्रादिकों का त्याग करवे। २, विनयथी नमावेस गात्र-
शरीर राखवुं-विनयभारथी नम्रीभूत थवुं ३, प्रभुने जेतांज जन्ने हाथ
जेडवा ४, तेमज प्रभुनी लज्जितामां मनने जेकाथ करवुं ५; आ पांच अलि-
गमनोथी युक्त सपरिवार ते राणीओजे (समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आया-
हिणपायाहिणं करेंति) श्रमण भगवान महावीरने त्रणुवार आदक्षिणप्रदक्षिण
कर्या, (करित्ता वंदंति णमंसंति) पथी वंदना तेमज नमस्कार कर्या,

करित्ता वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता कूणियरायं पुरओ कट्टु ठिइयाओ चेव सपरिवाराओ अभिमुहाओ विणएणं पंजलिउडाओ पज्जुवासंति ॥ सू० ५५ ॥

मूलम्—तए णं समणे भगवं महावीरे कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स सुभदापमुहाणं देवीणं तीसे य महइमहा-

भगवतो महावीरस्य त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणं कुर्वन्ति, कृत्वा वन्दन्ते नमस्यन्ति, वन्दित्वा नमस्यित्वा, 'कूणियरायं पुरओ कट्टु ठिइयाओ चेव' कूणिकराजं पुरतः कृत्वा स्थिता एव 'सपरिवाराओ' सपरिवाराः—परिजनसमेताः, 'अभिमुहाओ' अभिमुखाः भगवद्दृष्टिपथे, 'विणएणं पंजलिउडाओ पज्जुवासंति' विनयेन प्राञ्जलिपुटाः=कृताञ्जलिपुटाः पर्युपासते ॥ सू० ५५ ॥

'तए णं' इत्यादि । 'तए णं' ततः=द्वादशविधपरिषदुपस्थितिसमनन्तरं खलु 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः 'कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स' कूणिकस्य राज्ञो भंभसारपुत्रस्य 'सुभदापमुहाणं देवीणं' सुभद्राप्रमुखाणां देवीनाम्—'तीसे

पश्चात् वंदना एवं नमस्कार किया, (वंदित्ता णमंसित्ता कूणियरायं पुरओ कट्टु ठिइयाओ चेव सपरिवाराओ अभिमुहाओ विणएणं पंजलिउडाओ पज्जुवासंति) वंदना नमस्कार कर चुकने के बाद फिर वे, कूणिक राजा को आगे कर के खड़ी खड़ी विनयपूर्वक हाथ जोड़ कर भगवान की सेवा करने लगीं ॥ सू. ५५ ॥

'तए णं' इत्यादि ।

(तए णं) बारह प्रकार के परिषद जम जाने पर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर ने (कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स) भंभसार अर्थात् श्रेणिक

(वंदित्ता णमंसित्ता कूणियरायं पुरओ कट्टु ठिइयाओ चेव सपरिवाराओ अभिमुहाओ विणएणं पंजलिउडाओ पज्जुवासंति) वंदना नमस्कार करी लीधा पछी वणी ते इच्छिउ राजने आगण करीने उली उली विनयपूर्वक हाथ जोडीने भगवाननी सेवा करवा लागी. (सू. ५५)

“तए णं” इत्यादि.

(तए णं) बार प्रकारनी परिषद लराध जतां (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीरे (कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स) भंभसार अर्थात् श्रेणि-

लियाए परिसाए इसिपरिसाए मुणिपरिसाए जइपरिसाए देव-
परिसाए अणेगसयाए अणेगसयवंदाए अणेगसयवंदपरिवाराए

य महइमहालियाए' तस्याश्च महातिमहत्याः 'परिसाए' परिषदः=सभायाः, 'इसिपरिसाए' ऋषिपरिषदः=ऋषन्ति=जानन्ति अवधिज्ञानादिनेति ऋषयः=अतिशयज्ञानवन्तः, तेषां परिषत्-सभा तस्याः, 'मुणिपरिसाए' मुनिपरिषदः=मुणन्ति=मन्यन्ते वा=प्रतिजानन्ति सर्वसावद्य-व्यापारोपरतिम् इति मुणयो=मुनयो वा=सर्वविरतिमन्तः, तेषां परिषत् तस्या मुणिपरिषदो, मुनिपरिषदो वा, 'जइपरिसाए' यतिपरिषदः=यतन्ते दशविधयतिधर्मे इति यतयः । तथा चोक्तम्—

एवं यः शुद्धयोगेन, परित्यज्य गृहाऽऽश्रमान् ।

संयमे रमते नित्यं, स यतिः परिकीर्तितः ॥ १ ॥

इति तेषां यतीनां परिषत्-तस्याः, 'देवपरिसाए' देवपरिषदः=देवानां=भवन-पत्यादिचतुर्विधदेवानां परिषत्-तस्याः, 'अणेगसयाए' अनेकशतायाः=अनेकानि शतानि यस्यां साऽनेकशता तस्याः, 'अणेगसयवंदाए' अनेकशतवृन्दायाः=अनेकशतानि वृन्दानि=समूहा यस्यां साऽनेकशतवृन्दा तस्याः, 'अणेगसयवंदपरिवाराए' अनेकशतवृन्दपरि-
के पुत्र कूणिक राजा को, तथा—(सुभद्रापमुहाणं देवीणं) सुभद्राप्रमुख राजरानियों को, (तीसे य महइमहालियाए) तथा उस बड़ी भारी (परिसाए) सभा को, (इसि-परिसाए) ऋषियों—अवधिज्ञान से पदार्थों को जानने वालों की सभा को, (मुणिपरिसाए) मुनियों—सर्वसावद्य व्यापारों के मन वचन एवं काय आदि से त्यागियों की सभा को, (जइपरिसाए) गृहाश्रम का परित्याग कर जो मन, वचन, काय के शुद्धयोग से संयम में अर्थात् दश प्रकार के यतिधर्म में नित्य यत्नवान् होते हैं वे यति हैं, उनकी सभा को, (देवपरिसाए) भवनपति आदि चतुर्निकाय के देवों की सभा को, (अणेगसयाए) अनेकशतसंख्यावाली (अणेगसयवंदाए) अनेकशत वृन्द (समूह) वाली (अणेग-

कना पुत्र कूणिक राजाने, तथा—(सुभद्रापमुहाणं देवीणं) सुभद्रा—प्रमुख राजराणी-
ओने (तीसे य महइमहालियाए) तथा ते षड् भोटी (परिसाए) सभाने, (इसि-
परिसाए) ऋषियो—अवधिज्ञानथी पदार्थोने ऋषुवावाणोनी सभाने, (मुणि-
परिसाए) मुनियो सर्वसावद्यव्यापारोने मन वचन तेमज्झ काया आदिथी
त्याग करनारनी सभाने, (जइपरिसाए) गृहस्थाश्रमनो परित्याग करी जे मन,
वचन, कायना शुद्धयोगथी संयमभां अर्थात् दश प्रकारना यतिधर्मभां
नित्य यत्नवान् रहै छे ते यति छे तेमनी सभाने, (देवपरिसाए) भवनपति
आदि चतुर्निकायना देवोनी सभाने, (अणेगसयाए) अनेक शत (सो) संख्या-

ઓહબલે અડબલે મહબ્બલે અપરિમિય-બલ-વીરિય-તેય-માહ-
પ્પ-કંતિ-જુત્તે સારય-ળવત્થણિય-મહુર-ગંભીર-કોંચ-ણિ-

વારાયા:—અનેકશતવૃન્દં પરિવારો યસ્યાં સા તથા તસ્યા:; इत्थम्भूताया विविधायाः परिषदः, अत्र कर्मणः सम्बन्धमात्रविवक्षायां षष्ठी; ‘ओहबले’ ओघबलः=अप्रतिबद्धबलशाली, ‘अडबले’ अतिबलः=अतिशयबलवान्, ‘महबबले’ महाबलः=अनुपमप्रशस्तशक्तिमान्, ‘अपरिमिय-बल-वीरिय-तेय-माहप्प-कंति-जुत्ते’ अपरिमित-बल-वीर्य-तेजो-माहात्म्य-कान्ति-युक्तः, अपरिमितम्=अत्यधिकं बलं=शारीरिकम्, वीर्यं=जीवसम्भूतम्, तेजो=दीप्तिः, माहात्म्यम्=प्रभावः, कान्तिः=सौन्दर्यम्, एतैर्युक्तः, ‘सारय-णव-त्थणिय-महुर-गंभीर-कौंच-णिग्घोस-दुंदुभि-स्सरे’ शारद-नव-स्तनित-मधुर-गम्भीर-क्रौञ्च-निर्घोष-दुन्दुभि-स्वरः—शारदं=शरत्कालिकं यन्नवस्तनितं—नवघनगर्जितं तद्वन्मधुरो गम्भीरश्च तथा क्रौञ्चनि-
सय-वंद-परिवाराण) અનેકશત-સમૂહ-યુક્ત પરિવાર વાલી ઉસ સમા કો, (અરહા) અર્હત પ્રભુ (ધમ્મં) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કા (ભાસડ) ઉપદેશ દેતે હૈં—ઇસ શાશ્વત નિયમ કે અનુસાર (અદ્દમાગહાણ ભાસાણ) અર્ધમાગધી ભાષા દ્વારા (ધમ્મં) શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મ કા (પરિકહેડ) ઉપદેશ દિયા । ભગવાન્ કૈસે થે ? સો કહતે હૈં—ભગવાન્ મહાવીર પ્રભુ (ઓહબલે અડબલે મહબ્બલે અપરિમિય-બલ-વીરિય-તેય-માહપ્પ-કંતિ-જુત્તે) અપ્રતિબદ્ધબલશાલી થે । અતિશયબલિષ્ઠ થે । અનુપમ-પ્રશસ્ત શક્તિ-સંપન્ન થે । અપરિમિત બલ, વીર્ય, તેજ, માહાત્મ્ય એવં કાંતિ સે યુક્ત થે । બલ સે યહાં પર શારીરિક શક્તિ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । વીર્ય સે જીવ કી અસાધારણ શક્તિ કા ગ્રહણ ક્રિયા ગયા હૈ । પ્રભાવ કા નામ માહાત્મ્ય હૈ, શારીરિક સુન્દરતા કા નામ કાંતિ હૈ । (સારય-ળવ-

વાળી (અણેગસયવંદાણ) અનેકશત વૃન્દ (સમૂહ) વાળી (અણેગ-સય-વંદ-પરિસાણ) અનેક-શત-સમૂહ યુક્ત પરિવારવાળી તે સલાને, (અરહા) અર્હત પ્રભુ (ધમ્મં) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનો (ભાસડ) ઉપદેશ આપે છે—આ શાશ્વત નિયમને અનુસરીને (અદ્દમાગહાણ ભાસાણ) અર્ધ-માગધી ભાષા દ્વારા (ધમ્મં) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનો (પરિકહેડ) ઉપદેશ આપ્યો. ભગવાન કેવા હતા ? તે કહે છે—ભગવાન મહાવીર પ્રભુ (ઓહબલે, અડબલે, મહબ્બલે, અપરિમિય-બલ-વીરિય-તેય-માહપ્પ-કંતિ-જુત્તે) અપ્રતિબદ્ધ બલશાળી હતા, અતિશય બળવાન હતા. અનુપમ-પ્રશસ્ત-શક્તિ-સંપન્ન હતા. અપરિમિત બલ, વીર્ય, તેજ, માહાત્મ્ય તેમજ કાંતિથી યુક્ત હતા. બલથી અહીં શારીરિક શક્તિનો સંગ્રહ સમજવું. વીર્યથી જીવની અસાધારણ શક્તિનો અર્થ ગ્રહણ કર્યો છે. પ્રભાવનો અર્થ માહાત્મ્ય છે. શારીરિક સુંદરતા એટલે કાંતિ છે. (સારય-ળવ-ત્થણિય-મહુર-ગંભીર-કોંચ-

**ग्वोस-दुंभु-स्सरे उरे वित्थडाए कंठे वट्टियाए सिरे समाइ-
ण्णाए अगरलाए अमम्मणाए सव्व-क्खर-सण्णिवाइयाए**

धोषवत्-क्रौञ्चः=पक्षिविशेषस्तस्य मञ्जुलकूजनवत्, दुन्दुभिस्वरवच्च स्वरो यस्य स
तथा-शारदजलधरध्वनिवत् क्रौञ्चकलकूजनवद् दुन्दुभिस्वरवन्मधुरगम्भीरदूरगामिध्वनियुक्त
इत्यर्थः । 'उरे वित्थडाए' उरसि विस्तृतया-वक्षःस्थलस्य विस्तीर्णत्वात् तत्र विस्तारमुप-
गतया, 'कंठे वट्टियाए' कण्ठे वृत्ततया, स्वार्थे तल्, वृत्तया इत्यर्थः; कण्ठस्य वर्तुलत्वात्
तत्र वृत्तरूपेण स्थितया, 'सिरे समाइण्णाए' शिरसि समाकीर्णया-शिरसि=मूर्ध्नि समाकी-
र्णया=व्याप्तया, ततः 'अगरलाए' अगरलया=व्यक्तया-मूर्ध्नः परावृत्य वक्रमागत्य ताल्वादि-
तत्तत्स्थानं प्राप्य वर्णसमुदायस्वरूपं प्राप्तया इति भावः, 'अमम्मणाए' अमन्मनया=वर्ण-
पदवैकल्यरहितया, 'सव्वक्खरसण्णिवाइयाए' सर्वाक्षरसन्निपातिकया-सर्वे अक्षरसन्नि-
पाताः=वर्णसंयोगाः सन्ति यस्यां सा तथा-सकलवाङ्मयस्वरूपा तथा, भगवतः सर्वज्ञतया
सर्वार्थवाचकशब्दप्रयोगकरणादिति भावः; 'पुण्णरत्ताए' पूर्णरक्तया-पूर्णा=स्वरकलादि-

त्यणिय-महुर-गंभीर-कोंच-णिग्घोस-दुंभु-स्सरे) भगवान् की ध्वनि शरत्कालीन
नवीन मेघ की गर्जना जैसी मधुर एवं गंभीर थी । तथा क्रौंचपक्षी के मंजुल निघोष की
तरह मीठी एवं दुंभु के स्वर की तरह बहुत दूर तक जानेवाली थी । (उरे वित्थडाए)
वक्षस्थल के विस्तीर्ण होने से वहाँ पर विस्तार को प्राप्त हुई ऐसी (कंठे वट्टियाए) कंठ
के वर्तुल होने के कारण वहाँ पर गोलरूप से स्थित, (सिरे समाइण्णाए)
मस्तक में व्याप्त, (अगरलाए) मस्तक से वक्ररूप में आकर उन २ ताल्वा-
दिकस्थानों में प्राप्त होकर वर्णसमुदायस्वरूप को प्राप्त, अत एव स्पष्ट उच्चारणवाली,
(अमम्मणाए) मण-मण शब्द से रहित अर्थात् वर्ण एवं पद की विकलता से रहित,
(सव्वक्खरसण्णिवाइयाए) सकलवाङ्मयस्वरूप-समस्त अक्षरों के संयोगवाली-सकल

णिग्घोस-दुंभु-स्सरे) भगवान्को ध्वनि, शरत् कालीन नवीन मेघनी गर्जना
जैसा मधुर तेमज गंभीर होय तेवो हुतो. तथा क्रौंच पक्षीना मंजुल निघो-
षना जैसा मीठी तेमज दुंभुलिना स्वरना जैसा बहुत दूर सुधी जाय तेवो
हुतो. (उरे वित्थडाए) वक्षस्थल विस्तीर्ण (पडोणुं) होवाथी त्यां विस्तारने प्राप्त
थयेली, (कंठे वट्टियाए) कंठ गोण होवाना कारणे त्यां गोण रूपथी स्थित,
(सिरे समाइण्णाए) मस्तकमां व्याप्त, (अगरलाए) मस्तकथी वक्ररूपमां आवी ते ते
तालु आदिक स्थान प्राप्त करी वर्णसमुदायस्वरूपने प्राप्त होवाथी स्पष्ट उच्चा-
रणवाली, (अमम्मणाए) मण-मण शब्द रहित अर्थात् वर्ण तेमज पदनी
विकलताथी रहित (सव्व-क्खर-सण्णिवाइयाए) सकल वाङ्मयस्वरूप-समस्त अक्ष-

पुण्णरत्ताए (सव्वभासाणुगामिणीए सरस्सईए जोयणणीहारिणा सरेणं अद्धमागहाए भासाए भासइ, अरिहा धम्मं परिकहेइ, तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अगिलाए धम्मं आइक्खइ, सावि य णं अद्धमागहा भासा तेसिं सव्वेसिं आरिय-

भिरुपपन्ना रक्ता च गेयरागेण मालकोशाख्येन युक्ता च तथा, 'सव्वभासाणुगामिणीए' सर्वभाषानुगामिन्या=सर्वभाषापरिणमनशीलया, 'सरस्सईए' सरस्वत्या=वाण्या, 'जोयणणीहारिणा' योजननिर्हारिणा=योजनप्रमाणदूरगामिना 'सरेणं' स्वरेण=ध्वनिना, अद्ध-मागव्या भाषया भाषते । 'अरिहा धम्मं परिकहेइ' अर्हन् धर्मं परिकथयति । 'तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं' तेषां सर्वेषामार्याऽनार्याणाम्-आर्याणाम्=आर्यदेशोत्पन्नाम्, अनार्याणाम्=अनार्यदेशोत्पन्नाम्, 'अगिलाए' अग्लायन्=ग्लानिरहितो 'धम्मं' धर्मं=श्रुत-चारित्रलक्षणम्, 'आइक्खइ' आख्याति=कथयति । 'सावि य अद्धमागहा भासा' साऽपि च अद्धमागधी भाषा-प्राकृतभाषालक्षणबहुला, 'तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं' तेषां

भाषामय, (पुण्णरत्ताए) स्वर एवं कलादिकों से उत्पन्न तथा मालकोश नामक गेयराम से युक्त, (सव्वभासाणुगामिणीए) और (सर्वभाषापरिणमनस्वभाववाली ऐसी (सरस्सईए) सरस्वती-वाणी से, जो (जोयणणीहारिणा) एक योजन तक दूर जाने वाले स्वर से युक्त थी और जिसका दूसरा नाम अर्धमागधी भाषा था; (तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अगिलाए धम्मं आइक्खइ) उन समस्त आर्यदेशोत्पन्न एवं अनार्यदेशोत्पन्न मानवों को श्रुतचारित्र रूप धर्म का विना किसी खेद के प्रभु ने उपदेश दिया । (सा वि य णं अद्धमागहा भासा तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ) प्रभु ने जिस अर्धमागधी भाषा द्वारा उन

रोना संयोगवाणी-सङ्गलभाषामय, (पुण्णरत्ताए) स्वर तेमञ्ज कलादिकेथी उत्पन्न मालकोश नामक गेयरामथी युक्त, (सव्वभासाणुगामिणीए) सर्वभाषा-परिणमन-स्वभाववाणी येवी (सरस्सईए) सरस्वती-वाणीथी, के ने (जोयणणीहारिणा) येक योजन सुधी दूर जाय तेवा स्वरथी युक्त हुती तथा नेनुं भीणुं नाम अर्ध-मागधी भाषा हुतुं, (तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अगिलाए धम्मं आइक्खइ) ते समस्त आर्य-अनार्य-देशोत्पन्न मानवोने श्रुतचारित्र रूप धर्मने कंठ पणु येह विना प्रभुये उपदेश आप्थे। (सा वि य णं अद्धमागहा भासा तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ) प्रभुये ने अर्धमागधी

मणारियाणं अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ । तंजहा—
अत्थि लोए, अत्थि अलोए, एवं जीवा अजीवा बंधे मोक्खे पुण्णे

सर्वेषाम् आर्याणामनार्याणाम्, 'अप्पणो' आत्मनः=स्वस्य, 'सभासाए' स्वभाषायाः, 'परि-
णामेणं परिणमइ' परिणामेन परिणमति, यादृशं धर्मं कथयति तं दर्शयति—'तं जहा' तद्यथा-
'अत्थि लोए' अस्ति लोकः—इत्यादिः 'सफले कल्लाणपावए' इत्यन्तो ग्रन्थो धर्मस्वरूप-
प्रदर्शकः । लोकः—पञ्चास्तिकायमयः । 'अत्थि अलोए' अस्त्यलोकः—अलोकः=केवलाकाश-
रूपः—एतयोरस्तित्वाभिधानं शून्यवादनिरासार्थम् । 'एवं जीवा' "अत्थि जीवा" सन्ति
जीवाः—जीवाः=उपयोगलक्षणाः । इदं नास्तिकमतनिराकरणार्थम् । 'अस्ति अजीवा' सन्ति
अजीवाः=जडलक्षणाः, एतत्कथनमद्वैतवादनिराकरणार्थम् । 'अत्थि बंधे' अस्ति बन्धः—

समस्त आर्य और अनार्यों को श्रुतचारित्ररूप धर्म का उपदेश दिया वह प्रभु की भाषा,
उन समस्त आर्य—अनार्यों की अपनी २ भाषा में परिणमित होने के स्वभाववाली थी ।
भगवान् ने जिस तरह धर्म का उपदेश दिया सूत्रकार उसे यहां प्रकट करते हैं—

(अत्थि लोए) पंच—अस्तिकायमय यह लोक अस्ति-स्वरूप है । (अत्थि अलोए)
केवल आकाशस्वरूप अलोक भी अस्तिस्वरूप है । लोक और अलोक में अस्तित्वस्वरूपता
का कथन बौद्धों द्वारा संमत शून्यवाद के निराकरण करने के लिये जानना चाहिये ।
(एवं जीवा) इसी तरह उपयोगलक्षणवाला जीव भी अस्तित्वविशिष्ट है । जीव में अस्ति-
त्वविधान नास्तिकमत के परिहारनिमित्त जानना चाहिये । (अजीवा) जिसका लक्षण जड
है ऐसा अजीव पदार्थ भी भावस्वभावविशिष्ट है । अजीव पदार्थ की सत्ता का वह निरूप-
ण अद्वैतवाद के निराकरण के लिये जानना चाहिये । (बंधे) जीव और कर्मोंका संबंध

भाषा द्वारा ते समस्त आर्य अने अनार्य दोऊने श्रुतचारित्ररूप धर्मने
उपदेश आये, प्रभुनी ते भाषा ते समस्त आर्यों अनार्योंनी पोतपोतानी
भाषाभां परिणाम पाववावाणा (समजय तेवा)—स्वभाववाणी हुती. लगवाने
जेवी रीते धर्मने उपदेश दीधे ते अडीं सूत्रकार प्रकट करे छे—(अत्थि लोए)
पंचअस्तिकायमय आ दोऊ अस्तित्वरूप छे. (अत्थि अलोए) केवल आकाश-
स्वरूप अदोऊ पणु अस्तित्वरूप छे. दोऊ अने अदोऊभां अस्तित्वरूपतानुं
कथन बौद्धो द्वारा संमत शून्यवादनं निराकरण करवा भाटे जाणुपुं जेधअ.
(एवं जीवा) आ रीते उपयोगलक्षणवाणा जव पणु अस्तित्व—विशिष्ट छे.
जवभां अस्तित्वनुं विधान नास्तिकमतना परिहारनिमित्त जाणुपुं जेधअ.
(अजीवा) जेनुं लक्षण जड छे तेवा अजव पदार्थ पणु भाव—स्वभाव—विशिष्ट
छे. अजव पदार्थनी सत्तानुं आ निरूपण अद्वैतवादनं निराकरण (परिहार)

કર્મણા જીવસમ્બન્ધોઽસ્તિ, બન્ધનં બન્ધઃ=આત્મપ્રદેશાનાં જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મપુદ્ગલાનાં ચ પરસ્પરં ક્ષીરોદકવત્ સમ્બન્ધ इत्यर्थः । एतत्कथनं सांख्यादिमतनिराकरणार्थम् । ‘अस्थि मोक्षे’ अस्ति मोक्षः=जीवस्य अखिलकर्मक्षयो मोक्षः सोऽस्ति । सकलकर्मणां क्षयः=आत्मप्रदेशेभ्यो-
ऽपगमः, तथासति सकलकर्मविमुक्तस्य ज्ञानदर्शनोपयोगलक्षणस्यात्मनः स्वस्वरूपेऽवस्थानं मोक्ष इत्यर्थः । सकलकर्मक्षयसमकालमेव औदारिकशरीरात्यन्तवियुक्तस्यास्य मनुष्य-
जन्मनः समुच्छेदः, बन्धहेत्वभावाच्चोत्तरजन्मनः पुनरप्रादुर्भावः, आत्मा ज्ञानाद्युपयोगलक्षणः

સ્વરૂપ બંધ મી હૈ । જિસ પ્રકાર દૂધ ઓર પાની કા પરસ્પર એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ સંબંધ હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપુદ્ગલોં કા આત્મપ્રદેશોં કૈ સાથ એક ક્ષેત્રાવગાહરૂપ જો સંબંધ હૈ ઉસકા નામ બંધ હૈ । બંધ કૈ અસ્તિત્વ કા વિધાન સદા આત્મા કો એકાન્ત શુદ્ધ માનનેવાલે સાંખ્ય આદિ કી માન્યતા કો નિરાકરણ કરને કૈ લિયે જાનના ચાહિયે । (મોક્ષે) મોક્ષ હૈ । જબ બંધ હૈ તો ઉસકૈ અત્યંતાભાવસ્વરૂપ જીવ કૈ સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષયસ્વરૂપ મોક્ષ મી હૈ । આત્મા જબ સમસ્ત કર્મોં સે બિલ્કુલ રિત્ત હો જાતા હૈ તબ જ્ઞાનદર્શનરૂપ અપને સ્વરૂપ મેં ઇસકા શાશ્વતિક અવસ્થાન હો જાતા હૈ । ઇસીકા નામ આત્મા કી મુક્તિ હૈ । મતલબ ઇસકા યહ હૈ કિ આત્મા સે જિસ સમય શુદ્ધધ્યાન કૈ પ્રભાવ સે સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈ ઉસી સમય ઇસકૈ ગૃહીત ઔદારિક શરીર કા અત્યન્ત વિયોગ હો જાતા હૈ । ઇસ ઔદારિક શરીરકા અત્યન્ત વિયોગ હોના હી મનુષ્યજન્મકા સમુચ્છેદ હૈ । બન્ધ કૈ હેતુઓંકા અભાવ હોને સે ઇસ આત્મા કો ફિર ઉત્તરકાલ મેં જન્મકી પ્રાપ્તિ હોતી નહીં હૈ ।

માટે જાણવું જોઈએ. (બંધે) જીવ અને કર્મોના સંબંધસ્વરૂપ બંધ પણ છે. જેવી રીતે દૂધ અને પાણીનો પરસ્પર એકક્ષેત્ર-અવગાહ રૂપ સંબંધ થાય છે તેજ પ્રકારે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મપુદ્ગલોના આત્મપ્રદેશોની સાથે એક-ક્ષેત્રાવગાહ રૂપ જે સંબંધ છે તેનું નામ બંધ છે. બંધના અસ્તિત્વનું વિધાન, સદા આત્માને એકાન્ત શુદ્ધ માનવાવાળા સાંખ્ય આદિની માન્યતાનું નિરાકરણ કરવા માટે જાણવું જોઈએ. (મોક્ષે) મોક્ષ છે. જ્યારે બંધ છે ત્યારે તેના અત્યંત અભાવ સ્વરૂપ-જીવનાં સમસ્ત કર્મોના ક્ષય સ્વરૂપ મોક્ષ પણ છે. આત્મા જ્યારે સમસ્ત કર્મોથી બિલકુલ રિત્ત (મુક્ત) થઈ જાય છે ત્યારે જ્ઞાન-દર્શન-સ્વરૂપ પોતાના સ્વરૂપમાં શાશ્વતિક તેનું અવસ્થાન થઈ જાય છે. આનું જ નામ આત્માની મુક્તિ છે. એની મતલબ એ છે કે આત્મામાંથી જે વળતે શુદ્ધધ્યાનના પ્રભાવથી સમસ્ત કર્મોનો ક્ષય થઈ જાય છે તેજ વળતે તેનાથી ગ્રહણ કરાયેલા ઔદારિક શરીરનો અત્યંત વિયોગ થઈ જાય છે. આ ઔદારિક શરીરનો અત્યંત વિયોગ થવો એ જ મનુષ્ય જન્મનો સમુ-
ચ્છેદ છે. બંધના હેતુઓનો અભાવ થવાથી આ આત્માને ઉત્તરકાળમાં ફરી જન્મની પ્રાપ્તિ થતી નથી. આ માટે આ આત્મા, પોતાના-જ્ઞાન-દર્શન ઉપ-

પાવે આસવે સંવરે વેયણા ણિજરા અરિહંતા ચક્કવટ્ટી બલદેવા

કેવલઃ શુદ્ધઃ इत्येषाऽवस्था मोक्ष इत्याख्यायते इति भावः । ‘अत्थि पुण्णे’ अस्ति पुण्यम्—
 पूयते=पवित्राक्रियते आत्मा अनेनेति, पुनाति आत्मानमिति वा पुण्यं=शुभकर्म, ‘पूञ् पवने’
 इत्यस्माद्वातोः ‘पूञो यण्णुक् ह्रस्वश्च’ इत्यौणादिकसूत्रेण सिद्धिः, पुण्यं हि संसारपारावारो-
 त्तरणे तरणिभूतम् । अनेनैवार्यजनपदाभिजनकुलबोधिबीजनिजघर्मादिप्राप्तिर्जायते । किं
 बहुना तीर्थकरगोत्रमपि पुण्येनैव बध्यते, यो हि पुण्यं सर्वथा हेयं मन्यमानस्तत् त्यजति,
 असौ सनुपेक्षिततरिरिवाऽप्राप्तपरतीरो मध्येसमुद्रं मज्जनवसीदति । ‘अत्थि पावे’ अस्ति
 पापम्—पातयति=शुभपरिणामाद् ध्वंसयत्यात्मानमिति पापम्, पापमेवाऽपचीयमानं सुखं जन-

इसलिये यह आत्मा अपने ज्ञानदर्शनोपयोगरूप स्वभाव में मग्न होता हुआ केवल शुद्ध अव-
 स्थावाला हो जाता है । आत्माकी इसी अवस्थाका नाम मोक्ष है । (पुण्णे) पुण्य है । आत्मा
 जिसके द्वारा पवित्र किया जाय उसका नाम पुण्य है, अथवा जो आत्मा को पवित्र करे ऐसा
 जो शुभकर्म है उसका नाम पुण्य है । यह पुण्यकर्म जीव को संसाररूप पारावार से पार
 करने के लिये नौकास्वरूप है । इसीके प्रभाव से आर्यदेश, उच्चकुल में जन्म, बोधिबीज-
 इत्यादि समस्त उत्तमोत्तम वस्तु की प्राप्ति इस जीव को होती है । ज्यादा और क्या कहा
 जाय ? तीर्थकरगोत्रकर्म का बंध भी तो साक्षात् इसी पुण्य का फल है । जो व्यक्ति इस
 पुण्य कर्म को सर्वथा हेय समझकर उसका परित्याग कर देते हैं वे, जिसने दूसरे तीर को
 प्राप्त किये बिना समुद्र के बीच में ही जहाज का परित्याग कर दिया है उस मनुष्य के
 समान हैं । (पावे) पाप है । जो इस जीव को शुभपरिणाम से गिरा देता है उसका
 नाम पाप है । शंका—पाप जब अपचीयमान होता जाता है तब इस जीव को सुख की

યોગરૂપ સ્વભાવમાં મગ્ન રહીને, કેવલ શુદ્ધ અવસ્થાવાળો થઈ જાય છે.
 આત્માની આ અવસ્થાનું જ નામ મોક્ષ છે. (પુણ્ણે) પુણ્ય છે. આત્મા જેના
 દ્વારા પવિત્ર કરાય તેનું નામ પુણ્ય છે. અથવા જે આત્માને પવિત્ર કરે એવાં
 જે શુભ કર્મ છે તેનું નામ પુણ્ય છે. આ પુણ્યકર્મ જીવને સંસારરૂપ
 પારાવાર (સમુદ્ર)થી પાર કરવા માટે હોડી રૂપ છે. તેના પ્રભાવ વડે જીવને
 આર્ય દેશ, ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ, બોધિબીજ ઇત્યાદિ સમસ્ત ઉત્તમોત્તમ
 વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે. વધારે બીજું શું કહેવું, તીર્થકરગોત્રકર્મનો બંધ
 પણ સાક્ષાત્ એજ પુણ્યકર્મનું ફલ છે. જે વ્યક્તિ આ પુણ્ય કર્મને સર્વથા
 હેય સમજીને તેનો પરિત્યાગ કરી દે છે તેઓ જેમ કોઈ સામે કાંઠે પહોંચ્યા
 વિનાજ સમુદ્રની વચમાં વહાણનો પરિત્યાગ કરી દીધો એવા મનુષ્ય જેવા છે.
 (પાવે) પાપ છે. જે આ જીવને શુભપરિણામથી પાડી દે છે તેનું નામ પાપ
 છે. શંકા—પાપ જ્યારે અપચીયમાન (સ્વલ્પ) થઈ જાય છે ત્યારે આ જીવને

યતિ, ઉપચીયમાનં તદેવ દુઃખં જનયતિ ન પુણ્યં પૃથગસ્તિ, અથવા પુણ્યમેવોપચીયમાનં સુખં જનયતિ, તદેવાપચીયમાનં દુઃખં જનયતિ, ન પાપં વિદ્યતે—इत्येवंवादिमतनिराकर्णार्थं પુણ્યપાપયોઃ પૃથગભિધાનમ્, કેવલૈકસ્વભાવવાદિનિરાસાર્થં વા સર્વેષાં પૃથક્ પૃથગુક્તિઃ । ‘અસ્થિ આસવે’ અસ્ત્યાસ્રવઃ—આ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=પ્રવિશતિ આત્મનિ જ્ઞાનાવરણીયાવષ્ટવિધં કર્મ યેન સ આસ્રવઃ, આશ્રવ इतिच्छायापक्षे तु—आश्रीयते=समुपाज्यते કર્મ યેન સઃ, પૃષોદરાદિત્વાદ યસ્ય વઃ, સર્વથા જીવતઢાગે કર્મસલિલપ્રવેશાય નાલિકા—પ્રાપ્તિ હોતી હૈ એવં પાપ જબ ઉપચીયમાન હોતા હૈ તબ દુઃખ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, ઇસસે યહ નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ પાપ કે અપચય ઓર ઉપચય કે અધીન હી જીવોં કો સુખ—દુઃખ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, અતઃ સુખ કા કારણ પુણ્ય એવં દુઃખ કા કારણ પાપ ઇસ પ્રકાર સે દો સ્વતંત્ર તત્ત્વ માનના ઠીક નહીં હૈ, યા તો પુણ્ય હી માનો યા પાપ હી માનો, દોનોં કો એક સાથ મત માનો । ઇસી તરહ પુણ્ય કા હ્રાસ જબ હોને લગતા હૈ તબ જીવોં કો દુઃખ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ઓર જબ પુણ્ય કા ઉપચય હોતા હૈ તબ જીવોં કો સુખકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ઇસ કથન સે મી યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ સુખદુઃખ, પુણ્ય કે ઉપચય ઓર અપચય કે આધીન હૈં । અતઃ ઇનકા કારણ ઉસકા હી ઉપચય એવં અપચય હૈ । ઇસસે યહ એક પુણ્ય તત્ત્વ હી માનના ચાહિયે—સો એસા કહને વાલે વાદિયોં કે મન્તવ્ય કો નિરાકરણ કે લિયે દોનોં તત્ત્વોં કી સ્વતંત્રરૂપ સે સત્તા પ્રતિપાદિત કી હૈ । અથવા જો વસ્તુકા એક હી સ્વભાવ માનતે હૈં ઊન વાદિયોં કે મત કો નિરાકરણ કરને કે લિયે ભિન્ન ૨ રૂપ સે સમસ્તપદાર્થોં કા યહ નિરૂપણ હુઆ હૈ । (આસવે) આસ્રવ તત્ત્વ હૈ । જિસકે કારણ સે જ્ઞાનાવરણીય

—સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે તેમજ પાપ જ્યારે ઉપચીયમાન (સંચિત) થાય છે ત્યારે દુઃખની પ્રાપ્તિ થાય છે આથી એ નિષ્કર્ષ (સાર) નીકળે છે કે પાપના અપચય અને ઉપચયને આધીન જીવોને સુખ દુઃખની પ્રાપ્તિ થાય છે. આથી સુખનું કારણ પુણ્ય તેમજ દુઃખનું કારણ પાપ આ પ્રકારનાં બે સ્વતંત્ર તત્ત્વ માનવાં ઠીક નથી. કાં તો પુણ્યને માનો અગર તો પાપને માનો બન્નેને એક સાથે ન માનો. આવી રીતે પુણ્યનો હ્રાસ જ્યારે થવા લાગે છે ત્યારે જીવોને દુઃખની પ્રાપ્તિ થાય છે, અને જ્યારે પુણ્યનો ઉપચય થાય છે ત્યારે જીવોને સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ કથનની પણ એજ નિષ્કર્ષ નીકળે છે કે સુખ દુઃખ, પુણ્યના ઉપચય અને અપચયને આધીન છે. આથી આનું કારણ તેનોજ ઉપચય તેમજ અપચય છે. તેથી એ એક પુણ્ય તત્ત્વજ માનવું જોઈએ. આમ કહેવાવાળા વાદિઓના મતવ્યના નિરાકારણને માટે બન્ને તત્ત્વોની સ્વતંત્ર રૂપે સત્તાનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. અથવા જે વસ્તુનો કેવળ એકજ સ્વભાવ માને છે તેવા વાદિઓના મતનું નિરાકરણ કરવા માટે જુદા જુદા રૂપથી સમસ્ત પદાર્થોનું આમ નિરૂપણ કર્યું છે. (આસવે) આસ્રવ તત્ત્વ છે. જેના

रूप इति यावत् । कर्मबन्धहेतुरास्रवः, स च मिथ्यात्वादिः । 'अत्थि संवरे' अस्ति संवरः=आस्रवनिरोधः, संव्रियते=निरुध्यते आस्रवत्=आगच्छत् कर्म येन सः=संवर, एष च द्रव्यभावभेदाभ्यां द्विविधः, तत्र द्रव्यतस्तथाविधद्रव्येण (चिक्कणमृदादिना) . सलिलोपरि तरण्यादावनवरतप्रविशन्तीराणां निरोधः, भावतः आत्मतरण्यां प्रविशत्कर्मजलानां समिति-गुप्तिप्रभृतिभिर्निरोधः । इह भावसंवरस्य ग्रहणम् । एतत्कथनं बन्धमोक्षयोर्निष्कारणत्वप्रति-

आदिक अष्ट-प्रकार का कर्म आत्मा में प्रविष्ट होता है उसका नाम आस्रव है । (आसवे) इस पद की 'आश्रव' जब इस प्रकार की संस्कृत छाया रखी जायगी तब इसका अर्थ होगा जिसके द्वारा जीव कर्मों का आश्रय-समुपार्जन करे वह आश्रव है । जिस प्रकार तालाब में पानीका आना नालों द्वारा होता है उसी प्रकार इस जीव में जिसके द्वारा कर्मरूपी पानी आता रहता है वह आस्रव है । यह आस्रव ही नवीन कर्मों के बन्ध का कारण होता है । यह आस्रव तत्त्व मिथ्यात्वादिक के भेद से अनेक प्रकार का है; क्यों कि ये जो मिथ्या-त्वादिक हैं वे कर्मों के आगमन के कारण हैं । (संवरे) संवर तत्त्व है । आस्रव का रुकना इसका नाम संवर है । द्रव्यसंवर और भावसंवर इस प्रकार से संवर के दो भेद हैं । द्रव्य-कर्मों के आगमन को रोकने में आत्मा का जो परिणाम कारण होता है वह परिणाम भावसंवर है, एवं जो कर्मपुद्गलों का रुकना है वह द्रव्यसंवर है । नौका में पानी के आगमन का रुकना इसे द्रव्यसंवर के स्थानापन्न, एवं जिस छिद्र से वह आता था उसका बंद कर

डारणु शानावरणीय आदिक आठ प्रकारनां कर्म आत्माभां प्रविष्ट थाय छे तेनुं नाम आस्रव छे. (आसवे) आ पदनी (आश्रव) आ प्रकारनी जे संस्कृत छाया राखवामां आवे तो जेना अर्थ जेम थाय के जेना द्वारा जव कर्मोना आश्रय (समुपार्जन) करेते आश्रव छे. जेम तणावमां पाणीनुं आववु नाणां द्वारा थाय छे तेम आ जवमां जेना द्वारा कर्मरूपी पाणी आवे छे ते आस्रव छे. आ आस्रव ज नवीन कर्मोना अंधनुं डारणु थाय छे. जेपुं ते आस्रव तत्त्व मिथ्यात्व आदिकना लेहथी अनेक प्रकारनुं छे; केमके आ जे मिथ्यात्व आदिक छे ते कर्मोना आगमननुं डारणु छे. (संवरे) संवर तत्त्व छे. आस्रवने रोकवुं तेनुं नाम संवर छे. द्रव्यसंवर अने भावसंवर आ प्रकारना संवरना जे लेह छे. द्रव्यकर्मोना आगमनने रोकवामां आत्मानुं जे परिणाम डारणु डोय छे ते परिणाम भावसंवर छे. तेमज्जे कर्मपुद्गलोने रोकके ते द्रव्यसंवर छे. वडाणुमां पाणीना आववाने रोकवुं जे द्रव्यसंवरनुं स्थानापन्न तेमज्जे छिद्रमांथी ते आववुं डतुं तेने अंध करी देवुं ते भावसंवरनुं स्थानापन्न समजवुं जेधये. समितिगुप्ति आदि जे अंधा

વેધાર્થમ્ । ‘અત્થિ વેયણા’ અસ્તિ વેદના—વેદના=વેદનમ્—સ્વભાવાદુદીરણાં કૃત્વા વા
 ઉદયાવલિકામનુપ્રવિષ્ટસ્ય કર્મણો યોઽનુભવઃ=કર્મફલભૂતસુખદુઃસ્વાનુભવઃ, તત્સ્વરૂપા ।
 ‘અત્થિ ણિજ્જરા’ અસ્તિ નિર્જરા—નિર્જરા=દેશતઃ કર્મક્ષયઃ, ‘અત્થિ અરિહંતા’ સન્ત્યર્હન્તઃ,
 ‘અત્થિ ચક્કવટ્ટી’ સન્તિ ચક્રવર્તિનઃ, ‘અત્થિ બલદેવા’ સન્તિ બલદેવાઃ, ‘અત્થિ
 વાસુદેવા’ સન્તિ વાસુદેવાઃ—અર્હદાદીનાં ચતુર્ણામભિધાનં તુ તેષાં ભુવનાતિશાયિત્વ—
 પ્રતિપાદનાર્થં તેષામતિશયત્વમશ્રદ્ધતાં શ્રદ્ધાવિધાનાર્થં ચ । ‘અત્થિ નરગા’ સન્તિ નરકાઃ—

દેના હસે ભાવસંવર કે સ્થાનાપન્ન જાનના ચાહિયે । સમિતિગુપ્તિ આદિ યે સર્વ ભાવસંવર કે
 હી મેદ હૈં । ઇનસે હી આત્મા મેં આતે હુણ્ કર્મ રુકતે હૈં^૧ । યહાં પર ભાવસંવર કા
 પ્રહ્ણ હુઆ હૈ । ભાવસંવર કા કથન બન્ધ ઓર મોક્ષ કો જો નિષ્કારણક માનને વાલે હૈં
 ઁનકી ધારણા કા પ્રતિષેધ કરને કે નિમિત્ત સમજના ચાહિયે । (વેયણા) વેદના હૈ । કર્મ
 કી સ્વભાવતઃ ઉદીરણા કરકે અથવા ઉદયાવલિ મેં ઁસે લાકર ઁસકે સુખદુઃસ્વાદિક રૂપ
 ફલ કા અનુભવ કરના ઁસકા નામ વેદના હૈ । (ણિજ્જરા) નિર્જરા હૈ । ઁકદેશ સે કર્મો
 કા ક્ષય હોના સો નિર્જરા હૈ । (અત્થિ અરિહંતા અત્થિ ચક્કવટ્ટી) અર્હંત હૈં, ચક્રવર્તી
 હૈં । (અત્થિ બલદેવા અત્થિ વાસુદેવા) બલદેવ હૈં, વાસુદેવ હૈં । ઇન ચાર અર્હંત આદિકા
 પ્રતિપાદન ત્રિભુવન મેં ઇનકી સર્વોત્કૃષ્ટતા જાહિર કરને કે નિમિત્ત હૈ । અથવા જો ઇનમેં
 અતિશયત્વ નહીં માનતે હૈં, વે ઁસ પ્રતિપાદન સે ઁનકે વિષય મેં અપની શ્રદ્ધા જાપ્રત કરે
 ઁસકે લિયે મી યહ અર્હંત આદિ ચાર કા પ્રતિપાદન કિયા ગયા જાનના ચાહિયે । (અત્થિ

ભાવસંવરના ભેદ છે. એનાથી જ આત્મામાં આવતાં કર્મ^૧ રોકાય છે. અહીં
 ભાવસંવરનું શ્રદ્ધા થયું છે. ભાવસંવરનું કથન બંધ અને મોક્ષને જેઓ
 નિષ્કારણક માને છે તેમની ધારણાનો પ્રતિષેધ કરવા નિમિત્તે સમજવું જોઈએ.
 (વેયણા) વેદના છે. કર્મની સ્વભાવતઃ ઉદીરણા કરીને અથવા ઉદયાવલિમાં તે
 લાવીને તેનાં સુખ દુઃખ આદિક રૂપ ફલનો અનુભવ કરવો તેનું નામ વેદના
 છે. (ણિજ્જરા) નિર્જરા છે. એકદેશથી કર્મોનો ક્ષય થવો તે નિર્જરા છે.
 (અત્થિ અરિહંતા અત્થિ ચક્કવટ્ટી) અર્હંત છે. ચક્રવર્તી છે. (અત્થિ બલદેવા અત્થિ
 વાસુદેવા) બલદેવ છે, વાસુદેવ છે. આ ચાર અર્હંત આદિનું પ્રતિપાદન, ત્રિભુ-
 વનમાં તેમની સર્વોત્કૃષ્ટતા જાહેર કરવાને નિમિત્તે છે. અથવા તેઓમાં જે
 અતિશયત્વ ન માનતા હોય તેઓ આ પ્રતિપાદનથી તેમના વિષયમાં પોતાની
 શ્રદ્ધા જાપ્રત કરે તે માટે પણ આ અર્હંત આદિ ચારનું પ્રતિપાદન કરેલું

(૧) ચેદગપરિણામો જો કમ્મસ્સાવગિરોહણે હેઠું ।

સો ભાવસંવરો સ્વલ્લ દવ્વાસવરોહણે અણ્ણો ॥

વદસમિદીગુત્તીઓ ધમ્માણુપિહા પરીસહજઓ ય ।

ચારિત્તં બહુમેયં ણાયવ્વા, ભાવસંવરવિસેસા ॥ દ્રવ્યસંગ્રહ ગાથા ૩૪-૩૫ ॥

વાસુદેવા નરગા ણેરડયા તિરિક્કવજોણિયા તિરિક્કવજોણિનીઓ
માયા પિયા રિસઓ દેવા દેવલોયા સિદ્ધી સિદ્ધા પરિણિવ્વુયા,

અનેકવિધનરકસ્થાનાનિ સન્તિ । ‘અત્થિ ણેરડયા’ સન્તિ નૈરયિકાઃ=નરકનિવાસિનઃ
સન્તિ, ‘અત્થિ તિરિક્કવજોણિયા’ સન્તિ તિર્યગ્ચોનિકાઃ, ‘તિરિક્કવજોણિનીઓ’
સન્તિ તિર્યગ્ચોનિજાતાઃ સ્ત્રિયઃ, નરકનૈરયિકાદીનામદૃશ્યાનાં સત્તાસ્થાપનાય કથનમ્ ।
‘અત્થિ માયા અત્થિ પિયા’ અસ્તિ માતા અસ્તિ પિતા, કેચિદેવં મન્યન્તે—માતાપિતૃ-
વ્યવહારો ન વાસ્તવિકઃ, યતો હિ—યૂકાકૃમિગણ્ડોલકાદયઃ સ્વજનકં વિનૈવોત્પદ્યન્તે, તન્મત-
નિરાકરણાર્થમિદં ભગવતા પ્રોક્તમિતિ ભાવઃ । ‘અત્થિ રિસઓ’ સન્તિ ઋષયઃ—ઋષયઃ=
અર્તાન્દ્રિયાઽર્થદ્રષ્ટારઃ સન્તિ । કેચિત્તેવં વદન્તિ—અર્તાન્દ્રિયાર્થસ્ય દ્રષ્ટારો ન સંભવન્તિ,

નરગા અત્થિ ણેરડયા અત્થિ તિરિક્કવજોણિયા તિરિક્કવજોણિનીઓ) અનેક
વિધ નરકસ્થાન હૈં ઓર ઉનમેં રહને વાલે જીવ નારકી હૈં, તિર્યચયોનિ કે જીવ હૈં. તિર્યચ
યોનિ મેં ઉત્પન્ન તિર્યચ સ્ત્રિયાં મી હૈં । નરક ઇવં નારકી આદિ અદૃશ્ય જીવોં કા જો કથન
કિયા હૈ વહ ઉનકી સત્તા પ્રદર્શિત કરને કે લિયે જાનના ચાહિયે । (અત્થિ માયા અત્થિ
પિયા) માતા હૈં, પિતા હૈં । કોઈ ૨ ઇસે માનતે હૈં કિ માતા—પિતા યહ વ્યવહાર વાસ્તવિક
નહીં હૈં; ક્યોં કિ ઇસે મી કઈ જીવ હૈં કિ જો માતા—પિતા કે વિના મી ઉત્પન્ન હોતે રહતે
હૈં । ઉનકી ઇસ કલ્પના કો નિરાકરણ કરને કે લિયે ભગવાન્ ને યહ કહા હૈં । (અત્થિ
રિસઓ) અર્તાન્દ્રિય અર્થ કો દેઁવને વાલે ઋષિજન હૈં । ઇસ કથન કા તાત્પર્ય યહ હૈં કિ
વહુત સે વાદી ઇસા કહતે હૈં કિ અર્તાન્દ્રિયાર્થ દ્રષ્ટા કોઈ નહીં હૈં; કારણ કિ પુરુષ રાગાદિ
સે કમી નિર્મુક્ત નહીં હો સકતા । અતઃ જૈસે હમલોગ રાગાદિનિપન્ન હોને સે અર્તાન્દ્રિયાર્થ કે

બાણુવું બેઠ્યે. (અત્થિ નરગા અત્થિ ણેરડયા અત્થિ તિરિક્કવજોણિયા તિરિક્કવ-
જોણિનીઓ) અનેકવિધ નરકસ્થાન છે, અને તેમાં રહેવાવાળા જીવ નારકી
છે. તિર્યચયોનિના જીવ છે, તિર્યચયોનિમાં ઉત્પન્ન તિર્યચ સ્ત્રીઓ પણ
છે. નરક તેમજ નારકી આદિ અદૃશ્ય જીવોનું જે કથન કર્યું છે તે તેમની સત્તા
પ્રદર્શિત કરવા માટે બાણુવું બેઠ્યે. (અત્થિ માયા અત્થિ પિયા) માતા છે
પિતા છે. કોઈ કોઈ એમ માને છે કે માતા પિતા એ વ્યવહાર વાસ્તવિક
નથી; કેમકે એવા પણ કેટલાય જીવ છે કે જે માતાપિતા વિના પણ ઉત્પન્ન
થતા રહે છે. તેમની આ કલ્પનાનું નિરાકરણ કરવા માટે ભગવાને એમ કહ્યું
છે. તથા (અત્થિ રિસઓ) અર્તાન્દ્રિય અર્થને બેવાવાળા ઋષિજન છે. આ કથ-
નનું તાત્પર્ય એ છે કે ઘણા વાદિઓ એમ કહે છે કે અર્તાન્દ્રિય—અર્થ—દ્રષ્ટા
કોઈ છે નહિ; કારણ કે પુરુષ રાગાદિથી કદી પણ નિર્મુક્ત થઈ શકતો નથી.

પુરુષાણાં રાગાદિદોષવત્ત્વાત્ અસ્મદાદિવત્ इति, તન્મતનિરાસાર્થમિદમુક્તમ્ । ‘અત્થિ દેવા અત્થિ દેવલોયા’ સન્તિ દેવાઃ=ભવનપત્યાદયઃ, સન્તિ દેવલોકાઃ—દેવાનાં લોકાઃ=સ્થાનાનિ સૌધર્માદીનિ । યત્વાહુઃ—ન સન્તિ દેવાદયોઽપ્રત્યક્ષત્વાત્ इति, તન્મતવ્યુદાસાર્થમિદમુક્તમ્, ‘અત્થિ સિદ્ધી અત્થિ સિદ્ધા’ અસ્તિ સિદ્ધિઃ, સન્તિ સિદ્ધાઃ—સિદ્ધિઃ=સિધ્યન્તિ-નિષ્ઠિતાર્થા ભવન્તિ યસ્યાં સા તથા, સિદ્ધિમન્તઃ સિદ્ધાઃ । ‘પરિણિવ્વાણે’ પરિનિર્વાણ-મસ્તિ—પરિનિર્વાણં=કર્મકૃતસન્તાપોપશાન્ત્યા સુસ્થત્વમ્ । નિઃશેષતઃ સકલકર્મક્ષયજન્યમાત્યન્તિકં સુખમિત્યર્થઃ । ‘અત્થિ પરિણિવ્વુયા’ સન્તિ પરિનિર્વૃતાઃ=અપુનરાવૃત્ત્યા સકલસન્તાપ-

દર્શક નહીં હો સકતે હૈં ઉસી પ્રકાર કોઈ મી વ્યક્તિ રાગાદિક સે વિશિષ્ટ હોને કે કારણ અતીન્દ્રિયાર્થ પદાર્થોં કા દ્રષ્ટા નહીં હો સકતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જો યહ મીમાંસકોં કી માન્યતા હૈ ઉસ માન્યતા કો દૂર કરને કે લિયે અતીન્દ્રિયાર્થ દ્રષ્ટા કી યહ સ્થાપના કી હૈ । (અત્થિ દેવા અત્થિ દેવલોયા) પુણ્યજનિત અલૌકિક ક્રીડા કા જો અનુભવ કરતે હૈં ઉનકા નામ દેવ હૈ । વે દેવ ભવનપતિ આદિ કે ભેદ સે ૪ પ્રકાર કે હૈં । ઇનકે રહને કે સ્થાન મી હૈં । જિન્હેં સ્વર્ગ યા દેવલોક કહતે હૈં । જો યહ કહતે હૈં કિ અપ્રત્યક્ષ હોને સે દેવાદિક નહીં હૈં ઉનકે ઇસ મત કા નિરાકરણ કરને કે લિયે દેવોં કા સ્વરૂપ કહા હૈ । (અત્થિ સિદ્ધી અત્થિ સિદ્ધા) સિદ્ધિ હૈ, ઓર સિદ્ધિ જિન્હેં પ્રાપ્ત હો ચુકી હૈ એસે સિદ્ધ મી હૈં । (પરિણિવ્વાણે) પરિનિર્વાણ—મુક્તિ હૈ । કર્મકૃત સન્તાપ કી ઉપશાંતિ સે ઉદ્ભૂત સુસ્થત્વ કા નામ પરિનિર્વાણ હૈ । સમસ્ત કર્મોં કે અત્યંત વિનાશ સે જન્ય જો આત્યંતિક સુખ હૈ ઉસકા નામ સુસ્થત્વ હૈ । (અત્થિ પરિણિવ્વુયા) અપુનરાવૃત્તિવિશિષ્ટ હોને સે સકલ સન્તાપ

આથી જેમ આપણે રાગ આદિ સંપન્ન હોવાથી અતીન્દ્રિયાર્થના દર્શક બની શકતા નથી તેજ પ્રકારે કોઈ પણ વ્યક્તિ રાગ આદિકોથી વિશિષ્ટ હોવાના કારણે અતીન્દ્રિય પદાર્થોના દ્રષ્ટા બની શકે નહિ. એવી જે આ મીમાંસકોની માન્યતા છે તે માન્યતાને દૂર કરવાને માટે અતીન્દ્રિયાર્થ દ્રષ્ટાની આ સ્થાપના કરી છે. (અત્થિ દેવા અત્થિ દેવલોયા) પુણ્યજનિત અલૌકિક ક્રીડાને જે અનુભવ કરે છે તેમનું નામ દેવ છે. તે દેવો ભવનપતિ આદિના ભેદથી ૪ પ્રકારના છે. તેમનાં રહેવાનાં લોક એટલે સ્થાન પણ છે જે એમ કહે છે કે અપ્રત્યક્ષ હોવાથી દેવ આદિક નથી. તેમના આ મતનું નિરાકરણ કરવા માટે દેવોનું સ્વરૂપ કહેલું છે. (અત્થિ સિદ્ધી અત્થિ સિદ્ધા) સિદ્ધિ છે. અને સિદ્ધિ જેને પ્રાપ્ત થઈ ગઈ છે એવા સિદ્ધ પણ છે. (પરિણિવ્વાણે) પરિનિર્વાણ—મુક્તિ છે. કર્મકૃત જે સન્તાપ તેની ઉપશાંતિથી ઉત્પન્ન થતું જે સુસ્થત્વ તેનું નામ પરિનિર્વાણ છે. સમસ્ત કર્મોના અત્યંત વિનાશથી પેદા થતું જે આત્યંતિક સુખ છે તેનું નામ સુસ્થત્વ છે. (અત્થિ પરિ-

૧ પાણાઢવાણ, ૨ મુસાવાણ, ૩ અદિણ્ણાદાણે, ૪ મેહુણે, ૫

કલાપપરિવર્જિતાઃ । ‘અત્થિ પાણાઢવાણ’ અસ્તિ પ્રાણાતિપાતઃ—પ્રાગાઃ=ઉચ્છ્વાસ-
નિઃશ્વાસાદ્યસ્તેષામતિપાતઃ=વિયોગનં—પ્રાગાતિપાતઃ—પ્રાગિહિંસાનમિતિ યાવત્ ; તદુક્તમ્—

પચ્ચેન્દ્રિયાણિ ત્રિવિધં બલં ચ, ઉચ્છ્વાસનિઃશ્વાસમથાન્યદાયુઃ ।

પ્રાણા દશૈતે ભગવદ્ધિરુક્તા—સ્તેષાં વિયોગીકરણં તુ હિંસા ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

‘અત્થિ મુસાવાણ’ અસ્તિ મૃષાવાદઃ—મૃષા=મિથ્યા, વાદઃ=વદનમ્—અસદ્ભૂતાર્થસંભાષણ-
મિતિ યાવત્ । ‘અદિણ્ણાદાણે’ અદત્તાઽઽદાનમસ્તિ—ન દત્તમદત્તમ્=દેવગુરુભૂપગાથાપતિ-
સાધર્મિકૈરનનુજ્ઞાતં, તસ્યાઽઽદાનં=ગ્રહણમ્ । ‘અત્થિ મેહુણે’ અસ્તિ મૈથુનમ્—મિથુનેન=સ્ત્રી-
પુંસાભ્યાં નિર્વૃત્તં કર્મ મૈથુનં—કામક્રાંડેત્યર્થઃ । ‘અત્થિ પરિગ્રહે’ અસ્તિ પરિગ્રહઃ—પરિ=

કે કલાપોં સે પરિવર્જિત ઁસે જીવ હૈં । (અત્થિ પાણાઢવાણ) પ્રાગિહિંસા પાપ હૈ, ઉચ્છ્વાસ-
નિઃશ્વાસ આદિ પ્રાણ હૈં, ઇનકા અતિપાત કરના અર્થાત્ પ્રાણિયોં કે પ્રાણ કા વિયોગ કરના
પ્રાગાતિપાત હૈ । કહા મી હૈ—

“પચ્ચેન્દ્રિયાણિ ત્રિવિધં બલં ચ ઉચ્છ્વાસનિઃશ્વાસમથાન્યદાયુઃ ।

પ્રાણા દશૈતે ભગવદ્ધિરુક્તાસ્તેષાં વિયોગીકરણં તુ હિંસા ॥

શાસ્ત્રોં મેં પાંચ ઇન્દ્રિય, ત્રીન બલ, આયુ, શ્વાસોચ્છ્વાસ ઇસ પ્રકાર સે યે ૧૦ પ્રાણ
ભગવાને બતલાયે હૈં । ઇનકા વિયોગ કરના ઇસકા નામ હિંસા હૈ । (અત્થિ મુસાવાણ)
મૃષાવાદ પાપ હૈ । અસદ્ભૂત અર્થ કા કથન કરના ઇસકા નામ મૃષાવાદ હૈ । (અદિણ્ણાદાણે)
અદત્તાદાન પાપ હૈ । દેવ, ગુરુ, ભૂપ, ગાથાપતિ ઁવં સાધર્મિક આદિ કી કોઈ વસ્તુ કો ઁનકી
આજ્ઞા કે વિના લેના સો અદત્તાદાન હૈ । (અત્થિ મેહુણે) મૈથુન પાપ હૈ । (અત્થિ પરિગ્રહે)
પરિગ્રહ મી પાપ હૈ । જો મૂર્છાપૂર્વક ગ્રહણ ક્રિયા જાય ઁસકા નામ પરિગ્રહ હૈ, અર્થાત્

ગિચ્ચુયા) અપુનરાવૃત્તિવિશિષ્ટ થવાથી તમામ સંતાપના કલાપોથી પરિવર્જિત
એવો જીવ છે. (અત્થિ પાણાઢવાણ) પ્રાણિહિંસા પાપ છે. ઉચ્છ્વાસનિઃશ્વાસ
આદિ પ્રાણ છે. તેનો અતિપાત કરવો અર્થાત્ પ્રાણિઓનો પ્રાણથી વિયોગ
કરવો પ્રાણાતિપાત છે. કહ્યું પણ છે:—

“પચ્ચેન્દ્રિયાણિ ત્રિવિધં બલં ચ ઉચ્છ્વાસનિઃશ્વાસમથાન્યદાયુઃ ।

પ્રાણા દશૈતે ભગવદ્ધિરુક્તાસ્તેષાં વિયોગીકરણં તુ હિંસા ॥

શાસ્ત્રોમાં પાંચ ઇન્દ્રિય, ત્રણ બલ, આયુ, શ્વાસોચ્છ્વાસ આ પ્રકારથી ૧૦
પ્રાણ ભગવાને બતાવ્યા છે. તેનો વિયોગ કરવો તેનું નામ હિંસા છે. (અત્થિ
મુસાવાણ) મૃષાવાદ પાપ છે. અસદ્ભૂત અર્થનું કથન કરવું તે મૃષાવાદ છે.
(અદિણ્ણાદાણે) અદત્તાદાન પાપ છે. દેવ, ગુરુ, ભૂપ, ગાથાપતિ તેમજ સાધ
ર્મિક આદિની કોઈ વસ્તુને તેમની આજ્ઞા વગર લેવી તે અદત્તાદાન છે.

પરિગ્રહે, ૬ અત્થિ કોહે, ૭ માણે, ૮ માયા, ૯ લોભે, અત્થિ

સર્વતો ભાવેન ગૃહ્યતે=જન્મજરામરગાદિદુઃસ્વૈર્વેષ્ટચતે આત્મા અનેનેતિ, યદ્વા પરિગૃહ્યતે=સમૂ-
ર્છે સ્વીક્રિયત इति । ‘અત્થિ કોહે માણે માયા લોભે’ અસ્તિ ક્રોધઃ, અસ્તિ માનઃ,
અસ્તિ માયા, અસ્તિ લોભઃ । ક્રોધઃ=ક્રોધમોહનીયપ્રકૃત્યુદયેન સ્વપરચિત્તપ્રજ્વલનરૂપવિકૃતિ-
જનકઃ આત્મનઃ પરિણામવિશેષઃ । માનઃ=સ્વાપેક્ષયાન્યં હીનં મન્યતે જનો યેન સઃ, માનમોહની-
યોદયસમુત્થોન્યહીનતામનનલક્ષણ આત્મનઃ પરિણામવિશેષઃ । માયા=માયામોહનીયોદયસમુત્થો
જીવસ્ય વચ્ચનપરિણતિવિશેષઃ—સ્વપરવ્યામોહોત્પાદકમાચરણમિતિ યાવત્ । લોભઃ=લોભ-
પ્રકૃત્યુદયવશાત્ દ્રવ્યાદ્યભિલાષલક્ષણો જીવસ્ય પરિણતિવિશેષઃ । ‘અત્થિ જાવ મિચ્છાદંસ-

જન્મ, જરા એવં મરગાદિ દુઃખોં સે જિસકે દ્વારા આત્મા વેષ્ટિત હોતા હૈ ઉસકા નામ
પરિગ્રહ હૈ । (મમેદં) ભાવ કા નામ મૂર્છા હૈ । (અત્થિ કોહે
માણે માયા લોભે) યે ચાર કષાય હૈ—ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ । ક્રોધમોહનીય
પ્રકૃતિ કે ઉદય સે સ્વ ઓર પર કી ચિત્તવૃત્તિ મેં પ્રજ્વલન રૂપ વિકારજનક જો આત્મા કા
પરિણામવિશેષ હોતા હૈ, ઉસકા નામ ક્રોધ હૈ । માનમોહનીય કે ઉદય સે અન્ય કો હીન
સમજને કા જો આત્મા કા પરિણામવિશેષ હોતા હૈ વહ માન હૈ । ઇસકે સદ્ભાવ મેં જીવ
અપની અપેક્ષા અન્ય જન કો હીન સમજતા હૈ । માયામોહનીય કે ઉદય સે પર કો વંચિત
કરને કા જો આત્મા કા પરિણામવિશેષ હોતા હૈ વહ માયા હૈ । ઇસકે વશ મેં રહા હુઆ
જીવ સ્વ ઓર પર કા વ્યામોહક આચરણ ક્રિયા કરતા હૈ । લોભપ્રકૃતિ કે ઉદય કે વશ
સે દ્રવ્યાદિક કો ચાહને કી જો આત્મા કી પરિણતિવિશેષ હૈ ઉસકા નામ લોભ હૈ ।

(અત્થિ મેહુણે) મૈથુન પાપ છે. (અત્થિ પરિગ્રહે) પરિગ્રહ પણ પાપ છે, જે
મૂર્છાપૂર્વક ગ્રહણ કરાય તેનું નામ પરિગ્રહ છે, અર્થાત્ જન્મ જરા તેમજ
મરણ આદિ દુઃખોથી આત્મા જેના દ્વારા વેષ્ટિત થઈ (વીંટળાઈ) બંધ છે
તેનું નામ પરિગ્રહ છે. મૂર્છાભાવનું નામ પણ પરિગ્રહ છે. (મમેદં) ભાવનું
નામ મૂર્છા છે. (અત્થિ કોહે માણે માયા લોભે) આ ચાર કષાય છે—ક્રોધ, માન,
માયા અને લોભ. ક્રોધમોહનીય પ્રકૃતિના ઉદયથી સ્વ અને પરની ચિત્ત-
વૃત્તિમાં પ્રજ્વલનરૂપ વિકારજનક જે આત્માનું પરિણામ-વિશેષ હોય છે
તેનું નામ ક્રોધ છે. માન-મોહનીયના ઉદયથી એક બીજને હીન સમજવાનું
જે આત્માનું પરિણામવિશેષ થાય છે તે માન છે. આના સદ્ભાવમાં જીવ
પોતાના કરતાં બીજા માણસને હીન સમજે છે. માયામોહનીયના ઉદયથી
બીજની વંચના કરવાનું જે આત્માનું પરિણામવિશેષ થાય છે તે માયા છે,
તેને વશ થયેલો જીવ સ્વ તથા પરનું વ્યામોહક આચરણ કર્યા કરે છે.

જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લે । અત્થિ પાણાઢવાયવેરમણે મુસાવાય-

ણસલ્લે' અસ્તિ યાવત્ મિથ્યાદર્શનશલ્યમ્, અત્ર યાવચ્છવ્દાત્—‘પેજ્જે, દોસે, કલહે, અબ્ભવ્વાણે, પેસુણ્ણે, પરપરિવાણ, અરરર્ર્, માયામોસે ’ इत्येषां संग्रहः । अस्ति प्रेम—प्रेम=रागः—पुत्रकलत्रादिष्वभिष्वङ्गपरिणामविशेषः । ‘अत्थि दोसे ’ अस्ति द्वेषः—द्वेषः=आत्मनोऽप्रीतिलक्षणपरिणामः, अस्ति कलहः—कलः=आनन्दस्तं हन्तीति कलहः—वाचिक-द्वन्द्वः, ‘अत्थि अब्भक्खाणे’ अस्त्यभ्याख्यानम्—अभ्याख्यानम्=असदोषारोपणम् । ‘अत्थि पेषुण्णे ’ अस्ति पैशुन्यम्—पैशुन्यं=प्रच्छन्नतया परदोषाऽऽविष्करणम्, ‘अत्थि परपरिवाण ’ अस्ति परपरिवादः—परेषां काक्वादिभिर्दोषकथनम्, ‘अत्थि अररर्र् ’ स्तः अरतिरती—अरतिः=अरतिमोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगरूप आत्मनः परिणतिविशेषः, रतिः=

(જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લે) યાવત્ મિથ્યાદર્શન આદિ શલ્ય હૈં । યહાં “યાવત્” શબ્દ સે “ પેજ્જે, દોસે, કલહે, અબ્ભવ્વાણે, પેસુણ્ણે, પરપરિવાણ, અરરર્ર્, માયામોસે ” ઇસ પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । પુત્રકલત્રાદિકોં મેં જો આસક્તિરૂપ પરિણામવિશેષ હૈ ઉસકા નામ પ્રેમ હૈ । અપ્રીતિલક્ષણ જો આત્માકા પરિણામ હૈ વહ દ્વેષ હૈ । આનંદ જિસસે નષ્ટ હોતા હૈ ઉસકા નામ કલહ હૈ । અસત્ય દોષોંકા આરોપણ કરના ઇસકા નામ અભ્યાખ્યાન હૈ । પીઠ પીછે દૂસરે કે દોષોંકો પ્રકટ કરના ઇસકા નામ પૈશુન્ય હૈ । દૂસરે કોં નિંદા કરના ઇસકા નામ પરપરિવાદ હૈ । અરતિ ઇવં રતિ યે દોનોં પાપ હૈં । અરતિમોહનીય કે ઉદય હોને સે સંયમ કે અન્દર જો ચિત્તોદ્વેગ હોતા હૈ ઉસકો ‘અરતિ’ કહતે હૈં । સાંસારિક વિષયોંકી અભિલાષા કો ‘રતિ’ કહતે હૈં । કપટસહિત મિથ્યાભાષણ કરના ઇસકા નામ માયામૃષા

લોભપ્રકૃતિના ઉદયને વશ થવાથી દ્રવ્યાદિકને ચાહવાની જે આત્માની પરિણુતિ-વિશેષ છે તેનું નામ લોભ છે. (જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લે) યાવત્ મિથ્યાદર્શન-શલ્ય છે. અહીં “યાવત્” શબ્દથી “ પેજ્જે દોસે કલહે અબ્ભવ્વાણે પેસુણ્ણે પરપરિવાણ અરરર્ર્ માયામોસે ” આ પાઠનો સંગ્રહ કર્યો છે. તેમાં પુત્રકલત્ર આદિમાં જે આસક્તિરૂપ પરિણામવિશેષ છે તેનું નામ પ્રેમ છે. અપ્રીતિ-લક્ષણ જે આત્માનું પરિણામ છે તે દ્વેષ છે. આનંદ જેનાથી નષ્ટ થાય છે તેનું નામ કલહ છે, અને અસત્ય દોષોનું આરોપણ કરવું તેનું નામ અભ્યા-ખ્યાન છે. કોઈની ગેરહાજરીમાં (પીઠપાછળ) તેના દોષો પ્રકટ કરવા તેનું નામ પૈશુન્ય (ચાડી) છે. બીજાની નિંદા કરવી તેનું નામ પરપરિવાદ છે. અરતિ તેમજ રતિ એ બન્ને પાપ છે. અરતિ-મોહનીયનો ઉદય થવાથી સંયમની અંદર જે ચિત્તને ઉદ્વેગ થાય છે તેને ‘અરતિ’ કહે છે. સાંસારિક વિષ-યોની અભિલાષાને ‘રતિ’ કહે છે. કપટવાળું મિથ્યાભાષણ કરવું તેનું નામ

વેરમણે આદિષ્ણાદાણવેરમણે મેહુણવેરમણે પરિગ્રહવેરમણે
જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લવિવેગે । સર્વં અત્થિભાવં અત્થિત્તિ વચ્ચ,

વિષયાભિરુચિઃ । ‘ અત્થિ માયામોસે ’ અસ્તિ માયામૃષા-માયયા સહ મૃષા-માયામૃષા= સકપટમિથ્યાભાષણમ્, ‘ મિચ્છાદંસણસલ્લે ’ મિથ્યાદર્શનશલ્યમ્-મિથ્યાદર્શનં શલ્યમિવ, પ્રતિક્ષણં વિવિધવ્યથાવિધાયકત્વાત્ । ‘ અત્થિ પાણાઙ્વાયવેરમણે મુસાવાયવેરમણે અદિષ્ણાદાણવેરમણે મેહુણવેરમણે પરિગ્રહવેરમણે ’ અસ્તિ પ્રાણાતિપાતવિરમણમ્, મૃષાવાદવિરમણમ્, અદત્તાદાનવિરમણમ્, મૈથુનવિરમણમ્, પરિગ્રહવિરમણમ્ । કેષાઞ્ચિન્મતે પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણસ્યાશક્યત્વં પ્રતિપાદિતં તન્નિરાસાર્થં તત્સત્તાઽભિધાનમ્ । ‘ જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લવિવેગે ’ યાવન્મિથ્યાદર્શનશલ્યવિવેકઃ-મિથ્યાદર્શનશલ્યસ્ય વિવેકઃ= પૃથગ્ભાવઃ, તસ્માન્નિવૃત્તિરિત્યર્થઃ, સોઽપ્યસ્તિ । ‘ સર્વં અત્થિભાવં અત્થિત્તિ વચ્ચ ’ સર્વ-મસ્તિભાવમસ્તીતિ વદતિ-સર્વં=સકલમ્ અસ્તિભાવં-સત્તારૂપક્રિયાસહિતો ભાવઃ=વસ્તુસત્ત્વમ્

હૈ । તથા કુદેવ કુગુરુ કુધર્મ મેં શ્રદ્ધા રચના મિથ્યાદર્શન હૈ । શલ્ય કી તરહ પ્રતિક્ષણ અત્યન્ત દુઃખદાયી હોને કે કારણ યહ મિથ્યાદર્શન શલ્ય કહલાતા હૈ । (અત્થિ પાણાઙ્વાયવેરમણે પરિગ્રહવેરમણે જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લવિવેગે) જો લોગ હિંસાદિક પાંચ પાપોં સે વિરક્ત હોને મેં અશક્યતા પ્રતિપાદિત કરતે હૈં અનેકે લિયે પ્રભુ કહતે હૈં કિ એસી વાત નહીં હૈ, પ્રાણાતિપાત સે જીવ વિરક્ત હોતા હૈ, મૃષાવાદ સે જીવ વિરક્ત હોતા હૈ, એવં પરિગ્રહ સે જીવ વિરક્ત હોતા હૈ, યાવત્ મિથ્યાદર્શનશલ્ય સે મી જીવ વિરક્ત હોતા હૈ । (સર્વં અત્થિભાવં અત્થિત્તિ વચ્ચ સર્વં ણત્થિભાવં ણત્થિત્તિ વચ્ચ) “ અસ્તિ ” યહ પદ સબ કો “અસ્તિ” ઇસ રૂપસે કહતા હૈં ઓર “ નાસ્તિ ” યહ પદ સમસ્ત ભાવ કો

‘માયામૃષા’ છે, અને કુદેવ, કુગુરુ, કુધર્મમાં શ્રદ્ધા રાખવી તે મિથ્યાદર્શન છે, તે શલ્યની માફક પ્રતિક્ષણ દુઃખદાયી હોવાથી ‘ મિથ્યાદર્શનશલ્ય ’ કહેવાય છે. (અત્થિ પાણાઙ્વાયવેરમણે, મુસાવાયવેરમણે, અદિષ્ણાદાણવેરમણે, મેહુણવેરમણે, પરિગ્રહવેરમણે, જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લવિવેગે) જે લોક હિંસા આદિક પાંચ પાપોથી વિરક્ત હોવામાં અશક્યતા પ્રતિપાદિત કરે છે તેમના માટે પ્રભુ કહે છે કે એવી વાત કોઈ છે નહિ. પ્રાણાતિપાતથી જીવ વિરક્ત થાય છે, મૃષાવાદથી જીવ વિરક્ત થાય છે, અદત્તાદાનથી જીવ વિરક્ત થાય છે, મૈથુનથી જીવ વિરક્ત થાય છે તેમજ પરિગ્રહથી જીવ વિરક્ત થાય છે, યાવત્ મિથ્યાદર્શનશલ્યથી પણ જીવ વિરક્ત થાય છે. (સર્વં અત્થિભાવં અત્થિત્તિ વચ્ચ સર્વં ણત્થિભાવં ણત્થિત્તિ વચ્ચ) “અસ્તિ” એ પદ બધાને અસ્તિ (છે) એ રૂપે કહે છે, અને “નાસ્તિ” એ પદ

સઁવં ણત્થિભાવં ણત્થિત્તિ વયઇ, સુચિણ્ણા કમ્મા સુચિણ્ણફલા ભવંતિ, દુચિણ્ણા કમ્મા દુચિણ્ણફલા ભવંતિ, ફુસઇ પુણ્ણપાવે,

‘જીવોઽસ્ત્યજીવોઽસ્તિ, પુણ્યમસ્તિ, પાપમસ્તિ’ इत्यादिरूपेण वस्तुयथार्थस्वरूपनिरूपण-
मिति यावत्, तम् ‘अस्ति’ इति कृत्वा वदति, यथा जीवत्वे सति जीवः, अजीवत्वे सति
अजीव इत्यादि । ‘सઁવં ણત્થિભાવં ણત્થિત્તિ વયઇ’ सर्वं नास्तिभावं नास्तीति वदति—
सर्वं नास्तिभावम्—अजीवत्वे सति अजीवः, अपटत्वे सति अपट इत्येवंरूपो भावो नास्ति—
भावस्तं नास्तीतिपदेन वदति । ‘सुचिण्णા કમ્મા સુચિણ્ણફલા ભવંતિ’ सुचीर्णानि
कर्माणि सुचीर्णफलानि भवन्ति—सुचीर्णानि—सु=प्रशस्ततया चीर्णानि=संपादितानि कर्माणि=
दानादीनि, सुचीर्णफलानि—सुचीर्णं फलं येषां तानि, सुचरितमूलकत्वात् पुण्यकर्मबन्धादि-
फलवन्तीत्यर्थः । ‘दुचिण्ણા કમ્મા દુચિણ્ણફલા ભવંતિ’ दुश्चीर्णानि कर्माणि दुश्चीर्ण-
फलानि भवन्ति—दुश्चीर्णानि=कुत्सितानीत्यर्थः, दुश्चीर्णफलानि=कुत्सितफलवन्ति—नरक-
निगोदादिगमनादिरूपफलदायकानि भवन्तीत्यर्थः । ‘ફુસઇ પુણ્ણપાવે’ स्पृशति

“नास्ति ” इस रूप से कहता है । स्वसत्तारूप क्रिया से युक्त का नाम अस्तिभाव है
एवं पररूप से असत्ता का नाम नास्तिभाव है । मतलब इसका यह है कि प्रत्येक पदार्थ
स्व-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से ही अस्तित्वविशिष्ट है और पर-द्रव्य,
क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा प्रत्येक द्रव्य नास्तित्वविशिष्ट है । इससे स्याद्वादसिद्धान्त का
कथन किया गया है । (सुचिण्णા કમ્મા સુચિણ્ણફલા ભવંતિ) प्रशस्तभावों से संपादित
दानादिक सत्कर्म पुण्य कर्म के बन्ध करनेवाले होते हैं । पुण्यकर्म का बंध कराना ही
इनका फल माना गया है । (दुचिण्णા કમ્મા દુચિણ્ણફલા ભવંતિ) कुत्सितभावों से
किये कार्य कुत्सित—नरकनिगोदादि—फलवाले होते हैं, अर्थात् कुत्सित कर्मों को करनेवाला

બધા ભાવને નાસ્તિ (નથી) એ રૂપે કહે છે. સ્વસત્તારૂપ ક્રિયાથી યુક્તનું
નામ અસ્તિ-ભાવ છે તેમજ પરરૂપથી અસત્તાનું નામ નાસ્તિભાવ છે.
આનો મતલબ એ છે કે પ્રત્યેક પદાર્થ સ્વ-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ તથા ભાવની
અપેક્ષાથી જ અસ્તિત્વવિશિષ્ટ છે અને પર-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને ભાવની
અપેક્ષા તેજ પદાર્થ નાસ્તિત્વવિશિષ્ટ છે. આથી સ્યાદ્વાદસિદ્ધાંતનું કથન કર-
વામાં આવેલું છે. (સુચિણ્ણા કમ્મા સુચિણ્ણફલા ભવંતિ) પ્રશસ્તભાવોથી સંપા-
દિત દાન આદિક સત્કર્મ પુણ્ય કર્મનું બંધ કરવાવાળા થાય છે. પુણ્યકર્મનો
બંધ કરવો એજ એનું ફળ કહેવામાં આવ્યું છે. (દુચિણ્ણા કમ્મા દુચિણ્ણફલા
ભવંતિ) કુત્સિત ભાવોથી કરેલું કાર્ય કુત્સિત-નરક-નિગોદ આદિ ફળવાળું થાય છે.

પચ્ચાયંતિ જીવા, સફલે કલ્લાણપાવણે । ધમ્મમાઙ્કલ્લ-ઇણમેવ

પુણ્યપાપે-જીવઃ સુચરિતક્રિયાભિઃ પુણ્યમ્, અસુચરિતક્રિયાભિઃ પાપં ચ સ્પૃશતિ=વન્નાતિ । ‘પચ્ચાયંતિ જીવા’ પ્રત્યાયાન્તિ જીવાઃ-તેનૈવ સ્પૃષ્ટેન=વદ્ધેન-શુભાઽશુભકર્મસન્તાનેન પુનર્જીવા ઉત્પદ્યન્તે, ‘ભસ્મીભૂતસ્ય દેહસ્ય પુનરાગમનં કુતઃ’-ઇતિ નાસ્તિકવચ્ચનં ન સત્યમ્ ઇતિ ભાવઃ । તત ઉત્પત્તૌ સત્યામ્ ‘સફલે કલ્લાણપાવણે’ સફલં કલ્યાણપાપકે-સૌભાગ્ય-દૌર્ભાગ્યહેતુત્વાત્ પુણ્યં પાપञ્ચ શુભાશુભં કર્મ સફલં ભવતીતિ ભાવઃ । પ્રકારાન્તરેગાપિ ધર્મો-પદેશં ભગવાન્ દદાતિ, તદેવ ન્પ્રત્યાહ-‘ધમ્મમાઙ્કલ્લ’ ઇત્યારમ્ભ્ય ‘પડિરૂવે’

પ્રાણી નરકનિગોદાદિક કા પાત્ર બનતા હૈ । (ફુસઈ પુણ્ણપાવે) જીવ સુચરિત ક્રિયાઓ દ્વારા પુણ્ય એવં અસુચરિત ક્રિયાઓ દ્વારા પાપ કા બંધ કરનેવાલા હોતા હૈ । (પચ્ચાયંતિ જીવા) શુભાશુભ કર્મોં સે વદ્ધ હુઆ જીવ ઇસ સંસાર મેં જન્મમરણ કે દુઃખોં કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, અર્થાત્ જવતક કર્મન્તતિ જીવ મેં અસ્તિત્વવિશિષ્ટ રહતી હૈ-જીવ કર્મોં સે જવતક બંધા રહતા હૈ તવતક હી વહ સંસાર મેં ઉત્પન્ન હોતા રહતા હૈ । ઇસ કથન સે નાસ્તિક કે ઇસ વાદ કા કિ-“ ભસ્મીભૂતસ્ય દેહસ્ય પુનરાગમનં કુતઃ ” અર્થાત્ જવ દેહ ભસ્મીભૂત હો જાતા હૈ તો પુનઃ ડસકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ-નિરાકરણ હો જાતા હૈ । (સફલે કલ્લાણપાવણે) સૌભાગ્ય એવં દૌર્ભાગ્ય કે હેતુ હોને સે પુણ્ય ઓર પાપ સફલ હૈ ।

પ્રકારાન્તર સે મી પ્રભુને શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મ કા ઉપદેશ દિયા-ઇસ વાત કો સૂત્રકાર-‘ધમ્મમાઙ્કલ્લ’ સે લેકર ‘પડિરૂવે’ યહોં તક કે મૂળપાઠ સે પ્રદર્શિત કરતે

કુત્સિત કર્મોં કરવાવાળા પ્રાણી નરક-નિગોદ આદિકના પાત્ર બને છે. (ફુસઈ પુણ્ણપાવે) જીવ સુચરિત ક્રિયાઓ દ્વારા પુણ્ય તેમજ અસુચરિત ક્રિયાઓ દ્વારા પાપનાં બંધ કરવાવાળા થાય છે. (પચ્ચાયંતિ જીવા) શુભાશુભ કર્મોંથી બંધા-એલા જીવ આ સંસારમાં જન્મ-મરણનાં દુઃખોને પ્રાપ્ત કરે છે. અર્થાત્ જ્યાં સુધી કર્મન્તતિ જીવમાં અસ્તિત્વવિશિષ્ટ રહેતી હોય છે-જીવ જ્યાં સુધી કર્મોંથી બંધાયેલ રહે છે ત્યાં સુધી જ તે સંસારમાં ઉત્પન્ન થયા કરે છે. આ કથનથી નાસ્તિકનો એવો વાદ કે “ભસ્મીભૂતસ્ય દેહસ્ય પુનરાગમનં કુતઃ” અર્થાત્ જ્યારે દેહ ભસ્મીભૂત થઈ જાય છે તો પછી વળી ફરી તેની પ્રાપ્તિ થતી નથી. આનું નિરાકરણ થઈ જાય છે. (સફલે કલ્લાણપાવણે) સૌભાગ્ય તેમજ દૌર્ભાગ્યના હેતુભૂત હોવાના કારણે પુણ્ય અને પાપ સફળ (ફળ આપનારાં) છે.

બીજી રીતે પણ પ્રભુએ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો-એ વાતને સૂત્રકાર-‘ધમ્મમાઙ્કલ્લ’થી લઈને ‘પડિરૂવે’ અહીં સુધીના મૂળપાઠ

ળિગ્ગંથે પાવયણે સચ્ચે અણુત્તરે કેવલિણે સંસુદ્ધે પડિપુણ્ણે ણેયા-

ઇત્યન્તેન ગ્રન્થેન । ‘ધમ્મમાઙ્કલ્લ’ ધર્મમાહ્વાતિ—‘ઇણમેવ ળિગ્ગંથે પાવયણે સચ્ચે’
 ઇદમેવ નૈર્ગન્થં પ્રવચનં સત્યમ્—ઇદં=પ્રત્યક્ષતયા વિદ્યમાનં, નૈર્ગન્થં—નિર્ગન્થાનાં=દ્રવ્યભાવ-
 ગ્રન્થિરહિતાનાં તંયમિનાં સમ્બન્ધિ પ્રવચનમ્=આગમઃ, સત્યં=સદ્ભ્યો હિતં વાસ્તવિકશ્ચ ।
 ‘અણુત્તરે’ અનુત્તરમ્—નાસ્ત્યુત્તરં યસ્માત્, નાસ્માત્પ્રધાનતમમન્યદસ્તીતિ ભાવઃ; ‘કેવલિણે’
 કેવલિકં=કેવલિપ્રણીતમ્—અદ્વિતીયં વા, ‘સંસુદ્ધે’ સંશુદ્ધમ્=કષાદિભિઃ સંશુદ્ધં સુવર્ણમિવ
 નિર્દોષમ્, ‘પડિપુણ્ણે’ પ્રતિપૂર્ણમ્—સર્વથા સમગ્રં—સૂત્રાપેક્ષયા માત્રાવિન્દ્યાદિભિઃ, અર્થા-
 પેક્ષયા ત્રાકાઙ્ક્ષાઽધ્યાહારાદિભિર્વર્જિતમ્, ‘ણેયાઉણ્ણ’ નૈયાયિકમ્=ન્યાયાનુગતં=પ્રમાણ-
 ઽવાધિતમ્, ‘સલ્લકત્તણે’ શલ્યકર્તનમ્=માયાદિશલ્યચ્છેદનક્ષમમ્—એતદ્ભાવભાવિતાનાં

હૈ । ‘ધમ્માઙ્કલ્લ’ ભગવાન ને પ્રકારાન્તર સે મી ધર્મોપદેશ ક્રિયા । જૈસે—(ઇણમેવ
 ળિગ્ગંથે પાવયણે સચ્ચે) પ્રત્યક્ષતયા વિદ્યમાન યહ નિર્ગન્થો—દ્રવ્ય એવં ભાવરૂપ ગ્રન્થિ
 સે રહિત તંયમિયોં કા પ્રવચન—આગમ સત્ય—ભવ્યોં કા હિતકારક એવં યથાર્થ હૈ ।
 (અણુત્તરે) યહ અનુત્તર હૈ—ઇસસે ઉત્તર—પ્રધાન ઓર દૂસરા કોઈ નહીં હૈ । (કેવલિણે)
 કારણ કિ યહ કેવલજ્ઞાની દ્વારા પ્રણીત હુઆ હૈ; ઇસીલિયે યહ અદ્વિતીય હૈ । (સંસુદ્ધે)
 કષાદિક દ્વારા શુદ્ધ કિયે હુણ્ણ સોને કે સમાન યહ શુદ્ધ હૈ । (પડિપુણ્ણે) યહ સર્વથા
 પ્રતિપૂર્ણ હૈ, ન તો સૂત્ર કી અપેક્ષા સે ઇસમેં માત્રા એવં વિંદુ આદિ કે અધ્યાહાર કી આવ-
 શ્યકતા હૈ ઓર ન અર્થ કી અપેક્ષા સે ઇસમેં આકાંક્ષા આદિ કે અધ્યાહાર કી આવશ્યકતા
 હૈ, અર્થાત્ સબ પ્રકાર સે યહ પૂર્ણ હૈ । (ણેયાઉણ્ણ) ઇસ ભગવદુપદિષ્ટ આગમ મેં કિસી
 મી પ્રમાણ સે વાધા નહીં આતી હૈ । (સલ્લકત્તણે) માયામિથ્યાત્વ એવં નિદાન શલ્યોં કા

દ્વારા પ્રદર્શિત કરે છે. ‘ધમ્મમાઙ્કલ્લ’ ભગવાને પ્રકારાન્તરથી પણ ધર્મોપદેશ
 કર્યો. જેમકે (ઇણમેવ ળિગ્ગંથે પાવયણે સચ્ચે) પ્રત્યક્ષતયા (નજરની સામેજ)
 વિદ્યમાન (મોબુદ) આ નિર્ગન્થો—દ્રવ્ય તેમજ ભાવ રૂપ ગ્રન્થિથી રહિત તંય-
 મીઓનાં પ્રવચન—આગમ સત્ય—ભવ્યોને માટે હિતકારક તેમજ યથાર્થ છે.
 (અણુત્તરે) આ અનુત્તર છે. આનાથી ઉત્તર—પ્રધાન (મુખ્ય) બીજું કાંઈ નથી.
 (કેવલિણે) કારણ કે આ કેવલજ્ઞાની દ્વારા પ્રણીત થયેલું (રચાયેલું) છે તે
 માટે આ અદ્વિતીય છે. (સંસુદ્ધે) કષાદિક દ્વારા શુદ્ધ કરેલાં સોના જેવું
 તે શુદ્ધ છે. (પડિપુણ્ણે) એ સર્વદા પરિપૂર્ણ છે—સૂત્રની અપેક્ષાએ તેમાં
 માત્રા તેમજ વિંદુ આદિના અધ્યાહારની આવશ્યકતા નથી અને અર્થની અપે-
 ક્ષાથી તેમાં આકાંક્ષા આદિના અધ્યાહારની પણ આવશ્યકતા નથી. તમામ પ્રકારે
 એ પૂર્ણ છે. (ણેયાઉણ્ણ) આ ભગવદ્-ઉપદિષ્ટ આગમમાં કોઈ પણ પ્રમાણથી

उए सल्लकत्तणे सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे णिज्जाणमग्गे अवितहम-
विसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे इहट्ठिया जीवा सिज्झंति बुज्झंति

भावशल्यानि विच्छेदमायान्तीति । ‘सिद्धिमग्गे’ सिद्धिमार्गः—सिद्धिः=कृतकृत्यता—तस्या
मार्गः=उपायः; ‘मुत्तिमग्गे’ मुक्तिमार्गः=सकलकर्मवियोगस्य हेतुः, ‘णिज्जाणमग्गे’
निर्वाणमार्गः—निर्वाणस्य=सकलकर्मक्षयजन्यस्य पारमार्थिकसुखस्य मार्गः, ‘णिज्जाणमग्गे’
निर्याणमार्गः—निर्याणम्=अपुनर्गवृत्त्या संसारात् प्रस्थानं तस्य मार्गः, ‘अवितहं’
अवितथम्—वितथं=मिथ्या तद्विपरीतं—त्रिकालावाधितमित्यर्थः । ‘अविसंधि’ अविसन्धि=
अव्यवच्छिन्नं—न कदाचिदपि विच्छेदमुपगतम् । ‘सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे’ सर्वदुःखप्रहीण-
मार्गः—सर्वाणि=जन्ममरणादीनि दुःखानि प्रहीणानि यत्र स सर्वदुःखप्रहीणो मोक्षस्तस्य

कर्त्तन (छेदन) इसी आगम से होता है । (सिद्धिमग्गे) यह आगम ही सिद्धि—कृत-
कृत्यता का एक मार्ग है । (मुत्तिमग्गे) समस्त कर्मों के क्षय का यही एक उपाय है ।
(णिज्जाणमग्गे) समस्त कर्मों के क्षय से उद्भूत पारमार्थिक सुख का यही एक रास्ता
है । (णिज्जाणमग्गे) संसार में जीव का पुनः आगमन न हो इस रूप से जो जीव का
संसार से प्रस्थान होता है उसका प्रधान कारण एक यही आगम है । (अवितहं) यह
आगम त्रिकाल में भी कुतर्कों द्वारा बाधित नहीं है । (अविसंधि) महाविदेह क्षेत्र की
अपेक्षा से—न इसका कभी विच्छेद होता है, और न कभी विच्छेद होगा । (सव्व-
दुक्खप्पहीणमग्गे) समस्त दुःखों का जिसमें सर्वथा अभाव है ऐसे मोक्ष का यही एक
उत्तम मार्ग है । जिस त्रिये वह प्रभु द्वारा प्रतिपादित आगम पूर्वोक्त प्रकार से इन सद्गुणों

બાધા આવતી નથી. (સલ્લકત્તણે) માયા, મિથ્યાત્વ તેમજ નિદાન શલ્યોનાં
કર્તન (છેદન) આ આગમથી થાય છે. (સિદ્ધિમગ્ગે) આ આગમજ સિદ્ધિ—કૃત-
કૃત્યતાનો એક માર્ગ છે. (મુત્તિમગ્ગે) સમસ્ત કર્મોના ક્ષયનો આ એક ઉપાય
છે. (ણિજ્જાણમગ્ગે) સમસ્ત કર્મોના ક્ષયથી ઉત્પન્ન થતા પારમાર્થિક સુખનો
આજ એક રસ્તો છે. (ણિજ્જાણમગ્ગે) સંસારમાં જીવનું પુનઃ આગમન ન થાય
એ રૂપથી જે જીવનું સંસારથી પ્રસ્થાન થાય છે તેનું પ્રધાન કારણ એક
આજ આગમ છે. (અવિતહં) આ આગમ ત્રણ કાળમાં પણ કુતર્કો દ્વારા બાધિત
નથી. (અવિસંધિ) મહાવિદેહ ક્ષેત્રની અપેક્ષાથી નથી આનો કદી વિચ્છેદ થયો,
નથી વિચ્છેદ થાતો અને નથી કદી વિચ્છેદ થવાનો. (સવ્વદુક્ખપ્પહીણમગ્ગે)
સમસ્ત દુઃખોનો જેમાં અભાવ છે એવા મોક્ષનો આ એક ઉત્તમ માર્ગ છે.
જેથી પ્રભુ દ્વારા પ્રતિપાદન કરેલું આ આગમ પૂર્વોક્ત એવાં સદ્ગુણોથી યુક્ત

મુચ્ચંતિ પરિણિવ્વાયંતિ સવ્વદુઃખાણમંતં કરેંતિ । એગચ્ચા પુણ

માર્ગઃ, યત એવં સદ્ગુણગુમ્ફિતં નૈર્ગ્રન્થં પ્રવચનમ્, અતએવ ‘ઇહદ્વિયા જીવા સિજ્ઞંતિ’ ઇહ સ્થિતા જીવાઃ સિધ્યન્તિ—ઇહ=નૈર્ગ્રન્થપ્રવચને સ્થિતાઃ=એતદારાધકા જીવાઃ સિધ્યન્તિ=સિદ્ધિપદં પ્રાપ્નુવન્તિ, અણિમાદિસિદ્ધિં વા ‘બુજ્ઞંતિ’ બુધ્યન્તે—કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્ત્યા નિઃશેષ-વિશેષં જાનન્તિ, ‘મુચ્ચંતિ’ મુચ્યન્તે—ભવોપગ્રાહિણાં કર્મણાં નિરંશનશ્ચત્વાત્, ‘પરિણિ-વ્વાયંતિ’ પરિનિર્વાન્તિ—કર્મજન્યસકલસન્તાપવિરહાત્, વક્તવ્યસારં વક્તિ—‘સવ્વદુઃખાણ-મંતં કરેંતિ’ સર્વદુઃખાણામન્તં કુર્વન્તિ—સર્વેષાં શારીરિકમાનસિકાનાં દુઃખાણામ્ અન્તં=નાશં કુર્વન્તિ ।

‘એગચ્ચા પુણ એગે ભયંતારો’ એકાર્ચાઃ પુનરેકે ભદન્તાઃ — એકૈવ અર્ચા=ભવિષ્યન્તી મનુષ્યતનુર્યેષાં તે એકાર્ચાઃ સન્તઃ, પુનરેકે=કેચિદ્ ભદન્તાઃ=નૈર્ગ્રન્થપ્રવ-સે યુક્ત છે । ઇસીલિયે (ઇહદ્વિયા જીવા સિજ્ઞંતિ) જો જીવ ઇસકી આરાધના મેં અપને જીવન કા ઉત્સર્ગ કર દેતે હૈં વે નિયમતઃ સિદ્ધિપદ કે પ્રાપક હોતે હૈં, (અણિમાદિ-સિદ્ધિ વા) અથવા ઇસ લોક મેં અણિમાદિ સિદ્ધિ કે ધારક હોતે હૈં । (બુજ્ઞંતિ) કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ સે સમી વસ્તુઓં કો જાનતે હૈં । (મુચ્ચંતિ) ભવોપગ્રાહિકમોં કા સમ્પૂર્ણરૂપ સે નાશ હોને કે કારણ વે મુક્ત હો જાતે હૈં । (પરિણિવ્વાયંતિ) કર્મજન્ય સમસ્ત સંતાપ કે વિરહ સે વે શીતલીભૂત હો જાતે હૈં । (સવ્વદુઃખાણમંતં કરેંતિ) શારીરિક એવં માનસિક સમસ્ત દુઃખોં કા વે હી અન્ત કરનેવાલે હોતે હૈં । (એગચ્ચા પુણ એગે ભયંતારો) ઇસ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કી આરાધના કરનેવાલે ભવ્ય જીવ વર્તમાન શરીર કે છૂટ જાને કે બાદ માત્ર એક બાર મનુષ્ય શરીર ધારણ કરતે હૈં, અર્થાત્ વે એકાવતારી હોતે હૈં । વે ભવ્ય જીવ ઇસ શરીર કે છૂટને પર (પુવ્વકમ્માવસેસેણ) પૂર્વકર્મોં કે વાંકી

છે તેથી જ (ઇહદ્વિયા જીવા સિજ્ઞંતિ) જે જીવ આની આરાધનામાં પોતાના જીવનનો ઉત્સર્ગ કરી દે છે તેઓ નિયમતઃ—નિશ્ચયથી—સિદ્ધિપદને પ્રાપ્ત થાય છે, (અણિમાદિસિદ્ધિ વા) આ લોકમાં અણિમાદિ—સિદ્ધિને પામે છે. (બુજ્ઞંતિ) કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિથી બધી વસ્તુઓ જાણે છે. (મુચ્ચંતિ) ભવોપગ્રાહિ કર્મોંનો સંપૂર્ણ રૂપે નાશ થવાના કારણે તેઓ મુક્ત થઈ જાય છે. (પરિણિવ્વાયંતિ) કર્મ-જન્ય સમસ્ત સંતાપના વિરહથી (ત્યાગથી) તેઓ શીતલીભૂત બની જાય છે. (સવ્વદુઃખાણમંતં કરેંતિ) શારીરિક તેમજ માનસિક સમસ્ત દુઃખોના તેઓ અંત કરવાવાળા હોય છે. (એગચ્ચા પુણ એગે ભયંતારો) આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનની આરા-ધના કરવાવાળા ભવ્ય જીવ વર્તમાન શરીર છૂટી જવા બાદ માત્ર એકવાર મનુષ્ય શરીરને ધારણ કરે છે. અર્થાત્ તેઓ એકાવતારી થાય છે. તે ભવ્ય

एगे भयंतारो पुव्वकम्मावसेसेणं अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए
उववत्तारो भवंति, महड्ढिएसु जाव महासुक्खेसु दूरंगइएसु
चिरट्ठिएसु । ते णं तत्थ देवा भवंति—महिड्ढिया जाव चिर-

चनस्याराधका भव्याः, 'पुव्वकम्मावसेसेणं' पूर्वकर्माऽवशेषेण, 'अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति' अन्यतमेपु देवलोकेषु देवत्वेनोत्पत्तारो भवन्ति, 'महड्ढिएसु जाव महासुक्खेसु दूरंगइएसु चिरट्ठिएसु' महर्द्धिकेषु यावन्महासौख्येषु—अत्र यावच्छब्दात्='महज्जुइएसु, महाबलेसु, महायसेसु, महाणुभागेसु' इति दृश्यम् । प्राग्वाख्यातमेतत् । दूरगतिकेषु=अनुत्तरविमानादिषु, चिरस्थितिकेषु—चिरा=बहुसागरोपमा स्थितिर्येषु तेषु । 'ते णं तत्थ देवा भवंति' ते खलु तत्र देवा भवन्ति; कीदृशा देवा भवन्तीत्यत्राऽऽह—'महिड्ढिया' महर्द्धिकाः=महर्द्धिपन्नाः, यावत्—'चिरट्ठिया' चिर-

रहने के कारण (अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति महड्ढिएसु जाव महासुक्खेसु दूरंगइएसु चिरट्ठिएसु) महर्द्धिक—विमान आदि महासम्पत्तिवाले, महाद्युतिक=विविध रत्न आदि की महाकान्तिवाले, महाबल—अत्यन्त स्थिर अर्थात् द्रव्यरूप से शाश्वत, महायशस्वी—शास्त्रों द्वारा प्रशंसित, महानुभाग—महाप्रभावशाली, महासौख्य—अत्यन्त सुख के निधानरूप, चिरस्थितिक—बहुत सागरोपमकी स्थितिवाले, दूरगतिक—मनुष्यलोक आदि से अत्यन्त दूरवर्ती, ऐसे अनुत्तर विमानादिक देवलोकों में से किसी एक देवलोक में उत्पन्न होते हैं । (ते णं तत्थ देवा) वे देव वहाँ पर (भवन्ति महिड्ढिया जाव चिरट्ठिया) महर्द्धिक—विमान आदि की महासम्पत्तिवाले, महाद्युति—शरीर और आभरण की महा-

આ શરીર છૂટી જતાં (પુવ્વકમ્માવસેસેણં) પૂર્વ કર્મો બાકી રહેવાના કારણે (અણ્ણયરેસુ દેવલોએસુ દેવત્તાએ ઉવવત્તારો ભવંતિ મહડ્ઢિએસુ જાવ મહાસુક્ખેસુ દૂરંગઇએસુ ચિરટ્ઠિએસુ) મહર્દ્ધિક—વિમાન આદિ મહાસંપત્તિવાળા, મહાદ્યુતિક—વિવિધ રત્નઆદિની મહાકાન્તિવાળા, મહાબલ—અત્યંત સ્થિર અર્થાત્ દ્રવ્યરૂપથી શાશ્વત, મહાયશસ્વી—શાસ્ત્રો દ્વારા પ્રશંસિત, મહાનુભાગ—મહાપ્રભાવશાલી, મહાસૌખ્ય—અત્યંત સુખના નિધાન રૂપ, ચિરસ્થિતિક—ઘણા સાગરોપમની સ્થિતિવાળા, દૂરગતિક—મનુષ્ય લોક આદિથી અત્યંત દૂરવર્તી, એવા અનુત્તર વિમાનાદિક દેવલોકમાંના કેાઇ એક દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે. (તે ણં તત્થ દેવા) તે દેવ ત્યાં (ભવંતિ મહિડ્ઢિયા જાવ ચિરટ્ઠિયા) મહર્દ્ધિક—વિમાન આદિની મહાસંપત્તિ વાળા, મહાદ્યુતિ—શરીર અને આભરણની મહાકાન્તિવાળા, મહાબલ-

દિડ્યા હાર-વિરાડ્ય-વચ્છા જાવ પમાસમાણા કપ્પોવગા ગતિ-

સ્થિતિકા:=ચિરકાલસ્થિતિકા:, ‘હારવિરાડ્યવચ્છા’ હારવિરાજિતવક્ષસ્કા:=હારભૂષિતહૃદયા:, ‘જાવ પમાસમાણા’ યાવત્ પ્રમાસમાના:-યાવચ્છબ્દાદિદં દૃશ્યમ્-‘કડય-તુડિય-થંભિય-મુયા’ કટક-ત્રુટિત-સ્તમ્ભિત-મુજા: ‘અંગય-કુંડલ-મટ્ટ-ગંડયલ-કણ્ણપીઠ-ધારી’ અન્નદ-કુન્ડલ-ગન્ડતલ-કર્ણપીઠ-ધારિણ: ‘વિચિત્ત-વત્થા-મરણા’ વિચિત્ર-વસ્ત્રા-SSમરણા:, ‘વિચિત્તમાલા’ વિચિત્રમાલા:, ‘મડલિમડડા’ મૌલિમુકુટા:, ‘કલ્લાણગ-પવર-વત્થ-પરિહિયા’ કલ્યાણક-પવર-વસ્ત્ર-પરિહિતા:, ‘કલ્લાણગ-પવર-મલ્લા-ણુલેવણા’ કલ્યાણક-પવર-માલ્યા-નુલેપના:, ‘માસુરબોંદી’ માસ્વરદેહા:, ‘પલંબ-વણમાલધરા’ પ્રલમ્બવનમાલાધરા: ‘દિવ્વેણં સંઘાણં’ દિવ્યેન સંઘાતેન, ‘દિવ્વેણં સંઠાણેણં’ દિવ્યેન સંસ્થાનેન=સુન્દરેણાSSકારેણ, ‘દિવ્વાણ્ણ ઇડ્ઢીણ્ણ’ દિવ્યયા ઋદ્ધચા, ‘દિવ્વાણ્ણ જુર્ણેણ્ણ’ દિવ્યયા ઘૃત્યા, ‘દિવ્વાણ્ણ પમાણ્ણ’ દિવ્યયા પ્રમયા ‘દિવ્વાણ્ણ છાયાણ્ણ’ દિવ્યયા છાયયા, ‘દિવ્વાણ્ણ અચ્છીણ્ણ’ દિવ્યેન અર્ચિષા=દિવ્યેન તેજસા, ‘દિવ્વાણ્ણ લેસાણ્ણ’ દિવ્યયા લેશ્યયા, ‘દસ દિસાઓ ઉજ્જોયમાણા’ દશ દિશા ઉદ્ધોતયન્ત:-સમન્તાત્સર્વાન્ દિગામોગાન્ વિમાસયન્ત: इति । ‘પમાસમાણા’ પ્રમા-

કાન્તિવાલે, મહાબલ-શરીર સે અત્યન્ત બલવાન્, મહાયશસ્વી-અત્યન્ત યશવાલે, મહાનુભાગ-અત્યન્ત પ્રભાવશાલી, મહાસૌખ્ય-સુખપુંજ કો ભોગનેવાલે ઓર ચિરસ્થિતિક-અનેક સાગરો-પમસ્થિતિવાલે હોતે હૈં । ઇનકા વક્ષ:સ્થલ સદા હારોં કી માલાઓં સે સુશોભિત રહા કરતા હૈ । (જાવ પમાસમાણા) યહાં ‘જાવ’ શબ્દ સે (કડય-તુડિય-થંભિય-મુયા અંગય-કુંડલ-ગંડયલ-કણ્ણપીઠ-ધારી વિચિત્ત-વત્થા-મરણા વિચિત્તમાલા મડલિમડડા કલ્લાણગ-પવર-વત્થ-પરિહિયા કલ્લાણગ-પવર-મલ્લા-ણુલેવણા માસુરબોંદી પલંબ-વણમાલ-ધરા દિવ્વેણં સંઘાણં દિવ્વેણં સંઠાણેણં દિવ્વાણ્ણ ઇડ્ઢીણ્ણ દિવ્વાણ્ણ જુર્ણેણ્ણ દિવ્વાણ્ણ પમાણ્ણ દિવ્વાણ્ણ છાયાણ્ણ દિવ્વાણ્ણ અચ્છીણ્ણ દિવ્વાણ્ણ

શરીરે ઘણા બળવાન્, મહાયશસ્વી-અત્યંત યશવાળા, મહાનુભાગ-અત્યંત પ્રભા-વશાળી, મહાસૌખ્ય-સુખપુંજને ભોગવવાવાળા અને ચિરસ્થિતિક-અનેક સાગ-રોપમ સ્થિતિવાળા થાય છે. એમનું વક્ષ:સ્થલ સદા હારોની માલાઓથી સુશોભિત રહ્યા કરે છે. (જાવ પમાસમાણા) અહીં ‘જાવ’ શબ્દથી (કડય-તુડિય-થંભિય-મુયા અંગય-કુંડલ-ગંડયલ-કણ્ણપીઠ-ધારી વિચિત્ત-વત્થા-મરણા વિચિત્ત-માલા મડલિમડડા કલ્લાણગ-પવર-વત્થ-પરિહિયા કલ્લાણગ-પવર-મલ્લા-ણુલેવણા માસુર-બોંદી પલંબ-વણમાલ-ધરા દિવ્વેણં સંઘાણં દિવ્વેણં સંઠાણેણં દિવ્વાણ્ણ ઇડ્ઢીણ્ણ દિવ્વાણ્ણ જુર્ણેણ્ણ, દિવ્વાણ્ણ પમાણ્ણ, દિવ્વાણ્ણ છાયાણ્ણ, દિવ્વાણ્ણ અચ્છીણ્ણ, દિવ્વાણ્ણ લેસાણ્ણ દસ-

કહ્લાણા ઠિઠકહ્લાણા આગમેસિમદા જાવ પડિરૂવા । તમાઝવ્વડ—

સમાનાઃ=પ્રકર્ષે જ શોભમાનાઃ ‘કપ્પોવગા’ કલ્પોપગાઃ—કલ્પઃ=ઇન્દ્ર—સામાનિક—ત્રાયસ્થિશ-પારિષદા-આત્મરક્ષ-લોકપાલા-નીક-પ્રકીર્ણકા-ભિયોગ્ય-કિલ્બિષિક-વ્યવહારસ્વરૂપ આચારસ્તમુપ-ગતાઃ=પ્રાપ્તાઃ, સૌધર્માદિદેવલોકવાસિવૈમાનિકદેવત્વં પ્રાપ્તાઃ, ‘ગઙ્ગકહ્લાણા’ ગતિકલ્યાણાઃ—કલ્યાણા ગતિર્યેષાં તે તથા, અથવા—ગત્યા=ચતુર્ગતિકલોકે દેવગતિરૂપયા કલ્યાણાઃ=

લેસાણ દસ દિસાઓ ઉજ્જોવેમાણા પમાસમાણા) ઇસ પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ, ઇસ કા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—ઇનકી મુજાઈ કટક—કડે ઓર ત્રુટિત—મુજબન્ધ ઇન આમૂષણોં સે વિમૂષિત રહા કરતી હૈ । બાકી કે ઇન સમસ્ત પદોં કા અર્થ પીછે જહાં પર દેવોં કે આગમન કા વર્ણન ક્રિયા ગયા હૈ ઇસ ૩૩વેં સૂત્ર મેં લિખા જા ચુકા^૧ હૈ । (કપ્પોવગા) ઇન્દ્ર, સામાનિક, ત્રાયસ્થિશ, પારિષદ, આત્મરક્ષક, લોકપાલ, અનીકાધિપતિ, પ્રકીર્ણક, આભિયોગ્ય, કિલ્બિષિક, યે દશ પ્રકાર કે દેવ જહાં હોતે હૈં ઇન દેવલોકોં કા નામ કલ્પ હૈ । ઇન કલ્પોં મેં જો ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઇનકા નામ કલ્પોપગ હૈ । સૌધર્માદિક દેવલોક સે અચ્યુત દેવલોક તક કે દેવ કલ્પોપગ કહલાતે હૈં; ક્યોં કિ યહીં તક ઇન્દ્રાદિક ૧૦ પ્રકાર કે દેવોં કા વ્યવહાર હોતા હૈ, ઇનકે બાદ નહીં ! (ગઙ્ગકહ્લાણા) ઇનકી ગતિ કલ્યાણકારી હોતી હૈ, અથવા ચતુર્ગતિક ઇસ લોક મેં યે દેવગતિ મેં રહનેવાલે હોને કે કારણ ઉત્તમ હોતે હૈં, ઇસ અપેક્ષા યે ગતિકલ્યાણ કહે ગયે હૈં । (ઠિઠકહ્લાણા) અનેક પલ્યોપમ—

(૧) અમુરકુમારોં કે વર્ણન મેં ઇન સમસ્ત પદોં કા અર્થ લિખા ગયા હૈ ।

દિસાઓ ઉજ્જોવેમાણા પમાસમાણા) આ પાઠનો સંગ્રહ કર્યો છે. આનો અર્થ આ પ્રકારે છે. એમની ભુજાઓ કટક (કડાં) અને ત્રુટિત—ભુજબંધ એ આભૂષણોથી શણગારેલી રહે છે. બાકીનાં આ બધાં પદોનો અર્થ અગાઉ જ્યાં દેવોના આગમનનું વર્ણન કર્યું છે તે ઉત્તમાં સૂત્રમાં લખાઈ ગયું છે.^૧ (કપ્પોવગા) ઇન્દ્ર, સામાનિક, ત્રાયસ્થિશ, પારિષદ, આત્મરક્ષક, લોકપાલ, અનીકાધિપતિ, પ્રકીર્ણક, આભિયોગ્ય, કિલ્બિષિક, આ દશ પ્રકારના દેવ જ્યાં હોય છે તે દેવલોકનું નામ કલ્પ છે. આ કલ્પોમાં જે ઉત્પન્ન થાય છે તેમનાં નામ કલ્પોપગ છે. સૌધર્માદિક દેવલોકથી લઈને અચ્યુત દેવલોક સુધીના દેવ કલ્પોપગ કહેવાય છે. એમકે અહીં સુધી ઇન્દ્રાદિક ૧૦ પ્રકારના દેવોનો વ્યવહાર થાય છે. ત્યાર પછી નહિ. (ગઙ્ગકહ્લાણા) તેમની ગતિ કલ્યાણકારી હોય છે. અથવા ચતુર્ગતિક આ લોકમાં તેઓ દેવગતિમાં રહેવાવાળા હોવાને કારણે ઉત્તમ હોય છે. આ અપેક્ષાથી તેઓ ગતિકલ્યાણ કહેવાય છે.

(૧) અમુરકુમારોના વર્ણનમાં આ બધાં પદોનો અર્થ લખાઈ ગયો છે.

एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति,

મદ્રરૂપાઃ, ‘ઠિઠ્ઠકલ્લાણા’ સ્થિતિકલ્યાણાઃ=અનેકપલ્યોપમસાગરોપમરૂપચિરસ્થિતિકાઃ
‘આગમેસિમહા’ આગમિષ્યદ્ભદ્રાઃ—આગમિષ્યત્=આગામિકાલભાવિ ભદ્રં=કલ્યાણં—નિર્વાણરૂપં
યેષાં તે તથા, ‘જાવ પઢિરૂવા’ યાવત્પ્રતિરૂપાઃ=અતિરમણીયાઽઽકારાઃ, યાવચ્છવ્દાત્—
‘પ્રાસાદીયા દર્શનીયા અભિરૂપા’ इति बोध्यम् । पुनरपि ‘तमाइक्खइ’ तदाचष्टे=तत्प्रवचनं
કથયતિ—‘एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति’ एवं खलु
चतुर्भिः स्थानैर्जीवा नैरयिकतायाः कर्माणि प्रकुर्वन्ति, तत्र नैरयिकतायाः=नारकित्वस्य,

સાગરોપમ તક દેવલોક મેં इनकी स्थिति होने के कारण ये देव स्थितिकल्याण कहे गये हैं ।
इनमें से आकर ही तो मनुष्यपर्याय लेकर जीव निर्वाण—मुक्ति का लाभ करते हैं; अतः वे
(आगमेसिभद्वा) आगमिष्यद्भद्र कहे गये हैं । (जाव पडिख्वा) यहाँ पर ‘यावत्’ शब्द
से “प्रासादीयाः, दर्शनीयाः, अभिरूपाः” इन पदों का भी संग्रह हुआ है । ‘प्रासा-
दीयाः’ इन्हें देखने से मन प्रसन्न हो जाता है । अत एव ये ‘दर्शनीयाः’ दर्शनीय हैं ।
‘अभिरूपाः’ इनके रूप की सुन्दरता प्रतिक्षण नवीन नवीन भाव से बढ़ती रहती हो
ऐसे ये माहम होते हैं; इसलिये ये अभिरूप हैं । ‘प्रतिरूपाः’ इनके रूप की तुलना नहीं
हो सकती है, क्यों कि इनका रूप असाधारण होता है, अर्थात् ये अनुपम सुन्दर होते हैं ।
अब इस प्रवचन का क्या फल है ? इसको कहते हैं—

(एवं खलु चउहिं ठાણેહિં જીવા ણેરइयत्ताए कम्मं पकरेंति) यह जीव
चार कारणों द्वारा नरक में ले जानेवाले कर्मों को करते हैं, अब इस बात को प्रभु प्रकट

(ઠિઠ્ઠકલ્લાણા) અનેક પલ્યોપમ સાગરોપમ સુધી દેવલોકમાં તેમની સ્થિતિ
હોવાના કારણે તે દેવો સ્થિતિકલ્યાણ કહેવાય છે. તેમાંથી આવીને જ મનુ-
ષ્યપર્યાય પ્રાપ્ત કરી જીવ નિર્વાણ—મુક્તિનો લાભ કરે છે, માટે તેઓ (આગ-
મેસિમહા) આગમિષ્યદ્ભદ્ર કહેવાય છે. (જાવ પઢિરૂવા) અહીં યાવત્
શબ્દથી ‘પ્રાસાદીયાઃ, દર્શનીયાઃ, અભિરૂપાઃ’ એ પદોનો પણ સંગ્રહ થયો છે.
“પ્રાસાદીયાઃ”—એમને જોતાં મન પ્રસન્ન થઈ જાય છે. આ માટે જ તેઓ
‘દર્શનીયાઃ’ દર્શનીય છે. ‘અભિરૂપાઃ’ એમના રૂપની સુંદરતા પ્રતિક્ષણ નવીન
નવીન ભાવથી વધતી જતી હોય તેમ તેઓ જણાય છે; તે માટે તેઓ અભિ-
રૂપ છે. ‘પ્રતિરૂપાઃ’ તેમના રૂપની તુલના ન થઈ શકે, કેમકે તેમનું રૂપ
અસાધારણ હોય છે, અર્થાત્ તેઓ અનુપમ સુંદર હોય છે. હવે આ પ્રવ-
ચનનું શું ફલ છે ? તે કહે છે—

(एवं खलु चउहिं ठાણેહિં जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति) આ જીવ ચાર

નેરઇયત્તાણ કમ્મં પકરેત્તા નેરઇણ્ણુ ઉવવજ્જંતિ, તં જહા—મહારંભયાણ ૧ મહાપરિગ્ગહયાણ ૨ પંચિંદિયવહેણં ૩ કુણિમાહારેણં ૪, એવં એણં અભિલાવેણં । તિરિક્ખજોણિણ્ણુ—૧ માહિલ્લયાણ

‘નેરઇયત્તાણ કમ્મં પકરેત્તા નેરઇણ્ણુ ઉવવજ્જંતિ’ નૈરયિકતાયૈ કર્માણિ પ્રકૃત્ય=પ્રકર્ષેણ વિધાય નૈરયિકેષુ ઉત્પદ્યન્તે=નારકજીવાનાં મધ્યે જાયન્તે, તંજહા—તથથા=યેન પ્રકારેણ નૈરયિકેષુ જાયન્તે તત્ કથયતિ સૂત્રકાર:—૧ ‘મહારંભયાણ’ મહારમ્ભતયા=સાવધાડરમ્ભ-વાહુલ્યેન,—૨ ‘મહાપરિગ્ગહયાણ’ મહાપરિગ્રહતયા=પરિગ્રહાધિક્યેન, ૩ ‘પંચિંદિયવહેણં’ પચ્ચેન્દ્રિયવધેન=પચ્ચેન્દ્રિયપ્રાણિનાં હિંસયા, ૪ ‘કુણિમાહારેણં’ કુણપાહારેણ=માંસાહારેણ, ‘એવં એણં અભિલાવેણં’ એવમેતેનાભિલાપેન=કથનેન ‘તિરિક્ખજોણિણ્ણુ’ તિર્યગ્ચોનિષુ—તિરશ્ચાં ચોનય:—ઉત્પત્તિસ્થાનાનિ તત્ર, ૧—માહિલ્લયાણ ણિયહિલ્લયાણ’ માયાવિતયા નિકૃતિમત્તયા—માયા=પરવચ્ચના સૈષામસ્તીતિ માયાવિન: તેષાં ભાવસ્તત્તા તયા; નિકૃતિ:—માયાસંવરણાર્થં માયાન્તરકરણં સૈષામસ્તીતિ નિકૃતિમન્ત:, તદ્વાવો નિકૃતિમત્તા તયા, ૨ ‘અલિયવયણેણં’

કરતે હૈં—(તં જહા) વે ચાર કારણ યે હૈં—(મહારંભયાણ) મહા—આરમ્ભ, (મહા-પરિગ્ગહયાણ) મહાપરિગ્રહ, (પંચિંદિયવહેણં) પંચેન્દ્રિય જીવોં કા વધ કરના, (કુણિમાહારેણં) માંસ કા આહાર કરના । ઇન ચાર કારણોં સે (નેરઇયત્તાણ કમ્મં પકરેત્તા નેરઇણ્ણુ ઉવવજ્જંતિ) નરક મેં લે જાને કે યોગ્ય કર્મોં કા ઉપાર્જન હોતા હૈ, ઇસ-લિયે યે જીવ નરક મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં । (એવં એણં અભિલાવેણં) ઇસી પ્રકારકા ચાર કારણ રૂપ કથન (તિરિક્ખજોણિણ્ણુ) તિર્યચ્ચ ગતિ મેં ઉત્પન્ન કરાને વાલે કર્મોં કા મી હૈ । વે ચાર કારણ યે હૈં—(માહિલ્લયાણ) માયાચારી કરના (ણિયહિલ્લયાણ) એવં માયા કો સંવરણ કરને કે લિયે ઔર અધિક માયાચારી કરના ૧, (અલિયવયણેણં) અસત્ય-

કારણો દ્વારા નરકમાં લઈ જનારાં કર્મો કરે છે, (તંજહા) તે ચાર કારણ આ છે—(મહારંભયાણ) મહા આરંભ, (મહાપરિગ્ગહયાણ) મહાપરિગ્રહ, (પંચિંદિયવહેણં) પંચેન્દ્રિય જીવોનો વધ કરવો, (કુણિમાહારેણં) માંસનો આહાર કરવો. આ ચાર કારણોથી (નેરઇયત્તાણ કમ્મં પકરેત્તા નેરઇણ્ણુ ઉવવજ્જંતિ) નરકમાં લઈ જવા યોગ્ય કર્મોનું ઉપાર્જન થાય છે તેથી તે જીવ નરકમાં જાય છે. (એવં એણં અભિલાવેણં) આ પ્રકારનાં ૪ ચાર કારણ રૂપ કથન (તિરિક્ખજોણિણ્ણુ) તિર્યચ્ચ ગતિમાં ઉત્પન્ન કરાવનારાં કર્મોનું પણ છે. તે ચાર કારણ આ છે—(માહિલ્લયાણ) માયાચારી કરવું, (ણિયહિલ્લયાણ) તેમજ માયાનું સંવરણ કરવા માટે—ઢાંકવા માટે અન્ય માયાચારી કરવું (૧).

ણિયડિલ્લયાણ, ૨ અલિયવયણેણ, ૩ ઉક્કંચણયાણ, ૪ વંચણયાણ।

મણુસેસુ-પગ્ગમ્મહયાણ ૧, પગ્ગવિણીયયાણ ૨, સાણુક્કો-

અલીકવચ્ચનેન=અસત્યભાષણેન, ૩ ‘ઉક્કંચણયાણ’ ઉત્કચ્ચનતયા-ઉત્કચ્ચનતા નામ કં ચન સરલહૃદયં વચ્ચયિતું પ્રવૃત્તસ્ય પરં ચતુરતરં નરં પાર્શ્વસ્થં વિલોક્ય ક્ષણં વચ્ચનાનિવૃત્ત- તયાઽવસ્થાનં તયા, કપટવૃત્તયા, ૪ ‘વંચણયાણ’ વચ્ચનતયા। એતૈશ્ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈર્જીવા- સ્તિર્યગ્યોનિષુ યાન્તિ। મનુષ્યજીવેષુ પુનઃ કૈશ્ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈરુત્પદ્યન્તે ? તદર્શયિતુમાહ- ‘મણુસેસુ’ इत्यादि। મનુષ્યેષુ, ‘પગ્ગમ્મહયાણ’ પ્રકૃતિભદ્રતયા=સ્વભાવસરલતયા ૧, ‘પગ્ગવિણીયયાણ’ પ્રકૃતિવિનીતતયા=સ્વભાવતો વિનયશીલતયા ૨, ‘સાણુક્કોસયાણ’ સાનુક્રોશતયા-અનુક્રોશો=દયા તેન સહ વર્તતે इति સાનુક્રોશસ્તસ્ય ભાવઃ સાનુક્રોશતા તયા-સદયતયા ૪, ‘અમચ્છરિયાણ’ અમત્સરિતયા-મત્સરોઽન્યશુભદ્વેષસ્તદભાવોઽમત્સરઃ= પરગુણગ્રાહિત્વં સોઽસ્ત્યેષામિત્યમત્સરિણસ્તદભાવોઽમત્સરિતા તયા-ઈર્ષ્યારાહિત્યેન। એતૈશ્ચતુર્ભિઃ

ભાષણ કરના ૨, (ઉક્કંચણયાણ) કિસી સરલ હૃદયવાલે વ્યક્તિ કો ઠગને કે લિયે પ્રવૃત્ત હુણ ઠગિયા-માયાચારી વાલે કા, ઉસ સરલ પુરુષ કે પાસ કિસી ચતુર પુરુષ કી સ્થિતિ દેસ્- કર કુછ સમયતક વંચનામય અપની પ્રવૃત્તિ કો સ્થગિત કર ઠહર જાના-કપટવૃત્તિ કો રોક રસ્તના ૩, (વંચણયાણ) દૂસરોં કો ઠગના ૪। इन चार कारणोंसे जीव तिर्य्यचगति में ले जाने वाले कर्मों का उपार्जन करते हैं। (मणुस्सेसु) मनुष्यगति में जीव चार कारणों से जाते हैं। वे कारण ये हैं-(पगग्महयाण) प्रकृति से भद्र होना १, (पगग्विणीययाण) प्रकृति से विनीत होना २, (साणुक्कोसयाण) दयालु होना ३, एवं (अमच्छरियाण) मत्सरभाव नहीं रखना अर्थात् गुणग्राही होना ४। इन चार कारणों से ये जीव मनुष्यगति में उत्पन्न

(અલિયવયણેણ) અસત્ય ભાષણ કરવું (૨). (ઉક્કંચણયાણ) કોઈ સરલ હૃદયવાળા માણસને ઠગવા-છેતરવા-માટે પ્રવૃત્ત થનારા ઠગ-માયાચારીવાળાનું, તે સરળ પુરુષની પાસે કોઈ ચતુર પુરુષની હાજરી બેઠ થોડા સમય માટે વંચનામય પોતાની પ્રવૃત્તિને સ્થગિત કરી રોકાઈ જવું-પોતાની કપટવૃત્તિને રોકી રાખવું (૩). (વંચણયાણ) બીજાને ઠગવા (૪). આ ચાર કારણોથી જીવ તિર્યંચ ગતિમાં લઈ જવા જેવાં કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે. (મણુસેસુ) મનુષ્ય- ગતિમાં આ જ ૪ કારણોથી જાય છે. તે કારણો આ છે-(પગ્ગમ્મહયાણ) પ્રકૃતિથી ભદ્ર હોવું (૧), (પગ્ગવિણીયયાણ) પ્રકૃતિથી વિનીત હોવું (૨), (સાણુક્કોસયાણ) દયાળુ હોવું (૩), તેમજ (અમચ્છરિયાણ) મત્સરભાવ ન રાખવો અર્થાત્ ગુણગ્રાહી થવું (૪). આ ચાર કારણોથી આ જ મનુષ્ય

સયાણ ૩, અમચ્છરિયાણ ૪। દેવેસુ-સરાગસંજમેણં ૧,
સંજમાસંજમેણં ૨, અકામાણજ્જરાણ ૩, બાલતવોકમ્મેણં ૪।
તમાઙ્કલ્લ-

સ્થાનૈર્જીવા મનુજત્વં પ્રાપ્નુવન્તિ । દેવત્વપ્રાપ્તિહેતુભૂતાનિ ચત્વારિ સ્થાનાનિ દર્શયતિ-‘દેવેસુ’
ઇત્યાદિ । દેવેષુ-‘સરાગસંજમેણં’ સરાગસંયમેન-રાગેગ=આસક્ત્યા સહિતઃ સરાગઃ સ
ચાસૌ સંયમશ્ચ સરાગયમ્મસ્તેન-સકષાયચારિત્રેણ ૧, ‘સંજમાસંજમેણં’ સંયમાસંયમેન=
દેશસંયમેન ૨, ‘અકામાણજ્જરાણ’ અકામનિર્જરયા-અકામેન=અભિલાષમન્તરેણ નિર્જરા=
ક્ષુધાદિસહનં તથા ૩, ‘બાલતવોકમ્મેણં’ બાલતપઃકર્મણા=બાલસાદૃશ્યાદ્ બાલાઃ=
મિથ્યાદૃશઃ, તેષાં તપઃકર્મ બાલતપઃકર્મ, તેન ૪, એતૈઃ સ્થાનૈર્જીવા દેવમવં પ્રાપ્નુવન્તીતિ ભાવઃ ।
પુનઃ પ્રકારાન્તરેગ ‘તમાઙ્કલ્લ’ તદાલ્યાતિ=તત્ કથયતિ ‘જહ ણરગા ગમ્મંતી’

કરારને વાલે કમોં કા ઉપાર્જન કરતે હૈં । (દેવેસુ) ચાર કારણોં સે જીવ દેવગતિ મેં ઉત્પન્ન
હોતે હૈં । વે ચાર કારણ યે હૈં-(સરાગસંજમેણં) સરાગસંયમ કા પાલન કરના ૧, (સંજમા-
સંજમેણં) દેશવિરતિ પાલન કરના ૨, (અકામાણજ્જરાણ) અકામનિર્જરા ૩, ંવં (બાલ-
તવોકમ્મેણં) બાલ તપસ્યા ૪ । જિસ સંયમ મેં રાગ (આસક્તિ) વિઘમાન હોતા હે ઉસ
કા નામ સરાગસંયમ હૈ । મતલબ-કષાયસહિત ચારિત્ર કા પાલના સરાગસંયમ હૈ । ૧૨
બારહ વ્રતોં કા-દેશવિરતિ કા ધારણ કરના ઇસકા નામ સંયમાસંયમ હૈ । અભિલાષા-ઇચ્છા
કે વિના ક્ષુધા આદિ કા સહન કરના ઇસકા નામ અકામનિર્જરા હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિયોં કે તપ
કા નામ બાલતપ હૈ । ઇન કામોં કે કરને સે જીવ દેવગતિ મેં જાને યોગ્ય કમોં કા ઉપાર્જન
કરતે હૈં । (જહ ણરગા ગમ્મંતી જે ણરગા જા ય વેયણા ણરણ । સારીરમાણસાં ઢુલ્લસાં

ગતિમાં ઉત્પન્ન કરાવવાવાળાં કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે. (દેવેસુ) ચાર કારણોથી
જીવ દેવગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે-(સરાગસંજમેણં) સરાગ સંયમનું પાલન કરવું ૧,
(સંજમાસંજમેણં) દેશવિરતિનું પાલન કરવું ૨, (અકામાણજ્જરાણ) અકામ-
નિર્જરા ૩, તેમજ (બાલતવોકમ્મેણં) બાલ તપસ્યા ૪. જે સંયમમાં રાગ-આસક્તિ
વિઘમાન હોય છે તેનું નામ સરાગ-સંયમ છે. મતલબ-કષાય સહિત ચારિ-
ત્રનું પાલન કરવું તે સરાગસંયમ છે (૧). ૧૨ બાર વ્રતો-દેશવિરતિ-
ધારણ કરવાં તેનું નામ સંયમાસંયમ છે (૨). અભિલાષા-ઇચ્છા-વિના ભૂખ
આદિ સહન કરવું તેનું નામ અકામ નિર્જરા છે (૩). મિથ્યાદૃષ્ટિનાં તપનું
નામ બાલતપ છે (૪). આ કામો કરવાથી જીવ દેવગતિમાં જવા યોગ્ય કર્મોનું

“ જહ નરગા ગમ્મંતી, જે નરગા જા ય વેયણા નરણ ।
સારીરમાણસાઈં દુઃખાઈં તિરિક્કજોણીણ ॥ ૧ ॥
માણુસ્સં ચ અણિચ્ચં, વાહિ-જરા-મરણ-વેયણા-પરં ।
દેવે ય દેવલોણ, દેવિઙ્ઠિં દેવસોઁખાઈં ॥ ૨ ॥

इत्यादिगाथाभिः । ‘जह नरगा गम्मंती’ यथा नरका गम्यन्ते—जीवैर्येन प्रकारेण नरकाः=नरकस्थानानि गम्यन्ते=प्राप्यन्ते, ‘जे नरगा’ ये नरकाः—यद्रूपा नरकाः=नारकिगः सन्ति, ‘जा य वेयणा नरण’ याश्च वेदना नरके—याः=यादृश्यो वेदनाः=यातनाश्च नरके भवन्ति, तत्सर्वं कथयतीति पूर्वणान्वयः । ‘सारीरमाणसाईं दुःखाईं तिरिक्कजोणीण’ शारीरमानसानि दुःखानि तिर्यग्योन्याम्—यथा च शरीरसम्बन्धीनि मनःसम्बन्धीनि च दुःखानि भवन्ति प्राणिनामिति शेषस्तथा भगवान् परिकथयति ॥ १ ॥ एवं ‘माणुस्सं च अणिच्चं वाहि-जरा-मरण-वेयणा-परं’ मानुष्यञ्चाऽनित्यं व्याधि-जरा-मरण-वेदना-प्रचुरम्—व्याधयो=ज्वरादयः जरा=वार्धकं, मरणं=प्रसिद्धं, वेदनाः=शीतोष्णादिस्वरूपाः, प्रचुराः=विशदा यस्मिंस्तादृशम्, अतएव अनित्यं=क्षणभङ्गुरं मानुष्यं=मनुष्यभवं परिकथयति । ‘देवे य देवलोण देविङ्घिं देवसोँखाईं’ देवान् च देवलोकान् देवर्द्धिं देवसौख्यानि—तथा देवान्, च पुनः देवलोकान्, देवर्द्धिं=देवसमृद्धिं, देवसौख्यानि=देवसम्बन्धीनि सुखानि कथयतीति शेषः ॥ २ ॥ एतान्येव नरकादीनि

तिરિક્કજોણીણ) जीव जिस प्रकार नरकों में जाते हैं, और वहां जैसे नारकी हैं, एवं उन्हें जिस प्रकार की वेदना भोगनी पड़ती है यह सब प्रभु ने (आइक्खइ) बतलाया । तिर्यग्गति में पहुँचने पर इस जीव को जितने भी शारीरिक एवं मानसिक कष्ट भोगने पड़ते हैं, यह भी भगवान् ने स्पष्ट किया । (माणुस्सं च अणिच्चं वाहि-जरा-मरण-वेयणा-परं) यह मानवपर्याय अनित्य है, व्याधि, जरा, मरण एवं वेदना से प्रचुर-भरी है । (देवे य

ઉપાર્જન કરે છે. (જહ નરગા ગમ્મંતી જે નરગા જા ય વેયણા નરણ । સારીરમાણસાઈં દુઃખાઈં તિરિક્કજોણીણ) જીવ જે પ્રકારે નરકોમાં જાય છે, અને ત્યાં જેવા નારકી હોય છે, તેમજ તેમને જે પ્રકારની વેદના ભોગવવી પડે છે, એ બધું પ્રભુએ (આઈક્કવઈ) બતાવ્યું. તિર્યગ્-ગતિમાં પહોંચતાં આ જીવને જેટલાં શારીરિક તેમજ માનસિક દુઃખ હોય છે તે બધાં ભોગવવાં પડે છે, એ પણ ભગવાને સ્પષ્ટ કર્યું. (માણુસ્સં ચ અણિચ્ચં વાહિ-જરા-મરણ-વેયણા-પરં) આ

નરગં તિરિક્ષ્વજોર્ણિ, માણુસભાવં ચ દેવલોગં ચ ।
 સિદ્ધે ય સિદ્ધવસર્હિ, છજ્જીવણિયં પરિકહેઇ ॥ ૩ ॥
 જહ જીવા વજ્જંતી મુચ્ચંતી જહ ય સંકિલિસ્સંતિ ।
 જહ દુક્ખાણં અંતં, કરેંતિ કેઈ અપડિવદ્ધા ॥ ૪ ॥

સંગ્રહ્ય વ્રૂતે—‘ નરગં ’ નરકં=નરકાવાસં, ‘ તિરિક્ષ્વજોર્ણિ ’ તિર્યગ્યોર્ણિ, ‘ માણુસભાવં ’
 મનુષ્યભાવં=મનુષ્યત્વં ચ ‘ દેવલોગં ’ દેવલોકઞ્ચ કથયતિ । તથા ‘ સિદ્ધે ય ’ સિદ્ધાંશ્ચ
 ‘ સિદ્ધવસર્હિ ’—સિદ્ધવસર્તિ=સિદ્ધક્ષેત્રં, ‘ છજ્જીવણિયં ’ ષડ્જીવનિકાં પરિકથયતિ ॥ ૩ ॥
 એવં ‘ જહ જીવા વજ્જંતી ’ યથા જીવા વધ્યન્તે=વન્ધં પ્રાપ્નુવન્તિ, ‘ મુચ્ચંતી ’ મુચ્યન્તે=
 મુક્તા ભવન્તિ, ‘ જહ ય સંકિલિસ્સંતિ ’ યથા ચ સંક્લિશ્યન્તિ, ‘ જહ દુક્ખાણં અંતં
 કરેંતિ કેઈ અપડિવદ્ધા ’ યથા દુઃખાનામન્તં કુર્વન્તિ કેઽપિ અપ્રતિવદ્ધાઃ—કેઽપિ=કતિ-
 ચિજ્જીવા અપ્રતિવદ્ધાઃ=પ્રતિવન્ધરહિતાઃ—મુક્તાઃ સન્તો દુઃખાનામન્તં=નાશં કુર્વન્તિ, તત્સર્વં

દેવલોએ દેવિડ્ઢિં દેવસોક્ખાઈં) એવં દેવગતિ મેં દેવતાઓં કો દેવત્તંબંધી અનેક ઋદ્ધિયાં
 એવં દેવપર્યાયત્તંબંધી અનેક સૌખ્યોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ—યહ સવ મી પ્રમુને અચ્છી તરહ સ્પષ્ટ
 કરકે અપની દિવ્યધ્વનિ દ્વારા પ્રદર્શિત ક્રિયા । (નરગં તિરિક્ષ્વજોર્ણિ માણુસભાવં ચ દેવ-
 લોગં ચ । સિદ્ધે ય સિદ્ધવસર્હિ છજ્જીવણિયં પરિકહેઇ) હસ પ્રકાર પ્રમુ ને નરક, તિર્યંચ,
 મનુષ્ય એવં દેવગતિ કા કથન ક્રિયા, સાથ મેં યહ મી વતલાયા કિ સિદ્ધ કૈસે હોતે હૈ
 ઓર સિદ્ધસ્થાન કૈસા હૈ, એવં ષડ્જીવનિકાય કૌન ૨ હૈ । (જહ જીવા વજ્જંતી મુચ્ચંતી
 જહ ય સંકિલિસ્સંતિ । જહ દુક્ખાણં અંતં કરેંતિ કેઈ અપડિવદ્ધા) જીવ જિસ પ્રકાર કર્મોં

માનવપર્યાય અનિત્ય છે. વ્યાધિ, જરા, મરણ તેમજ વેદનાથી પ્રચુર-ભરેલી
 છે. (દેવે ય દેવલોએ દેવિડ્ઢિં દેવસોક્ખાઈં) તેમજ દેવગતિમાં દેવતાઓને દેવ-
 સંબંધી અનેક ઋદ્ધિઓ તેમજ દેવપર્યાય-સંબંધી અનેક સૌખ્યની પ્રાપ્તિ થાય
 છે. એ બધું પણ પ્રભુએ સારી રીતે સ્પષ્ટ કરીને પોતાના દિવ્ય-ધ્વનિ દ્વારા પ્રદર્શિત
 કર્યું. (નરગં તિરિક્ષ્વજોર્ણિ માણુસભાવં ચ દેવલોગં ચ । સિદ્ધે ય સિદ્ધવસર્હિ છજ્જી-
 વણિયં પરિકહેઇ) આ પ્રકારે પ્રભુએ નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય તેમજ દેવગતિનું કથન
 કર્યું, તે સાથે એ પણ બતાવ્યું કે સિદ્ધ કેવા હોય છે, અને સિદ્ધસ્થાન કેવું છે,
 તેમજ ષડ્જીવનિકાય કેાણુ કેાણુ છે. (જહ જીવા વજ્જંતી મુચ્ચંતી જહ ય
 સંકિલિસ્સંતિ । જહ દુક્ખાણં અંતં કરેંતિ કેઈ અપડિવદ્ધા) જીવ જે પ્રકારે કર્મોંથી

અટ્ટા અટ્ટિયચિત્તા જહ જીવા દુઃખસાગરમુવેતિ ।
જહ વેરગ્ગમુવગયા કમ્મસમુગ્ગં વિહારેતિ ॥ ૫ ॥
જહ રાગેણ કઢાણં કમ્માણં પાવગો ફલવિવાગો ।
જહ ય પરિહીણકમ્મા સિદ્ધા સિદ્ધાલયમુવેતિ ॥ ૬ ॥ સૂ. ૫૬ ॥

કથયતિ ॥ ૪ ॥ ‘અટ્ટા અટ્ટિયચિત્તા’ આર્તાદાર્તિતચિનાઃ—આર્તાત્=આર્તધ્યાનાદ્ આર્તિતં=પીડિતં ચિત્તં યેષાં તે તથા, ‘જહ જીવા’ યથા જીવાઃ ‘દુઃખસાગરમુવેતિ’ દુઃખસાગરં=દુઃખરૂપં સમુદ્રમુપયન્તિ=પ્રાપ્નુવન્તિ, તત્ કથયતિ । ‘જહ વેરગ્ગમુવગયા કમ્મસમુગ્ગં વિહારેતિ’ યથા ચ વૈરાગ્યમુપગતાઃ=પ્રાપ્તાઃ કર્મસમુદ્ગં—કર્મણાં સમુદ્ગં=મઞ્જૂષાં કર્મરાશિમિતિ યાવત્ વિઘાટયન્તિ=ત્રોટયન્તિ—નાશયન્તીતિ યાવત્, તત્ કથયતિ । ‘જહ રાગેણ કઢાણં કમ્માણં પાવગો ફલવિવાગો’ યથા રાગેણ=પુત્રકલત્રાદિષ્વભિષ્વજ્જરૂપેણ કૃતાનામ્=ઉપાર્જિતાનાં કર્મણાં=જ્ઞાનાવરણીયાદીનાં પાપકઃ=પાપમયઃ ફલવિપાકઃ=ફલપરિણામો ભવતિ ।

સે બંધતે હૈં ઓર જિસ પ્રકાર ડનસે છૂટતે હૈં તથા જિસ પ્રકાર સે અનેક સંકલેશોં કો ભોગતે હૈં ઓર ફિર અપ્રતિબદ્ધ હોકર જિસ પ્રકાર સે કિતનેક ભવ્યજીવ સમસ્ત પ્રકાર કે દુઃખોં કા વિનાશ કરતે હૈં યહ વિષય ભી પ્રભુ ને આગત જનતા કો અચ્છી તરહ સમજાયા । (અટ્ટા અટ્ટિયચિત્તા જહ જીવા દુઃખસાગરમુવેતિ । જહ વેરગ્ગમુવગયા કમ્મસમુગ્ગં વિહારેતિ) પ્રભુ ને યહ ભી વતલાયા કિ આર્તધ્યાન સે પીડિત ચિત્તવાલે પ્રાણી—જીવ કિસ તરહ દુઃખ સાગર મેં ગોતે રાતે રહતે હૈં ઓર કિસ પ્રકાર સે વૈરાગ્ય કો પ્રાપ્ત કર જીવ કર્મરાશિ કો વિનષ્ટ કર દેતે હૈં । (જહ રાગેણ કઢાણં કમ્માણં પાવગો ફલવિવાગો ।

બંધાય છે, અને જે પ્રકારે તેથી છૂટે છે, તથા જે પ્રકારે અનેક સંકલેશોને ભોગવે છે, અને પાછા અપ્રતિબદ્ધ થઈને જે પ્રકારે કેટલાક ભવ્ય જીવ સમસ્ત પ્રકારનાં દુઃખનો વિનાશ કરે છે. એ વિષય પણ પ્રભુએ આવેલ જનતાને સારી રીતે સમજાવ્યો. (અટ્ટા અટ્ટિયચિત્તા જહ જીવા દુઃખસાગરમુવેતિ । જહ વેરગ્ગમુવગયા કમ્મસમુગ્ગં વિહારેતિ) પ્રભુએ એ પણ બતાવ્યું કે આર્તધ્યાનથી પીડાતા ચિત્તવાળા પ્રાણી—જીવ કેવી રીતે દુઃખસાગરમાં ગોથાં ખાધા કરે છે, અને કેવી રીતે વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત કરીને જીવ કર્મરાશિનો નાશ કરે છે. (જહ રાગેણ કઢાણં કમ્માણં પાવગો ફલવિવાગો । જહ ય પરિહીણકમ્મા સિદ્ધા સિદ્ધાલયમુવેતિ) પુત્ર-કલત્ર આદિમાં આસક્તિ રૂપ રાગથી ઉપા-

મૂલમ્—તમેવ ધમ્મં દુવિહં આઙ્કલ્લહ, તં જહા—અગાર-

‘જહ ય’ યથા ચ—એન પ્રકારેગ ‘પરિહીણકમ્મા’ પરિહીણકર્માણઃ—પરિહીણાણિ=વિનષ્ટાણિ કર્માણિ યેષાં તે, સિદ્ધાઃ—‘સિદ્ધાલયમુવેતિ’ સિદ્ધાલયમુપયન્તિ—લોકાન્તક્ષેત્રલક્ષણં સ્થાનં પ્રાપ્નુવન્તિ, તથા ભગવાન્ પરિકથયતીતિ પૂર્વેણાન્વયઃ ॥ સૂ. ૫૬ ॥

ટીકા—‘તમેવ’ ઇત્યાદિ । ‘તમેવ ધમ્મં દુવિહં આઙ્કલ્લહ’ તમેવ=પૂર્વોક્તમેવ ધર્મં દ્વિવિધં=દ્વિપ્રકારમ્, આઙ્કલ્લહ=કથયતિ, ‘તં જહા’ તથા—‘અગારધમ્મં અણગારધમ્મં ચ’ અગારધર્મમ્, અણગારધર્મં ચ—અગારં=ગૃહં તાસ્થ્યાદગારા ગૃહસ્થાઃ, ગૃહા દારા ઇત્યાદિવત્, યદ્વા—અગારમસ્ત્યેષામિત્યર્થે ‘અર્શ આદિભ્યોઽચ્’ ઇતિ મત્વર્થીયાચ્-પ્રત્યયઃ, તેષાં ધર્મઃ—વક્તવ્યમાણસ્વરૂપસ્તમ્, તથા—અણગારધર્મં=ન વિદ્યતેઽગારં—ગૃહં યેષાં તેઽનગારાઃ સાધવસ્તેષાં ધર્મસ્તં ચ આઙ્કલ્લહ । તત્ર પ્રાધાન્યાત્ પ્રથમ-

જહ ય પરિહીણકમ્મા સિદ્ધા સિદ્ધાલયમુવેતિ) પુત્રકલત્રાદિકોં મેં આસક્તિરૂપ રાગ સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણીય આદિક કર્મોં કા પાપમય ફલ જૈસે હોતા હૈ ઓર કર્મોં કો નષ્ટ કર જીવ સિદ્ધાવસ્થાપન હો સિદ્ધાલય મેં જૈસે પહુંચતે હૈં યહ સર્વ મી પ્રભુ ને અપની દેશના મેં સ્પષ્ટ ક્રિયા ॥ સૂ. ૫૬ ॥

‘તમેવ ધમ્મં દુવિહં આઙ્કલ્લહ’ ઇત્યાદિ

પ્રભુ ને (તમેવ ધમ્મં દુવિહં આઙ્કલ્લહ) ઇસ ધર્મ કો દો પ્રકાર સે કહા હૈ ।
(^૧અગારધમ્મં અણગારધમ્મં ચ) ૧ ગૃહસ્થ કા ધર્મ ઓર દૂસરા અણગાર—મુનિ કા ધર્મ ।

(૧) ‘અગાર’ નામ ઘર કા હૈ । પરન્તુ ઇસ પદ સે યહાંં ઉનમેં રહને વાલે ગૃહસ્થોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ, અથવા “અર્શ આદિભ્યોઽચ્” ઇસ સૂત્ર સે અસ્ત્યર્થ મેં અચ્ પ્રત્યય કરને સે મી ઉનમેં રહને વાલે ગૃહસ્થોં કા ગ્રહણ હો જાતા હૈ ।

જન કરેલાં જ્ઞાનાવરણીય આદિક કર્મોનાં પાપમય ફલ જેમ થાય છે અને કર્મોનો નાશ કરી જીવ સિદ્ધ-અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી સિદ્ધાલય (મુક્તિ સ્થાનમાં) જેમ પહોંચે છે તે અધુ પણ પ્રભુએ પોતાની દેશનામાં સ્પષ્ટ કર્યું. (સૂ. ૫૬)

“તમેવ ધમ્મં દુવિહં આઙ્કલ્લહ” ઇત્યાદિ.

પ્રભુએ (તમેવ ધમ્મં દુવિહં આઙ્કલ્લહ) આ ધર્મ જે પ્રકારનો કહ્યો છે
(^૧અગારધમ્મં અણગારધમ્મં ચ) ૧—ગૃહસ્થના ધર્મ અને બીજા અણગાર—મુનિના

(૧) અગાર એટલે ઘર. પરંતુ આ પદથી અહીં તેમાં રહેવાવાળા ગૃહસ્થો એવો અર્થ ગ્રહણ કર્યો છે, અથવા “અર્શ આદિભ્યોઽચ્” આ સૂત્રથી ‘અસ્તિ’ અર્થમાં અચ્ પ્રત્યય લગાડવાથી પણ તેમાં રહેવાવાળા ગૃહસ્થો—એવો અર્થ થાય છે.

ધમ્મં અણગારધમ્મં ચ । અણગારધમ્મો તાવ-ઇહ સ્વલુ સવ્વઓ
સવ્વત્તાણ મુંડે ભવિત્તા અગારાઓ અણગારિયં પવ્વડ્યસ્સ સવ્વાઓ
પાણાઙ્ગાયાઓ વેરમણં મુસાવાય-અદિણ્ણાદાણ-મેહુણ-પરિગ્ગહ-

મનગારધર્મમેવ વ્યાચ્છે-‘અણગારધમ્મો તાવ’ इति । अनगारधर्मस्तावत्-तावत्= प्रथमम् अनगारधर्म उच्यते-‘इह स्वलु सव्वओ सव्वत्ताए मુંडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वड्यस्स सव्वाओ पाणाङ्गायाओ वेरमणं’ इह स्वलु सर्वतः सर्वात्मना मुण्डो भूत्वाऽगारादनगारितां प्रव्रजितस्य सर्वस्मात्प्राणातिपाताद्विरमणम्-इह जगति स्वलु सर्वतः=द्रव्यतो भावतश्चेत्यर्थः, सर्वाऽऽत्मना=परमवैराग्येण मुण्डो भूत्वा-द्रव्यतो मुण्डो मस्तके लुञ्चितकेशः, भावतस्तु कषायाणामपनयनमिति मुण्डलक्षणधर्मयोगात्पुरुषो मुण्ड उच्यते, अत्र ‘अर्श आदिभ्योऽच्’ इत्यच्प्रत्ययः; तादृशो भूत्वेत्यर्थः; अगाराद्=गृहात्-गृहं

(અણગારધમ્મો તાવ) અનગાર કા ધર્મ વે હી જીવ પાલન કરતે હૈં જો (ઇહ સ્વલુ સવ્વઓ સવ્વત્તાણ મુંડે ભવિત્તા અગારાઓ અણગારિયં પવ્વડ્યસ્સ સવ્વાઓ પાણાઙ્ગાયાઓ વેરમણં મુસાવાય-આદિણ્ણાદાણ-મેહુણ-પરિગ્ગહ-રાઈભોયણવેરમણં) યહાં સર્વ પ્રકાર સે-દ્રવ્ય એવં ભાવરૂપ સે, સર્વાત્મના-પરમવૈરાગ્ય સંપન્ન હોકર મુંડિત હો જાતે હૈં । યહ મુંડિત અવસ્થા દ્રવ્ય એવં ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ-કેશોં કા લુંચન કરના દ્રવ્યમુંડન હૈ, એવં કષાયોં કા ત્યાગ કરના ભાવમુંડન હૈ, મુંડિત હોકર જો અપને ગૃહ કા પરિત્યાગ કર સાધુ કી દીક્ષા સે દીક્ષિત હો જાતા હૈ । ઉસકા નામ અનગાર હૈ । ઇસ અનગાર અવસ્થા મેં

(૧) મુંડ પદ સે મુંડિત પુરુષ કા મત્વર્થીય અચ્ પ્રત્યય કરને સે ગ્રહણ હુઆ હૈ ।

ધર્મ. (અણગારધમ્મો તાવ) અનગારના ધર્મ તેજ જીવ પાલન કરે છે જે (ઇહ સ્વલુ સવ્વઓ સવ્વત્તાણ મુંડે ભવિત્તા અગારાઓ અણગારિયં પવ્વડ્યસ્સ સવ્વાઓ પાણાઙ્ગાયાઓ વેરમણં મુસાવાય-અદિણ્ણાદાણ-મેહુણ-પરિગ્ગહ-રાઈભોયણ-વેરમણં) અહીં સર્વ પ્રકારથી-દ્રવ્ય તેમજ ભાવ રૂપથી સર્વ પ્રકારે પરમ-વૈરાગ્ય-સંપન્ન થઈ જાય છે. આ મુંડિત અવસ્થા દ્રવ્ય તેમજ ભાવ ના ભેદથી બે પ્રકારની છે-‘કેશલુંચન કરવું’ એ દ્રવ્યમુંડન છે, તેમજ કષાયોનો ત્યાગ કરવો’ એ ભાવમુંડન છે. મુંડિત થઈ જે પોતાના ઘરનો ત્યાગ કરી સાધુની દીક્ષાથી દીક્ષિત થઈ જાય છે તેમનું નામ અનગાર છે. આ અનગાર અવ-

(૧) મુંડ શબ્દથી મુંડિત પુરુષનો મત્વર્થીય અચ્ પ્રત્યય લગાડવાથી શરૂ થયેલ છે.

પરિત્યજ્યેત્યર્થઃ, અનગારિતાં=સાધુત્વં પ્રવ્રજિતસ્ય=પ્રકર્ષેણ સમસ્તમમન્વપરિત્યાગપૂર્વકં સ્વીકૃતવતઃ, સર્વસ્માત્=ત્રિકરણત્રિયોગતો જાયમાનાત્ અસ્થિલાત્ પ્રાણાતિપાતાત્-પ્રાણાઃ=સ્પર્શેન્દ્રિયાદયઃ સન્ત્યેષામિતિ પ્રાણાઃ-એકેન્દ્રિયાદયો જીવાસ્તેષામતિપાતો=વિયોજનં-હિંસન-મિત્યર્થસ્તસ્માદ્ વિરમણં=નિવર્તનમ્ ॥ ૧ ॥ ‘મુસાવાય-અદિણ્ણાદાણ-મેહુણ-પરિગ્રહ-રાઙ્ભોયણાઓ વેરમણં’ મૃષાવાદા-અદત્તાઽઽદાન-મૈથુન-પરિગ્રહ-રાત્રિભોજનાદિરમણમ્-મૃષાવાદઃ=અસત્યભાષણં તસ્માદ્ વિરમણં=નિવૃત્તિઃ ॥ ૨ ॥ અદત્તાદાનં-ન દત્તમદત્તં=દેવ-ગુરુ-ભૂપ-ગાથાપતિ-સાધર્મિકૈરનનુજ્ઞાતં, તસ્યાદાનં=ગ્રહણં તસ્માદ્ વિરમણમ્, ॥ ૩ ॥ મૈથુનં-મિથુનેન=સ્ત્રીપુંમાન્યાં નિવૃત્તં કર્મ-કામક્રીડાલક્ષણં, તસ્માદ્ વિરમણમ્ ॥ ૪ ॥ પરિગ્રહઃ-પરિ=સર્વતો ભાવેન ગૃહ્યતે=જન્મજરામરણાદિજનિતૈર્દુઃસ્વૈર્વેષ્ટચત આત્મા અનેનેતિ,

કૃત, કારિત, અનુમોદના એવં મન, વચન ઔર કાય ઇસ પ્રકાર ત્રિકરણ ઔર ત્રિયોગ સે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોં કા સર્વથા ત્યાગ કર દિયા જાતા હૈ । પ્રાણાતિપાત કા ત્યાગ કરના-ઈસીકા નામ પ્રાણાતિપાતવિરમણ હૈ । ‘પ્રાણ’ શબ્દ સે પ્રાણવાલે એકેન્દ્રિયાદિક જીવોં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । ‘અતિપાત’ શબ્દ કા અર્થ વિયોગ કરના હૈ । એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોં કી હિંસા સે વિરક્ત-સર્વથા દૂર-હોના ઇસકા નામ પ્રાણાતિપાતવિરમણ-અહિંસા-મહાવ્રત હૈ । ઈસી તરહ ત્રિયોગ-ત્રિકરણ સે મૃષાવાદ સે વિરક્ત હોના ઇસકા નામ મૃષાવાદવિરમણ-સત્ય-મહાવ્રત હૈ । દેવ, ગુરુ, ભૂપ, સાધર્મિક એવં ગાથાપતિ દ્વારા અદત્ત કા ગ્રહણ કરના ઇસકા નામ અદત્તાદાન હૈ, ઁસસે નિવૃત્ત હોના ઁસકા નામ અદત્તાદાનવિરમણ મહાવ્રત હૈ । ત્રીન કરણ ત્રીન યોગ સે જો મૈથુન સે નિવૃત્ત હોના ઁસકા નામ મૈથુનવિરમણ મહાવ્રત હૈ । જિસકે ગ્રહણ સે આત્મા, જન્મ, જરા એવં મરણ આદિ જનિત દુઃસ્વોં સે વેષ્ટિત હોતી હૈ ઁસકા નામ પરિગ્રહ હૈ । ધર્મોપકરણ સિવાય અન્ય સવ ધન-ધાન્યાદિક કો પરિગ્રહ મેં પરિગણિત ક્રિયા

સ્થામાં કૃત, કારિત, અનુમોદના તેમજ મન, વચન અને કાય એ પ્રકારે ત્રિકરણ અને ત્રિયોગથી પ્રાણાતિપાત આદિક પાપોનો સર્વથા ત્યાગ કરાય છે. પ્રાણાતિપાતનો ત્યાગ કરવો એનું જ નામ પ્રાણાતિપાત-વિરમણ છે. ‘પ્રાણ’ શબ્દથી પ્રાણવાળા એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિઓની હિંસાથી વિરક્ત-સર્વથા દૂર થવું એનું નામ પ્રાણાતિપાતવિરમણ-અહિંસામહાવ્રત છે. એવી જ રીતે ત્રિયોગત્રિકરણથી મૃષાવાદથી વિરક્ત થવું એનું નામ મૃષાવાદવિરમણ-સત્ય મહાવ્રત છે. દેવ, ગુરુ, ભૂપ, સાધર્મિક તેમજ ગાથાપતિ દ્વારા અદત્તનું ગ્રહણ કરવું તેનું નામ અદત્તાદાન છે, તેથી નિવૃત્ત થવું અદત્તાદાનવિરમણ મહાવ્રત છે. ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી મૈથુનથી નિવૃત્ત રહેવું એનું નામ મૈથુન-વિરમણ મહાવ્રત છે. જેના ગ્રહણથી આત્મા, જન્મ, જરા તેમજ મરણ આદિ દુઃખોથી ઘેરાઈ જાય છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે. ધર્મોપકરણ સિવાય અન્ય

રાત્રિભોજન-વેરમણં । અયમાઉસો ! અણગારસામાઙ્ગે ધમ્મે
પણ્ણત્તે, એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખાણે ઉવટ્ઠિણે ણિગ્ગંથે વા
ણિગ્ગંથી વા વિહરમાણે આણાણે આરાહણે ભવતિ ।

અર્થાત્ પરિગૃહ્યતે=સમૂર્છે સ્વીક્રિયત इति પરિગ્રહ:-ધર્મોપકરણમિત્તં સર્વમિત્યર્થસ્તસ્માદ્
વિરમણમ્ ॥ ૫ ॥ રાત્રિભોજનં-રાત્રૌ ભોજનં તસ્માદ્ વિરમણમ્ ॥ ૬ ॥ ‘અયમાઉસો ?
અણગારસામાઙ્ગે ધમ્મે પળ્ણત્તે’ અયમાયુષ્મન્ ! અનગારસામયિક:-અનગારાણાં=સાધૂનાં
સમયે=સિદ્ધાન્તે, યદ્વા આચારે ભવ:, ધર્મ: પ્રજ્ઞત:=કથિત: । ‘એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખાણે
ઉવટ્ઠિણે’ એતસ્ય ધર્મસ્ય શિક્ષાયામ્=આસેવને ઉપસ્થિત:=ઉદ્યુક્ત:, ‘ણિગ્ગંથે વા’
નિર્ગ્રન્થ:=સાધુર્વા ‘ણિગ્ગંથી વા’ નિર્ગ્રન્થી વા ઉપસ્થિતા સાધ્વી વા-‘વિહરમાણે’
વિહરમાણ:=વિચરન્ ‘આણાણે આરાહણે ભવઈ’ આજ્ઞાયા:=સર્વજ્ઞોપદેશસ્ય આરાધકો ભવતિ ।
ઈત્થમનગારધર્મમુપદિશ્ય સંપ્રત્યગારધર્મમુપદિશતિ, તદેવાહ-‘અગારધમ્મં’ इत्यादि ।

ગયા છે । ક્યોં કિ પ્રાણિયોં કો ઇનમેં ‘મમેદંભાવ’ હોતા છે । ઇસ પરિગ્રહ સે વિરક્ત હોના
પરિગ્રહવિરમણ મહાવ્રત છે । રાત્રિ મેં ભોજન નહોં કરના-ઇસકા નામ રાત્રિભોજનવિરમણ
વ્રત છે । (અયમાઉસો ! અણગારસામાઙ્ગે ધમ્મે પળ્ણત્તે) હે આયુષ્મન્ ! સિદ્ધાન્ત મેં યહ
સાધુઓં કા આચારજન્ય ધર્મ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા છે । (એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખાણે
ઉવટ્ઠિણે) ઇસ સાધુ કે ધર્મ કે આસેવન મેં ઉપસ્થિત (તત્પર) ચાહે નિર્ગ્રન્થ-સાધુ હો,
ચાહે નિર્ગ્રન્થી-સાધ્વી હો, (વિહરમાણે) જો ઇસે અપને આચરણ મેં લાતા છે વહ (આણાણે
આરાહણે ભવઈ) પ્રભુ સર્વજ્ઞ કે આજ્ઞા કા આરાધક માના જાતા છે । ઇસ પ્રકાર અનગાર-
ધર્મ કી પ્રરૂપણા કર કે પ્રભુને ‘ગૃહસ્થ કા કયા ધર્મ છે ?’ ઇસકી પ્રરૂપણા ઇસ પ્રકાર કી

અધાં ધન ધાન્ય આદિકની, પરિગ્રહમાં ગણુના થાય છે. કેમકે પ્રાણિઓને
એમાં ‘મમેદંભાવ’ થાય છે. એ પરિગ્રહથી વિરક્ત થવું એ પરિગ્રહ-વિરમણ
મહાવ્રત છે. રાત્રિમાં ભોજન ન કરવું તેનું નામ રાત્રિભોજન વિરમણ વ્રત છે.
(અયમાઉસો ! અણગારસામાઙ્ગે ધમ્મે પળ્ણત્તે) હે આયુષ્યમાન્ ! સિદ્ધાંતમાં સાધુ-
ઓના આચાર જન્ય આ ધર્મનું પ્રતિપાદન કરેલ છે. (એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખાણે
ઉવટ્ઠિણે) સાધુના આ ધર્મને પાળવામાં ઉપસ્થિત-તત્પર, આહે તે નિર્ગ્રન્થ-સાધુ
હોય કે આહે તે નિર્ગ્રન્થી-સાધ્વી હોય (વિહરમાણે) જે આને આચરણમાં
લાવે તે (આણાણે આરાહણે ભવઈ) પ્રભુ સર્વજ્ઞની આજ્ઞાના આરાધક મનાય છે.
આ પ્રકારે અનગાર ધર્મની પ્રરૂપણા કરીને પ્રભુએ ‘ગૃહસ્થનો શું ધર્મ છે ?’ તેની

અગારધર્મં દુવાલસવિહં આઙ્ક્રવ્હ, તં જહા—પંચ
અણુવ્વયાઈં ૧, તિણિ ગુણવ્વયાઈં ૨, ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈં ૩।
પંચ અણુવ્વયાઈં, તં જહા—થૂલાઓ પાણાઙ્વાયાઓ વેરમણં ૧,

‘અગારધર્મં દુવાલસવિહં આઙ્ક્રવ્હ’ અગારધર્મ દ્વાદશવિધમાख्याતિ, ‘તં જહા’ તથથા,
‘પંચ અણુવ્વયાઈં’ પચ્ચાઽણુવ્રતાનિ ‘તિણિ ગુણવ્વયાઈં’ ત્રીણિ ગુણવ્રતાનિ
‘ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈં’ ચત્તારિ શિક્ષાવ્રતાનિ, શિક્ષા=અભ્યાસ:-પુનઃ પુનરભ્યયનં
તત્પ્રધાનાનિ વ્રતાનિ-શિક્ષાવ્રતાનિ। યથપિ પુનઃ પુનરાસેવનાયોગ્યાનિ શિક્ષાવ્રતાનિ પુરો
વક્ષ્યમાણાનિ ચત્વાર્યેવ, તથાપિ ત્રયાણાં ગુણવ્રતાનાં શિક્ષાવ્રતેષ્વેવાન્તર્ભાવાત્ સપ્ત શિક્ષાવ્રતાનિ
ઇત્યપ્યુચ્યતે ૩। સ્વરૂપસ્થાપનાય આહ-‘પંચ અણુવ્વયાઈં’ પચ્ચાઽણુવ્રતાનિ-‘તં જહા’
તથથા-‘થૂલાઓ પાણાઙ્વાયાઓ વેરમણં’ સ્થૂલાત્પ્રાણાતિપાતાદિરમણમ્-પ્રાણાનાં=
પ્રાણિનામતિપાતો=હિંસનં-તસ્માત્ સ્થૂલાત્ વિરમણં=નિવૃત્તિઃ, ન તુ સૂક્ષ્માત્ ॥ ૧ ॥ ‘થૂલાઓ

હૈ-(અગારધર્મં દુવાલસવિહં આઙ્ક્રવ્હ) પ્રમુને કહા કિ ગૃહસ્થ ધર્મ ૧૨ પ્રકાર કા હૈ,
(તં જહા) ઉસકે લે ૧૨ પ્રકાર ઇસ તરહ સે હૈન-(પંચ અણુવ્વયાઈં તિણિ ગુણવ્વયાઈં
ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈં) ૫ અણુવ્રત, ૩ ગુણવ્રત, ઇવં ૪ શિક્ષાવ્રત। કહીં ૨ પર શિક્ષાવ્રત-
સાત મી કહે ગયે હૈ સો ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ ઉનમં ૩ ગુણવ્રતોં કો સમ્મિલિત કર
લિયા ગયા હૈ। શિક્ષાપ્રધાન વ્રતોં કા નામ શિક્ષાવ્રત હૈ। (પંચ અણુવ્વયાઈં તં જહા) પાંચ
અણુવ્રત યે હૈન-(થૂલાઓ પાણાઙ્વાયાઓ વેરમણં) સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત સે વિરક્ત હોના સો
અહિંસા અણુવ્રત હૈ। ‘સ્થૂલ’ શબ્દ યહાં યહ બતલાતા હૈ કિ સૂક્ષ્મ સે નહીં; કિન્તુ સ્થૂલ પ્રાણા-

પ્રરૂપણા આ પ્રકારે કરી છે-(અગારધર્મં દુવાલસવિહં આઙ્ક્રવ્હ) પ્રભુએ
કહ્યું કે ગૃહસ્થ ધર્મ ૧૨ બાર પ્રકારના છે. (તંજહા) તેના એ ૧૨ બાર
પ્રકાર આવી રીતના છે-(પંચ અણુવ્વયાઈં તિણિ ગુણવ્વયાઈં ચત્તારિ સિક્ખાવ-
યાઈં) ૫ અણુવ્રત, ૩ ગુણુવ્રત, તેમજ ૪ શિક્ષાવ્રત. ક્યાંક ક્યાંક શિક્ષાવ્રત
સાત પણ કહેવામાં આવ્યાં છે, તેનું કારણ એ છે કે તેમાં ત્રણ ગુણુવ્રતોને
સંમિલિત કરી લેવામાં આવ્યા છે. શિક્ષાપ્રધાન વ્રતોનું નામ શિક્ષાવ્રત છે.
(પંચ અણુવ્વયાઈં તંજહા) પાંચ અણુવ્રત આ છે-(થૂલાઓ પાણાઙ્વાયાઓ વેરમણં)
સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતથી વિરક્ત થવું તે ‘અહિંસા અણુવ્રત’ છે. ‘સ્થૂલ’ શબ્દ
અહીં એ બતાવે છે કે સૂક્ષ્મથી નહિ પણ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતથી વિરમણ

થૂલાઓ મુસાવાયાઓ વેરમણં ૨, થૂલાઓ અદિણ્ણાદાણાઓ વેરમણં ૩, સદારસંતોસે ૪, ઇચ્છાપરિમાણે ૫ । તિણિણ ગુણવ્વ-

મુસાવાયાઓ વેરમણં ' સ્થૂલાન્મૃષાવાદિરમણમ્=સ્થૂલાસત્યવચનકથનાન્નિવૃત્તિઃ । 'થૂલાઓ અદિણ્ણાદાણાઓ વેરમણં ' સ્થૂલાદદત્તાદાનાદિરમણમ્-અદત્તસ્ય આદાનં=ગ્રહણં તસ્માદિરમણં=નિવૃત્તિઃ ૩ । 'સદારસંતોસે' સ્વદારસંતોષઃ=પરદારવેશ્યાદિવર્જનમ્ ॥૪॥ 'ઇચ્છાપરિમાણે' ઇચ્છાપરિમાણઃ=ઇચ્છાયાઃ=ધનાદમિલાષરૂપાયાઃ પરિમાણં=નિયમનમ્-ઇચ્છાપરિમાણમ્-દેશતઃ પરિગ્રહવિરતિઃ, યદ્વા-ઇચ્છા=પરિગ્રાહ્યવસ્તુવિષયક વાચ્છા તસ્યાઃ પરિમાણમ્=ઇચ્છા । ઇદમેતાવદેવ મયા ધાર્યમુપાર્જનીયં વેતિ નિયમનમિચ્છાપરિમાણમ્ ॥૫॥ 'તિણિણ ગુણવ્વયાઈ'ત્રીણિ

તિપાત સે વિરમણ હોના હી અહિંસા અણુવ્રત હૈ । (થૂલાઓ મુસાવાયાઓ વેરમણં) સ્થૂલ મૃષાવાદ સે વિરક્ત હોના-સ્થૂલ અસત્ય વચનોં કે કહને સે દૂર રહના-સો સ્થૂલમૃષાવાદ-વિરમણ અણુવ્રત હૈ । (થૂલાઓ અદિણ્ણાદાણાઓ વેરમણં) સ્થૂલ અદત્તાદાન સે વિરમણ હોના સો અચૌર્ય અણુવ્રત હૈ । (સદારસંતોસે) અપની સ્ત્રી મેં હી સંતોષ રખના-પરદારા (પરસ્ત્રી) એવં વેશ્યા આદિ કા પરિત્યાગ કર દેના-સો સ્વદારસંતોષ અણુવ્રત હૈ । (ઇચ્છાપરિમાણે) ધન એવં ધાન્યાદિક કી અમિલાષા રૂપ ઇચ્છા કા પ્રમાણ કરના-એક દેશસે પરિગ્રહ કા ત્યાગ કરના, અથવા પરિગ્રાહ્યવસ્તુવિષયક વાચ્છા કા નામ ઇચ્છા હૈ, ઇસકા પરિમાણ ઇસ પ્રકાર કરના કિ મેં અમુક વસ્તુ ઇતની રખૂંગા, ઇતની કમાઁંગા, ઇસસે અધિક નહીં । યહ ઇચ્છાપરિમાણ નામકા અણુવ્રત હૈ (તિણિણ ગુણવ્વયાઈ) ગુણવ્રત ત્રીન હૈ-યે ગુણવ્રત અણુવ્રતોં કે

થવું એ જ 'અહિંસા અણુવ્રત' છે. (થૂલાઓ મુસાવાયાઓ વેરમણં) સ્થૂલ-મૃષા-વાદથી વિરક્ત થવું-સ્થૂલ અસત્ય વચનો કહેવાથી દૂર રહેવું તે 'સ્થૂલ-મૃષા-વાદ-વિરમણ અણુવ્રત' છે. (થૂલાઓ અદિણ્ણાદાણાઓ વેરમણં) સ્થૂલ અદત્તાદાનથી વિરમણ થવું એ 'અચૌર્ય અણુવ્રત' છે. (સદારસંતોસે) પોતાની સ્ત્રીમાં જ સંતોષ રાખવો-પરદારા-પરસ્ત્રી તેમજ વેશ્યા આદિનો પરિત્યાગ કરી દેવો તે 'સ્વદાર-સંતોષ અણુવ્રત' છે. (ઇચ્છાપરિમાણે) ધન તેમજ ધાન્ય આદિકની અમિલાષા રૂપ ઇચ્છાનું પ્રમાણ કરવું (હદ રાખવી)-દેશ થકી પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો. અથવા પરિગ્રહ કરવાની વસ્તુ બાબતની જે વાંછા તેનું નામ ઇચ્છા છે, તેનું પરિમાણ (માપ-મર્યાદા) આ પ્રકારે કરવું કે હું અમુક વસ્તુ આટલી રાખીશ, આટલી કમાઈશ, આથી વધારે નહિ. આ ઇચ્છાપરિમાણ નામનું અણુવ્રત છે. (તિણિણ ગુણવ્વયાઈ) ગુણવ્રત ત્રણ છે. આ ગુણવ્રત અણુવ્રતોનાં ઉપકારક

યાદં, તં જહા—અણત્થદંડવેરમણં ૬, દિસિવ્વયં ૭, ઉવભોગ-

ગુણવ્રતાનિ, ‘તં જહા’ તથા ‘અણત્થદંડવેરમણં’ અનર્થદંડવિરમણમ્—અર્થઃ=પ્રયોજનં ગૃહ-સ્થસ્ય ક્ષેત્ર-વાસ્તુ-ધન-શરીરપરિપાલનીયાદિવિષયં, તદર્થો દંડઃ=આરંભઃ પ્રાણ્યુપમર્દોઽર્થદંડઃ । દંડો નિગ્રહો યાતના વિનાશ इति पर्यायाः । દંડઃ=નિષ્પ્રયોજનં હિંસાદિકરણમિત્યર્થઃ; તસ્મા-દ્વિરમણં=નિવર્તનમ્ ૧, ‘દિસિવ્વયં’ દિગ્વ્રતમ્—દિશઃ પૂર્વદક્ષિણાદય ઊર્ધ્વમધ્યશ્ચેતિ દશવિધાઃ, તત્ર દિશાં સમ્બન્ધિ વ્રતં દિગ્વ્રતમ્—એતાવત્સુ પૂર્વાદિદિગ્વિભાગેષુ મયા ગમનાગમનં વિધેયં ન

ઉપકારક હૈં; (તં જહા) વે ત્રીન પ્રકાર યે હૈં—(અણત્થદંડવેરમણં દિસિવ્વયં ઉવભોગપરિ-ભોગપરિમાણં) અનર્થદંડવિરમણ વ્રત, દિગ્વ્રત, ઉપભોગ—પરિભોગ—પરિમાણવ્રત । ક્ષેત્ર, વાસ્તુ, ધન, ધાન્ય, એવં શરીર કે પરિપાલન આદિ કે નિમિત્ત જો આરંભ ક્રિયા જાતા હૈ, ઇસકા નામ અર્થ હૈ । ઇસ આરંભ મેં પ્રાણિવધ અવશ્યંભાવી હૈ । અતઃ ઇસમેં જો દંડ—પ્રાણિયોં કા વિનાશ હોતા હૈ ઇસસે પાપ કા બંધ જીવ કો હોતા હૈ । અતઃ યહ વધ અર્થદંડ હૈ । અર્થાત્ પ્રયોજન કો લેકર જો પ્રાણ્યુપમર્દનરૂપ દંડ ક્રિયા જાતા હૈ ઇસકા નામ અર્થદંડ હૈ । દંડ, નિગ્રહ, યાતના એવં વિનાશ યે સ્વ પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ । ઇસસે જો વિપરીત હૈ ઇસકા નામ અર્થદંડ હૈ । અર્થાત્ નિષ્પ્રયોજન હિંસાદિક પાપ કરના સો અનર્થદંડ હૈ । ઇસસે વિરક્ત હોના સો ‘અનર્થદંડવિરમણ’ હૈ । દશ દિશાઓં મેં આને—જાને કા પ્રમાણ કરના સો ‘દિગ્વ્રત’ હૈ । ચારદિશા ઓર વિદિશા તથા ઉર્ધ્વ એવં અધઃ ઇસ પ્રકાર યે ૧૦ દિશાઈ હૈ । મૈં અમુક દિશા કી ઓર ઇતની દૂર તક જાઁગા ઓર આઁગા, ઇસસે આગે બાહિર

છે; (તંજહા) તે ત્રણ પ્રકાર આ છે (અણત્થ-દંડ-વેરમણં દિસિવ્વયં ઉવભોગપરિભોગપરિ-માણં) અનર્થદંડ-વિરમણ વ્રત, દિગ્વ્રત, ઉપભોગપરિભોગપરિમાણ વ્રત. ક્ષેત્ર, વાસ્તુ, ધન, ધાન્ય, તેમજ શરીરના પરિપાલન આદિના નિમિત્તે જે આરંભ કરવામાં આવે છે તેનું નામ અર્થ છે. આ આરંભમાં પ્રાણિવધ અવ-શ્યંભાવી છે. આથી એમાં જે દંડ—પ્રાણિઓનો વિનાશ થાય છે તેનાથી પાપનો બંધ જીવોને થાય છે. તેથી આ વધ અર્થદંડ છે, અર્થાત્ પ્રયો-જનને લઈને જે પ્રાણિ-ઉપમર્દનરૂપ દંડ કરાય છે તેનું નામ અર્થદંડ છે. દંડ, નિગ્રહ, યાતના તેમજ વિનાશ એ બધા પર્યાયવાચી શબ્દો છે. તેનાથી જે વિપરીત (ઉલટા) છે તેનું નામ અનર્થદંડ છે. અર્થાત્ નિષ્પ્રયોજન હિંસા આદિ પાપ કરવાં તે અનર્થદંડ છે. તેનાથી વિરક્ત થવું તે અનર્થદંડ-વિરમણ છે. દશ દિશાઓમાં આવવા—જવાનું પ્રમાણ રાખવું તે દિગ્વ્રત છે. ચાર દિશા અને વિદિશા તથા ઉપર અને નીચે એ પ્રકારે આ દશ ૧૦ દિશાઓ છે. હું અમુક દિશા તરફ આટલે દૂર સુધી જઈશ કે આવીશ

પરિભોગપરિમાણં ૮ । ચત્તારિ સિક્ખાવયાઈં, તં જહા—સામાઈયં
૯, દેસાવયાસિયં ૧૦, પોસહોવવાસે ૧૧, અતિહિસંવિભાગે,

પરતસ્તદધિકે હત્યેવમ્ભૂતં દિગ્વ્રતમ્ ॥ ૭ ॥ ‘ઉપભોગ—પરિભોગ—પરિમાણં’ ઉપભોગ—
પરિભોગ—પરિમાણમ્—ઉપભોગઃ=સકૃદ્ભોગોઽશનપાનાનુલેપનાદીનામ્, પરિભોગસ્તુ પુનઃ પુનર્ભોગ
આસનશયનવસનાદીનામ્, તયોઃ પરિમાણમ્ ॥ ૮ ॥ ‘સામાઈયં’ સામાયિકમ્—સમાનાં=
જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાણામાયો=લાભઃ સમાયઃ—તત્ર ભવં સામાયિકમ્ ॥ ૯ ॥ ‘દેસાવયાસિયં’
દેશાઽવકાશિકમ્—દેશે=દિગ્વ્રતગૃહીતદિક્પરિમાણસ્ય વિભાગે અવકાશો=ગમનાદ્યવસ્થાનં

નહીં, ઇસ પ્રકાર ૧૦ દિશાઓં મેં આને—જાને કી મર્યાદા કરના સો ‘દિગ્વ્રત’ હૈ । એક
બાર જો ભોગને મેં આતા હૈ ઉસકા નામ ઉપભોગ હૈ; જૈસે—અશન, પાન એવં અનુલેપન
આદિ । જો બાર ૨ ભોગને મેં આતે હૈં એસે આસન, શયન, વસન આદિ કો પરિભોગ કહા
ગયા હૈ । ઇન દોનોં કા પ્રમાણ કરના સો ‘ઉપભોગ—પરિભોગ—પરિમાણ’ હૈ । (ચત્તારિ
સિક્ખાવયાઈં) શિક્ષાવ્રત ચાર હૈં, (તં જહા) વે યે હૈં—(સામાઈયં દેસાવયાસિયં
પોસહોવવાસે અતિહિસંવિભાગે) સામાયિક, દેશાવકાશિક, પૌષધોપવાસ એવં અતિથિ-
સંવિભાગ । દર્શન, જ્ઞાન એવં ચારિત્ર કા નામ સમ હૈ । ઇસ સમ કે આય (લાભ) કા નામ
સમાય હૈ । ઇસમેં જો સમતાપરિણામ હોતા હૈ ઉસકા નામ સામાયિક હૈ । ‘દિગ્વ્રત’ મેં
જો મર્યાદારૂપ સે આને—જાને કે લિયે જીવનપર્યન્ત દિશારૂપી ક્ષેત્ર રસ્ત લિયા થા, ઉસીકે
મીતર ૨ પ્રતિદિન સંકોચ કરના સો ‘દેશાવકાશિક’ હૈ; જૈસે—મેં આજ ઇસ દિશા કે

એનાથી આગળ—બહાર નહિ. આ પ્રકારે ૧૦ દિશાઓમાં આવવા—જવાની
મર્યાદા કરવી તે દિગ્વ્રત છે. એક વાર જે ભોગવવામાં આવે છે તેનું નામ
ઉપભોગ છે, જેમકે—અશન, પાન તેમજ અનુલેપન આદિ. જે વારંવાર ભોગ-
વવામાં આવે છે એવાં આસન, શયન, વસન આદિને પરિભોગ કહેવાય છે.
આ બન્નેનું પ્રમાણ રાખવું તે ‘ઉપભોગ—પરિભોગ—પરિમાણ’ છે. (ચત્તારિ
સિક્ખાવયાઈં) શિક્ષાવ્રત ચાર છે. (તં જહા) તે આ છે—(સામાઈયં દેસાવયાસિયં
પોસહોવવાસે અતિહિસંવિભાગે) સામાયિક ૧, દેશાવકાશિક ૨, પૌષધોપવાસ ૩,
તેમજ અતિથિસંવિભાગ ૪. દર્શન, જ્ઞાન તેમજ ચારિત્રનું નામ સમ છે.
આ સમના આય (લાભ)નું નામ સમાય છે. એમાં જે સમતા—પરિણામ થાય
છે તેનું નામ સામાયિક છે ૧. દિગ્વ્રતમાં જે મર્યાદારૂપી આવવા—જવાને
માટે જીવનપર્યન્ત દિશારૂપી ક્ષેત્ર રાખવું હતું તેમાંજ પ્રતિદિવસ ન્યૂનતા
કરવી તે દેશાવકાશિક છે. જેમકે હું આજ આ દિશામાં આ સ્થાન સુધી

અપચ્છિમા-મારણંતિયા-સંલેહના-ઝૂસના-રાહના ૧૨ । અય-

તેન નિર્વૃત્તં દેશાવકાશિકમ્-દિગ્વ્રતગૃહીતપરિમાણસ્ય પ્રતિદિનં સંક્ષેપકરણમ્ ॥ ૧૦ ॥
 ‘પોષધોપવાસે’ પોષધોપવાસઃ-પોષણં પોષઃ=પુષ્ટિરિત્યર્થસ્તં ધત્તે=ગૃહ્ણાતીતિ પોષધઃ, સ
 ચાસાવુપવાસશ્ચેતિ પોષધોપવાસઃ, એતત્તુ અસ્ય વ્યુત્પત્તિમાત્રમ્, પ્રવૃત્તિનિમિત્તં તુ-આહારાદિ-
 ચતુષ્ટયપરિત્યાગ એવેતિ બોધ્યમ્; અષ્ટમીચતુર્દશ્યમાવાસ્થાપૌર્ણમાસીષુ અનુષ્ઠેયો વ્રતવિશેષઃ ।
 તદુક્તમ્—

‘આહાર-તનુસત્કારા-ઽબ્રહ્મ-સાવચ્ચ-કર્મણામ્ ।

ત્યાગઃ પૂર્વચતુષ્ટય્યાં, તદ્વિદુઃ પોષધવ્રતમ્ ॥ ૧૧ ॥ ઇતિ ।

‘અતિથિસંવિભાગે’ અતિથિઃ-વિભાગઃ-અતિથિઃ=સાધુસ્તસ્મૈ સંવિભાગઃ=સ્વાત્મ-

કલ્યાણભાવનયા સમર્પણમ્ ‘અપચ્છિમા-મારણંતિયા-સંલેહના-ઝૂસના-રાહના’
 અપશ્ચિમ-મારણાન્તિક-સંલેહના — જૂષણા-ઽઽરાધના=અપશ્ચિમા-પશ્ચિમૈવાઽમદ્ગલપરિહારાર્થ-
 મપશ્ચિમેત્યુચ્યતે, મરણં=પ્રાણત્યાગલક્ષણમ્, તદેવાન્તો મરણાન્તઃ, તત્ર ભવા મારણાન્તિકી;
 સંલિહ્યતે=કૃશીક્રિયતેઽનયા શરીરકષાયાદિ-ઇતિ સંલેહના=તપોવિશેષલક્ષણા; એતત્પદત્રયસ્ય

ઇસ સ્થાન તક જાઝંગા, ઇસ ગલી તક જાઝંગા, આગે નહીં ! ઇત્યાદિ । ચારોં પ્રકાર કે
 આહાર કા પરિત્યાગ કરના ઇસકા નામ ‘પોષધોપવાસ’ હૈ । યહ વ્રત પ્રત્યેક મહિને
 કી પ્રત્યેક અષ્ટમી, ચતુર્દશી, અમાવસ્યા એવં પૂર્ણમાસી કે દિન કિયા જાતા હૈ । કહા મી
 હૈ-પર્વચતુષ્ટય મેં-ચારપર્વોં મેં આહારકા પરિત્યાગ, શારીરિક સંસ્કાર કા પરિત્યાગ, કુશીલ
 કા પરિત્યાગ આદિ સાવચ્ચ કર્મોંકા જો ત્યાગ હૈ સો ‘પોષધવ્રત’ હૈ । અતિથિ નામ સાધુ
 કા હૈ । સાધુ કે લિયે જો સંવિભાગ-અપની આત્મા કે કલ્યાણ કી ભાવના સે આહાર પાની
 આદિ સમર્પણ કરના-સો ‘અતિથિસંવિભાગ’ હૈ । (અપચ્છિમા-મારણંતિયા-સંલે-
 હના-ઝૂસના-રાહના) સંલેહના યદપિ પશ્ચિમ હૈ-અર્થાત્-અન્ત મેં ધારણ કી જાતી હૈ;

જઘશ, આ ગલી સુધી જઘશ. આગળ નહિ જાઉં ! ઇત્યાદિ. ચારેય પ્રકારના
 આહારનો પરિત્યાગ કરવો તેનું નામ પોષધોપવાસ છે. આ વ્રત પ્રત્યેક માસની
 પ્રત્યેક અષ્ટમી, ચતુર્દશી, અમાવસ્યા તેમજ પૂર્ણિમાને દિવસ કરાય છે ૩. કહ્યું
 પણ છે-પર્વચતુષ્ટયમાં-ચાર પર્વમાં આહારનો પરિત્યાગ, શારીરિક સંસ્કારનો
 પરિત્યાગ, કુશીલનો પરિત્યાગ આદિ સાવચ્ચ કર્મોનો જે ત્યાગ છે તે પોષધવ્રત
 છે. અતિથિ નામ સાધુનું છે. સાધુ માટે જે સંવિભાગ-પોતાના આત્માના
 કલ્યાણની ભાવનાથી આહાર પાણી આદિ સમર્પણ કરવું તે અતિથિસંવિ-
 ભાગ છે ૪. (અપચ્છિમા-મારણંતિયા-સંલેહના-ઝૂસના-રાહના) સંલેહના જે કે
 પશ્ચિમ હોય છે-અંતમાં ધારણ કરાય છે, તો પણ તેને અપશ્ચિમ કહેવાય

માડસો ! અગારસામાઙ્ગે ધમ્મે પણ્ણત્તે । એયસ્સ ધમ્મસ
સિક્ખાએ ઉવટ્ઠિએ સમણોવાસએ વા સમણોવાસિયા વા વિહર-
માણે આણાએ આરાહએ હવડ ॥ સૂ. ૫૭ ॥

કર્મધારયે—અપશ્ચિમમારણાન્તિકસંલેખના, તસ્યાઃ જૂષણા=સેવના—મરણકાલે સંલેખનાનામ્ના
તપસા શરીરસ્ય કષાયાદીનાઞ્ચ કૃશીકરણં, તસ્યા આરાધના=નિરવલ્લિન્નતયા સંપાદનમ્
॥ ૧૨ ॥ ‘અયમાડસો’ અયમાયુષ્મન્ ! ‘અગારસામાઙ્ગે ધમ્મે પણ્ણત્તે’ અગાર-
સામયિકો ધર્મઃ પ્રજ્ઞતઃ ‘એયસ્સ ધમ્મસ્સ સિક્ખાએ ઉવટ્ઠિએ સમણોવાસએ વા સમણો-

ફિર મી યહાં જો ઉસે અપશ્ચિમ કહા હૈ વહ અમંગલપરિહાર કે નિમિત્ત સે જાનના ચાહિયે ।
કયોં કિ “અન્તક્રિયાધિકરણં તપઃફલં સકલદર્શિનઃ સ્તુવતે” તપ કા ફલ સંલેખનાપૂર્વક
પ્રાણોં કા વિસર્જન કરના પ્રભુને બતલાયા હૈ, અતઃ યદિ યહ અન્તિમ સમય આચરિત નહીં
હોતી હૈ તો જીવનભર કી ગઈ વ્રતારાધના તપસ્યા આદિ એક પ્રકાર સે નિષ્ફલ હી સમજના
ચાહિયે । અતઃ ઇસ અપેક્ષા સે યહ અપશ્ચિમ—સર્વોત્કૃષ્ટ કહી ગઈ હૈ । યહ સંલેખના
(મારણાન્તિકી) મરણ કે સમય ધારણ કી જાતી હૈ । કાય ઓર કષાય આદિ જિસકે
દ્વારા અથવા જિસમેં કૃશ કિયે જાતે હૈં ઉસકા નામ સંલેખના હૈ । યહ સંલેખના મી એક
તપ—વિશેષ હૈ । ઇસે પ્રેમ સે ધારણ કરના ચાહિયે ઇસ અર્થ કો ઘોતિત કરને કે લિયે હી
“જૂષણા” યહ પદ દિયા ગયા હૈ । (અયમાડસો !) ઇસ પ્રકાર હે આયુષ્મન્ ! યહ
(અગારસામાઙ્ગે ધમ્મે પણ્ણત્તે) ગૃહસ્થ કા ધર્મ સિદ્ધાન્ત મેં કહા ગયા હૈ । (એયસ્સ
ધમ્મસ્સ સિક્ખાએ ઉવટ્ઠિએ સમણોવાસએ વા સમણોવાસિયા વા વિહરમાણે આણાએ

છે. તે અમંગલ પરિહારનું નિમિત્ત બાણુવું બઠાયે. કેમકે “અન્તક્રિયાધિકરણં
તપઃફલં સકલદર્શિનઃ સ્તુવતે” તપનું ફલ સંલેખના—પૂર્વક પ્રાણોનું વિસર્જન
કરવું. એમ પ્રભુએ બતાવ્યું છે. આથી જો આ અંતિમ સમયે આચરવામાં
નથી આવતી તો જીવનભર કરેલી વ્રત—આરાધના તપસ્યા આદિ એક પ્રકારે
નિષ્ફલ જ માનવી બેઠાયે. આમ આની અપેક્ષાએ આ અપશ્ચિમ—સર્વોત્કૃષ્ટ
કહેલી છે. આ સંલેખના (મારણાન્તિકી) મરણના સમયે ધારણ કરાય છે.
કાય અને કષાય આદિ જેના દ્વારા અથવા જેમાં કૃશ કરાય છે તેનું નામ
સંલેખના છે. આ સંલેખના પણ એક તપવિશેષ છે. તેને પ્રેમથી ધારણ
કરવી બેઠાયે. આ અર્થને ઘોતિત (પ્રકાશિત) કરવા માટે જ “જૂષણા” એ
પદ આપેલું છે. (અયમાડસો) આ પ્રકારે હે આયુષ્મન્ ! આ (અગારસામા-

તણ ણં સા મહતિમહાલિયા મણૂસપરિસા સમણસ્સ
ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિણ ધમ્મં સોચ્ચા ણિસમ્મ હટ્ટ-તુટ્ટ-

વાસિયા વા ' ણતસ્ય ધર્મસ્ય શિક્ષાયામ્ ઉપસ્થિતઃ શ્રમગોપાસકો વા શ્રમગોપાસિકા વા,
'વિહરમાણે' વિહરન્ 'આણાણ આરાહણ ભવઈ' આજ્ઞાયા આગ્રધકો ભવતિ । અગારધર્મસ્ય
વિસ્તરતો વ્યાખ્યા ઉપાસકદશાંગસૂત્રસ્યાગારધર્મસંજીવન્યાખ્યાયાં વ્યાખ્યાયાં પ્રથમાધ્યયને-
ઽસ્માભિઃ કૃતા ॥ સૂ૦ ૫૭ ॥

ટીકા—'તણ ણં' ઇત્યાદિ । 'તણ ણં' તતઃ સ્વલ્લ 'સા મહતિમહાલિયા'
સા મહતિમહતી=અતિવિશાલ—'મણૂપરિસા' મનુષ્યપરિષદ્ 'સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ અંતિણ' શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્યાઽન્તિકે=સમીપે 'ધમ્મં સોચ્ચા

આરાહણ હવઈ) ઇસ ધર્મ કી શિક્ષા મેં ઉપસ્થિત ચાહે શ્રમણ કા ઉપાસક—ગૃહસ્થ હો,
ચાહે શ્રમણ કી ઉપાસિકા—શ્રાવિકા હો, કોઈ મી ક્યોં ન હો, જો મી પ્રાણી ઇસ ધર્મ કી
છત્રચ્છાયા મેં અપને આપકો વિસર્જિત કર દેતા હૈ, અર્થાત્—ઇને વ્રતોં કી આરાધના કરતા
હૈ વહ તીર્થંકર પ્રભુ કી આજ્ઞા કા આરાધક માના ગયા હૈ । અગારધર્મ કી વિસ્તૃતરૂપ સે
વ્યાખ્યા ઉપાસકદશાંગ સૂત્ર કે ઉપર વિરચિત અગારધર્મસંજીવનીનામકી ટીકા મેં પ્રથમ
અધ્યયન મેં કી ગઈ હૈ । અતઃ વિશેષાર્થી વિષય કો વહાં સે વિસ્તારરૂપ મેં દેખ લેં ॥ સૂ૦ ૫૭ ॥

'તણ ણં સા મહતિમહાલિયા' ઇત્યાદિ ।

(તણ ણં) તદન્તર (સા મહતિમહાલિયા) વહ અતિવિશાલ (મણૂસપરિસા)
મનુષ્યોં કી સમા (સમણસ્સ) શ્રમણ (ભગવઓ) ભગવાન (મહાવીરસ્સ) મહાવીર કે

ઇણ ધમ્મે પળ્લત્તે) ગૃહસ્થના ધર્મ સિદ્ધાંતમાં કહેલા છે. (એયસ્સ ધમ્મસ્સ
સિક્ક્યાણ ઉવટ્ઠિણ સમણોવાસણ વા સમણોવાસિયા વા વિહરમાણે આણાણ આરા-
હણ હવઈ) આ ધર્મની શિક્ષામાં ઉપસ્થિત, ચાહે શ્રમણના ઉપાસક—ગૃહસ્થ
હોય, ચાહે શ્રમણની ઉપાસિકા—શ્રાવિકા હોય, જે કોઈ પણ પ્રાણી આ
ધર્મની છત્ર-છાયામાં પોતાની જાતનું વિસર્જન કરી દે છે—આ વ્રતોંની
આરાધના કરે છે, તે તીર્થંકર પ્રભુની આજ્ઞાના આરાધક મનાય છે. અગાર-
ધર્મની વિસ્તૃતરૂપથી વ્યાખ્યા ઉપાસકદશાંગસૂત્રના ઉપર બનાવેલી અગારધર્મ-
સંજીવની નામની ટીકામાં પ્રથમ અધ્યયનમાં કરવામાં આવેલી છે, માટે વિશેષ
જિજ્ઞાસુઓએ આ વિષયને ત્યાંથી વિસ્તારરૂપે જોઈ લેવો. (સૂ૦ ૫૭)

'તણ ણં સા મહતિમહાલિયા' ઇત્યાદિ.

(તણ ણં) ત્યાર પછી (સા મહિતમહાલિયા) તે અતિવિશાલ (મણૂસ-

जाव-हियया उट्टाए उट्टेइ, उट्टित्ता समणं भगवं महावीरं
तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ,
वंदित्ता णमंसित्ता अत्थेगइया मुंडे भवित्ता अगाराओ अण-

णिसम्म ' धर्मं श्रुत्वा=आकर्ण्य, निशम्य=हृदि धृत्वा, 'हट्ट-तुट्ट-जाव-हियया' हृष्ट-तुष्ट-
यावद्-हृदया 'उट्टाए उट्टेइ' उत्थया=उत्थानशक्त्या उत्तिष्ठति 'उट्टित्ता' उत्थाय,
'समणस्स भगवओ महावीरस्स' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य 'तिक्खुत्तो' त्रिकृत्वः,
'आयाहिणपयाहिणं करेइ' आदक्षिणप्रदक्षिणं करोति, 'करित्ता' कृत्वा, 'वंदइ
णमंसइ' वन्दते नमस्यति, 'वंदित्ता णमंसित्ता' वन्दित्वा नमस्यित्वा, तत्र-'अत्थे-
गइया' सन्त्येकके=केचित् 'मुंडे भवित्ता' मुण्डा भूत्वा 'अगाराओ' अगाराद्=गृहात्-
गृहं परित्यज्येत्यर्थः, 'अणगारियं' अनगारितां=साधुतां प्रव्रजिताः=प्राप्ताः, 'अत्थेगइया'

(अंतिए) समीप (धम्मं) धर्म का व्याख्यान (सोच्चा) सुनकर, एवं अच्छी तरह उसे
(णिसम्म) हृदयंगम कर (हट्ट-तुट्ट-जाव-हियया) बहुत ही अधिक हर्षित एवं संतुष्ट-
चित्त हुई, (उट्टाए उट्टेइ) पश्चात् अपने २ आसन से उठी, (उट्टित्ता समणं भगवं महा-
वीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ) उठ कर फिर उसने
श्रमण भगवान् महावीर को तीनवार आदक्षिणप्रदक्षिणपूर्वक वन्दन-नमस्कार किया, (वंदित्ता
णमंसित्ता अत्थेगइया मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया) वंदना-नमस्कार
कर के कितनेक मनुष्यों ने मुंडित होकर, अपने २ घर को छोड़कर उनके पास अनगार बने,
अर्थात् दीक्षा धारण की। (अत्थेगइया पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहि-

परिसा) मनुष्यों ने सब (समणस्स) श्रमण (भगवओ) भगवान (महावीरस्स)
महावीरना (अंतिए) समीप (धम्मं) श्रुतयारित्रइय धर्म की देशना (सोच्चा)
सांलणीने तेमज्ज सारी रीते तेने (णिसम्म) हृदयंगम करीने (हट्ट-तुट्ट-जाव-
हियया) बहुत हर्षित तेमज्ज संतोष पायी, (उट्टाए उट्टेइ) पछी पोतपोताना
आसनेथी उठी, (उट्टित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ,
करित्ता वंदइ णमंसइ) उठीने, पछी तेमज्जे श्रमण भगवान महावीरने त्रणुवार
आदक्षिण-प्रदक्षिण-पूर्वक वंदन नमस्कार किया, (वंदित्ता णमंसित्ता अत्थेगइया
मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया) वंदना-नमस्कार करीने डेटलाक
मनुष्यों ने मुंडित थडने पोतपोताना घर छोडीने तेमना पासे अनगार
थया, अर्थात् दीक्षा लीधी. (अत्थेगइया पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवाल-

गारियं पव्वइया, अत्थेगइया पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं
दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवण्णा ॥ सू० ५८ ॥

मूलम्—अवसेसा णं परिसा समणं भगवं महावीरं
वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—सुअक्खाए ते

सन्त्येकके ‘पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवण्णा’ पञ्चा-
णुव्रतिकं सप्तशिक्षाव्रतिकं द्वादशविधं गृहिधर्मं प्रतिपन्नाः ॥ सू० ५८ ॥

टीका—‘अवसेसा णं परिसा’ इत्यादि । ‘अवसेसा णं परिसा समणं
भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी’ अवशेषा=अवशिष्टा
खलु परिषत् श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्—
‘सुअक्खाए ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे’ स्वाख्यातं=सुष्ठु कथितं सामान्यतस्त्वया
भदन्त ! निर्ग्रन्थं प्रवचनम्, ‘एवं सुप्पणत्ते’ एवं सुप्रज्ञप्तम्—विशेषकथनात्, ‘सुभासिए’

धम्मं पडिवण्णा) कितनेकों ने पाँच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत—इस तरह १२ प्रकार का गृह-
स्थधर्म स्वीकार किया ॥ सू. ५८ ॥

‘अवसेसा णं परिसा’ इत्यादि ।

(अवसेसा णं परिसा) अवशिष्ट परिषत्ने (समणं भगवं महावीरं) श्रमण भग-
वान् महावीर को (वंदइ णमंसइ) वन्दना एवं नमस्कार किया, (वंदित्ता णमंसित्ता एवं
वयासी) वंदना नमस्कार करने के बाद फिर उन्होंने इस प्रकार कहा—(सुअक्खाए ते
भंते ! णिग्गंथे पावयणे) हे भदन्त ! आपने निर्ग्रन्थ प्रवचन बहुत अच्छा कहा, (एवं सुप्प-
णत्ते) और आपने इसका बहुत अच्छी तरह से प्ररूपण किया, (सुभासिए) आपने खूब

सविहं गिहिधम्मं पडिवण्णा) डेटलाडे पंच अणुव्रत सात शिक्षाव्रत येम १२
प्रकारने गृहस्थ धर्म स्वीकार कये। (सू. ५८)

‘अवसेसा णं परिसा’ इत्यादि.

(अवसेसा णं परिसा) आधीनी परिषदे (समणं भगवं महावीरं) श्रमण
भगवान् महावीरने (वंदइ णमंसइ) वंदना तेमज्ज नमस्कार कया, (वंदित्ता णमंसित्ता
एवं वयासी) वंदना नमस्कार कया पछी तेओओ आ प्रमाणे कहुं—(सुअक्खाए
ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे) हे भदन्त ! आपे निर्ग्रन्थ प्रवचन बहुत सार्थ कहुं,
(एवं सुप्पणत्ते) अने आपे तेनुं बहुत सारी रीते प्ररूपण कयुं. (सुभासिए)

भंते ! णिग्गंथे पावयणे, एवं सुप्पणत्ते, सुभासिए, सुविणीए,
सुभाविए । अणुत्तरे ते भंते ! निग्गंथे पावयणे । धम्मं णं आइ-
क्खमाणा तुब्भे उवसमं आइक्खह, उवसमं आइक्खमाणा वि-
वेगं आइक्खह, विवेगं आइक्खमाणा वेरमणं आइक्खह, वेर-

सुभाषितम्—भावयज्जनात्, 'सुविणीए' सुविनीतम्—शिष्येषु सुष्ठु विनियोजितत्वात्,
'सुभाविए' सुभावितम्=सुष्ठु भावितम्—तत्त्वकथनात्, 'अणुत्तरे' अनुत्तरं—नास्त्युत्तरं
यस्मात् तद्—अनुत्तरं—सर्वश्रेष्ठं, तव भदन्त निर्ग्रन्थं प्रवचनम् । 'धम्मं णं आइक्खमा-
णा तुब्भे उवसमं आइक्खह' धर्मं खल्वाचक्षाणा यूयमुपशमम्=क्रोधादिनिरोधम् आख्याथ=
कथयथ, 'उवसमं आइक्खमाणा विवेगं आइक्खह' उपशममाचक्षाणा विवेकमाख्याथ,
क्रोधादिनिरोधं कथयन्तो यूयं विवेकं=हेयोपादेयविवेचनं कथयथ, 'विवेगं आइक्खमाणा
वेरमणं आइक्खह'—विवेकमाचक्षाणा विरमणमाख्याथ, विरमणम्=प्राणातिपातादिनिवर्त-

सुन्दर रूप से पदार्थों के स्वरूप को प्रकट किया, (सुविणीए) आपने शिष्यों को खूब सम-
झाया, (सुभाविए) जीवादि सभी तत्त्वों को आपने अच्छी तरह से समझाया । (अणुत्तरे ते
भंते ! णिग्गंथे पावयणे) हे भदन्त ! आपका यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सर्वोत्कृष्ट है । हे भदन्त !
(धम्मं णं आइक्खमाणा तुब्भे उवसमं आइक्खह) धर्मका उपदेश करते समय आप उपशम
भाव-क्रोधादिनिरोध का उपदेश करते हैं, (उवसमं आइक्खमाणा विवेगं आइक्खह) क्रोधादिक
के निरोध का उपदेश करते समय हेयोपादेयरूप विवेक का उपदेश देते हैं, (विवेगं आइ-
क्खमाणा वेरमणं आइक्खह) विवेक का उपदेश करते समय प्राणातिपातादिक से विरक्त
होने का भी उपदेश करते हैं, (वेरमणं आइक्खमाणा अकरणं पावाणं कम्माणं आइ-

आपे भूय सुंदर इपथी पदार्थाना स्वइपने प्रकट कय्यां. (सुविणीए) आपे
शिष्येने भूय समझव्यां. (सुभाविए) जीवादि अधां तत्त्वोने सारी रीते समझव्यां.
(अणुत्तरे ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे) हे भदन्त ! आपनुं आ निर्ग्रन्थ प्रवचन
सर्वोत्कृष्ट छे. हे भदन्त ! (धम्मं णं आइक्खमाणा तुब्भे उवसमं आइक्खह)
धर्मने उपदेश करती वणते आपे उपशमभाव-क्रोधादिनिरोधने उपदेश
कय्यां छे. (उवसमं आइक्खमाणा विवेगं आइक्खह) क्रोधादिकना निरोधने उप-
देश करती वणते हेय-उपादेय इय विवेकने उपदेश कय्यां छे. (विवेगं आइ-
क्खमाणा वेरमणं आइक्खह) विवेकने उपदेश करती वणते प्राणातिपातादिकथी

મળં આઙ્કલમાણા અકરણં પાવાણં કમ્માણં આઙ્કલહ । ણત્થિ
 ણં અણ્ણે કેહ સમણે વા માહણે વા જે ઇરિસં ધમ્મમાઙ્કલિ-
 ત્તણ, કિમંગ ! એત્તો ઉત્તરતરં ?, એવં વદિત્તા જામેવ દિસં પાઠ-
 ષ્ઠભૂયા તામેવ દિસં પઢિગયા ॥ સૂ. ૫૯ ॥

નમ્; ‘વેરમળં આઙ્કલમાણા અકરણં પાવાણં કમ્માણં આઙ્કલહ’ વિરમણમાચ-
 ક્ષાણા અકરણં પાવાણં કર્મણામાલ્યાથ=પાપરૂપાણાં કર્મણામકરણમ્=અનાચરણં કથયથ,
 ‘ણત્થિ ણં અણ્ણે કેહ સમણે વા માહણે વા જે ઇરિસં ધમ્મમાઙ્કલિત્તણ’ નાસ્તિ
 સ્વલ્વન્યઃ કોઽપિ શ્રમણો વા બ્રાહ્મણો વા ય દ્વિદૃશં ધર્મમાલ્યાયાત્, ‘કિમંગ પુણ એત્તો
 ઉત્તરતરં’ કિમન્ન ! પુનરેતસ્માત્ ઉત્તરતરમ્—અસ્માદ્ધર્મોપદેશાદુત્કૃષ્ટં કથયિષ્યતીતિ કા
 સમ્ભાવના ! ન કાર્પાત્યર્થઃ, ‘એવં વદિત્તા જામેવ દિસં પાઠષ્ઠભૂયા તામેવ દિસં પઢિ-
 ગયા’ એવમ્ ઉદિત્વા યસ્યા એવ દિશઃ પ્રાદુર્ભૂતાસ્તામેવ દિશં પ્રતિગતાઃ ॥ સૂ. ૫૯ ॥

લહ) પ્રાણાતિપાતાદિક્કે વિરમણ કા ઉપદેશ દેતે હુણ આપ પાપરૂપ કર્મો કો નહીં કરને કા
 ઉપદેશ મી દેતે હૈં । અતઃ (ણત્થિ ણં અણ્ણે કેહ સમણે વા માહણે વા જે ઇરિસં ધમ્મમાઙ્ક-
 લિત્તણ) ઇસ સંસાર મેં હે નાથ ! એસા ઓર કોઈ દૂસરા શ્રમણ વા બ્રાહ્મણ ઉપદેશ નહીં
 હૈ જો ઇસ પ્રકાર કે ધર્મ કા ઉપદેશ દે સકે, (કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં) ફિર ઇસસે
 ઉત્કૃષ્ટ ધર્મ કા ઉપદેશ કૌન દે સકતા હૈ ? અર્થાત્ કોઈ નહીં ! (એવં વદિત્તા જામેવ
 દિસિં પાઠષ્ઠભૂયા તામેવ દિસં પઢિગયા) ઇસ પ્રકાર કહ કર વે સબ જિસ દિશા સે આયે
 થે ઊસી દિશા કો ઓર ચલે ગયે ॥ સૂ. ૫૯ ॥

વિરક્ત થવાનો ઉપદેશ કયો છે. (વેરમળં આઙ્કલમાણા અકરણં પાવાણં કમ્માણં
 આઙ્કલહ) પ્રાણાતિપાતાદિક્કના વિરમણનો ઉપદેશ દેતી વખતે આપે પાપરૂપ
 કર્મો ન કરવાનો પણ ઉપદેશ કયો છે. માટે (ણત્થિ ણં અણ્ણે કેહ સમણે વા
 માહણે વા જે ઇરિસં ધમ્મમાઙ્કલિત્તણ) આ સંસારમાં, હે નાથ ! એવો બીજો
 કોઈ શ્રમણ કે બ્રાહ્મણ ઉપદેશ નથી કે જે આ પ્રકારના ધર્મનો ઉપદેશ
 આપી શકે. (કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં) તો પછી આનાથી ઉત્કૃષ્ટ ધર્મનો ઉપ-
 દેશ કોણ આપી શકે ! અર્થાત્ કોઈ નહિ. (એવં વદિત્તા જામેવ દિસિં પાઠષ્ઠભૂયા
 તામેવ દિસં પઢિગયા) આ પ્રકારે કહીને તે બધા જે દિશાએથી આવ્યા હતા
 તે જ દિશા તરફ પાછા ચાલ્યા ગયા. (સૂ. ૫૯)

मूलम्—तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते सम-
णस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ट-
तुट्ट-जाव-हियए उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं
तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ, णमंसइ,

टीका—‘तए णं से’ इत्यादि। ‘तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते’
ततः खलु स कूणिको राजा भंभसारपुत्रः, ‘समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए
धम्मं सोच्चा णिसम्म’ श्रमणस्य भगवतो महावीरस्याऽन्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य, ‘हट्ट-
तुट्ट-जाव-हियए’ हट्ट-तुट्ट-यावद्भूयः ‘उट्ठाए उट्ठेइ’ उत्थयोत्तिष्ठति, ‘उट्ठित्ता’
उत्थाय श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ‘तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ’ त्रिकृत्व आद-
क्षिणप्रदक्षिणं करोति, ‘करित्ता’ कृत्वा ‘वंदइ णमंसइ’ वन्दते नमस्यति, ‘वंदित्ता

‘तए णं से कूणिए राया’ इत्यादि।

(तए णं) अनन्तर (से कूणिए राया भंभसारपुत्ते) भंभसार के पुत्र उन कूणिक
राजाने (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (अंतिए) पास में
(धम्मं सोच्चा) धर्मोपदेश सुनकर, (णिसम्म) एवं उसका अच्छी तरह पूर्वापररूप से विचार
कर, (हट्ट-तुट्ट-जाव-हियए) चित्त में अधिक से अधिक आनंद एवं संतोष प्राप्त किया,
(उट्ठाए उट्ठेइ) बाद में अपने स्थान से उठे और (उट्ठित्ता) उठकर (समणं भगवं महावीरं-
तिक्खुत्तो अयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ) उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर
की तीनवार आदक्षिणप्रदक्षिणपूर्वक वंदना एवं नमस्कार किया, (वंदित्ता णमंसित्ता एवं

“तए णं से कूणिए राया” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से कूणिए राया भंभसारपुत्ते) भंभसारना पुत्र ते
इच्छिउ राज्ञे (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमणु लगवान् महावीरनी
(अंतिए) पास (धम्मं सोच्चा) धर्मोपदेश सांलणीने, (णिसम्म) तेभण तेने
सारी रीते पूर्वापरइपथी विचार करीने, (हट्ट-तुट्ट-जाव-हियए) मनमां णहु
ण आनंद तेभण संतोष प्राप्त कर्यो, (उट्ठाए उट्ठेइ) त्थार पछी पोताना
स्थानेथी उठ्या, अने (उट्ठित्ता) उठीने (समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-
पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ) तेभणु श्रमणु लगवान् महावीरने त्रणु-
वार आदक्षिण-प्रदक्षिणपूर्वक वंदना तेभण नमस्कार कर्यो. (वंदित्ता णमंसित्ता

વંદિત્તા ણમંસિત્તા એવં વયાસી—સુઅક્ષ્વાણ તે મંતે ! ણિગ્ગંથે પાવયણે જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં ? એવં વદિત્તા જામેવ દિસં પાઉઠ્ઠમૂણ તામેવ દિસં પડિગણ ॥ સૂ. ૬૦ ॥

‘ણમંસિત્તા એવં વયાસી’ વંદિત્વા નમસ્થિત્વા એવમવાદીત—‘સુઅક્ષ્વાણ તે મંતે ! ણિગ્ગંથે પાવયણે જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં’ સ્વાહ્યાતં તવ મદન્ત ! નિર્ગ્રન્થં પ્રવચનમ્ યાવત્ કિમન્ન ! પુનરેતસ્માદુત્તરતરમ્ ! ‘એવં વદિત્તા જામેવ દિસં પાઉઠ્ઠમૂણ તામેવ દિસં પડિગણ’ એવમ્ ઉદિત્વા યસ્યા એવ દિશઃ પ્રાદુર્ભૂતઃ, તામેવં દિશં પ્રતિગતઃ ॥ સૂ. ૬૦ ॥

વયાસી) વંદના એવં નમસ્કાર કર ફિર ઝ્ઞેને પ્રમુ સે ઇસ પ્રકાર કહા—(સુઅક્ષ્વાણ તે મંતે ! ણિગ્ગંથે પાવયણે) હે મદન્ત ! આપને નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કા ઉપદેશ બહુત હી સુન્દર-પૂર્વાપરવિરોધરહિત—સર્વોત્કૃષ્ટ કિયા હૈ । (જાવ કિમંગ પુણ એત્તો ઉત્તરતરં) ઇસ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન મેં એસા કોઈ સા મી વિષય બાકી નહીં બચા જિસ પર આપને પ્રકાશ ન ડાલા હો—અચ્છી તરહ સં વિવેચન નહીં કિયા હો । આપને સબ કુછ એક હી સાથ બહુત હી અચ્છી તરહ મીઠે શબ્દોં મેં સમજા દિયા હૈ, હમને તો એસા ઉપદેશ આજતક નહીં સુના, કલ્યાણ એવં જીવનકે ઉપયોગી સબ વિષય આપને કહે હૈં ।—ઈત્યાદિ । એવં વદિત્તા જામેવ દિસં પાઉઠ્ઠમૂણ તામેવ દિસં પડિગણ) ઇસ પ્રકાર પ્રમુ કી સ્તુતિ રૂપ મેં કહ કર કૂણિક રાજા જિસ દિશા સે આયે થે ઊસી દિશા કી ઓર વહાં સે વાપિસ ચલે ગયે ॥ સૂ. ૬૦ ॥

એવં વયાસી) વંદના તેમજ નમસ્કાર કરીને પછી તેઓ પ્રભુને આ પ્રકારે કહ્યું—(સુઅક્ષ્વાણ તે મંતે ! ણિગ્ગંથે પાવયણે) હે ભદ્રન્ત ! આપણે આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનનો ઉપદેશ બહુજ સુંદર—પૂર્વાપરવિરોધરહિત—સર્વોત્કૃષ્ટ થયો છે. (જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં) આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનમાં એવો કોઈ પણ વિષય બાકી રહ્યો નથી જેના ઉપર આપે પ્રકાશ ન નાખ્યો હોય—સારી રીતથી વિવેચન ન કર્યું હોય. આપે તમામે—તમામ એક સાથેજ બહુજ સારી પેઠે મીઠા શબ્દોમાં સમજાવી દીધું છે. અમે તો એવો ઉપદેશ આજ સુધી સાંભળ્યો નથી. કલ્યાણ તેમજ જીવનમાં ઉપયોગી બધા વિષય આપે કહ્યા છે. ઇત્યાદિ. (એવં વદિત્તા જામેવ દિસં પાઉઠ્ઠમૂણ તામેવ દિસં પડિગણ) આ પ્રકારે પ્રભુની સ્તુતિરૂપમાં કહીને કૂણિક રાજા જે દિશાએથી આવ્યા હતા તે દિશા તરફ પાછા ચાલ્યા ગયા. (સૂ. ૬૦)

मूलम्—तए णं ताओ सुभदापमुहाओ देवीओ
समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म
हट्ठ—तुट्ठ—जाव—हिययाओ उट्ठेति, उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं
तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति, करित्ता वंदंति णमंसंति,

टीका—‘तए णं ताओ’ इत्यादि । ‘तए णं ताओ सुभदापमुहाओ देवी-
ओ’ ततः खलु ताः सुभद्राप्रमुखा देव्यः ‘समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए’
श्रमणस्य भगवतो महावीरस्याऽन्तिके ‘धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ—तुट्ठ—जाव—हिय-
याओ’ धर्मं श्रुत्वा निशम्य हट्ठ—तुट्ठ यावद्भूदया ‘उट्ठाए उट्ठेति’ उत्थयोत्तिष्ठन्ति, ‘उट्ठि-
त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स’ उत्थाय श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ‘तिक्खुत्तो
आयाहिणपयाहिणं करेति’ त्रिकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणं कुर्वन्ति, ‘करित्ता वंदंति णमंसंति’

‘तए णं ताओ सुभदापमुहाओ’ इत्यादि ।

(तए णं) इस के बाद (ताओ सुभदापमुहाओ देवीओ) वे सुभद्राप्रमुख देवियाँ
भी (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान महावीर के (अंतिए) समीप (धम्मं
सोच्चा) धर्म श्रवण कर, एवं (णिसम्म) उसे हृदयंगम कर, (हट्ठ—तुट्ठ—जाव—हिययाओ)
बहुत ही अधिक खुश एवं संतुष्ट होती हुई जहाँ वे खड़ी थीं वहाँ से (उट्ठाए उट्ठेति) चल
कर भगवान के समीप आयीं, (उट्ठित्ता) आकर उन्होंने (समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो
आयाहिण—पयाहिणं करेति करित्ता वंदंति णमंसंति) श्रमण भगवान् महावीर की तीन-

“तए णं ताओ सुभदापमुहाओ” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (ताओ सुभदापमुहाओ देवीओ) ते सुभद्रा—प्रमुख
देवीओ पणु (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमणु लगवान भडावीरना (अंतिए)
समीपे (धम्मं सोच्चा) धर्म—श्रवणु करीने, तेमज (णिसम्म) तेने हृदयंगम करीने
(हट्ठ—तुट्ठ—जाव—हिययाओ) णहुज पुश तेमज संतोष पावती जयां तेओ
उली डुती त्यांथी (उट्ठाए उट्ठेति) थालीने लगवाननी पासे आवी,
(उट्ठित्ता) आवीने तेओओ (समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं
करेति, करित्ता वंदंति णमंसंति) श्रमणु लगवान भडावीरने त्रणवार आदक्षिण-

વંદિત્તા ણમંસિત્તા એવં વયાસી-સુયક્ષ્ણાએ તે મંતે ! નિગંથે પાવયણે જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં ?, એવં વંદિત્તા જામેવ દિસં પાઉઝ્મૂયાઓ તામેવ દિસં પડિગયાઓ ॥ સૂ. ૬૧ ॥

॥ સમોસરણં નામ પુવ્વદ્ધં સમત્તં ॥

કૃત્વા વન્દન્તે નમસ્યન્તિ, ‘વંદિત્તા ણમંસિત્તા એવં વયાસી’ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વૈવમવાદિષુ:-
‘સુયક્ષ્ણાએ તે મંતે ! નિગંથે પાવયણે જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં ?’ સ્વા-
સ્થ્યાતં તવ મદન્ત ! નિર્ગ્રન્થં પ્રવચનમ્ યાવત્ કિમન્ન ! પુનરેતસ્માદુત્તરતરમ્ ? ‘એવં

વાર આદક્ષિણપ્રદક્ષિણપૂર્વક વંદના એવં નમસ્કાર ક્રિયા. (વંદિત્તા ણમંસિત્તા એવં વયાસી) વંદના નમસ્કાર કરને કે અનન્તર ફિર વે પ્રભુ સે ઇસ પ્રકાર બોલીં કિ (સુયક્ષ્ણાએ તે મંતે ! નિગંથે પાવયણે) આપને હે મદન્ત ! ઇસ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કા ઉપદેશ બહુત હી સુન્દર-પૂર્વાપરવિરોધરહિત-સર્વોત્કૃષ્ટરૂપ સે ક્રિયા હૈ. (જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં) હે પ્રભો ! આપને ઇસ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન મેં સવ હી વિષયોં કો અચ્છી તરહ સમજાયા હૈ. કોઈં મીં વિષય એસા નહીં રહા કિ જિસ પર આપની વાણી કા અવિરલ પ્રવાહ ન વહા હો. સવ કુછ આપનેં બહુત સરલ ભાષા મેં સમજા દિયા હૈ. હમનેં તો આજતક ઇતના માર્મિક ઉપદેશ નહીં મુના; ઇસસે ઉત્તમ ઉપદેશ કી વાત હી કહાં : (એવં વંદિત્તા જામેવ દિસં પાઉઝ્મૂયાઓ

પ્રદક્ષિણપૂર્વક વંદના તેમજ નમસ્કાર કર્યા, (વંદિત્તા ણમંસિત્તા એવં વયાસી) વંદના-નમસ્કાર કરી લીધા પછી તેઓએ પ્રભુને આ પ્રકારે કહ્યું કે (સુયક્ષ્ણાએ તે મંતે ! નિગંથે પાવયણે) આપે હે મદન્ત ! આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનનો ઉપદેશ બહુજ સારીરીતે, પૂર્વાપરવિરોધરહિત તેમજ સર્વોત્કૃષ્ટ કર્યો છે. (જાવ કિમંગ ! પુણ એત્તો ઉત્તરતરં) હે પ્રભો ! આપે આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનમાં બધાએ વિષયોને સારી રીતથી સમજાવ્યા છે. કોઈ પણ વિષય એવો નથી રહ્યો કે જેના ઉપર આપની વાણીનો અવિરલ પ્રવાહ વહ્યો ન હોય, બધુંય આપે બહુ સરલ ભાષામાં સમજાવી લીધું છે. અમે તો આજ સુધીમાં આટલો માર્મિક ઉપદેશ સાંભળ્યો નથી. આથી ઉત્તમ ઉપદેશની તો વાત જ ક્યાં ? (એવં વંદિત્તા

वदिता जामेव दिसं पाउब्भूयाओ तामेव दिसं पडिगयाओ ' एवम् उदित्वा यस्या
एव दिशः प्रादुर्भूताः, तामेव दिशं प्रतिगताः ॥ सू० ६१ ॥

इति श्री-विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-
प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराज-प्रदत्त-
जैनशास्त्राचार्य-पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैन-
धर्मदिवाकर-पूज्यश्रीघासीलालव्रतिविरचितायाम् औपपातिकसूत्रस्य पीयूषव-
र्षिण्याख्यायां व्याख्यायां समवरणनामकं पूर्वार्द्धं सम्पूर्णम् ।

तामेव दिसं पडिगयाओ) इस प्रकार भक्तिभाव से प्रभु की स्तुति करके वे सब रानियाँ
जहाँ से आई थीं वहीं वापिस चली गयीं ॥ सू० ६१ ॥

॥ इति औपपातिक सूत्रका समवसरणनामक पूर्वार्द्धं संपूर्ण ॥

जामेव दिसं पाउब्भूयाओ तामेव दिसं पडिगयाओ) आ प्रकारे लङ्कितलावथी
प्रभुनी स्तुतिइपे निवेदन करीने तेओ अधी राणीओ न्यांथी आवी हुती
त्यां पाछी आली गछ (सू. ६१.)

इति औपपातिक सूत्रानुं समवसरण नामक पूर्वार्द्धं संपूर्ण



અથ ઉત્તરાર્ધમ્—

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ જેદ્દે અંતેવાસીંદ્દમ્ભૂઈ ણામં અણગારે ગોયમગોત્તે ણં

ટીકા—‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि । (તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ) તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય (જેદ્દે અંતેવાસીંદ્દમ્ભૂઈ ણામં અણગારે) જ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસીન્દ્રમૂતિનામા અનગારઃ, જ્યેષ્ઠત્વમસ્ય સંયમપર્યાયેણ સર્વશ્રેષ્ઠત્વાત્, ‘અન્તેવાસી=શિષ્યઃ, ઇન્દ્રમૂતિરેતન્નામકઃ, અનગારઃ=સાધુઃ, સ કી-
દશઃ ? इत्याह—‘ગોયમગોત્તે ણં’ ગૌતમગોત્રઃ—ગૌતમં=ગૌતમાખ્યં ગોત્રં यस્ય સ તથા ‘ણં’ इति वाक्यालंकारे; ‘સત્તુસ્સેદ્દે’ સત્તોત્સેધઃ—સત્તહસ્તઃ ઉત્સેધઃ=ઉચ્છ્રાયો यस્ય સ તથા, ‘સમ-ચતુરસ-સંઠાણ-સંઠિણ’ સમ-ચતુરસ-સંસ્થાન-સંસ્થિતઃ—સમં ચ તત્ત્વચતુરસં ચેતિ

ઉત્તરાર્ધ કા અનુવાદ પ્રારંભ—

‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि ।

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) उस काल एवं उस समय में (समणस्स भग-
वओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् के महावीर के (जेट्ठे अंतेवासी) ^१बड़े शिष्य (गोयम-
गोत्ते णं) गौतमगोत्री . (सम-चउरंस-संठाण-संठिण) समचतुरस्रसंस्थानमंपन्न (सत्तु-

(૧) जिसमें अंग एवं उपांग की रचना सम-प्रमाणोपेत (जिसका जितना प्रमाण होना चाहिये उस माफिक) होती है, कमती बढ़ती नहीं होती; उसका नाम ‘समचतुरस्र-संस्थान’ है। इसमें एक सौ आठ अंगुल के उच्छ्राय वाले अंग और उपांग होते हैं। आकार बड़ा ही सौम्य होता है।

ઉત્તરાર્ધના અનુવાદનો પ્રારંભ—

‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ते काल तेभज ते समयभां (समणस्स भग-
वओ महावीरस्स) श्रमणु लगवान भडावीरना (जेट्ठे अंतेवासी) मोटा शिष्य
(गोयमगोत्ते णं) गौतमगोत्री (समचउरंस-संठाण-संठिण) ^१समचतुरस्र-

(૧) જેમાં અંગ તેમજ ઉપાંગની રચના સમ-પ્રમાણોપેત (જેવું જેટલું પ્રમાણ હોવું જોઈએ તે પ્રમાણે) હોય, વધુ ઘટુ ન હોય તેનું નામ ‘સમચતુરસ્ર-સંસ્થાન’ છે. આમાં એકસો આઠ આંગળ (તસુ) ના ઉચ્છ્રાયવાળાં અંગ તથા ઉપાંગ હોય છે. આકાર બહુજ સૌમ્ય હોય છે.

सत्तुस्सेहे सम-चउरंस-संठाण-संठिए वइर-रिसह-णाराय-
संघयणे कणग-पुलग-णिघस-पम्हगोरे उग्गतवे दित्ततवे

समचतुरस्रम्-मानोन्मानप्रमाणानामन्यूनानधिकत्वात् अङ्गोपाङ्गानां चाविकलत्वात् ऊर्ध्वं तिर्यक्
च तुल्यत्वात् समं, चतुरस्रं चाविकलावयवत्वात्, समं च तच्चतुरस्रं चेति समचतुरस्रं-स्वा-
ङ्गुलाष्टशतोच्छ्रयाङ्गोपाङ्गयुक्तं, युक्तिनिर्मितलेप्यकवद्वा, संस्थानम्=आकारविशेषः, तेन
संस्थितः=युक्तः, 'वइर-रिसह-णाराय-संघयणे' वज्र-र्षभ-नाराच-संहननः-वज्रं=
कीलिका, ऋषभः=पट्टः, नाराचः=मर्कटबन्धः-उभयपार्श्वयोरस्थिबन्धविशेषः, वज्रर्षभनाराचाः
संहनने=अस्त्रां बन्धविशेषे यस्य स वज्रर्षभनाराचसंहननः, 'कणग-पुलग-णिघस-पम्ह-
गोरे' कनक-पुलक-निकष-पद्मगौरः-कनकस्य=सुवर्णस्य पुलको=लवः-प्रफुल्लवर्तुल-
कणरूपः, तस्य निकषः=कषपट्टे कृष्टो रेखारूपो लक्षणया लक्ष्यते, पुलकस्य संशुद्धतया निकषे
कृष्टारेखाऽतीव चाकचिक्ययुक्ता भवति, अतएव तेनोपमानेनोपमितः पद्मगौरः-पद्मगर्भः=किञ्जल्कः,
तद्वद्गौरः=कमनीयकान्तिः, 'उग्गतवे' उग्रतपाः, 'दित्ततवे' दीप्ततपाः-दीप्तः=प्रदीप्तो

स्सेहे) सातहाथ की अवगाहनायुक्त (वइर-रिसह-णाराय-संघयणे) ^१वज्र-ऋषभ-
नाराचसंहननधारी (कणग-पुलग-णिघस-पम्हगोरे) विशुद्ध सुवर्ण के खण्ड की शाण पर
घसी हुई रेखा के समान चमकीली कान्ति वाले तथा कमल के केसर के समान गौरवर्ण
(इंद्रभूर्इ णामं अणगारे) ऐसे गौतम नाम से प्रसिद्ध इंद्रभूति नाम के अनगार गणधर थे ।
(उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे घोरतवे उराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभ-
चेरवासी उच्छ्रद्धसरीरे संखित्तविउलतेयलेस्से) इनकी तपस्या बड़ी उग्र थी ।

(१) इस संहनन में वज्र की सी कीलें, वज्र के से हाड एवं वज्र का सा पट्टबन्ध होता है ।

संस्थान-संपन्न (सत्तुस्सेहे) सात हाथनी अवगाहनायुक्त (वइर-रिसह-
णाराय-संघयणे) वज्र-^१ऋषभ नाराच-संहनन धारी (कणग-पुलग-णिघस-
पम्हगोरे) विशुद्ध सुवर्णना अंठनी शाण पर घसेली रेखा जेवी चमकीली
कांतिवाला तथा कमलना केसरना जेवा गौरवर्ण (इंद्रभूर्इ णामं अणगारे)
जेवा गौतमनामथी प्रसिद्ध इंद्रभूति नामना अनगार गणधर हुता.
(उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे घोरतवे उराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभ-
चेरवासी उच्छ्रद्धसरीरे संखित्त-विउल-तेयलेस्से) तेमनी तपस्या अहु उग्र
हुती. उर्मइपी वनने आणवावाणा होवाथी तेमनुं तप अग्निना जेपुं अहु

(१) आ संहननमां वज्रना जेवा भीला, वज्र जेवां हाड तेमज वज्र
जेवां पट्टअंध होय छे.

તત્તતવે ધોરતવે ઉરાલે ધોરે ધોરગુણે ધોરતવસ્સી ધોરવંભચેરવાસી

હુતાશન ઇવ કર્મવનદાહકત્વેન જાજ્વલ્યમાનં તપો યસ્ય સ તથા, 'તત્તતવે' તત્તતપાઃ—તપ્તં=સવિધિ સેવિતં તપો યેન સ તત્તતપાઃ, 'મહાતવે' મહાતપાઃ=બૃહત્તપોયુક્તઃ, 'ધોરતવે' ધોરતપાઃ=અતિકઠિનતપોયુક્તઃ, 'ઉરાલે' ઉદારઃ, 'ધોરે' ધોરઃ=ભીમઃ, અત્ર કશ્ચિચ્છઙ્કતે-ય ઉદારઃ સ ભીમઃ કથમ્ ? અસ્યોત્તરમાહ—અતિકષ્ટં તપઃ કુર્વન્ અલ્પશક્તિમતાં મયાનકો ભવતીતિ નિસર્ગઃ । કશ્ચિદ્ વક્તિ—ઉદારઃ=પ્રધાનઃ, ધોરસ્તુ પરીષદેન્દ્રિયકષાયાઽઽહ્યાનાં રિપૂણાં વિનાશો કઠોરઃ । કેચિદાત્મનિરપેક્ષતયા તપસ્સુ પ્રવર્તમાનત્વાદ ધોરઃ ઇત્યાહુઃ । 'ધોરગુણે'

કર્મરૂપી વન કો જલારે વાલા હોને સે રનકા તપ અગ્નિ કી તરહ અધિક જાજ્વલ્યમાન થા । તપસ્યા કી આરાધના યે વિધિપૂર્વક બડી સાવધાની સે કરતે થે । યે મહાતપસ્વી થે । દૂસરે મુનિજન જિન તપો કો કરના અતિ કઠિન માનતે થે, ઁન તપો કો યે તપતે થે) યે ઉદાર ઁવં ધોર અર્થાત્ મયાનક થે । પ્રશ્ન—ઉદારતા ઁર મયાનકતા યે દોનો ધર્મ પરસ્પરવિરોધી હૈ; ક્યો કિ જો ઉદાર હોતા હૈ વહ મયાનક નહીં હોતા ઁર જો મયાનક હોતા હૈ વહ ઉદાર નહીં હોતા, અતઃ રન દોનો વાતો કા યહાં નિર્વાહ કૈસે હો સકતા હૈ ? ઉત્તર—યે અતિ-કઠિન તપસ્યાઓ કો કરતે થે, અતઃ અલ્પશક્તિ વાલો કો યે દેસ્વને મેં બડે મયાનક—જૈસે માલ્દમ દેતે થે, અર્થાત્ અલ્પશક્તિ વાલો કો રનસે ડર લગતા થા, રસ અપેક્ષા રનહેં મયાનક કહા ગયા હૈ । કોઈ ર ઁસા મી કહતે હૈ કિ 'ઉદાર' શબ્દ કા અર્થ 'પ્રધાન' હૈ, ઁવં 'ધોર' શબ્દ કા અર્થ 'કઠોર' હૈ । યે કઠોર રસલિયે થે (કિ પરીષદ, રન્દ્રિય ઁવં કષાય રન

જાજ્વલ્યમાન હતુ'. તપસ્યાની આરાધના તેઓ વિધિપૂર્વક બહુ સાવધાનીથી કરતા હતા. તેઓ મહાતપસ્વી હતા. બીજા મુનિજનો જે તપોને કરવાનું બહુ કઠણ માનતા હતા તેવા તપોને આ કરતા હતા. તેઓ ઉદાર તેમજ ધોર અર્થાત્ ભયાનક હતા.

પ્રશ્ન—ઉદારતા અને ભયાનકતા એ બન્ને ધર્મ પરસ્પર વિરોધી છે; કેમકે જે ઉદાર હોય છે તે ભયાનક હોતા નથી અને જે ભયાનક હોય છે તે ઉદાર હોતા નથી, તો પછી આ બન્ને વાતોનો અહીં મેળ કેવી રીતે થઈ શકે ?

ઉત્તર—આ અતિ કઠણ તપસ્યાઓ કરતા હતા તેથી અલ્પશક્તિવાળાઓને તેઓ જોવામાં ભયાનક જેવા દેખાતા હતા, અર્થાત્ અલ્પશક્તિવાળાઓને તેમનો ડર લાગતો હતો. આ અપેક્ષાથી તેમને ભયાનક કહેલા છે. કોઈ કોઈ એમ પણ કહે છે કે 'ઉદાર' શબ્દનો અર્થ 'પ્રધાન' છે, તેમજ 'ધોર' શબ્દનો અર્થ 'કઠોર' છે. તેઓ કઠોર એ માટે હતા કે પરિષદ,

उच्छृङ्खलसरीरे संखित्त-विउल-तेयलेस्से समणस्स भगवओ

घोरगुणः—घोरा=अन्यैर्दुरुद्वहाः गुणाः=मूलगुणादयो यस्य स तथा । ‘घोरतपस्वी’ घोरतपस्वी=दुष्करतपश्चरणशीलः, पारणादौ नानाविधाभिग्रहधारकत्वात्, ‘घोर-ब्रह्मचर-वासी’ घोर-ब्रह्मचर्य-वासी-घोरं=दारुणमल्पसत्त्वैर्दुर्वहत्वाद् यद् ब्रह्मचर्यं तत्र वसति तच्छीलः । ‘उच्छृङ्खलसरीरे’ उच्छृङ्खलशरीरः—उच्छृङ्खलम्=उज्झितमिव संस्कारपरित्यागात् शरीरं येन स उच्छृङ्खलशरीरः—शरीरसंस्कारं प्रति निःस्पृहत्वात् त्यक्तशरीरसंस्कारः । ‘संखित्त-विउल-तेयलेस्से’ संक्षिप्त-विपुल-तेजोलेख्यः—संक्षिप्ता=निजशरीराऽन्तर्निहिता, विपुला=

रिपुओं के विनाश करने में निरत थे । कठोर बने बिना शत्रुओं का निवारण करना बड़ा ही मुश्किल होता है । कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि तपस्याओं के तपने में ये अपनी निज आत्मा की परवाह ही नहीं करते थे, अतः घोर थे । ‘घोरगुणवाले’ ये इसलिये थे कि इनके द्वारा धृत मूलगुण आदि अन्यजनों के लिये दुर्धारणीय थे, ‘घोरतपस्वी’ ये इसलिये थे कि जिस दिन पारणा का अवसर होता था उस दिन ये अनेक प्रकार के अभिग्रहों को धारण करते थे । ‘घोर-ब्रह्मचर्य-वासी’ ये इसलिये थे कि ये अल्पशक्ति वाले प्राणियों द्वारा दुर्वह होने से कठिनतर ऐसे ब्रह्मचर्य की आराधना में पूर्णनिष्ठ हो चुके थे । ‘उच्छृङ्खलशरीर’ इन्हें इसलिये कहा है कि इन्होंने अपने शरीर का संस्कार करना ही छोड़ दिया था । अतः उनका शरीर ऐसा ज्ञात होता था कि मानो इन्होंने इसका परित्याग जैसा कर रखा है । ‘संक्षिप्त-विपुल-तेजोलेख्य’ ये इसलिये थे कि यद्यपि विशिष्ट तपस्या की

ઈંદ્રિય તેમજ કષાય એ રિપુઓનો વિનાશ કરવામાં નિરત હતા. કઠોર બન્યા વિના શત્રુઓનું નિવારણ કરવું બહુજ મુશ્કેલ થાય છે. કોઈ કોઈ એમ પણ કહે છે કે તપસ્યા તપવામાં તેઓ ખુદ પોતાના આત્માની પરવાહ પણ કરતા નહોતા. આવી રીતે ઘોર હતા. ‘ઘોરગુણવાળા’ તેઓ એ કારણથી હતા કે તેમના દ્વારા ગ્રહણ કરાયેલા મૂલગુણ આદિ ગુણો બીજાઓ માટે દુર્ધારણીય (ગ્રહણ ન કરી શકાય એવા) હતા. ‘ઘોરતપસ્વી’ તેઓ એ માટે હતા કે જે દિવસે પારણાનો અવસર આવતો તે દિવસે તેઓ અनेક પ્રકારના અભિગ્રહોને ધારણ કરતા હતા. ‘ઘોર-બ્રહ્મચર્ય-વાસી’ તેઓ એ માટે હતા કે તેઓ અલ્પશક્તિવાળા પ્રાણિઓ દ્વારા દુર્વહ (સહન ન થાય એવા) હોવાથી બહુ કઠણ એવી બ્રહ્મચર્યની આરાધનામાં પૂર્ણનિષ્ઠ થઈ ચુક્યા હતા. ‘ઉચ્છ્રિંકલશરીર’ એમને એ માટે કહેતા કે તેમણે પોતાના શરીરના સંસ્કારો જ છોડી દીધા હતા. આથી તેમનું શરીર એવું જણાતું હતું કે બાણે તેઓએ તેનો પરિત્યાગ જ કરી નાખ્યો હોય. ‘સંક્ષિપ્ત-

મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે ઉડ્ઢજાણૂ અહોસિરે જ્ઞાણકોટ્ટોવગણ
સંજમેણં તવસા અપ્પાણં ભાવેમાણે વિહરઇ ॥ સૂ. ૧ ॥

અનેકયોજનપ્રમાણક્ષેત્રાઽન્તર્વર્તિવસ્તુદહનસમર્થત્વાદ્ વિશાલા તેજોલેશ્યા=વિશિષ્ટતપઃ—
સમ્ભૂતલબ્ધિવિશેષોદ્ભવા તેજોજ્વાલા यस્ય સ તથાભૂતઃ સન્ ‘સમણસ્સ ભગવઓ
મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે’ શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્યાઽદૂરસમીપે—અદૂરસમીપે=નાતિદૂરે
નાતિસમીપે—ઉચિતદેશે, ‘ઉડ્ઢજાણૂ’ ઉર્ધ્વજાનુઃ—ઊર્ધ્વે જાનુની યસ્ય સ ઊર્ધ્વજાનુઃ—
ઉત્કુટુકાઽસનવાન્, ‘અહોસિરે’ અધઃશિરાઃ=અધોમુખો, નોર્ધ્વં ન તિર્યગ્ વા ક્ષિતદૃષ્ટિઃ,
‘જ્ઞાણ—કોટ્ટો—વગણ’ ધ્યાન—કોષ્ઠો—પગતઃ—ધ્યાનં કોષ્ઠ ઇવ ધ્યાનકોષ્ઠસ્તમુપગતઃ,
યથા કોષ્ઠગતં ધાન્યં વિકીર્ણં ન ભવતિ તથૈવ ધ્યાનગતા ઇન્દ્રિયાન્તઃકરણવૃત્તયો બહિર્ન યાન્તીતિ

આરાધના સે इन्हें तेजोलेख्या प्राप्त हो चुकी थी, जिसकी इतनी सामर्थ्य होती है कि अनेक-
योजनप्रमाण क्षेत्र के भीतर रही हुई वस्तुओं को वह क्षणमात्र में दग्ध कर डालती है,
परन्तु ऐसी विपुल तेजोलेख्या को भी इन्होंने अपने शरीर के भीतर ही अन्तर्हित कर रखी
थी, उसका उपयोग नहीं करते थे, और ये (समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूर-
सामंते) श्रमण भगवान् महावीर के न अतिदूर और न अतिनिकट, किन्तु पास ही कुछ
दूरी पर (उड्ढजाणू) घुटनों को ऊँचाकर (अहोसिरे) शिर को नीचे कर के (ज्ञाण—कोट्टो-
वगण) ध्यानरूपी कोठे में विराजमान थे, अर्थात् ध्यान में बैठे थे । ध्यान को जो कोष्ठ की
उपमा दी है उसका हेतु यह है कि जिस प्रकार कोठे में रहा हुआ धान्यादिक इतस्ततः
(इधर—उधर) नहीं बिखरता है उसी प्रकार ध्यानगत इन्द्रिय एवं अन्तःकरण की वृत्तियां

विपुलतेजोलेख्य’ એ આથી હતા કે તેમને જો કે વિશિષ્ટ તપસ્યાની આરા-
ધનાથી તેજોલેશ્યા પ્રાપ્ત થઈ ચૂકી હતી, જેનું એટલું સામર્થ્ય હોય છે કે
અનેક યોજનના પ્રમાણુ ક્ષેત્રની અંદર રહેલી વસ્તુઓને તેઓ ક્ષણ માત્રમાં
ખાળીને ભસ્મ કરી નાખે છે, પરંતુ એવી વિપુલ તેજોલેશ્યાને પણ તેઓએ
પોતાનાં શરીરની અંદર જ અન્તર્હિત કરી રાખી હતી, તેનો ઉપયોગ કરતા
નહોતા. (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અદૂરસામંતે) તેઓ શ્રમણ ભગવાન મહા-
વીરની બહુ દૂર નહિ તેમ બહુ પાસે નહિ પણ તેમની પાસે જ થોડે જ દૂર
પર (ઉડ્ઢજાણૂ) ઘુંટણો ઉંચા કરીને (અહોસિરે) શિરને નમાવીને (જ્ઞાણ—કોટ્ટો-
વગણ) ધ્યાનરૂપી કોઠામાં વિરાજમાન હતા—અર્થાત્ ધ્યાનમાં બેઠા હતા. ધ્યા-
નને જે કોઠાની ઉપમા આપી છે તેનો હેતુ એ છે કે જેમ કોઠામાં ભરેલાં
ધાન્ય આદિક આમતેમ વિખરાઈ જતાં નથી તેમ ધ્યાનમાં ચોટેલી ઇન્દ્રિયો

मूलम्—तए णं से भगवं गोयमे जायसड्ढे जायसंसए

भावः, नियन्त्रितचित्तवृत्तिमानित्यर्थः, 'संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन्=वासयन् विहरति ॥ सू० १ ॥

टीका—'तए णं से' इत्यादि । 'तए णं से भगवं गोयमे' ततः खलु स भगवान् गौतमः 'जायसड्ढे' जातश्रद्धः—जाता=प्राग्भूता संप्रति सामान्येन प्रवृत्ता श्रद्धा=तत्त्वनिर्णयविषयिका वाञ्छा यस्य स जातश्रद्धः, वक्ष्यमाणतत्त्वपरिज्ञानेच्छावानित्यर्थः, 'जायसंसए' जातसंशयः—जातः=प्रवृत्तः संशयो यस्य स तथोक्तः, संशयोत्पत्तिप्रकार-स्त्वित्थम्—औपपातिकसूत्रं हि—अचाराङ्गस्योपाङ्गम्, तेनाचाराङ्गप्रथमश्रुतस्कन्धस्य प्रथमाध्ययने प्रथमोद्देशके य आत्मन उपपात उक्तः, तस्मिन् विषये वक्ष्यमाणसंशयोत्पत्त्या जात-

बाहर इधर—उधर नहीं हो सकती हैं । मानसिक प्रत्येक वृत्तियां इस अवस्था में नियन्त्रित हो जाती हैं । ऐसे ये गौतम नामसे प्रसिद्ध इन्द्रभूति गणधर (संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे-माणे विहरइ) संयम एवं तप से सदा अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते थे ॥ सू. १ ॥

'तए णं से' इत्यादि ।

(तए णं) परिषत् चले जाने के बाद (से भगवं गोयमे) वे भगवान् गौतम (जायसड्ढे) कि जिनके चित्तमें तत्त्व को निर्णय करने के लिये वाञ्छा हुई, कारण कि इन्हें (जायसंसए) इस प्रकार का संशय उद्भूत हुआ था कि यह औपपातिक सूत्र, आचारांग सूत्र का उपांग है, आचारांग सूत्र के प्रथम अध्ययन के प्रथम उद्देशक में जो आत्मा का उपपात कहा है सो किस प्रकार से कहा है ? (जायकोऊहल्ले) अतः भगवान् मेरे संशयित

तेमજ અંતઃકરણની વૃત્તિઓ બહાર આમતેમ જઈ શકતી નથી. માનસિક પ્રત્યેક વૃત્તિઓ આ અવસ્થામાં નિયંત્રિત થઈ જાય છે. એવા આ ગૌતમ નામે પ્રસિદ્ધ ઈંદ્રભૂતિ ગણધર (સંજમેણં તવસા અપ્પાણં ભાવેમાણે વિહરइ) સંયમ તેમ જ તપથી સદા પોતાની આત્માને ભાવિત કરતા કરતા વિચરતા હતા. (સૂ. ૧)

'તए णं से' इत्यादि.

(तए णं) परिषद् आदी गया पछी (से भगवं गोयमे) ते भगवान् गौतम (जायसड्ढे) के जेना चित्तमां तत्त्वना निर्णय करवानी वांछा थछ, कारण के तेमने (जायसंसए) आ प्रकारना संशय उत्पन्न थयो हुतो के आ औपपा-तिक सूत्र, आचारांग सूत्रनुं उपांग छे. आचारांग सूत्रना प्रथम अध्ययनना प्रथम उद्देशकमां जे आत्मानो उपपात वर्णुंयो छे ते केवा प्रकारथी कह्यो छे ? (जायकोऊहल्ले) हुवे भगवान् मारा आ संशयना प्रश्नना उत्तर न जाले

जायकोऊहल्ले, उत्पण्णसङ्गे उत्पण्णसंसए उपण्णकोऊहल्ले,
संजायसङ्गे संजायसंसए संजायकोऊहल्ले, समुत्पण्णसङ्गे समु-

संशय इति भावः । 'जायकोऊहल्ले' जातकुतूहलः—जातं कुतूहलम्=औत्सुक्यं यस्य स जातकुतूहलः, मत्कृतप्रश्नस्य कीदृशमुत्तरं भगवान् वक्ष्यति तच्छ्रोतुमौत्सुक्यवानित्यर्थः, 'उत्पण्णसङ्गे' उत्पन्नश्रद्धाः—उत्पन्ना=विशेषेण जाता श्रद्धा यस्य स तथा, यद्वा—श्रद्धायाः स्वरूपस्य तिरोहितत्वे जातश्रद्धाः, तस्याः स्वरूपस्य प्रादुर्भावे तु उत्पन्नश्रद्धाः—इति भावः । 'उत्पण्णसंसए' उत्पन्नसंशयः, 'उत्पण्णकोऊहल्ले' उत्पन्नकुतूहलः, 'संजायसङ्गे' संजातश्रद्धाः, प्रकर्षादिवाचकः संशब्दः, ततश्च संजाता=विशेषतरेण उत्पन्ना श्रद्धा यस्य स संजातश्रद्धाः, 'संजायसंसए' संजातसंशयः, 'संजायकोऊहल्ले' संजातकुतूहलः, 'समुत्पण्णसङ्गे' समुत्पन्नश्रद्धाः—समुत्पन्ना=सर्वथा संजाता श्रद्धा यस्य स तथा,

प्रश्न का उत्तर न मालूम किस तरह का देंगे ? इस बात को जानने को उत्कण्ठा उनके चित्त में बढ़ी; क्यों कि (उत्पण्णसङ्गे) भगवान् के ऊपर ही उनके चित्त में अतिशय श्रद्धा थी, अतः उनसे ही निर्णय करने के लिये श्रद्धा उत्पन्न हुई । (उत्पण्णसंसए उत्पण्णकोऊहल्ले संजायसङ्गे संजायसंसए संजायकोऊहल्ले समुत्पण्णसङ्गे समुत्पण्णसंसए समुत्पण्णकोऊहल्ले) उत्पन्नसंशय, उत्पन्नकुतूहल—इत्यादि पदों द्वारा वाच्यार्थ में, अवग्रह, ईहा, अवाय, और धारणा ज्ञान की तरह उत्तरोत्तररूप से विशेषता द्योतन करने के लिए सूत्रकार ने 'जात, उत्पन्न, संजात, समुत्पन्न' इन पदों का प्रयोग किया है । भगवान् गौतम को जो चित्त में तत्त्व के निर्णय करने की इच्छा जागृत हुई वह पहिले सामान्यरूप में ही हुई, कारण कि उन्हें संशय जो उत्पन्न हुआ था वह भी सामान्यरूप से ही हुआ था, इसी

डेवी रीते आपसे ? એ વાતને જાણવાની ઉત્કંઠા તેમના ચિત્તમાં વધી; કેમકે (ઉત્પણ્ણસંગે) ભગવાનના ઉપરજ તેમના ચિત્તમાં અતિશય શ્રદ્ધા હતી, હવે તેમની જ પાસેથી નિર્ણય કરવા માટે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ. (ઉત્પણ્ણસંસએ ઉત્પણ્ણકોઊહલ્લે સંજાયસંગે સંજાયસંસએ સંજાયકોઊહલ્લે સમુત્પણ્ણસંગે સમુત્પણ્ણસંસએ સમુત્પણ્ણકોઊહલ્લે) 'ઉત્પન્નસંશય ઉત્પન્નકૌતુહલ' ઇત્યાદિ પદો દ્વારા વાચ્યાર્થમાં, અવગ્રહ, ઈહા, અવાય અને ધારણા જ્ઞાનની પેઠે ઉત્તરોત્તરરૂપથી વિશેષતાનો પ્રકાશ લાવવામાટે સૂત્રકારે 'જાત ઉત્પન્ન સંજાત સમુત્પન્ન' એ પદોનો પ્રયોગ કર્યો છે. ભગવાન ગૌતમને જે ચિત્તમાં તત્ત્વનો નિર્ણય કરવાની ઇચ્છા જાગૃત થઈ તે પહેલાં સામાન્યરૂપમાં જ થઈ હતી. કારણ તેમને જે સંશય

प्पणसंसए समुप्पणकोऊहल्ले उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता जेणेव
समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं
भगवं महावीरं तिव्वुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, करित्ता

‘समुप्पणसंसए’ समुत्पन्नसंशयः, ‘समुप्पणकोऊहल्ले’ समुत्पन्नकुतूहलः, श्रद्धा-
दयः शब्दा व्याख्याता एव । अत्रैवं श्रद्धादौ कार्यकारणभावः । प्रश्नवाञ्छारूपा श्रद्धा जाता,
तस्याः कारणं-संशयः कुतूहलं चेति । ‘उट्ठाए उट्ठेइ’ उत्थया=उत्थानशक्त्या स्वास-
नात् उत्तिष्ठति, उत्थाय, ‘जेणेव समणे भगवं महावीरे’ यत्रैव श्रमणो भगवान् महा-
वीरो विराजत इति शेषः, ‘तेणेव उवागच्छइ’ तत्रैवोपागच्छति, ‘उवागच्छित्ता’ उपा-
गत्य, ‘समणं भगवं महावीरं’ श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य, ‘तिव्वुत्तो आयाहिण-
पयाहिणं करेइ’ त्रिकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणं करोति, ‘करित्ता’ कृत्वा ‘वंदइ णमंसइ’

तरह अपने प्रश्न के उत्तर को सुनने के लिये जो उनके चित्त में उत्कण्ठा जागृत हुई वह
भी सामान्यरूप से ही । फिर बाद में ‘उत्पन्नसङ्गहे’ आदि पदों द्वारा जो सूत्रकार ने श्रद्धा
को उत्पन्न आदिरूप में प्रकट किया है उससे श्रद्धा आदि में उत्तरोत्तर विशेषता जाननी
चाहिये । इस प्रकार के वे गौतमप्रभु (उट्ठाए उट्ठेइ) उत्थानशक्ति द्वारा अपने स्थान से उठे
और (उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) उठकर जहां प्रभु
श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहाँ पहुँचे, (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं
तिव्वुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ) पहुँचते ही उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर प्रभु
को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिण किया, (करित्ता वंदइ णमंसइ) फिर बाद में वंदना एवं

उत्पन्न थये। ते पणु सामान्यरूपथी न थये। हुतो. आवीन रीते पोताना
प्रश्नो उत्तर सांभणवाने भाटे तेमना चित्तमां ने उत्कंठा न्नाथत थध ते पणु
सामान्यरूपनीन हुती. पणु त्थार पछी (उत्पणसङ्गहे) आदि पदो द्वारा ने
सूत्रकारे श्रद्धाने उत्पन्न आदि रूपथी प्रकट करी छे तेथी श्रद्धा आदिमां
उत्तरोत्तर विशेषता न्नाथुवी न्नेधये. आ प्रकारना ते गौतम प्रभु (उट्ठाए उट्ठेइ)
‘उत्थानशक्ति द्वारा पोताना स्थानथी उठ्या, अने (उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं
महावीरे तेणेव उवागच्छइ) उठीने न्यां प्रभु श्रमणु लगवान भडावीर भिरा-
नमान हुता त्यां पडोन्था. (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिव्वुत्तो आया-
हिणपयाहिणं करेइ) पडोन्थतां न तेमणु श्रमणु लगवान भडावीर प्रभुने त्रणु

વંદ્વ ણમંસઙ્, વંદિત્તા ણમંસિત્તા નચ્ચાસણ્ણે નાઙ્દૂરે સુસ્સૂસમા-
ણે ણમંસમાણે અભિમુહે વિણણ્ણં પંજલિઉડે પજ્જુવાસમાણે
એવં વયાસી ॥ સૂ.૨ ॥

મૂલમ—જીવે ણં મંતે ! અસંજણ અવિરણ અ-પ્પહિ-

વન્દતે નમસ્યતિ, ‘વંદિત્તા ણમંસિત્તા’ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા, ‘નચ્ચાસણ્ણે નાઙ્દૂરે’ ના-
ત્યાસન્ને નાતિદૂરે ‘સુસ્સૂસમાણે ણમંસમાણે’ શુશ્રૂષમાણો નમસ્યન્ ‘અભિમુહે વિણણ્ણં
પંજલિઉડે પજ્જુવાસમાણે એવં વયાસી’ અભિમુખે વિનયેન પ્રાજ્ઞલિપુટઃ પર્યુપાસીન
એવમવાદીત્ । પ્રાગ્ વ્યાખ્યાતમ્ ॥ સૂ.૨ ॥

ટીકા—અથાત્મન ઉપપાતસ્ય કર્મબન્ધપૂર્વકત્વાત્ કર્મબન્ધવિષયે પૃચ્છતિ—‘જીવે
ણં મંતે !’ इत्यादि । ‘જીવે ણં મંતે !’ જીવઃ સ્વલુ મદન્ત ! = ભગવન્ ! ‘અસંજણ’
અસંયતઃ = અસંયમવાન્—સર્વસાવધાનુષ્ઠાનયુક્તઃ, ‘અવિરણ’ અવિરતઃ = પ્રાણાતિપાતાદિવિર-

નમસ્કાર ક્રિયા, (વંદિત્તા ણમંસિત્તા નચ્ચાસણ્ણે નાઙ્દૂરે સુસ્સૂસમાણે ણમંસમાણે અભિ-
મુહે વિણણ્ણં પંજલિઉડે પજ્જુવાસમાણે એવં વયાસી) વંદના નમસ્કાર કરને કે બાદ
ફિર વે પ્રભુ કે નિકટ સામને હી, ન ઝનસે અતિ દૂર ન ઝનકે અતિનિકટ હી, કિન્તુ ઝચિત
સ્થાન પર વિનયાવનત હોકર ઢોનોં હાથોંકો જોડકર વૈઠ ગયે, પશ્ચાત્ ઇસ પ્રકાર વોલે ॥સૂ.૨॥

‘જીવે ણં મંતે !’ इत्यादि ।

ગૌતમને ભગવાન્ સે કયા પૂછા ? ઇસ બાત કો ઇસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર પ્રદર્શિત
કરતે હૈં—(મંતે) હે મદન્ત ! જો (જીવે) જીવ (અસંજણ) અસંયમી હૈ—સર્વ સાવધ

વાર આદક્ષિણપ્રદક્ષિણ કથું, (કરિત્તા વંદ્વ ણમંસઙ્) પછી વંદના નમસ્કાર
કથાં. (વંદિત્તા ણમંસિત્તા નચ્ચાસણ્ણે નાઙ્દૂરે સુસ્સૂસમાણે ણમંસમાણે અભિમુહે
વિણણ્ણં પંજલિઉડે પજ્જુવાસમાણે એવં વયાસી) વંદના નમસ્કાર કથાં પછી તેઓ
પ્રભુની પાસે સામે જ, ન બહુ દૂર કે ન બહુ પાસે પણ—ઉચિત સ્થાને, વિન-
યથી નમ્ર બનીને બન્ને હાથ જોડીને બેસી ગયા. પછી આ પ્રકારે બોલ્યા (સૂ.૨)

‘જીવે ણં મંતે’ इत्यादि.

ગૌતમે ભગવાનને શું પૂછ્યું ?—એ વાતને આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકાર પ્રદ-
ર્શિત કરે છે.—(મંતે) હે ભદન્ત ! જે (જીવે) જીવ (અસંજણ) અસંયમી છે—

**हय-पच्चक्खाय-पावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंत-
बाले एगंतसुत्ते पावकम्मं अण्हाइ !, हंता ! अण्हाइ ॥ सू० ३ ॥**

तिरहितः, तथा-‘अ-प्पडिहय-पच्चक्खाय-पावकम्मे’ अ-प्रतिहत-प्रत्याख्यात-पापकर्मा-प्रति-
हतानि अतीतकालकृतानि निन्दाद्वारेण, प्रत्याख्यातानि भविष्यत्कालभावीनि निवृत्तिद्वारेण, पाप-
कर्माणि=प्राणातिपातादिरूपाणि येन स प्रतिहत-प्रत्याख्यात-पापकर्मा, भूतभाविपापनिषेधाभावेन
यस्तथा न भवति सः-अ-प्रतिहत-प्रत्याख्यात-पापकर्मा, अतएव-‘सकिरिए’ सक्रियः=कायि-
क्यादिक्रियायुक्तः, ‘असंवुडे’ असंवृतः=अनिरुद्धेन्द्रियः, ‘एगंतदंडे’ एकान्तदण्डः-एकान्तेनैव=
सर्वथैव दण्ड-यत्यात्मानं परं वा पापप्रवृत्तितो यः स एकान्तदण्डः, ‘एगंतबाले’ एकान्त-
बालः-सर्वथा मिथ्यादृष्टिः, अतएव-‘एगंतसुत्ते’ एकान्तसुप्तः=सर्वथा मिथ्यात्वनिद्रया प्रसुप्तः,
‘पावकम्मं’ पापकर्म=प्राणातिपातादिकर्म ‘अण्हाइ’ आस्रवति=बध्नाति किम्?, भगवानाह-
‘हंता अण्हाइ’ हन्ताऽऽस्रवति-हन्त इति स्वीकारे, आस्रवति=बध्नाति-इदमुत्तरवाक्यम् ॥सू० ३॥

अनुष्ठान करने में लगा हुआ है, (अविरए) प्राणातिपातादिक से जिसने विरति धारण
नहीं की है, तथा (अ-प्पडिहय-पच्चक्खाय-पावकम्मे) लगे हुए पापकर्मों का निंदा
द्वारा तथा भविष्यत् काल में बंधनेवाले पापकर्मों का प्रत्याख्यान-निवृत्ति-द्वारा जिसने परित्याग
नहीं किया है, (सकिरिए) कायिकी आदि क्रियाओं से जो युक्त है, इसीलिये (असंवुडे)
असंवृत-अनिरुद्धेन्द्रिय बना हुआ है, (एगंतदंडे) अपने को अथवा परको जो पापमय
प्रवृत्ति से दंडित-दुःखित करता रहता है, जो (एगंतबाले) एकान्तमिथ्यादृष्टि है और
(एगंतसुत्ते) सर्वथा मिथ्यात्व की निद्रा में गाढ़ सुप्त बना हुआ है, वह (पावकम्मं)
पापकर्म-प्राणातिपातादिक कर्मों का (अण्हाइ) बन्ध करता है क्या ? तब भगवान् ने
कहा, (हंता) हां गौतम ! (अण्हाइ) बन्ध करता है ।

सर्व साधन अनुष्ठान करवाभां तत्पर रहेंगे, (अविरए) प्राणातिपात आदि-
कथी जेणे विरति धारण करी नथी, तथा (अ-प्पडिहय-पच्चक्खाय-पावकम्मे)
लागी रहेंगे पापकर्मोंना निंदा द्वारा, तथा भविष्य कालभां अंधानारं पाप-
कर्मोंना प्रत्याख्यान-निवृत्ति-द्वारा, जेणे परित्याग करें नथी; (सकिरिए)
कायिकी आदि क्रियाओंथी जे युक्त छे, तेथी (असंवुडे) असंवृत-अनिरुद्ध
इन्द्रियोवाणो अन्यो छे, (एगंतदंडे) पोताने अथवा परने जे पापमय प्रवृत्तिथी
दंडित-दुःखित कर्या करे छे ओवो ते (एगंतबाले) अकान्त मिथ्यादृष्टि के जे
(एगंतसुत्ते) सर्वथा मिथ्यात्वनी धार निद्राभां सुतेवो छे, ते (पावकम्मं) पाप-
कर्म-प्राणातिपात आदिक कर्मोंना (अण्हाइ) अंध करे छे के शुं ? त्वारे
भगवाने कहुं-(हंता) हां गौतम ! (अण्हाइ) अंध करे छे.

મૂલમ્—જીવે ણં મંતે ! અસંજણ જાવ એગંતસુત્તે મો-
હણિજ્જં પાવકમ્મં અણ્હાઈ ? હંતા ! અણ્હાઈ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘જીવે ણં મંતે !’ इत्यादि । ‘जीवे णं मंते !’ जीवः खलु भदन्त !
‘असंजण जाव एगंतसुत्ते’ असंयतो यावदेकान्तसुतः ‘मोहणिज्जं पावकम्मं’ मोह-
नीयं पापकर्म ‘अण्हाइ’ आस्रवति=बध्नाति किम् ?—इति प्रश्ने, उत्तरमाह—‘हंता ! अण्हाइ’
हन्त ! आस्रवति=बध्नातीत्यर्थः ॥ सू. ४ ॥

ભાવાર્થ—જો જીવ અસંયમી હૈ, સાવધ અનુષ્ઠાનોં સે નિવૃત્ત નહીં હુઆ હૈ, પૂર્વકૃત પાપકર્મોં કો જિસને નિંદા નહીં કી, તથા ભવિષ્યત્—કાલ મેં મેં એસે પાપકર્મ નહીં કરૂંગા—ઇસ પ્રકાર અકરણભાવ સે જિસને ઉનકા પરિત્યાગ નહીં ક્રિયા, કાચિકી આદિ ક્રિયાઓં મેં જો મગ્ન હૈ, સ્વયં દુઃસ્થિત હોતા હૈ ઓર દૂસરોં કો મી અપની કુત્સિત પ્રવૃત્તિ સે દુઃસ્થિત કરતા રહતા હૈ એસા મિથ્યાત્વ કી ગાઢ અંધેરી મેં રહા હુઆ મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પાપકર્મોં કા બંધક હોતા હૈ યા નહીં ?—ઇસ પ્રકાર ગૌતમ કે પ્રશ્ન કો સુનકર પ્રભુ ને કહા—હાં ! હોતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

‘જીવે ણં મંતે !’ इत्यादि ।

(જીવે ણં મંતે ! અસંજણ જાવ એગંતસુત્તે) હે ભદન્ત ! વહી પૂર્વોક્ત અસંયમ આદિ અવસ્થા સે લેકર સર્વથા મિથ્યાત્વરૂપી ગાઢનિદ્રા મેં પ્રસુપ્ત અસંયમી મિથ્યાદષ્ટિ જીવ (મોહ-
ણિજ્જં) મોહનીય કર્મ કા (અણ્હાઈ) બંધ કરતા હૈ ક્યા ? (હંતા) હાં ગૌતમ ! (અણ્હાઈ) બન્ધ કરતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

ભાવાર્થ—જે જીવ અસંયમી છે, સાવધ અનુષ્ઠાનોથી નિવૃત્ત થતો નથી, પૂર્વે કરેલાં પાપ કર્મોની જેણે નિંદા કરી નથી, તથા ભવિષ્ય કાલમાં એવાં પાપ કર્મ હું નહિં કરું—એ પ્રકારના અકરણભાવથી જેણે તેનો પરિત્યાગ કર્યો નથી, કાચિકી આદિ ક્રિયાઓમાં જે મગ્ન છે, પોતે દુઃખિત થાય છે અને બીજાને પણ પોતાની કુત્સિત પ્રવૃત્તિથી દુઃખિત કરે છે એવા મિથ્યાત્વના ગાઢ અંધારામાં રહેલો એવો મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પાપકર્મોનો બંધક થાય છે યા નહિ ? આ પ્રકારના ગૌતમનો પ્રશ્નને સાંભળીને પ્રભુએ કહ્યું—હા ! થાય છે. (સૂ. ૩)

‘જીવે ણં મંતે’ इत्यादि.

(જીવે ણં મંતે ! અસંજણ જાવ એગંતસુત્તે) હે ભદન્ત ! ઉપર કહેલ અસંયમ આદિ અવસ્થાથી લઈને સર્વથા મિથ્યાત્વરૂપી ગાઢ નિદ્રામાં સુતેલા અસંયમી—મિથ્યાદષ્ટિ જીવ (મોહણિજ્જં) મોહનીય કર્મનો (અણ્હાઈ) બંધ કરે છે શું ? (હંતા) હા ગૌતમ ! (અણ્હાઈ) બંધ કરે છે. (સૂ. ૪)

મૂલમ્—જીવે ણં મંતે ! મોહણિજ્ઞં કર્મમં વેદેમાણે કિં મોહણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ ?, વેયણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ ? ગોયમા ! મોહણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ, વેયણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ, ણણત્થ ચરિમ-

ટીકા—‘જીવે ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ । ‘જીવે ણં મંતે !’ જીવઃ સ્વલુ મદન્ત ! ‘મોહણિજ્ઞં કર્મમં વેદેમાણે’ મોહનીય કર્મ વેદયન્=અનુભવન્ ‘કિં મોહણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ’ કિં મોહનીય કર્મ બધ્નાતિ ?, અથવા—‘વેયણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ ?’ વેદનીય કર્મ બધ્નાતિ કિમ્ ? ઇતિ પ્રશ્ને સત્યુત્તરમાહ—‘ગોયમા ! મોહણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ વેયણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ’ ગૌતમ ! મોહનીયમપિ કર્મ બધ્નાતિ વેદનીયમપિ કર્મ બધ્નાતિ, ‘ણણત્થ ચરિમમોહણિજ્ઞં કર્મમં વેદેમાણે’ કેવલં ચરમમોહનીય કર્મ વેદયન્, ‘ણણત્થ’ ઇતિ નવરં—કેવલમિત્યર્થઃ, સૂક્ષ્મસંપરાયદશમગુણસ્થાનકે લોભમોહનીયસૂક્ષ્મકિ-

‘જીવે ણં મંતે’ ઇત્યાદિ ।

(મંતે) હે મદંત ! (મોહણિજ્ઞં કર્મમં) મોહનીય કર્મ કા (વેદેમાણે) અનુભવ કરને વાલા (જીવે ણં) જીવ (કિં) ક્યા (મોહણિજ્ઞં કર્મમં) મોહનીય કર્મ કા (બંધઈ) બંધ કરતા હૈ ? (વેયણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ) અથવા વેદનીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ ? ઇન દો પ્રશ્નો કા ઉત્તર પ્રભુ ઇસ પ્રકાર દેતે હૈ—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (મોહણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ વેયણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ) મોહનીય કર્મ કા અનુભવ કરનેવાલા જીવ મોહનીય કર્મ કા મી બંધ કરતા હૈ ઓર વેદનીય કર્મ કા મી બંધ કરતા હૈ, (ણણત્થ ચરિમમોહણિજ્ઞં કર્મમં વેદેમાણે વેયણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ) કેવલ સૂક્ષ્મસંપરાય નામકે ૧૦ વૈં ગુણસ્થાન મૈં ચરમ—મોહનીય—સૂક્ષ્મલોભ—કો વેદન કરનેવાલા જીવ વેદનીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ, ક્યાં કિ અયોગી-

‘જીવે ણં મંતે’ ઇત્યાદિ.

(મંતે) હે મદંત ! (મોહણિજ્ઞં કર્મમં) મોહનીય કર્મને (વેદેમાણે) અનુભવ કરવાવાળા (જીવે) જીવ (કિં) શું (મોહણિજ્ઞં કર્મમં) મોહનીય કર્મને (બંધઈ) બંધ કરે છે ? (વેયણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ) અથવા વેદનીય કર્મને બંધ કરે છે ? આ બે પ્રશ્નોના ઉત્તર પ્રભુ આ પ્રકારે આપે છે—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (મોહણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ વેયણિજ્ઞં પિ કર્મમં બંધઈ) મોહનીય કર્મને અનુભવ કરનારા જીવ મોહનીય કર્મને પણ બંધ કરે છે અને વેદનીય કર્મને પણ બંધ કરે છે. (ણણત્થ ચરિમમોહણિજ્ઞં કર્મમં વેદેમાણે વેયણિજ્ઞં કર્મમં બંધઈ) કેવલ સૂક્ષ્મ સંપરાય નામના ૧૦ દશમા ગુણસ્થાનમાં ચરમ મોહનીય—સૂક્ષ્મલોભનું વેદન

મોહણિજ્ઞં કમ્મં વેદેમાણે વેયણિજ્ઞં કમ્મં બંધઈ, ણો મોહણિજ્ઞં કમ્મં બંધઈ ॥ સૂ.૫ ॥

ટિકારૂપં ચરમમોહનીયમિત્યુચ્યતે, તદ્વેદયન્ જીવઃ, ‘વેયણિજ્ઞં કમ્મં બંધઈ’ વેદનીયં કર્મ બધ્નાતિ, યતો હિ અયોગિન એવ વેદનીયકર્મણો બન્ધાભાવઃ, ‘ણો મોહણિજ્ઞં કમ્મં બંધઈ’ નો મોહનીયં કર્મ બધ્નાતિ—સૂક્ષ્મસંપરાયસ્ય મોહનીયાયુષ્કવર્જાનાં ષણ્ણામેવ પ્રકૃતીનાં બન્ધકત્વાદિતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

નામક ચૌદહવેં ગુણસ્થાન મેં હી વેદનીય કર્મ કે બન્ધ કા અભાવ હૈ; (ણો મોહણિજ્ઞં કમ્મં બંધઈ) ઇસલિયે સૂક્ષ્મસંપરાય વાલા જીવ મોહનીય એવં આયુકર્મ કો છોડકર શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિ છ પ્રકૃતિયોં કા બન્ધક હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પ્રશ્ન ઇસ પ્રકાર હૈ કિ મોહનીય કર્મ કા વેદન કરને વાલા જીવ મોહનીય કર્મ કા બંધ કરતા હૈ કિ વેદનીય કર્મ કા બન્ધ કરતા હૈ ? ઉત્તર—વેદનીય કર્મ કા મી બંધ કરતા હૈ ઓર મોહનીય કર્મ કા મી બંધ કરતા હૈ, પરન્તુ અન્તિમ મોહનીય—સૂક્ષ્મલોભ કા ક્ષય કરતે સમય (બારહવેં ગુણસ્થાન મેં) વેદનીય કર્મ કા તો બંધ કરતા હૈ પરન્તુ મોહનીય કર્મ કા બંધ નહીં કરતા । કારણ કિ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય ૧૦ વેં ગુણસ્થાન મેં હી હો જાતા હૈ, આગે સિર્ફ ૧૧ વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ સો યહ મી કેવલ તેરહવેં ગુણસ્થાન તક હી જાનના ચાહિયે; ક્યોં કિ ૧૪ વેં ગુણસ્થાન મેં વેદનીય કર્મ કે બંધ કા અભાવ હૈ ॥ મૂ.૫ ॥

કરનારા જીવ વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે. કેમકે અયોગી નામના ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં જ વેદનીય કર્મનો બંધનો અભાવ છે. (ણો મોહણિજ્ઞં કમ્મં બંધઈ) આ માટે સૂક્ષ્મસંપરાયવાળા જીવ મોહનીય તેમજ આયુકર્મને છોડીને બાકીની જ્ઞાનાવરણીય આદિ છ પ્રકૃતિઓના બંધક થાય છે.

ભાવાર્થ—પ્રશ્ન એવા પ્રકારનો છે કે મોહનીયકર્મનું વેદન કરવાવાળા જીવ મોહનીય કર્મનો બંધ કરે છે કે વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે ?

ઉત્તર—વેદનીય કર્મનો બંધ કરે છે અને મોહનીય કર્મનો પણ બંધ કરે છે. પરંતુ અંતિમ મોહનીય સૂક્ષ્મલોભનો ક્ષય કરતી વખતે (બારમા ગુણસ્થાનમાં) વેદનીય કર્મનો તો બંધ કરે જ છે, પરંતુ મોહનીય કર્મનો બંધ કરતા નથી, કારણ કે મોહનીય કર્મનો ક્ષય ૧૦ માં ગુણસ્થાનમાં જ થઈ જાય છે. આગળ માત્ર ૧ વેદનીય કર્મનો જ બંધ થાય છે, અને તે પણ કેવળ તેરમાં ગુણસ્થાન સુધી જ જાણવો જોઈએ, કેમકે ૧૪ માં ગુણસ્થાનમાં વેદનીય કર્મનો બંધનો અભાવ છે. (સૂ. ૫)

मूलम्—जीवे णं भंते ! असंजए जाव एगंतसुत्ते
उस्सण्ण-तस-पाण-घाई कालं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ ?,
हंता ! उववज्जइ ॥ सू० ६ ॥

मूलम्—जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अ-प्पडिहय-प-

टीका—अथोपपातं पृच्छति—‘जीवे णं भंते !’ इत्यादि । ‘जीवे णं भंते !’
जीवः खलु हे भदन्त ! ‘असंजए जाव एगंतसुत्ते’ असंयतो यावदेकान्तसुप्तः—प्राग्-
व्याख्यातः, ‘उस्सण्ण-तस-पाण-घाई’ प्रायस्त्रस-प्राण-घाती—‘उस्सण्ण’ इतिप्रायः=
बाहुल्येन त्रसप्राणान्=त्रसप्राणिनो हन्ति तच्छीलः, ‘कालमासे’ मरणसमये, ‘कालं किच्चा’
कालं कृत्वा—मरणं विधाय, ‘णेरइएसु उववज्जइ’ नैरयिकेषूपपद्यते किम् ? इति प्रश्ने,
उत्तरमाह भगवान्—‘हंता ! उववज्जइ’ हन्त ! उत्पद्यते=नारकेषु जायते ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘जीवे णं भंते’ इत्यादि । ‘जीवे णं भंते !’ जीवः खलु हे
‘जीवे णं भंते !’ इत्यादि !

गौतम उपपात के विषय में पूछते हैं—(जीवे णं भंते ! असंजए जाव एगंत-
सुत्ते उस्सण्ण-तसपाण-घाई) हे भदन्त ! वही पूर्वोक्त असंयम आदि अवस्था से लेकर
सर्वथा मिथ्यात्वरूपी गाढनिद्रा में प्रसुप्त मिथ्यादृष्टि जीव जो बहुलता से त्रसजीवों की हिंसा
करने में लवलीन रहा करता है वह (कालमासे) मृत्यु के समय में (कालं किच्चा) मर कर
(णेरइएसु) नारकियों में (उववज्जइ) उत्पन्न होता है क्या ? उत्तर—(हंता) हां गौतम !
(उववज्जइ) उत्पन्न होता है ॥ सू. ६ ॥

‘जीवे णं भंते’ इत्यादि.

गौतम उपपातना विषयमां पूछे छे—(जीवेणं भंते ! असंजए जाव एगंत-
सुत्ते उस्सण्ण-तस-पाण-घाई) हे भदन्त ! उपर उडेल असंयम आदि अव-
स्थाथी लधने सर्वथा मिथ्यात्व रूपी गाढनिद्रामां सुतेवे। मिथ्यादृष्टि जव ने
धण्णेर। त्रस जवे। नी हिंसा करवामां भन्थे। रडे छे, ते (कालमासे) मृत्यु-
समये (कालं किच्चा) मरीने (णेरइएसु) नारकीओमां (उववज्जइ) उत्पन्न थाय
छे शुं ? उत्तर—(हंता) हां गौतम ! (उववज्जइ) उत्पन्न थाय छे. (सू. ६)

ચ્ચક્ષાય-પાવકમ્મે ઇઓ ચુએ પેચ્ચ દેવે સિયા ?, ગોયમા !
અત્થેગઇયા દેવે સિયા, અત્થેગઇયા ણો દેવે સિયા ॥ સૂ. ૭ ॥

મૂલમ્—સે કેણટ્ટેણં મંતે ! એવં વુચ્ચઇ—અત્થેગઇયા

મદન્ત ! ‘અસંજએ અવિરએ અ-પ્પહિહય-પચ્ચક્ષાય-પાવકમ્મે’ અન્યતઃ અવિરતઃ
અ-પ્રતિહત-પ્રત્યાહ્યાત-પાપકર્મા-વ્યાહ્યાતપૂર્વઃ, ‘ઇઓ ચુએ’ ઇતઃ=મર્ત્યલોકાત્, ચ્યુતઃ=
મૃતઃ, ‘પેચ્ચ દેવે સિયા’ પ્રેત્ય દેવઃ સ્યાત્-પ્રેત્ય=જન્માન્તરે દેવઃ=દેવગતિસમાપન્નઃ
સ્યાત્ કિમ્ ? ઇતિ પ્રશ્ને ભગવાનુત્તરં કથયતિ—‘ગોયમા ! અત્થેગઇયા દેવે સિયા’ ગૌતમ ?
અસ્ત્યેકકો દેવઃ સ્યાત્-કશ્ચિદેવઃ સ્યાત્, ‘અત્થેગઇયા ણો દેવે સિયા’ અસ્ત્યેકકો
નો દેવઃ સ્યાત્-કશ્ચિદેવગતિસમાપન્નો ન ભવેત્ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—‘સે કેણટ્ટેણં મંતે !’ ઇત્યાદિ । ‘સે કેણટ્ટેણં મંતે !’ એવં વુચ્ચઇ—
અત્થેગઇયા દેવે સિયા અત્થેગઇયા ણો દેવે સિયા ?’ તત્કેનાર્થેન મદન્ત ! એવમુચ્યતે ઽસ્ત્યે-

‘જીવે ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

(મંતે) હે મદન્ત ! (અસંજએ અવિરએ અ-પ્પહિહય-પચ્ચક્ષાય-પાવકમ્મે જીવે)
જો જીવ અમંયમી હૈ, અવિરતિસંપન્ન હૈ, પાપકર્મોં કા જિસને નિંદાદ્વારા એવં વિનિવૃત્તિદ્વારા
પ્રત્યાહ્યાન નહીં કિયા હૈ એસા વહ જીવ, (ઇઓ ચુએ) ઇસ મર્ત્યલોક સે મર કર (પેચ્ચ)
પરલોક મેં—જન્માન્તર મેં (દેવે સિયા) ક્યા દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ ? ઉત્તર—
(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અત્થેગઇયા દેવે સિયા અત્થેગઇયા ણો દેવે સિયા) કિત-
નેક જીવ દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર કિતનેક જીવ દેવલોક મેં ઉત્પન્ન નહીં ભી
હોતે હૈં ॥ સૂ. ૭ ॥

‘જીવે ણં મંતે’ ઇત્યાદિ.

(મંતે) હે મદન્ત ! (અસંજએ અવિરએ અ-પ્પહિહય-પચ્ચક્ષાય-પાવકમ્મે જીવે)
જે જીવ અમંયમી છે, અવિરતિસંપન્ન છે, પાપકર્મોંનું જેણે નિંદા દ્વારા
તેમજ વિનિવૃત્તિ દ્વારા પ્રત્યાહ્યાન કર્યું નથી એવા તે જીવ (ઇઓ ચુએ) આ
મર્ત્યલોકમાંથી મરીને (પેચ્ચ) પરલોકમાં—જન્માન્તરમાં (દેવે સિયા) શું દેવ-
લોકમાં ઉત્પન્ન થઈ શકે છે ? (ગોયમા) ઉત્તર—હે ગૌતમ ! (અત્થેગઇયા દેવે
સિયા અત્થેગઇયા ણો દેવે સિયા) કેટલાક જીવ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે
અને કેટલાક જીવ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન નથી પણ થતા. (સૂ. ૭)

देवे सिया, अत्थेगइया णो देवे सिया ? गोयमा ! जे इमे जीवा गा-
मा-गर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमु-
ह-पट्टणा-सम-संवाह सण्णिवेसेसु अकामतण्हाए अकाम-

कको देवः स्यात्, अस्त्येकको न देवः स्यात् :- एवं यदुच्यते यदेको देवो भवति एको न भवतीति किंनिमित्तकोऽयं भेदः ? इति प्रश्नः, भगवानुत्तरमाह-‘गोयमा ! जे इमे जीवा गामा-गर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणा-सम-संवाह-सण्णिवेसेसु’ गौतम ! य इमे जीवा ग्रामा-SSकर-नगर-निगम-राजधानी-खेट-कर्व-ट-मडम्ब-दोणमुख-पट्टनाSSश्रम-संवाध-सन्निवेशेषु-प्राग्व्याख्यातरूपेषु ‘अकामतण्हाए’ अकामतृष्ण्या-अकामानां=निर्जराद्यनभिलाषिणां सतां तृष्णा=तृट्-अकामतृष्णा तथा, ‘अ-

‘से केणट्टेणं भंते !’ इत्यादि ।

प्रश्न-(भंते !) हे भदंत ! (से केणट्टेणं एवं वुच्चइ अत्थेगइया देवे सिया अत्थे-
गइया देवे णो सिया) आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कितनेक जीव देवलोक में
उत्पन्न हो सकते हैं और कितनेक नहीं हो सकते हैं, ? उत्तर—(गोयमा) गौतम ! सुनो;
(जे इमे जीवा गामा-गर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-
पट्टणा-सम-संवाह-सण्णिवेसेसु अकामतण्हाए अकामलुहाए अकामबंभचरेवासेणं
अकाम-अण्हाणग-सीया-यव-दंस-मसग-सेय-जल्ल-मल्ल-पंक-परितावेणं
अप्पतरो वा भुज्जतरो कालं अप्पाणं परिकिलेसंति, परिकिलेसित्ता
वा कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु वाणमंतरेसु देवलोएसु देवत्ताए
उववत्तारो भवंति) जो जीव प्रकोट सहित ग्राम में, सुवर्णादिक की खानों में, कर-

‘से केणट्टेणं भंते !’ इत्यादि !

प्रश्न—(भंते) हे भदंत ! (से केणट्टेणं एवं वुच्चइ अत्थेगइया देवे सिया
अत्थेगइया देवे णो सिया) आप ऐसे शुं कारण्थी कहे छे। के केटलाक एव
देवलोकां उत्पन्न थइ शके छे अने केटलाक नथी थइ शकता ? उत्तर—(गोयमा)
गौतम ! सांभणे ! (जे इमे जीवा गामा-गर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-
मडंब-दोणमुह-पट्टणा-सम-संवाह-सण्णिवेसेसु अकामतण्हाए अकामलुहाए अकाम-
बंभचरेवासेणं अकाम-अण्हाणग-सीया-यव-दंस-मसग-सेय-जल्ल-मल्ल-पंक-परिता-
वेणं अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं अप्पाणं परिकिलेसंति, परिकिलेसित्ता
कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु वाणमंतरेसु देवलोएसु
देवत्ताए उववत्तारो भवंति) जे एव केट आधेला गाममां, सुवर्ण-
आण्णमां, कर वगरना नगरमां, व्यापारीआनी वस्तीवाजा निगममां, राज-

હુહાણ અકામ-વંભચેર-વાસેણં અકામ-અળ્હાણગ-સીયા-યવ-
દંસ-મસગ-સેય-જલ્હ-મલ્હ-પંક - પરિતાવેણં અપ્પતરો વા

કામહુહાણ ' અકામશુધયા-અકામાનાં=નિર્જરાઘનભિલાષિણાં સતાં શુધા-અકામશુધા તયા,
' અકામ-વંભચેર-વાસેણં ' અકામ-બ્રહ્મચર્ય-વાસેન-અકામાનાં=નિર્જરાઘનપેક્ષાણાં-બ્રહ્મ-
ચર્યે વાસઃ તેન, ' અકામ-અળ્હાણગ-સીયા-યવ-દંસ-મસગ-સેય-જલ્હ-મલ્હ-પંક-
પરિતાવેણં ' અકામા-ઽસ્નાનક-શીતા-ઽઽતપ-દંશ-મશક-સ્વેદ-જલ્હ-મલ્હ-પંક-પરિતા-
પેન-અકામાનાં=નિર્જરાઘનપેક્ષમાણાનાં યાનિ સ્નાનાઽભાવાદીનિ પઙ્કાન્તાનિ તેષાં પરિતાપેન=
સન્તાપેન, ' અપ્પતરો વા યુજ્જતરો વા કાલં અપ્પાણં પરિકિલેસંતિ ' અલ્પતરં વા

રહિત નગર મેં, વ્યાપારિયોં કી બસ્તીવાલે નિગમ મેં, રાજા કી રાજધાની મેં, ધૂલ કે કોટ સે યુક્ત
સ્થાને મેં, કુત્સિત જન કી બસ્તીવાલે કર્બટ મેં, નજદીક ૨ ગ્રામવાલે મડંબ મેં, જલ ઓર સ્થલ
ઇન દોનોં પ્રકાર કે માર્ગ વાલે દ્રોણમુખ (બંદર) મેં, સર્વવસ્તુ જહાં મિલતી હોં એસે પાટણ મેં,
તાપસોં કે આશ્રમોં મેં, પર્વત કે નજદીક વાલે સંવાધ મેં, એવં ગોપાલોં કી પ્રધાન બસ્તીવાલે
સન્નિવેશ મેં, અકામનિર્જરાસે-મનવિના પરવશ હો કર સ્નાને પીને કી વસ્તુ ન મિલ સકને
કે કારણ શુધા-તૃષ્ણા સહન કરને સે, અકામબ્રહ્મચર્ય સે-ઇચ્છા હોને પર મી સ્ત્રી આદિ કી
અપ્રાપ્તિ સે બ્રહ્મચર્ય પાલન કરને સે, અકામસ્નાન સે-ઇચ્છા હોને પર મી પાની ન મિલ સકને
કે કારણ સ્નાન નહીં કરને સે, વસ્ત્રાદિક ન મિલ સકને કે કારણ શીત-આતપ જન્ય દુઃખ
સહને સે, દંશમશક કે દ્વારા કાટે જાને કા કષ્ટ સહન કરને સે, સ્વેદ, જલ્હ, મલ્હ એવં
પંક આદિ કો શરીર સે દૂર નહીં કરને સે, અર્થાત્ ઇન કે દ્વારા ઉત્પન્ન પરિતાપ કે સહન કરને

યુક્ત રાજધાનીમાં, ધૂળના ડોટવાળા ગામડામાં, કુત્સિત જનોના નિવાસરૂપ
કર્બટમાં, પાસે પાસે ગામવાળા મડંબમાં, જલ અને સ્થલ એ બન્ને પ્રકારના
માર્ગવાળાં દ્રોણમુખ (બંદર)માં, સર્વ વસ્તુ જ્યાં મળતી હોય એવા
પાટણમાં, તપસ્વીઓના આશ્રમોમાં, પર્વતની પાસેના સંવાધમાં, તેમજ
ગોવાળની મુખ્ય વસ્તીવાળા સન્નિવેશમાં, અકામનિર્જરાથી-મનવિના પરવશ
થઈને-ખાવાપીવાની વસ્તુ મળી ન શકવાથી ભૂખતરસ સહન કરીને, અકામ-
બ્રહ્મચર્યથી-ઇચ્છા હોવા છતાં સ્ત્રી આદિની અપ્રાપ્તિથી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરીને,
અકામસ્નાનથી-ઇચ્છા હોવા છતાં પાણી ન મળી શકવાના કારણે સ્નાન નહિ
કરીને, વસ્ત્રાદિક ન મળી શકવાના કારણે ઠંડી-ગરમીથી થતાં દુઃખ સહન
કરીને, દંશમશકથી કરડાઈ જવાનું કષ્ટ સહન કરીને, સ્વેદ, જલ્હ, મલ્હ
તેમજ પંક આદિને શરીરથી દૂર નહિ કરીને એટલે, આથી ઉત્પન્ન થતા

ભુજ્જતરો વા કાલં અપ્પાણં પરિકિલેસંતિ, પરિકિલેસિત્તા
કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અળ્લયરેસુ વાળમંતરેસુ દેવલોએસુ
દેવત્તાએ ઉવવત્તારો ભવંતિ, તહિં તેસિં ગઈ, તહિં તેસિં
ઠિઈ, તેહિં તેસિં ઉવવાએ પળ્લન્તે । તેસિં ણં મંતે ! દેવાણં
કેવડયં કાલં ઠિઈ પળ્લન્તા ?, ગોયમા ! દસવાસસહસ્સાઈ ઠિઈ

ભૂયસ્તરં વા કાલમાત્માનં પરિકલેશયન્તિ—‘અપ્પતરો ભુજ્જતરો’ ઇત્યુભયત્ર દ્વિતીયાર્થે પ્રથમા,
‘પરિકિલેસિત્તા’ પરિક્લેશ્ય ‘કાલમાસે’ કાલમાસે=કાલાવસરે ‘કાલં કિચ્ચા’ કાલં કૃત્વા
‘અળ્લયરેસુ વાળમંતરેસુ દેવલોએસુ દેવત્તાએ ઉવવત્તારો ભવંતિ’ અન્યતમેષુ વ્યન્તરેષુ દેવ-
લોકેષુ દેવત્વેનોપપત્તારો ભવન્તિ—અન્યતમેષુ=બહુનાં મધ્યે એકતરેષુ દેવલોકેષુ ઉપપાતં પ્રાપ્નુવન્તિ,
‘તહિં તેસિં ગઈ તહિં તેસિં ઠિઈ તહિં તેસિં ઉવવાએ પળ્લન્તે’ તત્ર=દેવલોકે તેષાં ગતિઃ,
તત્ર તેષાં સ્થિતિઃ, તત્ર તેષામુપપાતઃ પ્રજ્ઞાઃ । ‘તેસિં ણં મંતે! દેવાણં કેવડયં કાલં ઠિઈ
પળ્લન્તા’ તેષાં સ્વલુ ભદન્ત ! દેવાનાં કિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞાઃ, ‘ગોયમા ! દસવાસસ-
હસ્સાઈ ઠિઈ પળ્લન્તા’ હે ગૌતમ ! દશવર્ષસહસ્રાણિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞા—વર્ષાણાં દશસહસ્રાણિ

સે; ચાહે યે સ્વ કષ્ટ જીવ અલ્પકાલ તક સહે યા બહુતકાલ તક સહે, પરન્તુ ઇન કષ્ટોં સે
જો અપની આત્મા કો ક્લેશિત કરતે હૈં વે મરણકાલ પ્રાપ્ત હોને પર મર કર કિસી એક વ્યન્તર-
દેવોં કે દેવલોક મેં દેવરૂપ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં, (તહિં તેસિં ગઈ તહિં તેસિં ઠિઈ તહિં તેસિં
ઉવવાએ પળ્લન્તે) ઇસલિયે વહીં પર ઉનકી ગતિ, વહીં પર ઉનકી સ્થિતિ ઓર વહીં પર
ઉનકા ઉપપાત હોતા હૈ । (તેસિં ણં મંતે ! દેવાણં કેવડયં કાલં ઠિઈ પળ્લન્તા) હે ભદંત !
વહાં પર ઉન દેવોં કી કિતને કાલ તક કી સ્થિતિ હોતી હૈ ? (ગોયમા ! દસવાસ-
સહસ્સાઈ ઠિઈ પળ્લન્તા) ગૌતમ ! સુનો, વહાં પર ઉનકી સ્થિતિ દસહજાર વર્ષ કી હોતી

પરિતાપને સહન કરીને—ચાહે તે બધાં કષ્ટ જીવ થોડો વખત સહન કરે
અથવા લાંબા કાળ સુધી સહન કરે પરંતુ આ કષ્ટોથી જે પોતાના આત્માને
ક્લેશિત કરે છે તે મરણકાલ પ્રાપ્ત થતાં મરીને કોઈ એક વ્યન્તર દેવોના
દેવલોકમાં દેવરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, (તહિં તેસિં ગઈ તહિં તેસિં ઠિઈ તહિં તેસિં
ઉવવાએ પળ્લન્તે) આથી ત્યાં તેમની ગતિ, ત્યાં તેમની સ્થિતિ, અને ત્યાંજ
તેમનો ઉપપાત થાય છે. (તેસિં ણં મંતે ! દેવાણં કેવડયં કાલં ઠિઈ પળ્લન્તા ?)
હે ભદંત ! ત્યાં તે દેવોની કેટલો કાળ સ્થિતિ હોય છે ? (ગોયમા ! દસવાસ-

પણત્તા ! અત્થિ ણં મંતે ! તેસિં દેવાણં ઇડ્ઢીઈ વા જુઈઈ વા જસેઈ વા વલેઈ વા વીરિણ્ણ વા પુરિસક્કાર-પરક્કમેઈ વા ?, હંતા ! અત્થિ ! તે ણં મંતે ? દેવા પરલોગસ્સ આરાહગા ?, ણો ઇણદ્દે સમદ્દે ॥ સૂ. ૮ ॥

યાવત્ તત્ર તેષાં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞાતા । ‘અત્થિ ણં મંતે ! તેસિં દેવાણાં ઇડ્ઢીઈ વા જુઈ-ઈ વા જસેઈ વા વલેઈ વા વીરિણ્ણ વા પુરિસક્કારપરક્કમેઈ વા ?’ અસ્તિ સ્વલ્પ હે મદન્ત ! તેષાં દેવાનામૃદ્ધિરિતિ વા, દ્યુતિગિતિ વા, યશ્ચ ઇતિ વા, વલમિતિ વા, વીર્યમિતિ વા, પુરુષ-કારપરાક્રમ ઇતિ વા, ?, તેષાં દેવાનામૃદ્ધચાદયો વિદ્યન્તે નન્વેતિ પ્રશ્નઃ, ઉત્તરમાહ—‘હંતા ! અત્થિ’ હન્ત ! અસ્તિ—તેષામૃદ્ધચાદયો વર્તન્તે ઇતિ ભાવઃ । પુનઃ—પૃચ્છતિ—‘તે ણં મંતે ! દેવા પરલોગસ્સ આરાહગા ?’ તે સ્વલ્પ હે મદન્ત ! દેવાઃ પરલોકસ્યાઽઽરાધકાઃ=પરલોકસા-ધકાઃ સન્તિ કિમ્ ?, ઉત્તરમાહ—‘ણો ઇણદ્દે સમદ્દે’ નાઽયમર્થઃ સમર્થઃ=સંગતઃ—ઇત્યુત્તરમ્, અયમભિપ્રાયઃ—યે હિ જીવાઃ સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનપૂર્વકાનુષ્ઠાનેન દેવા ભવન્તિ, ત એવ નિયમતયાઽઽન્તર્યેગ પારમ્પર્યેગ વા નિર્વાગાકૂલં ભવાન્તરં પ્રાપ્નુવન્તિ તદન્યે તુ ભાગ્યાઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

હૈ । (અત્થિ ણં મંતે ! તેસિં દેવાણં ઇડ્ઢીઈ વા જુઈઈ વા જસેઈ વા વલેઈ વા વીરિણ્ણ વા પુરિસક્કારપરક્કમેઈ વા) પ્રભો ! વહાં ઉન દેવોં મં પરિવાર આદિ ઋદ્ધિયોં, શારીરિક કાંતિ, યશ, વલ, વીર્ય ઓર પુરુષકાર-પરાક્રમ યે સબ વાતે હેં યા નહીં ?, (હંતા ! અત્થિ) ઉત્તર—હાં હેં । (તે ણં મંતે ! દેવા પરલોગસ્સ આરાહગા) હે મદન્ત ! વે દેવ પરલોક કે આરાધક હોતે હેં ક્યા ? ઉત્તર—(ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) યહ અર્થ સમર્થિત નહીં હેં, ક્યોંકિ જો જીવ સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન એવં સમ્યક્ચારિત્ર-પૂર્વક અનુષ્ઠાન

સહસ્સાઈ ઠિઈ પણત્તા) ગૌતમ ! સાંભળો, ત્યાં તેમની સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે. (અત્થિ ણં મંતે ! તેસિં દેવાણં ઇડ્ઢીઈ વા જુઈઈ વા જસેઈ વા વલે-ઈ વા વીરિણ્ણ વા પુરિસક્કારપરક્કમેઈ વા) પ્રભો ! ત્યાં તે દેવોમાં પરિવાર આદિ ઋદ્ધિઓ, શારીરિક કાંતિ, યશ, વલ, વીર્ય અને પુરુષકાર-પરાક્રમ આ બધું હોય કે નહિ ? (હંતા અત્થિ) હા છે. (તે ણં મંતે ! દેવા પરલોગસ્સ આરાહગા) હે ભદ્રંત ! તે દેવો પરલોકના આરાધક હોય છે કે ? (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) આ અર્થ સમર્થિત નથી; કેમકે જે એવ સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન

મૂલમ—સે જે ઇમે ગામા-ગર-ળયર-ળિગમ-રાય-
હાણિ-ઁવેડ-કબ્બડ-મડંબ-દોળમુહ-પટ્ટણા-સમ-સંબાહ-સ-
ળિણવેસેસુ મળુયા ભવંતિ, તંજહા-અંડુબદ્ધગા ણિયલબદ્ધગા હડિબ-

ટીકા—‘ સે જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ । ‘ સે જે ઇમે ’ અથ ય ઇમે ‘ ગામા-ગર-
ળયર-ળિગમ-રાયહાણિ-ઁવેડ-કબ્બડ-મડંબ-દોળમુહ-પટ્ટણા-સમ-સંબાહ-સ-
ળિણવેસેસુ મળુયા ભવંતિ ’ ગ્રામા-SSકર-નગર-નિગમ-રાજધાની-ઁવેડ-કર્વટ-મડમ્બ-
દ્રોળમુખ-પટ્ટણાSS-શ્રમ-સંબાધ-સન્નિવેશેષુ મનુજા ભવન્તિ-ગ્રામાદયઃ પ્રાગ્ વ્યાખ્યાતાઃ, તેષુ
ય ઇમે મનુષ્યા ભવન્તિ, ‘ તંજહા ’ તથા— ‘ અંડુબદ્ધગા ’ અણ્ડુબદ્ધકાઃ-અણ્ડુનિ-અન્ડુ-

સે દેવ હોતે હૈં વે હી જીવ આરાધક હોકર નિયમ સે, આગામી એક હી મનુષ્ય ભવ સે
અથવા પરમ્પરા સે સાત આઠ ભવ સે મુક્તિ કા લાભ કરનેવાલે હોતે હૈં, અન્ય નહીં । પરંતુ
જો અકામનિર્જરા કરકે દેવતા હોતે હૈં વે સમી નિર્વાણાનુકૂલ ભવાન્તર પ્રાપ્ત કરેં હી યહ
નિયમ નહીં હૈ ॥ સૂ. ૮ ॥

‘ સે જે ઇમે ગામાગર ’ ઇત્યાદિ ।

(સે જે ઇમે) જો યે જીવ (ગામા-ગર-ળયર-ળિગમ-રાયહાણિ-ઁવેડ-
કબ્બડ-મડંબ-દોળમુહ-પટ્ટણા-સમ-સંબાહ-સળિણવેસેસુ મળુયા ભવંતિ) ગ્રામ મેં,
આકર મેં, નગર મેં, નિગમ મેં, રાજધાની મેં, ઁવેડે મેં, કર્વટ મેં, મડમ્બ મેં, દ્રોળમુખ મેં,
પટ્ટણ મેં, આશ્રમ મેં, સંબાધ મેં, એવં સન્નિવેશ મેં માનવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર
વે કિસી અપરાધવશ (અંડુબદ્ધયા) લોહ એવં કાષ્ઠ કે બંધનોં સે હાથ પૈરોં કો બાંધકર

તેમજ સમ્યક્ચારિત્રપૂર્વક અનુષ્ઠાનથી દેવ થાય છે. તેજ જીવ આરાધક
થઈને નિયમથી આગામી એક જ મનુષ્યના ભવથી અથવા પરંપરાથી સાત-
આઠ ભવોથી મુક્તિનો લાભ મેળવનાર થાય છે. પરંતુ જે અકામનિર્જરા
કરીને દેવતા થાય છે તે નિર્વાણ-અનુકૂલ ભવાંતર પ્રાપ્ત કરેજ એવો નિયમ
નથી. (સૂ. ૮)

‘ સે જે ઇમે ગામાગર-’ ઇત્યાદિ.

(સે જે ઇમે) જે આ જીવ (ગામા-ગર-ળયર-ળિગમ-રાયહાણિ-ઁવેડ-કબ્બડ-
મડંબ-દોળમુહ-પટ્ટણા-સમ-સંબાહ-સળિણવેસેસુ મળુયા ભવંતિ) ગામમાં, આકરમાં,
નગરમાં, નિગમમાં, રાજધાનીમાં, ઁવેડામાં, કર્વટમાં, મડંબમાં, દ્રોણમુખમાં,
પાટણમાં, આશ્રમમાં, સંબાધમાં, તેમજ સન્નિવેશમાં માનવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન

દ્વગા ચારગવદ્વગા હત્થચ્છિણ્ણગા પાયચ્છિણ્ણગા કણ્ણચ્છિણ્ણગા
નક્કચ્છિણ્ણગા ઓટ્ટચ્છિણ્ણગા જિભ્મચ્છિણ્ણગા સીસચ્છિણ્ણગા
મુહચ્છિણ્ણગા મજ્ઝચ્છિણ્ણગા વડ્કચ્છિણ્ણગા હિયુપ્પાડિયગા

કાનિ કાષ્ઠમયાનિ લોહમયાનિ વા હસ્તયોઃ પાદયોર્વા બન્ધનવિશેષાઃ, તેષુ વદ્ધકાઃ=વદ્ધા
એવ વદ્ધકાઃ, સ્વાર્થે કઃ; 'ણિઅલવદ્ધગા' નિગડવદ્ધકાઃ—નિગડાઃ=લોહમયા પાદયોર્બન્ધ-
વિશેષાઃ 'વેડી' इति પ્રસિદ્ધાઃ તેષુ વદ્ધકાઃ—નિગડવદ્ધા इत्यર્થઃ, 'હડિવદ્ધગા' હડિવદ્ધ-
કાઃ—હડિઃ=સ્વોટકઃ, તત્ર વદ્ધકાઃ, 'ચારગવદ્ધગા' ચારકવદ્ધકાઃ—ચારકાઃ=કારાગારાણિ,
તત્ર વદ્ધકાઃ; 'હત્થચ્છિણ્ણગા' હસ્તચ્છિન્નકાઃ—હસ્તૌ છિન્નૌ યેષાં તે તથા, 'પાયચ્છિ-
ણ્ણગા' પાદચ્છિન્નકાઃ; 'કણ્ણચ્છિણ્ણગા' કર્ણચ્છિન્નકાઃ; 'નક્કચ્છિણ્ણગા' નાસિકા-
ચ્છિન્નકાઃ; 'ઓટ્ટચ્છિણ્ણગા' ઓષ્ઠચ્છિન્નકાઃ; 'જિભ્મચ્છિણ્ણગા' જિહ્વાચ્છિન્નકાઃ; 'સીસ-
ચ્છિણ્ણગા' શીર્ષચ્છિન્નકાઃ; 'મુહચ્છિણ્ણગા' મુખચ્છિન્નકાઃ; 'મજ્ઝચ્છિણ્ણગા' મધ્યચ્છિ-
ન્નકાઃ; મધ્યઃ=ઉદરદેશઃ; 'વડ્કચ્છિણ્ણગા' વૈકલ્પચ્છિન્નકાઃ—ઉત્તરાસન્નાઽઽકારેણ વિ-

एक स्थान पर रोककर रख दिये जाते हैं, (णिअलवद्वगा) वेड़ी से जकड़ दिये जाते
हैं, (हडिवद्वगा) काष्ठ के खोड़े में पैर डलवाकर रोक दिये जाते हैं, (चारगवद्वगा)
जेलखाने में बंद कर दिये जाते हैं, (हत्थच्छिण्णगा) तथा उनके दोनों हाथ काट दिये
जाते हैं, (पायच्छिण्णगा) दोनों पैर छिन्नभिन्न कर दिये जाते हैं, (कण्णच्छिण्णगा)
कान छेद दिये जाते हैं, (नक्कच्छिण्णगा) नाक छेद दी जाती है, (ओट्टच्छिण्णगा)
ओष्ठ छेद दिये जाते हैं, (जिब्मच्छिण्णगा) जिह्वा छेद दी जाती है, (सीसच्छिण्णगा)
शिर छेद दिया जाता है, (मुहच्छिण्णगा) मुख छेद दिया जाता है, (मज्झच्छिण्णगा)

થાય છે અને તેઓ કોઈ અપરાધવશ (અંબુવદ્ધગા) લોહના તેમજ લાકડાના
બંધનોથી હાથ-પગને બાંધીને એક સ્થાન પર રોકી રખાય છે, (ણિઅલવદ્ધગા)
બેડીથી જકડી દેવાય છે, (હડિવદ્ધગા) લાકડાના ખોડા (પકડ)માં પગ નખા-
વીને રોકી રખાય છે. (ચારગવદ્ધગા) જેલખાનામાં પુરી દેવામાં આવે છે,
(હત્થચ્છિણ્ણગા) તથા તેમના બન્ને હાથ કાપી નાખવામાં આવે છે, (પાયચ્છિ-
ણ્ણગા) બન્ને પગ છિન્ન ભિન્ન કરી નાખવામાં આવે છે, (કણ્ણચ્છિણ્ણગા) કાન
છેદી નાખવામાં આવે છે. (નક્કચ્છિણ્ણગા) નાક છેદી નખાય છે, (ઓટ્ટચ્છિણ્ણગા)
હોઠ છેદી નખાય છે. (જિભ્મચ્છિણ્ણગા) જીભ છેદી નખાય છે. (સીસચ્છિણ્ણગા)
શિર છેદી નખાય છે. (મુહચ્છિણ્ણગા) મુખ છેદી નખાય છે. (મજ્ઝચ્છિણ્ણગા)

ળયણુપ્પાડિયગા દસણુપ્પાડિયગા વસણુપ્પાડિયગા ગેવચ્છિણ્ણગા તંડુલચ્છિણ્ણગા કાગણિમંસક્રવાવિયગા ઓલંબિયગા લંબિયગા

દારિતાઃ, ‘હિયુપ્પાડિયગા’ હૃદયોત્પાટિતકાઃ—ઉત્પાટિતહૃદયા इत्यर्थः, ‘ળયણુપ્પાડિ-
યગા’ નયનોત્પાટિતકાઃ—ઉત્પાટિતનયનાઃ=પૃથક્કૃતનેત્રાઃ, ‘દસણુપ્પાડિયગા’ દશનો-
ત્પાટિતકાઃ—ઉત્પાટિતદશનાઃ=પૃથક્કૃતદન્તાઃ, ‘વસણુપ્પાડિયગા’ વૃષણોત્પાટિતકાઃ—પૃથ-
ક્કૃતાણ્ડકોશાઃ, ‘ગેવચ્છિણ્ણગા’ ગ્રીવાચ્છિન્નકાઃ=ચિન્નગ્રીવાપ્રદેશાઃ, ‘તંડુલચ્છિણ્ણગા’
તણ્ડુલચ્છિન્નકાઃ—તણ્ડુલવત્ કણશશ્ચિન્નાઃ, ‘કાગણિમંસક્રવાવિયગા’ કાકળીમાંસ-
સ્વાદિતકાઃ—કાકળીમાંસાનિ=દેહોત્કૃત્તમાંસસ્વણ્ડાનિ સ્વાદિતાનિ યેષાં તે તથા, ‘ઓલંબિ-
યગા’ અવલમ્બિતકાઃ=રજ્જ્વા બદ્ધ્વા કૂપાદૌ પાતિતાઃ, ‘લંબિયગા’ લમ્બિતકાઃ=તરુશા-
સ્વાદૌ બદ્ધ્વા લમ્બિતાઃ, ‘ઘંસિયગા’ ઘર્ષિતકાઃ=ચન્દનવત્ પાષાણાદૌ ઘૃષ્ટાઃ, ‘ઘોલિ-

મધ્યભાગ—પેટ કા ભાગ છેદ દિયા જાતા હૈ, (વડ્કચ્છચ્છિણ્ણગા) બાયેં કન્ધે સે લેકર
દાહિને કૌંસ કે નીચે કે ભાગ સહિત મસ્તક છેદ દિયા જાતા હૈ, (હિયુપ્પાડિયગા)
હૃદય ફાડ દિયા જાતા હૈ, (ળયણુપ્પાડિયગા) દોનોં આંસેં ફોડ દી જાતી હૈ, (દસણુ-
પ્પાડિયગા) અંડકોષ નિકાલ લિયે જાતે હૈ, (ગેવચ્છિણ્ણગા) ગર્દન તોડ—મરોડ દી
જાતી હૈ, (તંડુલચ્છિણ્ણગા) તન્ડુલ કી તરહ કણર કરકે ઉનકે શરીર કે સ્વંડ ર કર
દિયે જાતે હૈ, (કાગણિ—મંસ—ક્રવાવિયગા) ઉનકી દેહ સે માંસ કાટ ર કર કૌઓં
કો સ્વિલા દિયા જાતા હૈ, (ઓલંબિયગા) રસ્સી સે બાંધકર કુણ મેં ડાલ દિયે જાતે હૈ,
(લંબિયગા) વૃક્ષ કી શાખા આદિ પર બાંધકર લટકા દિયે જાતે હૈ, (ઘંસિયગા)
ચંદન કી તરહ પથ્થર આદિ પર ઘસે જાતે હૈ, (ઘોલિયગા) માણ્ડ મેં સ્થિત દહી કી

મધ્યભાગ—પેટનો ભાગ છેદી નખાય છે. (વડ્કચ્છચ્છિણ્ણગા) ડાબી કાંધથી લઇને
જમણી બગલના નીચેના ભાગ સહિત મસ્તક છેદી નખાય છે. (હિયુપ્પા-
ડિયગા) હૃદય ફાડી નખાય છે. (ળયણુપ્પાડિયગા) બન્ને આંખો ફેાડી દેવાય છે.
(દસણુપ્પાડિયગા) દાંત પાડી નખાય છે. (વસણુપ્પાડિયગા) અંડકોષ કાઢી
નખાય છે. (ગેવચ્છિણ્ણગા) ગર્દન તોડી—મરડી નખાય છે. (તંડુલચ્છિણ્ણગા) તન્ડુ-
લની પેઠે કણકણ કરીને તેના શરીરના કટકે—કટકા કરી નાખવામાં આવે છે.
(કાગણિ—મંસ—ક્રવાવિયગા) તેના દેહમાંથી માંસ કાપી કાપીને કાગડાને ખવ-
રાવાય છે. (ઓલંબિયગા) દોરડાંથી બાંધીને ફૂવામાં નાખી દેવાય છે. (લંબિયગા)
આડની ડાબીએ બાંધીને લટકાવવામાં આવે છે. (ઘંસિયગા) ચંદનની પેઠે

ઘંસિયગા ઘોલિયગા ફાલિયગા પીલિયગા સૂલાઇયગા સૂલભિ-
 ણગા સ્વારવત્તિયા વજ્જવત્તિયા સીહપુચ્છિયગા દવગ્ગિદ્દગા
 પંકોસણગા પંકે સુત્તગા વલયમયગા વસદ્દમયગા ણિયાણમ-

યગા ' ઘોલિતકા: = માળડસ્થિતદધિવદૂર્ધ્વાઽધઃક્રમેણાઽઽઘૂર્ણિતા:, ' ફાલિયગા ' સ્ફાટિતા:-
 શુષ્કકાષ્ઠવત્કુઠારેણ દ્વિધા કૃતા:, ' પીલિયગા ' પીડિતકા:-યન્ત્રક્ષિપ્તેક્ષુયષ્ટિવત્ પીડિતા:,
 ' સૂલાઇયગા ' શૂલાચિતકા: = શૂલે સમારોપિતા:, ' સૂલભિણગા ' શૂલભિન્નકા: = શૂલેન
 વિદારિતા:, ' સ્વારવત્તિયા ' ક્ષારવર્તિતા: = ક્ષારે ક્ષિપ્તા:, ' વજ્જવત્તિયા ' વધ્યવર્તિતા: =
 વધ્યસ્થાને પાતિતા:, ' સીહપુચ્છિયગા ' સિંહપુચ્છિતકા: = છિન્નજનનેન્દ્રિયકા:, યદ્વા-સિંહ-
 પુચ્છે વદ્ધ્વા સમાકૃષ્ટા: ' દવગ્ગિદ્દગા ' દાવાગ્નિદગ્ધકા: - દાવાગ્નિના = વનાગ્નિના દગ્ધા:,
 ' પંકોસણગા ' પક્કાઽવસન્નકા: = સર્વથા પક્કે નિમગ્ના:, ' પંકે સુત્તગા ' પક્કે નિમગ્ના: =
 ઉત્તરીતુમસમર્થા:, ' વલયમયગા ' વલન્મૃતકા: - સંયમયોગાદ્ ભ્રષ્ટાનાં પરીષદ્વાસહનતયા

તરહ ઝૂંચે નીચે કરકે મથ દિયે જાતે હૈં, અથવા ઘુમાયે જાતે હૈં, (ફાલિયગા) શુષ્ક-
 કાષ્ઠ કી તરહ દો ટુકડોં કે રૂપ મેં કર દિયે જાતે હૈં, (પીલિયગા) કોલ્હૂ મેં ક્ષિપ્ત
 રક્ષુ કી તરહ પીલ દિયે હૈં, (સૂલાઇયગા) શૂલી પર ચઢા દિયે જાતે હૈં, (સૂલાભિણગા)
 શૂલ સે વિદારિત કર દિયે જાતે હૈં, (સ્વારવત્તિયા) ક્ષાર મેં પટક દિયે જાતે હૈં,
 (વજ્જવત્તિયા) વધ્યસ્થાન મેં રખ દિયે જાતે હૈં, (સીહપુચ્છિયગા) ઉનકા લિજ્જ કાટ
 દિયા જાતા હૈ, અથવા વે સિંહ કી પૂંછ મેં બાંધકર ઘસીટે જાતે હૈં, (દવગ્ગિદ્દગા)
 દાવાગ્નિ દ્વારા દગ્ધ કર દિયે જાતે હૈં, (પંકોસણગા) કીચડ મેં બિલકુલ ધસા દિયે
 જાતે હૈં, (પંકે સુત્તગા) કીચડ મેં રસ પ્રકાર સ્વદે કર દિયે જાતે હૈં કિ જિસસે ફિર

પથર ઉપર ઘસી નાખવામાં આવે છે. (ઘોલિયગા) વાસણમાં રાખેલાં દહીંની
 પેઠે ઉંચે-નીચે કરી મથન કરવામાં આવે છે, અથવા ઘુમાવવામાં આવે છે.
 (ફાલિયગા) સુકેલાં લાકડાંની પેઠે બે ટુકડાના રૂપમાં કરી નાખવામાં આવે છે.
 (પીલિયગા) ડોલૂમાં નાખવામાં આવતી શેરડીની પેઠે પીલી નખાય છે.
 (સૂલાઇયગા) શૂળી ઉપર ચડાવી દેવાય છે. (સૂલાભિણગા) શૂલથી કાઢી નાખ-
 વામાં આવે છે. (સ્વારવત્તિયા) ક્ષારમાં નાખી દેવાય છે. (વજ્જવત્તિયા) વધ-
 સ્થાનમાં રખાય છે. (સીહપુચ્છિયગા) લિંગ કાપી નખાય છે, અથવા-સિંહની
 પુછડીમાં બાંધીને ઘસેડાય છે. (દવગ્ગિદ્દગા) દાવાગ્નિ દ્વારા બાળી નખાય છે.
 (પંકોસણગા) કાદવમાં નાખી દેવાય છે તેથી ત્યાંજ મરી જાય છે, (પંકે સુત્તગા)

યગા અંતોસલ્લમયગા ગિરિપડિયગા તરુપડિયગા ગિરિપક્ષંદો-

મરણં—વલન્મરણં તદ્વન્તો વલન્મૃતકાઃ, યદ્વા—બુભુક્ષાદિના આર્તા મૃત્વા મૃતાસ્તે વલન્મૃતકાઃ, ‘વસટ્ટમયગા’ વશાર્તમૃતકાઃ—ઇન્દ્રિયવિષયવશગતા આર્તાઃ સન્તઃ શબ્દાદિવશવર્તિમૃગાદિવન્મૃતા इत्यर्थः, ‘ણિયાણમયગા’ નિદાનમૃતકાઃ—ઋદ્ધિભોગાદિપ્રાર્થના નિદાનં, તત્પૂર્વકં મરણં નિદાનમરણમ્, તદ્વન્ત इत्यर्थः, ‘અંતોસલ્લમયગા’ અન્તઃશલ્યમૃતકાઃ—અન્તઃશલ્યાઃ=અનુદ્ઘૃતભાવશલ્યા અન્તઃસ્થિતભલ્લાદિશલ્યા વા મૃતાઃ, ‘ગિરિપડિયગા’ ગિરિપતિતકાઃ—ગિરેઃ=પર્વતાત્પતિતાઃ, ‘તરુપડિયગા’ તરુપતિતકાઃ=વૃક્ષાત્પતિતાઃ, ‘મરુપડિયગા’ મરુપતિતકાઃ—મરૌ=નિર્જલે દેશે પતિતાઃ, ‘ગિરિપક્ષંદોલગા’ ગિરિપક્ષાન્દોલકાઃ—ગિરિપક્ષે=પર્વતપાર્શ્વે આત્માનમાન્દોલયન્તિ યે તે તથા, ગિરિપરિસરાન્મરણાયૈવ દત્તશમ્પા

વે વહાં સે પાર નહીં આ સકેં, (વલયમયગા) પરીષહ આદિ કો સહન કરને મેં અસમર્થ હોને કી વજહ સે ગૃહીત સંયમ સે જો ભ્રષ્ટ હોના ઇસકા નામ વલન્મરણ હૈ, અથવા દુઃસ્વિત હોકર જો મરના હૈ ઇસકા નામ મી વલન્મરણ હૈ, ઇસ મરણ સે જો યુક્ત હોં વે વલન્મૃતક હૈં, એસે જો વલન્મૃતક હૈં, (વસટ્ટમયગા) શબ્દાદિક કે વશવર્તી મૃગ કી તરહ જો ઇન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં ફાંસકર દુરવસ્થા સે પ્રાણોં કા ત્યાગ કરતે હૈં, (ણિયાણમયગા) જો ઇન્દ્રિય-ભોગાદિકોં કી ચાહનારૂપ નિદાન સે મરણ કરતે હૈં, (અંતોસલ્લમયગા) હૃદય મેં શલ્ય ધારણ કર જો મરણ કરતે હૈં, અથવા ભલ્લાદિક શસ્ત્રોં સે વિદારિત હોકર જો મરણ કરતે હૈં, (ગિરિપડિયગા) પહાડ સે ગિરકર જો મરણ કરતે હૈં, (તરુપડિયગા) પેડ સે ગિરકર જો મરણ કરતે હૈં, (મરુપડિયગા) જો મરુસ્થલ મેં પડ કર મર જાતે હૈં, (ગિરિપક્ષંદોલગા) પર્વત સે જો ઝંપાપાત કર કે મર જાતે હૈં, (તરુપક્ષંદોલગા) વૃક્ષોં સે

ગારામાં એવી રીતે ઉભા કરી દેવાય છે કે જેથી પાછા તે ત્યાંથી નીકળી શકે નહિ. (વલયમયગા) પરિષદ આદિના સહન કરવામાં અસમર્થ હોવાથી લીધેલા સંયમથી ભ્રષ્ટ થવું તેનું નામ વલન્મરણ છે. આ મરણથી જે યુક્ત હોય અથવા દુઃખી થઈને જે મરણ થાય તેવા મરણથી જે યુક્ત હોય તે વલન્મૃતક છે, (વસટ્ટમયગા) શબ્દ આદિકને વશ થઈ મૃગની પેઠે જે ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં ફસાઈ જઈ પ્રાણનો ત્યાગ કરે છે, (ણિયાણમયગા) જે ઇન્દ્રિયભોગ આદિકની ચાહના રૂપ નિદાનથી મરણ પામે છે, (અંતોસલ્લમયગા) હૃદયમાં શલ્ય ધારણ કરીને (છરી મારીને) જે મરણ પામે છે, અથવા ભાલાં વિગેરે શસ્ત્રોથી જે મરણ પામે છે, (ગિરિપડિયગા) પહાડ ઉપરથી પડીને જે મરણ પામે છે, (તરુપડિયગા) ઝાડેથી પડીને જે મરણ પામે છે, (મરુપડિયગા) જે મરુસ્થલમાં પડીને મરી જાય છે, (ગિરિપક્ષંદોલગા) પર્વત ઉપરથી

લગા તરુપક્ષવંદોલગા મરુપક્ષવંદોલગા જલપવેસી (જલણપવે-
સિગા) વિસમખિચયગા સત્થોવાડિયગા વેહાણસિયા ગેદ્ધપટ્ટગા
કંતારમયગા દુભિચ્ચમયગા અસંકિલિટ્ટપરિણામા તે કાલમાસે

મૃતાશ્ચ તથાભિધીયન્તે; 'તરુપક્ષવંદોલગા' તરુપક્ષાન્દોલકાઃ=તરુપક્ષાઞ્જમ્પાદાનેન મૃતાઃ.
'મરુપક્ષવંદોલગા' મરુપક્ષાન્દોલકાઃ—મરુપક્ષે=મરુભૂમૌ આત્માનમાન્દોલયન્તિ ચે તે તથા,
મરુભૂમૌ મૃતા इत्यर्थः, 'જલપવેસી' જલપ્રવેશિનઃ—જલે નિમજ્જ્ય મૃતા इत्यर्थः, 'જલણ-
પવેસિગા' જ્વલનપ્રવેશિકાઃ—અગ્નૌ મૃતા इत्यर्थः, 'વિસમખિચયગા' વિષમક્ષિતકાઃ—
વિષમક્ષણેન મૃતા इत्यर्थः, 'સત્થોવાડિયગા' શસ્ત્રોત્પાટિતકાઃ—શસ્ત્રેણ=ક્ષુરિકાદિના વિદા-
રિતાઃ સન્તો મૃતાઃ, 'વેહાણસિયા' વૈહાયસિકાઃ—વૃક્ષશાસ્વાદાવુદ્ભવત્વાદ વિહાયસિ=
આકાશે યન્મરણં ભવતિ તદ્વૈહાયસં, તદસ્તિ યેષાં તે વૈહાયસિકાઃ, 'ગેદ્ધપટ્ટગા' ગૃધ્રસ્પૃ-
ષ્ટકાઃ—ગૃધ્રૈઃ=પક્ષિવિશેષૈઃ સ્પૃષ્ટસ્ય=વિદારિતસ્ય કરિકરભરાસમાદિમૃતકલેવરસ્યાભ્યન્તરે ગત્વા
યે મૃતાસ્તે ગૃધ્રસ્પૃષ્ટકાઃ, 'કંતારમયગા' કાન્તારમૃતકાઃ=અરણ્યે મૃતાઃ, 'દુભિચ્ચમ-
યગા' દુર્ભિક્ષમૃતકાઃ—દુર્ભિક્ષે મૃતા इत्यर्थः, 'અસંકિલિટ્ટપરિણામા' અસંકિલિટ્ટપરિણામાઃ,

અંપાપાત કર કે મર જાતે હૈં, (મરુપક્ષવંદોલગા) મરુસ્થલ મેં માર્ગ મૂલકર જો ઉસી મેં
મર જાતે હૈં, (જલપવેસી) જલ મેં ડૂબ કર જો મર જાતે હૈં, (જલણપવેસિગા) અગ્નિ
સે જલકર જો મર જાતે હૈં, (વિસમખિચયગા) વિષ સ્વાકર જો મર જાતે હૈં, (સત્થો-
વાડિયગા) શસ્ત્રોં સે આહત હોકર જો મર જાતે હૈં, (વેહાણસિયા) વૃક્ષોં પર લટક
કર જો મર જાતે હૈં, (ગેદ્ધપટ્ટગા) ગૃધ્રોં દ્વારા વિદારિત ઈસે કરિ—હાથી ઇવં કરમ—ઊંટ
આદિ કે કલેવર મેં પ્રવિષ્ટ હોકર જો મરતે હૈં, (કંતારમયગા) જો જંગલ મેં હી મર જાતે
હૈં, (દુભિચ્ચમયગા) દુર્ભિક્ષ સે પીડિત હોકર જો મૌત કે ઘાટ ઉતર જાતે હૈં, (અસં-

અંપાપાત કરીને (ફૂલીને) મરણ પામે છે, (તરુપક્ષવંદોલગા) વૃક્ષ પરથી અંપાપાત
કરીને જે મરણ પામે છે, (મરુપક્ષવંદોલગા) મરુસ્થલમાં રસ્તો ભૂલીને તેમાંજ
જે મરી જાય છે, (જલપવેસી) જલમાં ડૂબીને જે મરણ પામે છે, (જલણપવે-
સિગા) અગ્નિથી બળીને જે મરી જાય છે, (વિસમખિચયગા) ઝેર ખાઈને
જે મરણ પામે છે, (સત્થોવાડિયગા) શસ્ત્રોના ઘાતથી જે મરી જાય છે, (વેહા-
ણસિયા) વૃક્ષો પર લટકીને જે મરણ પામે છે, (ગેદ્ધપટ્ટગા) ગીધોદ્વારા વિદારિત
હાથી તેમજ કરભ—ઉંટ આદિના શરીરમાં પ્રવિષ્ટ થઈને જે મરણ પામે છે,
(કંતારમયગા) જે જંગલમાં જ મરણ પામે છે, (દુભિચ્ચમયગા) દુર્ભિક્ષથી પીડાઈને

કાલં કિચ્ચા અણ્ણયરેસુ વાણમંતરેસુ દેવલોણસુ દેવત્તાણ ઉવવ-
ત્તારો ભવંતિ, તહિં તેસિં ગઈ તહિં તેસિં ઠિઈ, તહિં તેસિં ઉવવાણ
પણ્ણત્તે । તેસિં ણં મંતે ! દેવાણં કેવડયં કાલં ઠિઈ પણ્ણત્તા ? ગોયમા !

સંકલિષ્ટપરિણામા મહાર્ત્તરૌદ્રધ્યાનાઽઽવેશેન દેવત્વં ન લભન્તે, અતઃ અસંકલિષ્ટપરિણામા ઇતિ
વિશિષ્ઠ્ય પ્રદર્શિતાઃ, તે કાલમાસે કાલં કૃત્વા, ‘અણ્ણયરેસુ વાણમંતરેસુ દેવલોણસુ દેવ-
ત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ’ અન્યતમેષુ વ્યન્તરેષુ દેવલોકેષુ દેવત્વેનોપપત્તારો ભવન્તિ, ‘તહિં
તેસિં ગઈ’ તત્ર તેષાં ગતિઃ, ‘તહિં તેસિં ઠિઈ’ તત્ર તેષાં સ્થિતિઃ, ‘તહિં તેસિં ઉવ-
વાણ પણ્ણત્તે’ તત્ર તેષામુપપાતઃ પ્રજ્ઞતઃ । ‘તેસિં ણં મંતે ! દેવાણં કેવડયં કાલં ઠિઈ
પણ્ણત્તા ?’ તેષાં સ્વલુ ભદન્ત ! દેવાનાં કિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞાતાઃ, ‘ગોયમા ! બાર-

‘કલિલ્પપરિણામા’) ઔર જિનકે પરિણામ સંકલિષ્ટ નહીં હોતે हैं, ऐसे जीव (अण्णयरेसु
वाणमंतरेसु देवलोणसु देवत्ताण उववत्तारो भवन्ति) किसी एक व्यन्तर देव की पर्याय
से उत्पन्न होते हैं । (तहिं तेसिं गई, तहिं तेसिं ठिई, तहिं तेसिं उववाण पण्णत्ते) वहीं
पर उनकी गति, वहीं पर उनकी स्थिति एवं वहीं पर उनका उपपात कहा गया है,
(तेसिं णं मंते ! देवाणं केवडयं कालं ठिई पण्णत्ता) हे भदन्त ! वहां उन जीवों की

(૧) સંકલિષ્ટપરિણામોં કે સદ્ભાવ મેં જીવોં કો દેવગતિ કા બંધ નહીં હોતા હૈ ।
મહા આર્તરૌદ્રધ્યાન કે પરિણામ સંકલિષ્ટ પરિણામ હૈ, અસંકલિષ્ટ પરિણામ હી દેવગતિ કી
પ્રાપ્તિ મેં કારણ હૈ, ઇસ બાત કો પ્રદર્શિત કરને કે લિયે “અસંકલિલ્પપરિણામ” ઇસ પદ
કા પ્રયોગ કિયા હૈ ।

જે મોતને ભેટે છે, (અસંકલિલ્પપરિણામા) અને જેનું પરિણામ—અંત સંકલિષ્ટ ન
થાય એવા જીવ (અણ્ણયરેસુ વાણમંતરેસુ દેવલોણસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) કેઈ
એક વ્યંતર દેવલોકમાં વ્યંતર—દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે. (તહિં તેસિં ગઈ
તહિં તેસિં ઠિઈ તહિં તેસિં ઉવવાણ પણ્ણત્તે) ત્યાં તેમની ગતિ, ત્યાં તેમની સ્થિતિ,
તેમજ ત્યાં તેમના ઉપપાત કહેવામાં આવ્યો છે. (તેસિં ણં મંતે ! દેવાણં કેવ-
ડયં કાલં ઠિઈ પણ્ણત્તા) હે ભદન્ત ! ત્યાં તે જીવોની સ્થિતિ કેટલા કાળની બતાવી

(૧) સંકલિષ્ટ પરિણામના સદ્ભાવમાં જીવોને દેવગતિનો બંધ થતો
નથી. મહા—આર્તરૌદ્રધ્યાનનાં પરિણામ સંકલિષ્ટપરિણામ છે. અસંકલિષ્ટ
પરિણામ પણ દેવગતિની પ્રાપ્તિમાં કારણભૂત છે. એ વાત પ્રદર્શિત કરવા
“અસંકલિલ્પપરિણામ” એ પદનો પ્રયોગ કર્યો છે.

बारसवाससहस्साइं ठिई पणत्ता । अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढीइ वा, जुईइ वा, जसेइ वा, बलेइ वा, वीरिण्णइ वा, पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा ?, हंता ! अत्थि । ते णं भंते ! देवा परलोगस्स आराहगा ?, णो इणट्ठे समट्ठे ॥ सू० ९ ॥

सवाससहस्साइं ठिई पणत्ता' गौतम ! द्वादशवर्षसहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ताः । 'अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढीइ वा जुईइ वा जसेइ वा बलेइ वा वीरिण्णइ वा पुरिसक्कार-परक्कमेइ वा ?' अस्ति खलु भदन्त ! तेषां देवानामृद्धिरिति वा द्युतिरिति वा यश इति वा बलमिति वा वीर्यमिति वा पुरुषकारपराक्रम इति वा ? इति प्रश्ने भगवानुत्तरं वक्ति— 'हंता ! अत्थि' हन्त ! अस्ति, 'ते णं भंते ! देवा परलोगस्स आराहगा ?' ते खलु भदन्त ! देवाः परलोकस्याऽऽराधकाः भवन्ति किम् ? 'णो इणट्ठे समट्ठे' नाऽयमर्थः समर्थः ॥ सू० ९ ॥

स्थिति कितने काल की बतलाई गई है, (गोयमा ! बारसवाससहस्साइं ठिई पणत्ता) गौतम ! उन जीवों की वहां स्थिति बारह हजार वर्ष की बतलाई गई है । (अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढीइ वा जुईइ वा जसेइ वा बलेइ वा वीरिण्णइ वा पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा) हे भदन्त ! वहां उन देवों में ऋद्धि, द्युति, कीर्ति, बल, वीर्य एवं पुरुषकारपराक्रम है या नहीं ? (हंता अत्थि) हां है । (ते णं भंते देवा ! परलोगस्स आराहगा) हे भदन्त ! वे देव परलोक के आराधक होते हैं क्या ? (णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! वे आराधक नहीं होते हैं ।

भावार्थ—जो जीव ग्राम आदि में उत्पन्न होकर पूर्वोक्तरूप से प्रदर्शित विषम-

છે ? (ગોયમા ! બારસવાસસહસ્સાઈં ઠિઈ પણત્તા) હે ગૌતમ ! તે જીવોની ત્યાં સ્થિતિ બાર હજાર વરસની બતાવી છે. (અત્થિ ણં ભંતે ! તેસિં દેવાણં ઇડ્ઢીઈ વા જુઈઈ વા જસેઈ વા બલેઈ વા વીરિણ્ણઈ વા પુરિસક્કાર-પરક્કમેઈ વા) હે ભદન્ત ! ત્યાં તે દેવોમાં ઋદ્ધિ, દ્યુતિ, કીર્તિ, બલ, વીર્ય, તેમજ પુરુષકાર-પરાક્રમ છે કે નહિ ? (હંતા અત્થિ) હા છે. (તે ણં ભંતે ! દેવા પરલોગસ્સ આરાહગા) હે ભદન્ત ! આ દેવ પરલોકના આરાધક હોય છે શું ? (ણો ઇણટ્ઠે સમટ્ઠે) હે ગૌતમ ! આરાધક નથી હોતા.

ભાવાર્થ—જે જીવ ગ્રામ આદિમાં ઉત્પન્ન થઈને પૂર્વોક્ત રૂપે બતાવેલી

मूलम्—से जे इमे गामागर जाव संनिवेसेसु मणुया भ-
वंति, तं जहा- पगइभद्गा पगइउवसंता पगइ-पतणु—कोह-माण-

टीका—‘से जे इमे’ इत्यादि । ‘से जे इमे’ अथ य इमे वक्ष्यमाणा ‘गामागर जाव संनिवेसेसु मणुया भवंति’ ग्रामाकर यावत्संनिवेशेषु मनुजा भवन्ति—ग्रामे आकरे नगरे निगमे यावत् सन्निवेशे मनुष्या भवन्ति, तान् वर्णयति—‘तं जहा’ तद्यथा ‘पगइभद्गा’ प्रकृतिभद्रकाः—प्रकृत्या=स्वभावेन भद्रकाः=परोपकारपरायणाः, ‘पगइउवसंता’ प्रकृत्युप-शान्ताः=क्रोधोदयाऽभावादुपशान्तिमुपगताः, ‘पगइ-पतणु-कोह-माण-माया-लोहा’ प्रकृति-प्रतनु-क्रोध-मान-माया-लोभाः—सत्यपि कषायोदये प्रकृत्या प्रतनुक्रोधादिभावाः, ‘मिउ-मद्दव-संपण्णा’ मृदु-मार्दव-सम्पन्नाः—मृदु यन्मार्दवं तत् सम्पन्नाः=प्राप्ताः, अत्य-

स्थिति को अकामनिर्जरा के बल से भोगते हैं वे जीव मरकर व्यन्तर पर्याय से उत्पन्न होते हैं । वहां पर उनकी स्थिति १२ हजार वर्ष की होती है, धृति ऋद्धि आदि समस्त देवो-चित गुणों से ये संपन्न रहते हैं । वे परलोक के आराधक नहीं होते हैं ॥ सू. ९ ॥

‘से जे इमे गामागर जाव’ इत्यादि ।

(से जे इमे) जो जीव (गामागर जाव संनिवेसेसु) पूर्वोक्त ग्राम, आकर से लेकर सन्निवेश आदि स्थानों में (मणुया भवंति) मनुष्य होते हैं और उनमें जो (पगइभद्गा पगइउवसंता पगइ-पतणु-कोह-माण-माया-लोहा) प्रकृति से भद्रक होते हैं, क्रोधादिक कषायों के उदय के अभाव से जिनके परिणाम शान्तियुक्त बने रहते हैं, स्वभाव से ही जिनकी क्रोध, मान, माया एवं लोभ ये चार कषायें पतली रहा करती हैं,

विषम स्थितिने अकामनिर्जराना अलथी लोगवे छे ते अव मरी जेने व्यन्तर-पर्यायथी उत्पन्न थाय छे. त्यां तेमनी स्थिति १२ आर हजार वर्षनी छाय छे. धृति, ऋद्धि आदि समस्त देवोचित गुणोथी तेओ संपन्न रहे छे. तेओ परलोकना आराधक छेता नथी. (सू. ९)

“से जे इमे गामागर जाव” इत्यादि.

(से जे इमे) जे अव (गामागर-जाव-संनिवेसेसु) पूर्वे कहेल गाम, आकरथी जेने सन्निवेश आदि स्थानोभां (मणुया भवंति) मनुष्य थाय छे. अने तेभां जे (पगइभद्गा पगइउवसंता पगइ-पतणु-कोह-माण-माया-लोहा) प्रकृतिथी भद्रक छाय छे, क्रोध आदिक कषायोना उदयना अभावथी जेना इलइपे शान्तियुक्त रह्या करे छे, स्वभावथी जे जेना क्रोध, मान, माया

માયા-લોહા મિત્ર-મદ્વ-સંપણા અહ્લીના વિણીયા અમ્મા-
પિત્ર-સુસ્સૂસગા અમ્માપિર્દિણં અણિક્કમણિજ્જવયણા અપ્પિચ્છા
અપ્પારંભા અપ્પપરિગ્ગહા અપ્પેણં આરંભેણં અપ્પેણં સમારંભેણં

ર્થમહંકારજયશીલા इत्यर्थः; 'अह्लीणा' आलीनाः=गुरुमाश्रित्य वर्तनशीलाः, 'विणीया' विनीताः=विनयवन्तः, 'अम्मा-पितृ-सुस्सूसगा' अम्बा-पितृ-शुश्रूषकाः=मातापित्रोः सेवकाः, 'अम्मापिर्दणं अणिक्कमणिज्जवयणा' अम्बापित्रोरनतिक्रमणीयवचनाः=मातापित्रो-नीतिवचनपरायणाः, 'अपिच्छा' अल्पेच्छाः=अल्पाभिलाषवन्तः, 'अप्पारंभा' अल्पारम्भाः-अल्पः=स्वल्पः, आरम्भः=पृथिव्याद्युपमर्दनरूपो येषां तेऽल्पारम्भाः, 'अप्पपरिगगहा' अल्प-पारग्रहाः-अल्पः परिग्रहो=धनधान्यादिरूपो येषां ते तथा; एतदेव वाक्यान्तरेणाऽऽह-'अप्पेणं आरंभेण अप्पेणं समारंभेण' अल्पेनारम्भेण अल्पेन समारम्भेण-इहाऽरम्भः=प्राणिनामुपघातः,

(મિત્ર-મદ્વ-સંપણા) મૃદુમાર્દવ સે જિનકી આત્મા અત્યંત વાસિત હોતી હૈ, અહંકાર કા સર્વથા જિનમેં અભાવ રહા કરતા હૈ, (અહ્લીના) ગુરુ કી આજ્ઞાનુસાર જો અપની પ્રકૃતિ કો સુચારુ બનાયે રહા કરતે હૈ, (વિણીયા) જો પ્રકૃતિ સે હી અત્યંત વિનીત હોતે હૈ, (અમ્મા-પિત્ર-સુસ્સૂસગા) માતાપિતા કે જો સેવા કરતે હૈ, (અમ્મા-પિર્દિણં અણિક્કમણિજ્જવયણા) માતાપિતા કે વચનોં કે અનુસાર જો ચલતે હૈ, (અપ્પિચ્છા) જિનકી ઇચ્છાઈ-આવશ્યકતાઈ બહુત થોડી હોતી હૈ, (અપ્પારંભા) આરંભ જિનકા અલ્પ હોતા હૈ, (અપ્પપરિગગહા) ધનધાન્યાદિરૂપ પરિગ્રહ જિનકા અલ્પ હોતા હૈ, (અપ્પેણં આરંભેણં અપ્પેણં સમારંભેણં અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં વિત્તિં કપ્પેમાણા) એવં જો અલ્પ આરંભ સે, અલ્પ સમારંભ સે ઓર અલ્પ આરંભ-સમારંભ સે આજીવિકા ચલાયા કરતે

તેમજ લોહ એ ચાર કષાયો નબળા રહ્યા કરે છે. (મિત્ર-મદ્વ-સંપણા) મૃદુ-માર્દવથી જેમનો આત્મા અત્યંત વાસિત (પ્રકુલ) હોય છે, અહંકારનો જેમનામાં સર્વથા અભાવ રહ્યા કરે છે. (અહ્લીના) ગુરુની આજ્ઞા-અનુસાર જે પોતાની પ્રકૃતિને સુંદર બનાવ્યા કરે છે, (વિણીયા) જે પ્રકૃતિથી જ અત્યંત વિનીત હોય છે, (અમ્મા-પિત્ર-સુસ્સૂસગા) માતા-પિતાની જે સેવા કરે છે, (અમ્માપિર્દિણં અણિક્કમણિજ્જવયણા) માતાપિતાનાં વચનો અનુસાર જે ચાલે છે (વર્તે છે), (અપ્પિચ્છા) જેની ઇચ્છાઓ-આવશ્યકતાઓ બહુ જ થોડી હોય છે, (અપ્પારંભા) આરંભ જેના અલ્પ હોય છે, (અપ્પેણં આરંભેણં અપ્પેણં સમારંભેણં અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં વિત્તિં કપ્પેમાણા) તેમજ જે અલ્પ આરંભથી,

અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં વિત્તિં કપ્પેમાણા બહૂં વાસાં આઉયં
પાલેંતિ, પાલિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અણ્ણયરેસુ વાણમંત-
રેસુ, તંચેવ સઘ્વં, ણવરં ઠિઈ ચઉદસવાસસહસ્સાં ॥ સૂ. ૧૦ ॥

સમારંભસ્તુ તેષાં પરિતાપકરણમ્ ‘અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં’ અલ્પેન આરંભસમારંભેણ—
આરંભશ્ચ સમારંભશ્ચેતિ—આરંભસમારંભં તેન, અલ્પેનારંભેણ અલ્પેન સમારંભેણ ચેત્યર્થઃ,
‘વિત્તિં કપ્પેમાણા’ વૃત્તિં કલ્પયન્તઃ=જીવિકાં કુર્વાણાઃ, ‘બહૂં વાસાં આઉયં પાલેંતિ’
બહૂનિ વર્ષાણિ આયૂષિ=જીવિતાનિ પાલયન્તિ, ‘પાલિત્તા’ પાલયિત્વા, ‘કાલમાસે કાલં
કિચ્ચા’ કાલમાસે કાલં કૃત્વા ‘અણ્ણયરેસુ વાણમંતરેસુ’ અન્યતરેષુ વ્યન્તરેષુ, અતોઽગ્રે
‘તં ચેવ સઘ્વં’ તદેવ=પૂર્વવદેવ સર્વં વર્ણનં જ્ઞેયમ્ । ‘ણવરં’ નવરં=વિશેષસ્તુ—‘ ઠિઈ
ચઉદસ—વાસ—સહસ્સાં’ સ્થિતિશ્ચતુર્દશવર્ષસહસ્રાણિ—ચતુર્દશવર્ષસહસ્રાણિ યાવત્ સ્થિતિઃ
પ્રજ્ઞતા ॥ સૂ. ૧૦ ॥

હૈં, એસે જીવ (બહૂં વાસાં આઉયં પાલેંતિ) બહુત વર્ષોતક જીવિત રહા કરતે હૈં,
(પાલિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અણ્ણયરેસુ વાણમંતરેસુ દેવલોણસુ દેવત્તાણ
ઉવવત્તારો ભવંતિ) પશ્ચાત્ કાલ અવસર કાલ કરકે કિસી એક વ્યન્તરોં કે દેવલોક
મેં દેવતારૂપ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં । (તં ચૈવ સઘ્વં) યહાં પૂર્વવર્ણિત પ્રકાર કે અનુસાર
સ્થિતિ આદિ સબ કુછ સમજ લેના ચાહિયે । (ણવરં) વિશેષતા સિર્ફ ઇતની હી હૈ કિ
વહાં પર ઉનકી સ્થિતિ ૧૨ હજાર વર્ષ કી પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ, ઓર યહાં પર ઉનકી
(ઠિઈ ચઉદસવાસસહસ્સાં) ૧૪ હજાર વર્ષ કી સ્થિતિ જાનની ચાહિયે ॥ સૂ. ૧૦ ॥

અલ્પ સમારંભથી અને અલ્પ આરંભ—સમારંભથી પોતાની આજીવિકા ચલાવ્યા
કરે છે. એવા જીવ (બહૂં વાસાં આઉયં પાલેંતિ) ઘણું વરસો સુધી જીવતા
રહ્યા કરે છે. (પાલિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અણ્ણયરેસુ વાણમંતરેસુ દેવલોણસુ
દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) પછી કાલ અવસરે કાલ કરીને કોઈ એક
વ્યંતરોના દેવલોકમાં દેવતારૂપે ઉત્પન્ન થાય છે. (તં ચૈવ સઘ્વં) અહીં
અગાઉ વર્ણન કરેલા પ્રકાર અનુસાર સ્થિતિ આદિ બધું સમજ લેવું
જોઈએ. (ણવરં) વિશેષતા માત્ર એટલી જ છે કે ત્યાં તેમની સ્થિતિ ૧૨
બાર હજાર વરસની પ્રતિપાદિત કરેલી છે, અને અહીં તેમની (ચઉદસ—વાસ—
સહસ્સાં) ૧૪ ચૌદ હજાર વરસની સ્થિતિ સમજવી જોઈએ, (સૂ. ૧૦)

મૂલમ્—સે જાઓ ઇમાઓ ગામાગર જાવ સંનિવેસેસુ
 ઇત્થિયાઓ ભવંતિ, તં જહા—અંતો અંતેઝરિયાઓ ગયપડ્યાઓ
 મયપડ્યાઓ વાલવિહવાઓ છઙ્ઙિયલ્લિયાઓ માઈરક્ષિયાઓ

ટીકા—‘સે જાઓ ઇમાઓ’ ઇત્યાદિ । ‘સે જાઓ ઇમાઓ’ અથ યા ઇમાઃ=ઈદ-
 રથઃ ‘ગામાગર જાવ સંનિવેસેસુ ઇત્થિયાઓ ભવંતિ’ ગ્રામાઽઽકર યાવત્ સંનિવેશેષુ સ્ત્રિયો
 ભવન્તિ, ‘તં જહા’ તદ્વથા—‘અંતો અંતેઝરિયાઓ’ અન્તરન્તઃપુરિકાઃ=અન્તઃપુરાન્તર્વર્તિન્યઃ,
 ‘ગયપડ્યાઓ’ ગતપતિકાઃ—ગતાઃ=કાપિ પ્રોષિતાઃ પતયો યાસાં તાસ્તથા, ‘મયપડ્યાઓ’
 મૃતપતિકાઃ—મૃતાઃ પતયો યાસાં તાસ્તથા, વિધવા ઇત્યર્થઃ, ‘વાલવિહવાઓ’ બાલવિધવાઃ—
 બાલાશ્રામૂઃ વિધવાઃ—બાલ્યે વૈધવ્યં ગતાઃ, ‘છઙ્ઙિયલ્લિયાઓ’ છર્દિતાઃ=પત્યાદિભિઃ પરિત્યક્તાઃ,
 ‘માઈરક્ષિયાઓ’ માતૃરક્ષિતાઃ=અપરરક્ષકાભાવાજ્ઞનન્યા રક્ષિતાઃ, માતૃકૃતરક્ષયા શીલરક્ષણ-
 કારિકા ઇત્યર્થઃ, એવમગ્રેઽપિ બોધ્યમ્; ‘પિયરક્ષિયાઓ’ પિતૃરક્ષિતાઃ, ‘ભાયરક્ષિયાઓ’

‘સે જાઓ ઇમાઓ’ ઇત્યાદિ ।

(સે જાઓ ઇમાઓ) જો યે જીવ (ગામાગર જાવ સંનિવેસેસુ) ગ્રામ આકર
 આદિ સે લેકર સંનિવેશતક કે સ્થાનો મેં સ્ત્રીપર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં, જૈસે કિ ઉનમેં કિત-
 નીક સ્ત્રિયાં તો (અંતો અંતેઝરિયાઓ) રાજા કે અંતઃપુર કી રાનિયાં હોતી હૈં, કિતનીક
 (ગયપડ્યાઓ) પ્રોષિતભર્તૃકા હોતી હૈં, જિનકે પતિ પ્રવાસી અર્થાત્ પરદેશ ગયે હોં ઉનકો
 પ્રોષિતભર્તૃકા કહતે હૈં, કિતનીક (મયપડ્યાઓ) વિધવા હોતી હૈં, (વાલવિહવાઓ) બાલ-
 વિધવા હોતી હૈં, (છઙ્ઙિયલ્લિયાઓ) કિતનીક પતિદ્વારા પરિત્યક્ત હોતી હૈં, કિતનીક (માઈ-
 રક્ષિયાઓ) માતૃરક્ષિતા હોતી હૈં, (પિયરક્ષિયાઓ) કિતનીક પિતા સે સુરક્ષિત હોતી

‘સે જાઓ ઇમાઓ’ ઇત્યાદિ.

(સે જાઓ ઇમાઓ) જે આ જીવ (ગામાગર જાવ સંનિવેસેસુ) ગામ
 આકર આદિથી લઈને સંનિવેશ સુધીના સ્થાનોમાં સ્ત્રીપર્યાયથી ઉત્પન્ન
 થાય છે; જેમકે તેઓમાં કેટલીક સ્ત્રીઓ તો (અંતો અંતેઝરિયાઓ) રાજાના
 અંતઃપુરની રાણીઓ હોય છે, કેટલીક (ગયપડ્યાઓ) પ્રોષિતભર્તૃકા હોય છે,
 (જેના પતિ પ્રવાસી અર્થાત્ પરદેશ ગયા હોય તેમને પ્રોષિતભર્તૃકા કહે
 છે), કેટલીક (મયપડ્યાઓ) વિધવા હોય છે, કેટલીક (વાલવિહવાઓ)
 બાલ-વિધવા હોય છે, (છઙ્ઙિયલ્લિયાઓ) કેટલીક પતિદ્વારા પરિત્યક્તા હોય
 છે, કેટલીક (માઈરક્ષિયાઓ) માતૃરક્ષિતા હોય છે, (પિયરક્ષિયાઓ) કેટ-

પિયરક્ષિયાઓ ભાયરક્ષિયાઓ પડરક્ષિયાઓ કુલઘરરક્ષિ-
યાઓ સસુરકુલરક્ષિયાઓ પરુઢ-ળહ-કેસ-કક્ષરોમાઓ વવ-
ગય-ધૂવ-પુપ્ફ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ અળ્હાળગ-સેય-જલ્હ-મલ્હ-

ભ્રાતૃરક્ષિતાઃ, 'પડરક્ષિયાઓ' પતિરક્ષિતાઃ, 'કુલઘરરક્ષિયાઓ' કુલગૃહરક્ષિતાઃ—કુલ-
ગૃહે=પિતૃગૃહે રક્ષિતાઃ—પિતૃવંશોદ્ભવૈઃપાલિતા इत्यर्थः, 'સસુરકુલરક્ષિયાઓ' શ્વશુરકુલ-
રક્ષિતાઃ, 'પરુઢ-ળહ-કેસ-કક્ષરોમાઓ' પ્રરુઢ-નસ્વ-કેશ-કક્ષરોમાણઃ—પ્રરુઢાનિ=
સંજાતાનિ નસ્વકેશકક્ષરોમાણિ યાસાં તાસ્તથા, 'વવગય-ધૂવ-પુપ્ફ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ'
વ્યપગત-ધૂપ-પુષ્પ-ગન્ધ — માલ્યાઽ — લઙ્કારાઃ—વ્યપગતાઃ=વ્યક્તાઃ ધૂપપુષ્પગન્ધમાલ્યાનામ-
લઙ્કારા યામિસ્તાસ્તથા, 'અળ્હાળગ-સેય-જલ્હ-મલ્હ-પંક-પરિતાવિયાઓ' અસ્નાનક-

હુઈં અપને શીલ કી રક્ષા કરતી રહતી હૈં, (ભાયરક્ષિયાઓ) કિતનીક અપને માઈયોં સે
સુરક્ષિત રહા કરતી હૈં, (પડરક્ષિયાઓ) કિતનીક અપને ૨ પતિદ્વારા સુરક્ષિત રહા કરતી
હૈં, (કુલઘરરક્ષિયાઓ) કિતનીક કુલગૃહ મેં પિતા કે વંશજોં દ્વારા પાલી-પોષી જાકર
સુરક્ષિત રહા કરતી હૈં, (સસુર-કુલ-રક્ષિયાઓ) કિતનીક સસુરપક્ષ કે લોગોં દ્વારા
સુરક્ષિત કી જાતી હૈં, (પરુઢ-ળહ-કેસ-કક્ષરોમાઓ) કિતનીક એસી હોતી હૈં કિ
જિનકે કેશ, કાંસરી કે બાલ એવં નસ્વ બઢે રહા કરતે હૈં, (વવગય-ધૂવ-પુપ્ફ-ગંધ-મલ્લા-
લંકારાઓ) કિતનીક એસી હોતી હૈં જો ધૂપ-સ્વશ્બૂદાર તૈલ આદિ કે લેને સે તથા પુષ્પોં
એવં સુગંધિત પુષ્પોં કો માલારૂપ અલંકારોં સે સદા પરિત્યક્ત રહા કરતી હૈં, (અળ્હાળગ-
સેય-જલ્હ-મલ્હ-પંક-પરિતાવિયાઓ) કિતનીક એસી હોતી હૈં જો સ્નાન નહીં કરને સે

લીક પિતાથી સુરક્ષિત રહેતાં પોતાના શીલની રક્ષા કરતી હોય છે, (ભાયર-
ક્ષિયાઓ) કેટલીક પોતાના ભાઈઓથી સુરક્ષિત રહ્યા કરે છે, (પડર-
ક્ષિયાઓ) કેટલીક પોતપોતાના પતિ દ્વારા સુરક્ષિત રહ્યા કરે છે, (કુલઘર-
રક્ષિયાઓ) કેટલીક કુલગૃહમાં પિતાના વંશજો દ્વારા પાલન-પોષણ લઈ
સુરક્ષિત રહ્યા કરે છે, (સસુરકુલરક્ષિયાઓ) કેટલીક સાસરાં પક્ષના લોકો
દ્વારા સુરક્ષિત કરાય છે, (પરુઢ-ળહ-કેસ-કક્ષરોમાઓ) કેટલીક એવી હોય
છે કે જેના નખ, કેશ, તેમજ કાંખરી (અંગલ)ના વાળ, વધતા જતા હોય છે,
(વવગય-ધૂવ-પુપ્ફ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ) કેટલીક એવી હોય છે કે જે ધૂપ-
સુગંધિત તેલ આદિના લેપથી તથા પુષ્પો તેમજ સુગંધિત પુષ્પોની માલારૂપ
અલંકારોથી સદા પરિત્યક્ત રહ્યા કરે છે, (અળ્હાળગ-સેય-જલ્હ-મલ્હ-પંક-

પંક-પરિતાવિયાઓ વવગય-સ્વીર-દહિ-ળવળીય-સપ્પિ-તેલ્લ-
ગુલ-લોળ-મહુ-મજ્જ-મંસ-પરિચત્ત-કયા-હારાઓ અપ્પિચ્છાઓ
અપ્પારંભાઓ અપ્પપરિગ્ગહાઓ અપ્પેણં આરંભેણં અપ્પેણં સમા-

સ્વેદ-જલ્લ-મલ્લ-પઙ્ક-પરિતાપિતાઃ-અસ્નાનકેન-સ્નાનાઽભાવેન હેતુના સ્વેદજલ્લમલ્લપઙ્કઃ-સ્વેદઃ=
પ્રસ્વેદઃ, જલ્લઃ=શુષ્કઃ પ્રસ્વેદઃ, મલ્લઃ=રજોમાત્રં કઠિનીભૂતમ્, પઙ્કઃ=આર્દ્રાભૂતં રજઃ, તૈઃ
પરિતાપિતાઃ=ક્લેશિતાઃ-સંમૃતા इत्यर्थः, 'વવગય-સ્વીર-દહિ-ળવળીય-સપ્પિ-તેલ્લ-ગુલ-
લોળ-મહુ-મજ્જ-મંસ-પરિચત્ત-કયા-હારાઓ' વ્યાપગત-ક્ષીર-દધિ-નવનીત-સર્પિ-
સ્તૈલ-ગુડ-લવળ-મધુ-મધ-માંસ-પરિચત્ત-કૃતાઽહારાઃ-વ્યાપગતાનિ ક્ષીરદધિનવનીત-
સર્પીષિ યસ્માત્ સ વ્યાપગતક્ષીરદધિનવનીતસર્પિઃ, તૈલગુડલવળમધુમધમાંસૈઃ પરિચત્તઃ, તતઃ
પદદ્વયસ્ય કર્મધારયઃ, ક્ષીરાદિમાંસપર્યન્તરહિત इत्यर्थः, તાદૃશઃ કૃતઃ=સેવિતઃ આહારો યામિ-
સ્તાસ્તથા, 'અપ્પિચ્છાઓ' અલ્પેચ્છાઃ, 'અપ્પારંભાઓ' અલ્પારમ્ભાઃ-અલ્પઃ આરમ્ભઃ=પૃથિ-
વ્યાધુપમર્દનવ્યાપારો યાસાં તાસ્તથા, 'અપ્પપરિગ્ગહાઓ' અલ્પપરિગ્રહાઃ-અલ્પધનધાન્યસંગ્રહાઃ,
'અપ્પેણં આરંભેણં અપ્પેણં સમારંભેણં અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં' અલ્પેનાઽરમ્ભેણ અલ્પેન

પસીના સે લથપથ રહા કરતી હૈં, ઇવં પશીના કે શુષ્ક હો જાને સે ઉસ પર બૈઠી હુઈ ધૂલિ,
કાલે કઠિન મૈલ કે રૂપ મેં પરિણમિત હોકર ઉનકે શરીર કો મલિન બનાયે રહતી હૈં।
(વવગય-સ્વીર-દહિ-ળવળીય-સપ્પિ-તેલ્લ-ગુલ-લોળ-મહુ-મજ્જ-મંસ-પરિચત્ત-
કયા-હારાઓ) કિતનીક ઇસી હોતી હૈં કિ જો દૂધ, દહી, મક્કન, સર્પિ-ઘૃત, તૈલ, ગુડ,
નમક, મધુ, મધ, ઇવં માંસ સે વર્જિત આહાર ક્રિયા કરતી હૈં, (અપ્પિચ્છાઓ) ઔર જિનકી
ઇચ્છાઈ સ્વભાવતઃ અલ્પ હુઆ કરતી હૈં, (અપ્પારંભાઓ અપ્પપરિગ્ગહાઓ અપ્પેણં આરં-
ભેણં અપ્પેણં સમારંભેણં અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં ત્રિત્તિ કપ્પેમાણીઓ) વે અલ્પ આરંભ સે,

પરિતાવિયાઓ) ડેટલીક ઁવી હોય છે કે જે સ્નાન ન કરવાથી પસીનાથી
લથપથ રહ્યા કરે છે, તેમજ પસીનો સુકાઈ જવાથી તેના પર ઉડીને પડેલી
ધૂળ કાળા અને કઠણ મેલના રૂપે પરિણામ પામીને તેમના શરીરને મલિન
બનાવ્યા કરે છે. (વવગય-સ્વીર-દહિ-ળવળીય-સપ્પિ-તેલ્લ-ગુલ-લોળ-મહુ-
મજ્જ-મંસ-પરિચત્ત-કયા-હારાઓ) ડેટલીક ઁવી હોય છે કે જે દૂધ, દહી,
માખણ, સર્પિ-ઘી, તેલ, ગોળ, મીઠું, મધ, મધ, તેમજ માંસથી વર્જિત
આહાર કર્યા કરે છે, (અપ્પિચ્છાઓ) અને જેમની ઇચ્છાઓ સ્વભાવથી જ
અલ્પ રહ્યા કરે છે. (અપ્પારંભાઓ અપ્પપરિગ્ગહાઓ અપ્પેણં આરંભેણં અપ્પેણં

રંભેણં અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં વિત્તિં કપ્પેમાણીઓ અકામવંભ-
ચેરવાસેણં તામેવ પડ્સેજ્જં ણાઙ્કમંતિ । તાઓ ણં ઇત્થિયાઓ ણ્યા-
રૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણીઓ બહૂં વાસાં, સેસં તં ચેવ, જાવ
ચઉસદ્ધિં વાસસહસ્સાં ઠિઈ પણ્ણત્તા ॥ સૂ. ૧૧ ॥

સમારંભેણ અલ્પેન આરંભસમારંભેણ, 'વિત્તિં કપ્પેમાણીઓ' વૃત્તિં કલ્પયન્ત્યઃ—વૃત્તિ=જીવિકાં
કુર્વાણાઃ, અકામબ્રહ્મચર્યવાસેન-અકામાનાં=નિર્જરાધનપેક્ષાણાં બ્રહ્મચર્યે-વાસસ્તેન 'તામેવ પડ્સેજ્જં'
તામેવ પતિશય્યાં—પત્યા સહ સેવિતાં શય્યાં-પતિશય્યાં 'ણાઙ્કમંતિ' નાતિકામન્તિ, પરપુરુષ-
પરિહારેણ સર્વથા પતિવ્રતધર્મપાલિકા ઇત્યર્થઃ, 'તાઓ ણં ઇત્થિયાઓ ણ્યારૂવેણં વિહારેણં
વિહરમાણીઓ' તાઃ સ્વલુ સ્ત્રિય એતદ્રૂપેણ વિહારેણ વિહરન્ત્યઃ, 'બહૂં વાસાં આઝયં પાલેતિ'
બહુનિ વર્ષાણિ આયુષ્યં પાલયન્તિ, પાલયિત્વા, શેષં તદેવ યાવત્-અત્ર યાવચ્છબ્દેનેદં દૃશ્યમ્ કાલમાસે
કાલં કૃત્વાઽન્યતમેષુ વ્યન્તરેષુ દેવલોકેષુ દેવત્વેનોપપાતં પ્રાપ્તા ભવન્તિ, તત્ર—દેવલોકે તાસાં

અલ્પ સમારંભ સે, ઔર અલ્પ આરંભ-સમારંભસે અપની આજીવિકા ચલાતી હૈં, (અકામ-વંભ-
ચેર-વાસેણં તામેવ પડ્સેજ્જં ણાઙ્કમંતિ) ઔર પરવશતા સે બ્રહ્મચર્ય કા પાલન કરતી હુઈ
અપને પતિ કી શય્યા કા ઉલ્લંઘન નહીં કરતી હૈં-પાતિવ્રત્ય ધર્મ કે પાલન મેં નિરત રહા કરતી
હૈં, ઇસ પ્રકાર જો સ્ત્રિયાં અપને જોવન કો વ્યતીત કરતી હૈં, (તાઓ ણં ઇત્થિયાઓ ણ્યા-
રૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણીઓ બહૂં વાસાં આઝયં પાલેતિ) વે સ્ત્રિયાં ઇસ પ્રકાર કી
અપની નૈતિક પ્રવૃત્તિ સે યુક્ત બની રહ કર બહુત વર્ષોં કી આયુ પાલતી હૈં, (સેસં તં ચેવ)
એવં જબ ઉનકા મરને કા અવસર આ જાતા હૈ તબ વે ઉસ અવસર મેં મર કર અન્યતમ વ્ય-

સમારંભેણં અપ્પેણં આરંભસમારંભેણં વિત્તિં કપ્પેમાણીઓ) તેઓ અલ્પ આરંભથી,
અલ્પ સમારંભથી અને અલ્પ આરંભ-સમારંભથી પોતાની આજીવિકા ચલાવે
છે. (અકામવંભચેરવાસેણં તામેવ પડ્સેજ્જં ણાઙ્કમંતિ) અને પરવશતાથી
બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરતી થકી પોતાના પતિની શય્યાનું ઉલ્લંઘન કરતી નથી—
પાતિવ્રત્ય ધર્મના પાળનમાં નિરત રહ્યા કરે છે. આ પ્રકારે જે સ્ત્રીઓ પોતાના
જીવનને વ્યતીત કરે છે. (તાઓ ણં ઇત્થિયાઓ ણ્યારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણીઓ
બહૂં વાસાં આઝયં પાલેતિ) તે સ્ત્રીઓ આ પ્રકારની પોતાની નૈતિક પ્રવૃત્તિ
કરતી રહીને ઘણાં વરસોની આયુ ભોગવે છે. (સેસં તં ચેવ) તેમજ જ્યારે
તેમના મરવાનો અવસર આવે છે ત્યારે તે અવસરમાં મરીને બીજા વ્યંતરોના

મૂલમ્—સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સન્નિવેસેસુ મણુયા ભવંતિ, તં જહા—દગ્ધિયા દગતિયા દગસત્તમા દગણ્ણકારસમા

ગતિસ્તાસાં સ્થિતિસ્તાસામુપપાતઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તાસાં સ્વલુ હે ભદન્ત ! દેવત્વં પ્રાપ્તાનાં ક્રિયન્તં કાલં સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તા ? इति प्रश्ने भगवानाह—‘गोयमा ! ’ हे गौतम ! इति । ‘चउसट्ठिं वासस-हस्साइं ठिई पण्णत्ता’ चतुःषष्टिं वर्षसहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥ सू० ११ ॥

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ इत्यादि । ‘સે જે ઇમે’ अथ य इमे=ईदृशाः, ‘ગામાગર-જાવ સન્નિવેસેસુ મણુયા ભવંતિ’ ग्रामाऽऽकर यावत् सन्निवेशेषु-ग्रामाऽऽकर-नगर-निगम-राजधानी-खेट-कर्वट-पट्टन-मडम्ब-द्रोगमुखा-ऽऽश्रम-संबाध-सन्निवेशेषु प्राग्व्याख्यात-स्वरूपेषु मनुजा भवन्ति, ‘તં જહા’ तद्यथा—‘દગ્ધિયા’ दकद्वितीयाः—ओदनापेक्षया दकम्=उदकं द्वितीयं भोजने येषां ते दकद्वितीयाः, ‘દગતિયા’ दकतृतीयाः—ओदनसूपरूपद्रव्य-द्वयाऽपेक्षया दकम्=उदकं तृतीयं येषां ते दकतृतीयाः, ‘દગસત્તમા’ दकसप्तमाः—ओदनादीनि

न्तरो के देवलोक में देवता की पर्याय से उत्पन्न होती हैं । वहीं पर उनकी गति, वहीं पर उनकी स्थिति एवं वहीं पर उनका उपपात होता है । हे भदन्त ! वहाँ पर उनकी स्थिति कितनी है ? हे गौतम । (चउसट्ठिं वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता) वहां उनकी स्थिति ६४ हजार वर्ष की है ॥ सू० ११ ॥

‘સે જે ઇમે ગામાગર જાવ’ इत्यादि ।

(સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સન્નિવેસેસુ મણુયા ભવંતિ) ये जो इन ग्राम आकर आदि पूर्वोक्त स्थानों में इस प्रकार के मनुष्य होते हैं; (तं जहा) जैसे कि (दगधििया) जिनके आहार में अन्न एवं द्वितीय पानी ये दो ही द्रव्य हों, (दगतिया) अन्न—चावल, दाल एवं तृतीय पानी ये तीन द्रव्य हों, (दगसत्तमा) छह द्रव्य अन्न—चावल—दाल आदि हों

દેવલોકમાં દેવતાની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે. અહીં જ તેમની ગતિ, અહીં જ તેમની સ્થિતિ તેમજ અહીં જ તેમનો ઉપપાત થાય છે. હે ભદન્ત ! ત્યાં તેમની સ્થિતિ કેટલી હોય છે ? હે ગૌતમ ! (ચઉસટ્ઠિં વાસસહસ્સાઈં ઠિઈ પણ્ણત્તા) ત્યાં તેમની સ્થિતિ ૬૪ ચોસઠ હજાર વરસની છે. (સૂ૦ ૧૧)

‘સે જે ઇમે ગામાગર જાવ’ इत्यादि.

(સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સન્નિવેસેસુ મણુયા ભવંતિ) જેઓ આ ગામ, આકર આદિ ઉપર કહેલાં સ્થાનોમાં આ પ્રકારે મનુષ્ય થાય છે, (તં જહા) જેમકે (દગધિયા) જેના આહારમાં અન્ન તેમજ બીજું પાણી એ બે જ દ્રવ્ય—પદાર્થ હોય, (દગતિયા) અન્ન—ચોખા, દાળ, તેમજ ત્રીજું પાણી ત્રણ દ્રવ્ય હોય,

ગોયમા ગોવ્વડ્યા ગિહિધમ્મા ધમ્મચિંતગા અવિરુદ્ધ-વિરુદ્ધ-વુડ્ઢ-

ષટ્દ્રવ્યાણિ દકં ચ સપ્તમં ભોજને યેષાં તે દક્ષસપ્તમાઃ, ‘દગ્ધાક્કારસમા’ દકૈકાદશાઃ—ઓદ-
નાદીનિ દશદ્રવ્યાણિ દક્ષ્ણૈકાદશં પૂરગાય ભોજને યેષાં તે દકૈકાદશાઃ, ‘ગોયમા’ ગૌતમાઃ—
વૃષભં પુરસ્કૃત્ય તત્ક્રીડાં દર્શયિત્વા યેઽન્નં યાચન્તે, તેન ચ જીવનં નિર્વાહયન્તિ ત ઇત્યર્થઃ ।
‘ગોવ્વડ્યા’ ગોવ્રતિકાઃ—ગોવ્રતમસ્તિ યેષાં તે ગોવ્રતિકાઃ, તે હિ ગોષુ ગ્રામાન્નિર્ગચ્છન્તીષુ નિર્ગ-
ચ્છન્તિ, ચરન્તીષુ ચરન્તિ, પિબન્તીષુ પિબન્તિ, આયાન્તીષુ આયાન્તિ, શયાનાસુ ચ શેરતે, ઉક્તશ્ચ—

“ગાવીર્હિ સમં નિગ્ગમપવેસસયણાસણાં પકરેતિ ।

મુંજન્તિ જહા ગાવી તિરિક્કવાસં વિહારિતા ॥ ૧ ॥”

તથા સાતવાં પાની હો, (દગ્ધાક્કારસમા) દસ દ્રવ્ય દાલ ભાત આદિ અન્ય હો, એવં ૧૧ વાં
પાની હો, (ગોયમા) તથા જો બૈલ કો આગે કર કે જનતા કો ઉસકો ક્રીડા દિસ્વાકર ઉસસે
અન્ન કો યાચના કર અપનાજીવન નિર્વાહ કરને વાલે હો, (ગોવ્રતિકા) ^૧ગોવ્રતી હો, (ગિહિ-

(૧) ગોવ્રતી પુરુષ, જબ ગાયેં ગાંવ સે બાહર નિકલતી હૈં તબ અપને ઘર સે બાહર
નિકલતે હૈં, જબ વે ચરતી હૈં તબ વે ભોજન કરતે હૈં, જબ વે પાની પીતી હૈં તબ હી યે પાની
પીતે હૈં । જબ યે ઘર આતી હૈં તબ યેમી અપને ઘર આતે હૈં । ઓર જબ યે સોતી હૈં તબ યે
મી સો જાતે હૈં ।

“ગાવીર્હિ સમં નિગ્ગમપવેસસયણાસણાં પકરેતિ । મુંજન્તિ જહા ગાવી તિરિક્ક-
વાસં વિહારિતા ॥ ૧ ॥

(દગ્ધાક્કારસમા) છ દ્રવ્ય (અન્ન)—ચોખા દાળ આદિ હોય તથા સાતમું પાણી
હોય, (દગ્ધાક્કારસમા) દશ દ્રવ્ય—દાળ ભાત આદિ અન્ન હોય તેમજ ૧૧ મું
પાણી હોય, (ગોયમા) તથા જે બળદોને આગળ લાવીને લોકોને તેની ક્રીડા
દેખાડીને તેમની પાસેથી અન્ન માગી પોતાનું જીવન નિર્વાહ કરવાવાળા
હોય, (ગોવ્રતિકા) ^૧ગોવ્રતી હોય, (ગિહિધમ્મા) ગૃહસ્થ ધર્મને કલ્યાણકારક

(૧) ગોવ્રતી પુરુષ, જ્યારે ગાયો ગામથી બહાર નીકળે છે ત્યારે પોતાના
ઘેરથી બહાર નીકળે છે. જ્યારે તેઓ ચરે છે ત્યારે તે ભોજન કરે છે,
જ્યારે તેઓ પાણી પીએ છે ત્યારેજ તે પાણી પીએ છે. જ્યારે તેઓ
ઘેર આવે છે ત્યારે તે પણ ઘેર આવે છે, અને જ્યારે તેઓ સુવે છે
ત્યારે તે પણ સુઈ જાય છે.

“ગાવીર્હિ સમં નિગ્ગમપવેસસયણાસણાં પકરેતિ । મુંજન્તિ જહા ગાવી તિરિ-
ક્કવાસં વિહારિતા” ॥ ૧ ॥

सावग-प्पभित्तयो, तेसिं णं मणुयाणं णो कप्पंति इमाओ नव रस-
विगईओ आहारेत्तए, तं जहा—खीरं दहिं णवणीयं सप्पिं तेहं

छाया—गोभिः समं निर्गमप्रवेशशयनाऽऽशनादि प्रकुर्वन्ति ।

भुञ्जते यथा गावस्तिर्यग्वासं विभावयन्तः ॥ १ ॥ इति ।

‘गिहिधम्मा’ गृहिधर्मागः—‘गृहस्थधर्म एव श्रेयस्करः’- इति मत्वा दानादिधर्मापराधकाः
‘धम्मचिंतगा’ धर्मचिन्तकाः=धर्मशास्त्रपाठकाः, ‘अविरुद्ध-विरुद्ध-बुद्धसावग-प्पभि-
तयो’ अविरुद्ध-विरुद्ध वृद्धश्रावक-प्रभृतयः, अविरुद्धा वैनयिकाः, उक्तञ्च—

“अविरुद्धो विणयकरो, देवाईणं पराए भत्तीए ।

जह वेसियायणसुओ, एवं अन्ने वि नायव्वा ॥ १ ॥”

छाया—अविरुद्धो विनयकरो, देवादीनां परया भक्त्या ।

यथा वैश्यायनसुत, एवमन्येऽपि ज्ञातव्याः ॥ १ ॥ इति ।

विरुद्धाः=अक्रियावादिनः, आत्माद्यनभ्युपगमेन बाह्याभ्यन्तरविरुद्धत्वात्, वृद्ध-
श्रावकाः=ब्राह्मणाः, एते प्रभृतिरादिर्येषां ते तथा । ‘तेसिं णं मणुयाणं णो कप्पंति इमाओ
नव रसविगईओ आहारेत्तए’ तेषां खलु मनुजानां नो कल्पन्ते इमा नव रसविकृतीराहर्तुम्,
धम्मा) गृहस्थ धर्म को श्रेयस्कर मानकर दानादिक धर्म के आराधक हों, (धम्मचिंतगा)
धर्मशास्त्र के पाठक हों, (अविरुद्ध-विरुद्ध-बुद्धसावग-प्पभित्तयो) ^१अविरुद्ध-वैनयिक
हों, विरुद्ध-अक्रियावादी हों-आत्मादिक पदार्थों के नहीं मानने से बाह्य एवं आभ्यन्तर
क्रियाओं के विरोधी हों। वृद्धश्रावक हों-ब्राह्मण हों-इत्यादि । (तेसिं णं मणुयाणं नो कप्पंति
इमाओ नव रसविगईओ आहारेत्तए) इन समस्त जनों को ये नवरस विकृतियां (नौ वि-

(१) अविरुद्धो विणयकरो देवाईणं पराए भत्तीए । जह वेसियायणसुओ एवं अन्ने
वि नायव्वा ॥ १ ॥

भानीने दान-आदिक धर्मना आराधक होय, (धम्मचिंतगा) धर्मशास्त्रना पाठ
करनारा होय, (अविरुद्ध-विरुद्ध-बुद्धसावग-प्पभित्तयो) ^१अविरुद्ध-वैन-
यिक होय, विरुद्ध-अक्रियावादी होय-आत्मा-आदिक पदार्थोंने न मानवाथी
आह्य तेमज्ज अभ्यन्तर क्रियाओना विरोधी होय, वृद्धश्रावक होय-ब्राह्मण
होय-इत्यादि । (तेसिं णं मणुयाणं णो कप्पंति इमाओ नव रसविगईओ आहारे-
त्तए) आ समस्त होडेने ये नवरसविकृतियो (नौ विगयो) भावा योज्य

(१) अविरुद्धो विणयकरो देवाईणं पराए भत्तीए । जह वेसियायणसुओ एवं
अन्ने वि नायव्वा ॥ १ ॥

ફાણિયં મહું મજ્જં માંસં, ણો અણ્ણત્થ એકાએ સરિસવવિગઈએ,
તે ણં મણુયા અપ્પિચ્છા, તં ચેવ સવ્વં, ણવરં ચરુસીઈં વાસસહ-
સ્સાઈં ઠિઈં પણ્ણત્તા ॥ સૂ. ૧૨ ॥

તા ઇમા નવરસવિકૃતયઃ પ્રદર્શ્યન્તે—‘તં જહા’ તથા—‘સ્વીરં દહિં ણવણીયં સર્પિં તેહં
ફાણિયં મહું મજ્જં માંસં’ ક્ષીરં દધિ નવનીતં સર્પિઃ તૈલં ફાણિતં મધુ મધં માંસમ્-તત્ર-
નવનીતં=‘મક્ષન’ ઇતિ પ્રસિદ્ધં, ફાણિતં=ગુડઃ, અન્યાનિ પ્રસિદ્ધાનિ, આહર્તું ન કલ્પન્તે
ઇત્યન્વયઃ । ‘ણો અણ્ણત્થ એકાએ સરિસવવિગઈએ’ નો અન્યત્રૈકસ્યાઃ સાર્ષપવિકૃતેઃ-
સાર્ષપતૈલરૂપામેકાં વિકૃતિં વર્જયિત્વા અન્યા ઉક્તા વિકૃતયો ન કલ્પન્તેઽભ્યવહર્તુમિતિ શેષઃ ।
‘તે ણં મણુયા અપ્પિચ્છા’ તે સ્વલુ મનુજા અલ્પેચ્છાઃ, ‘સેસં તં ચેવ’ શેષં તદેવ=
અવશિષ્ટં સર્વં પૂર્વવદેવ બોધ્યમ્ । ‘ણવરં’ નવરં=વિશેષસ્તુ—‘ચરુસીઈં વાસસહસ્સાઈં ઠિઈં
પણ્ણત્તા’ ચતુરશીતિં વર્ષસહસ્રાણિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તા—વ્યન્તરેષુ દેવત્વેનોત્પન્નાનાં તેષાં તત્રાવસ્થાનં
ચતુરશીતિવર્ષસહસ્રાણિ યાવત્ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ગય) खाने योग्य नहीं हैं । वे विकृतियां ये हैं—(स्वीरं दहिं णवणीयं सर्पिं तेहं फाणियं
महुं मज्जं मांसं) क्षीर, दधि, नवनीत, सर्पि, तैल, फाणित, मधु, मध, एवं मांस । गुड का
नाम फाणित है । नवनीत नाम मक्खन का है । (णो अण्णत्थ एकाए सरिसवविगईए)
एक सरसों के तैलरूप विकृति का परिहार नहीं बतलाया गया है । नवरसरूप विकृति
का परिहार करने वाले व्यक्ति सरसों का तैल खा सकते हैं । (ते णं मणुया अप्पिच्छा,
तं चेव सव्वं, णवरं चरुसीईं वाससहस्साईं ठिई पणत्ता) ये मनुष्य अल्प-
इच्छावाले होते हैं । अवशिष्ट समस्त पूर्व की तरह यहां जान लेना चाहिये । विशेषता

નથી. તે વિકૃતિઓ આ છે—(સ્વીરં દહિં ણવણીયં સર્પિં તેહં ફાણિયં મહું
મજ્જં માંસં) ક્ષીર (દધિ), દહી, નવનીત, સર્પિ—(ધૃત), તેલ, ક્ષણિત,
મધ, મધ, તેમજ માંસ. ગોળનું નામ ક્ષણિત છે. નવનીત એટલે
માખણ. (ણો અણ્ણત્થ એકાએ સરિસવવિગઈએ) એક સરસવના તેલરૂપ વિકૃ-
તિના પરિહાર નથી બતાવ્યો. નવરસરૂપ વિકૃતિનો પરિહાર કરવાવાળા માણસ
સરસવનું તેલ ખાઈ શકે છે. (તે ણં મણુયા અપ્પિચ્છા, તં ચેવ સવ્વં, ણવરં
ચરુસીઈં વાસસહસ્સાઈં ઠિઈં પણ્ણત્તા) આ મનુષ્યો અલ્પ—ઈચ્છાવાળા હોય
છે. બાકીનું બધું પૂર્વ કહ્યા પ્રમાણે બાણી લેવું બોધ્યું. વિશેષમાં વિશેષતા

મૂલમ્—સે જે ઇમે ગંગાકૂલગા વાણપત્થા તાવસા ભવંતિ, તં જહા—હોત્તિયા પોત્તિયા કોત્તિયા જણ્ણઈ સડ્ઢઈ થાલઈ હુંબઉટ્ટા દંતુક્કલિયા ઉમ્મજ્જગા સંમજ્જગા નિમજ્જગા સંપક્કવાલગા

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ इत्यादि । ‘સે જે ઇમે’ અથ યે ઇમે ‘ગંગાકૂલગા’ ગંગા-કૂલકાઃ=ગંગાતટાશ્રિતાઃ ‘વાણપત્થા’ વાનપ્રસ્થાઃ=વાનપ્રસ્થાશ્રમવર્તિનઃ ‘તાવસા ભવંતિ’ તાપ-સા ભવન્તિ ‘તં જહા’ તથથા—‘હોત્તિયા’ હોત્રિકાઃ=આગ્નિહોત્રિકાઃ, ‘પોત્તિયા’ પોત્રિકાઃ=વસ્ત્રધારકાઃ, ‘કોત્તિયા’ કૌત્રિકાઃ=ભૂમિશાયિનઃ, ‘જણ્ણઈ’ યજ્ઞકિનઃ=યજ્ઞકારકાઃ, ‘સડ્ઢઈ’ શ્રાદ્ધકિનઃ=શ્રાદ્ધકારકાઃ, ‘થાલઈ’ સ્થાલકિનઃ=ભોજનપાત્રધારકાઃ, ‘હુંબઉટ્ટા’ કુણ્ડિકા-ધારિણાઃ, ‘હુંબઉટ્ટા’ इति देशीयः शब्दः, ‘દંતુક્કલિયા’ દન્તોદ્ધલિકાઃ=ફલભોજિનઃ, ‘ઉમ્મજ્જગા’ ઉન્મજ્જકાઃ—ઉન્મજ્જનમાત્રેણ=જલોપરિ તરણમાત્રેણ યે સ્નાન્તિ તે, ‘સમ્મજ્જગા’ સંમ-જ્જકાઃ—ઉન્મજ્જનસ્યૈવાऽસકૃત્ કરણેન યે સ્નાન્તિ તે, ‘નિમજ્જગા’ નિમજ્જકાઃ—સ્નાનાર્થ નિમગ્ના

સિર્ફ યહાં ઇતની હી હૈ કિ ઇસે જીવ જો વ્યન્તર દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં ડનકી વહાં સ્થિતિ ચૌરાસી હજાર વર્ષ કી બતલાઈ ગઈ હૈ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

‘સે જે ઇમે’ इत्यादि

(સે જે ઇમે) જો યે (ગંગાકૂલગા વાણપત્થા તાવસા ભવંતિ) ગંગા કે તટ પર રહનેવાલે વાનપ્રસ્થ તાપસ્ય હૈં; જૈસે (હોત્તિયા) આગ્નિહોત્રિક, (પોત્તિયા) પોત્રિક-વસ્ત્ર-ધારક, (કોત્તિયા) કૌત્રિક—ભૂમિશાયી—ભૂમિ પર સોને વાલે, (જણ્ણઈ) યજ્ઞકારક, (સડ્ઢઈ) શ્રાદ્ધકારક, (થાલઈ) ભોજનપાત્રધારક, (હુંબઉટ્ટા) કુણ્ડિકાધારી, (દંતુક્કલિયા) ફલભોજી, (ઉમ્મજ્જગા) ઇક બાર પાની મેં ડુબકી લગાકર સ્નાન કરને વાલે, (સમ્મજ્જગા) બાર બાર

માત્ર અહીં એટલીજ છે કે જીવ જે વ્યન્તર દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે તેની ત્યાં સ્થિતિ ચૌરાસી હજાર વરસની બતાવવામાં આવી છે. (સૂ. ૧૨)

‘સે જે ઇમે’ इत्यादि.

(સે જે ઇમે) જે આ (ગંગાકૂલગા વાણપત્થા તાવસા ભવંતિ) ગંગાના તટ પર વસનારા વાનપ્રસ્થ તાપસ્ય હોય છે, જેવા કે—(હોત્તિયા) આગ્નિહોત્રિક, (પોત્તિયા) પોત્રિક-વસ્ત્રધારક, (કોત્તિયા) કૌત્રિક—ભૂમિશાયી—ભૂમિ ઉપર સુવા-વાળા, (જણ્ણઈ) યજ્ઞકારક, (સડ્ઢઈ) શ્રાદ્ધકારક, (થાલઈ) ભોજનપાત્રધારક, (હુંબઉટ્ટા) કુણ્ડિકાધારી, (દંતુક્કલિયા) ફલભોજી, (ઉમ્મજ્જગા) એકવાર પાણીમાં ડુબકી મારીને સ્નાન કરવાવાળા, (સમ્મજ્જગા) વારંવાર ડુબકી મારીને

दक्खिणकूलगा उत्तरकूलगा संखधमगा कूलधमगा मिगलुद्धगा
हत्थितावसा उइंडगा दिसापोकखिणो वक्कवासिणो बिलवासिणो

एव ये क्षणं तिष्ठन्ति ते, 'संपक्खालगा' संप्रक्षालकाः—ये मृत्तिकादिघर्षणपूर्वकमङ्गानि प्रक्षालयन्ति ते संप्रक्षालकाः, 'दक्खिणकूलगा' दक्षिणकूलकाः—ये गङ्गायाः पूर्वाभिमुखगमनशीलाया दक्षिणतट एव वसन्ति ते, 'उत्तरकूलगा' उत्तरकूलकाः—उत्तरतट एव ये वसन्ति ते, 'संखधमगा' शङ्खध्मायकाः=शङ्खवादकाः—शङ्खं वादयित्वा ये भुञ्जते ते इत्यर्थः, 'कूलधमगा' कूलध्मायकाः—ये कूले स्थित्वा शब्दं कृत्वा भुञ्जते ते, 'मियलुद्धगा' मृगलुब्धकाः—व्याधवन्मृगमांसजीविनः, 'हत्थितावसा' हस्तितापसाः—ये हस्तिनं मारयित्वा तेनैव बहुकालं भोजनतो यापयन्ति ते, 'उइंडगा' उदण्डकाः—उत्=ऊर्ध्वं दण्डा येषां ते उदण्डकाः, दण्डमूर्ध्वं कृत्वा ये सञ्चरन्ति ते इत्यर्थः, 'दिसापोकखिणो' दिशा-प्रोक्षिणः=उदकेन दिशः प्रोक्ष्य ये फलपुष्पादि समुच्चिन्वन्ति ते, 'वक्कवासिणो' वल्क-वाससः—वल्कानि=तरुत्वच एव वासांसि येषां ते तथा, 'बिलवासिणो' बिलवासिनः=

डुबकी लगाकर स्नान करनेवाले, (निमज्जगा) पानी में कुछ देर तक डूबकर स्नान करने वाले, (संपक्खालगा) मिट्टी आदि से अंग को घर्षण कर स्नान करने वाले, (दक्खिण-कूलगा) गंगा के दक्षिण तट पर बसने वाले, (उत्तरकूलगा) गंगा के उत्तर तट पर बसने वाले, (संखधमगा) शंखों को बजाकर भोजन करने वाले, (कूलधमगा) नदी के तट पर बैठ कर शब्द कर के भोजन करने वाले, (मियलुद्धगा) व्याधोंकी तरह मृग के मांस को खाने वाले, (हत्थितावसा) हाथी को मारकर उसके मांस का भोजन करने वाले, (उइंडगा) दंडे को ऊंचा करके फिरने वाले, (दिसापोकखिणो) दिशाओं को जल से सिंचन करने वाले, (वक्कवासिणो) वृक्षों की छाल को पहिरने वाले, (बिलवासिणो) भूमिगृह में निवास

स्नान करवावा, (निमज्जगा) पाष्ठीमां थोड़ीवार सुधी डूबीने स्नान करवावा, (संपक्खालगा) भाटी आदि वडे अंगने घसीने स्नान करवा वा, (दक्खिण-कूलगा) गंगाना दक्षिण तट उपर वसवावा, (उत्तरकूलगा) गंगाना उत्तर तट उपर वसवावा, (संखधमगा) शंख वगाडीने भोजन करवावा, (कूल-धमगा) नदीना तट उपर जेसीने उण्ड करतां करतां (बिलतां बिलतां) भोजन करवावा, (मियलुद्धगा) शिकारीनी पेडे भृगनुं मांस खावावा, (हत्थितावसा) हाथीने भारीने तेनां मांसनुं भोजन करवावा, (उइंडगा) उंडाने उंचे करी करवावा, (दिसापोकखिणो) दिशाओमां पाष्ठी छांटवा वा, (वक्कवासिणो) वृक्षनी छाल पहरेवा वा, (बिलवासिणो) भूमिगृहमां

जलवासिणो रुक्खमूलिया अंबुभक्खिणो वाउभक्खिणो सेवालभ- क्खिणो मूलाहारा कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा बीयाहारा

भूमिगृहवासिनः, 'जलवासिणो' जलवासिनः—ये जले प्रविष्टा एव निवसन्ति ते, 'रुक्खमूलिया' वृक्षमूलकाः—तरुतले ये निवसन्ति ते, 'अंबुभक्खिणो' अम्बुभक्षिणः=जलाहारकारिणः, 'वाउभक्खिणो' वायुभक्षिणः=पवनाहाराः, 'सेवालभक्खिणो' शैवालभक्षिणः—शैवालं=जललतां भक्षन्ति तच्छीलाः—जलोपरिस्थितहरितवनस्पतिविशेषभोजिन इत्यर्थः, 'मूलाहारा' मूलाहाराः—मूलानि आहरन्ति तच्छीलाः, 'कंदाहारा' कन्दाऽऽहाराः=सूरणादिकन्दभक्षिणः, 'तयाहारा' त्वगाहाराः=निम्बादित्वग्भक्षिणः, 'पत्ताहारा' पत्राऽऽहाराः=बिल्वादिपत्रभक्षिणः, 'पुप्फाहारा' पुष्पाऽऽहाराः=कुन्दशोभाञ्जनादिपुष्पभक्षिणः, 'बीयाहारा' बीजाऽऽहाराः—कूष्माण्डादिबीजभोजिनः, 'परिसडिय-कंद-मूल-तय-पत्त-पुप्फ-फला-हारा' परिशदित-कन्द-मूल-त्वक्-पत्र-पुष्प-फला-ऽऽहाराः—परिशदितं=केनचिदानीतं स्वयं पतितं च परिशदितम्, तादृशं कन्दमूलत्वक्पत्रपुष्पफलम् आहरन्ति तच्छीलाः—केन चित् आनीतानि तरुभ्यः स्वयं पतितानि वा पत्रपुष्पफलान्येव

करने वाले, (जलवासिणो) जल में खड़े रहने वाले, (रुक्खमूलिया) वृक्ष के नीचे निवास करने वाले, (अंबुभक्खिणो) मात्र जल का आहार करने वाले, (वाउभक्खिणो) मात्र वायु का ही आहार करने वाले, (सेवालभक्खिणो) मात्र शैवालका ही आहार करने वाले, (मूलाहारा) मात्र मूल का ही आहार करने वाले, (कंदाहारा) सूरणादिक कंदों का आहार करने वाले, (तयाहारा) त्वक्-छालका आहार करने वाले, (पत्ताहारा) बिल्व आदि के पत्तों का आहार करने वाले, (पुप्फाहारा) पुष्पों का आहार करने वाले, (परिसडिय-कंद-मूल-तय-पत्त-पुप्फ-फला-हारा) तोड़ कर या स्वयं लाये हुए नहीं, किन्तु स्वयं

निवास करवावाणा, (जलवासिणो) जलभांज उभा रड़ेवावाणा, (रुक्खमूलिया) वृक्षनी नीचे निवास करवावाणा, (अंबुभक्खिणो) मात्र पाणीनो आहार करवावाणा, (वाउभक्खिणो) मात्र वायुनो आहार करवावाणा, (सेवालभक्खिणो) मात्र शैवालनो आहार करवावाणा, (मूलाहारा) मात्र मूलनो आहार करवावाणा, (कंदाहारा) सूरणु आदि कंदनो आहार करवावाणा, (तयाहारा) त्वक्-छालनो आहार करवावाणा, (पत्ताहारा) भीली आदि पाननो आहार करवावाणा, (पुप्फाहारा) पुष्पनो आहार करवावाणा, (बीयाहारा) कूष्मांड आदिनां भीजनो आहार करवावाणा, (परिसडिय-कंद-मूल-तय-पत्त-पुप्फ-फलाहारा) तोड़ीने अथवा पोते लावेले न डोय परंतु पोतानी भेजे पड़ी गयेलां अथवा डोईये

परिसह्यि—कंद—मूल—तय—पत्त—पुष्प—फलाहारा जला-भिसेय-
कठिण—गायभूया आयावणाहिं पंचगितावेहिं इंगालसोल्लियं
कंडुसोल्लियं पिव अप्पाणं करेमाणा बहूइं वासाइं परियागं
पाउणंति, पाउणिता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं जोइ-

भुञ्जते कन्दमूलत्वचामपि तथाविधानामेवोपयोगं कुर्वते ते, 'जलाभिसेय—कठिण—गाय-
भूया' जलाभिषेक—कठिन—गात्र—भूताः—जलाभिषेकेण कठिनं यद् गात्रं तत् प्राप्ता ये
ते तथा, 'आयावणाहिं' आतपनाभिः—प्रखररविकराऽऽसेवनाभिः, 'पंचगितावेहिं'
पञ्चाग्नितापैः—चतसृषु दिक्षु प्रज्वालितैश्चतुर्भिर्ग्नयिभिः उपरिभागे सूर्यकिरणपञ्चमैर्ये तापास्तैः;
'इंगालसोल्लियं' अङ्गारपक्वम्—प्राकृते—'पच्' धातोः स्थाने 'सोल्ल' आदेशो भवति।
अङ्गारैर्निर्धूमज्वलदनलपिण्डैरिव पक्वम्, 'कंडुसोल्लियं' कन्दुपक्वम्—कन्दुः=चणकादि-
भर्जनपात्रं, तत्र पक्वम्, 'अप्पाणं करेमाणा' आत्मानं=शरीरं कुर्वाणाः, 'बहूइं वासाइं
परियागं पाउणंति' बहूनि वर्षाणि पर्यायं=वानप्रस्थपर्यायं पालयन्ति, पालयित्वा,

गिरे हुए या किसी के द्वारा लाये गये कंद, मूल, त्वक्, पत्र, पुष्प एवं फलों का आहार
करने वाले, (जलाभिसेय—कठिण—गाय भूया) जलाभिषेक करने से जिनका शरीर कठिन
हो गया है ऐसे, (आयावणाहिं पंचगितावेहिं इंगालसोल्लियं कंडुसोल्लियं पिव
अप्पाणं करेमाणा) तथा आतापना—प्रखर सूर्य की किरणों के सेवन से, पंचाग्नि के
बीच बैठकर तापों के सहन करने से अंगार में पक्व हुए जैसे एवं भाड में भूँजे हुए जैसे
अपने शरीर को करने वाले ये वानप्रस्थ तापस जन (बहूइं वासाइं परियागं पाउणंति)
बहुत वर्ष पर्यन्त वानप्रस्थ तापस की पर्याय का पालन करते हुए (कालमासे कालं किच्चा)

दावी आपेदां कंद, मूल, छाल, पत्र, पुष्प, तेमज्झ इण्णे आहार करवावाणा,
(जलाभिसेय—कठिण—गाय—भूया) जलने आलिषेक करवाथी जेनां शरीर उठ्ठु थछ
गयां डोय जेवा, (आयावणाहिं पंचगितावेहिं इंगालसोल्लियं कंडुसोल्लियं पिव
अप्पाणं करेमाणा) तथा आतापना—प्रखर सूर्यनां किरणाना सेवनथी, पंचा-
ग्निना वच्चे जेसीने ताप सहन करवाथी, अंगारमां पकावेद डोय तेवां
तेमज्झ डांडलांमां भूँजेद जेवां पोताना शरीरने करी नाभववावाणा ते वान-
प्रस्थ तापसजन (तपस्वीज्जे) (बहूइं वासाइं परियागं पाउणंति) धण्णुं वरसे।
सुधी वानप्रस्थ तापसनी पर्यायनुं पालन करतां करतां (कालमासे कालं किच्चा)

સિણ્ણુ દેવેણુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ । પલિઓવમં વાસ-
સહસ્સમન્નહિયં ઠિઈ । આરાહગા ? ણો ઇણદ્દે સમદ્દે । સેસં
તં ચેવ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

મૂલમ્—સે જે ઇમે જાવ સન્નિવેસેણુ પવ્વહયા સમણા

‘કાલમાસે કાલં કિચ્છા’ કાલમાસે કાલં કૃત્વા ‘ઉક્કોસેણં જોહિણ્ણુ દેવેણુ
દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ’ ઉત્ક્રોશેન જ્યોતિષિકેણુ દેવેણુ દેવત્વેનોપપત્તારો ભવન્તિ;
‘પલિઓવમં વાસસયસહસ્સમન્નહિયં ઠિઈ’ પલ્યોપમં વર્ષશતસહસ્રામ્ન્યધિકં સ્થિતિઃ—
વર્ષશતસહસ્રાણિ અમ્ન્યધિકાણિ યત્ર તત્—વર્ષશતસહસ્રામ્ન્યધિકમ્=એકલક્ષવર્ષાધિકં પલ્યોપમં
સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તેતિ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—એતે જ્યોતિષિકા દેવા ‘આરાહગા?’ આરાધકાઃ=
પરલોકસ્થારાધકા ભવન્તિ કિમ્?, ઉત્તરમાહ—‘ણો ઇણદ્દે સમદ્દે’ નાડયમર્થઃ
સમર્થઃ=સંગતઃ, પરલોકસ્થારાધકા ન ભવન્તિ । અસ્યાર્થસ્તુ—અત્રૈવોત્તરાદ્દેઽષ્ટમે સૂત્રે
વ્યાખ્યાતઃ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ इत्यादि । ‘સે જે ઇમે’ અથ ય ઇમે ‘જાવ સન્નિવે-

મરણ કે અવસર મેં મૃત્યુ કે વશવર્તી હો, (ઉક્કોસેણં જોહિણ્ણુ દેવેણુ દેવત્તાણ ઉવ-
વત્તારો ભવંતિ) ઉત્કૃષ્ટ રૂપ સે જ્યોતિષી દેવો મેં દેવરૂપ સે ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । (પલિ-
ઓવમં વાસસયસહસ્સમન્નહિયં ઠિઈ) વહાં પર ઉનકી સ્થિતિ ૧ લાખ વર્ષ અધિક એક
પલ્યપ્રમાણ હોતી હૈ । ગૌતમ પૂછતે હૈં—હે નાથ । (આરાહગા) યે પરલોક કે આરાધક હોતે
હૈ યા નહીં ? ઉત્તર—(ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) યે પરલોક કે આરાધક નહીં હોતે હૈં ॥ સૂ. ૧૩ ॥

‘સે જે ઇમે જાવ’ इत्यादि

(સે જે ઇમે) જો યે (જાવ સન્નિવેસેણુ) ગામ નગર આદિ સ્થાનો મેં (પવ્વહયા

કાલ અવસરે કાલ કરીને (ઉક્કોસેણં જોહિણ્ણુ દેવેણુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ)
ઉત્કૃષ્ટરૂપથી જ્યોતિષી દેવોમાં દેવરૂપે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. (પલિઓવમં વાસ-
સયસહસ્સમન્નહિયં ઠિઈ) ત્યાં તેમની સ્થિતિ ૧ લાખ વરસ ઉપર એક પલ્ય—
પ્રમાણ હોય છે. ગૌતમ પૂછે છે કે હે નાથ ! (આરાહગા) તેઓ પરલોકના
આરાધક હોય છે કે નહિ ? ઉત્તર—(ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) તેઓ પરલોકના આરા-
ધક હોતા નથી. (સૂ. ૧૩)

“સે જે ઇમે જાવ” इत्यादि.

(સે જે ઇમે) જે (જાવ સન્નિવેસેણુ) ગામ નગર આદિ સ્થાનોમાં (પવ્વહયા

ભવંતિ, તં જહા-કંદપ્પિયા કુક્કુડયા મોહરિયા ગીયરડપ્પિયા
નચ્ચણસીલા, તે ણં એણં વિહારેણં વિહરમાણા બહૂં વાસાં
સામણ્ણપરિયાયં પાઉણંતિ, પાઉણિત્તા તસ્સ ઠાણસ્સ અણા-

સેસુ પવ્વડયા સમણા ભવંતિ ' યાવત્સન્નિવેશેષુ પ્રવ્રજિતાઃ શ્રમણાઃ ભવન્તિ, ' તં જહા ' તદ્વથા- ' કંદપ્પિયા ' કાન્દર્પિકાઃ-હાસ્યકારકા ભાણ્ડાદયઃ, ' કુક્કુડયા ' કૌકુચિકાઃ-કુકુચેન=કુત્સિતચેષ્ટયા ચરન્તીતિ કૌકુચિકાઃ યે ચ ભ્રૂનયનવદનકરચરણાઽઽદિભિર્ભાણ્ડા ઇવ તથા ચેષ્ટન્તે યથા સ્વયમહસન્ત એવ પરાન્ હાસયન્તિ તે । ' મોહરિયા ' મૌહરિકાઃ=વાચાલાઃ-નાનાવિધાઽસમ્બદ્ધભાષિણ इत्यर्थः । ' ગીય-રડ-પ્પિયા ' ગીત-રતિ-પ્રિયાઃ-ગીતેન યા રતિઃ=ક્રીડા સા પ્રિયા યેષાં તે તથા, ' નચ્ચણસીલા ' નર્તનશીલાઃ ' તે ણં એણં વિહારેણં વિહરમાણા ' તે સ્વલુ એતેન વિહારેણ વિહરન્તઃ=ઉક્તમાચરણ-માચરન્તઃ, ' બહૂં વાસાં સામણ્ણપરિયાયં પાઉણંતિ ' બહૂનિ વર્ષાણિ શ્રામણ્યપર્યાયં=ચારિત્રપર્યાયં પાલયન્તિ, ' પાઉણિત્તા ' પાલયિત્વા ' તસ્સ ઠાણસ્સ ' તસ્ય સ્થાનસ્ય=

સમણા) પ્રવ્રજિત શ્રમણ હોતે હૈ, (તં જહા) જૈસે-(કંદપ્પિયા કુક્કુડયા મોહરિયા ગીયર-ડપ્પિયા) કાન્દર્પિક-હાસ્યકારક ભાંડ આદિ, કૌકુચિક-ભ્રૂ, નયન, વદન, કર એવં ચરણ આદિકોં સે કુત્સિત ચેષ્ટાઈં કરકે ભાંડોં કી તરહ સ્વયં ન હૈંસકર દૂસરોં કો હૈંસાને વાલે, ગીતપૂર્વક ક્રીડા કો અધિક પસંદ કરને વાલે, (નચ્ચણસીલા) નૃત્ય કરને કે સ્વભાવ વાલે; યે સબ (એણં વિહારેણં વિહરમાણા બહૂં વાસાં સામણ્ણપરિયાયં પાઉણંતિ) અપને ૨ પદં કે અનુસાર ઉક્ત આચરણ કો આચરણ કરતે હુએ બહુત વર્ષોંતક શ્રમણપર્યાય કો પાલતે હૈ, (પાઉણિત્તા તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોડય-અપડિકંતા કાલમાસે કાલં

સમણા) પ્રવ્રજિત શ્રમણ થાય છે, (તં જહા) જેવાકે (કંદપ્પિયા કુક્કુડયા મોહ-રિયા ગીય-રડ-પ્પિયા) કાન્દર્પિક-હાસ્યકારક (ભવાયા) આદિ, કૌકુચિક-ભ્રૂ, નયન, વદન, કર તેમજ પગ આદિ વડે કુત્સિત ચેષ્ટાઓ કરી ભવૈયાની પેઠે સ્વયં (પોતે) ન હસતાં બીજને હસાવવાવાળા, મૌહરિક-અનેક પ્રકારના અસં-ખ્ય પ્રલાપ કરવાવાળા, ગીતયુક્ત ક્રીડાને વધારે પસંદ કરવાવાળા, (નચ્ચ-ણસીલા) નૃત્ય કરવાના સ્વભાવવાળા, આ બધા (એણં વિહારેણં વિહરમાણા બહૂં વાસાં સામણ્ણપરિયાયં પાઉણંતિ) પોત પોતાનાં ૫૬ પ્રમાણે ઉક્ત આચર-ણને આચરતાં આચરતાં ઘણાં વરસો સુધી શ્રમણ-પર્યાયને પાળે છે. (પાઉ-ણિત્તા તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોડય-અપડિકંતા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં

**સોહ્ય-અપડિકંતા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં સોહમ્મે
કપ્પે કંદપ્પિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ, તહિં તેસિં
ગઈ, સેસં તં ચેવ, ણવરં પલિઓવમં વાસસયસહસ્સમબ્બહિયં
ઠિઈ ॥ સૂ. ૧૪ ॥**

ઉક્તસ્ય પાપસ્થાનસ્ય, ‘અણાલોહ્યઅપડિકંતા’ અનાલોચિતાઽપ્રતિક્રાન્તા:—અનાલો-
ચિતાશ્ચ તે અપ્રતિક્રાન્તા:—ગુરુણાં સમીપે અકૃતાઽલોચનકા અતएव दोषादनिवृत्ता इत्यर्थः ।
‘કાલમાસે કાલં કિચ્ચા’ કાલમાસે કાલં કૃત્વા, ‘ઉક્કોસેણં સોહમ્મે કપ્પે
કંદપ્પિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ’ ઉત્કર્ષેણ સૌધર્મે કલ્પે કાન્દર્પિકેષુ=
હાસ્યક્રીડાકારકેષુ દેવેષુ દેવત્વેનોપપત્તારો ભવન્તિ, ‘તહિં તેસિં ગઈ’ તત્ર તેષાં ગતિઃ
‘સેસં તં ચેવ’ શેષં તદેવ=પૂર્વોક્તમેવ बोध्यम् । ‘પલિઓવમં વાસસયસહસ્સમબ્બહિયં
ઠિઈ’ પલ્લોપમં વર્ષશતસહસ્રાઽમ્યધિકં સ્થિતિઃ—લક્ષવર્ષાધિકં પલ્લોપમં સ્થિતિઃ ॥ સૂ. ૧૪ ॥

કિચ્ચા ઉક્કોસેણં સોહમ્મે કપ્પે કંદપ્પિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) પાલન
કરતે હુણ અંત સમય વે અપને ઉક્ત પાપસ્થાનોં કી ગુરુ કે સમીપ આલોચના નહીં કરકે
અન્ને નિવૃત્ત નહીં હોતે હૈં, ઇસલિણ જબ વે કાલ—અવસર મેં કાલ કરતે હૈં, તબ અધિક સે
અધિક સૌધર્મકલ્પ મેં જો હાસ્યક્રીડાકારક દેવ હૈં અન્ને દેવરૂપ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં ।
(તહિં તેસિં ગઈ સેસં તં ચેવ) વહીં પર અન્ની ગતિ આદિ બતલાઈ ગઈ હૈ । યહાં પર ઔર
મી જો કુછ વત્તલ્ય હૈ વહ ઇસી આગમકે ઉત્તરાર્ધ મેં આઠવેં સૂત્ર કી તરહ સમજ લેના
ચાહિયે । (પલિઓવમં વાસસયસહસ્સમબ્બહિયં ઠિઈ) અસ કલ્પ મેં અન્ની સ્થિતિ અસ
પર્યાય મેં ૧ લાસ વર્ષ અધિક ૧ પલ્લ કી જાનની ચાહિયે ॥ સૂ. ૧૪ ॥

સોહમ્મે કપ્પે કંદપ્પિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) પાલન કરતાં કરતાં
અંત સમયે તેઓ પોતાનાં ઉક્ત પાપસ્થાનોની શુરુની પાસે આલોચના ન
કરવાથી તેનાથી નિવૃત્ત થતા નથી. તેથી જ્યારે તેઓ કાલ અવસરે કાલ
કરે છે ત્યારે વધારેમાં વધારે સૌધર્મ કલ્પમાં જે હાસ્યક્રીડાકારક દેવ છે
તેમાં દેવરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે. (તહિં તેસિં ગઈ સેસં તં ચેવ) ત્યાં તેમની ગતિ
આદિ બતાવવામાં આવેલ છે. અહીં ખીન્નું પણ જે કાંઈ વર્ણન છે તે આ
અખમના ઉત્તરાર્ધના આઠમા સૂત્રની પેઠે સમજ લેવું જોઈએ. (પલિઓવમં
વાસસયસહસ્સમબ્બહિયં ઠિઈ) એ કલ્પમાં તેમની સ્થિતિ તે પર્યાયમાં ૧ લાખ
વર્ષ ઉપરાંત ૧ પલ્લની જણાવી જોઈએ. (સૂ. ૧૪)

મૂલમ્—સે જે ઇમે જાવ સન્નિવેસેસુ પરિવ્રાયગા
ભવંતિ, તં જહા—સંસ્વા જોગી કાવિલા મિહવ્વા હંસા પરમહંસા

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ ઇત્યાદિ । ‘સે જે ઇમે’ અથ ચ ઇમે=ઈદૃશાઃ ‘જાવ સન્નિવેસેસુ’ યાવત્ સન્નિવેશેષુ, ‘પરિવ્રાયગા ભવંતિ’ પરિવ્રાજકાઃ=સંન્યાસિનો ભવન્તિ, ‘તં જહા’ તથા—‘સંસ્વા જોગી કાવિલા મિહવ્વા હંસા પરમહંસા બહુઉદગા કુડિવ્વયા કણ્ઠપરિવ્રાયગા’ સાંખ્યાઃ યોગિનઃ કાપિલાઃ માર્ગવાઃ હંસાઃ પરમહંસા બહુદકાઃ કુટીવ્રતાઃ કૃષ્ણપરિવ્રાજકાઃ, તત્ર સાંખ્યાઃ=સાંખ્યમતાનુયાયિનઃ, યોગિનઃ—યોગશ્ચિત્તવૃત્તિનિરોધઃ સ્વોડ્સ્ત્યેષાં તે યોગિનઃ, ‘કાપિલં શાલ્લં સાંખ્યં દ્વિવિધમ્—સેશ્વરં નિરીશ્વરં ચ । તત્ર સેશ્વરં સાંખ્યં ભગવદવતારઃ કપિલઃ પ્રણીતવાન્, નિરીશ્વરં સાંખ્યં તુ અન્યવતારઃ કપિલ ઇતિ સાંખ્યશાસ્ત્રાનુયાયિનઃ’ ઇતિ વાચસ્પત્યાભિધાનકોશઃ । નિરીશ્વરસાંખ્યમતાનુયાયિન ઇતિ ભાવઃ । ‘મિહવ્વા’

‘સે જે ઇમે જાવ’ ઇત્યાદિ ।

(સે જે ઇમે) જો યે (જાવ સન્નિવેસેસુ) ગ્રામ આકર આદિસે લેકર સન્નિવેશ તક કે સ્થાનોં મેં (પરિવ્રાયગા) ^૧પરિવ્રાજક રહતે હૈં; જૈસે (સંસ્વા જોગી કાવિલા મિહવ્વા હંસા પરમહંસા) સાંખ્ય—સાંખ્યમતાનુયાયી સાધુ, યોગી—ચિત્તવૃત્તિ-નિરોધરૂપ યોગ કો પાલન કરને વાલે સાધુ, કાપિલ—નિરીશ્વર સાંખ્યમતાનુયાયી સાધુ,

(૧) સાંખ્ય દો પ્રકાર કે હૈં—૧ સેશ્વરસાંખ્ય, ૨ નિરીશ્વરસાંખ્ય । સેશ્વરસાંખ્ય-ઈશ્વર કો માનતા હૈ । નિરીશ્વર સાંખ્ય ઈશ્વર કો નહીં માનતા હૈ । વાચસ્પત્યાભિધાનકોષ મેં એસા લિખા હૈ કે ભગવદવતારસ્વરૂપ કપિલને ઈશ્વરવાદી સાંખ્ય કો, એવં અન્યવતારવિશિષ્ટ ઉસી કપિલને નિરીશ્વરવાદી સાંખ્ય કો રચા હૈ ।

“સે જે ઇમે જાવ” ઇત્યાદિ.

(સે જે ઇમે) જેઓ (જાવ સન્નિવેસેસુ) ગામ આકર આદિથી લઈને સન્નિવેશ સુધીનાં સ્થાનોમાં (પરિવ્રાયગા) પરિવ્રાજક રહે છે, જેવા કે (સંસ્વા જોગી કાવિલા મિહવ્વા હંસા પરમહંસા) સાંખ્ય—સાંખ્યમતાના અનુયાયી સાધુ, યોગી—ચિત્તવૃત્તિનિરોધરૂપ યોગનું પાલન કરવાવાળા સાધુ, કાપિલ—નિરીશ્વર ^૧સાંખ્યમતા અનુયાયી સાધુ, ભાર્ગવ—ભૃગુ ઋષિના વંશજ, (હંસા) હંસ

(૧) સાંખ્ય બે પ્રકારનાં છે. ૧ સેશ્વરસાંખ્ય- ૨ નિરીશ્વરસાંખ્ય. સેશ્વર-સાંખ્ય ઈશ્વરને માને છે. નિરીશ્વરસાંખ્ય ઈશ્વરને માનતા નથી. વાચસ્પત્ય-અભિધાન કોષમાં એમ લખ્યું છે કે ભગવાનના અવતારસ્વરૂપ કપિલે ઈશ્વરવાદી સાંખ્યને તેમજ અજિ-અવતાર-વિશિષ્ટ તેજ કપિલે નિરીશ્વરવાદી સાંખ્ય રચ્યું છે.

बहुउदगा कुडिव्वया कण्हपरिव्वायगा। तत्थ खलु इमे अट्ट
माहणपरिव्वायगा भवन्ति, तं जहा—

कण्णे य करकंडे य, अंबडे य परासरे ।

कण्हे दीवायणे चेव, देवगुत्ते य नारए ॥

भार्गवाः—भृगुलोकप्रसिद्ध ऋषिस्तद्वंशजाः भार्गवाः । ‘हंसा’—हंसाः=पर्वतकुहरपथ्याऽऽ-
श्रमाऽऽरामवासिनो भिक्षार्थं च ग्रामं प्रविशन्ति । ‘परमहंसा’ परमहंसाः, एतेषु नदी-
पुलिनसमागमप्रदेशेषु वसन्ति मरणसमये चीरकौपीनकुशांश्च त्यक्त्वा प्राणान् परित्यजन्ति ।
‘बहुउदगा’ बहूदकाः, इमे तु ग्राम एकरात्रिका, नगरे पञ्चरात्रिकाः प्राप्तभोगांश्च भुञ्जते
इति । ‘कुडिव्वया’ कुटीव्रताः=कुटीचराः, ते च कुट्यां वर्तमाना व्यपगतक्रोधलोभमोहा
अहङ्कारं वर्जयन्ति । ‘कण्हपरिव्वायगा’ कृष्णपरिव्राजकाः—परिव्राजकविशेषा एव, नारायण-
भक्तिका इति केचित् । ‘तत्थ खलु इमे अट्ट माहणपरिव्वायगा भवन्ति’ तत्र खलु
इमेऽष्टौ ब्राह्मणपरिव्राजका भवन्ति । ‘तं जहा’ तद्यथा—‘कण्णे य करकंडे य अंबडे य

भार्गव—भृगु ऋषि के वंशज (शिष्य), हंस—पर्वतकी गुफा, आश्रम, देवमन्दिर तथा बगीचा
आदि में निवास करने वाले साधु, जो सिर्फ भिक्षा के लिये ही ग्राम में आते हैं, (परमहंसा)
नदी के तट पर नग्नरूप में रहने वाले साधु, जो मरण काल में चीर, कौपीन और कुशा को
त्याग कर मरण करते हैं । (बहुउदगा) एक रात ग्राम में पांच राततक नगर में रहें तथा जो
मिले सो खावें ऐसे बहूदक साधु, (कुडिव्वया) कुटीव्रत—कुटीचर—क्रोध, लोभ एवं मोह
तथा अहंकार से रहित होकर पर्णकुटी में रहने वाले, (कण्हपरिव्वायगा) नारायण के भक्त
परिव्राजक—अथवा कृष्ण के भक्त परिव्राजक, (तत्थ) इनमें (अट्ट) आठ (इमे) ये (माहण-

પર્વતની શુદ્ધ, આશ્રમ તથા બગીચા આદિમાં નિવાસ કરવાવાળા સાધુ, જે
માત્ર ભિક્ષા માટે જ ગામમાં આવે છે. (પરમહંસા) નદીના તટ ઉપર નગ્ન-
રૂપમાં રહેનારા સાધુ, જે મરણકાલમાં ચીર, કૌપીન (લંગોટી) અને કુશાનો
ત્યાગ કરી મરણ પામે છે. (બહુઉદગા) એક રાત ગામમાં, પાંચ રાત સુધી
નગરમાં રહે તથા જે મળે તે ખાય એવા બહૂદક સાધુ, (કુડિવ્વયા) કુટી-
વ્રત—કુટીચર—ક્રોધ, લોભ તેમજ મોહ તથા અહંકારથી રહિત થઈને પર્ણ-
કુટીમાં રહેવાવાળા, (કણ્હપરિવ્વાયગા) નારાયણના ભક્ત પરિવ્રાજક, અથવા
કૃષ્ણના ભક્ત પરિવ્રાજક, (તત્થ) એમાં (અટ્ટ) આઠ (इमे) આ (माहणपरि-

તત્થ સ્વલુ ઇમે અટ્ટ સ્વત્તિયપરિવ્વાયયા ભવંતિ । તં જહા—
સીલહી સસિહારે નગ્ગઈ ભગ્ગઈતિ ય ॥

વિદેહે રાયા રામે વલેતિ ય અટ્ટમે ॥ સૂ. ૧૫ ॥

મૂલમ્—તે ણં પરિવ્વાયા રિઊવેય—યજુવ્વેય—સામવેય—

પરાસરે । કળ્હે દીવાયણે ચેવ દેવગુત્તે ય નારણ ॥ કર્ણશ્ચ કરકણ્ટશ્ચ અમ્બડશ્ચ
પરાશરઃ । કૃષ્ણો દ્વૈપાયનશ્ચૈવ દેવગુપ્તશ્ચ નારદઃ । એતેઽષ્ટૌ બ્રાહ્મણપરિવ્રાજકાઃ । ‘તત્થ સ્વલુ
ઈમે અટ્ટ સ્વત્તિયપરિવ્વાયયા ભવંતિ’ તત્ર સ્વલ્લિમેઽષ્ટૌ ક્ષત્રિયપરિવ્રાજકા ભવન્તિ, ‘તં જહા’
તથા—‘સીલહી સસિહારે નગ્ગઈ ભગ્ગઈતિ ય । વિદેહે રાયા રામેવલેતિ ય અટ્ટમે ।’
શીલધીઃ શશિધારો નગ્નકો ભગ્નક इति च । विदेहो राजा रामो बल इति च अष्टमः । एते
षोडश परिव्राजका लोकतो ज्ञेयाः ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ટીકા—‘તે ણં પરિવ્વાયા’ इत्यादि । ‘તે ણં પરિવ્વાયા’ તે સ્વલુ

પરિવ્વાયયા ભવંતિ) બ્રાહ્મણ કી જાતિ કે પરિવ્રાજક હોતે હૈ—(તં જહા) સો જૈસે
(કળ્ણે ય કરકંડે ય અંબડે ય પરાસરે । કળ્હે દીવાયણે ચેવ, દેવગુત્તે ય નારણ)
૧ કર્ણ, ૨ કરકંડ, ૩ અંબડ, ૪ પારાસર, ૫ કૃષ્ણ, ૬ દ્વૈપાયન, ૭ દેવગુપ્ત એવં નારદ ।
(તત્થ સ્વલુ ઇમે અટ્ટ સ્વત્તિયપરિવ્વાયયા) તથા યે આઠ ક્ષત્રિય જાતિ કે પરિવ્રાજક હોતે હૈ;
(તં જહા) સો જૈસે—(સીલહી સસિહારે ય નગ્ગઈ ભગ્ગઈ તિ ય । વિદેહે રાયા રામે વલે-
તિ ય અટ્ટમે) શીલધી, શશિધાર, નગ્નક, ભગ્નક, વિદેહ, રાજા રામ ઓર બલ ॥ સૂ. ૧૫ ॥

‘તેણં પરિવ્વાયા રિઊવેય’ इत्यादि ।

(તે ણં પરિવ્વાયા) યે ૧૬ સાધુ—પરિવ્રાજક—આઠ બ્રાહ્મણ જાતિ કે આઠ ક્ષત્રિય
વ્વાયયા ભવંતિ) બ્રાહ્મણની જાતિના પરિવ્રાજક થાય છે, (તં જહા) જેમકે
(કળ્ણે ય કરકંડે ય અંબડે ય પરાસરે । કળ્હે દીવાયણે ચેવ, દેવગુત્તે ય નારણ)
૧ કર્ણ, ૨ કરકંડ, ૩ અંબડ, ૪ પારાસર, ૫ કૃષ્ણ, ૬ દ્વૈપાયન, ૭ દેવ-
ગુપ્ત, તેમજ ૮ નારદ. (તત્થ સ્વલુ ઇમે અટ્ટ સ્વત્તિયપરિવ્વાયયા ભવંતિ) તથા
આ આઠ ક્ષત્રિયજાતિના પરિવ્રાજક હોય છે. (તં જહા) જેમ કે (સીલહી
સસિહારે નગ્ગઈ ભગ્ગઈતિ ય । વિદેહે રાયા રામે વલેતિ ય અટ્ટમે) ૧ શીલધી, ૨
શશિધાર, ૩ નગ્નક, ૪ ભગ્નક, ૫ વિદેહ, ૬ રાજા, ૭ રામ તથા ૮ બલ.
(સૂ. ૧૫)

‘તેણં પરિવ્વાયા રિઊવેય’ इत्यादि.

(તે ણં પરિવ્વાયા) આ ૧૬ સાધુ—પરિવ્રાજક આઠ બ્રાહ્મણ જાતિ અને

અહવ્વણવેય-ઇતિહાસપંચમાણં નિઘંટુછટ્ટાણં સંગોવંગાણં સર-
હસ્સાણં ચઉપ્પહં વેદાણં સારગા પારગા ધારગા સડંગવી સદ્ધિતંત-
વિસારયા, સંસ્વાણે સિક્કવાકપ્પે વાગરણે છંદે નિરુત્તે જોઈ-

પરિવાજકાઃ-પ્રાગ્વર્ણિતા અષ્ટૌ બ્રાહ્મણપરિવાજકાઃ, અષ્ટૌ ક્ષત્રિયપરિવાજકાઃ, તે કીદૃશાઃ ?
અત્રાઽઽહ-‘રિઉવેય-યજુવ્વેય-સામવેય-અહવ્વણવેય-ઇતિહાસપંચમાણં’ ઋગ્વેદ-
યજુર્વેદ-સામવેદાઽથર્વવેદેતિહાસપંચમાનામ્-ઋગ્વેદાદયશ્ચત્વારો વેદાઃ, તથા ઇતિહાસઃ પંચમો-
યેષાં તે ઇતિહાસપંચમાઃ તેષામ્, ‘નિઘંટુછટ્ટાણં’ નિઘંટુષ્ઠાનામ્-નિઘંટુર્નામ્ કોશઃ
ષ્ઠઃ=ષટ્સંખ્યાપૂરકો યેષાં તેષાં ‘સંગોવંગાણં’ સાઙ્ગોપાઙ્ગાનામ્-અઙ્ગૈરુપાઙ્ગૈઃ સહિતાનામ્,
‘સરહસ્સાણં’ સરહસ્સ્યાનાં=રહસ્યયુક્તાનામ્, ‘ચઉપ્પહં’ ચતુર્ણામ્, ‘વેદાણં’ વેદાનામ્,
‘સારગા’ સારકાઃ=અધ્યાપનદ્વારેણ પ્રવર્તકાઃ, અથવા સ્મારકાઃ=અન્યેષાં વિસ્મૃતસ્ય
સ્મારણાત્, ‘પારગા’ પારગાઃ=સંપૂર્ણવેદાર્થજ્ઞાનવન્તઃ, ‘ધારગા’ ધારકાઃ=ધારયિતું ક્ષમાઃ,
‘સડંગવી’ ષડઙ્ગવિદઃ, ‘સદ્ધિતંતવિસારયા’ ષષ્ઠિતન્ત્રવિશારદાઃ-ષષ્ઠિતન્ત્રં=કપિલસિદ્ધાન્તઃ-
તત્ર વિશારદાઃ=પણ્ડિતાઃ, ‘સંસ્વાણે’ સંસ્વાણે=ગણિતવિષયે. ‘સિક્કવાકપ્પે’ શિક્ષાકલ્પે-

જાતિ કે (રિઉવેય-યજુવ્વેય-સામવેય-અહવ્વણવેય-ઇતિહાસપંચમાણં નિઘંટુછટ્ટાણં
સંગોવંગાણં સરહસ્સાણં ચઉપ્પહં વેદાણં) ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ, અથર્વવેદ, ઇતિહાસ,
નિઘંટુ એન છહ શાસ્ત્રોં કે તથા એન શાસ્ત્રોં કે ઓર મી જિતને અંગ ઓર ઉપાંગ હૈં એને એવં
રહસ્ય સહિત ચાર વેદોં કે (સારગા) પાઠન દ્વારા પ્રચારક હોતે હૈં, યા દૂસરોં કે લિયે
વિસ્મૃત હુણ એને સ્મારક હોતે હૈં. (પારગા) સ્વયં મી એન સબ શાસ્ત્રોં કે જ્ઞાતા હોતે હૈં,
(ધારગા) એન સબકી ધારણા વાલે હોતે હૈં. ઇસલિયે યે (સડંગવી) ષડંગવેદવિત્ કહે જાતે
હૈં. યે (સદ્ધિતંતવિસારયા) ષષ્ઠિતન્ત્ર-કપિલશાસ્ત્ર કે મી વેત્તા હોતે હૈં, (સંસ્વાણે સિક્કવા-

આઠ ક્ષત્રિય જાતિના (રિઉવેય-યજુવ્વેય-સામવેય-અહવ્વણવેય-ઇતિહાસ-પંચમાણં
નિઘંટુછટ્ટાણં સંગોવંગાણં સરહસ્સાણં ચઉપ્પહં વેદાણં) ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ,
અથર્વવેદ, ઇતિહાસ, નિઘંટુ આ છ શાસ્ત્રોનાં, તથા આ શાસ્ત્રોનાં બીજાં
પણુ જેટલાં અંગ અને ઉપાંગ છે તેમનાં, રહસ્યસહિત ચાર વેદોનાં (સારગા)
પઠનદ્વારા પ્રચારક હોય છે, અથવા બીજાને વિસ્મરણ થયેલ હોય તો તેમને યાદ
કરાવનારા હોય છે, (પારગા) પોતે પણ તે શાસ્ત્રો બીજાનારા હોય છે, તેથી
તેઓ (ધારગા) આ બધાંની ધારણાવાલા હોય છે, તેથી તેઓ (સડંગવી) ષડંગ-
વેદવિત્ કહેવાય છે. તેઓ (સદ્ધિતંતવિસારયા) ષષ્ઠિતન્ત્ર-કપિલશાસ્ત્રના પણ

સામયણે અણ્ણેસુ ય બહૂસુ બંભણ્ણેસુ ય સત્થેસુ સુપરિણિટ્ઠિયા
યાવિ હોત્થા ॥ સૂ. ૧૬ ॥

મૂલમ્—તે ણં પરિવ્વાયગા દાણધમ્મં ચ સોયધમ્મં

અક્ષરસ્વરૂપનિરૂપકં શાસ્ત્રં શિક્ષા, તથાવિધસમાચારપ્રરૂપકં શાસ્ત્રમેવ કલ્પસ્તસ્મિન્,
'વાગરણે' વ્યાકરણે=શબ્દશાસ્ત્રે, 'છંદે' છંદસિ=વૃત્તબોધકે શાસ્ત્રે, 'નિરુત્તે' નિરુત્તે=
શબ્દાર્થબોધકે, 'જોડ્ઠસામયણે' જ્યોતિષામયણે જ્યોતિષશાસ્ત્રે, 'અણ્ણેસુ ય બહૂસુ
બંભણ્ણેસુ ય સત્થેસુ' અન્યેષુ ચ બહુષુ બ્રાહ્મણ્યેષુ ચ શાસ્ત્રેષુ—બ્રાહ્મણેભ્યો હિતાનિ
બ્રાહ્મણ્યાનિ—વેદવ્યાખ્યાનરૂપાણિ બ્રાહ્મણાદીનિ શાસ્ત્રાણિ તેષુ ચ બહુષુ શાસ્ત્રેષુ, 'સુપરિણિ-
ટ્ઠિયા યાવિ હોત્થા' સુપરિણિટ્ઠિતાઃ=પરિપક્વજ્ઞાનાશ્રાપિ ભવન્તિ ॥ સૂ. ૧૬ ॥

ટીકા—'તે ણં પરિવ્વાયા' इत्यादि। 'ते णं परिव्वाया' ते खलु
परिव्राजकाः, 'दाणधम्मं च सोयधम्मं च तित्थाभिसेयं च' दानधर्मं च शौचधर्मं च

કપ્પે વાગરણે છંદે નિરુત્તે જોડ્ઠસામયણે અણ્ણેસુ ય બહૂસુ બંભણ્ણેસુ ય સત્થેસુ
સુપરિણિટ્ઠિયા યાવિ હોત્થા) તથા ગણિત કે વિષય મેં, શિક્ષા—અક્ષર કે સ્વરૂપ કો નિરૂ-
પણ કરને વાલે શાસ્ત્ર મેં, કલ્પ મેં, વ્યાકરણ શાસ્ત્ર મેં, છંદ શાસ્ત્ર મેં, નિરુત્ત—શબ્દાર્થબોધક
શાસ્ત્ર મેં, એવં જ્યોતિષ શાસ્ત્ર મેં ઓર મી અનેક બહુત સે બ્રાહ્મણશાસ્ત્રોં મેં યે પરિપક્વ જ્ઞાનશાલી
હોતે હેં ॥ સૂ. ૧૬ ॥

‘તેણં પરિવ્વાયગા’ इत्यादि

(તે ણં પરિવ્વાયગા) યે સમસ્ત પરિવ્રાજક (દાણધમ્મં ચ સોયધમ્મં ચ) દાન-
ધર્મ કી, શૌચધર્મ કી, (તિત્થાભિસેયં ચ) તીર્થાભિષેક કી (આઘવેમાણા) જનતા મેં

બાણુનારા હોય છે. (સંઘાણે સિક્કાકપ્પે વાગરણે છંદે નિરુત્તે જોડ્ઠસામયણે અણ્ણેસુ ય
બહૂસુ બંભણ્ણેસુ ય સત્થેસુ સુપરિણિટ્ઠિયા યાવિ હોત્થા) તથા ગણિતના વિષ-
યમાં, શિક્ષા—અક્ષરના સ્વરૂપને નિરૂપણ કરવાવાળા શાસ્ત્રમાં, કલ્પમાં, વ્યાકરણ
શાસ્ત્રમાં, છંદ શાસ્ત્રમાં, નિરુક્ત—શબ્દાર્થબોધક શાસ્ત્રમાં, તેમજ જ્યોતિષ-
શાસ્ત્રમાં અને બીજાં પણ અનેક બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોમાં તેઓ જ્ઞાનશાલી હોય છે.
(સૂ. ૧૬)

‘તેણં પરિવ્વાયગા’ इत्यादि.

(તે ણં પરિવ્વાયગા) આ સમસ્ત પરિવ્રાજક (દાણધમ્મં ચ સોયધમ્મં ચ)
દાનધર્મની, શૌચધર્મની, (તિત્થાભિસેયં ચ) તીર્થઅભિષેકની (આઘવેમાણા)

ચ તિત્થાભિસેયં ચ આઘવેમાણા પળ્લવેમાણા પરૂવેમાણા વિહરંતિ । જં ણં અમ્હં કિંચિ અસુરૂં ભવઙ્ તં ણં ઉદણ્ણ ય મટ્ઠિયાણ ય પક્ખાલિયં સુરૂં ભવઙ્ । એવં સ્વલુ અમ્હે ચોક્ખા ચોક્ખાયારા સુરૂં સુઙ્ગસમાયારા ભવિત્તા અભિસેયજલપૂયપ્પાણો અવિગ્ધેણં સગ્ગં ગમિસ્સામો ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

તીર્થાભિષેકશ્ચ, ‘આઘવેમાણા’ આલ્યાન્તઃ=કથયન્તઃ, ‘પળ્લવેમાણા’ પ્રજ્ઞાપયન્તઃ=બોધયન્તઃ, ‘પરૂવેમાણા’ પ્રરૂપયન્તઃ=ઉપપત્તિભિઃ સ્વસિદ્ધાન્તં સ્થાપયન્તો વિહરન્તિ । ‘જં ણં અમ્હં કિંચિ અસુરૂં ભવઙ્’ યત્ સ્વસ્માકં કિંચિદશુચિ ભવતિ, ‘તં ણં ઉદણ્ણ ય મટ્ઠિયાણ ય પક્ખાલિયં સુરૂં ભવઙ્’ તત્સ્વલુ ઉદકેન ચ મૃત્તિકયા ચ પ્રક્ષાલિતં શુચિ ભવતિ=પવિત્રં ભવતિ, ‘એવં સ્વલુ અમ્હે’ એવં સ્વલુ વયં, ‘ચોક્ખા’ ચોક્ષાઃ=કૃત-પ્રમાર્જનાઃ—વિમલદેહનેપથ્યાઃ, ‘ચોક્ખાયારા’ ચોક્ષાચારાઃ=પવિત્રાચારાઃ, અતએવ—‘સુરૂં’

પુષ્ટિ કરતે હુણ (પળ્લવેમાણા) જનતા કો યે સવ વાતેં અચ્છી તરહ સમજાતે હુણ (પરૂવેમાણા વિહરંતિ) જનતા મેં ઇનકી યુક્તિપૂર્વક પ્રરૂપણા કરતે હુણ વિચરતે રહતે હેં । (જં ણં અમ્હં કિંચિ અસુરૂં ભવઙ્ તં ણં ઉદણ્ણ ય મટ્ઠિયાણ ય પક્ખાલિયં સુરૂં ભવઙ્) વે કહતે હેં—કિ જો કુછ મી હમ લોગોં કી દષ્ટિ મેં અપવિત્ર જ્ઞાત હોતા હે વહ પાની સે યા મિટ્ટી સે જવ પ્રક્ષાલિત હો જાતા હે તવ વહ શુચિ હો જાતા હે । (એવં સ્વલુ અમ્હે ચોક્ખા ચોક્ખાયારા સુરૂં સુઙ્ગસમાયારા ભવિત્તા અભિસેયજલપૂયપ્પાણો અવિગ્ધેણં સગ્ગં ગમિસ્સામો) ઇસ પ્રકાર હમ લોગ ચોખે હેં ઓર હમારા આચારવિચાર મી ચોખા—પવિત્ર હે ।

જનતામાં પુષ્ટિ (પ્રચાર) કરતા થકા, (પળ્લવેમાણા) જનતાને આ બધી વાતો સારી રીતે સમજાવતા થકા, (પરૂવેમાણા વિહરંતિ) જનતામાં તેમની યુક્તિ-પૂર્વક પ્રરૂપણા કરતા થકા વિચરતા રહે છે. (જં ણં અમ્હં કિંચિ અસુરૂં ભવઙ્ તં ણં ઉદણ્ણ ય મટ્ઠિયાણ ય પક્ખાલિયં સુરૂં ભવઙ્) તેઓ કહે છે કે જે કાંઈ પણ આપણી દષ્ટિમાં અપવિત્ર જણાય છે તે પાણીથી અથવા માટીથી જે ધોવામાં આવે તો તે શુચિ-પવિત્ર થઈ જાય છે. (એવં સ્વલુ અમ્હે ચોક્ખા ચોક્ખાયારા સુરૂં સુઙ્ગસમાયારા ભવિત્તા અભિસેયજલપૂયપ્પાણો અવિગ્ધેણં સગ્ગં ગમિસ્સામો) આ પ્રકારે આપણે ચોક્ષા છીએ, અને આપણા આચારવિચાર પણ ચોક્ષા—

મૂલમ્—તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઙ્ગ, અગડં વા તલાયં વા નંદં વા વાવિં વા પુક્કરિણિં વા દીહિયં વા ગુંજાલિયં

શુચયઃ=શુદ્ધાઃ ‘સુહસમાયારા’ શુચિસમાચારાઃ=સર્વથા શુદ્ધાચારાઃ ‘ભવિત્તા’ ભૂત્વા ‘અભિસેય-જલ-પૂય-પ્પાણો’ અભિષેક-જલ-પૂતાSS-ત્માનઃ-અભિમન્ત્રિતજલૈઃ પૂતાઃ=પવિત્રા આત્માનો યેષાંતે તથા, ‘અવિગ્ધેણં સગ્ગં ગમિસ્સામો’ અવિધ્નેન સ્વર્ગં ગમિષ્યામઃ-અસ્માકં સ્વર્ગગમનં નિર્વાધમસ્તિ-इत्यर्थः ॥ સૂ. ૧૭ ॥

ટીકા—‘તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં’ इत्यादि । ‘તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં’ તેષાં સ્વલુ પરિવ્રાજકાનામ્, ‘ણો કપ્પઙ્ગ અગડં વા તલાયં વા નંદં વા વાવિં વા પુક્કરિણિં વા દીહિયં વા ગુંજાલિયં વા સરં વા સાગરં વા ઓગાહિત્તણ્’ નો કલ્પતેSSવટં વા તડાગં વા નદીં વા વાપીં વા પુષ્કરિણીં વા દીર્ઘિકાં વા ગુંજાલિકાં વા સરો

હમ્ શુચિ હૈં ઓર હમારા આચાર-વિચાર મી શુચિ હૈં । ઇસ તરહ શુચિ હોકર, અભિમન્ત્રિત જલ સે સર્વથા આત્મા કો પવિત્ર કર હમ લોગ વિના કિસી વિગ્ન કે સ્વર્ગ મેં જાવેંગે-હમ લોગોં કો સ્વર્ગપ્રાપ્તિ નિર્વાધ હૈ ॥ સૂ. ૧૭ ॥

‘તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં’ इत्यादि ।

(તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં) ઇન પરિવ્રાજકોં કો (ણો કપ્પઙ્ગ) ઇતની વાતેં કલ્પિત નહીં હૈ-(અગડં વા તલાયં વા નંદં વા વાવિં વા પુક્કરિણિં વા દીહિયં વા ગુંજાલિયં વા સરં વા સાગરં વા ઓગાહિત્તણ્) કૂણ મેં પ્રવેશ કરના, તાલાવ મેં પ્રવેશ કરના, નદી મેં પ્રવેશ કરના, વાવડી મેં પ્રવેશ કરના, પુષ્કરિણી મેં પ્રવેશ કરના, દીર્ઘિકા મેં પ્રવેશ કરના, ગુંજાલિકા મેં પ્રવેશ કરના, સરોવર મેં પ્રવેશ કરના, ંવં સમુદ્ર મેં પ્રવેશ કરના ।

પવિત્ર છે. અમે શુચિ છીએ, અને અમારા આચારવિચાર પણ શુચિ છે. આવી રીતે શુચિ થઈને, અભિમન્ત્રિત જલથી સર્વથા આત્માને પવિત્ર કરીને અમે કોઈ જાતના વિધન વિના સ્વર્ગમાં જશું-અમને સ્વર્ગની પ્રાપ્તિ નિર્વાધ છે. (સ્વ. ૧૭)

‘તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં’ इत्यादि.

(તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં) આ પરિવ્રાજકોની (ણો કપ્પઙ્ગ) આટલી વાતો કલ્પિત નથી. (અગડં વા તલાયં વા નંદં વા વાવિં વા પુક્કરિણિં વા દીહિયં વા ગુંજાલિયં વા સરં વા સાગરં વા ઓગાહિત્તણ્) કૂવામાં પ્રવેશ કરવો, તળાવમાં પ્રવેશ કરવો, નદીમાં પ્રવેશ કરવો, વાવમાં પ્રવેશ કરવો, પુષ્કરિણીમાં પ્રવેશ કરવો, દીર્ઘિકામાં પ્રવેશ કરવો, ગુંજાલિકામાં પ્રવેશ કરવો, સરોવરમાં પ્રવેશ

વા સરં વા સાગરં વા ઓગાહિત્તણ, ગણ્ણત્થ અદ્ધાણગમણેણં ।
 ણો કપ્પઈ સગહં વા જાવ સંદમાણિયં વા દુરુહિત્તાણં ગચ્છિત્તણ ।

વા સાગરં વાઽવગાહિતુમ્, તત્રાવટઃ=કૂપઃ, બાપી=ચતુષ્કોણજલાશયવિશેષઃ, પુષ્કરિણી=વર્તુલાકારજલાશયઃ, દીર્ઘિકા=આયતાકારજલાશયઃ, ગુંજાલિકા=વક્રજલાશયઃ, સરઃ=કૃત્રિમપદ્મયુક્તજલાશયઃ, તેષુ પ્રવેષ્ટું સંન્યાસિનાં ન કલ્પતે, ‘ગણ્ણત્થ અદ્ધાણગમણેણં’ નાન્યત્રાધ્વગમનાત્=ન ઇતિ યો નિષેધઃ સોઽધ્વગમનાદન્યત્ર, માર્ગે જલાશયપ્રવેશો ન નિષિદ્ધ ઇત્યર્થઃ । ‘ણો કપ્પઈ સગહં વા જાવ સંદમાણિયં વા દુરુહિત્તા ણં ગચ્છિત્તણ’ નો કલ્પતે શકટં વા યાવત્ સ્યન્દમાનિકાં વાઽધિરુહ્ય સ્વલુ ગન્તુમ્—શકટમધિરુહ્ય ગન્તું ન કલ્પતે ઇત્યન્વયઃ, યાવચ્છબ્દાદિદં બોધ્યમ્—રથં વા યાનં વા યુગ્યં વા ગિલ્લિં વા=પુરુષદ્વયોક્તિસ-દોલ્લિકાં વા ‘શોલ્લિકાં વા’ યાનવિશેષં વા પ્રવહણં વા શિબિકામ્ વા ઇતિ, થિલ્લિવા=અશ્વ-દ્વયવાહ્યં યાનવિશેષં વા, તથા—સ્યન્દમાનિકાં=શિબિકાવિશેષં વા, આરુહ્ય ગન્તું તેષાં પરિ-

ચાર કોને વાલે જલાશય કા નામ બાવડી, ગોલ મુહવાલે જલાશય કા નામ પુષ્કરિણી, एवं વિસ્તૃત આકારવાલે જલાશય કા નામ દીર્ઘિકા હૈ, જો જલાશય ટેડા હોતા હૈ ઉસકા નામ ગુંજાલિકા હૈ । ઇન સબ મેં પ્રવેશ કરના સંન્યાસિયોં કે લિયે નિષિદ્ધ હૈ । હાં (ગણ્ણત્થ અદ્ધા-ગમણેણં) માર્ગ મેં ચલતે સમય યદિ કોઈ તાલાબ નદી આદિ જલાશય બીચ મેં પડ જાય તો અગત્યા ઉસમેં હોકર જાના નિષિદ્ધ નહીં હૈ । (ણો કપ્પઈ સગહં વા જાવ સંદમાણિયં વા દુરુહિત્તા ગચ્છિત્તણ) ઇસી તરહ શકટ-બૈલગાડી પર ચઢકર મી જાના નિષિદ્ધ હૈ । યહાં ‘યાવત્’ શબ્દ સે-“રથં વા યાનં વા યુગ્યં વા ગિલ્લિં વા” ઇત્યાદિ પાઠ ગૃહીત હુઆ હૈ । ઇસકા મતલબ ઇસ પ્રકાર હૈ—રથ પર, યાન પર, ઘોડે પર, દો પુરુષ જિસે લેકર ચલતે હૈં એસી

કરવો, તેમજ સમુદ્રમાં પ્રવેશ કરવો. ચારે કોરેથી ઘેરાયેલું જલાશય હોય તેનું નામ વાવ, ગોળ મુખવાળું જલાશય હોય તે પુષ્કરિણી, તેમજ વિસ્તૃત આકારવાળાં જલાશયને દીર્ઘિકા કહે છે. જે જલાશય વાંકાંચુંકાં હોય છે તેનું નામ ગુંજાલિકા છે. આ બધામાં પ્રવેશ કરવો એ સંન્યાસીઓને માટે નિષિદ્ધ છે. હા (ગણ્ણત્થ અદ્ધાણગમણેણં) માર્ગમાં ચાલતી વખતે જે કોઈ તળાવ નદી આદિ જલાશય વચ્ચેમાં આવી જાય તો અગત્યા તેમાં થઈને જવું નિષિદ્ધ નથી. (જો કપ્પઈ સગહં વા જાવ સંદમાણિયં વા દુરુહિત્તા ગચ્છિત્તણ) આવી જ રીતે શકટ-બળદનું ગાડું પર ચડીને પણ જવું નિષિદ્ધ છે. અહીં યાવત્ શબ્દથી “રથં વા યાનં વા યુગ્યં વા ગિલ્લિં વા” ઇત્યાદિ પાઠ શ્રવણ કર્યો છે. એની મતલબ એ છે કે—રથ પર, યાન પર, ઘોડા પર, બે માણસો જેને

તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ આસં વા હત્થિં વા ઉટ્ટં વા
ગોણિં વા મહિસં વા સ્વરં વા દુરુહિત્તા ણં ગમિત્તણ, ણણત્થ
બલાભિઓગેણં । તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ નડપેચ્છાઇ
વા જાવ માગહપેચ્છાઇ વા પેચ્છિત્તણ । તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો

વ્રાજકાનાં ન કલ્પતે इत्यन्वयः, ‘તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં નો કપ્પઇ આસં વા હત્થિં
વા ઉટ્ટં વા ગોણિં વા મહિસં વા સ્વરં વા દુરુહિત્તાણં ગમિત્તણ ણણત્થ બલાભિઓગેણં’
તેષાં સ્વલુ પરિવ્રાજકાનાં ન કલ્પતેऽશ્વં વા હસ્તિનં વોષ્ટ્રં વા ગાં વા મહિષં વા સ્વરં વાऽધિરુહ્ય સ્વલુ
ગન્તુમ્—નાન્યત્ર બલાઽભિયોગાત્—બલેન=બલાત્કારેણ યઃ અભિયોગઃ=નિયોજનં—બલવત્પારન્ત્ય-
નિયોગ इत्यर्थः, તસ્માત્, અન્યત્ર તેષાં પરિવ્રાજકાનાં ગન્તું ન કલ્પતે । ‘તેસિં ણં પરિ-
વ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ નડપેચ્છાઇ વા જાવ માગહપેચ્છાઇ વા પેચ્છિત્તણ’ તેષાં
સ્વલુ પરિવ્રાજકાનાં નો કલ્પતે નટપ્રેક્ષણમિતિ વા યાવન્માગધપ્રેક્ષણમિતિ વા પ્રેક્ષિતુમ્—

ડોલી પર, અથવા ઝોલ્લિકા-યાનવિશેષ પર, પ્રવહણ-પાલકી પર, બગ્ધી પર, એવં સ્યન્દમાનિકા-તામ-
જામ પર ચઢકર મી જાના સાધુઓં કેલિણ વર્જિત હૈ । (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ
આસં વા હત્થિં વા ઉટ્ટં વા, ગોણિં વા, મહિસં વા, સ્વરં વા દુરુહિત્તાણં ગમિત્તણ)
ઉન પરિવ્રાજકોં કો ઘોડે પર, હાથી પર, ઝૂંટ પર, બૈલ પર, મૈંસા પર, એવં ગધે પર ચઢ કર
મી ચલના વર્જિત હૈ, (ણણત્થ બલાભિઓગેણં) બલાભિયોગ કો છોડ કર । યદિ કોઈ
હઠ કરકે અર્થાત્ જબર્દસ્તી સે બૈઠાવે તો દોષ નહીં હૈ । (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો
કપ્પઇ નડપેચ્છાઇ વા જાવ માગહપેચ્છાઇ વા પેચ્છિત્તણ) ઉન પરિવ્રાજકોં કો યહ
મી ઉચિત નહીં હૈ, અર્થાત્ ઉનકે આચારકે અનુસાર યહ મી ઉન્હેં વર્જિત હૈ કિં વે

લઘને ઉપાડીને ચાલે છે એવી ડોલી પર અથવા ઝોલ્લિકા નામના યાનવિશેષ
પર, પ્રવહણ-પાલકી પર, બગ્ધી પર તેમજ સ્યન્દમાનિકા-તામજામ પર
ચઢીને પણ જુવું સાધુઓને માટે વર્જિત છે. (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ
આસં વા હત્થિં વા ઉટ્ટં વા ગોણિં વા મહિસં વા સ્વરં વા દુરુહિત્તાણં ગમિત્તણ)
તે પરિવ્રાજકોને ઘોડા પર, હાથી પર, ઝૂંટ પર, બળદ પર, ભેંસા પર, તેમજ
ગધેડા પર ચઢીને ચાલવું વર્જિત છે. (ણણત્થ બલાભિઓગેણં) બલાભિયોગ છોડીને,
જો કોઈ હઠ કરીને જબર્દસ્તીથી બેસાડી દે તો દોષ નથી. (તેસિં ણં પરિવ્વા-
યગાણં ણો કપ્પઇ નડપેચ્છાઇ વા જાવ માગહપેચ્છાઇ વા પેચ્છિત્તણ) તે પરિવ્રાજકોના

કપ્પઙ્ગ હરિયાણં લેસણયા વા ઘટ્ટણયા વા થંભણયા વા લૂસણયા
વા ઉપ્પાડણયા વા કરિત્તણ્ણ । તેસિં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઙ્ગ
ઇત્થિકહાઇ વા ભક્તકહાઇ વા દેસકહાઇ વા રાયકહાઇ વા ચોર-

નટાદીનાં ગીતનૃત્યાદિકાનિ પ્રેક્ષિતું તેષાં પરિવ્રાજકાનાં ન કલ્પતે । ‘ તેસિં પરિવ્વાયગાણં
ણો કપ્પઙ્ગ હરિયાણં લેસણયા વા ઘટ્ટણયા વા થંભણયા વા લૂસણયા વા ઉપ્પાડણયા
વા કરિત્તણ્ણ ’ તેષાં સ્વલુ પરિવ્રાજકાનાં નો કલ્પતે હરિતાનાં=વનસ્પતીનાં શ્લેષણતા વા ઘટ્ટનતા
વા સ્તમ્ભનતા વા લૂષણતા વોત્પાટનતા વા, શ્લેષણતાદૌ સર્વત્ર સ્વાર્થે તદ્, શ્લેષણાદિકમિત્યર્થઃ ।
શ્લેષણં=સ્પર્શઃ, ઘટ્ટનતા=ઘટ્ટનં-સંઘર્ષણમ્, સ્તમ્ભનતા=સ્તમ્ભનં-હસ્તાદિનાઽવરોધઃ, શાસ્ત્રા-
પલ્લવાદીનાં મોટનમ્ ઝૂર્વીકરણં ચ, લૂષણતા-લૂષણં=હસ્તાદિના પનકાદેઃ સંમાર્જનમ્,
‘ તેસિં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઙ્ગ ઇત્થિકહાઇ વા ભક્તકહાઇ વા દેસકહાઇ વા
રાયકહાઇ વા ચોરકહાઇ વા જણવયકહાઇ વા અણત્થદંડં કરિત્તણ્ણ ’ તેષાં પરિ-
વ્રાજકાનાં નો કલ્પતે—‘ સ્ત્રીકથા ’ ઇતિ વા, ‘ ભક્તકથા ’ ઇતિ વા ‘ દેશકથા ’ ઇતિ વા, ‘ રાજ-

નટોં કા એવં માગધ આદિકોં કા સ્વેલ-તમાસા નહોં દેસેં ઔર ઉનકે ગીત નૃત્ય આદિ નહોં
સુનેં । (હરિયાણં લેસણયા વા ઘટ્ટણયા વા થંભણયા વા લૂસણયા વા ઉપ્પાડણયા
વા કરિત્તણ્ણ) હરિતવનસ્પતિ કા સ્પર્શ કરના, સંઘર્ષણ કરના, હસ્તાદિક દ્વારા અવરોધ
કરના, શાસ્ત્રા એવં ઉનકે પત્તે આદિકોં કો ઝૂંચા કરના અથવા ઉન્હેં મોડના, હસ્ત આદિ કે
દ્વારા પનક આદિ કા સંમાર્જન કરના, યે સબ વાતેં મી (તેસિં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઙ્ગ)
ઉન પરિવ્રાજકોં કે લિયે કલ્પિત નહોં હૈ (ઇત્થિકહાઇ વા ભક્તકહાઇ વા દેસકહાઇ વા
રાયકહાઇ વા) સ્ત્રીકથા, ભક્તકથા, દેશકથા, રાજકથા (ચોરકહાઇ વા જણવયકહાઇ

આચાર અનુસાર એ પણ તેમને વર્ણિત છે, કે તેઓ નટોના તેમજ માગધ
આદિકોના ખેલ-તમાસા જુએ નહીં, અને તેમનાં ગીત નૃત્ય આદિ સાંભળે નહીં.
(હરિયાણં લેસણયા વા ઘટ્ટણયા વા થંભણયા વા લૂસણયા વા ઉપ્પાડણયા વા કરિત્તણ્ણ)
લીલી વનસ્પતિનો સ્પર્શ કરવો, સંઘર્ષણ કરવું, હાથેથી અવરોધ કરવો, શાસ્ત્ર
તેમજ તેનાં પાંદડાં આદિકોને ઊંચાં કરવાં, અથવા મરડવાં, હાથ આદિથી
લીલ-કૂલ આદિનું સંમાર્જન કરવું, આ બધી વાતો પણ (તેસિં પરિવ્વાયગાણં
ણો કપ્પઙ્ગ) તે પરિવ્રાજકો માટે કલ્પિત નથી. (ઇત્થિકહાઇ વા ભક્તકહાઇ વા
દેસકહાઇ વા રાયકહાઇ વા) સ્ત્રીકથા, ભક્તકથા, દેશકથા, રાજકથા, (ચોરક-
હાઇ વા જણવયકહાઇ વા) ચોરકથા તેમજ જનપદકથા (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં

કહાઈ વા જળવયકહાઈ વા અણત્થદંડં કરિત્તે. તેસિ ણં પરિ-
વ્વાયગાણં ણો કપ્પઈ અયપાયાણિ વા તત્તયપાયાણિ વા તંબ-
પાયાણિ વા જસદપાયાણિ વા સીસગપાયાણિ વા રુપ્પપાયાણિ
વા સુવર્ણપાયાણિ વા અણ્ણયરાણિ વા બહુમુલ્લાણિ ધારિત્તે,

કથા' इति वा, 'चोरकथा' इति वा, 'जनपदकथा' इति वाऽनर्थदण्डं कर्तुम्—स्त्यादीनां
कथाः कर्तुं न कल्पन्ते, तथा—अनर्थदण्डमपि कर्तुं न कल्पते । 'तेसिं णं परिव्वायगाणं
णो कप्पइ अयपायाणि वा ततयपायाणि वा तंबपायाणि वा जसदपायाणि वा
सीसगपायाणि वा रूपपायाणि वा सुवर्णपायाणि वा अण्णयराणि वा बहुमुल्लाणि
धारित्तए' तेषां खलु परिव्राजकानां नो कल्पन्ते—अयःपात्राणि वा त्रपुकपात्राणि वा ताम्र-
पात्राणि वा जयःदपात्राणि वा सीसकपात्राणि वा रूप्यपात्राणि वा सुवर्णपात्राणि वा अन्यतराणि
वा बहुमूल्यानि धारयितुम्, तत्र—अयःपात्राणि=लोहपात्राणि, त्रपुकपात्राणि—त्रज्वेव त्रपुकं
'रांगा' इति ख्यातं तस्य पात्राणि, अन्यत् सर्वं सुगमम् । 'णण्णत्थ अलाउपाएण वा

વા) ચોરકથા એવં જનપદકથા, (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઈ) એ કથાએં મો
उन परिव्राजकों के लिये कल्पित नहीं है; कारण कि इन कथाओं के करने से (अणत्थदंडं
करित्तए) अनर्थदंड का बंध होता है—ये कथाएँ अनर्थदंड करानेवाली हैं । (अयपायाणि
वा ततयपायाणि वा तंबपायाणि वा जसदपायाणि वा सीसगपायाणि वा रूपपा-
याणि वा सुवर्णपायाणि वा अण्णयराणि वा बहुमुल्लाणि धारित्तए तेसिं परिव्वा-
यगाणं णो कप्पइ) लोह के पात्र, त्रपु के पात्र, तांबे के पात्र, जसद के पात्र, सीसे के
पात्र, चांदी के पात्र, सुवर्ण के पात्र, तथा और भी धातु के बहुमूल्य पात्र उन साधुओं को

જો કપ્પઈ) આ કથાઓ પછુ તે પરિવ્રાજકોને માટે કલ્પિત નથી, કારણ કે
એ કથાઓ કરવાથી (અણત્થદંડં કરિત્તે) અનર્થદંડનો બંધ થાય છે—આ
કથાઓ અનર્થદંડ કરાવવાવાળી છે. (અયપાયાણિ વા તત્તયપાયાણિ વા તંબ-
પાયાણિ વા જસદપાયાણિ વા સીસગપાયાણિ વા રુપ્પપાયાણિ વા સુવર્ણપાયાણિ વા
અણ્ણયરાણિ વા બહુમુલ્લાણિ ધારિત્તે તેસિં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઈ) લોહાનું પાત્ર
ત્રપુ (કાંસા)નું પાત્ર, તાંબાનું પાત્ર, જસતનું પાત્ર, સીસાનું પાત્ર, ચાંદીનું
પાત્ર, સુવર્ણનું પાત્ર, તથા બીજી ધાતુનાં બહુમૂલ્ય પાત્ર રાખવાં એ સાધુ-
ઓને પોતાના આહાર વિહાર માટે કલ્પિત નથી. (ણ્ણત્થ અલાઉપાએણ વા

ગણ્ણત્થ અલાહપાણ વા દારુપાણ વા મદ્દિયાપાણ વા ।
તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ અયબંધનાણિ જાવ બહુમુલ્લાણિ
ધારિત્તે । તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ ણાણાવિહવણ્ણરાગ-
રત્તાઇં વત્થાઇં ધારિત્તે, ગણ્ણત્થ ઇગાણ ધાહરત્તાણ । તેસિં ણં પરિ-

દારુપાણ વા મદ્દિયાપાણ વા ' નાઽન્યત્રાઽલાહપાત્રાદ્ વા દારુપાત્રાદ્વા મૃત્તિકાપાત્રાદ્વા,
'ન'ઈતિ પૂર્વોક્તો નિષેધઃ—તુમ્બીપાત્રાત્ કાષ્ઠનિર્મિતપાત્રાત્, મૃત્તિકાપાત્રાદ્વાઽન્યત્ર । તુમ્બી—કાષ્ઠ—
મૃત્તિકાપાત્રાણિ તુ સંન્યાસિનાં કલ્પન્તે ઇતિ ભાવઃ । ' તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ
અયબંધનાણિ વા જાવ બહુમુલ્લાણિ ધારિત્તે ' તેષાં સ્વલ્પ પરિવ્રાજકાનામ્ અયોબન્ધનાનિ=
લૌહબન્ધનયુક્તાનિ પાત્રાણિ, યાવચ્છબ્દાત્—ત્રપુતામ્રાદિબન્ધનયુક્તાનિ પાત્રાણિ, તથા બહુ-
મૂલ્યાનિ અન્યાન્યપિ બન્ધનાનિ ધારયિતું તેષાં સંન્યાસિનાં ન કલ્પન્તે । ' તેસિં ણં પરિવ્વાય-
ગાણં ણો કપ્પઇ ણાણાવિહ-વણ્ણ-રાગ-રત્તાઇં વત્થાઇં ધારિત્તે ' તેષાં સ્વલ્પ પરિવ્રાજકાનાં

અપને આહાર—વિહાર આદિ કે લિયે રસ્થના કલ્પિત નહીં હૈ । (ગણ્ણત્થ અલાહપાણ વા
મદ્દિયાપાણ વા) તુંબડી, કાષ્ઠનિર્મિત કમળડલ, અથવા મિટ્ટીકા પાત્ર, યે હી ઉન્હેં રસ્થના
કલ્પતા હૈ । (અયબંધનાણિ જાવ બહુમુલ્લાણિ ધારિત્તે તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો
કપ્પઇ) તથા—લૌહ કે બંધન સે યુક્ત પાત્ર, ત્રપુ કે બંધન સે યુક્ત પાત્ર, તાંબે કે બંધન સે
યુક્ત પાત્ર, જસદ કે બંધન સે યુક્ત પાત્ર, સીસે કે બંધન સે યુક્ત પાત્ર, ચાંદી કે બંધન સે
યુક્ત પાત્ર, સુવર્ણ કે બંધન સે યુક્ત પાત્ર તથા ઔર મી બહુમૂલ્ય બંધન સે યુક્ત પાત્ર ઇન
સાધુઓં કો કલ્પિત નહીં વતલાયા ગયા હૈ । (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ ણાણા-
વિહ-વણ્ણ-રાગ-રત્તાઇં વત્થાઇં ધારિત્તે ગણ્ણત્થ ઇગાણ ધાહરત્તાણ) અનેક પ્રકાર

દારુપાણ વા મદ્દિયાપાણ વા) તુંબડી, લાકડાનું અનેકું કમંડળ અથવા
માટીનું પાત્ર એજ તેઓએ રાખવું કલ્પિત છે. (અયબંધનાણિ જાવ બહુમુલ્લાણિ
ધારિત્તે તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પઇ) તથા લોહના અંધનથી યુક્ત પાત્ર,
ત્રપુના અંધનથી યુક્ત પાત્ર, તાંબાના અંધનથી યુક્ત પાત્ર, જસતના અંધનથી
યુક્ત પાત્ર, સીસાના અંધનથી યુક્ત પાત્ર, ચાંદીના અંધનથી યુક્ત પાત્ર,
સુવર્ણના અંધનથી યુક્ત પાત્ર તથા બીજાં પણ બહુમૂલ્ય (કીમતી) ધાતુનાં અંધનથી
યુક્ત પાત્ર સાધુઓને માટે કલ્પિત બતાવેલ નથી. (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં
ણો કપ્પઇ ણાણાવિહ-વણ્ણરાગ-રત્તાઇં વત્થાઇં ધારિત્તે, ગણ્ણત્થ ઇગાણ ધાહરત્તાણ)

व्वायगाणं णो कप्पइ हारं वा अद्धहारं वा एगावलिं वा मुत्तावलिं
वा कणगावलिं रयणावलिं वा मुरविं वा कंठमुरविं वा पालंबं वा
तिसरयं वा कडिसुत्तं वा दसमुद्दियाणंतगं वा कडयाणि वा

नो कल्पन्ते नानाविध-वर्ण-राग-रक्तानि वस्त्राणि धारयितुम्, 'णण्णत्थ एगाए धाउरत्ताए' नान्यत्रैकस्माद्भातुरक्तात्-केवलं गैरिकादिधातुरक्तं कल्पते इत्यर्थः, । 'तेसिं णं परिव्वाय-गाणं णो कप्पइ हारं वा अद्धहारं वा एगावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा मुरविं वा कंठमुरविं वा पालंबं वा तिसरयं वा कडिसुत्तं वा दस-मुद्दियाणंतगं वा कडयाणि वा तुडियाणि वा अंगयाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा मउडं वा चूलामणिं वा पिणद्धित्तए' तेषां खलु परिव्राजकानां नो कल्पन्ते-हारं वा अद्धहारं वा, एकावलिं वा, मुत्तावलीं वा, कनकावलीं वा, रत्नावलीं वा, मुरविं=कर्ण-भूषणविशेषं वा, कण्ठमुरविं=कण्ठभूषणविशेषं वा, प्रालम्बं वा, तिसरकं वा, कटिसूत्रं वा, दशमुद्रिकानन्तकं वा, रूढोऽयं शब्दस्तेन-हस्ताङ्गुलीमुद्रिकादशकमित्यर्थः; कटकानि वा,

के रंगों से रंजित वस्त्र भी इन्हें धारण करना उचित नहीं बतलाया गया है। सिर्फ एक गैरिक रंग से रंगा हुआ वस्त्र ही इन्हें धारण करना बतलाया है। (तेसिं णं परिव्वाय-गाणं णो कप्पइ हारं वा अद्धहारं वा एगावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा मुरविं वा कंठमुरविं वा तिसरयं वा कडिसुत्तं वा दसमुद्दियाणंतगं वा कडयाणि वा तुडियाणि वा अंगयाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा मउडं वा चूडामणिं वा पिणद्धित्तए, णण्णत्थ एगेणं तंबिएणं पवित्तएणं) हार, अद्ध-हार, एकावलि, मुत्तावलि, कनकावलि, रत्नावलि, मुरवी, कण्ठमुरवी. (ये कंठ के आभ-

अनेक प्रकारना रंगथी रंगायेलां वस्त्र पणु तेओओ धारणु करवां उचित नथी. मात्र ओक गेइना रंगथी रंगायेला वस्त्र न तेमणे धारणु करवानुं भताव्युं छे. (तेसिं णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ हारं वा अद्धहारं वा एगावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा मुरविं वा कंठमुरविं वा पालंबं वा तिस-रयं वा कडिसुत्तं वा दसमुद्दियाणंतगं वा कडयाणि वा तुडियाणि वा अंगयाणि वा केऊ-राणि वा कुंडलाणि वा मउडं वा चूडामणिं वा पिणद्धित्तए, णण्णत्थ एगेणं तंबिएणं पवि-त्तएणं) हार, अर्धहार, ओकावलि, मुक्तावलि, कनकावलि, रत्नावलि, मुरवी, कंठमुरवी, (आ अथा कंठना आभरणे छे) प्रालंब, त्रय सरने।

તુડિયાણિ વા અંગયાણિ વા કેઝરાણિ વા કુંડલાણિ વા મુઝડં
વા ચૂલામણિ વા પિણદ્ધિત્તણ, ણણત્થ ઇમેણં તંવિણં પવિત્તણં ।
તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પહ ગંથિમવેદિમપૂરિમસંઘાહમે
ચરુવિવહે મલ્હે ધારિત્તણ, ણણત્થ ઇમેણં કણ્ણપૂરેણં । તેસિં ણં

ત્રુટિકાણિ વા, અઙ્ગદાણિ=કેયૂરાણ વા, કુણ્ડાણિ વા, મુકુટં વા, ચૂડામણિ વા પિનદ્ધુમ્;
હારાદીણિ તેષાં પરિવ્રાજકાનાં ન કલ્પન્તે પરિધાતુમિત્યર્થઃ । ‘ ણણત્થ ઇમેણં તંવિણં
પવિત્તણં ’ નાન્યત્રૈકસ્માત્તામ્રમયાત્પવિત્રકાત્—તામ્રમયમઙ્ગુલાયકં પવિત્રકનામકં તુ તેષાં
પરિધર્તુ કલ્પત્તિત્તિ ભાવઃ । ‘ તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પહ ગંથિમ—વેદિમ—
પૂરિમ—સંઘાહમે ચરુવિવહે મલ્હે ધારિત્તણ ’ તેષાં સ્વલ્પ પરિવ્રાજકાનાં નો કલ્પન્તે પ્રન્થિમ—
વેદિમ—પૂરિમ—સઙ્ગાતિમાણિ ચતુર્વિધાણિ માલ્યાણિ ધારયિતુમ્—પ્રન્થેન=પ્રન્થનેન નિર્વૃત્તં=નિર્મિતં
માલારૂપં પ્રન્થિમમ્; વેદિન=વેદિનેન નિર્વૃત્તં વેદિમમ્, પૂરિમં=પૂરણેન નિર્વૃત્તમ્, સંઘાતેન
નિર્વૃત્તં સઙ્ગાતિમમ્; એતાણિ ચતુર્વિધાણિ માલ્યાણિ ધારયિતું ન કલ્પન્તે इत्यર્થઃ; ‘ ણણત્થ
ઈમેણં કણ્ણપૂરેણં ’ નાન્યત્રૈકસ્માત્કર્ણપૂરકાત્—એકં પુષ્પમયં કર્ણપૂરં તેષાં ન નિષિદ્ધમિતિ ભાવઃ ।

ણ વિશેષ હૈં), પ્રાલંબ, ત્રીન-લરકા હાર, કટિસૂત્ર, દશમુદ્રિકાઈ, કટક, ત્રુટિક—બાજૂબંધ,
અંગદ, કેયૂર, કુંડલ, મુકુટ, ચૂડામણિ, ઇનકા પહિરના મી ઇન સાધુઓ કો કલ્પતા નહીં
હૈ । એક તાંબે કી અંગૂઠી હી ઇન્હેં હાથ કી અંગુલી મેં ધારણ કરના કલ્પતા હૈ । (તેસિં
ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પહ ગંથિમ—વેદિમ—પૂરિમ—સંઘાહમે ચરુવિવહે મલ્હે
ધારિત્તણ, ણણત્થ ઇમેણં કણ્ણપૂરેણં) ઇન પરિવ્રાજકો કો ગૂંથ કર બનાઈ ગઈ, વેદિત
કર બનાઈ ગઈ, એવં પરસ્પર દો પૂલો કો સંયુક્ત કરકે બનાઈ ગઈ, એસી ચાર પ્રકાર કી
માલાઓ કા પહિરના મી કલ્પતા નહીં હૈ । એક પુષ્પો કા રચિત કર્ણપૂલ હી કાન મેં

હાર, કટિસૂત્ર, દશ મુદ્રિકાઓ (વીંટી), કટક, ત્રુટિક—બાજૂબંધ, અંગદ કેયૂર,
કુંડલ, મુકુટ, ચૂડામણિ, એ પહિરવું પણ આ સાધુઓને કલ્પતું નથી. એક
તાંબાની અંગૂઠી જ તેણે હાથની આંગળીમાં ધારણ કરવી કલ્પે છે. (તેસિં ણં
પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પહ—ગંથિમ—વેદિમ—પૂરિમ—સંઘાહમે ચરુવિવહે મલ્હે ધારિત્તણ
ણણત્થ ઇમેણં કણ્ણપૂરેણં) આ પરિવ્રાજકોને ગૂંથીને બનાવેલી, વેદિત કરીને બના-
વેલી, સંઘા ઉપર પૂરીને બનાવેલી તેમજ પરસ્પર બે પુષ્પોને બેડીને બના-
વેલી એવી ચાર પ્રકારની માલાઓ પહેરવી કલ્પતી નથી. સિદ્ધ પુષ્પોનું એક
કર્ણફૂલ જ તેમને કલ્પનીય છે. (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં ણો કપ્પહ અઙ્ગુલણ વા

પરિવ્રાયગાણં ણો કપ્પડ્ અગલુણ્ણ વા ચંદણેણ વા કુંકુમેણ વા
ગાયં અણુલિપિત્તણ્ણ, ણણ્ણત્થ એક્કાણ્ણ ગંગામટ્ઠિયાણ્ણ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

મૂલમ્—તેસિં ણં પરિવ્રાયગાણં કપ્પડ્ માગહણ્ણ પત્થણ્ણ

‘તેસિં ણં પરિવ્રાયગાણં ણો કપ્પડ્—અગલુણ્ણ વા ચંદણેણ વા કુંકુમેણ વા ગાયં
અણુલિપિત્તણ્ણ’ તેષાં સ્વલુ પરિવ્રાજકાનાં નો કલ્પતેઽગરુણા વા ચન્દનેન વા કુંકુમેન વા
ગાત્રમનુલેપ્તુમ્—સુગન્ધિતદ્રવ્યેણ ગાત્રાઽનુલેપનં સંન્યાસિનાં ન કલ્પતે इत्यर्थः, ‘ણણ્ણત્થ
એક્કાણ્ણ ગંગામટ્ઠિયાણ્ણ’નાઽન્યત્રૈકસ્યા ગઙ્ગામૃત્તિકાયાઃ—એકાં ગઙ્ગામૃત્તિકાં વર્જયિત્વાઽયં
નિષેધ इत्यर्थः ॥ સૂ. ૧૮ ॥

ટીકા—‘તેસિં ણં’ इत्यादि । ‘તેસિં ણં’ તેષાં સ્વલુ ‘પરિવ્રાયગાણં
કપ્પડ્ માગહણ્ણ પત્થણ્ણ જલસ્સ પડિગ્ગાહિત્તણ્ણ’ પરિવ્રાજકાનાં કલ્પતે માગધં પ્રસ્થં
જલસ્ય પરિગ્રહીતુમ્, પ્રસ્થઃ પરિમાણવિશેષઃ, તથાહિ—‘દો અસર્ઈઓ પસર્ઈ, દોહિં પસર્ઈહિં

उनके लिये पहिरना अवर्जित है । (तेसिं णं परिव्रायगाणं णो कप्पड् अगलुण्ण व
चंदणेण व कंकुमेण व गायं अणुलिपित्तण्ण णण्णत्थ एक्काण्ण गंगामट्ठियाण्ण) तथा
उन परिव्राजकों के लिये अगुरु से, चंदन एवं कंकुम से शरीर पर लेप करना भी निषिद्ध
है । सिर्फ यदि वे लेप करना चाहें तो एक मात्र गंगा की मिट्टी का लेप कर
सकते हैं ॥ सू. १८ ॥

‘તેસિં ણં’ इत्यादि ।

(તેસિં ણં પરિવ્રાયગાણં) उन प्रत्येक परिव्राजकों को अपने उपयोग में लाने
के वास्ते (मागहण्ण पत्थण्ण जलस्स पडिग्गाहित्तण्ण कप्पड्) केवल मगधदेश—प्रचलित
प्रस्थप्रमाणमात्र जल लेना कल्पता है । प्रस्थ एक माप का नाम है । कहा भी है—दो

ચંદણેણ વા કુંકુમેણ વા ગાયં અણુલિપિત્તણ્ણ ણણ્ણત્થ એક્કાણ્ણ ગંગામટ્ઠિયાણ્ણ) तथा ते
परिव्राजकेने भाटे अशुरुथी, चंदनथी तेभज्ज कंकुथी शरीर पर लेप करवो
पणु निषिद्ध छे. जे ते लेप करवा चाहे तो ऐकमात्र गंगानी भाटीने लेप
करी शके छे. (सू. १८)

“તેસિં ણં” इत्यादि.

(તેસિં ણં પરિવ્રાયગાણં) ते प्रत्येक परिव्राजकेने पोताना उपयोगमां
देवा भाटे (मागहण्ण पत्थण्ण जलस्स पडिग्गाहित्तण्ण कप्पड्) मगध देशमां प्रच-
लित प्रस्थप्रमाणमात्र जल लेवुं कहे छे. ‘प्रस्थ’ ऐक मापनुं नाम छे.

જલસ્સ પડિગ્ગાહિત્તણ, સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં અવહ-
માણે, સે વિ ય થિમિઓદણ ણો ચેવ ણં કહમોદણ, સે વિ ય
બહુપ્પસણે ણો ચેવ ણં અવહુપ્પસણે, સે વિ ય પરિપૂણ ણો

સેઝ્યા હોઈ । ચઉસેઝઓ ઉ કુલઓ ચઉકુલઓ પત્થઓ હોઈ ॥ ૧ ॥ ચઉપત્થમાઢયં
તહ ચત્તારિ ય આઢયા ભવે દોણો । ’ ળાયા—દ્વે અસતી પ્રસૂતિઃ, દ્વામ્યાં પ્રસૂતિમ્યાં
સેતિકા ભવતિ । ચતુષ્સેતિકસ્તુ કુલવશ્ચતુષ્કુલવઃ પ્રસ્થો ભવતિ ॥ ૧ ॥ ચતુષ્પ્રસ્થમાઢકં
તથા ચત્વારિ આઢકાનિ ભવેદ્ દ્રોણઃ ॥ ઇતિ । માગધપ્રસ્થપરિમિતં જલં સંન્યાસિનાં પરિગ્રહીતું
કલ્પતે ઇત્યર્થઃ । ‘ સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં અવહમાણે ’ તદપિ ચ જલં વહમાનં=
નદ્યાદિસ્રોતોવર્તિ વ્યાપ્રિયમાણં વા પરિગ્રહીતું કલ્પતે, નો ચૈવાઽવહમાનમ્ । ‘ સે વિ ય
થિમિઓદણ ણો ચેવ ણં કહમોદણ ’ તદપિ ચ સ્તિમિતોદકં નો ચૈવ સ્વલુ કર્દમોદકમ્,
સ્તિમિતોદકં=પદ્મસમ્પર્કરહિતં કલ્પતે, યત્ર તુ કર્દમસમ્પર્કોઽસ્તિ તજ્જલં ન કલ્પતે—ઇત્યર્થઃ,
‘ સે વિ ય બહુપ્પસણે ણો ચેવ ણં અવહુપ્પસણે ’ તદપિ ચ જલં બહુપ્રસન્નમ્=અતિ-

અસતી કી એક પ્રસૂતિ હોતી હૈ । દો પ્રસૂતિ કી એક સેતિકા, ચાર સેતિકાઓં કા એક
કુલવ ઓર ચાર કુલવોં કા એક પ્રસ્થ હોતા હૈ । યહ પહિલે સમય મેં કાષ્ઠ કા બનતા થા ।
ચાર પ્રસ્થોં કા એક આઢક ઓર ચાર આઢકોં કા એક દ્રોણ હોતા હૈ । ઇન્કે લિયે પ્રસ્થપ્રમાણ
જલ ઉપયોગ મેં લેને કા વિધાન કિયા ગયા હૈ (સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં
અવહમાણે) વહ મીં બહતી હુઈ નદી આદિ કા હોના ચાહિયે, બિના બહતા હુઆ જલ લેના
ઉન્હેં નિષિદ્ધ હૈ । (સે વિ ય થિમિઓદણ ણો ચેવ ણં કહમોદણ) વહ મીં યદિ સ્વચ્છ
હો તબ હીં ગ્રહણ કરને યોગ્ય કહા ગયા હૈ, કર્દમ સે મિશ્રિત નહીં । (સે વિ ય બહુપ્પ-
સણે ણો ચેવ ણં અવહુપ્પસણે) સ્વચ્છ હોને પર મીં નિર્મલ હો તબ હીં ગ્રાહ્ય હો સકતા

કહ્યું પણ છે—એ અસતીની એક પ્રસૂતિ થાય છે. એ પ્રસૂતિની એક સેતિકા,
ચાર સેતિકાઓનો એક કુલવ અને ચાર કુલવનો એક પ્રસ્થ થાય છે. આ
અગાઉના સમયમાં લોકોનો બનતો હતો. ચાર પ્રસ્થોનો એક આઢક અને
ચાર આઢકોનો એક દ્રોણ થાય છે. પ્રસ્થપ્રમાણ જલના ઉપયોગનું વિધાન
જે કરેલું છે (સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં અવહમાણે) તે જળ પણ વહેતી નદી
આદિનું હોવું જોઈએ, વિના વહેતું જલ લેવું તેમને નિષિદ્ધ છે. (સે વિ ય
થિમિઓદણ ણો ચેવ ણં કહમોદણ) તે પણ જો સ્વચ્છ હોય તો જ ગ્રહણ કરવા
યોગ્ય કહેલું છે, કર્દમથી મિશ્રિત નહિ. (સે વિ ય બહુપ્પસણે ણો ચેવ ણં

चेव णं अपरिपूए, से वि य णं दिण्णे णा चेव णं अदिण्णे,
से वि य पिबित्तए, णो चेव णं हत्थ-पाय-चरु-चमस-पक्खाल-
णट्ठाए सिणाइत्तए वा । तेसिं णं परिव्वायगाणं कप्पइ मागहए

स्वच्छं कल्पते, नो चैव खलु अबहुप्रसन्नम्, 'से वि य परिपूए णो चेव णं अपरिपूए' तदपि च जलं परिपूतं=वस्त्रेण गालितं कल्पते, नो चैव खल्वपरिपूतम्, 'से वि य णं दिण्णे णो चेव णं अदिण्णे' तदपि च खलु दत्तं कल्पते, न चैव खल्वदत्तम्, 'से वि य पिबित्तए णो चेव णं हत्थ-पाय-चरु-चमस-पक्खालणट्ठाए सिणाइत्तए वा' तदपि च पातुं कल्पते नो चैव खलु हस्तपादचरुचमसप्रक्षालनार्थम्, तत्र-हस्तौ पादौ च प्रसिद्धौ । चरुः= अन्नपात्रं, यस्मिन् भिक्षान्नं स्थाप्यते । चमसो-दर्विका-परिवेषणपात्रं 'चमचा' इति प्रसिद्धम्,

है, अतिनिर्मल नहीं होने पर ग्राह्य नहीं हो सकता । (से वि य परिपूए णो चेव णं अपरिपूए) अतिनिर्मल होने पर भी वस्त्र से छाना जाने पर ही कल्पित कहा गया है, अनछना पानी अपने उपयोग में लाने का निषेध है । (से वि य णं दिण्णे णो चेव णं अदिण्णे) छना हुआ होने पर भी किसी दाता के द्वारा दिया गया ही ग्रहण करने के योग्य कहा है, विना दिया हुआ नहीं । (से वि य पिबित्तए णो चेव हत्थ-पाय-चरु-चमस-पक्खालणट्ठाए) दिया गया भी जल का उपयोग केवल पीने के लिये ही करने की आज्ञा है, हाथ-पैर, चरु-भोजन पात्र एवं चमचा धोने के लिये उसका उपयोग विहित नहीं है, अर्थात् हाथ पैर आदि धोने के काम में उसको नहीं ला सकते, (सिणाइत्तए वा)

अबहुप्पसण्णे) स्वच्छ होवा छतां पणु अतिनिर्भण होय तो न ग्राह्य थध शके छे, अतिनिर्भण न होय तो ग्राह्य थध शकतुं नथी. (से वि य परिपूए णो चेव णं अपरिपूए) अतिनिर्भण होवा छतां पणु वस्त्रथी गणायेलुं होय तो न कल्पित कहेलुं छे. वगर गणायेलुं पाणी पोताना उपयोगमां देवानुं निषिद्ध छे. (से वि य णं दिण्णे णो चेव णं अदिण्णे) गाणेलुं होय छतां पणु कोध दाता द्वारा अपायेलुं न अडणु करवा योग्य कहेवामां आव्युं छे, वगर दीधेलुं नडि. (से वि य पिबित्तए णो चेव हत्थ-पाय-चरु-चमस-पक्खालणट्ठाए) आपेलुं होय तेवा नल्लेनो उपयोग पणु केवल पीवा भाटे न करवानी आज्ञा छे, हाथ-पग, चरु-भोजन पात्र, तेमन चमचा धोवा भाटे तेनो उपयोग करवो विहित नथी, अर्थात् हाथ पग आदि धोवाना काममां तेनो उपयोग करी शकय नडि. (सिणाइत्तए वा) तेमन तेनो उपयोग स्नान

આઢણ જલસ્સ પડિગ્ગાહિત્તણ, સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં
અવહમાણે, જાવ ણં અદિણ્ણે, સેવિ ય હત્થપાયચરુચમસપક્કવા-
લણટ્ટયાણ, ણો ચેવ ણં પિવિત્તણ સિણાહિત્તણ વા ॥ સૂ. ૧૯ ॥

એતેષાં પ્રક્ષાલનાર્થં સ્નાતું વા ન કલ્પતે इति। ‘તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં કપ્પઙ્ગ માગહણ આઢણ
જલસ્સ પડિગ્ગાહિત્તણ’ તેષાં સ્વલુ પરિવ્રાજકાનાં કલ્પતે માગધમાઢકં જલસ્ય પરિગ્રહીતુમ્,
‘સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં અવહમાણે જાવ ણં અદિણ્ણે’ તદપિ ચ વહમાનં
નો ચૈવ સ્વલ્વવહમાનં યાવત્સ્વલુ અદત્તમ્, યાવચ્છબ્દાત્કર્દમરહિતં, સ્વચ્છં, વસ્ત્રગાલિતં ચ
કલ્પતે, અવહમાનાદિકં તુ ન કલ્પતે इति बोध्यम्। ‘સે વિ ય હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-
પક્કવાલણટ્ટયાણ’ તદપિ ચ હસ્ત-પાદ-ચરુ-ચમસ-પ્રક્ષાલનાર્થમ્, ‘ણો ચેવ ણં
પિવિત્તણ સિણાહિત્તણ વા’ નો ચૈવ સ્વલુ પાતું સ્નાતું વા ॥ સૂ. ૧૯ ॥

और न उसका उपयोग स्नान करने में ही किया जाता है। इसी प्रकार (तेसिं णं परि-
व्वायगाणं कप्पङ्ग मागहण आढण जलस्स पडिग्गाहित्तण से वि य वहमाणे णो
चेव णं अवहमाणे जाव णं अदिण्णे, से वि य हत्थ-पाय-चरु-चमस-पक्खालण-
ट्टयाण, णो चेव णं पिवित्तण सिणाहत्तण वा) इन साधुओं के लिये मगधदेशीय प्रस्थ
प्रमाणमात्र जल ही हाथ, पैर, पात्र, चम्मच आदि धोने के लिये ग्राह्य बतलाया गया है।
वह भी बहता हुआ ही होना चाहिये-स्थिर नहीं। उसमें भी वह अतिस्वच्छ, एवं वस्त्र
से छना हुआ तथा दाता के द्वारा दिया गया होना चाहिये, इससे भिन्न नहीं। ऐसा जल
ही हस्त, पाद, चरु एवं चमचा के धोने के काम में आ सकता है; अन्यथा नहीं। अतः

કરવામાં પણ કરી શકાય નહિ. એ પ્રકારે (તેસિં ણં પરિવ્વાયગાણં કપ્પઙ્ગ માગ-
હણ આઢણ જલસ્સ પડિગ્ગાહિત્તણ સે વિ ય વહમાણે ણો ચેવ ણં અવહમાણે જાવ
ણં અદિણ્ણે સે વિ ય હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ ણો ચેવ ણં પિવિત્તણ
સિણાહિત્તણ વા) આ સાધુઓને માટે મગધદેશીય પ્રસ્થપ્રમાણુ માત્ર જલ જ
હાથ પગ પાત્ર ચમચા આદિ ધોવાને માટે ગ્રાહ્ય બતાવવામાં આવ્યું છે. તે
પણ વહેતું હોય તે જ હોવું જોઈએ, ન વહેતું હોય તે નહિ. તેમાં પણ
તે અતિસ્વચ્છ તેમજ વસ્ત્રથી ગાળેલું તથા દાતા દ્વારા અપાયેલું હોવું
જોઈએ, તેનાથી બીજું નહિ. એવું જલજ હાથ, પગ, ચરુ તેમજ ચમચાને
ધોવાના કામમાં આવી શકે છે, બીજું નહિ. આમ એ નિમિત્તે પ્રાપ્ત કરા-

મૂલમ્—તે ણં પરિવ્રાયગા ણ્યારૂવેણં વિહારેણં વિહર-
માણા બહૂં વાસાં પરિયાયં પાઉણંતિ, પાઉણિત્તા કાલમાસે
કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં વંમલોઽ કપ્પે દેવત્તાઽ ઉવવત્તારો ભવંતિ ।

ટીકા—‘ તે ણં પરિવ્રાયગા ’ ઇત્યાદિ । ‘ તે ણં પરિવ્રાયગા ’ તે સ્વલુ
પરિવ્રાજકાઃ ‘ ણ્યારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણા ’ એતદ્રૂપેણ=ઉક્તરૂપેણ વિહારેણ વિહરન્તઃ,
‘ બહૂં વાસાં પરિયાયં પાઉણંતિ ’ બહૂનિ વર્ષાણિ પર્યાયં પાલયન્તિ, ‘ પાઉણિત્તા
કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ’ પાલયિત્વા કાલમાસે કાલં કૃત્વા ‘ ઉક્કોસેણં વંમલોઽ કપ્પે
દેવત્તાઽ ઉવવત્તારો ભવંતિ ’ ઉક્કોશેન બ્રહ્મલોકે કલ્પે દેવત્વેનોપવત્તારો ભવન્તિ, ‘ તહિં

ઇસ નિમિત્ત પ્રાપ્ત કિયે ગયે જલ કો પીને અથવા સ્નાન કે કામ મેં લાને કા
નિષેધ હૈ ॥ સૂ. ૧૯ ॥

‘ તે ણં પરિવ્રાયગા ’ ઇત્યાદિ ।

(તે ણં પરિવ્રાયગા) યે પરિવ્રાજક (ણ્યારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણા) ઇસ
પ્રકાર કે વિહાર સે વિચરણ કરતે હુણ અર્થાત્ ઇસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ મેં રહતે હુણ
(બહૂં વાસાં પરિયાયં પાઉણંતિ) અપને જીવન કે બહુત વર્ષોં કો ઇસી પર્યાય કા પાલન
કરતે ૨ જવ વ્યતીત કરતે હૈ, તવ (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) કાલમાસ કે ઉપસ્થિત હોને
પર મર કર વે (ઉક્કોસેણં) જ્યાદા સે જ્યાદા (વંમલોઽ કપ્પે દેવત્તાઽ ઉવવત્તારો ભવંતિ)
બ્રહ્મલોક નામક પંચમકલ્પ મેં દેવતા કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । (તહિં તેસિં ગઈ
તહિં તેસિં ઠિઈ) વહી પર ઉનકો ગતિ ંવં વહીં પર ઉનકી સ્થિતિ શાસ્ત્રોં મેં વર્ણિત કી

થેલ જલને પીવા અથવા સ્નાન કરવાના કામમાં લેવાનો નિષેધ છે. (સૂ. ૧૯)

“ તે ણં પરિવ્રાયગા ” ઇત્યાદિ.

(તે ણં પરિવ્રાયગા) એ પરિવ્રાજક (ણ્યારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણા) આ
પ્રકારના વિહારથી વિચરણ કરતાં કરતાં, અર્થાત્—આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં
રહેતાં (બહૂં વાસાં પરિયાયં પાઉણંતિ) પોતાના જીવનનાં ઘણાં વરસોને એજ
પર્યાયના પાલનમાં વ્યતીત કરે છે. ત્યારે (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) કાળ અવ-
સરે કાળ કરીને તેઓ (ઉક્કોસેણં) વધારેમાં વધારે (વંમલોઽ કપ્પે દેવત્તાઽ ઉવ-
વત્તારો ભવંતિ) બ્રહ્મલોક નામના પાંચમા કલ્પમાં દેવતાની પર્યાયથી ઉત્પન્ન
થઈ જાય છે, (તહિં તેસિં ગઈ તહિં તેસિં ઠિઈ) ત્યાં તેમની ગતિ તેમજ ત્યાં

તહિં તેસિં ગઈ, તહિં તેસિં ઠિઈ । દસસાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લતા ।
સેસં તં ચેવ ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં અમ્મહસ્સ પરિ-
વ્વાયગસ્સ સત્ત અંતેવાસિસયાઈં ગિમ્હકાલસમયંસિ જેટ્ટામૂલમા-
સંમિ ગંગાણ મહાનઈણ ઉભઓકૂલેણં કંપિહ્લપુરાઓ ણયરાઓ

તેસિં ગઈ, તહિં તેસિં ઠિઈ ’ તત્ર તેષાં ગતિઃ, તત્ર તેષાં સ્થિતિઃ । ‘ દસ સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લતા ’ દશ સાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા, ‘ સેસં તં ચેવ ’ શેષં તદેવ ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

ટીકા—તેણં કાલેણં તેણં સમણં ’ ઇત્યાદિ । ‘ તેણં કાલેણં સમણં ’ તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ‘ અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ સત્ત અંતેવાસિસયાઈં ’ અમ્મહસ્સ પરિવાજકસ્ય સપ્તાન્તેવાસિસતાનિ=સપ્તશતસંહ્યકા અન્તેવાસિનઃ—શિષ્યાઃ, ‘ ગિમ્હકાલસમયંસિ જેટ્ટામૂલમાસંમિ ’ ગ્રીષ્મકાલસમયે જ્યેષ્ઠામૂલમાસે=જ્યેષ્ઠાનક્ષત્રે મૂલનક્ષત્રે વા પૂર્ણિમા યસ્મિન્ તસ્મિન્, જ્યેષ્ઠમાસે ઇત્યર્થઃ । ‘ ગંગાણ મહાનઈણ ઉભઓ-

ગઈ હૈ । ઇસ સ્થિતિ કા પ્રમાણ (દસ સાગરોવમાઈ) વહાં ૧૦ દસ સાગર હૈ, (સેસં તં ચેવ) યાવત્ યે આરાધક નહીં હોતે હૈ ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઇત્યાદિ ।

(તેણં કાલેણં સમણં) ઉસ કાલ મેં એવં ઉસ સમય મેં (અમ્મહસ્સ પરિવ્વા-
યગસ્સ) અમ્મહ નામક પરિવાજક (વંન્યાસી) કે (સત્ત અંતેવાસિસયાઈં) સાત સૌ શિષ્ય
(ગિમ્હકાલસમયંસિ) ગ્રીષ્મ કાલ કે સમય (જેટ્ટામૂલમાસંમિ) જ્યેષ્ઠ માસ મેં (ગંગાણ

તેમની સ્થિતિ શાસ્ત્રોમાં વર્ણન કરેલી છે. આ સ્થિતિનું પ્રમાણ (દસ સાગ-
રોવમાઈ) ત્યાં ૧૦ દસ સાગરનું છે. (સેસં તં ચેવ) યાવત્ તેઓ આરાધક
હોતા નથી. (સૂ. ૨૦)

“ તેણં કાલેણં તેણં સમણં ” ઇત્યાદિ.

(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાળમાં તેમજ તે સમયમાં (અમ્મહસ્સ
પરિવ્વાયગસ્સ) અમ્મહ નામના પરિવાજક (વંન્યાસી)ના (સત્ત અંતેવાસિસ-
સયાઈં) સાતસો શિષ્ય (ગિમ્હકાલસમયંસિ) ગ્રીષ્મ કાળના સમયમાં (જેટ્ટામૂલમા-
સંમિ) જેઠ મહિનામાં (ગંગાણ મહાનઈણ ઉભઓ કૂલેણં) ગંગા નદીના બન્ને તટ

पुरिमतालं णयरं संपट्टिया विहाराए ॥ सू० २१ ॥

मूलम्—तए णं तेसिं परिव्वायगाणं तीसे अगामि-
याए छिण्णोवायाए दीहमद्धाए अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं

कूलेणं ' गंगाया महानद्या उभयतः कूलेन=उभयतटाम्याम्, ' कंपिल्लपुराओ णयराओ
पुरिमतालं णयरं संपट्टिया विहाराए ' कांपिल्यपुरान्नगरात्पुरिमतालं नगरं संप्रस्थिता
विहाराय=विहर्तुम् ॥ सू० २१ ॥

टीका—' तए णं ' इत्यादि । ' तए णं ' ततः खलु ' तेसिं परिव्वायगाणं '
तेषां परिव्राजकानाम्, ' तीसे अगामियाए ' तस्या अग्रामिकायाः=ग्रामसम्बन्धरहितायाः—
ग्रामाद्दूरवर्तिन्या इत्यर्थः; ' छिन्नोवायाए ' छिन्नावपातायाः=जनागमनिर्गमरहितायाः—
निर्जनाया इत्यर्थः; ' दीहमद्धाए ' दीर्घाऽध्वायाः=दीर्घमार्गायाः—प्रान्तरावस्थिताया इत्यर्थः;
' अडवीए ' अटव्याः=वनस्य ' कंचि देसंतरमणुपत्ताणं ' किञ्चिद्देशान्तरमनुप्राप्तानाम्=

महाणईए उभओ कूलेणं) गंगा नदी के दोनों तटों से होकर, (कंपिल्लपुराओ णयराओ
पुरिमतालणयरं संपट्टिया) कांपिल्यपुर नगर से पुरिमताल नगर की ओर विहार के लिये
निकले ॥ सू० २१ ॥

'तए णं ' इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (तेसिं परिव्वायगाणं) उन परिव्राजकों का (तीसे अगा-
मियाए अडवीए) जब कि वे चलते २ एक भयंकर अटवी में आ पहुँचे, जो ग्राम के
सम्बन्ध से सर्वथा रहित थी—ग्राम से बहुत दूर थी, (छिन्नोवायाए) इसलिये यहां पर मनु-
ष्यों का संचार बिल्कुल ही नहीं था, अर्थात् वह अटवी निर्जन थी, (दीहमद्धाए) रास्ते इसके
बड़े विकट थे, (कंचि देसंतरमणुपत्ताणं) इसका थोड़ा सा ही भाग इन्होंने तय कर पाया

उपर थधने (कंपिल्लपुराओ णयराओ पुरिमतालणयरं संपट्टिया) कांपिल्यपुर
नगरथी पुरिमताल नगरनी तरइ विहार भाटे नीकल्या. (सू. २१)

“ तए णं ” इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (तेसिं परिव्वायगाणं) ते परिव्राजके, (तीसे अगा-
मियाए अडवीए) ज्यारे चालतां चालतां ऐक भयंकर अटवी (वन)भां आवी
पडोन्थी के जे वन गामना सम्बन्धथी सर्वथा रहित હતું—गामथी अहु दूर
હતું. (छिन्नोवायाए) तेथी अडवीं मनुष्येनो संचार बिलकुल न होतो अटवे
के ते वन निर्जन હતું. (दीहमद्धाए) तेना रस्ता अहु विकट હતા. (कंचि

સે પુવ્વગ્ગહિણ ઉદણ અણુપુવ્વેણં પરિભુંજમાણે જ્ઞીણે ॥ સૂ. ૨૨ ॥

મૂલમ—તણ ણં તે પરિવ્વાયાગા જ્ઞીણોદગા સમાણા તણ્ણાણ પારબ્ભમાણા ૨ ઉદગદાયારમપસ્સમાણા અણ્ણમણ્ણં સદાવેત્તિ, સદાવિત્તા એવં વયાસી ॥ સૂ. ૨૩ ॥

કંચિત્ પ્રદેશમાગતાનાં ‘સે’ તત્ ‘પુવ્વગ્ગહિણ’ પૂર્વગૃહીતમ્ ‘ઉદણ’ ઉદકમ્ ‘અણુપુવ્વેણં’ આનુપૂર્વ્યેગ ‘પરિભુંજમાણે’ પરિભુજ્યમાનં ‘જ્ઞીણે’ ક્ષીણં=ક્ષયં પ્રાપ્તમ્ ॥ સૂ. ૨૨ ॥

ટીકા—‘તણ ણં તે પરિવ્વાયા’ इत्यादि । ‘तण णं ते परिव्वाया’ ततः खलु ते परिव्राजकाः ‘ज्ज्ञीणोदगा समाणा’ क्षीणोदकाः सन्तः, ‘तण्णया’ तृणया=पिपासया, ‘पारब्भमाणा २’ प्रारभ्यमाणाः २=पीड्यमानाः २—व्याकुलीभवन्तः, व्याकुलीभावेहे तुर्गमविशेषणमाह—‘उदगदायारमपस्समाणा’ उदकदातारमपश्यन्तः, तेषाम-दत्ताग्राहित्वादिति भावः, ‘अण्णमण्णं सदावेत्ति’ अन्योऽन्यं शब्दयन्ति=परस्परमाह्वयन्ति, शब्दयित्वा=आह्वय ‘एवं वयासी’ एवमवादिषुः—एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण वदन्ति स्म ॥ सू. २३ ॥

થા કિ ઇતને મેં (સે પુવ્વગ્ગહિણ ઉદણ અણુપુવ્વેણં પરિભુંજમાણે જ્ઞીણે) ચલતે સમય અપને સ્થાન સે લાયા હુઆ જલ ક્રમશઃ પીતે ૨ સ્વતમ હો ગયા ॥ સૂ. ૨૨ ॥

‘તણ ણં તે પરિવ્વાયા’ इत्यादि ।

(તણ ણં) इस के बाद (ते परिव्वाया ज्ज्ञीणोदगा समाणा) वे परिव्राजक कि जिनका पानी बिलकुल समाप्त हो चुका है, (तण्णया पारब्भमाणा २) पुनः तृषा से अत्यंत पीडित—व्याकुल होते हुए (उदगदायारमपस्समाणा) उस समय किसी पानी दाता को

દેસંતરમણુપત્તાણં) તેના થોડો ભાગ જ તેઓ ચાલ્યા કે એટલામાં (સે પુવ્વગ્ગહિણ ઉદણ અણુપુવ્વેણં પરિભુંજમાણે જ્ઞીણે) ચાલતી વખતે પોતાના સ્થાનેથી લાવેલ જલ હળવે હળવે પીતાં પીતાં પૂરું થઈ ગયું. (સૂ. ૨૨)

“ તણ ણં તે પરિવ્વાયા ” इत्यादि.

(તણ ણં) ત્યાર પછી (તે પરિવ્વાયા જ્ઞીણોદગા સમાણા) તે પરિવ્રાજકો કે જોમનાં પાણી બિલકુલ સમાપ્ત થઈ ચૂક્યાં છે, (તણ્ણાણ પારબ્ભમાણા ૨) તેઓ તરસથી બહુ જ પીડિત—વ્યાકુળ થઈને (ઉદગદાયારમપસ્સમાણા) તે સમયે કેઈ પાણીના દાતાને ન જોવાથી (અણ્ણમણ્ણં સદાવેત્તિ) પરસ્પર એક બીજાને

मूलम्—एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से उदए जाव झीणे, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए

टीका—ते परिव्राजकाः परस्परं यदवादिषुस्तन्निर्दिशति—‘एवं खलु देवाणुप्पिया’ इत्यादि । ‘एवं खलु देवाणुप्पिया !’ एवं खलु हे देवानुप्रियाः ! ‘अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए’ अस्माकमस्या अग्रामिकाया यावदटव्याः, ‘कंचि-देसंतरमणुपत्ताणं से उदए जाव झीणे’ किञ्चिदंशान्तरमनुप्राप्तानां तत् उदकं यावत् क्षीणम्, ‘तं सेयं खलु देवाणुप्पिया’ तत्=तस्मात् श्रेयः खलु हे देवानुप्रियाः ? ‘अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए’ अस्माकमस्यामग्रामिकायां यावदटव्याम्,

नहीं देखकर, (अणमणं सदावेति) परस्पर में एक दूसरे का आह्वान करने लगे, (सदा-वित्ता एवं वयासी) और आह्वान करके इस प्रकार बोले ॥ सू० २३ ॥

एवं खलु देवाणुप्पिया !’ इत्यादि ।

(एवं खलु देवाणुप्पिया !) हे देवानुप्रियों ! यह बात बिल्कुल ठीक है कि (अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए कंचिदेसंतरमणुपत्ताणं से उदए जाव झीणे) हम लोगों का, इस अग्रामिक अटवी में कि अभी जिसे थोड़ी ही तय की है, वह अपने २ स्थान से लाया हुआ जल अब समाप्त हो चुका है, (तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए उदगदायारस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करित्तए) ऐसी हालत में हमारे—तुम्हारे लिये यही एक कल्याणकारक मार्ग है कि हम इस अग्रामिक एवं निर्जन अटवी में सर्व प्रकार से चारों ओर किसी जल-

जोलाववा लाज्या, (सदावित्ता एवं वयासी) अने जोलावी आ प्रकारे उडेवा लाज्या. (सू० २३)

“ एवं खलु देवाणुप्पिया ! ” इत्यादि.

(एवं खलु देवाणुप्पिया !) हे देवानुप्रियो ! ये बात बिल्कुल ठीक छे छे (अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से उदए जाव झीणे) आपणु आ वनमां थोडीक दूर आलीने आव्या छीअे, अने डभणुं जराक ज राकाया छीअे, त्यां तो पोताना स्थानेथी लावेहुं पाण्णी समाप्त थछ गथुं. (तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए उदगदायारस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करित्तए) अेवी हालतमां अमारा

જાવ અડવીએ ઉદગદાયારસ્સ સવ્વઓ સમંતા મગ્ગણગવેસણં
કરિત્તે—ત્તિ કટ્ટુ અણ્ણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ઠં પડિસુણેંતિ,
પડિસુણિત્તા તીસે અગામિયાએ જાવ અડવીએ ઉદગદાયારસ્સ
સવ્વઓ સમંતા મગ્ગણગવેસણં કરેંતિ, કરિત્તા ઉદગદાયાર-

‘ઉદગદાયારસ્સ સવ્વઓ સમંતા મગ્ગણગવેસણં કરિત્તેત્તિ કટ્ટુ’ ઉદકદાતુઃ સર્વતઃ
સમન્તાત્ માર્ગણગવેસણં કર્તુમ્ इति कृत्वा, ‘અણ્ણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ઠં પડિસુણેંતિ’
અન્યોઽન્યસ્ય અન્તિકે એતમર્થે પ્રતિશૃણ્વન્તિ=સ્વીકુર્વન્તિ, ‘પડિસુણિત્તા’ પ્રતિશ્રુત્ય ‘તીસે
અગામિયાએ જાવ અડવીએ ઉદગદાયારસ્સ સવ્વઓ સમંતા મગ્ગણગવેસણં કરેંતિ’
તસ્યામ્ અગ્રામિકાયાં યાવદટ્ઠવ્યામ્ ઉદકદાતુઃ સર્વતઃ સમન્તાદ્ માર્ગણગવેસણં કુર્વન્તિ,
‘કરિત્તા’ કૃત્વા, ‘ઉદગદાયારમલભમાણા’ ઉદકદાતારમ્ અલભમાનાઃ, ‘દોચ્છંપિ

દાતા કી માર્ગણા એવં ગવેસણા કરેં, (ત્તિ કટ્ટુ અણ્ણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ઠં પડિસુણેંતિ)
इस प्रकारकी की गई सलाह सबने एकमत होकर मान ली। (पडिसुणित्ता तीसे अगामि-
याए जाव अडवीए उदगदायारस्स सव्वओ समंता मगगणगवेषणं करेति) पश्चात्
उस सलाह के अनुसार वे सब उस अग्रामिक अटवी में सर्व प्रकार से चारों ओर पानी के
देने वाले दाता की गवेषणा करने में संलग्न हो गये। (करित्ता उदगदायारमलभमाणा
दोच्चंपि अण्णमण्णं सदावेति सदावित्ता एवं वयासी) गवेषणा करते २ जब उन्हें कोई

તમારા માટે એ જ એક કલ્યાણકારક માર્ગ છે કે આપણે આ અત્રામિક
તેમજ નિર્જન વનમાં સર્વ પ્રકારથી ચારે કોરે કોઈ જલના દાતારની માર્ગણા
તેમજ શોધ કરીએ. (ત્તિ કટ્ટુ અણ્ણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ઠં પડિસુણેંતિ) આ
પ્રકારની કરેલી સલાહ બધાએ એકમત થઈને માની લીધી. પછી (પડિ-
સુણિત્તા તીસે અગામિયાએ જાવ અડવીએ ઉદગદાયારસ્સ સવ્વઓ સમંતા મગ્ગણ-
ગવેસણં કરેંતિ) તે સલાહને અનુસરીને તે બધા તે અત્રામિક અટવી (વન)માં
સર્વ પ્રકારથી ચારે કોર પાણી દેવાવાળા દાતારની શોધ કરવામાં સંલગ્ન
થઈ ગયા. (કરિત્તા ઉદગદાયારમલભમાણા દોચ્છંપિ અણ્ણમણ્ણં સદાવેતિ સદા-
વિત્તા એવં વયાસી) શોધ કરતાં કરતાં પણ તેમને જ્યારે કોઈ પણ પાણીને

मलभमाणा दोच्चंपि अण्णमण्णं सदावेति, सदावित्ता
एवं वयासी ॥ सू० २४ ॥

मूलम्—इह णं देवाणुप्पिया ! उदगदातारो णत्थि,
तं णो खलु कप्पइ अम्हं अदिण्णं गिण्हित्तए, अदिण्णं साइ-

अण्णमण्णं सदावेति ' द्वितीयमपि=द्वितीयवारमपि अन्योऽन्यं शब्दयन्ति, ' सदावित्ता ' शब्दयित्वा ' एवं वयासी ' एवमवादिषुः ॥ सू० २४ ॥

टीका—' इह णं देवाणुप्पिया ! ' इत्यादि । ' इह णं देवाणुप्पिया ! ' इह खलु हे देवानुप्रियाः ! ' उदगदातारो णत्थि ' उदकदातारो न सन्ति । ' तं णो खलु कप्पइ अम्हं अदिण्णं गिण्हित्तए ' तत्=तस्मात् नो खलु कल्पतेऽस्माकमदत्तम् उदकं ग्रहीतुम्, ' अदिण्णं साइज्जित्तए ' अदत्तम् उदकं स्वादयितुं=पातुम्, ' तं मा णं अम्हे इयाणि ' तन्मा खलु वयमिदानीम्, ' आवइकालंपि ' आयतिकालमपि=आगामिनि

भी पानी का दाता नहीं मिला तब उन्होंने द्वितीयवार भी परस्पर में एक-दूसरे का आह्वान किया, और आह्वान करके इस प्रकार बोले ॥ सू० २४ ॥

' इह णं देवाणुप्पिया ' इत्यादि ।

(इह णं देवाणुप्पिया ! उदगदायारो णत्थि) हे देवानुप्रियो ! प्रथम तो इस अटवी में एक भी उदकदातार नहीं है, (तं णो खलु कप्पइ अम्हं अदिण्णं गिण्हित्तए) दूसरे—हम लोगों को अदत्त जल ग्रहण करना उचित नहीं है, (अदिण्णं साइज्जित्तए) कारण कि अदत्त जल का पान करना हम लोगों की मर्यादा से सर्वथा विरुद्ध है । (तं मा णं अम्हे इयाणि आवइकालं पि अदिण्णं गिण्हामो अदिण्णं साइज्जामो मा णं

दातार भज्ये। नहि त्वा रे तेओओ भीण्ण वार पणु परस्पर ओकभीअने ओलाव्या, ओलावीने आ प्रकारे उडेवा लाज्यां (सू० २४)

“इह णं देवाणुप्पिया” इत्यादि.

(इह णं देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रियो ! प्रथम तो आ अटवीमां ओकेथ पाणीने दातार नथी, (तं णो खलु कप्पइ अम्हं अदिण्णं गिण्हित्तए) भीण्ण आपणुने अदत्त जल ग्रहण करवुं उचित नथी. (अदिण्णं साइज्जित्तए) उरुण्ण के अदत्त जलने पीवुं ते आपणी मर्यादाथी सर्वथा विरुद्ध छे. (तं मा णं अम्हे इयाणि आवइकालंपि अदिण्णं गिण्हामो अदिण्णं साइज्जामो मा

जित्तए, तं मा णं अम्हे इयाणिं आवड्कालं पि अदिण्णं
गिण्हामो, अदिण्णं साइज्जामो, मा णं अम्हं तवलोवे भविस्सइ।
तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया ! तिदंडं, कुंडियाओ य, कंच-

समयेऽपि 'अदिण्णं गिण्हामो' अदत्तं गृह्णीमः=अदत्तमुदकं न स्वीकुर्मः, 'अदिण्णं
साइज्जामो' अदत्तं स्वादयामः=अदत्तं जलं मा स्वादयाम इत्यन्वयः, 'मा णं अम्हं
तवलोवे भविस्सइ' मा खलु अस्माकं तपोलोपो भविष्यति, अदत्तस्याग्रहणेऽनास्वादने
चास्माकं तपोलोपो न भविष्यतीत्यर्थः। 'तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया !' तत्=
तस्मात् श्रेयः खलु अस्माकं हे देवानुप्रियाः ! 'तिदंडं' त्रिदण्डकं 'कुंडियाओ य'
कुण्डिकाश्च=कमण्डलून्, 'कंचणियाओ य' काञ्चनिकाश्च=रुद्राक्षमालिकाः, 'करोडियाओ

अम्हं तवलोवे भविस्सइ) तथा हम सब लोगों का यह भी दृढ निश्चय है कि आगामी
काल में भी हम सब विना दिया हुआ जल न ग्रहण करें और न उसे पियें; क्यों कि इस
प्रकार के आचरण से हमारी तपस्या का लोप हो जायगा; अतः वह भी सुरक्षित रहे इस
अभिप्राय से हममें से किसी को भी अदत्त जल ग्रहण नहीं करना चाहिये और न उसे पीना
ही चाहिये। (तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया ! तिदंडं कुंडियाओ य, कंचणियाओ य,
करोडियाओ य, भिसियाओ य, छण्णालए य, अंकुसए य, केसरियाओ य, पवि-
त्तए य, गणेत्तियाओ य, छत्तए य, वाहणाओ य, पाउयाओ य, धाउरत्ताओ य,
एगंते एडित्ता गंगं महानइं ओगाहित्ता) इसलिये हे देवानुप्रियो ! अब हम सब की भलाई
इसी में है कि हम सब त्रिदण्डों को, कमण्डलुओं को, रुद्राक्ष की मालाओं को, करोटिकाओं-

णं अम्हं तवलोवे भविस्सइ) तथा आपणुं दृढनिश्चयी छीअे डे लविप्यडाणमां
पणुं दीधेलुं न डोय अेपुं जल अडणुं करपुं नडि अने पीपुं नडि, डेमडे
अे प्रकारना आचरणथी आपणी तपस्यानेो दोप थरुं जशे. भाटे ते
सुरक्षित रहे अेवा अलिप्रायथी आपणुमांना डोअे पणु अदत्त जल
अडणुं न करपुं जेअे अने ते पीपुं पणु न जेअे. (तं सेयं खलु अम्हं
देवाणुप्पिया ! तिदंडं, कुंडियाओ य, कंचणियाओ य, करोडियाओ य, केसरियाओ य,
पवित्तए य, गणेत्तियाओ य, छत्तए य, वाहणाओ य, पाउयाओ य, धाउरत्ताओ
य एगंते एडित्ता गंगं महानइं ओगाहित्ता) अे भाटे डे देवानुप्रियो ! डेवे
आपणी ललाअे अेमां ज छे डे आपणुं त्रिदंडोने, कमंडलुअेने, रुद्राक्षनी

णियाओ य, करोडियाओ य, भिसियाओ य, छण्णालए य,
अंकुसए य, केसरियाओ य, पवित्तए य, गणेत्तियाओ य, छत्तए
य, वाहणाओ य, पाउयाओ य, धाउरत्ताओ य एगंते एडित्ता,
गंगं महाणइं ओगाहित्ता, वालुयासंथारए संथरित्ता, संलेहणा—

य ' करोटिकाश्च=मृण्मयभाजनविशेषान्, ' भिसियाओ य ' वृषिकाश्च=उपवेशनपट्टिकाः,
' छण्णालए य ' षण्णालिकानि च=त्रिकाष्ठिकाः, ' अंकुसए य ' अङ्कुशकांश्च=आकर्ष-
णिकाः—वृक्षपल्लवाद्याकर्षणसाधनविशेषान्, देवार्चने पत्रपुष्पफलानां संग्रहार्थमङ्कुशका
उपयुज्यन्ते; ' केसरियाओ य ' केशरिकाश्च=प्रमार्जनार्थानि वस्त्रखण्डानि, ' पवित्तए य '
पवित्रकाणि=ताम्रमयमुद्रिकाः, ' गणेत्तियाओ य ' हस्तधार्या रुद्राक्षमालाः, ' गणेत्तिया '
इति हस्तधार्यरुद्राक्षमालार्थं देशीयशब्दः; ' छत्तए य ' छत्राणि च ' वाहणाओ य '
उपानहश्च, ' पाउयाओ य ' पादुकाश्च=काष्ठपादुकाः, ' धाउरत्ताओ य ' धातुरत्ताश्च=
गैरिकोपरञ्जिताः, शाटिकाः=संन्यासिपरिधानीयवस्त्राणि, एतानि सर्वाणि ' एगंते एडित्ता '
एकान्ते त्यक्त्वा, ' गंगं महाणइं ओगाहित्ता ' गङ्गामहानदीमवगाह्य=गङ्गायां महानद्यामव-
तीर्य—' वालुयासंथारए संथरित्ता ' वालुकामंस्तारकान् संस्तीर्य, ' संलेहणाञ्जसियाणं ' मंलेखना-

मिट्टी के बने हुए पात्रविशेषों को, वृषिकाओं—बैठने के पाटियों को, तिपाइयों को, देवों
की पूजा के लिये पत्र—पुष्पादिकों के गिराने के वास्ते सदा पास में रहनेवाली छोटी सी
अंकुशिका को, केशरिका को—प्रमार्जन करने के काम में आनेवाले वस्त्र के खंडों को, तामे
की मुंदरियों को, सुमरिनियों को, छत्रों को, जूतों को, काष्ठ की पादुकाओं को एवं गैरि-
कधातु से रक्त पहिरने की धोतियों को एकान्त में छोड़कर महानदी गंगा को पारकर
(वालुयासंथारए संथरित्ता) उसके तट पर वालुका का मंथार बिछावें और उस पर

भाजाओने, करोटिकाओ—भाटीनां अनेलां पात्र विशेषेणे, वृषिकाओ—अेसवाना
पाटलाओने, त्रिपाईओने (घाडीने), देवेने पूजा निमित्त पत्र, पुष्प आदि
राखवा भाटे सदा पासे रहेवावाणी नानी सरणी अंकुशिकाने, केशरिकओने—
प्रमार्जन करवाना काममां आववावाणा वस्त्रना कटकाओने, तांआनी
मुंदरिओने, सुमरिनिओने, छत्रोने, जेडाने, लाकडानी पादुकाओने,
तेमज्जे जेइ रंगेलां पड़ेरवानां धोतियांओने अेक ठेकाणे राणी धईने
महानदी गंगाने उतरिने (वालुयासंथारए संथरित्ता) तेना तट उपर रेतीना

झूसियाणं भक्तपाणपडियाइक्खियाणं पाओवगयाणं कालं अण-
वकंखमाणानं विहरित्तएत्ति कट्ठु अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं
पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता तिदंडए य जाव एगंते एडेंति, एडित्ता
गंगं महाणइं ओगाहेंति, ओगाहित्ता वालुआसंधारए संधरंति,

जुष्टानाम्-तपसा शरीरस्य कृशीकरणं संलेखना तथा जुष्टानां=सेवितानां-युक्तानाम्, 'भक्त-
पाण-पडियाइक्खियाणं' भक्तपान-प्रत्याख्यातानाम् 'पाओवगयाणं' पादपोषगतानाम्=
छिन्नवृक्षवनिष्पन्दतयाऽवस्थितानाम्, 'कालं अणवकंखमाणानं विहरित्तए त्ति कट्ठु' काल-
मानवकाङ्क्षतां=मरणमनिच्छतां विहर्तुमिति कृत्वा, 'अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसु-
णेंति' अन्योऽन्यस्याऽन्तिके एतमर्थं प्रतिशृण्वन्ति=स्वीकुर्वन्ति, 'पडिसुणित्ता' प्रतिश्रुत्य
'तिदंडए य जाव एगंते एडेंति' त्रिदण्डकांश्च यावत् सर्वोपकरणानि एकान्ते त्यजन्ति,
'गंगं महाणइं ओगाहेंति' गङ्गां महानदीमवगाहन्ते=अवतरन्ति, 'ओगाहित्ता' अवगाह्य=

(भक्तपाणपडियाइक्खियाणं) भक्तपान का प्रत्याख्यान कर (पाओवगयाणं) छिन्न-
वृक्ष की तरह निश्चेष्ट होते हुए (कालं अणवकंखमाणानं) मरण की इच्छा से रहित
होकर (संलेहणाझूसियाणं विहरित्तए) संलेखनापूर्वक मरण को प्रेम के साथ सेवन
करें। (त्तिकट्ठु) इस प्रकार विचारकर (अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति)
उन लोगोंने इस निर्धारित बात को स्वीकार कर लिया, (पडिसुणित्ता) स्वीकार करने
के बाद (तिदंडए य जाव एगंते एडेंति) फिर उन सबने अपने २ त्रिदंड आदि
उपकरणों को एकान्त में परित्यक्त कर दिया, (एडित्ता गंगं महाणइं ओगाहेंति)
परित्यक्त कर चुकने पर फिर वे सब के सब उस महानदी गंगा में प्रविष्ट हुए, (ओगा-

સંધારા બિછાવીએ, અને તેના પર (ભક્તપાણ-પડિયાઇક્ખિયાણં) ભક્તપાનનાં પ્રત્યા-
ખ્યાન કરીને (પાઓવગયાણં) પાદપોષગમન સંધારા કરીને (કાલં અણવકંખમાણાણં)
મરણની ઇચ્છાથી રહિત થઇને (સંલેહણાઝૂસિયાણં વિહરિત્તએ) સંલેખના-
પૂર્વક મરણનું પ્રેમથી સેવન કરીએ. (ત્તિકટ્ઠુ) આ પ્રકારનો વિચાર કરી
(અણ્ણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ઠં પડિસુણેંતિ) તે લોકોએ આ નિર્ધાર કરેલી વાતનો
સ્વીકાર કરી લીધો. (પડિસુણિત્તા) સ્વીકાર કર્યા પછી (તિદંડએ ચ જાવ એગંતે
એડેંતિ) તે બધાએ પોતપોતાનાં ત્રિદંડ આદિ ઉપકરણોને એકાન્ત સ્થાનમાં
પરિત્યક્ત કરી દીધાં. (એડિત્તા ગંગં મહાણઇં ઓગાહેંતિ) છોડી દીધા પછી તે

संथरित्ता वालुयासंथारयं दुरुहिति, दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहा
संपलियंकनिसण्णा करयल जाव कट्टु एवं वयासी ॥ सू० २५ ॥

मूलम्—नमोत्थु णं अरहंताणं जाव संपत्ताणं, नमोत्थु णं

अवतीर्य 'वालुयासंथारए' वालुकान्स्तारकान् 'संथरंति' संस्तृणन्ति, 'संथरित्ता' संस्तीर्य 'वालुयासंथारयं' वालुकान्स्तारकं 'दुरुहिति' दूरोहन्ति=आरोहन्ति, 'दुरुहित्ता' दूरुहय=आरुहय 'पुरत्थिमाभिमुहा' पौरस्त्याभिमुखाः=पूर्वदिङ्मुखाः, 'संपलियंकनिसण्णा' सम्पर्यङ्कनिषण्णाः—संपर्यङ्कः=पद्मासनं तेन निषण्णाः—पद्मासनेनोपविष्टाः, 'करयल जाव कट्टु एवं वयासी' करतल यावत्कृत्वा=मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा एवमवदन् ॥ सू० २५ ॥

टीका—'नमोत्थु णं' इत्यादि। 'नमोत्थु णं अरहंताणं जाव संपत्ताणं' नमोऽस्त्वर्हद्भ्यो यावत् सम्प्राप्तेभ्यः, यावच्छब्दात्—आदिकरेभ्यः, तीर्थङ्करेभ्यः स्वयं संबुद्धेभ्यः—इत्यादीनि विशेषणानि पूर्वार्धगतविंशतिमुख्यकसूत्राद् बोध्यानि । सिद्धगतिनामधेयं स्थानं सम्प्राप्तेभ्यः ।

हित्ता वालुआसंथारए संथरंति) उसे पार कर उन लोगोंने वालुकाका संथारा बिछाया, (संथरित्ता वालुयासंथारयं दुरुहिति) बिछाकर उसपर वे फिर चढ़ गये, (दुरुहित्ता) चढ़कर (पुरत्थाभिमुहा संपलियंकनिसण्णा करयल जाव कट्टु एवं वयासी) पूर्व दिशा की ओर मुँह कर पर्यङ्कासन से बैठ गये और दोनों हाथों को जोड़कर मस्तक पर लगा इस प्रकार कहने लगे ॥ सू० २५ ॥

‘णमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं’ इत्यादि ।

(णमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं) यावत् मुक्ति प्राप्त हुए श्री अर्हत्प्रभु को नमस्कार हो । (समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स नमोत्थु णं)

अधाय ते भट्टानदी गंगायां प्रविष्ट थया. (ओगाहित्ता वालुआसंथारए संथरंति) तेने पार करीने तेओओे आलुका (रेती) ना संथारा बिछाव्या. (संथरित्ता वालुयासंथारयं दुरुहिति) बिछावीने तेना उपर तेओे ओंठा. (दुरुहित्ता) ओसीने (पुरत्थाभिमुहा संपलियंकनिसण्णा करयल जाव कट्टु एवं वयासी) पूर्व दिशानी तरङ्ग ओठां राभी पर्यङ्क—आसनथी ओसी गया ओने ओन्ने हाथेने ओडीने मस्तक उपर राभीने आ प्रकारे ऊँछेवा लाज्या. (सू. २५)

‘णमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं’ इत्यादि.

(णमोत्थु णं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं) मुक्तिने प्राप्त थयेला श्री अर्हत्त प्रभुने नमस्कार हो. (समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स नमो-

સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ જાવ સંપાવિડકામસ્સ, નમો-
ત્થુ ણં અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ અમ્હં ધમ્માયરિયસ્સ ધમ્મોવદે-
સગસ્સ । પુઞ્ચિં ણં અમ્હેહિં અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ અંતિણ
થૂલગપાણાઙ્ગાણ પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ, સઁવે મુસાવાણ અદિ-
ણ્ણાદાણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ, સઁવે મેહુણે પચ્ચક્ખાણ જાવ-

‘નમોત્થુ ણં સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ જાવ સંપાવિડકામસ્સ’ નમોઽસ્તુ સ્વલુ શ્રમણાય
ભગવતે મહાવીરાય યાવત્ સમ્પ્રાપ્તુકામાય, ‘ નમોત્થુ ણં અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ અમ્હં
ધમ્માયરિયસ્સ ધમ્મોવદેસગસ્સ’ નમોઽસ્તુ સ્વલ્વમ્બડાય પરિવ્રાજકાય અસ્માકં ધર્માચાર્યાય
ધર્મોપદેશકાય । ધર્માચાર્યત્વં પ્રકટયતિ—‘ પુઞ્ચિં ણં અમ્હેહિં અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ
અંતિણ થૂલગપાણાઙ્ગાણ પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ ’ પૂર્વ સ્વલ્વસ્માભિરમ્બડસ્ય પરિ-
વ્રાજકસ્યાઽન્તિકે સ્થૂલપ્રાણાતિપાતઃ પ્રત્યાહ્યાતો યાવજ્જીવમ્—જીવનપર્યન્તં સ્થૂલપ્રાણાતિપાત-
વિરમગમસ્માભિરઙ્ગીકૃતમ્ । ‘ મુસાવાણ અદિણ્ણાદાણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ ’

શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો જો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને કે કામી હૈં નમસ્કાર હો ।
(ધમ્મોવદેસગસ્સ ધમ્માયરિયસ્સ અમ્હં પરિવ્વાયગસ્સ અમ્મહસ્સ નમોત્થુ ણં)
ધર્મ કે ઉપદેશક ધર્માચાર્ય એસે હમારે ગુરુ અમ્મહ પરિવ્રાજક કો નમસ્કાર હો ।
(પુઞ્ચિં ણં અમ્હેહિં અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ અંતિણ થૂલગપાણાઙ્ગાણ જાવજ્જીવાણ
પચ્ચક્ખાણ) પહિલે હમ લોગોં ને અમ્મહ પરિવ્રાજક કે સમીપ સ્થૂલપ્રાણાતિપાતકા યાવજ્જીવ
પ્રત્યાહ્યાન ક્રિયા હૈ । (સઁવે મુસાવાણ અદિણ્ણાદાણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ સઁવે
મેહુણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ થૂલપરિગ્ગહે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ) ઈસીં તરહ

ત્થુ ણં) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે જે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની કામનાવાળા
છે તેમને નમસ્કાર હો. (ધમ્મોવદેસગસ્સ ધમ્માયરિયસ્સ અમ્હં પરિવ્વાયગસ્સ અમ્મ-
હસ્સ નમોત્થુ ણં) ધર્મના ઉપદેશક ધર્માચાર્ય એવા અમારા ગુરુ અમ્મહ પરિ-
વ્રાજકને નમસ્કાર હો. (પુઞ્ચિં ણં અમ્હેહિં અમ્મહસ્સ પરિવ્વાયગસ્સ અંતિણ થૂલગપા-
ણાઙ્ગાણ જાવજ્જીવાણ પચ્ચક્ખાણ) પહેલાં અમે લોકોએ અમ્મહ પરિવ્રાજકની પાસે
સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતનું યાવજ્જીવ પ્રત્યાહ્યાન કર્યું છે, (સઁવે મુસાવાણ અદિણ્ણા-
દાણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ, સઁવે મેહુણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ, થૂલપરિગ્ગહે

જીવાણ, થૂલણ પરિગ્રહે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ, ઇયાણિં અમ્હે સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિણ સવ્વં પાણાઙ્ગવાયં પચ્ચ-
ક્ખામો જાવજ્જીવાણ, એવં જાવ સવ્વં પરિગ્રહં પચ્ચક્ખામો જાવજ્જી-
વાણ, સવ્વં કોહં માણં માયં લોહં પેજ્જં દોસં કલહં અબ્ભક્ખાણં

મૃષાવાદોઽદત્તાઽઽદાનં પ્રત્યાહ્યાતં યાવજ્જીવમ્, ‘સવ્વે મેહુણે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ સર્વં મૈથુનં પ્રત્યાહ્યાતં યાવજ્જીવમ્, ‘થૂલણ પરિગ્રહે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ’ સ્થૂલઃ પરિગ્રહઃ પ્રત્યાહ્યાતો યાવજ્જીવમ્ । ‘ઇયાણિં અમ્હે સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિણ સવ્વં પાણાઙ્ગવાયં પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાણ’ ઇદાનીં વયં શ્રમણસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્યા-
ઽન્તિકે સર્વં પ્રાણાતિપાતં પ્રત્યાહ્યામો યાવજ્જીવમ્, ‘એવં જાવ સવ્વં પરિગ્રહં પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાણ’ એવં યાવત્ સર્વં પરિગ્રહં પ્રત્યાહ્યામો યાવજ્જીવમ્, ‘સવ્વં કોહં માણં માયં લોહં પેજ્જં દોસં કલહં અબ્ભક્ખાણં પેસુણં પરપરિવાયં અરરરં માયામોસં

સમસ્ત મૃષાવાદ કા સમસ્ત અદત્તાદાન કા જીવનપર્યન્ત પરિત્યાગ કર દિયા હૈ, સમસ્ત મૈથુન કા યાવજ્જીવન પરિત્યાગ કર દિયા હૈ । સ્થૂલ પરિગ્રહ કા મી યાવજ્જીવન પરિત્યાગ કર દિયા હૈ । (ઇયાણિં અમ્હે સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિણ સવ્વં પાણાઙ્ગવાયં પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાણ) અવ ઇસ સમય હમ સવ લોગ શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કે સમીપ પુનઃ સમસ્ત પ્રાણાતિપાત કા જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાહ્યાન કરતે હૈ, (એવં જાવ સવ્વં પરિગ્રહં પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાણ) ઇસી તરહ સમસ્ત પરિગ્રહ આદિ કા મી જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાહ્યાન કરતે હૈ, (સવ્વં કોહં માણં માયં લોહં પેજ્જં દોસં કલહં

પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ) એવી રીતે સમસ્ત મૃષાવાદનો અને સમસ્ત અદત્તા-
દાનનો જીવનપર્યન્ત પરિત્યાગ કરી દીધો છે, સમસ્ત મૈથુનનો જીવનપર્યન્ત
પરિત્યાગ કરી દીધો છે. સ્થૂલ પરિગ્રહનો પણ યાવજ્જીવન પરિત્યાગ કરી
દીધો છે. (ઇયાણિં અમ્હે સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિણ સવ્વં પાણાઙ્ગવાયં
પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાણ) હવે આ સમયે અમે અધ્યાય લોકો શ્રમણુ લગવાન
મહાવીરની પાસે વળી પાછા સમસ્ત પ્રાણાતિપાતનું જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાહ્યાન
કરીએ છીએ. (એવં જાવ સવ્વં પરિગ્રહં પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાણ) એવી જ
રીતે સમસ્ત પરિગ્રહ આદિનું પણ જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાહ્યાન કરીએ છીએ.
(સવ્વં કોહં માણં માયં લોહં પેજ્જં દોસં કલહં અબ્ભક્ખાણં પેસુણં પરપરિવાયં અરરરં

पेसुणं परपरिवायं अरइरइं मायामोसं मिच्छादंसणसल्लं अकर-
णिज्जं जोगं पच्चक्खामो जावज्जीवाए, सव्वं असणं पाणं खाइमं
साइमं चउव्विहंपि आहारं पच्चक्खामो जावज्जीवाए, जं पि य इमं

मिच्छादंसणसल्लं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामो जावज्जीवाए ' सर्वं क्रोधं मानं मायां
लोभं प्रियं द्वेषं कलहम् अभ्याख्यानं पैशुन्यं परपरिवादम् अरतिरती मायामृषा मिथ्यादर्शन-
शल्यमकरणीयं योगं प्रत्याख्यामो यावज्जीवम्—अत्रत्यानि सर्वाणि पदानि प्राग् व्याख्यातानि ।
' सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहंपि आहारं पच्चक्खामो जावज्जीवाए '
सर्वमशनं पानं खाद्यं स्वाद्यं चतुर्विधमपि आहारं प्रत्याख्यामो यावज्जीवम् । ' जंपि य इमं
सरीरं इदं कंतं पियं मणुणं मणामं पेज्जं थेज्जं वेसासियं संमयं बहुमयं अणुमयं
भंडकरंडगसमाणं, मा णं सीयं मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं पिवासा मा णं वाला मा णं

अब्भक्खाणं पेसुणं परपरिवायं अरइरइं) इसी तरह उन्हीं की साक्षीपूर्वक समस्त क्रोध
का, समस्त मान का, समस्त माया का, समस्त लोभ का, समस्त प्रिय का, समस्त द्वेष
का, कलह का, अभ्याख्यान का, पैशुन्य का, परपरिवाद का, अरति—रति का (माया-
मोसं) मायामृषा का, (मिच्छादंसणसल्लं) मिथ्यादर्शन शल्य का, (अकरणिज्जं जोगं)
एवं अकरणीय योग का (पच्चक्खामो जावज्जीवाए) यावज्जीव प्रत्याख्यान करते हैं ।
(सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहंपि आहारं पच्चक्खामो जावज्जीवाए)
समस्त, अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य इन चार प्रकार के आहारों का यावज्जीव प्रत्याख्यान
करते हैं । (जं पि य इमं सरीरं इदं कंतं पियं मणुणं मणामं पेज्जं थेज्जं वेसासियं
संमयं बहुमयं अणुमयं भंडकरंडगसमाणं, मा णं सीयं मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं

रइं) એવી રીતે તેમની જ સાક્ષીપૂર્વક સમસ્ત ક્રોધનું, સમસ્ત માનનું,
સમસ્ત માયાનું, સમસ્ત લોભનું, સમસ્ત પ્રિયનું, સમસ્ત દ્વેષનું, કલહનું
અભ્યાખ્યાનનું (આળનું), પૈશુન્યનું, પરપરિવાદનું, અરતિનું, રતિનું, (માયામોસં)
માયામૃષાનું, (મિચ્છાદંસણસલ્લં) મિથ્યાદર્શનશલ્યનું, (અકરણિજ્જં જોગં)
તેમજ અકરણીય યોગનું (પચ્ચક્ખામો જાવજ્જીવાએ) જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન
કરીએ છીએ. (સવ્વં અસણં પાણં ખાઇમં સાઇમં ચઉવ્વિહંપિ આહારં પચ્ચ-
ક્ખામો જાવજ્જીવાએ) સમસ્ત અશન, પાન, ખાદ્ય, સ્વાદ્ય વગેરે ચાર પ્રકારના
આહારોનું યાવજ્જીવન પ્રત્યાખ્યાન કરીએ છીએ. (જં પિ ય ઇમં સરીરં
ઇદં કંતં પિયં મણામં મણુણં પેજ્જં થેજ્જં વેસાસિયં સંમયં બહુમયં અણુમયં ભંડકરંડગ-

सरीरं इष्टं कंतं प्रियं मणुष्यं मणामं पेज्जं थेज्जं वेसासियं संमयं
बहुमयं अणुमयं भंडकरंडगसमाणं, माणं सीयं मा णं उण्हं मा णं

चोरा मा णं दंसा मा णं मसगा मा णं वाइयपित्तियसिंभियसंनिवाइय विविहा
रोगायंका परिसहोवसग्गा फुसंतु ' इदं=पुरतो वर्तमानं शरीरम् इष्टं=वल्लभम्, कान्तं=
कमनीयम्, प्रियं=सदा प्रेमाऽऽस्पदम्, मनोज्ञं=सुन्दरम्, मनोऽमं=मनसाऽभ्यते=प्राप्यते पुनः
पुनः संस्मरणतो यत्तन्मनोऽमम्, प्रेयः=सर्वपदार्थेष्वतिशयेन प्रियमिति प्रेयः, अथवा कालान्तर-
नयनात्प्रेर्यम्, स्थैर्यं=स्थैर्यवत्-स्थिरम् इत्यर्थः, वैश्वासिकम्-विश्वासः प्रयोजनम्-अस्येति वैश्वा-
सिकम्-प्राणिनां परशरीरमेव प्राचुर्येणा ऽविश्वासहेतुः, निजशरीरं तु प्रतीतिपात्रमेव भवति, संमतं-
तत्कृतकार्याणां सम्मतत्वात्, बहुमतं-बहुशो बहूनां वा मध्ये मतम्-इष्टं यत्तद्बहुमतम्, अनुमतं=वैगु-
ण्यदर्शनेऽपि अनु=गच्छात्=मतम्-अनुमतम्, अतएव भाण्डकरण्डकसमानं-भाण्डानाम्=भूषणानां
करण्डकसमानं--भूषणमञ्जूषातुल्यमुपादेयमित्यर्थः, एतादृशं शरीरं मा शीतं=शैत्यं स्पृशतु, मा-

पिवासा मा णं वाला मा णं चोरा मा णं दंसा मा णं मसगा मा णं वाइयपित्तिय-
सिंभियसंनिवाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गा फुसंतु) यहां पर सर्वत्र
“मा” शब्द निषेध अर्थ में, एवं “णं” शब्द वाक्यालंकार में प्रयुक्त हुआ समझना
चाहिये । इष्ट-वल्लभ; कान्त-कमनीय, प्रिय-सदा प्रेमास्पद, मनोज्ञ-सुन्दर, मनोम-समस्त
की अपेक्षा अत्यंत प्रिय, स्थैर्य-स्थिरतायुक्त, वैश्वासिक-पर शरीर की अपेक्षा जीवों को
अपना शरीर अतिशय प्रीति का स्थान होता है इस अपेक्षा अतिशय प्रीतिका पात्र, शारीरिक
कार्यों के संमत होने से संमत, बहुत करके अथवा बहुतों के मध्य में इष्ट होने से बहुमत,
अनुमत-विगुणता के दिखने पर भी प्रेम का स्थानभूत, जिस प्रकार भूषणों का करंडक प्रिय

समाणं मा णं सीयं मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं पिवासा मा णं वाला मा णं चोरा
मा णं दंसा मा णं मसगा मा णं वाइयपित्तियसिंभियसंनिवाइय विविहा रोगायंका
परीसहोवसग्गा फुसंतु) अर्थात् सर्वत्र 'मा' शब्द निषेधना अर्थमां तेभ्य 'णं'
शब्द वाक्यालंकारमां वापरेवो समञ्जो जेष्ठो. इष्ट-वल्लभ, कान्त-कम-
नीय, प्रिय-सदा प्रेमास्पद, मनोज्ञ-सुन्दर, मनोम-समस्तनी अपेक्षा अत्यंत
प्रिय, स्थैर्य-स्थिरतायुक्त, वैश्वासिक-भीषणानां शरीरनी अपेक्षा जेष्ठोने
पोतानां शरीर अतिशय प्रीतिनुं स्थान डोय छे-जे दृष्टिजे अतिशय प्रीतिने
पात्र, शारीरिक कार्यों माटे संमत डोवाथी संमत, धर्तुं करीने अथवा धर्तु-
ओनी वयमां इष्ट तेथी बहुमत, अनुमत-विगुणता जेवा छतां पण प्रेमना
स्थानभूत, जे प्रकारे धरेणानो करंडीयो प्रिय डोय छे तेवी रीते प्रिय डोवाने

खुहा मा णं पिवासा मा णं वाला मा णं चोरा मा णं मसगा मा णं
वाइयपित्तिर्यासभियसंनिवाइय विविहा रोगायंका परिसहोव-
सग्गा फुसंतु—त्ति कट्टु एयंपि णं चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं वोसि-

शब्दा निषेधार्थः, 'णं' शब्दा वाक्यालङ्कारार्थः; शैत्यं कर्तुं शरीरकर्मकं स्पर्शनं न करोतु, एवमेवोष्ण-
क्षुधा-पिपासा-व्याल-चौर-दंश-मशक-वातिक-पैत्तिक-श्लैष्मिक-सन्निपातिकादयो विविधा रोगा-
तङ्काः परीषहा उपसर्गाश्चैतच्छरीरं न स्पृशन्तु। अत्र व्यालाः=सर्पाः, रोगाः=महाव्याधयः,
आतङ्काः=सद्योधातिनो रोगा एव, परीषहाः क्षुधादयो द्वाविंशतिः, उपसर्गाः=दिव्यादयः, अन्यत्
सुगमम्। 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा 'एयं पि णं चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं वोसिरामि
त्तिकट्टु' एतदपि खलु चरमैरुच्छ्वासनिःश्वासास्युत्सृजामि—एतदपि शरीरं त्यजामि इति कृत्वा=
इत्थं विचार्य 'संलेहणाञ्जसणाञ्जसिया' संलेखना-जूषणा-जुष्टाः-संलेखनायां=कषाय-

होता है उसी प्रकार से प्रिय होने कारण भाण्डकण्डक के तुल्य (इमं) इस मेरे (सरीरं) शरी-
रको शीत स्पर्श न करे, उष्ण स्पर्श न करे, क्षुधा स्पर्श न करे, पिपासा स्पर्श न करे, व्याल-सर्प
स्पर्श न करे, चोर उपद्रव न करे, दंस-डांस स्पर्श न करे, मशक-मच्छर स्पर्श न करे, वात-
संबंधी, पित्तसंबंधी, कफसंबंधी, सन्निपातसंबंधी आदि विविध रोग-महाव्याधियां, आतंक-सद्यः-
प्राणहर रोग, परीषह-क्षुधाआदि एवं उपसर्ग-देवादिक कृत उपद्रव, कोई भी इस शरीर को
स्पर्श न करें; (त्तिकट्टु) इस प्रकार की विचारधारा को (चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं वोसि-
रामि) अब चरम उच्छ्वासनिःश्वास तक छोड़ते हैं। (त्तिकट्टु) इस तरह करके (संले-
हणाञ्जसणाञ्जसिया) संलेखना में-कषाय एवं शरीर के कृश करने में प्रीति से युक्त वे

कारणों लांडकरं उकना तुल्य (इमं) आ भारां (सरीरं) शरीरने ठंडी स्पर्श न
करे, गरमी स्पर्श न करे, लूण स्पर्श न करे, तरस स्पर्श न करे, व्याल-
सर्प स्पर्श न करे, चोर उपद्रव न करे, दंश-डांस स्पर्श न करे, मशक-
मच्छर स्पर्श न करे, वातसंबंधी, पित्तसंबंधी, कफसंबंधी, सन्निपात-
संबंधी आदि विविध रोग-महाव्याधियों, आतंक-तीव्रप्राणहर रोग, परी-
षह-क्षुधाआदि तेमज उपसर्ग-देवादिक कृत उपद्रव, एवं कांछ पणु आ
शरीरने स्पर्श न करे. (त्ति कट्टु) आ प्रकारनी विचारधाराने (चरमेहिं ऊसा-
सणीसासेहिं वोसिरामि) डवे चरम उच्छ्वासनिःश्वास सुधी छोड़ुं छुं. (त्तिकट्टु)
आवी रीते करीने (संलेहणाञ्जसणाञ्जसिया) संलेखनामां-कषाय तेमज शरीरने
कृश करवामां प्रीतिथी युक्त, ते अधा (भूतपाणपडियाइक्खिया) लक्ष्ण तेमज

रामि-त्ति कट्टु संलेहणाद्भूसणाद्भूसिया भत्तपाणपडियाइक्खिया
पाओवगया कालं अणवकंखमाणा विहरंति ॥ सू० २६ ॥

मूलम्—तए णं ते परिव्वायगा बहूइं भत्ताइं अणसणाए
छेदेति, छेदिता आलोइयपडिकंता समाहिपत्ता कालमासे कालं

शरीरकृशीकरणे या जोषणा=प्रीतिः तथा जुष्टाः=सेविताः, 'भत्तपाणपडियाइक्खिया' प्रत्याख्यातभक्तपानाः, 'पाओवगया' पादपोषगताः=वृक्षवन्निष्पन्दतया स्थिताः, 'कालं अणवकंखमाणा' कालमनवकाङ्क्षन्तः, केचिद् वेदनाविकला मरणमिच्छन्ति तेषां निषेधार्थमेतद्वाक्यम्, एवम्भूता विहरन्ति—अम्बडपरिव्राजकशिष्या इति ॥ सू० २६ ॥

टीका—'तए णं ते परिव्वायगा' इत्यादि । 'तए णं ते परिव्वायगा' ततः खलु ते परिव्राजकाः—अम्बडशिष्याः कृतकायोत्सर्गाः—'बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेति' बहूनि भक्तानि अनशनेन छिन्दन्ति, 'छेदिता' छित्वा 'आलोइयपडिकंता' आलोचितप्रतिक्रान्ताः=गुरुजनस्य समीपे कृताऽऽलोचनाः, प्रतिक्रान्ताः—पापस्थानात्पश्चा-

सब के सब (भत्तपाणपडियाइक्खिया) भक्त एवं पान का प्रत्याख्यान करके (पाओ-वगया) वृक्ष की तरह निश्चेष्ट होकर (कालं अणवकंखमाणा विहरंति) मरने की इच्छा नहीं करते हुए स्थित हो गये ॥ सू० २६ ॥

'तए णं ते परिव्वायगा' इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (ते परिव्वायगा) उन समस्त परिव्राजकोंने (बहूइं भत्ताइं) चारों प्रकार के आहार का (अणसणाए) अनशन द्वारा (छेदेति) छेद कर दिया, (छेदिता) छेद करने के बाद (आलोइयपडिकंता) अपने अतिचारों की

पाननुं प्रत्याख्यान करीने (पाओवगया) वृक्षनी पेठे निश्चेष्ट थधने (कालं अणवकं-खमाणा विहरंति) भस्वानी छच्छा नहीं करतां स्थित थध गया. (सू. २६)

'तए णं ते परिव्वायगा' इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (ते परिव्वायगा) ते अधा परिव्राजकेअये (बहूइं भत्ताइं) थारेय प्रकारना आहारना (अणसणाए) अनशन द्वारा (छेदेति) छेद करी दीधो. (छेदिता) छेद करी दीधो पछी (आलोइयपडिकंता) पोताना अति-थारेनी आलोचना करी. पछी तेअो तेनाथी निवृत्त थया. (समाहिपत्ता)

કિચ્ચા બંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવણ્ણા । તહિં તેસિં ગઈ । દસ સાગરોવમાઈં ઠિઈ પળ્ણત્તા, પરલોગસ્સ આરાહગા, સેસં તં ચેવ ॥ સૂ. ૨૭ ॥

મૂલમ—બહુજણે ણં મંતે ! અળ્ણમળ્ણસ્સ એવમાઈ-

ત્પરાવૃત્તાઃ, ‘સમાહિપત્તા’ સમાધિપ્રાપ્તાઃ=ઉપશાન્તહૃદયાઃ, ‘કાલમાસે કાલં કિચ્ચા’ કાલમાસે કાલં કૃત્વા, ‘બંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવણ્ણા’ બ્રહ્મલોકે કલ્પે દેવત્વેનો-પપન્નાઃ, દેશવિરતિફલં ત્વેષાં પરલોકાઃસરાધકત્વમેવ । પરિવાજકક્રિયાફલં બ્રહ્મલોકગમનમ્ । ‘તહિં તેસિં ગઈ’ તત્ર તેષાં ગતિઃ, ‘દસ સાગરોવમાઈં ઠિઈ પળ્ણત્તા’ દશસાગરોપમાગિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા, ‘પરલોગસ્સ આરાહગા’ પરલોકસ્યાસરાધકાઃ સન્તીત્યર્થઃ, ‘સેસં તં ચેવ’ શેષં તદેવ ॥ સૂ. ૨૭ ॥

ટીકા—‘બહુજણે ણ મંતે !’ इत्यादि । बहुजनः=जनसमूहः खलु हे भवन्त !

આલોચના કી, પશ્ચાત્ વે અને પરાવૃત્ત હુણ । ફિર (સમાહિપત્તા) સમાધિ પ્રાપ્ત કર (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા બંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવણ્ણા) કાલ-અવસર મેં કાલ કરકે બ્રહ્મલોક કલ્પ મેં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હુણ । (તહિં તેસિં ગઈ, દસસાગરોવ-માઈં ઠિઈ પળ્ણત્તા, પરલોગસ્સ આરાહગા, સેસં તં ચેવ) વહીં પર અનેકી ગતિ પ્રરૂપિત કરને મેં આઈ હે । સ્થિતિ અનેકી ૧૦ સાગર પ્રમાણ હે । યે પરલોક કે નિયમ સે આરાધક કહે ગયે હે । શેષ પહિણે કી તરહ સમજના ચાહિયે ॥ સૂ. ૨૭ ॥

‘બહુજણે ણ મંતે’ इत्यादि ।

પુનઃ ગૌતમસ્વામી ને ભક્તિપૂર્વક પ્રભુ સે પૂછા કિ (મંતે) હે ભગવન્ ! (બહુ-

અને સમાધિ પ્રાપ્ત કરીને (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા બંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવણ્ણા) કાલ-અવસરે કાલ કરીને બ્રહ્મલોક કલ્પમાં દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થય . (તહિં તેસિં ગઈ, દસસાગરોવમાઈં ઠિઈ પળ્ણત્તા, પરલોગસ્સ આરાહગા, સેસં તં ચેવ) ત્યાં જ તેમની ગતિ પ્રરૂપિત કરવામાં આવી છે. તેમની સ્થિતિ ૧૦ સાગર પ્રમાણ છે. તેઓને નિશ્ચિતરૂપથી પરલોકનાં આધારક કહેવામાં આવ્યા છે. બાકીનું અગાઉની પેઠે સમજી લેવું જોઈએ. (સૂ. ૨૭)

‘બહુજણે ણ મંતે’ इत्यादि.

વળી ગૌતમ સ્વામીએ ભક્તિપૂર્વક પ્રભુને પૂછ્યું કે (મંતે!) હે ભગવન્ !

क्खइ एवं भासइ एवं पन्नवेइ एवं परूवेइ । एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए आहारमाहारेइ, घरसए वसहिं उवेइ । से कहमेवं भंते ! एवं ॥ सू० २८ ॥

मूलम्—गोयमा ! जं णं से बहुजणे अण्णमण्णस्स

‘अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ’ अन्योन्यमेवमाख्याति=हे भगवन् ! जनसमूहः परस्परमित्थं वक्ति, ‘एवं भासइ’ एवं भाषते, ‘एवं पन्नवेइ’ एवं प्रज्ञापयति, ‘एवं परूवेइ’ एवं प्ररूपयति, ‘एव खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे’ एवं खल्वम्बडः परिव्राजकः कम्पिल्यपुरे नगरे, ‘घरसए आहारमाहारेइ’ गृहशतादाहारमाहरति=भिक्षां गृह्णाति, ‘घरसए वसहिं उवेइ’ गृहशते वसतिमुपैति, ‘से कहमेयं भंते एवं’ तत् कथमेतद् भगवन् ! एवम्—इति भगवन्तं प्रति शिष्यप्रश्नः ॥ सू० २८ ॥

टीका—भगवानाह—‘गोयमा !’ इत्यादि । ‘जं णं से बहुजणे अण्णमण्ण-

जणे णं) बहुत से लोग (अण्णमण्णस्स) परस्पर जो (एवमाइक्खइ) इस प्रकार कहते हैं, (एवं भासइ) इस प्रकार भाषण करते हैं, (एवं पन्नवेइ) इस प्रकार अच्छी तरह ज्ञापित करते हैं, (एवं परूवेइ) इस प्रकार प्ररूपित करते हैं कि (एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए आहारमाहारेइ) ये अम्बडपरिव्राजक कंपिल्लपुर नगर में सौ घरों में आहार करते हैं, एवं (घरसए वसहिं उवेइ) सौ घरों में निवास करते हैं; (से) सो (भंते !) हे भदंत ! (कहमेयं) यह बात कैसे है ? ॥ सू० २८ ॥

‘गोयमा ! जं णं से बहुजणे’ इत्यादि ।

प्रभु गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि (गोयमा !) हे गौतम !

(बहुजणे णं) धृषु। दो।के। (अण्णमण्णस्स) परस्पर ने (एवमाइक्खइ) आ प्रकारे उडे छे, (एवं भासइ) आ प्रकारे लाषणु करे छे, (एवं पन्नवेइ) आ प्रकारे सारी रीते ज्ञापित करे छे (जणु।वे छे), (एवं परूवेइ) आ प्रकारे प्ररूपित करे छे के (एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए आहारमाहारेइ) अम्बड परिव्राजक कंपिल्लपुर नगरमां सो घरमां आहार करे छे तेमज (घरसए वसहिं उवेइ) सो घरमां निवास करे छे, (से) तो (भंते !) डे लदन्त ! (कहमेयं) आ बात केवी छे ? (सू. २८)

‘गोयमा ! जं णं से बहुजणे’ इत्यादि.

प्रभु गौतमना प्रश्ननो उत्तर आपतां उडे छे के (गोयमा !) डे

एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ—एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे जाव घरसए वसहिं उवेइ । सच्चे णं एसमट्ठे, अहंपि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव एवं परूवेमि—एवं खलु अम्मडे परिव्वायए जाव वसहिं उवेइ ॥ सू० २९ ॥

સસ એવમાઇક્ખઇ'હે ગૌતમ ! યત્ખલુ સ બહુજનોઽન્યોઽન્યમ્ એવમાહ્યાતિ, યાવદેવં પ્રરૂપયતિ, 'એવં યલુ અમ્મડે પરિવ્વાયએ કંપિલ્લપુરે જાવ ઘરસએ વસહિં ઉવેઇ' એવં યલ્લ્વમ્બડઃ પરિવ્રાજકઃ કામ્પિલ્લપુરે યાવદ્ ગૃહશતે વસતિમુપૈતિ—ઇતિ યત્ત્વયા પૃચ્છ્યતે । 'સચ્ચે ણં એસ-મટ્ઠે' સત્યઃ સ્વલ્લેષોઽર્થઃ । 'અહંપિ ણં ગોયમા ! એવમાઇક્ખામિ' અહમપિ યલુ ગૌતમ ! એવમાહ્યામિ, 'જાવ એવં પરૂવેમિ' યાવદેવં પ્રરૂપયામિ=પ્રરૂપણાં કરોમિ, 'એવં યલુ અમ્મડે પરિવ્વાયએ જાવ વસહિં ઉવેઇ' એવં યલુ અમ્બડઃ પરિવ્રાજકો યાવદ્ વસતિમુપૈતિ—ગૃહશતાદ્ ભિક્ષાં ગૃહ્ણાતિ, ગૃહશતે વસતિં કરોતિ, ઇતિ ॥ સૂ૦ ૨૯ ॥

(જં) જો (સે) વે (બહુજણે) બહુત સે લોગ (અણ્ણમણ્ણસ્સ) પરસ્પર દૂસરે સે (એવમાઇ-ક્ખઇ જાવ પરૂવેઇ) ઇસ પ્રકાર કહતે હૈં યાવત્ ઇસ પ્રકાર પ્રરૂપિત કરતે હૈં કિ (એવં યલુ અમ્મડે પરિવ્વાયએ કંપિલ્લપુરે) યે અમ્બડ પરિવ્રાજક કંપિલ્લપુર નગર મેં (જાવ ઘરસએ વસહિં ઉવેઇ) સૌ ઘરોં મેં ભિક્ષા લેતે હૈં ઓર સૌ ઘરોં મેં નિવાસ કરતે હૈં; સો (સચ્ચે ણં એસમટ્ઠે) યહ વાત બિલકુલ ઠીક હૈં । (અહં પિ ણં ગોયમા ! એવમાઇક્ખામિ) ગૌતમ ! મૈં મી ઇસી તરહ કહતા હું (જાવ એવં પરૂવેમિ) યાવત્ ઇસી તરહ પ્રરૂપિત કરતા હું કિ (એવં યલુ અમ્મડે પરિવ્વાયએ જાવ વસહિં ઉવેઇ) યે અમ્બડ પરિ-વ્રાજક સૌ ઘરોં મેં આહાર કરતે હૈં ઓર સૌ ઘરોં મેં નિવાસ કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૨૯ ॥

ગૌતમ ! (જં) જે (સે) તેઓ (બહુજણે) ઘણા લોકો (અણ્ણમણ્ણસ્સ) પરસ્પર એક બીજાને (એવમાઇક્ખઇ જાવ પરૂવેઇ) આ પ્રકારે કહે છે યાવત્ આ પ્રકારે પ્રરૂપિત કરે છે કે (એવં યલુ અમ્મડે પરિવ્વાયએ કંપિલ્લપુરે) તે અમ્મડ પરિવ્રાજક કંપિલ્લપુર નગરમાં (જાવ ઘરસએ વસહિં ઉવેઇ) સૌ ઘરોંથી ભિક્ષા લે છે અને સૌ ઘરોંમાં નિવાસ કરે છે તે । (સચ્ચે ણં એસમટ્ઠે) આ વાત બિલકુલ ઠીક છે. (અહંપિ ણં ગોયમા ! એવમાઇક્ખામિ) ગૌતમ ! હું પણ એજ રીતે કહું છું. (જાવ એવ પરૂવેમિ) યાવત્ એવી જ રીતે પ્રરૂપિત કરું છું કે (એવં યલુ અમ્મડે પરિવ્વાયએ જાવ વસહિં ઉવેઇ) એ અમ્મડ પરિ-વ્રાજક સૌ ઘરોંમાં આહાર કરે છે અને સૌ ઘરોંમાં નિવાસ કરે છે. (સૂ. ૨૯)

मूलम्—से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अम्मडे परि-
व्वायए जाव वसहिं उवेइ ॥ सू० ३० ॥

मूलम्—गोयमा ! अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स पगइ-
भइयाए जाव विणीययाए छट्ठंछट्टेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं

टीका—पुनर्गौतमः पृच्छति—‘से केणट्टेणं’ इत्यादि। ‘से केणट्टेणं भंते ! एवं वुच्चइ’ तत् केनार्थेन हे भदन्त ! एवमुच्यते—‘अम्मडे परिव्वायए जाव वसहिं उवेइ’ अम्बडः परिव्राजको यावद् वसतिमुपैति, गृहशताद्रभिक्षां करोति, गृहशते वसतिं स्वीकरोति, इति ॥ सू० ३० ॥

टीका—भगवानाह—‘गोयमा !’ इत्यादि। हे गौतम ! ‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स पगइभइयाए’ अम्बडस्य खलु परिव्राजकस्य प्रकृतिभद्रतया—प्रकृतेः=स्वभावस्य भद्रतया=सरलतया ‘जाव विणीययाए’ यावद्विनीततया—यावच्छब्दादिदं दृश्यं—प्रकृत्युपशान्ततया प्रकृतितनुक्रोधमानमायालोभतया मृदुमार्दवसम्पन्नतयाऽऽलीनतया इति,

‘से केणट्टेणं’ इत्यादि।

(भंते) हे भदन्त ! (से केणट्टेणं एवं वुच्चइ) आप यह किस आशय से कहते हैं कि—(अम्मडे परिव्वायए जाव वसहिं उवेइ) अम्बड परिव्राजक सौ घरों में आहार करते हैं और सौ घरों में निवास करते हैं ॥ सू. ३० ॥

‘गोयमा ! अम्मडस्स णं’ इत्यादि।

(गोयमा) हे गौतम ! यह अम्बड परिव्राजक (पगइभइयाए जाव विणीय-याए) प्रकृति से भद्र है, अल्प क्रोध, मान, माया एवं लोभ—कषायवाला है, स्वभावतः

‘से केणट्टेणं’ इत्यादि।

(भंते !) हे भदन्त ! (से केणट्टेणं एवं वुच्चइ) आप ये क्या हेतुથી कहते हैं—(अम्मडे परिव्वायए जाव वसहिं उवेइ) अम्बड परिव्राजक सौ घरों में आहार करते हैं और सौ घरों में निवास करते हैं ? (सू. ३०)

‘गोयमा ! अम्मडस्स णं’ इत्यादि।

(गोयमा !) हे गौतम ! आ अम्बड परिव्राजक (पगइभइयाए जाव विणीययाए) प्रकृतिથી भद्र है, अल्प क्रोध, मान, माया, तेमज दोष कषायवाला है; स्वभावतः मृदु—मार्दव शुशुधी युक्त है; तथा अत्यंत विनीत

उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ सूराम्भिमुहस्स आयावणभूमीए आया-
वेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं पसत्थाहिं
लेसाहिं विमुज्झमाणीहिं अन्नया कयाइं तदावरणिज्जाणं कम्माणं

विनयशीलतया, 'छट्छट्टेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं' षष्ठषष्ठेन अनिक्षिप्तेन तपः—
कर्मणा-मुहुर्दिनद्वयाऽनशनरूपेण अविश्रान्तेन तपोरूपेण कर्मणा, 'उड्ढं बाहाओ पगि-
ज्झिय २' ऊर्ध्वं बाहू प्रगृह्य २=बाहू ऊर्ध्वं कृत्वा 'सूराम्भिमुहस्स आयावणभूमीए
आयावेमाणस्स' सूर्याभिमुखस्याऽऽतापनाभूमावातापयतः 'सुभेणं परिणामेणं' शुभेन
परिणामेन=शुभ-रूपयाऽऽत्मपरिणत्या, 'पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं' प्रशस्तैरध्यवसानैः—
उत्तममनोविशेषैः, 'पसत्थाहिं लेसाहिं विमुज्झमाणीहिं' प्रशस्ताभिर्लेश्याभि-
र्विशुध्यमानाभिः 'अन्नया कयाइं' अन्यदा कदाचित् 'तदावरणिज्जाणं कम्माणं

मृदुमार्दव गुण से युक्त है, तथा अत्यंत विनीत भी है। (अनिक्खित्तेणं) तथा लगातार
(छट्छट्टेणं तवोकम्मेणं) छठ छठ—बेला—की तपस्या करनेवाला है। एवं (उड्ढं
बाहाओ पगिज्झिय २) बाहुओं को ऊपर उठा कर, (सूराम्भिमुहस्स) सूर्य के सन्मुख
(आयावणभूमीए आयावेमाणस्स) आतापना के योग्य प्रदेश में आतापना लेता है।
अतः (अम्मडस्स परिव्वायगस्स) इस अम्बड परिव्राजक को (सुभेणं परिणामेणं)
शुभ परिणाम से—शुभरूप आत्मा की परिणति से, (पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं) प्रशस्त
अध्यवसानों से—उत्तम विचारधाराओं से, (पसत्थाहिं लेसाहिं विमुज्झमाणीहिं)
प्रशस्त लेश्याओं की विशुद्धि होने से, (अण्णया कयाइं) किसी एक समय (तदावर-
णिज्जाणं कम्माणं) तदावरणीय कर्मों—वीर्य के, वैक्रियलब्धि के एवं अवधि ज्ञान के

પણ છે. (અનિક્ખિત્તેણં) તથા લગાતાર (છટ્છટ્ટેણં તવોકમ્મેણં) છઠ છઠ—
બેલા—ની તપસ્યા કરવાવાળા છે. તેમજ (ઉડ્ઢં બાહાઓ પગિજ્ઞિય ૨) હાથને
ઉંચા કરીને (સૂરામ્ભિમુહસ્સ) સૂર્યની સન્મુખ (આયાવણભૂમીએ આયા-
વેમાણસ્સ) આતાપનાને યોગ્ય પ્રદેશમાં આતાપના લે છે આથી (અમ્મડસ્સ
પરિવ્વાયગસ્સ) એ અમ્બડ પરિવ્રાજકને (સુભેણં પરિણામેણં) શુભ પરિણામથી,
શુભરૂપ આત્માની પરિણતિથી, (પસત્થેહિં અજ્ઞવસાણેહિં) પ્રશસ્ત અધ્યવ-
સાનોથી—ઉત્તમ વિચારધારાઓથી, (પસત્થાહિં લેસાહિં વિમુજ્જમાણીહિં) પ્રશસ્ત
લેશ્યાઓની વિશુદ્ધિ થવાથી (અણ્ણયા કયાઈં) કોઈ એક સમય (તદાવરણિ-
જ્ઞાણં કમ્માણં) તદાવરણીય કર્મો—વીર્ય, વૈક્રિયલબ્ધિ અને અવધિજ્ઞાનના

खओवसमेणं ईहावूहामग्गणगवेसणं करेमाणस्स वीरियलद्धी
वेउव्वियलद्धी ओहिणाणलद्धी समुप्पण्णा । तए णं से अम्मडे
परिवायगे तीए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहीणाणलद्धीए

खओवसमेणं ' तदावरणीयानां=कर्मणां वीर्यवैक्रियलब्धवधिज्ञानावरणीयानां क्षयोपशमेन,
'ईहा-वूहा-मग्गण-गवेसणं करेमाणस्स' ईहा-व्यूह-मार्गण-गवेषणं कुर्वतः-तत्र-ईहा=
मतिज्ञानभेदः-नामजात्यादिविशेषकल्पनारहितसामान्यज्ञानोत्तरं विशेषनिश्चयार्थं विचारणा इत्यर्थः,
व्यूहः=अपोहः-सामान्यज्ञानोत्तरकालं विशेषनिश्चयार्थं विचारणायां प्रवृत्तायां तदनु गुणदोष-
विचारणाजनितो निश्चयः । मार्गणं=जीवादिपदार्थस्य यथावस्थितस्वरूपान्वेषणम्, गवेषणं=
मार्गणानन्तरमनुपलभ्यस्य जीवादिपदार्थस्य सर्वतः परिभावनम्, एषां समाहारस्तत् तथा, तत्
कुर्वतः अम्बडस्य परिव्राजकस्येत्यन्वयः । ' वीरियलद्धी ' वीर्यलब्धिः, ' वेउव्वियलद्धी '
वैक्रियलब्धिः ' ओहिणाणलद्धी समुप्पण्णा ' अवधिज्ञानलब्धिश्च समुत्पन्ना । ' तए णं

आवरण कर्मों के (खओवसमेणं) क्षयोपशम से (ईहा-वूहा-मग्गण-
गवेसणं करेमाणस्स) ईहा-नाम एवं जात्यादिरूप कल्पना से रहित सामान्य ज्ञान के
बाद विशेषरूप से निश्चय करने की चेष्टा-विचारधारा, व्यूह-सामान्य ज्ञान के बाद विशेष
निश्चय के लिये विचारणा करने पर गुणदोष के विचार से होनेवाला निश्चय-अवायरूप
ज्ञान, मार्गण-यथावस्थित जीवादिक पदार्थ के स्वरूपका अन्वेषण, एवं गवेषण-मार्गण के
बाद अनुपलभ्य जीवादिक पदार्थों के सभी प्रकार से निर्णय करने की तरफ तत्परतारूप
गवेषण (करेमाणस्स) करने से (वीरियलद्धी वेउव्वियलद्धी ओहिणाणलद्धी समु-
प्पण्णा) वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि, तथा अवधिज्ञानलब्धि उत्पन्न हो गई । (तए णं से

आवरण कर्मोंना (खओवसमेणं) क्षयोपशमथी (ईहा-वूहा-मग्गण-
गवेसणं करेमाणस्स) ईहा-नाम तेमज्ज नति आदिनी कल्पनाथी
रहित सामान्य ज्ञान तथा पछी विशेषरूपथी निश्चय करवानी चेष्टा-
विचारधारा, व्यूह-सामान्यज्ञान आद विशेष निश्चय करवा भाटे विचारणा
कर्या पछी गुणदोषना विचारथी तथावाणा निश्चय-अवायरूप ज्ञान, मार्गण-
यथावस्थित एव-आदिक पदार्थना स्वरूपनुं अन्वेषण, तेमज्ज गवेषण-मार्गण
पछी अनुपलभ्य एव आदिक पदार्थोंना सर्व प्रकारथी निर्णय करवानी तरङ्ग
तत्परतरूप गवेषण (करेमाणस्स) करवाथी (वीरियलद्धी वेउव्वियलद्धी ओहि-
णाणलद्धी समुप्पण्णा) वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि, तथा अवधिज्ञानलब्धि

समुप्पण्णाए जणविम्हावणहेउं कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ ॥ सू० ३१ ॥

से अम्मडे परिव्वायगे' ततः खलु स अम्बडः परिव्राजकः, 'तीए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए समुप्पण्णाए' तथा वीर्यलब्ध्या वैक्रियलब्ध्याऽवधिज्ञानलब्ध्या च समुत्पन्नया 'जणविम्हावणहेउं' जनविस्मापनहेतोः, 'कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ' काम्पिल्यपुरे नगरे गृहशते यावद्वसतिमुपैति, 'से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ' तत् तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते—'अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ' अम्बडः परिव्राजकः काम्पिल्यपुरे नगरे गृहशते यावद्वसतिमुपैति ॥ सू० ३१ ॥

अम्मडे परिव्वायगे तीए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए समुप्पण्णाए) इसके बाद उत्पन्न हुई उन वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि एवं अवधिज्ञानलब्धि द्वारा यह (जणविम्हावणहेउं) मनुष्यों को आश्चर्यचकित करने के लिये (कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ) कंपिल्ल नगर में सौ घरों से भिक्षा करता है, एवं उन्हीं में विश्राम करता है । (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इस आशय से, हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं (अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ) कि अम्बड परिव्राजक कंपिल्लपुर नगर में सौ घरों में आहार करता है और सौ घरों में निवास करता है ॥ सू० ३१ ॥

उत्पन्न थर्ध. (तए णं से अम्मडे परिव्वायगे तीए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए समुप्पण्णाए) त्थार पछी उत्पन्न थयेदी ते वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि तेमज्ज अवधिज्ञानलब्धि द्वारा ये (जणविम्हावणहेउं) मनुष्योने आश्चर्यचकित करवा भाटे (कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव वसहिं उवेइ) कंपिल्लपुरनगरमां सो धरोथी भिक्षा करे छे तेमज्ज तेमां ज्ज विश्राम करे छे, (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) आ आशयथी हे गौतम ! हुं अम्मडे (अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे घरसए जाव वसहिं उवेइ) हे अम्बड परिव्राजक कंपिल्लपुर नगरमां सो धरोमां आहार करे छे अने सो धरोमां निवास करे छे. (सू० ३१)

मूलम्—पहू णं भंते ! अम्मडे परिव्वायए देवाणु-
प्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्व-
इत्तए ॥ सू० ३२ ॥

मूलम्—णो इणट्ठे समट्ठे गोयमा ! अम्मडे णं परि-

गौतमः पृच्छति—‘पहू णं भंते’ इत्यादि । ‘भंते !’ हे भदन्त ! ‘अम्मडे परिव्वायए देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए’ अम्बडः परिव्राजको देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डः=लुञ्चितकेशो भूत्वाऽगागदनगारितां=साधुत्वं प्रव्रजितुं=प्राप्तुं ‘प्रभू णं’ प्रभुः=समर्थः किम् ? ‘णं’ इति वाक्यालङ्कारे ॥ सू० ३२ ॥

टीका—भगवानाह—‘णो इणट्ठे समट्ठे गोयमा ?’ इत्यादि । ‘णो इणट्ठे समट्ठे गोयमा !’ नाऽयमर्थः समर्थो गौतम ! ‘अम्मडे णं परिव्वायए समणोवासए’ अम्बडः खलु

‘पहू णं भंते ! अम्मडे परिव्वायए’ इत्यादि ।

(भंते) हे भदन्त ! (अम्मडे परिव्वायए) यह अम्बड परिव्राजक (देवाणु-
प्पियाणं अंतिए) आप के पास (मुंडे भवित्ता) मुंडित होकर (अगाराओ) आगार
अवस्था से (अणगारियं) अनगार अवस्था को (पव्वइत्तए) धारण करने के लिये
(पहू णं) समर्थ है क्या ? ॥ सू० ३२ ॥

‘णो इणट्ठे समट्ठे’ इत्यादि ।

प्रभु ने कहा—(गोयमा) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है ।
क्यों कि (अम्मडे णं परिव्वायए) यह अम्बड परिव्राजक (समणोवासए) श्रमणोपासक

‘पहू णं भंते ! अम्मडे परिव्वायए’ इत्यादि ।

(भंते) हे भदन्त ! (अम्मडे परिव्वायए) आ अम्बड परिव्राजक
(देवाणुप्पियाणं अंतिए) आपनी पासे (मुंडे भवित्ता) मुंडित थडने (अगाराओ)
अगार अवस्थाथी (अणगारियं) अनगार अवस्थाने (पव्वइत्तए) धारण
करवाने भाटे (पहू णं) समर्थ छे के केम ? (सू० ३२)

“णो इणट्ठे समट्ठे” इत्यादि ।

प्रभुथे डहुं (गोयमा) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समे) आ अर्थ
समर्थ नथी. केमके (अम्मडे णं परिव्वायए) आ अम्बड परिव्राजक (समणो-

વાયણ સમણોવાસણ અભિગયજીવાઽજીવે જાવ અપ્પાણં
ભાવેમાણે વિહરહ, ણવરં ઝસિયફલિહે અવંગુદુવારે ચિયત્તંતેર-
ઘરદારપવેસી એયં ણં વુચ્છહ ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

પરિવાજકઃ શ્રમણોપાસકઃ, ‘અભિગયજીવાઽજીવે’ અભિગતજીવાઽજીવઃ=જીવાર્જીવતત્ત્વજ્ઞઃ,
‘જાવ’ યાવત્—અત્ર યાવચ્છબ્દાદિદં દશ્યમ્—ઉપલબ્ધપુણ્યપાપઃ, આસ્રવસંવરનિર્જરા-
ક્રિયાઽધિકરણબન્ધમોક્ષકુશલઃ इति, ‘અપ્પાણં ભાવેમાણે’ આત્માનં ભાવયન્ વિહરતિ=
વિચરતિ । ‘ણવરં’—અયમત્ર વિશેષઃ—‘ઝસિયફલિહે’ ઉચ્છિદ્ધતસ્ફટિકઃ=સ્ફટિકરાશિરિવ
નિર્મલઃ, ‘અવંગુદુવારે’ અપાવૃત્તદ્વારઃ—‘અવંગુ’ इतिदेशीयः શબ્દઃ; ઉદ્ઘાટિતકપાટ
દ્વારઃ—અતિધાર્મિકતયાઽસ્ય પ્રવેશકાલે જનૈઃ કપાટ ઉદ્ઘાટયતે इति भावः । ‘ચિયત્તંતેરઘર-
દારપવેસી’ ત્યક્તાઽન્તઃપુરગૃહદ્વારપ્રવેશઃ—ત્યક્તઃ=પ્રીત્યા જનૈર્દત્તઃ અન્તઃપુરગૃહદ્વારેષુ પ્રવેશો
યસ્ય સ તથા, અતિધાર્મિકતયા સર્વત્ર પ્રવેશેઽનાશઙ્કનીય इति भावः । ‘એયં ણં વુચ્છહ’
एवं खल्वच्यते=एतादृशः सोऽम्बड उच्यते ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

હોકર (અભિગયજીવાજીવે જાવ અપ્પાણં ભાવેમાણે વિહરહ) જીવ, અજીવ, પુણ્ય,
પાપ, આસ્રવ, સંવર, નિર્જરા, બંધ એવં મોક્ષ इनका ज्ञाता होता हुआ अपनी आत्मा को
भावित करता हुआ विचर रहा है । (णवरं) परन्तु (एवं णं वुच्छह) इतना मैं अवश्य
कहता हूं कि यह अम्बड परिव्राजक (ऊसियफलिहे) स्फटिकमणि की राशि के समान
निर्मल, (अवंगुदुवारें) जिसके लिये सभी के घरों का दरवाजा हर वक्त खुला रहना है,
ऐसा है, और (चियत्तंतेरघरदारपवेसी) यह विश्वस्त होने के कारण राजाके अन्तः-
पुर में भी वे—रोकटोक आता जाता है ॥ सू० ३३ ॥

વાસણ) શ્રમણોપાસક થઈને (અભિગયજીવાજીવે જાવ અપ્પાણં ભાવેમાણે
વિહરહ) જીવ, અજીવ, પુણ્ય, પાપ, આસ્રવ, સંવર, નિર્જરા તેમજ બંધ, મોક્ષ
એના જ્ઞાતા થઈને પોતાના આત્માને ભાવિત કરતાં વિચરે છે. (ણવરં) પરન્તુ
(એવં ણં વુચ્છહ) એટલું તો હું અવશ્ય કહું છું કે આ અમ્બડ પરિવાજક
(ઝસિયફલિહે) સ્ફટિકમણિની રાશિ (ઢગલાની)) પેઠે નિર્મલ (અવંગુદુવારે)
એના માટે બધાના ઘરના દરવાજા હર વખત ખુલ્લા રહે છે એવા છે, અને
(ચિયત્તંતેરઘરદારપવેસી) એ વિશ્વાસુ હોવાના કારણે રાજાના અંતઃપુરમાં
પણ કોઈ બંધની રોકટોક વિના આવે બીય છે. (સૂ૦ ૩૩)

**मूलम्—अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स थूलए पाणाइ-
वाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए जाव परिग्गहे, णवरं सव्वे मेहुणे
पच्चक्खाए जावज्जीवाए ॥ सू० ३४ ॥**

मूलम्—अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ

टीका—‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स’ इत्यादि। ‘अम्मडस्स णं परिव्वा-
यगस्स’ अम्बडस्य खलु परिव्राजकस्य ‘थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए जाव-
परिग्गहे’ स्थूलः प्राणातिपातः प्रत्याख्यातो यावज्जीवम्, यावत्पदेन मृषावादः, अद-
त्तादानं च गृह्यते; परिग्रहश्च प्रत्याख्यातः, ‘णवरं’ नवरं ‘सव्वे’ सर्व=सर्वविधं ‘मेहुणे’
मैथुनमपि ‘पच्चक्खाए जावज्जीवाए’ प्रत्याख्यातं यावज्जीवम् ॥ सू० ३४ ॥

टीका—‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स’ इत्यादि। ‘अम्मडस्स णं परि-

‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स’ इत्यादि।

(अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स) इस अम्बड परिव्राजक ने (थूलपाणाइवाए
पच्चक्खाए जावज्जीवाए) स्थूल प्राणातिपात का यावज्जीव परित्याग किया है, (जाव
परिग्गहे) इसी तरह स्थूल मृषावाद का, स्थूल अदत्तादान का, स्थूल परिग्रह का भी
यावज्जीव परित्याग किया है। (णवरं) परंतु (सव्वे मेहुणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए)
स्थूलरूप से ही मैथुन का परित्याग नहीं किया है; किन्तु इसका तो उसने समस्त प्रकार
से जीवनपर्यन्त परित्याग किया है ॥ सू. ३४ ॥

‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स’ इत्यादि।

(अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स) इस अम्बड परिव्राजक के लिये विहार करते

‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स’ इत्यादि.

(अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स) आ अम्बड परिव्राजके (थूलपाणाइवाए
पच्चक्खाए जावज्जीवाए) स्थूल प्राणातिपातनो यावज्जीव परित्याग कयेँ छे.
(जाव परिग्गहे) तेवी ज रीते स्थूल मृषावादनो, स्थूल अदत्तादाननो, स्थूल
परिग्रहनो पणु यावज्जीव परित्याग कयेँ छे. (णवरं) परंतु (सव्वे मेहुणे
पच्चक्खाए जावज्जीवाए) स्थूलरूपधी ज मैथुननो परित्याग नथी कयेँ परंतु
तेनो तो तेमणु समस्त प्रकारथी जवनपर्यन्त परित्याग कयेँ छे. (सू० ३४)

“अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स” इत्यादि.

(अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स) आ अम्बड परिव्राजक ने भाटे विहार

अक्खसोयप्पमाणमेत्तंपि जलं सयराहं उत्तरित्तए, णणत्थ अद्धाण-
गमणेणं । अम्मडस्स णं णो कप्पइ सगडं वा एवं तं चेव भाणिय-
व्वं णणत्थ एगाए गंगामट्टियाए । अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स

व्वायगस्स ' अम्बडस्य खलु परिव्राजकस्य, ' णो कप्पइ अक्खसोयप्पमाणमेत्तंपि जलं
सयराहं उत्तरित्तए ' अक्षस्रोतःप्रमाणमात्रमपि—अक्षस्रोतः=चक्रधूःप्रवेशरन्ध्रं तदेव
प्रमाणं तेन प्रमाणेन मात्रा=परिमाणम् अवगाहनतो यस्य तत्तथा तत्, चक्रस्य छिद्रपर्यन्तं
जलमपि ' सयराहं ' शीघ्रं, ' सयराहं ' इतिदेशीयशब्दः, ' उत्तरित्तए ' उत्तरीतुं नो
कल्पते=तत्र प्रवेष्टुं न कल्पते, तस्मान्न्यूनपरिमाणं जलमुत्तरीतुं कल्पत इति भावः । ' णण-
त्थ अद्धाणगमणेणं ' नाऽन्यत्राऽध्वगमनात्—अध्वगमनादन्यत्राऽयं निषेधः—अध्वगमने तु
जलमुत्तरीतुं कल्पते, ' अम्मडस्स णं णो कप्पइ सगडं वा एवं तं चेव भाणियव्वं जाव '
अम्बडस्य खलु नो कल्पते शकटं वा एवं तदेव भणितव्यं यावत्, यावच्छब्देन ' संदमा-
णियं वा दुरुहित्ताणं गच्छित्तए '—इत्यारभ्य ' कुंकुमेण वा गायं अणुलिपित्तए ' इति
पर्यन्तः पाठोऽस्यैवोत्तरार्धगताष्टादशसूत्रगतोऽनुसन्धेयः इति । ' णणत्थ एगाए गंगामट्टियाए '

समय मार्ग में (सयराहं) अकस्मात् (अक्खसोयप्पमाणमेत्तंपि) गाड़ी की धुरा प्रमाण
जल आ जाय तो भी उसमें (उत्तरित्तए णो कप्पइ) उतरना नहीं कल्पता है ।
(णणत्थ अद्धाणगमणेणं) परंतु विहार करते हुए अन्य रास्ता नहीं हो तो बात अलग !
(अम्मडस्स णं णो कप्पइ सगडं वा एवं तं चेव भाणियव्वं जाव) इसी तरह इस
अम्बड परिव्राजक को शकट आदि पर चढ़ना भी कल्पता नहीं है । यहां ' यावत् ' शब्द
से ' संदमाणियं वा दुरुहित्ता णं गमित्तए ' यहां से लेकर ' कुंकुमेण वा गायं अणुलि-
पित्तए ' यहां तक का पाठ इसी आगम के उत्तरार्ध के अठारहवें सूत्र से समझ लेना

करती वपते मार्गमां (सयराहं) अकस्मात् (अक्खसोयप्पमाणमेत्तंपि) गाड़ीना
धोसराणा प्रमाणे जेट्ठुं जल आवी जाय तो पणु तेमां (उत्तरित्तए णो कप्पइ)
उतरवुं कल्पतुं नथी. (णणत्थ अद्धाणगमणेणं) परंतु विहार करतां करतां
भीजे रस्तो न डोय तो बात जुद्धी. (अम्मडस्स णं णो कप्पइ सगडं वा एवं तं
चेव भाणियव्वं जाव) अेवी रीते ते अम्भड परिव्राजकने शकट (गाडी) आदि
पर चढवुं पणु कल्पतुं नथी. अडीं (यावत्) शब्दथी ' संदमाणियं दुरुहित्ता
णं गच्छित्तए ' अडींथी लधने ' कुंकुमेण वा गायं अणुलिपित्तए ' अडीं सुधीने
पाठ आ आगमना उत्तरार्धना अठारमां सूत्रथी जाणी लेवे जेधये. (णणत्थ

ળો કપ્પઙ્ગ આહાકમ્મિણ વા ઉદ્દેસિણ વા મીસજાણ્ઞ ઇ વા અજ્ઞો-
યરણ્ઞ ઇ વા પૂઙ્ગકમ્મે ઇ વા કીયગઢે ઇ વા પામિચ્છે ઇ વા અણિસિ-

નાન્યત્રૈકસ્યા ગઙ્ગામૃત્તિકાયાઃ—એકા ગઙ્ગામૃત્તિકા કલ્પતે પ્રહીતુમિત્યર્થઃ । ‘અમ્મડસ્સ ણં
પરિવ્વાયગસ્સ ણો કપ્પઙ્ગ આહાકમ્મિણ વા’ અમ્બડસ્ય સ્વલુ પરિવ્રાજકસ્ય નો કલ્પતે—
આધાકર્મિકં=ષટ્કાયોપમર્દનપૂર્વકં સાધ્વર્થકૃતમશનાદિકં વા. ‘ઉદ્દેસિણ વા’ ઔદ્દેશિકં=
સાધુમુદિશ્ય યત્ કૃતં તદ્ વા ન કલ્પતે, ‘મીસજાણ્ઞ ઇ વા’ મિશ્રજાતં—મિશ્રેણ=ગૃહસ્થ—
સાધ્વાદિપ્રણિધાનલક્ષણભાવેન નિષ્પન્નં=પાકાદિભાવમુપગતં મિશ્રજાતમન્નાદિવ, તદપિ ન
કલ્પતે, ‘ઇ વા’ ઇતિ સર્વત્ર વાક્યાલંકારે; ‘અજ્ઞોયરણ્ઞ ઇ વા’ અધ્યવરતમ્=સાધ્વર્થમ-
ધિકપ્રક્ષેપણેન નિષ્પાદિતમ્, એતદપ્યકલ્પનીયમ્, ‘પૂઙ્ગકમ્મે ઇ વા’ પૂતિકર્મ—આધાકર્માધિ-
વિશુદ્ધલેશસંપૃક્તમક્તાદિ, તદપિ ન કલ્પતે, ‘કીયગઢે ઇ વા’ ક્રીતકૃતમ્—ક્રાતં=ક્રયણં—સા-

ચાહિયે । (ણણ્ણત્થ ઇગાણ્ઞ ગંગામટ્ટિયાણ્ઞ) ઇસે સિર્ફ એક ગંગા કી મિટ્ટી હી કલ્પિત
હે । (અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ) ઇસ અમ્બડ પરિવ્રાજક કે લિયે (ણો કપ્પઙ્ગ
આહાકમ્મિણ વા ઉદ્દેસિણ વા મીસજાણ્ઞ ઇ વા અજ્ઞોયરણ્ઞ ઇ વા પૂઙ્ગકમ્મે ઇ વા
કીયગઢે ઇ વા પામિચ્છે ઇ વા અણિસિટ્ટે ઇ વા અભિહટે ઇ વા) ષટ્કાયોપમર્દનપૂર્વક
સાધુ કે નિમિત્ત નિષ્પાદિત આધાકર્મિક એવં ઔદ્દેશિક—સાધુ કે ઉદ્દેશ્ય કરકે
બનાયા ગયા અશનાદિક ગ્રહણ કરના પરિવર્જિત હે । તથા મિશ્રજાત—સાધુ એવં ગૃહસ્થ કે
ઉદ્દેશ્ય સે તૈયાર કિયા ગયા અન્નાદિક કા મી ગ્રહણ કરના નિષિદ્ધ હે । ઇન પદોં મેં “ઇ”
“વા” યે દોનોં વર્ણ વાક્યાલંકાર મેં પ્રયુક્ત હુણ્ઞ હૈં । ઇસી તરહ અધ્યવરત—સાધુ કે લિયે
અધિક માત્રા મેં બનાયા ગયા આહાર, પૂતિકર્મ—આધાકર્મિક આહાર કે અંશ સે મિશ્રિત

‘ ઇગાણ્ઞ ગંગામટ્ટિયાણ્ઞ) તેને માટે માત્ર એક ગંગાની માટીજ કલ્પિત બતાવી
છે. (અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ) આ અમ્બડ પરિવ્રાજકને માટે (ણો કપ્પઙ્ગ
આહાકમ્મિણ વા ઉદ્દેસિણ વા મીસજાણ્ઞ ઇ વા અજ્ઞોયરણ્ઞ ઇ વા પૂઙ્ગકમ્મે ઇ વા કીયગઢે-
ઇ વા પામિચ્છે ઇ વા અણિસિટ્ટે ઇ વા અભિહટે ઇ વા) ષટ્ (છ) કાયા ઉપમર્દનપૂર્વક
સાધુને નિમિત્ત નિષ્પાદિત આધાકર્મિક તેમજ ઔદ્દેશિક—સાધુને ઉદ્દેશ્ય કરીને
બનાવેલું અશન આદિક ગ્રહણ કરવું પરિવર્જિત છે. તથા મિશ્રજાત—સાધુ
તેમજ ગૃહસ્થના ઉદ્દેશ્યથી તૈયાર કરેલાં અન્ન—આદિકનું ગ્રહણ કરવું પણ
નિષિદ્ધ છે. આ પદોમાં ‘ઇ’ અને ‘વા’ એ બન્ને વર્ણ વાક્યાલંકારમાં
વપરાયેલા છે. તેવી જ રીતે અધ્યવરત—સાધુને માટે અધિક માત્રામાં બનાવેલા
આહાર, પૂતિકર્મ—આધાકર્મિક આહારના અંશથી મિશ્રિત આહાર, ક્રીતકૃત—

ढे इ वा अभिहडे इ वा ठइत्तए वा रइत्तए वा, कंतारभत्त इ वा
दुब्भिक्खभत्ते इ वा गिलाणभत्ते इ वा वहलियाभत्ते इ वा पाहुण-

धादिनिमित्तं तेन कृतं=निष्पादितम्, तदपि न कल्प्यम् । 'पामिच्चे इ वा' प्रामित्यम्= यदन्नवस्त्रादिकं साध्वर्थमुच्छिद्यानीयते तत् प्रामित्यम् । 'अणिसिट्ठे इ वा' अनिसृष्टम्= सर्वैः स्वामिभिः साधवे दातुं न निसृष्टं=नानुज्ञातं यत् तदनिसृष्टम्, यदा द्वित्राणां पुरुषाणां साधारणे आहारे एकोऽन्याननापृच्छ्य साधवे ददाति, तदा तदन्नमनिसृष्टं, तदपि न कल्पते । 'अभिहडे इ वा' अभ्याहृतम्—साधु संमुखमानीतं न कल्पते । 'ठइत्तए वा' स्थापितं—स्वनिमित्तं स्थापितं न कल्पते । 'रइत्तए वा' रचितम्—औद्देशिकभेदः, तच्च मोदकचूर्णादि पुनर्मोदकतया रचितं, तदपि न कल्प्यम् । 'कंतारभत्ते इ वा' कान्तारभक्तम्—कान्तारम्=अरण्यम्—तत्समुल्लङ्घनार्थं नीयमानं भक्तम् । यद्वा अरण्ये भिक्षुकाणां निर्वाहाय यत् संस्क्रियते तत् कान्तारभक्तम्—तदप्यकल्पनीयम् । 'दुब्भिक्खभत्ते इ वा' दुर्भिक्षभक्तमिति वा—दुर्भिक्षे भिक्षुकाणां कृते यत् संस्क्रियते तदप्यकल्पनीयम् । 'गिलाणभत्ते इ वा' ग्लान-

आहार, क्रीतकृत—मोल लाकर दिया गया आहार, प्रामित्य-उधार लेकर अथवा किसी दूसरे से झपट कर दिया हुआ आहार, अनिसृष्ट—जिस आहार के ऊपर अनेक का स्वामित्व है उन सभी को पूछे बिना सिर्फ एक के द्वारा दिया गया आहार, अभ्याहृत—साधु के संमुख लाकर दिया गया आहार, स्थापित—साधु के निमित्त रखा हुआ आहार, रचित—मोदक-चूर्ण आदि को फोड़कर पुनः मोदकरूप में बनाया गया आहार, कान्तारभक्त—अटवी को उल्लंघन करने के लिये घर से लाया हुआ पाथेयस्वरूप आहार, अथवा जंगल में भिक्षुकों के निर्वाह के लिये तैयार करवाया गया आहार, दुर्भिक्षभक्त—दुर्भिक्ष के समय भिक्षुकों को देने के लिये बनवाया गया आहार, ग्लानभक्त—रोगी के लिये बनाया गया आहार, वार्दलिका-

वेयातो लधने दीधेत्तो आहार, प्रामित्य—उधार लधने अथवा कोर्छ भीष्ण पासेथी जुंठवी लधने दीधेत्तो आहार, अनिसृष्ट—जे आहारना उपर अनेकनुं स्वामित्व होय ओवा अधाने पूछ्या विना मात्र ओकना द्वारा अपायेत्तो आहार, अभ्याहृत—साधुनी सामे लध आवीने आपेत्तो आहार, स्थापित—साधुना निमित्ते राभी मुकेत्तो आहार, रचित लाडुने तोडीने लूझा करी पछी ते लूझामांथी लाडु—इपमां बनावेत्तो आहार, कान्तारभक्त—अटवीने उल्लंघन करवा माटे घरथी लावी रायेत्तो पाथेयस्वरूप आहार, अथवा जंगलमां भिक्षुकेना निर्वाहने माटे तैयार करावेत्तो आहार, दुर्भिक्षभक्त—दुष्काळमां समयमां भिक्षुकेने देवा माटे बनावेत्तो आहार, ग्लानभक्त—रोगीने माटे बनावेत्तो

गभत्ते इ वा भोत्तए वा पाइत्तए वा । अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स
णो कप्पइ मूलभोयणे वा जाव बीयभोयणे वा भोत्तए वा
पाइत्तए वा ॥ सू० ३५ ॥

भक्तम्—ग्लानः सन् निजाऽऽरोग्याय यत्प्रदीयते तद्—ग्लानभक्तम्, ‘वदलियाभत्ते इ वा’
वार्दलिकाभक्तम्—वृष्टौ यदातुं क्रियते एतदप्यकल्प्यम् । ‘पाहुणगभत्ते इ वा’ प्राघुणक-
भक्तम्—प्राघुणकः=कोऽपि कस्य चिद् गृहे समागतः तस्य कृते यत् क्रियते तत् प्राघुणकभक्तम्,
एतदप्यकल्पनीयम् । एतत्पूर्वोक्तम्—‘भोत्तए वा पाइत्तए वा’ भोक्तुं वा पातुं वा न क
ल्पते इत्युक्तमेव । ‘अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ मूलभोयणे वा जाव बीय-
भोयणे वा भोत्तए वा पाइत्तए वा’ अम्बडस्य खलु परिव्राजकस्य न कल्पते मूलभोजनं
वा यावद् बीजभोजनं वा भोक्तुं वा पातुं वा—मूलानि कमलादीनां, यावच्छब्दात्कन्दभोजनं
फलभोजनं हरितभोजनमेतानि त्रीणि पदानि गृह्यन्ते, तत्र—कन्दाः=सूरणादयः, फलानि=आम्र-
फलादीनि, हरितानि=मधुरतृणादीनि, बीजानि=शाल्यादीनि, एतानि भोक्तुं न कल्पन्ते, तथा—
आधाकर्मादिपानकानि पातुं न कल्पन्ते इति ॥ सू. ३५ ॥

भक्त—वृष्टि में देने के लिये बनाया गया आहार, प्राघुणकभक्त—पाहुनों के लिये रांधा गया
आहार, उस अम्बड परिव्राजक के लिये नहीं कल्पता है, और इसी प्रकार का पेय भी उसे
नहीं कल्पता है । (अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ मूलभोयणे वा जाव
बीयभोयणे वा भोत्तए वा पाइत्तए वा) इसी प्रकार इस अम्बड परिव्राजक के लिये कम-
लादिकों के मूल, सूरणादिक कन्द, आम्र आदि फल का भोजन एवं अपक्व शाल्यादिक एवं
मधुर तृण आदि हरित सचित्त वस्तु का भोजन भी अकल्पित है ॥ सू. ३५ ॥

आहार, वार्दलिकालङ्कत—वृष्टिमां देवा भाटे अनावेत्ते। आहार, प्राघुणकलङ्कत—
परोषुआने भाटे रंधाववाभां आवेत्ते। आहार ते अम्बड परिव्राजकने भाटे
नथी कल्पतो, अने आवा प्रकारनुं पेय पणु तेने नथी कल्पतुं. (अम्मडस्स णं
परिव्वायगस्स णो कप्पइ मूलभोयणे वा जाव बीयभोयणे वा भोत्तए वा पाइत्तए वा)
आ प्रकारे अे अम्बड परिव्राजकने भाटे कमण आदिकनां भूण, सूरणु
आदिक कंद, आम्र आदिक फलानुं लोअन तेमअ अपक्व शालि आदिक तेमअ
मधुर तृण आदि लीली सचित्त वस्तुनुं लोअन पणु अकल्पित छे. (सू. ३५)

મૂલમ્—અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ ચઉવ્વિહે અણ-
દ્ઠાદંડે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ; તં જહા—અવજ્ઞાણાયરિણ પમાયા-
યરિણ હિંસપ્પયાણે પાવકમ્મોવણ્ણે ॥ સુ૦ ૩૬ ॥

ટીકા—‘અમ્મહસ્સ ણં’ ઇત્યાદિ ।

‘અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ’ અમ્મહસ્ય સ્વલુ પરિવાજકસ્ય ‘ચઉ-
વ્વિહે અણદ્ઠાદંડે પચ્ચક્ખાણ જાવજ્જીવાણ’ ચતુર્વિધઃ અનર્થદણ્ડઃ—અર્થઃ=પ્રયોજનં ગૃહ-
સ્થસ્ય ક્ષેત્રવાસ્તુધનધાન્યં શરીરપરિપાલનાદિવિષયં—તદર્થ આરમ્ભો=ભૂતોપમર્દોઽર્થદણ્ડઃ ।
દણ્ડો નિગ્રહો યાતના વિનાશ ઇતિ પર્યાયાઃ । અર્થેન=પ્રયોજનેન દણ્ડોઽર્થદણ્ડઃ, સ ચૈવંભૂત
ઉપમર્દનલક્ષણો દણ્ડઃ ક્ષેત્રાદિપ્રયોજનમપેક્ષમાણોઽર્થદણ્ડ ઉચ્યતે, તદ્વિપરીતોઽનર્થદણ્ડઃ પ્રત્યા-
હ્યાતો યાવજ્જીવમ્ । અયમનર્થદણ્ડઃ કિંસ્વરૂપઃ ? ઇતિ બોધયિતુમાહ—‘તં જહા’
તથથા—‘અવજ્ઞાણાયરિણ’ અપધ્યાનાઽઽચરિતઃ—અપધ્યાનમ્=આર્તરૌદ્રરૂપં, તેનાચરિતઃ=
આસેવિતો યોઽનર્થદણ્ડઃ સ તથા । ‘પમાયાયરિણ’ પ્રમાદાઽઽચરિતઃ—પ્રમાદેન=મદ્યવિષય-

‘અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

(અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ) ઇસ અમ્મહ પરિવાજક કે (ચઉવ્વિહે) ચારો
પ્રકાર કે (અણદ્ઠાદંડે) અનર્થ દંડોં કો (જાવજ્જીવાણ પચ્ચક્ખાણ) જીવનપર્યન્ત પરિ-
ત્યાગ હૈ । વે ચાર અનર્થદંડ ઇસ પ્રકાર હૈ—(અવજ્ઞાણાયરિણ પમાયાયરિણ હિંસપ્પ-
યાણે પાવકમ્મોવણ્ણે) અપધ્યાનાચરિત, પ્રમાદાચરિત, હિંસાપ્રદાન, એવં પાપકર્મોપદેશ ।
વિના પ્રયોજન જીવોં કા ઉપમર્દન જિન કાર્યોં કે કરને સે હોતા હૈ ઉસકા નામ અનર્થદંડ
હૈ । આર્તરૌદ્રરૂપ ધ્યાન કા નામ અપધ્યાન હૈ । ઇસ ધ્યાનસે ઉદ્ભૂત અથવા ક્રિયમાણ દંડ
કા નામ અપધ્યાનાચરિત અનર્થ દંડ હૈ । મદ્ય, વિષય, કષાય, નિદ્રા એવં વિકથારૂપ પ્રમાદ સે

“અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ” ઇત્યાદિ.

(અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ) આ અમ્મહ પરિવાજકને (ચઉવ્વિહે)
ચારેય પ્રકારના (અણદ્ઠાદંડે) અનર્થ દંડોને (જાવજ્જીવાણ પચ્ચક્ખાણ) જીવન-
પર્યન્ત પરિત્યાગ છે. એ ચાર અનર્થદંડ આ પ્રકારના છે. (અવજ્ઞાણાયરિણ
પમાયાયરિણ હિંસપ્પયાણે પાવકમ્મોવણ્ણે) અપધ્યાનાચરિત, પ્રમાદાચરિત, હિંસા
પ્રદાન—હિંસાકારક થસ કોઇને દેવું, તેમજ પાપકર્મનો ઉપદેશ. વિના પ્રયોજન
જીવોનું ઉપમર્દન જે કાર્યો કરવાથી થાય તેનું નામ અનર્થદંડ છે. આર્ત-
રૌદ્રરૂપ ધ્યાનનું નામ અપધ્યાન છે. આ ધ્યાનથી ઉદ્ભવેલા અથવા થનારા
દંડનું નામ અપધ્યાનાચરિત—અનર્થદંડ છે. મદ્ય, વિષય, કષાય, નિદ્રા તેમજ

**મૂલમ્—અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ કપ્પઙ્ગ માગહણ
અદ્ધાઢણ જલસ્સ પરિગ્ગાહિત્તણ, સે વિ ય વહમાણણ ણો ચેવ**

કષાયનિદ્રાવિકથાલક્ષણેન આચરિતઃ ‘હિંસપ્પયાણે’ હિંસાપ્રદાનમ્—હિંસાહેતુત્વાદગ્નિવિષ-
શસ્ત્રાદિકં હિંસોચ્યતે, કારણે કાર્યોપચારાત્, તત્પ્રદાનમન્યસ્મૈ ક્રોધાભિભૂતાય અનભિભૂતાય
વા । યદ્વા—હિંસપ્રદાનમિતિચ્છાયા—હિંસા=હિંસાકારિ શસ્ત્રાદિ, તત્પ્રદાનં=પરેષાં સમર્પણમ્,
અયં તૃતીયોઽનર્થદંડઃ, ‘પાપકમ્મોવણ્ણેસે’ પાપકર્મોપદેશઃ—પાતયતિ નરકાદાવિતિ
પાપમ્, તત્પ્રધાનં કર્મ પાપકર્મ, તસ્યોપદેશઃ, કૃષ્યાદિસાવધવ્યાપારે પ્રવર્તનમ્, અયં
ચતુર્થઃ ॥ સૂ. ૩૬ ॥

ટીકા—‘અમ્મડસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

‘અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ કપ્પઙ્ગ’ અમ્મડસ્ય સ્વલુ પરિવ્રાજકસ્ય કલ્પતે
‘માગહણ અદ્ધાઢણ જલસ્સ પરિગ્ગાહિત્તણ’ માગધમર્ધાઢકં જલસ્ય પરિગ્રહીતુમ્, ‘સે વિ ય
કિયે ગયે કાર્યે કા નામ પ્રમાદાચરિત અનર્થદંડ હૈ । હિંસા કે હેતુ હોને સે અગ્નિ, વિષ એવં
શસ્ત્ર આદિ, કારણ મેં કાર્યે કે ઉપચાર સે હિંસાસ્વરૂપ કહે ગયે હૈ । ઇન હિંસા કે કારણો
કો કિસી ક્રોધયુક્ત વ્યક્તિ કે લિયે અથવા ક્રોધરહિત વ્યક્તિ કે લિયે દેના સો હિંસાપ્રદાન
નામ કા અનર્થદંડ હૈ । આત્મા કો જો નરક મેં ડાલે ઉસકા નામ પાપ હૈ, ઇસ પાપપ્રધાન
કર્મ કરને કા ઉપદેશ દેના અથવા સ્વયં મી કૃષ્યાદિ સાવધરૂપ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ કરના
સો પાપોપદેશ નામકા અનર્થદંડ હૈ ॥ સૂ. ૩૬ ॥

‘અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

(અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ) ઇસ અમ્બડ પરિવ્રાજક કો (માગહણ
અદ્ધાઢણ) મગધદેશ પ્રસિદ્ધ અર્ધ—આઢક—પ્રમાણ (જલસ્સ પરિગ્ગાહિત્તણ કપ્પઙ્ગ) જલ

વિકથારૂપ પ્રમાદથી આચરેલાં—કરેલાં કાર્યનું નામ પ્રમાદાચરિત—અનર્થદંડ
છે. હિંસાના હેતુ થાય તેવાં અગ્નિ, વિષ તેમજ શસ્ત્ર આદિ, કારણમાં કાર્યનો
ઉપચાર થવાથી હિંસાસ્વરૂપ કહેવાય છે. આ હિંસાનાં કારણોને કોઈ
ક્રોધાયમાન વ્યક્તિને કે વિના ક્રોધવાળા વ્યક્તિને માટે આપવાં તે હિંસાપ્રદાન
નામનો અનર્થદંડ છે. આત્માને જે નરકમાં નાખે તેનું નામ પાપ છે. આ
પાપપ્રધાન કર્મ કરવાનો ઉપદેશ દેવો અથવા પોતે પણ કૃષિ આદિ સાવધરૂપ
વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ કરવી તે પાપોપદેશ નામનો અનર્થદંડ છે. (સૂ. ૩૬)

‘અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ’ ઇત્યાદિ.

(અમ્મડસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ) આ અંબડ પરિવ્રાજકે (માગહણ
અદ્ધાઢણ) મગધદેશ પ્રસિદ્ધ અર્ધ—આઢક પ્રમાણ (જલસ્સ પરિગ્ગાહિત્તણ કપ્પઙ્ગ)

ળં અવહમાણૅ, ંવં થિમિૅ પસન્ને જાવ સે વિ ય પરિપૂૅ ણો
 ચેવ ણં અપરિપૂૅ, સે વિ ય સાવજ્ઞે ત્તિ કાઁ ણો ચેવ ણં
 અણવજ્ઞે, સે વિ ય જીવત્તિ કાઁ ણો ચેવ ણં અજીવે, સે વિ

વહમાણૅ ણો ચેવ ણં અવહમાણૅ ' તદપિ ચ વહમાનં નો ચૈવ સ્વલુ અવહમાનમ્,
 ' ંવં થિમિૅ પસન્ને જાવ ' ંવં સ્તિમિતં પ્રસન્નં યાવત્ ' સે વિ ય પરિપૂૅ ણો ચેવ ણં
 અપરિપૂૅ ' તદપિ ચ પરિપૂતં નો ચૈવ સ્વલુ અપરિપૂતમ્, કસ્માત્ કારણાત્ પરિપૂતં ગૃહ્ણા-
 તીત્યત આહ—' સે વિ ય સાવજ્ઞે ત્તિ કાઁ ' તદપિ ચ સાવધમિતિ કૃત્વા—ઇતિ । ંદં
 જલં સાવધમસ્તીતિ જ્ઞાત્વા વલ્લગાલિતં કૃત્વા ગૃહ્ણાતીતિ ભાવઃ । ' ણો ચેવ ણં અણવજ્ઞે '
 ન ચૈવ સ્વલુ અનવધમ્—ન તુ નિરવધમિતિ કૃત્વા પરિપૂતં કરોતિ । સાવધમિત્યપિ કથં જ્ઞાતમ્ ?
 ંત્યત આહ—' સે વિ ય જીવત્તિ કાઁ ' તદપિ ચ જીવાઃ ંતિ કૃત્વા, ંહ પુતરકાદિજીવાઃ
 સન્તીતિ કૃત્વેતિ ભાવઃ; ' ણો ચેવ ણં અજીવે ત્તિ કાઁ ' નો ચૈવ સ્વલુ અજીવં=જીવરહિતમ્
 ંતિ કૃત્વા, ' સે વિ ય ઢિણ્ણે ણો ચેવ ણં અઢિણ્ણે ' તદપિ ચ દત્તં નો ચૈવ સ્વલ્વદત્તમ્,

પ્રહણ કરના કલ્પતા હૅ । (સે વિ ય વહમાણૅ ણો ચેવ ણં અવહમાણૅ) જિતના
 અર્ધ—આઢક—પ્રમાણ જલ લેના ંસે કલ્પતા હૅ સો ઢી વહતા હુઆ હી કલ્પતા હૅ, અવહતા
 હુઆ નહીં । (ંવં થિમિૅ પસન્ને જાવ સે વિ ય પરિપૂૅ ણો ચેવ ણં અપરિપૂૅ)
 વહ ઢી કર્દમ સે રહિત, સ્વચ્છ, પ્રસન્ન—નિર્મલ યાવત્ પરિપૂત—છાના હુઆ હી કલ્પતા હૅ,
 ંસસે વિપરીત નહીં । (સે વિ ય સાવજ્ઞેત્તિ કાઁ ણો ચેવ ણં અણવજ્ઞે) સોઢી
 સાવધ સમજ્ઞ કર છાના હુઆ હી કલ્પતા હૅ, નિરવધ સમજ્ઞ કર નહીં । (સે વિ ય જીવત્તિ
 કાઁ ણો ચેવ ણં અજીવે) સાવધ ઢી ંસે વહ જીવસહિત સમજ્ઞકર હી માનતા
 હૅ, અજીવ સમજ્ઞકર નહીં ! (સે વિ ય ઢિણ્ણે ણો ચેવ ણં અઢિણ્ણે)

જલ ંહુ ંરવું કલ્પે છે. (સે વિ ય વહમાણૅ ણો ચેવ ણં અવહમાણૅ)
 ંટલું અર્ધઆઢક પ્રમાણ જલ લેવું તેને કલ્પે છે તે પણ વહેતું હોય
 તેવું જ કલ્પે છે, ન વહેતું હોય તે નહિ. (ંવં થિમિૅ પસન્ને જાવ સે વિ ય
 પરિપૂૅ ણો ચેવ ણં અપરિપૂૅ) તે પણ કર્દમ (કચરા)થી રહિત, સ્વચ્છ,
 પ્રસન્ન—નિર્મળ યાવત્ પરિપૂત—ગાળેલું જ કલ્પે છે, તે વિનાનું નહિ (તેનાથી
 ંલટું નથી કલ્પતું). (સે વિ ય સાવજ્ઞેત્તિ કાઁ ણો ચેવ ણં અણવજ્ઞે) તે પણ
 સાવધ સમજ્ઞને ગાળેલું જ કલ્પે છે, નિરવધ સમજ્ઞને નહિ. (સે વિ ય
 જીવત્તિ કાઁ ણો ચેવ ણં અજીવે) સાવધ પણ તેને તે ંવસહિત સમજ્ઞને
 જ માને છે, અંવ સમજ્ઞને નહિ. (સે વિ ય ઢિણ્ણે ણો ચેવ ણં અઢિણ્ણે)
 તે પણ કોઈએ આપેલું હોય તે જ કલ્પે છે. દીધા વગરનું નહિ. (સે વિ

ય દિણ્ણે ણો ચેવ ણં અદિણ્ણે, સે વિ ય હત્થ-પાય-ચરુ-
ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ પિવિત્તણ વા, ણો ચેવ ણં સિણાહિત્તણ ।
અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ કપ્પહ માગહણ ય આઢણ જલસ્સ
પહિગ્ગાહિત્તણ, સે વિ ય વહમાણણ જાવ ણો ચેવ ણં અદિણ્ણે,

‘સે વિ ય હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ પિવિત્તણ વા’ તદપિ ચ હસ્ત-
પાદ-ચરુ-ચમસ-પ્રક્ષાલનાર્થાય પાતું વા, ચરુ: પાત્રવિશેષ; ‘ણો ચેવ ણં સિણાહિત્તણ’
નો ચૈવ સ્વલુ સ્નાતુમ્ । ‘અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ કપ્પહ’ અમ્બડસ્ય સ્વલુ પરિત્રાજકસ્ય
કલ્પતે ‘માગહણ ય આઢણ જલસ્સ પહિગ્ગાહિત્તણ’ માગધં ચાઢકં જલસ્ય પ્રતિગ્રહીતુમ્,
‘સે વિ ય વહમાણણ જાવ ણો ચેવ ણં અદિણ્ણે’ તદપિ વહમાણં યાવત્ નો ચૈવ સ્વલ્વદત્તમ્,
‘સે વિ ય સિણાહિત્તણ’ તદપિ ચ સ્નાતુમ્, ‘ણો ચેવ ણં હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-

વહ મીં દિયા હુઆ હી કલ્પતા હૈ, વિના દિયા હુઆ નહીં । (સે વિ ય હત્થ-પાય-ચરુ-
ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ પિવિત્તણ વા) દિયા હુઆ મીં વહ જલ હસ્ત, પાદ, ચરુ (પાત્ર
વિશેષ) ઇવં ચમસ કે પ્રક્ષાલન કે લિયે અથવા પીને કે લિયે હી કલ્પતા હૈ, (ણો સિણા
હિત્તણ) સ્નાન કે લિયે નહીં । (અમ્મહસ્સ ણં પરિવ્વાયગસ્સ કપ્પહ માગહણ ય આઢણ
જલસ્સ પહિગ્ગાહિત્તણ) હસ અમ્બડ પારિત્રાજક કો મગધદેશમંબંધી આઢકપ્રમાણ જલ
ગ્રહણ કરના કલ્પતા હૈ, (સે વિ ય વહમાણણ જાવ ણો ચેવ ણં અદિણ્ણે) વહ મીં
વહતા હુઆ યાવત્ દિયા હુઆ હી કલ્પતા હૈ, વિના દિયા હુઆ નહીં ! (સે વિ ય સિણા-
હિત્તણ ણો ચેવ ણં હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ) વહ મીં સ્નાન કે લિયે

ય હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ પિવિત્તણ વા) હીધેલું હોય તે પણ પાણી,
હાથ પગ, ચરુ, તેમજ ચમસને ધોવા માટે અથવા પીવા માટે જ કહ્યે છે. (ચરુ,
ચમસ એ પાત્રવિશેષના નામો છે.) (ણો સિણાહિત્તણ) સ્નાન માટે નહિ. (અમ્મહસ્સ
ણં પરિવ્વાયગસ્સ કપ્પહ માગહણ ય આઢણ જલસ્સ પહિગ્ગાહિત્તણ) આ અંબડ પરિ-
ત્રાજકને મગધદેશ-સંબંધી આઢકપ્રમાણ જલ ગ્રહણ કરવું કહ્યે છે. (સે વિ ય
વહમાણણ જાવ ણો ચેવ ણં અદિણ્ણે) તે પણ વહેતું હોય તેજ કહ્યે છે, (યાવત્)
આપેલું હોય તે કહ્યે છે. આપેલું ન હોય તેવું નહિ. (સે વિ ય સિણાહિત્તણ ણો
ચેવ ણં હત્થ-પાય-ચરુ-ચમસ-પક્કવાલણટ્ટયાણ) તે પણ સ્નાન માટે જ કહ્યે છે.

સે વિ ય સિનાઇત્તણ, ણો ચેવ ણં હથ- પાય-ચરુ-ચમસ-પ-
કસાલણઢ્યાણ પિવિત્તણ વા ॥ સૂ. ૩૭ ॥

મૂલમ્—અમ્મહસ્સ ણો કપ્પહ—અણ્ણઉત્થિયા વા અ-
ણ્ણઉત્થિયદેવયાણિ વા અણ્ણઉત્થિયપરિગ્ગહિયાણિ વા ચેહયાઈ

પક્સાલણઢ્યાણ પિવિત્તણ વા ' નો ચૈવ સ્વલુ હસ્ત-પાદ-ચરુ-ચમસ-પ્રક્ષાલનાઽર્થ
પાતું વા, શેષપદવ્યાખ્યાઽસ્યૈવાગમસ્યોત્તરાર્થે ઇકોનવિંશતિતમે સૂત્રે પ્રદર્શિતા, અત્ર સૂત્રે જલસ્ય
પરિમાણં પ્રદર્શિતમસ્તિ ॥ સૂ. ૩૭ ॥

ટીકા—' અમ્મહસ્સ ણો કપ્પહ ' ઇત્યાદિ ।

' અમ્મહસ્સ ણો કપ્પહ ' અમ્મહસ્ય ન કલ્પતે, અસ્ય 'વન્દિતુમ્' ઇત્યત્રાન્વયઃ ।
કાન્ વન્દિતું ન કલ્પતે ? અત્રાઽઽહ—' અણ્ણઉત્થિયા વા ' અન્યયૂથિકાન્ વા—અન્યત્=તીર્થ-
કરમંધાપેક્ષયા મિન્નં યદ્ યૂથં=સંઘસ્તદન્યયૂથં તદસ્ત્યેષામિત્યન્યયૂથિકાઃ=શાક્યાદિમિક્ષવઃ
તાન્, ' અણ્ણઉત્થિયદેવયાણિ વા ' અન્યયૂથિકદૈવતાનિ વા—અન્યયૂથિકાનાં દૈવતાનિ
અન્યયૂથિકદૈવતાનિ—અર્હદ્વિન્નાન્ દેવાન્ વા, ' અણ્ણઉત્થિયપરિગ્ગહિયાણિ વા ચેહયાઈ '

હી કલ્પતા હૈ, હાથ, પૈર, ચરુ ઇવં ચમચા કો ધોને કે લિયે નહીં, ઔર ન પાને કે લિયે
હી । ' આઢક ' આદિ કા અર્થ ઇસી આગમ કે ઉત્તરાર્ધ મેં ઁન્નીસવેં સૂત્ર કા વ્યાખ્યા મેં
પ્રદર્શિત કિયા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૩૭ ॥

' અમ્મહસ્સ ણો કપ્પહ ' ઇત્યાદિ ।

(અમ્મહસ્સ) ઇસ અમ્મહ કો (અણ્ણઉત્થિયા) અન્યયૂથિક—તીર્થકરમંધ કી
અપેક્ષા શાક્યાદિક મિક્ષુઔ કા સંઘ, ઇવં (અણ્ણઉત્થિયદેવયાણિ વા) અન્યમંઘ દ્વારા
ઉપાસ્યરૂપ સે સંમત અર્હત—પ્રમુ સિવાય દૂસરે દેવતા, (અણ્ણઉત્થિયપરિગ્ગહિયા-

હાથ, પગ, ચરુ તેમજ ચમચા ધોવા માટે નહિ અંને પીવા માટે પણ નહિ.
' આઢક ' આદિનો અર્થ ઁજ આગમના ઉત્તરાર્ધમાં ઁગણુવીશમાં સૂત્રની
વ્યાખ્યામાં કરવામાં આવ્યો છે. (સૂ. ૩૭)

' અમ્મહસ્સ ણો કપ્પહ ' ઇત્યાદિ.

(અમ્મહસ્સ) ઁ અમ્મહને (અણ્ણઉત્થિયા) ખીજ યૂથવાળા—તીર્થકરસંઘની
અપેક્ષા શાક્ય લિક્ષુઁના સંઘ, તેમજ (અણ્ણઉત્થિયદેવયાણિ વા) ખીજ
સંઘ દ્વારા ઉપાસ્યરૂપથી સંમત અર્હત પ્રમુ સિવાય ખીજ દેવ, (અણ્ણ-
ઉત્થિયપરિગ્ગહિયાણિ વા ચેહયાઈ) તથા ખીજ યૂથમાં લગી ગયેલા જૈન સાધુ

वंदित्तए वा णमंसित्तए वा जाव पज्जुवासित्तए वा, णणत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइयाइं वा ॥ सू० ३८ ॥

मूलम्—अम्मडे णं भंते ! परिव्वायए कालमासे कालं

अन्ययूथिकपरिगृहीतान् वा चैत्यान्, आर्षत्वात् क्लीबनिर्देशः; चित्तिः=ज्ञानं, तत्र साधवः=कुशलाः चित्याः=अर्हत्साधवः, त एव चैत्याः, प्रज्ञादित्वात् स्वार्थेऽण्; तान्, अयमत्र पिण्डितोऽर्थः, तैर्थिकान्तरसाधून् वा तैर्थिकान्तरदेवान् वा, यथाकथंचित्तैर्थिकान्तरसंमिलितान् जिनसाधून् वा 'वंदित्तए वा' वन्दितुं=स्तुतुं वा, 'णमंसित्तए वा' नमस्तुतुं=नमस्कृतुं वा 'जाव पज्जुवासित्तए वा' यावत् पर्युपासितुम्=आराधयितुं वा, 'णणत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइयाइं वा' नाऽन्यत्र अर्हतो वा अर्हचैत्यान् वा । अयं निषेधोऽर्हद्विषये, अर्हत्साधुविषये वा न घटते, किन्तु ततोऽन्यत्राऽयं निषेध इति भावः । 'चैत्य' शब्दस्य विस्तृतोऽर्थ 'उपासकदशाङ्ग'—सूत्रस्यागारधर्मसंजीवनीटीकायां मया प्रदर्शितः स ततोऽवसेयः ॥ सू. ३८ ॥

टीका—गौतमः पृच्छति—'अम्मडे णं भंते ! परिव्वायए' इत्यादि ।

'भंते' हे भदन्त ! 'अम्मडे णं परिव्वायए' अम्बडः खलु परिव्राजकः

(णि वा चेइयाइं) तथा अन्य यूथ में सम्मिलित जैन साधु भी (वंदित्तए वा णमंसित्तए वा जाव पज्जुवासित्तए वा) वंदना करने, नमस्कार करने एवं पर्युपासना करने के लिये (णो कप्पइ) कल्पते नहीं हैं । (णणत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइयाइं वा) परंतु यदि नमस्कार आदि के लिये उसे कोई कल्पते हैं तो वे एकमात्र अरिहंत एवं अरिहंत के साधुजन ही कल्पते हैं । 'चैत्य' शब्द का विस्तृत अर्थ, जिज्ञासुओं को 'उपासकदशाङ्ग' की अगारधर्मसंजीवनी टीका में देखना चाहिये ॥ सू. ३८ ॥

'अम्मडे णं भंते' इत्यादि ।

(भंते) हे भदन्त ! (अम्मडे णं परिव्वायए) यह अम्बड परिव्राजक (कालमासे

पणु (वंदित्तए वा णमंसित्तए वा जाव पज्जुवासित्तए वा) वंदना करवा, नमस्कार करवा तेमज पर्युपासना करवा भाटे (णो कप्पइ) नथी कल्पता. (णणत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइयाइं वा) परंतु नमस्कार आदि योज्य जे केअ जेने भाटे होय तो ते जेकमात्र अरिहंत तेमज अरिहंतना साधुजन ज छे. 'चैत्य' शब्दने विस्तृत अर्थ जिज्ञासुजो जे 'उपासकदशाङ्ग'नी अगारधर्मसंजीवनी टीकाभां जेवो जेधजे (सू. ३८)

"अम्मडे णं भंते ! " इत्यादि.

(भंते) हे भदन्त ! (अम्मडे णं परिव्वायए) आ अम्बड परिव्राजक (काल-

કિચ્છા કહિં ગચ્છિહિતિ ? કહિં ઉવવજ્જિહિતિ ? ગોયમા !
અમ્મહે ણં પરિવ્વાયણ ઉચ્ચાવણિં સીલ-વ્વય-ગુણ-વેરમણ-
પચ્ચક્કણ-પોસહો-વવાસેહિં અપ્પાણં ભાવેમાણે બહૂં વાસાં

‘કાલમાસે કાલં કિચ્છા કહિં ગચ્છિહિતિ ? કહિં ઉવવજ્જિહિતિ ?’ કાલમાસે કાલં
કૃત્વા કુત્ર ગમિષ્યતિ ? કુત્રોત્પત્સ્યતે ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા ! અમ્મહે ણં પરિવ્વાયણ’
હે ગૌતમ ! અમ્બહઃ સ્વલુ પરિવ્રાજકઃ ‘ઉચ્ચાવણિં’ ઉચ્ચાવચ્ચૈઃ=નાનાવિધૈઃ, ‘સીલ-વ્વય-
ગુણ-વેરમણ-પચ્ચક્કણ-પોસહોવવાસેહિં’ શીલ-વ્રત-ગુણ-વિરમણ-પ્રત્યાહ્યાન-
પોષધોપવાસૈઃ, શીલાનિ--“શીલ સમાધૌ” અસ્માદ્ ઘઙ્, નપુંસકત્વં લોકાત્, શીલતિ-આત્મ-
ચિન્તનરૂપં સમાધિં પ્રાપ્નોતિ એમિસ્તાનિ શીલાનિ । તાનિ ચત્વારિ-સામાયિક-દેશાવકાશિક-
પોષધા-તિથિભિન્નવિભાગાહ્યાનિ, વ્રતાનિ-પચ્ચાણુવ્રતાનિ, ગુણાઃ-ત્રીણિ ગુણવ્રતાનિ, વિરમણં-મિથ્યા-
ત્વાનિવર્તનમ્, પ્રત્યાહ્યાનં-પર્વદિનેષુ ત્યાજ્યાનાં પરિત્યાગઃ, પોષધોપવાસઃ-પોષં=પુષ્ટિ ધર્મસ્ય
વૃદ્ધિમિતિ યાવદ્ ધત્તે इति પોષધઃ, પોષધશબ્દો રૂઢચા પર્વસુ વર્તતે, પર્વાણિ ચાષ્ટમી-ચતુ-
ર્દશી-પૌર્ણમાસ્યમાવાસ્યાતિથયઃ, પૂરણાત્ પર્વેત્યુચ્યતે, પૂરણત્વં ધર્મવૃદ્ધિકારકત્વાત્; પોષધે ઉપ-

કાલં કિચ્છા) કાલ અવસર મેં કાલ કરકે (કહિં ગચ્છિહિતિ) કહાં જાયગા ? (કહિં ઉવવ-
જ્જિહિતિ) કહાં ઉત્પન્ન હોગા ? પ્રમુ ને કહા-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અમ્મહે ણં પરિવ્વાયણ
ઉચ્ચાવણિં સીલ-વ્વય-ગુણ-વેરમણ-પચ્ચક્કણ-પોસહોવવાસેહિં) યહ અમ્બહ
પરિવ્રાજક અનેક પ્રકાર કે શીલવ્રત-જિનકે દ્વારા આત્મા કે ચિન્તન રૂપ સમાધિ જીવ પ્રાપ્ત
કરતા હૈં ઉનકા નામ શીલવ્રત હૈં, ગુણવ્રત, મિથ્યાત્વવિરમણ, પ્રત્યાહ્યાન-પર્વદિનોં મેં ત્યાગ
કરને યોગ્ય વસ્તુઓં કા ત્યાગ કરના, પોષધોપવાસ-અષ્ટમી, ચતુર્દશી, પૌર્ણમાસી એવં અમા-
વાસ્યા યે તિથિયાં ધર્મ કા પોષણ કરતીં હૈંં હસલિયે યે પૌષધ હૈં, હનમેં ચતુર્વિધ આહાર કા

માસે કાલં કિચ્છા) કાલ અવસરે કાલ કરીને (કહિં ગચ્છિહિતિ) કયાં જશે ?
(કહિં ઉવવજ્જિહિતિ) કયાં ઉત્પન્ન થશે ? પ્રભુએ ઉત્તરમાં કહ્યું-(ગોયમા) હે
ગૌતમ ! (અમ્મહે ણં પરિવ્વાયણ ઉચ્ચાવણિં સીલ-વ્વય-ગુણ-વેરમણ-પચ્ચક્કણ-
પોસહોવવાસેહિં) એ અમ્બહ પરિવ્રાજક, અનેક પ્રકારનાં શીલવ્રત (જેના
દ્વારા આત્માનાં ચિન્તનરૂપ સમાધિ જીવ પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ શીલવ્રત
છે), ગુણવ્રત, વેરમણ-મિથ્યાત્વવિરમણ, પ્રત્યાહ્યાન-પર્વના દિવસોમાં ત્યાગ
કરવા યોગ્ય વસ્તુઓનો ત્યાગ કરવો, પોષધોપવાસ-અષ્ટમી, ચતુર્દશી,
પૌર્ણમાસી તેમજ અમાવાસ્યા એ તિથિઓ ધર્મનું પોષણ કરે છે તે માટે

સમળોવાસગપરિયાયં પાઠિહિતિ, પાઠિત્તા માસિયાણ સંલે-
હણાણ અપ્પાણં ઝૂસિત્તા, સઠ્ઠિં ભત્તાઈં અણસણાણ છેદિત્તા,

વાસઃ=નિયમવિશેષઃ પોષધોપવાસઃ, સ ચતુર્વિધઃ—આહારશરીરસત્કારત્યાગબ્રહ્મચર્યસાવધવ્યા-
પારપરિત્યાગભેદાત્ । ઇષાં શીલાદિપોષધોપવાસાન્તાનામિતરેતરયોગદ્વન્દ્વસ્તૈસ્તથોક્તૈઃ
'અપ્પાણં ભાવેમાણે બહૂઈં વાસાઈં સમળોવાસગપરિયાયં પાઠિહિતિ' આત્માનં ભાવ-
યન્ બહૂનિ વર્ષાણિ શ્રમળોપાસકપર્યાયં પાલયિષ્યતિ, 'પાઠિત્તા' પાલયિત્વા 'માસિયાણ
સંલેહણાણ અપ્પાણં ઝૂસિત્તા' માસિક્યા સંલેખનયાઽઽત્માનં જુષિત્વા=સેવિત્વા, 'સઠ્ઠિં
ભત્તાઈં અણસણાણ છેદિત્તા' ષઠ્ઠિં ભક્તાનિ અનશનેન છિત્વા, 'આલોચ્યપડિક્કંતે'

ત્યાગ કરના । ઇન સવકા ભેદ ઇસ પ્રકાર હૈ, શીલવ્રત કા ભેદ—સામાયિક, દેશાવ-
કાશિક, પૌષધ ઓર અતિથિસંવિભાગ ઇસ પ્રકાર સે ૪ હૈ । ગુણવ્રત ત્રીન હૈ । પૌષધોપવાસ
મી ૪ પ્રકાર કા હૈ—આહાર કા ત્યાગ, શારીરિક સત્કાર કા ત્યાગ, બ્રહ્મચર્ય કા પાલન
ઍવં સાવધ વ્યાપાર નહીં કરના । ઇન સવ નિયમો—વ્રતો સે (અપ્પાણં ભાવેમાણે) અપની
આત્મા કો ભાવિત કરતા હુઆ (બહૂઈં વાસાઈં સમળોવાસગપરિયાયં પાઠિહિતિ)
અનેક વર્ષોં તક શ્રમળોપાસક — શ્રાવક કી પર્યાય કા પાલન કરેગા । (પાઠિત્તા મા-
સિયાણ સંલેહણાણ અપ્પાણં ઝૂસિત્તા) ઇસ પ્રકાર શ્રાવક કી પર્યાય કો પાલન કરકે
ફિર વહ ૧ માસ કી સંલેખના સે અપની આત્મા કો યુક્ત કર—અર્થાત્ ઍક માસ કી સંલે-
ખના ધારણ કર (સઠ્ઠિં ભત્તાઈં અણસણાણ છેદિત્તા) સાઠ ભક્ત કા અનશન સે છેદકર
(આલોચ્યપડિક્કંતે) પાપકર્મોં કો આલોચના—પ્રતિક્રમણ કરકે (સમાહિષત્તે) સમાધિ

ઐ પોષધ છે. તેમાં ઉપવાસ ઐટલે વસવું ઐ પોષધોપવાસ કહેવાય છે.
ઐ બધાનો લેહ આ પ્રકારે છે, શીલવ્રતના લેહ—સામાયિક, દેશાવકાશિક,
પોષધ, અને અતિથિસંવિભાગ, આ ચાર પ્રકારનાં છે. ગુણવ્રત ત્રણ પ્રકારનાં
છે. પોષધોપવાસ ચાર ૪ પ્રકારના છે—આહારનો ત્યાગ, શારીરિક સત્કારનો
ત્યાગ, બ્રહ્મચર્યનું પાલન તેમજ સાવધ વ્યાપાર ન કરવો. આ બધા
નિયમો—વ્રતોથી (અપ્પાણં ભાવેમાણે) પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા થકા
(બહૂઈં વાસાઈં સમળોવાસગપરિયાયં પાઠિહિતિ) અનેક વરસો સુધી શ્રમણો-
પાસક—શ્રાવકની પર્યાયનું પાલન કરશે. (પાઠિત્તા માસિયાણ સંલેહણાણ
અપ્પાણં ઝૂસિત્તા) આ પ્રકારે શ્રાવકની પર્યાયનું પાલન કરીને પછી તે
ઐક માસની સંલેખના ધારણ કરીને (સઠ્ઠિં ભત્તાઈં અણસણાણ છેદિત્તા)
સાઠ ભક્તાનું અનશનથી છેદન કરીને (આલોચ્યપડિક્કંતે) પાપ કર્મોની

આલોહ્યપડિક્કંતે સમાહિપત્તે કાલમાસે કાલં કિચ્ચા વંભલોણ
કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવજ્જિહિતિ । તત્થ ણં અત્થેગહ્યાણં દેવાણં
દસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લણ્ણત્તા । તત્થ ણં અમ્મહસ્સ વિ દેવસ્સ
દસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં ॥ સૂ. ૩૯ ॥

મૂલમ્—સે ણં મંતે ! અમ્મહે દેવે તાઓ દેવલોગાઓ

આલોચિતપ્રતિક્રાન્તઃ=પ્રતિનિવૃત્તઃ, ‘સમાહિપત્તે’ સમાધિપ્રાપ્તઃ, ‘કાલમાસે કાલં કિચ્ચા’
કાલમાસે કાલં કૃત્વા ‘વંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવજ્જિહિતિ’ બ્રહ્મલોકે કલ્પે દેવત્વેનો-
ત્પસ્યતે, ‘તત્થ ણં અત્થેગહ્યાણં દેવાણં દસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લણ્ણત્તા’ તત્ર સ્વલુ
અસ્તિ એકેષાં=કેષાંચિદ્ દેવાનાં દશ સાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા । ‘તત્થ ણં અમ્મહસ્સ
વિ દેવસ્સ દસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં’ તત્ર સ્વલુ અમ્મહસ્સ્યાઽપિ દેવસ્ય દશ સાગરોપમાનિ
સ્થિતિઃ ॥ સૂ. ૩૯ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘સે ણં મંતે ?’ इत्यादि ।

‘સે ણં મંતે ! અમ્મહે દેવે’ સ સ્વલુ મદન્ત ! અમ્બહો દેવઃ, ‘તાઓ દેવ-

કો પ્રાપ્ત કરેગા । પશ્ચાત્ (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) કાલ અવસર મેં કાલ કર કે
(વંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવજ્જિહિતિ) બ્રહ્મલોક નામક પાંચવેં દેવલોક મેં ઉત્પન્ન
હોગા । (તત્થ ણં અત્થેગહ્યાણં દેવાણં દસસાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લણ્ણત્તા) વહાં કિતનેક
દેવોં કી સ્થિતિ ૧૦ સાગર કીં હૈ । (તત્થ ણં) વહાં પર (અમ્મહસ્સ વિ દેવસ્સ દસ
સાગરોવમાઈં ઠિઈં) હસ અમ્બહ દેવ કીં મી દશ સાગર પ્રમાણ સ્થિતિ હોગી ॥ સૂ. ૩૯ ॥

‘સે ણં મંતે અમ્મહે દેવે’ इत्यादि ।

ગૌતમ પૂછતે હૈ—(મંતે) હે મદન્ત ! (સે અમ્મહે દેવે) વહ અમ્બહ દેવ (તાઓ

આલોચના તથા પ્રતિક્રમણુ કરીને (સમાહિપત્તે) સમાધિને પ્રાપ્ત કરશે. પછી
(કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) કાલ-અવસરે કાલ કરીને (વંભલોણ કપ્પે દેવત્તાણ
ઉવવજ્જિહિતિ) બ્રહ્મલોક નામના પાંચમાં દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થશે. (તત્થ ણ
અત્થેગહ્યાણં દેવાણં દસસાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લણ્ણત્તા) ત્યાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ
દશ ૧૦ સાગરની છે, (તત્થ ણં) ત્યાં (અમ્મહસ્સ વિ દેવસ્સ દસસાગરોવમાઈં
ઠિઈં) આ અમ્બહદેવની પણ દસ સાગર પ્રમાણ સ્થિતિ થશે. (સૂ. ૩૯)

‘સે ણં મંતે ! અમ્મહે દેવે’ इत्यादि.

ગૌતમ પૂછે છે—(મંતે) હે ભદ્રંત ! (સે ણં અમ્મહે દેવે) તે અમ્બહ દેવ

आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ ? ॥ सू० ४० ॥

मूलम्—गोयमा ! महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं

लोगाओ ' तस्मादेवलोकात् ' आउक्खएणं ' आयुःक्षयेण=देवसम्बन्ध्यायुःकर्मदलिक—निर्जरणेन, ' भवक्खएणं ' भवक्षयेण=देवभवहेतुगत्यादिकर्मनिर्जरणेन, ' ठिइक्खएणं ' स्थिति-क्षयेण=ब्रह्मलोके दशसागरोपमस्थितिक्षयेण ' अणंतरं ' अनन्तरं चयं=शरीरं ' चइत्ता ' त्यक्त्वा, ' कहिं गच्छिहिइ ' कुत्र गमिष्यति, ' कहिं उववज्जिहिइ ' कुत्रोत्पत्स्यते ? ॥ सू. ४० ॥

टीका—गौतमेन पृष्ठः सन् भगवानाह—'गोयमा !' इत्यादि ।

'गोयमा !' हे गौतम ! ' महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति ' महाविदेहे वर्षे यानि कुलानि भवन्ति=सन्ति, कानि तानि ? इत्याह—'अड्ढाइं' आढ्यानि=समृद्धानि, देवलोगाओ) उस देवलोक से (आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं) आयु के क्षय—देवसंबंधी आयुर्कर्म के दलिकों की निर्जरा से, भव के क्षय—देवभव के हेतु गत्यादिक कर्म की निर्जरा से तथा स्थिति के क्षय—ब्रह्मलोक संबंधी १० सागर की स्थिति के समाप्त होने से (चयं चइत्ता) देवपर्याय से च्यवकर (अणंतरं) इसके बाद (कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ) कहां जायगा ? कहां उत्पन्न होगा ? ॥ सू. ४० ॥

'गोयमा ! महाविदेहे वासे ' इत्यादि ।

गौतमस्वामीने पूर्वोक्त प्रकार से जब प्रभु से पूछा तब उन्होंने कहा—(गोयमा) हे गौतम ! (महाविदेहे वासे) महाविदेह क्षेत्र मे (जाइं) जितने (अड्ढाइं दित्ताइं वित्ताइं) आढ्य—समृद्ध दीप्त—उज्ज्वल तथा प्रशंसित, एवं वित्त—प्रसिद्ध, (कुलाइं भवंति)

(ताओ देवलोगाओ) ते देवलोकाथी (आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं) आयुने क्षय—देवसंबंधी आयुर्कर्मदलिकोनी निर्जराथी, भवने क्षय—देव-भवना हेतु गति आदिक कर्मनी निर्जराथी तथा स्थितिने क्षय—ब्रह्मलोके दश सागरनी स्थिति समाप्त होवाथी (चयं चइत्ता) देवपर्यायथी अथुत थधने (अणंतरं) त्थार पछी (कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ ?) कथां जशे ? कथां उत्पन्न थशे ? (सू० ४०)

“गोयमा ! महाविदेहे वासे” इत्यादि.

गौतमे उपर कहा प्रकारे न्यारे प्रभुने पूछयुं त्त्यारे तेओओ कहुं—(गोयमा) हे गौतम ! (महाविदेहे वासे) महाविदेह क्षेत्रमां (जाइं) जेटला (अड्ढाइं दित्ताइं वित्ताइं) आढ्य—समृद्ध, दीप्त—उज्ज्वल तथा प्रशंसित, तेभज्ज वित्त—प्रसिद्ध, (कुलाइं भवंति) कुलो छे. (वित्थिण्ण—विउल—भवण—सयणा—सण—जाण—

ભવંતિ અહ્ઢાઈં દિત્તાઈં વિત્તાઈં વિત્થિણ્ણ-વિઝલ-ભવણ-સ-
યણા-સણ-જાણ-વાહણાઈં बहुधण-जायरूव-रययाईं आओ-
ग-पओग-संपउत्ताईं विच्छड्डिय-पउर-भत्तपाणाईं बहु-दासी-

‘દિત્તાઈં’ દીપ્તાનિ=ઉજ્જ્વલાનિ-પ્રશંસિતાનિ, ‘વિત્તાઈં’ વિત્તાનિ=પ્રસિદ્ધાનિ ‘વિત્થિણ્ણ-
વિઝલ-ભવણ-સયણા-સણ-જાણ-વાહણાઈં’ વિસ્તીર્ણ-વિપુલ-ભવન-શયના-સસન-
યાન-વાહનાનિ-વિસ્તીર્ણાનિ=વિસ્તૃતાનિ વિપુલાનિ=વિશાલાનિ ભવનાનિ શયનાદીનિ ચ
યેષુ કુલેષુ તાનિ તથા, ‘बहुधण-जायरूव-रययाईं’ बहुधन-जातरूप-रजतानि-बहूनि
धनानि जातरूपाणि=सुवर्णानि रजतानि च येषु तानि तथा, ‘बहु-दासी-दास-गो-महिस-
गवेलग-प्पभूयाईं’ बहु-दासी-दास-गो-महिष-गवेलक-प्रभूतानि-बह्व्यो दास्यः बहवो
दासाः, गावः=वृषभा धेनवश्च, महिषाः=महिषाः महिष्यश्च, गवेलकाः=मेषाः तै प्रभूतानि=
सहितानि, ‘आओग-पओग-संपउत्ताईं’ आयोग-प्रयोग-सम्प्रयुक्तानि-विविधदानाः-

કુલ હૈં। જો કિ (વિત્થિણ્ણ-વિઝલ-ભવણ-સયણા-સણ-જાણ-વાહણાઈં) વિસ્તૃત એવં
વિપુલ ભવનોં કે અધિપતિ હૈં। જિનકે પાસ અનેક પ્રકાર કે શયન, આસન એવં યાન-
વાહનાદિક હૈં। (बहुधनजायरूवरययाईं) જો બહુત અધિક ધન કે સ્વામી હૈં। સોને એવં
ચાંદીકી જિનકે પાસ કમી નહીં હૈં। (आओग-पओग-संपउत्ताईं) આદાન-પ્રદાન અર્થાત્
લાભ કે લિયે લેન-દેન કા કામ કરતે હૈં, (विच्छड्डिय-पउर-भत्त-पाणाईं) યાચક
આદિ જનોં કે લિયે જો પ્રચુરમાત્રા મેં ભક્તપાન આદિ દેતે હૈં, (बहु-दासी-दास-गो-
महिस-गवेलग-प्पभूयाईं) જિનકી સેવામેં રાતદિન અનેક દાસી એવં દાસ ઉપસ્થિત રહા
કરતે હૈં, જિનકી ગોશાલાઈં અનેક વૈલોંસે, ગાયોં સે, મહિષિયોં સે, મહિષોં સે, એવં મેષોં સે,
સદા ભરપૂર રહા કરતી હૈં, (बहुजणस्स अपरिभूयाईं) ઔર જો કિસી કે દ્વારા મી પરાભવ

વાહણાઈં) જે વિશાળ તેમજ વિપુળ ભવનોના અધિપતિ છે, જેમની પાસે
અનેક પ્રકારનાં શયન, આસન, તેમજ યાન-વાહન આદિક છે, (बहु-धन-
जायरूव-रययाईं) જે બહુ ધનના સ્વામી છે, સુવર્ણ તેમજ ચાંદી જેમની
પાસે ઓછી નથી, (आओग-पओग-संपउत्ताईं) આદાન-પ્રદાન અર્થાત્ લાભને
માટે લેણદેણનું કામ કરે છે, (विच्छड्डिय-पउर-भत्त-पाणाईं) યાચક આદિ
જનોને માટે જે પ્રચુર માત્રામાં ભક્ત-પાન આદિ આપે છે, (बहु-दासी-
दास-गो-महिस-गवेलग-प्पभूयाईं) જેની સેવામાં રાતદિવસ અનેક દાસી
દાસ ઉપસ્થિત રહ્યા કરે છે. જેમની ગોશાળાઓ અનેક બેઠોથી, ગાયોથી
ભેંસોથી, પાડાઓથી, તેમજ ઘેટાંથી સદા ભરપૂર રહ્યા કરે છે, (बहुजणस्स

दास-गो-महिस-गवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइं तह-
प्पगारेसु कुलेसु पुमत्ताए पच्चायाहिइ ॥ सू. ४१ ॥

मूलम्—तए णं तस्स दारगस्स गब्भत्थस्स समाण-
स्स अम्मापिईणं धम्मे दढा पइण्णा भविस्सइ ॥ सू. ४२ ॥

दान-कर्मोपयुक्तानि, 'विच्छड्डिय-पउर-भत्तपाणाइं' विच्छर्दित-प्रचुर-भक्तपानानि-
विच्छर्दितानि=दत्तानि प्रचुराणि भक्तानि पानानि=पेयानि यैः कुलैस्तानि तथा, 'बहुजणस्स
अपरिभूयाइं' बहुजनस्याऽपरिभूतानि, कैरप्यपराजितानीत्यर्थः । 'तहप्पगारेसु' तथाप्रका-
रेषु=तादृशेषु कुलेषु, 'पुमत्ताए' पुंस्तया=पुरुषतया, 'पच्चायाहिइ' प्रत्यायास्यति=उत्पत्स्यत
इत्यर्थः ॥ सू. ४१ ॥

टीका—'तए णं' इत्यादि । 'तए णं' ततः खलु-तत्पश्चात् 'तस्स दारगस्स'
तस्य दारकस्य=बालस्य 'गब्भत्थस्स चेव' गर्भस्थस्यैव=गर्भाऽऽगतस्यैव सतः पुण्यशालि-
तया तत्प्रभावात् 'अम्मापिईणं धम्मे' मातापित्रोर्धर्मे 'दढा पइण्णा' दृढा प्रतिज्ञा
'भविस्सइ' भविष्यति-धर्माधनाय दृढनिश्चयो भविष्यतीत्यर्थः ॥ सू. ४२ ॥

नहीं पा सकते हैं, (तहप्पगारेसु कुलेसु पुमत्ताए पच्चायाहिइ) ऐसे विशिष्ट कुलो में से
किसी एक कुल में यह अम्बड परिव्राजक पुरुषरूप से उत्पन्न होगा ॥ सू० ४१ ॥

'तए णं तस्स दारगस्स' इत्यादि ।

(तए णं) इसके पश्चात् (तस्स दारगस्स) उस लड़के के (गब्भत्थस्स समा-
णस्स) गर्भ में आते ही पुण्य के प्रभाव से (अम्मापिईणं) मातापिता को (धम्मे दढा
पइण्णा भविस्सइ) धर्म में दृढ आस्था उत्पन्न होगी ॥ सू० ४२ ॥

अपरिभूयाइं) અને જે કોઈથી પણ પરાભવ પામતા નથી. (તહપ્પગારેસુ
કુલેસુ પુમત્તાએ પચ્ચાયાહિઈ) એવાં વિશિષ્ટ કુળોમાંથી કોઈ એક કુળમાં એ
અમ્બડ પરિવ્રાજક પુરુષરૂપથી ઉત્પન્ન થશે. (સૂ. ૪૧)

'તએ ણં તસ્સ દારગસ્સ' ઇત્યાદિ.

(તએ ણં) ત્યાર પછી (તસ્સ દારગસ્સ) તે છોકરાના (ગમ્મત્થસ્સ સમા-
ણસ્સ) ગર્ભમાં આવતાં જ પુણ્યના પ્રભાવ વડે (અમ્માપિઈણં) માતા-પિતાની
(ધમ્મે દઢા પઈણ્ણા ભવિસ્સઈ) ધર્મમાં દૃઢ આસ્થા ઉત્પન્ન થશે. (સૂ. ૪૨)

मूलम्—से णं तत्थ णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं
अद्धट्टमाण राइंदियाणं वीइक्कंताणं सुकुमालपाणिपाए जाव ससि-
सोमाकारे कंते पियदंसणे सुरूवे दारए पयाहिए ॥ सू. ४३ ॥

मूलम्—तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे

टीका—‘से णं तत्थ’ इत्यादि । ‘से णं तत्थ’ स खलु तत्र ‘णवण्हं
मासाणं’ नवसु मासेषु, अत्र सप्तम्यर्थे षष्ठी, एवमग्रेऽपि; ‘बहुपडिपुण्णाणं’ बहुप्रतिपू-
र्णेषु=सर्वथा व्यतीतेषु, ‘अद्धट्टमाणं’ अर्धाष्टमेषु—सार्धसप्तसु ‘राइन्दियाणं’ रात्रिन्दिवेषु
‘वीइक्कंताणं’ व्यतिक्रान्तेषु=व्यतीतेषु ‘जाव ससिसोमाकारे’ यावत् शशिसौम्याकारः=
चन्द्रवत्सुन्दरः, ‘कंते’ कान्तः=कमनीयः, ‘पियदंसणे’ प्रियदर्शनः, ‘सुरूवे’ सुरूपः,
‘दारए’ दारकः=पुत्रः ‘पयाहिए’ प्रजनिष्यते=उत्पत्स्यते ॥ सू. ४३ ॥

टीका—‘तए णं’ इत्यादि ।

‘तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे’ ततः खलु तस्य दार-
कस्य अम्बापितरौ प्रथमे दिवसे ‘ठिइवडियं’ स्थितिपतितं=कुलमर्यादाप्राप्तं—पुत्रजन्मोत्सवं

‘से णं तत्थ णवण्हं मासाणं’ इत्यादि ।

(तत्थ) गर्भे में (णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्टमाणं राइंदियाणं वीइ-
क्कंताणं) नौ महीने साढे सात दिनरात बीतने पर (सुकुमालपाणिपाए जाव ससिसोमा-
कारे कंते पियदंसणे सुरूवे दारए पयाहिइ) यह सुकुमार पाणिपादवाला यावत् चंद्रमा
के समान सौम्य आकारवाला, कांत, प्रियदर्शन एवं सुन्दररूप से विशिष्ट ऐसा पुत्र उत्पन्न
होगा ॥ सू. ४३ ॥

‘तए णं तस्स दारगस्स’ इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (तस्स दारगस्स) इस बालक के (अम्मापियरो) माता-

‘से णं तत्थ णवण्हं मासासं’ इत्यादि ।

(तत्थ) गर्भे में (णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्टमाणं राइं-
दियाणं वीइक्कंताणं) नव महीना अने साढे सात दिनरात बीत्या पछी
(सुकुमाल-पाणि-पाए जाव ससिसोमाकारे कंते पियदंसणे सुरूवे दारए पयाहिइ)
ये सुकुमार हाथपगवाणे, यावत् चंद्रमा जेवो सौम्य आकारवाणे, कांत,
प्रियदर्शन, तेमज सुंदर रूपथी विशिष्ट जेवो पुत्र उत्पन्न थशे. (सू. ४३)

‘तए णं तस्स दारगस्स’ इत्यादि ।

(तए णं) त्यार पछी (तस्स दारगस्स) आ आलउने (अम्मापियरो) माता-

दिवसे ठिड्वडियं काहिति, विड्यदिवसे चंदसूरदंसणियं काहिति,
छट्टे दिवसे जागरियं काहिति, एक्कारसमे दिवसे वीड्कंते णि-
व्वत्ते असुइ-जाय-कम्मकरणे संपत्ते बारसाहे दिवसे अम्मापि-
यरो इमं एयारूवं गोणं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं काहिति-

‘काहिति’ करिष्यतः. ‘विड्यदिवसे’ द्वितीयदिवसे ‘चंदसूरदंसणियं’ चन्द्रसूर्यदर्शनि-
कानामकं पुत्रजन्मोत्सवविशेषं करिष्यतः, ‘छट्टे दिवसे’ षष्ठे दिवसे ‘जागरियं’ जाग-
रिकां=रात्रिजागरिकां-सुतजन्मोत्सवरूपां करिष्यतः. ‘एक्कारसमे दिवसे’ एकादशे दिवसे
‘वीड्कंते’ व्यतिक्रान्ते=व्यतीते, ‘णिव्वत्ते’ निवृत्ते=व्यतीते ‘असुइजायकम्मकरणे’
अशुचिजातकर्मकरणे-अशुचीनाम्=अशौचवतां जातकर्मणो=जातकर्मसंस्कारस्य यत् करणं=
विधानं तस्मिन्, निवृत्ते सतीति पूर्वणान्वयः. ‘संपत्ते बारसाहे दिवसे’ सम्प्राप्ते द्वादशाहे
दिवसे=द्वादशाहरूपे दिने समागते इत्यर्थः, ‘अम्मापियरो इमं एयारूवं गोणं गुणणिप्फ-
ण्णं नामधेज्जं काहिति’ अम्बापितरौ इदं=वक्ष्यमाणम् एतद्रूपं=वक्ष्यमाणस्वरूपं गौणं=

पिता (पढमे दिवसे) प्रथम दिवस में (ठिड्वडियं) अपनी स्थिति के अनुसार पुत्र-जन्म के
उत्सव को (काहिति) मनावेंगे। (विड्यदिवसे चंदमूरदंसणियं काहिति) द्वितीय दिवसमें पुत्र-
जन्म के उत्सव के अवसर पर मनाये जाने वाले ‘चंद्रमूर्यदर्शनिका’ नाम के उत्सव को करेंगे।
(छट्टे दिवसे जागरियं काहिति) छठवें दिन जागरण करेंगे. (एक्कारसमे दिवसे वीड्कंते
णिव्वत्ते असुइजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहे दिवसे) ग्यारहवें दिवस जननाशौच समाप्त
होने पर फिर बारहवें दिवस के लगने पर (अम्मापियरो) इसके मातापिता (इमं
एयारूवं गोणं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं काहिति) इसका गुणसंबंधयुक्त एवं सार्थक

पिता (पढमे दिवसे) पड़ेला दिवसे (ठिड्वडियं) पोतानी स्थिति अनुसार
पुत्रजन्मनो उत्सव (काहिति) मनावशे, (विड्यदिवसे चंदसूरदंसणियं काहिति)
थीजे दिवसे पुत्रजन्मना उत्सव अवसरे मनाववामां आवतो ‘चंद्रसूर्य-
दर्शनिका’ ये नामनो उत्सव करशे, (छट्टे दिवसे जागरियं काहिति) छट्टा दिवसे
जमरथु करशे. (एक्कारसमे दिवसे वीड्कंते णिव्वत्ते असुइजायकम्मकरणे संपत्ते
बारसाहे दिवसे) अगीयारमे दिवसे जन्म-अशौच (सूतक) समाप्त थछ गया
पछी बारमे दिवस थतां (अम्मापियरो) तेना मातापिता (इमं एयारूवं गोणं
गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं काहिति) तेना शुधुसंअंधने अनुदक्षीने तेमज्ज

जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भत्थंसि चेव समाणंसि
धम्मे दढपइण्णा, तं होउ णं अम्हं दारए दढपइण्णे णामेणं ।
तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामधेज्जं करेहिंति-
दढपइण्णत्ति ॥ सू. ४४ ॥

मूलम्—तं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो साइरेगट्ट-

गुणसम्बन्धयुक्तं, गुणनिष्पन्नं—गुणैः=धर्मविषयकदाढर्चादिगुणैर्निष्पन्नं=सिद्धं नामधेयं करिष्यतः ।
'जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भत्थंसि चेव समाणंसि' यस्मात्स्वल्वावयोरस्मिन्
दारके गर्भस्थ एव सति 'धम्मे' धर्मे=धर्माश्रयत्वेन 'दढपइण्णा' दढप्रतिज्ञा=दढनिश्चयो जातः,
'तं होउ णं अम्हं दारए दढपइण्णे णामेणं' तद् भवतु स्वल्वावयोर्दारको दढप्रतिज्ञो
नाम्ना—तस्मादस्य बालकस्य 'दढप्रतिज्ञ' इति नामास्तु—इत्यर्थः । 'तए णं तस्स दार-
गस्स अम्मापियरो णामधेज्जं करेहिंति दढपइण्णत्ति' ततः खलु अम्मापितरौ तस्य
दारकस्य नामधेयं करिष्यतो दढप्रतिज्ञ इति ॥ सू. ४४ ॥

टीका—'तं दढपइण्णं' इत्यादि । 'तं दढपइण्णं' तं दृढप्रतिज्ञं=दृढप्रतिनामकं

नामकरणमंस्कार करेंगे । वह इस बात को विचार कर इसका नाम रखेंगे कि (जम्हा णं
अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भत्थंसि चेव समाणंसि धम्मे दढइण्णा, तं होउ णं अम्हं
दारए दढपइण्णे नामेणं) हमारा यह बालक जब गर्भ में आया था तब से ही हम
लोगों की प्रतिज्ञा—आस्था धर्म में दढ हुई, अतः हमारे इस बालक का नाम दढप्रतिज्ञ हो ।
(तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामधेज्जं करेहिंति दढपइण्णत्ति) उस समय
उस बालक के मातापिता उसका नाम दढप्रतिज्ञ रखेंगे ॥ सू. ४४ ॥

सार्थक नामकरणसंस्कार करशे. तेथो अे वातनो विचार करीने तेनुं नाम
राखशे के (जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भत्थंसि चेव समाणंसि धम्मे दढ-
पइण्णा तं होउ णं अम्हं दारए दढपइण्णे नामेणं) अमारे आ आणक न्यारे
गर्भमां आये। हुतो त्यारथीज्ज अमारा दाकेनी प्रतिज्ञा—आस्था धर्ममां दढ
थध, तेथी अमारा आ आणकनुं नाम दढप्रतिज्ञ रडे। (तए णं तस्स दारगस्स
अम्मापियरो णामधेज्जं करेहिंति दढपइण्णत्ति) ते समये ते आणकनां माता-
पिता तेनुं नाम दढप्रतिज्ञ राखशे. (सू. ४४)

वासजायगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेहिंति ॥ सू. ४५ ॥

मूलम्—तए णं से कलायरिए तं दढपइण्णं दारगं लेहाइयाओ

‘दारयं’ दारकं=कुमारम्, ‘अम्मापियरो’ अम्बापितरौ ‘साइरेगट्टुवासजायगं’ सातिरेकाष्टवर्षजातकं=किञ्चिदधिकाष्टवर्षाणि जातानि यस्य स तथा तं, किञ्चिदधिकाष्टवर्षवयस्कमित्यर्थः; ‘जाणित्ता’ ज्ञात्वा ‘सोभणंसि’=शोभने-शुभकारके ‘तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंसि’ तिथिकरणदिवसनक्षत्रमुहूर्ते ‘कलायरियस्स’ कलाचार्यस्य ‘उवणेहिंति’ उपनेष्यतः—द्वासप्तति कलाज्ञानप्राप्तये कलाशिक्षकस्य समीपं नेष्यत इत्यर्थः ॥ सू० ४५ ॥

टीका—‘तए णं’ इत्यादि । ‘तए णं से कलायरिए’ ततः खलु स कलाचार्यः ‘तं दढपइण्णं’ तं दृढप्रतिज्ञं दृढप्रतिज्ञनामकं ‘दारगं’ दारकं ‘लेहाइयाओ’ लेखादिकाः,

‘तं दढपइण्णं दारगं’ इत्यादि ।

(तं दढपइण्णं दारगं) पश्चात् उस दृढप्रतिज्ञ नामक बालक को (अम्मा पियरो) उसके माता-पिता (साइरेगट्टुवासजायगं जाणित्ता) जब आठ वर्ष से कुछ अधिक वय का जानेंगे तब वे उसे (सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-णक्खत्त-मुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेहिंति) शुभ तिथि, शुभ करण, शुभ नक्षत्र एवं शुभ मुहूर्त में कलाचार्य के पास ७२ कलाओं का ज्ञान प्राप्त कराने के निमित्त ले जावेंगे ॥ सू. ४५ ॥

‘तए णं से कलायरिए’ इत्यादि ।

(तए णं) इसके बाद (से कलायरिए) वह कलाचार्य (तं दढपइण्णं

‘तं दढपइण्णं दारगं’ इत्यादि.

(तं दढपइण्णं दारगं) त्थार पछी ते दृढप्रतिज्ञ नामना आणउने (अम्मा-पियरो) तेनां माता-पिता (साइरेग-ट्टुवास-जायगं जाणित्ता) न्थारे आठ वर-सथी उंउंउ वधारे उभरने। न्णुशे त्थारे तेओ तेने (सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-णक्खत्त-मुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेहिंति) शुभतिथि, शुभ करण, शुभ दिवस, शुभ नक्षत्र, तेमज्ज शुभ मुहूर्तमां उलाचार्यनी पास ७२ उणाओनुं ज्ञान प्राप्त कराववा निमित्ते लउ न्णशे. (सू. ४५)

‘तए णं से कलायरिए’ इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से कलायरिए) ते उलाचार्य (तं दढपइण्णं दारगं)

गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरिकलाओ सुत्त-
ओ य अत्थओ य करणओ य सेहाविहिति सिक्खाविहिति, तं
जहा—लेहं १, गणियं २, रूवं ३, णट्टं ४, गीयं ५, वाइयं ६, सर-

‘गणियप्पहाणाओ’ गणितप्रधानाः, ‘सउणरुयपज्जवसाणाओ’ शकुनरुतपर्यवसानाः, ‘बाव-
त्तरिकलाओ’ द्वासप्ततिकलाः, ‘सुत्तओ य’ सूत्रतः=सूत्रस्थपदपाठनात्, ‘अत्थओ य’
अर्थतः=पदार्थबोधनात्, ‘करणओ य’ करणतः=प्रयोगतः—कलाव्यापारप्रदर्शनात्, ‘सेहावि-
हिति’ साधयिष्यति=प्रापयिष्यति, ‘सिक्खाविहिति’ शिक्षयिष्यति=अभ्यासं कारयिष्यति ।

ताः कला नामतः प्रदर्शयति— ‘तं जहा’ तद्यथा—‘लेहं’ लेखं—लेखनं लेखः—
अक्षरविन्यासस्तद्विषयकलाविज्ञानं लेख एवोच्यते तम्, ‘गणियं’ गणितं=मंड्यानं वंकलिता-
द्यनेकभेदम् २, ‘रूवं’ रूपं=लेप्यशिलासुवर्णमणिवस्त्रचित्रादिषु रूपनिर्माणम् ३, ‘णट्टं’ नाट्यं=
साभिनयनिरभिनयपूर्वकं नर्तनम् ४, ‘गीयं’ गीतं=गान्धर्वकलाज्ञानविज्ञानम् ५, ‘वाइयं’
वाद्यं=वीणापटहादिवादनकलाज्ञानम् ६, ‘सरगयं’ स्वरगतं=गीतमूलभूतानां षड्जऋषभादि-

दास्यं) उस दृढप्रतिज्ञ कुमार को (लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ) लिखने आदि की,
गणित की, तथा पक्षी के शब्द आदि जानने की (बावत्तरिकलाओ) ७२ कलाओं में
(सुत्तओ य) सूत्ररूप से (अत्थओ य) एवं अर्थरूप से तथा (करणओ य) प्रयोगरूप
से (सेहाविहिति) प्राप्त करायेगा, (सिक्खाविहिति) अभ्यास करायेगा । (तं जहा) बह-
त्तर कलाओं के नाम ये हैं— (१ लेहं) लेख लिखने की, (२ गणियं) गणित की, (३
रूवं) रूप की—अर्थात् लेप्य, शिला, सुवर्ण, मणि, वस्त्र एवं चित्र इत्यादिकों में रूपनिर्माण
करने की, (४ णट्टं) नृत्य की—साभिनय एवं निरभिनयपूर्वक नाचने की, (५ गीयं)
गाने की, (६ वाइयं) वीणा एवं पटह—ढोल आदि बाजे बजाने की, (७ सरगयं)

ते दृढप्रतिज्ञ कुमारने (लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ) लेखन आदिनी, गणि-
तनी तथा पक्षीना शब्द आदि ज्ञापयानी (बावत्तरिकलाओ) ७२ कलाओ।
(सुत्तओ य) सूत्ररूपथी (अत्थओ य) तेमञ्ज अर्थ रूपथी, तथा (करणओ य) प्रयोग
रूपथी (सेहाविहिति) प्राप्त करावशे, (सिक्खाविहिति) अभ्यास करावशे. (तं जहा
जउत्तेर कलाओनां नाम आ प्रमाणे छे—१ (लेहं) लेख ज्ञापयानी, २ (गणियं)
गणितनी, ३ (रूवं) रूपनी अर्थात् लेप्य, शिला, सुवर्ण, मणि, वस्त्र तेमञ्ज
चित्र इत्यादिमां रूप निर्माण करवानी, ४ (णट्टं) नृत्यनी—साभिनय तेमञ्ज
निरभिनय—पूर्वक नाचवानी, ५ (गीयं) गावानी, ६ (वाइयं) वीणा तेमञ्ज
पटह ढोल आदि वाजित्र वगाडवानी, ७ (सरगयं) स्वरोनी—गीतना भूजभूत

गयं ७, पुक्खरगयं ८, समतालं ९, जूयं १०, जणवायं ११, पासगं १२, अट्ठावयं १३, पोरेकव्वं १४, दग्गमट्ठियं १५, अण्णविहिं १६, पाणविहिं १७, आभरणविहिं १८, सयणविहिं १९, अज्जं २०,

स्वराणां परिज्ञानम् ७, 'पुक्खरगयं' पुष्करगतं=मृदङ्गविषयकं विज्ञानम्, वाद्यान्तर्गतत्वेऽपि मृदङ्गादेः पृथक्कथनं परममङ्गीताङ्गत्वबोधनार्थम् ८, 'समतालं' समतालं—गीतादिमानकाल-स्तालः स समः=न्यूनाधिकमात्रारहितो ज्ञायते यस्मात् तत् समतालविज्ञानम् ९, 'जूयं' द्यूतं—'जुगार' इति भाषायाम् १०, 'जणवायं' जनवादं=जनेषु वादप्रतिवादकरणरूपम् ११, 'पासयं' पाशकं=द्यूतोपकरणविशेषं, 'पाशा' इति भाषायाम् १२, 'अट्ठावयं' अष्टापदं—द्यूत-विशेषखेलनम् १३, 'पोरेकव्वं' पुरःकाव्यं=पुरतः पुरतः काव्यं—काव्यरूपवाणीनिःसारणं =शीघ्रकवित्वमित्यर्थः १४, 'दग्गमट्ठियं' दकमृत्तिकाम्=उदकयुक्तमृत्तिकाप्रयोगविधिः दक-मृत्तिका=कुम्भकारविद्येत्यर्थः, ताम् १५, 'अण्णविहिं' अन्नविधिम्=अन्ननिष्पादनविज्ञानम् । 'अन्नविहिं' इत्यत्र समवायाङ्गोक्तस्य 'मधुसिक्थं' इत्यस्य समावेशः १६, 'पाणविहिं' पानविषयविज्ञानम् १७, 'आभरणविहिं' आभरणविधिम्=भूषणनिर्माणधारणविज्ञानम् ।

स्वरों की—गीत के मूलभूत षड्ज—ऋषभ आदि स्वरों की, (८ पुक्खरगयं) मृदंग बजाने की (९ समतालं) समताल की—तान के अनुसार ताल बजाने की, (१० जूयं) जुआ खेलने की, (११ जणवायं) लोकों के साथ प्रतिवाद करने की, (१२ पासगं) पासा फेंकने की, (१३ अट्ठावयं) अष्टापद—चौपड़ खेलने की, (१४ पोरेकव्वं) आशुकवि होने की, (१५ दग्गमट्ठियं) मिट्टी से अनेक प्रकार के वर्तन बनाने की, (१६ अण्णविहिं) धान्य आदि को बो कर अन्नादिक उत्पन्न करने की—भोजन बनाने की, समवायाङ्ग में उक्त 'मधुसिक्थं'—मधुसिक्थ का इसीमें समावेश किया गया है: (१७ पाणविहिं) पेयपदार्थ की विधि जानने

५७—ऋषभ आदि स्वरोनी, ८ (पुक्खरगयं) मृदंग वगाडवानी, ९ (समतालं) समतालनी—तानने अनुसार ताल बजाववानी, १० (जूयं) जुगार रभवानी, ११ (जणवायं) दोऊनी साथे प्रतिवाद करवानी, १२ (पासगं) पासा फेंकवानी, १३ (अट्ठावयं) अष्टापद—चौपाट रभवानी, १४ (पोरेकव्वं) आशुकवि थवानी, १५ (दग्गमट्ठियं) माटीमांथी अनेक प्रकारनां ठाम बनाववानी, १६ (अण्ण-विहिं) धान्य आदिने वापीने अन्न आदिउने उत्पन्न करवानी—भोजन बना-ववानी, समवायाङ्गमां उक्त 'मधुसिक्थं' मधुसिक्थनो समावेश अहीं ७ कर-वाभां आये छे; १७ (पाणविहिं) पीवाना पदार्थनी विधि बजावानी, १८

पहेलियं २१, मागहियं २२, गाहं २३, गीइयं २४, सिलोयं २५,

‘आभरणविहिं’ इत्यत्र समवायाङ्ग-ज्ञाता-गजप्रश्नीय-जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिवर्णितस्य
‘वत्थविहिं’ इत्यस्य, तथा ज्ञाता-गजप्रश्नीय-जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिकथितस्य ‘विलेवणविहिं’
इत्यस्य च समावेशः १८, ‘सयणविहिं’ शयनविधि=शय्यापर्यङ्कादिविधिज्ञानम् १९,
‘अज्जं’ आर्या=मात्राछन्दोरूपां, मात्रासंमेलनेन छन्दोनिर्माणविज्ञानम् २०, ‘पहेलियं’
प्रहेलिकां = गूढाशयगद्यपद्यमयीं रचनाम् २१, ‘मागहियं’ मागधिकां=मगध-
देशीयभाषाकवित्वम् २२, ‘गाहं’ गाथां=संस्कृतेतरभाषानिबद्धामार्यामेव, कलिङ्गादिदेशभाषा-
निबद्धकवित्वविज्ञानं वा २३, ‘गीइयं’ गीतिकां=पूर्वार्धसदृशोत्तरार्धलक्षणरूपाम् २४,
‘सिलोयं’ श्लोकम्=अनुष्टुपादिलक्षणम् २५, ‘हिरणजुत्तिं’ हिरण्ययुक्तिं=रजतनिर्माण-

की, (१८आभरणविहिं) आभरण आदि को बनाने एवं उन्हें यथास्थान धारण करने की,
समवायाङ्ग, ज्ञाता, गजप्रश्नीय और जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में उक्त ‘वत्थविहिं’ वस्त्रविधि का,
ज्ञाता, गजप्रश्नीय तथा जम्बूद्वीप में उक्त ‘विलेवणविहिं’ विलेपनविधि का समावेश यहीं
पर हो जाता है: (१९ सयणविहिं) शय्या आदि बनाने की, (२० अज्जं) आर्याछन्द-मात्रिक
छन्दों को रचने की, (२१ पहेलियं) प्रहेलिका की, अर्थात् गूढ आशयवाली गद्यपद्यमयी
रचना करने की, (२२ मागहियं) मागधिकाकी अर्थात् मगध-देशकी भाषा में कविता
रचने की, (२३ गाहं) संस्कृतसे भिन्न भाषा में मात्रिक छन्दों में कविता रचने की, अथवा
कलिङ्ग आदि देशों की भाषा में निबद्ध कविता के विज्ञान की, (२४ गीइयं) पूर्वार्ध के
सदृश उत्तरार्ध लक्षणरूप गीतिका छन्द में काव्य रचने की, (२५ सिलोयं) अनुष्टुप् आदि
छन्दों में श्लोकों को रचने की, (२६ हिरणजुत्तिं) चाँदी बनाने की विधि की (२७ सुव-

(आभरणविहिं) आभरण आदि बनाववानी, समवायाङ्ग, ज्ञाता, गजप्रश्नीय
अने जम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिमां उक्त ‘वत्थविहिं’ वस्त्रविधिने, अने ज्ञाता, गज-
प्रश्नीय अने समवायाङ्गमां उक्त ‘विलेवणविहिं’ विलेपनविधिने।
समावेश अडो ज करवामां आव्ये। छ. १८ (सयणविहिं) शय्या
आदि बनाववानी, २० (अज्जं) आर्या छंद-मात्रिक-छंदो रचवानी,
२१ (पहेलियं) प्रहेलिकानी अर्थात् गूढ आशयवाणी गद्यपद्यमयी रचना
करवानी, २२ (मागहियं) मागधी अर्थात् मगध देशनी भाषामां कविता
रचवानी, २३ (गाहं) संस्कृतथी जुद्धी भाषामां मात्रिक छंदोमां कविता रच-
वानी, अथवा कलिङ्ग आदि देशोनी भाषामां रचित कविताना विज्ञाननी,
२४ (गीइयं) पूर्वार्धना जेम उत्तरार्धलक्षण ३५ गीतिका छंदमां काव्य
रचवानी, २५ (सिलोयं) अनुष्टुप आदि छंदोमां श्लोको रचवानी, २६ (हिर-

हिरण्यजुत्ति २६, सुवर्णजुत्ति २७, गंधजुत्ति २८, चुण्णजुत्ति २९,
तरुणीपडिकम्मं ३०, इत्थिलक्खणं ३१, पुरिसलक्खणं ३२, हय-
लक्खणं ३३, गयलक्खणं ३४, गोणलक्खणं ३५, कुक्कुडलक्खणं

विधिम् २६, 'सुवन्नजुत्ति' सुवर्णयुक्ति=सुवर्णनिर्माणोपायम् २७, 'गंधजुत्ति' गन्धयुक्ति=
गन्धद्रव्यनिर्माणविधिम् २८, 'चुन्नजुत्ति' चूर्णयुक्ति=वर्षाकरणान्तर्धानार्थं तत्तदुचितद्रव्याण्ये-
कत्रीकृत्य तत्पिष्टीकरणविधिम् २९, 'तरुणीपडिकम्मं' तरुणीपरिकर्म=युवतीरूपशोभा-
परिवर्धनविधिम् ३०, 'इत्थिलक्खणं' स्त्रीलक्षणम्=पद्मिनीहस्तिन्यादियुवतीनां लक्षणम्
३१, 'पुरिसलक्खणं' पुरुषलक्षणम्=उत्तममध्यमादिपुरुषाणां लक्षणविज्ञानम् ३२,
'हयलक्खणं' हयलक्षणं=दीर्घग्रीवाक्षिकूटादिलक्षणविज्ञानम्, 'हयलक्खणं' इत्यत्र
समवायाङ्गोक्तस्य 'आससिक्खं' इत्यस्य समावेशः ३३, 'गयलक्खणं' गजलक्षणं=
हस्तिशुभाऽशुभलक्षणविज्ञानम्, 'गयलक्खणं' इत्यत्र समवायाङ्गोक्तस्य 'हत्थिसिक्खं'
इत्यस्य समावेशः ३४, 'गोणलक्खणं' गोलक्षणं=सास्नाविकला अतिरूक्षा मूषिकनयना-
श्च न शुभदा गावः' इत्यादिविज्ञानम् ३५, 'कुक्कुडलक्खणं' कुक्कुटलक्षणम्, 'कुक्कुडलक्खणं

न्नजुत्ति) सुवर्णनिर्माण करने की विधि की, (२८ गंधजुत्ति) गंधद्रव्य को बनाने की विधि
की, (२९ चुन्नजुत्ति) वर्षाकरण आदि चूर्ण को बनाने वाली औषधियों को एकत्रित कर
उनकी पिष्टी करने की विधि की (३० तरुणीपडिकम्मं) युवती के रूप की शोभा
बढ़ाने की विधि की, (३१ इत्थिलक्खणं) पद्मिनी, हस्तिनी आदि युवतियों को जानने के
लक्षणों की, (३२ पुरिसलक्खणं) पुरुषों को पहिचानने के लक्षणों की, (३३ हयलक्खणं)
अश्वों के लक्षणों को जानने की तथा उनको चलाने की (३४ गयलक्खणं) हाथी के लक्षणों
को जानने की, यहाँ पर समवायांग में उक्त 'हत्थिसिक्खं' हस्तिशिक्षा कला का समावेश
हुआ है, (३५ गोणलक्खणं) गाय के लक्षणों को जानने की, (३६ कुक्कुडलक्खणं) कुक्कुट-

णजुत्ति) आँही अनाववानी विधिनी, २७ (सुवन्नजुत्ति) सुवर्णनिर्माण करवानी
विधिनी, २८ (गंधजुत्ति) गंधद्रव्य अनाववानी विधिनी, २९ (चुन्नजुत्ति)
वर्षाकरण आदि चूर्ण अनाववानी औषधीयों को एकत्र करी तेने पीसवा
(वाटी नाअवा)नी विधिनी, ३० (तरुणीपडिकम्मं) युवतीना रुपनी शोभा
वधारवानी विधिनी, ३१ (इत्थिलक्खणं) पद्मिनी, हस्तिनी आदि युवतीयो
ने जानवुवानी लक्षणोनी, ३२ (पुरिसलक्खणं) पुरुषोने जानवुवानी लक्षणोनी,
३३ (हयलक्खणं) घोडानां लक्षणो जानवुवानी तथा तेमने अनाववानी, ३४
(गयलक्खणं) हाथीनां लक्षणो जानवुवानी, अही समवायांगमां उक्त 'हत्थि-

३६, चकलकखणं ३७, छत्तलकखणं ३८, चम्मलकखणं ३९, दंड-
लकखणं ४०, असिलकखणं ४१, मणिलकखणं ४२, कागणिल-
कखणं ४३, वत्थुविज्जं ४४, खंधारमाणं ४५, नगरमाणं ४६, चारं

इत्यत्र समवायाङ्गोक्तस्य 'मिढयलकखणं' इत्यस्य समावेशः, उपस्करादौ संचारेण सादृश्यात्
३६, 'चकलकखणं' चकलक्षणं=चक्ररत्नगुणदोषविज्ञानम् ३७, 'छत्तलकखणं' छत्रल-
क्षणं=छत्रस्य शुभाशुभविज्ञानम् ३८, 'चम्मलकखणं' चर्मलक्षणं, चर्म-ढाल इति प्रसिद्धं
तस्य शुभाशुभलक्षणज्ञानम् ३९, 'दंडलकखणं' दण्डलक्षणम्=दण्डस्य शुभाशुभलक्षणवि-
ज्ञानम् ४०, 'असिलकखणं' असिलक्षणम्='अङ्गुलीशतार्ध उत्तमः खड्ग' इत्यादिविज्ञानम्
४१, 'मणिलकखणं' मणिलक्षणं=रत्नपरीक्षाविज्ञानम् ४२, 'कागणिलकखणं' काकणी-
लक्षणम्=चक्रवर्तिनो रत्नविशेषः काकणी, तस्या विषापहरणमानोन्मानादियोगप्रवर्तकत्वाद्विज्ञा-
नम् ४३, 'वत्थुविज्जं' वास्तुविद्याम्=वसति अस्मिन्निति वास्तु=गृहादिकं तस्य विद्या=
वास्तुशास्त्रप्रसिद्धं गृहभूमिगतदाषगुणविज्ञानम्, 'वत्थुविज्जं' इत्यत्र समवायाङ्गोक्तयोः
'वत्थुमाणं' 'वत्थुनिवासं' इत्यनयोः समावेशः ४४, 'खंधारमाणं'

मुर्गे के लक्षणों को जानने की, समवायाङ्ग में उक्त 'मिढयलकखणं' (मैढेका लक्षण) का
समावेश यहीं हो जाता है। (३७ चकलकखणं) चक्ररत्न के गुणदोष जानने की, (३८
छत्तलकखणं) छत्र के शुभाशुभ जानने की, (चम्मलकखणं) ढाल के खोटे-खरे लक्षणों
को जानने की, (४० दंडलकखणं) दंड के अच्छे-बुरे लक्षणों को जानने की, (४१
असिलकखणं) तलवार के लक्षणों की, (४२ मणिलकखणं) मणिलक्षण जानने की-रत्नकी
परीक्षा करने की, (४३ कागणीलकखणं) चक्रवर्ती के काकणी रत्न को जानने की, (४४
वत्थुविज्जं) वास्तु (घर) शास्त्र की, समवायाङ्ग में उक्त 'वत्थुमाणं' वास्तुमान और
'वत्थुनिवेशं' वास्तुनिवेश इन दोनों का यहीं समावेश होता है, (४५ खंधारमाणं) शत्रु को

सिक्खं' हस्तिशिक्षा कृणानो समावेश थये छे. ३५ (गोणलकखणं) गायनां
लक्षणो जाण्वानी, ३६ (कुक्कुडलकखणं) कुक्कुट-कुक्कुडानां लक्षणो जाण्वानी,
समवायाङ्गमां उक्ता 'मिढयलकखणं' (घेढानुं लक्षणो समावेश अहीं थाय छे.
३७ (चकलकखणं) चक्ररत्नना शुभदोष जाण्वानी, ३८ (छत्तलकखणं) छत्रनां
शुभ अशुभ जाण्वानी, ३९ (चम्मलकखणं) ढालनां जोटां तथा भरां लक्षणो
जाण्वानी, ४० (दंडलकखणं) दंडनां सारा-नरसा लक्षणो जाण्वानी, ४१
(असिलकखणं) तलवारनां लक्षणो जाण्वानी, ४२ (मणिलकखणं) मणिनां लक्षणो जाण्वानी,
४३ (कागणीलकखणं) चक्रवर्तीनां काकणी रत्नने जाण्वानी, ४४ (वत्थुविज्जं)

४७, पडिचारं ४८, वूहं ४९, पडिवूहं ५०, चक्रवूहं ५१, गरुलवूहं

स्कन्धावारमानं—शत्रुं विजेतुं कदा कियत्परिमितं सैन्यं निवेशनीयमिति प्रमाणविज्ञानम्।
 'खंधारमाणं' इत्यत्र समवायाङ्गोक्तस्य 'खंधावारणिवेसं' इत्यस्य समावेशः
 'नगरमाणं' नगरमानम्—अस्मिन् प्रदेशे कीदृशमायामदैर्घ्योपलक्षितं नगरं निर्मा-
 पणीयं, येन विजयशाली भवेयम्, कस्य वर्णस्य कस्मिन् स्थाने निवेशः श्रेष्ठ इति विज्ञा-
 नम्, 'नगरमाणं' इत्यत्र समवायाङ्गोक्तस्य 'नगरणिवेसं' इत्यस्य समावेशः ४६, 'चारं'
 चारं=ज्योतिश्चारविज्ञानम्। 'चारं' इत्यत्र समवायाङ्गोक्तानां 'चंदलखणं' मूरचरियं,
 राहुचरियं, गहचरियं' इत्येतेषां चतुर्णां समावेशः ४७, 'पडिचारं' प्रतिचारं=प्रतिव-
 र्त्तितचारम्—इष्टानिष्टफलजनकशान्तिकर्मादिक्रियाविशेषविज्ञानम्, 'पडिचारं' इत्यत्र
 'सोभागकरं, दोभागकरं, विज्जागयं, मंतगयं, रहस्सगयं, सभासंचारं' इत्येतेषां सम-
 वायाङ्गोक्तानां षण्णां समावेशः ४८, 'वूहं' व्यूहं—शकटद्याकृतिसैन्यरचनम् ४९, 'पडि-

जीतने के लिये कितनी सेना होनी चाहिये इस प्रकार सेना के परिमाण को जानने की,
 यहाँ पर समवायाङ्ग में उक्त 'खंधावारणिवेसं' स्कन्धावारनिवेश का समावेश होता है।
 (४६ नगरमाणं) इस प्रदेश में कितना लंबा कितना चौड़ा नगर बसाना चाहिये
 जिससे मैं विजयशाली हो सकूँ तथा किस वर्ण को किस स्थान में बसाना श्रेष्ठ
 होगा इन सब बातों के विज्ञान की, समवायाङ्ग में उक्त 'नगरनिवेसं'
 नगरनिवेश का अन्तर्भाव यहाँ पर हो जाता है। (४७ चारं) ज्योतिश्चक्र की,
 समवायाङ्ग में कथित (चंदलखणं) चंद्रमा के लक्षण, (मूरचरियं राहु-
 चरियं गहचरियं) सूर्य की चाल, राहु की चाल एवं ग्रहों की चाल, इन सबों का समा-
 वेश 'चार' में समझना चाहिए। (४९ पडिचारं) इष्टानिष्टफलजनक शान्तिकर्म आदि क्रिया-
 विशेषों के विज्ञान की, यहाँ समवायांग कथित "सोभागकरं दोभागकरं विज्जागयं मंत-

वास्तु (घर) शास्त्रनी, समवायांगमां उक्त "वत्थुमाणं वत्थुनिवेसं" वास्तुमान
 तेमञ्ज वास्तुनिवेशनो समावेश अहीं थाय छे. ४५ (खंधारमाणं) शत्रुने
 छतवा भाटे डेटली सेना डोवी जेधं अये, अये रीते सेनाना परिमाणुने (गणुतरी)
 ज्ञाणुवानी, समवायांगमां उक्त 'खंधावारनिवेसं' स्कंधावारनिवेशनो अहीं
 पर समावेश थाय छे; ४६ (नगरमाणं) आ प्रदेशमां डेवडुं दांभुं अने डेटडुं
 पडोणुं नगर वसावपुं जेधंअये डे जेथी डुं विजयशाली थधं शकुं तथा
 कया वर्णुं (जत) ने कया स्थानमां वसावपुं श्रेष्ठ थशे अये जधी वातोना
 विज्ञाननी, समवायांगमां उक्त 'नगरनिवेसं' नगरनिवेशकणानो समावेश
 अहीं थयो छे. ४७ (चारं) ज्योतिश्चक्रनी, समवायांगमां डडेस

५२, सगडवूहं ५३, जुद्धं ५४, निजुद्धं ५५, जुद्धाडजुद्धं ५६, मुट्टि-

वूहं' प्रतिव्यूहम्=व्यूहप्रतिपक्षिभूतं व्यूहं—सैन्यरचनाविशेषम् ५०, 'चक्रवूहं' चक्रव्यूहम्=सैन्यस्य चक्राकाररचनाविशेषम् ५१, 'गरुलवूहं' गरुडव्यूहं=गरुडाकृतिसेनानिवेशपरि-
ज्ञानम् ५२, 'सगडवूहं' शकटव्यूहं=शकटाकृतिसैन्यरचनम् ५३, 'जुद्धं' युद्धं=संग्रा-
मम्, 'जुद्धं' इत्यत्र ज्ञाता—समवायाङ्गोक्तस्य 'अट्टिजुद्धं' इत्यस्य, तथा—समवायाङ्गोक्तस्य
'दंडजुद्धं' इत्यस्य, तथा जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिकथितस्य 'दिट्टिजुद्धं' इत्यस्य, तथा—राजप्रश्नीय-
सूत्रोक्तस्य 'असिजुद्धं' इत्यस्य च समावेशः ५४, 'निजुद्धं' नियुद्धं=मल्लयुद्धम् ५५,
'जुद्धाडजुद्धं' युद्धातियुद्धम्=खड्गादिप्रक्षेपपूर्वकं महायुद्धम् ५६, 'मुट्टिजुद्धं' मुष्टियुद्धम्,
योधयोः परस्परं मुष्ट्या हननम् ५७, 'बाहुजुद्धं' बाहुयुद्धम् ५८, 'लयाजुद्धं' लतायुद्धं-

गयं रहस्सगयं सभासंचारं" इस पाठ का समावेश हुआ है। (४९ वूहं) शकट आदि
के आकार में सैन्य स्थापित करने की, (५० पडिवूहं) व्यूह के प्रतिपक्षी व्यूह की रचना
करने की, (५१ चक्रवूहं) चक्रव्यूह की—सैन्य को चक्राकर रचने की, (५२ गरुलवूहं)
गरुडव्यूह की—गरुड की आकृति के समान सैन्य को रचने की, (५३ सगडवूहं) शकट
की आकृति के समान सैन्य को रचने की, (५४ जुद्धं) संग्राम करने की, यहाँ पर ज्ञाता,
समवायाङ्ग में कथित (अट्टिजुद्धं) अस्थियुद्ध का, (दंडजुद्धं) दंडयुद्ध का, तथा जंबूद्वीप-
प्रज्ञप्ति में प्रतिपादित (दिट्टिजुद्धं) दृष्टियुद्ध का और राजप्रश्नीयसूत्र में बताया गया
(असिजुद्धं) तलवार से युद्ध करने का समावेश हुआ है, (५५ निजुद्धं) मल्लयुद्ध की, (५६
जुद्धाडजुद्धं) खड्गादिप्रक्षेपपूर्वक महायुद्ध करने की, (५७ मुट्टिजुद्धं) मुष्टियुद्ध करने की,
(५८ बाहुजुद्धं) बाहु से युद्ध करने की, (५९ लयाजुद्धं) लतायुद्ध की, जिस प्रकार लता

'चंदलक्खणं' चंद्रमाना लक्षणा 'सूरचरियं राहुचरियं गहचरियं' सूर्यनी चाल,
राहुनी चाल तेमज्ज थोनी चाल ये अधानो समावेश 'चार' भां सम-
ज्जे जेधये. ४८ (पडिचारं) धृष्ट-अनिष्ट-इणज्जनक शांतिकर्म आदि क्रिया-
विशेषना विज्ञाननी, अहीं समवाय अंगभां उडेल "सोभागकरं, दोभागकरं,
विज्जागयं, मंतगयं, रहस्सगयं, सभासंचारं" आ पाठनो समावेश थये छे,
४९ (वूहं) शकट [गाडु] आदिना आकारभां सैन्य स्थापित करवानी,
५० (पडिवूहं) व्यूहना प्रतिपक्षी व्यूहनी रचना करवानी, ५१ (चक्रवूहं) चक्र-
व्यूहनी—सैन्यने चक्राकार रचवानी, ५२ (गरुलवूहं) गरुडव्यूहनी—गरुडनी
आकृतिना जेवी सैन्यरचना करवानी, ५३ (सगडवूहं) शकटनी आकृति ना
समान सैन्य रचवानी, ५४ (जुद्धं) संग्राम करवानी, अहीं 'ज्ञाता अने समवा-
यांग' भां उडेल (अट्टिजुद्धं) अस्थियुद्धनो, (दंडजुद्धं) दंडयुद्धनो तथा जंबूद्वीप

જુહ્નં ૫૭, બાહુજુહ્નં ૫૮, લયાજુહ્નં ૫૯, ઈસત્થં ૬૦, છરુપ્પવાયં ૬૧,
ધણુવ્વેયં ૬૨, હિરણ્ણપાગં ૬૩, સુવણ્ણપાગં ૬૪, સુત્તસ્વેડં ૬૫,

યથા લતા વૃક્ષમારોહન્તી આમૂલમાશિરો વૃક્ષમાવેષ્ટયતિ, તથા યત્ર યોધઃ પ્રતિયોધશરીરં ગાઢં
નિર્પીડ્ય ભૂમૌ પાતયતિ તલ્લતાયુદ્ધમ્ ૫૯, 'ઈસત્થં' ઇષુશાસ્ત્રં=નાગવાણાદિદિવ્યાસ્ત્રસૂચકં
શાસ્ત્રમ્, 'ઈસત્થં' इति प्राकृतशैल्या इषुशास्त्रम् ૬૦, 'છરુપ્પવાયં' ક્ષુરપ્રપાતમ્, ક્ષુરઃ='ક્ષુરા'
इति प्रसिद्धः छेदनशस्त्रविशेषः, तस्य प्रपातः=पातनम् ૬૧, 'ધણુવ્વેયં' ધનુર્વેદં=ધનુશાસ્ત્રમ્
૬૨, 'હિરણ્ણપાગં' હિરણ્યપાકં=રજતસિદ્ધિં ૬૩, 'સુવણ્ણપાગં' સુવર્ણપાકં=કનકસિદ્ધિમ્,
'સુવણ્ણપાગં' इत्यत्र समवायाङ्गराजप्रश्नीयसूत्रोक्तयोः 'मणिपागं धातुपागं' इत्यनयोः समावेशः
૬૪, 'સુત્તસ્વેડં' સૂત્રસ્વેલં=સૂત્રક્રીડામ્ ૬૫, 'વટ્ટસ્વેડં' વૃત્તસ્વેલમ્ ૬૬, एतत्कलाद्वयं लोक-
तो बोध्यम्। 'वट्टस्वैडं' इत्यत्र 'चम्मस्वैडं' चर्मस्वेलम्—इत्यस्य समवायाङ्गोक्तस्य समावेशः।

વૃક્ષ પર ચઢ કર નીચે સે ઊપર તક વૃક્ષ કો લપેટ લેતી હૈ ઉસી પ્રકાર યોધા જિસ યુદ્ધ
મેં પ્રતિયોધા કે શરીર કો અત્યન્ત પીડિત કર જમીન પર પટક દેતે હૈં ઓર ઉસકે ઊપર
ચઢ બૈઠતે હૈં વહ લતાયુદ્ધ હૈ ઉસકી, (૬૦ ઈસત્થં) ઇષુશાસ્ત્ર કો, 'ઈસત્થં' યહાં પર
પ્રાકૃતશૈલી સે ઇષુશાસ્ત્ર સમજનાં ચાહિયે । નાગવાણ આદિ દિવ્ય અસ્ત્ર આદિ કા સૂચક જો
શાસ્ત્ર હૈ ઉસકા નામ ઇષુશાસ્ત્ર હૈ ઉસ કી, (૬૧ છુરપ્પવાયં) છુરા સે યુદ્ધ કરને કી,
(૬૨ ધણુવ્વેયં) ધનુર્વેદ કી, (૬૩ હિરણ્ણપાગં) રજતસિદ્ધિ કી, (૬૪ સુવણ્ણપાગં)
સુવર્ણસિદ્ધિ કી, રાજપ્રશ્નીય એવં સમવાયાંગ મેં કથિત મણિપાક ઓર ધાતુપાક કા સમાવેશ
યહીં કરના ચાહિયે । (૬૫ સુત્તસ્વેડં) સૂત્ર-ડોરા સે खेलने કી, (૬૬ વટ્ટસ્વેડં) વર્ત-રસ્સી
પર खेलने કી, યહાં પર સમવાયાજ્ઞોક્ત-(ચમ્મસ્વેડં) ચમડા સે खेलना-इसका भी समावेश

प्रज्ञप्ति भां प्रदिपादन करैल (दिट्टिजुद्धं) दृष्टियुद्धनो अने 'राजप्रश्नीय' सूत्रभां
अतावेल (असिजुद्धं) तलवारथी युद्ध करवानो समावेश थयेवो छे. ५५ (निजुद्धं)
भट्टयुद्धनी, ५६ (जुद्धाइजुद्धं) अङ्ग आदि प्रक्षेपपूर्वक [धा भारीने] भडा युद्ध
करवानी, ५७ (मुट्टिजुद्धं) मुष्टियुद्ध करवानी, ५८ (बाहुजुद्धं) आहुथी युद्ध करवानी,
५९ (लयाजुद्धं) लतायुद्धनी, जे रीते लता [वेल] वृक्ष उपर चडीने नीचेथी उपर सुधी
वृक्षने लपेटी वे छे तेवी जे रीते योधा जे युद्धभां सामेना योधाना शरीरने गाढ-
इपथी पीडा करी जमीन उपर पाडी दे छे अने तेना उपर चडी जेसे छे ते लतायुद्ध
छे, तेनी; ६० (ईसत्थं) इषुशास्त्रनी, 'ईसत्थं' अडीं प्राकृत शैलीथी इषुशास्त्र समञ्ज
वेपुं जेथये. नागआणु आदि दिव्य अस्त्र आदिनुं सूचक जे शास्त्र छे तेनुं नाम
इषुशास्त्र छे. तेनी, ६१ (छुरप्पवायं) छुराथी युद्ध करवानो, ६२ (धणुव्वेयं) धनुर्वेदनी,
६३ (हिरण्णपागं) रजतसिद्धिनी, ६४ (सुवण्णपागं) सुवर्णसिद्धिनी, 'राजप्रश्नीय'

વટ્ટસ્વેડં ૬૬, નાલિયાસ્વેડં ૬૭, પત્તચ્છેજ્જં ૬૮, કડચ્છેજ્જં ૬૯, સજ્જી-
વં ૭૦, નિજ્જીવં ૭૧, સઝ્ઞરુય ૭૨-મિતિ વાવત્તરિકલાઓ સેહા-
વિત્તા સિક્ખાવેત્તા અમ્માપિર્ઠ્ઠિણં ઉવણેહિતિ ॥ સૂ. ૪૬ ॥

‘નાલિયાસ્વેડં’ નાલિકાસ્વેલમ્=દ્યૂતવિશેષમ્—માભૂદિષ્ટદાયાદ્ વિપરીતપાશકનિપતન-
મિતિ નાલિકાયાં યત્ર પાશકઃ પાત્યતે । યદ્યપિ દ્યૂતે એવાસ્ય સમાવેશો ભવિતુમર્હતિ તથાપિ
નાલિકાસ્વેલપ્રાધાન્યજ્ઞાપનાર્થં ભેદેન ગ્રહણમ્ ૬૭, ‘પત્તચ્છેજ્જં’ પત્રચ્છેદનમ્=અષ્ટોત્તરશતપત્રાણાં
મધ્યે વિવક્ષિતસંખ્યાકપત્રચ્છેદને હસ્તલાઘવમ્ ૬૮, ‘કડચ્છેજ્જં’ કડચ્છેદનમ્—કટ (ચટાઈ)-
વત્ ક્રમાચ્છેદ્યં વસ્તુ યત્ર વિજ્ઞાને તત્તથા તત્ ૬૯, ‘સજ્જીવં’ સજ્જીવં=સજીવકરણં—મૃતધાત્વા-
દીનાં સહજસ્વરૂપાપાદનમ્ ૭૦, ‘નિજ્જીવં’ નિર્જીવં=નિર્જીવકરણમ્—હેમાદિધાતુમારણં પારદ-
મારણં વા ૭૧, ‘સઝ્ઞરુયં’ શકુનરુતમ્, અત્ર શકુનપદં રુતપદં ચોપલક્ષણમ્, તેન સર્વ-
શકુનસંગ્રહઃ, ગતિચેષ્ટાદિગવલોકનાદિપરિગ્રહશ્ચ ૭૨, ‘ઇતિ વાવત્તરિકલાઓ’ ઇતિ દ્વાસત્ત-
તિકલાઃ=દ્વાસત્તતિપુરુષકલાઃ ‘સેહાવિત્તા સિક્ખાવેત્તા’ સેધયિત્વા શિક્ષયિત્વા ચ ‘અમ્મા-
પિર્ઠ્ઠિણં ઉવણેહિતિ’ માતાપિત્રોરુપનેષ્યતિ=સમર્પયિષ્યતિ ॥ સૂ. ૪૬ ॥

હુઆ હૈ । (૬૭ નાલિયાસ્વેડં) દ્યૂતવિશેષ સ્વેલને કી—નાલિકા મેં પાશે ડાલકર જુઆ
સ્વેલને કી, (૬૮ પત્તચ્છેજ્જં) પત્ર છેદન કરને કી, ૧૦૮ પત્રોં મેં સે વિવક્ષિત પત્ર કો
છેદન કરને મેં હાથ કી કુશલતા કી, (૬૯ કડચ્છેજ્જં) કટ કી અર્થાત્ ચટાઈ કી તરહ
ક્રમ ૨ સે છેદન કરને કી, (૭૦ સજ્જીવં) મારી હુઈ ધાતુઓં કો પુનઃ પ્રકૃતિસ્થ કરને કી,
(૭૧ નિજ્જીવં) નિર્જીવ કરને કી—હેમાદિક ધાતુઓં કો મારને કી, અથવા પારે કો મારને
કી, (૭૨ સઝ્ઞરુયં) પક્ષિયોં કે શબ્દ પહિચાનને કી ઉનકી ગતિ, ચેષ્ટા એવં અવલોકન
આદિ જાનને કી કલા, (ઇતિ વાવત્તરિકલાઓ સેહાવિત્તા સિક્ખાવેત્તા અમ્માપિર્ઠ્ઠિણં

તેમજ ‘સમવાયાંગ’માં કહેલ મણિપાક અને ધાતુપાકનો સમાવેશ અહીં કરવો
જોઈએ. ૬૫ (સુત્તસ્વેડં) સૂત્ર—દ્વારાથી રમવાની, ૬૬ (વટ્ટસ્વેડં) વર્ત—દ્વારડાં પર રમ-
વાની, અહીં સમવાયાંગમાં કહેલ (ચમ્મસ્વેડં) ‘ચામડાંથી ખેલવું’ એનો પણ સમા-
વેશ કર્યો છે. ૬૭ (નાલિયાસ્વેડં) દ્યૂતવિશેષ રમવાની—નાલિકામાં પાસા નાખીને
બુગાર રમવાની, ૬૮ (પત્તચ્છેજ્જં) પત્ર કાપવાની, ૧૦૮ પત્રોમાંથી વિવક્ષિત પત્રો
કાપવામાં હાથની કુશળતા ની, ૬૯ (કડચ્છેજ્જં) કટની—અર્થાત્ ચટાઈની પેઠે
ક્રમક્રમથી છેદન કરવાની, ૭૦ (સજ્જીવં) મારેલી ધાતુઓને ફરીને પ્રકૃતિસ્થ કરવાની,
૭૧ (નિજ્જીવં) નિર્જીવ કરવાની—હેમ આદિક ધાતુઓને મારવાની, અથવા પારાને
મારવાની ૭૨ (સઝ્ઞરુયં) પક્ષિઓના શબ્દ સમજવાની, તેમની ગતિ, ચેષ્ટા તેમજ
અવલોકન આદિ જાણવાની કળા. (ઇતિ વાવત્તરિકલાઓ સેહાવિત્તાં સિક્ખાવિત્તા

मूलम्—तए णं तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स अम्मा-
पियरो तं कलायरियं विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं
वत्थ-गंध-मल्ला-लंकारेण य सक्कारेहिंति सम्माणेहिंति, सक्का-

टीका—‘तए णं’ इत्यादि। ‘तए णं तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स अम्मापियरो तं कलायरियं’ ततः खलु तस्य दढप्रतिज्ञस्य दारकस्य अम्बापितरौ तं कलाचार्यं ‘विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं’ विपुलेनाऽशनपानखाद्यस्वाद्येन ‘वत्थ-गंध-मल्ला-लंकारेण य सक्कारेहिंति सम्माणेहिंति’ वस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारेण च सत्कारयिष्यतः सम्मानयिष्यतः—सुगमानि पदानि वाक्यानि च। ‘सक्कारित्ता सम्माणित्ता’ सत्कृत्य संमान्य ‘विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइस्संति’ विपुलं जीवि-

उवणेहिंति) ये ७२ कलायें पुरुषकी हैं, इन कलाओं की शिक्षा कलाचार्य उसे देगा, पश्चात् वह उसे उसके मातापिता के पास लाकर सौंप देगा ॥ सू. ४६ ॥

‘तए णं तस्स’ इत्यादि।

(तए णं) इसके बाद (तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स) उस दढ प्रतिज्ञकुमार के (अम्मापियरो) मातापिता (तं कलायरियं) उस कलाचार्य का (विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं वत्थ-गंध-मल्ला-लंकारेण य सक्कारेहिंति) विपुल, अशन, पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, गंध, एवं माला तथा अलंकारों के प्रदान से खूब सत्कार करेंगे। (सम्माणेहिंति) खूब सन्मान करेंगे। (सक्कारित्ता सम्माणित्ता) सत्कार एवं सन्मान करके पश्चात् वे उसे (विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइस्संति)

अम्मापिइणं उवणेहिंति) आ ७२ कलाओ पुरुषनी छे. ओ कलाओनी कलाचार्य तेने शिक्षा आपशे. पछी ते तेने तेना मातापितानी पास लावीने सोपी देशे. (सू० ४६)

‘तए णं तस्स’ इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स) ते दढप्रतिज्ञ कुमारना (अम्मापियरो) मातापिता (तं कलायरियं) ते कलाचार्यने (विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं वत्थ-गंध-मल्ला-लंकारेण य सक्कारेहिंति) विपुल अशन, पान, आदिम, स्वादिम, वस्त्र, गंध तेमज्ज माला तथा अलंकारे आपीने भूअ सत्कार करशे, (सम्माणेहिंति) भूअ सन्मान करशे. (सक्कारित्ता सम्माणित्ता) सत्कार तेमज्ज सन्मान करीने पछी तेओ तेने (विउलं जीवियारिहं पीइदाणं

रित्ता सम्माणित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइस्संति, दल-
इत्ता पडिविसज्जेहिंति ॥ सू० ४७ ॥

मूलम्—तए णं से दढपइण्णे दारए बावत्तरिकला-
पंडिए नवंगसुत्तपडिबोहिए अट्टारसदेसभासाविसारए गीयरई

काऽऽहं प्रीतिदानं दास्यतः, 'दलइत्ता' दत्त्वा 'पडिविसज्जेहिंति' प्रतिविस-
र्जयिष्यतः ॥ सू० ४७ ॥

टीका—'तए णं' इत्यादि । 'तए णं से दढपइण्णे दारए' ततः खलु
स दढप्रतिज्ञो दारकः 'बावत्तरिकलापंडिए' द्वासप्ततिकलापण्डितः 'नवंगसुत्तपडि-
बोहिए' नवाङ्गसुप्तप्रतिबोधितः—नवाङ्गानि=द्वे श्रोत्रे, द्वे नेत्रे, द्वे घ्राणे, एका च जिह्वा, त्वगेका,
मनश्चैकमिति, तानि सुप्तानीव सुप्तानि—बाल्यादव्यक्तचेतनानि तानि प्रतिबोधितानि=यौवनेन
व्यक्तचेतनावन्ति कृतानि यस्य स तथा । 'गीयरई' गीतरतिः=गानप्रियः, 'गंधव्व-णट्ट-

विपुल रूप में जीविका के योग्य प्रीतिदान देंगे, (दलइत्ता पडिविसज्जेहिंति) और
देकर उसे विसर्जित कर देंगे ॥ सू. ४७ ॥

'तए णं से दढपइण्णे दारए' इत्यादि ।

(तए णं) इस के बाद (से) वह (दढपइण्णे) दढप्रतिज्ञ (दारए) कुमार
(बावत्तरिकलापंडिए) बहत्तर कलाओं में पंडित (नवंगसुत्तपडिबोहिए) एवं सुप्त
नवांगों—२ कान, २ नेत्र, २ नासिका के छिद्र, १ जिह्वा, १ स्पर्शन इन्द्रिय और मन के
प्रतिबोध—जागृति से युक्त—यौवनावस्था संपन्न होकर, (अट्टारसदेसभासाविसारए)
१८ देशों की भाषा का ज्ञाता होगा, (गीयरई गंधव्वणट्टकुसले) यह कुमार गीत में

दलइस्संति) विपुल रूपमें जीविका के योग्य प्रीतिदान आप्रशे. (दलइत्ता पडिवि-
सज्जेहिंति) अने आपीने तेमनुं विसर्जन करी देशे. (सू. ४७)

'तए णं से दढपइण्णे दारए' इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से) ते (दढपइण्णे) दढप्रतिज्ञ (दारए) कुमार
(बावत्तरिकलापंडिए) ओउंतेर कलाओमां पंडित (नवंगसुत्तपडिबोहिए) तेमज्ज
सुप्त नव अंगो—२ कान, २ नेत्र, २ नासिकानां छिद्र, १ ओल १ स्पर्-
शन इन्द्रिय अने मनना प्रतिबोध—जागृतिथी युक्त—यौवनावस्था संपन्न
थधने (अट्टारसदेसभासाविसारए) १८ देशोनी भाषानो ज्ञाता थशे. (गीयरई

गंधव्वणट्टकुसले हयजोही गयजोही रहजोही बाहुजोही बाहु-
प्पमदी वियालचारी साहसिए अलं भोगसमत्थे यावि
भविस्सइ ॥ सू० ४८ ॥

मूलम्—तए णं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो बाव-

कुसले 'गान्धर्व-नाट्यकुशलः-गान्धर्वे=गीतविद्यायां नाट्ये=नाट्यशास्त्रे च कुशलः=निपुणः,
'अट्टारस-देसभाषा-विसारए' अष्टादश-देश-भाषा-विशारदः, 'हयजोही' हय-
जोधी-हयेन=अश्वेन युध्यते तच्छीलो हययोधी, एवं 'गयजोही रहजोही बाहुजोही'
गजयोधी रथयोधी बाहुयोधी-ज्ञातव्यः 'बाहुप्पमदी' बाहुप्रमदी-बाहुभ्यां प्रमृद्नाति
तच्छीलो बाहुप्रमदी, 'वियालचारी' विकालचारी-निर्भयत्वाद्विकाले रात्रावपि चरति
तच्छीलो विकालचारी, अत एव 'साहसिए' साहसिकः=अतिशूरः, 'अलं भोगसमत्थे'
अलम्भोगसमर्थः-अलम्=अत्यर्थं भोगानुभवसमर्थः 'यावि भविस्सइ' चापि
भविष्यति ॥ सू० ४८ ॥

टीका—'तए णं' इत्यादि । 'तए णं दढपइण्णं दारयं' ततः खलु दढ-

अनुराग वाला तथा गान्धर्वविद्या में और नृत्यकला में कुशल होगा । (हयजोही गय-
जोही रहजोही बाहुजोही) यह अश्वयोधी, गजयोधी, रथयोधी और बाहुयोधी होगा ।
(बाहुप्पमदी वियालचारी साहसिए) यह बाहुप्रमदी होगा और अति शूर होगा; इस
लिये इसे विकाल रात्रि में भी आने-जाने में कोई भय नहीं होगा । (अलं भोगसमत्थे
यावि भविस्सइ) तथा यह भोगसमर्थ भी होगा ॥ सू. ४८ ॥

'तए णं दढपइण्णं दारगं' इत्यादि ।

(तए णं) बाद में (दढपइण्णं दारगं) इस अपने दढप्रतिज्ञ बालक को

गंधव्व-णट्ट-कुसले) એ કુમાર ગીતમાં, ગાંધર્વવિદ્યામાં અને નૃત્યકળામાં
કુશળ થશે. (હયજોહી ગયજોહી રહજોહી બાહુજોહી) એ અશ્વયોધી, ગજયોધી,
રથયોધી, અને બાહુયોધી થશે. (બાહુપ્પમદી વિયાલચારદી સાહસિય)
એ બાહુપ્રમદી થશે અને અતિ શૂરવીર થશે. આ માટે તેને વિકાળ રાત્રિમાં
પણ આવવા-જવામાં કેઈ જાતનો ભય થશે નહિ. (અલં ભોગસમત્થે યાવિ ભવિ-
સ્સइ) તથા આ ભોગસમર્થ પણ થશે. (સૂ. ૪૮)

'તए णं दढपइण्णं दारगं' इत्यादि.

(तए णं) त्पार पछी (दढपइण्णं दारगं) आ पोतान! दढप्रतिज्ञ आणकने

त्तरिकलापंडियं जाव अलं भोगसमत्थं वियाणित्ता विउलेहिं
अण्णभोगेहिं पाणभोगेहिं वत्थभोगेहिं सयणभोगेहिं उवणि-
मंतेहिंति ॥ सू० ४९ ॥

मूलम्—तए णं से दढपइण्णे दारए तेहिं विउलेहिं अण्ण-

प्रतिज्ञं दारकम् 'अम्मापियरो' मातापितरौ 'बावत्तरिकलापंडियं' द्वास्ततिकलापण्डितं
'जाव' यावत्—अत्र—यावच्छब्दाद्—अष्टादशदेशभाषाविशारदं गीतरतिं गान्धर्वनाट्यकुशलं
हययोधिनम्—इत्यादीनि विशेषणानि द्वितीयैकवचनान्तानि ज्ञेयानि । 'अलं भोगसमत्थं'
अलं भोगसमर्थम्—अलम्=अत्यर्थं भोगानुभवसमर्थं 'वियाणित्ता' विज्ञाय 'विउलेहिं
अण्णभोगेहिं' विपुलैरन्नभोगैः 'पाणभोगेहिं' पानभोगैः 'लेणभोगेहिं' लयनभोगैः—
चित्रशालाद्यावासनवनवाभोगैः 'वत्थभोगेहिं' वस्त्रभोगैः, 'सयणभोगेहिं' शयनभोगैः
'उवणिमंतेहिंति' उपनिमन्त्रयिष्यतः=भोगान् भुङ्क्त्व—इति कथयिष्यतः ॥ सू० ४९ ॥

टीका—'तए णं' इत्यादि । 'तए णं से दढपइण्णे दारए' ततः खलु

(अम्मापियरो) मातापिता (बावत्तरिकलापंडियं जाव अलंभोगसमत्थं) ७२
कलाओं में पारंगत तथा नवयौवनशाली एवं भोग भोगने में समर्थ जानकर उसे (विउ-
लेहिं) विपुल (अण्णभोगेहिं) अन्न के भोगों से, (पाणभोगेहिं) पान करने योग्य
द्रव्यों के भोगों से, (लेणभोगेहिं) विविध चित्रों से सुशोभित प्रासाद के भोगों से,
(वत्थभोगेहिं) सुन्दर २ वस्त्रों को इच्छानुसार पहनने रूप भोगों से एवं (सयण-
भोगेहिं) शय्या आदि के भोगों से (उवणिमंतेहिंति) आमंत्रित करेंगे, अर्थात् 'भोगों
को भोगो' ऐसा उससे कहेंगे ॥ सू. ४९ ॥

(अम्मापियरो) मातापिता (बावत्तरिकलापंडियं जाव अलं भोगसमत्थं) ७२ कला-
ओमां पारंगत अने नवयौवनशाली तेमज भोग भोगववामां समर्थ बाणीने
तेने (विउलेहिं) विपुल (अण्णभोगेहिं) अन्नना भोगोथी (पाणभोगेहिं) पान उर-
वाने योग्य द्रव्यना भोगोथी (लेणभोगेहिं) विविध चित्रोथी सुशोभित प्रासाद
(मडेल)ना भोगोथी (वत्थभोगेहिं) सुंदर सुंदर वस्त्रोने इच्छानुसार पहरेवा-
इय भोगोथी तेमज (सयणभोगेहिं) शय्या आदिना भोगोथी (उवणिमंतेहिंति)
आमंत्रित करशे, अर्थात् 'भोगोने भोगवो' अम तेने कहेशे. (सू. ४९)

भोगेहिं जाव सयणभोगेहिं णो सज्जिहिति, णो रज्जिहिति, णो गिज्झि-
हिति, णो मुज्झिहिति, णो अज्झोववज्जिहिति ॥ सू० ५० ॥

मूलम्—से जहाणामए उप्पले इ वा पउमे इ वा कुसु-

स दृढप्रतिज्ञो दारकः 'तेहिं विउलेहिं अण्णभोगेहिं जाव सयणभोगेहिं' तैर्विपुलैरन्नभोगै-
र्यावच्छेदनभोगैः—अत्र यावच्छब्दात्पानलयनवत्त्वभोगैरिति ग्राह्यम्, 'णो सज्जिहिति' नो
सङ्ख्यति—न सङ्गं=सम्बन्धं करिष्यति, 'णो रज्जिहिति' नो रङ्ख्यति—न रागं=प्रेम
भोगसम्बन्धहेतुं करिष्यति, 'णो गिज्झिहिति' नो गद्विष्यते=नो गृद्धिभावं करिष्यति,
'णो मुज्झिहिति' नो मोहिष्यति=मोहं न करिष्यति, 'णो अज्झोववज्जिहिति' नो
अध्युपपत्स्यते=न तदेकाग्रमना भविष्यति ॥ सू० ५० ॥

टीका—'से जहाणामए' इत्यादि । 'से जहाणामए' अथ यथा नाम

'तए णं से दढपइण्णे' इत्यादि ।

(तए णं) माता—पिता के इन बचनों को सुनने के बाद (से दढपइण्णे दारए)
वह दृढप्रतिज्ञ कुमार (तेहिं विउलेहिं अण्णभोगेहिं जाव सयणभोगेहिं णो सज्जि-
हिति) उन अन्न आदि विपुल भोगों में बिलकुल ही आसक्तचित्त नहीं होगा । (णो
रज्जिहिति) अनुरक्त नहीं होगा । (णो गिज्झिहिति) उनमें गृद्ध नहीं होगा, (णो
मुज्झिहिति) मूर्च्छित नहीं होगा, और (णोअज्झोववज्जिहिति) न उनमें सर्वथा एकाग्र-
मन ही होगा ॥ सू. ५० ॥

'से जहाणामए' इत्यादि ।

इस सूत्र में "इ वा" ये शब्द वाक्यालंकार में प्रयुक्त हुए हैं । (से जहाणा-

'तए णं से दढपइण्णे' इत्यादि.

(तए णं) मातापितानां अेषां पथन सांभज्जा पछी, (से दढपइण्णे दारए)
ते दृढप्रतिज्ञ कुमार (तेहिं विउलेहिं अण्णभोगेहिं जाव सयणभोगेहिं णो सज्जिहिति)
ते अन्न आदि विपुल भोगों में बिलकुल ही मननी आसक्ति रागशे नडि,
(णो रज्जिहिति) अनुरक्त थशे नडि, (णो गिज्झिहिति) तेमां गृद्ध थशे नडि,
(णो मुज्झिहिति) मूर्च्छित थशे नडि अने तेमां (णोअज्झोववज्जिहिति)
सर्वथा अेकाग्रमन पथु थशे नडि. (सू. ५०)

'से जहाणामए' इत्यादि.

आ सूत्रमां "इ वा" अे शब्द वाक्यालंकारइये वपरये छे. (से जहा-

મે ઇ વા નલિણે ઇ વા સુભગે ઇ વા સુગંધે ઇ વા પોંડરીણ ઇ વા
મહાપોંડરીણ ઇ વા સયસપત્તે ઇ વા સહસ્સપત્તે ઇ વા સયસહસ્સપત્તે
ઇ વા પંકે જાણે જલે સંવુડ્ઢે ણોવલિપ્પઙ્ગ પંકરણં, ણોવલિપ્પઙ્ગ

‘ઉપ્પલે ઇ વા’ ઉત્પલં=રક્તકમલમ્, ‘ઇવા’ इति वाक्यालङ्कारे ‘પડમે ઇ વા’ પદ્મમ્—કમલમેવ,
‘કુસુમે ઇ વા’ કુસુમમ્, ‘નલિણે ઇ વા’ નલિનમ્, ‘સુભગે ઇ વા’ સુભગં—કમલવિશેષઃ
‘સુગંધે ઇ વા’ સુગન્ધમ્=સન્ધ્યાવિકાસિકમલવિશેષઃ; ‘પોંડરીણ ઇ વા’ પુન્ડરીકં=શ્વેતકમ-
લમ્, ‘મહાપોંડરીણ ઇ વા’ મહાપુન્ડરીકં=વિશાલં શ્વેતકમલમ્, ‘સયપત્તે ઇ વા’ શત-
પત્રમ્=કમલમ્, ‘સહસ્સપત્તે ઇ વા’ સહસ્રપત્રમ્, ‘સયસહસ્સપત્તે ઇ વા’ શતસહસ્રપત્રમ્,
एतानि सर्वाणि कमलजातीयान्येव । एतत्प्रत्येकम्—‘પંકે જાણે’ પદ્મે જાતમ્=કર્દમે સમુત્પન્નં
‘જલે સંવુડ્ઢે’ જલે સંવૃદ્ધમ્, ‘ણોવલિપ્પઙ્ગ પંકરણં’ નોપલિપ્યતે પદ્મરજસા—પદ્મઃ=કર્દમઃ
स एव रजो रेणुतुल्यत्वात्, तेन नोपलिप्यते=उपलिप्तं न भवतीत्यर्थः । ‘ણોવલિપ્પઙ્ગ જલ-

મણ) જૈસે (ઉપ્પલે ઇ વા) રક્ત કમલ, (પડમે ઇ વા) પદ્મકમલ (કુસુમે ઇ વા)
કુસુમ—પુષ્પ, (નલિણે ઇ વા) નલિન—કમલવિશેષ, (સુભગે ઇ વા) સુભગ કમલ,
(સુગંધે ઇ વા) સુગંધકમલ—સન્ધ્યાકાલવિકાસી સૌગન્ધિક કમલ, (પોંડરીણ ઇ વા)
પુન્ડરીક—શ્વેતકમલ, (મહાપોંડરીણ ઇ વા) મહાપુન્ડરીક—વિશાલ શ્વેતકમલ, (સયપત્તે
ઇ વા) શતપત્ર કમલ, (સહસ્સપત્તે ઇ વા) સહસ્રપત્ર કમલ, (સયસહસ્સપત્તે ઇ વા)
લક્ષપત્ર કમલ, યે સર્વ કમલ કી જાતિયાં હૈં । (પંકે જાણે) યે કીચડ ઉત્પન્ન હોતે હૈં,
(જલે સંવુડ્ઢે) તથા જલ મેં બઢતે હૈં, તો મી (ણોવલિપ્પઙ્ગ પંકરણં ણોવલિપ્પઙ્ગ
જલરણં) પંક કી રજ સે વે લિપ્ત નહીં હોતે હૈં ઓર ન જલ કી રજ સે—બિન્દુઓ સે લિપ્ત

णामए) જેમકે (ઉપ્પલે ઇ વા) રક્ત કમળ, (પડમે ઇ વા) પદ્મ કમળ, (કુસુમે ઇ વા)
કુસુમ—પુષ્પ, (નલિણે ઇ વા) નલિન—કમળવિશેષ, (સુભગે ઇ વા) સુભગ કમળ,
(સુગંધે ઇ વા) સુગંધ કમળ—સંધ્યાકાળે વિકાસ પામે તેવું સુગંધવાળું કમળ,
(પોંડરીણ ઇ વા) પુન્ડરીક—શ્વેત કમળ, (મહાપોંડરીણ ઇ વા) મહાપુન્ડરીક—વિશાળ-
શ્વેત કમળ (સયપત્તે ઇ વા) શતપત્ર કમળ, (સહસ્સપત્તે ઇ વા) સહસ્રપત્ર કમળ,
(સયસહસ્સપત્તે ઇ વા) લક્ષપત્ર કમળ, એ બધી કમળની જાતિઓ છે. (પંકે
જાણે) તે કીચડમાં ઉત્પન્ન થાય છે, (જલે સંવુડ્ઢે) તથા જલમાં વધે છે, તે
પથુ (ણોવલિપ્પઙ્ગ પંકરણં વ ણોવલિપ્પઙ્ગ જલરણં) કીચડની રજથી તેઓ લિપ્ત
થતાં નથી, તેમજ જલનાં ટીપાંથી એ લિપ્ત થતાં નથી, (એવામેવ સે દઢપ-

जलरणं, एवामेव ददपइण्णेवि दारए कामेहिं जाए भोगेहिं संवु-
ड्ढे णोवल्लिप्पिहिति कामरणं, णोवल्लिप्पिहिति भोगरणं, णोव-
लिप्पिहिति मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणेणं ॥ सू० ५१ ॥

मूलम्—से णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं

रणं' नोपलिप्यते जलरजसा 'एवामेव ददपइण्णेवि दारए' एवमेव ददप्रतिज्ञोऽपि दारकः,
'कामेहिं जाए भोगेहिं संवुड्ढे' कामैर्जातो भोगैः संवृद्धः 'णोवल्लिप्पिहिति' नोपलेप्स्यते,
'कामरणं' कामरजसा—कामः=शब्दो रूपं च, स एव रजः कामरजस्तेन, 'णोवल्लिप्पि-
हिति' नोपलेप्स्यते 'भोगरणं' भोगरजसा—भोगः=गन्धो रसः स्पर्शश्च; स एव रजो भोग-
रजस्तेन, 'णोवल्लिप्पिहिति मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परिजणेणं' नोपले-
प्स्यते मित्र-ज्ञाति-निजक-स्वजन-सम्बन्धि-परिजनेन—मित्राणि=सुहृदः, ज्ञातयः=सजातीयाः,
निजकाः=भ्रातृपुत्रादयः, स्वजनाः=मातुलादयः, सम्बन्धिनः=श्वशुरादयः, परिजनाः=भृत्या
दयः, एतैर्न लिप्तो भविष्यति ॥ सू. ५१ ॥

होते हैं; (एवामेव से ददपइण्णे वि दारए) इस तरह वह ददप्रतिज्ञ कुमार भी
(कामेहिं) कामों से—काम सेवन से (जाए) उत्पन्न होगा, (भोगेहिं संवुड्ढे) भोगों
से वृद्धिगत होगा, तो भी वह (कामरणं) काम रजसे (णोवल्लिप्पिहिति) उपलिप्त
नहीं होगा, (भोगरणं णोवल्लिप्पिहिति) भोगरज से उपलिप्त नहीं होगा । गंध, रस,
स्पर्श इन गुणों का नाम भोग है । शब्द तथा रूप का नाम काम हैं । भोगरज एवं काम-
रज इनमें रूपकालंकार है । (णोवल्लिप्पिहिति मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-
परिजणेणं) इसी तरह वह मित्र—सुहृद्, ज्ञाति—सजातीय, निजक—भतीजा आदि,
स्वजन—मामा आदि, संबंधी—श्वशुर आदि एवं परिजन—भृत्य आदि परिकरों के साथ भी
मोह को प्राप्त नहीं होगा ॥ सू. ५१ ॥

इण्णे वि दारए) तेवीज् रीते ते ददप्रतिज्ञ कुमार पणु (कामेहिं) कामेथी—काम
सेवनथी (जाए) उत्पन्न थशे, (भोगेहिं संवुड्ढे) भोगेथी वृद्धिगत थशे, तो पणु
ते (कामरणं) कामरजथी (णोवल्लिप्पिहिति) उपलिप्त थशे नडि. (भोगरणं
णोवल्लिप्पिहिति) भोगरजथी उपलिप्त थशे नडि. गंध, रस, स्पर्श ये गुणानुं
नाम भोग छे. शब्द तथा रूपानुं नाम काम छे. भोगरज तेमज कामरज
येमां इपक—अलंकार छे. (णोवल्लिप्पिहिति मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधि-परिज-
णेणं) आवी रीते ते मित्र—सुहृद्, ज्ञाति—सजातीय, निजक—भ्रातृपुत्र (भ्रात्रिजे)
आदि, स्वजन—मामा आदि, संबंधी—श्वशुर आदि तेमज परिजन—नोकर
आदि परिकरो—परिवारे साथे पणु मोहने प्राप्त करशे नडि. (सू. ५१)

बोहिं बुज्झिहिति, बुज्झित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइ-
हिति ॥ सू० ५२ ॥

मूलम्—से णं भविस्सइ अणगारे भगवंते ईरियास-
मिए जाव गुत्तबंभयारी ॥ सू० ५३ ॥

टीका—‘से णं’ इत्यादि । ‘से णं’ स दृढप्रतिज्ञः खलु ‘तहारूवाणं’ तथारू-
पाणां=सम्यग्ज्ञानादिसम्पन्नानां ‘थेराणं’ स्थविराणाम्, ‘अंतिए’ अन्तिके=समीपे ‘केवलं
बोहिं’ केवलां बोधिं=विशुद्धं सम्यग्दर्शनं ‘बुज्झिहिति’ भोत्स्यते=ज्ञास्यति, अनुभविष्यती-
त्यर्थः, ‘बुज्झित्ता’ बुद्ध्वा ‘अगाराओ’ अगारात्=गृहात्—गृहं परित्यज्येत्यर्थः, ‘अणगा-
रियं’ अनगारितां=साधुत्वं ‘पव्वइहिति’ प्रव्रजिष्यति=प्राप्स्यति ॥ सू. ५२ ॥

टीका—‘से णं’ इत्यादि । ‘से णं’ स खलु दृढप्रतिज्ञो दारकः ‘भविस्सइ
अणगारे’ अनगारो भविष्यतीत्यन्वयः, स कांक्षो भविष्यतीत्याह ‘भगवंते’ भगवान्=अति-
शयधारी, ‘ईरियासमिए’ ईर्यासमितः=गमनक्रियायां यतनायुक्तः, ‘जाव’ यावत्—यावच्छ-
ब्दात्—भाषासमितः, एषणासमितः, इत्यादि पञ्चसमितियुक्तः, ‘गुत्तबंभयारी’ गुप्तब्रह्मचारी=
गुप्तब्रह्मचर्यवान् ॥ सू. ५३ ॥

‘से णं तहारूवाणं’ इत्यादि ।

(से णं) वह दृढप्रतिज्ञ कुमार नियम से (तहारूवाणं थेराणं) तथारूप-सम्यग्ज्ञान
आदि गुणों से युक्त स्थविरों के (अंतिए) पास (केवलं बोहिं) केवल बोधि को—
विशुद्ध सम्यग्दर्शन को (बुज्झिहिति) प्राप्त करेगा—उसका अनुभव करेगा, (बुज्झित्ता
अगाराओ अणगारियं पव्वइहिति) अनुभव करने के बाद फिर वह अगार—अवस्था से
विरक्त हो कर साधु अवस्था को प्राप्त करने वाला होगा ॥ सू. ५२ ॥

‘से णं भविस्सइ’ इत्यादि ।

(से णं) वह दृढप्रतिज्ञ कुमार (अणगारे भगवंते) अनगार भगवन्त

‘से णं तहारूवाणं’ इत्यादि ।

(से णं) ते दृढप्रतिज्ञ कुमार नियमથી (तहारूवाणं थेराणं) तथारूप
सम्यग्ज्ञान आदि गुणोથી युक्त स्थविरोनी (अंतिए) पास (केवलं बोहिं) ओक
केवल विशुद्ध सम्यग्दर्शनने (बुज्झिहिति) प्राप्त करेशे—तेनो अनुभव करेशे,
(बुज्झित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिति) अनुभव करी दीधा पछी ते अगार—
अवस्थाથી विरक्त थछने साधु—अवस्थाने प्राप्त करवावाणे थशे. (सू. ५२)

‘से णं भविस्सइ’ इत्यादि ।

(से णं) ते दृढप्रतिज्ञ कुमार (अणगारे भगवंते) अनगार लगवन्त (भवि-

मूलम्—तस्स णं भगवंतस्स एएणं विहारेणं विहर-
माणस्स अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए निरावरणे कसिणे पाड-
पुण्णे केवलवरणाणदंसणे समुप्पज्जिहिति ॥ सू० ५४ ॥

टीका—‘तस्स णं’ इत्यादि । ‘तस्स णं भगवंतस्स’ तस्य खलु भगवतो
दृढप्रतिज्ञस्याऽनगारस्य, ‘एएणं विहारेणं विहरमाणस्स’ एतेन विहारेण विहरतः—
‘अणंते’ अनन्तम्=अनन्तार्थविषयम्, ‘अणुत्तरे’ अनुत्तरं=सर्वोत्तमम्, ‘णिव्वाघाए’
निर्व्याघातं=व्याघाताद्विर्भूतम्—अप्रतिहतमित्यर्थः, ‘निरावरणं’ क्षायिकत्वादावरणरहितम्,
‘कसिणे’ कृत्स्नं=सकलार्थग्राहकम्, ‘पडिपुण्णे’ प्रतिपूर्णं=सकलस्वकीयांशयुक्तम्,
‘केवलवरणाणदंसणे’ केवलवरज्ञानदर्शनम्—केवलम्=असहायम् अतएव वरं=श्रेष्ठं ज्ञानं

(भविस्सइ) होगा, अर्थात् उत्कृष्ट मुनिराज बनेगा, वह (इरियासमिए जाव गुत्तवं-
भयारी) ईर्यासमिति आदि पांच समितियों और तीन गुप्तियों का आराधक एवं यावत्
गुप्तब्रह्मचारी होगा ॥ सू० ५३ ॥

‘तस्स णं भगवंतस्स’ इत्यादि ।

(तस्स णं भगवंतस्स) उन अतिशय प्रभावविशिष्ट दृढप्रतिज्ञ मुनि को (एएणं
विहारेणं विहारमाणस्स) इस प्रकार के विहार से विचरते हुए (अणंते) अनन्त
पदार्थों के युगपत् जानने के साधक होने से अनन्त, (अणुत्तरे) सर्वोत्कृष्ट, (णिव्वा-
घाए) निर्व्याघात, (निरावरणे) आवरणरहित, (कसिणे) ज्ञान के पूर्ण विकास से
सकलार्थग्राहक, (पडिपुण्णे) तथा अपने समस्त अविभागी अंशों में से किसी

स्सइ) थशे, अर्थात् उत्कृष्ट मुनिराज बनशे, ते (इरियासमिए जाव गुत्तवंभयारी)
ईर्यासमिति आदि पांच समितिओ अने त्रणु गुप्तिओने आराधक तेभज
गुप्तब्रह्मचारी थशे. (सू. ५३)

‘तस्स णं भगवंतस्स’ इत्यादि.

(तस्स णं भगवंतस्स) ते अतिशय-प्रभाव-विशिष्ट दृढप्रतिज्ञ मुनिने
(एएणं विहारेणं विहरमाणस्स) ओ प्रकारना विहारथी विचरतां (अणंते) अनंत
पदार्थोंने ओकी साथे जाणुवामां साधक होवाथी अनंत, (अणुत्तरे) सर्वोत्कृष्ट,
(णिव्वाघाए) निर्व्याघात, (निरावरणे) आवरणरहित, (कसिणे) ज्ञानना विका-
सथी सकल अर्थोंने जाणुवा वाणा, (पडिपुण्णे) तथा पोताना समस्त अवि-
भागी अंशोमांथी डोछ पणु अंशथी डीन नडि ओवा (केवलवरणाणदंसणे)

मूलम्—तए णं दढपइण्णे केवली बहूइं वासाइं
केवलिपरियागं पाउणिहिति, पाउणिता मासियाए संलेहणाए
अप्पाणं झूसित्ता, सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदिता, जस्सट्ठाए
कीरइ नग्गभावे मुंडभावे अण्हाणाए अदंतवणए केसलोए

च दर्शनं चेति ज्ञानदर्शनं, तत्र ज्ञानं विशेषाऽवबोधरूपम्, दर्शनं सामान्यावबोधरूपं
'समुपज्झिहिति' समुत्पत्स्यते=उदेष्यति ॥ सू० ५४ ॥

टीका—'तए णं' इत्यादि । 'तए णं से दढपइण्णे केवली' ततः खलु
स दढप्रतिज्ञः केवली 'बहूइं वासाइं केवलिपरियायं' बहूनि वर्षाणि केवलिपर्यायं
'पाउणिहिति' पालयिष्यति, 'पाउणिता' पालयित्वा, 'मासियाए संलेहणाए
अप्पाणं झूसित्ता' मासिक्या संलेखनयाऽऽत्मानं जूषित्वा=सेवित्वा 'सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए
छेदिता' षट्ठिं भक्तानि अनशनेन छित्वा 'जस्सट्ठाए' यस्यार्थाय=यन्निमित्तं 'कीरइ'

भी अंश से हीन नहीं ऐसे (केवलवरणाणदंसणे) इन्द्रियों की सहायता आदि से
रहित होने के कारण केवल-असहाय उत्तम ज्ञान एवं उत्तमदर्शन उत्पन्न होंगे ॥सू० ५४॥

'तए णं से दढपइण्णे केवली' इत्यादि ।

(तए णं) इस के बाद (से दढपइण्णे केवली) वे दढप्रतिज्ञ केवली भगवान्
(बहूइं वासाइं) बहुत वर्षों तक (केवलिपरियागं), केवलिपर्याय का (पाउणिहिति)
पालन करेंगे, (पाउणिता) पालन करके (मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता)
एक मास की संलेखना से आत्मा को झोंसकर (सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदिता)
एवं साठ भक्तों का अनशन से छेदकर (जस्सट्ठाए) जिसके निमित्त (नग्गभावे) नग्न-

इन्द्रियों की सहायता आदिही रहित होवाने कारणे केवल-असहाय भेवा
उत्तम ज्ञान तेमज् दर्शन उत्पन्न थशे. (सू. ५४)

'तए णं से दढपइण्णे केवली' इत्यादि.

(तए णं) त्थार पछी (से दढपइण्णे केवली) ते दढप्रतिज्ञ केवली भग-
वान् (बहूइं वासाइं) धलुं वरसो सुधी (केवलिपरियागं) केवलीपर्यायनुं (पाउ-
णिहिति) पालन करशे, (पाउणिता) पालन करीने (मासियाए संलेहणाए अप्पाणं
झूसित्ता) ओठ मासनी संलेखनाथी आत्माने सेवीने, (सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए
छेदिता) तेमज् साठ लकतोने अनशनथी छेदन करीने (जस्सट्ठाए) जेना निमित्त

बंभचेरवासे अच्छत्तगं अणोवाहणगं भूमिसेज्जा फलहसेज्जा
कट्टसेज्जा परघरपवेसो लद्धावलद्धं, परेहिं हीलणाओ खिसणाओ

क्रियते, 'नग्गभावे' नग्नभावः, 'मुंडभावे' मुण्डभावः, 'अण्हाणए' अस्नानम्=स्नान-
वर्जनम्, 'अदंतवणए' अदन्तधावनम्=दन्तधावनवर्जनम्, 'केसलोए' केशलोचः=केशानां
लुञ्चनम्, 'बंभचेरवासे' ब्रह्मचर्यवासः=ब्रह्मचर्यपालनं, 'अच्छत्तगं' अच्छत्रकम्=छत्रधारण-
वर्जनम्, 'अणोवाहणगं' अनुपानत्कं=पादत्राणराहित्यं, अश्वशिविकादिवाहनराहित्यं च,
'भूमिसेज्जा' भूमिशय्या, 'फलहसेज्जा' फलकशय्या, 'कट्टसेज्जा' काष्ठशय्या,
'परघरपवेसो' परगृहप्रवेशः-भिक्षावर्धमित्यध्याहार्यमित्यर्थः; 'लद्धावलद्धं' लब्धापलब्धम्-
सत्कारादिना लब्धं=लाभः-प्राप्तिः, अपलब्धम्-अपमानेन प्राप्तिः क्रियते इति पूर्वेण सम्बन्धः ।
तथा-'परेहिं हीलणाओ' परेषां हेलनाः=अवज्ञाः-परकृता जन्मकर्ममर्मोद्घाटनाः, यथा-

भाव, (मुंडभावे) मुण्डभाव, (अण्हाणए) स्नान का परित्याग, (अदंतवणए) दाँतो
के प्रक्षालन करने का परित्याग, (केसलोए) केशों का लोच करना, (बंभचेरवासे)
ब्रह्मचर्य का पालन, (अच्छत्तगं) छत्र धारण नहीं करना, (अणोवाहणगं) विना
जूतों के चलना, अश्व पर, शिविका पर, वाहन पर नहीं बैठना, (भूमिसेज्जा) भूमि पर
शयन करना, (फलहसेज्जा) काष्ठ के पाटिये पर सोना, (कट्टसेज्जा) साधारण काष्ठ
पर सोना, (परघरपवेसो) दूसरों के घर भिक्षावृत्ति के लिये जाना, (लद्धावलद्धं) मान
और अपमान-पूर्वक प्राप्त भिक्षा में समभाव रखना, ये सब (कीरइ) किये जाते हैं, और जिसके
निमित्त (परेहिं हीलणाओ) परकृत अवज्ञाओं को-जैसे 'अरे ! तू जारजात (दोगला)
है' इस प्रकार के अनादर वचनों का, (खिसणाओ) लोगों के द्वारा खिजाने का-लोकों

(नग्गभावे) नग्नभाव, (मुंडभावे) मुण्डभाव, (अण्हाणए) स्नानનો परित्याग,
(अदंतवणए) दाँतों प्रक्षालन करवानो परित्याग, (केसलोए) केशों लुञ्चन
करवुं, (बंभचेरवासे) ब्रह्मचर्यनुं पालन करवुं, (अच्छत्तगं) छत्र धारण न करवुं,
(अणोवाहणगं) जेडा पडेयां विना यावुं, अश्वपर, शिविकापर (पादभी
पर), वाहन पर न जेसवुं, (भूमिसेज्जा) भूमिपर शयन करवुं, (फलहसेज्जा)
लाकडांना पाटियां पर सुवुं, (कट्टसेज्जा) साधारण लाकडां पर सुवुं,
(परघरपवेसो) भीजने घेर भिक्षावृत्ति भाटे जवुं, (लद्धावलद्धं) मान-
अपमानमां समभाव राखवो, जे जधुं (कीरइ) करवामां आवे छे, अने
जेना निमित्ते (परेहिं हीलणाओ) जाज्जे करेदी अवज्ञाओ जेवी के
'अरे ! तुं जारजात छे' आ प्रकारनां अनादरनां वचनो, (खिसणाओ) बोडोना

નિંદનાઓ ગરહનાઓ તાલનાઓ તજ્જનાઓ પરિભવનાઓ
પવ્વહનાઓ ઉચ્ચાવયા ગામકંટગા બાવીસં પરિસહોવસગ્ગા અહિ-

‘જારજાતોઽસિ’ इत्यादिरूपा इत्यर्थः । ‘खिंसणाओ’ खिंसनाः=लोकसमक्षं मर्मोद्घाटनम्,
‘निंदणाओ’ निन्दनाः=मनसा जुगुप्साः, ‘गरहणाओ’ गर्हणाः=समक्षे क्रियमाणा
जुगुप्साः, ‘तालणाओ’ ताडनाः=चपेटादिदानानि, ‘तज्जणाओ’ तर्जनाः=अङ्गुल्यादि-
प्रदर्शनपूर्वकं कटुवचनकथनानि, ‘परिभवणाओ’ परिभावनास्तिरस्काराः, ‘पव्वहणाओ’
प्रव्यथनाः=पीडोत्पादनाः, ‘उच्चावया’ उच्चावचाः=अनेकविधाः, ‘गामकंटगा’ ग्राम-
कण्टकाः—ग्रामः=समूहः, स चेन्द्रियाणामिह प्रकरणवशाद् गृह्यते, इन्द्रियाणां प्रतिकूलः शब्दादय
इत्यर्थः, ‘बावीसं परीसहोवसग्गा’ द्वाविंशतिः परीषहोपसर्गाः ‘अहियासिज्जंति’
अधिसहिष्यन्ते, ‘तमट्टमाराहिच्चा’ तमर्थमाराध्य=आत्मकल्याणरूपं तमर्थं साधयित्वा
‘चरिमेहिं उस्सासणिस्सासेहिं’ चरमैरुच्छ्वासनिःश्वासैः ‘सिज्झिहिति’ सेत्स्यति=

કે સમક્ષ અપને મર્મોં કે ઉદ્ઘાટનોં કા, (નિંદનાઓ) અપને પ્રતિ લોગોં કે માનસિક
ઘૃણાઓં કા, (ગરહનાઓ) લોગોં દ્વારા પ્રત્યક્ષરૂપ સે કી ગયી ઘૃણાઓં કા, (તાલ-
નાઓ) થપ્પડ આદિ કી તાડના કા, (તજ્જનાઓ) અંગુલી—નિર્દેશ—પૂર્વક કહે હુએ કટુ
વચનોં કા, (પરિભવનાઓ) તિરસ્કારોં કા, (પવ્વહનાઓ) પીડાજનક પરિસ્થિતિયોં
કા, (ઉચ્ચાવયા) અનેક પ્રકાર કે, (ગામકંટગા) ઇન્દ્રિયોં કે પ્રતિકૂલ શબ્દાદિકોં કા,
(બાવીસં પરીસહોવસગ્ગા) બાર્દસ પ્રકાર કે પરીષહોં કા, એવં પરકૃત ઉપસર્ગોં કા
(અહિયાસિજ્જંતિ) સહન ક્રિયા જાતા હૈ, (તમટ્ટમારાહિત્તા) તે દટ્ટપ્રતિજ્ઞ કેવલી ભગ-
વાન્ ઉસ આત્મકલ્યાણ રૂપ અર્થ કો આરાધિત કરકે (ચરિમેહિં ઉસ્સાસણિસ્સાસેહિં)

દ્વારા થતી ખીજબણીનું—લોકો સમક્ષ પોતાની માર્મિક વાતોનો પ્રકાશ
થાય તેનું, (નિંદનાઓ) પોતાના પ્રતિ લોકોની માનસિક ઘૃણાઓનું, (ગરહનાઓ)
લોકોથી પ્રત્યક્ષરૂપે કરાયેલી ઘૃણાઓનું, (તાલનાઓ) થપ્પડ—આદિથી માર
ખાવાનું, (તજ્જનાઓ) આંગળી ચીંધીને કહેલાં કટુ વચનોનું (પરિભવનાઓ)
તિરસ્કારોનું, (પવ્વહનાઓ) પીડાજનક પરિસ્થિતિઓનું, (ઉચ્ચાવયા) અનેક
પ્રકારના (ગામકંટગા) ઇન્દ્રિયોને પ્રતિકૂળ શબ્દ આદિનું, તથા (બાવીસં
પરીસહોવસગ્ગા) બાવીસ પ્રકારના પરીષહોનું તેમજ ખીજાએ કરેલા ઉપસર્ગોનું
(અહિયાસિજ્જંતિ) સહન કરાય છે. (તમટ્ટમારાહિત્તા) તે દટ્ટપ્રતિજ્ઞ કેવલી ભગ-
વાન તે આત્મકલ્યાણરૂપ અર્થને આરાધિત કરીને (ચરમેહિં ઉસ્સાસ—ણિસ્સા-
સેહિં) અંતિમ ઉચ્છ્વાસ—નિઃશ્વાસોથી (સિજ્ઞિહિતિ) કૃતકૃત્ય થઈ જશે.

યાસિજ્ઞંતિ, તમદ્વમારાહિતા ચરિમેહિં ઉસ્સાસણિસ્સાસેહિં સિજ્ઞિ-
હિતિ, બુજ્ઞિહિતિ, મુચ્ચિહિતિ, પરિણિવ્વાહિતિ, સવ્વદુક્ખાણમંતં
કરેહિતિ ॥ સૂ. ૫૪ ॥

મૂલમ્—સે જે ઇમે ગામા—ગર—જાવ—સણિવેસેસુ પ-
વ્વડયા સમણા ભવંતિ, તં જહા—આયરિયપડિણીયા ઉવજ્ઞાય-

કૃતકૃત્યો ભવિષ્યતિ, ‘બુજ્ઞિહિતિ’ ભોત્સ્યતે=સમસ્તાનર્થાન્ કેવલજ્ઞાનેન જ્ઞાસ્યતિ, ‘મુચ્ચિ-
હિતિ’ મોક્ષ્યતે—સકલકર્માશૈઃ, ‘પરિણિવ્વાહિતિ’ પરિનિર્વાસ્યતિ=કર્મકૃતસન્તાપાઽભાવેન
શીતલીભવિષ્યતિ, ‘સવ્વદુક્ખાણમંતં કરેહિતિ’ સર્વદુઃખાનામ્=શારીરમાનસાનાં સકલ-
દુઃખાનામન્તં કરિષ્યતીતિ ॥ સૂ. ૫૫ ॥

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ इत्यादि । ‘સે જે ઇમે’ અથ ય ઇમે ‘ગામા—ગર—
જાવ—સણિવેસેસુ’ ગ્રામાઽઽકર—યાવત્—સન્નિવેશેષુ, ‘પવ્વડયા સમણા ભવંતિ’ પ્રવ્રજિતાઃ
શ્રમણા ભવન્તિ, તે કોદશાઃ સન્તીત્યત્રાઽઽહ—‘તંજહા’ તથથા—‘આયરિયપડિણીયા’
આચાર્યપ્રત્યનીકાઃ=આચાર્યવિરોધિનઃ, ‘ઉવજ્ઞાયપડિણીયા’ ઉપાધ્યાયપ્રત્યનીકાઃ,

અન્તિમ ઉર્ધ્ધ્વાસનિઃશ્વાસોં સે (સિજ્ઞિહિતિ) કૃતકૃત્ય હો જાયેંગે, (બુજ્ઞિહિતિ) સમસ્ત
ચરાચર પદાર્થોં કો કેવલજ્ઞાનરૂપી આલોક—પ્રકાશ સે જાન જાયેંગે, (મુચ્ચિહિતિ) સમસ્ત
કર્માશોં સે છૂટ જાયેંગે, (પરિણિવ્વાહિતિ) કર્મકૃત સન્તાપ કે અભાવ સે શીતલીભૂત હો
જાયેંગે, (સવ્વદુક્ખાણમંતં કરેહિતિ) સમસ્ત શારીરિક, માનસિક દુઃખોં કા અન્ત
કર દેંગે ॥ સૂ. ૫૫ ॥

‘સે જે ઇમે’ इत्यादि ।

(સે જે ઇમે) જે જો (ગામા—ગર—જાવ સન્નિવેસેસુ) ગ્રામ, આકર સે લેકર
સન્નિવેશ તક કે સ્થાનોં મેં (પવ્વડયા સમણા) પ્રવ્રજિત સાધુ હોતે હેં, જૈસે—(આયરિય-
પડિણીયા) આચાર્ય કે પ્રત્યનીક—વિરોધી, (ઉવજ્ઞાયપડિણીયા) ઉપાધ્યાય કે વિરોધી,

(મુચ્ચિહિતિ) સમસ્ત કર્મોના અશોથી છૂટી જશે, (પરિણિવ્વાહિતિ) કર્મથી
થતા સન્તાપના અભાવથી શીતલીભૂત થઈ જશે, (સવ્વદુક્ખાણમંતં કરેહિતિ)
સમસ્ત શારીરિક, માનસિક દુઃખોનો અન્ત કરી દેશે. (સૂ. ૫૫)

‘સે જે ઇમે’ इत्यादि.

(સે જે ઇમે) તેઓ કે જે (ગામા—ગર—જાવ—સન્નિવેસેસુ) ગામ
આકર આદિથી લઈને સન્નિવેશ સુધીનાં સ્થાનોમાં (પવ્વડયા સમણા) પ્રવ્ર-
જિત સાધુ હોય છે, જેવા કે (આયરિયપડિણીયા) આચાર્યના પ્રત્યનીક—વિરોધી,

पडिणीया कुलपडिणीया गणपडिणीया आयरियउवज्झायाणं
अयसकारगा अवण्णकारगा अकित्तिकारगा बहूहिं असब्भावु-
ब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं
च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा विहरित्ता बहूइं वासाइं सामण्ण-

‘कुलपडिणीया’ कुलप्रत्यनीकाः, ‘गणपडिणीया’ गणप्रत्यनीकाः, ‘आयरियउव-
ज्झायाणं अयसकारगा’ आचार्योपाध्यायानामयशस्कारकाः, ‘अवण्णकारगा’ अवर्ण-
कारकाः=निन्दकाः ‘अकित्तिकारगा’ अकीर्तिकारकाः, ‘बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं
मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य’ बहूभिरसद्भावोद्भावनाभिः मिथ्यात्वाभिनिवेशैश्च—असद्भावानाम्=
अविद्यमानार्थानाम् असद्भावना=आरोपणास्ताभिः, तथा च—मिथ्यात्वाभिनिवेशैश्च=आशात-
नाजनितैर्मिथ्यात्वग्रहैः, ‘अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा’ आत्मानं च
परञ्च तदुभयञ्च व्युद्ग्राहयन्तः=आशातनारूपे पापे नियोजयन्तः, ‘वुप्पाएमाणा’ व्युत्पा-
दयन्तः=आशातनारूपं पापमुपार्जयन्तः, ‘विहरित्ता’ विहृत्य, ‘बहूइं वासाइं सामण्ण-

(कुलपडिणीया) कुल के प्रत्यनीक, (गणपडिणीया) गण के प्रत्यनीक, (आयरिय—उव-
ज्झायाणं अयसकारगा अवण्णकारगा) आचार्य एवं उपाध्यायों के अयशस्कारक, तथा अव-
र्णवादकारक—निंदाकरने वाले, (अकित्तिकारगा) अकीर्तिकारक, (बहूहिं असब्भावुब्भाव-
णाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य) अनेक असद्भावों की उद्भावना—दोषों के अभाव में भी
दोषों को उनमें प्रकट करने—से, मिथ्यात्व के अभिनिवेशों—आशातनाजनित मिथ्याग्रहों—से
(अप्पाणं परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा) अपने आपको एवं दूसरों को
तथा साथ में दोनों को आशातनारूप पाप में नियोजित करते हुए, स्वयं आशातना रूप

(उवज्झायपडिणीया) उपाध्यायना विरोधी, (कुलपडिणीया) कुलना विरोधी,
(गणपडिणीया) गणना विरोधी, (आयरियउवज्झायाणं अयसकारगा अवण्णकारगा)
आचार्य तेमञ्ज उपाध्यायेना अयशकारक, अवर्णवादकारक—निंदा करवावाणा,
(अकित्तिकारगा) अकीर्तिकारक, तेमो (बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभि-
णिवेसेहि य) अनेक असद्भावोनी उद्भावनाथी—दोषो न होय तेमां पणु दोषो
प्रकट करवाथी, मिथ्यात्वना अभिनिवेशोथी—आशातनाजनित मिथ्या—आश्र-
होथी, (अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा) पोते पोताने तेमञ्ज
भीजने तथा अन्नेने साथे ञ् आशातनाइय पापमां नियोजित करतां करतां,

परियागं पाउणंति, पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइय-अप्प-
डिकंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं लंतए कप्पे देवकि-
ब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति, तहिं तेसिं गई,

परियायं पाउणंति, पाउणित्ता' बहूनि वर्षानि श्रामण्यपर्यायं पालयन्ति, पालयित्वा 'तस्स
ठाणस्स' तस्य स्थानस्य=तस्य प्रत्यनीकतादिसंज्ञातस्य पापस्थानस्य, 'अणालोइय-अप्प-
डिकंता' अनालोचिताऽप्रतिक्रान्ताः=गुरुसमीप आलोचनायाः प्रतिक्रमणस्य चाकरणेन
दोषादनिवृत्ताः सन्तः 'कालमासे कालं किच्चा', कालमासे कालं कृत्वा 'उक्कोसेणं
लंतए कप्पे देवकिब्बिसिएसु' उत्कर्षेण लान्तके कल्पे=लान्तकनामके षष्ठे देवलोके
देवकिल्बिषिकेषु 'देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति' देवकिल्बिषिकतया उत्पत्तारो

पाप का उपार्जन करते हुए (विहरित्ता बहूइं वासाइं) इस भूमंडल पर विचरण करते रहते
हैं, और इतस्ततः उसका प्रचार करते २ ही अनेक वर्षों तक उस साधुपर्याय को पालते हैं,
वे (तस्स ठाणस्स अणालोइय-अप्पडिकंता) उन पापस्थानों की आलोचना नहीं कर के,
उन पापस्थानों का प्रतिक्रमण नहीं करके (कालमासे कालं किच्चा) काल अवसर में काल
कर (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट (लंतए कप्पे देवकिब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो
भवंति) लान्तक नामके छठवें देवलोक में किल्बिषिक देवों में किल्बिषिक जाति के देव होते
हैं। इनको जो देवपर्याय मिलती है वह विशिष्ट श्रामण्यजन्य है, अर्थात् बालतप के प्रभाव
से प्राप्त होती है; परंतु वहां किल्बिषिक देवों में जो जन्म होता है यह तो आचार्यादिक की
प्रत्यनीकता के फल से होता है। जिस प्रकार लोक में चांडाल आदि हुआ करते हैं उसी

(विहरित्ता बहूइं वासाइं) આ ભૂમંડળ ઉપર વિચરણ કરતા રહે છે, અને
આમ-તેમ તેનો પ્રચાર કરતા કરતા જ અનેક વરસો સુધી તે સાધુપર્યા-
યનું પાલન કરે છે, તેઓ (તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોइय-अप्पडिकंता) તે પાપ-
સ્થાનોની આલોચના ન કરતાં, તે પાપસ્થાનનું પ્રતિક્રમણ ન કરતાં (કાલ-
માસે કાલં કિચ્ચા) કાલ અવસરે કાલ કરીને (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट (लंतए कप्पे
देवकिब्बिसिएसु देवकिब्बिसियत्ताए उववत्तारो भवंति) લાન્તક નામના છઠ્ઠા દેવ-
લોકમાં કિલ્બિષિક દેવોમાં કિલ્બિષિક જાતિના દેવ થાય છે. તેમને જે દેવ-
પર્યાય મળે છે, તે વિશિષ્ટ શ્રમણ ધર્મ પાળવાથી જ મળે છે, અર્થાત્ બાલ-
તપના પ્રભાવથી પ્રાપ્ત થાય છે; પરંતુ ત્યાં જે કિલ્બિષિક દેવોમાં જન્મ
થાય છે એ તો આચાર્ય આદિકની પ્રત્યનીકતાનાં ફળથી થાય છે.

તેરસ સાગરોવમાઈ ઠિઈ, અણારાહગા, સેસં તં ચેવ ॥ સૂ૦ ૫૬ ॥

મૂલમ—સે જે ઇમે સણિ—પંચિદિય—તિરિક્ષ—
જોણિયા પજ્જતયા ભવંતિ, તં જહા—જલયરા થલયરા સ્વહયરા,

भवन्ति=उत्पद्यन्ते, एतेषां विशिष्टश्रामण्यजन्यं देवत्वं, प्रत्यनीकताजन्यं किल्बिषिकत्वं, तेन ते देवेषु चाण्डालतुल्या भवन्ति । ‘तर्हि तेसिं गई’ तत्र तेषां गतिः, ‘तेरस सागरोवमाई ठिई’ त्रयोदश सागरोपमाणि स्थितिः । ‘अणाराहगा’ अनाराधका भवन्ति । ‘सेसं तं चेव’ शेषं तदेव ॥ सू० ५६ ॥

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ ઇત્યાદિ । ‘સે જે ઇમે’ અથ ય ઇમે ‘સણિ—પંચિ-
દિય—તિરિક્ષજોણિયા પજ્જતયા ભવંતિ’ સંજિ—પંચેન્દ્રિય—તિર્યગ્યોનિકાઃ પર્યાપ્તા
भवन्ति, કે તે ? ઇત્યાહ—‘તં જહા’ તથા—‘જલયરા થલયરા સ્વહયરા’ જલચરાઃ
स्थलचराः खेचराः, ‘तेसिं णं अत्थेगइयाणं सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झ-

प्रकार. देवों में किल्बिषिक जाति के देव होते हैं । (तर्हि तेसिं गई) वहीं पर उनकी गति होती है । वहां (तेरस सागरोवमाई ठिई) १३ सागर की उनकी स्थिति होती है, (अणाराहगा सेसं तं चेव) ये जीव अनाराधक होते हैं । इस विषयमें अवशिष्ट पूर्ववत् समझना चाहिये ॥ सू. ५६ ॥

‘ જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ ।

(જે ઇમે સણિ—પંચિદિય—તિરિક્ષ—જોણિયા) જો યે સંજિ—પંચેન્દ્રિય—તિર્યગ્ય-
યોનિ કે પર્યાપ્ત જીવ હૈ, (તં જહા) જૈસે—(જલયરા થલયરા સ્વહયરા) જલચર, સ્થલચર
और खेचर । (तेसिं णं अत्थेगइयाणं सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं)

જેવી રીતે લોકમાં ચાંડાલ આદિ હોય છે તેવી જ રીતે દેવોમાં કિલ્બિષિક
જાતિના દેવ હોય છે. (તર્હિ તેસિં गई) ત્યાં તેમની ગતિ હોય છે. ત્યાં
(તેરસ સાગરોવમાઈ ઠિઈ) ૧૩ સાગરની તેમની સ્થિતિ હોય છે.
(અણારાહગા સેસં તં ચેવ) આ વિષયમાં બાકીનું બધું અગાઉ પ્રમાણે સમજવું
જોઈએ. એ જીવ અનારાધક હોય છે. (સૂ. ૫૬)

‘ સે જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ.

(સે જે ઇમે સણિ—પંચિદિય—તિરિક્ષ—જોણિયા) જે આ સંજી—પંચેન્દ્રિય-
તિર્યગ્ય—યોનિના પર્યાપ્ત જીવો છે, (તં જહા) જેવા કે (જલયરા થલયરા સ્વહ-
યરા) જલચર, સ્થલચર અને ખેચર. (તેસિં ણં અત્થેગइयाणं सुभेणं परिणामेणं

तेसिं णं अत्थेगइयाणं सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं
लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं
ईहा-वूह-मग्गण-गवेसणं करेमाणाणं सण्णि-पुव्वजाई-सरणे
समुप्पज्जइ ॥ सू० ५७ ॥

मूलम्—तए णं समुप्पण्णजाइसरणा समाणा सयमेव

वसाणेहिं लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं ' तेषां खलु अस्ति एकेषां शुभेन परिणामेन प्रशस्तैर-
ध्यवसानैर्लेश्याभिर्विशुद्धचमानाभिः, तदावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ' तदा-
वरणीयानां कर्मणां क्षयोपशमेन, अतएव ' ईहा-वूह-मग्गण-गवेसणं करेमाणाणं '
ईहा-व्यूह-मार्गण-गवेषणं कुर्वताम्, एषां पदानां व्याख्या अत्रैवोत्तरार्धे एकत्रिंशत्तमसूत्रे गता ।
' सण्णिपुव्वजाईसरणे ' संज्ञिपूर्वजातिस्मरणं=पूर्वसंज्ञिभवस्मरणं, ' समुप्पज्जइ ' समुत्पद्यते
॥ सू० ५७ ॥

टीका—' तए णं ' इत्यादि । ' तए णं समुप्पण्णजाइसरणा समाणा '

उनमें कितनेक जीव, शुभ परिणामों से, प्रशस्त अध्यवसायों से, (विसुज्झमा-
णीहिं लेस्साहिं) विशुद्ध लेश्याओं-लेश्या की विशुद्धि से, तथा—(तयावरणिज्जाणं कम्माणं
खओवसमेणं) तदावरणीय-ज्ञानावरणीय एवं वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से (ईहा-वूह-
मग्गण-गवेसणं करेमाणाणं) ईहा, व्यूह, मार्गण एवं गवेषण करते हैं, करते करते,
(सण्णि-पुव्व-जाई-सरणे समुप्पज्जइ) संज्ञित्व अवस्था के पूर्वभवों की स्मृति-जाति-
स्मरण ज्ञान-पाते हैं । (ईहा) आदि पदों की व्याख्या यहीं उत्तरार्ध के एकतीसवें सूत्र
में देखें ॥ सू. ५७ ॥

पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं) तेमां डेट्ठाड शुवेने डे ने शुल परिणामेथी, प्रशस्त
अध्यवसायेथी (विसुज्झमाणीहिं लेस्साहिं) विशुद्ध लेश्याओ-लेश्याओनी पवित्र-
ताथी, तथा (तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं) तदावरणीय-ज्ञानावरणीय
तेमज् वीर्यान्तराय कर्मणा क्षयोपशमथी, (ईहा-वूह-मग्गण-गवेसणं करेमाणाणं)
ईहा, व्यूह, मार्गण तेमज् गवेषण करतां करतां (सण्णिपुव्वजाईसरणे
समुप्पज्जइ) संज्ञित्व अवस्थाना पूर्वं लवेनी स्मृति-जातिस्मरणज्ञान-उत्पन्न
थाय छे. ' ईहा ' आदि पदोनो अर्थ ओ ज सूत्रना उत्तरार्धमां ओकत्रीशमां
सूत्रमां ओओ. (सू. ५७)

पंचाणुव्वयाइं पडिवज्जंति, पडिवज्जित्ता बहूहिं सीलव्वय-गुण-
वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहो-ववासेहिं अप्पाणं भावेमाणा बहूइं
वासाइं आउयं पालेंति, पालित्ता भत्तं पच्चक्खंति, बहूइं भत्ताइं

ततः खलु समुत्पन्नजातिस्मरणाः सन्तः 'सयमेव' स्वयमेव, 'पंचाणुव्वयाइं' पञ्चाणु-
व्रतानि 'पडिवज्जंति' प्रतिपद्यन्ते=स्वीकुर्वन्ति, 'पडिवज्जित्ता' प्रतिपद्य 'सीलव्वय-
गुण-विरमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासेहिं' शीलव्रत-गुण-विरमण-प्रत्याख्यान-पोष-
धोपवासैः, 'अप्पाणं भावेमाणा' आत्मानं भावयन्तः, 'बहूइं वासाइं' बहूनि वर्षाणि
'आउयं' आयुष्कं 'पालेंति' पालयन्ति, 'पालित्ता' पालयित्वा 'भत्तं' भक्तं 'पच्चक्खंति'
प्रत्याख्यान्ति, 'बहूइं भत्ताइं' बहूनि भक्तानि 'अणसणाए' अनशनेन 'छेदेंति'

‘तए णं समुप्पण्णजाइसरणा’ इत्यादि ।

(तए णं) तब (समुप्पण्णजाइसरणा समाणा) जातिस्मरणज्ञानयुक्त वे जीव,
उस ज्ञान के प्रभाव से (सयमेव) स्वयं ही (पंचाणुव्वयाइं) पांच अणुव्रतों को स्वीकार कर
लेते हैं। (पडिवज्जित्ता बहूहिं सीलव्वय-गुण-वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहो-ववासेहिं)
स्वीकार कर शीलव्रतों से, गुणव्रतों से, हिंसादिक पापों के त्याग से, प्रत्याख्यानो से एवं
पोषधोपवासों से (अप्पाणं भावेमाणा) अपनी आत्मा को भावित करते हुए (बहूइं वासाइं)
अनेक वर्षों तक (आउयं पालेंति) आयुष पालते हैं, (पालित्ता) आयुष पालकर वे (भत्तं
पच्चक्खंति) भक्तप्रत्याख्यान करते हैं। (बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति) अनशन से
अनेक भक्तों का छेदन करते हैं, (छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे

‘ तए णं समुप्पण्णजाइसरणा ’ इत्यादि.

(तए णं) त्थारे (समुप्पण्णजाइसरणा समाणा) जति-स्मरण-ज्ञानयुक्ता
ते एव ये ज्ञानना प्रभाव वडे (सयमेव) पोते न (पंचाणुव्वयाइं) पांच
अणुव्रतोने। स्वीकार करी ले छे. (पडिवज्जित्ता बहूहिं सीलव्वय-गुण-वेरमण-
पच्चक्खाण-पोसहो-ववासेहिं) स्वीकार करीने शीलव्रतोथी, गुणव्रतोथी, हिंसा
आदिक पापोना त्यागथी, प्रत्याख्यानोथी तेभन पौषधोपवासोथी (अप्पाणं भावे-
माणा) पोताना आत्माने भावित करतां करतां (बहूइं वासाइं) अनेक वरसो
सुधी (आउयं पालेंति) आयुष्य पाणे छे, (पालित्ता) आयुष्य पाणीने तेओ
(भत्तं पच्चक्खंति) भक्तप्रत्याख्यान करे छे, (बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति)
अनशनथी अनेक भक्तोनुं छेदन करे छे, (छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहि-

અણસળાણ છેદેતિ, છેદિત્તા આલોડયપડિક્કંતા સમાહિપત્તા કાલ-
માસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં સહસ્સારે કપ્પે દેવત્તાણ ઉવત્તારો
ભવંતિ, તહિં તેસિં ગઈ, અટ્ટારસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લત્તા,
પરલોયસ્સ આરાહગા, સેસં તં ચેવ ॥ સૂ૦ ૫૮ ॥

મૂલમ્—સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સંનિવેસેસુ આજી-

છિન્દન્તિ, ‘ છેદિત્તા ’ છિત્વા ‘ આલોડયપડિક્કંતા ’ આલોચિતપ્રતિક્રાન્તાઃ, ‘ સમાહિપત્તા ’
સમાધિપ્રાપ્તાઃ, ‘ કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ’ કાલમાસે=કાલાવસરે કાલં કૃત્વા, ‘ ઉક્કોસેણં ’
ઉત્કર્ષેણ ‘ સહસ્સારે કપ્પે ’ સહસ્સારે કલ્પે—સહસ્સારનામકે અષ્ટમે દેવલોકે ‘ દેવત્તાણ ’
દેવત્વેન ‘ ઉવવત્તારો ભવંતિ ’ ઉપવત્તારો ભવન્તિ=ઉત્પદ્યન્તે, ‘ તહિં તેસિં ગઈ ’ તત્ર
તેષાં ગતિઃ, ‘ અટ્ટારસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લત્તા ’ અષ્ટાદશ સાગરોપમાણિ સ્થિતિઃ
પ્રજ્ઞતા, ‘ પરલોગસ્સ આરાહગા ’ પરલોકસ્થારાધકાઃ, ‘ સેસં તં ચેવ ’ શેષં
તદેવ ॥ સૂ૦ ૫૮ ॥

ટીકા—‘ સે જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ । ‘ સે જે ઇમે ’ અથ ય ઇમે ‘ ગામા-ગર-

કાલં કિચ્ચા) છેદન કર વે અપને પાપોં કી આલોચના કરતે હૈં, પ્રતિક્રમણ કરતે હૈં,
સમાધિ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । તથા કાલ અવસર કાલ કર કે (ઉક્કોસેણં સહસ્સારે કપ્પે દેવ-
ત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) ઉત્કૃષ્ટ આઠવેં દેવલોક સહસ્સાર કલ્પ મેં દેવરૂપ સે ઉત્પન્ન હોતે
હૈં । (તહિં તેસિં ગઈ) વહીં પર ડનકી ગતિ કહી ગયી હૈ । (અટ્ટારસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં
પળ્લત્તા) ઇસ આઠવેં દેવલોક મેં ૧૮ સાગર કો સ્થિતિ હૈ । (પરલોગસ્સ આરાહગા, સેસં
તં ચેવ) યે પરલોક કે આરાધક હોતે હૈં । અવશિષ્ટ પૂર્વવત્ સમજના ચાહિયે ॥ સૂ. ૫૮ ॥

પત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) છેદન કરીને તેઓ પોતે કરેલાં પાપોની આલો-
ચના કરે છે, પ્રતિક્રમણ કરે છે, સમાધિને પ્રાપ્ત થાય છે, તથા કાલ અવસરે
કાલ કરીને (ઉક્કોસેણં સહસ્સારે કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) ઉત્કૃષ્ટ આઠમા
સહસ્સાર દેવલોકમાં દેવરૂપથી ઉત્પન્ન થાય છે. (તહિં તેસિં ગઈ) ત્યાં તેમની
ગતિ બતાવવામાં આવી છે. (અટ્ટારસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લત્તા) આ આઠમા
દેવલોકમાં ૧૮ સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે. (પરલોગસ્સ આરાહગા, સેસં તં ચેવ)
એઓ પરલોકના આરાધક હોય છે. બાકીનું બધું પૂર્વપ્રમાણે સમજી લેવું
જોઈએ. (સૂ. ૫૮)

વિયા ભવંતિ, તં જહા-દુઘરંતરિયા તિઘરંતરિયા સત્તઘરંતરિયા
ઉપ્પલવેટિયા ઘરસમુદાણિયા વિજ્જુયંતરિયા ઉટ્ટિયાસમણા, તે

જાવ-સંનિવેસેસુ ' ગ્રામાઽઽ-કર-યાવત્સંનિવેસેષુ ' આજીવિયા ભવંતિ ' આજીવિકાઃ= ગોશાલકમતાઽનુવર્તિનો ભવન્તિ । તે કિંસ્વરૂપાઃ ? અત્રાઽઽહ- ' તં જહા ' તથા- ' દુઘરંતરિયા ' દ્વિગૃહાઽન્તરિકાઃ-એકસ્મિન્ ગૃહે ભિક્ષાં ગૃહીત્વા અભિગ્રહવિશેષેણ ગૃહદ્વય-મતિક્રમ્ય પુનર્ભિક્ષાં ગૃહ્ણન્તિ, ન નિરન્તરં ન એકાન્તરં વા ભિક્ષાં ગૃહ્ણન્તીતિ ભાવઃ; ' તિઘરંતરિયા ' ત્રિગૃહાઽન્તરિકાઃ-ત્રીન્ ગૃહાનતિક્રમ્ય ભિક્ષાં ગૃહ્ણન્તીતિ ત્રિગૃહાઽન્તરિકાઃ, એવં ' સત્તઘરંતરિયા ' સત્તગૃહાન્તરિકાઃ-સત્તગૃહાન્ પરિત્યજ્ય ભિક્ષાં ગૃહ્ણન્તીતિ, ' ઉપ્પલ-વેટિયા ' ઉત્પલવૃન્તિકાઃ-ઉત્પલવૃન્તાનિ નિયમવિશેષાત્ ગ્રાહ્યતયા ભૈક્ષત્વેન યેષાં તે ઉત્પલ-વૃન્તિકાઃ, ' ઘરસમુદાણિયા ' ગૃહસમુદાનિકાઃ-ગૃહસમુદાનમ્=અનેકગૃહે ભિક્ષા યેષાં તે ગૃહસમુદાનિકાઃ, ' વિજ્જુયંતરિયા ' વિદ્યુદન્તરિકાઃ-વિદ્યુત્સમ્પાતેઽન્તરં=ભિક્ષાગ્રહણસ્થાવરોધો યેષાં તે વિદ્યુદન્તરિકાઃ, વિદ્યુતિ દીપ્યમાનાયાં ભિક્ષાર્થં નાટન્તીતિ ભાવઃ; ' ઉટ્ટિયાસમણા ' ઉષ્ટ્રિકાશ્રમણાઃ-ઉષ્ટ્રિકા=મૃત્તિકામયો ભાજનવિશેષઃ, તત્ર પ્રવિષ્ટા યે શ્રામ્યન્તિ=તપસ્યન્તિ ત

‘સે જે રમે’ રૂત્યાદિ ।

(સે જે રમે) યે જો (ગામા-ગર-જાવ-સંનિવેસેસુ) ગ્રામ આકર આદિ સ્થાનોં સે લેકર સંનિવેશ તક મેં (આજીવિયા) ગોશાલક કે મતાનુયાયી (ભવંતિ) હોતે હૈં, (તં જહા) જૈસે-(દુઘરંતરિયા) દો ઘર કે અન્તર સે જો ભિક્ષા લેતે હૈં, (તિઘરંતરિયા) ત્રીન ઘર કે અન્તર સે જો ભિક્ષા લેતે હૈં, (સત્તઘરંતરિયા) સાત ઘરોં કે અન્તર સે જો ભિક્ષા લેતે હૈં, (ઉપ્પલવેટિયા) કમલ કે નાલોં કી જો ભિક્ષા કરતે હૈં, (ઘરસમુદાણિયા) બહુત ઘરોં સે જો ભિક્ષા લેતે હૈં, (વિજ્જુયંતરિયા) વિજલી ચમકને પર જો ભિક્ષા નહીં લેતે હૈં, (ઉટ્ટિયાસમણા) મિટ્ટી કે કિસી બડે વર્તન-નાંદ આદિ મેં પ્રવિષ્ટ હો કર જો તપશ્ચર્યા કરતે

‘સે જે રમે’ ઈત્યાદિ.

(સે જે રમે) તેઓ કે જે (ગામા-ગર-જાવ-સંનિવેસેસુ) ગામ આકર આદિ સ્થાનોથી લઈને સંનિવેશ સુધીમાં (આજીવિયા) ગોશાલકના મતાનુયાયી (ભવંતિ) હોય છે, (તંજહા) જેવાકે (દુઘરંતરિયા) જે ઘરને અંતર રાખી જે ભિક્ષા લે છે, (તિઘરંતરિયા) ત્રણ ઘરને અંતર રાખી જે ભિક્ષા લે છે. (સત્તઘરંતરિયા) સાત ઘરોના અંતરથી જે ભિક્ષા લે છે. (ઉપ્પલવેટિયા) કમળના નાળની જે ભિક્ષા કરે છે, (ઘરસામુદાણિયા) ઘણાં ઘરોથી જે ભિક્ષા લે છે, (વિજ્જુયંતરિયા) વિજળી ચમકે ત્યારે જે ભિક્ષા લેતા નથી, (ઉટ્ટિયાસમણા) માટીનાં

ળં ઇયારૂવેળં વિહારેળં વિહરમાળા બહૂં વાસાં પરિયાયં પાઠ-
ણિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેળં અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ
ઉવવત્તારો ભવંતિ । તહિં તેસિં ગઈ, બાવીસં સાગરોવમાં ઠિઈ,
અણારાહગા, સેસં તં ચેવ ! સૂ૦ ૫૯ ॥

ઉષ્ટ્રિકાશ્રમણાઃ; ‘ તે ળં ઇયારૂવેળં વિહારેળં વિહરમાળા ’ તે સ્વલુ ઇતદ્રૂપેળ વિહારેળ
વિહરન્તઃ; ‘ બહૂં વાસાં પરિયાયં પાઠણિત્તા ’ બહુનિ વર્ષાણિ પર્યાયં પાલયિત્વા, ‘ કાલ-
માસે કાલં કિચ્ચા ’ કાલમાસે કાલં કૃત્વા, ‘ ઉક્કોસેળં અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ
ઉવવત્તારો ભવંતિ ’ ઉત્કર્ષેળ અચ્યુતે કલ્પે દેવત્વેનોત્પત્તારો ભવન્તિ, ‘ તહિં તેસિં ગઈ ’
તત્ર તેષાં ગતિઃ, ‘ બાવીસં સાગરોવમાં ઠિઈ ’ દ્વાવિંશતિં સાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ । ‘ અણ-
ારાહગા ’ અનારાધકાઃ, ‘ સેસં તં ચેવ ’ શેષં તદેવ ॥ સૂ૦ ૫૯ ॥

હૈ, ઇસ પ્રકાર જો અભિગ્રહ વાલે હૈ, (તે ળં ઇયારૂવેળં વિહારેળં વિહરમાળા બહૂં વાસાં
પરિયાયં પાઠણિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેળં અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવ-
વત્તારો ભવંતિ) યે સવ ઇસ પ્રકાર વિહાર કરતે હુણ બહુત વર્ષોં તક ઇસ પર્યાય કો પાલ-
કર કાલ અવસર મેં કાલ કરકે ઉત્કૃષ્ટ બારહવેં દેવલોક અચ્યુત કલ્પ મેં દેવ કી પર્યાય
સે ઉત્પન્ન હોતે હૈ । (તહિં તેસિં ગઈ) વહીં પર ઁનકી ગતિ હોતી હૈ । (બાવીસં સાગરોવ-
માં ઠિઈ) ૨૨ સાગર કી ઇનકી સ્થિતિ વહાં હોતી હૈ । (અણારાહગા) યે સવ અનારાધક
હોતે હૈ । (સેસં તં ચેવ) અવશિષ્ટ પૂર્વવત્ સમજ્ઞના ચાહિયે ॥ સૂ. ૫૯ ॥

કોઈ મોટાં વાસણુ-કોઠી આદિમાં પ્રવિષ્ટ થમને જે તપશ્ચર્યા કરે છે, આ પ્રકા-
રના અભિગ્રહવાળા જે છે, (તે ળં ઇયારૂવેળં વિહારેળં વિહરમાળા બહૂં વાસાં
પરિયાયં પાઠણિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેળં અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવ-
ત્તારો ભવંતિ) આ બધા આ પ્રકારે વિહાર કરતાં કરતાં ઘણાં વરસો સુધી
આ પર્યાયને પાળીને કાલ અવસરે કાલ કરીને ઉત્કૃષ્ટ બારમા અચ્યુત કલ્પમાં
દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે. (તહિં તેસિં ગઈ) ત્યાં તેમની ગતિ થાય છે,
(બાવીસં સાગરોવમાં ઠિઈ) બાવીશ સાગરની તેમની સ્થિતિ ત્યાં હોય છે.
(અણારાહગા) આ બધા અનારાધક હોય છે. (સેસં તં ચેવ) બાકીનું બધું પૂર્વ
પ્રમાણે સમજવું જોઈએ. (સૂ. ૫૯)

મૂલમ્—સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ પવ્વડયા
સમણા ભવંતિ, તં જહા—અત્તુક્કાસિયા પરપરિવાડયા ભૂઠ્ઠકમ્મિયા
ભુજ્જો ભુજ્જો કોડયકારગા, તે ણં ઇયારૂવેણં વિહારેણં વિહર-

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ ઇત્યાદિ । ‘સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ
પવ્વડયા સમણા ભવંતિ’ અથ ય ઇમે ગ્રામાઽઽકર યાવત્સન્નિવેશેષુ પ્રવ્રજિતાઃ શ્રમણા
ભવન્તિ । તદ્વદાન્ દર્શયિતુમાહ—‘તં જહા’ તથા ‘અત્તુક્કાસિયા’ આત્મોત્કર્ષિકાઃ—
આત્મન ઉત્કર્ષઃ=શ્રેષ્ઠત્વં સોઽસ્ત્યેષામિત્યાત્મોત્કર્ષિકાઃ—આત્મગૌરવદર્શકાઃ, ‘પરપરિવાડયા’
પરપરિવાદિકાઃ—પરેષાં પરિવાદો=નિન્દાઽસ્તિ યેષાં તે પરપરિવાદિકાઃ—પરનિન્દકા ઇત્યર્થઃ,
‘ભૂઠ્ઠકમ્મિયા’ ભૂતિકર્મિકાઃ—ભૂતિકર્મ=જ્વરિતાનાં બાધાપ્રશમનાર્થં ભસ્મદાનં તદસ્તિ યેષાં
તે ભૂતિકર્મિકાઃ, ‘ભુજ્જો ભુજ્જો કોડયકારગા’ ભૂયોભૂયઃકૌતુકકારકાઃ—ભૂયોભૂયઃ=
પુનઃ પુનઃ કૌતુકં=પરેષાં સૌભાગ્યાદિનિમિત્તં સ્તપનાદિ તત્કર્તારઃ, યદ્વા—કુતૂહલકારકાઃ ।
‘તે ણં ઇયારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણા’ તે સ્વલ્પેતદ્ભૂપેણ વિહારેણ વિહરન્તઃ ‘બહૂં

‘સે જે ઇમે ગામાગર’ ઇત્યાદિ ।

(સે જે ઇમે) જો યે (ગામાગર—જાવ સંનિવેસેસુ) ગ્રામ આકર આદિ સે લેકર
સંનિવેશ તક કે સ્થાનોં મેં પ્રવ્રજિત સંયમી શ્રમણ હૈં, જૈસે—(અત્તુક્કાસિયા) અપની આત્મા
કે ગૌરવ કો દિશ્વાને વાલે, (પરપરિવાડયા) સ્વમત કો અચ્છા સમજ્ઞકર દૂસરોં કો નિંદા
કરને વાલે, (ભૂઠ્ઠકમ્મિયા) ભૂતિકર્મ કરને વાલે—જ્વરિત વ્યક્તિયોં કો બાધા કો શમન
કરને કે લિયે ભસ્મ કો દેને વાલે, (ભુજ્જો ૨ કોડયકારગા) પુનઃ પુનઃ અનેક પ્રકાર કે
કૌતુક કરને વાલે, (તે ણં ઇયારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણા) વે સબ ઇસ પ્રકાર કે
આચાર મેં રહતે હુણ (બહૂં વાસાં સામણપરિયાગં પાણંતિ) બહુત વર્ષોં તક શ્રામ-

‘સે જે ઇમે ગામાગર’ ઇત્યાદિ.

(સે જે ઇમે) આ કે જેઓ (ગામા—ગર—જાવ—સંનિવેસેસુ) ગામ આકર
આદિથી લઈને સંનિવેશ સુધીના સ્થાનોમાં પ્રવ્રજિત સંયમી શ્રમણ છે; જેવા
કે—(અત્તુક્કાસિયા) પોતાના આત્માના ગૌરવને દેખાડવાવાળા, (પરપરિવાડયા)
પોતાના મતને સારો સમજીને બીજાની નિંદા કરવાવાળા, (ભૂઠ્ઠકમ્મિયા) ભૂતિ-
કર્મ કરવાવાળા—જ્વરથી પીડાતા માણસોનાં દુઃખ શમન કરવા માટે ભસ્મ
આપવાવાળા, (ભુજ્જો ભુજ્જો કોડયકારગા) વારંવાર અનેક પ્રકારનાં કૌતુક કરવા-
વાળા, (તે ણં ઇયારૂવેણં વિહારેણં વિહરમાણા) તેઓ બધા આવા પ્રકારના

માણા બહૂં વાસાં સામણપરિયાગં પાઉણંતિ, પાઉણિત્તા તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોહ્યપડિક્કંતા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કો-
સેણં અચ્ચુણ કપ્પે આભિઓગિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો
ભવંતિ, તહિં તેસિં ગઈ, બાવીસં સાગરોવમાઈ ઠિઈ, પરલોગસ્સ
અણારાહગા, સેસં તં ચેવ ॥ સૂ. ૬૦ ॥

વાસાં સામણપરિયાગં પાઉણંતિ ' બહુનિ વર્ષાણિ શ્રામણ્યપર્યાયં પાલયન્તિ 'પાઉણિત્તા'
પાલયિત્વા ' તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોહ્યપડિક્કંતા ' તસ્ય સ્થાનસ્ય અનાલોચિતપ્રતિક્રાન્તાઃ
' કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ' કાલમાસે કાલં કૃત્વા ' ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ કપ્પે આભિઓ-
ગિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ ' ઉત્કર્ષેણાચ્યુતે કલ્પે આભિયોગિકેષુ—અભિ-
યોગે=આજ્ઞાકર્મણિ નિયુક્તા અભિયોગિકાસ્તેષુ—આજ્ઞાકારિષુ દેવેષુ દેવત્વેનોપવત્તારો ભવન્તિ,
એતેષાં દેવત્વં ચારિત્રારાધકત્વેન, આભિયોગિકત્વં આત્મોત્કર્ષાદિહ્યાપનાત્; ' તહિં તેસિં ગઈ'
તત્ર તેષાં ગતિઃ, ' બાવીસં સાગરોવમાઈ ઠિઈ ' દ્વાવિંશતિં સાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ, 'પરલો-
ગસ્સ અણારાહગા ' પરલોકસ્થાનારાધકાઃ ' સેસં તં ચેવ ' શેષં તદેવ ॥ સૂ. ૬૦ ॥

પ્યપર્યાય કો પાલતે હૈં, (પાઉણિત્તા) પાલકર (તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોહ્યપડિક્કંતા)
ઉન પાપસ્થાનોં કી આલોચના એવં પ્રતિક્રમણ કિયે વિના (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા)
કાલ અવસર મેં કાલકર (ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ કપ્પે આભિઓગિણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ
ઉવવત્તારો ભવંતિ) અધિક સે અધિક અચ્યુતદેવલોક કે આભિયોગિક દેવોં મેં—જો ઇન્દ્ર આદિ
કે આજ્ઞાકારી હોતે હૈં, ઉત્પન્ન હો હોતે હૈં, । ચારિત્ર કી આરાધના કરને વાલે હોને સે યે
દેવપર્યાય તો પાલતે હૈં, પરંતુ આત્મોત્કર્ષ આદિ હ્યાપન કરને કે કારણ ઇન્હેં આભિયોગિક

આચારમાં રહીને (બહૂં વાસાં સામણપરિયાગં પાઉણંતિ) ઘણું વરસો સુધી
શ્રામણ્ય-પર્યાયને પાળે છે, (પાઉણિત્તા) પાળીને (તસ્સ ઠાણસ્સ અણાલોહ્યપડિ-
ક્કંતા) તે પાપસ્થાનોની આલોચના તેમજ પ્રતિક્રમણ કર્યા વગર (કાલમાસે
કાલં કિચ્ચા) કાલ અવસરમાં કાલ કરીને (ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ કપ્પે આભિઓગિ-
ણસુ દેવેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) વધારેમાં વધારે અચ્યુત દેવલોકના આભિયો-
ગિક દેવોમાં, જે ઇન્દ્ર આદિના આજ્ઞાકારી હોય છે; ઉત્પન્ન થાય છે. ચારિ-
ત્રની આરાધના કરવાવાળા હોવાથી તેઓ દેવપર્યાય તો પામે છે; પરંતુ આત્મોત્કર્ષ

મૂલમ્—સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ ણિ-
પહગા ભવંતિ, તં જહા—બહુરયા ૧, જીવપણસિયા ૨, અવ્વત્તિયા

ટીકા—‘સે જે ઇમે’ इत्यादि । ‘સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સણિવે-
સેસુ’ અથ ય ઇમે ગ્રામાકર યાવત્—સંનિવેશેષુ ‘ણિપહગા’ નિહ્વાઃ—નિહ્વતે=અપલપન્તિ=
અન્યથા પ્રરૂપયન્તીતિ નિહ્નવાઃ=મિથ્યાત્વાભિનિવેશાજિનોક્તાર્થસ્યાપલાપકા इत्यर्थः, યથા
જમાલ્યાદયઃ; તે કતિવિધા ભવન્તિ ? इत्याकाङ्क्षायां दर्शयति—‘તં જહા’ તથા—‘બહુરયા’
બહુરતાઃ—બહુષુ સમયેષુ રતાઃ=આસક્તાઃ—બહુભિરેવ સમયૈઃ કાર્યં સમ્પદ્યતે, નૈકેન સમયેન—

જાતિ કે દેવોં મેં જન્મ ધારણ કરના પડતા હૈ । (તહિં તેસિં ગઈ) વહીં પર ઇનકી ગતિ,
ઍવં (વાવીસં સાગરોવમાઈં ઠિઈં) સ્થિતિ ૨૨ સાગર કી કહી ગઈં હૈ । (પરલોગસ્સ
અણારાહગા) યે પરલોક કે અનારાધક કહે ગયે હૈં । (સેસં તં ચેવ) અવશિષ્ટ પૂર્વવત્
સમજના ચાહિયે ॥ સૂ. ૬૦ ॥

‘સે જે ઇમે ગામાગર’ इत्यादि ।

(સે જે ઇમે) જો યે (ગામાગર—જાવ—સણિવેસેસુ) ગ્રામ આકર આદિ સ્થાનોં સે
લેકર સંનિવેશ તક કથિત સ્થાનોં મેં રહને વાલે (ણિપહગા ભવંતિ) જમાલિ આદિ નિહ્વ—
મિથ્યાત્વ કે અભિનેવેશ સે જિનોક્ત અર્થ કે અપલાપક હોતે હૈં; જૈસે—(બહુરયા જીવ-
પણસિયા અવ્વત્તિયા સામુચ્છેદયા દોકિરિયા તેરાસિયા અવદ્ધિયા ઇચ્છેતૈ સત્તપવ-
ચણણિપહગા) બહુરત—બહુરતોં કા ઍસા સિદ્ધાન્ત હૈ કિ કાર્ય અનેક સમયોં મેં હી હોતા

આદિ ખ્યાપન કરવાના કારણે તેમને આભિયોગિક જાતિના દેવોમાં જન્મ ધારણ
કરવો પડે છે. (તહિં તેસિં ગઈ) ત્યાં તેમની ગતિ, તેમજ (વાવીસં સાગરોવમાઈં
ઠિઈં) સ્થિતિ ૨૨ સાગરની કહેલી છે. (પરલોગસ્સ અણારાહગા) તેઓ પરલોકના
અનારાધક કહેવાય છે. (સેસં તં ચેવ) બાકીનું બધું પૂર્વ પ્રમાણે સમજવું
જોઈએ. (સૂ. ૫૯)

‘જે ઇમે ગામાગર’ इत्यादि.

(જે ઇમે) તેઓ કે જે (ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ) ગામ, આકર આદિ
સ્થાનોથી લઈને સંનિવેશ સુધીનાં કહેલાં સ્થાનોમાં રહેવાવાળા (ણિપહગા ભવંતિ)
જમાલિ જેવા નિહ્નવ—મિથ્યાત્વના અભિનિવેશથી જિન ભગવાને કહેલા
અર્થના અપલાપક હોય છે; જેવા કે—(બહુરયા જીવપણસિયા અવ્વત્તિયા સામુ-
ચ્છેદયા દોકિરિયા તેરાસિયા અવદ્ધિયા ઇચ્છેતૈ સત્ત પવચણણિપહગા) (૧) બહુરત—
બહુરતોનો એવો સિદ્ધાન્ત છે કે કાર્ય અનેક સમયોમાં જ થાય છે એક

૩, સામુચ્છેદ્યા ૪, દોકિરિયા ૫, તેરાસિયા ૬, અવધ્ધિયા ૭,

ઇત્યેવંવાદિનો બહુરતાઃ—જમાલિમતાનુયાયિનઃ ૧; ‘જીવપણસિયા’ જીવપ્રદેશિકાઃ—એક એવ ચરમપ્રદેશો જીવ ઇત્યમ્યુપગમાજીવપ્રદેશો વિદ્યતે યેષાં તે તથા, એકેનાડપિ પ્રદેશેન ન્યૂનો જીવો ન ભવતિ, અતો યેનૈકેન પ્રદેશેન પૂર્ણઃ સન્ જીવો ભવતિ, સ એવૈકઃ પ્રદેશો જીવો ભવતીત્યેવં-વિધવાદિનઃ તિષ્ઠ્યગુપ્તાચાર્યમતાનુયાયિનઃ ૨; ‘અવધ્ધિયા’ અવ્યક્તિકાઃ—અવ્યક્તં સમસ્ત-મિદં જગત્, સાધ્વાદિવિષયે શ્રમણોડયં દેવો વાડયમ્ ઇત્યાદિવિવિક્તપ્રતિભાસોદયાડભાવાત્, તતશ્ચાડવ્યક્તમ્=અસ્ફુટં વસ્તુ—ઇતિ મતમસ્તિ યેષાં તેડવ્યક્તિકાઃ, અથવા અવિદ્યમાના સાધ્વાદિ-વ્યક્તિરેષામિત્યવ્યક્તિકાઃ, આષાઢાચાર્યશિષ્યમતાડન્તર્વર્તિનઃ ૩, ‘સામુચ્છેદ્યા’ સામુચ્છે-દિકાઃ—પ્રતિક્ષણં નારકાદિભાવાનાં સમુચ્છેદં=ક્ષયં વદન્તીતિ સામુચ્છેદિકાઃ—ક્ષણક્ષયિભાવ-પ્રરૂપકા અશ્વમિત્રમતાનુયાયિનઃ ૪; ‘દોકિરિયા’ દ્વૈક્રિયાઃ—દ્વૈક્રિયે=શીતવેદનોષ્ણવેદનાદિ-

હૈ, એક સમય મેં નહીં । યે જમાલિમત કે અનુયાયી હોતે હૈં ૧ । જીવપ્રદેશિકા એસા કહના હૈ કિ જીવ એક ચરમપ્રદેશસ્વરૂપ હી હૈ । જીવ યદિ એક મી પ્રદેશ સે ન્યૂન હો તો વહ જીવસંજ્ઞા પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા; અતઃ જિસ એક પ્રદેશ સે પરિપૂર્ણ હોકર વહ જીવ કહલાતા હૈ વહ ઉસ એકપ્રદેશસ્વરૂપ હી હૈ । યે તિષ્ઠ્યગુપ્ત આચાર્ય કે મતાનુયાયી હોતે હૈં ૨ । અવ્યક્તિકા કા યહ કહના હૈ કિ યહ સમસ્ત જગત સાધુ આદિ કે વિષય મેં સર્વથા અવ્યક્ત હૈ; કયોં કિ યે દેવ હૈ, યે શ્રમણ હૈ—ઇસ પ્રકાર કા મિત્ર ૨પ્રતિભાસ નહીં હોતા હૈ । ઇસલિએ વાસ્તવિક કયા હૈ યહ સબ અવ્યક્ત—અસ્ફુટ હૈ । અથવા યે અવ્યક્તિકા જન કિસી કો મી સાધુવ્યક્તિ નહીં માનતે હૈં । યે આષાઢાચાર્ય કે શિષ્યોં કે મત કે અન્તર્વર્તી માને જાતે હૈં ૩ । સામુચ્છેદિકા—મતવાદી પ્રત્યેક પદાર્થ કો ક્ષણવિનશ્વર માનતે હૈં । યે અશ્વમિત્ર કે મત કે અનુયાયી હૈં ૪ । દ્વૈક્રિયા—મતવાદી કી એસી માન્યતા હૈ કિ એક હી સમય મેં

સમયમાં નહિ. આ જમાલિમતના અનુયાયી હોય છે. (૨) જીવપ્રદેશિકા—એમનું એવું કહેવું છે કે એવ એક ચરમ-પ્રદેશ-સ્વરૂપ જ છે. એવ જે એક પ્રદેશથી ન્યૂન (કમ) હોય તો તે એવસંજ્ઞા પ્રાપ્ત કરી શકે નહિ. આથી જે એક પ્રદેશથી પરિપૂર્ણ હોય તે એવ કહેવાય છે, તે એક પ્રદેશસ્વરૂપ જ છે. આ તિષ્ઠ્યગુપ્ત આચાર્યના મતાનુયાયી હોય છે. (૩) અવ્યક્તિકા—એમનું એમ કહેવું છે કે આ સમસ્ત જગત સાધુ આદિના વિષયમાં સર્વથા અવ્યક્ત છે, કેમકે તેઓ દેવ છે, આ શ્રમણ છે, આ પ્રકારનો બુદ્ધો બુદ્ધો પ્રતિભાસ હોતો નથી. એથી વાસ્તવિક શું છે એ બધું અવ્યક્ત—અસ્ફુટ છે. અથવા આ અવ્યક્તિકા જનો કોઈને પણ સાધુ વ્યક્તિ મનતા નથી. આ આષાઢાચાર્યના શિષ્યોના મતના અન્તર્વર્તી મનાય છે. (૪) સામુચ્છેદિકા—આ પ્રત્યેક પદાર્થને ક્ષણભંગુર માને છે, તેઓ અશ્વામિત્રના મતના અનુયાયી છે.

इच्छेते सत्त पवयणणिण्हगा केवलं चरियालिङ्गसमाणा मिच्छा-

स्वरूपे एकस्मिन् समये जीवोऽनुभवति इत्येवं वदन्ति ये ते द्वैक्रियाः=क्रियाद्वयानुभव-
प्ररूपिणो गङ्गाचार्यमतानुयायिनः ५, 'तेरासिया' त्रैराशिकाः—त्रीन् राशीन्—जीवाऽ-
जीव—नोजीवरूपान् वदन्ति ये ते त्रैराशिकाः—राशित्रयाख्यापका इत्यर्थः—रोहगुप्ताचार्यमतानु-
सारिणः ६; 'अबद्धिया' अबद्धिकाः—जीवः कर्मणा बद्धो न भवति, किन्तु कञ्चुकवत्स्पृष्टो
भवति—इत्येवं वदन्ति ये तेऽबद्धिकाः, गोष्ठामाहिलमतावलम्बिनः ७; उपलक्षणं चैतद्—
वान्तसम्यक्त्वानामन्येषामपि । 'इच्छेते सत्त पवयणणिण्हगा' इत्येते सत्त प्रव-
चननिहवाः—प्रवचनं=जिनागमं निहनुवते=अपलपन्ति, अन्यथा तदेकदेशस्य चाऽभ्यु-
पगमात् ते प्रवचननिहवाः, केवलं—'चरियालिङ्गसमाणा' चर्यालिङ्गसमानाः—चर्या=
भिक्षाटनादिक्रियया लिङ्गेन=रजोहरणादिना च समानाः=साधुतुल्याः, ते पुनः कीदृशाः ?

एक जीव दो विरुद्ध क्रियाओं का भी अनुभव करता है । शीतवेदना एवं उष्णवेदना ये दो परस्पर में एक समय में विरुद्ध हैं । इन्हें जीव एक समय में भोगता है । ये गंगाचार्य के मत के अनुयायी होते हैं ५ । त्रैराशिक मतवालेका ऐसा कहना हैं कि जीवों की तीन राशियाँ हैं— (१) जीव, (२) अजीव एवं (३) नोजीव । ये रोहगुप्त के मत के अनुयायी हैं ६ । अबद्धिक लोग ऐसी प्ररूपणा करते हैं कि जीव और कर्म का बंध नहीं होता है । सिर्फ जीव के साथ कर्म कंचुक की तरह स्पृष्ट रहा करते हैं । ये गोष्ठमाहिल के मत को मानने वाले होते हैं ७ । यह उपलक्षणस्वरूप है, इससे सम्यक्त्वरहित क्रिया करने वालों का भी ग्रहण हुआ है । इस प्रकार ये सात प्रवचन—जिनागम के निहव हैं । (केवलं चरियालिङ्गसमाणा) मात्रा चर्या— भिक्षा याचना आदि क्रिया तथा लिङ्ग—रजोहरणादि साधु के चिह्नों की अपेक्षा इनमें समानता

(૫) દ્વૈક્રિય—એમની એવી માન્યતા છે કે એક જ સમયમાં એક જ બે વિરુદ્ધ ક્રિયાઓના પણ અનુભવ કરે છે. શીતવેદના—તેમજ ઉષ્ણવેદના આ બે પરસ્પરમાં એક સમયમાં વિરુદ્ધ છે. તેમને જ એક સમયમાં ભોગવે છે. તેઓ ગંગા-ચાર્યના મતના અનુયાયી હોય છે. (૬) ત્રૈરાશિક—તેઓ એમ કહે છે કે જીવોની ૩ રાશિઓ છે, (૧) જીવ (૨) અજીવ તેમજ (૩) નોજીવ. તેઓ રોહગુપ્તના મતના અનુયાયી છે. (૬) અબદ્ધિક—તેઓ એમ પ્રસ્પષ્ટ કરે છે કે જીવ અને કર્મનો બંધ થતો નથી. માત્ર જીવની સાથે કર્મ કંચુકની પેઠે સ્પૃષ્ટ રહેલાં (ચોટી રહેલાં—લાગી રહેલાં) છે. આ ગોષ્ઠમાહિલના મતને માનવા-વાળા હોય છે. આ ઉપલક્ષણસ્વરૂપ છે, માટે સમ્યક્ત્વરહિત ક્રિયા કરવા-વાળાનું પણ અહીં થાય છે. આ પ્રકારે આ સાત પ્રવચન—જિનાગમનાં નિહવ-છે. (કેવલં ચરિયાલિંગસમાણા) માત્ર ચર્યા—ભિક્ષા યાચના આદિ ક્રિયા તથા

दिट्ठी बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा विहरित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति, पाउणित्ता कालमासे

इत्यत्राह—‘मिच्छादिट्ठी’ मिथ्यादृष्टयः—मिथ्या=विपरीता दृष्टिः=मतं येषां ते तथा, एते सप्त निहवकाः ‘बहूहिं’ बहुभिः ‘असब्भावुब्भावणाहिं’ असद्भावोद्भावनाभिः—असद्भावानाम्=अविद्यमानार्थानाम् उद्भावनाः=उत्प्रेक्षणानि—आरोपणानि, ताभिः, ‘मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य’ मिथ्यात्वाभिनिवेशैश्च—मिथ्यात्वोदये अभिनिवेशाः=स्वमतस्थापनाऽऽग्रहास्तैः ‘अप्पाणं च परं च तदुभयं च’ आत्मानञ्च परञ्च तदुभयञ्च ‘वुग्गाहेमाणा’ व्युद्ग्राहयन्तः=स्वमते स्थापयन्तः, ‘वुप्पाएमाणा’ व्युत्पादयन्तः=जिनवचनविरुद्धप्ररूपणाजनितपापमुपार्जयन्तः, ‘विहरित्ता’ विहृत्य, ‘बहूइं वासाइं’ बहूनि वर्षाणि ‘सामण्णपरियागं’ श्रामण्यपर्यायं ‘पाउणंति’ पालयन्ति, ‘पाउणित्ता’ पालयित्वा ‘कालमासे

है। (मिच्छादिट्ठी) ये सातों ही निहव मिथ्यादृष्टि हैं। (बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा) ये अनेक प्रकार के असद्भावों की उद्भावनाओं से—अविद्यमान पदार्थों की कल्पनाओं से, तथा मिथ्यात्वादिक में अभिनिवेशों से—अपने मत को स्थापन करने रूप आग्रहों से अपनी आत्मा को, दूसरों को तथा स्व—पर इन दोनों को अपने मत में स्थापित करते हुए एवं जिनमत के विरुद्ध प्ररूपणा करने से उत्पन्न पाप का उपार्जन करते हुए (विहरित्ता) विचरते हैं। इस

विंग-રજોડરણુ આદિ સાધુનાં ચિહ્નોની અપેક્ષાએ તેઓમાં સમાનતા છે. (મિચ્છાદિટ્ઠી) એ સાતેય નિહનવ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે. (બહૂહિં અસબ્ભાવુબ્ભાવણાહિં મિચ્છત્તાભિનિવેસેહિ ય અપ્પાણં ચ પરં ચ તદુભયં ચ વુગ્ગાહેમાણા વુપ્પાએમાણા) તેઓ અનેક પ્રકારના અસદ્ભાવોની ઉદ્ભાવનાથી—અવિદ્યમાન પદાર્થોની કલ્પનાઓ કરવાથી તથા મિથ્યાત્વ આદિકમાં અભિનિવેશોથી—પોતાના મતનું સ્થાપન કરવા રૂપી આગ્રહોથી, પોતાના આત્માને, બીજાઓને તથા પોતાના ઉપરાંત આ બંનેને પોતાના મતમાં સ્થાપિત કરતાં તેમ જ જિનમતની વિરુદ્ધ પ્રરૂપણા કરવાથી ઉત્પન્ન થતાં પાપનું ઉપાર્જન કરતાં (વિહરિત્તા) વિચરે છે. આ પ્રકારે તે (બહૂં વાસાં સામણ્ણપરિયાયં પાઉણંતિ) અનેક વરસો સુધી આવાજ પ્રકારના આચાર-વિચારોમાં તન્મય બનીને શ્રામણ્યપર્યાયનું પાલન

કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં ઉવરિમેસુ ગેવેજ્જેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો
ભવંતિ । તહિં તેસિં ગઈ, એકતીસં સાગરોવમાઈં ઠિઈ, પરલો-
ગસ્સ અણારાહગા, સેસં તં ચેવ ॥ સૂ૦ ૬૧ ॥

મૂલમ—સે જે રમે ગામાગાર જાવ સણિવેસેસુ મણુયા

કાલં કિચ્ચા' કાલમાસે કાલં કૃત્વા 'ઉક્કોસેણં' ઉત્કર્ષેણ 'ઉવરિમેસુ ગેવેજ્જેસુ' ઉપરિતનેષુ
ગ્રૈવેયકેષુ 'દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ' દેવત્વેનોપપત્તારો ભવન્તિ । 'તહિં તેસિં ગઈ'
તત્ર તેષાં ગતિઃ, 'એકતીસં સાગરોવમાઈં ઠિઈ' એકત્રિંશત્સાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ, 'પર-
લોગસ્સ અણારાહગા' પરલોકસ્થ્યાઽનારાધકાઃ, 'સેસં તં ચેવ' શેષં તદેવ ॥ સૂ૦ ૬૧ ॥

ટીકા—'સે જે રમે' રત્યાદિ । 'સે જે રમે' અથ ય રમે 'ગામા-ગર-
જાવ-સણિવેસેસુ' ગ્રામાઽઽ-કર-યાવત્સન્નિવેશેષુ 'મણુયા ભવંતિ' મનુજા ભવન્તિ,

રસ પ્રકાર યે (બહૂઈં વાસાઈં સામણપરિયાયં પાઝણંતિ) અનેક વર્ષોં તક રસી પ્રકાર
કે આચાર-વિચારોં મેં તન્મય બને હુણ શ્રામણ્યપર્યાય કા પાલન કરતે રહતે હેં । (પાઝ-
ણિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં ઉવરિમેસુ ગેવેજ્જેસુ દેવત્તાણ ઉવવત્તારો
ભવંતિ) પાલકર કાલ અવસર કાલ કરકે અધિક સે અધિક ઉપરિમ ગ્રૈવેયકોં મેં દેવ કી
પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતે હેં । (તહિં તેસિં ગઈ, એકતીસં સાગરોવમાઈં ઠિઈ, પરલોગસ્સ
અણારાહગા, સેસં તં ચેવ) વહીં પર ઉનકી ગતિ ંવં ૩૧ સાગર પ્રમાણ સ્થિતિ હોતી હે ।
યે પરલોક કે અનારાધક કહે ગયે હેં । અવશિષ્ટ સવ પૂર્વવત્ સમજના ચાહિયે ॥ સૂ. ૬૧ ॥

'સે જે રમે' રત્યાદિ ।

(સે જે રમે) જો યે (ગામા-ગર-જાવ-સણિવેસેસુ મણુયા ભવંતિ) ગ્રામ
આકર યાવત્ સન્નિવેશેં મેં મનુષ્ય રહતે હેં, (તં જહા) જૈસે—(અપ્પારંભા અપ્પપરિગ્ગહા

કથાં કરે છે. (પાઝણિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા ઉક્કોસેણં ઉવરિમેસુ ગેવેજ્જેસુ
દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) પાળીને કાલ અવસરે કાલ કરીને વધારેમાં વધારે
ઉપરિમ ગ્રૈવેયકોમાં દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે. (તહિં તેસિં ગઈ એકતીસં
સાગરોવમાઈં ઠિઈ પરલોગસ્સ અણારાહગા સેસં તં ચેવ) ત્યાં તેમની ગતિ, તેમજ
૩૧ સાગર પ્રમાણ સ્થિતિ હોય છે. તેઓ પરલોકના અનારાધક કહેવાય છે.
બાકીનું બધું પૂર્વ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ. (સૂ. ૬૦)

'સે જે રમે' રત્યાદિ.

(સે જે રમે) તેઓ કે જે (ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ મણુયા ભવંતિ)

ભવંતિ; તં જહા-અપ્પારંભા અપ્પરિગ્ગહા ધમ્મિયા ધમ્માણુયા
ધમ્મિટ્ઠા ધમ્મક્ખવાઈ ધમ્મપ્પલોઈ ધમ્મપલજ્જણા ધમ્મસમુદાયારા

‘તં જહા’ તથા-‘અપ્પારંભા’ અલ્પારમ્ભાઃ-અલ્પ આરમ્ભઃ=કૃષ્યાદિના પૃથિવ્યાદિ-
જીવોપમર્દો યેષાં તે તથા, ‘અપ્પરિગ્ગહા’ અલ્પપરિગ્રહાઃ અલ્પઃ-પરિગ્રહઃ=ધનધાન્યાદિ-
સ્વીકારરૂપો યેષાં તે તથા, ‘ધમ્મિયા’ ધાર્મિકાઃ-ધર્મેણ=પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણરૂપેણ
ચરન્તિ યે તે ધાર્મિકાઃ, ‘ધમ્માણુયા’ ધર્માનુગાઃ-ધર્મમનુગચ્છન્તિ યે તે ધર્માનુગાઃ, કુત
ઇત્યમ્ ? અત્રાઽઽહ-‘ધમ્મિટ્ઠા’ ધર્મેષ્ટાઃ-ધર્મ એવેષ્ટો=વલ્લભો યેષાં તે ધર્મેષ્ટાઃ । અથવા-
ધર્મિષ્ઠાઃ=ધર્મોઽસ્તિ યેષાં તે ધર્મિણઃ, ત એવાતિશયયુક્ત ધર્મિષ્ઠાઃ । ‘ધમ્મક્ખવાઈ’ ધર્મ-
હ્યાતયઃ-ધર્માત્ હ્યાતિઃ=પ્રસિદ્ધિર્યેષાં તે ધર્મહ્યાતયઃ । અથવા ધર્માઽઽહ્યાયિનઃ-ધર્મ-
માહ્યાન્તિ=ભવ્યેભ્યઃ પ્રતિપાદયન્તીતિ ધર્માહ્યાયિનઃ । ‘ધમ્મપ્પલોઈ’ ધર્મપ્રલોકિનઃ ।

ધમ્મિયા ધમ્માણુયા) અલ્પ આરંભી-જો પૃથિવ્યાદિક જીવોં કે ઉપમર્દન વાલે કૃષ્યાદિક
રૂપ આરંભ કો અલ્પ કરતે હૈં વે, અલ્પપરિગ્રહી અર્થાત્ જિનકે ધનધાન્યાદિક કે સ્વીકારરૂપ મમ-
ત્વભાવ અલ્પ હોતા હૈ વે, ધાર્મિક-પ્રાણાતિપાતાદિક વિરમણરૂપ ધર્મ સે જો યુક્ત હોતે હૈં વે,
તથા-ધર્માનુગ-ધર્મપદ્ધતિ કે અનુસાર જો ચલે છે હૈં વે, (ધમ્મિટ્ઠા ધમ્મક્ખવાઈ ધમ્મપ્પલોઈ
ધમ્મપલજ્જણા ધમ્મસમુદાયારા) ધર્મેષ્ટ-ધર્મ હો જિન્હે પ્રિય હૈ વે, અથવા ધર્મિષ્ઠ-ધર્મ
કે અતિશય સે જો યુક્ત હૈં વે, ધર્મહ્યાતિ-ધર્મ સે જિનકી હ્યાતિ હુઈ હૈ વે, અથવા-ધર્મહ્યાયી-
ભવ્યજનોં કે લિયે જો શ્રુતચાસ્ત્રિરૂપ ધર્મ કા કથન કરને વાલે હોતે હૈં વે, ધર્મપ્રલોકી
ધર્મ કો જો ઉપાદેયરૂપ સે માનતે હૈં વે, ધર્મપ્રરજ્ઞન-ધર્મ કે સેવન કરને મેં જો અધિક

ગામ, આકર તૈમજ સન્નિવેશોમાં મનુષ્ય રહે છે, (તં જહા) જેવા કે (અપ્પારંભા
અપ્પરિગ્ગહા ધમ્મિયા ધમ્માણુયા) અલ્પ આરંભી-જે પૃથિવી આદિક જીવોને
હુઃખ દેવાવાળા કૃષિ આદિક રૂપ આરંભને અલ્પ (ઓછાં) કરે છે તેઓ,
અલ્પ પરિગ્રહી-જેના ધન ધાન્ય આદિકના સ્વીકાર રૂપ મમત્વભાવ અલ્પ
હોય છે તેઓ, ધાર્મિક-પ્રાણાતિપાતાદિકના વિરમણરૂપ ધર્મથી જે યુક્ત
હોય છે તેઓ, તથા ધર્માનુગ-ધર્મપદ્ધતિને અનુસરીને જે ચાલે છે તેઓ,
(ધમ્મિટ્ઠા ધમ્મક્ખવાઈ, ધમ્મપ્પલોઈ, ધમ્મપલજ્જણા ધમ્મસમુદાયારા) ધર્મેષ્ટ-ધર્મ
જેમને ઈષ્ટ-પ્રિય છે તેઓ, અથવા ધર્મિષ્ઠ-ધર્મના અતિશયથી જેઓ યુક્ત છે
તેઓ, ધર્મહ્યાતિ-ધર્મથી જેઓની ખ્યાતિ (પ્રસિદ્ધિ) થઈ છે તેઓ, અથવા
ધર્મહ્યાયી-ભવ્ય જનોને માટે જે શ્રુતચાસ્ત્રિ રૂપ ધર્મનું કથન કરવાવાળા
હોય છે તેઓ, ધર્મપ્રલોકી-ધર્મને જે ઉપાદેયરૂપથી માને છે તેઓ, ધર્મ-

ધમ્મેણં ચેવ વિત્તિં કપ્પેમાણા સુસીલા સુવ્વયા સુપ્પડિયાણંદા
સાહૂહિં એગચ્ચાઓ પાણાઙ્ગાયાઓ પડિવિરયા જાવજ્જીવાએ, એગ-
ચ્ચાઓ અપડિવિરયા, એવં જાવ પડિગ્ગહાઓ, એગચ્ચાઓ કોહાઓ

‘ ધમ્મપલજ્જના ’ ધર્મપ્રરજ્જના:—ધર્મે પ્રરજ્જન્તિ=આસજ્જન્તિ—પરાયણા ભવન્તિ એ તે ધર્મ-
પ્રરજ્જના: । ‘ ધમ્મસમુદાયારા ’ ધર્મસમુદાચારા:—ધર્મ: સમુદાચાર:=સદાચારો યેષાં તે
ધર્મસમુદાચારા: । ‘ ધમ્મેણં ચેવ વિત્તિં કપ્પેમાણા ’ ધર્મેણૈવ વૃત્તિં કલ્પયન્ત:—ધાર્મિક—
જીવિકયા નિર્વહન્ત:, ‘ સુસીલા ’ સુશીલા:=શોભનાચારવન્ત: ‘ સુવ્વયા ’ સુવ્રતા:=શોભનવ્રતવન્ત:
‘ સુપ્પડિયાણંદા ’ સુપ્રત્યાનન્દા:—સુષ્ટુ પ્રત્યાનન્દ:=ચિત્તાઽઽહ્લદો યેષાં તે તથા, ‘ સાહૂહિં ’
સાધુભ્ય:—સાધુસમીપાત્—સાધ્વન્તિકે પ્રત્યાખ્યાય ‘ એગચ્ચાઓ ’ એકસ્માત્=સ્થૂલરૂપાત્
ન તુ સર્વસ્માત્ ‘ પાણાઙ્ગાયાઓ ’ પ્રાણાતિપાતાત્=પરપ્રાણવ્યપરોપણત:, ‘ પડિવિરયા ’
પ્રતિવિરતા:=નિવૃત્તા:, ‘ જાવજ્જીવાએ ’ યાવજ્જીવં—જીવનપર્યન્તમિત્યર્થ:, ‘ એગચ્ચાઓ અપડિ-
વિરયા ’ એકસ્માત્=સૂક્ષ્મરૂપાત્ અપ્રતિવિરતા:=અનિવૃત્તા: । ‘ એવં જાવપરિગ્ગહાઓ ’ એવં

અનુસંગ સંપન્ન હોતે હૈં વે, ધર્મસમુદાચાર—ધર્મ હી જિનકા ઉત્તમ આચાર હૈં વે, (ધમ્મેણં ચેવ
વિત્તિં કપ્પેમાણા) તથા જો ધર્મ સે હી અપની જીવિકા ચલાતે હૈં વે, (સુસીલા સુવ્વયા
સુપ્પડિયાણંદા) શોભન આચાર જિનકા હૈં વે, સુવ્રત—નિરતિચાર વ્રતોં કે જો પાલન કરને વાલે
હૈં વે, સુપ્રત્યાનન્દ—જિનકા ચિત્ત સદા અચ્છી તરહ સે આનંદસંપન્ન રહા કરતા હૈં વે, તથા જો
(સાહૂહિં એગચ્ચાઓ) સાધુ કે સમીપ પ્રત્યાખ્યાન લેકર કેવલ એક (પાણાઙ્ગાયાઓ) સ્થૂલ
પ્રાણાતિપાતરૂપ સે (જાવજ્જીવાએ પડિવિરયા) જીવનપર્યન્ત પ્રતિવિરત—નિવૃત્ત રહતે હૈં,
(એગચ્ચાઓ અપડિવિરયા) પરંતુ સૂક્ષ્મરૂપ પ્રાણાતિપાત સે વિરક્ત નહીં રહતે હૈં વે, (એવં જાવ

પ્રરંજન—ધર્મનું સેવન કરવામાં જે અધિક અનુરાગસંપન્ન હોય છે તેઓ,
ધર્મસમુદાચાર—ધર્મજ જેમનો ઉત્તમ આચાર છે તેઓ, (ધમ્મેણં ચેવ વિત્તિં
કપ્પેમાણા) તથા જે ધર્મથી જ પોતાનું જીવન ચલાવે છે તેઓ, (સુસીલા
સુવ્વયા સુપ્પડિયાણંદા) શોભન આચાર જેના છે તેઓ, સુવ્રત—નિરતિચાર
વ્રતોનું જેઓ પાલન કરવાવાળા છે તેઓ, સુપ્રત્યાનંદ—જેમનું ચિત્ત હંમેશાં
સારી રીતે આનંદસંપન્ન રહ્યા કરે છે તેઓ, તથા જેઓ (સાહૂહિં એગચ્ચાઓ)
સાધુની પાસે પ્રત્યાખ્યાન લઈને કેવલ એક (પાણાઙ્ગાયાઓ) સ્થૂલપ્રાણાતિપાતરૂપ
પાપથી (જાવજ્જીવાએ પડિવિરયા) જીવનપર્યન્ત પ્રતિવિરત—નિવૃત્ત રહે છે, (એગચ્ચાઓ
અપડિવિરયા) પરંતુ સૂક્ષ્મ પ્રાણાતિપાતથી વિરક્ત રહેતા નથી તેઓ, (એવં જાવ

माणो मायाओ लोहाओ पेज्जाओ दोसाओ कलहाओ अब्भ-
क्खाणाओ पेसुण्णाओ परपरिवायाओ अरइरईओ मायामोसाओ
मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया जावज्जीवाए, एगच्चाओ अपडि-
विरया, एगच्चाओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया जावज्जीवाए,

यावत्परिग्रहात्, यावच्छब्देन—मृषावादाऽदत्तादान—मैथुनानि बोद्धव्यानि । ‘ एगच्चाओ ’ एक-
स्मात्=स्थूलत् ‘कोहाओ’ क्रोधात्, ‘माणो’ मानात्, ‘मायाओ’ मायायाः, ‘लोहाओ’
लोभात्, ‘पेज्जाओ’ प्रेयसः, ‘दोसाए’ द्वेषात् ‘कलहाओ’ कलहात् ‘अब्भक्खा-
णाओ’ अभ्याख्यानात्=पैशुन्यात्, ‘परपरिवायाओ’ परपरिवादात् ‘अरइरईओ’
अरतिरतिभ्याम् ‘मिच्छादंसणसल्लाओ’ मिथ्यादर्शनशल्यात् ‘पडिविरया’ प्रतिविरताः=
भावतो विरताः ‘जावज्जीवाए’ यावज्जीवं=जीवनपर्यन्तम्; ‘एगच्चाओ अपडिविरया’
एकस्मात्—सूक्ष्मात् अप्रतिविरताः ‘एगच्चाओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया जावज्जीवाए
एगच्चाओ अपडिविरया’ एकस्मादारम्भसमारम्भात्प्रतिविरता यावज्जीवमेकस्मादप्रति-

पडिग्गहाओ) तथा इसी तरह स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान, स्थूल मैथुन एवं स्थूल
परिग्रह से विरक्त रहते हैं वे, (एगच्चाओ कोहाओ माणो मायाओ लोहाओ पेज्जाओ
दोसाओ कलहाओ अब्भक्खाणाओ पेसुण्णाओ परपरिवायाओ अरइरईओ माया-
मोसाओ मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया जावज्जीवाए) इसी प्रकार स्थूल क्रोध, मान,
माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरति, रति, मायामृषा, एवं
मिथ्यादर्शनशल्य से जीवनपर्यन्त प्रतिविरत रहा करते हैं, (एगच्चाओ अपडिविरया)
किन्तु सूक्ष्म क्रोधादिकों से प्रतिविरत नहीं रहते हैं, (एगच्चाओ आरंभसमारंभाओ पडि-

पडिग्गहाओ) तथा એવી જ રીતે સ્થૂલ મૃષાવાદ, સ્થૂલ અદત્તાદાન, સ્થૂલ
મૈથુન, તેમજ સ્થૂલ પરિગ્રહથી જે વિરક્ત રહે છે તેઓ, (એગચ્ચાઓ કોહાઓ
માણાઓ માયાઓ લોહાઓ પેજ્જાઓ દોસાઓ કલહાઓ અબ્ભક્ખાણાઓ પેસુણ્ણાઓ
પરપરિવાયાઓ અરइरईઓ માયામોસાઓ મિચ્છાદંસણસલ્લાઓ પડિવિરયા જાવજ્જી-
વાए) એજ પ્રકારે સ્થૂલ ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યા-
ખ્યાન, પૈશુન્ય, પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ, માયામૃષા, તેમજ મિથ્યાદર્શન-
શલ્યથી જીવનપર્યન્ત પ્રતિવિરત રહ્યા કરે છે, (એગચ્ચાઓ અપડિવિરયા)
પરંતુ સૂક્ષ્મ ક્રોધ આદિકેથી પ્રતિવિરત રહેતા નથી. (એગચ્ચાઓ આરંભ-

एगच्चाओ अपडिविरया, एगच्चाओ करणकारावणाओ पडिविरया
जावजीवाए, एगच्चाओ अपडिविरया, एगच्चाओ पयणपया-
वणाओ पडिविरया जावजीवाए, एगच्चाओ पयणपयावणाओ
अपडिविरया, एगच्चाओ कोट्टण-पिट्टण-तज्जण-तालण-वह-

विरता: ' एगच्चाओ करणकारावणाओ ' एकस्मात्करणकारणात्=स्वयमनुष्ठानं करणं,
प्रेरणया परहस्तात्कारणम्, तयोःसमाहारः, तस्मात् ' पडिविरया ' प्रतिविरताः, ' जाव-
जीवाए ' यावन्जीवम्, ' एगच्चाओ अपडिविरया ' एकस्मादप्रतिविरताः=राज्ञामाज्ञादिभिः
कारणैः । ' एगच्चाओ पयणपयावणाओ पडिविरया जावजीवाए ' एकस्मात्पचनपा-
चनात्-पचनं=स्वहस्ताभ्याककरणं, पाचनं=परद्वारेण, तस्मात्प्रतिविरताः यावन्जीवं, ' एगच्चाओ
पयणपयावणाओ अपडिविरया ' एकस्मात् पचनपाचनादप्रतिविरताः । ' एगच्चाओ कोट्टण-
पिट्टण-तज्जण-तालण-वह-बंध-परिकिलेसाओ ' एकस्मात्कुट्टन-पिट्टन-तर्जन-ताडन

विरया जावजीवाए) ऐसे ही वे स्थूल आरंभ-समारंभ से ही जीवनपर्यंत विरक्त रहते
हैं, सूक्ष्म आरंभसमारंभ से नहीं । (एगच्चाओ करणकारावणाओ पडिविरया) कोई
ऐसे हैं जो केवल स्वयं करने से एवं दूसरों से कराने से जीवनपर्यन्त विरक्त रहते हैं,
(एगच्चाओ अपडिविरया) कोई ऐसे हैं जो राजाकी आज्ञा-आदि के कारण इनसे प्रतिविरक्त
नहीं हैं, (एगच्चाओ पयण-पयावणाओ पडिविरया जावजीवाए) कोई २ ऐसे हैं जो
पचन-पाचन क्रिया से जीवन पर्यन्त विरक्त हैं । (एगच्चाओ पयणपयावणाओ अपडि-
विरया) कोई २ ऐसे हैं जो इन पचन-पाचनादि क्रियाओं से विरक्त नहीं हैं । (एगच्चाओ

समारंभाओ पडिविरया जावजीवाए) તેમજ તેઓ સ્થૂલ આરંભ-સમારંભથી
પણ જીવનપર્યન્ત વિરક્ત રહે છે, સૂક્ષ્મ આરંભ-સમારંભથી વિરક્ત નથી
રહેતા. (એગચ્ચાઓ કરણકારાવણાઓ પડિવિરયા) કોઈ એવા છે કે જે કરવા-
કરાવવાથી જીવનપર્યન્ત વિરક્ત હોય છે. (એગચ્ચાઓ અપડિવિરયા) કોઈ એવા છે કે જે
રાજાની આજ્ઞા આદિના કારણે તેનાથી પ્રતિવિરક્ત હોતા નથી, (એગચ્ચાઓ પયણપયાવ-
ણાઓ પડિવિરયા જાવજીવાએ) કોઈ કોઈ એવા છે કે જે પચન-પાચન ક્રિયાથી
જીવનપર્યન્ત વિરક્ત છે. (એગચ્ચાઓ પયણપયાવણાઓ અપડિવિરયા) કોઈ
કોઈ એવા છે કે જે આ પચન-પાચન આદિ ક્રિયાઓથી વિરક્ત નથી.
(એગચ્ચાઓ કોટ્ટણ-પિટ્ટણ-તજ્જણ-તાલણ-વહ-બંધ-પરિકિલેસાઓ પડિવિરયા

બંધ-પરિકિલેસાઓ પડિવિરયા જાવજીવાણ, એગચ્ચાઓ અપડિ-
વિરયા, એગચ્ચાઓ પ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલેવણ-સદ્-ફરિસ-
રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ પડિવિરયા જાવજીવાણ, એગચ્ચાઓ

-વધ-બન્ધ-પરિકલેશાત્-તત્ર કુટ્ઠનમ્=છેદનમ્, પિટ્ઠનં=વસ્ત્રાદેરિવ મુદ્ગરાદિના હનનમ્,
તર્જનમ્= ' જ્ઞાસ્થસિ રે જાલ્મ ! ' એતદ્રૂપં ભર્ત્સનં, તાડનં=ચપેટાદિના હનનમ્, વધઃ=
પ્રાણવ્યપરોપણં, બન્ધઃ=રજ્જુપાશાદિના બન્ધનમ્, પરિકલેશો=વાધોત્પાદનં તેષાં સમાહારઃ
તસ્માત્ ' પડિવિરયા ' પ્રતિવિરતાઃ = નિવૃત્તાઃ ' જાવજીવાણ ' યાવજીવમ્,
' એગચ્ચાઓ અપડિવિરયા ' એકસ્માત્ અપ્રતિવિરતાઃ = અનિવૃત્તાઃ । ' એગચ્ચાઓ
પ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલેવણ-સદ્-ફરિસ-રસ - રૂવ - ગંધ - મલ્લા - લંકારાઓ
પડિવિરયા જાવજીવાણ ' એકસ્માત્ સ્નાન-મર્દન-વર્ણક-વિલેપન-શબ્દ-સ્પર્શ-રસ-

કોટ્ઠણ-પિટ્ઠણ-તજ્જણ-તાલણ-વહ-બંધ-પરિકિલેસાઓ પડિવિરયા જાવજીવાણ)
કોઈ ૨ એસે હૈં જો કુટ્ઠન-છેદન, પિટ્ઠન-પીટના-વસ્ત્રાદિક કા જિસ પ્રકાર મુદ્ગરાદિક
સે કૂટના હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર મુદ્ગર-મૂસલ આદિ સે પીટના-કૂટના, તર્જન-સોટે
બચનોં દ્વારા ભર્ત્સના કરના, તાડન-ચપેટા થપ્પડ-આદિ મારના, વધ-પ્રાણવ્યપરોપણ કરના,
બન્ધ-રજ્જુપાશ આદિ સે કિસી કો બાંધના, એવં પરિકલેશ-કિસી કો વાધા આદિ ઉત્પન્ન
કરના, ઇન સબ કાર્યોં સે યાવજીવન પ્રતિવિરત હૈં, (એગચ્ચાઓ અપડિવિરયા) કોઈ ૨
એસે હૈં જો ઇન ક્રિયાઓં સે પ્રતિવિરત નહીં હૈં । (એગચ્ચાઓ પ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલે-
વણ-સદ્-ફરિસ-રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ પડિવિરયા જાવજીવાઓ)

જાવજીવાણ) કોઈ કોઈ એવા છે કે જે કુટ્ઠન-છેદન, પિટ્ઠન-પીટવું-વસ્ત્રાદિને જે
પ્રકારે મુદ્ગર આદિથી કૂટે છે તે પ્રકારે મુદ્ગર (ધોકા) મૂસલ (સાંબેલાં) આદિથી
પીટવા-કૂટવા, તર્જન-ખોટાં ખરાબ વચનો દ્વારા ભર્ત્સના કરવી, તાડન-તમાચા
કે થપ્પડ આદિ મારવું, વધ-પ્રાણવ્યપરોપણ કરવું (મારી નાખવું), બંધ-
દોરડાંના પાશ આદિથી કોઈને બાંધવું, તેમજ પરિકલેશ-કોઈને બાધા (ડુંખ)
આદિ ખડોંચાડવું. આ બધાં કાર્યોથી જીવનપર્યન્ત પ્રતિવિરત છે. (એગચ્ચાઓ
અપડિવિરયા) કોઈ કોઈ એવા છે કે જે આ ક્રિયાઓથી પ્રતિવિરત નથી. (એગ-
ચ્ચાઓ પ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલેવણ-સદ્-ફરિસ-રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ

અપહિવિરયા, જે યાવળ્ણે તહપ્પગારા સાવજ્જજોગોવહિયા
કમ્મંતા પરપાણપરિયાવળ્ણકરા કજ્જંતિ તઓ વિ ઇગચ્છાઓ
પહિવિરયા જાવજ્જીવાણ, ઇગચ્છાઓ અપહિવિરયા ॥ સૂ. ૬૨ ॥

રૂપ—ગન્ધ—માલ્યા—લઙ્કારાત્પ્રતિવિરતા યાવજ્જીવમ્, ‘ ઇગચ્છાઓ અપહિવિરયા ’ એક-
સ્માદપ્રતિવિરતા:—તત્ર વર્ણક:—અઙ્ગરાગ:, અન્યત્ સ્પષ્ટમ્ । તથા—‘ જે યાવળ્ણે તહપ્પગારા’
યે યાવન્તસ્તથાપ્રકારા: ‘ સાવજ્જજોગોવહિયા’ સાવધયોગોપધિકા:—સાવધયોગા:—સાવધયો-
ગયુક્તાશ્ચ તે ઔપધિકા:—માયાપ્રયોજનાશ્ચેતિ તથા, ‘ પર—પાણ—પરિયાવળ્ણકરા ’ પરપ્રાણપ-
સ્તિાપનકરા: ‘ કમ્મંતા ’ કર્માન્તા:—કૃષ્યાદિવ્યાપારાંશા: ‘ કજ્જંતિ ’ ક્રિયન્તે, ‘ તઓ વિ
ઇગચ્છાઓ પહિવિરયા ’ તતોપિ એકસ્માત્ પ્રતિવિરતા:—પ્રતિનિવૃત્તા:, ‘ ઇગચ્છાઓ અપહિ-
વિરયા ’ એકસ્માત્ અપ્રતિવિરતા:—અનિવૃત્તા: સન્તિ ॥ સૂ. ૬૨ ॥

કોઈ-૨-એસે હૈં જો જીવનપર્યન્ત સ્નાન સે, મર્દન સે, વિલેપન સે, શબ્દ, રૂપ, ગંધ, રસ,
સ્પર્શ इन इन्द्रियों के भोगों से, माला एवं अलंकार आदि से निवृत्त हैं । (इगच्छाओ
अपहिविरया) कोई २ ऐसे भी हैं जो इनसे बिल्कुल ही प्रतिविरत नहीं हैं । (जे याव-
ण्णे तहप्पगारा सावज्जजोगोवहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति) इसी
प्रकार के और भी जितने सावधयोगोपधिक अर्थात्—सावधयोगयुक्त और मायाकषायजन्य
तथा—दूसरों के प्राणों को परिताप पहुँचाने वाले जो कृष्यादि व्यापार हैं, (तओ वि)
उनसे भी कितनेक ऐसे मनुष्य हैं जो (इगच्छाओ पहिविरया जावज्जीवाण) एकान्तत:

પહિવિરયા જાવજ્જીવાઓ) કેાઈ કેાઈ એવા હોય છે કે જે જીવનપર્યન્ત સ્નાનથી,
મર્દનથી, અંગરાગથી, વિલેપનથી, શબ્દ—સ્પર્શ—રૂપ—ગંધ—રસ એ ઇન્દ્રિયોના
ભોગોથી અને માળા તેમજ અલંકાર આદિથી નિવૃત્ત છે. (ઇગચ્છાઓ
અપહિવિરયા) કેાઈ કેાઈ એવા પણ છે કે જે તેનાથી બિલકુલ જ પ્રતિવિરત
હોતા નથી. (જે યાવળ્ણે તહપ્પગારા સાવજ્જજોગોવહિયા કમ્મંતા પરપાણ-
પરિયાવળ્ણકરા કજ્જંતિ) એજ પ્રકારે બીજા પણ જેટલા સાવધયોગોપધિક
એટલે સાવધયોગયુક્ત અને માયાકષાયજનિત તથા બીજા જીવોના પ્રાણોને
પરિતાપ પહોંચાડનાર જે કૃષિ આદિ વ્યાપાર છે, (તઓ વિ) તેનાથી પણ બીજા
જેટલાક એવા મનુષ્ય છે કે જે (ઇગચ્છાઓ પહિવિરયા જાવજ્જીવાણ) જીવનપર્યન્ત

મૂલમ્—તં જહા—સમણોવાસગા ભવંતિ, અભિગય-
જીવાજીવા ઉવલદ્ધપુણ્ણપાવા આસવ—સંવર—નિજ્જર—કિરિયા—
અહિગરણ—બંધ—મોક્ષ—કુસલા અસહેજ્ઞા દેવા—સુર—નાગ—

ટીકા—યે પૂર્વ સામાન્યેન કથિતાસ્ત એવ વિશેષેણ કથ્યન્તે—‘તં જહા’ તદ્વથા—તે
મનુજાઃ, ‘સમણોવાસગા ભવંતિ’ શ્રમણોપાસકાઃ=સાધુસેવકાઃ—શ્રાવકાઃ ભવન્તિ, તે
કીદૃશાઃ સન્તિ ? અત્રાઽઽહ—‘અભિગયજીવાજીવા’ અભિગતજીવાજીવાઃ—અભિગતાઃ—
યથાવસ્થિતસ્વરૂપેણ જ્ઞાતા જીવા અજીવાશ્ચ યૈસ્તે તથા, જીવાજીવતત્ત્વજ્ઞાનવન્ત ઇત્યર્થઃ;
‘ઉવલદ્ધપુણ્ણપાવા’ ઉપલબ્ધપુણ્યપાપાઃ—ઉપલબ્ધે=યથાવસ્થિતસ્વરૂપેણ વિજ્ઞાતે પુણ્યપાપે
યૈસ્તે તથા, તત્ત્વતો વિજ્ઞાતપુણ્યપાપસ્વરૂપા ઇત્યર્થઃ; ‘આસવ—સંવર—નિજ્જર—કિરિયા—
અહિગરણ—બંધ—મોક્ષ—કુસલા’ આસવ—સંવર—નિર્જરા—ક્રિયા—ધિકરણ—બંધ—મોક્ષ—
કુસલાઃ—તત્રાસવઃ—આસવતિ=પ્રવિશતિ અષ્ટવિધં કર્મસલિલં યેન આત્મસરસિ સ આસવઃ=

જીવનપર્યંત પ્રતિવિસ્ત છે, તથા કિતનેક એસે હૈં જો (એગચ્ચાઓ અપહિવિરયા) ઇનસે
પ્રતિવિસ્ત નહીં હૈં ॥ સૂ. ૬૨ ॥

‘તં જહા સમણોવાસગા’ ઇત્યાદિ ।

(તં જહા) ઇસી પ્રકાર (સમણોવાસગા ભવંતિ) અન્ય શ્રમણોપાસક હોતે
હૈં; જો કિ (અભિગયજીવાજીવા) જીવ ઓર અજીવ કે યથાર્થ સ્વરૂપ કે જ્ઞાતા હોતે હૈં,
(ઉવલદ્ધપુણ્ણપાવા) પુણ્ય એવં પાપ કા યથાવસ્થિત સ્વરૂપ જિન્હોને અચ્છી તરહ જાન
લિયા હૈ, (આસવ—સંવર—નિજ્જર—કિરિયા—અહિગરણ—બંધ—મોક્ષ—કુસલા)
આસવ, સંવર, નિર્જરા, ક્રિયા, અધિકરણ, બંધ, મોક્ષ ઇનમેં હેય કોન ૨ હૈં ઓર ઉપાદેય
કોન ૨ હૈં: ઇસ પ્રકાર હેય ઓર ઉપાદેય કે જ્ઞાન સે જિનકા ભાવ પરિપક્વ હો ચુકા હૈ ।

પ્રતિવિસ્ત છે, તથા કેટલાક એવા છે કે જે (એગચ્ચાઓ અપહિવિરયા) તેનાથી
પ્રતિવિસ્ત નથી. (સૂ. ૬૨)

‘તં જહા સમણોવાસગા’ ઇત્યાદિ.

(તં જહા) એજ રીતે (સમણોવાસગા ભવંતિ) જે શ્રમણોપાસક હોય છે,
(અભિગયજીવાજીવા) જે જીવ અને અજીવના યથાર્થ સ્વરૂપના જ્ઞાતા હોય છે,
(ઉવલદ્ધપુણ્ણપાવા) પુણ્ય તેમજ પાપનું યથાવસ્થિત સ્વરૂપ જેઓએ સારી રીતે
સમજી લીધેલું છે, (આસવ—સંવર—નિજ્જર—કિરિયા—અહિગરણ—બંધ—મોક્ષ—કુસલા)
આસવ, સંવર, નિર્જરા, ક્રિયા, અધિકરણ, બંધ, મોક્ષ, તેમાં હેય

મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયયોગરૂપઃ, સંવરઃ—સંવ્રિયતે=નિરુદ્ધ્યતે આસ્રવત્કર્મ યેન પરિગામેન સ સંવરઃ, સમિતિગુપ્તિપ્રભૃતિમિરાત્મસરસિ આસ્રવત્કર્મસલ્લિનાં સ્થગનમિત્યર્થઃ; નિર્જરા—નિર્જરણં=કર્મણાં જીવપ્રદેશેભ્યઃ પરિશટનં—વિશરણં, સા ચ—દેશતઃ કર્મક્ષયરૂપા, ક્રિયા=કાયિક્યાદિકા, અધિકરણમ્—અધિક્રિયતે નરકગતિયોગ્યતાં પ્રાપ્યતે આત્માઽનેનેત્યધિકરણમ્—દ્રવ્યતો ગત્રીયન્ત્રાદિ, ભાવતઃ ક્રોધાદિકમ્, બન્ધઃ—જીવસ્ય કર્મપુદ્ગલસમ્બન્ધઃ; મોક્ષઃ—

જિસ પ્રકાર નૌકા મેં છિદ્રોં દ્વારા જલ કા પ્રવેશ હોતા રહતા હૈ इसी प्रकार इस आत्मारूप सरोवर में जिसके द्वारा अष्टविध कर्मरूप जल का आगमन होता है उसका नाम आस्रव है। मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय एवं योग के भेद से यह आस्रव अनेक प्रकार का है। छिद्रों के बंद करने से जिस प्रकार नौका में पानी का आना रुक जाता है उसी प्रकार जिन परिणामों से आते हुए कर्म रुक जाते हैं उन परिणामों का नाम संवर है। गुप्ति, समिति एवं परीषह आदि के भेद से यह संवर अनेक प्रकार का बतलाया गया है। जीव-प्रदेश से कर्मों के एकदेश का नाश होना इसका नाम निर्जरा है। काय आदि संबंधी व्यापारों का नाम क्रिया है। नरकगति में जाने की योग्यता जीव जिसके द्वारा प्राप्त करता है वह अधिकरण है। द्रव्य और भाव के भेद से यह दो प्रकार का है। यहां पर भाव अधिकरण का कथन है, अतः वह क्रोधादिक कषायरूप जानना चाहिये। जीव का एवं कर्मपुद्गलों का परस्पर में एकक्षेत्रावगाहरूप संबंध का नाम बंध है। समस्त कर्मों के

શું છે અને ઉપાદેય શું છે આવી રીતે હેય અને ઉપાદેયના જ્ઞાનથી જેના ભાવ પરિપક્વ થઈ ગયા હોય છે. જેવી રીતે નૌકામાં છિદ્રો દ્વારા જળનો પ્રવેશ થયા કરે છે તેવી જ રીતે આ આત્મારૂપ સરોવરમાં જેના દ્વારા આઠ પ્રકારનાં કર્મરૂપી જલનું આગમન થાય છે તેનું નામ આસ્રવ છે. મિથ્યાદર્શન, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય તેમજ યોગના ભેદથી આ આસ્રવ અनेક પ્રકારના થાય છે. છિદ્રોને બંધ કરવાથી જેવી રીતે નૌકામાં પાણીનું આવવું રોકાઈ જાય છે તેવી જ રીતે જે પરિણામોથી આવનારાં કર્મ રોકાઈ જાય એવાં પરિણામોનું નામ સંવર છે. ગુપ્તિ, સમિતિ તેમજ પરીષદ આદિના ભેદથી આ સંવર અનેક પ્રકારના બતાવવામાં આવ્યા છે. જીવ-પ્રદેશથી કર્મોનો એક દેશ નષ્ટ થાય તેનું નામ નિર્જરા છે. કાય આદિ સંબંધી વ્યાપારોનું નામ ક્રિયા છે. નરકગતિમાં જવાની યોગ્યતા જીવ જેના દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે તે અધિકરણ છે. દ્રવ્ય તથા ભાવના ભેદથી તે બે પ્રકારના છે. અહીં ભાવ-અધિકરણનું કથન છે તેથી તે ક્રોધ આદિક કષાયરૂપ જાણવું જોઈએ. જીવને તેમજ કર્મપુદ્ગલોનો પરસ્પરમાં એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ સંબંધ છે, તેનું નામ બંધ છે. સમસ્ત કર્મોના અત્યંત-આત્યંતિક ક્ષયનું નામ મોક્ષ છે.

સકલકર્મક્ષયે સતિ જીવસ્ય કર્મસંયોગાપાદિતરૂપરહિતસ્ય સાધપર્યવસાનમ્ અવ્યાબાધમવ-
સ્થાનમ્, ઉક્તં ચ—

નીસેસકમ્મવિગમો મુક્તો જીવસ્સ સુદ્ધસ્સ ।

સાઙ્ગપજ્જવસાણં અવ્વાબાહં અવત્થાણં ॥ ૧ ॥

છાયા—નિર્ણયકર્મવિગમો મોક્ષો જીવસ્ય શુદ્ધરૂપસ્ય ।

સાધપર્યવસાનમ્ અવ્યાબાધમ્ અવસ્થાનમ્ ॥ ઇતિ ॥

તેષાં દ્વન્દ્વઃ, તત્ર કુશલાઃ, આસ્રવાદીનાં હેયોપાદેયતાસ્વરૂપજ્ઞાનિન ઇત્યર્થઃ,
'અસહેજ્ઞા' અસાહાય્યાઃ—અવિદ્યમાનં સાહાય્યં=દેવાદિસાહાય્યં સ્વસ્યૈવ ધર્મજનિતસામ-
ર્થ્યાતિશયાત્ યેષાં તે તથા, યદ્વા—સ્વયં કૃતં કર્મ સ્વયમેવ ભોક્તવ્યમિતિ જ્ઞાત્વા મનોદૌર્બ-
લ્યાભાવાત્ પરસાહાય્યાનપેક્ષા ઇત્યર્થઃ । 'દેવા—સુર—નાગ—જક્ષ્વ—રક્ષ્સ—કિંનર—
કિંપુરિસ—ગરુલ—ગંધર્વ—મહોરગાઈર્ણિ દેવગણેર્ણિ' દેવા—સુર—નાગ—યક્ષ—રાક્ષસ—

અત્યન્ત—આત્યન્તિક—ક્ષય કા નામ મોક્ષ હૈ । સમસ્ત કર્મોં કે ક્ષય હોને પર ઉનકે સંયોગ
સે આપાદિત મૂર્તિત્વ કા શીઘ્ર હી પર્યવસાન જીવ મેં હો જાતા હૈ, ઇસસે અમૂર્તિત્વરૂપ
સ્વભાવ કા પ્રાચુર્ય હોને સે ઉસકા અવ્યાબાધરૂપ સે અવસ્થાન હો જાતા હૈ । કહા મી હૈ—
સમસ્ત કર્મોં કા વિગમ હી મોક્ષ હૈ ઓર વહી જીવ કા શુદ્ધ સ્વરૂપ હૈ, ઇસ સ્વરૂપ કે પ્રાપ્ત હોતે હી
જીવ કા અવસ્થાન અવ્યાબાધરૂપ સે આત્મા મેં હો જાતા હૈ । જો “અસાહાય્યા” હૈ અર્થાત્
ધર્મજનિત સામર્થ્ય કે અતિશય સે દેવાદિકોં કી સહાયતા કી સ્વપ્ન મેં મી ઇચ્છા નહીં રખતે
હૈ; અથવા અપને દ્વારા કૃત શુભાશુભ કર્મ આત્મા સ્વયં હી ભોગ કરતા હૈ દૂસરોં કી સહા-
યતા ઇસમેં કાર્યકારી નહીં હો સકતી—ઇસ પ્રકાર કી માનસિક દૃઢતા કે કારણ જો
દૂસરોં કી સહાયતા કી થોડી સી મી પર્વાહ નહીં કરતે હૈ । (દેવા—સુર—નાગ—જક્ષ્વ—

સમસ્ત કર્મોના ક્ષય થવાથી તેમના સંયોગથી આપાદિત મૂર્તિત્વનું તરત જ
પર્યવસાન જીવમાં થઈ જાય છે તેથી અમૂર્તિત્વરૂપ પોતાના સ્વભાવનું પ્રાચુર્ય
થવાથી તેનું અવ્યાબાધરૂપથી અવસ્થાન થઈ જાય છે. કહ્યું પણ છે—સમસ્ત
કર્મોનું વિગમ એજ મોક્ષ છે, અને એજ જીવનું શુદ્ધ સ્વરૂપ છે. આ સ્વ-
રૂપને પ્રાપ્ત થતાં જ જીવનું અવસ્થાન અવ્યાબાધ રૂપથી આત્મામાં થઈ
જાય છે. 'અસાહાય્યા' છે અર્થાત્ ધર્મથી ઉત્પન્ન થતા સામર્થ્યના અતિશયથી
દેવ આદિકોની સહાયતાની સ્વપ્નમાં પણ ઇચ્છા રાખતા નથી. અથવા પોતાના
દ્વારા કરાયેલાં શુભ અશુભ કર્મ આત્મા પોતે જ ભોગવે છે, બીજાની સહા-
યતા એમાં કામ આવી શકતી નથી. આ પ્રકારની માનસિક દૃઢતાના કારણે
જે બીજાની સહાયતાની જરા પણ પરવાહ કરતા નથી. (દેવા—સુર—નાગ—
જક્ષ્વ—રક્ષ્સ—કિંનર—કિંપુરિસ—ગરુલ—ગંધર્વ—મહોરગાઈર્ણિ દેવગણેર્ણિ નિર્માંથાઓ

જક્ષ-રક્ષસ-કિન્નર-કિંપુરિસ-ગરુલ-ગંધર્વ-મહોરગાઈર્હિ
 દેવગણેર્હિ નિગંથાઓ પાવયણાઓ અણિક્કમણિજ્ઞા, નિગંથે
 પાવયણે નિસ્સંકિયા નિક્કંચિયા નિવ્વિતિગિચ્છા લહ્હટ્ઠા ગહિયટ્ઠા

કિન્નર-કિંપુરુષ-ગરુડ-ગન્ધર્વ-મહોરગાદિકૈઃ-તત્ર દેવાઃ=વૈમાનિકાઃ અસુરાઃ=અસુરકુમારાઃ,
 નાગાઃ=નાગકુમારાઃ, અસુરા નાગા ઇમે ઉભયે ભવનપતયઃ; યક્ષાઃ રાક્ષસાઃ કિન્નરાઃ
 કિંપુરુષાઃ-એતે ચત્વારો વ્યન્તરવિશેષાઃ, ગરુડાઃ-ગરુડધ્વજાઃ-સુપર્ણકુમારાઃ ભવનપતિ-
 વિશેષાઃ, ગન્ધર્વાઃ મહોરગાશ્ચ વ્યન્તરવિશેષાઃ, તત્પ્રમૃતિભિઃ દેવગણૈઃ 'નિગંથાઓ પાવ-
 યણાઓ' નૈર્ગ્રન્થાત્ પ્રવચનાત્ 'અણિક્કમણિજ્ઞા' અનતિક્રમણીયાઃ=અચાલનીયાઃ-
 નિર્ગ્રન્થપ્રવચનાત્ તાન્ ચાલયિતું દેવાદયોઽપ્યસમર્થા इति भावः । 'નિગંથે પાવયણે'
 નૈર્ગ્રન્થે પ્રવચને 'નિસ્સંકિયા' નિઃશંકિતાઃ=શંકારહિતાઃ, 'નિક્કંચિયા' નિષ્કાઙ્કિતાઃ=
 પરમતાનમિલાષિણઃ, 'નિવ્વિતિગિચ્છા' નિર્વિચિકિત્સાઃ-ફલં પ્રતિ સંદેહવર્જિતાઃ,
 'લહ્હટ્ઠા' લહ્ધાર્થાઃ-અર્થશ્રવણાત્, 'ગહિયટ્ઠા' ગૃહીતાર્થાઃ-અર્થાવધારણાત્, 'પુચ્છિ-

રક્ષસ-કિન્નર-કિંપુરિસ-ગરુલ-ગંધર્વ-મહોરગાઈર્હિ દેવગણેર્હિ નિગંથાઓ પાવ-
 ણયાઓ અણિક્કમણિજ્ઞા) દેવ, અસુરકુમાર, નાગકુમાર, યક્ષ, રાક્ષસ, કિન્નર, કિંપુરુષ,
 ગરુડ, સુપર્ણકુમાર, ગન્ધર્વ એવં મહોરગા ઇત્યાદિક દેવગણોં દ્વારા મી જો નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સે
 ઇક બાલ મી વિચલિત નહીં કિયે જા સકતે હૈં, (નિગંથે પાવયણે નિસ્સંકિયા નિક્કં-
 ચિયા નિવ્વિતિગિચ્છા લહ્હટ્ઠા ગહિયટ્ઠા પુચ્છિયટ્ઠા અભિગયટ્ઠા) નિર્ગ્રન્થપ્રવચન મેં
 જિનકી શ્રદ્ધા નિઃશંકિત હૈ, નિષ્કાંક્ષિત હૈ-પરમત કી ઓર જિનકે હૃદય મેં જાને કી
 અથવા ઉસે સરાહને આદિ કી થોડી સી મી અભિલાષા નહીં હૈ, નિર્વિચિકિત્સાગુણ સે જો
 ભરપૂર હૈં, ફલ કે પ્રતિ જિનકી શ્રદ્ધા સંદેહ સે સર્વથા રિક્ત હૈ, જો લહ્ધાર્થ હૈં, ગૃહીતાર્થ

પાવયણાઓ અણિક્કમણિજ્ઞા) દેવ, અસુરકુમાર, નાગકુમાર, યક્ષ, રાક્ષસ,
 કિન્નર, કિંપુરુષ, ગરુડ, સુપર્ણકુમાર, ગંધર્વ તેમજ મહોરગા ઇત્યાદિક દેવ-
 ગણો દ્વારા પણ જે નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન વડે એક વાળ જેટલા પણ વિચલિત
 કરી શકાતા નથી, (નિગંથે પાવયણે નિસ્સંકિયા, નિક્કંચિયા નિવ્વિતિગિચ્છા
 લહ્હટ્ઠા ગહિયટ્ઠા પુચ્છિયટ્ઠા અભિગયટ્ઠા) નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનમાં જેમની શ્રદ્ધા નિઃ-
 શંકિત છે, કાંક્ષા વગરના છે-પરમતની તરફ જવાની જેમના હૃદયમાં અભિ-
 લાષા જરા પણ નથી, અથવા પરમતની પ્રશંસા આદિ કરવાની કિંચિત્
 પણ અભિલાષા નથી, નિર્વિચિકિત્સા-શુણ્ઠી જે ભરપૂર છે. ફળના તરફ

પુચ્છિયદ્વા અભિગયદ્વા વિણિચ્છિયદ્વા અટ્ટિ-મિંજ-પેમા-પુરાગ-
રક્તા, અયમાડસો ! નિગંથે પાવયણે અદ્દે, અયં પરમદ્દે, સેસં અણદ્દે,
ઝસિયફલિહા અવંગુયદુવારા ચિયત્તં-તેર-ઘરપ્પવેસા બહૂહિં

યદ્વા ' પૃષ્ઠાર્થા:-સંદિગ્ધાર્થસ્ય પ્રશ્નકરણાત્, ' અભિગયદ્વા ' અભિગતાર્થા:-પૃષ્ઠાર્થસ્યાભિ-
ગમાત્ ' વિણિચ્છિયદ્વા ' વિનિશ્ચિતાર્થા:-પદાર્થાનાં વિનિશ્ચયાત્, ' અટ્ટિ-મિંજ-પેમા-
પુરાગ-રક્તા ' અસ્થિમજ્જાપ્રેમાનુરાગરક્તા: અસ્થીનિ='હડ્ડી' इति પ્રસિદ્ધાનિ, મજ્જા-અસ્થાં
મધ્યગતો ધાતુવિશેષ:, તાસુ અસ્થિમજ્જાસુ પ્રવચનસ્ય પ્રેમાનુરાગેણ=પ્રેમરૂપેણાનુરાગેણ રક્તા યે
તે તથા, તે શ્રાવકા: પુત્રાદીન્ સંબોધ્ય વદન્તિ ' અયમાડસો ' इत्यादि । इदं हे आयुष्मन् !
' નિગંથે પાવયણે ' નૈર્ગન્થ પ્રવચનમ્, 'અદ્દે' અર્થ:-મોક્ષસ્ય કારણમ્, અતएव-'અયં પરમદ્દે'
इदं परमार्थ:-सारभूत:, ' સેસે અણદ્દે ' રોષમનર્થમ્-રોષં=નૈર્ગન્થપ્રવચનમિન્નં કુપ્રવચનં
ધનધાન્યપુત્રકલત્રાદિકં ચ અનર્થ=વ્યર્થમ્, ' ઝસિયફલિહા ' ઉચ્છિતસ્ફટિકા:-ઉચ્છૂ-
તમ્=उन्नतं स्फटिकं=स्फटिकमिव चित्तं येषां ते तथा, स्फटिकवन्निर्मलहृदया इत्यर्थ:;

હૈં, પૃષ્ઠાર્થ હૈં, અભિગતાર્થ હૈં, (વિણિચ્છિયદ્વા) વિનિશ્ચિતાર્થ હૈં, (અટ્ટિ-મિંજ-પેમા-પુરાગ-
રક્તા) પ્રવચન કે પ્રતિ અનુરાગ જિનકી નશ-નશ મેં ભરા હુઆ હૈ । એસે યે શ્રાવક જન
વાર્તાલાપ કે પ્રસંગ મેં અપને ૨ પુત્રાદિકોં કો અથવા અન્યજનોં કો ઇસ પ્રકાર કહ કર
સમજાતે-બુઝાતે હૈં-(અયમાડસો ! નિગંથે પાવયણે અદ્દે અયં પરમદ્દે સેસે અણદ્દે)
હે આયુષ્મન્ ! યહ નિર્ગન્થ પ્રવચન હી મોક્ષ કા કારણ હૈ ઇસલિએ યહી પરમાર્થભૂત હૈ ।
ઇસસે મિન્ન જો કુપ્રવચન હૈ-મિથ્યાદષ્ટિયોં દ્વારા ઉપદિષ્ટ પ્રવચન હૈ વહ, તથા ધન, ધાન્ય,
પુત્ર એવં કલત્રાદિ, અનર્થ કે કારણ હૈં । ઇન વ્યક્તિયોં કા (ઝસિયફલિહા) હૃદય સ્ફટિક

જેમની અસંદિગ્ધ શ્રદ્ધા છે, જે લબ્ધાર્થ છે, ગૃહીતાર્થ છે, પૃષ્ઠાર્થ છે, અભિ-
ગતાર્થ છે, (વિણિચ્છિયદ્વા) વિનિશ્ચિતાર્થ છે, (અટ્ટિ-મિંજ-પેમા-પુરાગ-રક્તા)
જેની નસે-નસમાં પ્રવચન પ્રતિ અનુરાગ ભરેલો હોય છે. એવા એ શ્રાવક
જન વાર્તાલાપના પ્રસંગમાં પોતપોતાના પુત્રાદિકોને અથવા બીજા લોકોને
આ પ્રકારે કહીને સમજાવે-બુઝાવે છે-(અયમાડસો ! નિગંથે પાવયણે અદ્દે, અયં
પરમદ્દે, સેસે અણદ્દે) હે આયુષ્મન્ ! આ નિર્ગન્થ પ્રવચન જ મોક્ષનું કારણ
છે. માટે એજ પરમાર્થભૂત છે. તેનાથી બીજાં જે કાંઈ પ્રવચન છે તે મિથ્યા-
દષ્ટિઓ દ્વારા ઉપદેશાયેલાં પ્રવચન છે, તે, તથા ધન, ધાન્ય, પુત્ર તેમજ કલત્ર
આદિ, અનર્થનાં કારણ છે. આ વ્યક્તિઓનાં હૃદય (ઝસિયફલિહા) સ્ફટિક

સીલ-વ્યય-ગુણ-વેરમણ-પચ્ચક્કવાણ-પોસહો-વવાસેહિં ચઉદ-
સદ્દમુદ્દિદ્ધપુણ્ણમાસિણીસુ પડિપુણ્ણં પોસહં સમ્મં અણુપાલેત્તા

‘અવંગુયદુવારા’ અપાવૃત્તદ્વારા:=દાનાર્થમર્થિભ્ય ઉદ્ઘાટિતદ્વારા इत्यर्थः, ‘અવંગુય’ इति
देशीयः शब्दः; ‘ચિયત્તંતેઉરઘરપ્પવેસા’ त्यक्तान्तःपुरगृहप्रवेशाः-त्यक्तः=प्रीत्या प्रदत्तः,
અન્તઃપુરે વા ગૃહે વા પ્રવેશો યેષાં તે તથા, અતિધાર્મિકતયા સર્વત્રાનાશક્કનીયા इत्यर्थः । તે
કથંભૂતા વિહરન્તીત્યાહ-‘ચઉદસ-દ્દમુ-દ્દિદ્ધ-પુણ્ણમાસિણીસુ’ ચતુર્દશ્યષ્ટમ્યુદ્દિષ્ઠાપૌર્ણ-
માસીષુ ‘બહૂહિં’ बहुभिः, ‘સીલ-વ્યય-ગુણ-વેરમણ-પચ્ચક્કવાણ-પોસહો-વવાસેહિં’
शील-व्रत-गुण-विरमण-प्रत्याख्यान-पोषधो-पवासैः-अस्य व्याख्याऽत्रैवोत्तरार्धे त्रिषष्टितमे
सूत्रेऽवलोकनीया । चतुर्दश्यष्टम्युद्विष्टापौर्णमासीषु-इह-‘उद्विष्टा’ इत्यनेन अमावास्या गृह्यते ।

મણિ કે સમાન નિર્મલ રહા કરતા હૈ । (અવંગુયદુવારા) इनके घर के दरवाजे सदा दान-
के लिये खुले रहा करते हैं, (चियत्तं-तेउर-घर-प्पवेसा) राजा के अंतःपुर में भी इनको
आने-जाने की कोई भी रोक-टोक नहीं होती है । (बहूहिं सील-व्यय-गुण-वेरमण-
पचक्कवाण-पोसहोववासेहिं चउदसदमदुदुपुण्णमासिणीसु) ‘शील’ शब्द से सामा-
यिक, देशावकाशिक, पोषध, अतिथिसंविभाग ये चार लिये जाते हैं । ‘व्रत’ से पांच अणु-
व्रत, गुण से तीन गुणव्रत लिये जाते हैं । विरमण-मिथ्यात्व से निवृत्त होना, प्रत्याख्यान-पर्वदिनों
में निषिद्धवस्तुका त्याग करना । पोषधोपवास-(पोषं धत्ते) इस व्युत्पत्ति से धर्म की वृद्धि को
जो करता है वह पोषध कहलाता है, अर्थात् चतुर्दशी, अमावास्या, अष्टमी, पूर्णिमा, ये पोषध
कहलाते हैं; इन पर्वदिनों में आहार, शरीरसत्कार, अभ्रह्मचर्य, और सावधव्यापार इन चारों

મણિના જેવાં નિર્મળ રહ્યા કરે છે, (અવંગુયદુવારા) તેમના ઘરના દરવાજા
સદા દાન માટે ઉઘાડા રહ્યા કરે છે. (ચિયત્તંતેઉરઘરપ્પવેસા) રાજાના અંતઃ-
પુરમાં પણ તેમને આવવા-જવાની કોઈ પણ જાતની રોક-ટોક થતી નથી,
(બહૂહિં સીલ-વ્યય-ગુણ-વેરમણ-પચ્ચક્કવાણ-પોસહોવવાસેહિં ચઉદસદ્દમુદ્દિદ્ધપુણ્ણ-
માસિણીસુ) ‘શીલ’ શબ્દથી સામાયિક, દેશાવકાશિક, પોષધ, અતિથિસંવિ-
ભાગ, એ ચાર સમજવાનાં છે. ‘વ્રત’થી પાંચ અણુવ્રત, ‘ગુણ’થી ત્રણ ગુણ-
વ્રત લેવાનાં છે, વિરમણ-મિથ્યાત્વથી નિવૃત્ત થવું, પ્રત્યાખ્યાન-પર્વના દિવ-
સોમાં નિષિદ્ધ વસ્તુનો ત્યાગ કરવો. પોષધોપવાસ-(પોષં ધત્તે) આ વ્યુત્પત્તિથી
ધર્મની વૃદ્ધિને જે કરે છે તે પોષધ કહેવાય છે, અર્થાત્ ચતુર્દશી, અમા-
વાસ્યા, અષ્ટમી, પૂર્ણિમા, એ પોષધ કહેવાય છે. આ દિવસોમાં-પર્વદિવસોમાં
આહાર, શરીરસત્કાર, અબ્રહ્મચર્ય અને સાવધવ્યાપાર એ ચારેયનો ત્યાગ

સમણે નિગંથે ફાસુણ્ણજ્જેણં અસણ-પાણ-સ્વાહમ-સાહમેણં
વત્થ-પડિગ્ગહ-કંબલ-પાયપુંછણેણં ઓસહમેસજ્જેણં પાડિહારિણ
ય પીઠ-ફલગ-સેજ્જા-સંથારણં પડિલાભેમાણા વિહરંતિ, વિહ-

ચતુર્દશ્યાદિષુ તથિષુ 'પડિપુણં' પ્રતિપૂર્ણ 'પોસહં' પોષધં, 'સમ્મં' સમ્યક્ 'અણુ-
પાલેત્તા' અનુપાલ્ય 'સમણે નિગંથે' શ્રમણાન્ નિર્ગ્રન્થાન્ 'ફાસુણ્ણજ્જેણં'
પ્રાસુકૈષણીયેન, 'અસણ-પાણ-સ્વાહમ-સાહમેણં' અશન-પાન-સ્વાદ્ય-સ્વાદ્યેન, 'વત્થ-
પડિગ્ગહ-કંબલ-પાયપુંછણેણં' વસ્ત્રપતદ્ગ્રહકમ્બલપાદપ્રોચ્છનેન, તત્ર પતદ્ગ્રહઃ=પાત્રં,
પાદપ્રોચ્છનં=રજોહરણમ્, 'ઓસહમેસજ્જેણં' ઔષધમૈષજ્યેન 'પાડિહારિણ ય પીઠ-
ફલગ-સેજ્જા-સંથારણં' પ્રાતિહારિકેણ ચ પીઠફલકશય્યાસંસ્તારકેણ-તત્ર પીઠમ્=
આસનં, ફલકમ્=અવષ્ટમ્ભનફલકં, શય્યા=વસતિઃ, યદ્વા બૃહત્સંસ્તારકઃ, સંસ્તારકઃ=લઘુતરઃ,
એષાં સમાહારદ્વન્દ્વઃ, તતસ્તેન, 'પડિલાભેમાણા' પ્રતિલમ્ભયન્તઃ=દદતઃ, 'વિહરંતિ'

કા ત્યાગ કરના પોષધોપવાસ હૈ; ઇસ તરહ બારહ પ્રકાર કે શ્રાવક ધર્મ કો (સમ્મં અણુ-
પાલેત્તા) અચ્છી તરહ પાલન કરતે હૈં । (સમણે નિગંથે) શ્રમણનિર્ગ્રન્થો કો (ફાસુણ્ણ-
સણિજ્જેણં અસણ-પાણ-સ્વાહમ-સાહમેણં) પ્રાસુક-એષણીય અશન, પાન, સ્વાદ્ય તથા
સ્વાદ્ય એસે ચારોં પ્રકાર કે આહારોં સે (વત્થ-પરિગ્ગહ-કંબલ-પાયપુંછણેણં ઓસહમેસ-
જ્જેણં) એવં વસ્ત્ર, પાત્ર, કમ્બલ, રજોહરણ, ઔષધ, (પાડિહારિણ ય પીઠફલગસેજ્જા-
સંથારણં પડિલાભેમાણા વિહરંતિ) એવં પ્રાતિહારિક (પડિહારા) પીઠ (બાજોટ) ફલક
(પાટ) શય્યા (વસતિ) ઓર સંસ્તારક આદિ સે, મુનિયોં કો પ્રતિલાભિત કરતે હુએ વિચરતે
હૈં, અર્થાત્ ઉન્હેં ઇન પૂર્વોક્ત વસ્તુઓં કો આવશ્યકતાનુસાર પ્રદાન કરતે હૈં, (વિહરિત્તા ભત્તં

કરવો તે પોષધોપવાસ છે. આ રીતે બાર પ્રકારનાં શ્રાવક ધર્મને (સમ્મં
અણુપાલેત્તા) સારી રીતે પાલન કરે છે. (સમણે નિગંથે) શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોને
(ફાસુણ્ણજ્જેણં અસણ-પાણ-સ્વાહમ-સાહમેણં) પ્રાસુક-એષણીય અશન, પાન,
આદ્ય તથા સ્વાદ્ય એવા ચારેય પ્રકારના આહારથી, (વત્થ-પરિગ્ગહ-કંબલ-પાય-
પુંછણેણં ઓસહમેસજ્જેણં) તેમજ વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, ઔષધ, લેષજ,
(પાડિહારિણ ય પીઠ-ફલગ-સેજ્જા-સંથારણં પડિલાભેમાણા વિહરંતિ) તેમજ
પ્રાતિહારિક (પડિહારા) પીઠ (બાજોટ) ફલક-પાટ, શય્યા (વસતિ) અને સંસ્તાર-
ક આદિથી મુનિયોને પ્રતિલાભિત કરતા વિચરે છે, અર્થાત્ તેઓ આ ઉપર
કહેલી વસ્તુઓને આવશ્યકતા પ્રમાણે પ્રદાન કરે છે. (વિહરિત્તા ભત્તં પચ્ચક્કંતિ)

રિત્તા ભક્તં પચ્ચવર્ણંતિ, તે બહૂં ભક્તાં અણસણાણ છેદેતિ,
છેદિત્તા આલોહયપડિકંતા સમાહિપત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા
ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ, તહિં તેસિં
ગઈ, બાવીસં સાગરોવમાઈ ઠિઈ, આરાહગા, સેસં તહેવ ॥ સૂ. ૬૩ ॥

વિહરન્તિ, 'વિહરિત્તા' વિહત્ય 'ભક્તં પચ્ચવર્ણંતિ' ભક્તં પ્રત્યાખ્યાન્તિ=પરિત્યજન્તિ,
'અણસણાણ છેદેતિ' અનશનયા છિન્દન્તિ, 'છેદિત્તા' છિત્વા 'આલોહયપડિકંતા'
આલોચિતપ્રતિક્રાન્તાઃ, 'સમાહિપત્તા' સમાધિપ્રાપ્તાઃ, 'કાલમાસે' કાલમાસે 'કાલં
કિચ્ચા' કાલં કૃત્વા 'ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ કપ્પે' ઉત્કર્ષતોઽચ્યુતે કલ્પે 'દેવત્તાણ ઉવ-
વત્તારો ભવંતિ' દેવત્વેન ઉપવત્તારો ભવન્તિ । 'તહિં તેસિં ગઈ' તત્ર તેષાં ગતિઃ,
'બાવીસં સાગરોવમાઈ ઠિઈ' દ્વાવિંશતિં સાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ, 'આરાહગા' આરાધકાઃ,
'સેસં તહેવ' શેષં તથૈવ ॥ સૂ. ૬૩ ॥

પચ્ચવર્ણંતિ) પશ્ચાત્ અન્તિમ સમય મેં ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કરતે હૈં, (તે બહૂં ભક્તાં અણ-
સણાણ છેદેતિ) વે અનેક ભક્તોં કા અનશન દ્વારા છેદન કરતે હૈં, (છેદિત્તા આલોહય-
પડિકંતા સામાહિપત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) છેદન કર અપને પાપસ્થાનોં કી આલો-
ચના એવં પ્રતિક્રમણ કરકે વે સમાધિસહિત કાલ અવસર મેં કાલ કર (ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ
કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) જઘન્ય પહેલે દેવલોક ઉત્કૃષ્ટ બારહેવં દેવલોક અચ્યુ-
તકલ્પ મેં દેવપર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતે હૈં । (તહિં તેસિં ગઈ, બાવીસં સાગરોવમાઈ ઠિઈ,
આરાહગા, સેસં તહેવ) પ્રથમ દેવલોક મેં इनकी ઉત્કૃષ્ટ દો સાગરોપમ ઓર બારહેવં દેવલોક

પછી અંત સમયે ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાન કરે છે. (તે બહૂં ભક્તાં અણસણાણ છેદેતિ)
તેઓ અનેક ભક્તોનું અનશન દ્વારા છેદન કરે છે. (છેદિત્તા આલોહયપડિકંતા
સમાહિપત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) છેદન કરીને પોતાનાં પાપસ્થાનોની
આલોચના તેમજ પ્રતિક્રમણ કરીને તેઓ સમાધિ-સહિત કાલ અવસરમાં કાલ
કરીને (ઉક્કોસેણં અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) જઘન્ય પહેલા દેવ-
લોક, ઉત્કૃષ્ટ બારમા દેવલોક અચ્યુત કલ્પમાં દેવપર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે.
(તહિં તેસિં ગઈ, બાવીસં સાગરોવમાઈ ઠિઈ, આરાહગા, સેસં તહેવ) . પ્રથમ
દેવલોકમાં તેમની ઉત્કૃષ્ટ બે સાગરોપમ અને બારમા દેવલોકમાં ઉત્કૃષ્ટ

મૂલમ—સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ મણુયા
ભવંતિ, તં જહા-અણારંભા અપરિગ્ગહા ધમ્મિયા જાવ કપ્પેમાણા

ટીકા—‘ સે જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ । ‘ સે જે ઇમે ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ ’
અથ ય ઇમે ગ્રામાઽઽકર યાવત્ સન્નિવેશેષુ ‘ મણુયા ભવંતિ ’ મનુજા ભવન્તિ, ‘ તં જહા ’
તથા—‘ અણારંભા અપરિગ્ગહા ધમ્મિયા જાવ કપ્પેમાણા ’ અનારમ્ભાઃ અપરિગ્રહા
ધાર્મિકા યાવત્ કલ્પયન્તઃ, અત્ર—યાવચ્છબ્દેન ‘ ધમ્માણુયા, ધમ્મિટ્ઠા, ધમ્મક્ખવાઈ, ધમ્મ-
પ્પલોઈ, ધમ્મપલજ્જણા, ધમ્મસમુદાયારા, ધમ્મેણં ચેવ વિત્તિં ’ ધર્માણા ધર્મિષ્ઠા
ધર્માલ્યાયિનો ધર્મપ્રલોકિનો ધર્મપ્રરજ્ઞના ધર્મસમુદાચારા ધર્મણૈવ વૃત્તિમ્—ઈતિ પાઠો

મેં ઉત્કૃષ્ટ બાઈસ સાગરોપમ સ્થિતિ કહી ગયી છે । અવશિષ્ટ પહેલે કે સમાન સમજના
ચાહિયે ॥ સૂ. ૬૩ ॥

‘ સે જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ ।

(સે જે ઇમે) જો યે (ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ) ગ્રામ આકર આદિ નિવાસ
સ્થાનોં સે લેકર સન્નિવેશ તક કે નિવાસસ્થાનોં મેં (મણુયા ભવંતિ) મનુષ્ય નિવાસ કરતે
હેં ઓર ઉનમેં જો કઈ એક મનુષ્ય (સાહુ) સાધુ હોતે હેં વે (અણારંભા) આરંભ સે રહિત
હોતે હેં, (અપરિગ્ગહા) પરિગ્રહવર્જિત હોતે હેં, (ધમ્મિયા) ધાર્મિક હોતે હેં, (જાવ ધમ્મે-
ણેવ વિત્તિં કપ્પેમાણા) એવં નિર્દોષ ભિક્ષા સે અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરતે હેં ।
યહાં ‘ જાવ ’ શબ્દ સે “ ધમ્માણુયા, ધમ્મિટ્ઠા, ધમ્મક્ખવાઈ, ધમ્મપ્પલોઈ, ધમ્મપલ-
જ્જણા, ધમ્મસમુદાયારા, ધમ્મેણં ચેવ વિત્તિં ” ઇસ પાઠ કા ગ્રહણ હુઆ હેં । ઇસકી

બાવીસ સાગરોપમ સ્થિતિ કહેવાય છે. બાકી બધું પહેલાં પ્રમાણે સમજવું
ભેઈએ. (સૂ. ૬૩)

‘ સે જે ઇમે ’ ઇત્યાદિ.

(સે જે ઇમે) તેઓ જે (ગામાગર જાવ સણિવેસેસુ) ગામ આકર આદિ
નિવાસસ્થાનોથી લઈને સન્નિવેશ સુધીનાં નિવાસસ્થાનોમાં (મણુયા ભવંતિ)
મનુષ્ય નિવાસ કરે છે અને તેમાં જે કેટલાએક મનુષ્ય (સાહુ) સાધુ હોય
છે તેઓ (અણારંભા) આરંભથી રહિત હોય છે, (અપ્પરિગ્ગહા) પરિગ્રહવર્જિત
હોય છે, (ધમ્મિયા) ધાર્મિક હોય છે. (જાવ ધમ્મેણેવ વિત્તિં કપ્પેમાણા) તેમજ
નિર્દોષ-ભિક્ષાવડે પોતાની સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ કરે છે. અહીં ‘ જાવ ’
શબ્દથી “ ધમ્માણુયા, ધમ્મિટ્ઠા, ધમ્મક્ખવાઈ, ધમ્મપ્પલોઈ, ધમ્મપલજ્જણા, ધમ્મસમુ-
દાયારા, ધમ્મેણં ચેવ વિત્તિં ” આ પાઠને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે. આની વ્યાખ્યા

સુસીલા સુવ્વયા સુપડિયાણંદા સાહુ સવ્વાઓ પાણાઙ્ગાયાઓ
પડિવિરયા જાવ સવ્વાઓ પરિગ્ગહાઓ પડિવિરયા, સવ્વાઓ
કોહાઓ માણાઓ માયાઓ લોહાઓ જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લાઓ

ऽનુસન્ધેયઃ । सर्वेषां व्याख्याऽत्रैव द्विषष्टितमे सूत्रे गताः । नवरं—धर्मेणैव वृत्तिं कल्प-
यन्तः—निरवद्यभिक्षया संयमयात्रारूपां वृत्तिं निर्वहन्तः इत्यर्थो बोध्यः । शेषपदानामपि
व्याख्या तस्मिन्नेव सूत्रे कृताऽस्माभिः । ‘सुसीला सुव्वया’ सुशीलाः सुव्रताः ‘सुपडिયાणंदा’
सुप्रत्यानन्दाः—सुष्ठु प्रत्यानन्दश्चित्ताह्लादो येषां ते तथा, आज्ञाविचयधर्मध्यानानन्दयुक्ताः
‘साहू’ साधवः, ‘सव्वाओ पाणाङ्गयाओ पडिविरया जाव सव्वाओ परिग्हहाओ
पडिविरया’ सर्वस्मात् प्राणातिपातात्प्रतिविरता यावत्सर्वस्मात् परिग्रहात्प्रतिविरताः,
‘सव्वाओ कोहाओ माणाओ लोभाओ जाव मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया’
सर्वस्मात् क्रोधान्मानान्मायाया लोभाद् यावन्मिथ्यादर्शनशल्यात्प्रतिविरताः, ‘सव्वाओ आरं-

વ્યાખ્યા इसी उत्तरार्ध के बासठवें (६२) सूत्र में की जा चुकी है । (सुसीला) ये सुशील
तथा (सुव्वया) निर्दोष रीति से व्रतों की आराधना करने वाले होते हैं । (सुपडिયાणंदा)
आज्ञाविचयनामक धर्मध्यान के ध्याने से इनका चित्त सदा अह्लादयुक्त बना रहता है । ये सब
(सव्वाओ पाणाङ्गयाओ पडिविरया) सर्व प्रकार के प्राणातिपात से विरक्त रहते हैं,
(जाव सव्वाओ परिग्हहाओ पडिविरया) यावत् समस्त परिग्रह से विरक्त रहा करते हैं,
(सव्वाओ कोहाओ) समस्त प्रकार के क्रोध से, (माणो) मान से, (मायाओ) माया
से, (लोहाओ) लोभ से, (जाव मिच्छादंसणसल्लाओ) यावत् मिथ्यादर्शन शल्य से,
(पडिविरया) विरक्त रहा करते हैं, (सव्वाओ आरंभससमारंभाओ पडिविरया) समस्त

આ આગમના ઉત્તરાર્ધના બાસઠ (૬૨)માં સૂત્રમાં કરવામાં આવી છે. (સુસીલા)
સુશીલ તથા (સુવ્વયા) નિર્દોષ રીતિથી વ્રતોની આરાધના કરવાવાળા હોય
છે. (સુપડિયાણંદા) આજ્ઞાવિચય નામના ધર્મધ્યાન ધ્યાવવાથી તેમનાં ચિત્ત સદા
આનંદી બનેલાં રહે છે. તે બધા (સવ્વાઓ પાણાઙ્ગાયાઓ પડિવિરયા) સર્વ
પ્રકારના પ્રાણાતિપાતથી વિરક્ત રહે છે. (જાવ સવ્વાઓ પરિગ્ગહાઓ પડિવિરયા)
તેમજ સમસ્ત પરિગ્રહથી વિરક્ત રહ્યા કરે છે. (સવ્વાઓ કોહાઓ) સમસ્ત
પ્રકારના ક્રોધથી, (માણાઓ) માનથી, (માયાઓ) માયાથી, (લોહાઓ) લોભથી,
(જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લાઓ) તેમજ મિથ્યાદર્શન શલ્યથી (પડિવિરયા) વિરક્ત
રહ્યા કરે છે. (સવ્વાઓ આરંભ-સમારંભાઓ પડિવિરયા) સમસ્ત આરંભસમા-

પડિવિરયા, સઘ્વાઓ આરંભસમારંભાઓ પડિવિરયા, સઘ્વાઓ
કરણકારાવણાઓ પડિવિરયા, સઘ્વાઓ પયણપયાવણાઓ પડિ-
વિરયા, સઘ્વાઓ કોટ્ટણ-પિટ્ટણ-તજ્જણ-તાલણ-વહ-બંધ-
કિલેસાઓ પડિવિરયા, સઘ્વાઓ ણ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલે-
વણ-સદ્-ફરિસ-રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ પડિવિરયા,

મસમારંભાઓ પડિવિરયા ' સર્વસ્માદારમ્ભસમારમ્ભાત્પ્રતિવિરતાઃ ' સઘ્વાઓ કરણકારા-
વણાઓ પડિવિરયા ' સર્વસ્માત્કરણકારણાત્પ્રતિવિરતાઃ, ' સઘ્વાઓ પયણપયાવણાઓ
પડિવિરયા ' સર્વસ્માત્પચનપાચનાત્પ્રતિવિરતાઃ, ' સઘ્વાઓ કુટ્ટણ-પિટ્ટણ-તજ્જણ-
તાલણ-વહ-બંધ-પરિકિલેસાઓ પડિવિરયા ' સર્વસ્માત્કુટ્ટન-પિટ્ટન-તર્જન-તાડન-
વધ-બંધ-પરિકલેશાત્પ્રતિવિરતાઃ, ' સઘ્વાઓ ણ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલેવણ-સદ્-
ફરિસ-રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ પડિવિરયા ' સર્વસ્માત્ સ્નાન-મર્દન-વર્ણક-
વિલેપન-શબ્દ-સ્પર્શ-રસ-રૂપ-ગંધ-માલ્યાઽ-લઙ્કારાત્પ્રતિવિરતાઃ, તથા ' જે યાવણે

આરંભસમારંભ સે પ્રતિવિરત હોતે હૈં, (સઘ્વાઓ કરણકારાવણાઓ પડિવિરયા) સમસ્ત
કરણ એવં કરાવણસે-કરને-કરાને સે વિરક્ત હોતે હૈં, (સઘ્વાઓ પયણપયાવણાઓ પડિ-
વિરયા) સર્વ પ્રકાર કી પચન એવં પાચન ક્રિયા સે પ્રતિવિરત હોતે હૈં, (સઘ્વાઓ કોટ્ટણ-
પિટ્ટણ-તજ્જણ-તાલણ-વહ-બંધ-પરિકિલેસાઓ પડિવિરયા) સમસ્ત પ્રકાર કે કુટ્ટણ,
પિટ્ટણ, તર્જન, તાડન, વધ, બંધ, પરિકલેશ સે વિરક્ત હોતે હૈં, (સઘ્વાઓ ણ્હાણ-મદ્દણ-
વણ્ણગ-વિલેવણ-સદ્-ફરિસ-રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લંકારાઓ પડિવિરયા) સંપૂર્ણ
સ્નાન, મર્દન, વર્ણક, વિલેપન, શબ્દ, રૂપ, ગંધ, રસ, સ્પર્શ, માલ્ય એવં અલંકારો સે રહિત

રંભથી પ્રતિવિરક્ત હોય છે. (સઘ્વાઓ કરણકારાવણાઓ પડિવિરયા) સમસ્ત
કરણુ તેમજ કરાવણથી-કરવ!-કરાવવાથી વિરક્ત હોય છે. (સઘ્વાઓ પયણપયા-
વણાઓ પડિવિરયા) સર્વપ્રકારની પચન તેમજ પાચન ક્રિયાથી વિરક્ત હોય
છે. (સઘ્વાઓ કોટ્ટણ-પિટ્ટણ-તજ્જણ-તાલણ-વહ-બંધ-પરિકિલેસાઓ પડિવિરયા)
સમસ્ત પ્રકારના કુટ્ટણ, પિટ્ટણ, તર્જન, તાડન, વધ, બંધ, પરિકલેશથી વિરક્ત હોય
છે. (સઘ્વાઓ ણ્હાણ-મદ્દણ-વણ્ણગ-વિલેવણ-સદ્-ફરિસ-રસ-રૂવ-ગંધ-મલ્લા-લં-
કારાઓ પડિવિરયા) સંપૂર્ણ સ્નાન, મર્દન, વર્ણક, વિલેપન, શબ્દ, સ્પર્શ, રસ,

જે યાવણે તહપ્પગારા સાવજ્જજોગોવહિયા કમ્મંતા પરપાણપરિ-
યાવણકરા કજ્જંતિ તઓ વિ પડિવિરયા જાવજ્જીવાણ ॥ સૂ. ૬૪ ॥

મૂલમ્—સે જહાનામણ અણગારા ભવંતિ—ઈરિયા-
સમિયા ભાસાસમિયા જાવ ઇણમેવ નિગ્ગંથં પાવયણં પુરઓ
કાઝં વિહરંતિ ॥ સૂ. ૬૫ ॥

તહપ્પગારા ' યે યાવન્તસ્તથાપ્રકારાઃ, ' સાવજ્જજોગોવહિયા ' સાવધયોગૌપધિકાઃ—સાવધ-
યોગાઃ=સાવધયોગયુક્તાશ્ચ તે ઔપધિકાઃ=માયાપ્રયોજનાશ્ચેતિ તથા, ' પરપાણપરિયાવણકરા '
પરપ્રાણપરિતાપનકરાઃ, ' કમ્મંતા ' કર્મશાઃ=વ્યાપારાંશાઃ ' કજ્જંતિ ' ક્રિયન્તે ' તઓ
વિ પડિવિરયા જાવજ્જીવાણ ' તતોઽપિ પ્રતિવિરતા યાવજ્જીવમ્ ॥ સૂ. ૬૪ ॥

ટીકા—' સે જહાનામણ ' इत्यादि। ' સે જહાનામણ અણગારા ભવંતિ ' અથ
યથાનામ કેચિત્ અનગારા ભવન્તિ; કીદૃશાસ્તેઽનગારાઃ : इत्याह ' ईरियासमिया ' ईर्यास-

હોતે હૈં, (જે યાવણે તહપ્પગારા સાવજ્જજોગોવહિયા કમ્મંતા પરપાણપરિયાવણકરા
કજ્જંતિ તઓ વિ પડિવિરયા જાવજ્જીવાણ) તથા ઇસી પ્રકાર કે ઓર મી જો સાવધ-
યોગવાલે માયાકષાયજનિત કાર્ય હૈં કિ જિનમેં પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કો પરિતાપ જન્ય કષ્ટ મોગના
પડતા હૈં ઊન સબ સે યે પ્રતિવિરત હોતે હૈં ॥ સૂ. ૬૪ ॥

‘ સે જહાનામણ ’ इत्यादि ।

(સે જહાનામણ અણગારા ભવંતિ) યે જો અનગાર હોતે હૈં, વે (ઈરિયાસમિયા
ભાસાસમિયા જાવ ઇણમેવ નિગ્ગંથં પાવયણં પુરઓ કાઝં વિહરંતિ) ઈર્યાસમિતિ, ભાષા-

રૂપ, ગંધ, માણ તેમજ અલંકારોથી રહિત હોય છે. (જે યાવણે તહપ્પગારા
સાવજ્જજોગોવહિયા કમ્મંતા પર-પાણ-પરિયાવણ-કરા કજ્જંતિ તઓ વિ પડિવિરયા
જાવજ્જીવાણ) તથા એ પ્રકારનાં બીજાં પણ જે સાવધયોગવાળાં માયાકષાયજનિત
કાર્ય છે કે જેમાં પ્રાણિયોના પ્રાણોને પરિતાપજનિત કષ્ટ ભોગવવા પડે છે,
તેવાં બધાં કાર્યોથી તેઓ વિરહત હોય છે. (સૂ. ૬૪)

‘ સે જહાનામણ ’ इत्यादि.

(સે જહાનામણ અણગારા ભવંતિ) આ જે અનગાર હોય છે, તેઓ (ઈરિયાસમિયા
ભાસાસમિયા જાવ ઇણમેવ નિગ્ગંથં પાવયણં પુરઓ કાઝં વિહરંતિ) ઈર્યાસમિતિ,

મૂલમ્—તેસિ ણં ભગવંતાણં ઇણં વિહારેણં વિહરમા-
ણાણં અત્યેગઇયાણં અણંતે જાવ કેવલવરનાણદંસણે સમુપ્પજ્જઇ ।
તે બહૂઇં વાસાઇં કેવલિપરિયાગં પાઉણંતિ, પાઉણિત્તા ભત્તં પચ્ચ-

મિતાઃ=ગમનાગમનાદિષુ સમિતિયુક્તાઃ ‘ભાસાસમિયા’ ભાષાસમિતાઃ સન્તઃ, યાવચ્છબ્દાદ્
ગુપ્તિગુપ્તાઃ इति दृश्यम्; ‘ઇણમેવ’ इदमेव ‘णिग्गंथं पावयणं’ નૈર્ગ્રન્થં પ્રવચનં ‘પુરઓ-
કાઉં’ પુરસ્કૃત્ય=પ્રધાનીકૃત્ય ‘વિહરંતિ’ વિહરન્તિ ॥ સૂ. ૬૫ ॥

ટીકા—‘તેસિ ણં’ ઇત્યાદિ । ‘તેસિ ણં ભગવંતાણં’ તેષાં સ્વલુ ભગવ-
તામ્=અનગારભગવતામ્ ‘ઇણં’ એતેન પૂર્વોક્તેન ‘વિહારેણં વિહરમાણાણં’ વિહારેણ
વિહરતામ્ ‘અત્યેગઇયાણં’ અસ્ત્યેકેષામ્, ‘અણંતે’ અનન્તમ્=અન્તરહિતં ‘જાવ’ યાવત્
‘કેવલવરનાણદંસણે’ કેવલવરજ્ઞાનદર્શનં ‘સમુપ્પજ્જઇ’ સમુત્પદ્યતે=અચિરેણ પ્રાદુર્ભવતિ ।
‘તે બહૂઇં વાસાઇં’ તે અનગારા ભગવન્તો બહૂનિ વર્ષાણિ ‘કેવલિપરિયાગં’ કેવલિપર્યાયં

સમિતિ આદિ સમિતિયોં કો તથા ત્રિણ ગુપ્તિયોં કો પાલન કરતે હૈં । એવં ઇન સમસ્ત ક્રિયા-
સ્વરૂપ જો નિર્ગ્રન્થપ્રવચન હૈ ઉસકે અનુસાર હી અપની સમસ્ત પ્રવૃત્તિ ચલાતે હૈં ॥ સૂ. ૬૫ ॥

‘તેસિ ણં ભગવંતાણં’ ઇત્યાદિ ।

(તેસિ ણં ભગવંતાણં ઇણં વિહારેણં વિહરમાણાણં) ઇસ પ્રકાર કે ઇન
અનગાર ભગવન્તોં મેં જો નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કો આગે કરકે વિચરતે હૈં, (અત્યેગઇયાણં) ઊન
મેં સે કિતનેક અનગાર ભગવન્તોં કો (અણંતે જાવ કેવલવરનાણદંસણે સમુપ્પજ્જઇ)
અનંત કેવલજ્ઞાન એવં અનંત કેવલદર્શન ઉત્પન્ન હોતા હૈ । (તે બહૂઇં વાસાઇં કેવલિપરિ-
યાગં પાઉણંતિ) વે ઇસી પર્યાય મેં બહુત વર્ષોં તક ઇસ પૃથ્વીમંડલ કો પાવન કરતે હૈં,

ભાષાસમિતિ આદિ સમિતિઓનું તથા ત્રણ ગુપ્તિઓનું પાલન કરે છે.
તેમજ સમસ્ત ક્રિયાસ્વરૂપ જે નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન છે તેને અનુસરીને જ પોતાની
સમસ્ત પ્રવૃત્તિઓ ચલાવે છે. (સૂ. ૬૫)

‘તેસિ ણં ભગવંતાણં’ ઇત્યાદિ.

(તેસિ ણં ભગવંતાણં ઇણં વિહારેણં વિહરમાણાણં) આ પ્રકારના આ
અનગાર ભગવાનોમાં જે નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનને મુખ્ય કરીને વિચરે છે, (અત્યે-
ગઇયાણં) તેમાંથી કેટલાક અનગાર ભગવાનોને (અણંતે જાવ કેવલ-વર-નાણ-
દંસણે સમુપ્પજ્જઇ) અનંત કેવલજ્ઞાન તેમજ અનંત કેવલદર્શન ઉત્પન્ન થાય
છે. (તે બહૂઇં વાસાઇં કેવલિપરિયાગં પાઉણંતિ) તેઓ આ જ પર્યાયમાં ઘણું

વચ્ચંતિ, પચ્ચક્કિવત્તા બહૂં ભત્તાં અણસણાણ છેદંતિ, છેદિત્તા જસ્સટ્ટાણ કીરડ નગ્ગભાવે જાવ અંતં કરંતિ ॥ સૂ. ૬૬ ॥

મૂલમ—જેસિં પિ ય ણં એગ્ગિયાણં ણો કેવલવરનાણ-
દંસણે સમુપ્પજ્જઈ તે બહૂં વાસાં છુત્તમત્થપરિયાગં પાઉણંતિ,

‘પાઉણંતિ’ પાલયન્તિ, ‘પાઉણિત્તા’ પાલયિત્વા, ‘ભત્તં પચ્ચક્કિવત્તિ’ ભત્તં પ્રત્યા-
લ્યાન્તિ, ‘ભત્તં પચ્ચક્કિવત્તા’ ભત્તં પ્રત્યાલ્યાય ‘બહૂં’ બહૂં ‘ભત્તાં અણસણાણ’
ભક્તાનિ અનશનયા ‘છેદંતિ’ છિન્દન્તિ, ‘છેદિત્તા’ છિત્વા ‘જસ્સટ્ટાણ’ યસ્મૈ અર્થાય
‘કીરડ’ ક્રિયતે ‘નગ્ગભાવો’ નગ્ગભાવઃ=આકિચ્ચન્યં ક્રિયતે इत्यन्वयः, ‘જાવ અંતં’
યાવત્—સર્વદુઃખનામન્તં ‘કરંતિ’ કુર્વન્તિ ॥ સૂ. ૬૬ ॥

‘જેસિં પિ ય ણં’ इत्यादि । ‘જેસિં પિ ય ણં એગ્ગિયાણં ણો કેવલવર-
નાણદંસણે સમુપ્પજ્જઈ’ યેષામપિ ચ સ્વલુ એકેષાં નો કેવલવરજ્ઞાનદર્શનં સમુત્પદ્યતે=

(પાઉણિત્તા ભત્તં પચ્ચક્કિવત્તિ) ઇસ પર્યાય કો પ્રાપ્ત કર વે ભક્ત કા પ્રત્યાલ્યાન કર દેતે
હૈ । (પચ્ચક્કિવત્તા બહૂં ભત્તાં અણસણાણ છેદંતિ) પ્રત્યાલ્યાન કરકે અનેક ભક્તો કા
અનશન દ્વારા છેદન કર દેતે હૈ । (છેદિત્તા જસ્સટ્ટાણ કીરડ નગ્ગભાવે જાવ અંતં
કરંતિ) છેદન કરકે જિસ પ્રયોજન કે લિયે નગ્ગભાવ ઉન્હોને ધારણ કિયા થા વે ઉસ પ્રયો-
જન કો પ્રાપ્ત કરતે હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત દુઃખો કા અંત કરતે હૈ ॥ સૂ. ૬૬ ॥

‘જેસિં પિ ય ણં’ इत्यादि ।

(જેસિં પિ ય ણં) ઇન સાધુઓં મેં સે મી (એગ્ગિયાણં) જિન કિન્હીં સાધુ મુનિ-
રાજોં કો (ણો કેવલવરનાણદંસણે સમુપ્પજ્જઈ) નિર્મલ કેવલજ્ઞાન એવં કેવલ દર્શન કા

વરસો સુધી આ પૃથ્વીમંડળને પાવન કરે છે. (પાઉણિત્તા ભત્તં પચ્ચક્કિવત્તિ)
આ પર્યાયને પ્રાપ્ત કરીને ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કરી દે છે. (પચ્ચક્કિવત્તા બહૂં
ભત્તાં અણસણાણ છેદંતિ) પ્રત્યાખ્યાન કરીને અનેક ભક્તોનું અનશન દ્વારા
છેદન કરે છે. (છેદિત્તા જસ્સટ્ટાણ કીરડ નગ્ગભાવે જાવ અંતં કરંતિ) છેદન
કરીને જે પ્રયોજન માટે નગ્ગભાવ તેમણે ધારણ કરેલો હતો તે પ્રયોજનને
પ્રાપ્ત કરે છે, અર્થાત્ સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરે છે. (સૂ. ૬૬)

‘જેસિં પિ ય ણં’ इत्यादि.

(જેસિં પિ ય ણં) આ સાધુઓમાંથી પણ (એગ્ગિયાણં) જે કોઈ સાધુ મુનિ-
રાજોને (ણો કેવલવરનાણદંસણે સમુપ્પજ્જઈ) નિર્મળ કેવલજ્ઞાન તેમજ કેવળ

प्रादुर्भवति, 'ते बहूइं वासाइं' तेऽनगारा भगवन्तो बहूनि वर्षाणि 'छुम-
त्थपरियायं पाउणंति' छद्मस्थपर्यायं पालयन्ति=छद्मस्थावस्थां पालयन्ति, 'पाउणित्ता'
पालयित्वा 'आवाहे' आवाधायां=रोगादिबाधायाम् 'उप्पण्णे वा अणुप्पण्णे वा' उत्प-
न्नायां वा अनुत्पन्नायां वा सत्यां 'भत्तं पच्चक्खंति' भक्तं प्रत्याख्यान्ति, 'ते बहूइं
भत्ताइं अणसणाए छेदेति' ते बहूनि भक्तानि अनशनया छिन्दन्ति, 'छेदित्ता' छित्वा
'जस्सट्ठाए' यस्मै अर्थाय 'कीरइ नग्गभावे' क्रियते नग्नभावः—अकिञ्चन्यं क्रियते,
'जाव तमट्ठुमाराहित्ता' यावत् तमर्थमाराध्य, 'चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं' चरमैरु-
च्छ्वासनिःश्वासैः 'अणंतं' अनन्तम्=अन्तरहितम्, 'अणुत्तरं' अनुत्तरम्=उत्कृष्टम्,

लाभ शीघ्र नहीं होता है, (ते बहूइं वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता) वे अनगर भगवान् छद्मस्थ पर्याय को ही बहुत वर्षों तक पालते रहते हैं, (पाउणित्ता) और उस पर्याय के पालन करते २ भी यदि (आवाहे उप्पण्णे वा अणुप्पण्णे वा) किसी प्रकार की चाहे उन्हें रोगादिक बाधा उत्पन्न हो, चाहे न भी हो तो भी वे, (भत्तं पच्चक्खंति) भक्तप्रत्याख्यान करते हैं । (ते बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदंति) वे अनेक भक्तों का अनशन द्वारा छेदन करते हैं, (छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे जाव तमट्टमाराहित्ता) छेदन करके उन्होंने जिस की प्राप्ति के लिये नग्नभाव धारण किया था, उस प्रयोजन की सिद्धि प्राप्त कर (चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं अणंतं अणुत्तरं णिव्वाघायं निरावरणं कसिणं पडिपुण्णं

દર્શનનો લાભ જલદી મળતો નથી, (તે બહૂં વાસાં છઝમત્થપરિયાગં પાડ-
ગંતિ) તે અનગાર લગવાન છઝસ્થપર્યાયનું જ ઘણું વરસો સુધી પાલન
કરે છે, (પાડણિત્તા) અને તે પર્યાયનું પાલન કરતાં કરતાં પણ જો (આવાહે
ઉપ્પણે વા અણુપ્પણે વા) કોઈ પ્રકારની રોગ આદિની પીડા ઉત્પન્ન થાય
કે ચાહે ન પણ થાય તો પણ તેઓ (મત્તં પચ્ચક્કલંતિ) લકતપ્રત્યાખ્યાન
કરે છે. (તે બહૂં મત્તાં અણસણાણ છેદંતિ) તેઓ અનેક લકતોનું અનશન-
દ્વારા છેદન કરે છે. (છેદિત્તા જસ્સટ્ટાણ કીરિદ્ધ નગ્ગભાવે જાવ તમટ્ટમારાહિત્તા)
છેદન કરીને તેઓએ જેની પ્રાપ્તિ માટે નગ્ગભાવ ધારણ કર્યો હતો તે પ્રયો-
જનની સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને (ચરમેહિં ઝસાસણીસાસેહિં અણંતં અણુત્તરં ણિવ્વા-

અણંતં અણુત્તરં નિવ્વાધાયં નિરાવરણં કસિણં પઢિપુણં કેવલ-
વરનાણદંસણં ઉપ્પાદેતિ, તઓ પચ્છા સિજ્ઞિહિતિ જાવ અંતં
કરેહિતિ ॥ સૂ. ૬૭ ॥

મૂલમ્—એગચ્ચા પુણ એમે ભયંતારો પુવ્વકમ્માવસેસેણં

‘નિવ્વાધાયં’ નિવ્યાધાતં=સૂક્ષ્મવ્યવહિતવિપ્રકૃષ્ટવિષયેષુ અપ્રતિહતં, ‘નિરાવરણં’ નિરા-
વરણં=કર્માવરણરહિતં ‘કસિણં’ કૃત્સ્નં=સકલં, ‘પઢિપુણં’ પ્રતિપૂર્ણં=સંપૂર્ણં, ‘કેવલ-
વરનાણદંસણં’ કેવલવરજ્ઞાનદર્શનમ્ ‘ઉપ્પાદેતિ’ ઉત્પાદયન્તિ, ‘તઓ પચ્છા સિજ્ઞિ-
હિતિ’ તતઃ પશ્ચાત્ સેત્સ્યન્તિ, ‘જાવ અંતં’ યાવત્ અન્તં=સર્વદુઃસ્વાનામન્તં ‘કરે-
હિતિ’ કરિષ્યન્તિ ॥ સૂ. ૬૭ ॥

‘એગચ્ચા’ इत्यादि । ‘एगच्चा’ एकाऽर्चाः—एका=असाधारणगुणत्वात् अद्वितीया—

કેવલવરનાણદંસણં ઉપ્પાદેતિ) ચરમ ઉચ્છ્વાસ—નિઃશ્વાસોં મેં અન્તરહિત, અનુપમ, નિવ્યા-
ધાત—સૂક્ષ્મ, વ્યવહિત એવં વિપ્રકૃષ્ટ વિષય કો હસ્તામલકવત્ જાનને કે લિયે સમર્થ, નિરા-
વરણ—કર્માવરણરહિત, કૃત્સ્ન—સકલ, એવં પ્રતિપૂર્ણ—સંપૂર્ણ કેવલજ્ઞાન એવં કેવલદર્શન કો ઉત્પત્તિ
સે વિશિષ્ટ હો જાતે હૈં । (તઓ પચ્છા સિજ્ઞિહિતિ જાવ અંતં કરેહિતિ) ઇસકે પશ્ચાત્
વે સિદ્ધ હો જાતે હૈં ઓર ઉસ અવસ્થા મેં ડનકે સમસ્ત દુઃખોં કા એવં ડનકે કારણભૂત
કર્મોં કા સર્વથા અભાવ હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૬૭ ॥

‘એગચ્ચા પુણ’ इत्यादि ।

इन अनगार भगवन्तो के बीच (एगे) कितनेक ऐसे भी अनगार भगवान होते

ધાયં નિરાવરણં કસિણં પઢિપુણં કેવલવરનાણદંસણં ઉપ્પાદેતિ) ચરમ ઉચ્છ્વાસ—
નિઃશ્વાસોમાં અંતરહિત, અનુપમ, નિવ્યાધાત—સૂક્ષ્મ. વ્યવહિત તેમજ વિપ્ર-
કૃષ્ટ વિષયને હસ્તામલકવત્ બાણુવા માટે સમર્થ, નિરાવરણ—કર્માવરણરહિત,
કૃત્સ્ન—સકલ, તેમજ પરિપૂર્ણ—સંપૂર્ણ કે વજ્ઞાન તેમજ કેવલદર્શનની ઉત્પત્તિથી
વિશિષ્ટ થઈ બાય છે. (તઓ પચ્છા સિજ્ઞિહિતિ જાવ અંતં કરેહિતિ) ત્યાર
પછી તેઓ સિદ્ધ થઈ બાય છે, અને તે અવસ્થામાં તેમનાં સમસ્ત દુઃખોનો
તેમજ તેમનાં કારણભૂત કર્મોનો સર્વથા અભાવ થઈ બાય છે. (સૂ. ૬૭)

‘એગચ્ચા પુણ’ इत्यादि.

आ अनगार भगवन्तोनी वयमां (एगे) केटलाक ओवा भणु अनगार

કાલમાસે કાલં કિચ્ચા, ઉક્કોસેણં સવ્વટ્ઠસિદ્ધે મહાવિમાણે
દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ, તર્હિં તેસિં ગર્હિ, તેત્તીસં સાગરોવમાઈં
ઠિઈ, આરાહગા, સેસં તં ચેવ ॥ સૂ. ૬૮ ॥

મનુજભવભાવિની વા અર્ચા=તનુર્યેષાં ત એકાર્ચાઃ ‘પુણ’ પુનઃ, અત્ર પુનઃશબ્દ ઉક્તાર્થપેક્ષયા
વૈલક્ષણ્યદ્યોતનાર્થઃ, ‘એગે’ એકે-અન્યે તુ ‘ભયંતારો’ ભક્તારઃ=સંયમસેવિનઃ, ‘ભયંતારો’ इत्य-
ત્રાનુસ્વાર આર્ષ્વાત્ ‘પુવ્વકમ્માવસેસેણં’ પૂર્વકર્માવશેષેણ પૂર્વકૃતકર્મણામવશેષેણ ‘કાલમાસે
કાલં કિચ્ચા’ કાલમાસે કાલં કૃત્વા-‘ઉક્કોસેણં સવ્વટ્ઠસિદ્ધે મહાવિમાણે’ ઉત્કર્ષેણ
સર્વાર્થસિદ્ધે મહાવિમાણે ‘દેવત્તાણ’ દેવત્વેન ‘ઉવવત્તારો ભવંતિ’ ઉપવત્તારો ભવન્તિ=ઉત્પદ્યન્તે,
‘તર્હિં તેસિં ગર્હિ તેત્તીસં સાગરોવમાઈં ઠિઈ’ તત્ર તેષાં ગતિઃ, ત્રયલ્લિંશત્સાગરોપમાનિ
સ્થિતિઃ । ‘આરાહગા’ આરાધકાઃ=પરલોકસ્યાઽઽરાધકાઃ, ‘સેસં તં ચેવ’ શેષં તદેવ ॥ સૂ. ૬૮ ॥

હૈં કિ જિન્હેં ઉસી ભવ સે કેવલજ્ઞાન એવં કેવલદર્શન કા લાભ નહીં હોતા હૈં તો એસે વે
અનગાર ભગવાન્ (એગચ્ચા) એકભવાવતારી હોતે હૈં । યે (ભયંતારો) સંયમ કો આરાધના
કરતે ૨ હી (પુવ્વકમ્માવસેસેણં) પૂર્વકર્મ કે અવશિષ્ટ હોને કે કારણ (કાલમાસે
કાલં કિચ્ચા). કાલ અવસર મેં કાલ કર (ઉક્કોસેણં) ઉત્કર્ષ સે (સવ્વટ્ઠસિદ્ધે મહાવિમાણે
દેવત્તાણ ઉવવત્તારો ભવંતિ) સર્વાર્થસિદ્ધ નામકે મહાવિમાન મેં દેવપર્યાય સે ઉત્પન્ન હો
જાતે હૈં । (તર્હિં તેસિં ગર્હિ, ઠિઈ તેત્તીસં સાગરોવમાઈં) વહીં પર ઉનકો ગતિ ઓર
સ્થિતિ હોતી હૈં । ઉનકો સ્થિતિ વહીં પર તેતીસ સાગર પ્રમાણ હૈં । (આરાહગા સેસં તં
ચેવ) યે નિયમ સે પરલોક કે આરાધક હોતે હૈં । અવશિષ્ટ પૂર્વવત્ સમજના ચાહિયે ॥
સૂ. ૬૮ ॥

ભગવાન હોય છે કે જેમને તેજ ભવમાં કેવળજ્ઞાન તેમજ કેવળદર્શનનો
લાભ મળતો નથી તો એવા તે અનગાર ભગવાન (એગચ્ચા) એકભવાવતારી
હોય છે. તેઓ (ભયંતારો) સંયમની આરાધના કરતાં કરતાં જ (પુવ્વકમ્માવ-
સેસેણં) પૂર્વકર્મના બાકી રહેવાનાં કારણે (કાલમાસે કાલં કિચ્ચા) કાલ-અવ-
સરે કાલ કરીને (ઉક્કોસેણં) ઉત્કર્ષ વડે (સવ્વટ્ઠસિદ્ધે મહાવિમાણે દેવત્તાણ ઉવવ-
ત્તારો ભવંતિ) સર્વાર્થસિદ્ધ નામના મહાવિમાનમાં દેવપર્યાયી ઉત્પન્ન થાય છે.
ત્યાં તેમની ગતિ અને સ્થિતિ હોય છે. તેમની ત્યાં સ્થિતિ તેત્રીસ સાગર
પ્રમાણ છે. (આરાહગા સેસં તં ચેવ) તેઓ નિયમથી પરલોકના આરાધક હોય
છે, બાકી બધું અગાઉ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ. (સૂ. ૬૮)

મૂલમ—સે જે રમે ગમાગર જાવ સણિવેસેસુ મણુયા
ભવંતિ, તં જહા—સવ્વકામવિરયા સવ્વરાગવિરયા સવ્વસંગા-
તીતા સવ્વસિણેહાઙ્કંતા અક્કોહા નિક્કોહા સ્વીણક્કોહા એવં માણ-

ટીકા—‘સે જે રમે’ ર્યાદિ । ‘સે જે રમે ગમાગર જાવ સણિવેસેસુ
મણુયા ભવંતિ’ અથ ય રમે ગ્રામાઽઽકર યાવત્ મનિવેશેષુ મનુજા ભવન્તિ, ‘તં જહા’ તથથા
‘સવ્વકામવિરયા’ સર્વકામવિરતાઃ— સર્વકામેભ્યઃ=સમસ્તશબ્દાદિવિષયેભ્યો વિરતાઃ=
નિવૃત્તાઃ, શબ્દાદિવિષયેષુ વા વિરતા=વિગતૌત્સુકયાઃ, ‘સવ્વરાગવિરયા’ સર્વરાગવિરતાઃ—
સર્વરાગાત્—સમસ્તાદ્ વિષયાભિમુખહેતુભૂતાઽઽત્મપરિગામવિશેષાત્ નિવૃત્તાઃ, ‘સવ્વસંગા-
તીતા’ સર્વસજ્ઞાઽતીતાઃ—સર્વસજ્ઞાત્=માતાપિત્રાદિસમ્બન્ધાદતીતાઃ=વિનિર્ગતાઃ—સર્વસજ્જરહિતા
ર્યર્થઃ, ‘સવ્વસિણેહાઙ્કંતા’ સર્વસ્નેહાતિક્રાન્તાઃ=સ્નેહરહિતાઃ, ‘અક્કોહા’ અક્રોધાઃ,

‘સે જે રમે’ ર્યાદિ ।

(સે જે રમે ગમાગર જાવ સણિવેસેસુ) યે જો ગ્રામ આકર આદિ સે
લેકર સન્નિવેશ તક કે નિવાસસ્થાનોં મેં (મણુયા ભવંતિ) મનુષ્ય રહેતે હેં, (તં જહા) જૈસે
(સવ્વકામવિરયા સવ્વરાગવિરયા સવ્વસંગાતીતા સવ્વસિણેહાઙ્કંતા) જો સમસ્ત
શબ્દાદિક વિષયોં સે નિવૃત્ત હેં, અથવા શબ્દાદિક વિષયોં મેં જિન્હેં ઉત્સુકતા નહીં હેં,
સમસ્ત વિષયોં કી ઓર ઝુકાને વાલે આત્માકે રાગરૂપ પરિણામ સે જો નિવૃત્ત હેં, માતા—
પિતા આદિ સમસ્ત સંબંધિજનોં સે અથવા સમસ્તપ્રકાર કે પરિગ્રહ સે જો દૂર હો ચુકે હેં,
જિન્હોં ને સમ્પૂર્ણપ્રકાર કા સ્નેહભાવ પરિવર્જિત કર દિયા હેં । (અક્કોહા નિક્કોહા સ્વીણ-

‘સે જે રમે’ ર્યાદિ.

(સે જે રમે) આ કે જે (ગમાગર જાવ સણિવેસેસુ) ગામ આકર
આદિથી લઈને સન્નિવેશ સુધીનાં નિવાસસ્થાનોમાં (મણુયા ભવંતિ) મનુષ્ય
રહે છે, (તં જહા) જેવા કે—(સવ્વકામવિરયા સવ્વરાગવિરયા સવ્વસંગાતીતા
સવ્વસિણેહાઙ્કંતા) જેઓ સમસ્ત શબ્દાદિક વિષયોથી નિવૃત્ત છે, અથવા
શબ્દાદિક વિષયોમાં જેમને ઉત્સુકતા નથી હોતી, સમસ્ત વિષયોની તરફ
જેં અવાવાળા આત્માના રાગરૂપ પરિણામથી જેઓ નિવૃત્ત છે, માતાપિતા આદિ
સમસ્ત સંબંધી જનોથી અથવા સમસ્ત પ્રકારના પરિગ્રહોથી જેઓ દૂર થઈ
ગયેલા છે, જેઓએ સંપૂર્ણ પ્રકારના સ્નેહભાવને પરિવર્જિત કરી દીધેલા છે,
(અક્કોહા નિક્કોહા સ્વીણક્કોહા એવં માણમાયાલોહા) જેમનો ક્રોધ નષ્ટ થઈ

માયાલોહા અણુપુવ્વેણં અટ્ટકમ્મપયડીઓ સ્વેત્તા ઉપ્પિં લોય-
ગ્ગપડ્ઢાણા ભવંતિ ॥ સૂ. ૬૯ ॥

મૂલમ્—અણગારે ણં મંતે ! માવિયપ્પા કેવલિસમુ-

‘ણિક્કોહા’ નિષ્ક્રોધાઃ=ક્રોધાનિષ્ક્રાન્તાઃ, ‘ક્ષીણિક્કોહા’ ક્ષીણક્રોધાઃ—ક્રોધઃ ક્ષીણો યેષાં તે ક્ષીણક્રોધાઃ—મોહનીયકર્મણાં ક્ષયોક્ષણાત્ ક્ષીણક્રોધમોહનીયકર્મણઃ, ‘એવં માણમાયાલોહા’ એવં માનમાયાલોભાઃ=એવં ક્ષીણમાનમાયાલોભાઃ, ‘અણુપુવ્વેણં’ આનુપૂર્વ્યા=ક્રમશઃ યથાબદ્ધમ્, ‘અટ્ટકમ્મપયડીઓ’ અષ્ટકર્મપ્રકૃતીઃ ‘સ્વેત્તા’ ક્ષપયિત્વા ‘ઉપ્પિં લોયગ્ગપડ્ઢાણા’ ઉપરિ લોકાગ્રપ્રતિષ્ઠાનાઃ=લોકાગ્રાવસ્થિતા ‘ભવંતિ’ ભવન્તિ ॥ સૂ. ૬૯ ॥

ટીકા—‘અણગારે ણં મંતે’ इत्यादि । ‘अणगारे णं मंते !’ अनगारः खलु हे भदन्त ! ‘भावियप्पा’ भावितात्मा=कृताऽऽत्मसाक्षात्कारः, ‘केवलिसमुग्घाएणं’ केवलि-

કોહા એવં માણમાયાલોહા) જિનકા ક્રોધ નષ્ટ હો ગયા હૈ, અત એવ જો નિષ્ક્રોધ હૈ, મોહનીય કર્મ નષ્ટ હો જાને કે કારણ ક્રોધ જિનકી આત્મા સે ક્ષીણ હો ચુકા હૈ, इसी तरह से मान, माया एवं लोभ भी जिनकी आत्मा से सर्वथा नष्ट हो चुके हैं, वे (अणुपु-
व्वेणं अट्ट कम्मपयडीओ स्ववेत्ता उप्पिं लोयगगपड्ढाणा भवन्ति) क्रम २ से पूर्वबद्ध
अष्टकर्मों की प्रकृति को सर्वथा नष्ट कर नियमसे लोक के अग्रभागमें निवास करनेवाले
होते हैं, अर्थात् मोक्षको प्राप्त करते हैं ॥ सू. ६९ ॥

‘અણગારે ણં મંતે !’ इत्यादि ।

(મંતે !) હે ભગવન્ ! (માવિયપ્પા અણગારે ણં) ભાવિતાત્મા અનગાર (સાધુ)
(કેવલિસમુગ્ધાણં) કેવલિસમુદ્ધાત દ્વારા (સમોહણિત્તા) આત્મપ્રદેશોં કો શરીર સે

ગયેલો છે, તેથી જેઓ ક્રોધરહિત છે, મોહનીય કર્મ નષ્ટ થઈ જવાના કાર-
ણથી ક્રોધ જેમના આત્મામાંથી ક્ષીણ થઈ ગયેલો છે, તેવી જ રીતે માન, માયા
તેમજ લોભ પણ જેમના આત્મામાંથી સર્વથા નષ્ટ થઈ ગયેલાં છે, તેઓ
(અણુપુવ્વેણં અટ્ટ કમ્મપયડીઓ સ્વેત્તા ઉપ્પિં લોયગ્ગપડ્ઢાણા ભવંતિ) અનુક્રમથી
પૂર્વબદ્ધ આઠ કર્મોની પ્રકૃતિને સર્વથા નષ્ટ કરીને નિયમથી લોકના ઉપરના
ભાગમાં નિવાસ કરવાવાળા થાય છે, અર્થાત્ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે. (સૂ. ૬૯)

‘અણગારે ણં મંતે !’ इत्यादि.

(મંતે !) હે ભગવન્ ! (માવિયપ્પા અણગારે ણં) ભાવિતાત્મા અનગાર
(સાધુ) (કેવલિસમુગ્ધાણં) કેવલિસમુદ્ધાત દ્વારા (સમોહણિત્તા) આત્મ-

**ઘાણં સમોહણિતા કેવલકપ્પં લોયં ફુસિત્તા ણં ચિટ્ઠઈ, હંતા !
ચિટ્ઠઈ ॥ સૂ. ૭૦ ॥**

સમુદ્ઘાતેન, તત્ર પ્રથમં સમુદ્ઘાતસ્વરૂપમુચ્યતે—યથાસ્વભાવસ્થિતાનામાત્મપ્રદેશાનાં સમુદ્ઘાતનં=સમન્તાદુદ્ઘાતનં—સ્વભાવાદન્યભાવેન પરિણમનં સમુદ્ઘાતઃ, સ ચ સત્તવિધઃ—વેદનાસમુદ્ઘાતઃ ૧, કષાયસમુદ્ઘાતઃ ૨, મરણસમુદ્ઘાતઃ ૩, વૈક્રિયસમુદ્ઘાતઃ ૪, તૈજસસમુદ્ઘાતઃ ૫, આહારક-સમુદ્ઘાતઃ ૬, કેવલિસમુદ્ઘાતશ્ચ ૭ । એષુ સત્તસુ સમુદ્ઘાતેષુ ચરમઃ કેવલિસમુદ્ઘાતઃ । તત્ર કો નામ કેવલિસમુદ્ઘાતઃ ? ઉચ્યતે—યંસ્યાન્તર્મુહૂર્તકાલે પરમપદં ભાવિ, તસ્મિન્ કેવલિનિ ભવઃ સમુદ્ઘાતઃ કેવલિસમુદ્ઘાતસ્તેન, ‘સમોહણિતા’ સમવહત્ય=આત્મપ્રદેશાન્ પ્રસાર્ય ‘કેવલકપ્પં’ કેવલકપ્પં=સંપૂર્ણ ‘લોયં’ લોકં ‘ફાસિત્તા ણં’ સ્પૃષ્ટ્વા સ્વલુ ‘ચિટ્ઠઈ’ તિષ્ઠતિ કિમ્ ? । ઉત્તર-માહ—‘હંતા’ इत्यादि । ‘હન્ત’ इतिपदं કોમલાऽऽમન્ત્રણપૂર્વકસ્વીકારાર્થકમ્, ‘ચિટ્ઠઈ’ તિષ્ઠતિ ॥ સૂ. ૭૦ ॥

બાહર નિકાલકર (કેવલકપ્પં લોયં) કયા સમસ્ત લોકકા (ફુસિત્તા) સ્પર્શ કરકે (ચિટ્ઠઈ) ઠહરતે હૈ ? ઉત્તર—(હંતા ! ચિટ્ઠઈ) હાં ! ઠહરતે હૈ । યથાસ્વભાવ સે સ્થિત આત્મપ્રદેશોં કા અન્ય ભાવ મેં પરિણમન કરના ઉસકા નામ સમુદ્ઘાત હૈ । સમુદ્ઘાત ૭ પ્રકાર કા હૈ—વેદના-સમુદ્ઘાત ૧, કષાયસમુદ્ઘાત ૨, મરણસમુદ્ઘાત ૩, વૈક્રિયસમુદ્ઘાત ૪, તૈજસસમુદ્ઘાત ૫, આહારકસમુદ્ઘાત ૬, કેવલિસમુદ્ઘાત ૭ । ઇનમેં અન્તિમ સમુદ્ઘાત કેવલિસમુદ્ઘાત હૈ । જિસકો અન્તર્મુહૂર્તકાલ મેં નિર્વાણ પદકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ એસે કેવલી ભગવાન કા ઢણડ, કપાટ, મન્થાન ઓર લોકપૂરણ ક્રિયા દ્વારા આત્મપ્રદેશોં કા મૂલ શરીર કો ન છોડકર શરીર સે બાહર ફેલના ઇસકા નામ કેવલિસમુદ્ઘાત હૈ ॥ સૂ. ૭૦ ॥

પ્રદેશોને શરીરથી બહાર કાઢીને (કેવલકપ્પં લોયં) શું સમસ્ત લોકને (ફુસિત્તા) સ્પર્શ કરીને (ચિટ્ઠઈ) રહે છે ? (હંતા ! ચિટ્ઠઈ) હા ! રહે છે. યથાસ્વભાવમાં રહેલા આત્મપ્રદેશોને અન્યભાવમાં ફેરવી નાખવું તેનું નામ સમુદ્ઘાત છે. સમુદ્ઘાત ૭ પ્રકારના છે—૧ વેદનાસમુદ્ઘાત, ૨ કષાય-સમુદ્ઘાત, ૩ મરણસમુદ્ઘાત, ૪ વૈક્રિયસમુદ્ઘાત, ૫ તૈજસસમુદ્ઘાત, ૬ આહારકસમુદ્ઘાત, ૭ કેવલિસમુદ્ઘાત. તેમાં છેલ્લો સમુદ્ઘાત કેવલિસમુદ્ઘાત છે. જેને અન્તર્મુહૂર્ત કાળમાં નિર્વાણપદની પ્રાપ્તિ થાય છે એવા કેવલી ભગવાનના ઢંડ, કપાટ, મન્થાન, અને લોકપૂરણ ક્રિયાદ્વારા આત્મ-પ્રદેશોનો, મૂળ શરીરને નહિ છોડતાં શરીરથી બહાર ફેલાવો થવો તેનું નામ કેવલિસમુદ્ઘાત છે. (સૂ. ૭૦)

मूलम्—से नूणं भंते ! केवलकप्पे लोए तेहिं निज्ज-
रापोग्गलेहिं फुडे ? हंता ! फुडे ॥ सू० ७१ ॥

मूलम्—छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से तेसिं णिज्जरापो-
ग्गलाणं किंचि वण्णेणं वण्णं, गंधेणं गंधं, रसेणं रसं, फासेणं

टीका—‘से नूणं भंते !’ इत्यादि । ‘से नूणं भंते !’ अथ नूनं हे भदन्त !
‘केवलकप्पे लोए’ केवलकल्पो लोकः, ‘तेहिं’ तैः ‘निज्जरापोग्गलेहिं’ निर्जरापुद्गलैः—
निर्जरा प्रधानाः पुद्गला निर्जरापुद्गलाः—जीवेन अकर्मतामापादिताः कर्मपुद्गलास्तैः ‘फुडे’
स्पृष्टः=व्याप्तः किम् ? इति प्रश्नः । उत्तरमाह ‘हंता ! फुडे’ हन्त ! स्पृष्टः ॥ सू. ७१ ॥

टीका—‘छउमत्थे णं भंते !’ इत्यादि । ‘छउमत्थे णं भंते !’ छद्मस्थः खलु
भदन्त !—हे भदन्त ! छद्मस्थः खलु मनुष्यः, छद्मस्थ इह निरतिशयज्ञानयुक्तो ज्ञेयः, यतश्छद्म-
स्थोऽपि विशिष्टावधिज्ञानयुक्तो निर्जरापुद्गलान् जानात्येव । ‘तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं’ तेषां निर्ज-
रापुद्गलानां ‘किंचि’ किञ्चिद् ‘वण्णेणं’ वर्णेन—वर्णतया यथावस्थितस्वरूपेण ‘वण्णं’ वर्णं=

‘से नूणं भंते !’ इत्यादि ।

(से नूणं भंते !) हे भदन्त ! क्या अवश्यतया (तेहिं निज्जरापोग्गलेहिं)
उनके निर्जराप्रधान पुद्गलों द्वारा (केवलकप्पे लोए) यह समस्त लोग (फुडे) स्पृष्ट
होता है ? (हंता ! फुडे) हाँ ! स्पृष्ट होता है ॥ सू. ७१ ॥

‘छउमत्थे णं’ इत्यादि ।

(छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से) हे भदन्त ! विशिष्टज्ञानी छद्मस्थ मनुष्य (तेसिं
णिज्जरापोग्गलाणं) उन निर्जराप्रधान पुद्गलों को (किंचि) किञ्चित् (वण्णेणं वण्णं

‘से नूणं भंते !’ इत्यादि ।

(से नूणं भंते !) हे भदन्त ! शुं अवश्यतया (तेहिं निज्जरापोग्गलेहिं) तेभनां
निर्जराप्रधान पुद्गलों द्वारा (केवलकप्पे लोए) आ समस्त लोकोंने
(फुडे) स्पर्श थाय छे ? (हंता ! फुडे) हाँ ! थाय छे. (सू. ७१)

‘छउमत्थे णं’ इत्यादि ।

(छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से) हे भदन्त ! विशिष्टज्ञानी छद्मस्थ मनुष्य
(तेसिं निज्जरापोग्गलाणं) ते निर्जराप्रधान पुद्गलों द्वारा (किंचि) किञ्चित्
(वण्णेणं वण्णं गंधेणं गंधं रसेणं रसं फासेणं फासं जाणइ पासइ) वर्णुथी

फासं जाणइ पासइ ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे ॥ सू० ७२ ॥

मूलम्—से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—छउमत्थे णं मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं णो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ ? ॥ सू० ७३ ॥

कालादिरूपं, 'गंधेन गंधं' गन्धेन गन्धम्, 'रसेन रसं' रसेन रसम्, 'फासेणं फासं' स्पर्शेन स्पर्शं 'जाणइ' जानाति विशेषतः, 'पासइ' पश्यति सामान्यतः किम् ?, उत्तरमाह— 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः=संगतः, कर्मपुद्गलानां साऽतिशयज्ञानगम्यत्वात् । अत्र छद्मस्थशब्देनातिशयज्ञानरहितस्य विवक्षितत्वादिति भावः । एवं गन्धादयोऽपि ज्ञेयाः ॥ सू० ७२ ॥

टीका—'से केणट्ठेणं भंते !' इत्यादि ! 'से केणट्ठेणं भंते !' अथ केनाऽर्थेन भदन्त ! 'एवं वुच्चइ' एवमुच्यते—'छउमत्थे णं मणुस्से' छद्मस्थः खलु मनुष्यः 'तेसिं णिज्जरापुग्गलाणं' तेषां निर्जरापुद्गलानां 'णो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ' नो किञ्चिद्वर्णेन वर्णं यावज्जानाति पश्यति ॥ सू० ७३ ॥

गंधेणं गंधं रसेणं रसं फासेणं फासं जाणइ पासइ) वर्णं से वर्णं को, गंधं से गंधं को, रसं से रसं को और स्पर्शं से स्पर्शं को जानता है देखता है ? उत्तर—(गोयमा !) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ सिद्धान्त से समर्थित नहीं है । अर्थात् छद्मस्थ केवली भगवान् के निर्जराप्रधान पुद्गलों के रूप, रस, गंध, और स्पर्श को किंचिन्मात्र भी नहीं जान सकता है, न देख सकता है ॥ सू० ७२ ॥

'से केणट्ठेणं भंते !' इत्यादि ।

(भंते !) हे भदन्त ! (से) यह बात (केणट्ठेणं एवं वुच्चइ) किस—कारण ऐसी कही

वर्णने, गंधथी गंधने, रसथी रसने अने स्पर्शथी स्पर्शने जाने छे ? ज्ञाने छे ? उत्तर—(गोयमा !) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) आ अर्थ सिद्धांतथी समर्थन पाभेलेो नथी, अर्थात् छद्मस्थ पुरुष केवली भगवानना निर्जराप्रधान पुद्गलानां रूप, रस, गंध तथा स्पर्शने किंचित मात्र पणु जानी शकता नथी, तेम जेध शकता पणु नथी. (सू० ७२)

'से केणट्ठेणं भंते !' इत्यादि.

(भंते !) हे भदन्त ! (से) आ बात (केणट्ठेणं एवं वुच्चइ) शा

**મૂલમ—ગોયમા ! અયં ણં જંબુદીવે દીવે સવ્વદીવ-
સમુદ્ધાણં સવ્વબ્ભંતરાણ સવ્વસુહુણ વટ્ટે તેલ્લાપૂય-સંઠાણ-સંઠિણ**

ટીકા—ભગવાનાહ—‘ગોયમા’ इत्यादि । ‘गोयमा ! अयं णं जंबुद्वीवे दीवे’ हे गौतम ! अयं खलु जम्बूद्वीपो द्वीपः ‘सव्वदीवसमुद्धानं सव्वबभंतराण’ सर्वद्वीपसमुद्राणां सर्वाभ्यन्तरकः=सर्वद्वीपसमुद्रमध्यवर्ती, ‘सव्वसुहूण’ सर्वक्षुल्लकः=सर्वद्वीपसमुद्रापेक्षया लघुः, ‘वट्टे’ वृत्तः=गोलाकारः, मोदकवद् घनवृत्तोऽपि भवेत् तद्व्यवच्छेदार्थं प्रतरवृत्ततामाह—‘तेल्लापूय-संठाण-संठिण’ तैलाऽपूप-संस्थान-संस्थितः— तैलमिति घृतस्योपलक्षणम्, तेन तैलादिपकाऽपूपाऽऽकारसंस्थितः, ‘वट्टे’ वृत्तः, ‘रहचक्कवाल-संठाण-संठिण’ रथचक्रवाल-

जाती है कि (छउमत्थे णं मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं णो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ) छद्मस्थ मनुष्य, उन केवली भगवान् के उन निर्जराप्रधान पुद्गलों के वर्ण गंध रस स्पर्श को न जान सकता है ? न देख सकता है ? ॥ सू. ७३ ॥

‘गोयमा । अयं णं ’ इत्यादि ।

(गोयमा !) हे गौतम ! (अयं णं जंबुद्वीवे दीवे) यह जंबूद्वीप नामका द्वीप (सव्वदीवसमुद्धानं) समस्त द्वीप और समुद्रों का (सव्वबभंतराण) सर्वप्रकार से मध्यवर्ती है । अतः यह (सव्वसुहूण) सब से छोटा है । (वट्टे) यह वलय के समान वृत्ताकार-गोल है । (तेल्ला-पूय-संठाण-संठिण) तैलपक्क पुआ के आकार जैसा गोल है । (वट्टे रहचक्कवाल-संठाण-संठिण) रथके पहिये जैसा गोल है । (वट्टे पुक्खर-

કારણથી એમ કહેવાય છે કે (છઉમત્થે ણં મણુસ્સે તેસિં ણિજ્જરાપોગ્ગલાણં ણો કિંચિ વણ્ણેણં વણ્ણં જાવ જાણઇ પાસઇ) છદ્મસ્થ મનુષ્ય તે કેવલી ભગવાનના તે નિર્જરાપ્રધાન પુદ્ગલોના વર્ણ, ગંધ, રસ, સ્પર્શને નથી જાણી શકતા કે નથી દેખી શકતા ? (સૂ. ૭૩)

‘ગોયમા ! અયં ણં ’ ઇત્યાદિ.

(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અયં ણં જંબુદ્વીવે દીવે) આ જંબૂદ્વીપ નામનો દ્વીપ (સવ્વદીવસમુદ્ધાણં) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રોની (સવ્વબ્ભંતરાણ) સર્વ પ્રકારથી મધ્યવર્તી છે. આથી તે (સવ્વસુહુણ) બધાથી નાનો છે. (વટ્ટે) તે વલયના (બંગડી) જેવો વૃત્તાકાર ગોળ છે. (તેલ્લાપૂય-સંઠાણ-સંઠિણ) પુડલાના આકાર જેવો ગોળ છે. (વટ્ટે રહચક્કવાલ-સંઠાણ-સંઠિણ) રથના પૈડાં જેવો ગોળ છે. (વટ્ટે પુક્કરકણિયા-સંઠાણ-સંઠિણ) કમળની કણિક જેવો ગોળ છે. (વટ્ટે પહિપુણ્ણ-ચંદ-સંઠાણ-સંઠિણ) પૂર્ણચંદ્રમંડળ

**मूलम्—देवे णं महड्डिए महज्जुइए महब्बले महाजसे
महासोक्खे महाणुभावे सविलेवणं गंधसमुग्गयं गिण्हइ, गिण्हित्ता
तं अवदालेइ, अवदालित्ता जाव इणामेवत्ति कट्टु केवल—**

टीका—‘देवे णं’ इत्यादि । ‘देवे णं’ देवः खलु ‘महड्डिए’ महर्द्धिकः=विपुलैश्वर्ययुक्तः, ‘महज्जुइए’ महाद्युतिकः=महातेजस्वी, ‘महब्बले महाजसे’ महाबलो महायशः ‘महासोक्खे’ महासौख्यः=महासुखी, ‘महाणुभावे’ महानुभावः, ‘सविलेवणं’ सविलेपनं ‘गंधसमुग्गयं’ गन्धसमुद्गकं=गन्धसंपुटकं ‘गिण्हइ’ गृह्णाति, ‘गिण्हित्ता’ गृहीत्वा तं=गन्धसमुद्गकम् ‘अवदालेइ’ अवदालयति=उद्घाटयति, ‘अवदालित्ता’ अवदाल्य=उद्घाट्य, ‘जाव इणामेवत्ति कट्टु’ यावत् इदमेवमिति कृत्वा, इह यावच्छब्दः परिमाणार्थकस्तावदित्यस्य सापेक्षः, इदं=गमनम्, एवम्=छोटिकात्रयं यावता कालेन भवति तावत्का-

विष्कंभवाला है । इसकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन तीन कोश एकसौ अट्ठाईस धनुष साढ़े तेरह अंगुल से कुछ अधिक है । उससे यह परिवेष्टित है ॥ सू. ७४ ॥

‘देवे णं महड्डिए’ इत्यादि ।

(महड्डिए) महाऋद्धि का धारी (महब्बले) महाबलिष्ठ (महाजसे) अतिशय यशस्वी (महासोक्खे) अत्यन्तसौख्यवाले (महाणुभावे) एवं अत्यन्त प्रभावशाली ऐसा कोई (देवे णं) देव (सविलेवणं गंधसमुग्गयं) विलेपनसहित एक गंध के समुद्गक (पेटी) को (गिण्हइ) लेवे, (गिण्हित्ता) और लेकर उसे (अवदालेइ) वहीं पर खोले, (अवदालित्ता) खोलकर (जाव इणामेवत्ति कट्टु केवलकप्पं जंबुदीवं दीवं)

पोणो छे. तेनो परिध त्रणु दाअ सोण डुअर असो सत्तावीश येअन त्रणु
कोश अेअसो अट्ठावीस धनुष अने साडा तेर आंगणथी जरा वधारे छे. ते
अेटला घेरावाभां छे. (सू. ७४)

‘देवे णं महड्डिए’ इत्यादि.

(महड्डिए) मडाऋद्धिना धारी (महब्बले) मडाबलिष्ठ (महाजसे)
अतिशय यशस्वी (महासोक्खे) अत्यन्त सौख्यवाला (महाणुभावे) तेभज
अत्यन्त प्रभावशाली अेवा कोई (देवे णं) देव (सविलेवणं गंधसमुग्गयं)
विलेपन सहित अेअ गंधसमुद्गक (सुगंधद्रव्यनी पेटी) ने (गिण्हइ)
लीअे, (गिण्हित्ता) अने लईने तेने (अवदालेइ) त्यांज उधाडे, (अवदालित्ता)
उधाडीने (जाव इणामेवत्ति कट्टु केवलकप्पं जंबुदीवं दीवं) ते समस्त जंभूद्धी-

કપ્પં જંબુદીવં દીવં તિહિં અચ્છરાણિવાણિં તિસત્તલુત્તો અણુપરિયટ્ઠિત્તા ણં હવ્વમાગચ્છેજ્ઞા ॥ સૂ. ૭૫ ॥

મૂલમ્—સે ણૂણં મંતે ! સે કેવલકપ્પે જંબુદીવે દીવે તેહિં ઘાણપોગ્ગલેહિં ફુડે ? હંતા ! ફુડે ॥ સૂ. ૭૬ ॥

લિકમ્—સત્વરમિત્યર્થઃ, इति कृत्वा, ‘કેવલકપ્પં’ કેવલકલ્પં=સંપૂર્ણ, ‘જંબુદીવં’ જમ્બૂદ્વીપ ‘દીવં’ દ્વીપં ‘તિહિં’ ત્રિભિઃ ‘અચ્છરાણિવાણિં’ અચ્છરાશબ્દો દેશીયસ્છોટિકાવાચકઃ, છોટિકામિરિત્યર્થઃ, ‘તિસત્તલુત્તો’ ત્રિસત્તકૃત્વઃ=એકવિંશતિવારાન્ ‘અણુપરિયટ્ઠિત્તા ણં’ અનુપર્યટ્ઠ્ય=પરિભ્રમ્ય સ્વલુ ‘હવ્વમાગચ્છેજ્ઞા’ શીઘ્રમાગચ્છેત્ । છોટિકાત્રયકાલસમકાલે એવ સંપૂર્ણ જમ્બૂદ્વીપમેકવિંશતિવારાન્ પરિભ્રમ્ય શીઘ્રમાગચ્છેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭૫ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘સે ણૂણં મંતે !’ इत्यादि । ‘સે ણૂણં મંતે !’ અથ નૂનં હે મદન્ત ! ‘સે કેવલકપ્પે જંબુદીવે દીવે’ સ કેવલકલ્પે જમ્બૂદ્વીપે દ્વીપે ‘તેહિં’ તૈઃ, ‘ઘાણપોગ્ગલેહિં’ ઘ્રાણપુદ્ગલૈઃ=ગન્ધપુદ્ગલૈઃ ‘ફુડે’ સ્પૃષ્ટઃ કિમ્ ;? મગવાનાહ—‘હંતા ! ફુડે’ હન્ત ! સ્પૃષ્ટઃ ॥ સૂ. ૭૩ ॥

उस समस्त जंबूद्वीप की (तिहिं अछराणिवाणिं) तीन चुटकी बजाने में जितना समय लगे उतने समय में (तिसत्तलुत्तो) तीनगुणित सात—इक्कीस बार (अणुपरियट्ठित्ता) प्रदक्षिणा देकर (हव्वमागच्छेज्जा) वहीं पर शीघ्र आजावे ॥ सू. ७५ ॥

‘સે ણૂણં મંતે !’ इत्यादि ।

गौतम पूछते हैं—(से णूणं मंते ! से केवलकपे जंबुद्वीवे दीवे) हे मदन्त ! वह समस्त जंबूद्वीप (तेहिं घाणपोग्गलेहिं फुडे ?) क्या उन समस्त सुगंधित पुद्गलों से स्पृष्ट हो जाता है ? उत्तर—(हंता ! फुडे) हां ! हो जाता है ॥ सू. ७६ ॥

પની (તિહિં અચ્છરાણિવાણિં) ત્રણ ચપટી વગાડવામાં જેટલો સમય લાગે તેટલો સમયમાં (તિસત્તલુત્તો) એકવીસવાર (અણુપરિયટ્ઠિત્તા) પ્રદક્ષિણા દઈને (હવ્વમાગચ્છેજ્ઞા) ત્યાં પાછો જલ્દી આવી જાય. (સૂ. ૭૫)

‘સે ણૂણં મંતે !’ इत्यादि.

गौतम पूछे छे—(से णूणं मंते ! से केवलकपे जंबुद्वीवे दीवे) हे मदन्त ! आ समस्त जंबूद्वीप (तेहिं घाणपोग्गलेहिं फुडे) शुं ते समस्त सुगंधित पुद्गलोशी स्पृष्ट थछ जय छे ? उत्तर—(हंता ! फुडे) हा, थछ जय छे. (सू. ७६)

मूलम्—छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से तेसिं घाणपो-
गलाणं किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ ? गोयमा !
णो इणट्ठे समट्ठे ॥ सू० ७७ ॥

मूलम्—से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—छउमत्थे

टीका—पुनर्गौतमः पृच्छति—‘छउमत्थे णं’ इत्यादि ! ‘भंते !’ हे भदन्त !
‘छउमत्थे णं मणुस्से’ छद्मस्थः खलु मनुष्यः, ‘तेसिं घाणपोगलाणं’ तेषां घ्राणपुद्गलानां
‘किंचि वण्णेणं वण्णं जाव जाणइ पासइ’ किञ्चिद्वर्णेन वर्णं यावज्जानाति पश्यति किम् ?
भगवानाह—‘गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे’ गौतम ! नाऽयमर्थः समर्थः ॥ सू. ७७ ॥

टीका—‘से तेणट्ठेणं’ इत्यादि । ‘से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ’ अथ

‘छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से’ इत्यादि ।

पुनः गौतम ने पूछा—(छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से) हे भदन्त ! क्या छद्मस्थ
मनुष्य, (तेसिं घाणपुग्गलाणं) उन सुगंधित पुद्गलों को (किंचि वण्णेणं वण्णं जाव)
वर्ण से यावत् गंध स्पर्शादि से थोड़ा भी (जाणइ पासइ) जान सकता है ? देख सकता
है ? प्रभु ने कहा कि (गोयमा !) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ
नहीं है ॥ सू. ७७ ॥

‘से तेणट्ठेणं’ इत्यादि ।

(से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) हे गौतम ! छद्मस्थ उन निर्जरापुद्गलों को
गंधादिगुणों द्वारा थोड़ा भी नहीं जान सकता है—यह जो बात कही गई है सो इसलिये

‘छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से’ इत्यादि.

वही गौतमे पूछा—(छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से) हे भदन्त ! शुं छद्मस्थ मनुष्य,
(तेसिं घाणपोगलाणं) ते सुगंधित पुद्गलों ने वरुण्णी तेमज्ज गंध स्पर्श
आदिथी जरा पणु (जाणइ पासइ) जान्नी शके छे ? जेध शके छे ? प्रभुने
उछुं के (गोयमा !) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) आ अर्थ समर्थ
नथी. (सू. ७७)

‘से तेणट्ठेणं’ इत्यादि.

(से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) हे गौतम ! छद्मस्थ, ते निर्जरा-
पुद्गलों ने गंध आदि-गुणों द्वारा जरा पणु जान्नी शकतो नथी जेम जे

ળં મણુસ્સે તેસિં નિજ્જરાપોગ્ગલાળં ણો કિંચિ વળ્ણેળં વળ્ણં
જાવ જાણઙ પાસઙ ॥ સૂ. ૭૮ ॥

મૂલમ્—એએ સુહુમા ણં તે પોગ્ગલા પળ્ણત્તા, સમળ્ણા-

તેનાડર્થેન હે ગૌતમ ! એવમુચ્યતે—‘છઝમત્થે ણં મણુસ્સે’ છઝસ્થઃ સ્વલુ મનુષ્યઃ ‘તેસિં
નિજ્જરાપોગ્ગલાળં’ તેષાં નિર્જરાપુદ્ગલાનાં ‘ન કિંચિ વળ્ણેળં’ ન કિંચિદ્ વર્ણેન ‘વળ્ણં’
વર્ણ ‘જાવ જાણઙ પાસઙ’ યાવજ્ઞાનાતિ પશ્યતિ । તસ્ય છઝસ્થસ્ય સાતિશયજ્ઞાનાભાવાત્સ
યથાવસ્થિતસ્વરૂપેળ વર્ણાદિકં ન જાનાતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭૮ ॥

ટીકા—‘એએ સુહુમા’ ઇત્યાદિ । ‘એએ’ એતે વર્ણાદયસ્તથા ‘સહુમા’
સૂક્ષ્માઃ સન્તિ યત્ તાન્ યથાવસ્થિતસ્વરૂપેળ છઝસ્થો ન જાનાતિ, તથા ‘તે પોગ્ગલા’ તે
પુદ્ગલાઃ=નિર્જરાપુદ્ગલાઃ અતિસૂક્ષ્માઃ ‘પળ્ણત્તા’ પ્રજ્ઞતાઃ । ‘સમળ્ણાડસો’ હે શ્રમળ ! હે
આયુષ્મન્ ! અથવા—શ્રમળશ્ચાસાવાયુષ્માંશ્ચેતિ સમાસસ્તસ્યામન્ત્રણં હે શ્રમળાયુષ્મન્ ! હે ગૌતમ !

કહી ગઈ હૈ કિ (છઝમત્થે ણં મણુસ્સે) ડસ છઝસ્થ કે સાતિશય જ્ઞાન કા અભાવ હૈ,
અતઃ વહ યથાવસ્થિત રૂપ સે (તેસિં નિજ્જરાપોગ્ગલાળં) ડન નિર્જરિત પુદ્ગલોં કે (ણો
કિંચિ વળ્ણેળં વળ્ણં જાવ જાણઙ પાસઙ) વર્ણાદિક કો થોડા ભી નહીં જાન સકતા હૈ,
ન દેસ સકતા હૈ ॥ સૂ. ૭૮ ॥

‘એએ સુહુમા ણં’ ઇત્યાદિ ।

(એએ સુહુમા ણં તે પોગ્ગલા પળ્ણત્તા) ડન નિર્જરાપુદ્ગલોં કો છઝસ્થ યથા-
વસ્થિત રૂપસે ડસ કારળ સે ભી નહીં જાન સકતા હૈ કિ ડન પુદ્ગલોં કે વર્ણાદિક ગુળ
સૂક્ષ્મ હૈ, અતઃ (સમળ્ણાડસો ! સઁવ્વલોયં પિ ય ણં તે ફુસિત્તા ણં ચિટ્ઠંતિ) હે આયુ-

વાત કહી છે તે એ માટે કહેલી છે કે (છઝમત્થે ણં મણુસ્સે) તે છઝસ્થને
સાતિશય જ્ઞાનનો અભાવ છે. તેથી તે યથાવસ્થિતરૂપથી (તેસિં નિજ્જરાપો-
ગ્ગલાળં) તે નિર્જરિત પુદ્ગલોના (ણો કિંચિ વળ્ણેળં વળ્ણં જાવ જાણઙ પાસઙ)
વર્ણ આદિકને જરા પણ જાણી શકતો નથી, જોધ પણ શકતો નથી. (સૂ. ૭૮)

‘એએ સુહુમા ણં’ ઇત્યાદિ.

(એએ સુહુમા ણં તે પોગ્ગલા પળ્ણત્તા) તે નિર્જરાપુદ્ગલોને છઝસ્થ
યથાવસ્થિતરૂપથી એ કારણથી પણ જાણી શકતો નથી કે તે પુદ્ગલોનાં વર્ણ
આદિક ગુણ સૂક્ષ્મ છે. તેથી (સમળ્ણાડસો ! સઁવ્વલોયં પિ ય ણં ફુસિત્તા ણં
ચિટ્ઠંતિ) હે આયુષ્મન્ શ્રમણ ! જેવી રીતે છઝસ્થ ગંધ આદિક ગુણો દ્વારા

उसो ! सव्वलोयं पि य णं ते फुसित्ता णं चिट्ठंति ॥ सू० ७९ ॥

मूलम्—कम्हा णं भंते ! केवली समोहणंति ? कम्हा णं
केवली समुग्घायं गच्छंति ? गोयमा ! केवलीणं चत्तारि कम्मंसा

यथाऽतिसूक्ष्मत्वाद् गन्धपुद्गलान्न जानात्येवं निर्जरापुद्गलानपीति दृष्टान्तप्रदर्शनम् । ‘सव्व-
लोयं पि य णं’ सर्वलोकमपि च खलु ते=निर्जरापुद्गलाः ‘फुसित्ता णं’ स्पृष्ट्वा खलु
‘चिट्ठंति’ तिष्ठन्ति ॥ सू. ७९ ॥

टीका—गौतमः पृच्छति—‘कम्हा णं भंते !’ इत्यादि । ‘कम्हा णं भंते !’ कस्मा-
त्खलु भदन्त ! = हे भदन्त ! कस्मात् खलु ‘केवली’ केवलिनः ‘समोहणंति’ समुद्घ्नन्ति = कस्मै
प्रयोजनाय केवलिनः समुद्घातं कुर्वन्तीत्यर्थः, उक्तमर्थ—पुनः सुखबोधार्थमाह—‘कम्हा णं केवली’
कस्मात् खलु केवलिनः, ‘समुग्घायं’ समुद्घातम् = आत्मप्रदेशप्रसारकतां गच्छन्ति = प्राप्नुवन्ति,
भगवानुत्तरमाह—‘गोयमा !’ गौतम ! ‘केवलीणं चत्तारि कम्मंसा’ केवलिनां चत्वारः

प्पन् શ્રમણ ! જિસ પ્રકાર છદ્મસ્થ ગંધાદિક ગુણો દ્વારા અત્યંત સૂક્ષ્મ રૂપ સે પરિણત ગંધ
પુદ્ગલોં કો યથાવસ્થિત રૂપસે નહીં જાન સકતા હૈ ઉસી પ્રકાર વહ અત્યંત સૂક્ષ્મરૂપ સે
પરિણત હોને કે કારણ ઉન નિર્જરાપુદ્ગલોં કો ભી ગંધાદિક ગુણદ્વારા ન જાન સકતા હૈ, ન
દેખ સકતા હૈ । ઇસ દૃષ્ટાન્ત સે યહ બાત સ્ફુટ હો જાતી હૈ ॥ સૂ. ૭૯ ॥

‘કમ્હા ણં ભંતે !’ ઇત્યાદિ ।

गौतम ने पुनः प्रश्न किया—(भंते !) हे भदन्त ! (कम्हा णं) किस कारण से
(केवली) केवली भगवान् (समोहणंति) समुद्घात करते हैं ? अर्थात्—केवलियों को
समुद्घात किस प्रयोजन के लिये करना पड़ता है ? उत्तर—(गोयमा !) हे गौतम ! (केव-
लीणं चत्तारि कम्मंसा अपलिकखीणा भवंति) केवलियों के चार कर्म अवशिष्ट रहते

અત્યંત- સૂક્ષ્મરૂપમાં પરિણામ પામેલાં ગંધપુદ્ગલોને યથાવસ્થિતરૂપથી
બાણી શકતા નથી, તેવીજ રીતે અત્યંત સૂક્ષ્મરૂપમાં પરિણામ પામેલાં હોવાને
કારણે તે નિર્જરાપુદ્ગલોને પણ ગંધ આદિક ગુણ દ્વારા બાણી શકતા નથી, તેમ
બોધ શકતા નથી. આ દૃષ્ટાંતથી એ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે. (સુ. ૭૯)

‘કમ્હા ણં ભંતે ! કેવલી સમોહણંતિ’ ઇત્યાદિ.

ગૌતમે વળી પાછો પ્રશ્ન કર્યો—(ભંતે !) હે ભદન્ત ! (કમ્હા ણં) કયા
કારણથી (કેવલી) કેવલી ભગવાન્ (સમોહણંતિ) સમુદ્ઘાત કરે છે, અર્થાત્—
કેવલીઓને સમુદ્ઘાત કયા પ્રયોજનને માટે કરવો પડે છે ? ઉત્તર—(ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (કેવલીણં ચત્તારિ કમ્મંસા અપલિક્ખીણા ભવંતિ) કેવલીઓનાં ચાર

અપલિક્ષીણા ભવંતિ, તંજહા—(૧) વેયણિજ્જં । (૨) આઉયં ૩ ણામં
ગોત્તં સઘ્વવહુણ્ણે સે વેયણિજ્જે કમ્મે ભવઈ, સઘ્વત્થોવે સે આઉણ્ણ
કમ્મે ભવઈ । વિસમં સમં કરેઈ બંધણેહિં ઠિઈહિ ય, વિસમ-
સમકરણયાણ્ણે બંધણેહિં ઠિઈહિ ય । એવં સ્વલુ કેવલી સમોહણંતિ,
એવં સ્વલુ કેવલી સમુગ્ધાયં ગચ્છંતિ ॥ સૂ. ૮૦ ॥

કર્માશા: ‘અપલિક્ષીણા’ અપરિક્ષીણા: = અવશિષ્ટા ‘ભવંતિ’ ભવન્તિ = સન્તિ, ‘તં જહા’
તદ્વથા—‘વેયણિજ્જં’ વેદનીયમ્, ‘આઉયં’ આયુઃ, ‘ણામં’ નામ, ‘ગોત્તં’ ગોત્રમ્,
‘સઘ્વવહુણ્ણે સે વેયણિજ્જે કમ્મે ભવઈ’ સર્વવહુલં તદ્ વેદનીયં કર્મ ભવતિ, ‘સઘ્વત્થોવે
સે આઉણ્ણ કમ્મે ભવઈ’ સર્વસ્તોકં તદ્ આયુઃ કર્મ ભવતિ, ‘વિસમં સમં કરેઈ બંધણેહિં
ઠિઈહિ ય’ વિષમં સમં કરોતિ બન્ધનૈઃ—પ્રદેશબન્ધાનુભાગબન્ધાવાશ્રિત્યેતિ ભાવઃ, સ્થિતિમિશ્ર્વ =
સ્થિતિબન્ધવિશેષૈશ્વ, ‘વિસમસમકરણયાણ્ણે બંધણેહિં ઠિઈહિ ય એવં સ્વલુ કેવલી
સમોહણંતિ’ અત્રૈવં પદયોજના—એવં સ્વલુ વિષમસમકરણાય = વિષમકર્મણાં સમીકરણાર્થ
બન્ધનૈઃ સ્થિતિમિશ્ર્વ કેવલિનઃ ‘સમોહણંતિ’ સમુદ્ગત્તિ—સમુદ્ગતં કુર્વન્તિ ‘એવં સ્વલુ
કેવલી સમુગ્ધાયં ગચ્છંતિ’ એવં સ્વલુ કેવલિનઃ સમુદ્ગતં ગચ્છન્તિ ॥ સૂ. ૮૦ ॥

હૈં, (તં જહા) વે યે હૈં—(વેયણિજ્જં આઉયં ણામં ગોત્તં) વેદનીય, આયુ, નામ ઓર ગોત્ર ।
(સઘ્વવહુણ્ણે સે વેયણિજ્જે કમ્મે ભવઈ) કેવલી મેં સઘ્વસે અધિક સ્થિતિવાલા ઉસ
સમય વેદનીય કર્મ રહતા હૈ । (સઘ્વત્થોવે સે આઉણ્ણ કમ્મે ભવઈ) તથા સઘ્વસે સ્તોક
આયુકર્મ રહતા હૈ । (વિસમં સમં કરેઈ બંધણેહિં ઠિઈહિ ય વિસમસમકરણયાણ્ણે બંધણેહિં
ઠિઈહિ ય) ઇસ વિષમતા કો સમ કરને કે લિયે અર્થાત્ આયુકર્મ કી સ્થિતિ કે સમાન
વેદનીયાન્નિક કર્મોં કી સ્થિતિ કરને કે લિયે કેવલી ભગવાન્ સમુદ્ગત કરતે હૈં । અન્ય

કર્મ બાકી રહે છે; (તં જહા) તે આ છે. (વેયણિજ્જં આઉયં ણામં ગોત્તં)
વેદનીય , આયુ, નામ અને ગોત્ર. (સઘ્વવહુણ્ણે સે વેયણિજ્જે કમ્મે ભવઈ)
કેવળીમાં સર્વથી વધારે સ્થિતિવાળાં તે સમય વેદનીય કર્મ રહે છે. (સઘ્વ-
ત્થોવે સે આઉણ્ણ કમ્મે ભવઈ) તથા સર્વથી સ્તોક આયુકર્મ રહે છે. (વિસમં
સમં કરેઈ બંધણેહિં ઠિઈહિ ય, વિસમસમકરણયાણ્ણે બંધણેહિં ઠિઈહિ ય) આ
વિષમતાને સમ કરવા માટે અર્થાત્ આયુકર્મની સ્થિતિ બરાબર વેદનીય

મૂલમ—સર્વે વિ ણં મંતે ! કેવલી સમુદ્ધાયં ગચ્છંતિ ?
 ણો ઇણદ્દે સમદ્દે ।

અકિત્તાણં સમુદ્ધાયં, અણંતા કેવલી જિણા ।

જરામરણવિપ્પમુક્કા, સિદ્ધિં વરગઈં ગયા ॥ સૂ. ૮૧ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘સર્વે વિ ણં’ इत्यादि । ‘સર્વે વિ ણં મંતે !’ સર્વે-
 ઽપિ સ્વલુ ભદન્ત !—હે ભદન્ત ! સર્વેઽપિ સ્વલુ ‘કેવલી’ કેવલિનઃ ‘સમુદ્ધાયં’ સમુદ્ધાતં
 ‘ગચ્છંતિ’ ગચ્છન્તિ કિમ્ ? ભગવાનાહ ‘ણો ઇણદ્દે સમદ્દે’ નાઽયમર્થઃ સમર્થઃ ।

“અકિત્તા ણં સમુદ્ધાયં, અણંતા કેવલી જિણા ।
 જરામરણવિપ્પમુક્કા, સિદ્ધિં વરગઈં ગયા ॥ ૧ ॥”

કર્મોં કા સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ એવં પ્રદેશબંધ, સમુદ્ધાત કરને સે આયુર્કર્મ કે સ્થિતિબંધ,
 અનુભાગબંધ એવં પ્રદેશબંધ કે વરાવર હો જાતે હૈં । (એવં સ્વલુ કેવલી સમોહણંતિ, એવં
 સ્વલુ કેવલી સમુદ્ધાયં ગચ્છંતિ) ઇસ પ્રકાર કેવલિયોં કે સમુદ્ધાત કરને કા યહ
 પ્રયોજન હૈ । ઇસ પ્રકાર વે કેવલી સમુદ્ધાત કરતે હૈં ॥ સૂ. ૮૦ ॥

‘સર્વે વિ ણં મંતે ! इत्यादि ।

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે ભદન્ત ! કયા (સર્વે વિ ણં કેવલી) સમસ્ત કેવલી
 ભગવાન્ (સમુદ્ધાયં ગચ્છંતિ) સમુદ્ધાત કરતે હૈં । (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યહ
 અર્થ સમર્થિત નહીં હૈ, અર્થાત્—સમસ્ત કેવલા ભગવાન્ સમુદ્ધાત કરેં એસા કોઈ નિયમ

આદિક કર્મોંની સ્થિતિ કરવા માટે કેવલી ભગવાન્ સમુદ્ધાત કરે છે. બીજાં
 કર્મોંનાં સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ તેમજ પ્રદેશબંધ, સમુદ્ધાત કરવાથી આયુ-
 કર્મના સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ તેમજ પ્રદેશબંધના બરાબર થઈ જાય છે.
 (એવં સ્વલુ કેવલી સમોહણંતિ એવં સ્વલુ કેવલી સમુદ્ધાયં ગચ્છંતિ) આ પ્રકારે
 કેવલીઓને સમુદ્ધાત કરવાનું આ પ્રયોજન છે. આ પ્રકારે તે કેવલી સમુ-
 દ્ધાત કરે છે. (સૂ. ૮૦)

‘સર્વે વિ ણં મંતે ! કેવલી’ इत्यादि.

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે ભદન્ત ! શું (સર્વે વિ ણં કેવલી) વધા કેવલી
 ભગવાન્ (સમુદ્ધાયં ગચ્છંતિ) સમુદ્ધાત કરે છે ? (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) હે
 ગૌતમ ! આ અર્થ સમર્થિત નથી, અર્થાત્ સમસ્ત કેવલી ભગવાન્ સમુદ્ધાત

મૂલમ્—કઇસમણ ણં મંતે ! આઝ્જીકરણે પણ્ણત્તે ?
ગોયમા ! અસંખેજ્જસમણ અંતોમુહુત્તિણ પણ્ણત્તે ॥ સૂ. ૮૨ ॥

અકૃત્વા સ્વલુ સમુદ્ધાતમ્, અનન્તાઃ કેવલિનો જિનાઃ । જરામરણ વિપ્રમુક્તાઃ, સિદ્ધિ વરગતિં ગતાઃ ॥ ૧ ॥ અયંભાવઃ—ષળ્માસાયુષિ અવશિષ્ટે સતિ યેષાં કેવલં જ્ઞાનમુત્પન્નં તે નિયમતઃ સમુદ્ધાતં કુર્વન્તિ, અન્યે તુ સમુદ્ધાતં કુર્વન્તિ ન વા કુર્વન્તીતિ ॥ સૂ. ૮૧ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કઇસમણ ણં’ ઇત્યાદિ । ‘કઇસમણ ણં મંતે !’ કતિ—સમયં સ્વલુ મદન્ત ! ‘આઝ્જીકરણે પણ્ણત્તે’ આવર્જીકરણં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । આવર્જ્યતેઽભિમુસ્વીક્રિયતે મોક્ષોઽનેનેતિ—આવર્જસ્તસ્ય કરણવિવક્ષાયાં ચ્વિપ્રત્યયઃ । કેવલિસમુદ્ધાતાત્ પૂર્વં ક્રિય-

નહીં હૈ । ક્યોં કિ (સમુગ્ધાયં અકિત્તા) સમુદ્ધાત કો નહીં મી કરકે (અણંતા કેવલી) અનંત કેવલી (જિના) જિન (જરામરણવિપ્પમુક્કા) જન્મ, જરા ઇવં મરણ સે રહિત હોકર (વરગઈ) સિદ્ધિસ્વરૂપ સર્વોત્કૃષ્ટ ગતિ કો પ્રાપ્ત હુઈ હૈં । માર્વાર્થ—જિનકી આયુ ૬ માસ કી બાકી બચી હૈ ઓર અબ ઁનહેં કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ તો ઇસી સ્થિતિ મેં વે નિયમ સે કેવલિસમુદ્ધાત કરતે હૈં । બાકી કે લિયે ઇસા કોઈ નિયમ નહીં હૈ કિ સમુદ્ધાત કરેં હી ! ॥ સૂ. ૮૧ ॥

‘કઇસમણ ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મદન્ત ! (કઇસમણ ણં આઝ્જીકરણે પણ્ણત્તે) મોક્ષ-પ્રાપ્તિ કા આવર્જીકરણ કિતને સમય કા હોતા હૈ ! ઉત્તર—(અસંખેજ્જસમણ અંતોમુહુ-ત્તિણ પણ્ણત્તે) અસંખ્યાત સમય કા અંતર્મુહૂર્ત કહા હૈ । જિસકે દ્વારા જીવ મોક્ષ કે

કરે ઁવેા કોઈ નિયમ નથી; કેમકે (સમુગ્ધાયં અકિત્તા) સમુદ્ધાત ન પશુ કરીને (અણંતા કેવલી) અનંત કેવલી (જિના) જિન (જરામરણવિપ્પમુક્કા) જન્મ, જરા તેમજ મરણથી રહિત થઈ ને (વરગઈ) સિદ્ધિસ્વરૂપ સર્વોત્કૃષ્ટ ગતિને પ્રાપ્ત થયા છે. ભાવાર્થ—જેમની આયુ છ માસ બાકી રહે છે અને હવે તેમને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયું છે, તો ઁવી સ્થિતિમાં તેઓ નિયમથી કેવલિસમુદ્ધાત કરે છે. બાકીને માટે ઁવેા કોઈ નિયમ નથી કે સમુદ્ધાત કરે જ. (સૂ. ૮૧)

‘કઇસમણ ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે ભદન્ત ! (કઇસમણ ણં આઝ્જીકરણે પણ્ણત્તે) મોક્ષ પ્રાપ્તિનું આવર્જીકરણ કેટલા સમયમાં થાય છે. ઉત્તર—(અસંખેજ્જસમણ અંતોમુહુત્તિણ પણ્ણત્તે) અસંખ્યાત સમયનું અંતર્મુહૂર્ત કહેલું છે. જેના દ્વારા

**મૂલમ્—કેવલિસમુદ્ધાણં મંતે ! કઠ્ઠસમઙ્ગે પણ્ણત્તે ?
ગોયમા ! અઠ્ઠસમઙ્ગે પણ્ણત્તે; તં જહા-પઢમે સમ્મં દંડં કરેઙ્,**

માણં યત્ મોક્ષં પ્રત્યાત્મનોઽભિમુખીકરણં તત્, તત્ત્વ ઉદયાવલિકાયાં કર્મપુદ્ગલપ્રક્ષેપવ્યા-
પારરૂપ ઉદીરણાવિશેષઃ । કેવલિસમુદ્ધાતં કુર્વન્ કેવલી પ્રથમમેવાઽઽવર્જીકરણં કરોતિ ।
ભગવાનાહ—‘ગોયમા !’ હે ગૌતમ ! ‘અસંખેજ્જસમઙ્ગે અંતોમુહુત્તિયે પણ્ણત્તે’
અસંખ્યેયસમયિકં આન્તર્મુહુર્તિકં પ્રજ્ઞતમ્ ॥ સૂ. ૮૨ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘કેવલિસમુદ્ધાણં’ ઇત્યાદિ । ‘કેવલિસમુદ્ધાણં
મંતે !’ કેવલિસમુદ્ધાતઃ સ્વલ્પ મદન્ત ! = હે મદન્ત ! કેવલિસમુદ્ધાતઃ ‘કઠ્ઠસમઙ્ગે
પણ્ણત્તે’ કતિસમયિકઃ પ્રજ્ઞતઃ, ભગવાનાહ—‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અઠ્ઠસમઙ્ગે
પણ્ણત્તે’ અષ્ટસમયિકઃ પ્રજ્ઞતઃ । અન્તર્મુહુર્તભાવિપરમપદે કેવલિનિ યઃ સમુદ્ધાતો ભવતિ સ
કેવલિસમુદ્ધાતઃ, સ ચાષ્ટસુ સમયેષુ ભવતીત્યર્થઃ । તદેવાહ—‘તંજહા’ તથા ‘પઢમે સમ્મં

અભિમુક્ષ ક્રિયા જાતા હૈ ઉસકા નામ આવર્જીકરણ હૈ । યહ કેવલિસમુદ્ધાત કે પહિલે હોતા
હૈ । ઉદયાવલિકા મેં કર્મપુદ્ગલ કા પ્રક્ષેપ કરને—રૂપ વ્યાપાર કા યહ નામાન્તર હૈ ॥ સૂ. ૮૨ ॥

‘કેવલિસમુદ્ધાણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મગવન્ ! (કેવલિસમુદ્ધાણં કઠ્ઠસમઙ્ગે પણ્ણત્તે)
કેવલિસમુદ્ધાત કિતના સમય કા કહા ગયા હૈ ? ઉત્તર—(ગોયમા) હે ગૌતમ !
(અઠ્ઠસમઙ્ગે પણ્ણત્તે) ઇસકા કાલ ૮ સમય કા કહા ગયા હૈ । અન્તર્મુહુર્ત મેં
પરમપદ કા લાભ જિનકો હોને બાલા હૈ એસે કેવલિયોં દ્વારા જો સમુદ્ધાત ક્રિયા જાતા
હૈ ઉસકા નામ કેવલિસમુદ્ધાત હૈ । ઇસકા કાલ ૮ સમય કા હૈ । (તંજહા) વહ
સમુદ્ધાત ઇસ પ્રકાર સે હોતા હૈ—(પઢમે સમ્મં દંડં કરેઙ્) પ્રથમ સમય મેં કેવલી કે

જીવ મોક્ષની સામે કરવામાં આવે છે તેનું નામ આવજીકરણ છે. તે
કેવલિસમુદ્ધાતની પહેલાં થાય છે. ઉદયાવલિકામાં કર્મપુદ્ગલોને પ્રક્ષેપ
કરવા રૂપ વ્યાપારનું આ નામાંતર છે. (સૂ. ૮૨)

‘કેવલિસમુદ્ધાણં મંતે !’ ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે ભગવાન્ ! (કેવલિસમુદ્ધાણં કઠ્ઠસમઙ્ગે પણ્ણત્તે)
કેવલિસમુદ્ધાતના કેટલા સમય કહેલા છે ? ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ !
(અઠ્ઠસમઙ્ગે પણ્ણત્તે) તેનો કાળ ૮ સમયનો કહેલો છે. અન્તર્મુહુર્તમાં પરમપદનો
લાભ જેમને થવાનો હોય છે એવા કેવળીઓ દ્વારા જે સમુદ્ધાત કરવામાં
આવે છે તેનું નામ કેવલિસમુદ્ધાત છે. તેનો કાલ ૮ સમયનો છે. (તંજહા)

વિરૂપ સમય કવાડં કરેડ, તરૂપ સમય મંથં કરેડ, ચરૂથે

દંડં કરેડ' પ્રથમે સમયે દણ્ડં કરોતિ=પ્રથમે સમયે ઊર્ધ્વાધોલોકાન્તં યાવત્પ્રસારિતૈરા-
ત્મપ્રદેશૈર્દણ્ડાકારતાં કુરુતે । 'વિરૂપ સમય કવાડં કરેડ' દ્વિતીયે સમયે કપાટ કરોતિ=
દ્વિતીયે સમયે પૂર્વપશ્ચિમયોર્દિશોર્વિસ્તૃતૈરાત્મપ્રદેશૈર્વ કપાટાકારતાં કુરુતે । 'તરૂપ સમય
મંથં કરેડ' તૃતીયે સમયે મન્થાનં કરોતિ=તૃતીયે સમયે દક્ષિણોત્તરયોર્દિશોરપ્યાત્મપ્રદેશૈઃ
કપાટાકારવિસ્તૃતૈર્મન્થાનાકારતાં કુરુતે । 'ચરૂથે સમય લોયં પૂરેડ' ચતુર્થે સમયે
લોકં પૂરયતિ=ચતુર્થે સમયે તદન્તરાલપૂરણેન સર્વલોકસ્ય પૂરણં કુરુતે । એવં સમુદ્ધાતં કુર્વન્
કેવલી ચતુર્ભિઃ સમયૈર્વિશ્વવ્યાપી ભવતિ ।

એવં કેવલી સ્વાત્મપ્રદેશાનાં વિસ્તારણેન કર્મલેશાન્ સમીકૃત્ય વિપરીતક્રમેણ સમુ-

આત્મપ્રદેશ દણ્ડાકાર હોતે હૈં, અર્થાત્ પ્રથમ સમય મેં ઊર્ધ્વલોક એવં અધોલોક કે અન્ત તક
પ્રસારિત હોકર આત્મપ્રદેશ દંડાકારતા કો ધારણ કરતે હૈં । (વિરૂપ સમય કવાડં કરેડ)
દ્વિતીય સમય મેં વે હી આત્મપ્રદેશ પૂર્વ ઓર પશ્ચિમ દિશા મેં વિસ્તૃત હોકર કપાટાકારતા
કો ધારણ કરતે હૈં । (તરૂપ સમય મંથં કરેડ) તૃતીય સમય મેં દક્ષિણ ઓર ઉત્તરદિશા
મેં વિસ્તૃત હોકર મન્થાન કે આકાર હો જાતે હૈં । (ચરૂથે સમય લોયં કરેડ) ચતુર્થ
સમય મેં ઇન્કે અન્તરાલ કી પૂર્તિ કરતે હુએ વે સમસ્ત લોક કો પૂરણ કર દેતે હૈં, અર્થાત્
સમસ્ત લોક મેં ફેલ જાતે હૈં । ઇસકા નામ લોકપૂરણસમુદ્ધાત હૈ । ઇસ પ્રકાર આત્મપ્ર-
દેશોં કો ફેલાને-રૂપ સમુદ્ધાત કરતે હુએ વે કેવલી ૪ ચાર સમયોં મેં વિશ્વવ્યાપી બને
જાતે હૈં, પશ્ચાત્ પ્રસારિત ઊન આત્મપ્રદેશોં કો સંકુચિત કરતે હૈં । ઇસ ક્રિયા મેં મી ઊન્હેં

તે સમુદ્ધાત આ પ્રકારે થાય છે, (પઢમે સમય દંડં કરેડ) પ્રથમ સમયમાં
કેવળીના આત્મપ્રદેશ દંડાકાર હોય છે, અર્થાત્ પ્રથમ સમયમાં ઊર્ધ્વલોક
તેમજ અધોલોકના અંત સુધી ફેલાઈ જઈને આત્મપ્રદેશ દંડાકાર-
તાને ધારણ કરે છે. (વિરૂપ સમય કવાડં કરેડ) બીજા સમયમાં તેજ આત્મ-
પ્રદેશ પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં વિસ્તાર પામીને કપાટના આકારને ધારણ
કરે છે. (તરૂપ સમય મંથં કરેડ) ત્રીજા સમયમાં દક્ષિણ તથા ઉત્તર દિશામાં
વિસ્તાર પામીને મન્થાનનો આકાર ધારણ કરે છે. (ચરૂથે સમય લોયં પૂરેડ)
ચોથા સમયમાં તેના અંતરાલની પૂર્તિ કરતાં કરતાં તે સમસ્ત લોકને પૂરણ
કરી દીએ છે, અર્થાત્ સમસ્ત લોકમાં ફેલાઈ જાય છે. આનું નામ લોકપૂરણ-
સમુદ્ધાત છે. આ પ્રકારે આત્મપ્રદેશોના ફેલાવા રૂપ સમુદ્ધાત કરતાં કરતાં
તે કેવલી ૪ સમયોમાં વિશ્વવ્યાપી બની જાય છે, પછી પ્રસારેલા તે આત્મ-
પ્રદેશોને સંકુચિત કરે છે. આ ક્રિયામાં પણ તેને ૪ સમય લાગે છે. માટે તે

સમણ લોયં પૂરેહ, પંચમે સમણ લોયં પડિસાહરહ, છટ્ટે સમયે મંથં પડિસાહરહ, સત્તમે સમણ કવાડં પડિસાહરહ, અટ્ટમે સમણ દંડં પડિસાહરહ, પચ્છા સરીરત્થે ભવહ ॥ સૂ. ૮૩ ॥

મૂલમ્—સે ણં મંતે ! તહા સમુગ્ધાયં ગણ કિં મણજોગં

દ્વાતેન પ્રસારિતાન્ આત્મપ્રદેશાન્ સંહરતિ, તદાહ—‘પંચમે સમયે’ इत्यादि । ‘પંચમે સમણ લોયં પડિસાહરહ’ પચ્ચમે સમયે લોકં પ્રતિસંહરતિ=ચતુર્ભિઃ સમયૈર્જગત્પૂરણં કૃત્વા પચ્ચમે સમયે આત્મપ્રદેશાન્ અન્તરાલાવસ્થિતાન્ ઉપસંહરતિ । ‘છટ્ટે સમણ મંથં પડિસાહરહ’ ષષ્ઠે સમયે મન્થાનં પ્રતિસંહરતિ । ‘સત્તમે સમણ કવાડં પડિસાહરહ’ સત્તમે સમયે કપાટં પ્રતિસંહરતિ । ‘અટ્ટમે સમણ દંડં પડિસાહરહ’ અષ્ટમે સમયે દણ્ડં પ્રતિસંહરતિ । ‘તઓ પચ્છા સરીરત્થે ભવહ’ તતઃ પશ્ચાત્ શરીરસ્થો ભવતિ ॥ સૂ. ૮૩ ॥

ટીકા—‘સે ણં મંતે !’ इत्यादि । ‘સે ણં મંતે !’ અથ સ્વલુ ભદન્ત ! ‘તહા

૪ ચાર સમય લગતે હૈ । સો યે સર્વપ્રથમ (પંચમે સમણ લોયં પડિસાહરહ) પંચમ સમય મેં અન્તરાલ મેં સ્થિત ઉન આત્મપ્રદેશોં કો ઉપસંહત કરતે હૈ । (છટ્ટે સમણ મંથં પડિસાહરહ) છઠે સમય મેં મંથાકારરૂપ સે સ્થિત ઉન આત્મપ્રદેશોં કો સંકોચતે હૈ । (સત્તમે સમણ કવાડં પડિસાહરહ) ૭ વેં સમય મેં કપાટાકારતા કો ઓર (અટ્ટમે સમણ દંડં પડિસાહરહ) આઠવેં સમય મેં દંડાકારતા કો સંકુચિત કરતે હૈ । (તઓ પચ્છા સરીરત્થે ભવહ) ઉસકે બાદ આત્મસ્થ હો જાતે હૈ ॥ સૂ. ૮૩ ॥

‘સે ણં મંતે !’ इत्यादि ।

(સે ણં મંતે ! તહા સમુગ્ધાયં ગણ કિં મણજોગં જુજહ) હે ભદન્ત ! ઇસ

સહુથી પહેલાં (પંચમે સમણ લોયં પડિસાહરહ) પાંચમ સમયમાં, અંતરાલમાં રહેલા તે આત્મપ્રદેશોને ઉપસંહાર કરે છે. (છટ્ટે સમણ મંથં પડિસાહરહ) છઠા સમયમાં મંથાકારરૂપથી સ્થિત (રહેલા) તે આત્મપ્રદેશોને સંકોચે છે. (સત્તમે સમણ કવાડં પડિસાહરહ) સાતમા સમયમાં કપાટાકારતાને, અને (અટ્ટમે સમણ દંડં પડિસાહરહ) આઠમા સમયમાં દંડાકારતાને સંકુચિત કરે છે. (તઓ પચ્છા સરીરત્થે ભવહ) ત્યારપછી આત્મસ્થ થઈ જાય છે. (સૂ. ૮૩)

‘સે ણં મંતે !’ इत्यादि.

(સે ણં મંતે ! તહા સમુગ્ધાયં ગણ કિં મણજોગં જુજહ ?) હે ભદન્ત !

જુંજઈ ?, વચજોગં જુંજઈ ?, કાયજોગં જુંજઈ ?। ગોયમા ! ણો મણજોગં જુંજઈ, ણો વચજોગં જુંજઈ, કાયજોગં જુંજઈ ॥ સૂ૦ ૮૪ ॥

મૂલમ્—કાયજોગં જુંજમાણે કિં ઓરાલિયસરીર-

સમુદ્ધાયં ગણ' તથા સમુદ્ધાતં ગતઃ કેવલી 'કિં મણજોગં જુંજઈ?' કિં મનોયોગં યુનક્તિ? 'વચજોગં જુંજઈ?' વાગ્યોગં યુનક્તિ કિમ્? 'કાયજોગં જુંજઈ' કાયયોગં યુનક્તિ કિમ્?, ભગવાનાહ—'ગોયમા !' હે ગૌતમ ! 'ણો મણજોગં જુંજઈ' નો મનોયોગં યુનક્તિ, 'ણો વચજોગં જુંજઈ' નો વાગ્યોગં યુનક્તિ, 'કાયજોગં જુંજઈ' કાયયોગં યુનક્તિ ॥ સૂ. ૮૪ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—'કાયજોગં' ઇત્યાદિ । 'કાયજોગં જુંજમાણે કિં ઓરાલિયસરીરકાયજોગં જુંજઈ?' કાયયોગં યુજ્ઞાનઃ કિમૌદારિકશરીરકાયયોગં યુક્તે ?

પ્રકાર સમુદ્ધાત અવસ્થા મેં રહનેવાલા વહ આત્મા કિતને યોગોં કો પ્રયુક્ત કરતા હૈ ?, વ્યા મનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતા હૈ ? (વચજોગં જુંજઈ) વ્યા વચનયોગ કો પ્રયુક્ત કરતા હૈ ? (કાયજોગં જુંજઈ) વ્યા કાયયોગ કો પ્રયુક્ત કરતા હૈ ? ભગવાન્ ને કહા (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ણો મણજોગં જુંજઈ, ણો વચજોગં જુંજઈ, કાયજોગં જુંજઈ) વહ ન મનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતા હૈ ઓર ન વચનયોગ કો પ્રયુક્ત કરતા હૈ, કિન્તુ એક કાયજોગ કો હી પ્રયુક્ત કરતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮૪ ॥

'કાયજોગં જુંજમાણે' ઇત્યાદિ ।

ગૌતમ ને પુનઃ પ્રભુ સે પૂછા કિ હે પ્રભુ ! (કાયજોગં જુંજમાણે) કેવલી કાયયોગ કો યોજિત કરતે હુણ (કિં ઓરાલિયસરીરકાયજોગં જુંજઈ ?) વ્યા ઔદા-

આ પ્રકારે સમુદ્ધાત અવસ્થામાં રહેવાવાળા તે આત્મા કેટલા યોગોને પ્રયુક્ત કરે છે ? શું મનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? (વચજોગં જુંજઈ) શું વચન-યોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? (કાયજોગં જુંજઈ) શું કાયયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? ભગવાને કહ્યું—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ણો મણજોગં જુંજઈ, ણો વચજોગં જુંજઈ, કાયજોગં જુંજઈ) તે નથી મનોયોગને પ્રયુક્ત કરતા, તથા નથી વચન-યોગને પ્રયુક્ત કરતા, પરંતુ એક કાયયોગને જ પ્રયુક્ત કરે છે. (સૂ. ૮૪)

'કાયજોગં જુંજમાણે' ઇત્યાદિ.

ગૌતમે વળી પાછું પ્રભુને પૂછ્યું કે હે પ્રભુ ! (કાયજોગં જુંજમાણે) કેવલી કાયયોગને યોજિત કરતાં કરતાં (કિં ઓરાલિયસરીરકાયજોગં જુંજઈ ?)

कायजोगं जुंजइ?, ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ?,
वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ?, वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं
जुंजइ?, आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ?, आहारगमिस्सस-
रीरकायजोगं जुंजइ?, कम्मसरीरकायजोगं जुंजइ?। गोयमा!

‘ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ?’ औदारिकमिश्रशरीरकाययोगं युङ्क्ते?
‘वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ’ वैक्रियशरीरकाययोगं युङ्क्ते?, ‘वेउव्वियमिस्सस-
रीरकायजोगं जुंजइ?’ वैक्रियमिश्रशरीरकाययोगं युङ्क्ते? ‘आहारगसरीरकायजोगं
जुंजइ?’ आहारकशरीरकाययोगं युङ्क्ते? ‘आहारगमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ’ आहा-
रकमिश्रशरीरकाययोगं युङ्क्ते? ‘कम्मसरीरकायजोगं जुंजइ’ कर्मणशरीरकाययोगं
युङ्क्ते?, भगवानाह—‘गोयमा!’ गौतम! ‘ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ’ औदारिक-

रिकशरीररूपी काययोग को काममें लाते हैं? अथवा (ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं
जुंजइ) औदारिकमिश्रशरीरकाययोग को काम में लाते हैं? (वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ?
वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ? आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ? आहार-
गमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ? कम्मसरीरकायजोगं जुंजइ?) या वैक्रियिकशरीर-
काययोगरूपी काययोग को काम में लाते हैं? या वैक्रियिकमिश्रशरीर को काम में लाते हैं? अथवा
आहारकशरीररूपी काययोग को काम में लाते हैं?, या आहारकमिश्रशरीरकाययोग को काम में
लाते हैं?, या कर्मणशरीरकाययोग को काम में लाते हैं?। भगवान कहते हैं—(गोयमा!) हे
गौतम! (ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ)

शुं औदारिकशरीररूपी काययोगने काममां लाये छे?, अथवा (ओरालिय-
मिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ ?) औदारिकमिश्रशरीरकाययोगने काममां लाये छे ?
(वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ? वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ? आहा-
रगसरीरकायजोगं जुंजइ? आहारगमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ? कम्मसरीरकायजोगं
जुंजइ?) अथवा वैक्रियशरीररूपी काययोगने काममां लावे छे? अथवा
वैक्रियमिश्रशरीरकाययोगने काममां लावे छे? अथवा आहारकशरीररूपी काय-
योगने काममां लावे छे? अथवा आहारकमिश्रशरीरकाययोगने काममां लावे छे?
अथवा कर्मणशरीरकाययोगने काममां लावे छे? भगवान कहे छे—(गोयमा!) हे
गौतम! (ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ ओरालियमिस्सकायजोगं जुंजइ) केवली

ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ, ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं
पि जुंजइ, णो वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ, णो वेउव्वि-
यमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ, णो आहारगमिस्ससरीरकायजोगं
जुंजइ, कम्मसरीरकायजोगंपि जुंजइ । पढमट्टमेसु समएसु

शरीरकाययोगं युङ्क्ते, 'ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ' औदारिकमिश्रशरीर-
काययोगमपि युङ्क्ते, 'णो वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ' 'नो वैक्रियशरीरकाययोगं
युङ्क्ते, 'णो वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ' नो वैक्रियमिश्रशरीरकाययोगं युङ्क्ते,
'णो आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ' नो आहारकशरीरकाययोगं युङ्क्ते, 'णो आहारगमि-
स्ससरीरकायजोगं जुंजइ' नो आहारकमिश्रशरीरकाययोगं युङ्क्ते, 'कम्मसरीरकायजो-
गं जुंजइ' कर्मणशरीरकाययोगमपि युङ्क्ते । 'पढमट्टमेसु समएसु ओरालियसरीरकायजो-
गंपि जुंजइ' प्रथमाऽष्टमयोः समययोरौदारिकशरीरकाययोगमपि युङ्क्ते, 'विइयच्छट्ठसत्तमेसु

केवली भगवान् औदारिकशरीरकाययोग को काम में लाते हैं, तथा औदारिकमिश्रशरीरकाययोग को
भी काम में लाते हैं । (णो वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ, णो वेउव्वियमिस्ससरीर-
कायजोगं जुंजइ, णो आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ, णो आहारगमिस्ससरीर-
कायजोगं जुंजइ, कम्मसरीरकायजोगंपि जुंजइ) वैक्रियशरीरकाययोग, वैक्रियमिश्रशरीर-
काययोग, आहारकशरीरकाययोग, आहारकमिश्रशरीरकाययोग इनको काम में नहीं लाते । परन्तु
कर्मणशरीरकाययोग को वे काम में लाते हैं । (पढमट्टमेसु समएसु ओरालियसरीरकाय-
जोगं जुंजइ विइयच्छट्ठसत्तमेसु समएसु ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ,
तइयचउत्थपंचमेहिं कम्मसरीरकायजोगं जुंजइ) प्रथम और आठवें समय में तो

भगवान् औदारिकशरीरकाययोगने काममां लावे छे तथा औदारिकमिश्रशरीरकाय-
योगने यणु काममां लावे छे. (णो वेउव्वियसरीरकायजोगं जुंजइ, णो वेउव्वि-
यमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ, णो आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ, णो आहारगमि-
स्ससरीरकायजोगं जुंजइ, कम्मसरीरकायजोगंपि जुंजइ) वैक्रियशरीरकाययोगने,
वैक्रियमिश्रशरीरकाययोगने, आहारकशरीरकाययोगने, आहारकमिश्रशरीरकाय-
योगने काममां लावता नथी, परंतु कर्मणशरीरकाययोगने तेओ काममां लावे छे.
(पढमट्टमेसु समएसु ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ, विइयच्छट्ठसत्तमेसु समएसु
ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ, तइयचउत्थपंचमेहिं कम्मसरीरकायजोगं जुंजइ)

ઓરાલિયસરીરકાયજોગં જુંજઈ, વિદ્યછટ્ટસત્તમેસુ સમણસુ
ઓરાલિયમિસ્સસરીરકાયજોગં જુંજઈ, તદ્યચઉત્થપંચમેહિં કમ્મ-
સરીરકાયજોગં જુંજઈ ॥ સૂ૦ ૮૫ ॥

મૂલમ્—સે ણં મંતે ! તહા સમુઘાયગણ સિજ્ઞઈ

ઓરાલિયમિસ્સસરીરકાયજોગં જુંજઈ ' દ્વિતીયષષ્ટસત્તમેષુ સમયેષુ ઔદારિકમિશ્રશરીર-
કાયયોગં યુક્તે, મિશ્રત્વં ચાત્ર કાર્મણેનૈવ સહૌદારિકસ્યાવસ્થાનાત્ । ' તદ્યચઉત્થપંચમેહિં
કમ્મસરીરકાયજોગં જુંજઈ ' તૃતીયચતુર્થપચ્ચમેષુ સમયેષુ કાર્મણશરીરકાયયોગં
યુક્તે ॥ સૂ. ૮૫ ॥

ટીકા—‘સે ણં મંતે’ इत्यादि । ‘સે ણં મંતે ! તહા સમુઘાયગણ’ સ સ્વલુ ભદન્ત !

ઔદારિકશરીરરૂપી કાયયોગ કો વે કામ મેં લાતે હૈં, દૂસરે, છઠે એવં સાતવેં સમય મેં
ઔદારિકમિશ્રશરીરકાયયોગ કો કામ મેં લાતે હૈં, એવં તીસરે, ચૌથે એવં પંચમ સમય મેં કાર્મ-
ણશરીરરૂપી કાયયોગ કો કામ મેં લાતે હૈં ॥

ભાવાર્થ—કાયયોગ ૭ પ્રકાર કા હૈ । ઉનમેં ઔદારિકશરીરકાયયોગ, ઔદારિકમિશ્રશરીર-
કાયયોગ એવં કાર્મણશરીરકાયયોગ યે ૩ ત્રીન યોગ કેવલી કે હોતે હૈં । બાકી કે ૪ કાયયોગ
કેવલી કે નહીં હોતે હૈં । પ્રથમ ઔર આઠવેં સમય મેં ઔદારિકશરીરકાયયોગ હોતા હૈ, દ્વિતીય,
છઠવેં ઔર સાતવેં સમય મેં ઔદારિકમિશ્રશરીરકાયયોગ હોતા હૈ ઔર તીસરે, ચૌથે એવં પાંચવેં
સમય મેં ઉનકે સમુદ્ઘાત અવસ્થા મેં કાર્મણશરીરરૂપી કાયયોગ હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮૫ ॥

પ્રથમ તથા આઠમા સમયમાં તે ઔદારિકશરીરરૂપી કાયયોગને તેઓ કામમાં
લાવે છે. બીજા, છઠા તેમજ સાતમા સમયમાં ઔદારિકમિશ્રશરીરકાયયોગને કામમાં
લાવે છે, તેમજ ત્રીજા, ચોથા અને પાંચમા સમયમાં કાર્મણશરીરરૂપી કાયયોગને
કામમાં લાવે છે.

ભાવાર્થ—કાયયોગ ૭ પ્રકારના છે, તેમાં ઔદારિકશરીરકાયયોગ, ઔદારિક-
મિશ્રશરીરકાયયોગ, તેમજ કાર્મણશરીરકાયયોગ, આ ત્રણ યોગ કેવલીના હોય છે.
બાકીના ૪ કાયયોગ કેવલીના હોતા નથી. પ્રથમ અને આઠમા સમયમાં
ઔદારિકકાયયોગ હોય છે. બીજા, છઠા અને સાતમા સમયમાં ઔદારિક-
મિશ્રશરીરકાયયોગ હોય છે, અને ત્રીજા, ચોથા તેમજ પાંચમા સમયમાં તેમની
સમુદ્ઘાત-અવસ્થામાં કાર્મણશરીરરૂપી કાયયોગ હોય છે. (સૂ. ૮૫)

બુજ્ઞઇ મુચ્છઇ પરિણિવ્વાઇ સઽવ્વદુક્ખાણં અંતં કરેઇ ? ણો ઇણદ્દે સમદ્દે ! સે ણં તઓ પડિણિયત્તઇ, પડિણિયત્તિત્તા ઇહમાગચ્છઇ, તઓ પચ્છા મણજોગંપિ જુંજઇ, વયજોગંપિ જુંજઇ, કાયજોગંપિ જુંજઇ ॥ સૂ૦ ૮૬ ॥

તથા સમુદ્ધાતગતઃ—હે ભદન્ત ! સ સ્વલુ તથા સમુદ્ધાતગતઃ=કૃતસમુદ્ધાતઃ કેવલી ‘સિજ્ઞઇ બુજ્ઞઇ મુચ્છઇ પરિણિવ્વાઇ સઽવ્વદુક્ખાણમંતં કરેઇ ?’ સિધ્ધતિ, બુધ્ધતે, મુચ્ચતે, પરિનિર્વાતિ, સર્વદુઃખાનામન્તં કરોતિ કિમ્ ?, ભગવાનાહ—‘ ણો ઇણદ્દે સમદ્દે’ નાડ્યમર્થઃ સમર્થઃ ! ‘સે ણં’ સ સ્વલુ ‘તઓ’ તતઃ=સમુદ્ધાતાત્ ‘પડિણિયત્તઇ’ પ્રતિનિર્વર્તે, ‘પડિણિયત્તિત્તા’ પ્રતિનિર્વર્ત્ય ‘ઇહમાગચ્છઇ’ ઇહાડ્ડગચ્છતિ=શરીરસ્થો ભવતિ । ‘તઓ પચ્છા’ તતઃ પશ્ચાત્, ‘મણજોગંપિ જુંજઇ’ મનોયોગમપિ યુજ્જ્ઞે, ‘વયજોગંપિ જુંજઇ’ વાયોગમપિ યુજ્જ્ઞે ‘કાયજોગંપિ જુંજઇ’ કાયયોગમપિ યુજ્જ્ઞે ॥ સૂ૦ ૮૬ ॥

‘સે ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

(મંતે !) હે ભદન્ત ! (સે ણં તહા સમુગ્ધાયગણ) સમુદ્ધાત અવસ્થા મેં કેવલી ભગવાન્ (સિજ્ઞઇ બુજ્ઞઇ મુચ્છઇ પરિણિવ્વાઇ) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત એવં પરિનિર્વાણ હો (સઽવ્વદુક્ખાણં અંતં કરેઇ) ક્યા સમસ્ત દુઃખોં કા અંત કરતે હૈં ? પ્રભુ ને ઉત્તર દિયા કિ (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) યહ અર્થ સમર્થિત નહીં હૈ । (સે ણં તઓ પડિણિયત્તઇ, પડિણિયત્તિત્તા ઇહમાગચ્છઇ, આગચ્છિત્તા તઓ પચ્છા મણજોગં પિ જુંજઇ, વયજોગં પિ જુંજઇ, કાયજોગં પિ જુંજઇ) કિન્તુ જબ વે સમુદ્ધાત કર ચુકતે હૈં

‘સે ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ.

(મંતે !) હે ભદન્ત ! (સે ણં સમુગ્ધાયગણ) સમુદ્ધાત અવસ્થામાં કેવલી ભગવાન્ (સિજ્ઞઇ, બુજ્ઞઇ, મુચ્છઇ, પરિણિવ્વાઇ) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત તેમજ પરિનિર્વાણ થઈને (સઽવ્વદુક્ખાણં અંતં કરેઇ) શું સમસ્ત દુઃખોને અંત કરે છે ? પ્રભુએ ઉત્તર આપ્યો કે (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ણો ઇણદ્દે સમદ્દે) આ અર્થ સમર્થિત નથી. (સે ણં તઓ પડિણિયત્તઇ, પડિણિયત્તિત્તા ઇહમાગચ્છઇ, આગચ્છિત્તા તઓ પચ્છા મણજોગં પિ જુંજઇ, વયજોગંપિ જુંજઇ, કાયજોગં પિ જુંજઇ) પરંતુ બ્યારે સમુદ્ધાત કરી ચુકે છે અર્થાત્ તે ક્રિયાથી નિવૃત્ત થઈ બીય છે અને પૂર્વ પ્રમાણે શરીરમાં સ્થિત થઈ બીય છે ત્યારે

**મૂલમ—મળજોગં જુંજમાણે કિં સચ્ચમળજોગં જુંજઈ ?
મોસમળજોગં જુંજઈ ?, સચ્ચામોસમળજોગં જુંજઈ ?, અસચ્ચામો-**

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—“મળજોગં” ઇત્યાદિ । ‘મળજોગં જુંજમાણે કિં સચ્ચમળજોગં જુંજઈ’ મનોયોગં યુજ્ઞાનઃ કિં સત્યમનોયોગં યુજ્ઞતે ? ‘મોસમળજોગં જુંજઈ ?’ મૃષામનોયોગં યુજ્ઞતે ? ‘સચ્ચામોસમળજોગં જુંજઈ’ સત્યમૃષામનોયોગં યુજ્ઞતે કિમ્ ?, ભગવા-

અર્થાત્ ઉસ ક્રિયા સે નિવૃત્ત હો ચુકતે હૈં ઓર પૂર્વવત્ શરીર મેં સ્થિત હો જાતે હૈં તબ મનોયોગ કો ભી પ્રયુક્ત કરતે હૈં, વચનયોગ કો ભી પ્રયુક્ત કરતે હૈં તથા કાયયોગ કો ભી પ્રયુક્ત કરતે હૈં । સમુદ્ઘાત-અવસ્થા મેં મરણ નહીં હોતા । અતઃ મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ ઉસ સમય નહીં હોતી ॥ સૂ. ૮૬ ॥

‘મળજોગં જુંજમાણે’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—હે મદંત ! આપને જો અભી યહ બાત કહી હૈ કિ સમુદ્ઘાત સે નિવૃત્ત હોને પર કેવલી ભગવાન્ મનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં સો ઇસ વિષય મેં યહ પૂછતા હું કિ વે ભગવાન્ (મળજોગં જુંજમાણે) મનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હુએ ચાર મનોયોગોં મેં સે કૌન સે મનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં ? (કિં સચ્ચમળજોગં જુંજઈ, મોસમળજોગં જુંજઈ, સચ્ચામોસમળજોગં જુંજઈ, અસચ્ચામોસમળજોગં જુંજઈ ?) સત્યમનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં, યા અસત્યમનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં, અથવા મિશ્રમનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં, અસત્યમૃષામનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં ? અર્થાત્ વ્યવહારમનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં ? । (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સચ્ચ-

મનોયોગને પણ પ્રયુક્ત કરે છે, વચનયોગને પણ પ્રયુક્ત કરે છે તથા કાયયોગને પણ પ્રયુક્ત કરે છે. સમુદ્ઘાત અવસ્થામાં મરણ થતું નથી. તેથી મુક્તિની પ્રાપ્તિ તે સમયે થતી નથી. (સૂ. ૮૬)

‘મળજોગં જુંજમાણે’ ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! આપે જે હમણાં એ વાત કહી છે, કે સમુદ્ઘાતથી નિવૃત્ત થતાં કેવલી ભગવાન મનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે. માટે એ વિષયમાં એ પૂછું છું કે તે ભગવાન (મળજોગં જુંજમાણે) મનોયોગને પ્રયુક્ત કરતાં ચાર મનોયોગ-માંથી કયા મનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? (કિં સચ્ચમળજોગં જુંજઈ ? મોસમળજોગં જુંજઈ ? સચ્ચામોસમળજોગં જુંજઈ ? અસચ્ચામોસમળજોગં જુંજઈ ?) શું સત્ય-મનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? અથવા અસત્યમનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? અથવા મિશ્રમનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? કે અસત્યમૃષામનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે અર્થાત્ વ્યવહારમનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? ઉત્તર—(ગોયમા !) હે

સમણજોગં જુંજઈ ? ગોયમા ! સચ્ચમણજોગં જુંજઈ, ણો મોસમણ-
જોગં જુંજઈ, ણો સચ્ચામોસમણજોગં જુંજઈ, અસચ્ચામોસમણજોગં
પિ જુંજઈ ॥ સૂ૦ ૮૭ ॥

મૂલમ્—વયજોગં જુંજમાણે કિં સચ્ચવઈજોગં જુંજઈ ?

નાહ—‘ગોયમા ! સચ્ચમણજોગં જુંજઈ’ ગૌતમ ? સત્યમનોયોગં યુઙ્ક્તે, ‘ણો મોસમણજોગં
જુંજઈ’ નો મૃષામનોયોગં યુઙ્ક્તે ‘ણો સચ્ચામોસમણજોગં જુંજઈ’ નો સત્યમૃષામનોયોગં
યુઙ્ક્તે, ‘અસચ્ચામોસમણજોગંપિ જુંજઈ’ અસત્યામૃષામનોયોગમપિ યુઙ્ક્તે ॥ સૂ૦ ૮૭ ॥

ટીકા—ગૌતમઃપૃચ્છતિ—‘વયજોગં’ इत्यादि । ‘વયજોગં જુંજમાણે કિં સચ્ચ-
વઈજોગં જુંજઈ’ વાગ્યોગં યુજ્ઞાનઃ કિં સત્યવાગ્યોગં યુઙ્ક્તે ? ‘મોસવઈજોગં જુંજઈ’ મૃષાવા-

મણજોગં જુંજઈ) વે કેવલી સત્યમનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં, (ણો મોસમણજોગં જુંજઈ ણો
સચ્ચામોસમણજોગં જુંજઈ, અસચ્ચામોસમણજોગં જુંજઈ) અસત્યમનોયોગ એવં મિશ્રમનોયોગ
કો પ્રયુક્ત નહીં કરતે હૈં, કિન્તુ અસત્યામૃષામનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં, અર્થાત્ વ્યવહાર
મનોયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં । સત્યમનોયોગ એવં વ્યવહારમનોયોગ કો વે કેવલી પ્રયુક્ત
કરતે હૈં, અન્ય દો કો નહીં ॥ સૂ૦ ૮૭ ॥

‘વયજોગં જુંજમાણે’ इत्यादि ।

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! વે કેવલી જો (વયજોગં જુંજમાણે કિં) વચનયોગ કો
પ્રયુક્ત કરતે હૈં સો ક્યા (સચ્ચવઈજોગં જુંજઈ, મોસવઈજોગં જુંજઈ, સચ્ચામોસવઈજોગં
જુંજઈ, અસચ્ચામોસવઈજોગં જુંજઈ) સત્યવચન યોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હૈં, યા અસત્યવચન-

ગૌતમ ! (સચ્ચમણજોગં જુંજઈ) તે કેવળી સત્યમનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે.
(ણો મોસમણજોગં જુંજઈ, ણો સચ્ચામોસમણજોગં જુંજઈ, અસચ્ચામોસમણજોગં
જુંજઈ) અસત્યમનોયોગ તેમજ મિશ્રમનોયોગને પ્રયુક્ત કરતા નથી; પરંતુ
અસત્યામૃષામનોયોગને પ્રયુક્ત કરે છે અર્થાત્ વ્યવહારમનોયોગને પ્રયુક્ત
કરે છે. સત્યમનોયોગ તેમજ વ્યવહારમનોયોગને તે કેવલી પ્રયુક્ત કરે છે.
બીજા બેને નહિ. (સૂ. ૮૭)

‘વયજોગં જુંજમાણે’ इत्यादि.

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! તે કેવલી કે જે (વયજોગં જુંજમાણે) વચનયોગને
પ્રયુક્ત કરે છે, તે શું (સચ્ચવઈજોગં જુંજઈ, મોસવઈજોગં જુંજઈ, સચ્ચામો-

મોસવજોગં જુંજઈ ? સચ્ચામોસવજોગં જુંજઈ ? અસચ્ચામોસ-
વજોગં જુંજઈ ? સચ્ચવજોગં જુંજઈ, ણો મોસવજોગં જુંજઈ, ણો
સચ્ચામોસવજોગં જુંજઈ, અસચ્ચામોસવજોગં પિ જુંજઈ ॥ સૂ. ૮૮ ॥

મૂલમ—કાયજોગં જુંજમાણે આગચ્છેજ્જ વા ચિટ્ઠેજ્જ

ગ્યોગં યુક્તેઃ ‘સચ્ચામોસવજોગં જુંજઈ’ સત્યમૃષાવાગ્યોગં યુક્તેઃ ‘અસચ્ચામોસવજોગં જુંજઈ’
અસત્યાઽમૃષાવાગ્યોગં યુક્તે કિમ્ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા ! સચ્ચવજોગં જુંજઈ ?’ ગૌતમ !
સત્યવાગ્યોગં યુક્તે, ‘ણો મોસવજોગં જુંજઈ’ નો મૃષાવાગ્યોગં યુક્તે, ણો સચ્ચામોસવજ-
જોગં જુંજઈ’ નો સત્યમૃષાવાગ્યોગં યુક્તે, ‘અસચ્ચામોસવજોગં પિ જુંજઈ’ અસત્યાઽમૃષા-
વાગ્યોગમપિ યુક્તે ॥ સૂ. ૮૮ ॥

ટીકા—‘કાયજોગં’ इत्यादि । ‘कायजोगं जुंजमाणे आगच्छेज्ज वा चिट्ठेज्ज
वा’ काययोगं युञ्जान आगच्छति वा तिष्ठति वा, ‘णिसीएज्ज वा’ निषीदति=उपविशति वा,

योग को प्रयुक्त करते हैं, अथवा मिश्रवचनयोग को प्रयुक्त करते हैं, या असत्यामृषावचनयोग
को प्रयुक्त करते हैं ? उत्तर—(गोयमा !) हे गौतम ! (सच्चवजोगं जुंजइ) वे केवली
सत्यवचनयोग को प्रयुक्त करते हैं, (णो मोसवजोगं जुंजइ णो सच्चामोसवजोगं
जुंजइ) असत्यवचनयोग को एवं मिश्रवचनयोग को प्रयुक्त नहीं करते हैं । (असच्चामोस-
वजोगंपि जुंजइ) परन्तु असत्यामृषावचनयोग को प्रयुक्त करते हैं । चार वचनयोगों में
से केवली के सत्यवचनयोग एवं असत्यामृषावचनयोग दो ही वचनयोग होते हैं, बांका
के दो नहीं ॥ सू. ८८ ॥

સવજોગં જુંજઈ, અસચ્ચામોસવજોગં જુંજઈ) સત્યવચનયોગને પ્રયુક્ત કરે છે,
અથવા અસત્યવચનયોગને પ્રયુક્ત કરે છે, અથવા મિશ્રવચનયોગને પ્રયુક્ત કરે
છે, અથવા અસત્યામૃષાવચનયોગને પ્રયુક્ત કરે છે ? ઉત્તર—(ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (સચ્ચવજોગં જુંજઈ) તે કેવલી સત્યવચનયોગને પ્રયુક્ત કરે છે.
(ણો મોસવજોગં જુંજઈ ણો સચ્ચામોસવજોગં જુંજઈ) અસત્યવચનયોગને તેમજ
મિશ્રવચનયોગને પ્રયુક્ત કરતા નથી, (અસચ્ચામોસવજોગંપિ જુંજઈ) પરન્તુ
અસત્યામૃષાવચનયોગને પ્રયુક્ત કરે છે. ચાર વચનયોગોમાંથી કેવલીના સત્ય-
વચનયોગ તેમજ અસત્યામૃષાવચનયોગ બે જ માત્ર વચનયોગ હોય છે.
બાકીના બે નહિ. (સૂ. ૮૮)

વા ગિસીણ્જ વા તુયટ્ટેજ્જ વા ઉલ્લંઘેજ્જ વા પલ્લંઘેજ્જ વા ઉક્ખેવણં
વા પક્ખેવણં વા તિરિયક્ખેવણં વા કરેજ્જા, પાઠિહારિયં વા,
પીઠફલગસેજ્જાસંથારગં પચ્ચપ્પિણેજ્જા ॥ સૂ. ૮૯ ॥

‘તુયટ્ટેજ્જ વા’ ત્વગ્વર્તયતિ=શયનં કરોતિ વા ‘ઉલ્લંઘેજ્જ વા’ ઉલ્લઙ્ઘયતિ—ગર્તાદિકં વા, ‘પલ્લંઘેજ્જ વા’ પ્રોલ્લઙ્ઘયતિ વા, ઉક્ખેવણં વા’ ઉત્ક્ષેપણમ્=ઊર્ધ્વગમનં વા, ‘પક્ખેવણં વા’ પ્રક્ષેપણં=નીચૈર્ગમનં વા, ‘તિરિયક્ખેવણં વા’ તિર્યક્ષેપણં=તિર્યગમનં વા ‘કરેજ્જા’ કરોતિ, ‘પાઠિહારિયં વા પીઠ-ફલગ-સેજ્જા-સંથારગં પચ્ચપ્પિણેજ્જા’ પ્રતિહાર્યં વા પીઠફલક-શય્યાસંસ્તારકં પ્રત્યર્પયતિ ॥ સૂ. ૮૯ ॥

‘કાયજોગં જુંજમાણે’ ઇત્યાદિ ।

હે ગૌતમ (કાયજોગં જુંજમાણે આગચ્છેજ્જ વા ચિટ્ટેજ્જ વા ગિસીણ્જ વા તુયટ્ટેજ્જ વા ઉલ્લંઘેજ્જ વા પલ્લંઘેજ્જ વા) ઇસ કાયયોગ કો પ્રયુક્ત કરતે હુણ વે આતે હૈં, જાતે હૈં, ઠ્ઠરતે હૈં, ઉઠતે હૈં, બૈઠતે હૈં, સોતે હૈં, કરવટ બદલતે હૈં, ઉલ્લંઘન કરતે હૈં, પ્રલંઘન કરતે હૈં, (ઉક્ખેવણં વા પક્ખેવણં વા તિરિયક્ખેવણં વા કરેજ્જા) ઉત્ક્ષેપણ કરતે હૈં, પ્રક્ષેપણ—હાથ-પૈર કો ઊપર—નીચે કરતે હૈં, તિરછે ગમન કરતે હૈં, (પાઠિહારિયં વા પીઠફલગસેજ્જા-સંથારગં પચ્ચપ્પિણેજ્જા) કામ નિકલ જાને કે બાદ પ્રાતિહાર્યક પીઠ, ફલક, શય્યા, એવં સંથારે કો પીછે દેતે હૈં ॥ સૂ. ૮૯ ॥

“ કાયજોગં જુંજમાણે ” ઇત્યાદિ.

હે ભદ્રન્ત ! કાયયોગ પ્રયુક્ત કરતા કેવળી ભગવાન્ શું શું કામ કરે છે ? હે ગૌતમ ! ((કાયજોગં જુંજમાણે આગચ્છેજ્જ વા ચિટ્ટેજ્જ વા ગિસીણ્જ વા તુયટ્ટેજ્જ વા ઉલ્લંઘેજ્જ વા પલ્લંઘેજ્જ વા) એ કાયયોગને પ્રયુક્ત કરતા તેઓ આવે છે, બાય છે, રોકાય છે, ઉઠે છે, બેસે છે, સુવે છે, કરવટ બદલે છે, ઉલ્લંઘન કરે છે, પ્રલંઘન કરે છે. (ઉક્ખેવણં વા પક્ખેવણં વા તિરિયક્ખેવણં વા કરેજ્જા) ઉત્ક્ષેપણ કરે છે, પ્રક્ષેપણ—હાથપગ ઉંચા—નીચા કરે છે, તિરછા (આડું—અવળું) ગમન કરે છે, (પાઠિહારિયં વા પીઠ-ફલગ-સેજ્જા-સંથારગં પચ્ચપ્પિણેજ્જા) કામ થઈ ગયા પછી પ્રાતિહાર્યક પીઠ, ફલક, શય્યા, તેમજ સંથારાને પાછા મુકી દે છે. (સૂ. ૮૯)

मूलम्—से णं भंते ! तहा सजोगी सिज्झइ जाव अंतं करेइ ? णो इणट्ठे समट्ठे ॥ सू० ९० ॥

मूलम्— से णं पुव्वामेव सण्णस्स पंचिंदियस्स पज्ज-

टीका—गौतमः पृच्छति—‘से णं भंते !’ इत्यादि । ‘से णं भंते ! तहा सजोगी’ स खलु भदन्त ! तथा सयोगी ‘सिज्झइ’ सिध्यति किम् ‘जाव’ यावत् ‘सव्वदुक्खाणमंतं करेइ’ सर्वदुःखानामन्तं करोति किम् ? । भगवानाह—‘णो इणट्ठे समट्ठे’ नाऽयमर्थः समर्थः ॥ सू० ९० ॥

टीका—‘से णं पुव्वामेव’ इत्यादि । ‘से णं’ स केवली खलु ‘पुव्वामेव’ पूर्वमेव= योगनिरोधावस्थाया आदावेव ‘संण्णस्स पंचिंदियस्स’ संज्ञिनः पञ्चेन्द्रियस्य, अत्र पञ्चेन्द्रियस्येति विशेषणं संज्ञिस्वरूपप्रदर्शनार्थं, पञ्चेन्द्रियस्यैव संज्ञित्वात्; ‘पज्जत्तगस्स’ पर्याप्तकस्य= मनःपर्याप्त्या पर्याप्तस्येत्यर्थः, अन्यपर्याप्तस्य मनसोऽभावात् । स च मध्यमादिमनोयोगोऽपि

‘से णं भंते !’ इत्यादि ।

(भंते !) हे भदन्त ! (से तहा सजोगी) वे केवली ऐसी सयोगी अवस्था में रहते हुए (सिज्झइ जाव अंतं करेइ) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त एवं परिनिर्वाण हो समस्त दुःखों का अन्त करते हैं क्या ? उत्तर—हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थित नहीं है । अर्थात् सयोगिकेवली कर्मों का अन्त नहीं करते ! ॥ सू० ९० ॥

‘से णं पुव्वामेव’ इत्यादि ।

(से णं) ये सयोगी केवली भगवान् (पुव्वामेव) पहिले (सण्णस्स पंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स) संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक के (जहणजोगस्स हेट्ठा) जघन्यमनोयोग से भी नीचे

‘से णं भंते !’ इत्यादि.

(भंते !) हे भदन्त ! (से तहा सजोगी) ते केवली अेवी सयोगी—अवस्थायां रहेंतां (सिज्झइ जाव अंतं करेइ) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, तेमज्ज परिनिर्वाण थछं समस्त दुःखनो शुं अंत करे छे ? उत्तर—हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) आ अर्थ समर्थित नथी, अर्थात् सयोगी केवली कर्मोने अंत करेता नथी. (सू. ६०)

“से णं पुव्वामेव” इत्यादि.

(से णं) ते सयोगी केवली भगवान् (पुव्वामेव) पहिलां (सण्णस्स पंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स) संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकना (जहणजोगस्स हेट्ठा)

ત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ હેટ્ઠા અસંખેજ્જગુણપરિહીણં પઢમં મણજોગં
નિરુંભઇ, તયાણંતરં ચ ણં વિંદિયસ્સ પજ્જત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ
હેટ્ઠા અસંખેજ્જગુણપરિહીણં વિઙ્ગયં વયજોગં નિરુંભઇ, તયાણંતરં
ચ ણં સુહુમસ્સ પળગજીવસ્સ અપ્પજ્જત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ
હેટ્ઠા અસંખેજ્જગુણપરિહીણં તઙ્ગયં કાયજોગં ણિરુંભઇ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

સ્યાદિત્યત આહ—‘જહણ્ણજોગસ્સ’ इति । ‘जहण्णजोगस्स’ जघन्ययोगस्य=जघन्य-
मनोयोगवतः, ‘हेट्ठा’ अधः, यो मनोयोगो भवतीति गम्यते, जघन्यमनोयोगसमानो यो न भव-
तीत्यर्थः। योगाश्च-मनोद्रव्याणि तद्रव्यापारश्चेति। जघन्यमनोयोगाधोभागवर्तित्वमेव दर्शयन्नाह—‘असं-
खेज्जगुणपरिहीणं’ इति । असंख्येयगुणपरिहीनम्—असंख्यातगुणेन परिहीनो यः स तथा तम्,
असंख्यातभागमात्रया समये समये क्रमेण तं मनोयोगं निरुन्धानः सर्वमनोयोगं निरुणद्धि
अनुत्तरेणाचिन्त्येन अकरणवर्त्येणेति तदाह—‘पढमं’ इत्यादि । प्रथमं—शेषवागादियोगापेक्षया
प्राथम्येन, ‘मणजोगं’ मनोयोगं ‘निरुंभइ’ निरुणद्धि । ‘तयाणंતરં च ણં’ तदनन्तरं च खलु
‘विंदियस्स’ द्वीन्द्रियस्य ‘पज्जत्तगस्स’ पर्याप्तकस्य ‘जहण्णजोगस्स’ जघन्ययोगस्य ‘हेટ્ઠા’
अधः, ‘असंखेज्जगुणपरिहीणं’ असंख्येयगुणपरिहीणं ‘विङ्गयं’ द्वितीयं ‘वयजोगं’ वाग्योगं
‘નિરુંભઇ’ निरुणद्धि । ‘તયાણંતરં ચ ણં’ તदनન્તરં ચ खलु ‘सुहुमस्स पणगजीवस्स’

કે (અસંખેજ્જગુણપરિહીણં પઢમં મણજોગં નિરુંભઇ) અસંખ્યાત ગુણહીન પ્રથમ મનોયોગ
કા નિરોધ કરતે હૈં, (તયાણંતરં ચ ણં વિંદિયસ્સ પજ્જત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ હેટ્ઠા)
તદનન્તર પર્યાપ્ત દ્વીન્દ્રિય કે જઘન્ય વચનયોગ કે નીચે કે (અસંખેજ્જગુણપરિહીણં વિઙ્-
યં વયજોગં) અસંખ્યાત-ગુણ-હીન દૂસરે વચનયોગ કા(નિરુંભઇ) નિરોધ કરતે હૈં । (તયા-
ણંતરં ચ ણં સુહુમસ્સ પળગજીવસ્સ અપ્પજ્જત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ હેટ્ઠા અસંખેજ્જ-

જઘન્ય મનોયોગથી પણ નીચેના (અસંખેજ્જગુણપરિહીણં પઢમં મણજોગં નિરુંભઇ)
અસંખ્યાતગુણહીન પ્રથમ મનોયોગનો નિરોધ કરે છે. (તયાણંતરં ચ ણં
વિંદિયસ્સ પજ્જત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ હેટ્ઠા) ત્યાર પછી પર્યાપ્ત દ્વીન્દ્રિયના જઘન્ય
વચનયોગની નીચેના (અસંખેજ્જગુણપરિહીણં વિઙ્ગયં વયજોગં) અસંખ્યાત-
ગુણહીન બીજા વચનયોગનો (નિરુંભઇ) નિરોધ કરે છે. (તયાણંતરં ચ ણં
સુહુમસ્સ પળગજીવસ્સ અપ્પજ્જત્તગસ્સ જહણ્ણજોગસ્સ હેટ્ઠા અસંખેજ્જગુણપરિહીણં

मूलम्—‘से णं एएणं उवाएणं पढमं मणजोगं निरुंभइ,
निरुंभित्ता वयजोगं निरुंभइ, निरुंभित्ता कायजोगं निरुंभइ, निरुंभित्ता
जोगणिरुंभइ करेइ, करित्ता अजोगत्तं पाउणइ, पाउणित्ता ईसिं-

सूक्ष्मस्य पनकजीवस्य, ‘अपज्जत्तगस्स’ अपर्याप्तकस्य ‘जहणजोगस्स हेट्ठा असंखेज्ज-
गुणपरिहीणं’ जघन्ययोगस्याधोऽसंख्येयगुणपरिहीनं ‘तइयं’ तृतीयं ‘कायजोगं’
काययोगं ‘निरुंभइ’ निरुणद्धि ॥ सू. ९१ ॥

टीका—‘से णं’ इत्यादि । ‘से णं’ स केवली खलु ‘एएणं उवाएणं
पढमं मणजोगं निरुंभइ’ एतेनोपायेन प्रथमं मनोयोगं निरुणद्धि, ‘निरुंभित्ता’ मनोयोगं
निरुध्य, ‘वयजोगं निरुंभइ’ वाग्योगं निरुणद्धि, ‘निरुंभित्ता’ वाग्योगं निरुध्य
‘कायजोगं निरुंभइ’ काययोगं निरुणद्धि, ‘निरुंभित्ता’ काययोगं निरुध्य, ‘जोगणिरुं-
भइ करेइ’ योगनिरोधं करोति, ‘करित्ता’ योगनिरोधं कृत्वा ‘अजोगत्तं पाउणइ’

गुणपरिहीणं कायजोगं निरुंभइ) पश्चात् सूक्ष्म अपर्याप्त पनक (निगोद) जीव के जघन्य से
नीचे के असंख्यातगुणहीन तृतीय काययोग का निरोध करते हैं ॥ सू० ९१ ॥

‘से णं एएणं उवाएणं’ इत्यादि ।

(एएणं उवाएणं) इस प्रकार के उपाय से (से णं) वह केवली भगवान्
(पढमं मणजोगं) प्रथम मनोयोग का (निरुंभइ) निरोध करते हैं, (निरुंभित्ता) उसका
निरोध हो चुकने के बाद (वयजोगं निरुंभइ) वचनयोग का निरोध करते हैं, (निरुंभित्ता)
इसके बाद (कायजोगं निरुंभइ) कायजोग का निरोध करते हैं । इस रीति से (निरुं-
भित्ता जोगनिरुंभइ करेइ) समस्त योगों का वे निरोध जब करते हैं तब (अजोगत्तं पाउ-

कायजोगं निरुंभइ) पछी सूक्ष्म अपर्याप्त पनक (निगोद) जीवना जघन्यथी
नीचेना असंख्यात गुणहीन त्रीन् काययोगनो निरोध करे छे. (सू. ६९)

‘से णं एएणं उवाएणं’ इत्यादि.

(एएणं उवाएणं) आ प्रकारना उपायथी (से णं) ते केवली भगवान्
(पढमं मणजोगं) प्रथम मनोयोगनो (निरुंभइ) निरोध करे छे, (निरुंभित्ता)
ते निरोध थछ रह्या पछी (वयजोगं निरुंभइ) वचनयोगनो निरोध करे
छे. (निरुंभित्ता) त्थार पछी (कायजोगं निरुंभइ) काययोगनो निरोध करे
छे, आ रीतथी (निरुंभित्ता जोगनिरुंभइ करेइ) समस्त योगनो तेओ निरोध
कियाये करे छे, त्थारे (अजोगत्तं पाउणइ) अयोगी—अवस्थाने प्राप्त थछ जय

હસ્સપંચક્ષરુચ્ચારણદ્વાદાસંસ્થેજ્જસમઇયં અંતોમુહુત્તિયં સેલેસિં
પડિવજ્જઇ, પુવ્વરઇયગુણસેઢીયં ચ ણં કમ્મં તીસે સેલેસિમદ્વાદાસં

અયોગત્વં પ્રાપ્નોતિ, 'અયોગત્તં પાઝણિત્તા' અયોગત્વં પ્રાપ્ય, 'ઈસિંહસ્સપંચક્ષરુ-
ચ્ચારણદ્વાદાસં' ઈષદ્ધસ્વપચ્ચાઽક્ષરોચ્ચારણાઽદ્વાયામ્-ઈષત્=અલ્પાનિ યાનિ હ્રસ્વાનિ પચ્ચાક્ષ-
રાણિ તેષાં યદુચ્ચારણં તસ્ય યાઽદ્વા=કાલઃ સા તથા તસ્યામ્, ઇદમુચ્ચારણં ન દ્રુતં ન વિલમ્બિતં
કિન્તુ મધ્યમમેવ ગૃહ્યતે, 'અસંસ્થેજ્જસમઇયં' અસંસ્થેયસમયિકામ્, 'અંતોમુહુત્તિયં'
આન્તર્મુહૂર્તિકીં 'સેલેસિં' શૈલેશી-શૈલાનામીશઃ શૈલેશો મેરુઃ, તસ્યેવ યા સ્થિરતા=સામ્યાદ-
વસ્થા સા શૈલેશી તામ્, અથવા-શૈલેશઃ=સર્વસંવરરૂપચારિત્રિવાન્, તસ્યેયમવસ્થા યોગનિરોધ-
રૂપા શૈલેશી તાં, શૈલેશ્યવસ્થાયાં કેવલી વેદનીયાદિકર્મચતુષ્ટયં ક્ષપયતિ, તત્પ્રકારમાહ-
'પુવ્વરઇય' इत्यादि । 'पुव्वरइयगुणसेढीयं च णं कम्मं' पूर्वरचितगुणश्रेणिकं च कर्म,
पूर्व=शैलेश्यवस्थायाः प्राग् रचिता गुणश्रेणी यस्य तत्तथा, का नाम गुणश्रेणी ? उच्यते-

णइ)अयोगि-अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं, (पाउणिच्चा ईसिं-हस्स-पंचक्खरु-चचारण-
द्वाए असंस्थेज्जसमइयं अंतोमुहुत्तियं) अयोगी-अवस्था को प्राप्त हो जाने के बाद ह्रस्व
पांच अक्षर के उच्चारण काल-प्रमाण समय में, अर्थात् अस्तंभ्यात समय के अंतर्मुहूर्त जैसे
काल में (सेलेसिं पडिवज्जइ) वे शैलेशी-अवस्था को प्राप्त करते हैं, अथवा सर्व कर्मों के
संवररूप चारित्र वाले की अवस्था को-योगनिरोधरूप अवस्था को प्राप्त करते हैं । इस
शैलेशी-अवस्था में केवली किस प्रकार से वेदनीय आदि चार अघातिया कर्मों को क्षय
करते हैं, इस बात को प्रगट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (पुव्वरइयगुणसेढीयं च णं
कम्मं तीसे सेलेसिमद्वाए असंस्थेज्जाहिं गुणसेढीहिं अणंते कम्मंसे खवयंते)
शैलेशी-अवस्था के पहिले जिन कर्मों की गुणश्रेणी रची जाय वे गुणश्रेणिक कर्म हैं । गुण-

છે. (પાઝણિત્તા ઈસિંહસ્સપંચક્ષરુચ્ચારણદ્વાદાસંસ્થેજ્જસમઇયં અંતોમુહુત્તિયં)
અયોગી-અવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈ ગયા પછી હ્રસ્વ પાંચ અક્ષરના ઉચ્ચારણકાલ-
પ્રમાણ સમયમાં, અર્થાત્ અસંખ્યાત સમયના અંતર્મુહૂર્ત જેવા કાલમાં
(સેલેસિં પડિવજ્જઇ) તેઓ શૈલેશી અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે, અથવા સર્વ-
કર્મોના સંવરરૂપ ચારિત્રવાળાની અવસ્થાને-યોગનિરોધરૂપ અવસ્થાને
પ્રાપ્ત કરે છે. આ શૈલેશી અવસ્થામાં કેવલી કેવા પ્રકારથી વેદનીય આદિ
ચાર અઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય કરે છે ? એ વાતને પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે
છે કે (પુવ્વરઇયગુણસેઢીયં ચ ણં કમ્મં તીસે સેલેસિમદ્વાદાસંસ્થેજ્જાહિં ગુણસેઢીહિં
અણંતે કમ્મંસે સ્વવયંતે) શૈલેશી અવસ્થાની પહેલાં જે કર્મોની ગુણશ્રેણી રચી

યત્ કેવલિનો વેદનીયાદિકં ચતુર્વિધં કર્મ કાલાન્તરવેદ્યં સ્થિતં વર્તતે, તસ્ય શીઘ્રતરક્ષપ-
નાર્થં તસ્યૈવ કર્મણો દલિકં ક્રમેણ પ્રતિસમયં પૂર્વપૂર્વાપેક્ષયા ઉત્તરોત્તરમસંખ્યાતગુણવૃદ્ધ્યા
ગુણીકૃત્ય સ્વલ્પં, બહુ, બહુતરં, બહુતમમ્—ઇતિ શ્રેણીરૂપેણ સ્થિતિસ્વપ્નં રચયતિ । ઇદમત્ર
સ્પષ્ટીકરણમ્—ગુણશ્રેણીરચનાયાઃ પ્રથમસમયે કર્મદલિકં સ્વલ્પં ગૃહ્યતે, દ્વિતીયસમયે પૂર્વા
પેક્ષયા અસંખ્યાતગુણિતં દલિકં ગૃહ્યતે, તૃતીયસમયે તતોડપ્યસંખ્યાતગુણિતં કર્મદલિકં
ગૃહ્યતે, એવમુત્તરોત્તરમસંખ્યાતગુણવૃદ્ધ્યા કર્મદલિકં રચયતિ । એવં કર્મદલિકરચનં તાવ-
દાચ્યં, યાવદન્તર્મુહૂર્તં ચરમસમયમ્ । તચ્ચાન્તર્મુહૂર્તમપૂર્વકરણાનિવૃત્તિકરણકાલાભ્યાં સ્તોકાભ્ય-
ધિકં વેદિતવ્યમ્ । અયં કર્મપુદ્ગલાનાં રચનાવિશેષો “ ગુણશ્રેણી ”—ત્યુચ્યતે । ‘ તીસે

શ્રેણી કિસે કહતે હૈં ? ઇસ બાત કો પ્રકટ કિયા જાતા હૈ—કાલાન્તર મેં વેદન કરને યોગ્ય
જો વેદનીયાદિક ચાર કર્મ અમી અવશિષ્ટ હૈં ઉન્હેં શીઘ્રતર ક્ષપણ કરને કે નિમિત્ત ઉન્કે
દલિયોં કો ક્રમ સે પ્રતિસમય પૂર્વ પૂર્વ કો અપેક્ષા ઉત્તરોત્તર અસંખ્યાત ગુણવૃદ્ધિ સે ગુણિત
કર સ્વલ્પ, બહુ, બહુતર એવં બહુતમ—ઇસ શ્રેણીરૂપ મેં વિભાજિત કરતે હુણ સ્થિતિ કા સ્વપ્ન
કરના સો ગુણશ્રેણી હૈ । મતલબ ઇસકા યહ હૈ કિ ગુણશ્રેણીરચના કે પ્રથમ સમય મેં
કર્મદલિક સ્વલ્પ ગ્રહણ કિયે જાતે હૈં, દ્વિતીય સમય મેં પૂર્વ કો અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણિત
દલિક ગ્રહણ કિયે જાતે હૈં, તૃતીય સમય મેં ઇસસે મી અસંખ્યાતગુણે કર્મદલિયે ગ્રહણ કિયે
જાતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ઉત્તરોત્તર અસંખ્યાતગુણિત કર્મદલિયોં કો વહાંતક ગ્રહણ કિયા
જાતા હૈ કિ જબતક અન્તર્મુહૂર્તકા અન્તિમસમય પૂર્ણ નહીં હો જાતા । અપૂર્વકરણ ઓર અનિ-
વૃત્તિકરણ કે કાલ સે યહ અન્તર્મુહૂર્ત કુછ અધિક સમજના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કર્મપુદ્ગ-

શકાય તે ગુણશ્રેણિકર્મ છે. ગુણશ્રેણી કેને કહેવાય ? એ વાત પ્રગટ
કરાય છે—કાલાન્તરમાં વેદન કરવા યોગ્ય જે વેદનીય આદિક ચાર કર્મ હજી
બાકી છે તેમને જલદી અપાવવા-ક્ષપણ કરવા—નિમિત્ત તેમના દલિઓમાં ધીમે-
ધીમે કર્મપૂર્વક પ્રતિસમય પૂર્વપૂર્વની અપેક્ષા ઉત્તરોત્તર અસંખ્યાત ગુણવૃદ્ધિથી
ગુણિત કરીને સ્વલ્પ, બહુ, બહુતર તેમજ બહુતમ આમ શ્રેણીરૂપમાં વિભા-
જિત કરતાં કરતાં સ્થિતિનું ખંડન કરવું એને ગુણશ્રેણી કહે છે. એની
મતલબ એ છે કે ગુણશ્રેણીરચનાના પ્રથમ સમયમાં કર્મદલિક સ્વલ્પ ગ્રહણ
કરવામાં આવે છે, બીજા સમયમાં પ્રથમની અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણિત દલિક
ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. ત્રીજા સમયમાં તેનાથી પણ અસંખ્યાતગુણાં કર્મ-
દલિક ગ્રહણ કરાય છે. આ પ્રકારે ઉત્તરોત્તર અસંખ્યાતગુણિત કર્મદલિઓને
ત્યાં સુધી ગ્રહણ કરવામાં આવે છે કે જ્યાંસુધી અન્તર્મુહૂર્તનો અંતિમ
સમય પૂરો થઈ ન જાય. અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણના કાળથી આ
અન્તર્મુહૂર્ત કંઈ અધિક સમજવું જોઈએ. આ પ્રકારે કર્મપુદ્ગલોની રચનાની

અસંખેજ્ઞાહિં ગુણસેઢીહિં અણંતે કમ્મંસે સ્વયંતે વેયણિજ્ઞાઉય-
ણામગોએ ઇચ્છેતે ચત્તારિ કમ્મંસે જુગવં સ્વેદ, સ્વચ્છા ઓરાલિ-

સેલેસિમદ્દાએ ' તસ્યાં શૈલેશ્યદ્વાયામ્ " ક્ષપયન્ "—ઇતિ પદમધ્યાહ્ન્ય યોજના કરણીયા; ' અસંખેજ્ઞાહિં ગુણસેઢીહિં ' અસંખ્યેયાભિગુર્ણશ્રેણિભિઃ, ' અણંતે કમ્મંસે સ્વયંતે ' અનન્તાન્ કર્માણાન્ ક્ષપયન્, ' વેયણિજ્ઞાઉયણામગોએ ' વેદનીયાયુર્નામગોત્રાણિ, ' ઇચ્છેતે ચત્તારિ કમ્મંસે ' ઇત્યેતાંશ્ચતુરઃ કર્માણાન્ ' જુગવં સ્વેદ ' યુગપત્ ક્ષપયતિ । અયમત્ર સમુદાયાર્થઃ——એવં પૂર્વ ગુણશ્રેણીં કૃત્વા વિશુદ્ધપરિણામવશાદસંખ્યાતસમયવત્યામાન્તર્મૌહર્તિક્યાં શૈલેશ્યવસ્થાયાં કર્મ ક્ષપયન્ કેવલી સ્વરચિતાભિરસંખ્યાતગુણશ્રેણીભિઃ શીઘ્રતરક્ષણક્રિયાયાં સાધનભૂતાભિરનન્તપુદ્ગલરૂપત્વાદનન્તાન્ કર્માણાન્ ક્ષપયન્ ૨ વેદનીયાદિકાંશ્ચતુરઃ કર્માણાન્

લોકી રચના કી વિશેષતાકા નામ ગુણશ્રેણી હૈ । ઇસ પ્રકાર વે કેવલી ભગવાન્ પ્રથમ—રચિત ગુણશ્રેણિકર્મકો ડસ શૈલેશી કે કાલ મેં નષ્ટ કરતે હુએ અસંખ્યાત ગુણશ્રેણિયોં દ્વારા અનંત કર્મશોંકા ક્ષય કર દેતે હૈં । (વેયણિજ્ઞા—ઉય—ણામ—ગોએ ઇચ્છેતે ચત્તારિ કમ્મંસે જુગવં સ્વેદ) વેદનીય, આયુ, નામ એવં ગોત્ર ઇન ચાર કર્મશોંકો એક સાથ ક્ષય કરતે હૈં । મતલબ ઇસકા યહ હૈ—ઇસ પ્રકાર ગુણશ્રેણી કરકે વિશુદ્ધ હુએ પરિણામોં કે વશ સે અસંખ્યાતસમયપ્રમાણ અન્તર્મુહર્ત કાલકી ઇસ શૈલેશી અવસ્થા મેં વે કેવલી પ્રભુ, કર્મકો ક્ષપિત કરતે હુએ, કર્મોં કી શીઘ્રતર ક્ષણ ક્રિયા મેં સાધનભૂત અસંખ્યાત ગુણશ્રેણિયોં દ્વારા અનન્તપુદ્ગલસ્વરૂપ કર્મશોંકા ક્ષય કરતે ૨ વેદનીયાદિક ચાર અઘાતિયા કર્મશોંકા એક હી સાથ ક્ષય કર દેતે હૈં । (સ્વચ્છા ડરાલિય—તેય—કમ્માઈં સવ્વાહિં વિપ્પજહ-

વિશેષતાનું નામ ગુણશ્રેણી છે. આવી રીતે તે કેવલી ભગવાન પ્રથમ રચેલ ગુણશ્રેણિક કર્મને તે શૈલેશીના કાળમાં નષ્ટ કરતાં કરતાં અસંખ્યાત ગુણશ્રેણિઓ દ્વારા અનંત કર્મના અંશોનો ક્ષય કરી દે છે. (વેયણિજ્ઞાઉયણામગોએ ઇચ્છેતે ચત્તારિ કમ્મંસે જુગવં સ્વેદ) વેદનીય, આયુ, નામ તેમજ ગોત્ર એ ચાર કર્મશોનો એક સાથે ક્ષય કરે છે. એની મતલબ એ છે કે—આ પ્રકારે ગુણશ્રેણી કરીને વિશુદ્ધ થયેલાં પરિણામને વશ થઈ અસંખ્યાત—સમય—પ્રમાણ અન્તર્મુહર્ત કાળની આ શૈલેશી અવસ્થામાં તે કેવલી પ્રભુ કર્મને ક્ષપિત કરતાં કરતાં કર્મોની બહુજ ઉતાવળી ક્રિયામાં સાધનભૂત અસંખ્યાત ગુણશ્રેણિઓ દ્વારા અનંતપુદ્ગલસ્વરૂપ કર્મશોનો ક્ષય કરતાં કરતાં વેદનીય આદિક ચાર (૪) અઘાતિયા કર્મશોનો એકસાથે જ ક્ષય કરી નાખે છે. (સ્વચ્છા ડરાલિય—તેય—કમ્માઈં સવ્વાહિં વિપ્પજહણાહિં વિપ્પજહ) ક્ષપણ

યતેયકમ્માઈં સઘ્વાહિં વિપ્પજહણાહિં વિપ્પજહઈ, વિપ્પજહિત્તા
ઉજ્જુસેઢીપઢિવણ્ણે અફુસમાણગઈં ઉડ્ઢં એક્કસમણં અવિગ્ગ-
હેણ ગંતા સાગારોવઉત્તે સિજ્ઝઈ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

યુગપત્ ક્ષપયતીતિ । ‘સ્વવિત્તા’ ક્ષપયિત્વા ‘ઓરાલિયતેયકમ્માઈં’ ઔદારિકતૈજસ-
કર્માણિ ‘સઘ્વાહિં’ સર્વાભિઃ=અરોષાભિઃ, ‘વિપ્પજહણાહિં’ વિપ્રહાણિભિઃ-વિશેષેણ=પ્રકર્ષતો
હાનયઃ=ત્યાગાસ્તાભિઃ, અત્ર વ્યક્રયપેક્ષયા બહુવચનમ્, ‘વિપ્પજહઈ’ વિપ્રજહાતિ=સર્વથા પરિશાટ-
યતિ, ‘વિપ્પજહિત્તા’ વિપ્રહાય=પરિત્યજ્ય, ‘ઉજ્જુસેઢીપઢિવણ્ણે’ ઋજુશ્રેણિપ્રતિપન્નઃ-ઋજુઃ=
અવક્રા, શ્રેણિઃ=આકાશપ્રદેશપટ્ટિક્તિસ્તામાશ્રિતઃ ‘અફુસમાણગઈં’ અસ્પૃશદ્ગતિઃ-અસ્પૃશન્તી
સિદ્ધચન્તરાલપ્રદેશાન્ ગતિર્યસ્ય સ તથા, ‘એક્કસમણં’ એકસમયેન, અન્તરાલપ્રદેશસ્પર્શને હિ
નૈકેન સમયેન સિદ્ધિઃ સ્યાત્, ઇધ્યતે તુ તત્રૈક એવ સમયઃ, ય એવ ચાયુષ્કાદિકર્મણાં ક્ષયસમયઃ
સ એવ નિર્વાણસમયઃ । અતોઽન્તરાલે સમયાન્તરસ્યાસદ્વાવાદન્તરાલપ્રદેશાનામસંસ્પર્શનં ભવતિ ।
ભાવતોઽયં સૂક્ષ્મોઽર્થઃ કેવલિગમ્યઃ । ‘અવિગ્ગહેણ’ અવિગ્રહેણ=અવક્રેણ-વક્ર એવ હિ સમયા-
ન્તરં લગતિ પ્રદેશાન્તરં ચ સ્પૃશતિ । ‘ઉડ્ઢં’ ઊર્ધ્વ ‘ગંતા’ ગત્વા ‘સાગારોવઉત્તે’ સાગા-
રોપયુક્તઃ=જ્ઞાનોપયોગવાન્, ‘સિજ્ઝઈ’ સિદ્ધચતિ=સિદ્ધો ભવતિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

નાહિં વિપ્પજહઈ) ક્ષપણ કરને કે બાદ ઔદારિક, તૈજસ એવં કાર્મણ્ણે ઇન શરીરોકો
વિશિષ્ટરૂપ સે સમસ્ત હાનિયોં દ્વારા સર્વથા છોડ દેતે હૈં । (વિપ્પજહિત્તા ઉજ્જુસેઢી-
પઢિવણ્ણે અફુસમાણગઈં ઉડ્ઢં એક્કસમણં અવિગ્ગહેણ ગંતા સાગારોવઉત્તે
સિજ્ઝઈ) છોડને કે બાદ ઋજુ-અવક્ર આકાશકે પ્રદેશોંકી પંક્તિસ્વરૂપ શ્રેણીકો આશ્રિત
કરતે હુણ, અર્થાત્ શ્રેણીકે અનુસાર સિદ્ધિકે અન્તરાલ કે પ્રદેશોંકો નહીં સ્પર્શતે વે કેવલી
ભગવાન્ એક સમય મેં વિગ્રહરહિત ગતિ સે-સીધી ગતિ સે હોકર સિદ્ધિગતિ મેં વિરાજમાન હો
જાતે હૈં । યહાં ઉનકા ઉપયોગ સાકાર હોતા હૈ, અર્થાત્ જ્ઞાનોપયોગ સે વે વિશિષ્ટ રહતે હૈં ।

કયા પઢી ઔદારિક, તૈજસ તેમજ કાર્મણ્ણે શરીરોને વિશિષ્ટરૂપથી
સકળ હાનિઓ દ્વારા સર્વથા છોડી દીએ છે. (વિપ્પજહિત્તા ઉજ્જુસેઢીપઢિવણ્ણે
અફુસમાણગઈં ઉડ્ઢં એક્કસમણં અવિગ્ગહેણ ગંતા સાગારોવઉત્તે સિજ્ઝઈ)
છોડી દીધા પઢી ઋજુ-અવક્ર આકાશના પ્રદેશોની પંક્તિસ્વરૂપ શ્રેણીને આશ્રિત
કરતાં, અર્થાત્ શ્રેણીને અનુસાર સિદ્ધિના અન્તરાલપ્રદેશોને સ્પર્શ ન કરતાં
તે કેવલી ભગવાન એક સમયમાં વિગ્રહરહિત ગતિથી-સીધી ગતિથી થઈને
સિદ્ધિગતિમાં વિરાજમાન થઈ બચ છે. અહીં તેમનો ઉપયોગ સાકાર હોય

मूलम्—ते णं तत्थ सिद्धा हवन्ति, साइया अपज्जवसिया

टीका—अत्रोत्तरार्द्धे एकोनसप्ततितमे सूत्रे यदवोचत् ‘से जे इमे गामागर जाव सन्निवेसेसु मणुया हवन्ति सव्वकामविरया ’ इत्यारभ्य ‘अट्ठकम्मपयडीओ खवइत्ता उप्पि लोयग्ग-

भावार्थ—इस उपाय से योगोंका निरोध करते समय प्रथम मनोयोगका निरोध करते हैं, फिर वचनयोगका और फिर बाद में काययोगका । योगोंके निरोध हो जाने से वे अयोगी—अवस्थाको प्राप्त कर ह्रस्व अकारादि के, अर्थात् अ, इ, उ, ऋ, लृ—इन पांच अक्षरों के उच्चारण करने में जितना काल लगता है उतने काल तक उस अयोगी—अवस्था में रहते हुए शैलेशी—अवस्थाको प्राप्त करने के पश्चात् असंख्यातगुणश्रेणी से अनंत कर्मोंको क्षय कर देते हैं । फिर वेदनीय, आयु, नाम एवं गोत्र इन चार अघातिया कर्मोंको युगपत् विनष्ट कर वे भगवान्, औदारिक, तैजस एवं कर्मण शरीरको क्षपित करते हैं । इस प्रकार कर्मों और शरीरों से सर्वथा रहित बने हुए वे प्रभु आकाशकी प्रदेशपंक्ति के अनुसार १ समय प्रमाणवाली अविग्रहगति से गमन कर सिद्धिगति में जाकर विराजमान हो जाते हैं । यहां वे साकार—उपयोगविशिष्ट रहा करते हैं ॥ सू. ९२ ॥

‘ते णं तत्थ’ इत्यादि ।

इसी आगम के उत्तरार्धका ६९ वाँ सूत्र जो (से जे इमे गामागर जाव सन्निवे-

छे. ज्ञानोपयोगथी तेओ विशिष्ट रडे छे.

भावार्थ—आ उपायथी योगोनो निरोध करती वण्णते प्रथम मनोयोगोनो ते डेवली निरोध करे छे. पछी वचनयोगना अने त्यार पछी काय-योगना निरोध थर्छ गया पछी तेओ अयोगी—अवस्था प्राप्त करीने ह्रस्व अकार आदिनुं, अर्थात्—अ, इ, उ, ऋ, लृ.—आ पांच अक्षरानुं उच्चारण करवाभां जेटवो काण लागे ओटला काल सुधी तेओ ते अयोगी—अवस्थाभां रडेतां शैलेशी—अवस्थाने प्राप्त करीने पछी असंख्यात गुणश्रेणीथी अनंत कर्मोंको क्षय करी दे छे. पछी वेदनीय, आयु, नाम तेमज गोत्र ओ त्यार अघातिया कर्मोंने युगपत् नाश करीने ते भगवान् औदारिक, तैजस तेमज कर्मण शरीरने क्षपित करे छे. आ प्रकारे कर्मों अने शरीरोंथी सर्वथा रहित अनेला ते प्रभु आकाशनी प्रदेशपंक्ति अनुसार १ समयप्रमाणवाली अविग्रह-गतिथी गमन करीने सिद्धिगतिभां जध विराजमान थर्छ जाय छे. अही तेओ साकार—उपयोग—विशिष्ट रखा करे छे. (सू. ६२)

‘ते णं तत्थ’ इत्यादि.

ओ ज आगमना उत्तरार्धनुं ओगणुसित्तेरमुं सूत्र जे (से जे इमे गामागर जाव

અસરીરા જીવઘણા દંસણનાળોવઉત્તા નિદ્વિયદ્ધા નિરેયણા

પડ્ઢાળા હવંતિ ' ઇતિ, તત્ર તે લોકાગ્રપ્રતિષ્ઠાનાઃ સન્તઃ કીદશા ભવન્તીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—
' તે ણં ' ઇત્યાદિ । ' તે ણં ' તે=પૂર્વનિર્દિષ્ટા મનુષ્યાઃ સ્વલુ ' તત્થ ' તત્ર લોકાગ્રે પ્રતિષ્ઠાનં
પ્રાપ્તાઃ સન્તઃ, 'સિદ્ધા હવંતિ' સિદ્ધા ભવન્તિ । તે કીદશા ભવન્તીત્યાહ—'સાડ્યા' સાદિકાઃ=
આદિસહિતાઃ, ' અપજ્જવસિયા ' અપર્યવસિતાઃ=અન્તરહિતાઃ—અવિનાશિન ઇત્યર્થઃ 'અસરીરા'
અશરીરાઃ=પચ્ચવિધશરીરરહિતાઃ, અન્યે વદન્તિ—સશરીરોઽપિ સિદ્ધો ભવતીતિ તન્મતનિરાકરણાર્થ-

સેસુ મણુયા હવંતિ સવ્વકામવિરયા) યહાં સે લેકર (અટ્ટ કમ્મપગડીઓ સ્વવિત્તા ઉપ્પિ
લોયગ્ગપડ્ઢાળા હવંતિ) યહાં તક હૈ । ઇસ સૂત્ર મેં યહ જો કહા ગયા હૈ કિ વે સિદ્ધ
ભગવાન્ લોક કે અગ્રભાગ મેં પ્રતિષ્ઠિત હો જાતે હૈ, ઉસી વિષય મેં અવ ઇસ સૂત્ર દ્વારા યહ
વતાયા જાતા હૈ કિ વે સિદ્ધ ભગવાન્ લોક કે અગ્રભાગ મેં રહતે હુએ કૈસે હોતે હૈ । વહ
ઇસ પ્રકાર હૈ—(તે ણં તત્થ સિદ્ધા હવંતિ) વે પૂર્વનિર્દિષ્ટ મનુષ્ય, લોક કે અગ્રભાગ મેં પ્રતિ-
ષ્ઠિત હોતે હુએ સિદ્ધ કહે જાતે હૈ, વે (સાડ્યા અપજ્જવસિયા) સાદિ ઓર પર્યવસાનરહિત
હોતે હૈ, અર્થાત્—વહાં સે ફિર ઉન્હેં સંસાર મેં પીછે જન્મ ધારણ નહીં કરના પડતા હૈ, એતદર્થ
ઉન્હેં અપર્યવસિત કહા હૈ । અનાદિકાલ સે લગે હુએ કર્મોં કા ક્ષય કરકે વે સિદ્ધ હુએ હૈ,
અતઃ ઇસ અપેક્ષા વે સાદિ કહે ગયે હૈ । (અસરીરા) ઔદારિક આદિ પાંચ શરીરોં સે વે
સર્વથા રહિત હોતે હૈ । કિતનેક એસા કહતે હૈ કિ સશરીર મી પ્રાણી સિદ્ધ હોતા હૈ, ઉન્કે
ઇસ સિદ્ધાન્ત કો દૂર કરતે હુએ ભગવાન ને સિદ્ધોં કા (અસરીરા) યહ વિશેષણ દિયા હૈ ।

સન્નિવેસેસુ મણુયા હવંતિ સવ્વકામવિરયા) અહીંથી લઈને (અટ્ટ કમ્મપગડીઓ સ્વવિત્તા
ઉપ્પિ લોયગ્ગપડ્ઢાળા હવંતિ) અહીં સુધી છે. આ સૂત્રમાં જે આ કહેવામાં આવ્યું છે
કે તે સિદ્ધ લગવંતો લોકના અગ્રભાગમાં પ્રતિષ્ઠિત થઈ જાય છે, તે જ વિષયમાં
આ સૂત્ર દ્વારા એમ બતાવવામાં આવે છે કે તેઓ સિદ્ધ લગવંતો લોકના
અગ્રભાગમાં રહેતાં કેવા થાય છે. તે આ પ્રકારે છે—(તે ણં તત્થ સિદ્ધા હવંતિ)
તેઓ પૂર્વે બતાવેલા મનુષ્ય, લોકના અગ્રભાગમાં પ્રતિષ્ઠિત થઈ જતાં સિદ્ધ
કહેવાય છે. તેઓ (સાડ્યા અપજ્જવસિયા) સાદિ અને અંત (જન્મ—મરણ)—
રહિત થાય છે. ત્યાંથી પાછો તેઓને સંસારમાં જન્મ ધારણ કરવો પડતો
નથી, તે અર્થમાં તેમને અપર્યવસિત કહેવામાં આવે છે. અનાદિકાળથી
લાગેલાં કર્મોંનો ક્ષય કરીને તેઓ સિદ્ધ થયા છે, આથી એ અપેક્ષાએ તેમને
સાદિ કહે છે. (અસરીરા) ઔદારિક આદિ પાંચ શરીરોંથી તેઓ સર્વથા
રહિત થાય છે. કેટલાક એમ કહે છે કે સશરીર પણ પ્રાણી સિદ્ધ હોય છે,
તેઓનાં આ સિદ્ધાંતને દૂર કરતાં લગવાને સિદ્ધોને 'અસરીરા' એ વિશે-

નીરયા ણિમ્મલા વિતિમિરા વિસુદ્ધા સાસયમણાગયદ્ધં કાલં ચિદ્દંતિ ॥ ૧૩ ॥

મિદં વિશેષણમ્, 'જીવઘણા' જીવઘના:—જીવાશ્ચ તે ઘના જીવઘના:—અન્તરરહિતત્વેન જીવ-
પ્રદેશમયા:, યોગનિરોધકાલે રન્ધ્રપૂરણેન ત્રિભાગોનાવગાહનાયા: સદ્વાવાદિત્યર્થ:, 'દંસણનાણોવ-
ઉત્તા' દર્શનજ્ઞાનોપયુક્તા—દર્શનમ્=અનાકારં, જ્ઞાનં=સાકારં, તયોરુપયુક્તા:, 'નિદ્વિયટ્ટા'
નિષ્ઠિતાર્થા:—કૃતકૃત્યા:—સમાપ્તસર્વપ્રયોજના इत्यર્થ: । 'નિરેયણા' નિરેજના:—નિશ્ચલા:—સ્થિરા
इत्यર્થ:, 'નીરયા' નીરજસ:—બધ્યમાનકર્મરહિતા इत्यર્થ:, યદ્વા—નીરયા इतिચ્છાયા, રયો, વેગસ્ત-
દ્રહિતા:—નિરુદ્દેગા:—નિરૌત્સુક્યા इत्यર્થ: । 'ણિમ્મલા' નિર્મલા:—પૂર્વબદ્ધકર્મ— નિર્મુક્તા:,
'વિતિમિરા' વિતિમિરા:—વિગતાજ્ઞાના:, 'વિસુદ્ધા' વિશુદ્ધા:—કર્મવિશુદ્ધપ્રકર્ષમુપગતા:,

इससे भगवान का यह अभिप्राय प्रगट होता है कि शरीरसहित जीव कभी भी मुक्त नहीं होता है । (जीवघणा) अन्तररहित होने से वे भगवान् जीवप्रदेशमय रहते हैं । अन्त के शरीर की अवगाहना से उनकी सिद्ध—अवस्था में अवगाहना कुछ कम रहती है । योगनिरोधकाल में शरीर के छेदों के पूरण हो जाने से त्रिभाग—ऊन उनकी अवगाहना बतलाई गई है । (दंसणणाणोवउत्ता) दर्शन एवं ज्ञान से वे उपयुक्त रहा करते हैं । अनाकार ज्ञान का नाम दर्शन एवं साकार ज्ञान का नाम ज्ञान कहा गया है । (निद्वियट्टा) समस्त मनोरथ सिद्ध हो जाने से एवं कुछ भी कार्य करने के लिये बाकी नहीं रहने से वे भगवान् कृतकृत्य कहे जाते हैं । तथा (निरैयणा) ये निश्चल, (नीरया) बध्यमान कर्मों से रहित, अथवा निरुद्वेग, (णिम्मला) निर्मल—पूर्वबद्धकर्मों से निर्मुक्त, (वितिमिरा) अज्ञानरूप तिमिर से अतीत,

પણ આખ્યું છે. આથી ભગવાનને આ અભિપ્રાય પ્રગટ થાય છે કે શરીર-
સહિત જીવ કદી પણ મુક્ત થતો નથી. (જીવઘણા) અંતરરહિત હોવાથી
તે ભગવાન જીવપ્રદેશમય રહે છે. અંતના શરીરની અવગાહનાથી તેમની
સિદ્ધ—અવસ્થામાં અવગાહના જરા ઓછી રહે છે. યોગ—નિરોધ કાળમાં
શરીરના છેદોના પૂરણ થઈ જવાથી ત્રિભાગન્યૂન તેમની અવગાહના બતાવેલી છે.
(દંસણણાણોવઉત્તા) દર્શન તેમજ જ્ઞાનથી તેઓ ઉપયુક્ત રહ્યા કરે છે. અનાકાર જ્ઞાનનું
નામ દર્શન તેમજ સાકાર જ્ઞાનનું નામ જ્ઞાન કહેવાય છે. (નિદ્વિયટ્ટા) સમસ્ત મનોરથ
સિદ્ધ થઈ જવાથી તેમજ કાંઈ પણ કાર્ય કરવાનું બાકી ન રહેવાથી તે ભગવાન કૃત-
કૃત્ય કહેવાય છે. તથા (નિરેયણા) તેઓ નિશ્ચળ, (નીરયા) બધ્યમાન કર્મોથી
રહિત, અથવા નિરુદ્દેગ, (ણિમ્મલા) નિર્મળ—પૂર્વબદ્ધ કર્મોથી નિર્મુક્ત, (વિતિમિરા)
અજ્ઞાનરૂપ તિમિર—અંધકારથી અતીત, (વિસુદ્ધા) કર્મોના વિનાશથી થતી

મૂલમ્—સે કેણદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્ચઈ—તે ણં તત્થ સિદ્ધા
ભવંતિ સાદીયા અપજ્જવસિયા જાવ ચિદ્દંતિ ? ગોયમા ! સે જહા
ણામણ્ બીયાણં અગ્ગિદ્દહાણં પુણરવિ અંકુરુપ્પત્તી ણ ભવઈ,

‘સાસયમણાગયદ્ધં કાલં ચિદ્દંતિ’ શાશ્વતમ્ અનાગતાદ્ધં કાલં=ભવિષ્યત્કાલં ‘ચિદ્દંતિ’
તિષ્ઠન્તિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘સે કેણદ્દેણં મંતે’ ! ઇત્યાદિ । ‘મંતે !’ હે મદન્ત !
‘સે કેણદ્દેણં’ અથ કેનાઽર્થેન=કેન કારણેન ‘એવં વુચ્ચઈ’ એવમુચ્યતે ‘તે ણં તત્થ સિદ્ધા
ભવંતિ’ તે સ્વલુ તત્ર સિદ્ધા ભવન્તિ, ‘સાદીયા’ સાદિકા ‘અપજ્જવસિયા’ અપર્ય-
વસિતા ‘જાવ ચિદ્દંતિ’ યાવત્ તિષ્ઠન્તિ ?, ભગવાનાહ—‘ગોયમા !’ હે ગૌતમ ! ‘સે
જહા ણામણ્’ તદ્ યથા નામ ‘બીયાણં અગ્ગિદ્દહાણં’ બીજાનામગ્નિદગ્ધાનાં ‘પુણરવિ’
પુનરપિ ‘અંકુરુપ્પત્તી ણ ભવઈ’ અહકુરોત્પત્તિર્ન ભવતિ, ‘એવામેવ સિદ્ધાણં કમ્મબીણ

(વિસુદ્ધા) કર્મોં કે વિનાશ સે ઉદ્ભૂત આત્મવિશુદ્ધિ સે યુક્ત હો કર (સાસયમણાગયદ્ધં
કાલં ચિદ્દંતિ) ભવિષ્યત્કાલ મેં શાશ્વતરૂપ સે સિદ્ધાવસ્થા સે સંપન્ન રહા કરતે હૈં । અર્થાત્—સિદ્ધ
ભગવાન્ સાદિ—અનંત રહા કરતે હૈં, એવં શુદ્ધ આત્મગુણોં કે પૂર્ણ વિકાસ સે વે સિદ્ધ—અવસ્થા
મેં અનંતકાલતક વિરાજિત રહતે હૈં ॥ સૂ. ૧૩ ॥

‘સે કેણદ્દેણં’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મદન્ત ! (સે કેણદ્દેણં એવં વુચ્ચઈ) “વે સાદિ અપર્યવસિત
હોતે હૈં” યહ આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈં ? ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! સુનો ! (સે
જહા ણામણ્ બીયાણં અગ્ગિદ્દહાણં પુણરવિ અંકુરુપ્પત્તી ણ ભવઈ) જિસ પ્રકાર અગ્નિ

આત્મવિશુદ્ધિથી યુક્ત થઈને (સાસયમણાગયદ્ધં કાલં ચિદ્દંતિ) ભવિષ્યકાળમાં શાશ્વત—
રૂપથી સિદ્ધાવસ્થાથી યુક્ત રહ્યા કરે છે. અર્થાત્—સિદ્ધ ભગવાન સાદિ અનંત
રહ્યા કરે છે, તેમજ શુદ્ધ આત્મગુણોના પૂર્ણ વિકાસથી તેઓ સિદ્ધ અવસ્થામાં
અનંતકાળ સુધી વિરાજમાન રહે છે. (સૂ. ૬૩)

‘સે કેણદ્દેણં’ ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મદન્ત ! (સે કેણદ્દેણં એવં વુચ્ચઈ) “તેઓ સાદિ
અપર્યવસિત હોય છે” એમ આપ શું કારણથી કહો છે. ? ઉત્તર—(ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! સાંભળો. (સે જહા ણામણ્ બીયાણં અગ્ગિદ્દહાણં પુણરવિ અંકુરુપ્પત્તી ણ
ભવઈ) જે પ્રકારે અગ્નિથી બળેલાં બીમાં ફરીને અંકુર ઉત્પન્ન કરવાની

एवामेव सिद्धाणं कम्मबीए दड्ढे पुणरवि जम्मुप्पत्ती न भवइ,
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—ते णं तत्थ सिद्धा भवंति
सादीया अपज्जवसिया जाव चिट्ठंति ॥ सू० ९४ ॥

मूलम्—जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संघयणे

दड्ढे 'एवमेव सिद्धानां कर्मबीजे दग्धे सति 'पुणरवि' पुनरपि 'जम्मुप्पत्ती न भवइ' जन्मोत्पत्तिर्न भवति=जन्मनः प्रादुर्भावो न भवति, 'से तेणट्ठेणं' तत्तेनाऽर्थेन, 'गोयमा' हे गौतम ! 'एवं वुच्चइ' एवमुच्यते—'ते णं सिद्धा भवंति सादीया अपज्जवसिया' ते खलु सिद्धा भवन्ति सादिका अपर्यवसिता 'जाव चिट्ठंति' यावत्तिष्ठन्ति ॥ सू० ९४ ॥

टीका—गौतमः पृच्छति—'जीवा णं भंते !' इत्यादि । 'भंते !' हे भदन्त ! 'जीवा णं' जीवाः खलु 'सिज्झमाणा' सिद्धयन्तः 'कयरंमि' कतरस्मिन्=षट्सु संहननेषु कस्मिन् 'संघयणे' संहनने 'सिज्झंति' सिध्यन्ति । भगवानाह—'गोयमा'

से दग्ध बीजों में पुनः अंकुर को उत्पन्न करनेकी शक्ति नहीं रहती है, (एवामेव सिद्धाणं कम्मबीए दड्ढे पुणरवि जम्मुप्पत्ती ण भवइ) उसी तरह सिद्ध भगवान् के भी कर्म-रूपी संसारका बीज नष्ट हो जाने पर पुनः जन्मकी उत्पत्ति नहीं होती हैं । (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इसलिये हे गौतम ! ऐसा कहा है कि (ते णं सिद्धा भवंति सादीया अपज्जवसिया) वे सिद्ध सादि अपर्यवसित होते हैं ॥ सू. ९४ ॥

'जीवा णं भंते !' इत्यादि ।

प्रश्न—(भंते !) हे भदन्त ! (जीवा णं सिज्झमाणा) जीव सिद्ध होते हुए (कयरंमि संघयणे सिज्झंति) छह संहननों में से कौन से संहनन में सिद्ध होते हैं ?

शक्ति रहती नहीं, (एवामेव सिद्धाणं कम्मबीए दड्ढे पुणरवि जम्मुप्पत्ती ण भवइ) तेषीञ्च रीते सिद्ध लगवाने पणु कर्म्मइपी संसारनां णीञ्च नष्ट थर्ध ञ्वाथी इरीने जन्मनी उत्पत्ति थती नथी. (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) अट्ठा माटे हे गौतम ! अभ कहुं छे के (ते णं सिद्धा भवंति सादिया अपज्जवसिया) ते सिद्धो सादि-अपर्यवसित छेय छे. (सू. ९४)

'जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा' इत्यादि.

प्रश्न—(भंते !) हे भदन्त ! (जीवा णं सिज्झमाणा) एव सिद्ध थर्ध (कयरंमि संघयणे सिज्झंति ?) छ संहननोभांथी कथा संहननमां सिद्ध

સિજ્ઞંતિ? ગોયમા! વઙ્ગરોસમળારાયસંઘયણે સિજ્ઞંતિ ॥ સૂ૦ ૯૫ ॥

મૂલમ્—જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરંમિ સંઠાણે સિજ્ઞંતિ ? ગોયમા ! છુળ્હં સંઠાણાણં અણ્ણયરે સંઠાણે સિજ્ઞંતિ ॥ ૯૬ ॥

હે ગૌતમ ! ‘વઙ્ગરોસમળારાયસંઘયણે’ વજ્રક્ષમનારાચસંહનને ‘સિજ્ઞંતિ’ સિદ્ધચન્તિ ॥ સૂ૦ ૯૫ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘જીવા ણં મંતે !’ इत्यादि । ‘મંતે !’ હે મદન્ત ! = હે ભગવન્ ! ‘જીવા ણં સિજ્ઞમાણા કયરંમિ સંઠાણે સિજ્ઞંતિ ?’ જીવાઃ સ્વલુ સિદ્ધ્યન્તઃ કતરસ્મિન્ સંસ્થાને સિદ્ધ્યન્તિ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘છુળ્હં સંઠાણાણં અણ્ણયરે સંઠાણે સિજ્ઞંતિ’ ષણ્ણાં સંસ્થાનાનામન્યતરસ્મિન્ કસ્મિંશ્ચિદેકસ્મિન્ સંસ્થાને સિદ્ધ્યન્તિ ॥ સૂ૦ ૯૬ ॥

ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (વઙ્ગરોસમળારાયસંઘયણે સિજ્ઞંતિ) વજ્રક્ષમનારાચ-સંહનન સે વે સિદ્ધ હોતે હૈં । વજ્રક્ષમનારાચસંહનનવાલા જીવ હી મુક્તિ કો પાતા હૈં ॥ સૂ. ૯૫ ॥

‘જીવા ણં મંતે !’ इत्यादि ।

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મદન્ત ! (જીવા ણં સિજ્ઞમાણા) જો જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં વે (કયરંમિ સંઠાણે સિજ્ઞંતિ) કૌન સે સંસ્થાન સે સિદ્ધ હોતે હૈં ? ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (છુળ્હં સંઠાણાણં અણ્ણયરે સંઠાણે સિજ્ઞંતિ) છહ સંસ્થાનો મેં સે કિસી મી એક સંસ્થાન સે જીવ સિદ્ધિગતિકા લાભકર સકતે હૈં ॥ સૂ. ૯૬ ॥

થાય છે ? ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (વઙ્ગરોસમળારાયસંઘયણે સિજ્ઞંતિ) વજ્રક્ષમનારાચસંહનનથી તેઓ સિદ્ધ થાય છે. વજ્રક્ષમનારાચ-સંહનનવાળા જીવ મુક્તિને મેળવે છે. (સૂ. ૯૫)

‘જીવા ણં મંતે !’ इत्यादि.

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મદન્ત ! (જીવા ણં સિજ્ઞમાણા) જે જીવો સિદ્ધ થાય છે તેઓ (કયરંમિ સંઠાણે સિજ્ઞંતિ ?) કયા સંસ્થાનથી સિદ્ધ થાય છે ? ઉત્તર—(ગોયમા ! છુળ્હં સંઠાણાણં અણ્ણયરે સંઠાણે સિજ્ઞંતિ) હે ગૌતમ ! છ સંસ્થાનોમાંથી કેાઈ પણ એક સંસ્થાનથી જીવ સિદ્ધિગતિનો લાભ કરી શકે છે. (સૂ. ૯૬)

મૂલમ—જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ ઉચ્ચત્તે સિજ્ઞંતિ ? ગોયમા ! જહણ્ણેણં સત્તરયણીણ, ઉક્કોસેણં પંચધણુસહણ સિજ્ઞંતિ ॥સૂ. ૧૭॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ-‘જીવા ણં મંતે!’ ઇત્યાદિ । ‘મંતે!’ હે મદન્ત ! ‘જીવા ણં સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ ઉચ્ચત્તે સિજ્ઞંતિ?’ જીવાઃ સ્વલુ સિધ્ધન્તઃ કતરસ્મિન્=કિયતિ ઉચ્ચત્તે=અવગાહનેન સિધ્ધન્તિ ? મગવાનાહ—‘ગોયમા!’ હે ગૌતમ ! ‘જહણ્ણેણં’ જઘન્યેન ‘સત્તરયણીણ’ સત્તરત્તિકે=સત્તહસ્તપરિમિતે ‘ઉક્કોસેણં’ ઉત્કર્ષેણ ‘પંચધણુસહણ’ પંચધનુઃ—શતિકે=પંચશતધનુઃપરિમિતે ઉચ્ચત્તે, ‘સિજ્ઞંતિ’ સિધ્ધન્તિ । ચતુર્હસ્તપરિમાણવિશેષો ધનુરિત્યુચ્યતે । इदं જઘન્યં તીર્થકરાપેક્ષયા કથિતમ્ । અતો દ્વિહસ્તપ્રમાણેન કૂર્મીપુત્રેણ ન વિરોધઃ । ॥ સૂ. ૧૭ ॥

‘જીવા ણં મંતે!’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ ઉચ્ચત્તે સિજ્ઞંતિ ?) હે મદન્ત ! જો જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં વે કિતની અવગાહના સે સિદ્ધ હોતે હૈં ? ઉત્તર—(ગોયમા ! જહણ્ણેણં સત્તરયણીણ ઉક્કોસેણં પંચધણુસહણ સિજ્ઞંતિ) હે ગૌતમ ! કમ સે કમ ૭ હાથ પ્રમાણવાલી અવગાહના સે ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે ૫૦૦ ધનુષકી અવગાહના સે સિદ્ધ હોતે હૈં । ૪ હાથકા એક ધનુષ હોતા હૈં । જઘન્ય કથન તીર્થકર કી અપેક્ષા સે જાનના ચાહિયે । અતઃ દો હાથકી અવગાહના વાલે કૂર્મીપુત્ર સે ઇસમેં કોઈ વિરોધ નહીં આતા હૈં ॥સૂ. ૧૭॥

‘જીવા ણં મંતે ! ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ ઉચ્ચત્તે સિજ્ઞંતિ ?) હે મદન્ત ! જે જીવ સિદ્ધ થાય છે તે કેટલી અવગાહનાથી સિદ્ધ થાય છે ? ઉત્તર—(ગોયમા ! જહણ્ણેણં સત્તરયણીણ ઉક્કોસેણં પંચધણુસહણ સિજ્ઞંતિ) હે ગૌતમ ! ઓછામાં ઓછી ૭ હાથ-પ્રમાણવાળી અવગાહનાથી અને ઉત્કૃષ્ટથી (વધારેમાં વધારે) ૫૦૦ ધનુષની અવગાહનાથી સિદ્ધ થાય છે. ૪ હાથનું એક ધનુષ થાય છે. જઘન્ય કથન તીર્થકરની અપેક્ષાએ બાણુવું જોઈએ. આથી જે હાથની અવગાહનાવાળા કૂર્મીપુત્રથી આમાં કોઈ વિરોધ આવતો નથી. (સૂ. ૬૭)

મૂલમ્—જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ આઉએ સિજ્ઞંતિ ? ગોયમા ! જહણ્ણેણં સાહરેગટ્ઠવાસાઉએ, ઉક્કોસેણં પુવ્વકોડિયાઉએ સિજ્ઞંતિ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

ટીકા—ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘જીવા ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ । ‘મંતે !’ હે મદન્ત ! ‘જીવા ણં સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ આઉએ સિજ્ઞંતિ ?’ જીવાઃ સ્વલુ સિધ્ધન્તઃ કતરસ્મિન્ આયુષિ સિધ્ધન્તિ ? ભગવાનાહ—‘ગોયમા !’ હે ગૌતમ ! ‘જહણ્ણેણં સાહરેગટ્ઠવાસાઉએ’ જઘન્યેન સાતિરેકાઽઽષ્ટવર્ષાઽયુષિ, ‘ઉક્કોસેણં’ ઉત્કર્ષેણ ‘પુવ્વકોડિયાઉએ’ પૂર્વકોટ્યાયુષિ ‘સિજ્ઞંતિ’ સિધ્ધન્તિ । પૂર્વં ઇતિ ચતુરશીતિલક્ષણાં ચતુરશીતિલક્ષ્યેર્ગુણને કૃતે યા સંખ્યોપલભ્યતે તાવત્સંખ્યકવર્ષપરિમિતઃ કાલ ઉચ્યતે ॥ સૂ. ૧૮ ॥

‘જીવા ણં મંતે’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ આઉએ સિજ્ઞંતિ ?) હે મદન્ત ! જો જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં વે કિતની આયુવાલે સિદ્ધ હોતે હૈં ? અર્થાત્ કિતની આયુ-તક કે જીવ સિદ્ધિગતિકા લાભ કર સકતે હૈં ? ઉત્તર—(ગોયમા ! જહણ્ણેણં સાહરેગટ્ઠવા-સાઉએ ઉક્કોસેણં પુવ્વકોડિયાઉએ સિજ્ઞંતિ) કમ સે કમ આઠ વર્ષ સે કુલ્લ અધિક આયુ વાલે જીવ સિદ્ધ હો સકતે હૈં ઓર જ્યાદા સે જ્યાદા એક પૂર્વકોટિ આયુવાલે જીવ સિદ્ધ હો સકતે હૈં । ૮૪૦૦૦૦૦ ચૌરાસી લાખ વર્ષકા પૂર્વાઙ્ગ હોતા હૈ ઓર ૮૪૦૦૦૦૦ ચૌરાસી લાખ પૂર્વાઙ્ગકા એક પૂર્વ હોતા હૈ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

‘જીવા ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—(જીવા ણં મંતે ! સિજ્ઞમાણા કયરમ્મિ આઉએ સિજ્ઞંતિ ?) હે મદન્ત ! જે જીવ સિદ્ધ થાય છે તે કેટલી આયુષ્યવાળા સિદ્ધ થાય છે ? અર્થાત્ કેટલી આયુષ્ય સુધીના જીવ સિદ્ધિગતિનો લાભ કરી શકે છે ? ઉત્તર—(ગોયમા ! જહણ્ણેણં સાહરેગટ્ઠવાસાઉએ ઉક્કોસેણં પુવ્વકોડિયાઉએ સિજ્ઞંતિ) ઓછામાં ઓછા ૮ વરસથી થોડી વધારે આયુ (ઉમર) વાળા જીવ સિદ્ધ થઈ શકે છે, અને વધારેમાં વધારે ૧ પૂર્વકોટિ આયુ-ષ્યવાળા જીવ સિદ્ધ થઈ શકે છે. ૮૪૦૦૦૦૦ ચૌરાસી લાખ વર્ષનું એક પૂર્વાંગ થાય છે, અને ૮૪૦૦૦૦૦ ચૌરાસી લાખ પૂર્વાંગનું એક પૂર્વ થાય છે. (સૂ. ૬૮)

मूलम्—अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ? णो इणट्ठे समट्ठे ! एवं जाव अहे सत्तमाए ॥ सू० ९९ ॥

अत्थि णं भंते ! सोहम्मस्स कप्पस्स अहे सिद्धा परि-

टीका—‘ते णं तत्थ सिद्धा हवंति’—इति पूर्वोक्तवचनात् यद्यपि लोकाग्रं सिद्धानां स्थानमिति निश्चीयते, तथापि मुग्धशिष्यस्य विविधलोकाग्रकल्पनानिराकर्णार्थं लोकाग्र-स्वरूपं विशेषेण बोधयितुं च प्रश्नोत्तरसूत्रमाह—‘अत्थि णं’ इत्यादि । गौतमः पृच्छति—‘अत्थि णं भंते !’ अस्ति खलु भदन्त ! ‘अत्थि णं’ इति वाक्योपन्यासे, ‘इमीसे रयणप्प-भाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?’ अस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या अधः सिद्धाः परिवसन्ति किम् ? भगवानुत्तरमाह—‘णो इणट्ठे समट्ठे’ नायमर्थः समर्थः, ‘एवं जाव अहे सत्तमाए’ एवं यावदधः सप्तम्याः, न परिवसन्तीत्यर्थः ॥ सू० ९९ ॥

टीका—‘अत्थि णं’ इत्यादि । गौतमः पृच्छति—‘अत्थि णं भंते !’ अस्ति खलु भदन्त ! ‘सोहम्मस्स कप्पस्स अहे सिद्धा परिवसंति ?’ सौधर्मस्य कल्पस्याऽधः सिद्धाः परिवसन्ति किम् ? भगवानाह—‘णो इणट्ठे समट्ठे’ नायमर्थः समर्थः ! ‘एवं सव्वेसिं

‘अत्थि णं भंते !’ इत्यादि ।

प्रश्न—(अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?) हे भदन्त ! क्या सिद्ध भगवान् इस रत्नप्रभा पृथिवी के नीचे रहते हैं ? उत्तर—हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है, अर्थात्—रत्नप्रभा पृथिवी के नीचे सिद्ध नहीं रहते हैं । (एवं जाव अहे सत्तमाए) इसी प्रकार शर्कराप्रभासे लेकर तमंतमा तक के नीचे भी सिद्ध नहीं रहते हैं; क्यों कि ये सभी नरकलोक हैं ॥ सू० ९९ ॥

‘अत्थि णं भंते !’ इत्यादि.

प्रश्न—(अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?) हे भदन्त ! शुं सिद्ध भगवान् आ रत्नप्रभा पृथिवीनी नीचे रहे छे ? उत्तर—हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) आ अर्थ समर्थ नथी, अर्थात्—रत्नप्रभा पृथिवीनी नीचे सिद्ध रहेता नथी. (एवं जाव अहे सत्तमाए) आ प्रकारे शर्कराप्रभाथी लधने तमतमा सुधीनी नीचे पणु सिद्ध रहेता नथी. डेभडे आ अधा नरकलोका छे. (सू० ९९)

वसन्ति ? णो इणट्ठे समट्ठे ! एवं सव्वेसिं पुच्छा, ईसाणस्स सणं-
कुमारस्स जाव अच्चुयस्स गेवेज्जविमाणानं अणुत्तरविमाणानं
॥ सू० १०० ॥

मूलम्—अत्थि णं भन्ते ! ईसीपब्भाराए पुढवीए अहे
सिद्धा परिवसन्ति ?, णो इणट्ठे समट्ठे ॥ सू० १०१ ॥

पुच्छा' एवं सर्वेषां पृच्छा, 'ईसाणस्स सणंकुमारस्स जाव अच्चुयस्स गेवेज्जवि-
माणानं अणुत्तरविमाणानं' ईशानस्य सनत्कुमारस्य यावत्—अच्युतस्य ग्रैवेयकविमानानाम्,
अनुत्तरविमानानाम् ॥ सू० १०० ॥

टीका—'अत्थि' इत्यादि । गौतमः पृच्छति—'अत्थि णं भन्ते !' अस्ति खलु

'अत्थि णं भन्ते !' इत्यादि ।

प्रश्न—(भन्ते !) हे भदन्त ! (अत्थि णं सोहम्मस्स कप्पस्स अहे सिद्धा परि-
वसन्ति) क्या सिद्ध भगवान् सौधर्म कल्प के नीचे रहते हैं ? उत्तर—(गोयमा !) हे गौतम !
(णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है । (एवं सव्वेसिं पुच्छा ईसाणस्स सणंकु-
मारस्स जाव अच्चुयस्स गेवेज्जविमाणानं अणुत्तरविमाणानं) इसी तरह गौतम की
पृच्छा, ईशान, सनत्कुमार आदि से लेकर अच्युत देवलोक तक के ग्रैवेयक विमानों एवं अनु-
त्तरविमानों के विषय में भी जाननी चाहिये, और प्रभु का निषेधात्मक उत्तर भी इसी प्रकार
समझ लेना चाहिये ॥ सू० १०० ॥

'अत्थि णं भन्ते !' इत्यादि.

प्रश्न—(भन्ते !) हे भदन्त ! (अत्थि णं सोहम्मस्स कप्पस्स अहे सिद्धा
परिवसन्ति) शुं सिद्ध भगवान् सौधर्मकल्पनी नीचे रहे छे ? उत्तर—(गोयमा !)
हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) आ अर्थ समर्थ नथी. (एवं सव्वेसिं
पुच्छा ईसाणस्स सणंकुमारस्स जाव अच्चुयस्स गेवेज्जविमाणानं अणुत्तरविमाणानं)
ऐसी रीते गौतमना प्रश्नो धशान, सनत्कुमार आदिथी लधने अच्युत देव-
लोक सुधीना ग्रैवेयक विमानो तेमज् अनुत्तर विमानोना पणु जणुवा
जेधये, अने प्रभुना निषेधात्मक उत्तरो पणु ऐज प्रकारे समज् देवा
जेधये. (सू० १००)

મૂલમ—સે કહિં **સ્વાઈ** ણં મંતે ! સિદ્ધા પરિવસંતિ ? ।
ગોયમા ! **ઈમીસે રયણપ્પહાણ પુઢવીણ** **બહુસમરમણિજ્ઞાઓ**

મદન્ત ! ‘ઈસીપબ્ભારાણ’ ઈષ્તપ્રાગ્ભારાયાઃ—ઈષ્ટ્=અલ્પઃ પ્રાગ્ભારો=મહત્ત્વં યસ્યાઃ સા તથા તસ્યાઃ—સિદ્ધશિલાયાઃ ‘પુઢવીણ’ પૃથિવ્યા ‘અહે’ અધઃ ‘સિદ્ધા પરિવસંતિ ?’ સિદ્ધાઃ પરિવસન્તિ કિમ્ ? , ભગવાનાહ—‘ણો ઇણટ્ઠે સમટ્ઠે’ નાડયમર્થઃ સમર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૦૧ ॥

ટીકા—‘સે કહિં’ ઇત્યાદિ । ગૌતમઃપૃચ્છતિ—‘સે કહિં **સ્વાઈ** ણં મંતે ! સિદ્ધા પરિવસંતિ ?’ અથ કસ્મિન્ પુનઃ સ્વલુ મદન્ત ! સિદ્ધાઃ પરિવસન્તિ ? ‘સ્વાઈ’ ઇતિદેશીયઃ શબ્દઃ પુનરર્થવાચકઃ । ભગવાનાહ—‘**ગોયમા !**’ હે ગૌતમ ! ‘**ઈમીસે રયણપ્પહાણ પુઢવીણ**’

‘અત્થિ ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે મદન્ત ! (અત્થિ ણં **ઈસીપબ્ભારાણ પુઢવીણ અહે સિદ્ધા પરિવસંતિ ?**) કયા સિદ્ધ ભગવાન્ ઈષ્તપ્રાગ્ભારા—સિદ્ધશિલા કે નીચે રહતે હૈં ? ઉત્તર—હે ગૌતમ ! (ણો ઇણટ્ઠે સમટ્ઠે) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦૧ ॥

‘સે કહિં **સ્વાઈ** ણં’ ઇત્યાદિ ।

ગૌતમ ને પુનઃ પ્રભુ સે પૂછા—(મંતે !) હે મદન્ત ! (સે કહિં **સ્વાઈ** ણં સિદ્ધા પરિવસંતિ) સિદ્ધ લોગ ઇન પૂર્વોક્ત સ્થાનોં મેં નહીં રહતે તો ફિર વે કહાં રહતે હૈં ? તવ પ્રભુ ને કહા—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ઈમીસે **રયણપ્પહાણ પુઢવીણ**) ઇસ સ્ત્રવપ્રમાપૃથિવી

૧—‘સ્વાઈ’ યહ દેશીય શબ્દ હૈ, યહ ‘પુનઃ’ શબ્દ કે અર્થ કા દ્યોતક હૈ । ‘ણં’ શબ્દ વાક્યાલંકાર મેં પ્રયુક્ત હુઆ હૈ ।

‘અત્થિ ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—(મંતે !) હે ભદન્ત ! (અત્થિ ણં **ઈસીપબ્ભારાણ પુઢવીણ અહે સિદ્ધા પરિવસંતિ**) શું સિદ્ધ ભગવાન્ ઈષ્તપ્રાગ્ભારા—સિદ્ધશિલાની નીચે રહે છે ? ઉત્તર—હે ગૌતમ ! (ણો ઇણટ્ઠે સમટ્ઠે) આ અર્થ સમર્થ નથી. (સૂ૦ ૧૦૧)

‘સે કહિં **સ્વાઈ** ણં’ ઇત્યાદિ.

ગૌતમે ફરીને પ્રભુને પૂછ્યું—(મંતે !) હે ભદન્ત ! (સે કહિં **સ્વાઈ** ણં સિદ્ધા પરિવસંતિ) સિદ્ધ લોક આ પૂર્વોક્ત સ્થાનોમાં નથી રહેતા તો પછી તેઓ કયાં રહે છે ? ત્યારે પ્રભુએ કહ્યું—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ઈમીસે

૧—‘સ્વાઈ’ એ શબ્દ દેશી શબ્દ છે, આ શબ્દ ‘પુનઃ’ શબ્દના અર્થનો સૂચક છે. ‘ણં’ શબ્દ વાક્યાલંકારમાં છે.

भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियग्गहगणणक्खत्तताराभवणा-
ओ बहूइं जोयणाइं, बहूइं जोयणसयाइं, बहूइं जोयणसहस्साइं,
बहूइं जोयणसयसहस्साइं, बहूओ जोयणकोडीओ, बहूओ जोय-
णकोडाकोडीओ उड्ढतरं उप्पइत्ता सोहम्मी-साण-सणंकुमार-

अस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ' बहुसमरमणीयाद्
भूमिभागात् 'उड्ढं' ऊर्ध्वं 'चंदिम-सूरिय-ग्गहगण-णक्खत्त-ताराभवणाओ' चन्द्र-सूर्य-
ग्रहगण-नक्षत्र-ताराभवनात् 'बहूइं जोयणाइं' बहूनि योजनानि, 'बहूइं जोयणसयाइं'
बहूनि योजनशतानि, 'बहूइं जोयणसहस्साइं' बहूनि योजनसहस्राणि, 'बहूइं जोयणसय-
सहस्साइं' बहूनि योजनशतसहस्राणि, 'बहूओ जोयणकोडीओ' बह्व्यो योजनकोट्यः
'बहूओ जोयणकोडीकोडीओ' बह्व्यो योजनकोटिकोट्यः 'उड्ढतरं उप्पइत्ता'
ऊर्ध्वतरमुत्पत्य 'सोहम्मी-साण-सणंकुमार-माहिंद-बंभ-लंतग-महासुक्क-सहस्सार-
आणय-पाणय-आरण-अच्चुए' सौधर्मे-शान-सनत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-लान्तक-महाशुक्क-

के (बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ) बहुसमरमणीय भूमिभाग से (उड्ढं) ऊँचे-ऊपर
(चंदिम-सूरिय-ग्गहगण-णक्खत्त-ताराभवणाओ) चंद्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र एवं ताराओं
के भवनों से (बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं
जोयणसयसहस्साइं बहूओ जोयणकोडीओ बहूओ जोयणकोडीकोडीओ) बहुत
योजन, बहुत सैकड़ों योजन, बहुत हजारों योजन, बहुत लाखों योजन, बहुत करोड़ों योजन एवं अनेक
कोटाकोटी योजन (उड्ढतरं उप्पइत्ता) ऊपर जाने पर (सोहम्मी-साण-सणंकुमार-माहिंद-
बंभ-लंतग-महासुक्क-सहस्सार-आणय-पाणय-आरण-अच्चुए) तिणि य अट्टारे गेविज्ज-

रयणप्पहाए पुढवीए) आ रत्नप्रभा पृथिवीना (बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभा-
गाओ) बहुसमरमणीय भूमिभागथी (उड्ढं) उँचे-उपर (चंदिमसूरियग्गह-
गणणक्खत्तताराभवणाओ) चंद्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र तेमज ताराओनां
भवनेथी (बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहूओ
जोयणकोडीओ बहूओ जोयणकोडीकोडीओ) धणु। लाखो योजन, धणु। सैंकड़ो
योजन, डुजरो योजन, धणु। लाखो योजन, धणु। करोडो योजन तेमज
अनेक डोटाडोटी योजन (उड्ढतरं उप्पइत्ता) उपर जतां (सोहम्मी-साण-
सणंकुमार-माहिंद-बंभ-लंतग-महासुक्क-सहस्सार-आणय-पाणय-आरण-अच्चुए

માહિંદ-વંભ-લંતગ-મહાસુક્ર-સહસ્સાર-આણય-પાણય-આરણ
-અચ્ચુણ તિણિ ય અટ્ટારે ગેવિજ્જવિમાણાવાસસણ વીઈવહિત્તા
વિજય-વેજયંત-જયંત-અપરાજિય-સવ્વટ્ઠસિદ્ધસ્સ ય મહાવિ-
માણસ્સ સવ્વઉવરિહ્ણાઓ થૂમ્મિયગ્ગાઓ દુવાલસજોયણાઈં અવા-
હાણ ઇત્થ ણં ઈસીપબ્ભારા ણામ પુઢવી પણત્તા, પણયાલીસં જો-

સહસ્રારા-SSનત-પ્રાણતાSS-રણાSચ્યુતાનિ, 'તિણિ ય અટ્ટારે ગેવિજ્જવિમાણાવાસસણ' ત્રીણિ
ચ અષ્ટાદશ ગ્રૈવેયવિમાનાવાસશતાનિ—ગ્રૈવયકવિમાનાવાસાનામ્ અષ્ટાદશાધિકશતત્રયં 'વીઈવહિ-
ત્તા' વ્યતિવ્રજ્ય=વ્યતીત્ય—ઉલ્લહ્ધ્ય, તત્ર— પ્રથમત્રિકસ્ય એકાદશાધિકશતં (૧૧૧), દ્વિતીય—
ત્રિકસ્ય સતોત્તરશતં (૧૦૭), તૃતીયત્રિકસ્ય શતં (૧૦૦) ગ્રૈવેયકવિમાનાવાસાન્ વ્યતિ-
ક્રમ્યેત્યર્થઃ । 'વિજય-વેજયંત-જયંત-અપરાજિય-સવ્વટ્ઠસિદ્ધસ્સ ય મહાવિમાણસ્સ'
વિજય-વૈજયન્ત-જયન્તાS—પરાજિત-સર્વાર્થસિદ્ધસ્ય ચ મહાવિમાનસ્ય 'સવ્વ-
ઉવરિહ્ણાઓ' સર્વોપરિતનાત્, 'થૂમ્મિયગ્ગાઓ' સ્તૂપિકાગ્રાત્=શિખરાગ્રભાગાત્ 'દુવાલસ

વિમાણાવાસસણ) સૌધર્મ, ઈશાન, સનકુમાર, માહેન્દ્ર, બ્રહ્મ, લાન્તક, મહાશુક્ર, સહ-
સ્રાર, આનત, પ્રાણત, આરણ, અચ્યુત યે ૧૨ દેવલોક, એવં પ્રથમત્રિક કે ૧૧૧, દૂસરે
ત્રિકકે ૧૦૭, એવં તોસરે ત્રિકકે ૧૦૦ ઇસ પ્રકાર ત્રીનસૌ અઠારહ ગ્રૈવેયક વિમાનોં કો
(વીઈવહિત્તા) પાર કરને કેવાદ જો (વિજય-વેજયંત-જયંત-અપરાજિય-સવ્વટ્ઠસિદ્ધસ્સ
ય મહાવિમાણસ્સ સવ્વઉવરિહ્ણાઓ થૂમ્મિયગ્ગાઓ) વિજય, વૈજયન્ત, જયંત, અપરા-
જિત એવં સર્વાર્થસિદ્ધ યે પાંચ અનુત્તર વિમાન આવે હૈં, ઇન મહાવિમાનોં કે શિખર કે અગ્ર-

તિણિ ય અટ્ટારે ગેવિજ્જવિમાણાવાસસણ) સૌધર્મ, ઈશાન, સનકુમાર,
માહેન્દ્ર, બ્રહ્મ, લાંતક, મહાશુક્ર, સહસ્રાર, આનત, પ્રાણુત, આરણુ, અચ્યુત
આ ૧૨ દેવલોક, તેમજ પ્રથમ ત્રિકનાં ૧૧૧, બીજા ત્રિકનાં ૧૦૭, તેમજ
ત્રીજા ત્રિકનાં ૧૦૦, એ રીતે ત્રણસૌ અઠાર (૩૧૮) ગ્રૈવેયક વિમાનોને (વીઈવહિત્તા)
પાર કર્યા પછી જે (વિજય-વેજયંત-જયંત-અપરાજિય-સવ્વટ્ઠસિદ્ધસ્સ ય મહા-
વિમાણસ્સ સવ્વઉવરિહ્ણાઓ થૂમ્મિયગ્ગાઓ) વિજય, વૈજયન્ત, જયંત, અપરાજિત,
તેમજ સર્વાર્થસિદ્ધ એ પાંચ અનુત્તર વિમાન આવે છે, એ મહાવિમાનના
શિખરના અગ્રભાગથી (દુવાલસજોયણાઈં અવાહાણ) ૧૨ યોજન દૂર જતાં

यणसयसहस्साइं आयामविव्रखंभेणं, एगा जेयणकेडी बाया-
लीसं च सयसहस्साइं तीसं च सहस्साइं दोण्णि य अउणापण्णे
जेयणसए किंचिविसेसाहिए परिणं ॥ सू० १०२ ॥

मूलम्—ईसीपब्भाराए णं पुढवीए बहुमज्झदेसभाए

जोयणाइं' द्वादश योजनानि 'अबाहाए' अबाधया=अन्तरेण-दूरेण ततोऽप्युपरोत्यर्थः, 'एत्थ णं' अत्र खलु 'ईसीपब्भारा णाम' ईषत्प्राग्भारा=सिद्धशिला नाम 'पुढवी पणत्ता' पृथिवी प्रज्ञ-
ता, 'पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं' पञ्चचत्वारिंशत् योजनशतस-
हस्राणि आयामविष्कम्भेण—आयामेन विष्कम्भेण च, 'एगा जोयणकोडी' एका योजनकोटिः
'वायालीसं च' द्वाचत्वारिंशच्च 'सयसहस्साइं' शतसहस्राणि 'तीसं च सहस्साइं' त्रिंशच्च
सहस्राणि, 'दोण्णि य अउणापण्णे जोयणसए' द्वे चैकोनपञ्चाशे योजनशते, 'किंचि विसे-
साहिए' किञ्चिद्विशेषाधिके 'परिरयेणं' परिरयेण=परिधिना ॥ सू० १०२ ॥

टीका--‘ईसीपब्भाराए’ इत्यादि । ‘ईसीपब्भाराए णं पुढवीए’ ईषत्प्राग्भा-
रायाः खलु पृथिव्या ‘बहुमज्झदेसभाए अट्ठजोयणिए खेत्ते अट्ठ जोयणाइं बाहल्लेणं’

भाग से (दुवालस जोयणाईं अबहाण) बारह योजन दूर जाने पर, अर्थात् इन पांच अनुत्तर विमानोंके शिखरों के अग्रभाग से १२ योजन ऊपर (एत्थ णं ईसीपब्भारा णाम पुढ्वी पणत्ता) ईषत्प्राग्भारा पृथिवी अर्थात् सिद्धशिला है। (पणयालीसं जोयणसय—सहस्साईं आयामविकखंभेणं, एगा जोयणकोडी बायालीसं च सयसहस्साईं तीसं च सहस्साईं दोण्णि य अउणापण्णेजोयणसए किंचि विसेसाहिण पडिरणं) यह पैतालीस लाख योजनकी लंबी—चौड़ी और एक करोड बयालीस लाख, तीन हजार, दो सौ उंचास योजन से कुछ अधिक परिधिवाली है ॥ सू. १०२ ॥

અર્થાત્ એ પાંચ અનુત્તરવિમાનોનાં અગ્રભાગથી ૧૨ યોજન ઉપર (એથ્થ ણં
ઈસીપન્મારા ણામ પુઢવી પણ્ણત્તા) ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા પૃથિવી-અર્થાત્ સિદ્ધશિલા
છે. (પળ્યાલીસં ચ જોયણસયસહસ્સાઈં આયામવિક્કલંભેણં, એગા જોયણકોડી
વાયાલીસં ચ સયસહસ્સાઈં, તીસં ચ સહસ્સાઈં; દોણિય અઙ્ગાપણ્ણે જોયણસણ
કિંચિ વિસેસાહિણ પઢિરણં) આ પીસ્તાલીસ લાખ યોજનની લાંબી-પહોળી
અને એક કરોડ બેતાલીસ લાખ ત્રીસ હજાર બસો ઓગણપચાસ યોજનથી
જરા વધારે પરિઘિવાળી છે. (સૂ. ૧૦૨)

અટ્ટજોયણિણે સ્વેત્તે અટ્ટ જોયણાઈં બાહલ્લેણં, તયાણંતરં ચ ણં
માયાણં પરિહાયમાણી ૨ સવ્વેસુ ચરિમપેરંતેસુ મચ્છિયપત્તાઓ
તણુયતરા અંગુલસ્સ અસંસેજ્જહિમાગં બાહલ્લેણં પણ્ણત્તા
॥ સૂ. ૧૦૩ ॥

બહુમધ્યદેશભાગેઽષ્ટયોજનિકં ક્ષેત્રમ્ અટ્ટ યોજનાનિ બાહલ્યેન, 'તયાણંતરં ચ ણં' તદનન્તરઞ્ચ
સ્વલુ 'માયાણં' ૨ માત્રયા ૨ 'પરિહાયમાણી' ૨ પરિહીયમાના ૨ 'સવ્વેસુ ચરિમપેરંતેસુ' સર્વેષુ
ચરમપ્રાન્તેષુ 'મચ્છિયપત્તાઓ તણુયતરા' મક્ષિકાપક્ષાત્તનુકતરા 'અંગુલસ્સ અસંસેજ્જહિમાગં'
અઙ્ગુલસ્યાઽસંસેયમાગં 'બાહલ્લેણં' બાહલ્યેન 'પણ્ણત્તા' પ્રજ્ઞતા ॥ સૂ. ૧૦૩ ॥

‘ઈસીપબ્ભારાણં ણં પુઢવીણં’ ઇત્યાદિ ।

ઈસ (ઈસીપબ્ભારાણં ણં પુઢવીણં) ઈષ્ટપ્રાગભારા પૃથિવીકા અર્થાત્ સિદ્ધશિલાકા
(બહુમજ્જદેસમાણં અટ્ટજોયણિણે સ્વેત્તે) જો બહુમધ્યદેશભાગસ્થિત આઠ યોજનકા ક્ષેત્ર હૈ,
ઉસકા (અટ્ટજોયણાઈં બાહલ્લેણં) આઠ યોજન બાહલ્ય હૈ, અર્થાત્ સિદ્ધશિલા બીચ મેં આઠ યોજન
જાડી હૈ । (તયાણંતરં ચ ણં માયાણં ૨ પરિહાયમાણી ૨) ઉસ મધ્યભાગ સે ક્રમશઃ
કમ હતી હુઈ યહ (સવ્વેસુ ચરિમપેરંતેસુ) સમી ચરમ પ્રદેશોં મેં (મચ્છિયપત્તાઓ તણુ-
યતરા) મક્કી કે પાંચ સે મી અધિક પતલી હૈ, (અંગુલસ્સ અસંસેજ્જહિમાગં બાહલ્લેણં
પણ્ણત્તા) અતઃ યહ બારીકી મેં અંગુલ કે અસંસ્યાતવેં ભાગ જાનનીં ચાહિયે ॥ સૂ. ૧૦૩ ॥

‘ઈસીપબ્ભારાણં ણં પુઢવીણં’ ઇત્યાદિ.

આ (ઈસીપબ્ભારાણં ણં પુઢવીણં) ઇષ્ટપ્રાગભારા પૃથિવીના, અર્થાત્
સિદ્ધશિલાના (બહુમજ્જદેસમાણં અટ્ટજોયણિણે સ્વેત્તે) બહુ-મધ્યદેશ-ભાગમાં
રહેલું જે આઠ યોજન પ્રમાણુવાળું ક્ષેત્ર છે, તેનાં (અટ્ટજોયણાઈં બાહલ્લેણં)
આઠ યોજન બાહલ્ય છે, અર્થાત્ સિદ્ધશિલા વચ્ચેમાં આઠ યોજન જાડી છે. (તયાણંતરં
ચ ણં માયાણં ૨ પરિહાયમાણી ૨) તે મધ્યભાગથી ક્રમશઃ ધીમે-ધીમે ઓછી
થતાં થતાં આ, (સવ્વેસુ ચરિમપેરંતેસુ) બધા ચરમ પ્રદેશોમાં (મચ્છિય-
પત્તાઓ તણુયતરા) માખીની પાંખથી પણ વધારે પાતળી છે. (અંગુલસ્સ
અસંસેજ્જહિમાગં બાહલ્લેણં પણ્ણત્તા) આમ તે બારીકાઈમાં આંગળીના અસંખ્યા-
તમા ભાગની બાબત બોધાયે. (સૂ. ૧૦૩)

मूलम्—ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस णामधे-
ज्जा पणत्ता, तं जहा—ईसीइ वा ईसीपब्भाराइ वा तणूइ वा
तणुतणूइ वा सिद्धीइ वा सिद्धालएइ वा मुत्तीइ वा मुत्तालएइ
वा लोयग्गेइ वा लोयग्गथूभिगाइ वा लोयग्गपडिबुज्झणाइ वा
सव्व—पाण—भूय—जीव—सत्त—सुहावहाइ वा ॥ सू० १०४ ॥

टीका—‘ईसीपब्भाराए’ इत्यादि ! ‘ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस
णामधेज्जा पणत्ता’ ईषत्प्राग्भारायाः खलु पृथिव्या द्वादश नामधेयानि प्रज्ञप्तानि, ‘तं जहा’
तद्यथा—‘ईसीइ वा’ ईषत् इति वा १, ‘ईसीपब्भाराइ वा’ ईषत्प्राग्भारा इति वा २, ‘तणूइ वा’
तनुरिति वा ३, ‘तणुतणूइ वा’ तनुतनुरिति वा ४, ‘सिद्धीइ वा’ सिद्धिरिति वा ५, ‘सिद्धालएइ वा’
सिद्धालय इति वा ६, ‘मुत्तीइ वा’ मुक्तिरिति वा ७, ‘मुत्तालएइ वा’ मुक्तालय इति वा
८, ‘लोयग्गेइ वा’ लोकाग्रमिति वा ९, ‘लोयग्गथूभिगाइ वा’ लोकाग्रस्तूपिकेति वा
१०, ‘लोयग्गपडिबुज्झणाइ वा’ लोकाग्रप्रतिबोधनेति वा ११, ‘सव्व—पाण—भूय—जीव
—सत्त—सुहावहाइ वा’ सर्व—प्राण—भूत—जीव—सत्त्व—सुखावहेति वा १२ ॥ सू० १०४ ॥

‘ईसीपब्भाराए णं पुढवीए’ इत्यादि ।

(ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस णामधेज्जा भवन्ति) ईषत्प्राग्भारा पृथिवी
के १२ नाम हैं, (तं जहा) जैसे-१—(ईसीइ वा) ईषत्, २—(ईसीपब्भाराइ वा) ईषत्प्राग्भारा,
३—(तणूइ वा) तनु, ४—(तणुतणूइ वा) तनुतनु, ५—(सिद्धीइ वा) सिद्धि, ६—(सिद्धा-
लएइ वा) सिद्धालय, ७—(मुत्तीइ वा) मुक्ति, ८—(मुत्तालएइ वा) मुक्तालय, ९—(लोयग्गे
इ वा) लोकाग्र, १०—(लोयग्गथूभिगाइ वा) लोकाग्रस्तूपिका, ११—(लोयग्गपडिबुज्झणा

‘ईसीपब्भाराए णं पुढवीए’ इत्यादि.

(ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस णामधेज्जा पणत्ता) आ ईषत्प्रा-
ग्भारा पृथिवीना १२ नामो छे, (तं जहा) जेभके १—(ईसीइ वा) ईषत्, २—
(ईसीपब्भाराइ वा) ईषत्प्राग्भारा, ३—(तणूइ वा) तनु, ४—(तणुतणूइ वा) तनुतनु,
५—(सिद्धीइ वा) सिद्धि, ६—(सिद्धालएइ वा) सिद्धालय, ७—(मुत्तीइ वा) मुक्ति, ८—
(मुत्तालएइ वा) मुक्तालय, ९—(लोयग्गेइ वा) लोकाग्र, १०—(लोयग्गथूभिगाइ वा)
लोकाग्रस्तूपिका, ११—(लोयग्गपडिबुज्झणाइ वा) लोकाग्रप्रतिबोधना, १२—(सव्व—पाण

મૂલમ—ઈસીપન્મારા ણં પુઢવી સેયા સંસ્વતલ—વિમલ-
સોલ્હિય—મુણાલ—દગરય—તુસાર—ગોક્ષીર—હાર—વણ્ણા ઉત્તાણય
—છત્ત—સંઠાણ—સંઠિયા સન્વજ્જુણસુન્વણ્ણયમર્દ અચ્છા સપ્પહા

ટીકા—‘ઈસીપન્મારા’ ઇત્યાદિ । ‘ઈસીપન્મારા ણં પુઢવી’ ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા સ્વહ
પૃથિવી ‘સેયા’ શ્વેતા ‘સંસ્વતલ—વિમલ—સોલ્હિય—મુણાલ—દગરય—તુસાર—ગોક્ષીર
—હાર—વણ્ણા’ શઙ્ખતલ—વિમલ—શૌલ્ય—મૃણાલ—દકરજ—સ્તુષાર—ગોક્ષીર—હાર—વર્ણા—તત્ર—શઙ્ખતલં=
શઙ્ખસ્વસ્થાધસ્તનો ભાગઃ, વિમલં=નિર્મલં શૌલ્યં=શ્વેતકુસુમવિશેષઃ, મૃણાલં=કમલસ્ય કન્દઃ,
તુષારઃ=હિમં—‘વર્ફ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધમ્, હારઃ=મુક્તાહારઃ, શઙ્ખાદિહારાન્તાનાં વર્ણા ઇવ વર્ણો યસ્યાઃ
સા તથા, ‘ઉત્તાણય—છત્ત—સંઠાણ—સંઠિયા’ ઉત્તાનકચ્છત્ર—સંસ્થાન—સંસ્થિતા—ઉત્તાનકમ્=
ઊર્ધ્વમુખં—વિસ્ફારિતં યત્ છત્રં તસ્ય સંસ્થાનમિવ સંસ્થાનં તેન સંસ્થિતા=યુક્તા, ‘સન્વજ્જુણ—

ઈ વા) લોકપ્રતિબોધના, ૧૨—(સન્વ—પાણ—ભૂય—જીવ—સત્ત—સુહાવહા ઇ વા) સર્વ-
પ્રાણભૂતજીવસત્ત્વસુહાવહા ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

‘ઈસીપન્મારા ણં પુઢવી’ ઇત્યાદિ ।

(ઈસીપન્મારા ણં પુઢવી) યહ ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા નામકો પૃથિવી (સેયા) સફેદ છે ।
ઇસકી ઉજ્જ્વલતા (સંસ્વતલ—વિમલ—સોલ્હિય મુણાલ દગરય—તુષાર—ગોક્ષીર—હાર—વણ્ણા)
શંસ્વ કે તલભાગકે સમાન, શુભ્રપુષ્પકે સમાન, મૃણાલકે સમાન, કમલકે સમાન, પાનીકી
બિન્દુઓં કે સમાન, વર્ફ કે સમાન, દુગ્ધ કે સમાન, એવં મુક્તાહાર કે સમાન છે । યે સર્વ
બીજેં જિસ પ્રકાર શુભ્ર હોતી છેં ઉસી પ્રકાર યહ બી શુભ્ર છે । (ઉત્તાણય—છત્ત—સંઠાણ—
સંઠિયા) શિર પર તાને હુએ છત્ર કે સમાન ઇસકા આકાર છે । (સન્વજ્જુણ—સુવણ્ણયમર્દ

—ભૂય—જીવ—સત્ત—સુહાવહા ઇ વા) સર્વ—પ્રાણુ—ભૂત—જીવ—સત્ત્વ—સુખાવહા. (સૂ૦ ૧૦૪)

‘ઈસીપન્મારા ણં પુઢવી’ ઇત્યાદિ.

(ઈસીપન્મારા ણં પુઢવી) આ ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા પૃથિવી (સેયા) સફેદ
છે. તેની ઉજ્જ્વલતા (સંસ્વતલ—વિમલ—સોલ્હિય—મુણાલ—દગરય—તુસાર—ગોક્ષીર—
હાર—વણ્ણા) શંખના તળીયાંના ભાગ જેવી ઉજ્જ્વલ, શુભ્ર પુષ્પ સમાન, કમળના
મૃણાલ જેવી, પાણીનાં બિંદુઓના જેવી, ખરફના જેવી, દૂધના
જેવી, તેમજ મોતીના હાર જેવી ઉજ્જ્વલ છે. આ બધી ચીજો જેવી શુભ્ર
(ધોળી) હોય છે તેવીજ રીતે આ પણ શુભ્ર છે. (ઉત્તાણય—છત્ત—સંઠાણ
—સંઠિયા) શિર ઉપર ઓઢેલાં છત્ર સમાન તેનો આકાર છે. (સન્વજ્જુણ—

લળ્હા ઘટ્ટા મટ્ટા ણીરયા ણિમ્મલા ણિપ્પંકા ણિક્કંકડચ્છાયા
સમરીચિયા સુપ્પમા પાસાદીયા દરિસણિજ્ઞા અભિરુવા પડિરુવા
॥ સૂ. ૧૦૫ ॥

સુવર્ણયમઈ' સર્વાર્જુનસુવર્ણકમયી—સર્વેણ=સર્વાવયવાવચ્છેદેન અર્જુનસુવર્ણકમયી=શ્વેત-
કાશ્ચનમયી, તથા—'અચ્છા' અચ્છા આકાશસ્ફટિકવત્, 'સળ્હા' શ્લક્ષ્ણા=શુભપરમાણુસ્કન્ધ-
રચિતતયા શ્લક્ષ્ણા—સૂક્ષ્મતન્તુનિર્મિતવસ્ત્રવત્ સૂક્ષ્મા, 'લળ્હા' શ્લક્ષ્ણા—ઘુણ્ટિતવસ્ત્રવન્મસૃણા,
'લટ્ટા' લટ્ટા=સુન્દરાકૃતિકા, 'ઘટ્ટા' ઘટ્ટા=ઘટ્ટેવ—સ્વરશાળયા શોધિતપાષાણવત્, 'મટ્ટા'
મટ્ટા=મટ્ટેવ—કોમલશાળયા શોધિતપાષાણવત્, 'ણીરયા' નીરજાઃ, 'ણિમ્મલા' નિર્મલા,
'ણિપ્પંકા' નિષ્પંકા=કર્દમરહિતા, 'ણિક્કંકડચ્છાયા' નિષ્કંકડચ્છાયા=આવરણરહિતા
'સમરીચિયા' સમરીચિકા=કિરણસમૂહયુક્તા, 'સુપ્પમા' સુપ્રમા=શોભાસમ્પન્ના, 'પાસાદીયા'
પ્રાસાદીયા—પ્રસાદઃ=પ્રમોદઃ સ એવ પ્રાસાદઃ, સ પ્રયોજનં યસ્યાઃ સા તથા, 'દરિસણિજ્ઞા'
દર્શનીયા—દર્શનાય હિતા, તાં પશ્યન્નશુર્ન શ્રામ્યતીત્યર્થઃ, 'અભિરુવા' અભિરુપા=

અચ્છા સળ્હા લળ્હા ઘટ્ટા મટ્ટા ણીરયા ણિમ્મલા ણિપ્પંકા ણિક્કંકડચ્છાયા સમરી-
ચિયા સુપ્પમા પાસાદીયા, દરિસણિજ્ઞા અભિરુવા પડિરુવા) તથા—યહ સંપૂર્ણ શ્વેતકાં-
ચનમય હૈ, આકાશ એવં સ્ફટિક કે સમાન સ્વચ્છ હૈ, શુદ્ધપરમાણુસ્કન્ધોં સે રચિત હોને કે
કારણ સૂક્ષ્મતન્તુઓં સે નિર્મિત વસ્ત્ર કે સમાન સૂક્ષ્મ હૈ, ઘુટે હુએ વસ્ત્ર કે સમાન ચિકની હૈ,
ઘટ્ટ હૈ—સ્વર શાળ સે ઘિસે હુએ પથર કે જૈસી હૈ, મટ્ટ હૈ, અર્થાત્—કોમલશાળ સે ઘિસે હુએ
પથર કે સમાન ચિકની હૈ । નીરજ—નિર્મલ હૈ । કર્દમરહિત હૈ । આવરણરહિત હૈ । કિરણોં
કે સમુદાય સે સુરમ્ય હૈ । શોભાસે સંપન્ન હૈ । પ્રમોદ પ્રદાન કરને વાલી હૈ । દર્શનીય હૈ ।

સુવર્ણયમઈ અચ્છા સળ્હા લળ્હા ઘટ્ટા મટ્ટા ણીરયા ણિમ્મલા ણિપ્પંકા ણિક્કંક-
ડચ્છાયા સમરીચિયા સુપ્પમા પાસાદીયા દરિસણિજ્ઞા અભિરુવા પડિરુવા) તથા
એ સંપૂર્ણ શ્વેત કાંચનમય છે, આકાશ તેમજ સ્ફટિકના સમાન સ્વચ્છ છે.
શુદ્ધ પરમાણુસ્કંધોથી નિર્મિત હોવાને કારણે સૂક્ષ્મતંતુઓથી નિર્મિત વસ્ત્ર-
સમાન સૂક્ષ્મ છે, ઘુણ્ટિત—માંડ વિગેરેથી ઘસાયેલા વસ્ત્રની માફક ચીકણી
છે, ઘટ્ટ છે—ખરશાણથી ઘસાયેલા પથરના જેવી છે, મટ્ટ છે—અર્થાત્
કોમળશાણથી ઘસેલા પથરના જેવી ચીકણી છે, નીરજ—નિર્મળ છે, કર્દમ
(કાદવ) થી રહિત છે, શોભા—સંપન્ન છે, પ્રમોદ (આનંદ) આપવા વાળી
છે, દર્શનીય છે, એને જોવાવાળાનાં નેત્ર એને જોતાં જોતાં ધરાતાંજ નથી, એ

મૂલમ્—ईसीपब्भाराए णं पुढवीए सेयाए जोयणंमि
लोगंते । तस्स जोयणस्स जे से उवरिल्ले गाउए, तस्स णं गाउ-
यस्स जे से उवरिल्ले छब्भागे, तत्थ णं सिद्धा भगवंतो सादिया

કમનીયા, ‘પડિરૂવા’ પ્રતિરૂપા—દર્શને પ્રતિક્ષણં નવં નવમિવ પ્રતિભાસમાનં રૂપં યસ્યા:
સા તથા ॥ સૂ૦ ૧૦૫ ॥

ટીકા—‘ईसीपब्भाराए’ इत्यादि । ‘ईसीपब्भाराए णं’ ईषत्प्राग्भारायाः=सिद्ध-
शिलायाः खलु ‘पुढवीए सेयाए’ पृथिव्याः श्वेतायाः ‘जोयणंमि लोगंते’ योजने लोकान्तः=
योजनपरिमितं क्षेत्रमुपरि गत्वा लोकान्तो वर्तते । अत्र योजनम्—उत्सेधाङ्गुलयोजनं ग्राह्यम्,
तदीयस्यैव हि क्रोशषड्भागस्य सत्रिभागत्रयस्त्रिंशदधिकधनुःशतत्रयीप्रमाणत्वादिति । ‘तस्स
जोयणस्स’ तस्य योजनस्य, ‘जे से’ यः सः ‘उवरिल्ले’ उपरितनः ‘गाउए’ देशी-
योऽयंशब्दः क्रोशार्थे, स च द्विसहस्रधनुःप्रमाणं क्षेत्रम्, उक्तं च—“ चउहत्थं पुण धनुहं दुन्नि
सहस्साइ गाउयं तेसिं ” ॥ इति । ‘तस्स णं’ तस्य खलु ‘गाउयस्स’ क्रोशस्य, ‘जे
से उवरिल्ले’ यः स उपरितनः ‘छब्भाए’ षड्भागः=षट्ठो भागः, ‘तत्थ णं सिद्धा भगवंतो

इसे देखने वालों के नेत्र इसे देखने २ थकते नहीं हैं । यह बड़ी ही कमनीय है । इसे ज्यों
ज्यों देखा जाता है त्यों २ यह नवीन २ जैसी प्रतीत होती है ॥ सू० १०५ ॥

‘ईसीपब्भाराए णं पुढवीए’ इत्यादि ।

इस (ईसीपब्भाराए णं पुढवीए सेयाए) शुभ્ર ईषत्પ્રાગ્ભારા પૃથિવી સે (જોય-
ણંમિ) ઊપર ૧ યોજન મેં (લોગંતે) લોક કા અંત હૈ । (તસ્સ જોયણસ્સ જે સે ઉવરિલ્લે
ગાઉએ, તસ્સ ણં ગાઉયસ્સ જે સે ઉવરિલ્લે છબ્ભાગે, તત્થ ણં સિદ્ધા ભગવંતો સાદિયા
અપજ્જવસિયા) ઉસ યોજનપરિમિત લોક કે અંત મેં ૩૩૩ ધનુષ ઓર ૩૨ અંગુલ જિતની
જગહ રહી હૈ, ઉસમેં અર્થાત્ ઉસ યોજન કે ઊપર કે કોસ કે છઠવેં ભાગ મેં સિદ્ધ ભગવાન્

બહુ જ કમનીય છે, તેને જેમ જેમ જોવાય તેમ તેમ તે નવીન નવીન જેવી
પ્રતીત થાય છે. (સૂ૦ ૧૦૫)

‘ईसीपब्भाराए णं पुढवीए’ इत्यादि.

આ (ईसीपब्भाराए णं पुढवीए सेयाए) शुभ्र ईषत्प्राग्भारा पृथिवीથી
(जोयणंमि) ઉપર ૧ યોજનમાં (લોગંતે) લોકનો અંત છે. (તસ્સ જોયણસ્સ
જે સે ઉવરિલ્લે ગાઉએ, તસ્સ ણં ગાઉયસ્સ જે સે ઉવરિલ્લે છબ્ભાગે, તત્થ ણં
સિદ્ધા ભગવંતો સાદિયા અપજ્જવસિયા ચિટ્ઠંતિ) તે યોજનપરિમિત લોકના
અંતમાં ૩૩૩ ધનુષ અને ૩૨ આંગળ જેટલી જગા રહી છે, તેમાં અર્થાત્

અપજ્જવસિયા અણેગજાડ્-જરા-મરણ-જોણિ-વેયણં સંસાર-
કલંકલીભાવ-પુણબ્ભવ-ગબ્ભવાસ-વસહી-પવંચં અઙ્કંતા
સાસયમણાગયદ્ધં ચિદ્ધંતિ ॥ સૂ. ૧૦૬ ॥

મૂલમ્—કહિં પડિહયા સિદ્ધા ?, કહિં સિદ્ધા પડિદ્ધિયા ?
કહિં વોદિં ચદ્ધતા ણં, કત્થ ગંતૂણ સિજ્ઝઇ ? ॥ સૂ. ૧૦૭ ॥

સાદિયા અપજ્જવસિયા' તત્ર સ્વલ્પ સિદ્ધા ભગવન્તઃ સાદિકા અપર્યવસિતાઃ 'અણેગ-જાડ્-જરા-મરણ-જોણિ-વેયણં' અનેક-જાતિ-જરા-મરણ-યોનિ-વેદનમ્-અનેકજાતિજરા-મરણપ્રધાનયોનિષુ વેદના યત્ર સ તથા તં, 'સંસાર-કલંકલીભાવ-પુણબ્ભવ-ગબ્ભવાસ-વસહી-પવંચં સંસાર-કલંકલીભાવ-પુનર્ભવ-ગર્ભવાસ-વસતિ-પ્રપન્ચં - સંસારે કલંકલીભાવેન =અસમજસત્વેન યે પુનર્ભવાઃ=પૌનઃપુન્યેન ઉત્પાદાઃ, ગર્ભવાસવસતયઃ=ગર્ભાશ્રયનિવાસાશ્ચ તાસાં યઃ પ્રપન્ચો=વિસ્તરઃ સ તથા તમ્ 'અઙ્કંતા' અતિક્રાન્તાઃ=નિસ્તીર્ણાઃ, 'સાસયં' શાશ્વતમ્ 'અણાગયદ્ધં' અનાગતાદ્ધાં=ભવિષ્યત્કાલં 'ચિદ્ધંતિ' તિષ્ઠન્તિ ॥ સૂ. ૧૦૬ ॥

ટીકા—'કહિં પડિહયા' इति । गौतमः पृच्छति—'कहिं पडिहया सिद्धा' क्व प्रतिहताः सिद्धाः=सिद्धाः कुत्र प्रतिरुद्धाः, तथा 'कहिं सिद्धा पडिद्विया' क्व सिद्धाः प्रति-

સાદિ-અપર્યવસિત સ્થિતિ મેં વિરાજમાન હૈં । (અણેગ-જાડ્-જરા-મરણ-જોણિ-વેયણં સંસાર-કલંકલીભાવ-પુણબ્ભવ-ગબ્ભવાસ-વસહી-પવંચમઙ્કંતા)યે સિદ્ધ ભગવાન્ અનેક જાતિ, જરા એવં મરણ કી વેદના સે, તથા અસમંજસપૂર્ણ જો બાર બાર જન્મ લેના, ગર્ભ મેં વાસ કરના આદિ દુઃખ હૈં ઉનસે યુક્ત સાંસારિક પ્રપંચો સે રહિત હોકર (સાસયમણાગયદ્ધં ચિદ્ધંતિ) સદા શાશ્વતિકરૂપ સે વહાં પર વિરાજતે રહતે હૈં ॥ સૂ. ૧૦૬ ॥

તે યોજનની ઉપરના કેસના છઠ્ઠા ભાગમાં સિદ્ધ ભગવાન સાદિ-અપર્યવસિત સ્થિતિમાં વિરાજમાન છે. (અણેગ-જાડ્-જરા-મરણ-જોણિ-વેયણં સંસાર-કલંક-લીભાવ-પુણબ્ભવ-ગબ્ભવાસ-વસહી-પવંચમઙ્કંતા) એ સિદ્ધ ભગવાન અનેક જન્મો, જરા તેમજ મરણની વેદનાથી તથા અસમંજસપૂર્ણ જે વારંવાર જન્મ લેવો, ગર્ભમાં વાસ કરવો-આદિ દુઃખ છે તેનાથી યુક્ત સાંસારિક પ્રપંચોથી રહિત થઈને (સાસયમણાગયદ્ધં ચિદ્ધંતિ) સદા શાશ્વતિકરૂપથી ત્યાંજ વિરાજતા રહે છે. (સૂ. ૧૦૬)

મૂલમ—અલોગે પડિહયા સિદ્ધા, લોયગ્ગે ય પડિટ્ઠિયા ।

ઇહ બોંદિં ચઇત્તા ણં, તત્થ ગંતૂણ સિજ્ઞઇ ॥ સૂ. ૧૦૮ ॥

ષ્ટિતા:—વ્યવસ્થિતા: : તથા—‘કહિં બોંદિં ચઇત્તા ણં’ ક્વ શરીરં ત્યક્ત્વા સ્વલુ ‘કત્થ ગંતૂણ’ ક્વ ગત્વા ‘સિજ્ઞઇ’ સિધ્ધ્યન્તિ : । ‘બોંદી’ इति शरीरार्थको देशीशब्दः । ‘सिज्झइ’ इत्यत्रार्षत्वाद् बहुत्वे एकत्वम् ॥ सू. १०७ ॥

ટીકા—‘અલોગે’ इत्यादि । ‘अलोगे’ अलोके=अलोकाकाशास्तिकाये ‘सिद्धा’ सिद्धा: ‘पडिहया’ प्रतिहता:—प्रतिरुद्धा:, तथा ‘लोयगगे य’ लोकाग्रे=पञ्चास्तिकायलक्षण-लोकशिरोभागे च ‘पडिट्ठिया’ प्रतिष्ठिता:—अपुनरावृत्तिरूपेण व्यवस्थिता:, तथा ‘इह’ इह

‘કહિં પડિહયા સિદ્ધા ’ इत्यादि ।

गौतम पूछते हैं कि हे भदंत ! (कहिं पडिहया सिद्धा) सिद्ध भगवान किस स्थान पर अटके हैं ?, (कहिं सिद्धा पडिट्ठिया) वे कहां प्रतिष्ठित हैं ?, (कहिं बोंदिं चइत्ता णं) इस शरीर को छोड़कर (कत्थ गंतूण सिज्झइ) वे कहां जा कर सिद्ध होते हैं ? ॥ सू. १०७ ॥

‘અલોગે પડિહયા’ इत्यादि ।

उत्तर—हे गौतम ! (अलोगे पडिहया सिद्धा लोयगगे य पडिट्ठिया) सिद्ध भगवान् लोक के अग्रभाग में रहते हैं, इसलिये वे अलोक में जाने से अटके हुए हैं । लोक के अग्रभाग में उनकी स्थिति है । (इह बोंदिं चइत्ता णं) इस मनुष्यलोक में वे शरीर का

‘કહિં પડિહયા સિદ્ધા ? ’ ઇત્યાદિ.

गौतम पूछे छे डे डे लदन्त ! (कहिं पडिहया सिद्धा) सिद्ध भगवान् क्या स्थाने अटकया छे ?, (कहिं सिद्धा पडिट्ठिया) तेओ क्यां प्रतिष्ठित छे ?, (कहिं बोंदिं चइत्ता णं, कत्थ गंतूण सिज्झइ) आ शरीरने छोडीने तेओ क्यां जईने सिद्ध थाय छे ? (सू. १०७)

‘અલોગે પડિહયા’ ઇત્યાદિ.

उत्तर—हे गौतम ! (अलोगे पडिहया सिद्धा) सिद्ध भगवान् लोकના અગ્રભાગમાં રહે છે તેથી તેઓ અલોકમાં જવાથી અટકેલા હોય છે. (लोयगगे य पडिट्ठिया) लोकના અગ્રભાગમાં તેમની स्थिति છે. (इह बोंदिं चइत्ता णं) आ मनुष्यलोकમાં तेओ शरीरનો પરित्याग કરીને (तत्थ गंतूण सिज्झइ)

मूलम्—जं संठाणं भवं, चयंतस्स चरिमसमयंमि ।

आसीय पएसघणं, तं संठाणं तहिं तस्स ॥ सू० १०९ ॥

मूलम्—दीहं वा हस्सं वा, जं चरिमभवे हवेज्ज संठाणं ।

तत्तो तिभागहीणं, सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥ सू० ११० ॥

मनुष्यक्षेत्रे 'बोदिं' शरीरं 'चइत्ता णं' त्यक्त्वा खलु 'तत्थ' तत्र=लोकाग्रे 'गंतूण' गत्वा 'सिज्झइ' सिध्यन्ति ॥ सू. १०८ ॥

टीका—'जं संठाणं' इत्यादि । 'भवं' भवं=संसारं 'चयंतस्स' त्यजतः सिद्धस्य 'चरिमसमयंमि' चरमसमये=मोक्षगमनसमये 'इहं तु' इह तु=मनुष्यक्षेत्रे तु 'जं संठाणं' यत् संस्थानम् 'आसीय' आसीत्, 'तं संठाणं' तत् संस्थानं 'तस्स' तस्य सिद्धस्य 'तहिं' तत्र सिद्धक्षेत्रे 'पएसघणं' प्रदेशघनं तृतीयभागेन रन्ध्रपूरणाद् भवति ॥ सू. १०९ ॥

टीका—'दीहं वा' इत्यादि । 'दीहं वा' दीर्घं=पञ्चधनुःशतमानं वा, 'हस्सं वा'

परित्याग करके (तत्थ गंतूण सिज्झइ) सिद्धस्थान में जाकर सिद्ध होते हैं ॥ सू. १०८ ॥

'जं संठाणं' इत्यादि ।

(भवं चयंतस्स) संसार का परित्याग करते हुए सिद्ध का (चरिमसमयंमि) मोक्षगमन समय में (इहं तु) इस मनुष्यक्षेत्र में (जं संठाणं) जो संस्थान था, (तस्स) उस सिद्धका (तं संठाणं) वह संस्थान (तहिं) उस सिद्ध क्षेत्र में (पएसघणं) कान, चक्षु आदि इन्द्रियों के रिक्त स्थान भर जाने के कारण प्रदेशघनरूप होता है ॥ सू. १०९ ॥

'दीहं वा हस्सं वा' इत्यादि ।

(दीहं वा) चाहे संस्थान दीर्घ—५०० धनुष का हो, (हस्सं वा) चाहे ह्रस्व—२हाथ

सिद्ध स्थानमां ञ्छने तेओ सिद्ध थाय छे. (सू. १०८)

'जं संठाणं' इत्यादि.

(भवं चयंतस्स) संसारनो परित्याग करती वण्णते सिद्धनुं (चरिमसमयंमि) मोक्षगमन समयमां (इहं तु) आ मनुष्य-क्षेत्रमां (जं संठाणं) जे संस्थान छतुं, (तस्स) ते सिद्धनुं (तं संठाणं) ते संस्थान (तहिं) ते सिद्धक्षेत्रमां (पएसघणं) अन, आंण आदि इन्द्रियोना रिक्त स्थानो परिपूरुं थवाने कारणे प्रदेशघनरूप थाय छे. (सू. १०९)

'दीहं वा हस्सं वा' इत्यादि.

(दीहं वा) चाहे संस्थान दीर्घ (लांणु)—५०० धनुषनुं छाय, (हस्सं वा)

**मूलम्—तिणि सया तेत्तीसा, धणुत्तिभागो य होइ बोद्धव्वो ।
एसा खलु सिद्धाणं, उक्कोसोगाहणा भणिया ॥ सू० १११ ॥**

ह्रस्वं वा=हस्तद्वयमानं वा, वा-शब्दान्मध्यमं चापि ग्राह्यं 'जं चरिमभवे संठाणं हवेज्ज' यच्चर-
मभवे संस्थानं भवेत् 'तत्तो' ततः=तस्मात्, 'तिभागहीणं' त्रिभागहीनं=त्रिभागेन—तृतीयभागेन
स्त्रध्रपूरणात् त्रिभागहीनं यथा स्यात्तथा 'सिद्धाणोगाहणा' सिद्धानामवगाहना 'भणिया'
भणिता=कथिता जिनैरिति शेषः ॥ सू. ११० ॥

टीका—'तिणि' इत्यादि । 'तिणि सया तेत्तीसा' त्रीणि शतानि त्रयस्त्रिं-
शद्वनूंषि, तथा 'धणुत्तिभागो य' धनुस्त्रिभागश्च—धनुषः=एकस्य धनुषस्त्रिभागः=तृतीयो भागः-
द्वात्रिंशदङ्गुलानि, तेन त्रयस्त्रिंशदधिकशतत्रय-३३३-धनूंषि द्वात्रिंशदङ्गुलानि चेत्यर्थः, अयं
सिद्धानामुत्कर्षतोऽवगाहनाप्रमाणो 'बोद्धव्वो' बोद्धव्यो=ज्ञातव्यो भवति । अमुमेवार्थमाह—'एसा
खलु सिद्धाणं उक्कोसोगाहणा भणिया' एषा खलु सिद्धानाम् उत्कर्षाऽवगाहना भणितेति ।
इयमवगाहना पञ्चधनुश्शतप्रमाणशरीराणां भवतीति बोध्यम् ॥ सू० १११ ॥

का हो, अथवा मध्य—अवगाहना के विकल्पो वाला हो, (जं चरिमभवे हवेज्ज संठाणं) अन्तिम
भव—समय में जैसी अवगाहनावाला शरीर होगा, (तत्तो तिभागहीणं सिद्धाणोगाहणा
भणिया) उससे तृतीय भाग—हीन अवगाहना सिद्धों की सिद्धिगति में होती है ॥ सू. ११० ॥

'तिणि सया तेत्तीसा' इत्यादि ।

(तिणि सया तेत्तीसा) तीन सौ तैंतीस धनुष, तथा (धणुत्तिभागो य होइ
बोद्धव्वो) एक धनुष का तीसरा भाग, अर्थात् ३२ अंगुल, (एसा खलु सिद्धाणं उक्को-
सोगाहणा भणिया) इतनी उत्कृष्ट अवगाहना सिद्ध भगवान् की जानना चाहिये । यह
अवगाहना, जिनका शरीर ५०० धनुष का होता है उनकी अपेक्षा कही गई है ॥ सू. १११ ॥

ચાહે હ્રસ્વ-દુઁકુ-૨ હાથનું હોય, અથવા મધ્ય અવગાહનાના વિકલ્પોવાળું
હોય, (જં ચરિમભવે હવેજ્જ સંઠાણં) અંતિમ ભવ-સમયમાં જેવી અવગાહના-
વાળું શરીર હશે (તત્તો તિભાગહીણં સિદ્ધાણોગાહણા ભણિયા) તેનાથી ત્રીજા
ભાગની ઓછી અવગાહના સિદ્ધોની સિદ્ધિગતિમાં હોય છે. (સૂ. ૧૧૦)

'તિણિસયા તેત્તીસા' ઇત્યાદિ.

(તિણિ સયા તેત્તીસા) ત્રણસો તેત્રીસ ધનુષ, તથા (ધણુત્તિભાગો ય હોઈ
બોદ્ધવ્વો) એક ધનુષનો ત્રીજો ભાગ, અર્થાત્ ૩૨ આંગળ, (એસા ખલુ સિદ્ધાણં
ઉક્કોસોગાહણા ભણિયા) એટલી ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના સિદ્ધ ભગવાનની જાણવી.

મૂલમ્—ચત્તારિ ય રયણીઓ, રયણિતિભાગૂણિયા ય બોદ્ધવ્વા ।

એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં, મઙ્ગિમઓગાહગા ભણિયા ॥ સૂ૦ ૧૧૨ ॥

મૂલમ્—એકા ચ હોઈ રયણી, સાહીયા અંગુલાઈ અટ્ટ ભવે ।

એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં, જહ્ણણઓગાહણા ભણિયા ॥ સૂ૦ ૧૧૩ ॥

ટીકા—‘ચત્તારિ’ इत्यादि । ‘ચત્તારિ ય રયણીઓ’ ચતસ્રશ્ચ રત્નયઃ, ‘રયણિ-
તિભાગૂણિયા ય’ રત્નિત્રિભાગોનિકા ચ સિદ્ધાનાં મધ્યમાઽવગાહના ‘બોદ્ધવ્વા’ બોદ્ધવ્યા ।
અમુમેવાર્થમાહ— ‘એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં મઙ્ગિમઓગાહગા ભણિયા’ એષા સ્વલુ સિદ્ધાનાં
મધ્યમાઽવગાહના ભણિતા । ષોડશાઙ્ગુલાધિકચતુર્હસ્તપ્રમાણા સિદ્ધાનાં મધ્યમાવગાહનેત્યર્થઃ ।
इयं सप्तहस्तप्रमाणशरीरधारिणां सिद्धानाम् ॥ સૂ૦ ૧૧૨ ॥

ટીકા—‘એકા’ इत्यादि । સિદ્ધાનાં જઘન્યાઽવગાહનાયામ્ ‘એકા ચ હોઈ

‘ચત્તારિ ય રયણીઓ’ इत्यादि ।

(ચત્તારિ ય રયણીઓ) ચાર હાથ ઓર (રયણિતિભાગૂણિયા ય બોદ્ધવ્વા) એક
હાથ કા ત્રીસરા ભાગ, અર્થાત્ ૧૬ અંગુલ કી મધ્યમ અવગાહના હોતા હૈ । (એસા સ્વલુ
સિદ્ધાણં મઙ્ગિમઓગાહગા ભણિયા) સિદ્ધો કી યહ મધ્યમ અવગાહના ૭ હાથ
શરીરવાલો કી અપેક્ષા સે જાનની ચાહિયે ॥ સૂ. ૧૧૨ ॥

‘એકા ચ હોઈ રયણી’ इत्यादि ।

(એકા ચ હોઈ રયણી સાહીયા અંગુલાઈ અટ્ટ ભવે). કુલ અધિક એક હાથ,

આ અવગાહના, જેનું શરીર ૫૦૦ ધનુષનું હોય છે તેની અપેક્ષાએ કહેલી
છે. (સૂ. ૧૧૧)

‘ચત્તારિ ય રયણીઓ’ इत्यादि.

(ચત્તારિ ય રયણીઓ) ચાર હાથ અને (રયણિતિભાગૂણિયા ય બોદ્ધવ્વા)
૧ હાથનો ત્રીજો ભાગ, અર્થાત્ ૧૬ આંગળની મધ્યમ અવગાહના હોય છે.
(એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં મઙ્ગિમ—ઓગાહગા ભણિયા) સિદ્ધોની આ મધ્યમ અવગાહના
૭ હાથ શરીરવાળાની અપેક્ષાથી બહુવી જોઈ એ. (સૂ૦ ૧૧૨)

‘એકા ચ હોઈ રયણી’ इत्यादि.

(એકા ચ હોઈ રયણી સાહીયા અંગુલાઈ અટ્ટ ભવે) એક હાથથી થોડી

રયણી સાહીયા' એકા ચ ભવતિ રત્નિઃ સાધિકા । ક્રિયતા પ્રમાણેનાધિકા ભવતીત્યાહ-
'અંગુલાઈ' ઇત્યાદિ । 'અંગુલાઈ અટ્ટુ ભવે' અઙ્ગુલાનિ અષ્ટ ભવન્તિ । અષ્ટાઙ્ગુલાધિકૈક-
હસ્તપ્રમાણા સિદ્ધાનાં જઘન્યાવગાહના ભવતીત્યર્થઃ । અમુમેવાર્થમાહ—'એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં
જહણ્ણઓગાહણા મણિયા' એષા સ્વલુ સિદ્ધાનાં જઘન્યાવગાહના મણિતેતિ ।
ઇયં ત્રિહસ્તપ્રમાણશરીરાણામ્ । ઇયં ત્રિવિધાઽપ્યવગાહના શરીરોર્ધ્વમાનમાશ્રિત્ય ગૃહ્યતે,
અન્યથોપવિધાનાં સિધ્ધતાં માનં વિસદૃશમપિ ભવેત્ । નન્વેવમૂર્ધ્વમાનાઙ્ગીકારે નામિકુ-
લકરસ્ય માર્યાયા મરુદેવ્યાઃ કથં સિદ્ધિસ્થાનપ્રાપ્તિઃ, નામિકુલકરો હિ પચ્ચવિંશત્યધિક-
પચ્ચશતધનુઃપ્રમાણ આસીત્, તદ્માર્યાઽપિ મરુદેવી તત્પ્રમાણૈવ, તથાચોક્તમ્—“સંઘયણં સંઠાણં
ઉચ્ચત્તં ચેવ કુલગરેહિં સમં ” ઇતિ । અતસ્તદવગાહના ઉત્કૃષ્ટાવગાહનાતોઽધિકતરા ?,

અર્થાત્ એક હાથ ૮ અંગુલ, (એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં જહણ્ણઓગાહણા મણિયા) યહ જઘન્ય
અવગાહના સિદ્ધ ભગવાન્ કી જાનની ચાહિયે । યહ અવગાહના ૨ હાથ કી અવગાહનાવાલે
જીવોં કી અપેક્ષા કહી ગઈ સમજના ચાહિયે । યહ ત્રીનોં પ્રકાર કી અવગાહના શરીર કી
ઊંચાઈ કી અપેક્ષા કહી ગઈ હૈ । બૈઠકર સિદ્ધ હોને વાલોં કા માન તો વિસદૃશ મી
હોના ચાહિયે । પ્રશ્ન—ઇસ તરહ ઊર્ધ્વમાન કો આશ્રિત કરને પર નામિકુલકર કી માર્યા મરુ-
દેવી કો સિદ્ધિસ્થાન કી પ્રાપ્તિ કૈસે હો સકતી હૈ; ક્યોં કિ નામિકુલકર ૫૨૫ ધનુષ પ્રમાણ
અવગાહનાવાલે થે તો ઉનકી ધર્મપત્ની મી ઉતની હી અવગાહનાવાલી હોંગી । ક્યોં કિ એસા
કહા હૈ કિ મંહનન ઔર સંસ્થાન કુલકરોં કી મહિલાઓં કા કુલકરો કે સમાન હોતા હૈ ।
ઇસલિયે ઉનકી અવગાહના ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના સે અધિકતર હો જાતી હૈ ? । ઉત્તર—પ્રશ્ન ઠીક
હૈ, પરંતુ ઇસકા સમાધાન ઇસ પ્રકાર હૈ, યદ્યપિ કુલકર જૈસી ઉચ્ચતા ઉનકી પત્નિયોં મેં

વધારે, અર્થાત્ એક હાથ ૮ આંગળ, (એસા સ્વલુ સિદ્ધાણં જહણ્ણઓગાહણા
મણિયા) સિદ્ધ ભગવાનની આ જઘન્ય અવગાહના બાણવી. આ અવગાહના
૨ હાથની અવગાહનાવાળા જીવોની અપેક્ષાએ કહેલી છે એમ સમજવું. એ
ત્રણેય પ્રકારની અવગાહના શરીરની ઉંચાઈની અપેક્ષાએ કહેલી છે. નહિં
તો એસીને સિદ્ધ થવાવાળાઓનું માન (પ્રમાણ) વિસદૃશ (જુડું) પણ હોવું
જોઈએ. પ્રશ્ન—આ રીતે ઉર્ધ્વ (ઉંચા) માનને આશ્રિત કરવાથી નામિકુલ-
કરનાં ધર્મપત્ની મરુદેવીને સિદ્ધિસ્થાનની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ?, કેમ કે
નામિકુલકર પરપ ધનુષ્યપ્રમાણ અવગાહનાવાળા હતા તો, તેમનાં ધર્મપત્ની
પણ એટલી જ અવગાહનાવાળી હશે. કેમકે એમ કહ્યું છે કે કુલકરોની મહિલા-
ઓનું સંહનન અને સંસ્થાન કુલકરોના સમાન હોય છે. આથી તેમની
અવગાહના, ઉત્કૃષ્ટ અવગાહનાથી વધારે થઈ જાય છે. ઉત્તર—પ્રશ્ન ઠીક છે;
પરંતુ તેનું સમાધાન આ પ્રકારે છે, જોકે કુલકરનેવી ઉચ્ચતા તેમની પત્ની-

मूलम्—ओगाहणाए सिद्धा, भवत्तिभागेण होंति परिहीणा ।

संठाणमणित्थत्थं, जरामरणविप्पमुक्काणं ॥ सू० ११४ ॥

जत्थ य एगो सिद्धो, तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का ।

अत्रोच्यते—यद्यपि कुलकरतुल्यमुच्चत्वं तत्पत्नीनामित्युक्तं, तथापि पञ्चशतधनुर्मानता तस्या वार्द्धक्येन शरीरसंकोचात् संजातेति नास्ति विरोधः ॥ सू० ११३ ॥

टीका—‘ओगाहणाए’ इत्यादि । ‘ओगाहणाए’ अवगाहनया=स्वावगाहनया ‘सिद्धा’ सिद्धाः, ‘भवत्तिभागेण’ भवत्तिभागेन—भवस्य=चरमभवशरीरस्य—चरमशरीरसम्बन्धिन्या अवगाहनायाः, त्रिभागेन=तृतीयभागेन ‘परिहीणा’ परिहीनाः ‘होंति’ भवन्ति । तेषां ‘जरामरणविप्पमुक्काणं’ जरामरणविप्रमुक्तानां सिद्धानाम् ‘अणित्थत्थं’ अनित्थंस्थम्—अमुना प्रकारेणेतीत्थम्, तत्र तिष्ठतीति—इत्थंस्थम्, न इत्थंस्थम्—अनित्थंस्थम्—न केनचित्परिमण्डलादिलौकिकसंस्थानेन स्थितं ‘संठाणं’ संस्थानं भवति ॥ सू० ११४ ॥

टीका—तत्र सिद्धक्षेत्रे सिद्धा देशभेदेन उतैकस्मिन् देशे तिष्ठन्तीत्याशङ्क्या-
माह—‘जत्थ’ इति । ‘जत्थ य’ यत्र च=यत्रैव देशे, ‘एगो सिद्धो’ एकः सिद्धस्तिष्ठति,

होती है तो भी उनमें ५०० धनुष—प्रमाणता उनके वृद्ध अवस्था में शरीर के संकोच से घटित हो जाती है । अतः कोई विरोध नहीं है ॥ सू. ११३ ॥

‘ओगाहणाए सिद्धा’ इत्यादि ।

(ओगाहणाए सिद्धा भवत्तिभागेण होंति परिहीणा) सिद्ध अपने अंतिम-
शरीर—संबंधी अवगाहना के तृतीय भाग से हीन अवगाहनावाले होते हैं । (संठाणमणित्थत्थं
जरामरणविप्पमुक्काणं) उनका आकार किसी परिमंडल आदि लौकिक आकार से स्थित
नहीं है, वे जन्म, जरा एवं मरण से सदा के लिये रहित हो जाते हैं ॥ सू. ११४ ॥

ઓમાં હોય છે તો પણ તેઓમાં ૫૦૦ ધનુષપ્રમાણતા તેમની વૃદ્ધાવસ્થામાં
શરીરના સંકોચાવાથી ઘટીને થઈ જાય છે. તેથી કોઈ વિરોધ નથી. (સૂ૦ ૧૧૩)
‘ઓગાહણાએ સિદ્ધા’ ઇત્યાદિ.

(ઓગાહણાએ સિદ્ધા ભવત્તિભાગેણ હોંતિ પરિહીણા) સિદ્ધ પોતાની અવ-
ગાહનાથી અંતિમશરીરસંબંધી અવગાહનાના ત્રીજા ભાગથી ઓછા થાય
છે. (સંઠાણમણિત્થત્થં जरामरणविप्पमुक्काणं) તેમનો આકાર કોઈ પરિમંડલ
આદિ લૌકિક આકારથી સ્થિત નથી. તેઓ જન્મ, જરા તેમજ મરણથી
સદાયને માટે રહિત થઈ જાય છે. (સૂ૦ ૧૧૪)

અળ્લોળ્લસમોગાઢા, પુઢા સઁવે ય લોગંતે ॥ સૂ૦ ૧૫૧ ॥

મૂલમ્—ફુસઙ્ અળ્લંતે સિઢ્ઢે, સઁવપણ્સેહિ ણિયમસા સિઢ્ઢો ।

‘તત્થ’ તત્ર દેશે ‘અળ્લંતા’ અનન્તાઃ—અવિઢ્ઢમાનોઽન્તો યેષાં તેઽનન્તાઃ, ‘ભવક્કવ-
યવિમુક્કા’ ભવક્ષયવિમુક્તાઃ—ભવક્ષયે સતિ વિપ્રમુક્તાઃ, અનેન સ્વેચ્છયાઽવતરણ-
શક્તિમત્સિઢ્ઢવ્યવચ્છેદમાહ । ‘અળ્લોળ્લસમોગાઢા’ અન્યોઽન્યસમવગાઢાઃ=પરપરસ્પરં
સમ્યક્ અવગાઢાઃ—ધર્માસ્તિકાયાદિવત્ સંમિલિતાઃ, ‘સઁવે ય’ સર્વે ચ ‘લોગંતે’ લોકાન્તે
=લોકાગ્રભાગે અલોકેન ‘પુઢા’ સ્પૃષ્ઠાઃ=સંલગ્નાઃ, પ્રતિકુઢ્ઢત્વાત્, તત્ર ધર્માસ્તિકાયા-
ભાવાદિતિ । અત એવ—‘લોકાગ્રે ચ પ્રતિષ્ઠિતા’ ઇત્યુક્તમ્ ॥ સૂ૦ ૧૧૫ ॥

ટીકા—‘ફુસઙ્’ ઇત્યાદિ । ‘સિઢ્ઢે’ સિઢ્ઢઃ=એકઃ સિઢ્ઢઃ ‘ણિયમસા’ નિયમેન

‘જત્થ ય એગો સિઢ્ઢો’ ઇત્યાદિ ।

(જત્થ ય એગો સિઢ્ઢો) જિસ સિઢ્ઢક્ષેત્ર મેં એક સિઢ્ઢ ભગવાન વિરાજતે હેં,
(તત્થ અળ્લંતા) ઁસી સિઢ્ઢક્ષેત્ર મેં અનંત સિઢ્ઢ વિરાજમાન રહતે હેં । (ભવક્કવયવિમુક્કા)
અનકે ભવકા ક્ષય સર્વથા હો ચુકા હે । (અળ્લોળ્લસમોગાઢા પુઢા) જિસ પ્રકાર એક હી
સ્થાન પર ધર્માદિક ઢ્રવ્ય પરસ્પર અવગાઢરૂપ મેં સ્થિત હોકર રહતે હેં ઁસી પ્રકાર યે સિઢ્ઢ
આત્મા મી એક હી સ્થાન પર પરસ્પર મેં અવગાઢરૂપ સે રહતે હેં । ફિર મી અપને ૨ ચૈતન્ય-
સ્વરૂપ કા પરિત્યાગ નહીં કરતે હેં । (સઁવે ય લોગંતે) ધર્માસ્તિકાયાકા અભાવ હોને સે યે
લોક કે અગ્રભાગ મેં સ્પૃષ્ઠ રહતે હેં ॥ સૂ. ૧૧૫ ॥

‘ફુસઙ્ અળ્લંતે સિઢ્ઢે’ ઇત્યાદિ ।

(ફુસઙ્ અળ્લંતે સિઢ્ઢે સઁવપણ્સેહિ ણિયમસા સિઢ્ઢો) એક સિઢ્ઢ

‘જત્થ ય એગો સિઢ્ઢો’ ઇત્યાદિ.

(જત્થ ય એગો સિઢ્ઢો) જે સિઢ્ઢક્ષેત્રમાં એક સિઢ્ઢ ભગવાન ણિરાજે
છે, (તત્થ અળ્લંતા) તેજ સિઢ્ઢક્ષેત્રમાં અનંત સિઢ્ઢ વિરાજમાન હોય છે.
(ભવક્કવયવિમુક્કા) તેમના ભવનો ક્ષય સર્વથા થઈ ચૂકયો છે. (અળ્લોળ્લ-
સમોગાઢા પુઢા) જે પ્રકારે એક જ સ્થાન પર ધર્માદિક ઢ્રવ્ય પરસ્પર અવ-
ગાઢરૂપમાં સ્થિત થઈ રહે છે તેજ પ્રકારે તે સિઢ્ઢ આત્મા પણ એકજ સ્થાન
પર પરસ્પરમાં અવગાઢરૂપથી રહે છે. છતાં પણ પોતપોતાના ચૈતન્યસ્વરૂપનો
પરિત્યાગ કરતા નથી. ધર્માસ્તિકાયાનો અભાવ હોવાથી તેઓ લોકના અગ્ર-
ભાગમાં સ્પૃષ્ઠ (લાગી) રહે છે. (સૂ. ૧૧૫)

‘ફુસઙ્ અળ્લંતે સિઢ્ઢે’ ઇત્યાદિ.

(ફુસઙ્ અળ્લંતે સિઢ્ઢે સઁવપણ્સેહિ ણિયમસા સિઢ્ઢો) એક સિઢ્ઢ ભગવાન

તે વિ અસંખેજ્જગુણા, દેસપણ્ણેહિં જે પુટ્ટા ॥ સૂ. ૧૧૬ ॥

‘સંવપણ્ણેહિં’ સર્વપ્રદેશૈઃ=આત્મનોડસંખ્યાતપ્રદેશૈઃ, ‘અણંતે સિદ્ધે’ અનન્તાન્ સિદ્ધાન્ ‘પુસઙ્’ સ્પૃશતિ । તથા ‘તે વિ’ તેડપિ=તે સર્વે સિદ્ધા અપિ ‘અસંખેજ્જગુણા’ અસંખ્યેય-ગુણા વર્તન્તે, ‘જે’ યે સિદ્ધા: ‘દેસપણ્ણેહિં’ દેશપ્રદેશૈઃ-દેશૈઃ=અસંખ્યાતદેશૈઃ પ્રદેશૈઃ=અસંખ્યાત-પ્રદેશૈશ્ચ ‘પુટ્ટા’ સ્પૃષ્ટા: । તેષાં સર્વેષાં સિદ્ધાનાં પ્રત્યેકં સ્વસ્વબ્યતિરિક્તસિદ્ધૈરસંખ્યાતદેશ-પ્રદેશવદ્ધિઃ સંમિલિત્વેન ગુણિતત્વમઙ્ગીકૃત્ય “અસંખ્યેયગુણાઃ” ઇત્યુક્તમ્ । અયં ભાવઃ—સર્વાત્મ-પ્રદેશૈસ્તાવદનન્તાઃ સિદ્ધાઃ સ્પૃષ્ટાઃ, એકસિદ્ધાડવગાહનાયામનન્તાનામવગાઢત્વાત્ । તથૈકૈક-દેશેનાડપ્યનન્તાઃ, એવમેકૈકપ્રદેશેનાપ્યનન્તા એવ । તત્ર દેશે—દ્વચાદિપ્રદેશસમુદાયઃ, પ્રદે-શસ્તુ—નિર્વિભાગોડશ ઇતિ । એકૈકસિદ્ધશ્ચાડસંખ્યેયદેશપ્રદેશાત્મકઃ, તતશ્ચ મૂલાડનન્તકેડ-સંખ્યેયૈર્દેશાડનન્તકૈરસંખ્યેયૈરવ ચ પ્રદેશાડનન્તકૈર્ગુણિતે યાવતી સંખ્યા ભવેત્ સાં કેવલિગમ્યૈવેતિ ॥ સૂ. ૧૧૬ ॥

ભગવાન્ નિયમ સે આત્મા કે અસંખ્યાતપ્રદેશોં દ્વારા અનંત સિદ્ધોં કા સ્પર્શ કરતે હૈં, ઓર (તે વિ અસંખેજ્જગુણા) વે સબ સિદ્ધ અસંખ્યાતપ્રદેશોં સે સ્થિત હૈં । (દેસપણ્ણેહિં જે પુટ્ટા) દેશ સે એવં પ્રદેશોં સે મી વે સિદ્ધ અસંખ્યાતગુણિત હૈં । મતલબ ઇસકા યહ હૈ કિ સમસ્ત આત્મપ્રદેશોં સે વે અનંત સિદ્ધ સ્પૃષ્ટ હૈં । એક સિદ્ધ કી આત્મા મેં અનંત સિદ્ધોં કી અવગાહના હોને સે, તથા એક એક દેશ સે, એવં પ્રદેશ સે વે સિદ્ધ અનંત હૈં । દ્વચાદિક પ્રદેશ કે સમુદાય કા નામ દેશ, એવં અવિભાગી અંશ કા નામ પ્રદેશ હૈ । એક એક સિદ્ધ અસં-ખ્યાત દેશ ઓર પ્રદેશાત્મક હૈં । ઇસલિયે મૂલ અનંત કો અસંખ્યાત એવં અનંત દેશ ઓર પ્રદેશોં સે ગુણા કરને પર કિતની રાશિ હોગી યહ બાત સિર્ફ કેવલી ભગવાન્ દ્વારા હી જાની જા સકતી હૈ ॥ સૂ. ૧૧૬ ॥

નિયમથી આત્માના અસંખ્યાત પ્રદેશો દ્વારા અનંત સિદ્ધોનો સ્પર્શ કરે છે, અને (તે વિ અસંખેજ્જગુણા) તે બધા સિદ્ધ અસંખ્યાત પ્રદેશોથી સંસ્થિત છે. (દેસપણ્ણેહિં જે પુટ્ટા) દેશથી તેમજ પ્રદેશોથી પણ તે સિદ્ધો અસંખ્યાત-ગણો છે. એની મતલબ એવી છે કે સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી તે અનંત-સિદ્ધો સ્પર્શાયેલા છે. એક સિદ્ધના આત્મામાં અનંત સિદ્ધોની અવગાહના હોવાથી, તથા એક એક દેશથી, તેમજ પ્રદેશથી તે સિદ્ધો અનંત છે. દ્વિ-આદિક પ્રદેશના સમુદાયનું નામ દેશ, તેમજ અવિભાગી અંશનું નામ પ્રદેશ છે. એક એક સિદ્ધ અસંખ્યાત દેશ અને પ્રદેશાત્મક છે. તે માટે મૂલ અનંતને અસંખ્યાત તેમજ અનંત દેશ તથા પ્રદેશોથી ગુણાકાર કરવાથી કેટલી રાશિ (જથ્થા) થશે તે વાત તો માત્ર કેવળી ભગવાન દ્વારા જ બહી શકાય છે. (સૂ. ૧૧૬)

મૂલમ્—અસરીરા જીવઘણા, ઉવઉત્તા દંસણે ય ણાણે ય ।

સાગારમણાગારં, લક્ષણમેયં તુ સિદ્ધાણં ॥ સૂ. ૧૧૭ ॥

મૂલમ્—કેવલણાણુવઉત્તા, જાણંતિ સર્વભાવગુણભાવે ।

પાસંતિ સર્વઓ સ્વલુ, કેવલદિટ્ટીહિ ણંતાહિં ॥ સૂ. ૧૧૮ ॥

ટીકા—‘અસરીરા’ इत्यादि । अशरीरा जीवघणा उपयुक्ता दर्शने च ज्ञाने च । साकारमनाकारं लक्षणमेतत्तु सिद्धानाम् ॥ एतेषां पदानां व्याख्याऽस्यैवागमस्य उत्तरार्द्धे त्रिसप्ततितमसंख्याके सूत्रे पूर्वमुक्ता ॥ सू. ११७ ॥

ટીકા—યદુક્તમ્—‘ઉવઉત્તા દંસણે ય ણાણે ય’ इति, तत्र ज्ञानदर्शनयोः सर्वविषयतामुपदर्शयन्नाह—‘केवलणाणुवउत्ता’ इत्यादि । ‘केवलणाणुवउत्ता’ केवल—

‘અસરીરા જીવઘણા’ इत्यादि ।

(અસરીરા જીવઘણા ઉવઉત્તા દંસણે ય ણાણે ય) सिद्धों का लक्षणनिर्देश इस सूत्र में कहा गया है । औदारिक आदि शरीर से रहित एवं घनरूप आत्मप्रदेशवाले वे सिद्ध भगवान् केवलज्ञान एवं केवलदर्शन से सदा उपयुक्त हैं । (सागारमणागारं) केवल ज्ञान की अपेक्षा वे साकार उपयोग से युक्त हैं, एवं केवल दर्शन की अपेक्षा निराकारस्वरूप दर्शन से युक्त है । (लक्ष्णमेयं तु सिद्धाणं) यही सिद्धों का लक्षण है ॥ सू. ११७ ॥

‘કેવલણાણુવઉત્તા’ इत्यादि ।

(કેવલણાણુવઉત્તા જાણંતિ સર્વભાવગુણભાવે) केवलज्ञानरूप उपयोग से युक्त वे सिद्ध भगवान् समस्त वस्तुओं के अनंतगुण, एवं उनकी अनंतपर्यायों को युगपत् जानते

‘અસરીરા જીવઘણા’ इत्यादि.

(અસરીરા જીવઘણા ઉવઉત્તા દંસણે ય ણાણે ય) सिद्धोंનાં લક્ષણનેા નિર્દેશ આ સૂત્રમાં કહેવામાં આવ્યો છે. ઔદારિક આદિ શરીરથી રહિત તેમજ ઘનરૂપ આત્મપ્રદેશવાળા તે સિદ્ધ ભગવાન્ કેવળજ્ઞાન તેમજ કેવળદર્શનથી સદા ઉપયુક્ત છે. (સાગારમણાગારં) કેવળજ્ઞાનની અપેક્ષાએ તેઓ સાકાર ઉપયોગથી યુક્ત છે, તેમજ કેવળદર્શનની અપેક્ષાએ નિરાકારસ્વરૂપ દર્શનથી યુક્ત છે. (લક્ષણમેયં તુ સિદ્ધાણં) આ જ સિદ્ધોનાં લક્ષણ છે. (સૂ. ૧૧૭)

‘કેવલણાણુવઉત્તા’ इत्यादि.

(કેવલણાણુવઉત્તા જાણંતિ સર્વભાવગુણભાવે) કેવળજ્ઞાનરૂપ ઉપયોગથી

**मूलम्—ण वि अत्थि माणुसाणं, तं सोक्खं ण वि य सव्वदेवाणं ।
जं सिद्धाणं सोक्खं, अव्वावाहं उवगयाणं ॥ सू० ११९ ॥**

ज्ञानोपयुक्ताः सन्तस्ते सिद्धाः ‘सव्वभावगुणभावे’ सर्वभावगुणभावान्=समस्तवस्तुगुणपर्यायान् ‘जाणंति’ जानन्ति, तत्र—गुणाः—सहवर्तिनः, पर्यायास्तु—क्रमवर्तिन इति । तथा ‘णंताहिं’ अनन्ताभिः ‘केवलदिट्ठीहि’ केवलदृष्टिभिः, अनन्तैः केवलदर्शनैरित्यर्थः, ‘सव्वओ’ सर्वतः सर्वभावान् खलु=निश्चयेन ‘पासंति’ पश्यन्ति ॥ सू० ११७ ॥

टीका—सिद्धानां सुखं वर्णयति—‘ण वि’ इत्यादि । ‘अव्वावाहं’ अव्याबाधं=सकल दुःखवर्जितं मोक्षस्थानम् ‘उवगयाणं’ उपगतानां=प्राप्तानां, ‘सिद्धाणं’ सिद्धानाम् ‘जं’ यत् ‘सोक्खं’ सौख्यम् ‘अत्थि’ अस्ति, ‘तं’ तत् ‘सोक्खं’ सौख्यं ‘ण वि माणुसाणं’ नापि मनुष्याणामस्ति, ‘ण वि य सव्वदेवाणं’ नापि च सर्वदेवानाम् ॥ सू० ११९ ॥

हैं । (पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठीहि णंताहिं) अनन्तकेवलदृष्टिस्वरूप अनन्तदर्शन से युक्त वे सिद्ध भगवान्, युगपत् समस्त भावों को उनकी गुणपर्यायों सहित देखते हैं । वस्तु में त्रिकाल उसके साथ रहने वाले गुण होते हैं । एवं क्रमवर्ती पर्याय होती हैं ॥ सू. ११७ ॥

‘णवि अत्थि’ इत्यादि ।

(जं सिद्धाणं सोक्खं अव्वावाहं उवगयाणं) सकल दुःखों से वर्जित ऐसे मोक्षस्थान में प्राप्त हुए सिद्धों को जो सुख है, (ण वि अत्थि माणुसाणं तं सोक्खं ण वि य सव्वदेवाणं) वह सुख त्रैलोक्य में न तो मनुष्य को है, और न सर्व देवों को है ॥ सू. ११९ ॥

युक्त ते सिद्ध भगवान् समस्त वस्तुभ्योऽना अनन्तगुण, तेभञ्ज तेभनी अनन्त पर्यायेने ऐकीसाथे जाण्हे छे. (पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठीहि णंताहि) अनन्त केवलदृष्टिस्वरूप अनन्तदर्शनथी युक्त ते सिद्ध भगवान् ऐकीसाथे समस्त भावोने तेभनी गुण-पर्यायो-सहित जुण्हे छे. वस्तुमां त्रिकाण तेनी साथे रडेवावाणा गुणु होय छे, तेभञ्ज क्रमवर्ती पर्याय होय छे. (सू. ११८) ‘णवि अत्थि’ इत्यादि.

(जं सिद्धाणं सोक्खं अव्वावाहं उवगयाणं) सकल दुःखोत्थी वर्जित एवा मोक्षस्थान प्राप्त करेला सिद्धोने जे सुख छे, (ण वि अत्थि माणुसाणं तं सोक्खं ण वि य सव्वदेवाणं) ते सुख त्रलु लोकमांय नथी कोछ मनुष्यने के नथी सर्व देवोने होतुं. (सू. ११८)

મૂલમ—જં દેવાણં સોક્ષ્મં , સર્વદ્વાપિન્ડિયં અણંતગુણં ।

ળ ય પાવઙ્ મુત્તિસુહં, ણંતેહિં વગ્ગવગ્ગેહિં ॥ સૂ૦ ૧૨૦ ॥

ટીકા—કસ્માદેવં સુખં ભવતીત્યત આહ—‘જં દેવાણં’ ઇત્યાદિ । ‘જં’ યદ્ ‘દેવાણં’ દેવાનામ્=અનુત્તરસુરાન્તાનાં ‘સોક્ષ્મં’ સૌલ્યં=ત્રૈકાલિકસુખં, તદ્યદિ ‘સર્વદ્વાપિન્ડિયં’ સર્વાદ્વાપિન્ડિતમ્—સર્વાઽદ્વયા=અતીતાઽનાગતવર્તમાનકાલેન પિન્ડિતમ્=ગુણિતં, તથા ‘અણંતગુણં’ અનન્તગુણમિતિ, તદેવં પ્રમાણં કિલાઽસત્કલ્પનયા એકૈકાઽઽકાશપ્રદેશે સ્થાપ્યતે, ઇત્યેવં સર્વલોકાકાશાનન્તપ્રદેશપૂરણેનાઽનન્તં ભવતિ, એવંભૂતં દેવસુખં ‘ળ ય પાવઙ્ મુત્તિસુહં’ ન ચ પ્રાપ્નોતિ મુક્તિસુખં=નૈવ મુક્તિસુખસમાનતાં લભતે, અનન્તાઽનન્તત્વાત્ સિદ્ધસુખસ્ય । કિંવિધં દેવસુખમિત્યાહ—‘ણંતેહિં વગ્ગવગ્ગેહિં’ અનન્તૈર્વર્ગ-

‘જં દેવાણં સોક્ષ્મં’ ઇત્યાદિ ।

(જં દેવાણં સોક્ષ્મં સર્વદ્વાપિન્ડિયં અણંતગુણં) જો સર્વ દેવોં કા ત્રૈકાલિક સુખ હૈ ઉસે અનન્તગુણા કિયા જાય તો મી વહ (ળ ય પાવઙ્ મુત્તિસુહં ણંતેહિં વગ્ગવગ્ગેહિં) સિદ્ધ ભગવાન્ કે એક ક્ષણોદ્ભવ સુખ કી બરાબરી નહીં કર સકતા હૈ । ઇસે યોં સમજના ચાહિયે કિ સર્વદેવોં કા ત્રૈકાલિક સુખ એક ૨ આકાશ કે—પ્રદેશ પર સ્થાપિત કરતે ૨ આકાશ કે અનંત પ્રદેશ ઉસ સુખ સે જબ ભર જાયેં તબ ઉન સમસ્ત—પ્રદેશસ્થ સુખોં કા પરસ્પર મેં ગુણા કરો । ઇસ પ્રકાર વહ દેવસુખ અનંતગુણિત હો જાતા હૈ । યહ અનંતગુણિત સુખ મી સિદ્ધોં કે એક ક્ષણ મેં હોનેવાલે સુખ કી સમતા નહીં કર સકતા । કારણ કિ ઉનકા સુખ અનંતાનંત હૈ । દેવોં કા સુખ અનંતવર્ગોં સે વર્ગિત બતલાયા ગયા હૈ । વર્ગ

‘જં દેવાણં સોક્ષ્મં’ ઇત્યાદિ.

(જં દેવાણં સોક્ષ્મં સર્વદ્વાપિન્ડિયં અણંતગુણં) જે સર્વ દેવોનાં ત્રણ કાળનું સુખ છે. તેને અનંતગણું કરવામાં આવે તો પણ તે, (ળ ય પાવઙ્ મુત્તિસુહં ણંતેહિં વગ્ગવગ્ગેહિં) સિદ્ધ ભગવાનના એક ક્ષણથી ઉત્પન્ન થતા સુખની બરાબરી કરી શકતું નથી. આથી એમ સમજવું બાધાએ કે સર્વદેવોનાં ત્રણ કાળનું સુખ એક એક આકાશના પ્રદેશ ઉપર સ્થાપિત કરો. એ રીતે સ્થાપિત કરતાં કરતાં આકાશના અનંત પ્રદેશ તે સુખથી બ્યારે ભરાઈ બાય ત્યારે તે સમસ્ત પ્રદેશમાં રહેલાં સુખોનો પરસ્પરમાં ગુણાકાર કરો. એ પ્રકારે તે દેવસુખ અનંતગણું થઈ બાય છે. આ અનંતગણું સુખ પણ સિદ્ધોનાં એકક્ષણમાં થવાવાળા સુખની બરાબરી કરી શકતાં નથી. કારણ કે તેમનાં સુખ અનંતાનંત છે. દેવોનાં સુખ અનંત વર્ગોથી વર્ગિત બતાવ્યાં

मूलम्—सिद्धस्स सुहो रासी, सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा।

सोऽणंतवग्गभइओ, सव्वागासे ण माएज्जा ॥ सू० १२१ ॥

वर्गैः=अनन्तैरपि वर्गवर्गैः, तत्र तद्गुणो वर्गो, यथा द्वयोर्वर्गश्चत्वारः, तस्यापि वर्गो वर्गवर्गो, यथा षोडश, एवमनन्तशो वर्गितमपीत्यर्थः ॥ सू. १२० ॥

टीका—‘सिद्धस्स’ इत्यादि । ‘सिद्धस्स’ सिद्धस्य ‘सुहो’ सुखः=सुख-सम्बन्धी ‘रासी’ राशिः=समूहः, स च—‘सव्वद्धापिंडिओ’ सर्वाद्धापिण्डितः—सर्वाद्धाभिः=सर्वकालसमयैः पिण्डितो=गुणितो ‘जइ हवेज्जा’ यदि भवेत्, ‘सो’ स पुनः ‘अणंतवग्गभइओ’ अनन्तवर्गभक्तः=अनन्तवर्गैर्विभागीकृतः, ‘सव्वागासे’ सर्वाऽऽकाशे=लोकाऽलोकरूपे ‘ण माएज्जा’ न मायात्—न स्थातुं शुक्नुयात् । अयं भावः—इह किल निरुपमं सुखं गृह्यते, ततश्च यत आरभ्य लोके सुखशब्दप्रवृत्तिः, तदवधीकृत्य एकैकगुणवृद्धितारतम्येन तावत् तत् सुखं

के वर्ग करने का नाम वर्गवर्ग है । जिस प्रकार दो का वर्ग ४, और चार का वर्ग १६ होता है । १६ वर्गवर्ग है ॥ सू. १२० ॥

‘सिद्धस्स सुहो रासी’ इत्यादि ।

(सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा) सिद्ध भगवान् के सुख की जो राशि है वह सर्वकाल के समयों से यदि गुणित की जाय, और (सोऽणंतवग्गभइओ) उस उत्पन्न महाराशि में अनन्त वर्गों से भाग दिया जाय, तो भी (सव्वागासे ण माएज्जा) वह सिद्धों के सुखों की विभक्त सुखराशि समस्त आकाशमें नहीं समा सकती है । मतलब इसका यह है कि लोक में जो सुख—शब्द से कहा जाता है उस सुख में एक-एक गुण की क्रमिक वृद्धि से जब वह सुख अनन्तगुण वृद्धि पाकर अपनी अन्तिम अवधि

छे. वर्गनो वर्ग करे तेनुं नाम वर्गवर्ग छे. जे प्रकारे २ नो वर्ग ४, अने चारनो वर्ग १६ थाय छे. १६ वर्ग—वर्ग छे. (सू. १२०)

‘सिद्धस्स सुहो रासी’ इत्यादि.

(सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा) सिद्ध भगवान्‌ना सुખની जे राशि छे तेने सर्वकाणना समयोथी जे गुणवामा आवे अने (सोऽणंतवग्गभइओ) तेनाथी उत्पन्न थयेली ते भडाराशिने अनंत वर्गथी लागी देवामा आवे तो पण (सव्वागासे ण माएज्जा) ते सिद्धोनां सुખोनी लागलण्ध सुખराशि समस्त आकाशमां समाधं शकती नथी. आनो अलिप्राय ओ छे के लोकमां जे सुख—शब्दथी कडेवाय (समजय) छे ते सुखमां ओक ओक गुणनी क्रमिक वृद्धिथी न्यारे ते सुख अनन्तगुण वृद्धि

મૂલમ—જહ ણામ કોઙ મિચ્છો, નગરગુણે વહુવિહે વિયાણંતે ।
ન ચણ્ઙ પરિકહેઁ, ઉવમાણ તર્હિ અસંતીણ ॥ સૂ. ૧૨૨ ॥

વિશિષ્યતે યાવદનન્તગુણવૃદ્ધ્યા ચરમાવધિં પ્રાપ્તં ભવતિ । તતશ્ચ તદત્યન્તનિરુપમમૌત્સુક્ય-
 વૃત્તિવિરહિતં પ્રશાન્તમદોદધિતુલ્યં ચરમાહ્લાદસ્વરૂપમ્ । તસ્માચ્ચરમાહ્લાદાત્ પૂર્વં પ્રથમાચ્ચાનન્ત-
 રમપાન્તરાલવર્તિનો યે તાતરમ્યેનાહ્લાદવિશેષાસ્તે સર્વાકાશપ્રદેશરાશેરપિ ભૂયાંસો ભવન્તીત્યતઃ
 કિલોક્તમ્—‘સવ્વાગાસે ણ માણ્જ્ઞા’ ઇતિ, અન્યથા પ્રતિનિયતદેશાવસ્થિતિઃ કથં તेषામિતિ
 સૂર્યોઽભિદધતીતિ ॥ સૂ. ૧૨૧ ॥

ટીકા—‘જહ ણામ’ ઇત્યાદિ । ‘જહ ણામ’ યથાનામ=યથાદૃષ્ટાન્તમ્—દૃષ્ટાન્ત—
 મનુસૃત્ય કથયામીત્યર્થઃ, ‘કોઙ મિચ્છો’ કશ્ચિન્મેચ્છો ‘વહુવિહે’ વહુવિધાન્
 ‘નગરગુણે’ નગરગુણાન્ ‘વિયાણંતે’ વિજાન્નપિ ‘પરિકહેઁ’ પરિકથયિતું=વર્ણયિતું
 ‘ન ચણ્ઙ’ ન શક્નોતિ, કથં ન શક્નોતિ ? ઇત્યાહ —‘ઉવમાણ’ ઇત્યાદિ । ‘ઉવમાણ તર્હિ

કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, તવ વહ અત્યન્ત અનુપમ, ઉત્કળ્ઠા કી વૃત્તિ સે રહિત, ઔર પ્રશાન્ત સમુદ્ર
 કે સમાન ગમ્ભીર ચરમસુખરૂપ હો જાતા હૈ । ઉસ ચરમ સુખ સે પહેલે ઔર પ્રથમ સુખ કે બાદ
 કે જો મધ્યવર્તી તરતમતા સે યુક્ત સુખવિશેષ હૈ, વે સમી સર્વાકાશપ્રદેશોં સે મી અધિક હૈ ।
 ઇસીલિયે કહા ગયા હૈ— ‘સવ્વાગાસે ણ માણ્જ્ઞા’ અર્થાત્ સિદ્ધોં કા અનન્તવર્ગ—વિમક્ત મી
 સુખ, સમસ્ત આકાશ મેં નહીં સમા પાતા હૈ ॥ સૂ. ૧૨૧ ॥

‘જહ ણામ કોઙ મિચ્છો’ ઇત્યાદિ ।

દૃષ્ટાન્ત દેકર ઇસી વિષય કો સ્પષ્ટ કરતે હૈ—(જહ ણામ કોઙ મિચ્છો નગરગુણે
 વહુવિહે વિયાણંતે) જૈસે કોઈ મ્લેચ્છ બહુત પ્રકાર કે નગરગુણોં કો જાનતા હુઆ મી (ન

પામીને પોતાની અંતિમ અવધિને પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે તે અત્યન્ત અનુપમ,
 ઉત્કંઠાની વૃત્તિથી રહિત અને પ્રશાન્ત સમુદ્ર સમાન ગંભીર ચરમસુખરૂપ થાય છે.
 તે ચરમ સુખથી પૂર્વ અને પ્રથમ સુખની પછી મધ્યવર્તી, તારતમ્યથી
 યુક્ત જે સુખવિશેષ છે, તે સુખો સઘળા આકાશ પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ અધિક
 છે. એ માટે જ કહેવામાં આવ્યું છે કે ‘સવ્વાગાસે ણ માણ્જ્ઞા’ એટલે
 સિદ્ધોના અનંતવર્ગવિમક્ત સુખ પણ સઘળા આકાશ પ્રદેશોમાં સમાઈ
 શકતું નહિ. (સૂ. ૧૨૧)

‘જહ ણામ કોઙ મિચ્છો’ ઇત્યાદિ.

દૃષ્ટાન્ત દેખને એજ વિષય સ્પષ્ટ કરે છે. (જહ ણામ કોઙ મિચ્છો નગર-
 ગુણે વહુવિહે વિયાણંતે) જેમ કોઈ એક મ્લેચ્છ બહુ પ્રકારના નગરગુણોને

असंतीए' उपमायाः=सादृश्यस्य तत्र वने असत्त्वात्=असद्भावादिति । एवमत्र कथानकम्—
कश्चिन्नरपतिर्दुष्टाऽश्वाखूढः सन् पवनसेवनार्थं वनं जगाम, तत्र चाश्वस्य दुर्जातिकत्वेन परिश्रान्तो
वनेऽश्वादवतीर्णः । तत्रैकेन वनवासिना म्लेच्छेन भूपतिः सत्कृतः । ततौऽसौ नृपतिस्तं म्लेच्छं
निजराजधानीमानाय विशिष्टभोगभूतिभोजनं कृतवान् । एकदाऽसौ म्लेच्छः प्रावृषि प्राप्तायां
मनोहरं मेघध्वनिं श्रुत्वा वनं गन्तुमुत्कण्ठितोऽभवत् । राज्ञा सम्मानपूर्वकं विसर्जितः सन्नसौ वने

य चण्ड परिकहेउं) उसका वर्णन वन में नहीं कर सकता है, क्योंकि (उपमाए तहिं
असंतीए) उपमा का वहां अभाव है ।

यहाँ इस प्रकारकी एक कथा है ।

कोई एक राजा वायु सेवन के लिये घोड़े पर सवार हुआ । वह घोड़ा महादुर्दान्त
था । इसलिये चलते २ उसे यह भय लग रहा था कि कहीं यह मुझे पटक न दे,
अतः उसे रोकते २ वह थक गया और किसी जंगल में जाकर वह उससे नीचे
उतर पड़ा । इतने में एक भील ने उसे देखा और सहसा पास आकर उसने
थके हुए राजा की सेवा-शुश्रूषा से थकावट दूर की । राजा बड़ा खुश हुआ, और उसे
अपने साथ लेकर वह अपनी राजधानी को वापिस लौट आया । वहां राजा ने राजसी ठाट-
बाट के अनुसार उसे खूब आनन्द से रखा । खाने-पीने के लिये उसे ऐसे २ भोज्य पदार्थ
दिये कि जो उसने अपने जीवन में कभी देखे तक भी नहीं थे । रहते २ जब कुछ समय
व्यतीत हो गया तब वर्षाकाल के आने पर उसे अपने स्थान पर जाने की उत्कंठा जगी ।

બળુતો થકો પણ (ન ય ચણ્ડ પરિકહેઉં) તેનું વર્ણન વનમાં કરી શકતો
નથી, કેમકે (ઉપમાએ તહિં અસંતીએ) ઉપમાનો ત્યાં અભાવ છે.

અહીં આ પ્રકારની એક વાર્તા છે.

કોઈ એક રાજા વાયુસેવન (ફરવા) માટે ઘોડા ઉપર સવાર થઈને
મહેલમાંથી બહાર નીકળ્યો. જે ઘોડા ઉપર તે સવાર થયો હતો તે મહા દુર્દાન્ત
(મુશ્કેલીથી વશ થાય તેવો) હતો. તેથી ચાલતાં ચાલતાં તેને એ ભય લાગતો હતો
કે ક્યાંક આ મને પાડી તો નહિ દે?, આથી તેને રોકતાં રોકતાં તે
થાકી ગયો, અને કોઈ જંગલમાં જઈને તેના ઉપરથી તે નીચે ઉતર્યો.
એટલામાં એક ભીલે તેને જોયો અને તરત જ પાસે આવીને તેણે થાકેલા
રાજાની સેવા-શુશ્રૂષા કરી થાક ઉતાર્યો. રાજા બહુ ખુશ થયો અને તેને
પોતાની સાથે લઈને તે પોતાની રાજધાનીએ પાછો આવ્યો. ત્યાં રાજાએ
પોતાના રાજસી ઠાઠમાઠપૂર્વક તેને ખૂબ આનંદથી રાખ્યો. ખાવા-પીવાને
માટે તેને એવા એવા તો ભોજ્ય પદાર્થ આપ્યા કે જે તેણે તેની જીંદગીમાં
કદીએ જોયા પણ નહોતા. આમ રહેતાં રહેતાં કેટલોક સમય વીતી ગયો
અને વરસાદનો સમય આવ્યો ત્યારે તેને પોતાનાં સ્થાન પર જવાની ઉત્કંઠા

मूलम्—इय सिद्धाणं सोक्खं, अणोवमं णत्थितस्स ओवम्मं।

स्ववासस्थानमागतः । अथ स्वपरिवारस्तं पृच्छति स्म—हे तात ! कीदृशम् तद् भूपनगरम् ? इति । स म्लेच्छस्तस्य भूपनगरस्य सर्वान् बहुविधान् नगरगुणान् विजानन्नपि तान् वक्तुं कृतोद्यमोऽपि तत्र वने नगरसादृश्यस्याभावाद् वर्णयितुं नाशक्नोदिति ॥ सू० १२२ ॥

टीका—‘इय’ इत्यादि । ‘इय’ इति=एवम्—अनेन प्रकारेण ‘सिद्धाणं’ सिद्धानां ‘सोक्खं’ सौख्यम्, ‘अणोवमं’ अनुपमं वर्तते, कुतः ? यतस्तस्य ‘ओवम्मं णत्थि’ औपम्यं

राजा को जब यह ज्ञात हुआ तब उसने उसको खूब आदर—सत्कार के साथ विदा किया । चलते २ यह अपने घर पर आ गया । सब कुटुम्बी जन इससे मिलने को आने लगे । लोगों ने पूछा, कहो भाई ! राजा के निकट कैसे रहे ?, राजा का वह नगर कैसा है ?। भील ने जो कि उस राजा के नगर की सब प्रकार की श्री से परिचित हो चुका था, राजधानी का वर्णन करने का उद्यम तो किया; परन्तु वह अपने उन भील—भाइयों के समक्ष यथावत् उसका वर्णन नहीं कर सका । कारण कि उस वन में नगर के वर्णन से मिलनेवाली उपमेय वस्तुओं का अभाव था । इस दृष्टान्त का भाव इस प्रकार समझना चाहिये कि वह भील नगर में अनुभवित आनन्दका अपने अन्य भाइयों के समक्ष उस जंगल में उस प्रकार की वस्तु के अभाव से वर्णन नहीं कर सका । उस सुख की कुछ भी उपमा नहीं बता सका ॥ सू. १२२ ॥

नगृत थं. न्यारे आ वात राजाना न्णवामां आवी त्थारे तेण्णे तेने भूय आदर—सत्कारनी साथे विदायगिरी आपी. आलतां आलतां ते पोताने घेर पडोन्थे. अधां कुटुम्भी भाणुसे तेने भणवाने आववा लाज्यां. दोडोन्थे पूछयुं के, कडो लाछ, राजनी पासो तमे डेवी रीते रह्या हुता ?, राजानुं ते नगर डेवुं छे ?. भील ने के ते राजाना नगरनी अधी नतनी श्री (वैभव शोभा) थी परिचित थं गये हुतो, अने राजधानीनुं वर्णन करवाने तेण्णे उद्यम (प्रयत्न) तो कये, परंतु ते पोताना भील लाछोनी समक्ष यथावत् (नेधं तेवुं) तेनुं वर्णन करी शक्यो नहि; कारण के ते वनमां नगरना वर्णन साथे भेगणाय नेवी उपमा आपवा योज्य वस्तुओनो अभाव हुतो. आ दृष्टान्तनो लाव नेवी रीते समजवे. नेधं के ते भील ने प्रकारे अनुभवेल आनंदने पोताना भील लाछोनी समक्ष वर्णन करवा नतां पण ते जंगलमां नेवा प्रकारनी वस्तुओना अभावथी पोते लोगवेला आनंदने अनुभव करावी शक्यो नहि. ते सुअनी कोछ पण उपमा बतावी शक्यो नहि. (सू. १२२)

किंचि विसेसेणेत्तो, ओवम्ममिणं सुणह वोच्छं ॥ सू० १२३ ॥
मूलम्—जह सव्वकामगुणियं, पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई।
तण्हाल्लुहाविमुक्को, अच्छेज्ज जहा अमियतित्तो ॥ सू० १२४ ॥

नास्ति, तथापि बालानां बोधार्थमाह—‘किंचि’ इत्यादि । ‘किंचि विसेसेण’ किञ्चिद्विशेषेण ‘एत्तो’ इतः=अतः परम् ‘ओवम्मं’ औपम्यम्=उपमानम् ‘इणं’ इदं=वक्ष्यमाणं ‘सुणह’ शृणुत, ‘वोच्छं’ वक्ष्ये—अहं कथयिष्यामीत्यर्थः ॥ सू. १२३ ॥

टीका—‘जह’ इत्यादि । ‘जह’ यथा ‘कोई पुरिसो’ कोऽपि पुरुषः, ‘सव्व-
कामगुणियं’ सर्वकामगुणितं=सर्वाभिलषणीयरसादिसंपन्नं, ‘भोयणं’ भोजनम्=अशनादि-
कम्, ‘भोत्तूण’ भुक्त्वा, ‘तण्हाल्लुहाविमुक्को’ तृष्णाक्षुधाविमुक्तः=पिपासाबुभुक्षारहितः ‘अमि-

‘इय सिद्धाणं सोक्खं’ इत्यादि ।

(इय सिद्धाणं सोक्खं) इसी प्रकार सिद्धों का सुख यद्यपि (अणोवमं) अनुपम है, अतः (णत्थि तस्स ओवम्मं) उसकी किसी भी सांसारिक पदार्थ के साथ उपमा नहीं दी जा सकती है, तो भी (किंचि विसेसेणेत्तो ओवम्ममिणं सुणह वोच्छं) बालजीवों को बोधन करने के लिये कुछ विशेषरीति से सिद्धों के इस सुख को उपमा देकर समझाया जाता है ॥ सू. १२३ ॥

‘जह सव्वकामगुणियं’ इत्यादि ।

(जह सव्वकामगुणियं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई) कोई पुरुष पांचों इन्द्रियों को तृप्त करनेवाले काम—शब्द, रूप, और भोग—गंध, रस, स्पर्श आदि विषयों को यथेच्छरीति से भोगकर (तण्हाल्लुहाविमुक्को) पिपासा एवं बुभुक्षा से रहित (अमियतित्तो

‘इय सिद्धाणं सोक्खं’ इत्यादि ।

(इय सिद्धाणं सोक्खं) आ प्रकारे सिद्धोनुं सुख जे के (अणोवमं) अनुपम छे, तेथी (णत्थि तस्स ओवम्मं) तेनी उपमा केछ पणु सांसारिक पदार्थना सुखनी साथे आपी शकती नथी. तो पणु (किंचि विसेसेणेत्तो ओवम्ममिणं सुणह वोच्छं) आल्लुवेने बोधन करवा भाटे कंछि विशेष रीतथी सिद्धोनां आ सुखनी उपमा दछ ने समभववाभां आवे छे. (सू. १२३)

‘जह सव्वकामगुणियं’ इत्यादि ।

(जह सव्वकामगुणियं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई) जेभ केछ पुरुष पांचेय धीद्रव्येने तृप्त करवा वाजा काम—शब्द, रूप, अने भोग—गंध, रस, स्पर्श

मूलम्—इय सव्वकालतित्ता, अउलं निव्वाणमुवगया सिद्धा ।

सासयमव्वाबाहं, चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥ सू० ॥ १२५

मूलम्—सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य, पारगयत्ति य परंपरगयत्ति ।

यत्तित्तो' अमृततृप्तो 'जहा' यथा=इव, 'अच्छेज्ज' आसीत=तिष्ठेत् ॥ सू. १२४ ॥

टीका—'इय' इत्यादि । 'इय' इति=एवं 'सव्वकालतित्ता' सर्वकालतृप्ताः—
अपुनरावृत्तिस्थानं प्राप्तत्वात्, 'निव्वाणं' निर्वाणं=मोक्षम् 'उवगया' उपगताः 'सिद्धा' सिद्धाः,
'अउलं' अतुलम्=अनुपमम् 'सासयं' शाश्वतं=सार्वकालिकम्, 'अव्वाबाहं' अव्याबाधं=पर्व-
दुःखविवर्जितं 'सुहं' सुखं 'पत्ता' प्राप्ताः, अतः 'सुही चिट्ठंति' सुखिनस्तिष्ठन्ति, ननु 'सुखं प्राप्ता'
इत्युक्ते 'सुखिन' इति किमर्थम् ?, अत्रोच्यते—केचिन्मन्यन्ते दुःखाभावमात्रं मुक्तिरिति, तन्मत-
निराकरणार्थं मोक्षस्य वास्तविकसुखस्वरूपताप्रतिबोधनार्थं च 'सुखं प्राप्ताः सुखिनस्तिष्ठन्ती'-
त्युक्तम् ॥ सू. १२५ ॥

टीका—साम्प्रतं वस्तुतः सिद्धपर्यायशब्दान् प्रतिबोधयन्नाह—'सिद्धत्ति' इत्यादि ।

जहा) अमृतपान से तृप्त के समान (अच्छेज्ज) रहता है ॥ सू. १२४ ॥

'इय सव्वकालतित्ता' इत्यादि ।

(इय सव्वकालतित्ता) अपुनरावृत्तिस्वरूप मुक्तिस्थान को प्राप्त होने के कारण
सर्वकाल तृप्त हुए (निव्वाणमुवगया सिद्धा) वे सिद्ध भगवान्, शारीरिक एवं मानसिक
दुःखों से सर्वथा रहित होकर (अउलं अव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता) अनुपम,
शाश्वत एवं अव्याबाध सुख को भोगते हुए उस मुक्तिस्थान में सदाकाल—अनन्तकाल तक
सुखी ही सुखी रहते हैं ॥ सू. १२५ ॥

आदि विषयेने यथेच्छरूपे लोगवीने (तण्हाल्लुहाविमुक्को) पिपासा तेमज्ज
पुलुक्षा (भूभ—तरस) थी रहित (अमियत्तित्तो जहा) अमृतपानथी तृप्तनी
जेम (अच्छेज्ज) रहे छे. (सू. १२४)

'इय सव्वकालतित्ता' इत्यादि.

(इय सव्वकालतित्ता) अपुनरावृत्तिस्वरूप मुक्तिस्थानने प्राप्त थवाना
कारणे सर्वकाल तृप्त थयेला (निव्वाणमुवगया सिद्धा) ते सिद्ध भगवान्
शारीरिक तेमज्ज मानसिक दुःखेथी सर्वथा रहित थयने (अउलं अव्वाबाहं
चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता) अनुपम, शाश्वत तेमज्ज अव्याबाध सुखने लोगवता
ते मुक्ति स्थानमां सदाकाल—अनन्तकाल सुधी सुभी रहे छे. (सू. १२५)

उमुक्ककम्मकवया, अजरा अमरा असंगा य ॥ सू० १२६ ॥

मूलम्—णिच्छिण्णसव्वदुक्खा, जाइजरामरणबंधणविमुक्का ।

‘सिद्धत्ति य’ सिद्धा इति च—तेषां नाम, कृतकृत्यत्वात्, ‘बुद्धत्ति य’ बुद्धा इति च—केवल-
ज्ञानेन विश्वावबोधात्, ‘पारगयत्ति य’ पारगता इति च—भवसागरपारगमनात्, ‘परंपर-
गयत्ति य’ परंपरगताः=मिथ्यात्वादितुर्दशगुणस्थानकानां मनुष्यादिसुगतीनां च पारंपर्येण
भवसिन्धुपारं प्राप्ता इति, ‘उम्मुक्ककम्मकवया’ उन्मुक्तकर्मकवचाः=कर्मकवचवर्जिताः ‘अजरा’
अजराः—वयसोऽभावात्, ‘अमरा’ अमराः—आयुषोऽभावात्, ‘असंगा य’ असङ्गाश्च सकल-
क्लेशरहितत्वात् ॥ सू. १२६ ॥

टीका—‘णिच्छिण्ण’ इत्यादि । ‘णिच्छिण्णसव्वदुक्खा’ निस्तीर्णसर्वदुःखाः—

‘सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य’ इत्यादि ।

(सिद्धत्ति य) कृतकृत्य होने से वे सिद्ध कहे जाते हैं । (बुद्धत्ति य) केवल
ज्ञान से सकल लोकालोक के ज्ञाता होने से वे बुद्ध कहे जाते हैं । (पारगयत्ति य)
भवरूप समुद्र से पारंगत हो जाने के कारण वे पारगत कहे जाते हैं । (परंपरगयत्ति य)
मिथ्यात्व—आदि चौदह गुणस्थानकों और मनुष्य—आदि सुगतियों की परम्परा से भवसिन्धु
को पार करने के कारण वे परंपरगत कहे जाते हैं । (उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा
असंगा य) कर्मरूप कवच से वर्जित होने के कारण, एवं आयु कर्म का सर्वथा प्रक्षय हो
जाने के कारण वे अमर कहे जाते हैं । तथा सकलक्लेशों से रहित होने के कारण वे असंग
कहे जाते हैं । ये सिद्ध, बुद्ध, आदि सब शब्द, पर्यायवाची शब्द हैं ॥ सू. १२६ ॥

‘सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य’ ઇત્યાદિ.

(સિદ્ધત્તિ ય) કૃતકૃત્ય હોવાથી તેમને સિદ્ધ કહેવામાં આવે છે. (બુદ્ધત્તિ ય)
કેવળજ્ઞાનથી સકલ લોકલોકના જ્ઞાતા હોવાના કારણે બુદ્ધ કહેવામાં
આવે છે. (પારગયત્તિ ય) ભવરૂપ સમુદ્રથી પારગત થઈ જવાના કારણે તેમને
પારગત કહેવામાં આવે છે. (પરંપરગયત્તિ ય) મિથ્યાત્વ—આદિ ચૌદ ગુણસ્થાનકો
અને મનુષ્ય આદિ સુગતિઓની પરંપરાથી ભવસિન્ધુને પાર કરવાને કારણે તે
પરંપરગત કહેવાય છે. (ઉમ્મુક્કકમ્મકવયા અજરા અમરા અસંગા ય) કર્મરૂપ
કવચથી વર્જિત હોવાના કારણે તેમજ આયુકર્મનો સર્વથા પ્રક્ષય થઈ જવાના
કારણે તેઓને અમર કહેવામાં આવે છે, તથા સકલ ક્લેશોથી રહિત હોવાના
કારણે અસંગ કહેવામાં આવે છે. આ સિદ્ધ બુદ્ધ આદિ બધા શબ્દો પર્યાય-
વાચી શબ્દ છે. (સૂ. ૧૨૬)

अव्वावाहं सुक्खं, अणुहोती सासयं सिद्धा ॥ सू० १२७ ॥

मूलम्—अतुलसुखसागरगया, अव्वावाहं अणोवमं पत्ता ।

सव्वमणागयमद्धं, चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥ सू० १२८ ॥

॥ ओवाइयं समत्त ॥

निस्तीर्णानि सर्वदुःखानि यैस्ते तथा—शारीरमानससकलदुःखान्यतिक्रान्ताः, पुनः—‘जाइजरा-मरणबंधणविमुक्का’ जातिजरामरणबन्धनविमुक्ताः=जन्मवार्द्धक्यमृत्युकर्मबन्धनरहिताः ‘सिद्धा’ सिद्धाः ‘अव्वावाहं’ अव्याबाधं=व्याधातवर्जितं ‘सासयं’ शाश्वतं=सार्वकालिकं ‘सोक्खं’ सौख्यम् ‘अणुहोती’ अनुभवन्ति ॥ सू. १२७ ॥

टीका—‘अतुलसुख’—इत्यादि । ‘अतुलसुखसागरगया’ अतुलसुखसागरगताः—अतुलः=अनुपमो यः सुखसागरः=सुखसमुद्रस्तं गताः=प्राप्ताः, पुनः ‘अव्वावाहं’ अव्या-

‘णिच्छिण्णसव्वदुक्खा’ इत्यादि ।

(सिद्धा) ये सिद्ध भगवान् (णिच्छिण्णसव्वदुक्खा) समस्त दुःखों के अतिक्रमण, तथा (जाइजरामरणबंधणविमुक्का) जन्म, जरा एवं मरण के बन्धनों से निर्मुक्त हो जाने के कारण, (सासयं अव्वावाहं सुक्खं अणुहोती) शाश्वत एवं अव्याबाध सुख का अनन्त काल तक अनुभव करते रहते हैं ॥ सू. १२७ ॥

‘अतुलसुखसागरगया’ इत्यादि ।

(अतुलसुखसागरगया) अनुपम सुख सागर में मग्न वे सिद्ध भगवान्,

‘णिच्छिण्णसव्वदुक्खा’ इत्यादि.

(सिद्धा) ये सिद्ध भगवान् (णिच्छिण्णसव्वदुक्खा) सधणा दुःखेना अतिक्रमण, तथा (जाइजरामरणबंधणविमुक्का) जन्म, जरा तेमज्जर मरणानां बंधनोत्थी निर्मुक्त थर्ध जवाना कारणे (सासयं अव्वावाहं सुक्खं अणुहोती) शाश्वत तेमज्जर अव्याबाध सुभने अनन्त काल सुधी अनुभव करता रहे छे. (सू. १२७)

‘अतुलसुखसागरगया’ इत्यादि.

(अतुलसुखसागरगया) अनुपम सुभना सागरमां मग्न ते सिद्ध भगवान्, (अव्वावाहं अणोवमं पत्ता) ते प्राप्त करेलां मुक्तिस्थानमां (सव्वमणा-

बाधं=व्याघातवर्जितम् 'अणोवमं' अनुपमम्=सादृश्यवर्जितं सिद्धिस्थानं 'पत्ता' प्राप्ताः=अधिष्ठिताः सिद्धाः, 'सुहं पत्ता' सुखं प्राप्ताः=सुखमधिगताः, अतएव 'सुही' सुखिनः सन्तः सव्वम-
णागयमद्धं' सर्वमनागताद्धं=सर्वं भविष्यत्कालं 'चिट्ठंति' तिष्ठन्तीति ॥ सू. १२८ ॥

॥ औपपातिकं समाप्तम् ॥

॥ इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकला-
पालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक - वादिमानमर्दक - श्रीशाह-
छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य'-पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलाल-
व्रतिविरचिता औपपातिक-सूत्रस्य पीयूषवर्षिण्याख्या
व्याख्या सम्पूर्णा ॥

(अव्वाबाहं अणोवमं पत्ता) प्राप्त हुए उस मुक्ति स्थान में (सव्वमणागयमद्धं चिट्ठंति
सुही सुहं पत्ता) अनन्तकाल तक सदा सुखी ही रहते हैं । ॥ सू. १२८ ॥

॥ इति औपपातिकसूत्र का हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण ॥

गयमद्धं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता) अनन्तकाल सुधी सुभीष्ट रहे छे. (सू. १२८)

इति औपपातिक सूत्रनो गुजराती अनुवाद संपूर्ण

દાનવીરોની નામાવલી

*

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી
ન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

*

ગરેડીયા કુવા રોડ-શ્રીન લોજ પાસે,

રા જ કે ટ

*

શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી તા. ૧૦-૧૨-૫૮ સુધીમાં
દાખલ થયેલ મેમ્બરોનાં સુખારક નામો

*

ગામવાર કકાવારી લિસ્ટ.

*

(રૂ. ૨૫૦ થી ઓછી રકમ ભરનારનું નામ આ યાદીમાં
સામેલ કરેલ નથી.)

આધિપુરુષીશ્રીઓ-૫

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ બાણીતા મીલમાલીક અમદાવાદ		૧૦૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ વારીયા હા. શેઠ લાલચંદભાઈ જેચંદભાઈ, નગીનભાઈ, વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ ભાણુવડ		૬૦૦૦
૩	કોઠારી જેચંદભાઈ અજરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેચંદભાઈ રાજકોટ		૫૨૫૧
૪	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	શોલાપુર	૫૦૦૧
૫	સ્વ. પિતાશ્રી છગનલાલ શામળદાસના સ્મરણાર્થે હ. ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર	અમદાવાદ	૫૨૫૧

પુરુષીશ્રીઓ-૨૧

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હ. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર	૩૬૦૪
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૬૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૬૧૧-૧૧
૪	મહેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	શેઠ શામજીભાઈ વેલજીભાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ લહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ લહેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૧	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૧૫૦૦
૧૨	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૩૦૧
૧૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	જામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ	૧૦૦૧
૧૬	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૭	શ્રીમાન અંદ્રસિંહજી સાહેબ મહેતા (રેલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	૧૦૦૧
૧૮	મહેતા સોમચંદ નેણસીભાઈ (કરાંચીવાળા)	મોરબી	૧૦૦૧

૧૬	શાહ હરીલાલ અનોપચંદલાઈ	ખંભાત	૧૦૦૧
૨૦	કોઠારી છબીલદાસ હરખચંદલાઈ	મુંબઈ	૧૦૦૦
૨૧	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદલાઈ	શિહોર	૧૦૦૦

સહાયક મેમ્બરો-૪૯

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૭૫૧
૨	મોદી કેશવલાલ હરીચંદલાઈ	સાબરમતી	૭૫૦
૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ હા. શેઠ ઝુંઝાલાઈ વેલસીલાઈ વઢવાણ શહેર		૭૫૦
૪	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડલાઈ	શીવ	૭૦૦
૫	શેઠ રતનશી હરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	જામજોધપુર	૫૫૫
૬	ખાટવીયા ગીરધર પરમાનંદ હા. અમીચંદલાઈ	ખાખીજળીઆ	૫૨૭
૭	મોરખીવાળા સંઘવી દેવચંદ નેણશીલાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. મણીબાઈ તરફથી હ. મુલચંદ દેવચંદ (કરાંચીવાલા) મલાડ		૫૧૧
૮	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૯	ગોસલીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા ચંપાબેન ગોસલીયા	અમદાવાદ	૫૦૨
૧૦	શાહ પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા અ.સૌ.સમરતબેન રાજસીતાપુર	અમદાવાદ	૫૦૨
૧૧	શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૨	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૩	શાહ શાન્તીલાલ માણેકલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૪	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ (કરાંચીવાલા)	લીંબડી	૫૦૧
૧૫	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ	૫૦૧
૧૬	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ	૫૦૧
૧૭	શેઠ ગોવિંદજીભાઈ પોપટભાઈ	રાજકોટ	૫૦૦
૧૮	શેઠ રામજી શામજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૧
૧૯	સ્વ. પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હા. વેણીચંદ શાન્તીલાલ (જાખુઆવાળા)	મેઘનગર	૫૦૧
૨૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરસનજી	થાનગઢ	૫૦૦
૨૧	શેઠ તારાચંદ પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૨૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૧૫૦	શેઠ શેષમલજી જીવરાજજી		
૧૨૫	શેઠ અનરાજજી લાલચંદજી		
૧૨૫	ધુકડચંદજી રૂપચંદજી		

૧૦૦ હગડુમલજી ચાંદમલજી

૫૦૦

- ૨૩ મહેતા મૂળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા હુર્લભજીભાઈ ધ્રાક્ષ ૭૫૦
- ૨૪ શેઠ હરખચંદ પુરુષોત્તમ હા. ઇન્દુકુમાર ચોરવાડ ૫૦૦
- ૨૫ શેઠ કેસરીમલજી વસતીમલજી ગુગલીયા રાણાવાસ ૫૦૧
- ૨૬ સ્થા. જૈનસંઘ હા. ખાટવીઆ અમીચંદ ગીરધરભાઈ ખાખીજળીઆ ૫૦૧
- ૨૭ શેઠ ખીમજીભાઈ ખાવાભાઈ હા. કુલચંદભાઈ, ગુલાબચંદભાઈ
નાગરદાસભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ મુંબઈ ૫૦૧
- ૨૮ શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મુળજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ ૫૦૧
- ૨૯ સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ મુંબઈ ૫૦૧
- ૩૦ કામદાર રતીલાલ હુર્લભજી (જેતપુરવાળા) મુંબઈ ૫૦૧
- ૩૧ શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ શીવ ૫૦૧
- ૩૨ વોરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ શીવ ૫૦૧
- ૩૩ શેઠ ગુલાબચંદ ભુદરભાઈ તથા કસ્તુરબેન હા. ભાઈ અનોપચંદ ખારરોડ ૫૦૧
- ૩૪ મહાન ત્યાગી બેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા ધ્રાક્ષ ૫૦૧
- ૩૫ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ ધ્રાક્ષ ૫૦૧
- ૩૬ શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ રાજકોટ ૫૦૧
- ૩૭ શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી તથા અ. સૌ. નંદકુંવરબેન તરફથી જામનગર ૫૦૩
- ૩૮ શેઠ દેવચંદ અમરશી (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ) લાણુવડ ૫૦૧
- ૩૯ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ) લાણુવડ ૫૦૧
- ૪૦ વકીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ વીરમગામ ૫૦૧
- ૪૧ મહેતા શાંતિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા અમદાવાદ ૫૫૬
- ૪૨ શ્રીચુત લાલચંદજી તથા અ. સૌ. ધીસાબેન „ ૫૦૧
- ૪૩ શેઠ મોહનલાલ મુકુટલાલ બાલયા „ ૫૦૧
- ૪૪ સ્વ. શેઠ ઉકાભાઈ ત્રીલોવનદાસ વીસલપુરવાળાના સ્મરણાર્થે
તેમનાં ધર્મપત્નિ લક્ષ્મીબાઈ ગીરધર તરફથી હા. મરઘાબેન
તથા મંગુબેન „ ૫૦૧
- ૪૫ પારેખ જયંતીલાલ મનસુખલાલ રાજકોટવાળા હા. વિનુભાઈ „ ૫૦૧
- ૪૬ શ્રીચુત શેઠ લાલચંદજી મીશ્રીલાલજી „ ૫૦૧
- ૪૭ શ્રી વાંકાનેર સ્થા. જૈન સંઘ વાંકાનેર ૫૦૧
- ૪૮ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ બોટાદ ૫૦૧
- ૪૯ શેઠ ગુહડમલજી શેશમલજી જોવર (ખરાર) પોપળગાંવ ૫૦૧

૪૧૨ મેમ્બરોનું ગામવાર લીસ્ટ

અમદાવાદ તથા પરાંઓ.

૧ શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	૨૫૧
૨ શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ હા. ફકીરચંદલાઈ	૨૫૧
૩ શાહ કાન્તીલાલ ત્રીલોવનદાસ	૨૫૧
૪ શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	૨૫૧
૫ શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	૨૫૧
૬ શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	૨૫૦
૭ શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	૨૫૧
૮ શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	૨૫૧
૯ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કાનજીભાઈ અમૃતલાલ	૨૫૧
૧૦ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ (પાટણવાળા)	૨૫૧
૧૧ શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ	૨૫૧
૧૨ શાહ નરસિંહદાસ ત્રીલોવનદાસ	૨૫૧
૧૩ શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. વહીવટ કર્તા શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ	૨૫૧
૧૪ શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈનસંઘ હા. ચંદુલાલ અચરતલાલ	૨૫૧
૧૫ શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામભાઈ	૨૫૧
૧૬ શાહ ભાઈલાલ ઉજમશી	૨૫૧
૧૭ શ્રી સુખલાલ ડી. શેઠ હા. ડો. કું. સરસ્વતીબહેન શેઠ	૨૫૧
૧૮ શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ કાન્તિલાલ જીવણલાલ	૨૫૧
૧૯ મોદી નાથાલાલ મહાદેવદાસ	૨૫૧
૨૦ શાહ મોહનલાલ ત્રીકમદાસ	૨૫૧
૨૧ શ્રી છકોટી સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	૨૫૧
૨૨ શેઠ પોપટલાલ હંસરાજના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાણુલાલ પોપટલાલ	૨૫૧
૨૩ દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાન બાપોદરાવાળાના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈલાલ અમૃતલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૨૪ શાહ નવનીતલાલ અમુલખરાય	૨૫૧
૨૫ શાહ મણીલાલ આશારામ	૨૫૧
૨૬ શાહ ચીનુભાઈ સાકરચંદ	૨૫૧
૨૭ શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ	૨૫૧
૨૮ શાહ રજનીકાન્ત કસ્તુરચંદ	૨૫૧

૨૬	સંઘવી જીવણલાલ છગનલાલ (સ્થા. જૈન)	૨૫૧
૩૦	શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધ્રાંગધ્રાવાળા	૨૫૨
૩૧	અ. સૌ. બેન રતનબાઈ નાદેચા હા. ધુલજીભાઈ ચંપાલાલજી	૨૫૧
૩૨	શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાલા	૨૫૧
૩૩	શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૩૪	શેઠ પુખરાજજી સમતીરામજી સાદડીવાળા	૨૫૧
૩૫	સ્વ. પિતાશ્રી જવાહીરલાલજી તથા પૂજ્ય ચાચાજી હજારીમલજી બરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. મૂળચંદજી જવાહીરલાલજી	૨૫૧
૩૬	સ્વ. ભાવસાર બબાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ પુરીબેન	૨૫૧
૩૭	સ્વ. પિતાશ્રી રવજીભાઈ તથા સ્વ. માતૃશ્રી મૂળીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. કકલભાઈ કોઠારી	૩૦૧
૩૮	ભાવસાર કેશવલાલભાઈ મગનલાલભાઈ	૨૫૧
૩૯	શાહ કેશવલાલ નાનચંદ જાખડાવાળા હા. પાર્વતીબેન	૨૫૧
૪૦	શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા (સાબરમતી)	૨૫૧
૪૧	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (સાબરમતી)	૨૫૦
૪૨	શ્રી બીપિનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી (રાણપુરવાળા)	૩૦૧
૪૩	ભાવસાર છોટાલાલભાઈ છગનલાલભાઈ	૨૫૧
૪૪	ભાવસાર શકરાભાઈ છગનલાલભાઈ	૨૫૧
૪૫	અ. સૌ. જીવીબેન રતીલાલ હા. ભાવસાર રતીલાલ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૪૬	સંઘવી બાલુભાઈ કમળશી તથા તેમનાં ધર્મપત્નિઓ અ. સૌ. ચંપાબેન તથા વસંતબેન તરફથી	૨૫૧
૪૭	અ. સૌ. વિદ્યાબેન વનેચંદ દેશાઈ હા. ભૂપેન્દ્રકુમાર વનેચંદ દેશાઈ	૨૫૧
૪૮	સ્વ. પારેખ નાનચંદ ગોવિંદજી મોરબીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. રતીલાલ નાનચંદ પારેખ	૩૦૧
૪૯	શાહ નટવરલાલ ગોકળદાસ	૨૫૧
૫૦	શાહ શામળભાઈ અમરશીભાઈ	૨૫૧
૫૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ શીવકુંવરબેન તરફથી હા. રતીલાલ ત્રીભોવનદાસ	૪૦૨
૫૨	અ. સૌ. કંકુબેન (ભાવસાર ભોગીલાલભાઈ છગનલાલભાઈના ધર્મપત્નિ)	૩૦૬

૫૩	અ. સૌ. સવિતાબેન (જયંતીલાલ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્નિ)	૨૫૧
૫૪	અ. સૌ. શાંતાબેન (દીનુભાઈ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્નિ)	૨૫૧
૫૫	અ. સૌ. સુનંદાબેન (રમણુભાઈ ભોગીલાલનાં ધર્મપત્નિ)	૨૫૧
૫૬	શેઠ હીરાજી રૂગનાથજીના સ્મરણાર્થે હા. વાગમલજી રૂગનાથજી	૩૦૧
૫૭	શેઠ મણીલાલ બોધાભાઈ	૨૫૧
૫૮	પટવા સુમેરમલજી અનોપચંદજી બેધપુરવાળા	૩૦૧
૫૯	સ્વ. માણેકલાલ વનમાળીદાસ શાહના સ્મરણાર્થે હા. રમણુલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૬૦	સ્વ. શાહ ધનરાજજી ખેમરાજજીનાં સ્મરણાર્થે હા. કનૈયાલાલજી ધનરાજજી	૩૦૧
૬૧	શ્રી સારંગપુર દ. આ. કે. સ્થા. જેન સંઘ હા. શાહ રમણુલાલ ભગુભાઈ	૨૫૧
૬૨	દોશી હરજીવનદાસ જીવરાજ તથા લક્ષ્મ બાઈ લહેરચંદના સ્મરણાર્થે હા. દોશી મનહરલાલ કરસનદાસ મુળીવાળા	૨૫૧
૬૩	શાહ પૂનમચંદ કૃતેહચંદ	૨૫૧
૬૪	શ્રી ચતુરભાઈ નંદલાલ	૨૫૧
૬૫	શ્રીચુત અમૃતલાલ ઈશ્વરલાલ	૨૫૧
૬૬	શાહ જદવજી મોહનલાલ તથા શાહ ચીમનલાલ અમુલખભાઈ	૨૫૧
૬૭	અ. સૌ. લાભુબેન મગનલાલ હા. શાહ અમૃતલાલ ધનજીભાઈ વઢવાણ શહેરવાળા	૩૦૧
૬૮	અ. સૌ. બહેન કાન્તાબેન ગોરધનદાસ	૨૫૧
૬૯	દોશી કુલચંદ સુખલાલભાઈ બોટાદવાળાના સ્મરણાર્થે હા. દોશી છબીલદાસ કુલચંદભાઈ	૨૫૧
૭૦	લાલાજી રામકુમારજી જેન	૨૫૧
૭૧	શેઠ છોટાલાલ ગુમાનચંદ પાલનપુરવાળા	૨૫૧
૭૨	શાહ ધીરજલાલ મોતીલાલ	૨૫૧
૭૩	સંઘવી સૂર્યકાંત ચુનીલાલના સ્મરણાર્થે હા. સંઘવી જીવણુલાલ ચુનીલાલ	૨૫૧
૭૪	ભાવસાર મોહનલાલ અમુલખરાય	૨૫૧
૭૫	શાહ કુલચંદ મુલચંદભાઈ હા. હસમુખભાઈ કુલચંદભાઈ	૨૫૧
૭૬	લલ્લુભાઈ મગનભાઈ ચૂડાવાલાના સ્મરણાર્થે હા. જસવંતલાલ લલ્લુભાઈ	૩૦૧
૭૭	શ્રીમાન મીત્રીલાલજી જવાહીરલાલજી ખરડીયા અલ્વરવાળા	૨૫૧
૭૮	મહેતા મુળચંદ મગનલાલ	૨૫૧
૭૯	વૈદ્ય નરસીદાસ સાકરચંદનાં ધર્મપત્નિ રેવાબાઈના સ્મરણાર્થે હા. હરીલાલભાઈ	૨૫૧

અમરેલી

- ૧ માસ્તર હકમીચંદ દીપચંદ શેઠ ૨૫૧

અમલનેર

- ૧ શાહ નાગરદાસ વાઘજીભાઈ ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ ગાંડાલાલ ભીખાલાલ ૨૫૧

આણુંદ

- ૧ શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી હા. મનસુખલાલભાઈ ૨૫૧

આસનસોલ

- ૧ બાવીસી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ મણીબાઈ તરફથી હા. રસિકલાલ, અનિલકાંત, વિનોદરાય ૨૫૧

આટકોટ

- ૧ શાહ ચુનીલાલ નારણજી ૩૦૧

ઉદયપુર

- ૧ શ્રીચુત સાહેબલાલજી મહેતા ૩૦૧
૨ શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડ ૨૫૧
૩ શેઠ મગનલાલજી બાગરેયા ૨૫૧
૪ અ. સૌ. જડેન ચંદ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરનાં ધર્મપત્નિ હા. શેઠ રણજીતલાલજી હીંગડ ૨૫૧
૫ સ્વ.શેઠ કાળુલાલજી લોઠાના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ દોલતસિંહજી લોઠા ૨૫૧
૬ સ્વ. શેઠ પ્રતાપમલજી સાબલાના સ્મરણાર્થે હા. પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાબલા ૨૫૧
૭ પૂજ્ય પિતાશ્રી મોતીલાલજી મહેતાના સ્મરણાર્થે હા. રણજીતલાલજી મોતીલાલજી મહેતા ૨૫૧
૮ શેઠ છગનલાલ બાગરેયા ૨૫૧
૯ શેઠ ભીમરાજ થાવરચંદ બાફળા ૨૫૧

ઉમરગાંવરોડ

- ૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

ઉપલેટા

- ૧ શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ ૨૫૧
૨ સ્વ. જૈન સંતોકજેન કચરા હા. ઝોગમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા) ૨૫૧

- ૩ શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ ૨૫૧
- ૪ સંઘાણી મૂળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. તેમના પુત્રો જયંતીલાલભાઈ તથા રમણીકલાલ ૨૫૧
- ૫ દોશી વિકુલજી હરખચંદ (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને) ૨૫૧
- એડન કેમ્પ**

- ૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૧
- ૨ શાહ જગમોહનદાસ પરસોતમદાસ ૨૫૧

કલકત્તા

- ૧ શ્રી કલકત્તા જૈન સ્વ. સ્થા. (ગુજરાતી) સંઘ.
હા. શાહ જયસુખલાલ પ્રભુલાલ ૨૫૧

કલોલ

- ૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૨ ડો. મયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા. ડો. રતનચંદ મયાચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧
- ૪ શાહ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ ૨૫૧
- ૫ સ્વર્ગસ્થ શ્રીચુત વાડીલાલ પરશોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે
હા. ઘેલાભાઈ તથા આત્મારામભાઈ ૨૫૧
- ૬ શેઠ નાગરદાસ કેશવલાલ ૨૫૧
- ૭ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ આત્મારામભાઈ મોહનલાલભાઈ ૨૫૧

કડી

- ૧ શ્રી સ્થા. દરીયાપુરી જૈન સંઘ હા. લાવસાર દામોદરદાસભાઈ ધંધરભાઈ ૨૫૧

કાનપુર

- ૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદભાઈ (આગળના રૂ. ૧૫૦ મળીને) ૩૦૦
- ૨ શાહ હરકીશનદાસ કૂલચંદભાઈ ૨૫૧

કુંદણી:—(આટકોટ)

- ૧ દોશી રતીલાલ ટોઠરશીભાઈ ૨૫૧

કોલકી

- ૧ પટેલ ગોવિંદલાલ ભગવાનજી ૨૫૧
- ૨ પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી (તેમના સ્વ. સુપુત્ર રામજીભાઈના સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

ખાખીજાળીયા

- ૧ ખાટવીયા ગુલાબચંદ લીલાધર (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને) ૨૫૧

ખીચન

- ૧ શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ ૩૫૨

અંભાત

૧ શેઠ માણેકલાલ લગવાનદાસ	૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ કાન્તીલાલ અંબાલાલ	૨૫૧
૩ શાહ સાકરચંદ્ર મોહનલાલ	૨૫૧
૪ શાહ ચંદુલાલ હરીલાલ	૨૫૧
૫ શાહ સકરાભાઈ દેવચંદ	૨૫૧
૬ શાહ ત્રિભોવનદાસ મંગળદાસ	૨૫૧

ગુંદા

૧ સ્વ. મહેતા પૂનમચંદ લવાનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ દીવાળીબેન લીલાધર	૨૫૧
--	-----

ગોંડલ

૧ સ્વ. બાબડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ કમળબાઈ તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ	૨૫૧
૨ પીપળીઆ લીલાધર હામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. લીલાવતી સાકરચંદ્ર કોઠારીના બીજા વરસીતપની ખુશાલીમાં	૩૦૧
૩ કામદાર જુઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા. હરીલાલ જુઠાભાઈ	૩૦૧
૪ સ્વ. કોઠારી કૃપાશંકર માણેકચંદના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ પ્રભાકુંવરબેન	૨૫૧

ગોધરા

૧ શાહ ત્રિભોવનદાસ છગનલાલ	૩૦૧
--------------------------	-----

ઘટકણ

૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ	૨૫૧
-----------------------	-----

ઘોલવાડ (થાણા)

૧ મહેતા ગુલાબચંદજી ગંભીરમલજી	૩૦૦
------------------------------	-----

ઘોડનદી

૧ શેઠ ચાંદમલ મોહનલાલ ભંડારી	૨૫૧
-----------------------------	-----

ચુડા (ઝાલાવાડ)

૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. રતીલાલ ગાંધી પ્રમુખ	૨૫૧
---	-----

જલેસર (બાલાસોર)

૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઈ ચાનગઢવાળા	૨૫૧
----------------------------------	-----

જામજેઘપુર

૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ	૩૮૭
---------------------	-----

૨ શાહ ત્રિભોવનદાસ લગવાનજી પાનેલીવાળા	૨૫૧
--------------------------------------	-----

૩ દેશી માણેકચંદ લવાન (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને)	૨૫૧
--	-----

- ૪ પટેલ લાલજી જુઠાભાઈ (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને) ૨૫૧
 ૫ શેઠ બાવનજી જુઠાભાઈ (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને) ૨૫૧

જામનગર

- ૧ શેઠ છોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧
 ૨ વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧
 ૩ ડા. સાહેબ પી. પી. શેઠ ૨૫૦

જામખંભાળીઆ

- ૧ શેઠ વસનજી નારણજી ૨૫૧
 ૨ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. મહેતા રણછોડદાસ પરમાનંદ ૨૫૧
 ૩ સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ ૨૫૧

જાવરા

- ૧ સ્વ. ભંડારી સ્વરૂપચંદ્રજી શાહના ધર્મપત્નિ મોતીબેનના સ્મરણાર્થે
 હ. શ્રીયુત લાલચંદ્રજી રાજમલજી કીશનગઢવાળા ૨૫૧

જુનાગઢ

- ૧ શાહ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરીલાલભાઈ (હાટીના માળીઆવાળા) ૨૫૧

જુનારદેવ (મધ્ય પ્રાંત)

- ૧ ઘેલાણી ત્રીકમજીભાઈ લાધાભાઈ ૨૫૧

જેતપુર

- ૧ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હા. નરભૈરામભાઈ (જસાપુરવાળા) ૨૫૧
 ૨ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ ૨૫૧
 ૩ કોઠારી ડોલરકુમાર વેણીલાલ ૨૫૧
 ૪ અ. સૌ. જડેન સુરજકુંવર વેણીલાલ કોઠારી ૨૫૧

જેતલસર

- ૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ ૨૫૧
 ૨ કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જબકબેન
 તરફથી હા. શાન્તીલાલભાઈ ગોંડલવાળા

જેધપુર (રાજસ્થાન)

- ૧ હસ્તીમલજી મનરૂપમલજી સામસુખા ૨૫૧

જેરાવરનગર

- ૧ શ્રી શ્રે. સ્થા જૈન સંઘ હ. શેઠ ચંપકલાલ ધનજીભાઈ ૨૫૧

ડભાસ

- ૧ સ્વ. તુરખીઆ લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ
 જીવતીબાઈ તરફથી હા. જયંતીભાઈ ૨૫૧

ડોંડાઇયા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ચંપાલાલજી મારવે ૨૫૦

ઢસા (વાચાધોળા)

૧ શ્રી ઢસાગામ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. એક સદ્ગ્રહસ્થ તરફથી ૨૫૧

થાનગઢ

૧ શાહ ઠાકરશીભાઈ કરશનજી ૨૫૧

૨ શેઠ જેઠાલાલ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧

૩ શાહ ધારશીભાઈ પાશ્વીરભાઈ હા. સુખલાલભાઈ ૨૫૧

દહાણુ રોડ (થાણા)

૧ શાહ હરજીવનદાસ ઓઘડ ખંધાર (કરાચીવાળા) ૨૫૧

દિલ્હી

૧ લાલા પૂર્ણચંદ્રજી જૈન (સેન્દ્રલ ખેંકવાળા) ૩૫૧

૨ શ્રીયુત મહેતાખચંદ જૈન ૨૫૧

૩ લાલાજી મીઠુનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ ૩૦૧

૪ લાલાજી ગુલશનરાયજી જૈન એન્ડ સન્સ ૩૦૧

૫ અ. સૌ. સજ્જનજેન ઇંદરમલજી પારેખ ૨૫૧

ધાર (મધ્યપ્રાંત)

૧ શેઠ સાંગરમલજી પનાલાલજી ૨૫૧

ધાંગઢ્રા

૧ શ્રી સ્થા. જન મોટા સંઘ હા. શેઠ મંગળજીભાઈ જીવરાજ ૨૫૧

૨ સંઘવી નરસીદાસ વખતચંદ ૩૦૧

૩ ઠક્કર નારણદાસ હરગોવીંદદાસ ૨૫૧

૪ કેઠારી કપૂરચંદ મંગળજી ૨૫૧

ધોરાજી

૧ મહેતા પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ ૩૫૧

૨ પિતાશ્રી ભગવાનજી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી ૨૫૧

૩ અ. સૌ. ખચીજેન ખાખુભાઈ ૨૫૧

૪ ધી નવ સૌરાષ્ટ્ર ઓઈલ મીલ પ્રા. લીમીટેડ ૨૫૧

૪ સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદ શાહના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ રાયચંદ ૩૦૧

૬ ગાંધી પોપટલાલ જેચંદ ૨૫૦

૭ દેશાઈ છગનલાલ ડાહ્યાભાઈ લાઠવાળાનાં ધર્મપત્નિ દિવાળીજેન
તરફથી હા. કુમારી હસુમતી ૨૫૧

ધંધુકા

- ૧ ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ ૨૫૧
 ૨ શેઠ પોપટલાલ ધારશી ૨૫૧
 ૩ સ્વ ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હા. પોપટલાલ નાનચંદ ૨૫૧
 ૪ વસાણી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ ૨૫૧

નંદુરખાર

- ૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ ૨૫૦

પાણુસણા

- ૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ ૨૫૧

પાલણુપુર

- ૧ લક્ષ્મીબેન હા. મહેતા હરીલાલ પીતામ્બરદાસ ૨૫૧
 ૨ શ્રી લોકાગચ્છ સ્થાનકવાસી જૈન પુસ્તકાલય ૨૫૧
 ૩ મહેતા મણીલાલ ભાઈચંદભાઈ ૨૫૧
 ૪ મહેતા સુરજમલ ભાઈચંદભાઈ ૨૫૧

પાલેજ

- ૧ સ્વ મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે
 હા. ભાઈ ધીરજલાલ મનસુખલાલ ૩૦૧

પુના

- ૧ શેઠ ઉત્તમચંદજી કેવળચંદજી ધોડા ૨૫૧

પ્રાંતિજ

- ૧ શ્રી પ્રાંતિજ સ્થા જૈનસંઘ હા. શ્રીયુત અંબાલાલ મહાસુખરામ ૨૫૧

ખરવાળા (ઘેલાશા)

- ૧ સ્વ મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે
 હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ સુરજબેન મોરારજી ૨૫૧

ખગસરા (ભાયાણી)

- ૧ શેઠ પોપટલાલ રાઘવજી રાયડીવાળા હા. શેઠ માનસંગ પ્રેમચંદ ૨૫૧

બેરાજ (કચ્છ)

- ૧ શેઠ ગાંગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) ૨૫૧

બેંગલોર

- ૧ બાટવીયા વનેચંદ અમીચંદ મહાવીર ટેક્ષટાઈલ સ્ટોર તરફથી
 ભાઈ ચંદ્રકાંતના લગ્નની ખુશાલીમાં ૨૫૨

બોટાદ

- ૧ સ્વ. વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે
 હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ છબલબેન ૨૫૧

બાકાનેર

- ૧ શેઠ ભોરદાસજી શેડીયા ૨૫૪

બોડેલી

- ૧ શાહ પ્રવિણચંદ્ર નરસીદાસ (સાણુંદવાળા) ૨૫૧
૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧

ભાણુવડ

- ૧ શેઠ જ્યેષ્ઠભાઈ માણેકચંદ ૩૫૨
૨ સંઘવી માણેકચંદ માધવજી ૨૫૧
૩ શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા) ૨૫૧
૪ શેઠ રામજી જીણાભાઈ ૨૫૧
૫ શેઠ પદ્મશી ભીમજી ફાફરીઆ ૨૫૧
૬ ફાફરીઆ ગાંડાલાલ કાનજીભાઈ હા. અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી ૨૫૧
૭ વકીલ મણીલાલ ખેંગારભાઈ પૂનાતર ૨૫૧

ભીલવાડા

- ૧ શ્રી શાંતિ જૈન પુસ્તકાલય હ. ચાંદમલજી માનમલજી સંઘવી ૨૫૧
૨ શેઠ ભીમરાજ મીશ્રીલાલજી ૨૫૧

ભોજાય (કચ્છ)

- ૧ જ્ઞાન મંદિરના સેક્રેટરી શાહ કુંવરજી જીવરાજ ૨૫૧

ભાવનગર

- ૧ સ્વ. કુંવરજી બાવાભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાહ લહેરચંદ કુંવરજી ૩૦૧

મદ્રાસ

- ૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી ૨૫૧

મનોર (થાણા)

- ૧ શાહ શેરમલજી દેવીચંદજી જસવંતગઢવાળા ૨૫૧
હા. પૂનમચંદજી શેરમલજી બોલ્યા

માનકુવા (કચ્છ)

- ૧ સ્વ. મહેતા કુંવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ કુંવરભાઈ હરખચંદ

(માનકુવા સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ માટે)

મુંબઈ તથા પરાંઓ

- ૧ શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઈ ૨૫૧
૨ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
૩ ઘેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમજીભાઈ (બારીવલી) ૨૫૨
૪ શેઠ છોટુભાઈ હરગોવિંદદાસ કટોરીવાલા ૨૫૧

૫	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ	
	હા. કેશરીમલજી અનોપચંદજી ગુગળીયા (મલાડ)	૨૫૧
૬	શેઠ ડુંગરશી હંશરાજ વીસરીયા	૨૫૧
૭	શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ	૨૫૧
૮	શાહ હિંમતલાલ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૯	શાહ રતનશી મોણશીની કંપની	૨૫૧
૧૦	શાહ શીવજી માણેક (કચ્છ બેરાબવાળા)	૨૫૧
૧૧	વેરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે	
	હા. ત્રંબકલાલ પાનાચંદ એન્ડ બ્રધર્સ	૨૫૧
૧૨	સ્વ. પૂ. પિતાશ્રી વીરચંદ જેસીંગભાઈ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ	૨૫૧
૧૩	શા. કુંવરજી હંસરાજ	૨૫૧
૧૪	સ્વ. માતુશ્રી માણેકબેનના સ્મરણાર્થે	
	હા. શેઠ વલ્લભદાસ નાનજી (પોરબંદરવાળા)	૩૦૧
૧૫	એક સદ્ગૃહસ્થ હા. શેઠ સુંદરલાલ માણેકચંદ	૨૫૧
૧૬	અ. સૌ. પાનબાઈ હા. શેઠ પદમશી નરસિંહભાઈ (મલાડ)	૨૫૧
૧૭	શ્રીયુત અમૃતલાલ વર્ધમાન બાપોદરાવાળા હા. વલીચંદ અમૃતલાલ	૨૫૧
૧૮	સ્વ. શાહ નાગશી સોજપાળ ગુંદાળાવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હા. રામજી નાગશી (મલાડ)	૨૫૧
૧૯	શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા	૨૫૧
૨૦	શાહ નગીનદાસ કલ્યાણજી વેરાવળવાળા	૨૫૧
૨૧	શીવલાલ ગુલાબચંદ શેઠ મેવાવાળા	૨૫૧
૨૨	સ્વ. જટાશંકર દેવજી દોશીના સ્મરણાર્થે	
	હા. રણછોડદાસ (બાબુલાલ) જટાશંકર દોશી	૩૦૧
૨૩	સ્વ. ગોડા વણારશી ત્રીલોવન સરસઈવાળા સ્મરણાર્થે	
	હા. જગજીવન વણારશી ગોડા (મલાડ)	૨૫૧
૨૪	સ્વ. ત્રીલોવનદાસ વજપાળ વીંછીયાવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હા. હરગોવિંદદાસ ત્રીલોવનદાસ અજમેરા	૨૫૧
૨૫	સ્વ. કાનજી મૂળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતુશ્રી દિવાળીબાઈના ૧૬ ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે હા. જયંતીલાલ કાનજી કાળાવડવાળા(મલાડ)	૨૫૧
૨૬	શેઠ ખુશાલભાઈ બેંગારભાઈ	૨૫૦
૨૭	શાહ પ્રેમજી માલશી ગંગર (મલાડ)	૨૫૧

૨૮	સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ કાનજી પતુભાઈ (મલાડ)	૨૫૧
૨૯	શાહ વેલજી જેશીંગભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. સ્વ. નાનભાઈના સ્મરણાર્થે	૩૦૧
૩૦	સ્વ. પિતાશ્રી રાયશી વેલજીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ દામજી રાયશી (મલાડ)	૩૦૧
૩૧	શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદ લીંબડીવાળા તરફથી શ્રી અજરામર શાસ્ત્રલંકાર લીંબડી માટે (માટુંગા)	૨૫૧
૩૨	સ્વ. પિતાશ્રી ભીમજી કોરશી તથા માતૃશ્રી પાલાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ ઉમરશીભાઈ ભીમશી કચ્છપતરીવાળા (મલાડ)	૩૦૧
૩૩	શેઠ ચુનીલાલ નરભેરામ વેકરીવાળા	૨૫૧
૩૪	શાહ વરજંગભાઈ શીવજી (મલાડ)	૨૫૧
૩૫	રતીલાલ ભાઈચંદ મહેતા	૨૫૧
૩૬	શાહ ખીમજી મૂળજી પૂંજ (મલાડ)	૨૫૧
૩૭	મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપોર્ટ કંપની હા. શેઠ માણેકલાલ વાડીલાલ	૨૫૧
૩૮	ધેલાણી વલ્લજી નરભેરામ હા. નરસીભાઈ વલ્લજી	૨૫૧
૩૯	અ. સૌ. સમતાબેત શાન્તીલાલ C/o શાન્તીલાલ ઉજમશી શાહ(મલાડ)	૨૫૧
૪૦	તેજણી કુબેરદાસ પાનાચંદ	૨૫૧
૪૧	કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ	૨૫૧
૪૨	સ્વ. કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે સુરજબેન તરફથી હા. તનસુખલાલભાઈ (મલાડ)	૨૫૧
૪૩	દડીયા અમૃતલાલ મોતીચંદ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૪	શેટ સરદારમલજી દેવીચંદજી કાવેડીયા (સાદડીવાળા)	૨૫૧
૪૫	દોશી ચત્રભુજ સુંદરજી (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૬	દોશી જુગલકીશોર ચત્રભુજ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૭	દોશી પ્રવીણચંદ્ર ચત્રભુજ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૮	શાહ ત્રીલોવનદાસ માનસિંગ દોઢીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. શાહ હરખચંદ ત્રીલોવનદાસ	૨૫૧
૪૯	શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધાંગધ્રાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ	૨૫૦
૫૦	શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ	
૫૧	સ્વ. પિતાશ્રી શામજી કલ્યાણજી ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. વૃજલાલ શામજી બાવીશી	૩૦૧

૫૨	શાહ પ્રેમજી હીરજી ગાલા	૨૫૧
૫૩	સ્વ. પિતાશ્રી લગવાનજી હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે હા. લક્ષ્મીચંદ તથા કેશવલાલભાઈ	૩૦૧
૫૪	સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે હા. દેવશી હંસરાજ કચ્છ બીહડાવાળા (મલાડ)	૨૫૧
૫૫	સ્વ. માતૃશ્રી ગોમતીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ	૨૫૧
૫૬	શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ અંભાતવાળા હા. ભાઈ જેઠાલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૫૭	સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પરસોતમ પાણશણવાળાના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. બાપાલાલભાઈ	૨૫૧
૫૮	બેન કેશરભાઈ ચંદુલાલ જેસીંગલાલ શાહ	૨૫૧
૫૯	દડીયા જેસીંગલાલ ત્રીકમજી	૨૫૧
૬૦	શાહ ઠાન્તીલાલ મગનલાલ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૬૧	કોઠારી સુખલાલજી પૂનમચંદજી (ખાર)	૨૫૧
૬૨	સ્વ. માતૃશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પૌત્ર હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (કાંઠીવલી)	૨૫૧
૬૩	પારેખ ચીમનલાલ લાલચંદનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. શ્રીમતી ચંચળબાઈના સ્મરણાર્થે હા. સારાભાઈ ચીમનલાલ	૨૫૧
૬૪	શાહ કેરશીભાઈ હીરજીભાઈ	૩૦૧
૬૫	પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે હા. મોતીલાલ જીખરમલ (અહમદનગરવાળા)	૨૫૧
૬૬	શ્રી વર્ધમાન રવેતામ્બર સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ રૂપચંદ શીવલાલ કામદાર (અંધેરી)	૨૫૧
૬૭	અ. સૌ. કમળાબેન કામદાર હા. રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી)	૨૫૧
૬૮	ધી મરીના મોર્ડન હાઈસ્કુલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી.	૨૫૧
૬૯	સ્વ. માતૃશ્રી જીવીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા (ગોરેગાંવ)	૨૫૧
૭૦	શાહ રવજીભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કંપની (કાંઠીવલી)	૨૫૧
૭૧	અ. સૌ. લાઘુબેમ હા. રવજી શામજી (કાંઠીવલી]	૨૫૧
૭૨	અ. સૌ. બેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સંઘવી (ખારરોડ)	૨૫૧
૭૩	શાહ કરશન લધુભાઈ (દાદર)	૩૦૧
૭૪	અ. સૌ. રંજનગૌરી ચંદુલાલ શાહC/O ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ (માટુંગા)	૨૫૧
૭૫	મહેતા મોટર સ્ટોર્સ હા. અનોપચંદ ડી. મહેતા (મુંબઈ).	૨૫૧

- ૭૬ શેઠ મનુભાઈ માણેકચંદ હા. ઝાટકીયા નરભેરામ મોરારજી (ઘાટકોપર) ૨૫૧
- ૭૭ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
- ૭૮ સ્વ. કસ્તુરચંદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ
ઝવેરબેન મગનલાલની વતી—જયંતીલાલ કસ્તુરચંદ મશ્કારીયા
(ચુંડાવાળા) ૨૫૧
- ૭૯ સ્વ. પૂજ્ય માતુશ્રી જકલખાઈના સ્મરણાર્થે
હા. દેશાઈ વ્રજલાલ કાળીદાસ (મલાડ) ૨૫૧
- ૮૦ શાહ નટવરલાલ દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ
અ. સૌ. સુશીલાબેનના વર્ષીતપની ખુશાલીમાં ૨૫૧
- ૮૧ શેઠ રસીકલાલ પ્રભાશંકર મોરખીવાળા તરફથી તેમનાં માતુશ્રી
મણીબેનના સ્મરણાર્થે ૩૦૧
- ૮૨ કોટીયા જયંતીલાલ રણછોડદાસ સૌભાગ્યચંદ જુનાગઢવાળા ૨૫૧
- ૮૩ મોદી અલેચંદ સુરચંદ રાજકોટવાળા હા. ડોસાલાલ અલેચંદ ૨૫૧
- ૮૪ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમના
ધર્મપત્નિ નેણખાઈ વતી હા શાહ જેઠાલાલ રાયશી ૨૫૧
- ૮૫ શ્રીયુત જે. સી. વોરા ૨૫૦
- ૮૬ શ્રી વર્ધમાન સ્થા.જૈન શ્રાવકસંઘ હા. સંઘવી ચીમનલાલ અમરચંદ(દાદર) ૨૫૧
- ૮૭ સ્વ. આશારામ ગીરધરલાલના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ
આશારામની વતી જસવંતલાલ આશારામ લખતરવાળા ૨૫૧

માંડવી (કચ્છ)

- ૧ શ્રી સ્થા. છ કોટી જૈન સંઘ હા. મહેતા ચુનીલાલ વેલજી ૨૭૭

માંડવા (ધોળાજંકશન)

- ૧ શ્રી માંડવા સ્થા. જૈન સંઘ હા. અ. સૌ. કંચનગૌરી રતિલાલ
ગોસલીયા ગઢડાવાળા ૨૫૧

મેસાણા

- ૧ શાહ પદ્મશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદ્મશી વીરમગામવાળા ૨૫૧

મોખાસા

- ૧ શાહ દેવરાજ પેથરાજ ૨૫૦
- ૨ શ્રીયુત નાથાલાલ ડી. મહેતા ૨૫૧

યાદગીરી

- ૧ શેઠ બાહરમલજી સૂરજમલજી બેન્કર્સ ૨૫૦

રાણપુર (ઝાલાવાડ)

- ૧ શ્રીમતિ માતુશ્રી સમરતબાઈના સ્મરણાર્થે
હા. ડો. નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા ૨૫૧

રાણાવાસ (મારવાડ)

- ૧ શેઠ જ્વાનમલજી નેમીચંદજી હા. બાબુ રીખબચંદજી ૩૦૧

રાજકોટ

- ૧ ધી વાડીલાલ ડાઈંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ ૪૦૦
૨ શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧
૩ બાબુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ (ઉદેપુરવાળા) ૨૫૦
૪ શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (એન્જીનીયર સાહેબ) ૨૫૧
૫ શેઠ શાન્તીલાલ પ્રેમચંદ તેમનાં ધર્મપત્નિના વરસીતપ પ્રસંગે ૨૫૧
૬ ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ વકીલ ૨૫૧
૭ શેઠ પ્રભરોમ વીકુલજી ૨૫૧
૮ બહેન સર્યુબાળા નૌત્તમલાલ જસાણી (વરસીતપની ખુશાલી) ૨૫૧
૯ મોદી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ ૨૫૧
૧૦ બદાણી ભીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ
અ. સૌ. સમરતબેનના વરસીતપની ખુશાલી ૨૫૧
૧૧ દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઈ (રીટાયર્ડ એન્જીનીયર સાહેબ) ૨૫૧
૧૨ કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ ૨૫૦
૧૩ હેમાણી ઘેલુભાઈ સવચંદ ૨૫૧
૧૪ પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ દક્ષતરી ૨૫૧
૧૫ સ્વ. મહેતા દેવચંદ પુરૂષોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ
હેમકુવરબાઈ તરફથી હા. જ્યંતીલાલ દેવચંદ મહેતા ૨૫૧

રાજજીકાકેરડા (ભીલવાડા)

- ૧ શ્રીમાન જોરાવરમલજી ધર્મચંદજી ડુંગરવાલ [મુનીશ્રી માંગીલાલજીના
ઉપદેશથી] ૨૫૧

રાયચુર

- ૧ સ્વ. માતુશ્રી મોંઘીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ શીવલાલ
ગુલાબચંદ વઢવાણવાળા ૨૫૧

રંગુન

- ૧ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. કમળાબેન ૨૫૧

રાપર (કચ્છ)

- ૧ પુન્ય વાલજીભાઈ ન્યાલચંદ ૨૫૧

લાખતર

- ૧ શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ શાન્તીલાલ રાયચંદ ૨૫૧
- ૨ ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
- ૪ શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
- ૫ શાહ બદવજી ઓઘઠભાઈ સદ્ગદવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ શાન્તીલાલ બદવજી ૨૫૧
- ૬ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ સમરતબેન
વૃજલાલ તરફથી હા. જયંતીલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

લાલપુર

- ૧ શેઠ નેમચંદ સવજીભાઈ મોદી હા. મગનલાલભાઈ ૨૫૧
- ૨ શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા. મણીબાઈ તથા જેસીંગલાલભાઈ ૨૫૧

લાખેરી (રાજસ્થાન)

- ૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હા. મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ
(સીવીલ એન્જીનીઅર સાહેબ) ૨૫૧

લીમડી (પંચમહાલ)

- ૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧
- ૨ છાજેડ ઘાસીરામ ગુલાબચંદ ૨૫૧

લીંબડી (સૌરાષ્ટ્ર)

- ૧ શાહ ચકુભાઈ ગુલાબચંદ ૨૫૧

લાકડીયા (કચ્છ)

- શ્રી સ્થાવર જૈન સંઘ હા. શાહ રતનશી કરમણ ૨૫૧

લોનાવાલા

- ૧ શેઠ ધનરાજજી મૂળચંદજી મૂથા ૨૫૧

વઢવાણ શહેર

- ૧ શાહ દીલીપકુમાર સવાઈલાલ હા. સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ શાહ ૨૫૧
- ૨ શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ કામદાર ૨૫૧
- ૩ સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હા. ભાઈ જીવણલાલ ગફલદાસ ૨૫૧
- ૪ શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧
- ૫ શેઠ કાન્તીલાલ નાગરદાસ ૨૫૧
- ૬ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧
- ૭ સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ ૨૫૧
- ૮ શાહ દેવશી દેવકરજી ૨૫૧
- ૯ વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧
- ૧૦ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ ૨૫૧

- ૧૧ દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી ૨૫૧
 ૧૨ સ્વ. વોરા મણીલાલ મગનલાલ હા. વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧

વટામણ

- ૧ શ્રી વટામણ સ્થા. જૈન સંઘ હા. શ્રી ડાહ્યાભાઈ હલુભાઈ પટેલ ૨૫૧

વલસાડ

- ૧ શાહ ખીમચંદ મૂળજીભાઈ ૨૫૧

વણી

- ૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્નિ સ્વ. ચંચળબેન તથા
 પુરીબેનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ ૨૫૧

વડોદરા

- ૧ કામદાર કેશવલાલ હિમતરામ પ્રોફેસર સાહેબ (ગોંડલવાળા) ૨૫૧
 ૨ વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ ૨૫૧

વડીયા

- ૧ પંચમીયા ભવાનભાઈ કાંજાભાઈ (જેતપુરવાળા) ૨૫૧

વાંકાનેર

- ૧ માસ્તર કાન્તીલાલ ત્રંબકલાલ ખંઢેરીયા ૨૫૧
 ૨ દફતરી ચુનીલાલ પોપટલાલ મોરખીવાળા હા. ભાઈ પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

વીંછીયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જન સંઘ હા. અજમેરા રાયચંદ વૃજખાળ ૨૫૧

વીરમગામ

- ૧ શાહ વીકુલભાઈ મોદી માસ્તર ૨૫૧
 ૨ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ ૨૫૧
 ૩ શાહ મણીલાલ જીવણુલાલ (શાહપુરવાળા) ૨૫૧
 ૪ શાહ અમુલખ (ખચુભાઈ) નાગરદાસનાં ધર્મપત્નિ અ.સૌ.બેન લીલાવંતીના
 વરસીતપનાં પારણાની ખુશાલીમાં હા. ભાઈ કાન્તીલાલ નાગરદાસ ૩૦૦
 ૫ સ્વ. શેઠ ઉજમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી
 હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ ૨૫૧
 ૬ સ્વ. શેઠ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી
 હા. ખીમચંદભાઈ (ખારાધોડાવાળા) ૨૫૧
 ૭ સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ ૨૫૧
 ૮ સંઘવી જેચંદભાઈ નારણદાસ ૨૫૧
 ૯ સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદભાઈના સ્મરણાર્થે
 હા. ચીમનલાલ વેલશી (કત્રાસવાળા) ૨૫૧

- ૧૦ પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા તરફથી (મોટીબેનના સ્મરણાર્થે) ૨૫૧
- ૧૧ શાહ નારણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીલાલભાઈનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.
નારંગીબેનના વરસીપત નિમિત્તે હા. શાન્તીભાઈ ૨૫૧
- ૧૨ સ્વ. છબીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ
કમળાબેન તરફથી હા. મંજુલાકુમારી ૨૫૧
- ૧૩ શ્રી સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સંઘ હા. પ્રમુખ અ. સૌ. રંભાબેન વાડીલાલ ૨૫૧
- ૧૪ સ્વ. ત્રીલોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળબેનના
સ્મરણાર્થે હા. ડા. હિંમતલાલ સુખલાલ ૨૫૧
- ૧૫ શાહ મૂળચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. નાગરદાસ ઓઘડભાઈ ૨૫૧
- ૧૬ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા. ભાઈ કેશવલાલ તથા મનસુખભાઈ ૨૫૧
- ૧૭ શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વરસીતપ નિમિત્તે
હા. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ ૩૦૧
- ૧૮ સ્વ. મણીયાર પરસોતમદાસ સુંદરજીના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ સાકરચંદ પરસોતમદાસ ૨૫૧
- ૧૯ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ ૨૫૧

વેરાવંદ

- ૧ શાહ કેશવલાલ જેચંદભાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ ખીમચંદ સૌભાગ્યચંદ વસનજી ૨૫૧
- ૩ સ્વ. શેઠ મદનજી જેચંદભાઈ માંગરોળવાળાના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ
લાડકુંવરબાઈ તરફથી હા. ધીરજલાલ મદનજી ૨૫૧

સરખેજ

- ૧ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ ફકીરચંદ પુંજભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ રમણલાલ ફકીરચંદ ૨૫૧

સતારા

- ૧ સ્વ. મદનલાલજી કુંદનમલજી કોઠારીના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ
રાજકુવરબાઈ મદનલાલજી ૨૫૧

સાદડી

- ૧ શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પૂનમીયા ૨૫૧

સાલબની (ખંગાળ)

- ૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરબીવાળા ૨૫૦

સાણુંદ

- ૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ ૩૦૧
- ૨ અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ ૨૫૧
- ૩ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ ૨૫૧
- ૪ શાહ સાકરચંદ કાનજીભાઈ ૨૫૧

- ૫ પુરીએન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીમડીવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી ૨૫૧
- ૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ ૨૫૧
- ૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ જયંતિલાલ નારણદાસ ૨૫૧

સુરત

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ છોટુભાઈ અભેચંદ ૨૫૧
- ૨ શ્રીચુત કલ્યાણચંદ માણેકચંદ હડાલાવાળા ૨૫૧

સુવર્ધ (કચ્છ)

- ૧ સાવળા શામજી હીરજી તરફથી સદાનંદી જૈન મુનિશ્રી છોટાલાલ
મહારાજના ઉપદેશથી સુવર્ધ સ્થા. જૈન સંઘ જ્ઞાનભંડારને ભેટ ૨૫૧

સુરેન્દ્રનગર

- ૧ શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧
- ૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. કેશવલાલ મૂળજીભાઈનાં ધર્મપત્નિ અમૃતબાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ કેશવલાલ (થાનગઢવાળા) ૨૫૧
- ૪ શાહ ન્યાલચંદ હરખચંદ ૨૫૧
- ૫ શાહ વાડીલાલ હરખચંદ ૨૫૧

સંજેલી (પંચમહાલ)

- ૧ શાહ લુણાજી ગુલાબચંદ ૨૫૧
- ૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ દલીચંદ ૨૫૧

હાટીનામાળીયા

- ૧ શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ ૨૫૦

હારીજ

- ૧ અમુલખભાઈ મુળજી હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ ૩૦૧
- ૨ સ્વ. જૈન ચંદ્રકાન્તાના સ્મરણાર્થે હા. અમુલખ મુળજીભાઈ ૩૦૧

હુબલી

- ૧ હીરાચંદ વનેચંદજી કટારીઆ ૨૫૧

તા. ૧૦-૧૨-૫૮ સુધી મેમ્બરોની સંખ્યા

૫ આઘ સુરખખીશ્રીઓ ૪૯ સહાયક મેમ્બરો
૨૧ સુરખખીશ્રીઓ ૪૧૨ લાઇફ મેમ્બરો
૬૯ બીજા કક્ષાના મેમ્બરો

કુલ મેમ્બરો ૫૫૬

રાજકોટ તા. ૧૦-૧૨-૫૮

સાકરચંદ ભાઈચંદ શેઠ
મંત્રિ

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની

અગત્યની અપીલ

સ્થાનકવાસી જૈન લાઇઓ અને બહેનો :—

સ્થાનકવાસી સમાજને જે અવલંબન છે. તેમાં પહેલું મુનિવર્ગ અને બીજું શાસ્ત્રશ્રવણ છે. જ્યાં જ્યાં મુનિમહારાજોની ગેરહાજરી હોય છે (અને લવિષ્યમાં રહેવાની છે) તે સ્થળે આ શાસ્ત્રો સ્થાનકવાસી કોમને ટકાવી રાખવા મોટામાં મોટું સાધન છે.

ઓછામાં ઓછા રૂ. ૫૦૦૦ આપી આઘ મુરબીપદ આપ દિપાવી શકો છો.

ઓછામાં ઓછા રૂ. ૧૦૦૦ આપી મુરબીપદ મેળવી શકો છો.

ઓછામાં ઓછા રૂ. ૫૦૦ આપી સહાયક મેમ્બર બની શકો છો.

અને ઓછામાં ઓછા રૂ. ૨૫૦ આપી લાઇફ મેમ્બર તરીકે દરેક લાઇ ઝેન હાખલ થઈ શકે છે,

ઉપરના દરેક મેમ્બરોને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ લાગો મળી લગભગ ૭૦ ગ્રંથો જેની કિંમત લગભગ ૮૦૦ ઉપર થાય છે તે ભેટ તરીકે મળી શકે છે. અને દરેક શાસ્ત્રમાં તેમનું નામ પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવે છે.

દરેક શાસ્ત્ર ૪ લાખમાં તૈયાર થાય છે. એટલે દરેક પાનામાં ૪ લાખ જોવામાં આવશે. ઉપરમાં અર્ધમાગધી, તેની નીચે સંસ્કૃત છાયા-ટીકા ત્યાર બાદ હિન્દી રાષ્ટ્રલાખા અને છેવટે ગુજરાતીમાં અનુવાદ જોવામાં આવશે.

શ્રમણ વર્ગ, શ્રાવક વર્ગને દરેક પ્રદેશમાં વસતા સમાજનાં દરેક અંગને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થાય તેવી રીતે ખ્યાલ કરીને શાસ્ત્રની રચના કરવામાં આવે છે.

બહાર દેશાવરમાં વસતા આપણા લાઇઓને તેમજ ગામડામાં વસતા શ્રાવકોને તેમજ કુરસદે વાંચન કરનાર બહેનો તેમજ વિદ્યાર્થીઓને એક સરખું ઉપયોગી થઈ શકે તેવું સાહિત્ય બીજી કોઈ જગ્યાએ મળી શકે તેમ નથી.

Cell
17.9.74

Central Archaeological Library,

NEW DELHI.

43754

Call No. J Pr 2 / Aup / Gr. K

Author—Ghasilal and Kana-
liyalal.

Title—Aupapaatika Sutra.

Borrower No.

Date of Issue

Date of Return

Delhi U. Lib.

6/12/79

14/12/79

"A book that is shut is but a block"

CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY
GOVT. OF INDIA
Department of Archaeology
NEW DELHI.

Please help us to keep the book
clean and moving.